# ग्रन्थ

# श्री समता प्रकाश

## अनुभवी अगम-वाणी
## श्री सत्पुरुष पूज्य सतगुरुदेव मंगत राम जी महाराज

संगत समतावाद (रजि०)
समता योग आश्रम
जगाधरी - 135003

प्रकाशक :
संगत समतावाद (रजि०)
समता योग आश्रम, छछरौली रोड,
जगाधरी - 135003
यमुनानगर (हरियाणा)

| | |
|---|---|
| प्रथम संस्करण सं० 2011 वि० ..... ..... | 1000 |
| द्वितीय संस्करण सं० 2026 वि० ..... ..... | 2000 |
| तृतीय संस्करण सं० 2040 वि० ..... ..... | 1000 |
| चतुर्थ संस्करण सं० 2053 वि० ..... ..... | 1200 |
| पंचम संस्करण सं० 2060 वि० ..... ..... | 1100 |
| छटा संस्करण सं० 2072 वि० ..... ..... | 1100 |

जुमला हक़ूक़ महफ़ूज़ हैं
(सर्वाधिकार सुरक्षित हैं)

प्राप्ति स्थान :
समता योग आश्रम - छछरौली रोड
जगाधरी-135003
यमुनानगर (हरियाणा)

# समता

# अपार शक्ति

## महामन्त्र

## ॐ

## ब्रह्म सत्यं

## निरंकार अजन्मा अद्वैत पुरखा

## सर्व व्यापक कल्याण मूरत

## परमेश्वराय नमस्तं

ग्रन्थ 'श्री समता प्रकाश' की मूल पाण्डुलिपि (उर्दू में)
प्रस्तुत ग्रन्थ इसी का हिन्दी रूपांतर है

# दीबाचा (प्रस्तावना)

यह अद्‌भुत विचार अगम वाणी **श्री सतगुरुदेव महात्मा 'मंगत राम' जी महाराज** के मुख-वाक्यामृत हैं जो उन्होंने तमाम विश्व के कल्याण के वास्ते परगट फ़रमाए हैं।

श्री महाराज जी ने जन्म-सिद्ध स्वरूप में संसार के उद्धार की ख़ातिर भिन्न-भिन्न स्थानों पर बिगड़े हुए हालात को मद्‌देनज़र रखते हुए भिन्न-भिन्न प्रसंगों में तमाम वाणी उच्चारण फ़रमाई और हाज़िर ज़माने की जनता को **'समता'** यानी एकता के मार्ग पर चलने का उपदेश दिया जो परम कल्याण स्वरूप है और इस तमाम वाणी का एकत्र स्वरूप **'श्री समता प्रकाश'** ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित हुआ है।

तमाम सज्जन इस सहज, सरल, अगम-शिक्षा को अपना करके अपने जीवन की उन्नति करें।

जुमला हक़ूक़ महफ़ूज़ हैं
(सर्वाधिकार सुरक्षित हैं)

प्रकाशक
- संगत समतावाद (रजि०)
समता योग आश्रम, जगाधरी
यमुनानगर (हरियाणा)

## प्रथमावृत्ति

प्रत्येक संत महात्मा या महापुरुष के जीवन के उत्तरार्द्ध में एक ऐसा समय आता है जब लोग इस बात की आवश्यकता का अनुभव करने लगते हैं कि उनकी वाणी संगृहीत हो जानी चाहिए जिससे कि व्यापक रूप से तथा चिरकाल तक मानवता का कल्याण हो सके। **पूज्य श्री सतगुरुदेव महात्मा मंगतराम जी महाराज** के भक्तों के हृदय में भी इसी प्रकार की भावना का जागरण हुआ। मई 1947 में काश्मीर राज्य के ज़िला अनंतनाग के अंतर्गत कारकुटनाग नामक स्थान पर श्री महाराज जी के एक प्रियभक्त के द्वारा इस कार्य का श्रीगणेश हुआ तथा अप्रैल 1948 में 'सिद्ध-खड्ड' मसूरी, ज़िला देहरादून में यह पवित्र कार्य श्री महाराज जी के हस्ताक्षर सहित सम्पूर्ण हुआ। ग्रन्थ **'श्री समता प्रकाश'** इसी प्रयास का मूर्तिमान रूप है, इसमें सात खंड हैं। पहले खंड में परम पुरुष की प्रार्थना तथा दूसरे में महाराज जी के द्वारा भक्तों को दिए गए उनके प्रश्नों के उत्तर हैं। तीसरे खंड का विषय साधक के जीवन की विभिन्न अवस्थाएँ तथा सदाचरण सम्बंधी विचार हैं। चतुर्थ खंड में आध्यात्मिक समस्याओं की विवेचना तथा पवित्र जीवन पर महाराज जी की वाणी संकलित हैं। पंचम खंड का सम्बंध योग एवं वैराग्य से है। छठे खंड में शून्यकर्म, नाद-ब्रह्म, निष्कामकर्म वाणी तथा सत्पुरुषों के सम्बंध में श्री महाराज जी के निर्णयों का तथा अंतिम सप्तम खंड में मिश्रित वाणी का संग्रह किया गया है।

मूल रूप में महाराज जी की वाणी उर्दू भाषा में लिपिबद्ध हुई किंतु बाद में श्रद्धालुओं के आग्रह पर उसे देवनागरी लिपि में लिखा गया और छपाई उत्तर प्रदेश के एक प्रेस में हुई। यद्यपि पूज्य श्री महाराज जी की वाणी को ज्यों का त्यों पाठकों के सम्मुख रखने का पर्याप्त प्रयत्न किया गया है, किंतु कई हाथों से गुज़रने के कारण प्रथम संस्करण में अशुद्धियों का रह जाना नितांत स्वाभाविक है। हम उसके लिए क्षमा प्रार्थी हैं। भविष्य में ग्रन्थ को अधिकाधिक शुद्ध रूप में प्रस्तुत करने की भरपूर चेष्टा की जाएगी।

## द्वितीयावृत्ति

इस दूसरे संस्करण में श्री महाराज जी की वाणी को मूल रूप में प्रस्तुत करने का यत्न किया गया है।

## तृतीयावृत्ति

**'श्री समता-प्रकाश'** ग्रन्थ की तृतीय आवृत्ति प्रस्तुत करते हुए हम आनन्द का अनुभव करते हैं। इस ग्रन्थ की अगम देव-वाणी के माध्यम से सत्पुरुष **श्री सतगुरुदेव महात्मा 'मंगत राम' जी महाराज** ने जनता जनार्दन को समता-मार्ग अपनाने का आह्वान किया है।

इस आवृत्ति में ग्रन्थ की उर्दू मूल पाण्डुलिपि से अच्छी तरह मिलान किया गया है। दूसरी आवृत्ति में जो अशुद्धियां रह गई थीं वे दूर करने का भरसक प्रयास किया गया है। पृष्ठ संख्या का क्रम भी अब मूल पाण्डुलिपि की पृष्ठ संख्या के क्रम के अनुसार ही बना दिया गया है। शबद संख्या में भी कुछ अदल बदल किया गया है। शबद संख्या का आधार अब प्रत्येक स्थल में 'मंगत' शब्द है - न कि दोहा।

ग्रन्थ के अन्त में एक 'परिशिष्ट-अंग' जोड़ा गया है जिसकी सहायता से पाठक-गण को ग्रन्थ के अध्ययन में सुविधा होगी।

छपाई और गेटअप पहले से ही अधिक सुन्दर बनाने का प्रयत्न किया गया है।

श्रद्धालु पाठक-गण को 'समता-मार्ग' उज्जवलित करने में यह ग्रन्थ सार्थक हो।

## चतुर्थावृत्ति

ग्रन्थ के अन्त में 'शब्दार्थ' का 'परिशिष्ट-अंग' जोड़ा गया है। इस की सहायता से पाठक-गण को ग्रन्थ के अध्ययन में सुविधा होगी।

## पंचम आवृत्ति

ग्रन्थ **'श्री समता प्रकाश'** में लिखी वाणी जिन विशेष परिस्थितियों में प्रकट हुई एवं लिखी गई, उन का वर्णन परमावश्यक समझा गया है, जो इस प्रकार है:-

यह पवित्र वाणी **श्री सतगुरुदेव महात्मा मंगत राम जी महाराज** के मुखारबिन्द से उस समय स्वत: प्रस्फुटित हुई, जब वे हिमालय पर्वत की श्रृंखला में, बर्फ़ से ढकी चोटियों के नीचे, नदियों के तट पर, घने जंगलों में रमणीय प्राकृतिक वातावरण में तप के दौरान प्राय: गहन अर्धरात्री काल में समाधि अवस्था में आनन्दमग्न होते थे।

इस अलौकिक वाणी को श्री गुरुदेव जी के सदैव साथ रहने वाले एक परम श्रद्धालु सेवक श्री भगत बनारसी दास जी उर्दू भाषा में नोट कर लिया करते थे।

हिंसक पशुओं से भरे घनघोर वनों, बर्फ़ीली पहाड़ियों और यहाँ तक कि एक बार श्मशान घाट में, सर्दी से हाथों की ठिठरन को बचाने हेतु चिता के ताप से हाथ सेंक कर, और चिता की अग्नि की रोशनी में श्रद्धेय सेवक द्वारा वाणी लेखन का कार्य सम्पन्न हुआ।

यद्यपि अब तक देवनागरी लिपि में चार संस्करण छप चुके हैं, तथापि छपाई में जाने अनजाने कई त्रुटियां रह गई थी।

संगत समतावाद के कुछ कर्मठ प्रेमीजन द्वारा अपनी अमूल्य निष्काम सेवा उपलब्ध कराने के फलस्वरूप, इस बार विशेष रूप से उर्दूग्रन्थ मूल प्रतिलिपि से प्रस्तुत देवनागरी लिपि में पंचम संस्करण का मिलान अक्षरश: पृष्ठ संख्या मिलान एवं मौलिक शुद्ध उच्चारण का ध्यान रखा गया है ताकि प्रस्तुत संस्करण पूर्णतया त्रुटि रहित उपलब्ध हो सके। इस सम्पूर्ण प्रयास में सर्वोपरि कृपा श्री सतगुरुदेव महाराज की ही रही है। अपनी ओर से भरसक प्रयास के बावजूद भी मानवीय कृति में त्रुटि रह जाना सम्भव है, अत: समस्त आदरणीय पाठकगण से नम्र निवेदन है कि जो भी त्रुटि उन्हें दृष्टिगोचर हो, कृपया शीघ्र ही सूचित कर अनुगृहीत करें, ताकि भविष्य में उसे दूर किया जा सके।

## षष्ठम् आवृत्ति

संगत समतावाद के कुछ कर्मठ प्रेमीजन द्वारा अपनी अमूल्य निष्काम सेवा उपलब्ध कराने के फलस्वरूप, इस बार विशेष रूप से उर्दूग्रन्थ मूल प्रतिलिपि से प्रस्तुत देवनागरी लिपि में षष्ठम् संस्करण का मिलान अक्षरश: पृष्ठ संख्या मिलान एवं मौलिक शुद्ध उच्चारण का ध्यान रखा गया है ताकि प्रस्तुत संस्करण पूर्णतया त्रुटि रहित उपलब्ध हो सके। इस सम्पूर्ण प्रयास में सर्वोपरि कृपा श्री सतगुरुदेव महाराज की ही रही है। अपनी ओर से भरसक प्रयास के बावजूद भी मानवीय कृति में त्रुटि रह जाना सम्भव है, अत: समस्त आदरणीय पाठकगण से नम्र निवेदन है कि जो भी त्रुटि उन्हें दृष्टिगोचर हो, कृपया शीघ्र ही सूचित कर अनुगृहीत करें, ताकि भविष्य में उसे दूर किया जा सके।

सदैव आभारी
- संगत समतावाद (रजि०)
समता योग आश्रम - जगाधरी - 135003
यमुनानगर, हरियाणा

# 'श्री समता-प्रकाश' ग्रन्थ के स्वाध्याय अर्थात् पाठ के सम्बन्ध में श्री सतगुरुदेव महाराज जी द्वारा निर्धारित नीति

(1) किसी भी प्रोग्राम में ग्रन्थ का पाठ सतसंग की नीति अनुकूल आरम्भ करना तथा समाप्त करना योग्य है।

(2) किसी भी प्रोग्राम में सम्पूर्ण ग्रन्थ को समाप्त करने का निश्चय रख कर पाठ दिन-रात करने का भी निषेध (मुमानियत) है। इससे निर्मल स्वाध्याय का भाव समाप्त हो जाता है। केवल व्यवहार अनुसार नीति बन जाती है, जो कि सही धर्म के अनुकूल नहीं है।

(3) निमित्त काल पाठ अर्थात अखण्ड पाठ, साप्ताहिक पाठ, अर्द्ध-मासी पाठ या मासिक पाठ का भी निषेध (मुमानियत) है। यह भी एक मदवाद का निश्चय होने के कारण निर्मल स्वाध्याय का स्वरूप समाप्त कर देता है और एक व्यवहार मात्र ही रह जाता है।

(4) नित्यकाल पाठ अर्थात् आम समय के अनुसार सतसंग नीति अनुकूल पाठ शुरू करना और समाप्त करना केवल अधिक से अधिक निश्चित समय के अनुसार कुछ प्रसंगों को सम्पूर्ण करना ही शन्तिमय कल्याणकारी पाठ है। इससे निर्मल स्वाध्याय कायम (स्थिर) रहता है और चाहे (ख़्वाहे) इसी तरह रोज़ाना स्वाध्याय करते-करते तमाम ग्रन्थ को ख़त्म (सम्पूर्ण) ही कर दिया जावे। ऐसा स्वाध्याय समता के अनुकूल है।

(5) वाणी के स्वाध्याय में ऐसा निश्चय दृढ़ रहना चाहिए जिससे ईश्वर पूजा और सत्कर्त्तव्य की पूजा बढ़ती जावे जो निर्मल कल्याण के देने वाले भाव हैं।

(6) वाणी का स्वाध्याय अन्त:करण की शुद्धि करने के वास्ते है जिससे सत्कर्त्तव्य में प्रवीण हो करके मानसिक दोषों का नाश किया जावे। ऐसा निश्चय श्रोताओं और पाठकों का होना चाहिए।

(7) जब केवल वाणी का पाठ ही करना कल्याण समझ लिया जावे और सत्कर्तव्यता का पालन करने में कायरता धारण कर ली जावे तब वह कथनी मात्र ज्ञान सत्धर्म का नाश करने वाला हो जाता है।

(8) समता की नीति में वाणी का स्वाध्याय केवल अन्त:करण की शुद्धि के वास्ते करना ही योग्य है जो सत्कर्तव्य में दृढ़ निश्चय करे। इस भावना के बिना केवल पाठ रवां करना-और सतकर्त्तव्य या सत्निदिध्यास की धारणा से हीन होना समतावादी सज्जन या और किसी पाठक सज्जन के वास्ते पूर्ण श्रेष्ठ सफलता के देने वाला निश्चय नहीं है।

(9) किसी समय या किसी प्रोग्राम में ग्रन्थ **'श्री समता प्रकाश'** का पाठ सत्संग की नीति अनुकूल ही शुरू करना और ख़तम करना योग्य है और प्रसंग मात्र को सम्पूर्ण करना ही पाठ की सम्पूर्णता है चाहे इस तरह सतसंग स्वाध्याय करते करते सारे ग्रन्थ को सम्पूर्ण कर दिया जावे। ऐसे निर्मल स्वाध्याय से बुद्धि निर्मल होकर के सत्-परायण होने का यत्न करती है और सहज ही तमाम संकटों और दोषों से कल्याण को प्राप्त होती है। ऐसा पवित्र निश्चय सबको होना चाहिये।

(10) **'श्री समता-प्रकाश'** ग्रन्थ को इस सरल, सहज और पवित्र भाव के अनुसार स्वाध्याय करना तमाम तोहमात, विघ्न, दोषों और संकटों से छुटकारा देने वाला साधन है और सत्वाद के निश्चय को दृढ़ करने वाला है, ऐसा निश्चय सबको होना चाहिए।

(11) सत्-वाणी का स्वाध्याय करना और पूर्णरूप में समझना और अमल में लाना ही सही पाठ की नीति है। ऐसे ही सब पाठकों और श्रोताओं को बोध होना चाहिए।

(12) ग्रन्थ **'श्री समता प्रकाश'** के सम्बन्ध में जो पाबन्दियां ग्रन्थ के अन्त में तहरीर हो चुकी हैं, उन पर पूर्ण रीति से कारबन्ध रहना चाहिए।

सब प्रेमी निर्मल स्वाध्याय ग्रन्थ **'श्री समता प्रकाश'** के नियमों को समझ लेवें!

- सत् आज्ञा श्री सतगुरुदेव जी महाराज

समता

अपार – शक्ति

ब्रह्मसत्यम्

सर्वाधार

ग्रन्थ

श्री

# समता–प्रकाश

श्री मुख–वाक् अमृत
श्रीमान् परम पूजनीय श्री सत्गुरुदेव महाराज
मंगत राम जी महाराज
(पवित्र जन्मभूमि शुभस्थान गंगोठियां,
ज़िला रावलपिण्डी–पंजाब, अब पाकिस्तान में है)

# ग्रन्थ
# श्री समता-प्रकाश


| | क्रम सं० | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|---|
| **पहला अंग - प्रार्थना** | | | 1 |
| **दूसरा अंग - समदर्शन योग** | पहला मार्ग | - सारतत्त न्याय | 32 |
| | दूसरा मार्ग | - अथ विज्ञान मात्रा | 200 |
| | तीसरा मार्ग | - योग चिन्तामणि | 220 |
| | चौथा मार्ग | - विवेकमाला | 239 |
| | पांचवा मार्ग | - सतसार प्रकाश | 267 |
| **तीसरा अंग-समता स्थिति योग** | पहला प्रसंग | - निर्बन्ध जीवन प्रकाश | 283 |
| | दूसरा प्रसंग | - समतत्त विचार | 344 |
| | तीसरा प्रसंग | - अथ जीवगती सिद्धान्त | 416 |
| | चौथा प्रसंग | - सतनाम प्रबोध मार्ग | 539 |
| **चौथा अंग - चिरंजीव गोष्ठ** (पवित्र जीवन सहित) | पहला विवेक | - अध्यात्म बोध | 611 |
| | दूसरा विवेक | - सतमार्ग की पहचान | 616 |
| | तीसरा विवेक | - सतसाधु की महमा | 638 |
| | चौथा विवेक | - सत्पुरुषों की समानता | 649 |
| | पांचवा विवेक | - सत्नियम जीव उद्धारक | 654 |
| | छटा विवेक | - पवित्तर जीवन | 657 |
| **पांचवा अंग - निखेत्र पर्वत गोष्ठ** | पहली किरण | - भगती तत् प्रकाश | 665 |
| | दूसरी किरण | - अन्तरगत् सार शबद | 723 |
| | तीसरी किरण | - वैराग अंग | 742 |
| **छटा अंग-समता सार योग** | पहला भाग | - निर्वान सिद्धि | 757 |
| | दूसरा भाग | - विजय मंगल | 1077 |
| | | - द्वादस मासी विवेक | 1098 |
| **सातवा अंग-समता विज्ञान योग** | पहला रस | - जीवन सार बोध | 1105 |
| | दूसरा रस | - ज्ञान नेष्टा (निष्ठा) प्रबोध | 1166 |
| | | - आलख वाणी | 1185 |
| | तीसरा रस | - तिथि विवेक | 1197 |
| | | - सिमरण दीपक | 1207 |
| | | - आनन्द सार | 1215 |
| | | - समता शान्ती | 1248 |
| | | - वाणी-सार-अमरत् | 1273 |
| | | - समाप्ति ग्रन्थ श्री समता प्रकाश | 1275 |
| | | - चेतावनी | 1276 |

## बानी सिख्शा सार
## (श्री सत्गुर परशाद अमरत)

**ये अगोचर बानी तत समता खोजो, सब कलह कलेश होवें छार।**
**सत शरधा से नित निरना सूझो, मिले निर्मल विवेक अपार॥**

**समता मारग परस अत निर्मल, नित निरबन्ध जीवन पाई।**
**मानुष जनम दुर्लभ होवे, मिल साध संगत तत्त ध्याई॥**

**सब जीवों से उपजे प्रीती, नित सबकी कल्यान विचारी।**
**सत सरूप को अनन चित्त पूजे, नित होवे सत आधारी॥**

**भरम सूतक पातक आध उपाधी, तीन ताप दु:ख दूरे।**
**जो तत्त बानी निध्यासन कीजे, होवें सकल मनोरथ पूरे॥**

**आज्ञा परमपुरुष से ये, अत गुह्य तत्त्व ज्ञान परगास्यो।**
**'मंगत' श्रवन मनन जो कीजे, होवें सकल दोष चित्त नास्यो॥**

**श्री सतगुरु महाराज जी**

की कृपा दृष्ट से तुच्छ सेवक से तुच्छ सेवा बन आई

**श्री समता प्रकाश**

अनुभव वानी

श्री सतगुरु वाक्-अमरत् लिखत सम्पूर्णम

समां बैसाख संक्रान्त संवत् 2005 बिक्रमी

श्री सतगुरु चरन-निवासी अत तुच्छ सेवक

**दास बनारसी दास**

| | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|
| {1} | **प्रथम अंग-प्रार्थना** | **1-32** |
| | (1) ईश्वर महिमा | 1-5 |
| | (2) अविनाशी शब्द का ध्यान | 6 |
| | (3) इच्छा रोग कैसे मिटे | 12 |
| | (4) असत् माया संसार | 13 |
| | (5) नाम की महिमा | 15 |
| | (6) शब्द की महिमा | 17 |
| | (7) नाम सिमरण से कर्म-वासना नाश | 19 |
| | (8) अभिमान युक्त कर्म-सन्ताप | 20 |
| | (9) मन की भरमणा और उपाय | 23 |
| | (10) मन-विक्षेप कैसे दूर होवे | 24 |
| | (11) सच्ची शिक्षा | 27 |
| {2} | **द्वितीय अंग-समदर्शन योग** | **32-283** |
| | **(1) प्रथम मार्ग-सारतत्त्व न्याय** | **32-200** |
| | **(क) संसार की उत्पत्ति** | **32** |
| | (1) मनुष्य जीवन की सार | 34 |
| | (2) कर्म-रेख अटल है | 35 |
| | (3) धर्म की महिमा | 36 |
| | (4) धर्मात्मा पुरुष के लक्षण | 39 |
| | (5) शब्द की महिमा | 41 |
| | (6) सद्गुरु लक्षण | 42 |
| | (7) नाम की महिमा | 44 |
| | (8) सिमरण फल-शब्द प्राप्ति | 46 |
| | (9) मिश्रित वाणी | 47 |
| | (10) सत्पुरुषों की सांझी साखी/भक्ति | 48 |
| | (11) वैराग्य वाणी | 50 |
| | (12) सामान्य आदेश | 51 |
| | (13) मन का विस्तार/भरम रूप संसार | 52 |
| | (14) जगत-वृक्ष विस्तार | 54 |
| | (15) योगावस्था वर्णन-I | 55 |
| | (16) सत् तत्त की महिमा | 58 |
| | (17) सच्चे सुख हेतु भ्रमण | 59 |
| | (18) हरि भक्ति की महिमा | 60 |
| | (19) हरि भक्त का जीवन | 61 |
| | **(ख) मुसलमानी भेद** | **61-65** |
| | (1) सच्चा मुसलमान | 61 |
| | (2) मोमिन/सच्चा फ़क़ीर | 65 |
| | **(ग) सतगुरु के लक्षण** | **66-76** |
| | (1) सतगुरु का स्वरूप दर्शन | 66 |
| | (2) सच्चे शिष्य का स्वरूप दर्शन | 67 |

| | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|
| | (3) गुरु एवं शिष्य संवाद | 69 |
| | (4) सच्चे शिष्य की मान्यताएं | 71 |
| | (5) मनुष्य की दुःख लीला | 74 |
| | (6) सत शिष्य का भेष | 75 |
| | **(घ) ब्रह्मण की पहचान** | **76-101** |
| | (1) सच्चे ब्रह्मण के लक्षण | 76 |
| | (2) कलयुगी ब्रह्मण | 79 |
| | (3) मिश्रित वाणी | 80 |
| | (4) 'ओहंग ब्रह्म' महिमा | 84 |
| | (5) योगावस्था वर्णन II | 85 |
| | (6) अलख शब्द विचार | 89 |
| | (7) पाखण्ड विवेचना | 90 |
| | (8) प्रभु प्रार्थना | 91 |
| | (9) योगावस्था वर्णन III | 92 |
| | (10) त्यागी पुरुष वर्णन | 97 |
| | (11) चेतावनी वाणी | 99 |
| | (12) ईश्वर महिमा वाणी | 100 |
| | **(ड) गुरमुख मनमुख पर विचार** | **101-107** |
| | **(च) सतनाम की असलियत** | **107-116** |
| | (1) ईश्वर के अनन्त नामों पर विचार | 107 |
| | (2) नामरूपी शब्द की विशेषता | 111 |
| | (3) चेतावनी वाणी | 113 |
| | (4) मिश्रित वाणी | 115 |
| | **(छ) सच्चा प्रेम** | **117-121** |
| | **(ज) सच्चा सिद्ध योगेन्द्र** | **122-126** |
| | **(झ) सदाचार** | **127-144** |
| | (1) सत् विश्वास | 130 |
| | (2) सत् पुरुषार्थ | 131 |
| | (3) सत् विचार | 131 |
| | (4) निर्मानता | 132 |
| | (5) परोपकार | 132 |
| | (6) अपनी वस्तु पर सन्तोष | 133 |
| | (7) प्रेम | 133 |
| | (8) सादगी | 134 |
| | (9) सत्संगत | 134 |
| | (10) मृत्यु की याद | 135 |
| | (11) जीवन और मृत्यु पर विचार | 136 |
| | (ञ) शब्द की पहचान | 145 |
| | (ट) गुरु तथा शिष्य वचन | 146 |
| | (ठ) साधु के वचन | 148 |
| | (ड) दुर्लभ साधु के वचन | 150 |

(ढ) भक्ति की महिमा 161
(ण) भक्त की महिमा 162
(त) सेवा की महिमा 162
(थ) सत्य की महिमा 179
(द) धर्म की महिमा 182
(ध) सत्संग की महिमा 191
**(2) द्वितीय मार्ग-विज्ञान मात्रा 200-219**
**सत् आज्ञा निरंकार 212**
**(3) तृतीय मार्ग-योग चिंतामणि 220-239**
**(4) चतुर्थ मार्ग-विवेक माला 239-267**
**सुरति शब्द योग 266**
**(5) पंचम मार्ग-सतसार-प्रकाश 267-283**
**अरदास 282**
**{3} तृतीय अंग-समता स्थिति योग 283-610**
(1) पहला प्रसंग-निर्बन्ध जीवन
प्रकाश 283-343
(क) सत् तत्त्व की महिमा 283
(ख) सत् विश्वास 292
(ग) सत् साधन 302
(घ) पवित्र आहार 306
(ड़) शुद्ध व्यवहार 307
(च) अशुद्ध व्यवहार 308
(छ) सत सेवा 309
(ज) नीच का संग 315
(झ) साधु की संगत 319
(ञ) प्रभु सिमरण महिमा 321
(ट) मनमुखता 326
(ठ) आत्म तत्त्व प्रवीण गुरु महिमा 329
(ड) सत् विवेक की महिमा 329
**(2) दूसरा प्रसंग-समतत्त्व विचार 344-416**
(क) कर्मगति पर विचार 359
(ख) मंगलाचरण 377
(ग) ईश्वर महिमा 378
(घ) चेतावनी 392
(ड) जिज्ञासु धर्म 397
(च) महामन्त्र की महिमा 414
**(3) तीसरा प्रसंग-अथ जीवगति सिद्धान्त**
**416-439**
(क) जीवनसार निधान 416
(ख) कल्याण सरूप निधान 427
(ग) बन्धनस्वरूप निधान 438
(घ) सत् विचार निधान 449
(ड) धर्म परायण निधान 460

**विषय पृष्ठ**
(च) सत्कर्म साधन निधान 471
(छ) सत्स्वरूप विश्वास निधान 482
(ज) आनन्दस्वरूप साधन निधान 494
(झ) आनन्दस्वरूप अनुभव निधान 505
(ञ) आनन्द स्वरूप स्थिति 516
(ट) परमगति निधान 527
(ठ) सत् शिक्षा संदेश 539
**(4) चौथा प्रसंग-सत्नाम प्रबोध मार्ग 539-610**
(क) सत-अनुराग सरोवर 557
(ख) प्रभु की महिमा 566
(ग) आपामति हरण विवेक 576
(घ) शुद्ध चेतावनी 584
(ङ) भक्ति मार्ग 587
**{4} चतुर्थ अंग-चिरंजीव गोष्ठ 611-664**
1. पहला विवेक - अध्यात्म बोध 611-616
2. दूसरा विवेक - सतमार्ग की पहचान 616-638
(क) सत्स्वरूप की महिमा 619
(ख) सत्स्वरूप की उपासना 625
(ग) सत्स्वरूप की प्राप्ति 631
3. तीसरा विवेक-सत् साधु की महिमा 638-649
(1) सत्संग की महिमा 645
4. चौथा विवेक-सतपुरुषों की समानता 649-654
5. पांचवा विवेक-सत्नियम
जीव उद्धारक 654-657
6. छठा विवेक-पवित्र जीवन 657-664
**{5} पंचम अंग-निखेत्र पर्वत गोष्ठ 665-756**
1. पहली किरण-भक्ति तत्त्व प्रकाश 665-723
2. दूसरी किरण - अन्तर गति
सार शब्द 723-742
3. तीसरी किरण-वैराग्य अंग 742-756
**{6} षष्टम् अंग-समता सार-योग 757-1104**
1. पहला अध्याय-नाद विवेक 757-1077
(क) सत्गुरु प्रसादामृत 757
(ख) नाद उपासना 796
(ग) निष्काम कर्म साधना 837
(घ) शून्य कर्म साधना 876
(ड) नाद ध्यान 916
(च) निर्वाण स्थिति 955
(छ) सत्पुरुषों का आदर्श साधन 995
(ज) नाद साधन सार 1034
2. दूसरा अध्याय-विजय मंगल 1077-1098
3. तीसरा अध्याय-द्वादस मासी

| | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|
| 4. | चौथा अध्याय-आरती | 1103-1104 |
| 5. | पांचवां अध्याय-समता मंगल | 1104 |
| {7} | **सप्तम अंग-समता विज्ञान-योग** | **1105-1275** |
| 1. | पहला रस-जीवन सार बोध | 1105-1166 |
| 2. | दूसरा रस-ज्ञान नेष्ठा (निष्ठा) प्रबोध | 1166-1197 |
| | आलखबानी | 1195 |
| 3. | तीसरा रस-तिथि विवेक | 1197 |
| | (क) अमावस्या | 1197 |
| | (ख) एकम् | 1198 |
| | (ग) द्वितीया | 1199 |
| | (घ) तृतीया | 1199 |
| | (ड) चतुर्थी | 1200 |
| | (च) पंचमी | 1200 |
| | (छ) षष्ठी | 1201 |
| | (ज) सप्तमी | 1202 |
| | (झ) अष्टमी | 1202 |
| | (ञ) नवमी | 1203 |
| | (ट) दशमी | 1204 |
| | (ठ) एकादशी | 1204 |
| | (ड) द्वादशी | 1205 |
| | (ढ) त्रयोदशी | 1206 |
| | (ण) चतुर्दशी | 1206 |
| | (त) पूर्णमाशी (पूर्णिमा) | 1207 |
| | (थ) सिमरन दीपक | 1207 |
| | (द) सार उपदेश | 1215 |
| | (ध) आनन्द सार | 1215 |
| | (1) वैद्यों के लक्षण | 1243 |
| | (न) गुरुस्वरूप लखना | 1247-48 |
| | (प) समता शान्ति | 1248-73 |
| | (फ) वाणी सार अमृत | 1273-75 |
| | ग्रन्थ 'श्री समता प्रकाश' समाप्ति | 1275 |
| | चेतावनी | 1276 |

ब्रह्म सत्यम् सर्वाधार

ओ३म् ब्रह्म सत्यम् निरंकार अजन्मा अद्वैत पुरखा
सर्व व्यापक कल्याण मूरत परमेश्वराय नमस्तं

# पहला अंग

## प्रार्थना

**नमो निरंजन आद जुगादी, जो सरब शकत भरपूर।**
**निमस्कारं निमस्कारं, नित सत तत्त शबद हज़ूर॥**

निमख निमख मैं दण्डवत करूँ। पारब्रह्म की सरनी पड़ूँ॥
पूरण पुरख परमेश्वर ध्याऊँ। सरब सरिष्ट में सो दरसाऊँ॥
अखण्ड सरूप अबगत आपारी। निरमल नाम करूँ विचारी॥
सरब परकाशी जोत सरूप। तीन काल में रहे अनूप॥
अकाल सरूप तत्त निरवान। सहज भाये चित धरूँ ध्यान॥
मंगलकारी तत्त शबद अलेख। सरब जगत तेरा प्रभ भेख॥
नित बन्दूं नित करूँ विचार। परमानन्द शकत निरधार॥
अपरम अपार लीला बिस्तारी। पूरन पुरख जाऊँ बलिहारी॥
अन्तरगत में सरब समाई। नाम तेरा अखण्ड सुखदाई॥
परम धाम तूँ आप स्वामी। अच्छर अबगत तूँ अन्तरयामी॥
पाँच भूत का तूँ ही आधार। आदी पुरख तूँ सरजनहार॥
अचरज शकत अतुल परमान। तूँ ही सत केवल भगवान॥
डण्डवत करूँ पाऊँ अरदास। नित नित राखूँ चरन निवास॥
बिस्माद सरूप तेरा भगवन्त। तूँ ही विचरें रूप अनन्त॥
अन्तरगत में करूँ ध्यान। सतगुर सीख का पाऊँ निधान॥
अत ही अचरज जगत पसारा। रंचक भेद नहीं मिले दातारा॥
करूँ परनाम पल पल की सार। सत ठाकर तोहे नित निमस्कार॥
तेरी ओट पूरन जगदीश। सरनागत हो करूँ आदेस॥
निरमल चित से करूँ ध्यान। आद जुगादी तू सत भगवान॥

**भवसागर में आय के, नारायण चित राख।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, सतगुर की सुन साख॥ 1**

तूँ दीनदयाल सरब का स्वामी। पतितपावन तू परम सुखधामी॥
अनन्त सरूप शकत अनन्त। सरब पसरया तूँ ही भगवन्त॥
अनन्त महमाँ तेरा विवेक। अनन्त सरूप तेरा प्रभ एक॥
तृण तृण अन्दर तूँ समाया। अखण्ड सरूप तेरा प्रभ राया॥
अकथ कथा विज्ञान सरूप। परम पुरख तूँ अत अनूप॥
जब देखूँ प्रभ अन्तर माहीं। तूँ एक समाया पार गुसाईं॥
अपना कौतक आप बिस्तारी। अचरज लेख तेरा पार मुरारी॥
नित ही नित करूँ अरदास। सत ठाकर में करूँ निवास॥
तूँ रखयक सरब जग देवा। पल-पल माँगूँ निर्मल सेवा॥
दात करो अपनी प्रभ राये। तेरी कथा मन माँहीं समाये॥
नित ही बाँछूँ चरनी धूड़। दीनदयाल समरथ्थ हज़ूर॥
अन्तर बाहर तेरा जस गाऊँ। दिवस रैन तेरी कीरत ध्याऊँ॥
तूँ समरथ्थ ठाकर बेपरवाहे। बारमबार महमाँ चित गाए॥
नाम ध्यान पाऊँ तत्त मूल। तूँ व्याप रह्या सूक्षम अस्थूल॥
प्रभ दाते तेरी हूँ सरना। तूँ ठाकर हैं कारन करना॥
अत वडयाई तेरी प्रभ एक। कथ कथ थाके सिद्ध मुनी अनेक॥
राखनहार तूँ आप दयाल। सरब जियाँ पर होयें किरपाल॥
अपने भाने तूँ करें नित दात। निर्मल ध्यान तेरे चरन समात॥
परम परीत रहे चित माईं। तूँ ठाकर परम सुखथाईं॥

**नित हूँ मैं सरनागती, पद परम पुरख प्रभराये।**
**'मंगत' की सुन बेनती, नित प्रभ जी होत सहाये॥ 2**

एक तूँ ही सरब सुखदाता। पूरन पुरख सकल गत जाता॥
नित ही चरनी पाऊँ आधार। सत ठाकर तोहे नित निमस्कार॥
औगुन भरया मन दुःखदाई। अधिक सियानफ़ में भरमाई॥

जीवत की नहीं सार पहचानी। गरब धार भरमे अज्ञानी॥
मूढ़मती धारी दुःखदाई। नहीं चित आवे तेरी वडयाई॥
सत परमेश्वर रखया कीजो। अपने भाने सब खेद हरीजो॥
तूँ साजन सरब दातारी। नित ही चरन जाऊँ बलिहारी॥
पारब्रह्म अखण्ड आपार। शुद्ध सरूप तू ही निरंकार॥
सरब आधारी गोबिन्द देवा। आद पुरख नित माँगूँ सेवा॥
सब चतुराई मन की जाए। दीनानाथ तेरी प्रीत समाए॥
पूरन रूप तूँ अत बलवन्ता। घट-घट व्यापक तूँ भगवन्ता॥
तेरी रसना सब में परकाशी। दीनदयाल तू ही अबनाशी॥
अधिक विकार जिया नित धारी। मोह माया में नित फँसारी॥
सत सोझी नहीं आवे देवा। मूढ़मती नित भरम लखीवा॥
अब कुछ किरपा कीजो स्वामी। निर्मल ध्यान पाऊँ बिसरामी॥
अपनी महमाँ कीजो बख़शीश। प्रेम कमाऊँ चरन जगदीश॥
परचण्ड माया का वेग सब नासो। पततपावन घट में परगासो॥
खिमा ग़रीबी आवे चित धीरा। निर्मल प्रीत पाऊँ सुखसीरा॥
मोह-माया पर विजय लखाऊँ। घट-घट तेरा रूप दरसाऊँ॥

**आध व्याधी सब मिटे, मनुआँ होये सुचेत।**
**'मंगत' नित सरनागती, प्रभ जी हरो विखेप॥ 3**

तूँ दाता तेरे दर आया। सकल आधार तूँ रूप धराया॥
साची भगत पाऊँ निष्कामी। दीनदयाल दीजो बिसरामी॥
अजर अमर तत्त रूप लखाओ। जनम मरन दुःख ताप मिटाओ॥
अकाल सरूप अकरम पद दीजो। भरम बिकार सकल हर लीजो॥
अनादी सरूप पाऊँ प्रभ तेरा। आवागवन का नासे फेरा॥
नित सरनाई करूँ परनाम। निर्मल प्रीत पाऊँ सतधाम॥
चंचल चित तजे चतराई। सत सील मन माहीं समाई॥
दुःख सुख परसूँ तुम आधार। समता रस पाऊँ सुखसार॥
अखण्ड शान्त परसूँ पद स्वामी। करो उद्धार प्रभ अन्तरयामी॥

शोक मोह काटो बिख जाल। सरनागत को करो निहाल॥
साची सेव कीजे चित वास। अनन परीत पाऊँ अबनास॥
करूँ दण्डवत पदपंकज देवा। निर्मल चित से माँगूँ सेवा॥
आज्ञा तेरी में विचरूँ स्वामी। करम फाँस हरो बिख जामी॥
परम दयाल तू ही समराथा। आदी देव परम सुखदाता॥
नित ही अपनी उस्तत दीजो। मूढ़मती को चरनी लीजो॥
सत अरदास चित माहीं समाए। परम पुरख तूँ ही प्रभ राए॥
नमों नमों तेरे नित चरनां। आदी पुरख तूँ कारण करनां॥
सत उपमाँ तेरी चित गाए। साची प्रीत इक नाम ध्याए॥
अखण्ड शान्त प्रभ तेरा धाम। सतगुर सीख पाऊँ बिसराम॥

**सन्तन की सत सीख से, मन तन आवे धीर।**
**'मंगत' सेवा साध की, हरे भरम तकसीर॥ 4**

साचा साहब साचा तेरा नाम। साध सीख परसूँ सुखधाम॥
चरन कँवल में पाऊँ बिसरामा। साची उस्तत केवल सतनामा॥
अन्तर बाहिर आवे परतीत। निरमल नाम के गाऊँ गीत॥
पल पल पाऊँ साची वडियाई। सत ठाकर की जाऊँ सरनाई॥
मनुआँ अन्तर प्रेम रस पाए। परम पुरष के चरन समाए॥
सनमुख होके करे अरदास। सतगुर सीख सब बन्धन नास॥
निमस्कार करूँ तत्त रूप। अज अबनाशी शबद सरूप॥
निमस्कार करूँ नित देवा। चेतन पुरष अखेद अखेवा॥
निमस्कारं रूप नारायन। दिवस रैन मन होये परायन॥
शबद सरूप अन्तरगत धारी। निर्मल चित्त करूँ निमस्कारी॥
प्रभ दाता मेरा रखवारा। करूँ बन्दना बारम्बारा॥
जीवनदाता सो किरपाधारी। करूँ दण्डवत पद पार मुरारी॥
अखय सरूप सम रह्या वियाप। करूँ बन्दना साहब परताप॥
सकल माया का जंतर धारी। करूँ परनाम सत शबद अपारी॥
नाद सरूप पसरे अखण्ड। उस्तत करूँ पाऊँ आनन्द॥

सब जीवों का संकट टारी। करूँ अरदास केवल निरधारी॥
आदी अंती रहे अंग संग। निर्मल चित गाऊँ परसंग॥
जनम मरन का खेद निवारी। नित ध्याऊँ प्रभ किरपाधारी॥
बुद्धी बल तेज परगासे। निर्मल चित करूँ अरदासे॥

**एक नाम प्रभ गाइये, इक चित धरिये ध्यान।**
**'मंगत' पल पल बंदिये, शबद सरूप निर्वान॥ 5**

आलख अपार शबद निर्वाना। अन्तर चित में करूँ ध्याना॥
सरब आनन्द सो पार स्वामी। सो ही ठाकर अन्तरयामी॥
तिसकी उस्तत अपरम अपार। गावें सिद्ध मुनी अवतार॥
घट-घट व्यापक रहे अलोप। परगट पाए गुरमुख भूप॥
तिस साहब की करो वडयाई। जिसने सकली खेल रचाई॥
अपनी महमाँ करी बिस्तार। त्रैगुन माया का रचा पसार॥
अनन्त सरूप हो पसरे स्वामी। अचरज खेल धारे अन्तरयामी॥
सब कुछ धार के रहे अलेप। करो विचार सब मिटे विखेप॥
अपने घट की सोझी पाओ। सत ठाकर को अन्तर ध्याओ॥
सरजनहार जीवन का दाता। शबद सरूप सिमर बिधाता॥
सत स्वामी की सेवा धार। जिसके बल देखें संसार॥
अन्तरगत नित ही परगासे। सतगुर सीख पाओ अरदासे॥
देह मन्दर का जो रखवारी। नित ध्याओ प्रभ किरपाधारी॥
सकली रचना का आप स्वामी। खेले खेल सो अन्तरयामी॥
अंतरपाट भरम कर दूर। अन्तर बाहिर साहब भरपूर॥
सब कुछ तिसका खेल विचार। दु:ख सुख दात साहब दातार॥
निर्मल भगती पाओ भगवन्त। एको परसें रूप अनन्त॥
निर्मल ज्ञान हिरदे में धार। पावें शांत सरूप निरंकार॥
मानुष जनम की पाओ सत रास। एक साहब की करो अरदास॥

**सत सरूप नित ध्याइये, अनन प्रीत चित धार।**
**'मंगत' मिटे सब कल्पना, सत ठाकर चरन पधार॥ 6**

प्रभ अपने की सरन पहचान। मिथ्या भरम जाए गुमान॥
शुद्ध सरूप सदा निरधार। घट घट व्यापे सो निरंकार॥
सकल देही सरजीवत करी। नाम ध्याओ पद निर्मल हरी॥
सकल जगत का सो परकाशी। शबद सरूप आद अबनाशी॥
नित ध्याओ नित सेवा धार। मनमुख भरम जाए ग़ुबार॥
सो ही मूल सरब का मीत। निर्मल चित से गाइये गीत॥
भव दुस्तर अत कठिन कराल। अनमत जीव संकट नित भाल॥
आसा तृषना में बन्धाया। चारखानी में नित भरमाया॥
गोबिन्द सिमर के होए निहाल। बन्धन नास माया का जाल॥
सत तत्त शबद करो विचार। साचे मारग में नित पधार॥
मानुष जनम की कीमत ये ही। जो चित पावे सत शबद सनेही॥
पलक पलक में राखो ओट। मन मूरख की त्यागो खोट॥
पाप करम त्यागो सन्ताप। सत बानी हिरदे में जाप॥
सुकृत जीवन पाओ विचार। असत माया का तजो विकार॥
परमानन्द शबद तत्त बूझ। अखण्ड अबनाशी हिरदे में सूझ॥
मिटे अंधकार परम दुःखदाई। अन्तरगत सत शबद लखाई॥
साची भगती मिले सुखसार। परगट पाइये घर में निरंकार॥
सत स्वामी जब मेल मिलाई। दुर्मत छाया तब लीन समाई॥
एको एक सरब दरसाना। भरम त्याग भयो जीव निर्वाना॥

**सत शबद की सेव से, जाए दुरमत का रोग।**
**'मंगत' तत्त पहचानिये, नित पाइये गुर संजोग॥ 7**

सत परमेश्वर तूँ ही भरतारा। जल थल अंदर तेरा पासारा॥
सत सोझी जब अन्तर पाई। तेरी प्रभता सरब दिखलाई॥
नित ध्याऊँ तेरा रूप आनादी। नित सिमरूँ सत शबद आगाधी॥
अपरम अपार जोत निर्वानी। आलख अभेद ज्ञान परवानी॥
मन मूरख तूँ अन्तर जाग। सत सरूप की चरनी लाग॥
औगुन भरया देह आकारा। भय भरम का अधिक ग़ुबारा॥

किलविख धारे नित अंधकार। भव दुस्तर नहीं सूझे पार॥
अनेक जतन कर मनुआँ राख। सत शबद की कीरत भाख॥
अन्तर स्वामी नित परगासा। रोम रोम में करे बिलासा॥
मोह माया जब मन से भागी। सतनाम रसना घर जागी॥
दुर्मत रोग अधिक दुःखकारी। नित भरमे ये जीव अंधकारी॥
अनन्त मनोरथ वासना घेरी। आवागवन नित पावे फेरी॥
दीनदयाल भये किरपाल। अन्तरगत पाई सत घाल॥
नित ही नाम प्रभू का गाऊँ। तिस आधार जीवन को पाऊँ॥
तिसकी आज्ञा तन मन धारूँ। मन बच करम सतनाम पुकारूँ॥
दुबधा नासे चित धीर समाई। अबगत शबद जोत घर पाई॥
परमानन्द निज रूप पछाता। अत परकाश नाम रँगराता॥
सब औगुन भये जीव के नासा। सत बानी आतम परगासा॥
डोलन त्याग मन शून समाया। सतगुर सीख निर्भय पद पाया॥

**निर्भय होए जीव तब, जब सतसार कमाए।**
**'मंगत' अन्तरगत माहीं, सत ठाकर दरसाए॥ 8**

नमो नमो प्रभ दीनदयाला। सुकृत तेज परम किरपाला॥
नमो नमो नित सत पद अनामी। अपरम धार सरब बिसरामी॥
अन्तर ध्याओ साचा इक नाम। मन की विरत होवे निषकाम॥
सकल व्याधी भरमन जाए। सत तत्त शबद का भेद अर्थाए॥
शबद ध्यान शबद तत्त सार। शबद विवेक ले उतरे पार॥
शबद अनादी रूप निरवाना। घट घट व्यापक सो भगवाना॥
नित मन में प्रभता जाप। सत सरूप में सुरती थाप॥
चंचल जीव सम्मत बुद्ध पाई। राग द्वेष की दूषना जाई॥
नित आनन्द अजर अबनाश। शबद सरूप जोत परकाश॥
पूरन भाग सो ही जन पाई। सत परतीत भये प्रभ सरनाई॥
सत परमेश्वर केवल जाता। दृश्यमान सब भरम पछाता॥
अन्तर माहीं चरन चित ध्याऊँ। पूरन प्रभ को सीस निवाऊँ॥
मंगल देवे हरे सब ताप। निर्मल सुरती से करे जो जाप॥

सकल विकार से मिले निसतारी। अज बिशम्भर जो जपे निरधारी॥
वैर विकार जाए अत रोग। साचे प्रेम का मिले संजोग॥
नित दयालू प्रभ अन्तरयामी। साची ओट पाऊँ सुखधामी॥
प्रेम परसाद चित जीवन पाई। निर्मल ध्यान पाऊँ सरनाई॥
जग धरता तूँ साहब मेरा। भव दुस्तर का काटो फेरा॥
तेरी प्रीत केवल चित गाई। दीनदयाल नित हो सहाई॥

**साची बन्दगी साहब की, जब पाइये चित माहीं।**
**'मंगत' मन निस्चल होये, मिटे भरम परछाईं॥ 9**

नित ही कीरत गाऊँ प्रभ तेरी। तुमरी भगत जग सार घनेरी॥
साचा स्वामी दृढ़ कर माना। तेरा हुकम नित सत कर जाना॥
दोख द्वन्द गये चित रोग। पूरन भाग भयो शबद संजोग॥
अपनी प्रभता साहब दिखलाई। अपनी किरपा करी अधिकाई॥
अंधकार में कियो परगासा। निर्मल चित से करूँ अरदासा॥
किरपाल भये प्रभ दीनदयाल। अत मूढ़े को कियो निहाल॥
निमख निमख चित सेव कमाऊँ। करूँ दण्डवत परम सुख पाऊँ॥
प्रभ दाता किस भाँत सालाहिये। सरब सरूप एको सो पाइये॥
दीनदयाल नित रहो सहाए। काल सरूप का खेद मिट जाए॥
अनन प्रीत राखे नित जीया। चरन कँवल में रहे रमीया॥
पलक पलक तेरी सुध आवे। मोह अगन दुस्तर मिट जावे॥
प्रेम परसाद ले उस्तत गाऊँ। निमख निमख तोहे सीस निवाऊँ॥
दीनदयाल जी करो उद्धार। करूँ नमस्तं बारम्बार॥
साचा रूप मन आए समाए। साची सेवा की बिरह उपजाए॥
साचा करम धरम पाऊँ साच। पद परसूँ निरभय निरवाच॥
जीवत में तेरी इक प्रीत। राखूँ चित में निर्मल रीत॥
प्रभ दाता जी हरो ग़ुबार। नित सरनाई मैं मुगध गँवार॥
अछल अछेद अभेद स्वामी। किरपा दृष्ट करो अन्तरयामी॥
मन का खेद हरो प्रभ राए। निर्मल शान्त चित आन समाए॥

**माँगूँ भीख साहब दरबार, चित बिनसे दूजी आस।**
**'मंगत' रसना नाम की, रहे आठ पहर परगास॥ 10**

सुकृत घड़ी सो ही जग पाई। जब प्रभ दाते की महमाँ गाई॥
अपनी भरमन से पाई ख़ुलासी। दीनदयाल जपूँ अबनाशी॥
किरपा करी अत दीन पर भारी। मूढ़मती का जाल निवारी॥
दीनदयाल नित करूँ अरदास। दुखभञ्जन इक तेरा भरवास॥
अगोचर पुरष सतधाम स्वामी। साची भगत चित बसे निषकामी॥
रूप बिना सुरती रस खाए। सरब सरूप तेरा दरसाए॥
घट का पाट करो प्रभ दूरे। सनमुख दर्शन पाऊँ हज़ूरे॥
इक चित ध्यान पाऊँ तत्त योग। सत शबद चित रहे संजोग॥
कीरत दीजो करो नित दाया। दीनबन्धु तूँ नाम धराया॥
मन मूरख की हरो कुटलाई। दीन बन्दगी चित रहे समाई॥
निरमल घड़ी मिले वड भाग। सत स्वामी का पाऊँ सुहाग॥
अधिक बिरह में भयो दिवाना। परम पिता दियो सार ठिकाना॥
नाम अमीरस नित नित खाऊँ। तेरी महमाँ सब खेल लखाऊँ॥
चौदस चन्दर शान्त परगासे। निर्मल बुद्ध तत्त शबद निवासे॥
द्वन्द विकार जाए मोह जाल। साची प्रीत पाऊँ रछपाल॥
इक चित होके धरूँ ध्यान। महमाँ तेरी नित करूँ बखान॥
तूँ ही तू सरब सुखदाता। नित सरनाई हूँ पुरख बिधाता॥
अत बिसमाद लीला प्रभ तेरी। भवसिन्धू की काटो फेरी॥
सरब शकत का तू ही मानी। तीन काल तू ही परवानी॥

**सकल महमाँ तेरी इक साहब, देव मुनी सिद्ध गाएँ।**
**'मंगत' होवें दयाल जब, तब जन मेल मिलाएँ॥ 11**

जनम जनम का दोख निवारें। सत ठाकर तूँ किरपा धारें॥
अन्धमत जीव पाए विशवाशा। साची भगत मिले अबनाशा॥
विगन विनास घर चानन होई। परम पुरख के चरन समोई॥

बस्ती जंगल एक लखाऊँ। सत सुकृत तेरी महमाँ गाऊँ॥
अबनाशी नाम मन आए परतीत। चौसठ घड़ी गाऊँ तेरा गीत॥
सिमरूँ नाम अन्तर चित माहीं। सरब गत देखूँ एको साईं॥
पार स्वामी सरब परकाशी। अधिक प्रीत से जपूँ अबनाशी॥
मन मूरख आवे सत ठौर। काल कराल का नासे शोर॥
अभय सरूप अगोचर बानी। शबद ध्यान पाया निर्वानी॥
बन्धन नास सुकृत चित भयो। अखण्ड शबद में इस्थित लयो॥
इक परमेश्वर सरब गत देखा। दुर्मत भरम का मिटा भुलेखा॥
पूरन भाग पाई सतसार। सतगुर सीख जाऊँ बलिहार॥
अपने स्वामी के चरन पधारूँ। तन मन अपना तिस पर वारूँ॥
साचा वनज पायो सुखरास। दीनदयाल जपूँ अबनाश॥
प्रभ जी रखया नित ही करो। दुर्मत जाल माया का हरो॥
तेरी उपमाँ चित बसे घनेरी। मोह माया की मिटे अँधेरी॥
गोबिन्द नाम चित अन्तर वासे। बारम्बार करूँ अरदासे॥
आलख लेख भेख तेरा पाऊँ। साचा नाम निरन्तर गाऊँ॥
पूरन पुरख करो नित दात। निस्चल चित तेरे चरन समात॥

**मन का औगुन सब मिटे, नाम ध्यान जब पाइये।**
**'मंगत' मिटे सब कल्पना, घर शबद पदारथ खाइये॥ 12**

शबद ज्ञान पाऊँ सुखसार। निर्मल बुद्ध से करूँ विचार॥
अचरज भेद तेरा निरवानी। पूजें साध तपीशर ज्ञानी॥
सरब व्यापक सब से न्यारा। दीनदयाल तेरा अजब पसारा॥
पाँच तत का खेल रचाया। अन्तरगत तूँ आप समाया॥
भाँत-भाँत का सब दृष्टार। केवल तूँ ही सरब आधार॥
ज्ञानस्वरूप तूँ आनन्दखानी। पाऊँ भेद ना अत अज्ञानी॥
अपनी किरपा करो सतदेवा। निर्मल चरन की दीजो सेवा॥
करमजाल अधिक बिस्तारा। बाँधा जीव फिरे गँवारा॥
अनक भोग तृषना चित धारी। आवे जावे जीव अंधियारी॥

कोट जनम दुरमत से पाए। छाया प्रीत भरम अधिकाए॥
वारापार नहीं मिले कोई थाहे। तूँ परमेश्वर शकत अगाहे॥
नित ही नित करूँ दण्डौत। पूरन पुरख तेरी इक ओट॥
निर्मल ज्ञान हिरदे परगासो। पाऊँ भेद सतनाम बलासो॥
अगम सरूप अगोचर बानी। चराचर जगत खेल दृष्टानी॥
मनमुख अन्धा मूल विसराई। देख अचम्भा नित भरमाई॥
सत ठाकर की सरन विसारी। करमजाल अधिक चित धारी॥
सत सिखया बिन नित गँवारा। निर्मल ज्ञान बिना अन्धकारा॥
अज्ञान विनासे सतगुर दरबार। सत सरूप का मिले विचार॥
पुरख अबनाशी की महमाँ पाए। दुर्मत जाल करम बिनसाए॥

**माया भरम तब नास हो, जब पाइये तत्त ज्ञान।**
**'मंगत' केवल रूप नारायन, हिरदे करूँ पहचान॥ 13**

सत सरूप का करो विचार। मन मूरख तू सार नित धार॥
छाया रूप जगत की बेला। अधिक ग़ुबार में फिरे अलबेला॥
आवें जावें तृखा को धारी। पावें ना तृप्त बिन ज्ञान विचारी॥
अपनी करनी सार चित धार। मानुष जनम की पाओ सतसार॥
अपना सरजनहार चित राख। निर्मल चित से रसना चाख॥
गरब ग़रूर से उठ के जाग। पूरन करमी हर चरनी लाग॥
जीव को शान्त तब ही आए। ज्ञान सरूप जब शबद ध्याए॥
अपने भरम को आप निवार। पूरन प्रभ की सरन विचार॥
सो अत दाता किरपाधारी। सरनागत को दे निसतारी॥
निश्चल बुद्ध करो दिन रात। सत सरूप चित सेव कमात॥
साचा ठाकर सरब दातारी। चार पदारथ का भण्डारी॥
नौ निध देवे सो भगवन्ता। पतित जीव पावे परसन्ता॥
नित सरनागत हूँ पार स्वामी। तुम रखयक घट घट बिसरामी॥
मूढ़मती को उज्जल कीजो। सत परताप अपना प्रभ दीजो॥
हरो विखेप भरम सन्ताप। निर्मल ज्ञान करूँ नित जाप॥

अत प्रभता का तूँ ही स्वामी। माँगूँ दीन भाओ निषकामी॥
करो बख़शीश पुरख भगवन्ता। सत सरूप की पाऊँ सन्था॥
जगत पसार भरम को नासो। सत तत्त शबद हिरदे परगासो॥
बाहरमुख की दुबधा जाए। अन्तरमुख तेरे चरन समाए॥

**अन्तरगत सिमरन करूँ, प्रभ तेरा रूप अगाध।**
**'मंगत' निर्मल चित से, पाऊँ ज्ञान समाध॥ 14**

मन मूरख तूँ त्याग कुटलाई। अपने भरम में आप बँधाई॥
अपनी करनी नित गत देवे। ऊँच नीच जूनी जो सेवे॥
करम चक्कर से मिले ना छूट। दुःख सुख भोग देवे अत कूप॥
अन्धमत धार नित रहे प्यासा। काल करम की जाए नहीं फाँसा॥
जाग्रत होके करो विचार। निर्मल करनी हिरदे में धार॥
देह अभिमान करो नित त्याग। सरजनहार के चरनी लाग॥
करमफल इच्छया दीरघ रोग। राग द्वेष का होवे संजोग॥
भय भरम में नित गरसावे। गरब को धार अधिक दुःख पावे॥
भवसागर में सार विचारो। साचा नाम निरन्तर धारो॥
तत्तसरूप शबद को ध्याओ। मनबांछित सम्पत घर पाओ॥
भरम चक्कर से मिले ख़ुलासी। सतसरूप परसें अबनासी॥
परम आनंद शकत निर्वानी। अन्तर सूझ तत्त अमरत खानी॥
सचदानन्द अखण्ड परगास। घट अन्तर सो करे निवास॥
निर्मल चित से सेव कमाओ। भव दुस्तर कठन तर जाओ॥
ये परमान धारो नित चीत। प्रभ दाते के गाओ गीत॥
मन मूरख की करो सँभाल। भज लो साचा दीनदयाल॥
पावें शान्त घर अपने माहीं। सरब सरूप अन्तर चित ध्याईं॥
आनन्द सरूप केवल प्रभ आप। दुर्मत माया अत सन्ताप॥
तुच्छ जीवन में सार ध्याओ। भय त्याग अमर पद पाओ॥

**सत सरूप के ध्यान से, जाए इच्छया का रोग।**
**'मंगत' सतगत पाइये, जब पूरन गुर संजोग॥ 15**

निर्मल नाम की कीरत गाओ। अन्तरगत में ध्यान लगाओ॥
मन की बांछा होवे पूरी। पद नारायन सिमर हज़ूरी॥
रे मन मेरे सदा आराध। साचा साहब पुरख आगाध॥
नित भिख्यारी हो प्रभ दरबार। माँगो नाम रतन सुखसार॥
भरम भूल मोह अगन त्याग। साचा प्रेम पाओ वड भाग॥
अपने स्वामी की करो अरदास। जग जीवन पाओ तत्त परगास॥
नित आनन्द पूरन सो आप। भाओ प्रेम से कीजो जाप॥
क्यों भरमाया देख जग मेला। आवें जावें नित अकेला॥
क्यों भरमें तुच्छ जीवन माहीं। इस्थिर जग में रहना नाहीं॥
जगत सराए मन करो विचार। आवें जावें अनगिनत आपार॥
रोते आवें रोते जावें। गरभ को धार अधिक दुख पावें॥
अत ही अस्चर्ज माया गत धारी। असत भरम को सत विचारी॥
केते आवें भरम के माईं। केते भरमें देख परछाईं॥
बंधन अधिक त्रैगुन जंजाल। सकल जीव नित संकट भाल॥
राजा राना रंक भिखारी। तृषना रोग लागा अत भारी॥
घालत घाल रहें निरास। मनमुख भरम नहीं मिटे प्यास॥
जो देखत में आवत मीता। सब ही धारें अधिक दु:ख रीता॥
होये परापत वस्तू जोई। पाए ना धीर चित भरम परोई॥
चौसठ घड़ी कलपना धारी। दुर्मत रोग ये अधिक आपारी॥

**माया चक्कर ये जगत है, सब ही जीव भरमाएँ।**
**'मंगत' बिन प्रभ सिमरने, नित आवें नित जाएँ॥ 16**

दुर्गम खेल जगत विचारो। कहाँ से आया कहाँ जाएँ पधारो॥
कौन रूप तेरा सत मीत। करो विचार हरो भ्रम भीत॥
पाँच तत्त देह मन्दिर औसारा। साखी सरूप खोज निरंकारा॥
तत्त पहचान से दुर्मत नासी। शान्त सरूप शबद परगासी॥
ना कोई आवे न कोई जाई। माया भरम ये सब दरसाई॥
जिस जन माया भेद पछाता। सत ठाकर तिस सब घट जाता॥

अधिक कलेश भरम की छाया। अनमत जीव रहे तिरखाया॥
इस भरम का करो उपाए। जिस बिध जीव अमर पद पाए॥
मनमुख भरम जीव नित धारी। करम रोग में रहे मतवारी॥
आस आस में आवत जाए। भरम माहीं नहीं तृपत को पाए॥
कोट जनम इस भेद में धारे। मनमुख भरम जो नित संचारे॥
इस दीरघ रोग का खोज निदान। सतगुर सीख का सुन परमान॥
भरम कलपना होवे सब नास। सत सरूप का मिले विशवास॥
जीवन में सत कारज पाई। मनमुख भरम तजे परछाई॥
नित ही अपने धाम को जाए। सत मारग में रहे समाए॥
तृष्ना अगन का नासे ताओ। शान्त सरूप शबद घर पाओ॥
मिथ्या भरम से होए खुलास। सत सरूप परसें अबनास॥
अबनाशी तत्त जब घट परगासा। नाम रूप सब भरम विनासा॥
एको रूप सरब में पाई। पूरन पुरख की लखी वडयाई॥

**हरजन दुर्लभ जग आए, जिन साचा मारग पाया।**
**'मंगत' भरमन त्याग के, सतनाम प्रभू का गाया॥ 17**

नित ही मन में करो विचार। साचा नाम परम सुखसार॥
उट्ठत बैठत नाम ध्याओ। प्रभ अपने को सीस निवाओ॥
आज्ञा में देखो सब किरया। सतसरूप सकल पसरया॥
साची नीती नित उठ घाल। साचा शबद अमीरस भाल॥
जनम मरन की विरत त्याग। निरमल शबद का गाओ राग॥
शबद अबनाशी शबद निर्वाना। घट घट अन्तर शबद समाना॥
अबगत पुरख अनादी देव। निर्मल चित से परसो सेव॥
ज्यों ज्यों शबद सार को ध्याई। मनमुख भरम जीव का जाई॥
दुर्मत नास सम्मत परकाशी। हिरदे चेत केवल अबनाशी॥
मिथ्या देह की ममता जाए। सतसरूप शबद घर पाए॥
कभू ना भूलो साचा नाम। सिमर सिमर पावें बिसराम॥
सार ज्ञान ये ही है मीत। सरजनहार को राखो चीत॥
माया चक्कर अत घना कलेशा। बिना विवेक नहीं मिटे संदेशा॥

सत विवेक हिरदे में धार। चेतन सरूप सिमर निरंकार॥
निर्मल चित से नाम कमाओ। सतगुर सीख सतधाम समाओ॥
जग आवन ये भेद विचार। नाम प्रभू में प्रीती धार॥
करता हरता ठाकर चेत। आज्ञा मान सब मिटे विखेप॥
भरम फुलवाड़ी जगत की रचना। काल कलपना सकल ये सुपना॥
नाम पदारथ हिरदे चाख। जाए व्याधी दुर्मत साख॥

**एक सरूप भगवन्त को, मन अन्तर सदा चितार।**
**'मंगत' दुस्तर जगत से, तब जन उतरे पार॥ 18**

सत ठाकर की सेव कमाओ। निर्मल धाम अभय पद पाओ॥
अन्तर चित नाम नित राख। सत सरूप शबद को चाख॥
पाँच दोख तीन ताप विनासे। अजर धाम बानी परगासे॥
अमरत पान करें दिन रात। अखण्ड शबद में लीन समात॥
द्वन्द विकार से निर्मल होए। साचा नाम जब हिये परोए॥
अपरम महमाँ नाम की मीत। असंख गुनी गावें नित गीत॥
रिखी रिखीशर सिद्ध बुद्ध ध्याएँ। नाम सिमर के शान्त समाएँ॥
प्रभ पूरे की अत वडयाई। गुरमुख विरले सोझी पाई॥
रे मन सदा आराध प्रभ एक। दृढ़ निश्चे से राखें टेक॥
जाए ग़ुबार सकल मन ताप। निर्मल चित से नाम अलाप॥
आवत जावत तजे चतुराई। इस्थित धाम शबद घर पाई॥
निर्मल जुगत अन्तर चित धारी। पूरन प्रभ की सरन विचारी॥
अन्तर में अन्तर तत्त पाया। अनहद नाद परम पद ध्याया॥
शबद में सुरती नित ही धाए। एको सिमर परम सुख पाए॥
अज्ञान मूल हंकार विनासा। सत ठाकर शबद परगासा॥
करता जान भावी तिस मानी। राग द्वेष गई भरम निशानी॥
रुच रुच चरनी पायो मेला। परम आनन्द शबद घर खेला॥
सुरती नित ही सेव कमाए। पारब्रह्म घर परगट ध्याए॥
धन्न भाग हरजन जग पाया। अगम पन्थ का भेद लखाया॥

**अन्तरमुख हो सिमरया, एक नाम तत्त सार।**
**'मंगत' परगट पाया, अबगत शबद निरंकार॥ 19**

साचा शबद पायो अबनासी। दुर्मत छाया रोग विनासी॥
अन्तर चित पाई वडयाई। तृखा विनास शान्त अत पाई॥
प्रभ दाते ने कियो निहाल। बन्धन भरम काटा दुःखजाल॥
दीनदयाल हूँ नित सरनाई। बौहड़ ना व्यापे दुर्मत काई॥
सत सील हिरदे परगासो। दीन भाओ में करूँ निवासो॥
तूँ भण्डारी सरब का दाता। माँगूँ प्रेम चरन रँगराता॥
सनमुख प्रगट रहो त्रैकाल। सिमर सिमर मन होए निहाल॥
नाम रूप जाए अन्धकार। अनामी धाम पाऊँ निरधार॥
तूँ ही तू एक परकास। जिस आधार करें सकल बिलास॥
परमेश्वर तूँ उस्तत योग। अनमत जीव के हरो सब रोग॥
क्या बखानूँ तेरी वडयाई। आपे करता खेल खलाई॥
सकल ताप से जीव को राखो। अपना ज्ञान दीजो सत साखो॥
बारम्बार करूँ परनामा। तूँ परमेश्वर इस्थित धामा॥
तेरी महमाँ चित आए समाए। प्रभ दाता जी होत सहाए॥
अन्ध बुद्धी विचार से हीना। दुर्मत भरम में नित लिपटीना॥
कह बिध राखूँ तेरी ओट। मोह माया अत धारूँ खोट॥
सकल विकार दुबधा को टारो। निर्मल प्रेम पाऊँ नाम आधारो॥
चौसठ घड़ी करो प्रभ दात। खिमा ग़रीबी चित रहे समात॥
नाम आधार ले पाऊँ धीर। जनम जनम की हरो प्रभ पीड़॥

**संकटहरन मंगल का दाता, प्रभ का नाम चितार।**
**'मंगत' जतन ये सार है, नित ही नित जप सार॥ 20**

नित ही सिमरो परम तत्त मीता। सिमरन सार मुकत की रीता॥
नाम का सिमरन अचिन्त पद देवे। निर्वान सरूप शबद रस लेवे॥
हिरदे माहीं नाम नित जाप। निर्मल ध्यान में सुरती थाप॥

बिमल नाद घर करी पुकारा। जो जन सिमरे पाए निस्तारा॥
आद सत अन्त भी सतसार। शबद की महमाँ अत आपार॥
कोट नाम शबद का जाप। वेद ग्रन्थ नित करें अलाप॥
ब्रह्म सरूप अखण्ड अछेद। सत शबद का परसो भेद॥
निरंकार अजन्मा नित अद्वैत। मन बानी की गम नहीं लेप॥
अत न्यारा नहीं कोई परमान। जो शबद की महमाँ करूँ बखान॥
अत ही निर्मल ज्ञान परकास। सरबगत पूरन करे निवास॥
सो परमेश्वर नित हिरदे ध्याओ। ताप त्याग मुकत रस पाओ॥
काल करम का लेप नहीं पाए। अनादी रूप केवल प्रभ राए॥
सब जीयाँ में करे निवास। सर्वज्ञ सरूप सिमर अबनास॥
अन्तर बाहर सम परगासा। चार कुण्ट में करे निवासा॥
पूरन रूप पसरे सब रंग। अन्तरगत रहे सरब असंग॥
अचरज कौतक धारन करी। भज गोबिन्द सब दुर्मत टरी॥
अखण्ड अनाद शबद तत्त जाप। निहचल सुरती ज्ञान में थाप॥
परम पुरष कल्यान सरूप। पलक ध्यान हरे भ्रमकूप॥
आनन्दकन्द मूरत जाऊँ बलिहार। प्रभ दाते तेरा अजब पसार॥

**सत निस्चय से पूजिये, सत तत्त आतम देव।**
**'मंगत' अत अस्चरज है, कोई गुरमुख पावे सेव॥ 21**

प्रेम परगास शबद निर्वानी। अन्तर देह सत कथा पहचानी॥
सुन्न धाम शबद तत्त बोले। ज्ञान विज्ञान की रसना तोले॥
अपने आप केवल तत्त सार। सदा अलिप्त रमे निरंकार॥
गुपत सरूप परगट घर पाए। पूरन भाग प्रभ मेल मिलाए॥
अती विकार में मन लवलीना। शबद ध्यान से होये पाप छीना॥
अंधकार में चानन होई। अचरज कथा सतनाम लखोई॥
ध्यावें कोट मुनीजन पूरे। अकथ कथा तत्त शबद हज़ूरे॥
अत ही बिसमाद साहब का खेला। सतगुर सीख पावे जन मेला॥
निर्मल धुन्न नाद किलकारी। अधिक सरूर सुरत मतवारी॥

इच्छया करम विखाद सब नासा। निर्भय नाम में लीना बासा॥
अपने आप पर सोझी पाई। निर्मल ध्यान सत शबद कमाई॥
सब कुछ धारन सो प्रभ धारे। पूरन शकत सरब बिस्तारे॥
रञ्चक महमाँ नहीं होये बखान। असंख ज्ञानी कथें तत्त ज्ञान॥
केवल प्रेम राखो नित चरनाँ। नित ही सिमरो प्रभ कारन करना॥
मन में निर्मल नाम चितारो। पल पल शोभा साहब विचारो॥
गरब देही नासे अन्धकार। परगट पाइये शबद निरंकार॥
सहज सुरत तत्त शबद ध्याए। ताप त्याग आनन्द गत पाए॥
प्रेम की खानी शबद की धारा। अन्तर सुन्न करे किलकारा॥
आप सरूप सरब परकासे। गुरमुख साजन लियो निवासे॥

**शबद पुरख को ध्याइये, शबद का कथिये ज्ञान।**
**'मंगत' नित निध्यासिये, शबद सरूप निरवान॥ 22**

भरमन त्याग सत शबद चितार। सकल स्वामी जप बारमबार॥
क्यों भरमाया मूढ़े जीया। राखनहार तुध माईं रमीया॥
सतगुर सीख अन्तर चित धार। पावें अबगत रूप मुरार॥
दुःख को हरता शांत परगासी। नित ही सिमर पुरख अबनाशी॥
निमख निमख सतनाम कर पान। सत उपदेश मन माहीं पछान॥
मन का संसय सकल मिट जाई। प्रभ अपना नित चित ध्याई॥
मिथ्या देह विकार सब नास। निर्देह शबद अन्तर परगास॥
नित ही प्रभ की सरन पहचानी। बन्धन हरे देवे कल्यानी॥
इन्द्री विकार सहज ना जाई। करम चक्कर नित नित भरमाई॥
अनक रसना में मन भरमाया। भोगे भोग रोग बहु पाया॥
नित ही जीव तृखत रहाई। सत शबद बिन तृप्त नहीं पाई॥
ग़फ़लत त्याग सत ठाकर पूज। निर्मल शबद शान्त घर बूझ॥
बाहरमुख हो नित दुःख पाई। करम वासना अधिक भरमाई॥
छाया प्रीत करे अशान्त। काल कलपना धरे भरान्त॥
सत सोझी बिन आवे जावे। मूरख जीव शान्त नहीं पावे॥

साचा मित्तर परम सुखदाता। तिसे विसार नित पाए तरासा॥
औगुनकारी मंद निस्चय त्याग। गुरमुख ज्ञान नाम रस लाग॥
प्रभ दाता नित करे कल्यान। साची प्रीती सिमर भगवान॥
तिसकी ओट केवल चित राख। तिसकी रसना नित नित चाख॥

**मिथ्या देह विकार अत, तृष्ना अगन बढ़ाए।**
**'मंगत' सो जन मुक्ता भये, जो नाम जपें सुखदाए॥ 23**

अत वडयाई नाम भगवन्त। तृप्त भये ये जीव तृखन्त॥
और ना मारग कोई दिखाई। जिससे जीव कलपना जाई॥
और पदारथ ना कोई देखा। जिससे दुरमत मिटे भुलेखा॥
और ओट सब दुःख की खानी। मूढ़मती में नित भरमानी॥
बिन प्रभ ध्यान और की ओट। सकल मनोरथ काल की चोट॥
सँभलकर अपना जनम सुधार। पूरन पुरख की सरन पधार॥
सतगुर सीख की ये सतसार। हिरदे सिमर सतनाम आपार॥
मिथ्या नाम रूप आकारा। नित ही कल्पे जीव अन्धकारा॥
कलप कलप कर पाए कलेशा। राग द्वेष नहीं मिटे सन्देशा॥
सकल रोग का औखद एक। सतनाम का कथो विवेक॥
मिथ्याकार वासना नासी। सतनाम जो हीये उपासी॥
अच्छर सरूप ब्रह्म परगास। सहज जुगत घर लीना बास॥
शास्त्र सिमरत का सकल सिद्धांत। मूल विचार सकल मतान्त॥
गुर पीर की सिखया सार। सत उपदेश नबी अवतार॥
केवल नाम सिमर प्रभ एक। दृढ़ निश्चे से राखो टेक॥
करम विकार पाप सब जाई। सत शरधा प्रभ नाम ध्याई॥
प्रभ आधार जीवन जिस पाया। करम करूर का खेद मिटाया॥
त्रैगुन इच्छया करम कलेशा। प्रभ का सिमरन सब हरे सन्देशा॥
सत विचार मन माहीं विचारो। ममता त्याग समता चित धारो॥

**करम वासना भरम जीव को, तीन काल भरमाए।**
**'मंगत' नाम प्रभ सिमरिये, तब मूल रोग ये जाए॥ 24**

सकल रोग का मूल पहचान। जो चित धारे अत अभिमान॥
धार गरब तृखा को पाई। करम भोग में नित लिपटाई॥
अनन्त करम का भोग नित करी। रंचक शान्त नहीं मन में धरी॥
अत ही तृष्ना वेग को धारी। पाप करम में नित मतवारी॥
ये ही भरम गवन का दाता। हंग बुद्ध मूल सन्तापा॥
कोट जनम भरमत भरमाए। करम रोग नहीं दुर्मत जाए॥
राजा राना रंक दरवेशा। गुनी ज्ञानी मुनी मुनीशा॥
चारखानी में विचरत जोई। करम चक्कर सबको फिरोई॥
परचण्ड माया का चक्कर अधिकाई। त्रास त्रास सब जीव लखाई॥
काम क्रोध मोह अगन को धारी। नित ही जीव संकट विचारी॥
जनमे मरे नित आवे जाए। करम वासना बहु रंग दिखलाए॥
बिन तत्त ज्ञान अधिक दुःख पाई। ऊँच नीच जूनी भरमाई॥
मानुष जनम सतसार विचार। करम रोग से पाओ निसतार॥
करम वासना ये दीरघ जंजाला। रहे अशान्त जीव त्रैकाला॥
मिल सतसंग ये खेल विचार। सत मारग का निरनय धार॥
मूढ़ मती में औसर जाई। पलक पलक लयो सार कमाई॥
अपना बन्धन आपे काट। निर्मल सीख निरन्तर राट॥
जीवत में जो घाल करीना। तिस अनकूल गती को लीना॥
ताँ सों मारग खोज सुखदाई। जो इस जीव की गवन मिटाई॥

**करम चक्कर संसार ये, जीव गवन नित पाए।**
**'मंगत' मिले तब शान्ती, जब सार शबद चित ध्याए॥ 25**

साचा शबद निरन्तर ध्याओ। परम पुरख को सीस निवाओ॥
सब कुछ तिसकी किरपा जान। दुःख सुख देखें जो परमान॥
दृढ़ निस्चय से राखो ओट। करम वासना त्यागो खोट॥
ज्यों भावे त्यों चक्कर चलाई। समरथ पुरष सब खेल खिलाई॥
द्वन्द विकार से छूटन पाओ। आज्ञा बूझ शबद तत्त ध्याओ॥
निर-आधार जीवन को धार। केवल प्रभ का राख आधार॥

करनेहारा सो ही स्वामी। अन्तर बाहर रहे बिसरामी॥
घट घट की सब जाननहारा। दृढ़ निस्चय से जप करतारा॥
साचा नेहों राखो प्रभ चरनाँ। पलक पलक पाओ तिस सरनाँ॥
सब कुछ हूआ तिस आधार। मन से त्यागो हंग विकार॥
दीन ग़रीबी शरधा पाओ। पूरन प्रभ को सीस निवाओ॥
ठाकर साचा नित रखया करी। सत विशवास जो अन्तर धरी॥
मन का डोलन दृढ़ कर राख। छिन छिन नाम की रसना चाख॥
तृषना रोग जाए सब ताप। अन्तरगत पाए प्रभ का जाप॥
गुप्त सरूप घर परगट होई। सरब आनन्द तत्त सार परोई॥
धन्न साजन जिन पाई कल्याना। नाम आधार जग सार पहचाना॥
सार पहचान मन लीन समाई। करम वासना खेद सब जाई॥
तत्त पहचान के भयो निहाल। पद परसा प्रभ दीनदयाल॥
परम आनन्द उस साजन पाया। प्रभ अपना जिस हिये ध्याया॥

**साची भगती प्रभ चरन की, जब मन आन समाई।**
**'मंगत' दुबधा सब मिटी, जीव परम सुख पाई॥ 26**

नित ही मारग सुफल विचार। तत्त कल्यान नाम जप सार॥
दुर्मत रोग अधिक ये लागा। अन्ध विचार में फिरे अभागा॥
ना सत सोझी ना सत विशवासा। करम भोग धारी अत फाँसा॥
अधिक जलन में जीव दुःख पाए। सत विचार बिन आवे जाए॥
सत तत्त साजन करो विचार। अपने भरम से पाओ निस्तार॥
मानुष जनम ना अकारथ खोयो। परमारथ तत्त सार परोयो॥
परमारथ मारग है कल्याना। सतपुरषों का ये फ़रमाना॥
निर्मल सीख मन अन्तर धार। पल पल मारग सत विचार॥
परम पुरख नारायन चेत। दुर्लभ जीवन का मिटे विखेप॥
सत आधार जीवन को पाओ। भव दुस्तर पर विजय लखाओ॥
कोटाँ कोट आवें नित जीया। भरम चक्कर सबको भरमीया॥
एक पलक की शान्त नहीं आवे। चक्करवरत जो राज कमावे॥
सुकृत आवन तिन जग पाया। मिल सतसंग प्रभ नाम ध्याया॥

दृढ़ निस्चय प्रभ चरनी राखा। साचा मारग मुकत का भाखा॥
अपनी कलपत सकल निवारी। और जीवों की सेवा धारी॥
सत सील पायो उपकारा। सेव सेव चित शान्त विचारा॥
पर-दुःख को नित नित निवारी। साची सेव कल्यान को धारी॥
ज्यों ज्यों पर की सेव कमाए। निष्काम विरत सतनाम ध्याए॥
तब साची भगती पाई भगवन्ता। तपत जीव नित शान्त रमन्ता॥

**दुर्लभ गुरमुख जग आए, जिन प्रभ की भगत विचारी।**
**'मंगत' आप तरे संसार से, कई कोट किये निस्तारी॥ 27**

नित ही नाम प्रभू का गाएँ। साची भगती सार कमाएँ॥
सो ही गुरमुख तत्त के वादी। नाम सिमर के हरी व्याधी॥
निर्मल रंग में सुरत रँगाई। प्रेम का चोला अन्तर पाई॥
मनमुख भरम की दूषना टारी। साची औखद प्रभ नाम विचारी॥
प्रन अपने में पूरन होए। इक चित प्रीत प्रभ नाम परोए॥
जग आवन तिन पाई सार। अपने आप का कियो सुधार॥
ज्ञान सुगन्धी परगट भई। अनक जीव ने सतमत लई॥
अन्तर चित अधिक विशवासा। साचे नाम की अधिक प्यासा॥
जीवन पायो प्रभ आधार। साची भगती करी विचार॥
नित नित चरनी करी दण्डौत। प्रभ दाते की पाई ओट॥
भय भरम चित खेद निवारी। सत ठाकर का भयो पुजारी॥
निर्मल कीरत जग में पाई। कल्यान सरूप सत शबद ध्याई॥
साची रास पाई अनमोल। नाम प्रभू पाया हिरदे तोल॥
अपने मन में पाई परसन्ता। नित नित नाम जपूँ भगवन्ता॥
आदेस करूँ प्रभ अन्तरयामी। बिपत त्याग पाऊँ बिसरामी॥
दीनदयाल सहायक भये। अपने जन को चरनी लये॥
उस्तत करूँ प्रेम रस खाऊँ। दुबधा त्याग निरभय समाऊँ॥
ये ही धाम परम पद मीत। जो नाम प्रभू का आवे चीत॥
सुकृत मूरत चरन बलिहारी। प्रभ दाते की जिस कथा विचारी॥

**जिसने हर जस गाया, परम पुरष सो ही देव।**
**'मंगत' दुबधा सब मिटे, जब पाइये चरन की सेव॥ 28**

अधिक बिकराल मन का दाओ। रैन दिवस में नित भरमाओ॥
भय भरम में रहे लवलीना। संकल्प विकल्प में नित भरमीना॥
एक पलक नहीं शान्त समाई। अधिक सम्पत जो घर में पाई॥
ग्रहन त्याग की धारी नित किरया। हरख शोक नित अन्तर धरया॥
जीवन आसा और लोभ विकारा। परनिन्दया में नित मतवारा॥
अती गरब ग़रूर को धारी। अत बिकार मन दुष्ट विचारी॥
नित कुसंग में करे निवास। पाप करम की धारे फाँस॥
अधिक उपाय करे नित जीया। तो भी मन नहीं धीर लखीया॥
बिना विवेक बिन सतसंग मीता। कभूं ना मनुआँ होए पुनीता॥
मन मलीन अधिक दुःखदाई। बिना विचार ठौर नहीं पाई॥
अन्ध विचार में नित गरसावे। पाप भोग में नित भरमावे॥
अपनी ग़फ़लत से पावे पीड़ा। हाहाकार चित्त धरे घनेरा॥
मिल सतसंग पाओ सत विचार। जिस बिध मनुआँ पावे सार॥
नित सरूप का सुनो परसंग। सत विचार का धारो रंग॥
पूरन जतन राखो चित माहीं। दृढ़ विशवास सतनाम ध्याईं॥
प्रेम साहब का मैल सब धोवे। अन्तर चित जो गुनी परोवे॥
अधिक विचार करो जग रचना। बिन भगवन्त सकल है सुपना॥
सकल मनोरथ भरम की टाटी। अन्ध ग़ुबार चित लीन समाती॥
बिन प्रभ भगत नहीं पावे बिसरामा। करम संजोग धारे दुःख जामा॥

**माया के अन्धकार में, जीव गवन नित पाए।**
**'मंगत' धार सयानफ़, नित प्यासा जाए॥ 29**

साचा मारग खोज सुखदाई। मन के दाओ में मत भरमाई॥
सतगुर सीख हिरदे में चाख। मन की दुर्मत हरो सन्ताप॥
देह मिथ्या सत सरजनहार। निश्चल चित से करो विचार॥

इन्द्री भोग छिन नास को पाई। भरम विकार में क्यों भरमाई॥
सतस्वरूप परमेश्वर ध्याओ। निर्मल धाम अभय पद पाओ॥
करम जंजाल अधिक दुःखखानी। हाहाकार करें सब प्रानी॥
एक छिन में सब नास हो जाई। मूरख जीव अधिक दुःख पाई॥
खरी सयानफ़ नित चित धार। पूरन प्रभ को हिये विचार॥
अपना सरजनहार सत जान। मिल सतसंग सतकथा बखान॥
निर्मल ध्यान सत कीरत विचार। अधिक वडयाई प्रभ चरन पधार॥
दृढ़ निस्चय से राखो ओट। तब इस मन के जाएँ खोट॥
मिथ्याकार वासना त्यागे। सत विवेक ले हरजन जागे॥
सत पदारथ नाम का पाए। दीनदयाल का नित जस गाए॥
साची भगत शान्त पद देवे। पूरन भाग जो गुरमुख सेवे॥
नित ही विचार करो ये मीत। वस्तू कौन जगत सुखरीत॥
कुटुम्ब परिवार सम्पत अधिकाई। आसा तृष्ना नहीं लीन समाई॥
अत विकार करे अंध्यारी। अत सम्पत जो जग में धारी॥
अन्तकाल नहीं दिसा विचारे। गरब धार बहु पाप लखारे॥
ओड़क जग से चले प्यासा। छाड के सम्पत छार कियो वासा॥

**क्यों भरमाया नित मन मूढ़े, ओड़क छार समाना।**
**'मंगत' कोई सखा ना होवे, जब जीव तजे देह प्राना॥ 30**

नित ही अपना अन्त विचार। साचा वक्खर खाट संसार॥
वस्त ना कोई चले संग मीता। लोक कुटुम्ब झूट देह प्रीता॥
साचा नाम साहब नित ध्याओ। ओड़क जग से जीत को पाओ॥
देह परगासे जो स्वामी। त्याग गरब भज अन्तरयामी॥
अमरत नाम केवल प्रभ एक। जो इस मन की हरे विखेप॥
निर्मल चित से करो विचार। जग जीवन केवल दिन चार॥
अपना निर्मल धाम पहचान। भज गोबिन्द पावें कल्यान॥
सतसरूप शान्त का सागर। अन्तर चित में करो उजागर॥
सब कुछ करनेहारा सोई। परम समरथ्थ सिमर सुख होई॥

सब कुछ प्रभ का देख पसार। सत विवेक हिरदे में धार॥
तीन काल सो ही रखवारा। जल थल अन्दर सो भरतारा॥
उतपत परलय इस्थित कीजे। सब खेल में आप वरतीजे॥
निर्मल चित से उस्तत पाओ। साची कीरत प्रभ की गाओ॥
बन्धन काट मुकत को देवे। सत परतीत चरन जो सेवे॥
नित अरदास करो प्रभ स्वामी। नित रखयक सो पारगरामी॥
साची प्रीत से ध्यान लगाओ। निर्मल चित से नाम ध्याओ॥
साचा करम हिरदे में चेत। प्रभ की दात प्रभ दीजो भेंट॥
नित ही प्रभ का हुकम विचार। आज्ञा मान जतन ये सार॥
करम की फाँस से मिले रहाई। निर्मल चित से जो सेव कमाई॥

**झूट भरोसा त्याग के, राखो सत भरवास।**
**'मंगत' जगत को देख के, ना भूलो प्रभ अबनास॥ 31**

प्रभ अबनासी की सरन पहचान। जनम मरन से होये कल्यान॥
सब ही रचना काल सरूप। पल पल लाख विटावे रूप॥
इस्थिर रहे कछू जग नाहीं। कित उपजे कित नास को पाईं॥
जग ये मेला करो विचार। आवें जावें जीव आपार॥
मेला सकल संग और साक। मेला जोबन जरा को भाख॥
अत अस्चरज ये जगत पसारा। देखत देख बहुरंग विचारा॥
अन्धा जीव तृपत नहीं पाई। जादू देख नित ही भरमाई॥
आद अन्त की सूझ ना होई। मद्ध में नित ग़लतान समोई॥
छिन छिन खेल रूप विटाए। देख अचम्भा नित तिरखाए॥
सतसरूप बिन सब दुःख धारी। रचना जगत जो अधिक विचारी॥
सत सरूप बिन ठौर नहीं पाए। मिथ्या मोह में आवे जाए॥
देखत में ये अजब तमाशा। तिसका भोग देवे भय त्रासा॥
नित ही गुनीजन करो विचार। इस्थिर रूप सिमर निरंकार॥
साची भगती साधन धार। जगत भरम से मिले छुटकार॥
इन्द्री भोग अधिक ये प्यासा। भोगे भोग रहे निरासा॥

मोह त्याग माया अंधकार। सत मारग प्रभ नाम विचार॥
सुखदाता नित शान्त वरताई। मन में राख तिसकी प्रभताई॥
अत ग़ुबार जाए चित रोग। नाम साहब का पावें संजोग॥
अन्तर नित ही करें विचार। सत ठाकर का पाएँ आधार॥

**एक साहब की टेक रख, दुर्मत मोह को त्याग।**
**'मंगत' मारग ज्ञान का, कोई गुरमुख पाये वडभाग॥ 32**

साचा ज्ञान साचा ये ध्यान। साची बुद्धी भई परवान॥
जिस चित अन्तर प्रभ चरन प्यार। सुकृत मूरत सो जन बलिहार॥
एक भरोसा विचार इक धारी। सतसरूप जिस सेव विचारी॥
जगत सराय नित करी विचार। साचा वनज प्रभ नाम चितार॥
आठ पहर सतधाम निवासी। साची कीरत प्रभ चरन बिलासी॥
वस्तू कोई नहीं चित में भाए। मिथ्याकार सरब दिखलाए॥
साचा नाम नित ही नित जापे। अन्तर चित हरे सन्तापे॥
खेम कुशल चित ठाँड समाई। निर्मल सार प्रभ नाम कमाई॥
तिस जन पायो कारज पूरा। साची प्रीत पाई चरन हज़ूरा॥
प्रभ पूरे संग मेल मिलाई। तृषना नास पूरन गत पाई॥
सत वस्त इक शबद पहचानी। जो परकासे चारे खानी॥
सरब निरन्तर रहे भरपूर। सो ही राखनहार हज़ूर॥
नित ही मन तिस सरनी आया। सत शरधा से नाम ध्याया॥
करी डण्डौत साहब के चरना। नित ही नित पाई तिस सरना॥
सकल व्याधी चित की नास। भाओ भगत चित नाम परगास॥
साची शरधा पाई सुखसार। निर्मल कीरत करूँ विचार॥
निर्भय धाम की रसना खाई। सत बन्दगी साहब की पाई॥
मन अपने में धीरज पाया। परम आनन्द ठाकर घर ध्याया॥
पूरन भाग पाई गत पूरी। आठ पहर प्रभ जपूँ हज़ूरी॥

**अन्तरमुख नित ध्याऊँ, सतनाम अबनास।**
**'मंगत' सेव कमाइये, सब मन की मिटे प्यास॥ 33**

प्रभ अपने की सेवा धार। निर्मल चित से चरन पधार॥
बन्धन नासे मुकत फल देवे। दिवस रैन जो हर पद सेवे॥
नित मन में निस्चय राख। सत बानी को अन्तर चाख॥
अकथ कथा पाओ तत्त ज्ञान। निर्मल प्रेम का पाओ निधान॥
पूरन रूप से पसरे स्वामी। अन्तर चित खोज बिसरामी॥
नित अजन्मा काल से न्यारा। शबद सरूप खोज भरतारा॥
काची देह को जीवन देवे। रे मन मूढ़ा क्यों नहीं सेवे॥
सो दीनदयाल नित धरो ध्यान। सतपुरषों का ये सत फ़रमान॥
अपने चित से सेव कमाओ। अपने मन में रसना खाओ॥
अपने अन्तर से तजो विकार। साची सीख पाओ गुनकार॥
अपनी बुद्धी को निर्मल राख। साचा करम अन्तर में चाख॥
मत भरमाओ अपना जीया। सत विश्वास हो नाम सनेहिया॥
सुकृत जतन ये ही सुखदाई। जग जीवन का फल अधिकाई॥
मारग भगती प्रभ प्रीत लखाओ। बौहड़ गवन संसार नहीं पाओ॥
ऐसी प्रीत राखो प्रभ चरनां। बन्धन नास शबद पायें निरनां॥
अपना खोटा खरा लयो पेख। मानुष जनम का लख सत लेख॥
बारम्बार समाँ ना आई। अबकी बार लयो नाम ध्याई॥
जीवत में आनन्द लखाओ। अन्तकाल प्रभ चरन समाओ॥
ये वडयाई जग में सार। निर्मल प्रीत प्रभ चरन विचार॥

**मिथ्या भरमन त्याग के, सतसरूप जो ध्याए।**
**'मंगत' साचे हरजन सो, दुर्लभ जग में आए॥ 34**

सत की खोज सत का विचार। मानुष देह की निर्मल कार॥
सत ही टेक सत का आधार। सत ही जीवन गुनी विचार॥
सत ही जतन सत ही मुख बोल। सत ही सोच सत का नित तोल॥
सत की कीरत कथा विख्यान। सत परतीत पाओ तत्त ज्ञान॥
नित सतसंग मिल पाये विचार। साचा उद्दम खोजे सतसार॥
सत आधार जीवन को धारी। सो मानुष देवगती विचारी॥

तुच्छ जीवन में सत घाली घाल। दृढ़ निस्चय प्रभ चरन नित भाल॥
अन्तर बाहर सत का ध्यान। साची विरह पाई भगवान॥
सत वैराग नाम से प्रीत। गुरमुख पाई जगत में जीत॥
सतगुर सीख में तन मन वारा। दुर्मत बन्धन से पाई छुटकारा॥
उट्ठत बैठत सोवत माईं। जाग्रत में सतसार लखाईं॥
निर्मल चित पायो विशवासा। हरजन सकली हरी मन त्रासा॥
ये ही मारग मुकत का मीत। पूरन चित पाए सत परतीत॥
अधिक संकट जो आन व्यापे। निश्चल रहे सत शबद को जापे॥
दुःख सुख में विरता इक धारी। धन्न गुरमुख जग आए बलिहारी॥
तिनकी कीरत पाप को नासे। सत परतीत धरम परगासे॥
नित ही मन में कथा विचार। साची कीरत साहब चित धार॥
सत परतीत में जनम विताई। शान्त सरूप परम गत पाई॥
भाओ भगत निरमल परगासी। हरजन भयो सतधाम निवासी॥

**हरजन दुर्लभ जग आए, जो जीत चले जग खेल।**
**'मंगत' मारग धरम में, रुच रुच करी कुलेल॥ 35**

सतपुरषों की सीख विचार। जिन ने जीत पाई संसार॥
तिनकी कहनी मन में राख। सत परतीत आनन्द को चाख॥
सत परमेश्वर झूट जग खेला। अदभुत माया ने रचया मेला॥
सत आधार जीवन नित धार। सतगुर सीख का करो विचार॥
नित सरनागत हो पार स्वामी। करो बन्दना प्रभ अन्तरयामी॥
सब कुछ तिसका हुकम विचार। आपामत त्याग अन्धकार॥
अन्तर सुरती राख परोये। साचा शबद परम तत्त सोये॥
बन्धन नास सतधाम समाई। सनमुख प्रभ का दर्शन पाई॥
शबद धुनकार गगन गरजावे। गुरमुख अपने रूप समावे॥
सत अरदास चरन की पाई। तीन भवन सत शबद लखाई॥
मनुआँ निर्मल विरत त्यागी। अन्तर सुन्न शबद में जागी॥
नाम पवन इक सूत परोई। जाप अजपा जप निर्मल होई॥

अखण्ड परीत शबद परकास। काल करम का जाल विनास॥
परगट पायो घर पार स्वामी। करूँ नमस्कार पाऊँ बिसरामी॥
सकल की सार सकल का मूल। अनहद शबद पलक नहीं भूल॥
सो ही स्वामी सो ही सतदेवा। सुन्न समाध परम पद लेवा॥
अन्तर तीरथ आतम परगासा। गुरमुख साजन पाए निवासा॥
विज्ञान सरूप ब्रह्म अखण्ड। निर्मल जोत भई परचण्ड॥
जयजयकार जगत में पाई। रिद्ध सिद्ध ताँ के चरन समाई॥

**जिन पूरन प्रभ को पाया, तिन सत गत पूरन पाई।**
**'मंगत' तिनकी कीरती, सत मारग लेख लखाई॥ 36**

सत स्वामी घर परगट भयो। जनम मरन का संसय गयो॥
नित परकाश जोत निर्वानी। निर्मल चित से करूँ ध्यानी॥
सकल विकार चित मिटे करूरे। अन्तरगत पाए नाम हज़ूरे॥
सकल का मूल तत्त शबद पछाता। साध संगत मिल भयो रँगराता॥
शरधा पूरन पाई सुख सार। सकल मनोरथ चित भई उद्धार॥
निर्मल प्रेम अन्तर परगासा। पारगरामी के चरन निवासा॥
नित नित उस्तत करूँ चित माईं। पूरन पुरख को हिरदे ध्याईं॥
इन्द्री विकार चित खेद निवारा। नाम पदारथ पल पल विचारा॥
पिण्ड ब्रह्मण्ड का लेख पछाता। जनम मरन का लेख लिखाता॥
इच्छया भरम का दोख विचारा। सकल आधार नित जपूँ नरंकारा॥
मनुआँ मीत भया घर आए। सत मारग में प्रीत लखाए॥
सकली बिपता ग़ुबार विनासा। सहज सुभाये सतनाम परगासा॥
नाम की रसना नित नित गाऊँ। अन्तर चित नित सीस निवाऊँ॥
''हौं मैं'' रोग से पाऊँ ख़ुलासी। समता ज्ञान में करूँ निवासी॥
अबगत रसना नित मनुआँ खाए। उपरस होके नित शान्त समाए॥
देह की ममता गयो अन्धकारा। साची जुगत प्रभ चरन पधारा॥
सकल विखाद से निर्मल हूआ। सिमर सिमर निर्भय समूआ॥
औगुनकारी मन दुर्मत नासी। अन्तर सुरत सत शबद बिलासी॥

मन अन्दर सतनाम समाया। सकल जगत का खेद मिटाया॥

**मारग इस संसार में, इस्थिर धाम विचार।**
**'मंगत' सो प्रभ रूप है, नित चित अन्तर धार॥ 37**

प्रभ अबनाशी अन्तर पाया। निर्मल चित सतनाम ध्याया॥
एक पलक नहीं विसरन पाए। अनन प्रीत प्रभ चरन समाए॥
मीन नीर ज्यों जीवन पाया। राम रमत इयौं भेद लखाया॥
जीवत मिरतक दिसा पहचानी। पुरख अगोचर शबद घट जानी॥
रारंगकार शबद घर बोले। निश्चल चित सतनाम बरोले॥
सकल करम से निर्मल होये। इक चित ध्यान सत शबद समोए॥
विरत त्याग इकान्त समाया। निर्भय नाद रतन घर पाया॥
करमफल दोख सकल चित दूरे। साचा शबद घट अन्तर पूरे॥
भई मतवाली सुरत घट माईं। अचरज भेद का नहीं लेख लखाईं॥
बिन भोजन मनुआँ तृपताया। बिना सरूप के ध्यान लगाया॥
बिन रसना के उपरस होई। जग का कर्ता घट माहीं लखोई॥
अपरम अपार गती घर जानी। अच पच सुरत नित लीन समानी॥
प्रेम परगास शबद घर पाया। सकल ज्ञान का भेद लखाया॥
स्वपन समान भई सब जग की किरया। सत सरूप केवल पसरया॥
अबगत नाद घर परगट पायो। सार भेद नहीं कथनी आयो॥
देव ज्ञानी तपी तप धारी। एक शबद की सेव विचारी॥
अपरम आपार पुरख की ज्ञाई। गिनती लेख नहीं लखने आई॥
एक मूल सरब बिस्तारी। भरम विनास मूल विचारी॥
दृष्टी भेद सकल जग काजा। घट घट अन्तर आप बराजा॥

**परगट पुरख भयो घट अन्तर, जाँ रूप वरन नहीं आकारा।**
**'मंगत' सो ही जग का कर्ता, सत शबद रूप निर्धारा॥ 38**

प्रभ अपने की पूजा धारी। खेम कुशल सरब वरतारी॥
दीनदयाल घट परगट पायो। अचरज लेख प्रभ नाम लखायो॥

त्रैगुन खाये भयो निरधारा। साखी शबद पाई सत सारा॥
मनमुख भरम अन्धकार विनासा। सतबानी आतम परगासा॥
हंग विकार दूषना टारी। निर्मल बुद्धी सतधाम विचारी॥
देह को त्याग पाए शबद आधार। सकली दुर्मत चित मिटा ग़ुबार॥
पूरन गत पूरन तत्त पाया। प्रभ पूरे संग मेल मिलाया॥
नित ही बन्दना करूँ प्रभ देवा। साची प्रीत पाऊँ सत सेवा॥
दीनदयाल आनन्द परगासी। अन्तर ध्यान जपूँ अबनासी॥
मानुष जनम का सुकृत काजा। नित नित ध्याऊँ ग़रीब निवाजा॥
सब ही औगुन भसमत होई। सत शरधा प्रभ चरन पिरोई॥
मन का भरमन मिटा संताप। निर्मल चित से करूँ प्रभ जाप॥
सत सिखया सन्तन की पाई। सतगुर बचन का लेख लखाई॥
सतपुरषों की नीती जानी। मानुष जनम की सार पछानी॥
साची कथा पाई प्रभ एक। मिल साध संगत लिखया ये लेख॥
अपने पाप से पाई ख़ुलासी। सत शरधा पाई चरन अबनाशी॥
मन के मनोरथ सकले पूरे। अन्तर परगट शबद हज़ूरे॥
मन बच करम तब निर्मल भयो। प्रभ दाते की सरनी गयो॥
नित ही नित कीरत गाऊँ स्वामी। भगतवत्सल प्रभ अन्तरयामी॥

**साचा साहब जान के, नित नित करूँ अरदास।**
**'मंगत' निर्मल प्रेम से, पाऊँ शबद परगास॥ 39**

सत शबद आतम घर पाया। पारब्रह्म का रूप लखाया॥
आलख अनामी रूप अपारा। अभेद अछेद शबद निर्धारा॥
अकालसरूप अद्वैत स्वामी। सच्चदानन्द घट घट बिसरामी॥
परमानन्द सरब भरपूरे। शबद पदारथ पायो हज़ूरे॥
अखण्ड शांत चित में परगासी। नाम ध्यान पायो अबनासी॥
रिद्ध सिद्ध पाई प्रभ के चरने। सतगुर सीख के पाए निरने॥
खल बुद्धी अंधकार विनासा। शबद सरूप में लयो निवासा॥
सकली किरया देह की जानी। सरजनहार की सेव पछानी॥

नौ द्वार से अन्तर आया। शबद पदारथ अमरत पाया॥
सकल भरम की बुरज उड़ाई। सतनाम की तेग चलाई॥
सकल शत्रु पर विजे लखाई। समता ज्ञान सम्पत घर पाई॥
पूरन परकाश पायो अबनाशी। उदय अस्त का भेद सब नासी॥
मधुर मधुर शबद घर बोले। गगन कपाली अत रसना तोले॥
प्रेम की भाठी चोवे रस मीता। भयो पुनीत जिस पान करीता॥
तन मन की सब इच्छया नासी। सम्मत बुद्ध शबद परगासी॥
पूरन भाग कोई जन पाए। साची भगती प्रभ लेख लखाए॥
शेष महेश जपें सुर देवा। जपी तपी कीजें नित सेवा॥
गुनी ज्ञानी करें अरदास। ग्रन्थ कुतेब कथें इतिहास॥
सो ठाकर मेरा सरब गत पूरा। जो सिमरे तिस चरनी हूँ धूड़ा॥

**पूरन करनी जगत में, पूरन साधन सार।**
**'मंगत' हिरदे में रसे, प्रभ पूरन किरपाधार॥ 40**

**पहला अंग प्रार्थना समाप्त हुआ**

समता अपार शक्ति,

ब्रह्म सत्यम् सर्वाधार

ओ३म् ब्रह्म सत्यम् निरंकार अजन्मा अद्वैत पुरखा
सर्व व्यापक कल्याण मूरत परमेश्वराय नमस्तं

# दूसरा अंग
# समदर्शन योग
## पहला मार्ग - सारतत्त न्याय
### संसार की उत्पत्ति

सत सरूप अपार अनामी। अच्छर अबगत सरब अन्तरयामी॥
जुग जुग आद आप बिसमादी। नित सम रूप आगम आगाधी॥
आलख अद्वैत नहीं पारावारा। अपनी माया का रचा पसारा॥
तीन काल आनन्द सरूप। घाट वाध ना पावे अनूप॥
आप अजन्मा सरब अलेप। माया रूप विटावे अनेक॥
सरब कला पूरन अबनाश। सरब जियाँ के अन्तरगत वास॥

नाना नाम धर सिद्ध मुन ध्याएँ। अखय पुरष का पार ना पाएँ॥
प्रथमे मनसा सहज उपजाई। बिना कारन रची रचनाई॥
तीन गुन माया धर परगट कीनी। अनक परकार रचना रच दीनी॥
तेज वायु जल पृथवी आकास। इन पाँचों का सकल तमाश॥
बुद्धी मन और हंकार। आठ तत्त परगट रूप संसार॥
पाँच भूत रूप विटाए। पच्चीस प्राकृत का रूप दिखलाए॥
इच्छया चिन्ता भय मोह विकार। नानां भाँत घट उपजे बिकार॥
अचरज माया गत होई बिस्तार। चारखानी रचया संसार॥
लोकालोक पुरियाँ मंडल देस। अंडज पिण्डज उद्भुज सेतज वेस॥
चाँद सूरज की अत जोती परकास। दिवस रैन प्रगटे पख रुत मास॥
चराचर भूत परगट कीने। भये मोह परापत जड़ माया चीने॥
दर्शन अचरज अन्तर बिख सार। **'मंगत'** भरमे जीव नित खानी चार॥**41**
दु:ख सुख करम फल उपजाए। ऊँच नीच गत जीव भरमाए॥
चौदाँ लोक पसरे पासार। प्रभ की माया सब घट संचार॥
देव दानव पीर अवतार। सिद्ध रिखीशर गुनी गुन विचार॥
सब को माया नित भरमाए। राज राजिन्दर नहीं छूटन पाए॥
उदे अस्त तक नित उठ धाए। मुकत ना पाए देख अनवरचित माए॥
करम के संसे में जीव ग़लतान। फल को बाँछे नित रोए नादान॥
पाँच भूत का सूक्षम भाओ। शब्द स्पर्श रूप रस गंध समाओ॥
इन्द्री विखे नित भोगे जीव। अनन्त वरख भोगे नहीं धीरज लीव॥
आस आस में जूनी भरमाएँ। मिले ना तृपत इस जादू माएँ॥
चारखानी ये बँधी आपार। मानुष जनम छूटन की धार॥
साध जनाँ इक निरनय कीना। मिथ्या माया सत शबद परखीना॥
नित सतसंग में लयो निवास। विखयम माया से होए ख़ुलास॥
सत सरूप का सिमरन लीयो। सिमर सिमर तिसमें ही जीयो॥
सतगुर मेल घट कँवल परगासे। अन्तर मिले पुरख आप अबनासे॥

**मानुष तन को पाये के, परस लयो सत ठौर।**
**'मंगत' समाँ बिताय के, फिरें चौरासी घौर॥ 42**

मानुष ताँ को आखिए, जाँ का शुद्ध विचार।
पाप पुन्न पहचान के, सँभल सँभल पग धार॥
करम करूर त्याग करे, सत करम में चित्त लगाए।
जतन परयतन मन में धरे, कपट बिकार हटाए॥
मान मध और मसख़री, पर धन पर की नार।
इन पाँचों को जो तजे, सो मानुष करो विचार॥
पर हित चित में धारना, सब सों अधिक प्यार।
हिरदे से सेवा करे, बाँछे फल नहीं सार॥
कोमल बचन मन सुशील, अन्त का करे ध्यान।
छल कपट को दूर करे, मानुष सोही सुजान॥
जप तप सिमरन धारना, और साचे नाम प्यार।
गुरमुख जीवन पाये के, जीत लयो संसार॥
खाना पीना सोना, और विषे विकार।
चारखानी के जीव सब, भरमें बीच अन्धकार॥
मानुष तन दुर्लभ है, सरब खानी के बीच।
सुफल करो इस देह को, भाओ भगत जल सींच॥
अपनी उन्नति नित करो, लखो जनम की मौज।
बार बार ना आओगे, हरो भरम का बोझ॥
पीर पैग़म्बर औलिया, सिद्ध मुनी अवतार।
परगट होए जगत में, मानुष की देह धार॥
रंग तमाशे छाड तूँ, जीवन करो विचार।
दुर्लभ समे को पाये के, जीव का करो उद्धार॥

**कहाँ से आया कहाँ नर जाए, कौन तेरो मुक़ाम।**
**'मंगत' सार विचारना, मानुष जनम का काम॥ 43**

जीवन में ही खोज लो, अपना निर्मल धाम।
बादमुबाद त्याग कर, सतसंग में लो बिसराम॥
दुस्तर माया जाल है, बड़े गुनी गए हार।
जिन जनम सोये कर खोयो, तिन का क्या शुमार॥

सत पुरषारथ राखयो, जब लग प्रान की धार।
जीवन में बहु सुख मिले, आगे सुख आपार॥
नित रमयो सतसंग में, और सतनाम पियार।
अनक विगन सहजें गए, सुन सत ज्ञान विचार॥
जो बीजे सो काटना, एह निस्चे कर मीत।
बिख बीजे बिख पाइये, सुन साहब की रीत॥
ऐसा बीज ना बीजियो, जो काटन में दुःख देत।
करम रेख अटल है, सुन साचा विवेक॥
गुनी मुनी नहीं छूटते, जो बीजा सो खाए।
ताँ सों नर विचार के, साचा करो उपाए॥
सुत दारा धन लच्छमी, और बड़ा इक़बाल।
अंतकाल ना सँग कोए, नैनों देख अहवाल॥
पाप पुन्न जो कुछ किए, सो जीव के साथ।
मिले सज़ा अनकूल तिन, राई वाध ना घाट॥
सोना मनों विसार के, उठ जीवन को सम्भाल।
जो करना सो कर लयो, गरज रिह्या सिर काल॥
पीर पैग़म्बर औलिया, राजा राना मीर।
काल सभी को खा गया, देखत ना सरीर॥
ये समे की मौज है, उठके नाम चितार।
स्वाँस स्वाँस चल जात है, जाँ का मोल अपार॥

**हाड़ माँस का पिंजरा, अन्तकाल होए राख।**
**'मंगत' समाँ विचार के, नित मारग साचा भाख॥ 44**

सत धरम की सार सुन, जो देवे कल्यान।
परमारथ तत्त सार है, साचा धरम पहचान॥
जीवन को परकाश करे, हरे सकल संताप।
सकल जियाँ आधार है, सत धरम गुन जाप॥
अधम जीव निस्तर भए, ले धरम की ओट।
सत धरम पहचान बिन, जाएँ ना मन के खोट॥

धरम ही परम आनन्द है, धरम ही जीवन की सार।
जिस साचा धरम नहीं जानया, तिस नर को धृगकार॥
वेद ग्रंथ का मूल सत, एको धरम विचार।
मानुष से भए देवता, जिन परसयो धरम अपार॥
धरम ही देवे शान्त को, और बढ़े परताप।
धरम ही करे निर्भय मन, पावे प्रभ का जाप॥
धरम ही बल आपार है, सबको देवे निवाये।
धरम ही साचा निशान है, जुग जुग रहे चमकाये॥
धरम बड़ा परिवार है, सबसे साँझ बनाए।
वैर बदी सकली मिटे, सब में एक दिखाए॥
धरम के ही परकाश से, जाए मन अन्धकार।
धरम ही साचा मित्तर है, जो देवे नित जयकार॥
धरम ही निर्मल धन है, जो लूट सके ना कोए।
जिस जिस धरती पग धरे, आनन्द मंगल होए॥
मंदभागी नित दु:खिया, जो नर धरम से हीन।
आठ पहर जलता फिरे, धार के करम मलीन॥
मानुष तन को पाय के, नहीं धरम का कियो विचार।
बाँधी पाप की गठड़ी, अन्त पाए दु:ख आपार॥
धृग जननी ने जनया, जिस पाई ना धरम की सार।
रोता आया जगत में, जाए रोता जम के द्वार॥
साचा भोजन धरम है, जो सकल मिटावे भूख।
साची औखद धरम की, जो सकल निवारे दूख॥
लाख चौरासी जन्त में, जो शोभा मानुष देह।
सो ये धरम इक सार है, करे भरम दु:ख खेह॥
भूखन बड़ा ये धरम है, जो सब में करावे मान।
राजा राना सब निवें, ऊँचा देवें अस्थान॥
साची गादी धरम की, जो नर बैठा आए।
छतरपती सेवा करें, अधिक प्रेम चित लाए॥

धरम एक नर बृच्छ है, फल लागा निरंकार।
धरम धारा पर जो चले, सो परसें अबगत सार॥
धरम बड़ी है सम्पदा, देव निवावें सीस।
साची धरम प्रीत से, दरस पाए जगदीश॥
भवजल दुस्तर आपार है, सब जग डूबा जाए।
उतरे तिससे सो गुनी, जो साचा धरम कमाए॥
धरमी पुरुष के दरस से, मन में आवे धीर।
धरमी पुरुष के संग से, जाए सकल दुःख पीड़॥
धरमी धरम के रूप में, तन मन देवे वार।
धरम में जीवन जींवदे, पाएँ आनन्द आपार॥
धन्न पुरुष सो जगत में, जिस धरम का जीवन पाया।
आप तरे संसार से, लाखाँ जीव तराया॥
गुर पीर साचा सो ही, जो धरम में देवे प्रान।
तन जाए तो जान दे, पर होए ना धरम की हान॥
सब जग भरम में भरमता, इक धरमी चित विश्वास।
सब जग नित भयभीत है, सत धरमी निरभय वास॥
सब जग जीवन आस में, लाखाँ करें उपाए।
जिन साचा धरम विचारया, भय मरने का तिन नाए॥
धरम की महमाँ आपार है, गावें गुनी ग्रन्थ।
धरम ही की धार से, लाखाँ प्रगटे पन्थ॥
जिस मन धरम विचारया, सो ही पीर अवतार।
नित ही सुख सो पाँवदे, जिन राखी प्रीत आपार॥
सो ही गुर सो ही ज्ञानी, सो ही पंडत बुद्धिमान।
साचे धरम की प्रीत में, तन मन की करे हान॥
सो ही परवारी सो ही धनवादी, जिस साचे धरम प्यार।
लाखाँ जन्त उस्तत करें, नित धरमी जयकार॥
धरम का मारग कठन है, कोई धावे गुरमुख एक।
मरने से पहले मरे, पाए धरम का भेख॥

नेमी धरमी बहु मिले, पर अन्तर भरम बकार।
मनुआँ डोले नितप्रती, धीरज नहीं पल सार॥
देह के धरमी बहु मिले, करें अनक भाँत सुथराई।
अन्तर विखे की वासना धर, नित अन्धा दु:ख पाई॥
खावे अमरत भोजन, पट पटम्बर हंडयाई।
बना पुजारी देह का, सार धरम नहीं पाई॥
निस दिन वेद विचारदा, पर पाई नहीं कुछ सार।
बगल समाधी धार के, चुन चुन मछली मार॥
बाहरों भेख है धरम का, अन्दरों पाप कमाए।
मूरख धार पाखण्ड को, अन्तकाल पछताए॥
औरों के उपदेश में, बड़ा सुतन्तर होए।
मन अपना माने नहीं, नित छल बल हिये परोए॥
ना धरम की सुध मिली, ना धरम फल पाए।
अन्धमत धारे दम्भ को, अन्त प्यासा जाए॥
ना झूटे का धरम है, ना झूटे का ज्ञान।
अन्तर लालच धार के, करे धरम की हान॥

**रंचक धरम जिस जानया, किये पाप सब दूर।**
**'मंगत' मन निर्मल भयो, पाए दरस हज़ूर॥ 45**

आतम धरम विचारना, सो ही धरम सतसार।
आतम तत्त की खोज से, मिट गए सकल बकार॥
मोह माया ममता मिटे, सत आतम तत्त को चीन।
मन तन आवे शान्ती, जाएँ करम मलीन॥
ज्ञान विज्ञान की रसना, मन में आए समाए।
पाप पुन्न निरना करे, जो ऐसा धरम कमाए॥
आतम तत्त की खोजना, आतम तत्त विचार।
आतम तत्त जुगती लखे, तिस पायो धरम सचयार॥
निस्चय सत तत्त में रखे, नित घाले तत्त ज्ञान।

निर्मल जुगती धार के, करे बन्ध मोक्ष पहचान॥
सत असत का भेद लखे, सत मारग चाले नीत।
सो ही धरमी जगत में, जिस मन ये परतीत॥
मिथ्या भोग की वासना से, मन होए दूर।
सो ही जान धरमात्मा, नित धरम में रहे मख़मूर॥
प्रथमे निश्चय दृढ़ करे, एक नाम भगवन्त।
साचे गुर के पदम को, नित सेवे निरमान्त॥
दूजे शुद्ध विचार करे, मरन जीवन निरनाए।
मरना जगत का देख के, सत की सेव कमाए॥
तीजे उद्दम ये भला, परमारथ की सोध।
नित ही चाले जुगत से, मन के हरे बिरोध॥
चौथे खिमा का धारना, जाए इच्छया का रोग।
मिटे विषे की अगनी, पूरे गुर संजोग॥
पंचम मन निर्मानता में, नित राखे परबीन।
हरे गरब ग़ुबार को, मन हरी चरन में लीन॥
छेवें जुगत का आहार करे, और जुगत का करे ब्यौहार।
दृढ़ निस्चय हरी भगत में, निस दिन ऐसा धार॥
सतवें मन तन में धारन करे, निष्काम भाव उपकार।
परदु:ख हरना प्रेम से, नित कीजे ये कार॥
अठवें पर-हक त्यागना, निज सम्पत में धरे सन्तोख।
लोभ मोह दोनो तजे, सिमरे प्रभ निरदोख॥
नावें संगत सतपुरष की, नित ही मिलयो धाए।
पावें धरम सरूप को, सुन साचा बचन आगाहे॥
दसवें आतम राम में, नित ही मनसा धार।
मिले शबद अनूप जब, मिट जाए भरम अंधकार॥
एकादस मन के वेग को, नित ही राखे हाथ।
भूल कर ना कीजिए, करम विलक्खन साथ॥
द्वादस जीवन जगत में, जान ले दिन चार।

छिनभंगुर जग देख के, सेवन करे मुरार॥
तेहरवें नित ही रूप में, अन्तर रहे लपटाए।
निष्काम बुद्ध परगट होए, सार धरम की पाए॥
आतम पूजा जीव दया, सार धरम की जान।
जो जन धारे निस्चय, पावे परम कल्यान॥
आपा त्यागे दुर्मत हरे, पावे सत सरूप।
साचा लच्छन धरम का, सुनो गुनी मुनि भूप॥
निरवैरी निषकामता, सब पर रहे दयाल।
ऐसा धरम पहचान के, मारे जम बिकराल॥
जाँ के मन विश्वास है, एक रूप भगवन्त।
नित ही तिस की ओट में, राखे अपना मन्त॥
अपना सुख बाँछे नहीं, पर दुःख हरना नीत।
खिमा ग़रीबी चित बसे, सो साचा धरम पुनीत॥
इन्द्री जीता हर रस पीता, उपरस पाया जोग।
बन्धन से मुक्ता भया, सत धरम हुआ संजोग॥
सकल जगत की सार है, एको धरम विचार।
और सकल आसार है, नित मिथ्या अंधकार॥

**तन मन अपना दीजो, साचे धरम के माईं।**
**'मंगत' कहे पुकार के, बौहड़ गरभ ना पाईं॥ 46**

सब सिद्धों की सिद्धता, सब गुनियों का ज्ञान।
धरम सरूप नारायन को, नित हिरदे माहीं पहचान॥
प्रभ अपने से मांगयो, सत धरम आचार।
तीन लोक में सुख मिले, जो जन धरम विचार॥
धरम देवे कल्यान नित, जो निस्चे से धार।
धरम ही जीवन जगत में, धरम ही मरना सार॥
झूटे जग को देख के, मत मन से धरम भुलाओ।
ये सम्पत दिन चार की, अन्त छाड सब जाओ॥
धरम ही परम सखा है, जीव मिलावे ब्रह्म।

धरम ही साधन सार है, काटे कूप भरम॥
शस्तर साचे धरम का, राखो अपने हाथ।
जम दरवाज़ा जीत लो, परस लो सत नाथ॥
दुर्लभ देह मानुष की, सन्तन करी पुकार।
उठ खाटो साचे नाम को, हरो भरम बिख सार॥
झूटा लालच जगत को, अन्त देवे पछताप।
भरम की नींद से जाग तूँ, साचे नाम को जाप॥
ना कोई रिह्या ना रह सके, इस सागर में आए।
घड़ी सुलखनी जानिए, जो प्रभ कीरत गाए॥

**सब कुछ कूड़ो कूड़ है, साचा धरम इक नाम।**
**'मंगत' सिमरे जो गुनी, अन्त लेवे बिसराम॥ 47**

ये संसा संसार है, माया बन्ध अपार।
बिना भगत नहीं छूटिए, सुनयो ज्ञान की सार॥
सत सरूप नारायन का, घट घट रह्या व्याप।
सहजे ही परगट हुआ, प्रेम भगत परताप॥
करम फल की वासना, आवागमन को देत।
संकट ये अपार है, मिथ्या भरम भवेत॥
चारखानी सब भरमती, इस माया विकार।
अद्भुत कौतक प्रभ रचा, जाँ का पारा ना वार॥
गुरमुख उभरे तिस से, पाए ज्ञान की टेक।
आपामत त्याग के, सिमरे शबद विवेक॥
सकले करम परकिरत के, प्रभ आज्ञा में त्याग।
अनन भाओ सिमरन करो, चित में दृढ़ अनुराग॥

खुले ग्रन्थी भरम की, दीन आजज़ी आए।
उमगे शबद अनाद घट माईं, परम आनन्द को पाए॥
पलक ना विसरे नाम प्रभ, लागी रहे लिव तार।
उट्ठत बैठत सोवना, एक ही शबद आधार॥
दृढ़ पुरषारथ राख के, द्वैत भरम करे नास।
अनहद गरजे गगन में, कोट सूर परकास॥
रग रग अन्दर रमया, पारगरामी सोए।
अमरत शबद पहचान के, भय भरम सब खोए॥
शबद अनादी पुरख है, रूप रेख से न्यार।
होए परापत जिसको, तिस चरनी बलिहार॥
शबद ध्यावें बिषन महेशा, सनकादिक मुनि आद।
सिद्ध बुद्ध पूजें शबद को, आलख पुरख अगाध॥
जिस घट परगट होया, साचा शबद अनूप।
अमरत जीवन पाया, गया भरम का कूप॥
सो ही ज्ञानी सो ही गुनी, सो ही भगत विचार।
सो ही पंडत वेद का वक्ता, जिस पाया शबद का सार॥
ध्याओ साचे शबद को, तिसमें लो बिसराम।
पततपावन सो शबद है, आद अनील अनाम॥
जिस चाखा सो तृप्त हुआ, भई कामना नास।
राग द्वेष गई कल्पना, पाए शबद परकाश॥

शबद लखे सो जौहरी, तन मन करे त्याग।
खिमा ग़रीबी चित धरे, दुर्लभ पावे भाग॥
पखवाद को नित हरे, लज्जया कुल की छाड।
केवल प्रीती शबद में, दूजा भरम को बाढ॥
दीन आजज़ी धार के, सिमरो दीनदयाल।
भगती मारग पाय के, तन मन करो निहाल॥

**ग्रन्थ वेद पुकारदे, और सिद्ध पीर अवतार।**
**'मंगत' सिमरे शबद जो, पावे पद निरधार॥ 48**

अद्भुत कौतक देख के, सुखदेव भयो मन भरम।
और जीव की गत क्या, जो नित सेवें काल करम॥
मुनी व्यास वेद का वादी, उलट विचार सुख पाए।
नारद मुनी भगत रँगराता, मिल झीवर भरम जलाए॥
राम कृष्ण पार अवतारी, गुर मिल सोभा पाए।
बिना भेदी ना पाइये, अगम पंथ अगाहे॥
ग्रन्थ कतेब गूँगे गुर, मुख से ना करें विचार।
जैसी बुद्ध ऐसा मता, पावत ना तत्त सार॥
पढ़े सुने जतन करे, बिन सतगुर की भेंट।
सकल अकारथ जात है, बाड़ बिना ज्यों खेत॥
मारग दुस्तर अथाह है, सतगुर खेवट आए।
चारमुख ब्रह्मा गाए, गुर महमाँ अथाहे॥
जाँ का मन परकासया, ब्रह्म नाद से मीत।
सतगुर सो ही आखिए, जिस जानी निर्मल रीत॥
काम क्रोध बिख को हरे, लेवे शबद आधार।
मान बड़ाई ईरखा, सकले तजे बकार॥
नित सिमरे प्रभ एक को, करमफल करे त्याग।
सम भाओ मन में बसे, केवल शबद अनुराग॥
सुरती बाँधे पवन में, पवन खाए सतनाम।
गुरमुख जुगती जो रमे, सत शबद ले बिसराम॥
बचन बोले निरवैरता, बाद बदी को त्याग।
मन नित रमे सत रूप में, सतगुर सो वडभाग॥

बाहरमुखता त्याग के, अन्तर ले बिसराम।
सुन्न शिखर आसन करे, बानी सुने इलहाम॥
भोग सोग सकले तजे, मन में अधिक बैराग।
लच्छन यह सतपुरष के, रहो चरनी नित लाग॥
पखवाद जाँ के नहीं, केवल सत की खोज।
पारब्रह्म को पाये के, नित मानें ये मौज॥
काचे तन का हरख तजे, केवल शबद आधार।
व्यापे भोग ना सोग को, विरत भई निरधार॥
ऐसा सतगुर भेंटिया, पूरन भयो करम।
साचा शबद पहचानया, निर्मल पायो धरम॥
जनम जनम का अन्तरा, सहजें भया दूर।
पूरन करमी गुर पाए, होए चरन की धूड़॥
नित ही भेदी खोजयो, जो परमारथ देवे भेद।
गुपत वस्त परगट होए, मिटे जनम का खेद॥
घर घर फिरते गुरु जोए, कान में देवें फूँक।
आप खाएँ विष अगनी, लागी विषे की जोंक॥

**साचे शबद अगम में, तन मन करे त्याग।**
**'मंगत' सतगुर सो आखिए, रहो चरन लिव लाग॥ 49**

साचा उद्दम कीजियो, परसयो साच समाज।
मिल गाओ साचे नाम को, निर्मल कीजो काज॥
पाप पुन्न त्याग करो, प्रभ की आज्ञा माईं।
बीच रज़ाई हो चलो, निर्मल पाओ थाईं॥
साचा पुरख अनूप है, सरब को सरजनहार।
सिमरो रे मन तिसको, दुर्लभ पाओ कार॥
हमाँ तुमाँ की जेवड़ी, बाँधा कुल संसार।
छूटे गुरमुख जुगत से, पाए नाम तत्त सार॥
नाम तुल ना यज्ञ तप, तीरथ और पुन्न दान।

नाम छुड़ावनहार है, जुग जुग सुन फ़रमान॥
नाम जपे दुरमत मिटे, सत्यम् रूप परकाश।
अनन भाव सिमरन करे, फिर न गरभ निवास॥
नाम ही तत्त सार है, नाम ही साचा योग।
नाम राता अन्तर रमा, पाए अमर शबद का भोग॥
बिन नाम ना छूटिये, कोटक करो उपाए।
नाम रतन को पाय के, दुर्मत मैल विहाए॥
साचा शबद अनूप अनाम, और सदा निरधार।
गुरमुख पाए सार तत्त, नाम जुगत विचार॥
छिन में सिमरे नाम को, कर तिसको आदेस।
तन मन वारूँ तिस पै, जो पावे साच संदेश॥
जेता पठन पठावना, एता मन में बाद।
गुरमुख सिमरे नाम को, मिटे सकल उपाध॥
नाम हिरदे चीनिया, शबद पाया परकास।
गुन औगुन दोनों मिटे, निरगुन माईं निवास॥
करम जाल सब बिनसया, पाया नाम परसाद।
नाम की महमाँ आपार है, जाने कोई गुनी साध॥
नाम का सिमरन सार है, और सिमरत त्याग।
कूड़ करम विनास होए, सत तत्त में विरती जाग॥
मन चंचल मन चोर है, मन में बड़े बकार।
नाम साबुन ले धोइये, तब होवे सचयार॥
छिन छिन मन को सोधिए, दे नाम का ताओ।
भाओ भगत की फूँक से, साचे रंग रँगाओ॥
ऐसे मन को रँगिये, फिर ना होए कुरंग।
पानी ज्यों पानी मिले, त्यों मिले साहब के संग॥
नाम ही जाँका आहार है, और नाम का करें ब्यौहार।
गुरमुख आए जगत में, ले शान्त सरूप आपार॥
मुख से तो सब जापदे, मन से जपे ना कोए।
मन से जापे जो गुनी, तब पार उतारा होए॥

**नाम सिमरन तत्त सार है, भय भरम करे नास।**
**'मंगत' ले निज रूप को, तेज पुंज परकास॥ 50**

सिमरो साजन नाम को, बन्ध छुड़ावे जोए।
ज्ञान ध्यान सतसंग मिल, प्रेम की माल परोए॥
मन के बड़े तरंग है, छिन में और की और।
कैसे तिससे छूटिए, अधिक लगावे दौड़॥
पलक पलक बहु रंग करे, जो ना होएँ शुमार।
सहज भाए मन वस होए, सतगुर जुगत विचार॥
करन करावनहार है, सच्चदानन्द मुरार।
नित ही तिसकी टेक रख, छूटे बन्धन सार॥
आवागवन विनासया, जीव पाए बिसराम।
बिछड़ा जनम अनेक का, सहज मिला सतधाम॥
मन तन को परकासदा, आप सदा निरलेप।
सिमरो पुरख अनूप को, जो मिटाए सकल वखेप॥
तिस बिन सब अन्धकार है, चानन सो ही एक।
उतरे भवजल पार सो, जो राखे तिसकी टेक॥
करम विकार सरब के माहीं, वोह आप सदा निहकरम।
उपजे बिनसे जगत सब, उसका अनादी धरम॥
जो सिमरे तिस रूप को, जाए मिले तिस माईं।
जनम जनम के ताप हरे, पाए परम सुखथाईं॥
दुर्लभ ये वापार है, सिमरन साचा नाम।
घड़ी घड़ी पल सिमरिए, मन लेवे बिसराम॥
औगुन तो अत ही घने, मन में रहे समाए।
नाम अगन से जल गए, ज्यों घास भसम हो जाए॥
मन तन आई ठाँड बहु, भई तपन सब दूर।
दुरजन से सुरजन भया, सकल भरम काफ़ूर॥

अमरत जीवन पाया, सुनया सतगुर बोल।
रोम रोम में रम गया, मिटा चौरासी ख़ोल॥
सत सरूप पहचानया, मिला यथारथ ज्ञान।
सुरत निरत तलवार दोहु, राखे एक मियान॥
सिद्ध मुन नित गाँवदे, प्रभ का गुन अगाध।
सिमरन नाम जग सार है, मिटावे मन अपराध॥
मानुष से भए देवता, सच सिमरन करतार।
किस मुख करूँ बखान मैं, महमाँ भगत आपार॥
उठके नाम चितार मन, औध जात है बीत।
भोग विषे की लालसा, झूट धरी परतीत॥
लख चौरासी जन्त में, मानुष तन अपार।
जो हर कीरत ना करे, उसको है धृगकार॥
आलख शबद सुहावना, दूर करे दुरगन्ध।
प्रेम प्रीत से सिमरिए, मन तन भए आनन्द॥

**खोज खोज कर परसया, अबगत शबद अनाद।**
**'मंगत' परम आनन्द में, लागी सुन्न समाध॥ 51**

प्रभ अपना सिमरन किया, मन तन होए परसन्न।
करम विलक्खन सब मिटे, हरि नाम का पायो धन्न॥
सत सील संतोख का, आए भया घर बास।
खेम कुशल आनन्द हुआ, घर परगट पुरष अबनास॥
जनम जनम की भरमना, सहज होई चित की दूर।
आलख शबद पहचानिया, घट में उपजा तूर॥
अबनासी संग जा मिला, दुर्मत छाड विखाद।
सतगुरु दया साध की संगत, छूट गया परमाद॥
इन्द्री विषे की लालसा, मन से भई दूर।
मन लागा सतनाम में, आए मिला हज़ूर॥
स्वास स्वास सिमरन करूँ, अबगत पुरख अलेख।
एक नाम विश्वास धर, पाए लिया सच भेख॥

क्या गृहस्ती क्या विरक्ती, क्या डंडी सन्यास।
प्रेम बिना ना हर मिले, चाहे धरनी नाप आकास॥
प्रेम पाए सतसंग से, सुन गुरमुख परताप।
अपना मरन विचारया, तब पाए नाम तत्त जाप॥
साचे नाम की सिमरनी, हिरदे लई लटकाए।
शबद पहचाना घर माईं, द्वैत भरम फटकाए॥
सागर ज्यों गम्भीर है, ऐसा पाया धीर।
कूड़ कपट सब उतरा, पिया शबद का नीर॥
मन में पाया चानना, शबद सुनी धुनकार।
अपना आप सँवारिया, पाए ज्ञान तत्त सार॥
काम क्रोध की अगनी में, जलें चराचर भूत।
क्या गुनी क्या मुनी, क्या रंक क्या भूप॥
चार वेद का वक्ता, पंडत रोए नीत।
अगन तृषना खा गई, सब का कलेजा मीत॥
तीरथ नहावे ब्रत बहु राखे, रैन को जागे नीत।
बिना ज्ञान ना पावे, एह मूढ़ा मन परतीत॥
अरब खरब धन आ मिला, चौधाँ भवन का राज।
सकल अकारथ जात है, बिना शबद समाज॥
भोग मिथ्या भोगता मिथ्या, अनर्थ जीव कलेश।
माया की फाँसी घनी, बिन गुर ना मिटे संदेश॥
सरजनहार गोपाल, दीनानाथ दयाल।
सिमरो तिसके नाम को, तन मन होए निहाल॥
सरब जीयाँ से हेत रख, प्रभ का हुकम पहचान।
गुरमुख जुगती पाय के, करो भरम की हान॥
जो होना सो हो रह्या, प्रभ की आज्ञा माईं।
आगे पीछे ना कर सके, तिल भर तिस फरमाईं॥

**ऐसा पुरख समरथ है, सरब कला तिस हाथ।**
**'मंगत' सिमरो प्रेम से, सो नाथन का नाथ॥ 52**

हर की भगत पाए, मन होए पुनीत।
हर की भगत करे, निर्मल चीत॥
शेष सहँस मुख नित, हर को जाप।
विषन वरंच गावे, तिसका परताप॥
हर के ध्यान में शिव, धारी योग समाध।
नारद शारद गावें, सनकादक मुनि आद॥
हर की भगत करें, राजा राना गुनी मुनी भूप।
यख किन्नर बेताल ध्यावें, इन्दर चन्दर सरूप॥
लोमस भसुंड और, मारकण्डे मुनि आद।
अगस्त वशिष्ट ध्याँवदे, महमाँ अगम अगाध॥
राम कृष्ण विचारदे, सच खण्ड तत्त निर्वान।
कपल पातंजल गौतमा, मुनी कनाद नित करें बखान॥
ध्रुव प्रहलाद दधीची, मुनी व्यास सुखदेव।
जनक अखवाकु देवसुत, और याज्ञवलक करें सेव॥
अष्टावक्कर जड़ भरत, रिखबदेव मुन वास।
दत्तात्रे सिद्ध बुद्ध नाथ, आद ज्ञानी करें अरदास॥
जुग जुग महमाँ आपार है, क्या अन्धमत करे बखान।
गावें गुनी कबीर और गोरख, नानक के मन सहज ध्यान॥
पीर पैग़म्बर नबी, कुतब वली और ग़ौस।
असंख ज्ञानी रिखी रिखीशर, सिमरें तत्त निरदोख॥
साचा साहब नित निरालम, सरब करे परकास।
जो जो सिमरे सो गत पावे, कटे करम की फाँस॥
सरब जियाँ आधार है, सब का आदी मूल।
समदृष्ट परकासिया, क्या सूक्षम अस्थूल॥
अनन्त ज्ञान बखानया, पर पारावार ना पाए।
ज्ञान ध्यान उपासना, बहु बिध जुगत कमाए॥
खिमा ग़रीबी मन में रक्खो, और चित उपकार।
वैर बदी त्याग के, जप लो सरजनहार॥

छिन छिन सिमरो तिसको, जो सरब कला भरपूर।
दाता सरब निधान है, आलख पुरख हज़ूर॥
बड़ी बड़ाई तिसकी, सतपुरषन करी बखान।
दीनानाथ दयाल है, पततपावन भगवान॥
रे मन तिसको सिमर लो, नित रख तिसकी टेक।
करुनाकर सो आप है, सिमरो सार विवेक॥
माया दुस्तर अथाह है, बड़े गुनी गए हार।
कुटल कठोर मन छेद के, लीजो भगत मुरार॥
ना विद्या ना तपबल, ना कुछ चार आचार।
पूरे गुर बख़शीशिया, पाया नाम आधार॥

**जुग जुग होए अरदास तुम्हारी, तूं आलख पुरख आपार।**
**'मंगत' मन तन सौंपिया, माँगे टेक सत चरन बलिहार॥ 53**

उत्तम कीरत प्रभ की, तीन लोक परवान।
जो सिमरे मन प्रेम से, ताँ का हो कल्यान॥
नित्त अजन्मा अबनाशी, अखण्ड आनन्द भगवान।
एक पलक करे ध्यान जो, काल ना कीजे हान॥
सतगुर की परतीत रख, सिमरो शबद अगाध।
मन मन आवे शान्ती, मिट जाएँ सकल व्याध॥
जनम जनम का भरमता, पाई मानुष देह।
सिमरो दीनदयाल को, दुर्लभ उद्दम एह॥
सकल करम धरम पर, पावे नित जीत।
आलख पुरख के ध्यान में, लागी जाँ की प्रीत॥
निर्मल समाँ पहचान के, नित कीजो प्रभ की याद।
ऋद्ध-सिद्ध चूमें चरन को, मिट जाएँ सकल उपाध॥
सिमरन ही तत्त सार है, प्रेम प्रीत की डोर।
नित सो सरजनहार है, पदपंकज चित जोड़॥
लोक कुटुम्ब न संग चले, ओड़क मरती बार।

बिना भगत ना छूटिए, जाएँ बाँधे जम के द्वार॥
बाल जोबन का मान तज, काल दगा दे खाए।
पलक ना विसरो सतधाम को, सुनियो सच उपाए॥
नित रोए विच दुर्मत, करम का जाल कराल।
सम्पत में ही मर मिटे, नित घाले जम का जाल॥
जो सम्पे सो छाडना, एह निस्चय कर जान।
तीन लोक की सम्पदा, सब ही काल की खान॥
अपना तेरा कुछ नहीं, खोल नैन कवाड़।
जोबनवन्ता तन जले, अन्त को अगन मंजार॥
महल अटारी छाड के, भसवी लीना बास।
क्या राजा क्या राना, सब ही काल तमाश॥
जो जनमे सो थिर नहीं, छिन आवे छिन जाए।
इस्थिर भगत भगवान की, जोती जोत मिलाए॥
देखन आया जगत को, देख भया हैरान।
मेरो मेरी बहु घनी, सब का चलत निशान॥
अगन सरीखा जगत है, सब ही तापें जन्त।
गुरमुख विरले रस पिया, अमरत नाम भगवन्त॥
अमरत वेला जान के, सतनाम विचार।
दुर्लभ जीवन पाय के, अपना करो उद्धार॥
जग में साचा कुछ नहीं, केवल भरम बकार।
उठ सिमरो नाम आगाध को, सन्ताँ करी पुकार॥
जिन सिमरा सो तृपत भए, इस लूने खेत के बीच।
उट्ठत बैठत घालयो, ले अमरत शबद मन सींच॥

**सत संगत मिल के गाइयो, अजर पुरष निर्वान।**
**'मंगत' पलक ध्यान से, मिट गई चौरासी खान॥ 54**

परिपूरन भगवन्त है, आद अनादी मीत।
सिमरो तिसके नाम को, रख पूरन परतीत॥

छिनभंगुर संसार है, जैसे बादल आकास।
नाना रूप वटाँवदा, मिथ्या भरम का भास॥
सतपुरष की खोज कर, पाओ निर्मल वाट।
वाँग आकास समाया, जल थल औघट घाट॥
इस सागर संसार में, तृपत भयो ना कोए।
हँसहँस कर नाचते, अन्त बार सब रोए॥
छाया सेती प्रीत नर, कब तक तोड़ निभाए।
जिस दिशा होये चाँदना, छाया उलट हो जाए॥
सत खोजो सत बूझो, मानुष देह की सार।
सत ही उद्दम में रमो, जग में भली ये कार॥
पधारो नित सतसंग में, बूझो सत इतिहास।
करम धरम की सुध मिले, सिमरो तत्त अबनास॥
मन के मते को बाँधिए, नाना करे बकार।
भटकत फिरे दिन रैन ये, पाए ना कुछ सार॥
मन ये कुटल कठोर है, हर प्रेम का दीजो ताओ।
पलक पलक की सुध लो, साचा नाम कमाओ॥
मीठा सबसे बोलिए, रखिए सबसे हेत।
नारायन सर्वज्ञ है, रमिया सबके नीत॥
प्रेम सरूप हो बिचरिए, हरिए मन का बाद।
आलख पुरख की प्रीत से, मिट जाएँ सकल विखाद॥
बार बार विचार कर, क्या तुम्हारा रूप।
कहाँ से आया कहाँ जावना, तोड़ भरम का कूप॥
नित ही ये तत्त सिमरिए, सतगुर का उपदेश।
बन्धन से मुकता भया, हरया सकल कलेश॥
अन्तर नाम आराधिए, मुख से रहे मौन।
मन के वेग को बाँधिए, विनासे आवागौन॥
सुरत निरत की तार में, नित्त रहे ग़लतान।
आपा पर दोनों मिटे, पाया तत्त निर्वान॥

मन पवन की एकता, गुरमुख पावे योग।
सत शबद मन रस्सया, गया जनम का रोग॥
नित ही ये विश्वास हुआ, सतनाम निरंकार।
सिमरूँ स्वास स्वास में, साध चरन बलिहार॥
कल्प विकल्प सब मिटे, अन्तरमुख पाई सार।
बिछड़ा जनम अनेक का, आए मिला दरबार॥
धन्न साधू धन्न साध की करनी, जगत करे परकास।
अनेक जीव निस्तर भए, सुन साची अरदास॥
हाथ पाओं नित करम में, मन में साचा राम।
अनन भगत कर छूटिए, बन्ध चौरासी जाम़॥

**जो करना है सो कर लयो, समाँ जात है बीत।**
**'मंगत' करनी सुफल ये, सेवा साध और नाम परीत॥ 55**

नाम रूप गुन करम, ये है कुल संसार।
ये रचना सब भरम की, केवल मन बिस्तार॥
मन में पवन पावक और नीर। मन में अम्बर आद समेर॥
मन में नरक स्वर्ग का भोग। मन में ऊँच नीच वंजोग॥
मन में सूरज चन्दर परगास। मन में दिवस रैन पख मास॥
मन में बालक जोबन जराए। मन में मरतक जीवन पाए॥
मन में अनंक भोग से प्रीत। मन में परसे बन्ध अतीत॥
मन में पीर पैग़म्बर अवतार। मन में कपट छल और सचयार॥
मन में एक दोहू का भरम। मन में भुख प्यास आदि देह करम॥
मन में चारखानी बिस्तार। मन में बानी चार विचार॥
मन में बैरी मित्तर और साक संग। मन में भगत ज्ञान ध्यान सतसंग॥
मन में संजोग वंजोग दी कार। मन में आवे जावे बारम्बार॥
मन में मज़हब पंथ और बाद। मन में गुर शिष सम्वाद॥
मन में रोगी सोगी और शूरबल धार। मन में कायर कुटल नीच विचार॥
मन में राजा राना दरवेश। मन में कीजे बहु रंग भेस॥
दृश्यमान सकल आकार। केवल मन का है वापार॥

मन बानी से हो परतीत। चराचर खेल केवल मन भरमीत॥
सतगुर मिले पावे तब पार। मन की भरमन करे निवार॥
सरब मिथ्या कर होई परतीत। एक नाम सत आलख अलेप॥
साचे नाम की महमाँ मन गाए। मिटे भरम सतसरूप को पाए॥

**डोलन से निस्चल भया, नाम पाया सत ठौर।**
**'मंगत' देखा आप को, जल थल में भरपूर॥ 56**

ज्ञान ध्यान अमरत तत्त सार। गुरमुख पावे ये बिमल विचार॥
सतसरूप अजन्मा अद्वैत। ज्ञान जुगत से पावे रहत॥
आतम तत्त है जग का मूल। व्याप रह्या सूक्षम अस्थूल॥
नित आनन्द अखण्ड परकास। द्वन्द विकार से रहत अभास॥
जाँ देखाँ ताँ रह्या भरपूर। घट घट व्यापे नहीं वासे दूर॥
तिसके परकास से होए जग परकास। तिसकी शकत करे सब में बलास॥
ऊँच नीच सरब में पूर। समरथ पुरख आपे हज़ूर॥
त्रैगुन माया परगट दिखलाए। सरब के मध प्रभ आप समाए॥
सब से परे पुरातन भी आप। सकल कला की रचना थाप॥
सकल जीयाँ का आप आधार। परविरत निरविरत चलाई कार॥
हस्ती कीटी अस्थावर जंगम आद। चराचर में रमियो आप बिस्माद॥
देव दानव सिद्ध बुद्ध नाथ। सरब के ऊपर तिसका हाथ॥
जो जो सेवे मन चित लाए। बन्धी छूट परमगत पाए॥
आध व्याध सकल मन नास। अद्भुत बानी घट होई परकास॥
अपने घर में आपे पाई सार। मिल सतगुर तत्त ज्ञान विचार॥
अन्ध ग़ुबार मान मध ताप। भये विनास सत शबद पाए जाप॥
अपने आप का करे विचार। आपा त्याग निज रूप पधार॥
भरम बिकार पर पाए जीत। अखण्ड नाद घर भई परतीत॥
सब साधन की सार है, सुन अबगत विचार।
शबद सार मिल गाइयो, परम ध्यान चित धार॥

**एक पलक ना विसरो, साचा शबद अखण्ड।**
**'मंगत' एक चित ध्यान में, ब्रह्म जोत परचण्ड॥ 57**

अबगत साधू सुनो विचार। तरवर फूटे एक तीन डार॥
तिस तरवर का अजब सरूप। पाए पार ना गुनी मुनी भूप॥
मध्य के डार फल चार उपजाए। गन्ध सुगन्ध रस फल अधिकाए॥
परस्पर सो फल रूप विटाएँ। अचरज लेख गत कोई गुनी ध्याएँ॥
देख लीला मोह्या संसार। तिस तरवर का अजब पसार॥
अजब हैरानी देख कर आई। मूल बिना सो रह्या समाई॥
आकास पाताल तिसका बिस्तार। बिना जड़ पाती पसरे पासार॥
अनेक फूल तिसको आए। अनेक रुत कर रूप विटाए॥
फूल झड़े फल पावत नाहीं। जुग जुग देखो अचम्भा घट माहीं॥
पलक पलक चार दिसा बिस्तारे। बिस्माद कौतक का ना पारावारे॥
जो देखे सो ही मूरछाए। अपनी सकली सुध बुध वँजाए॥
फल की आस में रहे दिन रैन। ना फल पाए ना आवे चैन॥
देख खेल मन भया निरास। कह बिध त्यागूँ तरवर का पास॥
चार दिसा और चौधाँ भवन। सरब थाईं सो पसरे पसरवन॥
गुरमुख ज्ञानी कोई साधू आया। पाया भेद सब भरम मिटाया॥
अपने घट माहीं बेला परगासे। छूटे सो ही जो रहे तिस पासे॥
झूट पाखण्ड बकार त्यागे। सतगुर पूरे के चरने लागे॥
सुने ज्ञान पाए तरवर भेद। मिथ्या भरम का कीजे छेद॥
अपने घर माहीं बाजे तूर। तरवर सरवर में रहे भरपूर॥
अबनाशी पुरष सम रूप जोए। तिसको सेव भरम सब खोए॥
जगत तरवर भरम बकार। आतम सूझे पावे तब पार॥

**देख देख सब भूल गए, अपना निज घरबार।**
**'मंगत' माया मोहिनी, हर भगत से हो छुटकार॥ 58**

सतसंगत मिल गाइयो, आलख पुरख अगाध।
बिन सिमरे तत्त ज्ञान के, कोटक मन व्याध॥
अन्तर सिमरो निरन्तर धरो ध्यान। पवन को साधो सुन अनहद की तान॥
उरध पवन पच्छम को जाई। रवि शशी इक तार मिलाई॥
पच्छम से उठ चढ़े समेर। लागे पूरब दिशा के फेर॥

मूल द्वार लगावे बन्ध। उलट पवन की साधे सन्ध॥
साचा नाम संग पवन के खेले। गुप्ती बानी कोई गुरमुख मेले॥
इरध उरध में सुरती जोड़े। ब्रह्ममुख योगी दर दसवाँ फोड़े॥
उरध कँवल घट भयो परगास। मूल बंकनी में कीना वास॥
ईड़ा पिंगला सुखमन धार। सम कर पीवे हो सचयार॥
पवन की निरोध सरोध कमावे। बारह सोलह इक धार मिलावे॥
उलट पवन का लंगर खैंचे। सोती नागन उठ अमरत सैंचे॥
गुर का पूत कोई जुगत कमावे। मर के जीवे सत गत पावे॥
नीर पाताल आकास चढ़ावे। आलख पुरख का खेत भीजावे॥
गगन खेत सोध कुण्ड का नीर। उपजे पुरष बिना शरीर॥
मानसरोवर तट बोले नाद। कहे मछन्दर सुन गोरख बिसमाद॥
छिन छिन वरखे अमरत धार। बैठी पीवें पाँचों पनिहार॥
निरगुन सरगुन तोले एक चीत। बानी गुपत परगट भई मीत॥
इक्कीस हज़ार छै सौ मनियां। इक तार परोवे निस दिन गुनियां॥
सुरत की सूई प्रेम का धागा। खिनता ज्ञान सीवे बैरागा॥
जत लंगोट त्याग भभूत। विश्वास की मात्रा धारे अबधूत॥
सत की सेली सिर छतर बिराजे। बिरह विवेक की मुंद्रह साजे॥
खिमा दया का पीवे नीर। निरभेख वास में रमे फ़कीर॥

**गुर की जुगत का, कीजे नित आहार।**
**'मंगत' गुरमुख पाए, शबद ब्यौहार॥ 59**

आसन दृढ़ता नित मन विचारे। पुरषारथ चोला कफ़नी धारे॥
परहित चित में माला फेरे। नाम की ओट पाए सुख घनेरे॥
इकन्त बाज़ार में नित रमाए। अमरत शबद का भोग लगाए॥
द्वन्द बकार का करे शिकार। निज घर वास पाए गुनकार॥
करम भरम की बुरज उड़ाई। गोला ज्ञान सत तेग़ चलाई॥
फिरी दोहाई नगर के बीच। चोर चतर गए सब मुख मीच॥
ग़ैब सिंहासन पुरष निर्वान। करे हकूमत तीन जहान॥

भाग वडयाई कोई राज को पाए। अजर पुरष मिल शोभा गाए॥
तत्त परकास छतर सिर धारे। गुरमुख मुकत नहीं गवन पधारे॥
कठन मुहिम घाले कोई सन्त। जनम जनम के बिनसे भरमन्त॥
उट्ठत बैठत साधे निर्वान। दुर्लभ जीवन गुरमुख परवान॥
नित ही राखे सत की ओट। काल करम की नहीं लागे चोट॥
प्रभ का हुकम मन तन वरताये। आपा मेट हर का गुन गाए॥
तीन अवस्था का करे त्याग। चौथे मारग में रहे नित जाग॥
बाजे अनहद परम धुनकार। दमके दामन दसवें द्वार॥
सुरत निरत का कीजे मेल। मर के जीवे पावे सत खेल॥
मन पवन सतनाम का बन्ध। जोत निरालम भई परचण्ड॥
सत मारग में करे निवास। शबद कमावे मिटे प्यास॥
उलटी सुरत आकास चढ़ावे। धन्न योगी सत जुगत लखावे॥
मिरतक देह का मध त्याग। साचे शबद में नित रह्यो लाग॥
अपने आप पर पाई जीत। गुर के बचन धरे परतीत॥
आलख बेला भई परकास। सिद्ध मुनी देव करें अरदास॥

**पूरे गुर उपदेश से, खोल अन्तर की बाट।**
**'मंगत' पाए परमगत, लखे शबद की साट॥ 60**

साचे नाम का गुन आपार। गुरमुख पाए ये तत्तसार॥
एक नाम दृढ़ धरे परतीत। विखे वासना पर पावे जीत॥
बिना नाम नहीं योग ज्ञान। नाम बिना नहीं परसे अनाम॥
छिन छिन जापो पुरख घनैह्या। एक नाम चित राख सनैह्या॥
मन अपने की गरदन तोड़ो। सतनाम चित चरनी जोड़ो॥
नाम का जाप ध्यान है नाम। पूरे गुर के पावे अंजाम॥
हर का भगत सदा सुखदाई। तीन लोक शान्त वरताई॥
जैसे चन्द चकोर धरी प्रीत। हर के चरन ऐसे लगाओ नीत॥
सकल करम पर आवे जीत। अबगत नाम सिमरे पुनीत॥
मोह माया सब भई विनास। सोग रोग नहीं आवें पास॥

काम क्रोध मन सहजे जाए। केवल हरनाम प्रीत कमाए॥
मान मध ईरखा द्वेष। धरे ध्यान नहीं पावे लेश॥
इस मारग में निज एक उपाए। साचा नाम मिल जुगत कमाए॥
नाम ध्यान मन पाए बिसराम। गवन विनास विरत निष्काम॥
ज्ञान विज्ञान का पावे भेद। बिरह बैराग से दुर्मत छेद॥
मिटे अन्धकार घर चानन होए। छिन छिन नाम की मनी परोये॥
उट्ठत बैठत ये ही कार। धन गुरमुख जिस पाई सार॥
मन अपने का शंका तोड़े। मन बानी इक नाम में जोड़े॥
आप त्याग ग़रीबी पाएँ। सरजनहार देख घट माहें॥
तीन लोक की सुन सतसार। मिथ्या जगत सत आप निरंकार॥
सेव बन्दगी और सतपुरष प्यार। मानुष देह की सुन साची कार॥

**अमरत नाम को पाय के, हिरदे माहीं छपाओ।**
**'मंगत' औखद नाम की, खाये अमर पद पाओ॥ 61**

चार पदारथ का इक मूल। सिमरो ठाकर नहीं पलक मन भूल॥
निन्दा चिन्ता का जाए बकार। आशा तृष्ना का मिटे ग़ुबार॥
करता करम की पाए सुद्ध। ज्ञान ध्यान की आवे बुद्ध॥
मरन जीवन का करे विचार। ग़फ़लत त्याग होए हुशियार॥
साची संगत में नित परबीन। सत पुरख को नित हिरदे चीन॥
पाप पुन्न का खोजे भेद। आवागवन का मिटावे छेद॥
सत सरूप पर आवे विश्वास। दीन बन्दगी पाए कीजे अरदास॥
भयो सुतन्तर मन नित लवलीन। विखे विखाद गई दुर्मत मलीन॥
मन अपने का भरम मिटाए। सत धरम की तेग़ चलाए॥
जतन जतन बाँधे मन चाल। दुबधा त्याग मन होए निहाल॥
गुरमुख मारग सुन साची कार। मानुष देह का भए उद्धार॥
बादमुबाद को मन से त्याग। जनम जनम का सोता उठ जाग॥
निज सरूप की कीजो खोज। दुर्लभ जनम की पाओ मौज॥
दुस्तर पाँच बड़े ग़नीम। विरला साधे ये कठन मुहीम॥

हाड माँस नाड़ी का पिंजर। मल मूत्तर रक्त कफ़ का मन्दर॥
पवन परकासे नौ द्वार। नित मिरतक सत्तता नहीं सार॥
सरजनहार कारीगर अनूप। सदा अलेप अखण्ड सरूप॥
अन्धा जीव नहीं जाने सार। खप खप मरे भोगे नौ द्वार॥
मिथ्या कलपत धारे चित प्रीत। भोगे भोग रोए नित नीत॥
कठन कराल करम का जाल। बाँधे जन्त चौरासी खाल॥
जनम अनेक जीव भरमाए। बिन तत्त ज्ञान नहीं ठौर को पाए॥

**दुर्लभ जनम को पाय के, कीजो सत की खोज।**
**'मंगत' ये तत्त सार है, पाओ परम पद सोझ॥ 62**

सत तत्त खोजो जुग जुग परवान। मानुष देह का सुन साच निधान॥
आदी अन्त जाँ का ना होए। नित प्रकाश सरब आद समरूप जोए॥
द्वन्द बिकार नहीं एक दो का मेल। अखण्ड आनन्द सरब गत खेल॥
जरा मरन नहीं व्यापे काल। नित निरालम सत तत्त सो भाल॥
सब के बीच परे भी आप। जिसकी माया की अचरज थाप॥
सरब शक्ति में सो शक्तीमान। सरब के तेज में सो ही तेजवान॥
सदा आनन्द प्रेमसरूप। ऊँच नीच नहीं भरम का कूप॥
सरब की बुद्धी में तिसका ज्ञान। सत कुसत की देवे पहचान॥
सरब का धाम अबनाशी सो देव। जात वरन नहीं करम भरम का भेव॥
नित निराकार अपने आप समाए। कथा अकथ ना कथन में आए॥
दृष्टा दृश्य दर्शन तिसका खेल। गही ज्ञाता ज्ञेय का कीजे नित मेल॥
अद्भुत रूप ना पारावार। जो बूझे तिस वारूँ सद वार॥
अजर अमर पुरख नित निर्वान। शूनियंगकार सरब में परधान॥
रंचक मात्तर जो माने परताप। महापुरख सो ही मेटे संताप॥
आदी सत अन्त भी सत। जुगाजुग आद सम रूप अवगत॥
मिल सतगुर सत तत्त पहचान। बिनसे बाद पावे परम कल्यान॥
अधिक वडयाई महमाँ आपार। लखया ना जाई तिसका पासार॥
जिन खोजा तिन पाई शान्त। अमर भए गए सकल भरान्त॥

समदृष्ट विज्ञान सरूप। खोजो तत्त आलख अनूप॥
वेद कुतेब सिद्ध करें पुकार। सत को खोज सो ही जग सार॥
जनम अमोलक का खाटो लाह। सिमरो ठाकर जो शाहों का शाह॥

**सत सुनिए सत मनिए, सत का करे निध्यास।**
**'मंगत' सत तत्त सिमरिये, मिटे करम की फाँस॥ 63**

सत सरूप तिसका सतनाम। मिल सतगुर पावे सतधाम॥
नाम रूप मिथ्या का भोग। नीच करम लागा दीरघ मन रोग॥
जतन करे पर होए ना सरजीत। घनी उपाध धारी विच नीत॥
अपनी हिकमत का चलावे राए। दिन दिन फाँस चौगनी पाए॥
सुख कारन धावे बहुतेर। जतन अकारथ दुःख भए आख़ेर॥
चारखानी विच भई तरास। कठन जाल जम काल गरास॥
पढ़ पढ़ थाके वेद ग्रन्थ। भरमत फिरे बीच अनेके पन्थ॥
तीरथ बरत और संजम आपार। काबा बद्री परसे कदार॥
फिरे विलायत बहु कीजे सैर। मन बेकार नहीं पावे धीर॥
अधिक सम्पत परापत कीन। नित ही रोए ये मन बेदीन॥
अनक संगत सुने इतिहास। कुटल मन की नहीं मिटी प्यास॥
बाल जोबन जरा गई बीत। मिरतक भई काया बालू की भीत॥
करम का जाल संग जीव लिपटाए। जूनी अनेक में नित भरमाए॥
चतर चतराई जाए बेकार। बिन हरसेव नहीं पावे सार॥
ये है सार ये है निधान। हर की भगत देवे कल्यान॥
नित ही नित गुन गाओ अपार। नित रखयक सो आप मुरार॥
जो सिमरे सो बन्धन से छूट। सत सरूप अमीरस लूट॥
अपने मन का करो उपाए। विच ग़रीबी हरसेव कमाए॥
बख़शनहार सो आप दयाल। सकल मिटावे ये बिख का जाल॥
राखो तिसकी मन में ओट। अन्तकाल ना पाओ जम चोट॥
सुफल करम ये धरम विचार। साचा नाम नित सिमर मुरार॥

**ऋद्ध सिद्ध माँगूँ नहीं, और ना माँगूँ कुछ कार।**
**'मंगत' माँगे भगत प्रभ, धूड़ी हरजन सार॥ 64**

अधम जीव का होए निस्तार। हर की भगत केवल जग सार॥
जो जो सिमरे सो भए पुनीत। डोलन त्याग भए निस्चल चीत॥
सत वस्त पाए सुखधाम। हर की सेव देवे बिसराम॥
पीपा नामदेव और रविदास। गावे मीराँ मन अधिक प्यास॥
हर का भगत सदा मतवाल। नाम सिमरे एक दीनदयाल॥
बिन मध के भयो मस्तान। साचे नाम का कीजे नित पान॥
मन की कूँडी पवन का डंडा। नाम की औखद घोटे निर्द्वन्दा॥
जतन जतन कर पीवे छान। चढ़ी ख़ुमारी पुरष निर्वान॥
हर के भगत की इक मन आस। साचा नाम पीवें स्वास स्वास॥
तिस आज्ञा में करे करम त्याग। खिमा ग़रीबी मन आई जाग॥
सकल जगत देख काल समान। सत सरूप केवल भगवान॥
भुख प्यास निन्द्रा सब जाए। प्रेम प्रीत सतनाम कमाए॥
आपामत सब गया ग़ुबार। सर्वज्ञ ठाकर पाई तत्त सार॥
झूट जग की मिटे प्यास। साचे नाम की राखे इक आस॥
नित ही नित उद्दम सत धार। सेव बन्दगी सतनाम विचार॥
मान मध का विकार विनासे। सत सरूप को नित अरदासे॥
अनन भाओ हर भगत प्यार। छूटे बन्धन पाए शबद आपार॥
आलख शबद जागे घट माईं। तिसकी सेव से मिटे भरम की छाईं॥
शबद सुरत कमावे योग। मुकत पदारथ अमीरस भोग॥
रोम रोम में बोले नाद। परम आनन्द परगट बिसमाद॥
जिस पाया सो पूरन का पूर। बलिहारी पाए तिस चरन की धूड़॥

**आलख शबद परगासिया, द्वन्द विकार विनास।**
**'मंगत' गुर की जुगत से, मिट गई गवन प्यास॥ 65**

हर के भगत की महमाँ आपार। हर का भगत चित राखे निर्धार॥
द्वन्द विकार माया परमाद। हर का भगत नहीं परसे ये बाद॥
मान अपमान में बिरत एक समान। वैरी मित्तर में राखे प्रेम ध्यान॥

रोग सोग लाभ और हान। हर का भगत विचरे तिस माहीं समान॥
करम करे नहीं चित में कर्ता भाओ। सरब अतीत तत्त रूप समाओ॥
करम फल इच्छया भई विनास। प्रभ की आज्ञा में नित करे निवास॥
मज़हब मज़ाहब पाखण्ड बाद। तिनसे न्यारा होए सिमरे अगाध॥
गादी गुर का नहीं मन में चाओ। कुल जाती नहीं वरन कोई पाओ॥
रंक राज एक समान। एक चित परसे कंचन पाखान॥
आपा पर से मन भया अतीत। पाया सर्वज्ञ ठाकर इक पुनीत॥
विरत त्याग निरविरत विचार। अन्तरमुख पाए शबद आचार॥
शीत ऊषन एक रस पेखे। आप त्याग सत रूप को लेखे॥
अधिक वडयाई हर भगत की मीत। हर का भगत नित राखे निर्मल चीत॥
मिथ्या जग से भए उदास। अबनाशी रूप में करे निवास॥
अपनी कलपत आप निवारे। आलख पुरष के चरन पधारे॥
तन मन त्यागे बिख की खान। तत्त सरूप की करे पहचान॥
नित ही नित यह धारे आचार। मन में सिमरे आलख आपार॥
परकिरत दोख पर पाई जीत। अनन प्रेम इक नाम परीत॥
मर के जीवे इक नाम की ओट। हर की भगत से बिनसे सब खोट॥
जरा मरन का भय निवारे। अजर पुरष मिल संकट टारे॥
नित परकाश आनन्द निर्वान। तिस को पाए हर भगत परवान॥

**अन्तर बाहर एक ध्यान, हरे दूजा परमाद।**
**'मंगत' हर की भगत से, बिनस गये विखाद॥ 66**

## मुसलमानी भेद

वेद का वक्ता पण्डत होए। कुरान बखाने काज़ी जोए॥
पढ़े अंजील पाए नहीं सार। मन में राखे कुफ़र बकार॥
बाहरों सजदा अन्तर कुटलाई। परवरदिगार कैसे हरखाई॥
बिना प्रेम सब जतन बेकार। रोज़ा नमाज़ बिस्मिल्ला बाँग उचार॥
कुफ़र शैतान को करे हलाक। हिरस हराम को देवे तलाक़॥
दीन आजज़ी हुकम रुबानी। तिनको पाए सुने भेद मुसलमानी॥
सरब रूहाँ का दरद पछाने। ज़ात इलाही सब में जाने॥

बेखुद होए पढ़े तकबीर। तिसको लागे ना तक़सीर॥
धार ख़ुदी करे जीव हलाल। नफ़्स की खातिर करे करम कराल॥
तीन जहान में पाए ना छूट। करे क़ज़ा इज़राईल सिर कूट॥
मेहर त्याग क़ैहर वरताये। ज़िन्दा मार हलाल कहलाए॥
सब कुछ माने रब रज़ाई। रब का मारा हराम कहलाई॥
खोल क़ाज़ी तूँ दृष्ट विचार। क्या तेरो जो देवें तू परवरदिगार॥
जो देखें सो साहब की ज़ात। तन मन धन सब तिसकी दात॥
तिस ही की चीज़ तिस ही को देवे। क्या वडयाई सो नर लेवे॥
अपनी चीज़ तू कर पहचान। करो भेंट हरखे भगवान॥

सब कुछ तो है साहब का, आवे तिस रज़ा।
तेरी तो इक हिरस है, नित ही करे क़ज़ा॥

हिरस ख़ुदी पर पढ़ तकबीर। साहब राज़ी की सुन तदबीर॥
अपना आप मिटावे जोए। विच रियाज़त सब ग़फ़लत खोए॥
सब कुछ देखे तिसकी रज़ा। साहब राज़ी तब मिटे क़ज़ा॥
सच्चा कलमा बेख़ुदी ईमान। मेहर ज़कात देवे सो मुसलमान॥

**साहब लावज़ूद है, ला-मज़हब जलाल।**
**'मंगत' कहे सुन क़ाज़िया, ग़ैब दा सही अहवाल॥ 67**

अरश फ़रश लोह क़लम विचार। सब का साखी परवरदिगार॥
सब फ़नाह नहीं रहे क़ायम। लाफ़नाह सो ज़ात है दायम॥
सब के अन्दर तिसका जलाल। सब कुछ देख तू उसका कमाल॥
आब ख़ाक आतिश और बाद। कुदरत देख साहब कर याद॥
हाड मास का पिंजर तोर। तिस में बोले ग़ैबी नूर॥
सब को करे ज़िन्दा जावेद। ज़ात इलाही का नहीं पाए कोई भेद॥
पढ़ तूँ साचा नाम करीम। सब पर फ़ज़ल करे जो रहीम॥
काया काबा विच अबदी नूर। ग़ैब 'सदा' बाजे बेहद तूर॥
सो ही इलहाम कलाम रुबानी। तिसको बूझ छाड तसव्वर फ़ानी॥
विच वजूद में सो रहे लावजूद। लामकान सरब थाईं मौजूद॥
सारी ख़लक़त का ख़ालिक़ सच सोई। अपनी हिकमत से सब इक तार परोई॥

तिसकी क़ुदरत का नहीं शुमार। पीर वली करें नबी पुकार॥
राई को परबत करे, शाह को करे गदा।
बस्ती को जंगल करे, जंगल गाम बसा॥
ऐसा साहब कारीगर आप। विच मुरीदी कर तूँ उसका जाप॥
कर सबर सतंजा हक़ परतीत। ज़बत हवास राखे रोज़ा नीत॥
हक़ नाहक़ की करे पहचान। हक़ को खाए सो साचा मुसलमान॥
कुफ़र शैतान से तोबा पढ़े। राहत रंज में इक चित धरे॥
दीन आजज़ी मन तन समाए। तरक ख़ुदी कलमा सच ध्याए॥
मेहर मुहब्बत की तसबी फेरे। त्याग की सुन्नत ले सुख घनेरे॥
हिरस ख़ुदी तमा ग़ुस्सा और बिकार। हक़ नमाज़ पढ़े करे तिन का शिकार॥
सबर आजज़ी का, धर दिल में परवार।
दम दम साहब याद की, मनी परोए हार॥
ज़िन्दा मरे मर के जीवे। फिर ना मरे विसाल प्रभ लेवे॥

**हिरस फ़ेल उम्मीद, तीनों से पाए जो जीत।**
**'मंगत' कहे सुन क़ाज़िया, सो मोमिन पाए ज़ात पुनीत॥ 68**

साचा साहब एक है, और कुल फ़नाह।
पकड़ो दामन तिसका, जो शाहों का शाह॥
विच रज़ाई होए नित चालो। तजो क़ज़ा मन कुफ़र को गालो॥
देह मस्जिद प्रान मुसल्ला। तिस पर बैठ कर याद तूँ अल्ला॥
आवे जावे नफ़स की धार। लो तरीक़त मुरशिद दरबार॥
शौक़ यक़ीन का पहन परायन। सिदक़ का तौक़ ले दिल में लटकायन॥
कूड़ी दुनियाँ दिल से भुलाओ। बे-गम नगर की सूझत पाओ॥
तख़त चढ़े नौ रोज़ को खोले। ग़ैब 'सदा' रग रग में बोले॥
मिटे अँधेरा घर चानन होए। मुरशिद पाक मिल दुई दिल खोए॥
ग़ैब बाज़ार चाँदनी चौक। तख़त बिराजे साहब अनोख॥
लख आफ़ताब महताब चमकार। उठके देख तू साहब दीदार॥
जिस देखा सो होए ख़ामोश। जाम बेख़ुदी पी होए मदहोश॥
पीर पैग़म्बर और फ़रिश्ते हज़ार। देखन आए तिस सादिक़ का दीदार॥
अपने नूर संग मिल हुआ नूर। दोहे जहाने देखे इक हज़ूर॥
द्वैत ग़ुबार सादिक़ जन खोए। कलमा पाक विच दिल परोए॥

बड़ी सिफ़त सादिक़ की जान। कुफ़र त्याग करी साहब पहचान॥
नासूत मलकूत जबरूत बिकार। पाई लाहूत ऊँची सरकार॥
अनहद नाद वाजन्त तूर। साचे नाम में रहे मख़मूर॥
दीन दुनी दोनों ले जीत। इक ज़ात इलाही की रखे प्रीत॥
चार दिसा में सजदा देवे। ज़ात हक़ानी की सिफ़त को लेवे॥
नौ दरवाज़े में होए चौकीदार। तोड़ सके ना कोई गंज आपार॥
बजे रबाब शाहाना तान। ग़ैब को पहुँचे सो साचा मुसलमान॥

**घर में बाजत नौबताँ, मरदंग सुरंग नफ़ीर।**
**'मंगत' कहे सुन क़ाज़िया, सच घर बसे फ़क़ीर॥ 69**

मिल मुरशिद पा इलम हक़ानी। कोह तूर चढ़न की सुनो कहानी॥
आवे जावे नफ़स की धार। शाह रग माहीं वास गुज़ार॥
दम दम साहब नाम करो याद। ग़ैबी खिड़की खोल साहब सुने फ़रयाद॥
जो दम साहब नाम विसारे। सो दम काफ़र ले कुफ़र उभारे॥
उट्ठत बैठत कर याद इलाही। छोड़ तसव्वर झूट फ़नाही॥
माल मुलक और हाथी घोड़। वक़त आख़ीर जाएँ सब छोड़॥
कूड़ी दुनिया संग हिरस लगाई। सिर पर बजे रबाब फ़नाई॥
कूचोकूच नहीं मुक़ाम। राजा राना मीर ग़ुलाम॥
महल अटारी और जागीर। मिले क़बर आखिर होए दिलगीर॥
ना कोई रह्या ना रहना पाए। जलवा कुदरत साह दिखलाए॥
हारूँ कारूँ सिकन्दर दारा। ख़िलजी ग़ौर नहीं मुग़ल दा खाड़ा॥
पीर पैग़म्बर वली दरवेश। आवें जावें पेश दर पेश॥
ये दुनिया है सराए फ़ानी। साहब विसार पाए दुःख की खानी॥
जोर ज़ुलम यहाँ बहुत कमाए। होए निमाना ख़ाक समाए॥
जिस दर बाजत नौबत हज़ार। उस दर बोलें उल्लू कराल॥
तख़्त ताज और दुनिया माल। ओड़क वार पूछे इज़राईल अहवाल॥
किस कारन तूँ जग में आया। बन्दगी छोड़ के बद अमल कमाया॥
हयाती छोड़ फ़नाह में जाए। अमल नबेड़ा उस साची दरगाहे॥

साचा मुरशिद मिल, पाओ हक़ानी भेद।
मिले हयाती ले बन्दगी, अबद जावेद॥

दीन ग़रीबी दिल लावे मूल। कुफ़र कफ़ार की ग़फ़लत जाए भूल॥
कलमा साच का साबन ले धोए। अमरी ज़ात विच दिल रोशन होए॥

**इस फ़ानी जहान में जो आए, सो होए दिलगीर।**
**'मंगत' कहे सुन क़ाज़िया, बिन बन्दगी ना जाए तक़सीर॥ 70**

सो मोमन पाए मालिक का नूर। जो जाए बैठे ऊपर कोहतूर॥
चौदह तबक़ के परले पार। देख क़ादिर का चमत्कार॥
नौ लख तारा कोट आफ़ताब। चमके बिजली कोट महताब॥
असंख तबक़ वहाँ होए परकास। राग छतीसों बानी बिलास॥
देख साहब मन होई खुशहाली। पाई हयाती गई फ़नाह ख़याली॥
सच्चे साहब का सुने फ़रमान। ख़ालिक़ बैठा लाए दीवान॥
बारम्बार करे तहक़ीक़। हमकलाम होए संग सच्चे रफ़ीक़॥
साहब रज़ा मन तन में लाए। हिकमत हुज्जत उम्मीद चुकाए॥
जिस घर में साहब मेला होई। हूत की ज़ात नहीं देखी दूई॥
शरह शरीयत नहीं दोज़ख़ जन्नत। वहाँ नहीं जन्नार ना देखी सुन्नत॥
नबी पैग़म्बर उम्मत ना कोई। ज़ात रुबानी बेक़ालिब होई॥
पाक पलीती भरम ना कोए। इश्क़ मसैहरी तान के सोए॥
एक साहब सच्चा और सभी हराम। मालिक सच्चे की सुनी सच कलाम॥
आशिक़ होके कुफ़र को छोड़े। नफ़स कमज़ात का सिर तोड़े॥
मिल मुरशिद तरीक़त पाए। हक़ीकत खोज मारफ़त दिखलाए॥
ग़ैब बाज़ार निदा रुबानी। सादिक़ होके सुन रमज़ हक़ानी॥
ख़्वाहिश गज़ब का देवे दारूद। तर्क तास्सुब सुने साहब फ़रमूद॥
ऐसी क़ुरबानी देवे जोए। राह असलामी पावे जन सोए॥
तरको-तर्क मचावे शोर। चौदह तबक़ जंजीरी तोड़॥
होए आज़ाद पीवे साहब नाम। बे हिरस होए पाए सिफ़त इलहाम॥
तन मन की ख़ुदी त्यागे। सो मोमन मालिक घर जागे॥

**बन्दा सोई जो करे बन्दगी, पावे साहब की ज़ात।**
**'मंगत' कहे सुन क़ाज़िया, ये साचा राह निजात॥ 71**

# सतगुर के लक्खन

सतगुर ऐसा भेंटिए, जाँ को भरम न कोए।
अन्तरगत में रम रह्या, परम शान्त चित होए॥

सतसरूप में नित समाए। सत की महमाँ नित मुख से गाए॥
झूट माया का भरम उड़ाए। सत शबद में सुरत लगाए॥
बाद मुबाद ऊँच नीच नहीं भेद। समदृष्ट जपे अक्षर वेद॥
इन्द्री भोग से रहे अतीत। आतम भोगे सो गुरु पुनीत॥
भय भरम नहीं जाँ को रोग। नित आनन्द मन रहे संजोग॥
कूड़ा संसा मन से विसराये। साचा शबद मन तन रुमाये॥
शरधावान और उपकारी। अखण्ड सरूप का भए पुजारी॥
मज़हब मज़ाहब सब से दूर। साचा मज़हब राखे हज़ूर॥
सब जीवों से करे प्यार। पर दुःख हरना कीजे ये कार॥
साचे नाम में मगन समाए। अनहद राता सो गुर अगाहे॥
अपने अन्तर का भरम त्यागे। सतसरूप में नित रहे जागे॥
तीन अवस्था का संग त्यागी। चौथे जागे सो गुर वडभागी॥
अधम जीव की कीजे नित सेवा। मान त्याग पावे आलख देवा॥
अपने घर में जिस अमरत चीना। सो सतगुर परम परबीना॥
कलह कलंक दुर्मत को छेदे। सतसरूप ठाकर को बेधे॥
खिमावान दृढ़ विश्वासी। उलट मारग निर्भय निवासी॥
दिन में गुपत रैन उठ जागे। आतम तत्त्व में रहे लिवलागे॥
जड़ चेतन का निरनय कीजे। मिल चेतन अमीरस पीजे॥
छिन छिन मन का संशा काटे। अबगत नाद निरन्तर राटे॥
मिटे अन्धकार घर चानन होए। ब्याध त्यागी साचा गुर सोए॥

**गुर की महमाँ आपार है, जाने कोई गुर सन्त।**
**'मंगत' गुर साचा सो ही, जाँ को नहीं भरमन्त॥ 72**

गुर सो ही जिसकी जुगत आपार। सुन उपदेश मिले सरजनहार॥
गुरमुख युगता ज्ञान विवेकी। अन्तरगत धारे विरत अलेखी॥
साची जुगत कमावे योग। मिटे उपाध तिस गुर संजोग॥

परविरत निरविरत पछाने कार। बन्धन मोक्ष की लाखे सार॥
करम अकरम का जाने भेद। निष्काम विरत ले मनसा छेद॥
साचे नाम का कीजे आहार। भुख प्यास निंद्रा निवार॥
इरध उरध पवन का धाम। साची जुगत पाए जापे सत नाम॥
नाभ कँवल उरध परगास। विखमी सन्ध में कीजे वास॥
खुली सुखमन गगन में बोले। सो ही सतगुर जो यह गत तोले॥
अमरत कुण्ड का मुख उगाड़े। पी अमरत सतधाम पधारे॥
बारह सोलह सम कर राखे। जोत निरालम अन्तर भाखे॥
आसन दृढ़ता परम अनुरागी। सत विशवाशी सो गुर बैरागी॥
मन पवन का खैंचे तान। शबद पछाने होए कल्यान॥
नित आनन्द विरत उदास। अनन प्रेम गुर सचखण्ड वास॥
काल करम का बन्धन तोड़े। उल्टी सुरत सत मारग फोड़े॥
त्रिकुटी आसन अनहद वादी। मानसरोवर लगी समाधी॥
सुन्न गुफा घर शबद किलकार। रमज़ पछाने तिस गुर तों बलिहार॥
ज्ञान ध्यान का बकतर धारे। समता खड़ग ले सब शत्रू मारे॥
मुकत मैदान में खेले चौगान। साचे नाम की ताने नित तान॥
काम क्रोध का सीस उतारे। हंगता ममता नित चूर कर धारे॥
आठों पहर करे निगरानी। अखण्ड जोत दरसे निर्बानी॥

**मन अपना निर्मल करे, कमावे सत शबद की सेव।**
**'मंगत' नित आदेस है, वडभाग से मिलें सो गुरदेव॥ 73**

सिख सो ही जो गुर सिखया लेवे। मनमुख भरम सकल हर लेवे॥
बाद मुबाद में चित नहीं लाए। गुरमुख धरम को सहज कमाए॥
गुर के बचन पर धरे विश्वासा। गुर के चरन का होए नित दासा॥
तन मन धन गुरचरन पै वारे। जीवत मरे गुर शबद उचारे॥
गरब गुमान मन का त्यागे। सहज सुभाए गुर चरनी लागे॥
अमरत नाम गुरदेव से लेवे। मन बच करम से उसको सेवे॥
दुःख सुख सकल रज़ा पै छोड़े। गुरसंगत मिल सब विगन को तोड़े॥

सच्चा मित्तर और स्वामी। नित रखयक गुर पारगरामी॥
पारब्रह्म का बूझे उपदेश। द्वैत भरम का कटे संदेश॥
लख चौरासी गवन विसारे। पूरे गुर के चरन पधारे॥
अपने अन्तर की बाट लखाए। मन तन प्रेम से सेव कमाए॥
मरन क़बूल करे गुर चरनी। अमरत पीवे सो सिख वडधरमी॥
सत उपदेश गुर का भेख। प्रेम से पीवे सुने सिख का लेख॥
गुर सिखया ले बाद निवारे। आपा त्याग सत रूप चित धारे॥
नित ही संगत गुरबचन समाई। पलक ना विसरे सतनाम वडयाई॥
साचा भेख गुर मारग दिखलाए। सच कर माने सो सिख अधिकाए॥
जात जमात सिख की ना कोए। गुर विश्वास गुरबचन चित जोए॥
अपने मन का शंका तोड़े। गुर उपदेश में प्रीती जोड़े॥
गुर की कहनी मन तन में धारे। दुर्मत त्याग सत खण्ड पधारे॥
अटल प्रीत सतगुर के माहीं। सो सिख गुर के चित समाईं॥
पखबाद और मान गुमान। तिनको त्याग गुर सरन पहचान॥

**अपने मन की भरमना धोए, सुन गुर का उपदेश।**
**'मंगत' सो सिख पावे सिखया, साच शबद संदेश॥ 74**

सिख भाओ जो चित में राखे। सतगुर धाम की रसना चाखे॥
मान त्याग होए निमाना। संग त्याग होए यगाना॥
साचे नाम की राखे ओट। काल की लागे ना कभूँ चोट॥
गुर के हिरदे की बात पहचाने। आज्ञाकारी होए सत रूप को जाने॥
दीन आजज़ी आवे धीर। सिख घर उपजे शबद गँभीर॥
निराकार का भेद लखाए। गुर के बचन की देखे प्रभताए॥
मोह माया सब भरम विनासी। साचा सिख सच भेख निवासी॥
तन से मन से नित कीजे सेवा। बाद त्याग दरसे ब्रह्मदेवा॥
सुख सरूप पाए नारायन। उल्टे मारग करे सुरत आवाहन॥
जतन जतन कर सिख धरम को साधे। विच ग़रीबी भय भरम को बाढे॥
साध जनाँ की होवे चरन धूड़। सो सिख आपे रूप हज़ूर॥
खट्टे घाले मन गुर शबद विचार। सो सिख पाए सच सरजनहार॥

पर-उपकारी मत्त सत करमी। धन्न आया सो सिख नेहचल धरमी॥
गुर की कीरत में तन मन त्यागे। तिस सिख घर गुरमुखता जागे॥
मन बानी में धरे सत उपदेश। सतगुर दया सब मिटे कलेश॥
सत मारग में चाले नीत। गुर के बचन धरे अधिक परीत॥
संग जमाती और परिवार। तिनसे राखे अधिक गुरचरन प्यार॥
लोक लज्जया सब भरम वँजाए। गुर का सिख सो सोभा पाए॥
कठन कठोर मन पर पावे जीत। सिख गत पाए कोई गुनी पुनीत॥
सब संसार का छूट जाए संग। केवल गुरचरन दृष्ट से लागे मन रंग॥
सो वडभागी वडदाता होए। गुर के बचन मिल भरम सब खोए॥

**धन्न सतगुर धन्न सिख है, धन्न अचरज सम्बाद।**
**'मंगत' पावे कीरती, सुन साचा मरम अगाध॥ 75**

गुर कहनी रहनी युगत बतावे। सिख और की और चित में लावे॥
गुर दिखलाए सत मारग सत धाम। सिख सेवे विच माया बिसराम॥
मुख से तो सब सिख हो बैठे। मन में नहीं शरधा को राखे॥
माया लोभी और मोह परवारी। गुर की सिखया की मिले ना पारी॥
अन्तर कपट बाहरों बहु भेख। निवनी खिवनी धारे बहु लेख॥
माया कारन गुर को पूजे। सो सिख कैसे सत मारग सूझे॥
गुर कहनी कुछ और बतावे। उलट भान्त तिसको वरतावे॥
गुर दिखलावे सतसंग सत ज्ञान। चेला धाए चौपट जूए मैदान॥
गुर दिखलाए सब से हेता। चेला परसे बाद विखेपा॥
गुर बतावे आतम तत्त ज्ञान। चेला पूजे मढ़ी मसान॥
गुर बतावे अन्तर की बाट। सिख धावे उठ तीरथ घाट॥
गुर सिखलावे मन तन क़ुरबानी। सिख करे हिंसा चित लोभ पछानी॥
गुर जपावे साचा करतार। सिख जापे मनमोहनी नार॥
गुर उपदेसे मन राखो नीचा। सिख होए बैठा सब से ऊँचा॥
गुर बखाने सत पद अबनासी। चेला जापे माया बिख रासी॥
गुर दिखलाए सुतन्तर रहनी। सिख मठ गादी की रसना लीनी॥

गुर जपावे सब में एक परमेश्वर। सिख जापे बाद-मुबाद सब भीतर॥
गुर दिखलावे शबद ध्यान। सिख पूजे पोथी पाखान॥
गुर समझावे मीठा बोल। सिख उठ बोले बिलक्खन बोल॥
एक परमेश्वर गुर सब में दिखलाए। सिख उठ के नया पंथ चलाए॥
गुर दिखलाए नित पर-उपकार। चेला परसे परधन परनार॥

**गुर कहनी कुछ और है, सिख माने कुछ और।**
**'मंगत' लोभ की टाटरी, कह विध होवे चूर॥ 76**

गुर समझावे जत सत त्याग। सिख भोगे मन विखे की आग॥
गुर ब्रह्मा गुर महेश्वर आए। मनमुख सिख नहीं पार को पाए॥
छिन छिन में गुर सिखलावे ज्ञान। मनमुख सिख नहीं पावे निधान॥
खिमा दया परमेश्वर का ध्यान। साचे सतगुर नित करें बखान॥
भेखाचारी और दम्भी सिख जोए। साची सिख्या ना मन तन परोए॥
गुर को दोख क्या लगाए। आप ही चाले उल्टे राहे॥
सूर परकासे थल मंडल आकास। उल्लू के मन अन्धकार निवास॥
सूर के चानन में नाही बिकार। उल्लू के नैन पड़ा अन्धकार॥
एह बिध मूरख विखयाचारी। साचे गुर की नहीं सार विचारी॥
अपनी हिकमत चलावे दिन रैन। बिन सत कीरत नहीं पावे चैन॥
मूरख जन नहीं जड़ता को छोड़े। चाहे गुर सिर भूमी पै फोड़े॥
मूरख सिख गुर कीरत डुबावे। मूरख पुत्तर कुलनाश करावे॥
बिन अधिकारी जो देवे उपदेश। तिस गुर को नित संकट कलेश॥
बिन अधिकारी जो देवे अन्तरज्ञान। मानक फैंके विच धूल मसान॥
बिन जिज्ञासू गुर चेला जो कीजे। नेहफल जाए नहीं सार को सीजे॥
सिख की रहनी कहनी करे विचार। सिख के आहार ब्यौहार की सीजे सार॥
सिख के मन का देखे अुनराग। सिख की बुद्धी का परखे वीभाग॥
सत करम प्रथमे दिखलाए। समाँ गुज़ार सिख लक्ष लखाए॥
बिना प्रेम और दृढ़ बैराग। कभूँ ना खोले सत मारग की जाग॥
सत करम का सबको देवे उपदेश। अधिकारी को देवे सतमारग संदेश॥

गुर सुतन्तर सिख अधिकारी। दोनों मेल से भई सोभा भारी॥

**आतम तत्त परबीन गुर, सिख बेचे तन मन तिन पास।**
**'मंगत' ले सत सिखया, सिख भयो रूप अबनास॥ 77**

सो सिख साचा जो पाए शबद आचार। छिन छिन लेवे गुर शबद आधार॥
मन की सकली दूषना निवारे। आठ पहर इक नाम चित धारे॥
साचे गुर का बचन विचारे। गुर के बचन सब खेद निवारे॥
ऊँची करनी गुर का सिख पाए। ऊँचे धाम में जाए समाए॥
सत संतोख खिमा का नीर। सतगुर पिलावें सिख को अमरत छीर॥
विखे विकार में मन को ठाके। गुर का शबद ले अन्तर राखे॥
अपने जीवन का करे उपाए। अपना भरम मिल गुर शबद मिटाए॥
सत करनी ये कीजे कार। सत बानी मुख से उचार॥
सत सरूप में चित को लगाए। सतनाम तत्त अमरत चित गाए॥
मन बानी में एक सत तत्त भाखे। दुर्मत विकार चित कभूँ ना चाखे॥
भरम बकार का खण्डन कीजे। सत सरूप का मण्डन लीजे॥
गुर के बचन सुन होए हुशियार। अपनी करनी का नित करे विचार॥
कूड़ कपट जो नित दुःखदाई। तिनको त्यागे सत सिख की वडयाई॥
निर्मल रूप परमेश्वर जाप। आलख बानी घट अन्तर थाप॥
अन्तर तीरथ अठसठ नहाए। चौरासी धाम का परसन पाए॥
गुर का सिख बकार निवारी। सतगुर शबद ले जोत उजियारी॥
सिख सरूप अमरत खान। तीन लोक में होवे परवान॥
सच्चदानन्द अखण्ड निर्वान। बिन सिखया ना मिले निधान॥
पीर पैग़म्बर वली जो होए। साचे मुरशिद के क़दम को धोए॥
सिद्ध रिखीशर और अवतार। सेवा टहल करें गुरु दरबार॥
बिन सेवा ना पाए सच भेख। बिन सिखया ना पाए सच लेख॥
शरधा सेवा धरम की सार। साचा सिख मन करे विचार॥

**माया दुस्तर जाल है, निस्तर भए गुर शीष।**
**'मंगत' आद जुगाद से, रतन मोक्ष गुर दीक्ष॥ 78**

नाभ कँवल से ब्रह्मा बोले। बैठ कैलाश शिव बानी तोले॥
शेष सिंहासन पर करे बिषन पुकार। बिन सतगुर ना मिले छुटकार॥
कृषन कहे धनंजे ताईं। तत्त्वज्ञान मिले गुर सरनी जाईं॥
नानक बोले करे पुकार। बिन गुर भेंट ना मिले मुरार॥
जोग जंगम सिद्ध मुन आद। साचे गुर चरन करें फ़रयाद॥
सिख जो सत सिखया में तन मन लाए। सो सिख गुर का रूप हो जाए॥
भयो सपाही लड़े मैदान। शत्रु जीते मारे घमसान॥
तख़्त राज और छतर को पावे। सो सपाही राज गत गावे॥
एह बिध कारज परमारथ जान। सिख सरूप होए करे भरम की हान॥
भरम विनास आतम परकासे। सो सिख गुर के रूप निवासे॥
साधन सेवा मन निरमान। साचे सिख की करो पहचान॥
बाद मुबाद के निकट नहीं आए। निस दिन हर की कीरत मन गाए॥
कठन कराल मन को राखे। गुर का शबद घट अन्तर चाखे॥
गुपत रहे ना परगट होए। अजर पुरष के चरन को धोए॥
खिमा ग़रीबी का बाना धारे। पर-उपकार सत धरम विचारे॥
सब जीवों से राखे मन नीचा। भाओ भगत अमरत मन सींचा॥
गरब ग़ुबार नित करे त्याग। सत सील सत ध्यान में रहे जाग॥
अपने आपकी करे क़ुरबानी। हिंसा त्याग जपे तत्त निर्वानी॥
अखण्ड सरूप के भए पुजारी। छिन छिन जापे गुर शबद अपारी॥
विखे विखाद से पाई जीत। गुर के चरन लई परतीत॥
जत सत त्याग चित रहे समाए। सत तत्त बिमल घट अन्तर पाए॥

**सिख कहावन कठन है, तन मन देवे वार।**
**'मंगत' प्रीती गुरचरन की, नित ही नित बलिहार॥ 79**

पलक ना विसरे हर साचा नाम। सत सिखया देवे बिसराम॥
जनम अनेक की भरमन जाए। साचे गुर जब मेल मिलाए॥
धंदा धावन मन का जाए। मुश्क बेला घट अन्तर पाए॥
तीरथ ब्रत और देव की पूजा। सब अकारथ गुर सम नहीं दूजा॥

जैसी पूजा ऐसी गत लेवे। गुर की पूजा सतधाम को देवे॥
बल बल जाऊँ तिस सिख के चरने। साचे गुर के जिस धारे निरने॥
अबगत पुरख अनाद अजूनी। गुर की भेंट पाई शबद सगूनी॥
अमरत वरखे अमरत पीवे। साचा सिख गुर शबद में जीवे॥
मिथ्या जगत में जाने सतकार। सिमरे नाम आलख अपार॥
जहाँ से छूटा ताईं मिलाए। सतगुर सेव से दूई वंजाए॥
अबनाशी तत्त संग पावे सिख मेला। अदभुत बानी घट देखे खेला॥
मन अपने की दुर्मत काटे। साचा शबद निरन्तर राटे॥
नित सतसंग सुने इतिहास। निर्मल शबद का कीजे अभ्यास॥
मन के विखे भरम को तोड़े। अबगत पुरष के चरन चित जोड़े॥
विच मुरीदी पावे पाक। सिफ़त इलाही पाए रब ज़ात॥
जनम जनम की गवन विनासे। साचे शबद की करे अरदासे॥
पूजा तजे पोथी पाखान। सिमरे हरजन पुरख निर्वान॥
हरजन मिलके हर कीरत लेवे। दीनदयाल के चरन को सेवे॥
इस संसार में सही एक उपाए। मिल सतगुर सत सेव कमाए॥
और पूजा सब देवे बकार। जन्मे मरे ना पावे सार॥
चार वेद का ये निधान। मिल सतपुरष कर सत पहचान॥
सत को पाए मन निर्मल होए। अबगत पुरष में जाए बसोए॥

**साचा गुर साची सेवा, साचा तिस उपदेश।**
**'मंगत' जाए गुरचरन में, मिट गए सकल कलेश॥ 80**

अकथ कथा पावे सार। अदभुत का पावे विचार॥
निराकार का दरशन पाए। डोलन त्याग गुर चरन समाऐ॥
वडी वडयाई नहीं पारावार। अबनासी पाए गुर के दरबार॥
पूरी हिकमत पूरा हकीम। गुर उपदेस काटे भरम मुहीम॥
अमरत रूप आतम विचार। पावे शान्त मिटे बकार॥
रोते आए रोते जाएँ। राजे राने होए बेथाएँ॥
कूड़ी दुनिया सम्बल का फूल। गुनी ज्ञानी गए सब भूल॥

अन्तर बिख बाहरों रोशनाई। देख देख सब अचरज हो जाई॥
नित मिथ्या सत कर भासे। नित बिख अमरत सम चाखे॥
नित अंधकार अत घनेर। फिरें जन्त चौरासी फेर॥
सम्पत सकली अन्त को छोड़े। नज़री देख फिर बिख को जोड़े॥
बाल जोबन जरा तन खाए। मूरख देख जोबन ललचाए॥
महल अटारी हाथी घोड़। चले अकेला अन्त सब छोड़॥
नित बिकार में रहे परबीन। भोग विकार में विरती लीन॥
भोगे भोग नित अशान्त। माया जाल अचरज भरान्त॥
लाख करोड़ी मन नहीं धीर। दर दर माँगें रंक मिटे नहीं तक्सीर॥
बहु परवारी नित ही नित रोए। निर परवारी जीवन दुःख में खोए॥
बैठ सिंहासन राजा हैरान। कठन कराल है काल का बान॥
सब ही रोएँ दिन और रात। धनी दलिद्री क्या गुनी गुनात॥
अचरज लीला धारी करतार। चारखानी में रहे आप भरतार॥
जिसको सतगुर मेला होए। शरधा प्रेम से चरन को धोए॥
सतसरूप का लेवे ज्ञान। पूरे गुर ज्यों करें बखान॥

**नित ही नित साधन करे, गुर का शबद अगाध।**
**'मंगत' पावे परमगत, सुन गुर का सम्बाद॥ 81**

ज्यों ज्यों सेवे त्यों सुख पाए। भरम विनास सत कीरत चित लाए॥
सकल विकार बिनसे गुर भेंट। अमरत शबद परसे नित नीत॥
ज्ञान विज्ञान का कीजे भोग। अमर भए सतगुर संजोग॥
अगन विनास मन पावे ठंड। सरब का ठाकर मिले परमानन्द॥
अगम अगोचर वस्त दिखलाई। सबका मूल देख तृपताई॥
मरन जीवन का भरम वंजाए। अवनाश तत्त मिल खेल खिलाए॥
आस निरास की मिटी प्यास। आलख पुरख में लयो निवास॥
जात जमाती का बन्धन जाए। सरब की जात इक राम दिखाए॥
निर्मल नाम निर्मल ध्यान। अन्तरमुख होए पाई शबद की तान॥
अनहद नाद अखण्ड धुनकार। सुरत निरत कमावे कार॥

मन पवन का एका कीजे। गुर परसाद घट अमरत सीजे॥
भली कमाई सिख की जान। गुर की सिखया मन करी पहचान॥
अपनी भूल सकल गँवाए। केवल गुरचरन की प्रीत कमाए॥
वस्त अगोचर परगट सिख पाए। आनन्द मंगल निस दिन गाए॥
अपने जनम की पाई सतसार। गुरमुख होए लयो जीत संसार॥
आवन जावन गयो करम का जाल। साचा शबद मिल भयो निहाल॥
इन्द्री भोग से भया अतीत। अन्तरमुख पाई वस्त पुनीत॥
पारब्रह्म तत्त निरवान। तिसको सेवे सो सिख परवान॥
काम क्रोध बिख हरे कमज़ात। साचे शबद गुर दीनी दात॥
सकल जंजाल संकट भयो नास। आलख शबद रग रग परगास॥
तीन भवन शबद टंकोर। गुर का सिख बूझे ये शोर।
चढ़े आकास पाए पुरख संग मेल। साचा सिख खेले अचरज खेल॥

**जाँ से बिछड़ा ताँ मिला, सतगुर के परताप।**
**'मंगत' सिख सालाहिए, जो अमरत नाम प्रभ जाप॥ 82**

आलख का बाना जो सिख धारे। सहज सुभाए गुरचरन पधारे॥
सत विशवास के राखे केशा। ज्ञान कंघी से हरे भरम कलेशा॥
प्रेम की पुंगी केश पर बाँधे। गुर का सिख तीन लोक को साँधे॥
पर-उपकार का कड़ा धारे भूखन। खेम कुशल ले हरे भरम का दूखन॥
लज्या पत का काछा पहनावे। शुद्ध विवेक की गंग में नहावे॥
जत का खण्डा कमर में बाँधे। धीर पीताम्बर ओढ़े नित काँधे॥
नाम परतीत प्रेम मदरा को पीवे। काल परहरे जुगाजुग जीवे॥
मुकत मैदान में गुर का सिख धाए। दीन ग़रीबी का बान चलाए॥
दृढ़ पुरषारथ की ले सवारी। बिरह वैराग ले शत्रु रन मारी॥
दुंदवी बाजी विजय घर पाए। गुर का सिख निज रूप समाए॥
अखण्ड नाद घर बानी परगासे। उपरस मनुआँ हरचरन निवासे॥
तीन भवन का खोले गुर द्वारा। आलख शबद का परकासे दरबारा॥
करम धरम सत नियम आचारा। निहचल बुद्धी कर पाए विचारा॥
सत असत की लेवे पहचान। भाना माने मन होए ग़लतान॥

खिमा दया सील चित लाए। अहिंसा तप नित मन में कमाए॥
पाँच दूत का सीस उतारे। जप तप बान ले शत्रु को मारे॥
शबद ध्यान का पीवे नीर। निरवैर भाओ का करे आहार मतधीर॥
बाद-मुबाद के बिख को त्यागे। समदृष्ट ले गुर का सिख जागे॥
दृढ़ आसन एक शबद विश्वास। साचा चोला पहने सतगुर का दास॥
चार दिसा और चौधां भवन। सरब ज्ञान गुर का सिख करे श्रवन॥
सरब जियाँ से राखे हेता। पख त्याग निरपख रमनीता॥
साची करनी गुर का सिख पाए। भय त्याग निरभय समाए॥
जुग जुग महमाँ सिख की परवान। बिख त्याग करे अमरत को पान॥

**निर्मल करनी निर्मल कथनी, निर्मल चित निध्यास।**
**'मंगत' माँगे दरस को, सत सिख प्रेम बिलास॥ 83**

## ब्रह्मन की पहचान

सो ब्रह्मन ब्रह्म का मुख होई। ब्रह्म परकास मिल दुर्मत खोई॥
जप तप नियम करे अशनान। खिमा जनेऊ धारे परवान॥
चार वेद का वक्ता होई। सार सिद्धान्त में सुरत परोई॥
मन बानी को दमना कीजे। महाँ तपीशर अमरत रस पीजे॥
मान त्याग रहे निरमान। बाद त्याग समदृष्ट पहचान॥
त्याग सरूप चोला धारी। तिस ब्रह्मन तों जाऊँ बलिहारी॥
मोह माया संकट नासे। तत्त ज्ञान संजुगत बिलासे॥
पारब्रह्म संग संधी कीजे। तीन काल में अन्तर सुख पीजे॥
झूट पाखण्ड बाद निवारे। ब्रह्म को बिन्धे सो ब्रह्मन आपारे॥
कूड़ काया का मान परहरे। सत परतीत सो ब्रह्मन निस्तरे॥
ऊँची कुल का मान त्यागे। ऊँची रहनी रहत मन जागे॥
पाँच तत्त पच्चीस परकिरता। तिनको जीते सो ब्रह्मन जगधरता॥
चारखानी में एक प्रभ दिखलावे। सूकर स्वान चण्डाल में इक सार लखावे॥
ऊँच नीच का छोड़े भेद। तिस ब्रह्मन पाया अर्थ सत वेद॥
चारों वरन का करे सुधार। सत तत्त कीरत कीजे संचार॥
अधम जीवों का पाप निवारे। सत तत्तवादी सो ब्रह्मन बलिहारे॥

अन्तर तीरथ अठसठ अशनानी। गंग जमन घट अन्तर जानी॥
गंग जमन सुरसती का मेल। तरबैनी मज्जन करे सत ब्रह्मन का खेल॥
तीन ताप की तपन भई दूर। ब्रह्मगत पाए सो ब्रह्मन हज़ूर॥
त्याग वैराग का लश्कर धारी। बिरह विवेक का शस्त्र विचारी॥
दृढ़ विशवास का तिलक ललाट। चौदह लोक कम्पे देख ब्रह्मन परताप॥
पूरन नीती का ज्ञाता होई। तत्त्व ज्ञान मन माँहीं परोई॥
परकिरत विकार से रहे न्यार। अबगत रूप सिमरे मुरार॥
दया निधान खिमा सरूप। ब्रह्मगत लखे सो ब्रह्मन अनूप॥

**माया भरम को खण्डन करे, ब्रह्म का पावे मेल।**
**'मंगत' विरला जगत में, कोई ब्रह्मन खेले खेल॥ 84**

अपने मन का संशा तोड़े। पारब्रह्म संग प्रीती जोड़े॥
तीन काल मिथ्या जग देखे। सतसरूप नारायन पेखे॥
दुस्तर जाल से भए निहसंग। तिस ब्रह्मन को लागा ब्रह्म का रंग॥
सत सील संतोख ब्यौहारी। जत सत त्याग धरे चित उपकारी॥
अपने मन को कीजे रास। कपट त्याग पाए राम बिलास॥
चौधां लोक की सम्पत तुच्छ जाने। साधन सेवा हर भगत पछाने॥
नित सतसंग का चित बिलासी। अबगत रूप का नित निध्यासी॥
इन्द्री रसना परीत्याग। उपरस आतम की पावे जाग॥
जुगत डण्ड लेवे चित परवेसा। तीन वरन आधार सो ब्रह्मन दरवेशा॥
जुग जुग कीरत सोभा आपार। साचे ब्रह्मन जानी सच कार॥
काम क्रोध बिख अगन अपारी। खिमा वैराग ले सब ताप निवारी॥
सादा जीवन शुद्ध विचार। साचे ब्रह्मन की सुनो जगकार॥
तीन गुन माया का भेद लखाए। गुना अतीत का दरशन पाए॥
गुन करम सब माया का खेल। अबगत परसे अनाद अनील॥
तन मन किरया से रहे अतीत। सो ब्रह्मन सत जुगत पुनीत॥
आतम तत्त सोधे निरवान। महापुरष सो ब्रह्मन परधान॥
नित ही नित आतम बिरोले। कलप त्याग मन भया अडोले॥

हंगता ममता का भक्खन कीजे। दुर्लभ ज्ञान ब्रह्म दर्शन लीजे॥
वडी क़ुरबानी ब्रह्मन मीरास। होए क़ुरबान मिटे जग त्रास॥
खट दर्शन का मूल विचारे। बाद-मुबाद विखेप निवारे॥
चेतन पुरष निरालम नीत। सो ब्रह्मन जो पावे ये परतीत॥

**पाखण्ड का खण्डन करे, सत का मण्डन लीन।**
**'मंगत' सो ब्रह्मन ब्रह्मज्ञान में, नित रहे परबीन॥ 85**

सकल जीवों का होवे उद्धारी। निर्मल जुगत दे सबको निस्तारी॥
कूड़ कपट छल बाद को हरे। देवे तत्त ज्ञान जो सरनी पड़े॥
अधर्म पाप विखाद को खण्डे। ब्रह्मज्ञान संग मन बानी को गण्ढे॥
स्वास स्वास प्रभ कथा विचारे। सकले करम प्रभ आज्ञा में धारे॥
भरम विनासे होए त्रैकाल दरसी। अद्भुत नाद ब्रह्म जोत घट परसी॥
उट्ठत बैठत संजम चित राखे। जाप अजपा मन दृढ़ कर भाखे॥
काल करम पर पावे जीत। पारब्रह्म मन भई परतीत॥
देह का देवल करे विचार। तिसमें देखे जग सरजनहार॥
चौसठ घड़ी प्रभ आरती कीजे। अन्तरमुख होए निज ठाकर को पूजे॥
प्रेम परीत पुष्प को लीजे। पारब्रह्म की भेंटा कीजे॥
सम दर्शन का नीर चढ़ावे। ले चरन अमरत अमर पद पावे॥
पर-उपकार चन्दन घिस लेवे। निष्काम विरत कर तिलक नित देवे॥
दीन आजज़ी पाए करे अरदास। परहित चित धूप परगास॥
अखण्ड चित होए सत आरती करे। बिमल शबद मिल सो ब्रह्मन निस्तरे॥
अबगत पुरष की ले सूरत पहचान। जगमग झलके जोती तीन जहान॥
रूप रेख बिना सरीर। पायो ठाकर गहर गम्भीर॥
अघट परगास सुरती लवलीना। भरम विनास चौरासी छीना॥
जय जय कार प्रभ अन्तरयामी। अखण्ड नाद तूँ पारगरामी॥
सतगुर भाने घट अमरत चाखे। सत ब्रह्मन सत गत को लाखे॥
पारब्रह्म सर्वज्ञ व्यापी। बानी त्याग मन शबद अलापी॥
माया चक्कर द्वन्द विनासा। अपार निरंजन का देखे परगासा॥

आलख बानी रोम रोम परगासे। धन्न ब्रह्मन ब्रह्म माहीं निवासे॥

**सत करनी सत रहनी, सत ब्रह्मन की कार।**
**'मंगत' परचे निज ज्ञान में, सो ब्रह्मन बलिहार॥ 86**

मुख से कहनी नहीं देवे धाम। करनी रहनी देवे बिसराम॥
मुख से ब्रह्मन अन्तर चण्डाल। लोभ धार काढें सब की खाल॥
झूट तिलक जनेऊ धारे। झूटा पण्डत वेद पुकारे॥
और जीवों को देवे उपदेश। अपने अन्तर कपट कलेश॥
संध्या तर्पन अगनहोत्तर कीजे। सरूप विसार पाखण्ड वरतीजे॥
आतम छोड़ पाखान को पूजे। सो ब्रह्मन नित नरक दर सूझे॥
दम्भ फ़रेब फैलाया जाल। पितरी करम बहु भाँतक भाल॥
प्रभ की पूजा को गुपत कर दीना। भूत प्रेत देव पूजीना।
कहाँ ब्रह्मन वशिष्ठ कनाद। कहाँ कपल पातंजल आद॥
कहाँ व्यास ब्रह्म तत्तवादी। कहाँ याज्ञवल्क मुनी त्यागी॥
कहाँ गौतम भृगु भारद्वाज। कहाँ जैमनी अंगरा पराशर आद॥
सब विद्या को कलजुगी ब्रह्मन त्यागे। झूट पाखण्ड छल में नित लागे॥
कियो उपद्रव देश विनास। छल कपट की धारी फाँस॥
नाना मत पंथ हो जागे। सार ज्ञान तज भए ब्रह्मन अभागे॥
इस सागर में, सत रहनी परवान।
जिस मन अन्तर धरम है, सो ही जन परधान॥
पारब्रह्म की कुल नहीं जात। लख चौरासी में समदृष्टात॥
जो जो पूजे सो ही गत पावे। पूर मनोरथ सतधाम को जावे॥
सत मारग कल्यान सरूप। जपो बिशम्भर अज निर्मल रूप॥
कुल जाती का मान त्यागो। साची जात हर भगत मन लागो॥
सच संदेश हम करें पुकार। जाती रीझे ना पार मुरार॥

**जात वरन तिसका नहीं, ना तिसका आकार।**
**'मंगत' रूप अगाध है, लखे कोई गुरमुख सार॥ 87**

जब लग जात वरन को लेखे। तब लग सुरती पड़ी भुलेखे॥

साची जात वरन प्रभ एक। सदा अजन्मा नित अद्वैत॥
नित परकाश आनन्द सरूप। सरब अतीत सो बसे अनूप॥
तिसकी ज़ात वरन ना कोए। जो प्रेम से जापे तिस घट परगट होए॥
मन बकारी करे बकार। ऊँच नीच सब बीजें बिख सार॥
तीरथ ब्रत बीबान निवासी। बिना ज्ञान ना जाए भरम की फाँसी॥
देह की करे बहुती सुथराई। अन्तर काम क्रोध अगन जलाई॥
मुख से पढ़े गीता ज्ञान। अन्तर रम्मया लोभ सवान॥
बस्तर धोती पितम्बर धारी। अन्तर तृष्ना अधिक अपारी॥
गंगातट पर नित बराजे। अन्तर कपट की धरे समाजे॥
तीन काल संध्या कीजे। यज्ञ हवन बहु बिध लखीजे॥
जतन अकारथ बिन तत्तज्ञान। करम का बाँधा फिरे चौरासी खान॥
चार वेद का भयो निध्यासी। गायत्री छन्द का भयो अभ्यासी॥
नित ही नीर रवि को देवे। भली भाँत परकरमा लेवे॥
सालगराम ले कंठ लटकावे। बिना ज्ञान सब बाद कमावे॥
हिकमत छल करे बहु भाँत। अन्तरयामी का कैसे मिले सिद्धान्त॥
जाग ब्रह्मन खोल ज्ञान द्वार। क्या सरूप जो बोले अन्तर सार॥
पाँच भूत का देह विचार। तिसमें रम्मया आप नरंकार॥
नित सरजीवे काची भीत। मिल सतगुर पाओ सत परतीत॥
पवन परगासे नौ द्वार। नित आनन्द रमे मुरार॥
अन्तर पाट जो गुर मिल खोले। सो ब्रह्मन सत धरम को तोले॥
चार आचार की प्रगटे बुद्ध। ज्ञान विज्ञान की आवे सुद्ध॥

**छाडो भरमन बाहर की, प्रभु खोजो अन्तर घाट।**
**'मंगत' पाए ब्रह्मगत, कर अन्तर दर्शन जोत ललाट॥ 88**

सत सरूप का सिमरन जग सार। जो सिमरे सो पावे गत सार॥
सच्चदानन्द अखण्ड अनादी। जुग जुग रमया आप बिसमादी॥
सरब निरन्तर रहे बराज। सरब परकिरती तिसकी समाज॥
बसे निरन्तर रहे अलेपा। अचरज गत नहीं गिनती लेखा॥

जो जाने सो ही तृपताए। करम त्याग निहकरमत पाए॥
सदा अडोल आनन्दसरूप। अमरतखानी सरब अन्तर भूप॥
ज्ञान ध्यान की ये है सार। अन्तर पाए सत शबद आपार॥
सब के अन्तर होवे बानी आकास। रोम रोम में करे बिलास॥
ज्ञान सिमरती और विवेक। सरब परकाशत सो ही एक॥
जड़ माया को चेतन कीना। नित सुतन्तर आप परबीना॥
चार वेद खट दर्शन आद। क़ुरान अंजील तौरैत सम्बाद॥
सब में महमाँ तिसकी गाई। पारावार ना आवे प्रभताई॥
सिद्ध रिखीशर और अवतार। पीर पैग़म्बर नबी करें पुकार॥
गुरु अचारज तपस्वी नाथ। सब का ठाकर नाथों का नाथ॥
तिसकी भगत मन तन परकासे। तिसकी सेवा सब विगन विनासे॥
तिसका सिमरन देवे बिसराम। तिसका ध्यान देवे परम धाम॥
तिसका ज्ञान सब संशा निवारे। सकल जगत का भेद लखारे॥
तिसकी कीरत आनन्द को देवे। प्रेम प्रीत से नित जो सेवे॥
तिसका नाम परम आधार। जो सिमरे पावे निसतार॥
तिसको कीजे जो सदा आदेस। तिसके निकट ना आवें कलेश॥
जो प्रभ सिमरे सो ऊँच से ऊँचा। विखे त्याग रहे मन में सूचा॥
सो ही कुलवन्त सब का मानी। सतसरूप सिमरे निरबानी॥

**हरी का सिमरन जो करे, तिसको कर आदेस।**
**'मंगत' ऊँचा जगत में, जिस मन साच संदेश॥ 89**

रज बीरज से सब उतपाती। मात गरभ में कुल नहीं जाती॥
बाहर आकर जो करम विचारे। सो ही जात भए नाम पुकारे॥
हाड मास नाड़ी का पिंजर। मल मूतर का धारे मन्दर॥
तिसकी जात जमात ना कोई। जैसा करतब जात है सोई॥
उठ के साची जात पहचान। अपने ठाकर की सिफ़त बखान॥
साचा करम जो नर कीजे। सो कुलवन्त पुरख लखीजे॥
अपनी करनी का फल जान। ऊँच नीच जो देख निधान॥

माया चक्कर जीव भरमावे। साहब विसार बहू दु:ख पावे॥
कभी ऊँच कभी नीचा होई। बिन हरी सिमरन छूटे ना कोई॥
साची कथा का सुन भगवन्त विचार। बन्धी छूट पावें सुख सार॥
मानुष जनम अमोलक जान। जिसमें आप मिलें भगवान॥
जनम मरन का भय सब नासी। सत सिमरन आवे अबनासी॥
कहत रहत का पाए विचार। बन्ध मोक्ष की पावे सार॥
अपने मन के बिगन त्यागे। सत सरूप में गुरमुख जागे॥
असत कलेश और भय जो धारी। सहज विनास भयो ले सिमरन मुरारी॥
साचा नाम ले हिरदे विचार। अन्तर खुलें सब सुख भण्डार॥
मनमुखता गई बिख खानी। गुरमुख परचे प्रभ निरबानी॥
एह वडयाई सब जग में परवान। निस्चे सिमरें साचा भगवान॥
परम सुख सोभा आपार। तीन लोक करें जयकार॥
सो सच होए देव गत पाए। देव मुन उठ सीस निवाए॥
अधिक वडयाई हर भगत विचार। सिमर सिमर पाए पद निर्धार॥
साचा पुरष साची तिस करनी। सरब त्याग भयो हरी सरनी॥

**नित आनन्द मंगल होए, हर सिमरन कीरत जो पाए।**
**'मंगत' हरजन चरन सों, नित ही बल बल जाए॥ 90**

करन करावन करनेहार। कर आदेस बारमबार॥
साचा ठाकर नित पुनीत। सरब स्वामी मन रख परतीत॥
अगन सरीखा जग का ताओ। अमरत नाम ले ताप बुझाओ॥
जो जो सेवे प्रभ सुखदाई। तिसके निकट काल ना आई॥
हर की भगत मुकत आनन्द। पाप पुन्न से होवे बख़शंद॥
हर जन पर नित रहे दयाल। विपत पड़े होये किरपाल॥
अपने भगत को देवे वडयाई। जुग जुग ठाकर पैज बढ़ाई॥
जो जन जाए तिसकी सरनी। कपट विनासे होवे वडधरमी॥
नित नित सिमरे दीनदयाल। मिटे कलेश मन होए निहाल॥
विखे त्याग आनन्द को पाए। प्रेम प्रीत मन सिमरन लाए॥

सरब का ठाकर आपार अनामी। सिमरो सिमरो सतपुरख आगामी॥
आपार शकत अतुल समराथा। सिमरो साजन सो नाथन का नाथा॥
देवे सब को सो ही भण्डारी। माँगो तिससे जो नित दातारी॥
तिसकी दात से मन पूरन होए। नित आनन्द चित जाए बसोए॥
देव दानव करें अरदास। सरब ठाकर सब माहीं करे बिलास॥
भाँत भाँत कर उस्तत कीजे। अन्त ना पारावार लखीजे॥
जो सिमरे सो ही रूप हो जाए। कथा अकथ ना कथनी पाए॥
इस जीवन का सार उपाए। सिमरो ठाकर बेपरवाहे॥
मन तन पूरन विरत इकागर। दरसे रूप तीन लोक उजागर॥
तिस बिन दूजी आस जो राखे। जाए निरास गवन को भाखे॥
जनम अनेक भरमत भरमाए। सिमरे साच तब ठौर को पाए॥
सुफल करम धरम विचार। दुर्लभ जनम की खाटो सार॥

**सिमरन साचा नाम है, जो सिमरे गत पाए।**
**'मंगत' करे आदेस नित, जो हर भगत कमाए॥ 91**

करो आदेस नित पुरख विधाता। बिषन वरंच जाँ को शिव ध्याता॥
नाना भाँत की रचना कीनी। हस्ती तृन आद की ख़बर नित लीनी॥
तुम परसाद चराचर सुख पाए। सबका राज़क हो रिज़क कहलाये॥
सब के अन्तर देवे परकास। चारखानी में सम करे बिलास॥
सिमरो ठाकर परम उपकारी। सरब के भीतर सरब आधारी॥
राजा राना होवे मीर। ज्ञानी ध्यानी गुनी फ़क़ीर॥
धनी दलिद्री हिकमत वादी। पण्डत क़ाज़ी और बाद-मुबादी॥
चोर चतर ठग और बकारी। शेख़ पीर और गुरु आचारी॥
दरिंद चरिंद अन्न घास के आहारी। सब का रखयक एक मुरारी॥
मिल सतगुर ये सार लखाई। हस्ती कीटी तृन रिह्या समाई॥
तिसकी प्रभता सब में दिखलाए। आलख पुरख गत लखी न जाए॥
नदियाँ नीर सागर जल अथाहे। पवन पावक में रिह्या समाए॥
परबत कन्द्रा उजाड़ बीबान। सब में देखी तेरी इक शान॥
माँगूँ तुझसे नाम की भीख। दीनदयाल बख़शो ये दीख॥

चौसठ घड़ी आवे तेरी याद। कठन मन नहीं परसे परमाद॥
अनन भगत दीजो मोहे देवा। प्रेम प्रीत करूँ चरन की सेवा॥
और आस जग की ना कोए। तेरा सिमरन मन लड़ी परोए॥
तुमरी याद मन करे सरजीत। तपन विनासे होए पुनीत॥
चरंजीव करे प्रभ तुमरा नाम। साची औखद में अन्तर बिसराम॥
ज्यों ज्यों नाम प्रभ अन्तर समाए। मन में धीरज आए अधिकाए॥
विखया अगन मिल सतगुर वंजाई। आलख पुरख की सोभा मन पाई॥
एके नाम की माँगूं बख़शीश। अनमत को राखो बीच चरन जगदीश॥

**अधिक वडाई नाम की, मन तन दे आनन्द।**
**'मंगत' विसरे ना पलक एक, साचा शबद अखण्ड॥ 92**

सत सरूप की करो अरदास। जनम मरन की जाए फास॥
ओहंग ब्रह्म शूनियंगकारा। ओहंग ब्रह्म सरब आधारा॥
ओहंग ब्रह्म पुरख अनामी। ओहंग ब्रह्म अपार गरामी॥
ओहंग ब्रह्म नित अनादी। ओहंग ब्रह्म निर्वान बिसमादी॥
ओहंग ब्रह्म शबद धुनकार। ओहंग ब्रह्म गरजे दसवें द्वार॥
ओहंग ब्रह्म सरब अतीता। ओहंग ब्रह्म सरब रमीता॥
ओहंग ब्रह्म अखण्ड अजूनी। ओहंग ब्रह्म समाध सगूनी॥
ओहंग ब्रह्म सब अन्तर साजे। ओहंग ब्रह्म नाद घट बाजे॥
ओहंग ब्रह्म नित अकारन। ओहंग ब्रह्म धारे सब धारन॥
ओहंग ब्रह्म देवन का देवा। ओहंग ब्रह्म आलख अभेवा॥
ओहंग ब्रह्म नित समदरश। ओहंग ब्रह्म नित आपको परस॥
ओहंग ब्रह्म नित निराकारी। ओहंग ब्रह्म नित निरधारी॥
ओहंग ब्रह्म कलह विनास। ओहंग ब्रह्म शान्त परगास॥
ओहंग ब्रह्म अखण्ड आनन्दा। ओहंग ब्रह्म घट जोत परचण्डा॥
ओहंग ब्रह्म सरब स्वामी। ओहंग ब्रह्म सरब अन्तरयामी॥
ओहंग ब्रह्म सरब में सिद्धी। ओहंग ब्रह्म ज्ञान गुन निधी॥
ओहंग ब्रह्म अबगत सरूपा। ओहंग ब्रह्म सरजे चराचर भूता॥

ओहंग ब्रह्म अजात अवरना। ओहंग ब्रह्म सरब कारन करना॥
ओहंग ब्रह्म नादसरूप। ओहंग ब्रह्म परसे गुरमुख भूप॥
ओहंग ब्रह्म सरब का ठाकर। ओहंग ब्रह्म तीन लोक उजागर॥
ओहंग ब्रह्म ठौर ठौर निवास। ओहंग ब्रह्म चारखानी परगास॥
ओहंग ब्रह्म ग्रन्थ वेद का मूल। ओहंग ब्रह्म व्यापे सूखम अस्थूल॥

भय भरम संकट हरे, मन तन शबद ध्याए।
सार अर्थ निरनय करे, फेर गरभ ना आए॥
रलमिल संगत गायो, अपरम पुरख अपार।
विजय होए संसार से, ले साची जुगत विचार॥

**साचे सतगुर मिल के, कीजो नित अरदास।**
**'मंगत' अमरत पान करे, निर्भय ले निवास॥ 93**

अक्षर ब्रह्म अद्वैत अनादी। सिमरो नाम अगम अगाधी॥
एके नाम सरब का मूल। नित ही सिमरो जाए सब भूल॥
साचे नाम की महमाँ आपार। ज्ञानी ध्यानी करें विचार॥
जिस पाया सतनाम स्वामी। सो जन हुआ सतधाम का गामी॥
मन का संसा सहज होवे दूर। एको नाम जपो आलख हज़ूर॥
नाम ध्याए घट शबद परगासे। शबद पहचाने होई गवन विनासे॥
नामी नाम कमावे योग। सिमर सिमर चित भए अरोग॥
नाम ध्यान अन्तर जब आए। कलह विनास सतरूप समाए॥
एक अक्खर शिव धरे ध्याना। एक अक्खर सनकादक जाना॥
एको अक्खर जोगी जंगम चित लाए। एको अक्खर पीर वली मन ध्याए॥
दुस्तर जाल है ये संसार। सिमरे नाम पाए तब पार॥
तिस बिन दूजा ना ही उपाए। कठन निस्तर त्रैविखमी माए॥
मिल सतगुर सत जुगत लखाई। साचे नाम की पावे प्रभताई॥
अन्तर बाहर सम कर पीवे। केवल नाम में जीवन जीवे॥
पलक ना विसरे सो साच मुरारी। हरे बकार नित किरपाधारी॥
डोलन जाए मन ले बिसराम। अन्तरमुख पाए शबद सतधाम॥
नित ही नित रहे परबीन। आलख पुरख को हिरदे में चीन॥
अमरत खानी शबद टंकोर। नाम ध्यान जप पावे कोई सूर॥
स्वास सुरत का कीजे मेला। गृहस्ती विरक्ती का एके खेला॥

साची जुगत जिस मन करी विचार। मानुष जीवन का भए उद्धार॥
सोलह कला सम्पूरन स्वामी। अनहद नाद सत खण्ड का गामी॥
सिमरन सेवा ध्यान विवेक। सत विश्वास से मिले सत लेख॥

**मन तन अन्तर परगासिया, आलख पुरख आपार।**
**'मंगत' सिमरे पल घड़ी, ले जीवन रूप मुरार॥ 94**

आलख पुरख की आरती कीजो। सतगुर चरन माहीं चित दीजो॥
सुरत अलबेली पवन पखारे। बारह सोलह सम कर धारे॥
अन्तर करे पाताल अशनानी। उलट जाए आकास समानी॥
मानसरोवर लागे तीर। निर्मल भयो हंस सुख सीर॥
सत सुकृत कर नाद वजाए। बानी अखण्ड चित रही समाए॥
जाप अजपा निरगुन बानी। निज घर बूझे अमरत खानी॥
चार दिसा का नाका बाँधे। मन बिकराल को अन्तर साँधे॥
पवन संघासन पर रहे बराज। उलट पलट का परचे साज॥
नौ नाटका बन्धी कीना। अजर पुरष का दर्शन लीना॥
अखण्ड परकाश जोत निर्वानी। नाद अखण्डित सुरत समानी॥
विखे विखाद सकल निवारे। आलख पुरख के चरन पधारे॥
मन बच करम ये आरती गाए। **'मंगत'** ताँ के नित चरन समाए॥**95**
आरती कीजो अनुभव बानी परगासे। सत सरूप में लयो निवासे॥
पूर मनोरथ कलह निवारे। अनुभव बानी मन करो विचारे॥
नित आनन्द अनुपम जोती। तीन भवन लो मानक मोती॥
जोती अन्दर शबद धुनकार। दमके दामन दसवें द्वार॥
प्रेम पुष्प ले सुरत उद्यानी। उनमुन परसे अमरत खानी॥
बजे रबाब मरदंग नफ़ीर। घण्टा शंख धुन अमरत छीर॥
चित इकागर सत बानी को पूजे। सकल सामिग्री का निरनय सूझे॥
विरत त्याग मन एका होई। शबद ध्यान पाए दुर्मत खोई॥
अजर संघासन पुरष निर्वान। सहज भाए घट उपजी तान॥
दृढ़ पुरषारथ मन ले परोई। पलक ना विसरे सच बानी सोई॥

पूरन आशा सब संकट नासी। अखण्ड आरती चित करे बिलासी॥
गुपत दीप की आरती कीजे। **'मंगत'** जीव की गवना छीजे॥**96**
आरती सुन्न देस में होई। गुरमुख पावे बन्दगी कोई॥
उल्टी गंगा जमना बहाए। उलट सुरस्ती घाट पर आए॥
उल्टे सागर उमगे नीर। करें अशनान गुरमुख मतधीर॥
तीन ताप की मैल उतारे। तरबेनी घाट जो जीव पधारे॥
उपरस मनुआँ विरत विवेकी। घट में परसे शबद अलेखी॥
नाम का आहार करे नित ज्ञानी। पलक पलक कर सार पछानी॥
निष्काम भाओ का धूप धुखाए। बिरह विवेक गंध तिलक चढ़ाए॥
प्रेम पुंज की जोत जगाए। भाओ भगत कर सेव कमाए॥
सत विश्वास ले छतर चढ़ाई। दीन ग़रीबी ले निरत कमाई॥
काया देवल में पुरख निर्वान। करे आरती होए परवान॥
काल करम का बन्धन नासे। सुन्न धाम बानी परकासे॥
मिल सतगुर जो आरती गाए। **'मंगत'** हरजन सत लोक समाए॥**97**
आरती दीन ग़रीबी कीजे। पारब्रह्म मन माहीं लखीजे॥
भाओ भगत सतनाम प्यार। उट्ठत बैठत पियो तत्त सार॥
सत सरूप का मन विश्वासी। अन्तर तीरथ माईं निवासी॥
मान मध क्रोध बिकराल। तिन को त्याग हर भगत मन भाल॥
खिमा दया की चँवर झुलाए। परउपकार मन सेव कमाए॥
सत परकाश चरन अमरत लेवे। गुरमुख जुगती पद पंकज सेवे॥
अखण्ड परकाश घट माहीं साजे। अखण्ड धुन नाद मन माईं बराजे॥
जीवत मरे गुर शबद कमाए। आलख पुरख सहजें हरखाये॥
तिस का हुकम मन तन में मानी। आप त्याग हर सोभा जानी॥
पलक पलक सतबानी सेवे। सर्वज्ञ ठाकर का दर्शन लेवे॥
चारखानी में एको द्रष्टाए। द्वैत त्याग सत आरती गाए॥
सत पुरष निरालम देवा। परसे ठाकर आलख अभेवा॥

**सत सरूप की आरती, जुग जुग भई परवान।**
**'मंगत' सेवे हर भगत जन, परसे तत्त निर्वान॥ 98**

साचे शबद का सुनयो सत भेदा। जिसको ध्यावें नित चारे वेदा॥
काया अन्तर सदा बिराजे। सदा निरालम सरब निवाजे॥
देव दानव सिद्ध मुन ध्याएँ। तिस पुरख का पार ना पाएँ॥
अपने आप में रहे परबीन। नित निरन्तर आप में लीन॥
अधिक वडयाई अधिक परताप। सरब व्यापे सो निरालम आप॥
आवत जावत पवन की धार। मूल द्वार करे संचार॥
गुरमुख खोजे तत्त पहचाने। पवन को सोधे अन्तर बिध जाने॥
मूल द्वार में बन्ध लगाए। उलट पवन सतनाम कमाए॥
अल्प आहार सूक्षम निंद्रा। तत्त बिरोले नित जोगिन्द्रा॥
इरध उरध में सन्धी कीजे। अमरत नाम घट अन्तर पीजे॥
खुले ग्रन्थी नाद उपजाए। मनमुख मनुआँ सहज ठहराए॥
छिन छिन नाद की सेवा कीजे। नाद घनघोर कँवल को छीजे॥
खट चक्रन को नाद प्रभ छेदे। चढ़े आकास तिरकुटी को बेधे॥
सूक्षम धुन तरबेनी बोले। गुरमुख हंसा नित करे कलोले॥
मन अपने की करे निगरानी। नित ही राखे विच अमरत बानी॥
बिरह वैराग का चोला धारी। सत विश्वास कर सिफ़त विचारी॥
इन्द्री विखे से रहे अतीत। मन में राखे एक शबद परीत॥
निर्मल मनुआँ सतनाम का आहारी। द्वैत भरम बिकार को टारी॥
दीन ग़रीबी सत भेख को लीना। आलख शबद की सार को चीना॥
अन्तरमुख मन शबद ध्याए। घोर शबद जाए शिखर समाए॥
अधिक घनघोर शबद की तान। परगट भई जोत आलख निर्वान॥
जाँ से बिछड़ा ताँ जाए मिलाई। शबद भेद जाने जानाई॥

**आसा तृष्ना जेवड़ी, बाँधा कुल संसार।**
**'मंगत' छूटे गुरमुख, पावे शबद निरंकार॥ 99**

शबद को पूजे सो साचा पुजारी। शबद ध्यावे सो बड़ा आचारी॥
शबद सुरत कमावे योग। सुरत निरत ले अमरत भोग॥
शबद ध्यावे सतगुर की जुगती। शबद पहचाने लेवे जन मुकती॥
अन्तर शबद निरन्तर मुद्रा। तत्त विचारे गुरमुख जोगिन्द्रा॥
शबद सार जिस जन लखाई। दुर्मत त्याग सहज तृप्ताई॥
शबद कीरत शबद ध्यान। शबद से पावे जीव कल्यान॥
शबद पहचाने साचा गुर सोई। शबद की पूजा से भरम को खोई॥
नाना जतन करे अँधयार। बिना शबद नहीं पावे पार॥
शबद रमाना थल भूमि आकास। पवन पावक में शबद बलास॥
नदियाँ सागर में शबद इक सार। चारखानी को करे संचार॥
शबद अनादी पुरख अनूप। परखे कोई गुरमुख भूप॥
शबद बिना मन अन्ध गुबार। नित ही दुःखिया पावत ना सार॥
कठन जंजाल पावे त्रैगुन पसार। बिना शबद नहीं पावे निसतार॥
मनमुख आवे जावे नीत। मिले ना ठौर बिना शबद परतीत॥
भोगे भोग पर तृप्ते ना काई। सम्पत पाए शान्त ना आई॥
साची सम्पत गुर शबद विचार। आवन जान से होए छुटकार॥
अन्तर रमया पर जाने ना कोए। साध समागम से परगट होए॥
धन्न सो पुरख जिस शबद घट पाया। निर्भय धाम में जाए समाया॥
मानुष जीवन में तृप्ती पाई। हरे विकार सत शबद लखाई॥
शबद बिना झूटा तप जोग। कठन कमावे आवे देह रोग॥
शबद बिना सब थोथा ज्ञान। अन्तर धारी कपट की खान॥
शबद सार शबद है मूल। शबद व्यापे सूक्षम अस्थूल॥

**आलख शबद अपार है, नित आनन्द सरूप।**
**'मंगत' गुर की जुगत से, मिले सो अमरत कूप॥ 100**

पाखण्ड को खण्डन करे, साचा ले विचार।
सिमरन सेवा बन्दगी, खोजे नित तत्त सार॥
पाखण्ड देवे नीच गत अन्त। नित ही दुःखिया दुःख में भरमन्त॥
पाखण्ड में रमया चराचर भूत। पाखण्ड को खण्डे सो साचा अबधूत॥

पाखण्ड में भूले चतर बुद्धवान। अन्तर धारी कपट की खान॥
धरे पाखण्ड ना पावे सुखधाम। जनमे मरे चौरासी जाम॥
बाहरों भगत अन्तर कुटलाई। जनम गँवावे ना ठौर को पाई॥
अपनी करनी में रहे नित भयमान। जतन करे नहीं पावे तत्त ज्ञान॥
सूतक पातक ऊँच नीच का भेद। ये ही पाखण्ड करे आनन्द का छेद॥
परमेश्वर सिमरन दिया त्याग। जादू तन्तर में रहे नित लाग॥
मन की व्याधी मन में रही। विच विखाद सब औसर गई॥
बिन सिमरन और नाद ध्यान। दूजा करम पाखण्ड पहचान॥
मन का शंका ना होवे नास। राख पाखण्ड नर मरे प्यास॥
पोथी ग्रन्थ विद्या बहु भाँत। साचे मारग का कथें सिद्धान्त॥
कथनी कथे ना पावत सार। बाद मुबाद में काल गुज़ार॥
तीरथ बरत संजम पुन्न दान। बिन हरी भगत सब बन्ध पहचान॥
हर की भगत जिस मन आई। मज़हब मज़ाहब गई पन्थ दुहाई॥
नित सिमरे अत निर्मल निर्वान। हरे बिकार पावे सूचा अस्थान॥
दुबधा दुर्मत वैर विरोध। हर की भगत से होए निरोध॥
ज्ञान ध्यान ब्रत संजम पूजा। सबकी सिद्धी मिटे भरम दूजा॥
साची संगत का ले विचार। पाखण्ड खण्डे ले ज्ञान कटार॥
निर्मल पुरख अनुपम बानी। अठसठ कर अन्तर अशनानी॥
जनम जनम की मैल उतारी। साचे सन्त के चरन बलिहारी॥

**घर में घर को पाया, मिल सतगुर सन्त सुजान।**
**'मंगत' हरे पाखण्ड जो, पावे शबद निर्वान॥ 101**

साचा सिमरन सार गत देवे। अबगत पुरष के दर्शन लेवे॥
मन अपने की दुबधा टारे। सच परतीत से सतनाम पुकारे॥
आवन जावन माया का खेला। अदभुत रचया साहब ने मेला॥
मेला देख देख ग़लताने। अन्तकाल रोएँ बड़े सयाने॥
सार वस्त ना करी पहचान। कूड़ भरवास में रहे ग़लतान॥
अमरत त्याग बिख को खाए। तृखावन्त नित आवे जाए॥

जीवन सुख का जतन बहु कीजे। मरनकाल दु:ख रूप लखीजे॥
हो सुतन्तर सुनो सतबानी। राम भगत बिन सब दु:खखानी॥
सत पुरख भज दीनदयाल। दर्शन भेंट होयें निहाल॥
अजर अमर अबनाशी देवा। प्रेम प्रीत कर चरन की सेवा॥
अमरत दरशन शबद निर्बानी। भयो कदारथ सुनी साध फ़रमानी॥
शबद स्पर्श रूप की रसना। भोगे रस गन्ध नहीं मिटे तृष्ना॥
छिनभंगर ये भोग पहचानी। और की और रंग रूप दिखानी॥
नाना रंग देख जीव भरमाए। आसा करम धर आवे जाए॥
दुस्तर जाल में जीव दु:ख पावे। बिन सतसंग नहीं शान्त चित आवे॥
उठ के सिमरो साच मुरारी। कलह कलेश संकट सब टारी॥
तू प्रीतम परम सुखदाई। तुमरा सिमरन सब खेद मिटाई॥
दुर्लभ जनम सत कार कमाओ। सरजनहार सिमरन चित लाओ॥
कल्लर वनज है सारा संसार। तरवर केला मूल बिन विस्तार॥
खोज खोज कुछ अरथ ना पाए। तृष्ना अगन परचण्ड अधिकाए॥
करो विचार सत मारग मीत। साध जनाँ चित रखो परीत॥
कारन करता अपार स्वामी। सिमरो तिसको सरब अन्तरयामी॥

**करें दुहाई साध जन, सिमरो नाम अपार।**
**'मंगत' काल ना व्यापी, ले सिमरन सरजनहार॥ 102**

दीनदयाल परमेश्वर ही तू मेरा। अनमत राखो नित चरनी केरा॥
तुम बिन दूजा ना कोई समराथा। अबगत पुरष तू नाथन-नाथा॥
माँगूँ भगत नाम बख़शीश। चरनी राखो सत जगदीश॥
औगनहार हाँ जन्त तुम्हार। हो किरपाल तुम सरब आधार॥
नित निहथावाँ ना थाओं कोए। तुम विछोड़ा भरम चित जोए॥
कर किरपा तू साच मुरारी। अपने जन के संकट टारी॥
हरो विकार सत सेवा दीजो। भाओ भगत रस अन्तर सीजो॥
सिद्ध रिखीशर गुनी अपार। भए भिखारी प्रभ तेरे द्वार॥
होए किरपाल प्रभ आप मिलाए। अन्ध जीव को सार दिखलाए॥

जतन करे ना होवे काजा। माँगूँ दरस ग़रीब-निवाजा॥
अपनी माया का भेद उठाओ। झिलमिल ज्योती को दिखलाओ॥
आसा तृष्ना प्रभ हरो बिकार। सत सील दे नाम आधार॥
धूड़ बनाँ तेरे जन चरना। माँगूँ दान ग़रीबी सरना॥
हो रखयक तुम सदा उद्धारी। सरनागत की ख़बर गुज़ारी॥
अनेक जनम का हरो बकार। देखूँ दरस सत सरजनहार॥
अनन भगत जो शिव कमाए। अटल ज्ञान जो सनकादक गाए॥
प्रेम प्रीत नारद जो राखी। अदभुत दर्शन ध्रुव जो भाखी॥
सेवा टहल गुरमुख जो पाए। परम त्याग जो त्यागी में आए॥
सुन्न समाध जो चीने रसना। अधिक प्रेम जो भगताँ मन वसना॥
माँगूँ अमरत जो सब की रास। दरस तुम्हारे की अधिक प्यास॥
चंचल मनुआँ को दीजो धीर। परगट होके रमो शरीर॥
मैं तोहे देखूँ तू मोहे देख। मन में रहे ना अन्तर रेख॥
अघट प्रेम तन मन समाए। जल थल पुरियाँ में एको दिखलाए॥

**साखी पुरष परगट होए, परतक्ख करूँ दीदार।**
**'मंगत' तेरे दरस सों, तन मन दीना वार॥ 103**

अजर पुरष का करो दीदारा। घर में बोले शबद निरधारा॥
रूप रेख रंग भया ना कोई। आलख पुरख घट परगट होई॥
दीन ग़रीबी राखो भेखा। सुरत निरत का कीजो लेखा॥
नाम ध्यान जोत परकासी। अबगत नाद परसो अबनाशी॥
घर में पाए साच ठिकाना। एके दरसे ना रहे बेगाना॥
अमरत कूप घट अन्तर फूटा। भाओ भगत ले भरम सब छूटा॥
उट्ठत बैठत देख मुरारी। घट घट सरजे सो किरपाधारी॥
सहज भाओ मन पावे ठौर। प्रेम प्रीत चित चरनी जोड़॥
अमरी-बेला सुन्न परकासे। गुर का पूत करे अरदासे॥
पाँच शबद मिल एका होई। अघोर नाद घट दर्शन होई॥
निराकार अजनमा स्वामी। सरब अतीत सो पारगरामी॥

गगन कुंड खाट बछाई। गुर का सिख बराजे आई॥
पाँच पचीस मिल मंगल गावें। अजर पुरष को सीस नवावें॥
सील सम्मत ज्ञान का गोला। सत विश्वास धारे नित चोला॥
उलट नैन अन्तर को कीजे। अखण्ड नाद धुन रसना लीजे॥
तीन भवन का खोले दरवाज़ा। पारब्रह्म का लखे समाजा॥
अपने घर में पाई सुखसार। अन्तर देखा जग सरजनहार॥
आलख पुरख अनहद धुन निर्वान। अन्तरगत में करी पहचान॥
पाँच सोहागन मिल गायो गीत। परगट चीना पुरख पुनीत॥
सुखमन नाली गगन में बोले। गुपत रूप देख अडोले॥
पुरियाँ मंडल धरन आकास। साचा पुरख सब माहीं बिलास॥
अधिक आनन्द प्रभ दरस से होई। जिस समान सुख देखा ना कोई॥
धन्न साधु जिस अन्तरगत पाई। तीन भवन जोती दिखलाई॥

**अनहद गरजे गगन में, अदभुत भयो परकास।**
**'मंगत' नित बल जात है, कर दर्शन मिटे प्यास॥ 104**

साच त्याग का सुनो विचार। होए परापत सरजनहार॥
बिना त्याग मन सदा अधीर। बिना त्याग चित भरम घनेर॥
बिना त्याग नहीं पावे सतधाम। बिना त्याग नहीं जीव बिसराम॥
बिना त्याग ना गवन विनासे। बिना त्याग ना मिले अबनासे॥
जनम जनम का भरम जो धारे। त्याग बिना ना हो निसतारे॥
बिना त्याग मन भय विचारी। बिना त्याग मत नित अंधयारी॥
बिना त्याग जीवन सुख नाहीं। बिना त्याग चित अगन के माहीं॥
जप तप संजम और पुन दाना। बिना त्याग ना होवे कल्याना॥
झूटी माया का नीर बलोड़े। जतन अकारथ अन्त जाए हाथ जोड़े॥
करम फल इच्छया में नित उठ धाए। फल भोगे पर ना तृपताए॥
छिन में सुख छिन में दु:ख निवासी। राग द्वेष लागी भरम की फाँसी॥
राजा राना मुनी मुनिन्दर। साध तपस्वी और जोगिन्दर॥
सब ही बाँधे भरम के जाल। फिरें चौरासी बाँधे जम काल॥
करम फल इच्छया जीव बंधावे। भोग भोग के नहीं तृपतावे॥

संकट घना जीव परवेसे। बिना तत्त ज्ञान ना मिटें अँदेसे॥
आसा तृष्ना में आवें जाएँ। अनंक मनोरथ धर नित भरमाएँ॥
आज आज कर समाँ बिताए। नाना भाँत के करम कमाए॥
मन से ना मिटी करम की आस। लख बरखां बितायके अन्त चले निरास॥
अधिक दुःख भयो अन्त की वारी। जब छाड चले नर सम्पत सारी॥
बिना ठकाने बिन मारग नर जाई। कौन दिखावे अन्त की बिपताई॥
जो सुख भोगे सो दुःख हो देखे। करम सरूप जम अन्त को लेखे॥
सम्पत सारी भई बेगानी। चला त्याग काल डंड मानी॥
रोता आए अन्त जाए रोता। बिन सत करनी भए अन्त बिगोचा॥

**साच सरूप खोजन करो, भरम का करो त्याग।**
**'मंगत' बिना त्याग के, नहीं सिमरत लेवे जाग॥ 105**

त्यागसरूप तरवर इक जाना। फल लागा जिसको निरवाना॥
सत सील तरवर का फूल। ज्ञान विवेक तरवर का मूल॥
सत विश्वास नीर तरवर को देवे। भाओ भगत की बाड़ दे सेवे॥
चरिन्द दरिन्द से करे निगरानी। समाँ पाए फल खावे ज्ञानी॥
फल खाए मन शान्तक होई। घाल कमाई सब पूरन होई॥
भरम औगुन गए सब चित रोग। अमर फल खाए भयो अरोग॥
धन्न साधू जिस सार ये पाई। सत त्याग की लखी प्रभताई॥
संशे भरम काल भय त्यागी। पारब्रह्म चित रसना लागी॥
त्याग को धारे कोई सन्त ज्ञानी। त्याग पछाने सो जन परवानी॥
त्याग धरम अपरम अपार। बिना त्याग ना मिले जयकार॥
जिस वस्तू को खोजन आया। मारग त्याग में सो भेद लखाया॥
त्याग पछाने मन दुर्मत जाए। त्याग का भोग चित को तृपताए॥
वेद ग्रन्थ का सार विचार। सत असत ले निरना सार॥
सत को खाए असत त्यागी। सो ही गुरमुख परम वडभागी॥
असत माया चित भरम विकार। तिनको तजे सो गुनी अपार॥
झूट देही मध मान जो त्यागे। सत सरूप घट अन्तर जागे॥

पलक पलक मन रसना त्यागे। उपरस धरम आतम रस जागे॥
छाया प्रीत ये मन के भोग। तिनको तजे तब भए अरोग॥
काग कुबुद्ध सम विरती धारी। मिथ्या विष्टा का भया नित आहारी॥
विद्या पढ़े चतर बुद्ध धारे। तो भी मन उठ कुकरम विचारे॥
इन्द्री भोग मनुआँ फँसाया। भोग भोग कई जनम विताया॥
खावे पीवे पर रहे नित़ भूखा। ना जीवे ना मरे लागा त्रैदोखा॥
अधिक व्याधी में जीव भरमाए। काल का संकट चौरासी फिरवाए॥

**सत-संगत सत खोजना, सतपुरषों से प्यार।**
**'मंगत' मिले त्याग तब, जब गहरा चित्त विचार॥ 106**

गृह नारी को दीना त्याग। बसे बीबान ना मिले अनुराग॥
खान-पान तज खाए फल दूध। बिना विचार जतन बेसूद॥
जब लग आतम तत्त नहीं प्यास। जब लग बिरह नहीं रूप अबनास॥
जब लग देह मिथ्या नहीं जानी। जब लग अन्तर नहीं सार पहचानी॥
तब लग जाए ना करम का संशा। राग द्वेष भरम माहीं फँसा॥
अजर पुरष का भेद लखाई। त्याग सरूप को सो जन पाई॥
सुरती बाँधे सिमरे गोपाल। लेवे कभी ना विषे की भाल॥
तीन काल देह संग त्यागे। केवल नाम प्रभ की लिव लागे॥
सत सरूप का भए निध्यासी। श्रवन मनन सतनाम अभ्यासी॥
जतन जतन कर लेवे विश्वास। हर की भगत करे भरम का नास॥
सकले करम मन से त्यागे। प्रभ की आज्ञा में सिमरत जागे॥
प्रेम प्रीत से प्रभ आज्ञा माने। करम फल इच्छया कभूँ ना भाने॥
दु:ख सुख सेवे एके नीती। साचे नाम की रक्खे परतीती॥
मन का मान जो गुनी निवारे। त्याग सरूप को सो ही पधारे॥
आहार विहार जुगत से कीजे। कारन कर्ता प्रभ एके सीजे॥
बिन प्रभ के मिथ्या सब पेखे। मिले त्याग परतक्ख प्रभ देखे॥
अमरत नाम का जो जन आहारी। साचा त्याग सो करो विचारी॥
प्रभ की कीरत नहीं मन अनुराग। कभी ना पावे निरमल त्याग॥

मिल सत-संगत सत रसना बूझो। सत सरूप का निरनय सूझो॥
मरन जीवन का लयो विचार। आवन जावन की लाखो सार॥
अपने संकट का करो उपाए। दीनदयाल की मन सेव कमाए॥
करो त्याग जो अन्त को छोड़े। प्रभ के चरन दीनो चित जोड़े॥
तन मन धन सम्पत जो मानी। सकल त्यागो हरचरन माहीं ज्ञानी॥

**कारन करता जान के, मन की चिन्ता त्याग।**
**'मंगत' देह पिण्ड जिस दिया, रहो चरन तिस लाग॥ 107**

करम फल त्यागे जो हर चरनी माहीं। लाभ हान विखेप चित नाहीं॥
सहज भाए करम चक्कर विनासे। अन्तरगत सेवे अबनासे॥
पिया पिया कर मन विचारे। दीन ग़रीबी अन्तर में धारे॥
सब कुछ देखे प्रभ की किरया। दृढ़ कर सिमरे सरब पसरया॥
स्वास सुरत की राखे डोरी। साचे नाम की पिये कटोरी॥
अन्तरगत होवे कँवल परकास। गुर का शिष पावे अरदास॥
अपने मन की भरमन नित खोवे। निर्वान सरूप को अन्तर जोवे॥
साचे नाम की रखे प्यास। छिन छिन पीवे शबद अबनास॥
विरत रहत मन नाम आहारी। साच त्याग की सिफ़त विचारी॥
अन्तर नाद मन सेवे बिसराम। आठों पहर विरत निष्काम॥
मन बानी इक नाम समाई। छूटे बन्धन मुकत घर जाई॥
अपने रूप में आप समाए। साच बैरागी त्याग कमाए॥
करम फल इच्छया कभूँ ना बाँछे। जो होवे प्रभ आज्ञा में राँछे॥
अमरत कुम्भ नाद निरवान। गुरमुख जोगी ले सहज ध्यान॥
मिथ्या कल्पत सब भई विनास। जाए समाया सत रूप अबनास॥
अमरत नाद बोले तिरनाली। सरब त्यागी सो सन्त निहाली॥
नाद निरत में सुरत लगाए। साचे त्याग के भेद को पाए॥
दुस्तर माया काल परहरया। पूरे गुर के जब सरनी पड़या॥
उट्ठत बैठत निस्चय इक राखे। प्रेम प्रीत हर कीरत चाखे॥
होए नमाना मन धूड़ी कीजे। सरब जीयां घट एक लखीजे॥

तृष्ना भरम सकलो बिख नास। अन्तर बाहर तत्त परसे अबनास॥
त्याग जाए समाया हर रूप। ग्रहन त्याग गयो भरम का कूप॥
समदृष्ट सर्वज्ञ देवा। सरब कर मानी तिसकी सेवा॥

**जाँ देखाँ ताँ एक है, दूजा रह्या ना को।**
**'मंगत' कहे विचार के, साचा त्यागी सो॥ 108**

सरबाजीत त्यागी मुनी देवा। चराचर करें नित तिसकी सेवा॥
सब के ऊपर तिसका बल धाए। राजे राने उठ सीस निवाए॥
त्यागी दरस की शिव मन आस। त्यागी प्रगटयो रूप अबनास॥
अन्तर बानी मन की नित त्यागे। निर्वान सरूप में रहे नित जागे॥
सूरज चन्दर पावक नीर। पवन अम्बर और सुमेर॥
सब ही करें उस्तत आपार। त्यागी रूप सब जगत आधार॥
त्यागी दर्शन से मन आवे धीर। त्यागी दर्शन से मिटे तकसीर॥
त्यागी दर्शन से मिले विशवास। त्यागी मेहर से मन भए निरवास॥
तन के त्यागी तो बहु दिखलाए। मन का त्यागी कोई विरला दरसाए॥
मन त्यागी सत रूप का भेदी। माया पाखण्ड अन्तर जिस छेदी॥
पर-उपकारी सरब उद्धारी। अन्तर परसा जिस शबद मुरारी॥
खिमा दया का बाना धारी। सत सरूप का होए पुजारी॥
अन्तर रहे विख माया त्यागी। केवल प्रीत हर चरनी लागी॥
खावे धीरज पीवे तत्त ज्ञान। मुख से बोले नित ब्रह्म-ज्ञान॥
मन तन अन्तर रहे उदास। चला चली का देख तमाश॥
परदुःख को नित हरना कीजे। आपा त्याग घट अमरत पीजे॥
सत मारग में रहे परबीन। सत सरूप में रहे नित लीन॥
करम बिकार ना चित में लाए। परमानन्द में नित रहे समाए॥
अमरत भोगे करे बिख त्याग। अन्तरज्ञान में रहे नित जाग॥
डोलन त्याग मन निहचल होए। अखण्ड शबद ले हीये परोए॥
त्याग बैरागी सिर जटा को धारे। अगनी तापे जल शयन निहारे॥
तन अपने पर भसम रमाई। बसे बीबान ना विखे आशनाई॥

कठन कठेल साधन कीजे। अन्न त्याग फल आहार करीजे॥

**साधन तो सब ही भली, मन को कीजे रास।**
**'मंगत' साधे शबद जो, सो त्यागी रूप अबनास॥ 109**

शबद कमावे पावे सत त्याग। निर्देह रूप घट अन्तर जाप॥
शबद नबेड़ा करे सो त्यागी। सुन्न कन्द्रा जब विरती लागी॥
अन्तर बाहर मन सुन्न समाए। शबद सुन्न कोई त्यागी पाए॥
अन्तर नाद सुरत लवलीन। साचे त्याग के लक्खन चीन॥
मनमुखता सब भरम विनासी। गुरमुख भेद लेवे सन्यासी॥
अपनी ग़फ़लत पर पावे जीत। आलख रूप संग रक्खे प्रीत॥
करता भाओ तजे अभिमान। परम पुरष करी त्याग पहचान॥
आठ पहर निहकरमत होई। सदा अकरता मन रहे बसोई॥
चरंजीव परमेश्वर ध्याए। महाज्ञानी सत त्याग को पाए॥
शुभ-अशुभ करम गत टारी। निहकरम विरत सतनाम उचारी॥
अन्तर नाम सुन्न धाम बिराजे। कोई त्यागी ये लखे समाजे॥
अनहद नाद गगन के तीर। गुर का शिष पीवे नित छीर॥
अपने आप में करे बिसराम। सत बैरागी लीना सतधाम॥
निरगुन सरगुन धारे इक नीती। पुरख अनामी चित धरी परीती॥
नाद को खावे नाद को पीवे। नाद माहीं नित गुरमुख जीवे॥
आसा तृष्ना गयो बिकार। साचे त्यागी का रूप आपार॥
जड़ काया से रहे अतीत। अखण्ड शबद केवल परतीत॥
नौ द्वार की रसना त्यागी। दसवें धाए सो संत बैरागी॥
निराकार पुरख निरवान। अन्तर घाट लगावे तान॥
साचा सतगुर मेल मिलाए। बन्धी छूट मुकत घर पाए॥
इच्छया करम तज नाम कमाए। साखी पुरष को सीस निवाए॥
अन्तर जुगत में नित समाना। सत सरूप खोजे निरवाना॥
मरने से प्रथमे मर जाए। अबगत पुरख के चरन समाए॥

**जग का सब संसा तजे, ले संसा हर नाम।**
**'मंगत' घाले प्रीत से, सो त्यागी ले बिसराम॥ 110**

रे मन जाग जप नाम सवेरा। दुर्लभ पाया जग में फेरा॥
ये ही घड़ी सुकृत कर जानो। दीनदयाल की सेव पहचानो॥
झूटा संशय है संसार। मिथ्या कल्पत लागा विकार॥
छिन भंगर सब भोग की किरया। भोग-भोग नहीं मन सुख धरया॥
जीवन में तो बहुत मौज करीनी। अन्त समे की नहीं खबर लीनी॥
नाना सम्पत जो अपनी कर जानी। एक पलक में हो जाए बेगानी॥
किसका साक संग पुत धीया। किसका माल धन मुलखीया॥
किसकी जोरू किस के भाई। किसका राज तेज वडयाई॥
सुन्दर रूप तन तेरो नाहीं। अन्त त्याग करे तिस ताईं॥
मिरतक देही चली शमशाने। सब ही आवें अन्त इस ठकाने॥
कोई अगन लगा के फूँके काया। कोई भूमी अन्दर देह गड़ाया॥
हिन्दू जलावे तुरकू गाड़े। देख लीला नर हो हुशयारे॥
सब पर खेल खेले सो ग़ाज़ी। छूट सके ना पंडत क़ाज़ी॥
पीर पैग़म्बर नबी दरवेशा। काल सभी का लेवे लेखा॥
राजा छोड़ सिंघासन चाले। रानी गई छोड़ सेज बछाले॥
परवारी चला छोड परवार। धनी चला छोड़ गंज अपार॥
सब ही चले सब ही जाएँ। इस्थिर रहें न दुनिया माएँ॥
आवे जावे ज्यों रहट की घड़या। खाली जावे आवे नर भरया॥
कूच कूच की नौबत बाजे। काल कराल नित सिर पर गाजे॥

मुट्ठी बाँधे जगत में आए, खाली चले आख़ीर।
तृन मात्तर ना संग चले, सभी भए दिलगीर॥

हर का सिमरन जिस रास मन लेई। चले ठकाने छाड़ के देही॥
झूटी दुनिया तज सिमरे प्रभ नाम। पूरन करम भयो जीव पायो बिसराम॥

सिमरन साचे नाम का, दुर्लभ कारज जान।
अन्तकाल पछताए सब, जब छाड़े कूड़ जहान॥

**मन तूँ साचा हो रहो, सिमर के साचा नाम।**
**'मंगत' विपता जग घनी, राम देवे बिसराम॥ 111**

लोक कटुम्ब छाड के, आयो तुम्हारे द्वार।
सरन पड़े की लाज रख, तू साहब सरजनहार॥

बिपत घनी संसार में देखी। जनम मरन दु:ख अधिक वशेखी॥
सभे जीव रहें भयभीत। मेरो मेरी सब कूड़ परीत॥
बाला बूढ़ा और जोबनवन्त। सब ही देखे अधिक तिरखन्त॥
पण्डत ज्ञानी क़ाज़ी शेख़। काल पछाड़े सभी का भेख॥
नाचन कुद्दन खेल खिलाड़। समाँ गँवायो विच कूड़ विचार॥
हीरा जनम साहब ने दीना। बिना बन्दगी बन रह्यो कमीना॥
बन्दा होके ना बन्दगी कीनी। कूड़ी मौज में औध बतीनी॥
अन्तकाल होवे दु:ख भारी। काल मुगधर जब सिर पर मारी॥
यहाँ तो बैठे हो बन सरकार। आगे दरगाह में होवे धृगकार॥
यहाँ तो भोगे भोग मन माने। आगे अगनी नर नरक पछाने॥
यहाँ तो बैठा हो वड परवारी। आगे लेखा केवल सिर भारी॥
यहाँ तो हुआ अरब खरब का वाली। अन्त को चला हाथ ले खाली॥
यहाँ तो हुकम सब पर फ़रमावे। अन्त को बाँधा विच दरगाहे जावे॥
यहाँ तो देखे ना कोई आप समान। अन्त को देखे जम अती बलवान॥
यहाँ तो हो बैठे जोबनवन्त। अन्त काल जम सहवे डन्त॥
मान गुमान छाडो गुनी मीत। सकली सोभा अन्त होवे बिपरीत॥
साधजनाँ का सुनयो फ़रमान। जिनाँ जीते तीन जहान॥
सब के ऊपर तिन का तेज। सबसे ऊँची लीनी तिन सेज॥
गवन विनास पायो सत ठौर। अमरत पीवें नित आनन्द अघोर॥
मन का संसा है संसार। सब ही मिथ्या बिना करतार॥
केवल राखो मन में तिस टेक। करो पछान तिसका सच लेख॥
हर की भगत कीरत मन राखो। दीन ग़रीबी का अमरत चाखो॥

**बड़े बड़े मानी और, बड़े साहब तदबीर।**
**'मंगत' चाला ना चले, जब काल गरास शरीर॥ 112**

साचा साहब सब माहीं बराजे। जोत निरालम सब अन्तर साजे॥
हिरदे खोजो रूप मुरारी। अन्तर रमया सो सरजनहारी॥

जीव की लखना सभी सो लेखे। करनी भरनी सभी वोह देखे॥
साचा ठाकर सदा किरपाल। जो सिमरे सो होवे निहाल॥
अमरत सम रूप निरंकार। गुरमुख सेवे नित ही बलिहार॥
मिथ्या रचना से उपरस हूआ। एको सिमरे मटावे दूआ॥
आलख पुरख को मन तन में सेवे। सकल सामग्री तिस चरनों में देवे॥
तिसकी दात मन माहीं पछाने। सरब आधार सो रूप भगवाने॥
साची प्रीत सत रूप मुरारी। प्रेम भाओ धर सिमर निर्धारी॥
साचा रूप सरब परकासी। बारम्बार जप सो अबनासी॥
दुर्लभ समाँ दुर्लभ बहार। अपने जनम को लयो सँवार॥
दृश्यमान जो रह्यो दिखलाई। भरम चक्कर में सब भरमाई॥
अबगत रूप सदा निरदोख। तिसे पछाने ना व्यापे शोक॥
मिल सतगुर सत कार पहचानो। भरम संकट से होए निरबानो॥
अमरत नाम सब तृखा बुझावे। नित ही सिमरे प्रभ रूप समावे॥
नित ही नित हम करें पुकार। बिन हरि भगत न मुकत विचार॥
जो सिमरे सो ही गत पावे। बन्धी छूट निज रूप समावे॥
अपने जीवन में अमरत लाखे। मगन रहे अन्तर रस चाखे॥
काल कराल का संसा जाए। निर्भय धाम परापत पाए॥
वस्तु गुपत घर परगट लीनी। पारब्रह्म मिल सोभा कीनी॥
धन्न गुरमुख जिस दिशा विचारी। दीनदयाल के चरन पधारी॥
आप तरे औराँ निस्तारी। अनेक जीयाँ के संकट टारी॥
जिस धरनी और देस निवासे। सकल उपद्रव वहाँ होए विनासे॥

**धन्न करनी है साध की, धन्न साधू उपकार।**
**'मंगत' तिन परसाद से, होय तीन लोक जयकार॥ 113**

जिनाँ हर रस पाया, सो ही पुरख सुजान।
तिनकी संगत मेल से, जीव पाए कल्यान॥
प्रभ अपने को मन अन्तर ध्याएँ। कारन करते की नित प्रीत कमाएँ॥
औगन सकले सहज भए दूरे। सिमरें साचा नाम हज़ूरे॥
जो कुछ वरते तिसकी रज़ाई। ज्यों ज्यों भावे त्यों चलाई॥

निमख निमख में जपे सो अन्तरयामी। सकल उद्धारे सो पारगरामी॥
साहब दर पर सीस नित दीना। साहब नाम मन अन्तर चीना॥
एको टेक नहीं दूजी आस। नाम ध्यावें स्वास स्वास॥
तिसकी वडयाई मन तन पाए। किस विध साचा रूप सलाहे॥
सकल जियाँ का ठाकर सोई। चारखानी इक सूत परोई॥
सरब का रख्यक रिज़क रजावे। नीच ऊँच सबको तृपतावे॥
आकास पाताल सब माहीं रमीना। पलक पलक की ख़बर नित लीना॥
अपनी सोभा आप प्रभ धारी। दूजा हुआ ना करे विचारी॥
एक से धरे रूप अनेके। दृष्ट ज्ञान में सब भीतर एके॥
अपना आनन्द सब में दिखलाए। मिथ्या वस्त सत कर पतयाए॥
कथा ना जाई प्रभ तेरा पसारा। कह बिध धारा प्रथमे संसारा॥
गुनी ज्ञानी करें बहु विचार। नेती नेती कर नित करें पुकार॥
सो वडभागी सत जुगती दाता। साचा रूप जिस मन माहीं पछाता॥
मगन भया ब्रह्मनाद पहचानी। आवागवन की मिटी निशानी॥
सरब ठाकर नहीं एक और दूजा। सरब माहीं सो सरब गत सूझा॥
हस्ती कीटी तृन आद समेरा। सरब जिवावे सो ही प्रभ मेरा॥
तिसकी शकत में चराचर भूत। तिसकी महमाँ गाए अबधूत॥
जिस सिमरा प्रभ आद अनूपा। सरब निस्तारी सो जग का भूपा॥
सार वस्त घट जोत परकाश। नित आनन्द शबद अबनाश॥

**अन्तर शबद पछाने, इत उत करे नबेड़ा।**
**'मंगत' साची जुगत ले, गुरमुख हरे बखेड़ा॥ 114**

## गुरमुख - मनमुख पर विचार

गुरमुख मनमुख का सुनो विचार। परम निधान सब जीव आधार॥
मारग दोई जग में दिखलाए। इक मुकत पछाने इक बन्धन पाए॥
नित ही जुगत से करो विचार। सत तत्त बूझे मिटे जीव आज़ार॥
सबसे उत्तम ये ही विवेक। गुरमुख मनमुख का पावे लेख॥
सार आसार का निरना ध्याये। सार पछाने परम गत पाए॥
गुरमुख बुद्धी सत करम विचार। मनमुख भोगे बिख की सार॥

गुरमुख जुगत मुकत विचारी। मनमुख केवल चित भोग लखारी॥
गुरमुख सत तत्त बरोले। मनमुख हंग बुद्ध नित तोले॥
गुरमुख सत मारग में जागे। मनमुख का चित बिखयन में लागे॥
गुरमुख करे जीवन कल्यान। मनमुख कीजे जीवन की हान॥
गुरमुख जग को बन्ध पहचाने। मनमुख जग में बसे ग़लताने॥
गुरमुख खोजे तत्त अबनाशी। मनमुख लोचे मन भोग बिलासी॥
गुरमुख पावे प्रभ पर विशवास। मनमुख धावे करम की फाँस॥
गुरमुख प्रभ का भाना माने। मनमुख अपनी हिकमत पहचाने॥
गुरमुख लेवे सत-पुरषन का रंग। मनमुख धावे छल कपटी के संग॥
गुरमुख अपने आप पर सोचे। मनमुख और के औगुन को लोचे॥
गुरमुख मन में धारी सत जुगती। मनमुख धारे वैर चित विरती॥
गुरमुख आपको माने नीचा। मनमुख हो बैठे नित ऊँचा॥
गुरमुख मनसा पर-हितकारी। मनमुख सबकी खाल उतारी॥
गुरमुख राखे विरत निष्कामी। मनमुख अन्तर लोभ स्वामी॥
गुरमुख बोले बोल निरमान। मनमुख बोले करे अभिमान॥
गुरमुख दुनियाँ देखे फ़ानी। मनमुख तिसको सत कर जानी॥
गुरमुख अपना खेद निवारे। मनमुख और का खेद चित धारे॥

**मारग दो संसार में, परगट साहब कीन।**
**'मंगत' जैसा जो चले, होय तिस ही में लीन॥ 115**

गुरमुख और की सेवा माँगे। मनमुख अपनी सेव कमाँदे॥
गुरमुख उद्दम दूजे सुख देवे। मनमुख दूजे का सुख हर लेवे॥
गुरमुख साहब की परजा को सेवे। मनमुख अपने भोग को लेवे॥
गुरमुख मनुआँ नित विवेकी। मनमुख अन्तर नित बदनीती॥
गुरमुख और के सुख पर राज़ी। मनमुख अपने सुख संग लागी॥
गुरमुख अन्तर सील संतोख। मनमुख तापे मन विषे के दोख॥
गुरमुख परसे परमानन्द। मनमुख धावे विरत द्वन्द॥
गुरमुख जीवन सत सरूप। मनमुख जीवे भरम धर कूप॥

गुरमुख अन्तर एक समाया। मनमुख अनक संशे भरमाया॥
गुरमुख खोजे तत्त निर्वान। मनमुख खोजे राज निधान॥
गुरमुख अन्तर सम्पत सत ज्ञान। मनमुख सम्पे द्रभ भूमी अभिमान॥
गुरमुख साहब से रक्खे प्रीत। मनमुख चाले नित बिपरीत॥
गुरमुख अन्तर बिरह वैराग। मनमुख अन्तर विषयन का राग॥
गुरमुख जाने इक साहब ज़ात। मनमुख धावे नाना जमात॥
गुरमुख अपनी ग़फ़लत को त्यागे। मनमुख अपनी सतता से भागे॥
गुरमुख पूजे इक साचा नाम। मनमुख पूजे नारी और दाम॥
गुरमुख खाए साचा विचार। मनमुख खाए कुल वस्तु संसार॥
गुरमुख पहने वस्तर सुखदाई। मनमुख पट पटम्बर हँडियाई॥
गुरमुख चाले हंस की चाल। मनमुख चाल बहु रंग की भाल॥
गुरमुख बोले अमरत सम बोल। मनमुख बोले अगन सम तोल॥
गुरमुख रहनी सादा धारी। मनमुख उसारे महल अटारी॥
गुरमुख ऊँच नीच से प्यार। मनमुख बैठे हो ऊँच का यार॥
गुरमुख पर नारी पर धन बिख जाने। मनमुख तिनका भोग सुख माने॥

**साच गती गुरमुख ले, मनमुख भरम विचार।**
**'मंगत' कहे समझाय के, जग परसो निर्मल सार॥ 116**

गुरमुख मन का करे उद्धार। मनमुख धारे रस भोग विचार॥
गुरमुख मन को दमना कीजे। मनमुख मन के भाओ वरतीजे॥
गुरमुख खोजे तत्त अबनास। मनमुख खोजे विखे भोग बिलास॥
गुरमुख अन्तर ठाँड घनेरी। मनमुख तापे अगन भरम केरी॥
गुरमुख धावे साची समाज। मनमुख धावे संग चोर छलबाज़॥
गुरमुख अपना मरन विचारे। मनमुख अपना जीवन नित धारे॥
गुरमुख देखे जग को मेला। मनमुख फिरता भूल अलबेला॥
गुरमुख अन्त की करे त्यारी। मनमुख आस जीवन की धारी॥
गुरमुख देखे करते का खेल। मनमुख अपनी हिकमत संग मेल॥
गुरमुख तन मन साहब पर वारे। मनमुख तन मन अपना कर धारे॥

गुरमुख सेवे नाम प्रभ एक। मनमुख सेवे कुकरम अनेक॥
गुरमुख जप तप संजम कमावे। मनमुख मनमाने भोग भोगावे॥
गुरमुख साहब करनी पर राज़ी। मनमुख अपनी हिकमत बहु साजी॥
गुरमुख परसे तत्त ज्ञान। मनमुख धारे देह की शान॥
गुरमुख अन्तर हरे बकार। मनमुख अन्तर सेवे हंकार॥
गुरमुख नित सत कथा विचारे। मनमुख अपनी शोभा नित धारे॥
गुरमुख आहार विहार संजुगता। मनमुख जाल फैलाए नित कुढ़ता॥
गुरमुख जीवन देव समाना। मनमुख जीवन पशु सम जाना॥
गुरमुख माया दुस्तर को काटे। मनमुख माया अमरत तुल चाखे॥
गुरमुख कीजे साध की सेवा। मनमुख पूजे धनवादी देवा॥
गुरमुख नीवे निज आप सुभाए। मनमुख नीवे अत लालच मन पाए॥
गुरमुख माँगे सब की कल्यान। मनमुख माँगे औरों की हान॥
गुरमुख लक्षन विवेक विचार। मनमुख राखे मध मान बकार॥

**प्रभ अपने से माँगयो, गुरमुखता तत्त सार।**
**चार पदारथ तिसमें, 'मंगत' कहे पुकार॥ 117**

गुरमुख के मन धीरज समाए। मनमुख का मन नित डहकाए॥
गुरमुख सोभा राम की गाए। मनमुख सोभा देह में तृपताए॥
गुरमुख अन्तर अधिक विचार। मनमुख अन्तर अधिक बकार॥
गुरमुख देखे नारायन सत एक। मनमुख देखे सत भरम भुलेख॥
गुरमुख आवागवन से भागे। मनमुख तिसमें रहे नित लागे॥
गुरमुख रोए देख मन की खोटाई। मनमुख रीझे देख मन की चतराई॥
गुरमुख खोजे मारग सत धाम। मनमुख लोचे चौरासी जाम॥
गुरमुख मन पर पावे जीत। मनमुख मन चंचल संग प्रीत॥
गुरमुख देह का तजे अभिमान। मनमुख देह में नित ग़लतान॥
गुरमुख धरम मारग प्रगटावे। मनमुख अधरम विरत कमावे॥
गुरमुख मन में प्रेम अनुराग। मनमुख अन्तर बाद का राग॥
गुरमुख सब की कलह निवारे। मनमुख सब में भरम संचारे॥
गुरमुख ऊँच रहनी सिखलावे। मनमुख नीच गति को धावे॥

गुरमुख अन्तर का खोले पाट। मनमुख बाहर के धारे घाट॥
गुरमुख परमेश्वर अन्तर देखे। मनमुख अन्तर करम संदेसे॥
गुरमुख अन्तर ब्रह्म परकासा। मनमुख अन्तर क्रोध निवासा॥
गुरमुख दिशा शान्त विचारी। मनमुख अन्तर अगन अँगारी॥
गुरमुख बाजी लीनी जीत। मनमुख चले हार के मीत॥
गुरमुख सत धाम को पाया। मनमुख बीच जूनी भरमाया॥
गुरमुख कूड़ कपट को त्यागा। मनमुख भरम बकार में नित रहे लागा॥
गुरमुख सत पुरषारथ धारे। मनमुख सोय के औध गुज़ारे॥
गुरमुख मारे सकल ग़नीम। मनमुख सेवे कूड़ मुहीम॥
गुरमुख अन्तर भया परगास। मनमुख अन्तर काम निवास॥

**गुरमुखता से गत मिले, ये धरम यथारथ जान।**
**'मंगत' जो सेवे नित प्रेम से, परमारथ करे पहचान॥ 118**

गुरमुख धाम पाए नित ऊँचा। मनमुख विचरे जूनी धर अनूपा॥
गुरमुख अखण्ड रूप को जापे। मनमुख धारे भोग संतापे॥
गुरमुख आध व्याध निवारी। मनमुख तिनका भया पुजारी॥
गुरमुख खाए साचा योग। मनमुख खाए इन्द्री के भोग॥
गुरमुख लीना अबनासी संग बास। मनमुख मोहे धर जगत प्यास॥
गुरमुख वेद कतेब को वाचे। मनमुख संशे भरम को राचे॥
गुरमुख राखे इक साहब की टेक। मनमुख के भरवासे अनेक॥
गुरमुख जग में जीवन पाया। मनमुख अंत चले पछताया॥
गुरमुख सेवे सत ज्ञान का वादी। मनमुख सेवे कपटी परमादी॥
गुरमुख बूझे अन्तरगत बानी। मनमुख धरे तसव्वर फ़ानी॥
गुरमुख मन को अनेक भाँत समझावे। मनमुख मन को अनेक भाँत भरमावे॥
गुरमुख मन निहचल सुख पेखे। मनमुख मन चंचल सुख देखे॥
गुरमुख लज्या शरम पत राखे। मनमुख ढीठ निरलज्या को भाखे॥
गुरमुख सबको लज्या देवे। मनमुख निरलज्जित देख हरखेवे॥
गुरमुख सबसे साँझ वरतावे। मनमुख सबसे न्यारा हो धावे॥

गुरमुख सबका भए अधिकारी। मनमुख अपनी ख़ुदी नित धारी॥
गुरमुख परचे तत्त निरवाना। मनमुख परचे चौरासी खाना॥
गुरमुख अन्तर साचे गुर प्यार। मनमुख अन्तर गुर खोजे बकार॥
गुरमुख गुर की कहनी चित धारे। मनमुख गुर में दोष विचारे॥
गुरमुख दीन ग़रीबी भेखा। मनमुख धरे घमण्ड विशेखा॥
गुरमुख सबके चरनों की धूड़। मनमुख अन्तर अधिक ग़रूर॥
गुरमुख अन्तर हरचरन प्यास। मनमुख अन्तर पाखण्ड निवास॥
गुरमुख शत्रू से करे प्यार। मनमुख मित्तर से भेद विचार॥

**गुरमुख रहनी देव की, मनमुख असुर सम जान।**
**'मंगत' गुरमुख धरम को, सेवो जब लग प्रान॥ 119**

गुरमुख की अत उज्जल नीती। मनमुख अन्तर अती पलीती॥
गुरमुख भेद जाने कोई संत। मनमुख भरम में भरमें सब जन्त॥
गुरमुख मारग कोई सूरा जाए। मनमुख भोग सहज चित भोगाए॥
गुरमुख रहनी खाण्डे की धार। मनमुख धारे बिन जतन विकार॥
साची जुगती मारग कल्यान। गुरमुख धरम की करो पहचान॥
गुरमुख होवे परम तत्तवेता। गुरमुख जानो जग माहीं पुनीता॥
गुरमुख साची जुगत कमाए। ज्ञान ध्यान में नित तृपताए॥
गुरमुख खण्डे चौरासी धारा। गुरमुख छेदे काल बकारा॥
गुरमुख बाद-मुबाद को हरे। गुरमुख साच सिमर निसतरे॥
गुरमुख मन बानी इक बोले। गुरमुख रसना तत्त ज्ञान की तोले॥
गुरमुख साचा जग करे ब्यौहार। खिमा दया और सब जीवों उपकार॥
गुरमुख देह के सुख को त्यागे। अखण्ड अबनाशी सुख आतम जागे॥
गुरमुख हरे सकल पाखण्ड। एके देखे पिण्ड ब्रह्मण्ड॥
गुरमुख अन्तर शबद घनघोर। सुरत निरत ले बन्धन तोड़॥
गुरमुख जीवे इक नाम की आसा। निमख निमख कर जापे नित स्वासा॥
गुरमुख पाँच पचीस को जीते। एके टेक गुर चरन परीते॥
गुरमुख माया भ्रम को हर लेवे। साच जुगत सतगुर को सेवे॥

गुरमुख जग से भयो उद्धार। आपा त्याग गुर शबद विचार॥
गुरमुख अन्तर खुले कपाट। आतम दरसे बीच ललाट॥
गुरमुख करम धरम में पूरा। आप निवार सिमरे हज़ूरा॥
गुरमुख रहनी रूप कल्यान। होवे गुरमुख करे पहचान॥
गुरमुख अपनी हिकमत चुकाए। मन तन करम में धरे रज़ाए॥
सब कुछ देखे साहब परताप। नित ही नित गावे तिस जाप॥

**गुरमुख मुकत सरूप है, त्रैगुन खेद निवार।**
**'मंगत' माँगे दरस को, गुरमुख चरन बलिहार॥ 120**

## सतनाम की असलियत

सतनाम का सुनो निधान। भरम मिटे पावे कल्यान॥
रूप रेख बिन कारन देवा। नाद रूप बसे अन्तर माहीं अखेवा॥
नाना नाम तिस नाद कहानी। सन्त जनाँ ने करी बखानी॥
पुरख अनामी सरब अतीत। साचा नाम तिसका रख मन परतीत॥
नित परकास ना व्यापे अन्धकार। नाम 'निरंजन' से करें सन्त पुकार॥
सदा आनन्द नहीं भरम वखेप। नाम 'निरंकार' धरे अलेप॥
तिसका आद अन्त लखया ना जाई। 'आलख' नाम सो पुरख धराई॥
सरब जियाँ की करे प्रतिपाल। नाम धरावे सो 'गोपाल'॥
सदा एक ना दूजा व्यापी। 'अद्वैत' नाम धरायो परतापी॥
सरब गत माहीं एक रमीना। 'पारब्रह्म' नाम धर चीना॥
सरब तत्त्व को सरजनहारा। 'आतम' नाम से करी पुकारा॥
सरब निरन्तर सदा अलेप। 'पारगरामी' नाम धरावे लेख॥
अपने आप में नित ग़लतान। 'परमानन्द' नाम करी बखान॥
सरब जीयाँ का करे उद्धार। 'दीनदयाल' धर नाम पुकार॥
सरब मिरतक आप जीवन सार। 'अबनाशी' नाम धरायो करतार॥
अपने आप की करे पहचान। 'अन्तरयामी' नाम भगवान॥
चराचर भूत का स्वामी। 'ठाकर' नाम धरावे अनामी॥
चारखानी में सम परकासे। 'राम' नाम धर करें अरदासे॥
सरब का गरब खण्डन कीजे। 'गरबप्रहारी' नाम धरीजे॥

तीन ताप संकट निवारे। 'पतित-पावन' कर नाम पुकारे॥
सरब जीयाँ को नित गत देवे। 'अबगत' नाम धर पुरख जपीवे॥
सरब से परे करे बिसराम। 'अपरम-अपार' कर सिमरें धाम॥
आद अन्त नहीं पारावार। पुरख 'अनादी' धर नाम विचार॥
सरब आधार आप निहओट। 'निराधार' पुरख कर सिमरें सो जोत॥

**अनन्त नाम तिस पुरख के, सभी जान परमान।**
**'मंगत' जो चित में रमे, सो ही देवे कल्यान॥ 121**

सरब कालों का सो ही काल। नाम धरावे आप 'अकाल'॥
बिना कारन सो रहे बिराज। नाम 'खुदाई' धरे महाराज॥
आप एक ना दूजा शरीक। 'अल्लाह' नाम धरे आप रमनीक॥
सरब के ऊपर तिसका ज़ोर। नाम 'जब्बार' धरावे नूर॥
सरब जीयां का मालिक सोही। 'ख़ालिक़ नाम धरावे ओही॥
अपने आप में आप जलाल। 'मुतलिक' नाम धरे ज़ात कमाल॥
ऐब गुनाह से बसे सो दूर। 'ताला' नाम धरावे हज़ूर॥
दुनिया फ़ानी से रहे आज़ाद। नाम 'हूत' धारे आगाध॥
सरब जीयाँ को रिज़क खिलाए। 'परवरदिगार राज़िक' कहलाए॥
सब नबियों को दिखलावे राहे। 'ज़ात रुबानी' धरे नाम बेपरवाहे॥
अपने हक़ में रहे खुशहाल। 'कुदरत कामिला' होवे नाम कमाल॥
बिना नफ़्स ज़बान करे कलाम। नाम धरावे आप 'इलहाम'॥
अन्दर वसदा रहे बेऐबी। नाम 'रुबानी' धरावे ग़ैबी॥
सब गुनाहों से देवे छूट। 'बख़शनहार' धरे नाम अनूप॥
वस्तु एक उस्तत अनेक। बाद बदी ना पड़यो भुलेख॥
जैसी सिफ़त तैसा नाम। करे बन्दगी ले बिसराम॥
सब जग छर रूप समाना। 'अच्छर' नाम केवल भगवाना॥
काल करम का नहीं परमान। नाम धरावे सो ही 'निर्वान'॥
इच्छया भरम नहीं जाँ दोख। 'शूनियंगकार' धरे नाम अनोख॥
जरा मरन नहीं व्यापे काल। 'अजर अमर' धर नाम को भाल॥

पाँच पचीस का जाँ नहीं मेल। नाम धरावे 'आद अनील'॥
जुग जुग आद सो ही परबीन। नाम 'सनातन' धर के हो चीन॥
भरम विकार नहीं परमाद। 'अखण्ड सरूप' धरे नाम आगाध॥

**देव गुनी मुनी जपें, अन्त ना पारावार।**
**'मंगत' किस मुख सलाहिए, अगिन्त नाम करतार॥ 122**

इच्छया भरम नहीं उसको फाँस। नाम धरावे सो 'सन्यास'॥
करम फल का जाँ नहीं विकार। 'त्यागी' नाम धरे सरजनहार॥
अतुल शक्ती नहीं परमान। 'परमेश्वर' नाम धरे भगवान॥
गुरु पीर अचारज की सार। नाम 'ज्ञान' धरे करतार॥
सब देवों का आदी देव। 'विष्नू' नाम धरावे अभेव॥
सब के ऊपर तिसका ठाम। नाम धरावे सो 'परम धाम'॥
आवागवन जाँ नहीं बकार। नाम धरावे आप 'निरंकार'॥
नित भयो प्रभ एक सरूप। 'अजनमा' नाम धरावे भूप॥
कहत रहत परे विचार। नाम 'अगोचर' धर भयो शुमार॥
मन बानी इन्द्री से दूर। 'अगम आगाध' धरे नाम हज़ूर॥
सब जीयाँ की बनत बनाए। 'सरजनहार' सो पुरख कहलाए॥
परविरत निरविरत करे पहचान। 'अध्यातम' नाम धरे भगवान॥
रिद्ध सिद्ध शकत जिसके हाथ। नाम 'भगवन्त' धरे सो नाथ॥
जो परकाशे चौधाँ भवन। 'साखी पुरष' नाम कर श्रवन॥
सरब का भुगता एको ही देव। 'आदी यज्ञ' नाम कर सेव॥
इत उत परलय जिसकी कार। नाम धरावे सो ही 'ओंकार'॥
सरब जीयाँ को सम परकाशे। 'विज्ञानसरूप' धरे नाम अबनाशे॥
जिसकी महमां का नहीं शुमार। नाम 'मुरारी' धरे करतार॥
अपने भगत की सोभा कीजे। भगत हेत 'प्रभ' नाम लखीजे॥
ऊँच नीच में सम वरतावे। 'समदृष्ट' सो नाम कहावे॥
सदा निरविरत और निषकाम। 'निश्चल' 'अडोल' कर उस्तत बिसराम॥
सबसे परे सदा निरलेप। नाम 'निरालम' भयो पुरख अलेख॥

जुगत मुकत दोनों का दाता। नाम धरावे सो आप 'बिधाता'॥

**साजन सिमरो नाद को, जो धरे नाम अनन्त।**
**'मंगत' जिस घर परगासिया, भयो भरम भसमन्त॥ 123**

सरब नाम धारे स्वामी। अन्तर रहे वोह सदा अनामी॥
नाम रूप गुन करम नहीं खेद। 'सरब अतीत' धरे नाम अभेद॥
त्रैगुन माया का नहीं सन्ताप। 'गुनातीत' कर नाम अलाप॥
करम विखाद से रहे जो मुक्ता। 'परमातम' धर नाम संजुगता॥
सिद्ध तपीशर का जो मूल। 'परम सिद्धी' धरे नाम अनुकूल॥
द्वन्द विकार का जाँ नहीं छेद। 'आनन्दसरूप' कर गावें वेद॥
जुग जुग जिसका एक सरूप। 'समरस' नाम धर ध्यावें भूप॥
राजा रंक का जो आधारी। 'बिशम्भर' नाम धर सिफ्त विचारी॥
सब खण्डों में जो रिह्या व्यापी। 'सचखण्ड' नाम धर बानी जापी॥
जम जुरमाना जाँ नहीं कलेशा। 'मुकतसरूप' कर पूजे जगदीशा॥
सकल जगत की भयो जो जिंद। नाम धरावे सो ही 'गोबिन्द'॥
सकल ब्रह्मण्ड जो अन्तर लेवे। रूप 'विराट' धर नाम अखेवे॥
सकल जीयाँ का जो ठिकाना। 'अखण्ड स्वामी' पुरख निर्वाना॥
साचे नाम की महमाँ आपार। सत सरूप सरब आधार॥
जो सिमरे मन चित लाए। गवन विनास परम गत पाए॥
अनमत जोगी करे उपदेशा। साचे नाम नहीं परच संदेसा॥
एक नाद बहु नाम धराए। नाम जपे तब नाद समाए॥
एक नाम की नहीं जानी प्रभताई। पाँच नाम गुरु दे सिखलाई॥
एक पाँच का नहीं कोई भेद। एको ध्यावे बिनसे मन खेद॥
नैन बन्द अन्तर क्या देखे। बिना नाद नहीं ध्यान विशेखे॥
जब लग नाद ना अन्तर प्रगटाए। तब लग मूरख सो नर कहलाए॥
मुख से कहे सुनी सुनाई। अन्तर जानी नहीं आप प्रभताई॥
अपने आपको कहे सच खण्ड निवासी। अन्तर सुरत नित भोग बिलासी॥

**शबद ज्ञानी बहु मिले, मुख से करें ज्ञान।**
**'मंगत' ऐसा ना मिला, जिस लगा कलेजे बान॥ 124**

जिस घर शबद परगासिया, तिसकी रहनी अनूप।
अन्तर में ही रम रहा, पाए शबद सच रूप॥

अन्तर शबद जब कियो विचारा। मिटयो देह का सब हंकारा॥
जात वरन पाखण्ड विनासे। निरदेह शबद की कीनी अरदासे॥
इन्द्री भोग से भया अतीत। साचे शबद में सो रमनीक॥
जब लग मन पवन नहीं संधे। तब लग कैसे शबद चित बिन्धे॥
जब लग सुखमन खुले ना नाड़ा। तब लग कैसे शबद गत धारा॥
मुख से बनया शबद पुजारी। अन्तर कपट रसना को धारी॥
बहु बिध कँवलन भेद समझावे। सुनी सुनाई बात लखावे॥
कँवलन की क्या नर प्रभताई। अबगत नाद की सब में रोशनाई॥
जब लग नाद पुरख नहीं चीना। द्वादस कँवलन का क्या भेद नर लीना॥
मुख से कहे मैं ऊंच अस्थानी। अन्तरगत नहीं रंचक जानी॥
जोगी जंगम सब से ऊँचा कहलाये। अन्तर माहीं नित काम जलाए॥
भोगे भोग कहे मैं विरक्ती। पर-धन हरने की जानी जुगती॥
मुख से शबद की महमाँ बहु गाई। सत पुरुषों के कथे कथियाई॥
बादमुबाद में जनम गंवावे। फिरे चौरासी ना सचखण्ड पावे॥
नैना मूँद समाध लगाए। बिना शबद कैसे मन ठहराए॥
नैना मूँद अन्तर को धारे। मनुआँ फिरे बहु शहर बाज़ारे॥
अगम निगम की उठ बात सुनावे। अन्धा अन्धे को भरमावे॥
अपने अन्तर तृष्ना विकार। औराँ देवे मुकत द्वार॥
करे पाखण्ड ना धीरज पाए। पढ़े शलोक बहु सुने सुनाए॥
बिख को खाए बकबक मरे। बिना तत्त ज्ञान कैसे निस्तरे॥
मठ बनाए बहु चेले कीने। बादमुबाद में नित भरमीने॥
सत करम आचार त्यागे। मुख से करें बहु ज्ञान मुबादे॥

**शबद भेद नर कठन है, तन मन देवे त्याग।**
**'मंगत' अगन बिरह की, उपजावे शबद की जाग॥ 125**

शबद सरूप सब से न्यारा। लोकालोक ना कँवल किलारा॥

लोकालोक कँवल का भेद। माया चक्कर का सकला छेद॥
शबद कमावे जाए ऊँचे धाम। अलोक देस में जाँ पुरख अनाम॥
एक दो ना द्रष्टा का भेद। शबद अखण्ड से दुर्मत लयो छेद॥
जब लग शबद नहीं परगट हूआ। तब लग भरमे ज्यों नलनी सूआ॥
मिथ्या ध्यान कथे ज्ञाना। परतख नहीं देखे भगवाना॥
सुनी सुनाई नहीं देवे धीर। जब लग अन्तर नहीं परखे अगम नीर॥
परगट शबद सो जन वडभागी। खिमा ग़रीबी घट अन्तर जागी॥
मन की दुर्मत शबद से धोए। पलक पलक ले सुरत परोए॥
नाभकँवल ऊरध परगासे। परगट नाद करे जोगी अरदासे॥
मन पवन इक सूत परोए। छिन छिन गत अन्तर में जोए॥
अखण्ड नाद चढ़े आकास। गरजे गगन होवे परगास॥
तीखन सुरती नाद में धारे। भरम कलेश हंग बुद्ध निवारे॥
लोकालोक पुरियाँ देस। शबद माहीं नहीं दूजा परवेस॥
अखण्ड धार शबद निर्वान। ऊँचे शिखर लगावे तान॥
एके एक दर्शन एक। अबगत शबद का सुन साचा लेख॥
सरजनहार ना सृष्टी कोए। एके शबद परगट सब लोए॥
कँवल भरोसे मत कोई जन भूले। एक शबद सब कँवलन में फूले॥
शबद भेद जानी जानाए। दुर्मत मैल सब दूर विहाए॥
नीर के संग मिल हुआ नीर। सतगुर मेल से गई तक़सीर॥
मन पवन सतनाम अगाध। गुरमुख लई विरत समाध॥
सहज सहज पवन को पीवे। शबद परकासे जुगाजुग जीवे॥
मन छेदे इक नाम के संग। गुरमुख पूरे को लागा रंग॥

**निर्मल जुगती ज्ञान की, सुनयो गुनी आपार।**
**'मंगत' रमया मन पवन में, उपजा शबद गुंजार॥ 126**

रल मिल संगत गायो, साचा नाम करतार।
ख़बर नहीं किस पलक में, ये तन होवे छार॥
सुन्दर जग को देख के, चित को मत ललचाए।

सिम्बल फूल समान है, भोगन से पछताए॥
चार दिन की चाँदनी, ओड़क होए अन्धकार।
ख़िज़ाँ तो सिर पर है खड़ी, मत भूलो देख बहार॥
दीरघ ऊँचा होया, जैसे पेड़ खजूर।
करो पहचान उस वक़्त की, जब काल करे सिर चूर॥
धन जोबन को पाए के, गहरा करें अभिमान।
छिन में भई विनास सब, उड़ गई धूड़ समान॥
जिस दर बैठ बैजन्तरी, नित गाएँ छतीसों राग।
सो दर सूने हैं पड़े, बोलें वहाँ पर काग॥
अपनी अपनी ग़रज़ से, बहुते बन गए साथ।
चला अकेला अन्त को, खाली लेके हाथ॥
झूटा देह का पिंजरा, बहुता करें सँवार।
एक पलक की आन में, भूमी पाए पसार॥
साचा साहब विसारिया, जग का हूआ ढोर।
करे मज़दूरी निस दिन, बिना दाम के मूढ़॥
रोता आया जगत में, अन्त को रोता जाए।
मूरख समाँ गँवाया, कूड़े लालच पाए॥
पलक पलक दम जा रहा, तीन लोक जाँ मूल।
साच ना चित में पाया, औध गँवाई भूल॥
लोक कुटम्ब ना सँग चले, माल धन इक़बाल।
चले निमाना जगत से, जब आन पछाड़े काल॥
जीवन में कुछ कर लयो, होएँ मुसाफ़र अन्त।
दुर्लभ सेवा जगत की, और याद भगवन्त॥
बिख बीजे बिख खावना, सच बीजे सच हो।
खरा नियां दरगाहे में, तिल घाट वाध ना को॥
सुपना जैसे रात का, ऐसे जगत पहचान।
मेरी मेरी बहु धरी, अपना चलत निशान॥
इस सागर संसार में, दुरलभ ये विचार।

नीवां होके चालना, सब से रखें प्यार॥
जात जमाती बन्ध में, मत होवो मग़रूर।
आगे नबेड़ा अमल का, विच दरगाह मंज़ूर॥
निकलें प्रान जब अन्त को, देह गई कुमलाए।
इक जलावें अगन में, इक भूमी दें दबाए॥
काचे घट में नीर जो, ठहरन कभू ना पाए।
ऐसे जीवन जगत में, पल छिन खेड खडाए॥
सत सरूप पहचान कर, करम विलक्खन त्याग।
ऐसा समाँ ना पाएँगा, उठ भरम की नींद से जाग॥

**झूट भरम को छेद के, सत की राखो ओट।**
**'मंगत' कहे समझाय के, ना पाएँ काल की चोट॥ 127**

सत असत का करूँ विचार। प्रेम प्रीत से हिरदे धार॥
दृष्टा-दृश्य सकल जो भासे। छिनभंगर ये सकल बिलासे॥
दृश्य भरम दृष्टा भरमावे। नाना रंग इक पलक बनावे॥
छिन में और की और जो भासे। असत पहचान निस्चे कर वासे॥
आद अन्त जाँ का होई। असत सरूप पहचानो सो ही॥
काल वस होए सरूप को धारे। समाँ बिताए काल माहीं पधारे॥
जो वस्तू परमानू संजुगत। नाना जोड़ आकार माईं भुगत॥
समाँ पाए वोह रूप वटाए। ताँ सों सो असत कहलाए॥
जो वस्तू दूजे आधार। दूजी शकत से करे ब्यौहार॥
समाँ पाए पर-शकत त्यागे। होए विनास सकल समाजे॥
जो वस्तू सुभाओ आधीन। असत विचार करके नित चीन॥
सुभाओ वस होए इच्छया बहु राखे। अनेक रंग में सिमरत भाखे॥
चलायमान जो वस्त दिखलाए। समाँ पाए वोह नाश हो जाए॥
कामना करम जाँ में परवेसे। रूप वटाए बिना संदेसे॥
ऐसी कथा तूँ कर विचार। सरब विगन रहत निरंकार॥
परकिरती औगन सब परगट करे। करम चक्कर धर रूप बहु धरे॥

पल छिन में कई रंग दिखाए। मूढ़ा जीव देख ललचाए॥
जैसी संगत ऐसा फल पाए। माया धार बहु रूप वटाए॥
नित तृखत और अशान्त। छाया प्रीत से रहे भरमन्त॥
माया चक्कर बहु रंग कर धारी। बाँधा जीव नित होए ख़वारी॥

**भरम का बाँधा जीवड़ा, फिरे चौरासी खान।**
**'मंगत' सत पहचान बिन, नित दुःखिया अनजान॥ 128**

अद्भुत कौतक माया दिखलावे। अनमत जीव को नित भरमावे॥
झूट छाया संग प्रीत लगाई। भरम वस होए नित ही पछताई॥
वारापार ना सूझे कोए। भई त्रास जीव नित रोए॥
पाँच तत्त की खेल आपारी। सरजनहार तेरी क़ुदरत बलिहारी॥
कोई ना पाए भेद आपार। कह बिध सरजा ठाकर संसार॥
नाना जुगती कर गुनी समझावें। पर अचरज लीला की पार नहीं पावें॥
जो आए सो भरम के बीच। ले विवेक उतरे मल नीच॥
करम का जाल कठन कराल। पलक ना छूटे जीव दुःख भाल॥
कर कर थाके सार ना पाए। भरम बकार में आवे जाए॥
पाँच भूत की रसना नित भोगे। अधिक बिकार धर भयो नित रोगे॥
अपना भरम आप बन्धावे। अपना किया आप नित पावे॥
अपनी इच्छया का देखे बिस्तार। अपने जतन का पाए नज़ार॥
अपनी करनी में नित लवलीन। करनी भोगे रहे मलीन॥
इच्छया शोक नहीं होए विनास। फिरे चौरासी ले करम की फाँस॥
नित नया नित होए पुराना। नित बहु संगी नित होए यगाना॥
छिन सम्पे छिन करे त्याग। छिन सोवे छिन लेवे जाग॥
छिन में होवे बड़ परवारी। छिन में राजसिंघासन धारी॥
छिन में जोबन जरा वटाए। काल का बाँधा आवे जाए॥
कूड़ माया संग करी परीत। नित ही दुःखिया चले बिपरीत॥
मानुष जनम में सार पहचान। सत सरूप खोज निरवान॥

**सत सरूप पहचान बिन, जीव पाए ना ठौर।**
**'मंगत' करम की जेवड़ी, ले फिरे चौरासी घोर॥ 129**

अंधमत मूढ़ा नहीं भेद को पाए। सत त्याग भरम में धाए॥
अपनी ग़लफत दे आज़ार। करनी भोगे ना होए छुटकार॥
क्या राजा क्या राना, क्या गुनी दरवेश।
जो देहधारी देखिया, तिन को घना कलेश॥
दुःख में आए दुःख में जाए। दुःख को देख बहु करे उपाए॥
जनम मरन दुःख जाए ना मीत। जतन अकारथ बिन सत परतीत॥
उठके खाटो जनम का लाभ। करो पहचान निज रूप सुख भाव॥
सत सरूप जिस अन्तर जानाई। छूटे बन्ध सतधाम समाई॥
करो उपाय इस दीरघ रोग। सतगुर वैद का करो संजोग॥
सत सरूप पावें विशवास। अनक बिगन गुर सरन विनास॥
प्रेम प्रीत कमावे सत जुगत। तत्त परतीत नर लेवे मुकत॥
उट्ठत बैठत एक ध्यान। बिमल शबद घट लागे बान॥
अजर पुरष शब्द रूप को पाए। संकट त्याग नित सेव कमाए॥
पलक ना विसरे आनन्द खान। तीन लोक आधारी भगवान॥
निमख निमख कर कीजो अरदास। सेवें दयाल काटें सब फाँस॥
परतक्ख होके दरस रीजावे। दर्शन करके दास गुन गावे॥
तुम बिन दूजा हुआ ना कोए। चारखानी विच आप परोए॥
नित परकाश आनन्दसरूप। विखे विखाद नहीं व्यापे कूप॥
सरब अन्तर सरब से न्यार। अन्तरयामी दरसन बलिहार॥
डोलन त्याग मन हुआ एक। दोहे जहान में देखा अलेख॥
सरब निधान सरब की सार। साचा पुरख निज रूप विचार॥
बन्ध ख़ुलास साहब दरसाए। रोम रोम में आनन्द उपजाए॥
अपने अन्तर पायो अबनास। छिनभंगर गई माया बिख रास॥

**किस मुख से सालाहूँ, परम पुरख की सार।**
**'मंगत' तन मन शान्ती, नित दर्शन बलिहार॥ 130**

साचा प्रेम प्रभ माईं मिलाए। प्रेम बिना नहीं काज सराए॥
प्रेम रूप जानो भगवन्त। प्रेम पाए बिनसे भरमन्त॥

प्रेम बिना मन आवे जा। प्रेम बिना नित ही दुःख पा॥
प्रेम बिना मानुष पशु समान। प्रेम बिना नहीं धीर पहचान॥
प्रेम परसाद भयो निहकरम। इक चित सिमरा साचा मरम॥
प्रेम पाए मन भई परतीत। अन्तरगत पाए शबद पुनीत॥
काम क्रोध कठन बिकराल। प्रेम खड़ग से कीनी घाल॥
सत सरूप का केवल अनुराग। साचे प्रेम की सुन कथा विभाग॥
रंग पीला और नैन तरावत। खान पान नहीं मन को भावत॥
एक बिरह रहे साचे नाम। सम्पत दुनिया नहीं बाँछे थाम॥
अन्तर प्रेम अगन उपजारी। विखे विखाद सब करे छारी॥
शीतल मनुआँ नाम का आहारी। सदा अडोल चंचल विरत टारी॥
छिन रोए छिन में हरखावे। कभी मौन रहे कभी मुख से गावे॥
एक विरत लीनी मन धार। बिनसे दूजा पावे सत सार॥
प्रेम सो ही जाँ मन निषकामी। केवल निहूँ इक पारगरामी॥
तन मन से नित रहे उदास। अन्तर कियो प्रभ प्रेम परगास॥
दृश्यमान से उपरस हूआ। प्रेम प्याला जिस मन में पीया॥
रैन दिवस इक विरत समानी। भए दीवाना विच प्रेम की खानी॥
दुस्तर माया के बन्धन तोड़े। प्रेम पाए हर चरनी चित जोड़े॥
दुःख सुख दृष्टी ना कुछ आए। आनन्द सरूप प्रेम को पाए॥
सब जग देखे एक स्वामी। ऊँच नीच की बिनसी ख़ामी॥
मित्तर शत्रू एक समाना। जिस घट उपजे प्रेम भगवाना॥
दुःखदाई को नित सुख देवे। साचा प्रेम जाँ वास करेवे॥

**प्रेम सम ना बन्दगी, जोग तप और दान।**
**'मंगत' बिना प्रेम के, मिले ना निर्मल ज्ञान॥ 131**

जब लग अन्तर देह अभिमान। तब लग करे ना प्रेम पहचान॥
जब लग अन्तर जीवन की आस। तब लग पाए ना प्रेम का पास॥
जब लग मन विखयों में धावे। तब लग प्रेम ना प्रगटावे॥
जब से झूट माया संग नीती। तब लग मिले ना प्रेम परीती॥

जब तक लोकलज्या मन राखी। तब तक पाए ना प्रेम की साखी॥
अन्तर जब तक कपट समाया। सच प्रेम का नहीं निरना पाया॥
जाँ मन अन्तर नहीं बैराग। कभूँ ना पाए प्रेम की जाग॥
जब तक अन्तर कुल जाती माना। तब तक करी ना प्रेम पहचाना॥
हंग बुद्ध जब अन्तर राखी। झूट प्रेम की बानी भाखी॥
जब मन अन्तर सूझे तदबीर। मिले ना प्रेम परम सुखसीर॥
जब मन धावे भोग बिलास। कैसे पावे प्रेम में वास॥
जब तक मन में अनक तुरंग। कभूँ ना चढ़े प्रेम का रंग॥
जब से मन बाहर उठ धावे। सच प्रेम कैसे सो पावे॥
जब तक बाँछे पोथी और ग्रन्थ। मिले ना साचे प्रेम का पन्थ॥
जब तक अन्तर भेद कोई राखे। साचा प्रेम ना कभूँ मन भाखे॥
जब तक मन माँगे वडयाई। प्रेम अर्थ सो कभूँ ना पाई॥
जब तक मन में बादमुबाद। मिले ना सार प्रेम अगाध॥
जब तक नहीं गुरचरना प्रीत। तब तक मिले ना प्रेम सुखरीत॥
जब मन अन्तर लोभ समाना। कैसे पावे प्रेम भगवाना॥
जब मन राखे करता भाओ। सार प्रेम नहीं अन्तर पाओ॥
जब मन में बहु भाँत की रचना। तब तक मिले ना प्रेम की लखना॥
जब मन अन्तर देह प्यार। मिले ना प्रेम साचा करतार॥
जब मन माया में सुख पेखे। साचा प्रेम ना अन्तर देखे॥

**बिनसनहारे जगत से, जिसका मन उकताए।**
**'मंगत' कहे विचार के, सार प्रेम सो पाए॥ 132**

प्रेम ही जानो परम आनन्द। दूर करे भरम पाखण्ड॥
प्रेम बिना मन भयो गँवार। करम का बाँधा जाए जमद्वार॥
प्रेम बिना नहीं पतयावे। कठन तपस्या मन में लावे॥
बस्ती छोड़ बीबान निवासे। बस्तर त्याग भभूत रुमासे॥
अन्न त्याग फल आहार करीजे। धूनी तापे जल शयन लखीजे॥
उलटा आसन करे कपाली। कठन कमावे देही नित गाली॥

मौन रहे करे प्रानायाम। मन कठोर नहीं ले बिसराम॥
जन्तर मन्तर करे तावीज़। रहे शमशान सम भूत वरतीज॥
जैन जंगम का मारग सोधे। अहिंसा धरम बहु अन्तर बोधे॥
थम थम के पग धरनी राखे। कठन विचार चित अन्तर भाखे॥
नीर पवन का भयो आहारी। तृष्ना अन्तर करे ख़वारी॥
तीरथ बरत यज्ञ पुन दान। जतन करे नहीं पावे कल्यान॥
करम का संसय नित भरमाए। एक पलक ना छूटन पाए॥
चार वेद का भए निध्यासी। बिना प्रेम नहीं बन्ध ख़ुलासी॥
धन्न पुरष जिस प्रेम मन आया। विखे त्याग हर सिमरन पाया॥
कठन मनुआँ सदा अधीर। बाँधे सहज संग प्रेम ज़ंजीर॥
प्रेम सरूप आप गोपाल। जाँ घट प्रेम ताँ आप दयाल॥
सकल ज्ञान की सार पहचान। साचा प्रेम आवे भगवान॥
प्रेमी दर्शन महेश्वर तरसाए। प्रेमी चरन में विषन निवाए॥
प्रेमी बाँधे सकल संसार। परगट करके सत प्रेम विचार॥
प्रेमी देख सब सेवें प्रेम। विखे त्याग होवें मन खेम॥
दुर्लभ भाग प्रेमी दरसावे। कोट जनम की मैल गँवावे॥

**जिस घट उपजा प्रेम प्रभ, तिसका अचरज खेल।**
**'मंगत' प्रेमी सो आया, धोवन जग की मैल॥ 133**

साचा प्रेम तिस अन्तर जागे। सत साधू की सेवा लागे॥
सत असत का निरनय पाए। प्रेम सरूप तब अन्तर आए॥
सहज भाए इक नाम प्यार। परगट होए प्रेम अम्बार॥
स्वास स्वास हर नाम कमावे। एक सुरती अन्तर ठहरावे॥
सतगुर जुगती मन पवन को छेदे। उरध कँवल प्रेमरस बेधे॥
परम पुञ्ज अनहद धुनकार। गरजे अन्तर दसवें द्वार॥
काया त्याग मन शबद रमीना। साचा प्रेम तिस गुरमुख चीना॥
अनहद नाद संग विरती एक। साचे प्रेम का सुन तूँ लेख॥
अधिक बैराग जीवन गई आस। पुरख निरालम परसा अबनास॥

नित ही नित सुरती परबीन। आतम रस अन्तर माहीं चीन॥
सहज भाए मन आवे ठौर। आतम रस पीवे घनघौर॥
गरजे नाद मेघ समान। सुरत समाए करे प्रेम पहचान॥
इन्द्री विषयों से भया अतीत। प्रेमसरूप पाए शबद पुनीत॥
नौ द्वार में सुरती ठाके। दसवाँ खोले तब प्रेम को चाखे॥
गगन सरोवर प्रेम का थाओं। गुरमुख परचे ले प्रभ का नाओं॥
अनहद बेला अन्तर परगासे। पीवे प्रेम भयो निरवासे॥
रोम रोम में होए धुनकार। आप त्याग लखे प्रेम की सार॥
बिन मदरा के होए मतवाल। साचे प्रेम की अन्तर रवाल॥
अपने आप से भया अतीत। अबगत प्रेम का गावे गीत॥
जिस घट अन्तर नाद परगासे। सार प्रेम सो पुरख बिलासे॥
अन्तर नाद निरन्तर बानी। आलख प्रेम कोई विरला पहचानी॥
प्रेमी जुगत मुकत का दाना। मिथ्या जग में करी सार पहचाना॥
अपने आप में पायो बिसराम। प्रेम परसाद परसा सतधाम॥

**जिसके अन्तर प्रेम है, सो सहज पाए सुखधाम।**
**'मंगत' माया दुस्तर है, बिना प्रेम ना होए निष्काम॥ 134**

जिसके अन्तर सत प्रेम परगासा। निर्भय हूआ हरजन दासा॥
दु:ख-द्वन्द से भया अतीत। सच्चदानन्द गावे मन गीत॥
काम क्रोध मोह लोभ हंकार। प्रेम अगन से हो गए छार॥
प्रेमी की विरत सदा निरधार। प्रेमी बोले निरपख विचार॥
प्रेमी अन्दर सबकी वडयाई। सबसे नीचा आप रहाई॥
प्रेमी देखे सब के गुन मीत। औगुन दृष्ट गई बिपरीत॥
प्रेमी अन्दर सब की सेव। पलक पलक सिमरे गुरदेव॥
प्रेमी मन परम आनन्द। सरब जीयाँ को देवे ठँड॥
तन मन धन हर चरन करे भेंट। नाम विशवास केवल प्रभ टेक॥
प्रेमी देखे अन्तर परगास। नित ही सिमरे तत्त अबनास॥
तीन काल देह मिथ्या कर जाने। करन करावनहार साहब पहचाने॥

प्रेमी मनुआँ सदा निरवैर। सरब जीयाँ की पूछे ख़ैर॥
प्रेमी बाँछे और की कल्यान। पर-उपकार मन धरे निधान॥
प्रेमी मनुआँ इच्छया से दूर। निष्काम भाओ अन्तर भरपूर॥
प्रेमी माँगे सब जग की सेव। तन मन त्यागे सब चरनी नीव॥
उट्ठत बैठत सिमरे इक नाम। नाम कमावे पाए प्रेम का धाम॥
माया भरम प्रेमी जन खोए। एको देखे सरब की लोए॥
अक्षर एक प्रेमी आधार। पढ़न और जाने बिख सार॥
एके नाम में रहे लवलीन। प्रेम पुंज अन्तरगत चीन॥
अखण्ड विरत प्रेम सरूप। अन्तरमुख पावे हररूप॥
गई कलपना भयो निरदोख। अमर पद पाया परम सुख मोख॥
नित ही लागा एक सुभाए। प्रेमी बोले इक धार लखाए॥
सरब जीयाँ का भयो हितकारी। तन मन अपना सब पर वारी॥

**प्रेम परसाद खाय के, पायो रूप त्याग।**
**'मंगत' बुद्ध इस्थिर भई, गई कलपना भाग॥ 135**

दृढ़ पुरषारथ प्रेमी जन पाए। पलक ना विसरे हर नाम सुखदाए॥
बन्धन त्याग चित आई ख़ुशहाली। एक ही देखा एक ही नित भाली॥
प्रेम रंग प्रेमी रँगावे। जुग जुग गूढ़ा हो प्रगटावे॥
जिस घट साचा प्रेम परगासा। मुकत सरूप होई बन्ध खुलासा॥
आठ पहर प्रभ आज्ञा माने। सब कुछ हूआ तिस हुकम पछाने॥
दुःख सुख जो देही वरताए। सब ही भाना साहब दिखलाए॥
सदा अडोल नहीं होए अधीर। साचे प्रेम की सुन बात अख़ीर॥
संग त्यागी भयो निहसंग। अन्तर बाहर लागा प्रभ रंग॥
अपने आपको नित छुपावे। अनजान सरूप हो दिखलावे॥
अपनी निन्दा सुन परम सुख माने। उस्तत अपनी दुःखरूप पहचाने॥
अपनी सेवा ना मन से बाँछे। और की सेवा अन्तर में राँछे॥
गुपत रहे प्रभ सिमरन कीजे। परगट करे ना सार गत सीजे॥
भए दीवाना इक प्रेम रंग। सकल विकार से हुआ निहसंग॥
अन्तर तीरथ करे असनान। अन्तर ध्यान में रहे ग़लतान॥

जीवन मिरतक पायो परसाद। मर के जीवे हरे परमाद॥
कठन कमाई प्रेमी जन घाले। सीस उतार गत प्रेम की भाले॥
सब के अन्दर हर दर्शन चाहो। सीस भेंट दे दर्शन पाओ॥
खरी खरानी बात विचार। बे-सिर होके भेंटो करतार॥
अन्तर लोभ बाहरमुख प्रेमी। बेगत होवे ना पावे सुख सेमी॥
मिथ्या देह गुरचरन पै वार। पावें अबगत दर्शन निरंकार॥
एक नाम संग अखण्ड परीत। अखण्ड प्रेम ले पावे पुनीत॥
सच उपाय सुनयो संसार। बिना प्रेम ना मिले करतार॥
बिन हर मिले ना गवन विनासे। माया चक्कर में नित गरासे॥

**साची भगत हर नाम चित वसया, उमगे प्रेम अपार।**
**'मंगत' जनम कदारथ भए, परसे प्रेम हरचरन सुखसार॥136**

सो जोगी परम पद पावे। अन्तर माईं जो शबद ध्यावे॥
छाड पाखण्ड ग़रीबी वेसा। साचा नाम जपे दरवेशा॥
सहज जुगत मन एक विचार। पलक ना विसरे सरजनहार॥
अन्तर शबद निरन्तर बाढ़े। एक सुरत को नित ही काढ़े॥
ऐसी जुगत पहचाने जोए। साच जोगिन्दर मानो सोए॥
कौन तू कहाँ से आया। किस जुगत से सीस धराया॥
कौन आहार कौन विवहारा। कौन जुगत कर मन धीरज धारा॥
कौन तख़त पर आसन कीना। क्या छबी वहाँ घर में चीना॥
कौन देस और कौन दिशाए। कितने जोजन नित पन्ध चलाए॥
कौन गुरु जिस मूँडे केशा। कौन रहनी पाई दरवेशा॥
कौन डण्डा कौन खण्डा लीना। किसकी खिनता सीस रमीना॥
कौन मूल कौन आधारा। जिस कारन तूँ बन्ध कटारा॥
कौन मन्दर में तुमरा वासा। किस जुगत निर्भय निवासा॥
अपने भेख का देयो विचार। जो कर जानें योग की सार॥
चेतन रूप हम अगम से आया। इच्छया संजुगत कर सीस धराया॥
नाम का आहार और जुगत ब्यौहारा। ज्ञान जुगत कर मन धीरज धारा॥

पवन तख़त पर आसन कीना। अनहद छबी वहाँ घर चीना॥
अगम देस और पूरब दिसा हम वासे। अगिन्त जोजन पन्ध करें बिलासे॥
शबद गुरु भ्रम मूँडे केशा। एक चित रहनी पाई दरवेशा॥
जप का डंडा तप खण्डा लीना। खिमा ग़रीबी की खिनता रमीना॥
ज्ञान मूल और नाम आधार। अन्तरगत पाए मिट गए बन्ध सार॥
देह देवल में वास करीना। सत परतीत भय नहीं चीना॥
आलख भेख का सुन विचार। पूरन जुगत जोग निरधार॥
कहे जोगिन्दर मन तत्त परगास। सुनयो **'मंगत'** तत्त ज्ञान निरवास॥**137**
बोले जोगिन्दर सहज सुभाए। इस कथा का दीजो अरथाए॥
ताँ पूरन गुर परम तत्तवादी। देवें विचार पुरख आगाधी॥
कैसे पवन का नाका बाँधा। मूल द्वार को कैसे साँधा॥
बंकनाल को कैसे खोला। किस जुगत कर शबद घर बोला॥
क्योंकर चले आकास की धार। कैसे बाँधा मन गँवार॥
किस घर आसन कहाँ सुरत लगाई। किस शत्रु पर घात चलाई॥
भूख प्यास को कैसे जीता। कह बिध भेख लयो अतीता॥
कैसे खोला अगम द्वारा। क्या देखा वहाँ क्या विचारा॥
किस नीर का मज्जन कीना। कौन देही के मल को छीना॥
किस घर चन्दर सूरज की धारा। आलख जोत कैसे उजियारा॥
चार दिसा को कैसे सोधा। काल करम किस भाँत निरोधा॥
नीर छीर कह बिध निरनाए। कह जोगिन्दर सुन **'मंगत'** तपराए॥**138**
साचे नाम संग पवन को बाँधा। उल्ट पवन मूल द्वार को साँधा॥
उलट पलट पवन को दीना। खुली बंकनी शबद को चीना॥
शबद की धार चले आकास। शबद परतीत मन भयो रास॥
पाताल आसन सुरती आकास। ममता शत्रु का कीना घात॥
उलट पवन अन्तर को धारी। भुख प्यास सहज निवारी॥
शबद भेद ले भयो अतीता। सुनो जोगिन्दर योग सरूपा॥

आलख शबद से खोला अगम द्वारा। कोट भान सम देखा उजियारा॥
पवन नीर संग मज्जन कीना। सुरत देही को निर्मल कीना॥
इरध गृह चन्द उरध गृह भान। अनहद उपजी जोत की तान॥
पवन संकोच अन्तर को बोधे। चार दिसा को ऐसे सोधे॥

**गुरमुख बुद्धी, नीर छीर निरनावे।**
**कह 'मंगत' सुन अवधू, अन्तर भेद लखावे॥ 139**

सार जुगती करो पहचान। सुनो जोगिन्दर सार तत्त ज्ञान॥
आलख रूप अन्तर कर वासा। बिना जुगत ना होवे परगासा॥
दृढ़ विश्वास चित में धारी। सो जन पावे जोग की कारी॥
जीवन मरे मर के जीवे। सार जुगत योग को पीवे॥
मन पवन इक धारा कीजे। सत सरूप अन्तरगत लीजे॥
जब लग मन पवन नहीं एका। तब लग पाए नहीं विरत विवेका॥
मन पवन दो बाँधे बन्ध। उल्ट पवन कर नाद परचण्ड॥
पलक पलक हर नाम चितारे। एको नाम में जीवन धारे॥
पाँच इन्द्री अन्तरमुख कीजे। शबद अनहद ताल लखीजे॥
छिन छिन मन के बिख को काढे। सत जोगिन्दर भरम को बाढे॥
झूटी देह का गरब त्यागे। सत पुरख के चरनी लागे॥
नाद निरत सुरत इक कीजे। करम भरम सकलो चित छीजे॥
जत का आसन नित मन में राखे। तप का भोजन अन्तर में भाखे॥
सदा अतीत गुर जुगत विचारे। सहज नाम की धूनी उजियारे॥
पर-उपकार मित्र चित राखे। ज्ञान भभूत मन अंग में भाखे॥
एक निस्चय की कंठी धारे। प्रेम नाद का शबद विचारे॥
बिरह विवेक की मुद्रा धारे। तिस जोगिन्दर सों बलिहारे॥
अन्तर का सब पाट कर दूरे। केवल शबद रग रग में पूरे॥
ध्यान की मदरा में रहे मस्तान। अखण्ड नाद का कीजे पान॥
अपने आप करे पहचान। कलह त्याग होवे निर्वान॥
भाओ भगत का चोला धारी। अन्तर विरत कर लागी ताड़ी॥

सकल बकार मन तजे कठनाई। तिस जोगिन्दर घर सोझी पाई॥
भेख किए ना जोगी होए। जब लग मन में जुगत ना कोए॥

**तन मन को भसमी करे, आलख लेवे भेख।**
**'मंगत' कहे जोगिन्दरा, सुन योग का साचा लेख॥ 140**

करो आदेस पूरन गत वादी। आलख शबद में लगी समाधी॥
शबद ना विसरे एक पल सार। तिस जोगी के चरनी बलिहार॥
मन तन अपने की करी कल्यान। सत सरूप घट करी पहचान॥
कार ब्यौहार जोगी का एक। साचे नाम का लाखे लेख॥
मन अपने को दृढ़ कर राखे। विखे त्याग रस अमरत चाखे॥
इन्द्री भोग से मन को ठाके। अन्तर जुगत सरूप को भाखे॥
दसवें द्वार का खोले ताला। परखे जोत निरंजनी सिरी गोपाला॥
जिस देखी सो जन तृपताए। मन अपने में मगन समाए॥
अधिक वडयाई तिसकी जान। पायो अमरत रूप निर्वान॥
पूरन हो के पूरन परकासे। पूरन नाद घट माहीं बिलासे॥
धन्न जोगी जिस जानी सार। तन मन अपना कीना छार॥
एक ध्यान में नित परबीन। अमरत शबद अन्तर में चीन॥
मन की विरती करे विनास। इक भाओ होए करे शबद अरदास॥
जीवत जीवे मरना ना पाए। अजर पुरख संग प्रीत कमाए॥
अचरज लीला जोगिन्दर धारी। मन अपने में सार विचारी॥
मन का संशय भरम विनासा। आलख बानी शबद परगासा॥
अखण्ड सरूप नारायन ध्यान। आदेस जोगिन्दर होवे परवान॥
साची प्रीत धर पाया योग। अबगत पा के भया अरोग॥
धन्न जननी जिस पूत यह जाया। सत मारग का बेधन आया॥
अपने मन की मैल उतारी। लाख जीवों का भया उद्धारी॥
सत सरूप को परगट दिखलाए। सत जोगिन्दर सो कहलाए॥
अपने तप में मन को तापे। एक नाम सतगुर का जापे॥
जतन जतन से यह रसना पाए। पूरन पुरख की महमाँ अथाहे॥

**सत सरूप जिस जानया, साच जोगिन्दर सो।**
**'मंगत' बिपता सब टरी, जिस पल दर्शन हो॥ 141**

सदाचार की कथा सुनाऊँ। सदाचारी से बल बल जाऊँ॥
सदाचार है ज्ञान की सार। सदाचारी परसे करतार॥
बिना ववेक मन नित अँधियार। सदाचार ले होए उजियार॥
धरम करम की सकल ये सार। मन में आवे जो सदाचार॥
गुरु पीर की सिखया जोई। मन तन अपने लयो परोई॥
अपनी हिकमत त्याग ग़रूर। सदाचार का चढ़े सरूर॥
बिन सदाचार मन अगन सरीखा। बिन सदाचार सो नर जग फीका॥
बिन सदाचार ना पाए तत्त ज्ञान। सदाचार करे भरम की हान॥
मन तन में ठाँड उपजावे। सदाचार की रसना जो पावे॥
सो ही पण्डत वेद का वक्ता। सो ही क़ाज़ी क़ुरान का पठता॥
सो ही पोप अंजील पछानी। सदाचार की जो सार लखानी॥
सो ही गुरु जगत निसतारी। सो ही तपीशर तेज अधिकारी॥
सो ही पीर हाजी है सो ही। सदाचार जो मन माहीं परोई॥
सो ही सियाना सत कुलवादी। सो ही ज्ञानी अपार आगाधी॥
सो ही मानुष सबका सिरताजा। सदाचार चित लेवे समाजा॥
सो ही मनुआँ अधिक बैरागी। सो ही गुनी परम गुनभागी॥
सो ही पैग़म्बर सिद्ध अवतारा। सो ही बलकारी परम बलधारा॥
सो ही मित्तर परम सुखदाई। जो सदाचार में रहे समाई॥
प्रभ अपने को सो ही पहचाने। जुगत मुकत का भेद लखाने॥
सो ही आलिम सब इलम का दानी। सदाचार जिस करी पहचानी॥
मिथ्या जगत भरम ग़ुबार। सूझे ना कुछ पारावार॥
काम क्रोध मोह लोभ घनेरा। नित ही बुद्ध में छाए अँधेरा॥
सत असत ना सोझी आवे। अधिक बकार में नित दुःख पावे॥

**सतपुरष जग आया, मेटन को संताप।**
**'मंगत' सिखलावे ज्ञान गत, और साहब परताप॥ 142**

गुरमुख रूप ये है सदाचार। मनमुख भरम हरे अंधकार॥
सत करम सदाचार सरूप। सकल मिटावे विखे के कूप॥
मानुष जीवन की है तत्त सार। सत करम की परसे कार॥
असत करम कुपथ तियागे। सदाचार की तब सिमरत जागे॥
भाओ भगत घर आए समावे। सँभल सँभल कर करम कमावे॥
सकल करम में होवे परबीन। अपनी ग़फ़लत को आपे चीन॥
तब सत सरूप का सिमरन पावे। भगत ज्ञान ले दुस्तर तर जावे॥
सदाचार ये बानी आकाश। साचा हुकम साहब अबनाश॥
जो नित रमे सो ही सुख पावे। चंचल मनुआँ धीर लखावे॥
सदाचार ये शक्ती करतार। सदाचारी देख भासे निरंकार॥
उज्जल नीती सत विशवासा। खिमा ग़रीबी में ले निवासा॥
अखण्ड चित हर सिमरन पावे। दर्शन सदाचारी से साहब दरसावे॥
सब जीवों पर होवे किरपाल। पर दुःख हरे मन रहे दयाल॥
शोभा कीरत इक करते की गाए। ले सदाचार हर रूप समाए॥
सदाचार अमरत भोजन जान। तृपते जीव मिटे भरम अज्ञान॥
सकल पदारथ जो जग दरसाए। भोग भोग कर नित तिरखाए॥
अमरत पान सदाचारी मन आया। सत परतीत प्रभ सिमरन पाया॥
गरब ग़रूर सकल बिख नासे। दीन बन्दगी ले साहब अरदासे॥
कठन वेग मन का मटावे। शरधा कीरत हर सिमरन पावे॥
जग मिथ्या देख सत को खोजे। सकल विकार तज हर कीरत सूझे॥
शुभ करम में प्रीत उपजावे। तन मन मान त्याग जग सेव कमावे॥
भरम ग़ुबार तब होई विनासा। सत सरूप पावे परकासा॥
बिन भोजन मन रहे तृपताई। अजर पुरष की शोभा पाई॥

**सत करम की खोजना, देवे मन कल्यान।**
**'मंगत' दिन दिन शान्ती, होवे भरम की हान॥ 143**

मिले सदाचार पावे जीवन की सार। करम विलक्खन से होवे निसतार॥
इन्द्री भोग में उपरसता भाखे। धीरज धरम अन्तर रस चाखे॥

कूड़ देही का मान निवारी। सत परतीत नित जपे मुरारी॥
अपना सुख नहीं मन को भावे। और सुख दे नित रीजावे॥
आप ना खावन लावन का चाओ। अमरत भोजन औरों को खलाओ॥
अपने तन की नहीं सेवा माँगे। अधम जीव की नित चरनी लागे॥
अपनी आप ना करे वडियाई। और कीरत रहे मन समाई॥
सबसे नीचा आप पछाने। सदाचार की सो गत जाने॥
दिवस रैन मन ये ही भाओ। और के सुख में नित वरताओ॥
दु:खदाई को भी सुख देवे। सत सदाचार को सो जन सेवे॥
सतसरूप अबनाशी इक टेक। सत करम धरम का पावे लेख॥
मन के सकल विखाद निवारे। सो ही गुर पूरा विचारे॥
जिसके मन से आपामत नासी। खेम-कुशल सतबानी परकासी॥
छिन छिन मन का खेद निवारे। सत करम से जगत उद्धारे॥
साचे धरम पर रहे क़ुरबाना। सदाचार का तिस लेख पहचाना॥
सो ही पैग़म्बर प्रभ फ़रमान दिखावे। सदाचार का भेद समझावे॥
कुफ़र शैतान पर घात चलाए। सच बन्दगी का राह दिखलाए॥
हिरस ख़ुदी की पढ़े तक़बीर। साहब देखन की दिखलावे तदबीर॥
हराम हलाल की करे पहचान। हलाल को खावे मिटे शैतान॥
सब कुछ देखे साहब की ज़ात। कूड़ी हिरस हराम पछात॥
हिरस त्यागे तब पाए हलाल। आपा मिटे तब होए कमाल॥
जीव जन्त पर रहम कमाए। रहमत ज़ात का राह दिखलाए॥
तन मन गाले विच अगनी सदाचार। सो ही पैग़म्बर देखे साहब दीदार॥

**सदाचार है शिरोमनी, सत मारग निरंकार।**
**'मंगत' तिसमें जो मरे, सो ही जान अवतार॥ 144**

जप तप संयम का फल ये जान। सदाचार की आवे पहचान॥
निष्काम करम करम-मैल को धोए। साचा सिमरन तब परगट होए॥
लोक परलोक में है सुखदाई। सदाचार चित विरत समाई॥
दो जहान का बन्धन काटे। परम गुरु सदाचार चित राटे॥

मरने से प्रथमे मर जावे। सदाचार का भेद जो पावे॥
ले सदाचार पाए अजब घराना। सकल जगत का बिन्द पहचाना॥
बड़ी करामत ये सिद्धी परवान। भरमत मनुआँ पावे इक ठान॥
सब जीवों के दिल इक सूत पिरोए। सदाचार की प्रभता जाँ होए॥
भरम हरे प्रेम दिखलावे। साचे साहब का मरम समझावे॥
साचा मज़हब और साचा पंथ। साचा ज्ञान सो ही सच ग्रन्थ॥
सबकी सार सबकी तहक़ीक़। सदाचार जग साचा रफ़ीक़॥
इल्मो हुनर नीती क़ानून। पुत्तर धीया मर्द ख़ातून॥
राजा परजा गुरु और शीष। भगती भगत विचारे जगदीश॥
सब ही बाँधे एक सदाचार। साचा हुकम जो है करतार॥
ऊँच नीच जो चक्कर दिखावे। सदाचार का सब लेख चलावे॥
जितना जिसमें सदाचार समाए। इतनी ही तिसमें प्रभताए॥
नीच पुरष जो सदाचार से हीन। अन्ध बुद्ध सो नित मलीन॥
राजा जब आचार तियागे। जाए सिंघासन होए दुरभागे॥
बुद्धीमान जो आचार को छोड़े। भ्रष्ट बुद्धी होए सिर अपना फोड़े॥
जो जो जीव आचार तियागे। दुःख विकार तिन अन्तर जागे॥
जो कुल जाती देश बदआचारी। कट कट मरें दुःख सहवें भारी॥
नित कलंकी कलंक में धाएँ। नित ही रोएँ मार के आहें॥
आठ पहर सिर चढ़े ग़नीम। छूट ना पाए सिर आई मुहीम॥

**राज तेज और कीरती, सब ही होए उजाड़।**
**'मंगत' काया जगत की, पलटे ये आचार॥ 145**

दुखिया जीव भयो आचार त्याग। सत को छोड़ असत में जाग॥
सकल बल होए जीव विनास। ज्यों कर धूप जलावे घास॥
अनक प्रकार औगुन चित धावे। नित ही जीव हान को पावे॥
साचा साहब सबका प्रतिपालक। सरब का रखयक सरब का मालक॥
अपना तेज दे जन प्रगटावे। सदाचार का जो राह दिखलावे॥
सकल दोख जीव के नासे। सतपुरष के सुन बचन बिलासे॥

कहनी रहनी का पावे भेद। बन्ध मुकत का समझे सुख छेद॥
अपनी उन्नति का आवे सबको चाओ। करम विलक्खन सहज मिट जाओ॥
मुर्दा जीवन फिर जीवन को पाए। सदाचार मन पान कराए॥
विखाद जाए मन होवे इक धार। आलस जाए होये हुशियार॥
विषे विकार से होवे विरक्ता। सत धरम ले होए जन मुक्ता॥
उत्तम करनी उत्तम रहनी को पाए। मन तन अन्दर सदाचार समाए॥
धन्न साधू सतगुर जग आया। सत करम सत धरम दिखाया॥
सब जीवों की त्रास मटाई। साचा मारग प्रभ का दिखलाई॥
सदाचार का समझावे भेद। जिसको परस जाएँ सब खेद॥
सत विशवास पुरशारथ सत जाने। सत विचार की करे पहचाने॥
निरमान भाओ परोपकार को सेवे। अपनी वस्तु बिन दूजे ना चित देवे॥
प्रेम परीती सब जीवों से राखे। सादा जीवन नित ही चित भाखे॥
नित सतसंग में राखे प्रीती। मरन विचारे पाए सदाचार की रीती॥
परम गुन में नित चित धारे। करम विलक्खन से हो निसतारे॥
अपने मन का विकार तियागे। सत करम में प्रीती जागे॥
दुस्तर जग में सुन सार उपाए। सत करम सतनाम चित आए॥
सत मारग में दृढ़ता नित राखे। पारब्रह्म तब अन्तर में भाखे॥

**करम अकरम की सुध मिले, सतगुर सुने संदेस।**
**'मंगत' पावे परम गत, जो धारे आचार विशेख॥ 146**

## सत विश्वास यानी यकीने पाक

जिसके मन विशवास नहीं, वोह तो भूत शैतान।
ना करनी की सूझ है, ना कर सके नादान॥
सो ही दोज़ख़ी जानिए, बे-यक़ीना जोए।
बादल वांग आकास के, बिन बरसे मिट जाए॥
बे-यक़ीना होय के, दीन दुनी दोए हार।
ना दुनियाँ का सुख मिला, न अगला राह सँवार॥
संशे में ही चल गई, सारी औध अनजान।
आज कल भरवास में, प्यासा चला नमान॥

हुज्जतबाज़ी मन धरे, और घमण्ड आपार।
ना किसी की सीख ले, ना मन सीख विचार॥
**अर्थ कछु ना पा सके, जो गुर पीर पर ना रखे यक़ीन।**
**हाथ धोए के चालिया, 'मंगत' अन्त बेदीन॥ 147**

## सत पुरषार्थ यानी सच्ची कोशिश

जाँ के मन उद्दम नहीं, सो दलिद्री जान।
करनी तो कुछ ना करे, मुख से बड़ा गुमान॥
कौड़ी देवे ना हाथ से, हातिम नाम धराए।
क़दम सके चल एक ना, फूँक से पहाड़ गराए॥
मार सके ना कूकड़ी, शिंघ शिकारी मान।
बना सके ना झोंपड़ी, माँगे तख़्त शाहान॥
एक पैसा नहीं हस्ती, गंज का बने अमीर।
चुल्ली भर पानी नहीं, बैठ बाग़ीचा सीर॥
करतूत रखे शैतान की, मोमिन रूप बनाए।
मुख से ही सो बावरा, बैठा वड़े पकाए॥
घालन में सो कायर है, खावन को हुशियार।
ऐसा मानुष जगत में, नित लेवे धृगकार॥
**उद्दम ना नर छाडिये, जब लग देह में प्रान।**
**'मंगत' उद्दम जो रखे, नित अधिक पाए सो शान॥ 148**

## सत विचार यानी सच्ची सोच

जिसके मन विचार नहीं, पाथर सो नर जान।
वरख हज़ार रहे नीर में, निकले सूख सुखान॥
बिन विचार ना पा सके, दीन दुनी की सार।
ग़फ़लत में ही मिट जाए, जैसे धुआँ अंबार॥
करम देवे न फल कोई, जो कीजे बेसोच।
जतन अकारथ सब जाए, बैठा सिर को नोच॥
जिसके अन्दर सोच नहीं, सो तो कुफ़र शैतान।
कबीरा करे गुनाह नित, ख़सलत धर हैवान॥

दुनियाँ दुस्तर जाल है, बेसोचा दु:ख पाए।
बिना पहचान करनी करे, दरगेह पाए सज़ाए॥

**समझ सोच कर घालयो, होवे मुशक़्क़त पूर।**
**चले हुकम उस्ताद ले, 'मंगत' मिलें हजूर॥ 149**

## निर्मानता यानी आजज़ी

रहमत रब की पाय के, मत कीजो अभिमान।
अन्दर तेरे वस रह्या, सब कुछ करे पहचान॥
माटी केरा पिंजरा, जो कीजे सरजीत।
अंत वडियाई जिस दी, इस बालू की भीत॥
धन जोबन और माल सब, है तिसकी नित दात।
अपना तो कुछ ना भया, मान करे कमज़ात॥
जोर ज़ुलम बहुता करें, होवें ख़ाक आख़ीर।
मान गुमान छाड के, ले कफ़न होये दिलगीर॥
कुफ़र काम शैतान का, आजिज़ मानुष ज़ात।
बन्दा करे गुमान जो, सो कीजे अपना घात॥

**भूल कर ना कीजिए, कूड़ी देह का मान।**
**'मंगत' एक ही पलक में, उड जाएँ धूड़ समान॥ 150**

## पर उपकार यानी नेकी

इस दुनिया में आये के, खाट चलो कुछ लाभ।
आगे वडी सरकार है, देवें पूर हसाब॥
ख़ाली आया ख़ाली जाए, होए मालिक हफ़्त अक़लीम।
ख़ाक सिरहाने है खड़ी, नर खोलो अक़ल सलीम॥
जो दुनिया में आया, जाए प्यासा अन्त।
जतन करे बहु भाँत के, तो भी दु:खिया जन्त॥
चार दिन की खेड है, रहना नहीं यहाँ मीत।
नेकी उठके घाल लो, लें जम दरवाज़ा जीत॥
पीर पैग़म्बर औलिया, कर नेकी पावें छूट।
बिन उपकार के मानवा, सहे जमाँ की कूट॥

**मन से करे उपकार जो, दुःखी दीन के साथ।**
**'मंगत' शोभा जगत करे, आगे बख़्श देवे सो नाथ॥ 151**

## अपनी वस्तु पर संतोख यानी हक़ शनासी

हक़ पहचाने अपना, पर-हक़ देवे ना चीत।
हक़ पराया जो खाए, सो ही नर बदनीत॥
परनारी परधन, परनिन्दा जो राख।
सिफ़त ये ही शैतान की, हिरदे में लो भाख॥
परनारी के संग से, रावन पाई घात।
एह गुनाह कबीरा जो करे, दो जहान दुःख पात॥
बिना सबर और शान्ती, दुनिया रूप अँगार।
पाप करे बहु भाँत कर, जल जल भए अंध्यार॥
जो ये करे बिकार नर, दोए जहाँ का चोर।
एथे पावे राजडंड, आगे इज़राइल करेगा धौड़॥
परनारी सम मात के, परधन बिख कर जान।
परनिन्दा वड ताप है, तापे तीन जहान॥

**भूल कर न पाइये, कुसंग ना मन खोट विचार।**
**साहब दा फरमान सुन, 'मंगत' करे पुकार॥ 152**

## प्रेम यानी ला-गर्ज़ मुहब्बत

जिसके मन में प्रेम नहीं, सो नर जान स्वान।
आठ पहर भौंकत फिरे, सब वैरी दिसे जहान॥
प्रेम सिफ़त है साहब दी, बाद सिफ़त शैतान।
जिनके अन्दर प्रेम नहीं, सो नित बाद बखान॥
बाद बदे सो मूढ़ है, करे जीव की घात।
आगे राह दिखाय के, पीछे मारे लात॥
बाहरों करे प्यार बहु, मन से देवे हान।
मलहम लगाए जख़्म पर, दे निमक की छान॥
अन्तर धारे कपट को, बाहरों प्रेम दिखाए।
चीता चोर कमान ज्यों, नीव के घात कमाए॥

जिसके मन में और है, बाहरों और दिखाए।
दग़ाबाज़ सो जानिए, ना भूलिए बात मिठाए॥
साचा प्रेम जब तक नहीं, तब लग कुफ़र विकार।
अपनी ख़ुदी को धार के, और की खाल उतार॥
दोहे जहान बेहुरमती, जो पाए ना प्रेम की सार।
प्रेम बिना मानुष को, जानो ढोर गँवार॥
छाडो अपनी ख़ुदी को, सुनयो राह निजात।
मानुष से देवत होए, जो मन प्रेम कमात॥

**सिद्ध तपीशर औलिया, नबी वली अवतार।**
**एक प्रेम प्रीत से, 'मंगत' भए निस्तार॥ 153**

## सादगी

जिसके मन में सादगी, साचा सादिक़ सोए।
अपना सुख दूजे देवे, माने रब रज़ाए॥
कूड़ी देह का मान तज, सिमरे परवरदिगार।
मरयादा का करे खान पान, चाहे घर में भरे अंबार॥
आदत को क़ाबू करे, बहुता ना ललचाए।
जेती भोगे सम्पत, अन्त पियासा जाए॥
रोगी सोगी सोई है, जिसका मन अय्याश।
खावे अमरत अन्तर, काढे बिख की बास॥
कूड़ी देह सँवारता, ज्यों वेश्या का साँग।
कुल कलंकी सो जानिए, करे पाप बहुराँग॥
निरलज्या बेअदब सो, सादा मन जाँ नाहे।
धार खुदी क़लबूत में, वाँग भूत नाचाए॥

**सादा खावन सादा लावन, सादा बचन बिलास।**
**'मंगत' रहनी देव की, जो पाए तो पाप विनास॥ 154**

## सत संगत

साची संगत बिन, तीन काल है सन्ताप।
मनमानी अपनी करे, दुःख पावे दिन रात॥

सोहबत जैसी जिसकी, ऐसा होये रूप।
बगला हंस के डार में, हो गया हंस सरूप॥
चोरी यारी रंग तमाशे, मन को इनसे ठाक।
संगत कर सतपुरष की, मालिक पावें पाक़॥
मन में तो शैतान है, सच सोहबत से होए दूर।
जब मन आया चाँदना, अंधकार भयो काफ़ूर॥
कहनी रहनी मरन और जीना, सबका पावे भेद।
संगत साची में रमे, बिन यतन जाएँ सब खेद॥
भूल कर ना कीजियो, दुरजन का नर संग।
मिले सदाक़त ना कभी, उल्टा मिले कलंक॥
**पानी ज्यों तरावत, देवत कुल संसार।**
**'मंगत' साचे संग से, दिन दिन सुख आपार॥ 155**

## मौत की याद

मरना मनों विसार के, पाप करे बहु भान्त।
धार ख़ुदी शैतान की, पावत ना कभूँ शान्त॥
मरना जिस विसारिया, सो काफ़र बेपीर।
जीवन की आसा माहीं, गहरी करे तक़सीर॥
मुरशद कामल जगत में, एको मौत पहचान।
जिस मरना मन मानिया, करे ना दूजे हान॥
मरने के ही ग़म से, पाए साहब दीदार।
हिरस गई संसार की, मिट गये सकल बकार॥
और का मरन देखता, अपना मरन भुलाए।
ये ही ग़फ़लत धार के, बेहद पाप कमाए॥
जिसको मरने का ख़ौफ़ है, सो ही सूफ़ी जान।
पाए राह निजात की, मिल मुरशद विख्यान॥
जो आया सो जाएगा, ये निश्चय कर मीत।
नेकी को नित खाट लो, आगे सुख की रीत॥
इक मरना मन याद कर, दूजा साहब की याद।

तीजे नेकी याद कर, मंजूर होवे फ़रयाद॥
मानुष कामल सो ही है, जो अन्त का करे विचार।
झूटा जीवन देख के, सेव करे संसार॥
दस भूखन सदाचार के, जो जन लेवे धार।
तीन लोक का सुख मिले, मानुष देह बलिहार॥
सत करम सुख देत हैं, हरें दुःख संताप।
मन तन से जो सेंवदा, पावे जग परताप॥

**सब संगत यह बूझयो, करनी जग परवान।**
**जैसी जैसी जो करे, 'मंगत' फल पहचान॥ 156**

जरा मरन जग बन्धन भारा। बिना ज्ञान नहीं होये छुटकारा॥
आवे जावे जनम अनेक। फिरे चौरासी विच भरम भुलेख॥
करम का बाँधा नित दुःख पावे। जतन करे पर शान्त नहीं आवे॥
आस आस जाए दिन रैन। एक पलक नहीं पावे चैन॥
दुस्तर माया कठन आपार। कह बिध पावे जीव निस्तार॥
सत मारग इक मोक्ष सरूप। तिसको परसे हरजन भूप॥
परम सुख मोक्ष पहचान। निहकरम सरूप भेंटे भगवान॥
मन बुद्धी और देह विकार। अनन्त करम तिसमें संचार॥
मूढ़ा जीव सत रूप विसराए। बाँधा परकिरती नित आवे जाए॥
चेतन छोड़ जड़ रूप समावे। उतपत परले में दुःख पावे॥
अपनी ग़फ़लत ऊँच नीच गत दिखलावे। भरम ना बिनसे ना छूटन पावे॥
सत-संगत सत-पुरष से हेता। परगट बुद्ध सत रूप रमीता॥
जतन जतन परमारथ सोधे। अबनाशी रूप घट अन्तर बोधे॥
स्वास स्वास रहे परबीना। अबगत नाद निरन्तर चीना॥
मन की विरती करे निरोधा। साच शबद ले हरे बिरोधा॥
इन्द्री विखे मन उपरस होए। आतम तत्त पहचाने सोए॥
सरब निधान आतम तूँ जान। नित मोक्ष नहीं बन्ध पहचान॥
नित ही आतम तत्त बिरोले। आतम परगट सुरत अडोले॥

जड़ काया का निरना पावे। आतम तत्त का जब भेद लखावे॥
पाथर मढ़ी मसान की पूजा। बिन तत्त्व आतम सब संकट सूझा॥
आतम बूझे सो ही पुजारी। चेतन कला परगट विचारी॥
सकल भरम ग़ुबार विनासे। आतम खोज तत्त अबनासे॥
मानुष जनम की दुर्लभ कार। आतम देखे विच काया मंजार॥

**आतम तत्त पहचान से, मन तन आवे धीर।**
**'मंगत' मन निश्चल भए, पावे अबगत छीर॥ 157**

ज्ञान ध्यान की ये ही सार। आतम परसे मोक्ष द्वार॥
सब में व्यापक सदा अलेपा। सदा निहकरम निर्वास अलेखा॥
एक पलक तत्त करे विचार। हरजन सोई सब हरे विकार॥
मनसा इस्थिर आतम परगासे। मुकत निधान से होत बिलासे॥
भरम से छूटे आतम परवेसे। सार पहचान जाएँ सकल अँदेसे॥
सकली जुगत साधन फल लाए। आतम तत्त जब परगट पाए॥
परम सुख नित आनन्द। आतम तत्त मोक्ष अखण्ड॥
जो नर अपनी ख़ुलासी चाहे। आतम तत्त की खोजन पाए॥
सरब सिद्धी मोख निधान। आतम रूप नित कल्यान॥
जड़ पूजे जड़ रूप समाए। आतम पूजे निज धाम को पाए॥
सकल ज्ञान की ये है जुगत। आतम तत्त सार है मुकत॥
करम का संशय सहज विनासे। अद्भुत बानी अन्तर परगासे॥
डोलन से मन भयो इकागर। आतम तत्त तीन लोक उजागर॥
पोथी ग्रन्थ का सकल विचार। आतम पूजा केवल जग सार॥
जिस मन अन्दर आतम परगासे। अखण्ड विरत जोगिन्दर वासे॥
निष्काम भाओ मन आए समाया। आतम नाद जब अन्तर उपजाया॥
भय भरम सब शंका नासा। अद्भुत शबद भयो परगासा॥
रोम रोम में ठाँड वरताई। धीरज ध्यान इक नाद समाई॥
करम फल इच्छया भई विनास। परगट आतम में लयो निवास॥
गुन रहित मन उज्जल होए। निरगुन आतम तत्त परोए॥

सकली काया पर पावे जीत। आतम तत्त दृढ़ परतीत॥
सकल ज्ञान की पाई सुद्ध। परगट लीनी आतम बुद्ध॥
हंग विकार माया तम नासे। सहज सरूप आतम परकासे॥

**आतम तत्त विसारना, ये ही गवन को देत।**
**'मंगत' आतम पूजना, ये ही मुकत अलेख॥ 158**

आतम तत्त अमरत नाद। सदा अगोचर और बिसमाद॥
अपने आप सदा आनन्द। सरब व्यापी सदा अखण्ड॥
गुरमुख हो के कर विचार। परम आनन्द सो ही मोक्ष द्वार॥
काची देह का मान त्याग। आतम तत्त की कर परगट जाग॥
महाबलकारी सो बुद्धीमान। आतम रूप जिस करी पहचान॥
काया अन्तर पाए पारगरामी। सदा अलेप अनाद अनामी॥
जिस मन अन्तर सोझी होई। तिस पुरख के चरन हम धोई॥
महा ज्ञानी परमारथवेता। आतम परगट जिस अन्तर देखा॥
अपने आप में जाए समाये। कल्पित इच्छया भई फ़नाये॥
निहसंसे हो पाया सतधाम। आतम रूप भेंटा निषकाम॥
वाँग सागर मन होया गंभीर। आलख पुरख ले अमरत छीर॥
मन में मन आए समाया। मिट गई सकल ये विखमी माया॥
दुःख सुख परे इक वस्त अपार। आतम तत्त पायो सरजनहार॥
द्वैत विनास विरत समान। सत मोक्ष की करी पहचान॥
करम करे ते भया निहकरम। आतम परगट पाया सच धरम॥
उदय अस्त की पाए सार। जब घर आए मिला करतार॥
पन्ध मुकाम मन का सब जाए। निर्मल विरत नित रह्या समाए॥
अधिक वडाई मुख कथन ना पाए। आतम ज्ञानी तों बल बल जाए॥
आतम तत्त सब जगत का मूल। पसर रिह्या सूक्षम अस्थूल॥
तिसे विसार कर्म माहीं भरमाए। ऊँच नीच बहु जून भुगताए॥
पूरन भाग आया मुनि ज्ञानी। तत्त निरोल कर करी पहचानी॥
मिथ्या काया को मथना कीना। आतम तत्त तब परगट लीना॥

**आतम तत्त परबीन जो, सो ही सन्त आपार।**
**'मंगत' तिनके पद मस्तक लगे, सहज होवे छुटकार॥ 159**

सत सरूप सो परम आनन्द। आतम तत्त जोत अखण्ड॥
पीर पैग़म्बर सो ही दरवेशा। आतम परगट जिस अन्तर देखा॥
मुकत सरोवर में नित नहाए। बिमल शबद की सेव कमाए॥
उट्ठत बैठत रहे ग़लतान। मुकत सरूप घर करी पहचान॥
दोख द्वन्द मल हरे विकार। आतम तत्त की प्रीत विचार॥
सहज भाए मन आया ठोर। आतम तत्त का चढ़ा ख़मूर॥
लाभ हान बिख अमरत एका। दुर्लभ जोगी पाई विरत विवेका॥
आतम नाद में सुरत ग़लतान। पाप पुन्न की होई हान॥
करने का कुछ संसा नाहे। निहकरम रूप में रह्या समाए॥
करम का बीज सकल जल गयो। आतम तत्त जब परगट लयो॥
जिस वस्तु को जन खोजन आया। निज आनन्द आतम घर पाया॥
पलक ना विसरे सो आनन्द खानी। विरले गुरमुख करी पहचानी॥
भाओ भगत लीना परसाद। सत सील ले हरे परमाद॥
जतन जतन मन मैल को धोवे। दुर्लभ भाग आतम परगट होवे॥
नित ही अपनी करी सुथराई। करम की मैल नहीं रहे लपटाई॥
सतगुर जुगत में तन मन वारे। तब आतम तत्त परगट बलिहारे॥
मोक्ष सरूप तिस करी पहचान। जगमग जोत देखे निर्वान॥
अनहद नाद अखण्ड अलेख। मुकत सरूप का है ये भेख॥
जिस घर वाजत शबद अनूप। सो ही गुनी भयो मुकत सरूप॥
संशे भरम से भयो आज़ाद। आठ पहर विरत धार समाध॥
आपा पर का मान सब नासे। मुकत सरूप मिला अबनासे॥
गुरमुख सूरे घाली ये घाल। आनन्द सरूप आए मिले दयाल॥
तन मन में इक धीर समाया। महा ज्ञानी हरी विखमी माया॥

**आनन्द सरूप को पाय के, मन तन भया निहाल।**
**'मंगत' ये ही मोक्ष है, जाँ देख ना पाया काल॥ 160**

मन का संशय निवरत होई। साची मुकत पहचानो सो ही॥
मन का बाँधन कठन अपार। आवे जावे बहु रंग विचार॥
छिन में नाना रंग वटाए। छिन में रोए छिन हरखाऐ॥
छिन में जाए उड आकास। छिन में परसे पाताल का वास॥
आठ पहर वेग अत धारी। सूझे नहीं अन्धमत बिकारी॥
ज्ञान ध्यान बिरह विवेक। मन के बाँधन के सकले लेख॥
मन परतीत गोबिन्द को पावे। मन परतीत सत जुगत लखावे॥
मन परतीत पावे सच ठोर। मन परतीत हरे करम कठोर॥
मन परतीत आवे मत धीर। मन परतीत जावे तक़सीर॥
मन परतीत सो गुनी आपार। निर्मल ज्ञान लेवे चित धार॥
मन परतीत सो मुकत सरूप। अन्तर चित परसे हर रूप॥
मन परतीत सो वेद का वादी। सार तत्त सिमरे अगाधी॥
मन परतीत सो ही बल सूर। सकल शत्रु के कीजे सिर चूर॥
मन परतीत सो गुरमुख होए। अबनाशी तत्त ले हीये परोए॥
मन परतीत सब संकट नासे। निर्भय नाम की रसना परगासे॥
मन परतीत सो ही जन पूरा। इच्छया भरम मिटावे झूरा॥
मन परतीत सो ही दातार। तन मन देवे गुरु दरबार॥
मन परतीत सो अत निरमायल। काम क्रोध दल कीना घायल॥
मन परतीत ले अमरपुर वासी। अन्तरघाट परसे अबनासी॥
मन परतीत नहीं लागे शाप। निर्मल दिसा का परखे जाप॥
मन परतीत सो अठसठ अशनानी। अबगत धारा घर नाद पहचानी॥
मन परतीत सो ही गुर पूरा। निर्भय धाम पावे हज़ूरा॥
मन परतीत जग लयो जीत। काल करम की नहीं परसे पलीत॥

**माया दुस्तर अपार है, डूबे गुनी गहीर।**
**'मंगत' मन परतीत बिन, बाँधा जम ज़ंजीर॥ 161**

जप तप संजम का फल है सार। मन परतीत लेवे निरधार॥
अन्तर कपट रहे लपटाए। मुख से मोक्ष की रसना गाए॥

अन्तर इच्छया अगन है जारी। मुख से बोले ज्ञान निरधारी॥
मन में राखे जगत प्यार। बाहरों सेवे सो दातार॥
मन में धारे रसना भोग। बाहरों रूप बनावे योग॥
अन्तर मन माहीं द्वैत बकार। बाहरों पूजे सर्वज्ञ निरंकार॥
अन्तर राखी कठन कुटलाई। बाहरों भेख भगत दिखलाई॥
अन्तर लेवे जगत की ओट। बाहरों जग से रहे अलोप॥
अन्तर माला धन की फेरे। बाहरों नाम आलख जपेरे॥
अन्तर राखे शत्रु और मीता। बाहरों कथे ज्ञान निरभेखा॥
अन्तर माहीं नारी संग प्यार। बाहरों त्यागी रूप को धार॥
अन्तर धारे अनेक तुरंग। बाहरों राखे दृष्टी इक रंग॥
अन्तर माहीं जगत पसार। बाहरों कथे एक निरंकार॥
अपना मन रहे बिपरीत। और जियाँ देवे परतीत॥
मन में राखे बगल सुभाओ। नदी तीर समाध लगाओ॥
अन्तर माहीं मीन की प्यास। छिन छिन लोचे तिस गवन बिलास॥
नीर से उमढी मीन को देखे। एक झपट दे उदर माहीं परीखे॥
बिन परतीत ऐसी मन कार। कपट को राख छले संसार॥
पूरा ज्ञान परम पुनीत। जो मन पावे नाम परतीत॥
सिर सिर बाजी गुरमुख खेले। टूटी मन की अन्तर में मेले॥
पाखण्ड त्याग रहे निरमान। निर्मल जुगत तब करी पहचान॥
सरब कला पूरा जन होए। मन अपने में नाम परोए॥
नित विखाद के उठें तरँग। बिना परतीत कैसे चढ़े हर रंग॥

**परम धाम को पावना, केवल मन परतीत।**
**'मंगत' कठन ये खेल है, खेले कोई पुनीत॥ 162**

दुर्लभ कारज जगत माहीं पहचान। जो मन परसे तत्त ज्ञान॥
तृखा मिटे शान्त घर वासे। होए निबेड़ा सकल भरवासे॥
जनम जनम का ताप सब जाई। जो ये मन अन्तरमुख आई॥
अमरत कुआँ अन्तर भरपूर। गुरमुख लेवे सार सरूर॥

एक नाम संग धरे परीती। मन को थामन की सुनयो नीती॥
छिनभंगर संसार को देखे। जनम-मरन का खेल परीखे॥
इक दिन अपनी देखे नाश। ऐसा चित में राखे भरवास॥
सत सरूप चेतन अगामी। अपने अन्तर सोधे सो स्वामी॥
बाहर की कल्पन सकल मिटावे। मन अपने का सोधन पावे॥
छिन छिन एके नाम परोए। विरत त्याग मन इकागर होए॥
खिमा ग़रीबी मन बाना धारी। बिरह विवेक का रहे नित आहारी॥
अपने दोष को आप पछाने। नित ही जतन करे पाप की हाने॥
आठ पहर ये ही ठकराई। मन अपने से करे लड़ाई॥
सतगुर जुगती मारग में धाए। निर्मल ज्ञान ले मन वेग हराए॥
सकले करम प्रभ आज्ञा में छोड़े। करता भाओ सब मन का तोड़े॥
मन पवन की घाले घाल। सत परतीत हर नाम दयाल॥
जीवन में करे मरन क़बूल। तब विनसे इस मन का भूल॥
डोलन त्याग भयो शबद आहारी। साचा जीवन तब ले विचारी॥
काम क्रोध लोभ और मान। सकल को छेदे ले बिरह के बान॥
अजर पुरष की प्रीत कमावे। तब ये मनुआँ ठौर को आवे॥
अपनी ग़फ़लत का करे उपाए। साची औखद नाम कमाए॥
लोकलज्या पर लावे लात। अपने मरम की खोजे वाट॥
मुकत मैदान में खेले नित सूरा। पलक ना विसरे सच नाम हज़ूरा॥

**मन राखे इक नाम में, तन देवे गुर की भेंट।**
**'मंगत' पाए सतधाम को, सो सूरा रन जीत॥ 163**

साचा जीवन अबनाशी नाद। अन्तर वसया सो बिस्माद॥
मन तन अपना कीजे धूड़। साचे नाम में रहे मख़मूर॥
कारन करता तिस हुकम पछाने। विगन विनास अमरत घट भाने॥
निरमल मनुआँ अत बैरागी। साचे नाम की चिन्तन में लागी॥
अन्तर कँवल भयो परकास। अखण्ड नाद संग बिरत बिलास॥
दुरजन मन का राखे चेता। एक पलक में पड़े भुलेखा॥

सत मारग में लेवे खोज। तब जीवन की पावे मौज॥
गुपत वस्तु अन्तर परकास। पारब्रह्म मिला अबनाश॥
साचे मारग में सुतन्तर हो चाले। अखण्ड चित इक नाम को घाले॥
पाँच पचीस की गरदन तोड़े। सत सरूप में प्रीती जोड़े॥
जिस वस्तू को अन्त त्यागे। जीवन में तजे वडभागे॥
कूड़ देही का मान निवारी। आलख नाम का भए आहारी॥
सुख दुःख हरे भरम बकार। प्रेम पाए तब सरजनहार॥
आलख रूप में रहे ग़लतान। त्रैगुनी माया की हरी सब शान॥
असत विकार का संशय सब जाए। साचा शबद अन्तर दरसाए॥
बन्ध मुकत का भेद पहचाने। मुकत सरूप देखे भगवाने॥
कठन कमाई मन को काढ़े। विखे विखाद भरम को बाढे॥
एक नाम में तन मन देवे। पुरख अगोचर अन्तर में सेवे॥
वर पायो सुलक्खन नार। भई सोहागन पायो करतार॥
विच रज़ाई रहे दिन रात। सो पछाने जो साहब की दात॥
जाँ पर होया सो साहब राज़ी। जगत भिखारी रहे तिनके दरवाज़ी॥
धन्न सोहागन जिस प्रभ वर पाया। तीन लोक दरशन को आया॥
भई खुशहाली कन्त मनाए। भरम करम सब शोक वँजाए॥

**इक रंग होया साहब से, गई दूषना भाग।**
**'मंगत' मन साजन भयो, ले शबद अनुराग॥ 164**

साची मुकत पहचानो सो ही। हर के रूप संग एका होई॥
अपने मन की खाल उतारो। नित ही तिसके विगन को टारो॥
मन ये राखे अनेक तुरंग। कभूँ ना चलिए तिसके संग॥
आठ पहर करो निगरानी। अमर देस की सुनो कहानी॥
मन ही बीच में पाट आपार। जीव ना पावे सरजनहार॥
जिस जन मन की सार पहचानी। सो ही गुरमुख तत्त ज्ञानी॥
हर के पावन का ये ही उपाए। मन अपने का डोलन वँजाए॥
एक सुरत शबद में धार। तब ये मन होवे सचियार॥

अन्तर माहीं रहे लवलीन। साखी शबद को घट माहीं चीन॥
मन पवन को नित ही सोधे। करे कमाई सब हरे बिरोधे॥
मन पवन ये सदा अजीत। तिनको जीते सो ही अतीत॥
मन पवन की लखना कीजे। होए सुतन्तर नाम प्रभ पीजे॥
मन पवन बिन जोग ना कोए। शबद ना उमगे पाप ना खोए॥
मन पवन है ये तत्त सार। शिव कहे सुन गौराँ विचार॥
जब मन पवन नहीं साधन कीया। कभूँ ना पावे सो पुरख घन्हैया॥
साचा गुर सो ही तत्तवेता। मन पवन का कीजे एका॥
इरध उरध में आसन धारी। तब ही दरशन करे मुरारी॥
जब लग पवन मन नहीं एक। तब लग डोले विरत विशेख॥
साची जुगत ले योग कमाए। तब ही मनुआँ ठौर को पाए॥
पवन में सार पवन ही योग। पवन पहचाने भए अरोग॥
पवन ही यज्ञ अश्वमेध नित धारी। अखण्ड नाद धुन उपजे नरंकारी॥
पवन गुरु संग मेला कीया। आलख पुरख ही दरशीया॥
पवन पुकारे दसवें द्वार। गुरु का शिष लखे ये सार॥

**बिना गुरु ना जुगत है, बिना जुगत ना धीर।**
**'मंगत' मिथ्या भरम में, धारे अनेक सरीर॥ 165**

ले जुगत मन आवे धीर। जनम जनम की जावे पीड़॥
आठ पहर सच जुगत कमाए। शबद पिये सहज पद पाए॥
जाप अजपा जोग निरवान। पूरे सतगुरु मिल करो पहचान॥
अकथ कथा मन करे विचार। पूरन जुगती मन होए सचियार॥
अखण्ड प्रीत इक साहब नाम। जो जन राखे पावे बिसराम॥
करम करे सुरती इक राखे। राम नाम की रसना चाखे॥
अन्तर सुरती शबद आहारी। तिसे व्यापे ना करम बकारी॥
पाप पुन्न से होए विरक्ता। आलख शबद सुरत संजुगता॥
सूक्ष्म निंद्रा अलप आहारी। शबद अगोचर जपे मुरारी॥
मन तन परे इक सार लखाई। अद्भुत नाद अन्तर में पाई॥

तब ये मनुआँ हुआ विवेकी। सकल मिटावे अपनी तारीकी॥
अन्तर माईं नित ही लिपटाए। पुरख अगोचर का सिमरन पाए॥
पवन सहेली संग निस दिन खेले। गुर परताप हर चरनी भए मेले॥
तृखा विनासी मन आया आनन्द। पवन जुगत का धारे डंड॥
एक नाम का लेवे आधार। अन्तर बाहर पीवे तत्त सार॥
पवन पुकारे करे किलकार। गरजे मेघ दसवें द्वार॥
पवन आहारी मनुआँ बैरागी। अन्तर सुन्न में सिमरत जागी॥
तीन सुन्न के परले पार। पायो जग का सरजनहार॥
दर्शन करके मन तृप्ताये। एक ध्यान में नित ठहराए॥
सकल विकार सहज भए दूरे। घट अन्तर वाजन्त तूरे॥
शबद समागम साचा ज्ञान। गुरमुख परसे पावे कल्यान॥
जब लग जुगती अन्तर नाईं। मनुआँ आवे कभूँ ना थाईं॥
डोलनहार मनुआँ बेकार। नित नित भाखे जम का द्वार॥

**साची जुगती ज्ञान की, करे शबद परगास।**
**'मंगत' लीला मुकत की, पावे गुर का दास॥ 166**

साची जुगत शबद परकासे। शबद मेल से होए बन्ध ख़ुलासे॥
शबद समागम जोग निधान। उनमुन वासे एक ध्यान॥
शबद समागम गवन विनासे। अजर शबद संग सुरत बिलासे॥
शबद समागम करे पाप का नास। निहकरम विरत मन अन्तर वास॥
शबद समागम सो ज्ञान आपार। इत उत की सब परखे सार॥
शबद समागम देह परवान। अजर पुरष का पाए निधान॥
शबद समागम से होए तत्तवेता। एक दृष्ट ध्यान वरतीता॥
शबद समागम से बुद्धी परगासे। अखण्ड जोत आतम बिलासे॥
शबद समागम से पूरन आनन्द। करम का संसय जाए द्वन्द॥
शबद समागम से मन बैरागी। मिथ्या माया की कल्पन त्यागी॥
शबद समागम से पाए गुर का परताप। गुपत वस्तु कर परगट जाप॥
शबद समागम से मिले विवेक। एको नाम की धारे नित टेक॥
शबद समागम मारग बिसमाद। पंछी मीन का ज्यों मारग अगाध॥

शबद समागम से मन भए अतीत। काल करम गई सकली पलीत॥
शबद समागम से पावे जग भेद। मूल माईं ज्यों पात डाल फूल छेद॥
शबद समागम से होवे वेद का वादी। सार वस्त ले हरे विरत परमादी॥
शबद समागम से मिले अगोचर पन्थ। जिसका गुन गावें वेद ग्रन्थ॥
शबद समागम से होए त्रैकाल दरसी। पुरख अकाल जोत घर परसी॥
शबद समागम से पाए सन्यास त्याग। इच्छया भरम करम की जावे सब भाग॥
शबद समागम से मिले निर्मल धाम। निर-आधार मन धावे अनाम॥
शबद समागम से मन पावे परतीत। सरब आधार ले शक्ती पुनीत॥
शबद समागम से मुक्ता पाए। जाँ से विछड़ा ताँही मिलाए॥
शबद समागम पावे दुर्लभ भागी। असार त्याग सार में चित लागी॥

**ज्ञान ध्यान तप योग, शबद समागम सार।**
**'मंगत' शबद पहचान से, पावे मोख द्वार॥ 167**

पूरे सतगुर मेल का, ये फल जानो मीत।
धरम करम सूझत मिले, हर चरनी लागे प्रीत॥
गुपत वस्त परगट होए, सतगुर के परताप।
साचा नाम गोबिन्द का, पल पल हिरदे जाप॥
गवन मिटे संसार की, मनुआँ पावे ठोर।
सतगुर की सरनागती, छूट पाई जम घोर॥
इस सागर संसार में, साचा मित्तर ना कोए।
स्वारथ में सब संग बने, अन्त सखा ना होए॥
माया दुस्तर अपार है, सदा जीव दुःख पाए।
परमारथ की सोध बिन, नित निरासा जाए॥
परमारथ फल पावना, सतगुर की दातार।
बिन सतगुर की सेव से, ना होए जीव छुटकार॥
नाभकँवल से ब्रह्मा बोले, चार वेद सुनाए।
सतसरूप तब ही मिले, जब गुरचरन समाए॥
ज्ञान ध्यान और साधना, सकल अकारथ जान।

बिन भेंटे सतपुरष के, देवत ना कल्यान॥
पीर पैग़म्बर औलिया, नबी वली अवतार।
साची गुर की सीख ले, तब ही उतरे पार॥
गुर तो मिलना कठन है, पर शिष होना कठन अपार।
तन मन वारे गुरचरन पै, पहले होए दातार॥
पहले दाता सिख भिया, पीछे भया गुरदेव।
गुपत भेद परगट कियो, देख के साची सेव॥
सतधाम दिखलावता, मारग बड़ा उध्यान।
सीस दे के शिष चले, रख गुर चरन ध्यान॥
गुर के बचन में जीवत मरे, तब पावे सच सार।
दर्शन करे निज रूप के, मिटे तृखा संसार॥
जाँ के मन परतीत नहीं, सो ही निहगुरा जान।
धार बड़ी चतराई चित, नित रोए नादान॥
कूड़ कपट में औध गई, ना कुछ सरया काज।
चला निमाना जगत से, सहवे दण्ड जमराज॥
संकटमोचन गुरबचन है, दर्शन देवे बैराग।
जिसने गुर नहीं सेवया, सो ही बड़ा अभाग॥
साचा गुर सो आखिए, जो ब्रह्मज्ञान परबीन।
निर्मल दिसा विचार के, रहे आठ पहर लवलीन॥
मन में राखे आजज़ी, परदु:ख हरन विचार।
आप मटावे आप में, तिस गुर तों बलिहार॥
हिरदे सिमरे नाम को, मुख से ज्ञान विचार।
मन की दुर्मत सब तजे, एको शबद प्यार॥
आलख पुरख पहचान के, तिस में रहे बिराज।
ना आपा ना पर रिह्या, सर्वज्ञ एक समाज॥
निरवैरी निषकामता, अगम शबद परबीन।
बिरह वैराग अन्तर रखे, सो गुर पूरा चीन॥

तन मन पहले त्याग के, खाए शबद की चोट।
दर दसवें को खोल के, देखें निर्मल जोत॥
गुर की महमा अपार है, कथ कथ गए ग्रन्थ।
गुर नीवे शिष चरन पै, धारे उल्टा पन्थ॥

**पूरा गुरु पूरा सिख, जग को जीवन देत।**
**'मंगत' तिनके चरन की, धूड़ी सीस रमीत॥ 168**

पूरन भाग जगत में पाए। साचे साध का रूप दरसाए॥
कलह कलेश बिपत को टारे। साचा सन्त जब आन पधारे॥
साचे नाम का देवे विश्वासा। तत्त निरंजन घट होए परकासा॥
महमाँ अपरम अपार समाई। साचे साध की वडी वडयाई॥
निस दिन साध के दर्शन कीजो। परमारथ की रसना पीजो॥
मन तन से करो नित सेवा। पारगरामी हरखे देवा॥
कोट पाप सहज भए नासा। रंचक अगन करे ज्यों देस विनासा॥
तीन ताप नित जीव अन्ध तापे। सुन उपदेश सब गए सन्तापे॥
साध की सेवा अपरम कल्यान। रिद्ध सिद्ध देवे सो भगवान॥
सब से ऊँचा धरम पहचान। साध उपदेश मन करे बखान॥
गुप्त परमेश्वर परगट हैं सन्त। साध निबेड़ा करे भरमन्त॥
चंचल मनुवाँ डोलनहार। भया इकागर सन्त दरबार॥
ग्रन्थ कतेब की सार दिखलाए। परगट साधू सब भरम जलाए॥
अन्धमत जीवों को देवे धीर। साध की सरन बिनसे तक़सीर॥
साध की सेव देवे ऊँचा धाम। गवन विनासे पाये बिसराम॥
साध की सेवा सब तृखा वँजाए। भगत भगवान घट ले बुलाए॥
साध का दर्शन राम दरसाए। साध की सेवा राम मिलाए॥
पर-उपकारी जीवन है सन्त। कोट जीवों का हरे भरमन्त॥
सत वस्तु की प्रभता दिखलावे। झूट पाखण्ड का बीज जलावे॥
सदा निर्भय दोख इच्छया से रहत। राजा रंक में सम भाओ लेत॥
सत परमेश्वर की कीरत नित गावे। सत मारग का भेद बतावे॥
सत करम परकाशक कीजे। कुकर्म विखाद को नित हरीजे॥

निराधार सन्त का गाम। आठ पहर वहाँ करे बिसराम॥

**साध मिलावा जब हुआ, पाया सरजनहार।**
**'मंगत' मिथ्या जगत में, दर्शन साध बलिहार॥ 169**

मन का संशय भरम विनासे। साध सरन आवे विश्वासे॥
निराकार की सोभा परकासे। जप तप ज्ञान पावे अबनासे॥
तृषना अगन सकल मिटाई। साध की सेव मन माहीं कमाई॥
औगन सकले तजे साधू के संग। सतपुरष का पावे परसंग॥
अपने मरने की सोझी आवे। धरम करम में परतीत उपजावे॥
अधिक बकार मन में जो राखे। साध की संगत सत कीरत को भाखे॥
बुरा मिटे आवे भलयाई। जड़ता त्यागे पावे वडयाई॥
गरब गुमान जावे अन्धकार। खिमा ग़रीबी मिले साधू दरबार॥
करम का संसय जो जीव बँधाया। साध संगत से सकल कटवाया॥
सतसरूप में पाई परतीती। मानुष जनम की सुनी सच नीती॥
बाद-मुबाद होवे सब दूरे। सब में दरसत एक हज़ूरे॥
पख त्याग निरपख हो चाले। साध की संगत मन करे निहाले॥
अती तृखा जो भोग विलास। साध की संगत में धीरज वास॥
जनम-मरन का जो नित दुःख भारा। मिले अबनास सब संकट टारा॥
महल अटारी राजसिंघासन। साध की संगत से काल सम भासन॥
मन का वेग होए सकल विनास। सुन उपदेश सत साधू निरवास॥
पाप पुन्न में करे नबेड़ा। दुर्मत विगन का हरे बखेड़ा॥
नाम का साबन ले मन मैल को धोवे। साध की संगत सत अर्थ को जोवे॥
मिथ्या जग से मन उपरस होए। हर का प्रेम मन सार परोए॥
मुकत पदारथ अमरत फल जोए। साध के संग परापत होए॥
बल बुद्धी तेज बढ़ावे। साचे साध की सेव को पावे॥
परमारथ तत्त सूझे निरवान। साध की संगत जुग जुग परवान॥
बिख को हरे अमरत बरसावे। साचा साधू जब दृष्टी आवे॥

**सार तत्त परकासना, सन्तन की ये कार।**
**'मंगत' हर दरसावना, सन्तन का उपकार॥ 170**

सकल जगत का भेद पहचानी। दुर्लभ साधू की सुनो कहानी॥
मन के भरम में सब जग दिखलावे। नाना रंग धर नित समावे॥
छिन छिन में जो रचना करे अनेके। साध पहचाने धर विरत विवेके॥
इच्छया करम जो नित मन धारी। निहकरम विरत सत साधू विचारी॥
मिथ्या देह संग जीव करे ब्यौहारे। अबनाशी नाद घट साधू विचारे॥
इन्द्री भोग नित जीव भरमाया। उपरस जीवन सन्तन ने पाया॥
करमफल इच्छया धर जीव प्यासा। अमरत शबद घट साधू परगासा॥
इच्छया भोगन की जीव लिपटाया। नाम का सिमरन सन्तन घर पाया॥
आठ पहर विच माया तापे। नित आनन्द घर सन्त चित थापे॥
आवन जावन की ना सार जग सूझे। साचा साधू सब खेल को बूझे॥
मिथ्या जग में अन्ध राखे भरवासा। सतसरूप में हर सन्त निवासा॥
बाहरमुख जीव सुख थाओं विचारे। अन्तरमुख सेव साधू सतधाम लखारे॥
अन्धमत मनुआँ नित आवे जाए। पुरख विवेकी सत रूप समाए॥
नाना सम्पत ले आवे नहीं धीर। एको भगत ले हरजन रमे सरीर॥
दृष्टमान को देख भरमावे। अदृष्ट रूप में हर सन्त समावे॥
लख चौरासी का भय नित धारी। अटल पन्थ का भया साध पुजारी॥
इच्छया भोग में जीव ग़लताने। अगम शबद ले भए सन्त मस्ताने॥
पढ़-पढ़ थाकें नहीं सूझें अन्ध सार। एको अक्षर पढ़ साधू होए निस्तार॥
अन्धमत जीया नित डोलाए। हर का सन्त नित ही तृपताए॥
बहु थाँ धरे पर अन्त निहथाँवाँ। हर का भगत देवे सबको थाँवाँ॥
मूरख जीया अन्त को चले निरास। सच साधू निरभय घर वास॥
जग को देख हर नाम विसारे। हर का दास इक नाम ब्यौहारे॥
साध की महमा ऊँच से ऊँची। पाथर निस्तारे ले संगत साची॥

**चक्कर माया सब छेद के, पावें निरमल धाम।**
**'मंगत' एको सन्त ही, पावें दृढ़ बिसराम॥ 171**

भरम निवारन का सुनयो उपाए। संत वैद की सरनी जाए॥

नित ही उद्दम मन में राखे। कोमल बचन सन्त का भाखे॥
सन्त की दृष्ट करे निहाल। आठ पहर साधू किरपाल॥
सत मारग की पाओ खोज। साध संगत की तब पाओ मोज॥
निरमल नाम अखै अबनास। सत साधू घट करे परगास॥
अवगुन हरे गुन देवे नीत। निर्मल चित जो रखे परतीत॥
तृखा विनासे मन शान्त होई। साध की रहनी जिस हिये परोई॥
मानुष जनम की ये है सार। सत सरूप मिले करतार॥
जाँ से आया ताँ जाए समाए। दुर्लभ जनम में ये कार कमाए॥
अन्तरयामी परमारथ वादी। विरला साधू जिस हरी उपाधी॥
नाम आहारी बुद्ध अत विवेकी। सत सरूप मन अन्तर देखी॥
ऐसा साधू जब दृष्टी आवे। कोट जनम का छिन में फल पावे॥
नित ही नित जाऊँ बलिहारे। शबद विवेकी कोई साध अपारे॥
अपने मन की मैल उतारी। और जीयाँ का संकट टारी॥
ऐसा साधू सतगुरु पहचान। जिस मन लागा प्रेम का बान॥
सच कमाई नित ही सो घाले। भरम विकार ज्ञान अगन में जाले॥
सत सरूप में रहे समाई। साचे साधू की अधिक प्रभताई॥
हिरदे नाम मुख घनी उदासी। सहज धुन घट परसे अबनासी॥
मिथ्या देह से मन होए विरक्ता। सो साधू तत्त ज्ञान संजुगता॥
अबगत नाद अगोचर बिसरामी। तिस को सिमरे सो साधू सुखधामी॥
मरन जनम का जाए अँदेसा। अबनाशी तत्त में साधू परवेसा॥
आनन्द दशा साधू चित धारी। जो सरन भए सो सुख विचारी॥
गुरमुख साधू करे उद्धार। अपना पारस देवे संसार॥

**हर का सिमरन हर की सोभा, सन्त करें बखान।**
**'मंगत' तिनकी सेव से, पावे शबद ज्ञान॥ 172**

जीवन मिरतक राह को पाए। मर के जीवे सहज समाए॥
ऐसा मन्तर सत साधू देवे। प्रेम प्रीत से चरन जो सेवे॥
आलख परकास मन में परकासे। साध वचन हिरदे माईं वासे॥

साध का सेवक बड़ा परतापी। साचा नाम ले अन्तर में थापी॥
एक नाम है केवल जग सार। पूरे सन्त एयों करें पुकार॥
जिस मन अन्तर नाम प्रभ गाया। साधू भेद को तिसने पाया॥
साची सम्पत जग करी पहचान। सर्वज्ञ ठाकर का पाए निधान॥
रख पुरषारथ मन भरम को नासे। साचा ज्ञान चित माईं निवासे॥
सिमरत कीरत हर जस परोई। मिल साधू से सोझी होई॥
अमरत खानी नाद पहचान। साचे साधू का सुन विख्यान॥
सकले करम भरम करे नासे। दीन आजज़ी अन्तर निवासे॥
झूट प्राकृति करम का जाल। तिसे पहचाने होए निहाल॥
सतसरूप अन्तर परगासी। रोम रोम रमया अबनासी॥
पूरे गुर की जुगत को बूझे। सारंग बानी अन्तर में सूझे॥
विरत इकागर मन शबद आधार। साचे साध ने कीना उपकार॥
सत वस्तु का निरनय पाया। सत परतीत से भरम जलाया॥
साधू के वचन धरे विशवासा। बिमल शबद ब्रह्म लखे अबनासा॥
सच ठौर में जाए समाए। साध उपकार परम सुख पाए॥
अपने आप में भया लवलीन। नीर तुरंग ज्यों सागर चीन॥
मन का आवन जावन सब नास। अबगत रूप में लीना बास॥
साध की संगत प्रभ संग मिलाई। भरम मिटाए निज रूप दिखलाई॥
कोई वडभागी पावे ये संग। मूल पहचान के होए निहसंग॥
धन्न साधू धन्न संगत तिस। भरम गँवाए पावे जगदीश॥

**हूँ वारी बल जाऊँ नित, जाँ हर कथा विचार।**
**'मंगत' पावे परमगत, सुन साचा भेद आपार॥ 173**

करो आदेस प्रभ अन्तरयामी। नमस्कार करो पारगरामी॥
सरब निरन्तर सो परकासे। बारम्बार कर तिस अरदासे॥
विगन हरे गुन को वरतावे। कीटी हस्ती को रस पहुँचावे॥
भवचर नभचर को प्रतिपाला। सब का ठाकर सो दीनदयाला॥
बार बार करयो आदेस। सकल स्वामी आपे जगदीश॥

अधिक वडाई ना पारावार। साचा ठाकर सिमर मुरार॥
चन्दर सूरज जोती परकास। तारामण्डल आकास बिलास॥
दिवस रैन रुत पख मास। अचरज लीला धारी अबनास॥
थल के नीचे जल रचीना। जल के भीतर अगन रमीना॥
अगन माहीं वायू परगासे। वायू अन्दर आकास बिलासे॥
पाँच भूत की धारी रचना। आदेस करो नित पुरख अलपना॥
गिनी ना जाई प्रभता जगदीस। थलमण्डल में धारे बहु जन्त कीट॥
जाँ जाँ देखाँ ताँ पूर समाई। सरब का ठाकर सरब रमनाई॥
सकल भूत को चक्कर चढ़ावे। सकल जन्त को बहु रंग दिखलावे॥
निमख निमख में विचरे बिस्माद। नित अचम्भा पुरख आनाद॥
सब में लाली तिसकी चमकाए। सब में तेज तिसका दिखलाए॥
सब के अन्तर बाहर रखवारा। कर आदेस तिस चरन बलिहारा॥
जड़ माया को परकाशक कीना। सरब अतीत आप रमीना॥
जिस देखा सो अचरज आपार। परम समरथ सरब दातार॥
जुग जुग अपना रंग दिखलावे। तीन गुनों में जगत भरमावे॥
अन्तरगत रमया इक रंग। करो आदेस पुरख सरभंग॥
सब को अन्तर राख परोए। एको सूत ज्यों माल समोए॥
सब रसों को करे रसवाह। सरब का ठाकर बेपरवाह॥

**प्रभ अपना सिमरन करो, नित कीजो आदेस।**
**'मंगत' जग में सार है, सुन सतगुर संदेस॥ 174**

शेष सहँस मुख महमाँ गाए। चतरमुख ब्रह्मा सेव कमाए॥
शेष शैया पर विषन बराज। अबगत पुरख की लखे समाज॥
शिव सनकादक गौरी गनेश। सकल ध्यावें पुरख निरभेस॥
पीर पैग़म्बर क़ुतब ग़ौस रसूल। सब ही सिमरें नित बुद्ध अनुकूल॥
अन्त ना पारावार सो आए। लख रसूल बैठ करें रज़ाए॥
लाखों गोरख लाखों शिव विरंच। पाए ना भेद रंचक रंच॥
अपनी लीला धारी बिसमाद। सरब निरन्तर आप आगाध॥

करो आदेस पुरख निरधारी। सेव बन्दगी चरन बलिहारी॥
तिसका नाम सब संकट नासी। पततपावन सो आप अबनासी॥
दुर्लभ भाग जो सिमरन पाए। सत परतीत ना गरभ में आए॥
अद्भुत कौतक धारे निरंकार। नाना रंग परगट देखूँ संसार॥
जुग जुग आदी आप अनूप। करो आदेस नित आलख सरूप॥
अपनी शकत में आपे बलवाना। अपने आप में पसरे भगवाना॥
दूजा हुआ ना दृष्टी आए। आद जुगादी आप समाए॥
ऊँच नीच में आप समाना। राजा राना रंक नादाना॥
आपे ज्ञानी आपे मूढ़ा। आपे दाता सरब की धूड़ा॥
आपे पंडत आपे श्रोता। आपे सिद्ध आपे साधक होता॥
आपे चारखानी बिस्तारे। आपे चार बानी उच्चारे॥
आपे थलमण्डल को धारी। आपे जुगता आप आचारी॥
सरब जीवों में आपे आप। सरब जगत तिसका परताप॥
आपे दाना गहर गम्भीर। आपे धारे अनन्त सरीर॥
एको हो बहु रूप दिखाए। नाना पन्थ तिसका जस गाए॥
अपनी माया आप परगासे। विचित्तर लीला धारी अबनासे॥

**ज्ञानी गुनी नित गाँवदे, पर पायो ना किसे अन्त।**
**'मंगत' दूजा ना कोए, सरब एक भगवन्त॥ 175**

दुर्मत भरम जीव भुलाया। सार तत्त नहीं अन्तर गाया॥
जो कुछ देखे अपनी रचना। अपनी कल्पित को आपे लखना॥
आपे दु:ख पाए नित रोए। अपना बीजा आपे खोए॥
नाना रंग वटावे नीत। भरम पाए नर होए पलीत॥
सत सरूप दियो विसार। नित ही भरमे विच भरम ग़ुबार॥
बिन सत सेव ना छूटन पाए। साध जनाँ ने भेद दिखलाए॥
पूरन पूरे आप भगवन्त। जो जन सिमरे सो होए निषंक॥
अपने भरम को आप निवारे। साचा सिमरन सत रूप विचारे॥
जिसका दिया सब जगत रजाए। तिसे विसार नर बहु पछताए॥

जिसके होए देखे संसार। भाई बहन मित्तर विचार॥
जिसके बल छतर सिर धारी। जिसके बल बहु भोग वचारी॥
जिसके बल तूँ होवें रन सूरा। पावें जीत करें शत्रु धूड़ा॥
जिसकी प्रभता से सब प्रभता धारी। तिसे विसार कौन थाओं विचारी॥
काया सरजनहार जो स्वामी। तिसे विसार भयो खलकामी॥
तिसकी आज्ञा मन से विसराई। अपनी हिकमत धारी चतराई॥
नित ही नित भयो नादाना। विसर गयो साचा भगवाना॥
ठौर त्याग भया बेथाम। नित ही भरमें चौरासी जाम॥
सत छोड़ छाया चित लाई। कैसे मन को धीरज आई॥
शकत त्याग अनाशकत में धाए। जीवन त्याग मृतक ओर जाए॥
परकाश त्याग अन्धकार लपटाई। कह बिध मन को शान्त आई॥
आनन्द त्याग द्वन्द परबीना। अमरत त्याग नित बिख को चीना॥
सत को छोड़ असत में धाए। अपनी करनी देवे सज़ाए॥
सम्पत छोड़ आपद में लागा। भरम का बाँधा ये जीव अभागा॥

**आशा तृषना जेवड़ी, गल में लीनी धार।**
**'मंगत' छूटे कह बिध, आपे करे बिकार॥ 176**

अपने भरम का करो उपाए। साची कीरत हर का गुन गाए॥
बिन तिस सिमरें ना पावें सार। जनम अनेक होवें ख़्वार॥
साची प्रीती राखो इक नाम। करो आदेस पाओ बिसराम॥
बारम्बार ये किया विचार। बिन हर भगत नहीं छुटकार॥
दुरलभ समाँ मानुष ज़ात। सिमरो तिसको जिसकी सब दात॥
बसे निरन्तर दूर ना कोए। तिसका चानन सब में होए॥
मन अपने की करो सुथराई। भरम बकार को दियो जलाई॥
तन मन करके सेव कमाओ। तिसकी आज्ञा मन तन वरताओ॥
मिरतक देह को जीवावनहारा। सब कुछ देख तू तिसका पसारा॥
आपा त्याग तिसका हो रहिये। सत सरूप तब अन्तर लइये॥
स्वास स्वास तिस नाम चितार। पलक ना विसरो सत सरजनहार॥

दृढ़ निश्चय इक नाम में होए। दुर्मत माया भरम को खोए॥
अखण्ड नाद अन्तर परगासे। गुर परसादी सब गवन विनासे॥
दु:खिया जीव तब भयो निहाल। नैनों देखा दीनदयाल॥
आठ पहर तिसका जस गाए। तिस बिन दूजा काल समाए॥
मन अपने का जाए बकारा। चंचल मनुआँ निहचल विरत धारा॥
सत परतीत मन निर्भय हूआ। जनम मरन भ्रम जाए दूआ॥
सर्वज्ञ पुरख पायो अनामी। नित आदेस करो अन्तरयामी॥
आसा तृष्ना भई विनास। जब ही पायो अखण्ड अबनास॥
किस मुख से सलाहूँ करतार। करता हरता आपे संसार॥
गुरमुख विरले सार पछानी। अजर पुरष की लखी कहानी॥
मन में मन होवे परसन्न। साचे नाम का जब पायो धन्न॥
एके नाम चित विरत में धारी। काल त्याग चढ़ी प्रेम ख़ुमारी॥

**खोजत खोजत पाया, सरब जगत का बिन्ध।**
**'मंगत' मन निर्मल हुआ, हरी नाम रसा जब पिण्ड॥ 177**

सच प्रीती इक नाम के संग। साचे पुरख का लागा मन रंग॥
पलक पलक कर सेव कमाए। सरजनहार ना विसरन पाए॥
मनमुख खोवे गुरमुख तत्त भाखे। सत सरूप अन्तर में राखे॥
चिन्ता तृषना जाए अन्देसा। नित आनन्द संगत कियो परवेसा॥
सरब जगत देखे तिस माईं। ऊँच नीच का एके साईं॥
प्रेम प्रीत से करे नित सेवा। सरब में सिमरे अबनासी देवा॥
गरब ग़ुमान ना मन में राखे। ईरखा द्वेष ना चित में भाखे॥
सरब निरालम सरब आधार। सिमरो ठाकर अपरम आपार॥
जैसा रूप त्यों रह्यो समाई। अपनी कीमत आपे ही पाई॥
आपे बाँधा आप छुटारे। अपना भरम आपे ही टारे॥
अपना दरशन करे नित आप। सरब में देखे आप व्याप॥
द्वन्द जाल माया का नासे। अबगत रूप होया परगासे॥
अपना आनन्द आपे ही पावे। गूँगा गुड़ का क्या भेद बतावे॥
आलस त्याग लीनी चतराई। आठ पहर इक रंग समाई॥

तीन अवस्था होई काफ़ूर। चौथे परगट आप हज़ूर॥
सच धुन अनहद की तान। गुरमुख पावे भेद निरवान॥
अपने रूप में आप समाए। सरब माहीं इक रंग लखाए॥
वाह वाह वडयाई गुरमुख पाई। जनम मरन से होई रहाई॥
अमरत पी के मन तृपताया। सकल जगत का निरनय पाया॥
अलख अगोचर देवों का देवा। मिल सतगुर पाई सत सेवा॥
मन अपने में भई खुशहाली। अनहद बूझे बीच तिरनाली॥
सुरत इकागर शबद रस पीवे। गुरमुख ज्ञान में जीवन जीवे॥
देह माहीं निरदेह हो जीया। पारब्रह्म रस अन्तर पीया॥

**ज्ञानी रमया ज्ञान में, भरम भयो सब दूर।**
**'मंगत' नित ही आप में, ज्ञानी रहे मख़मूर॥ 178**

खोजो साधो तत्त निरवानी। मिले आनन्द जाए भरम की खानी॥
बिन तत्त खोजे जीव दुःख पावे। जनमे मरे नित आवे जावे॥
मिथ्या कल्पित धरे अन्देसा। ज्ञान बिना नित कलह संदेसा॥
जतन अकारथ अन्त पछताए। ज्ञान बिना विच भरम भरमाए॥
सतगुर खोजो निर्वान का वादी। संकट नासे हरे उपाधी॥
सत सरूप का भेद बतावे। सत का जीवन अन्धमत पावे॥
अन्तरगत पावे बिसरामा। परम तत्त लाखे नित अनामा॥
चार पदारथ से भए मन मुक्ता। आलख निर्वान आतम तत्त जुगता॥
मुक्त महासुख गुर शबद उचारे। अन्तर बाहर सम रूप कर धारे॥
मानुष जीवन का फल पाए पूरा। मिले अबनाशी आलख हज़ूरा॥
खोजो खोजो सत अबनासी। परम आनन्द सोभा परगासी॥
नित ही नित राखो ये जतना। सरबगत रूप आतम अलपना॥
तिसकी खोज परम सुखदाई। सिमरो ठाकर आलख प्रभताई॥
साध जनाँ ने निरना कीया। निर्वान को खोज परम सुख लीया॥
सो ही साधू सो ही विवेकी। अन्तरमुख शबद प्रभ पेखी॥
तिसके सिमरन मन शान्त आई। सिमरे ठाकर परम चित लाई॥

चार वेद का ये ही सार। सच्चदानन्द मिले मुरार॥
बिन तिस सेवे मन खलकामी। बिन तिस सिमरे सदा उपरामी॥
मूल ठिकाना सो ही बिन्ध। जाँ से पसरा सकल द्वन्द॥
तिसकी खोज तिस रूप मिलावे। तिसका सिमरन आनन्द प्रगटावे॥
डोलन से मन लेवे बिसरामा। सिमर सिमर ठाकर सुख थामा॥
अधम जीव परम गत पाए। सत का सिमरन सत रूप समाए॥
नित ही नाम खोजो निरवाना। भय त्याग निर्भय गत पाना॥

**परम ज्ञान तत्त सार है, खोजन तत्त निर्वान।**
**'मंगत' मन बिसराम ले, मिटे चौरासी खान॥ 179**

नित ही दु:खिया जीव भरमावे। अनंक सम्पत का भोग भोगावे॥
काम क्रोध अगन मन लागी। जल जल पड़े नित मन्दभागी॥
पूरब से उठ पच्छिम को धाए। गिरी परबत की सैर कराए॥
ये मन नहीं पावे धीर। माया भरम लागी तक़सीर॥
सत तत्त आतम जो जन जाने। तिस का मनुआँ आए ठिकाने॥
आतम ज्ञान की बड़ी प्रभताई। मुकत लेवे सकले दु:ख जाई॥
गुरमुख खोजे कोई बड़ा वडभागी। जोत निरालम घट अंतर जागी॥
अपने मन का संकट टारे। आतम ज्ञान नित चित्त विचारे॥
मूल पाए जीव तृपताई। जाँ से बिछड़ा तिस संग मिलाई॥
अन्तरगत लेवे सुख भारी। अचिन्त रूप आए मिले मुरारी॥
सरब का सरजनहार सो स्वामी। सरब उद्धारक सो पारगरामी॥
थल पुरियाँ को परकासत कीना। अबगत पुरख लयो घट चीना॥
नित ही तिस की टहल कमाओ। तिस के संग नित तृपताओ॥
सार शबद ले हिरदे पीयो। सत सरूप में जीवन जीयो॥
पवन पावक और नीर समेरा। सब का स्वामी सो ही प्रभ मेरा॥
तिसका सिमरन कर बारम्बारा। सन्त वेद एयों करें पुकारा॥
सब जग संसा भरम की टाटी। मिथ्या भरम में करे नित घाटी॥
बिना ज्ञान ना पायो धीर। सार तत्त सुन ये आख़ीर॥

झूट देही झूटे तिस भोग। मिथ्या जीव को लागा रोग॥
जन्मे मरे नित आवे जाए। इच्छया चक्कर में नित भरमाए॥
भाग वडाई गुर संग मेले। अबगत रूप संग अन्तर खेले॥
मिटे चौरासी जीव निरवानी। आलख नाम की सुनी कहानी॥
आप तरे औरां आधार। जप तप ज्ञान कमावे कार॥
मनमुख जड़ता ज्ञान से धोए। नाद निर्वान घट परगट होए॥

**बन्धन से मुकता भए, लखे शबद निर्वान।**
**'मंगत' मन निर्मल हुआ, सत रूप करी पहचान॥ 180**

सरूप विसार बहू दुःख पाया। मिथ्या छाया में नित भरमाया॥
असत वस्तु संग हेत लगाई। तीन काल मन रहे तिरखाई॥
सब कुछ करे हर बिन परतीता। नित ही भय में नर रमनीता॥
अरब खरब धन सञ्चत कीना। उदे अस्त के राज़ को चीना॥
लोक लश्कर घने घनेर। अन्तरगत नहीं तृपते मीर॥
ऐसे जनम अनेक भुगताए। सुख दुःख करनी का नित पाए॥
बिकराल मनुआँ नहीं पावे ठौर। दिवस रैन राखे जतन अघोर॥
ग्रन्थ कतेब का करे निध्यास। अन्तर राखे मोह की फाँस॥
नैनों देखे सब जग बिनसाए। मूढ़ा तो भी नित ललचाए॥
आवन जावन देखे नित खेला। तो भी भरमे देख जग मेला॥
इन्द्री भोग छिन में बिनसावे। मूढ़ा मनुआँ कैसे तृपतावे॥
सकली वस्तू अपनी कर धारे। निकले प्रान नर कहाँ पधारे॥
इस संसे का करो उपाए। अधिक दुःख लागा चित माए॥
कूड़ी दुनिया देख ना भूलो। कूड़ा जोबन देख ना फूलो॥
जोर ज़ुलम ना धारो चित माईं। इक दिन होवें थाँ बेथाईं॥
मत हरखो जग सम्पत पाए। एक पलक में त्याग कर जाए॥
सत संगत मिल खोजो अबनास। सत सरूप जो नित परकास॥
औगन सकले सहज भए दूरे। आतम तत्त वाजंत तूरे॥
खेम कुशल घर ठाकर पाया। गुर परताप गई सब माया॥

अखण्ड अनाद नित अद्वैत। पाया रूप सरब गत रहत॥
उलटे मारग तत्त लखे निरवाना। गुर परसादी घट करी पहचाना॥
सरब माहीं एको सो स्वामी। अन्तर बाहर सो रमे अनामी॥
कहत सुनत नहीं पारावार। घर में पाया शबद मुरार॥

**अन्तरगत को चीनया, सतगुर ले उपदेस।**
**'मंगत' पाए परम गत, जो ये सुने सन्देश॥ 181**

सत गत खोजो रे मन मेरे। सत परतीत में सुख घनेरे॥
सत की सोभा नित चित गाओ। सत का सिमरन नित चित लाओ॥
सत परतीत राखो चित माईं। सत का जीवन सत खोजो थाईं॥
सत की किरया करम कमाओ। सत का मारग नित उठ धाओ॥
सत की खोज सार विवेक। नित ही राखो सत की टेक॥
सो ही मानुष देवन का देवा। सत का सिमरन जिस अन्तर लेवा॥
तीन काल जग मिथ्या पेखो। सत सरूप आतम को देखो॥
जो जनमे सो निस्चे जाए। जिसका आद सो अन्त हो जाए॥
छिन में नाना रूप वटाए। इक दिन सब ही बिनसत जाए॥
पर आधार चले दिन रात। तिसका संग नित दुःख की दात॥
उठ के खोजो सत की धारा। सत का सिमरन देवे छुटकारा॥
सत नाम एको निरवाना। अन्तर चित नित धरो ध्याना॥
जिसके अन्दर नाम तत्त आया। सत विशवास तिस पुरख ने पाया॥
तत्त निरंजन नैनां दरसाए। आलख अभेद में जाए समाए॥
बिन तत्त खोजे जीव अन्धकारी। जतन करे नित बिख को धारी॥
नेम धरम बहुता कमावे। बिन विशवास सब निहफल जावे॥
द्रव्य त्यागे करे पुन दाना। अन्तर मन में रखे गुमाना॥
जतन करे तो भी इच्छया ना जाए। करम के जाल में नित भरमाए॥
साची भगत सत नाम आधार। जो जो सिमरे होवे निसतार॥
बिना भगत नहीं मन निर्भय होए। जतन जतन कर जीवन को खोए॥
साची भगत मुकत की दाती। सत सरूप आतम को जापी॥

ऐसी भगत करो मन मेरे। मिले भगवन्त होएँ सुख घनेरे॥
छल कपट विखाद नहीं परसे। साची भगत ले हर को दरसे॥

**भगत भाओ मन में रखो, सुनयो साच सन्देश।**
**'मंगत' मारग मुकत का, हर रूप में करे परवेश॥ 182**

साची भगत का सुनो विचार। बन्धन जाएँ पाएँ मोख द्वार॥
सत सरूप पर रखे विश्वास। सत की खोज सब हरे तरास॥
सत का जीवन मन में राखे। सत नाम की रसना चाखे॥
एक नाम नित हिरदे जाप। एको देखे जल थल व्याप॥
पलक ना विसरे सचखण्ड देवा। निर्भय रूप की करे नित सेवा॥
मन के दोख सकल निवारे। साचा सिमरन अन्तर में धारे॥
सब से नीचा मन को राखे। हर जस कीरत अन्तर में भाखे॥
सब कुछ देखे तिस की बन्त। सब में देखे एक भगवन्त॥
मान त्याग होए निरमाना। सत सरूप की करी पहचाना॥
नित ही मन में सत जुगती राखे। नित ही अजर सरूप को भाखे॥
उट्ठत बैठत निस्चय इक धारी। सिमरे साचा रूप निरंकारी॥
सत करम मन में नित राखे। पर उपकार जीवन को चाखे॥
सकल रस से उपरस होए। अनन भगत इक नाम चित जोए॥
मान गुमान सब हरे बकारा। निहचल विरत पाए करतारा॥
मन अपने की सोधन कीजे। हर का नाम रोम में पीजे॥
हिरदे सिमरे आलख अनामी। सो ही पावे हर भगत अगामी॥
भगत भाओ मन कुटल को हरया। सत-पुरष की सरनी पड़या॥
साची भगत मन देवे आनन्द। सिमरे नित ही परमानन्द॥
आद जुगाद भगत परवान। भगत भाए परसे निरवान॥

**साची भगत अन्तर ले, मन का मिटे कलेश।**
**'मंगत' दुर्लभ भगत है, परसे तत्त जगदीश॥ 183**

हर के भगत की महमा आपार। हर का भगत जगत आधार॥

हर का भगत हर रूप दिखलावे। हर की प्रभता हर भगत दरसावे॥
नित आनन्द अखण्ड चित धारे। साची भगत सब जियाँ निस्तारे॥
बिपतकाल सुख रूप दिखावे। साची भगत जिस अन्तर आवे॥
दुर्लभ भगती गवन विनासे। परसे सत रूप अबनासे॥
सकल जगत डोलत नित डोले। हर का भगत सदा अडोले॥
सकल जगत बिख अगन में वास। हर का भगत तत्त परसे अबनास॥
सकल जगत मन भय विचारी। हर का भगत आनन्द चित धारी॥
सकल दोख हरे सन्ताप। हर की भगत जिस कीनी जाप॥
अधिक वडयाई हर का जन पाए। वेद पुराण जिसका जस गाए॥
पूरन भाग कोई गुरमुख आया। सत सरूप का जिसने जस गाया॥
पूरन पुरख सब दोख जलाए। निस्चल भगत कीरत चित पाए॥
एके नाम में नित परबीना। सत सरूप में भयो लवलीना॥
हर के भगत की महमा हर जाने आप। हर भगत लेवे जग वड परताप॥
ध्रुव प्रहलाद सिद्ध मुनि जस गाए। नामदेव रविदास ध्याए॥
नारद शारद सनकादक ज्ञानी। अटल भगत अन्तर चित जानी॥
मीरांबाई सदन कसाई। हर की भगत ले सब संकट जाई॥
अधम जीव उत्तम गत पावे। शिरोमनी हर भगत कहावे॥
सकल जगत करे जयकार। हर के भगत की चरनी बलिहार॥
साचा सिमरन साचा ध्यान। साची कथन करे विख्यान॥
सकल त्याग राखे सच टेक। हर का भगत कोटाँ में कोई एक॥
साचा जीवन जगत में वरताए। अनन प्रीत हर सेव कमाए॥
बिख माया तज पावे बिसराम। अखण्ड तत्त परसे आलख अनाम॥

**हर का भगत दुर्लभ है, माँगूँ चरन की धूड़।**
**'मंगत' सोभा भगत की, आपे रूप हज़ूर॥ 184**

साची सेव करो मन मेरे। परम धरम गुन देत घनेरे॥
सेव बन्दगी मुकत द्वारा। सेव बिना नर मुगध गँवारा॥
सकल धरम की सार ये मीता। साची सेव से मन हो पुनीता॥

दुर्लभ कारज करो पहचान। साची सेव मिले भगवान॥
जो जो सेवे सो ही सुखरासी। सेव पाए सब विगन विनासी॥
मन तन अन्दर सेव कमाए। कूड़ कपट की मैल वँजाए॥
साचा भगत ले साची कार। भाओ प्रेम से सेवे करतार॥
सत सेवा मल दोख निवारे। गरब गुमान सब भरम को टारे॥
बिन सेवा मन उज्जल नाहीं। धरम करम बहु राखे मन माहीं॥
साची सेवा प्रभ रूप मिलाए। साची सेवा धरम अधिकाए॥
मन उज्जल नर ताँ का पहचानो। सेवा प्रेम सब जीवों मन आनो॥
पारब्रह्म का ये ही तप ध्यान। तन मन त्यागे सत सेव कल्यान॥
मन की अगन होवे तब दूर। हर के द्वार के बने मज़दूर॥
उट्ठत बैठत मन सेवा धारी। सकल जियाँ का होवे अधिकारी॥
ये ही साचा धरम पहचान। सत सेवा परसो भगवान॥
कुटल कठोर मन पावे शान्त। सेवा अगन करे भसम भरमन्त॥
बिन सेवा ना पाए कुछ सार। दीन दुनी दें दोनों हार॥
धन्न पुरष जिस हिरदे को धोया। हर की सेव राखे मन जोया॥
सकल गुमान हर सेव से जाए। अबगत आनन्द सो ही नर पाए॥
जप तप संजम तब ही फल देवें। साची भाओ से जब हिरदे सेवें॥
सेवा करे सब का बल लेवे। महाबली बल सेव को सेवे॥
साचा जतन ले अमरत नित पीवे। साचे नाम में नित जीवन जीवे॥
साधजनाँ ने कियो फ़रमाना। सेव टहल से हरो गुमाना॥

**साची सेवा जब मिली, तब मन को भया आनन्द।**
**'मंगत' सेवा धरम से, गयो ग़ुबार द्वन्द॥ 185**

परम शकत सेवा ये जान। प्रभ का तेज उमडे निर्वान॥
तन मन धन तीनों को त्यागे। पर उपकार की रसना में जागे॥
सेवा करन से मन भए अरोगी। धरम करम सत ज्ञान सँजोगी॥
कुल जाती सो ही बलवाना। जिस दीन दुःखी की सेव पहचाना॥
प्रभ अपने से माँगो नित नीत। साची सेव हर भगत पुनीत॥

घाल कमावे करे उपकार। राह पहचाने साचा करतार॥
सम्पत धन जो सेवा में देवे। चार गुना परगट हो लेवे॥
मानुष जनम का भए उद्धार। सेव सेव हरचरन नरंकार॥
सेवा ज्ञान भगत अनूप। जो सेवे होवे आनन्दसरूप॥
कुल जाती परवार होवे हरया। साची सेव ले हर चरनी पड़या॥
नित आनन्द प्रभ निरवान। सेव सेव कर करें पहचान॥
साध जनाँ की हो चरनी धूड़। गरब गुमान त्याग दुःख दूर॥
दीन आजज़ी हरचरन प्यार। सिमर सिमर भए दुःख छार॥
सो ही साधू तत्त का वादी। साची सेव ले हरी उपाधी॥
पल पल जीवन अपना सोधे। सेव बन्दगी हिरदे में बोधे॥
अन्न बस्तर और हाथ से करे सेवा। निष्काम विरत से हरखे सो देवा॥
तन मन धन इक साहब का माने। तीनों दे के हर सेव पहचाने॥
निर्मल होवे मन बड़ा बकारी। दर्शन देखे घट माईं मुरारी॥
अपने प्रन को नित ही दृढ़ राखे। साध बचन को हिरदे में भाखे॥
दुर्मत जाए परकासे हर नाम। अघट नाद संग सुरत बिसराम॥
अपना खोटा खरा पहचाने। मारग साचे में सुरत ग़लताने॥
साची संगत से पाया परसाद। सेव सेव के हरया परमाद॥
पूरे गुर की भई परतीत। साचा धरम पायो सुखरीत॥

**खिमा दया और बन्दगी, साचे प्रभ का भेख।**
**'मंगत' हरे बकार सब, पाए आनन्द अलेख॥ 186**

परम पुरख आनन्द सुखदाता। तीन काल रह्यो तिसका जस गाता॥
प्रभ अपने पर राखो विश्वास। नित ही जापो आनन्द परकास॥
पूरन शकत रूप कल्याना। सिमरो ठाकर आनन्द निर्वाना॥
तन मन को नित ही परकासी। आप अलेप बसे अबनासी॥
सकल तृखा त्रास मिट गई। सतनाम की परतीती भई॥
अन्धकार में भयो परकासा। मिरतक माईं लयो जीवन में वासा॥
अमरत भोजन नाम का आहार। स्वास स्वास पीवे गुनकार॥

पूरे सतगुर का मेल मिलाया। सच्चदानन्द का सिमरन चित आया॥
जिसको सिमरे नित त्रिपुरारी। चतरमुख जिसकी सोभा विचारी॥
सिद्ध तपीशर नाथ जस गावें। गौरी गनपत ध्यान लगावें॥
ऐसा पुरख घट परगट पाया। सेव सेव के मनुआँ हरखाया॥
नीच गती मन गयो बकारा। पायो जग का सरजनहारा॥
दुर्लभ देही वडभाग विचार। सिमरन सेवा पाई करतार॥
गुनी ज्ञानी गावें कई जनम को धार। दुर्लभ रूप सहज भाए मिला नरंकार॥
कही ना जाई महमा जगदीश। नित निरालम सरब गत ईश॥
हिरदे अन्तर सिमरन तिस गाया। अन्तर चित कर ध्यान लगाया॥
तन मन धन सौंपा तिस आगे। हरखत भयो नारायन देख अभागे॥
आप दयाल आपे किरपाल। आपे बख़शे करे निहाल॥
आप खवावे आप पीवावे। जनम जनम का सोता आप जगावे॥
अनमत मूढ़ को सुकृत कीना। होवे किरपाल घट दर्शन दीना॥
सब कुछ तेरा तूँ ही दातार। पलक पलक सुध ले मुरार॥
क्या करूँ तेरी वडयाई। अन्तर बाहर तेरी प्रभताई॥
नित ही कूकर हाँ तेरे द्वार। बख़श लें तूँ सरजनहार॥

**पूरन पुरख अपार है, सभी तेरी करामात।**
**'मंगत' पलक ना विसरिए, सब कुछ तिसकी दात॥ 187**

तूँ परमेश्वर पूरन का पूरा। तू आप दयाल आप हज़ूरा॥
सब ऊपर तेरा फ़रमान। गुनी ज्ञानी राज राजान॥
सब ही बिचरें रख तुमरी टेक। तूँ ही एक तूँ ही अनेक॥
उदय अस्त तेरा पासार। तूँ ही कुदरत क़ादर अपार॥
पवन पानी और अगन समेरा। अम्बर तान अधिक गम्भीरा॥
सब के अन्दर आप व्याप। साखी पुरष तेरा परताप॥
जिस देखा अस्चरज अनूप। जिस पाया सो अत सुखरूप॥
कथ कथ थाके वेद ग्रन्थ। पारावार ना आवे भगवन्त॥
जिस पर होवे आप किरपाल। सो दर सूझे दीनदयाल॥

भगत कीरत आनन्द को गाए। मन मन अन्तर रूप ध्याए॥
जिस पाया सो परम आखण्ड। भया अडोल विरत निरद्वन्द॥
सुरत इकागर नाम करे जाप। तन मन अन्तर लेवे नित थाप॥
मान त्याग निरमान चित होए। नाम ध्यान पावे जन सोए॥
अखण्ड अगोचर नित बिस्माद। लखा ना जाई तेरा कुछ आद॥
सरब में आप सब से दूर। अन्तर बाहर रह्या भरपूर॥
जो जाने सो ही पण्डत दाना। वेद अर्थ की सार पहचाना॥
मिले सरूप जाए दुःख खानी। आनन्द विरत घट माईं पहचानी॥
सकली मैल होई तिसकी दूर। साचा रूप पाए हज़ूर॥
तीन ताप पाँच दोख निवारे। उपरस जीवन हर नाम चितारे॥
नित ही मंगल शबद टंकोर। गरजे मेघ परम अघोर॥
विरत अखण्ड शबद को पीवे। आस त्याग निरास हो जीवे॥
जाँ से आया ताँ जाए मिलाए। अपने आप की सोझी पाए॥
पूरन बुद्धी पूरन पाए योग। पूरन पूरे भयो संजोग॥

**मन का संसा सब गया, पाया शबद का भेद।**
**'मंगत' मिले सरूप में, बिनस गयो सब खेद॥ 188**

परमारथ तत्त जीवन की सार। परमारथ सोधे होवे जयकार॥
स्वारथ माईं नित दुःख पावे। उदे अस्त को नित उठ धावे॥
नाना जतन करे दिन रात। जाए ना मन का दुःख सन्ताप॥
गुन औगुन की ना कछु बुद्ध। धरम करम की ना कछु सुद्ध॥
जीवन मरन का ना पाए भेद। पढ़ पढ़ थाके चारे वेद॥
सतगुर भेंटे शबद ज्ञानी। अन्तर माईं शोभा दृष्टानी॥
सत सरूप का निरनय पाए। रूप पहचान सब संकट जाए॥
आलख शबद जोती परकास। घट अन्तर जो करे निवास॥
शबद सुरत कमावे योग। जनम जनम के जाएँ सब रोग॥
शबद अबनाशी शबद अखण्ड। शबद ही पसरे सकल ब्रह्मण्ड॥
शबद ही जीवन शबद ही ज्ञान। शबद ही सार करी पहचान॥

साचा शबद जिस घट परगट होए। जीवन मुकत भयो नर सोए॥
बिना शबद मन नित तपावे। बिना शबद ना अर्थ कछु पावे॥
अमर देस शबद ठिकाना। बन्ध छुड़ावे सो शबद निर्वाना॥
शबद पहचाने सो ही गुर पूरा। तन मन कीजे नित जगत की धूड़ा॥
मर के जीवे सार शबद लखाए। शबद का ध्याता मुकत पद पाए॥
अजर शबद अगम आगाध। खोजे कोई गुरमुख साध॥
शबद विसार जीव दुःख पाए। लख चौरासी जून भरमाए॥
शबद सार पूरन विवेक। ज्ञान ध्यान में शबद है एक॥
थल पुरियाँ खण्ड देस आधार। एको शबद सत करो विचार॥
आनन्द सरूप शबद जो ध्याए। बौहड़ ना गरभ जून में आए॥
सतगुर मेल सत शबद पहचान। शबद कमावे जाए भरम की खान॥
शबद सार तत्त योग ज्ञान। शबद ध्याए पावे कल्यान॥

**साचा शबद अनहद धुन्न, अन्तर करे परकास।**
**'मंगत' मन निर्भय हुआ, पाए शबद घर वास॥ 189**

सत सरूप का करो विचारा। जनम जनम का जाए अन्धकारा॥
सत विश्वास ले मन पावे शान्त। सत की खोज सब जाएँ भरान्त॥
सत ही विद्या परम तत्त मान। सत की सेव पावे कल्यान॥
अन्तरयामी रूप आपारा। जो जन खोजे पावे निस्तारा॥
अगम निगम तिस का बरतान्त। तत्त ज्ञान ये सार सिद्धान्त॥
तिस बिन मनुआँ नित डहकाए। गरब ग़ुबार में आवे जाए॥
नाना जतन करे दिन राती। तो भी अन्तर भरम की टाटी॥
करम की फाँसी जाए ना मीत। अन्तरगत ना जानी रीत॥
अठसठ तीरथ अन्तर जारी। काया देवल की कर ख़बर गुज़ारी॥
भरम जाए सत रूप परकाशे। अनहद नाद सब गवन विनाशे॥
इरध उरध में सुरती राखे। बन्ध प्रान सतनाम रस चाखे॥
विरत त्याग मन निहचल होए। सत सरूप का निरनय चित जोए॥
अखण्ड अद्वैत निर्मल धारा। साखी शबद किया विचारा॥
गुपत भेद की सार पहचानी। अजर नाद परसे निरबानी॥

मन पवन सुरती बन्ध धारे। अगोचर शबद खोज निरधारे॥
अमरत जीवन तिसका होई। नाम निरंजन सुरत परोई॥
उट्ठत बैठत घाले घाल। पर-उपकार दीपक चित बाल॥
सरब निरन्तर एक पहचाना। दुबधा त्याग होए कल्याना॥
सेव सेव मन की मल खोए। अजर पुरष परापत होए॥
सार जुगत ये ही पहचान। इक चित राखें नाम ध्यान॥
सकली इच्छया प्रभ हेत में छोड़े। सत सरूप चरन चित जोड़े॥
बसे आकाश शबद सँग वास। निर्मल ज्ञान में कियो निवास॥
जीवन मिरतक सतनाम का आहार। सत कला परसे करतार॥

**दुबधा दुर्मत सब जाए, मन राखे सत विश्वास।**
**'मंगत' पावे परम पद, साधे तत्त अवनाश॥ 190**

अबनाशी खोज करो नित मीता। दुरलभ देह की निर्मल रीता॥
बिन सोधे नर पशु समान। तीन ताप में तपे अनजान॥
अगोचर पुरष परम सुखदाई। जो सेवे सो ताप वँजाई॥
कल्पत जाए पावे सतधामा। आलख पुरख केवल सतनामा॥
सत विसार नित ही दुःख धारी। छाया प्रीत से भई ख़वारी॥
सद वरखां का जीवन पाया। तो भी अन्धमत रहे तिरखाया॥
तृखा ना जाए लख करे उपाए। दुस्तर माया निस्तरनी अथाहे॥
सतपुरष का भेदी आवे। ज्ञान ध्यान दीपक जगावे॥
अजर पुरष की भगत करावे। ले भाओ परम गत पावे॥
मन पवन का मथना कीजे। जुगती योग अमीरस पीजे॥
उल्टी सुरती घर अन्तर आए। तीन भवन की सोझी पाए॥
सत सरूप अबनाशी देवा। प्रेम प्रीत से कीजे सेवा॥
सरब जगत का बिन्द विचारी। पिण्ड खोज के मिले मुरारी॥
अमरत रूप पुरख निर्वानी। खोजे विरला पण्डत ज्ञानी॥
इत उत सकल की सोझी आवे। एके वस्त सब माहीं दिखावे॥
नेम धरम का पावे पार। निष्काम करम कर होवे सचियार॥

अपनी ख़ुदी आप निवारे। साचे धाम में जाए पधारे॥
नीर का कुम्भ नीर समाई। अपनी आपे सोभा पाई॥
द्वैत भरम सब गयो ग़ुबार। अन्तरगत पाई तत्त सार॥
अनहद नाद अखण्ड चित ध्यान। विरले गुरमुख करी पहचान॥
जो जाने सो मुकत अनूपा। आप त्याग भयो आप सरूपा॥
पल पल छिन छिन इक नाम आधार। अखण्ड सुरत अन्तर माईं धार॥

**एको सिमरे नाम को, परसे सत सरूप।**
**'मंगत' साधन सार है, जाने गुरमुख भूप॥ 191**

एह बिध साचा नाम चितार। औगुन जाए भए निस्तार॥
उट्ठत बैठत निस्चय इक धारी। साचे नाम का भए पुजारी॥
स्वास स्वास सतनाम ध्यावे। करम त्याग निहकरम गत पावे॥
अच्छर नाम अबगत सरूप। सिमर सिमर तिस निर्मल रूप॥
अच्छर से निर-अच्छर होई। अनहद नाद तब परगट दरसोई॥
एको नाद धरे पिण्ड प्राना। एको नाम पल पल बखाना॥
कारन करता सरब का मूल। सम कर व्यापे सूक्षम अस्थूल॥
चेतन पुरष आपार अनामी। घट घट व्यापे पार स्वामी॥
सकले करम तज आज्ञा जगदीश। होए निहकरम पावे नाम तत्त ईश॥
तीन गुन माया का चक्कर विनासे। एको रूप अन्तर परगासे॥
अनन प्रीत इक नाम ध्यान। साचे गुरमुख करी पहचान॥
छिन छिन मन की दुबधा छोड़े। एके नाम अन्तर चित जोड़े॥
गरब निवार ग़रीबी पाए। तब साचे दरस की सोझी आए॥
इच्छया भय भरम सब नासे। निर्मल नाम अन्तर परकासे॥
दु:ख सुख में विरती इक राखे। साचा नाम अखण्ड चित चाखे॥
देह की रसना सकल मिट जाए। निरदेह पुरष तब परगट पाए॥
सुरती राखे जो नाम की धार। कभूँ ना व्यापे करम बकार॥
निहकरम सरूप नाद निर्वान। अन्तरगत में करी पहचान॥
संशय शोक मोह भरम चुकाया। साचे नाम का भेद तब पाया॥

बिन जीभा बिन मुख बानी होए। निहचल बुद्ध पहचाने कोए॥
हिरदे जापे नाम तत्त सार। बिन जीभा होंट के करे विचार॥
साचा जाप निरमल योग। जो पाए सो भए अरोग॥
अखण्ड विरत धारी समाध। सिमरे नाम सब जाए उपाध॥

**सब साधन की सार है, सिमरना नाम गोबिन्द।**
**'मंगत' पल पल जो जपे, बौहड़ ना धारे पिण्ड॥ 192**

चौसठ घड़ी हरी नाम ध्याओ। साचे ठाकर से पतियायो॥
एके नाम सब बन्ध छुड़ावे। आद पुरख का दर्सन पावे॥
भरम बकार सब संसय जाए। निहचल चित जब नाम कमाए॥
दुर्लभ कारज जुग जुग परवान। साचे नाम का चित करें बखान॥
नाम की महमा वेद ग्रन्थ। नाम की रसना सकले पन्थ॥
नाम का चानन सरब परकाश। नाम का सिमरन करे भरम विनाश॥
डोलन से अचल चित होए। सार जुगत हरी नाम परोए॥
एक नाम वरंच ध्यावे। एक नाम शंकर चित लावे॥
एक नाम सिद्ध तपीशर का मूल। नाम का सिमरन मेटे सब भूल॥
सकले दु:ख का ये सार उपाए। मिल सतगुर सतनाम ध्याए॥
अन्तरगत नाम जिस पाया। निराकार का भेद लखाया॥
जप तप पूजा संजम ये ज्ञान। प्रभ का सिमरन आवे चित ध्यान॥
जिस मन अन्तर नाम परगासा। इच्छया दोख भयो सब नासा॥
मन की विरती भई निरोध। खल ममता सब हरी बिरोध॥
खिमा दया चित आया वास। निर्भय सरूप अन्तर परगास॥
धरम करम में पाई मत पूरी। धरम जीवन लयो सिदक़ सबूरी॥
अट पट औघट घाट इक नाम। पवन पावक में करे बिसराम॥
साचा सिमरन ले उमडे उपकार। प्राकिरत दोख सब किए निवार॥
झूटी देह का जाए गुमान। केवल नाम प्रभ करी पहचान॥
द्वन्द विकार करम मल नासे। जाप अजपा सच योग परगासे॥
अपने जीवन की जानी नर सार। साचा पुरख नित कियो विचार॥

नाम बिना जो पलक वँजाए। सो ही मूढ़ा अन्धगत पाए॥
मिथ्या नाम रूप अन्धकार। साचा सिमरन सब हरे विकार॥

**साजन जापो नाम को, जो नित आनन्द की खान।**
**'मंगत' नाम तत्त सार है, जो केवल मुकत निधान॥ 193**

सत साधू का कीजे संग। जाँ से चढ़े नाम का रंग॥
मोह माया से जो भए विरक्ता। साचे नाम चित ले संजुगता॥
अन्तर चित जिस पाया वास। इन्द्रीजीत पुरख निरवास॥
सकले दोख मन भरम त्यागी। सत साधू पावे वडभागी॥
तिसके संग मन सूचा होए। जरा मरन की भरमन खोए॥
अजर सरूप पर आवे विश्वास। तत्त ज्ञान नित जुगत बिलास॥
मिथ्या देह से मन उदासे। साचा नाम तब अन्तर परगासे॥
दीन दुनी दोनों ले जीत। साचा बचन चित धरी परतीत॥
अपने मन की नित दुबधा टारे। सेव बन्दगी अन्तर माहीं धारे॥
सब से मन को राखे नीचा। भाओ भगत वैराग जल सींचा॥
अपने मरने का करे विचार। मर के जीवे पावे तत्त सार॥
सतगुर पूरे की राखे ओट। हरे बकार भरम चित खोट॥
निस दिन कारज ये परवान। पल पल सिमरन कीजे भगवान॥
अपने अन्तर में लीन समाए। साचे ध्यान में नित बुद्ध जगाए॥
हंग बुद्ध जाए जम की फाँस। करमफल इच्छया होए विनास॥
सत तत्त शबद अनूप। परगट पाए हरे बिख कूप॥
निहचल धरमी ये धरम विचारा। लोभ मोह मध हरे बिकारा॥
सच सियानफ़ मरन क़बूल। अमरत शबद सुरत सम्भूल॥
अपने घर में जाए कियो ठकाना। एको देखा विच तीन जहाना॥
समदृष्ट अनहद नाद। जुगजुग रमया आप बिस्माद॥
अगोचर बानी घट परगट लीनी। जप तप ज्ञान से पाई ऊँच शरेनी॥
निर्मल धाम पारब्रह्म अखण्ड। सतगुर जुगत से भई जोत परचण्ड॥
काल त्याग चित भया अकाल। घट पट देखा दीनदयाल॥

**आनन्द मंगल होया, गई दूषना भाग।**
**'मंगत' सेवा साध की, रहो चरन में लाग॥ 194**

सतनाम का सिमरन तत्त सार। जो सिमरे सो होए निस्तार॥
सतनाम जुगत का मूल। व्याप रिह्या सूक्षम अस्थूल॥
सतनाम सरब परकासी। सतनाम आद अबनासी॥
सतनाम सब जीवन आधार। चारखानी को करे बिस्तार॥
बावन अक्षर से रहे न्यारा। रूप वरन नहीं जिसका आकारा॥
पढ़न लिखन में नाही आवे। निर-आधार सरूप समावे॥
मन बानी से परले पार। सतनाम एक नरंकार॥
सकल जगत आदी सो नाथ। जो परसे तजे भरम का साथ॥
वेद ग्रन्थ सब तिसका प्रकास। चार बानी तिसका अजलास॥
सरब खण्डों से ऊँचा धाम। सतनाम जहाँ बसे अनाम॥
मन बुद्धी की भरमन तब जाए। सतनाम की रसना चित गाए॥
निराकार रूप वरन नहीं रेख। सतनाम का सुन साचा लेख॥
सरब अतीत अगोचर बानी। अपने आप रमे निरबानी॥
नित परकास नहीं द्वन्द बकार। सतनाम सो तत्त विचार॥
नाम रूप ये सकल संसारा। पाँच तत्त का सकल बिस्तारा॥
तीन गुन माया बहु रंग वटाए। नाना नाम रूप उपजाए॥
जैसे नाम ऐसे ही रूप। अचरज देख मोहे गुनी मुनी भूप॥
सब के बीच करे परकास। सतनाम बानी आकास॥
मिथ्या नाम रूप जाए बकार। सतनाम मेल जुगत विचार॥
इच्छया भरम सब दोख भए दूर। सतनाम घर बूझे हज़ूर॥
बिन सतनाम मन नित बकारी। बिन सतनाम मन नित अहंकारी॥
बिन सतनाम नहीं उज्जल नीती। बिन सतनाम मन भरी पलीती॥
बिन सतनाम नहीं संसय जाए। लख चौरासी जून भरमाए॥

**सतनाम नित गाइयो, जो सरब करे परकास।**
**'मंगत' जीवन जीविया, पाए सतनाम विशवास॥ 195**

जब लग सतनाम नहीं जाता। तब लग तीन गुनों में भरमाता॥
वारपार नहीं सूझे सार। बिन अबगत रूप सतनाम विचार॥
बिरह वैराग जब अधिक चित आए। मिथ्या जग देख चित उदासी पाए॥
सतगुर पूरे दीनी पूरी जुगत। सतनाम परकासे पद जीवन मुक्त॥
ऐसा नाम अपरम अपारा। जिसका सिमरन करे निस्तारा॥
जब लग मन में राखे अहंकार। तब लग परखे नहीं नाम की सार॥
जब लग अन्तर दूजा भाओ। तब लग नहीं नाम तत्त पाओ॥
जब लग अन्तर इच्छया दोख। सतनाम नहीं परसे निरदोख॥
जब मन राखे बाहर की धिरना। सतनाम नहीं बूझे निरना॥
जब मन अन्तर विरत अनेक। अबनाशी नाम का नहीं परसे लेख॥
जब मन धारी इच्छया भोग। साचा नाम नहीं मिले तत्त योग॥
मुख से कथनी जितनी कथनावे। सार तत्त का भेद नहीं पावे॥
तीरथ बरत जन्तर और किरया। बिना ज्ञान नित भरम में फिरया॥
परबत कन्दरा उजाड़ बीबानी। गुरमुख भेद बिन नित उल्ट पहचानी॥
धोती बस्तर तिलक को धारे। अर्चन पूजा बहु बिध विचारे॥
नित गायत्री का करे निध्यास। तत्तज्ञान बिन नहीं कटे जम फाँस॥
बाहरमुख हो नित दु:ख पावे। करम का बाँधा नित आवे जावे॥
नाना रंग रूप दरसावे। देख देख नित ललचावे॥
आपद माहीं बहु जनम विताए। माया चक्कर में रहे भरमाए॥
इन्द्री भोग इच्छया मन धारी। अनक भाँत संचत संचारी॥
खाना पीना विषे विकार। सोवन जागन सब जग दी कार॥
बाल जवानी जरा देह आवे। काम क्रोध नित अगन जलावे॥
आस में जनमे आस में जाए। आस आस में नित तिरखाए॥

**अधिक बिपत इस जीव को, बिन तत्त ज्ञान विचार।**
**'मंगत' भरमे छिन छिने, राख दुरमत विकार॥ 196**

लख चौरासी जेते जन्त। मोह माया में सभी तिरखन्त॥
दु:ख की शयन करे दिन रात। बिख को खावे नित कमज़ात॥

अधिक तृष्ना लागा रोग। कैसे जाए बिन गुर संजोग॥
राजा राना दलिद्री धनवादी। भरम की दूखन लागी उपाधी॥
काया काची बहु नाच नचावे। दुर्मत बाँधा नित आवे जावे॥
बड़ी चतराई मन में राखे। ठौर ना सूझे नित भरम को भाखे॥
पढ़ पढ़ डूबा वेद ग्रन्थ। साचे नाम का नहीं घाला पन्थ॥
जो कीजे सो करम का जाल। पाप पुन्न बहु कीजे भाल॥
करम का बाँधा नित भरमाए। माया अदभुत खेल खिलाए॥
सार तत्त सुनयो ये मीता। जग तरन की निर्मल रीता॥
देह पिण्ड सब ख़ाक की धरया। सत पुरष निरन्तर पसरया॥
तिस पुरष का भेद जो ध्याए। मिटे चक्कर शान्त गत पाए॥
निरालम पुरख अपरम अपार। बिना जुगत नहीं पावे सार॥
साची जुगत सतगुर की दीख्या। सतनाम अन्तर परीख्या॥
साचे नाम का जब पाया भेद। निर्मल बुद्ध हरे दुःख छेद॥
वेद ग्रन्थ सन्तन ने गाया। सतनाम जप पुरख निरमाया॥
केवल एक ओट तिस राख। निर्मल नाम अन्तर में चाख॥
साचा नाम स्वास स्वास नित गाओ। कारन करता प्रभ चित माईं ध्याओ॥
झूट देही का गरब निवारो। प्रेम प्रीत से कर सेव विचारो॥
परम समरथ सो पुरख अनूपा। सिमर सिमर निज आद सरूपा॥
दीन दुःखी पर करो उपकार। हरो विखाद दुर्मत बिख छार॥
सत जतन ये ही चित राखो। निर्मल नाम सहज सुरत में भाखो॥
सब जग छाया सम कर पेखो। सत सरूप केवल हर देखो॥

**अनन प्रीत सिमरन करो, साचा पुरख आपार।**
**'मंगत' पावे परम गत, नित चरनी बलिहार॥ 197**

स्वास स्वास सुरत इक नाम को जापे। उलटी सुरती अन्तर में थापे॥
निमख निमख कर सेवे दयाल। एक स्वास नहीं पलक चित टाल॥
दृढ़ निस्चय धारे इक नाम। उरधकँवल परगासे अनाम॥
नाभकँवल में धन्दूकारा। उलटी नागन करो विचारा॥

प्रान अपान दोऊ सम कर राखे। केवल सुरती नाम प्रभ चाखे॥
अखण्ड चित परसे ब्रह्म नाद। ऊँच दृष्ट देखे बिसमाद॥
सुखमन नाड़ी घर नाद नित बोले। चढ़े आकास अमरत रस तोले॥
तीन भवन का खोले द्वार। अटल जोत देखे नरंकार॥
गरजे मेघ उनमुन के तीर। जो जाए रमया सो ही फ़कीर॥
पाँच तत्त का सूल सब हरया। शबद ब्रह्म अन्तर चित धरया॥
शबद बोले सुन्न शिखर की धार। निरदेह रूप का लखा पसार॥
केवल शबद अखण्ड आनन्द। अदभुत जोत भई परचण्ड॥
छिन छिन पुरख अनूप अपारे। सब कुछ तिसका हुआ विचारे॥
आपा मिटे परम तप धारी। साचे शबद की सोध विचारी॥
एक सुरती शबद रस पीवे। सतनाम तब ही परखीवे॥
उट्ठत बैठत करे अरदास। गुनातीत पुरख निरवास॥
ईड़ा पिंगला सुखमन नाली। तीनों मिलें ऊपर तिरनाली॥
निस दिन साचा योग कमावे। माया दुर्मत रोग वँजावे॥
साचा रूप अखण्ड आनाद। सरब घट रमया अनन्त बिस्माद॥
उलटी सुरती ब्रह्मण्ड को फोड़े। शबद योग दर दसवाँ तोड़े॥
अनहद नाद गरजे उरध कपाली। दमके दामन कोट भान उजयाली॥
चानन देख मन होए परसन्न। सतनाम का पायो सत धन्न॥
खिमा दया सत सील घर आया। सत सरूप आतम तत्त पाया॥

**परम पुरख को पाया, हरया कूड़ विकार।**
**'मंगत' साचे रूप सों, नित जाऊँ बलिहार॥ 198**

दर्सन पाए परसन्न होवे। दुर्मत ग़ुबार सकलो चित खोवे॥
जाँ से बिछड़ा ताँ जाए मिलाए। परम आनन्द के नित गुन गाए॥
काल कल्लो से भयो अकाल। आप त्याग के भयो निहाल॥
सकली आपद इच्छया दुःख नास। सत सरूप संग सुरत बिलास॥
अगन जाए मन ठाँडा होए। एको शबद चित बुद्ध परोए॥
भरम कल्पना से भए अडोल। सतनाम का पावे जब तोल॥

धन्न भाग सो जीव जग आया। सतनाम का सार लखाया॥
गाओ सन्तो नित सारँग बानी। अद्भुत रूप विच देह पहचानी॥
सकल विकार दूषना नासे। सतनाम की करो अरदासे॥
सरब जीयाँ में एको दरसावे। सुरत अडोल सतनाम ध्यावे॥
दुस्तर माया से निस्तर पाए। सतसरूप का सिमरन आए॥
सब से ऊँचे धाम को पाए। काल करम जाँ व्यापे नाहे॥
परम परसाद ये साचा नाम। जिसको खाए पाया बिसराम॥
एके नाम प्रेमी चित आया। एको नाम में रहे समाया॥
निर्मल सुरती सिमरे विवेक। करम त्याग पावे सत लेख॥
निहकरम सरूप आतम परकास। सदा अजनमा नित अबनास॥
जिसके अन्दर ये सार परकास। तत्त परबीन सो पुरख निर्वास॥
अपने मन में रहे गम्भीर। सत ध्यान नित रमे शरीर॥
रग रग अन्दर अनहद तूर। द्वैत भरम भयो काफ़ूर॥
पूरन गुर से पाए तत्त योग। प्रेम से घाले भए अरोग॥
सदा निरालम शबद चित धारी। सकली मिट गई करम की खारी॥
साचा नाम जापो नित नीत। छाडो जग की कूड़ परीत॥
पलक ना विसरो सो अज अबनाशी। नित आनन्द अखण्ड सुखरासी॥

**परम भगत को पाय के, परस लयो सतधाम।**
**'मंगत' आपे आप में, मेल भया सतनाम॥ 199**

सत सरूप की करो अरदास। जनम जनम की जावे जम फास॥
आदी सत अन्त भी सार। सत सरूप जग सरजनहार॥
तूँ साचा पुरख नित परधाना। तुमरी सेव करे कल्याना॥
नित माँगू तुम से धूड़। तेरे नाम में रहूँ मख़मूर॥
तुम ही दयाल तुमरी है टेक। दीनदयाल अबगत अलेख॥
तन मन वारूँ तुमरे चरना। दर्शन दीजो तुम कारन करना॥
अनन प्रीत माँगू नित सेवा। सेवो दयाल देवन के देवा॥
अपनी सोभा बल अन्तर परकासो। भरम बकार माया बिख नासो॥

साचा धन दीजो मोहे स्वामी। सदा भिखारी दर पारगरामी॥
मन का सकला बन्धन छेदो। परगट होकर हरो सब खेदो॥
धीरज दया सत सील प्रभ दीजो। उपरस जीवन सार लखीजो॥
परतक्ख होके दर्शन परकासो। जड़ बुद्धी मल सब ही नासो॥
तुम सरब कला पूरन पुरखोत्तम। तूँ सरब आधार पुरख अनूपम॥
तूँ अबगत अगोचर अगामी। तूँ आलख आपार अनामी॥
तूँ सरब जियाँ की है कल्यान। तूँ सरब-आधार पुरख भगवान॥
हस्ती कीटी अस्थावर धारी। जंगम आद का तू ही मुरारी॥
पवन पावक नीर समेरा। अम्बर ताने धर रूप गम्भीरा॥
चारखानी को नित परकासे। तूँ अडोल अचाहक पुरख अबनासे॥
तेरी महमा का नहीं शुमार। जल थल मंडल तेरा बिस्तार॥
अपना कौतक आपे नित धारे। इत उत माया करी बिस्तारे॥
सरब के भीतर सब से न्यारा। बिस्माद पुरख अखण्ड आपारा॥
जाँ देखाँ ताँ एक दिखाया। तूँ सत सरूप पुरख निर्माया॥
गुनी ज्ञानी भगत आचारी। सिमरें पल पल तुध रूप अपारी॥

**अनन्त सरूप हो पसरया, तूँ एक पुरख अलेख।**
**'मंगत' माँगे नाम रस, बख़शो प्रभ सत भेख॥ 200**

नमस्तं पुरख अरंग अनामे। नमस्तं आद अनील अजामे॥
जो जो करे तोहे नमस्कार। तिस जन की होवे जयकार॥
भूत प्रेत की गवना नासे। डायन डंच सब जाएँ पशाचे॥
सकले रोग सोग हरावे। निमस्कार जो नित चित पावे॥
अपने ठाकर की करो जयकार। नरक कुण्ड ना परसें सार॥
साचे नाम का सिमरन अन्त जो कीजे। सतलोक की रसना पीजे॥
ऐसा नाम परम सनेही। तिसे विसार अन्ध बुद्ध लेई॥
पलक पलक कर पूजो सो देवा। निमस्कार कर होवें निरभेवा॥
निर्धन को छिन करे धनवाना। पिंगू पुरख को करे बलवाना॥
गूँगे को अकथ कथा कथावे। अन्धा तीन लोक का दर्शन पावे॥

रोगी सोगी होवे सुखवादी। सूखे तरवर फल लाए आगाधी॥
जल माहीं थल को परगासे। नाना जन्त तिसमें उपजासे॥
एक बूंद से कियो बिस्तारा। आदी अन्त तूँ एक नरंकारा॥
जड़ चेतन में रह्या समाई। अपनी शकत सब में दिखलाई॥
देख देख वडयाई आपार। बारम्बार कराँ निमस्कार॥
लख सिद्ध तपीशर शिव गौरी आद। लख ज्ञानी तत्त खोज करें बिस्माद॥
चतरमुख ब्रह्मा नित सेवा धारी। करूँ निमस्कार नित आपार मुरारी॥
निमस्कारं निमस्कारं निमस्कार। नित ही नित वारूँ सद् वार॥
साचा ठाकर तीन लोक का साखी। सतनाम अद्वैत अचाहकी॥
बारम्बार करो डण्डौत। दृढ़ कर राखो तिस की ओट॥
दरिन्द चरिन्द सरब का स्वामी। चराचर भूत में बसे अनामी॥
नित ही ध्याओ नित करूँ दोहाई। तिसका सिमरन सब खेद मटाई॥
करम सकले तिस आज्ञा में छोड़ो। प्रेम प्रीत चरनी चित जोड़ो॥

**आज्ञा मानो साहब की, तन मन होए ख़ुशहाल।**
**'मंगत' जीवन जगत में, एको ये ही कमाल॥ 201**

अपने प्रीतम से प्रेम नित कीजो। आद अन्त अमीरस पीजो।
सेव बन्दगी धारो चित माहीं। अन्तकाल जम आवत नाहीं॥
सूखी देह को सरजनहार। नित ही तिसकी करो जयकार॥
जयजयकार आपार अनामी। निमस्कार नित पारगरामी॥
नित ही नित चरनों की धूड़। दास को राखें विच चरन हज़ूर॥

अपरम तूँ अपार तूँ, तू ही सरब का पीव।
तू ही रखयक तूँ ही भक्षक, तू ही सरब का जीव॥
दीन बन्दगी माँगयो, दीनदयाल से नीत।
स्वास स्वास सिमरन करो, ला के प्रेम परीत॥
कलह कलेश संकट जाए, आनन्द मंगल होए।
प्रभ अपना सिमरन करे, व्याध ना व्यापे कोए॥
बारम्बार चित में धरो, साचा पुरख अनूप।
तिस का सिमरन सार है, सुनो गुनी मुनी भूप॥

तूँ परमेश्वर अपरम आपार, नित आनन्द की खान।
सतगुर पूरे की सेव से, घट में लो पहचान॥
अन्तरगत सिमरन करो, शबद ब्रह्म अनाद।
सुरत शबद के मेल से, नित ही रमें समाध॥
निराकार निरालम, निरद्वन्द निरवान।
साचा तिस का नाम है, कर हिरदे माहीं पहचान॥

**खिमा ग़रीबी दीनता, दीजो मुझको देव।**
**'मंगत' करे ये बेनती, पल विसरे ना तुमरी सेव॥ 202**

मिल सतगुर सत तत्त विचारो, जाए भरम ग़ुबार।
बिना सत विचार के, निस दिन दुःख अपार॥
सत संगत की सार है, सत सरूप विचार।
संगत साची जब मिले, तन मन हो बलिहार॥
सत खोजन विश्वास दे, मनसा भए इस्थीर।
सत विचार सकल दुःख नासे, उपजे शान्त शरीर॥
सत की खोज से बंधन नासे, मन पावे बिसरामा।
सत ध्यान परम पद देवे, विरत होए निषकामा॥
सत ही जीवन जीवन पूरा, गरभ जून करे नासा।
निराधार सरूप समावे, अटल जोत परकासा॥
सत ही माहीं ज्ञान ध्यान, और बिरह विवेका।
सकल विकार नासे इस मन के, पाया रूप अलेपा॥
सत ही से नर उद्दम उपजे, सकल दलिद्दर नासे।
सत अर्थ का साधन पावे, नित सतनाम बिलासे॥
सत ही केवल रूप पहचाने, तन मन तिस में वारे।
दुर्लभ देह मानुष की होई, साचा कियो ब्यौहारे॥
सत ही मूल सरब परकाशे, इत उत रहे समाई।
चारखानी को सरजनहारा, एको पुरख आगाही॥
सत आधार पवन और पावक, अम्बर नीर समेरा।

हस्ती कीटी जंगम अस्थावर, ज्ञानी गुनी गहीरा॥
सत आधार ग्रन्थ कतावें, मत मतान्त पन्था।
नीती ज्ञान विचार विवेक, नानाँ भाँत की सन्था॥
सत की आस में जतन बहु कीजे, धन भूमी को धारे।
सत की आस में गुनी ज्ञानी, वेद ग्रन्थ पुकारे॥
सकल सामग्री का ताना तनया, एके मूल पहचानो।
अबगत लीला साहब राची, मन तन सेव बखानो॥
सत के कारन बनया त्यागी, तप तपीशर धारे।
नानाँ जुगत धरे दिन राती, केवल सत विचारे॥
सत को खोजे सो गुर आचारी, सो ही नबी अवतारा।
सत का साधन सार जगत में, मिटावे सकल विकारा॥
सत के कारन तीरथ नियम, यज्ञ पुन्न और दाना।
सेवा साधन हिरदे धारे, गुरमुख सत समाना॥
सत विचार के भयो त्यागी, राज सिंघासन छोड़े।
गौतम भरतरी गोपीचंद जाए, बसे बीबान अघोरे॥
सत के ताईं दाता होया, हरीचंद सत दानी।
राज त्याग के लेई ग़ुलामी, जाए शमशान करी निगरानी॥
सत को राखे मोरधज ज्ञानी, पुत्तर कियो बलिदाना।
भगत प्रहलाद सहवे डंड भारी, मन साची सार पहचाना॥
सत के ताईं दशरथ पुत्र, राम भयो बनबासी।
सत का जीवन सीता धारे, करी दैतकुल नासी॥
सत विचार के निरदेह हुआ, राजा जनक ज्ञानी।
मुनी सुखदेव त्यागी माया, गरभ में सत पहचानी॥
सत विचार के भसम लगाई, कैलाश का भयो निवासी।
गौरजाँ निसदिन सेवा कीजे, धारी समाध अबनासी॥
सत का मण्डन पाखण्ड खण्डन, सतपुरष जग आए।
पाप विखाद का नाश करन ते, केते दुःख उठाए॥

**सत ही सार जगत में जानो, परम आनन्द सुखरासी।**
**'मंगत' सत कमावे गुरमुख, कटे करम की फाँसी॥ 203**

सत के कारन ज़हर प्याला, पिये गुनी सुक़रात।
मीराँ साचा जीवन पाके, बिख अमरत सम खात॥
सत का जीवन ईसा लीना, सूली चढ़ सुख पाया।
और चढ़े मनसूर ज्ञानी, जिन साचा जीवन ध्याया॥
इब्राहीम अगन में बैठा, सत तत्त का भरवासी।
सत की खोज चढ़े कोह तूर, सुने शबद अबनासी॥
सत परतीत से पाया सत जीवन, मरन भय सब नासा।
एको देखा तीन जहानी, जिस का सकल तमाशा॥
जती सती त्याग बैरागी, और गुरु सिख भेखा।
सत कथा सब ही विचारें, पावें सत का लेखा॥
जिनाँ सत परापत होया, मरन किया क़बूल।
मर के जीवन जग को दीया, मटाई भरम की भूल॥
दीन ग़रीबी सेवा साधन, अनन भगत चित धारी।
पीर वली क़ुतब और गौ़स, सब सत के भए पुजारी॥
मानुष देह दुर्लभ जग माहीं, जो सत सरूप मिलाए।
बिना सत परतीत के, नित जीया दुःख पाए॥
सत का भेद अपरम अपारा, पावे कोई ज्ञानी।
झूट विकार सकल चित त्यागे, एके सार पहचानी॥
बादमुबाद सकल बिख त्यागे, एक नाम चित गाए।
मन अपने का साधन कीजे, दुर्मत मैल हटाए॥
तन झूटा मन झूटा, ये माया का विकार।
सरजहार सत रूप है, हिरदे करो विचार॥
हाड-मास का पिंजरा, मल-मूतर की खान।
पवन करे परकास नित, छीजे आन की आन॥
नौ द्वारे का रस भोगी, नित दुःखिया ये जन्त।
प्रान छीजे काया कुमलाए, पलक होवे भसमन्त॥
नैन नासका जिभ्या कान, नाक की धारी सुद्ध।

पलक पलक बल जात है, अन्त होए बेबुद्ध॥
माटी केरा पिंजरा, अन्त को माटी होए।
सरजनहार पहचान कर, जनम ना जुए खोए॥
जोर ज़ुलम कमा गए, अन्त भए मुरदार।
क़ारूँ और सिकन्दर, कहाँ फ़रऔन सरकार॥
राज तेज की आस में, जीवन दियो गँवाए।
माटी का क़लबूत ये, गयो माटी समाए॥
धरती के मालक बने, अन्त धरत गई खा।
महल अटारी कोट गढ़, छाड के धूड़ समा॥
चार दिनाँ का जीवना, आसा वरख हज़ार।
एक पलक नहीं शान्ती, नित भोगे भोग आपार॥
ना राजा ना राना, ना रहे मीर ग़ुलाम।
ख़िलजी ग़ौर और मुग़ल दा, देवे कौन पैग़ाम॥
झूटे इस भरवास में, उठ के होश सँभाल।
करनी साची कर लयो, सिर पर गूँजे काल॥
साचा रब पहचान कर, पावें अजब सुराज।
जाए विखेपत जीव की, मिले राज-अधिराज॥
शाहों का जो शाह है, सरब कला जिस हाथ।
सिमरें भाओ प्रेम से, सेवें नाथों का नाथ॥

**ठाकर साचा जान कर, नित ही ध्याओ मीत।**
**'मंगत' सिमरन सार है, बाकी कूड़ परीत॥ 204**

प्रेम से संगत गायो, साचे धरम का गीत।
ये मन कुटल कठोर है, धरम से होए पुनीत॥
साची संगत साचा धरम, नित ही साच विचार।
सच कमावन जगत में, मानुष देह की कार॥
बिना सच परतीत के, परसे ना सुख सार।
लागी विषे की अगनी, जल जल भए अँगयार॥

सब संसार है दु:खिया, लाख करोड़ी मीत।
जिस के मन विश्वास नहीं, सो ही नर बदनीत॥
साचा धरम कमाए लो, पावें सुख घनेर।
मिटे करम की वासना, और चौरासी फेर॥
सब जीवों से हेत रख, दिल से वैर त्याग।
साचा प्रेम परगट कर, दुर्लभ पावें भाग॥
सो ही नरकी जीव है, जो मन में राखे वैर।
आठ पहर जलता रहे, नित वरतावे क़हर॥
धरम करम सब नष्ट होए, सकला तेज विनास।
कुल जाती और देश को, ये वैर करे नित नास॥
धनी दलिद्री हो जाए, राज तजे नरेश।
सकली सम्पत नष्ट होए, जाँ वैर करे परवेश॥
शक्ती सब ही मिट जाए, मन होए अन्त चोर।
साचा प्रेम विसार के, जाए चौरासी घोर॥
माया रूप ये बाद है, प्रेम रूप गोबिन्द।
जिस के मन प्रेम नहीं, दु:खिया तिस की जिन्द॥
बुद्धीमान सो आखिए, सो ही नर कुलवन्त।
सो ही शक्तीमान है, जो तजे वैर कलंक॥
सो ही जान धर्मातमा, सो ही ज्ञानी होए।
बाद विखाद जिसने तजा, हिरदे प्रेम परोए॥
माला फेरे प्रेम की, पर दु:ख हरना कार।
दीन ग़रीबी भावना, ये साचा धरम विचार॥
सो ही जन चण्डाल है, जो राखे कपट का भेख।
देश धरम का नाश करे, उलटा धारे लेख॥
चार दिनाँ की खेड है, इस जग में जीवन मीत।
साचा रूप नारायन का, नित राखो मन परतीत॥
जिस दर बाजत नौबताँ, होवें छतीसों राग।
उज्जड़ खेड़े हो गए, बोलें वहाँ पर काग॥

जो आया सो जाएगा, राजा राना मीर।
निकले प्रान जब देह से, ओढ़े कफ़न सरीर॥
महल अटारी ना सँग चली, ना चली वडी जागीर।
करनी अपनी सँग चले, खोल नैन मत धीर॥
साची सम्पत धरम की, नित ही घालो मीत।
परम शान्त संसार में, एक धरम की प्रीत॥

**लख चौरासी जीव में, सो ही जन परवान।**
**'मंगत' धरम विचारना, जुग जुग अटल निशान॥ 205**

अधिक तिस की कान्ती, जिस मन धरम विचार।
सो ही ज्ञानी सो ही गुनी, सो ही जान अवतार॥
साचा धरम विचार से, चित आवे विश्वास।
करम अकरम की सोझी मिले, निर्भय लेवे वास॥
इस सागर संसार में, सुनयो सार उपाए।
हिरदे धारो नाम को, और जीव दया कमाए॥
दु:खी दीन की सेव कर, प्रभ का हुकम पहचान।
जिस ने सब कुछ दीया, तिस की सिफ़्त बखान॥
माटी केरा पिंजरा, जो नित सरजनहार।
राखो तिस का प्रेम चित, पावें नित जयकार॥
पर-उपकारी जीवना, हर की राखें टेक।
तन मन होवे उजला, सुन साचा ये विवेक॥
पुन पाप दोनों तजो, हर की आज्ञा माहीं।
निज ठाकर साचा जान के, प्रेम प्रीत चित लाईं॥
जब लग सार ना ध्याइए, बिनसे नाईं विकार।
बाँधा करम की जेवड़ी, फिरे चौरासी सार॥
साचा नाम गोबिन्द का, नित ही धरो ध्यान।
समाँ फेर ना आएगा, काल करे नित हान॥
ना सखा ना संग कोए, अन्त को मरती बार।

साचे इक भगवान को, हिरदे माहीं विचार॥
बारम्बार विचारया, जग रहना नाईं मीत।
वैर बदी को त्याग के, सब से रक्खो प्रीत॥
प्रेम साहब का रूप है, सकल मटावे ताप।
मन मन आवे शान्ती, बढ़े अधिक परताप॥
एको प्रेम की धारना, सभी गुनियों का ज्ञान।
जिस के मन प्रेम नहीं, सो नर पशु समान॥
यज्ञ दान तपस्या, सब का एह फल जान।
मन में आवे दीनता, हरे भरम गुमान॥
जिस के मन में भय भया, सो ही पावे भाओ।
भाओ से भगती मिली, दुस्तर जग तर जाओ॥
सो ही पण्डत वेद का वक्ता, जिस का मन निर्मान।
राखे हिरदे प्रेम इक, सेवे सच भगवान॥
शत्रू को सुख देवना, मन का हरे विकार।
साचा प्रेम ताँ जानिए, जिस का ये विचार॥
मन वैरी को ठाकना, सत मारग धरम पहचान।
जीत पावें संसार से, लें साचा मोक्ष निर्वान॥

**जतन जतन कर राखयो, साचा एक प्यार।**
**'मंगत' मिटे सब दूषना, जब संगत साच विचार॥ 206**

महाँ बलकारी महाँ तेजस्वी, सो ही जग में होए।
साची भगती प्रेम को, जो नित हिये परोए॥
कुल जाती का मान तज, साचा करम पहचान।
दुर्लभ जनम संसार में, मानुष का ये जान॥
सत सील और सादगी, हिरदे धर उपकार।
खाटो लाभ इस देह का, जो अन्त होवेगी छार॥
साचा सुख संसार में, सब जीवों की सेव।
तपन मिटे सब जीव की, हरखत भए गुरदेव॥

जप तप संजम साधना, तब ही पूरन होए।
दृष्टी आवे एक जब, मैल दुई की खोए॥
अखण्ड रूप नारायन, जल थल रह्या व्याप।
तब ही पावें भेद को, जब तजें भरम का ताप॥
काची देह का पिंजरा, होवे इक दिन राख।
करना है सो कर लयो, अन्त होवें अनाथ॥
धन जोबन के मान में, क्यों नर अन्धा होए।
तेरा कुछ ना जगत में, जाए खाली हाथ बसोए॥
पुत्तर धीया ना साक संग, ना नाती ना परिवार।
चले अकेला अन्त को, जब जमराज पुकार॥
रोता आया जगत में, अन्त को रोता जाए।
जो जन्मे सो थिर नहीं, सब काल चक्कर में आए॥
करनी साची कीजियो, जो अन्त होवे सुखरीत।
ऐसा बीज ना बीजियो, जो काटन में दु:ख देत॥
रंग तमाशे छाड के, मन में हो हुशियार।
साचा पन्थ अगम का, नित ही खोज विचार॥
बाल जवानी और जरा, गई सभी को खाए।
कूड़ा धर भरवास नर, अन्तकाल पछताए॥
छाड बख़ीली मन से, करता राम विचार।
तेज बल ना रहेगा, अन्त को मरती बार॥
जावन जावन सब करें, पर भेद नहीं कछु ठौर।
कहाँ से आया कहाँ जाए, संशा बड़ा अघोर॥
आद की कछु सुध नहीं, ना अन्त का किया विचार।
संशे में औधी गई, पाई ना कछु सार॥
मरना तो निस्चे होए, जो जीवे वरख हज़ार।
मरने से पहले मरे, ले तत्त ज्ञान विचार॥
साचे गुर का मेल कर, पावें सार विचार।
प्रीती उपजे नाम से, और भाओ भगत चित धार॥

सतधाम पद आनन्द को, नित ही जापो मीत।
सुफल जनम संसार में, जो बूझे ऐसी रीत॥

**सत करनी सत रहनी, सत में जीवन त्याग।**
**'मंगत' सूरा जगत में, कोई आया ले वडभाग॥ 207**

साची भगत मुकत की दाती, हिरदे माईं विचार।
बिना भगत ना छूटिए, भवजल दुस्तर अपार॥
करम का संसय नित घना, करे जीवन को घात।
कोट जनम भरमत फिरे, पावत ना नर वाट॥
जतन करे बहु भाँत के, मन नहीं पावत शान्त।
संशे में ही चल बसे, बड़े गुनी गुनान्त॥
राजा दुःखिया परजा दुःखिया, दुःखिया साध दरवेश।
देह धारी जो आया, तिन को घना कलेश॥
जनम मरन और इच्छया दोख, ये ही बड़ा सन्ताप।
सकल जगत जलता फिरे, अदभुत माया ताप॥
क्या धनी क्या दलिद्दरी, क्या राजा क्या रंक।
चारखानी के जीव को, लागा भय कलंक॥
सुख की खोजत खोजते, सकल औध वँजाए।
नानाँ सम्पत पाये के, तो भी तृखा अधिकाए॥
परवारी भी दुःखिया, निरपरवारी दुःख के माईं।
गुनी ज्ञानी चतर बुद्ध धारी, तीन काल दुःख पाईं॥
जाँ से पूछूँ सुख की, पहले देवे रोए।
अचरज माया भगवान की, सभी जीव दुःख जोए॥
क्या गृहस्ती क्या विरक्ती, सब घट लागी आग।
काल करम के जाल में, नित बाँधा अभाग॥
चौदह भवन की सम्पत, जो घर आवे मीत।
तृष्ना मिटे ना बावरी, जो नित दुःख की रीत॥
भोगता भोग की आस में, रहे जीव दिन रात।

भोग भोग नहीं धीर है, उठ चला भरमात॥
अदभुत माया चक्कर में, मोहे दानव देव।
रचना ये बिसमाद है, पारावार नहीं भेद॥
आसा माईं जन्मिया, आसा में मर जाए।
बाँधा आस की जेवड़ी, कोट जून भुगताए॥
पण्डत ज्ञानी क़ाज़ी आलम, जो देखन में आए।
मोह माया के चक्कर में, रैन दिन भरमाए॥
खट-रस व्यंजन नित करे, जीभा नहीं तृपताए।
छिनभंगुर ये भोग है, कैसे शान्त समाए॥
पाँच पचीस प्राकिरत का, अजब पसारा जाल।
जीवन की आसा माईं, दरशन पावे काल॥
इन्द्री विषे विकार में, नित प्यासा होए।
छिन छिन रंग वटाया, तृपत ना पाए कोए॥
बालक दु:खिया अन्ध बुद्ध धारी, और दु:खिया जोबनवन्त।
जरा परापत दु:ख की खानी, काल गरासे अन्त॥
दृश्यमान संसार ये, सब ही रूप वटाए।
छिनभंगुर जो रूप है, कैसे सुख दिखलाए॥

**करो विचार सुख सार की, मत भूलो मन के भाए।**
**'मंगत' नौबत चलन की, पल पल बाज बजाए॥ 208**

जो सुख इस्थिर ना रहे, सो तो दु:ख का रूप।
ऐसे घने कलेश में, कैसे पावें छूट॥
मन बैरी बिकराल है, लागा झूट के संग।
देख देख अन्धा हुआ, होवे अन्त असंग॥
काम क्रोध की अगन में, जलें चराचर भूत।
छूट ना पावे जीव ये, लाख वटावे रूप॥
जो वस्तु थिर ना रहे, कैसे देवे धीर।
मिथ्या भरम भरवास में, बाँधा अन्ध अन्धीर॥

साची भगत पहचान कर, जो नित सुख की खान।
सकल मिटावे भरम जो, मिलावे एक भगवान॥
सत वस्तु के संग से, नित ही सुख को पाए।
झूट विकार ये भरम जो, तीन काल दुःखदाए॥
सत सरूप भगवान का, केवल एके जान।
माया झूट पसार है, जो नित दुःख की खान॥
असत वस्तु के प्रेम से, उपजे तृष्ना रोग।
तीन गुन माया परगट कीजे, मिथ्या करम संजोग॥
करमफल इच्छया धार के, परसे दुःख द्वन्द।
छिन ठाँडा छिन ताता, ज्यों लोहार की साँड॥
ऐसे इच्छया करम की, अनेक रूप दिखलाए।
ये ही जरा और मरण है, चारखानी परबाहे॥
करम गती को भोगता, राजा राना रंक।
पुन करमी सुख पावता, पापी दुःख असंख॥
ये रचना संसार की, मन में लयो विचार।
करम का संसय ना मिटे, अनक जनम को धार॥
मानुष देह दुर्लभ है, जो देवे मोख निधान।
साचे गुर के मेल से, होए जीव कल्यान॥
मिथ्या जग को देखिया, सत एक भगवान।
मन आया विश्वास में, परसी सुख की खान॥
छिन छिन सिमरो नाम प्रभ, परमानन्द सरूप।
मन में आवे चाँदना, जाए भरम का कूप॥
करमफल इच्छया त्याग कर, करम करो निर्धार।
ऐसी करनी जो करे, सो पावे निस्तार॥
कारन करता पेख के, दृढ़ कीजो विश्वास।
साची भगत पहचान के, पाओ सुख निर्वास॥
तीन काल समरूप है, घाट वाध नहीं पाए।
करम संदेसा ना धरे, ना जनम में आए॥
सरब जियाँ आधार है, आप रहे निरलेप।

वाँग आकाश के पसरिया, सुनयो सार विवेक॥
बादल छाया जगत ये, नानाँ रूप वटाए।
समाँ पाए सब मिट गए, केवल आकाश दिखाए॥

**चिदाकाश परमात्मा, नित आनन्द सरूप।**
**'मंगत' सिमरन तिसका, तीन काल सुखरूप॥ 209**

साखी पुरख अनूप जो, सरब कला समरथ।
तिस का सिमरन सार है, हरे भरम कुपथ॥
अन्तर सब के रमया, अखण्ड रूप निर्वास।
चेतन करे जड़ देह को, आद पुरख अबनास॥
बाहर की भरमन तजो, अन्तर खोजो सार।
कल्यान सरूप नारायन, नित आनन्द भण्डार॥
तिसका सिमरन सार है, नित ध्याओ मीत।
बिना ज्ञान परतीत ले, पाएँ ना भवजल जीत॥
ठाकर साचा जान के, रहो चरन लिवलाए।
प्रेम प्रीत चित में धरो, सुन छूटन का उपाए॥
अन्तरगत में रमयो, सुनयो शबद अनूप।
पावें साचे धाम को, हरें काल का कूप॥
अबनाशी की सेव से, मन होवे परसन।
निर्भय जीवन पाय के, लखयो उपरस धन॥
मिटी करम की वासना, सिमरा दीनदयाल।
अखण्ड चित नित ध्यान में, विरती भई निहाल॥
मन भाखे सत रूप को, और सत विचार।
सत करम की जुगत को, अन्तर लेवे धार॥
सत सेवा हिरदे धरे, जग की होवे धूड़।
करता देखे सरब में, वैर करे काफ़ूर॥
दु:खियाँ का दु:ख देख के, अपना सुख भुलाए।
खिमा ग़रीबी धार के, मारग भगती पाए॥

प्रेम प्रीत को धार के, करे जीयाँ सेव।
मन में धरे निर्मानता, तब परसे साचा देव॥
झूटी देह का मध हरे, करता करे पहचान।
तन मन जिसकी दात है, तिसमें रहे ग़लतान॥
पाखण्ड को खण्डन करे, मंढे साचा नाम।
जतन करे दिन रात यह, तब पावे बिसराम॥
मीठा सब से बोलना, सब से पूछें ख़ैर।
मन में सिमरें राम को, करें अगम की सैर॥
इस देह अन्दर आनन्द घना, मानक चमके मीत।
खोल नैन तूँ बुद्ध के, पावें तब परतीत॥
सागर पुरियाँ मण्डल, लोकालोक अनूप।
पसरे सब में एक प्रभ, अखण्ड आनन्द सरूप॥
सास सास सिमरन करो, साचा पुरख अपार।
मन तन मानो आज्ञा, ज्यों चलावे कार॥
अपनी हिकमत छाड के, आजिज़ हो दरबार।
सुरती राखो नाम में, हरयो सकल बकार॥
नौ द्वारे इस देह में, परगट कर दिखलाए।
दसवाँ गुप्त अन्तर भया, जाँ प्रभ आप समाए॥

**सत सील संतोख, दीनता और पर-उपकार।**
**'मंगत' मारग मुकत का, प्रेम से लीजो धार॥ 210**

अमरत फल सत रूप का, सतसंग में पावे मीत।
निस दिन उद्दम ये रखे, हरजन चरन परीत॥
महमा तिस सतसंग की, गावें वेद पुरान।
बिन संगत सतपुरष की, पाए ना सार निधान॥
साची संगत सो भई, जाँ हर की कथा विचार।
निस दिन गुरमुख जो रमे, उतरे भवनिध पार॥
सहज होवे मन चाँदना, पूरन हो विश्वास।

प्रेम प्रीत श्रवन करे, हरजन हर इतिहास॥
निराकार परमेश्वर, घट घट रमया जोए।
पावें तिसके भेद को, मैल भरम की खोए॥
मिथ्या जग को देख के, आवे मन वैराग।
साची जुगती नाम में, दृढ़ होवे अनुराग॥
तन मन धन अर्पन करे, साची सेवा पाए।
मन पावे निरमानता, मैल मध की जाए॥
अन्तरमुख सोझी होवे, बिनसे इच्छया करम।
सब कुछ देखे एक में, निर्मल पावे धरम॥
निमख निमख साधन करे, साचा नाम अगाध।
इकागर चित होये के, परसे आनन्द समाध॥
उरधकँवल परगासिया, पड़ी प्रेम की फास।
अबनाशी तत्त परगट हुआ, घट अन्तर लीना बास॥
सकले करम त्याग के, मन हूआ निर्वान।
साचा शबद ब्रह्म का, अन्तर किया पहचान॥
छिन छिन साचे नाम में, सुरत करे लवलीन।
अनहद गरजे गगन में, विरले लीना चीन॥
बिछड़ा जनम अनेक का, भयो मिलावा मीत।
मिले तरंग ज्यों नीर में, ऐसे पाई रीत॥
सत-पुरष परगट हुआ, उपजी शबद घनघोर।
नौ द्वारे को मूँदया, दसवाँ दीना फोड़॥
रोम रोम परगासया, अबगत पुरख अलेख।
मन पावे बिसराम ये, ले सतगुर का भेख॥
परम आनन्द आप निरालम, सरब जीयाँ आधार।
सत तत्त पहचानया, जिस का वार ना पार॥
अचरज सो अनूप है, सर्वज्ञ जाँ की जोत।
सरब जियाँ में रमया, अन्तर रहे अलोप॥
पूरे गुर के मेल से, अन्तर भयो परगास।

मिटी करम की जेवड़ी, लयो परम सुख वास॥
नित गाओ साचे नाम को, नित ही धरो ध्यान।
जावे मन बिकरालता, नित अमरत विरत पहचान॥
वेद ग्रन्थ पुकारदे, गुनी मुनी दरवेश।
साचा एको नाम है, काटे सकल कलेश॥
ध्याओ साचे नाम को, ले परम पुरख की ओट।
जतन जतन साधन करो, तब जावे बिख खोट॥
जनम कदारथ होया, परसा नाम अगाध।
छिन छिन तिस का सिमरना, मिटे कुल आपाध॥
ऐसी सार पहचान के, नित रहो लिवलाए।
क्या जाने किस पलक में, ये तन ख़ाक समाए॥

**साची संगत में रमो, सिमरो साचा नाम।**
**'मंगत' मन निर्मल होवे, लेवे अखण्ड बिसराम॥ 211**

भवजल दुस्तर आपार है, वारापार ना कोए।
बिना सत परतीत के, निसदिन दु:खिया होए॥
पाँच तत्त का पिंजरा, पंछी करे बिलास।
सार किसे ना जानया, मन भरमे अन्ध भरवास॥
देह की आसा धार के, उपद्रव करे अपार।
ख़बर करो उस पलक की, जब ये होवे छार॥
देह के सुख के कारने, नित जियाँ उतारे खाल।
ये भी तो सँग ना चली, जब मारे काल कराल॥
अंग सुगन्ध लगाई, अकड़ अकड़ पग धार।
निकले प्रान जब देह से, मिल गई धूड़ी नाल॥
अन्धा हूआ जीव ये, सत सरूप विसराए।
करम करे बेलक्खने, पावे अन्त सज़ाए॥
जैसी करनी जो करे, फल देवे करतार।
छिन छिन देवें हिसाब तूँ, उस ऊँची सरकार॥

आया मानुष देह धर, विचरें पशु समान।
खान पान और सोवना, ये ही कार पहचान॥
देह तो भई मानुष की, करे करनी ढोर गँवार।
मूरख समाँ गँवाया, भरवासे कूड़े धार॥
आसा रूपी रोग है, सतगुर खोजो वैद।
औखद खाओ सतनाम की, जाए करम की क़ैद॥
काची देह मथना करो, ले साची जुगत विचार।
अन्दर होवे चाँदना, जाए भरम अन्धकार॥
अबनाशी साहब आ मिले, जाए जीव की प्यास।
अखण्ड पावे शान्ती, निर्भय लीजे वास॥
देह रूपी मकान में, पावें ला-मकान।
मिट्टी अन्दर देखया, मालिक तीन जहान॥
मरने से पहले मरे, साचे प्रेम के रंग।
जुग जुग पावें जीवना, रहें साहब के संग॥
झूटी देह की कामना, दिल से करे त्याग।
सोता जनम अनेक का, उठ मन मूरख जाग॥
देह पिण्ड जिसने दिया, कर तिसकी पहचान।
साचा मारग घाल लो, सुन सतगुर विख्यान॥
अपना सुख त्याग कर, और जीयाँ को सुख दे।
पर-उपकारी जीवना, जीवन चित में ले॥
एक साहब की टेक रख, मन में हुकम पहचान।
आज्ञा तिसकी मान के, अबगत पावें थान॥
पूँजी देह की स्वास है, छिन छिन रहो वँजाए।
सिमरो साचे नाम को, फिर समां ना पाए॥
जब लग सत ना सोधिए, पावे ना मन धीर।
जतन अकारथ सब जाए, अन्त होवे दिलगीर॥
साचा एको साहब है, हिरदे कर पहचान।
तिसकी शक्ती में चलें, लोकालोक जहान॥

सो अन्दर तेरे वस रह्या, खोज करो नित नीत।
दृढ़ निश्चे से सोधयो, तब होवे परतीत॥
जिस पाया सो घट माहीं, मानक अपरम अपार।
सुपना हूआ जगत ये, जब पाया दीदार॥
**पूरन करम को पाया, मनसा पूरन होए।**
**'मंगत' जिन रब जानिया, चरन तिनाँ दे धोए॥ 212**

आई बसन्त उठ सिमर मुरार। दुरलभ देह का करो उद्धार॥
सिमरो सिमरो सारंग बानी। मानुष देह की करो पछानी॥
आवे जावे चराचर भूत। इस्थिर रहे ना रंक और भूप॥
आसा तृष्ना अगन अपार। चारखानी को करे अँगार॥
मिथ्या देह मिथ्या तिस भोग। दुर्मत भरम का लागा रोग॥
नित तृखत नित निरास। जतन करे नहीं मिटे प्यास॥
कर सतसंग सत मारग पहचान। बिना बसन्त फूले निरवान॥
ताँ पर भँवरा करे गुंजार। निर्मल धुन उठे नरंकार॥
जप सतनाम सब ज्ञान का मूल। अकथ कथा कथ सब बिनसे भूल॥
सत सरूप में मगन समाओ। ज्ञान ध्यान तत्त सार कमाओ॥
बिनसे अगन सतगुर के परताप। अखण्ड नाद में सुरती थाप॥
तन मन धन प्रभ आज्ञा में पेख। अबनाश पुरष का सुन साचा लेख॥
दुबधा व्याध सब भई विनास। भँवरा लुघदया पाए सचखण्ड वास॥
जतन करो निसदिन तू मीता। जप साचा नाम परम पुनीता॥
बाल जोबन जरा तन खाए। जमराज दे अन्त सज़ाए॥
मिल सतगुर सुन तत्त ज्ञान। नित घालो ये अमरत खान॥
करम भरम के जाल को तोड़ो। अदभुत रूप के चरन चित जोड़ो॥
सहज भाए मन मगन समाए। साचे शबद संग मेल मिलाए॥
भेख पाखण्ड भरम कर दूर। अमरत नाम नित सिमर हज़ूर॥
**बिना बसन्त फूली बनराए, अगम निगम के घाट।**
**'मंगत' मन निहचल भया, अचरज लखी है बाट॥ 213**

दीन ग़रीबी बन्दगी, गुरमुख का है आहार।
सत सील और धीरता, गुरमुख का ब्योहार॥
दृढ़ विशवास चित प्रेम सरूप। कोमल बचन नहीं मन मध कूप॥
सहज सुभाय नित चाले चाल। आनन्दसरूप मन तन निहाल॥
आपा मेट निरगुन को कमाए। शबद अखण्ड चित रहो समाए॥
ग्रहन त्याग से रहे अतीत। परम पुरख सो इन्द्रीजीत॥
निराधार ब्रह्म शबद की दौड़। नित ही तिस में राखे चित जोड़॥
मरन जीवन की मिटे तरास। सो अबधूत ले सचखण्ड वास॥

साध सती और सूरमा, तीनों की मत एक।
जीवन की आसा तजें, रख साहब की टेक॥
छिन छिन बन्ध कटाँवदे, रख चित में उपकार।
मारग कठन कराल है, ज्यों खाँडे की धार॥

**गुनी गुनी सब चल बसे, परम पुरख के पास।**
**'मंगत' मनमुख मर मिटे, रख झूट जीवन की आस॥ 214**

सिमरो साचे नाम को, काल जात है बीत।
कूड़ सँदेसे भरम रहा, पावत ना परतीत॥
अनेक रुत अनेक पख मास। अनेक वरख तू किए गरास॥
अनेक दिवस और रैन विताए। मिथ्या भरम में सब औसर जाए॥
नैन नासिका त्वचा जीभा कान। इन्द्री भोग लें आन की आन॥
आवे जावे जनम अनेक। नित निरास बिना विवेक॥
सम्पत बड़ी बड़ा परिवार। जाए अकेला अन्त की बार॥
महल अटारी धन गंज अपार। चला नमाना अन्त पाए पसार॥
सुत दारा नाती घनेर। जाए अकेला ये जीव आखीर॥
सरजनहार सिमरो गोपाल। **'मंगत'** होवे पल पल किरपाल॥**215**
मानुष देह पाई वडभाग। सत कीरत में नित उठ लाग॥
भरम भुलेख होवे सकल विनास। सिमरो नाम रख दृढ़ विशवास॥
सत मारग की पाओ बुद्ध। सत असत की लखयो सुद्ध॥
प्रेम प्रीत सत तत्त विचार। दुर्लभ जनम की पाओ सार॥
घड़ी घड़ी औध विहाए। सिमरो नाम नित होए सहाए॥

काया कंचन बुद्ध होये परकास। हर की भगत करे दुःख नास॥
उट्ठत बैठत कर सत विचार। निर्मल करम चित ज्ञान आधार॥
जल थल माहीं सो आप भरपूर। ठौर ठौर में रमे हज़ूर॥
तिस बिन दूजा मित्तर ना कोए। तिस की सेव सकल दुःख खोए॥
राजा राना रंक दरवेश। सकल आधार एको जगदीश॥
तिस ओट देवे निर्मल धाम। नित ही नित जप साचा नाम॥

**संसा सब संसार है, साचा नाम अगाध।**
**'मंगत' सिमरे प्रेम से, विरला गुरमुख साध॥ 216**

उठ सिमरो साचे नाम को, भाओ प्रीत के संग।
जग में ये ही सार है, सुन साचा परसंग॥

नाम बिना मन धावे नित नीत। नाम बिना नहीं पावे परतीत॥
अक्षर ब्रह्म मूल निरधार। मिल सतगुर कर साचा विचार॥
रोम रोम में नित सो रमनीक। साखी पुरष अनाद अनन्त पुनीत॥
जो सिमरे सो पाए मन धीर। बिमल शबद नित पीवे जन छीर॥
सरब निधान जप एको नाम। गवन विनास पाए सतधाम॥
परचण्ड माया का वेग अपार। मोहे बड़े गुनी गुनकार॥
कोई जन पावे सत विवेक। मर जीवे इक नाम दी टेक॥
झूट काया का छोड़े मान। विच ग़रीबी करे नाम पहचान॥
स्वास स्वास जप सरजनहार। **'मंगत'** गुरमुख पावे तत्त सार॥**217**
खेम कुशल पाए प्रभ सँग मेल। सुरत निरत का परसे खेल॥
मन पवन बाँधे इक धार। साचा नाम कर गुपत विचार॥
जीभा होंट लगावे बन्ध। हिरदे जापे सतनाम अखण्ड॥
पवन की धारा में सुरत लगावे। नागन सोई को सहज जगावे॥
सुखमन नाली में पवन भरीजे। उमगे नाद माया गढ़ छीजे॥
उलटा नीर आकास चढ़ावे। खेती नरंकार को पी जावे॥
सुरत निरत उनमुन घर वास। धन्न योगी मन जुगत निवास॥
मिटे बकार पाई काल पर जीत। साचे नाम की आई परतीत॥
गोरख दत्त मछन्दर आद। सब ही खोजें ये जुगत बिस्माद॥

काया दीप में कीना अचरज खेल। **'मंगत'** गुर का पूत पावे प्रभ मेल॥**218**
पवन को सोधे सो ही तत्तवादी। पवन का खेल अगम अगाधी॥
आवे जावे इरध उरध परगास। मनुआँ बाँधे गुर जुगत बिलास॥
उलटा कुआँ का मुख उगाड़े। निरगुन सरगुन की राहट विचारे॥
निरगुन भरे सरगुन पीवे। धरती पलट आकास को लेवे॥
सूखे सरोवर उठे हल्लोल। आदी पुरख वहाँ करे कल्लोल॥
पाँच दूत करें डण्डौत। तू सरजनहार सब तेरी औट॥
बड़वा अगन नीर सुखावे। जीव जन्त आकास उठ धावे॥
शिखर आकास मेघ गरजे अपार। दमके दामन कर गहरा उज्यार॥
जीया जन्त सब शून समाए। **'मंगत'** भेद कोई गुरमुख अरथाए॥**219**
काया दीप का करो विचार। जाँ में रमया सो सरजनहार॥
गंग जमन सुरसती का तीर। औघट घाट रम रहो फ़क़ीर॥
अगम नाद पुरख अनूप। तीन भवन में पेख सरूप॥
इरध उरध पवन की धार। गुर उपदेश कर जुगत विचार॥
मन पवन कीजो नित एक। उलटे मारग का लक्खो विवेक॥
तीन बन्ध अन्तर मुख वास। नाम कमावे उरध कँवल परगास॥
मूल द्वार में लगावे बन्ध। पवन को पीवे धर सुरत अखण्ड॥
खुले सुखमन गगन में बोले। अच्छर अबगत की रसना तोले॥
सुरत निरत इक माल परोवे। दसवें द्वार सत शबद को जोवे॥
सहँसदल कँवल भया उजियार। पूरे गुर की सुन जुगत अपार॥
जाप अजपा सुरत निरत का भेद। गुर का शिष मटावे मन खेद॥

**चार दिसा चौधां भवन को, बाँधे एके साथ।**
**'मंगत' गुर की जुगत से, सतनाम अमीरस खाट॥ 220**

खोज खोज के पाया, प्रभ तेरा नाम आपार।
जो सिमरे छिन एक पल, तिस चरनी बलिहार॥

तुम बिन दूजा ना कोए, राखाँ किसकी टेक।
सरब कला समरथ तूँ, धारें रूप अनेक॥
सब जग तुमरा खेल है, तूँ बाज़ीगर अपार।
खेलें खेल बहु भाँत की, मोह्या कुल संसार॥
काल करम के जाल में, जकड़ा मन गँवार।
एक पलक की धीर ना, नानाँ करूँ विचार॥
आसा तृष्ना वेग में, नित रहे परबीन।
अनक जतन समझाया, सूझत ना बेदीन॥
अंधा गरब ग़ुबार में, भूल गया सतधाम।
देख चक्कर संसार का, भरम का भया ग़ुलाम॥
नित नमाना नित परदेसी, पल आवे पल जावे।
सत सरूप विसार के, नित मूढ़ा कूड़ कमावे॥
जगत बसन्त फूली फुलवाड़ी, दो दिन का समाचार।
मन ना सूझे अन्धला, बैठा पाओं पसार॥
झूट काया मान धर, भोगे भोग अनन्त।
रनक मातर ना शान्ती, बिन सिमरे भगवन्त॥
जीवन का उपाय करे, मरना मूल विसार।
सकल अकारथ जात है, जब काल ने करी पुकार॥
नाती संगी बहु बने, अन्त छुड़ावन ताईं।
काया तजे प्रान जब, भयो सखा कोई नाईं॥
इन्द्री भोग की लालसा में, दीनो जनम विताए।
अरब खरब धन संचया, अन्त निरासा जाए॥
जो देखा सो दु:खिया, किस से करूँ विचार।
तृष्ना लागी अगनी, रोए कुल संसार॥
पछताए राम भाई मूरछाये, रोए सीता संग राम वँजाए।
रोए रावन अन्त की बारी, जब उजड़ी लंका दृष्टी आए॥
दशरथ रोए दे पुत्र बनबास, रोए बाली कुकर्म विचार।
रोवन पाण्डो जब राज वँजाया, नगन द्रोपदी होई दरबार॥

छत्रपती दरयोधन रोए, जब लश्कर भया विनाश।
रोए करन महा बलकारी, जब भूमी कीनो रथ ग्रास॥
रोए सिकन्दर और कारूँ, रोए बली महमूद।
छाड चले जब गंज दफ़ीने, और रोए नमरूद॥
रोए जोगी समाध को छोड़े, प्रभ का हुकम विसार।
रोए पण्डत वेद का वक्ता, पावत ना तत्त सार॥
बड़े बड़े अभिमानी रोएँ, अन्त भए निरमान।
गरब प्रहारी एक प्रभ, नित जो सुख की खान॥
जिनाँ हर जस गाया, तिन का रोवन दूर।
दु:ख सुख एक समान भयो, जल थल परस हज़ूर॥
**माया कूड़ पसार है, जो सेवे सो रोए।**
**'मंगत' हरखत साधजन, जो निर्भय धाम बसोए॥ 221**

## दूसरा मारग-अथ विज्ञान मात्रा आरम्भते

कलह कलेश संकट हरे, रिद्ध सिद्ध आवे हाथ।
विज्ञान मात्रा श्रवन करे, निर्भय परसे नाथ॥
सकल जगत का सार पहचानो। संशे रहित पुरख निरवानो॥
अमीरस जीवन नाम तत्त जापे। हरे विकार भरम संतापे॥
जरा मरन संकट भयो नासा। विज्ञान सरूप निज आतम परगासा॥
परम खोज तत्त रूप लखाए। परम विचार तत्त सार ध्याए॥
परम त्याग मन तजे व्याधी। विज्ञान सरूप तत्त लखे आगाधी॥
सील संतोख घर आए समाए। काम क्रोध विकार मिटाए॥
सुफल जनम मानुष का होई। तत्त पछान मन दुर्मत खोई॥
वेद ग्रन्थ का निरनय पाया। जप तप संजम मन माईं समाया॥
सरब आधार पुरख घट सूझा। साधजनाँ का निरनय बूझा॥
मुनी सनकादक नारद शेषा। कपल कनाद आद रिखीषा॥
सब का सार विचार लखाया। विज्ञान सरूप ब्रह्म दरसाया॥

अपरम अपार पुरख अनूपा। विसमे बिस्माद परकाश सरूपा॥
सरब व्यापक सब से न्यारा। सरब आधार पुरख निर्धारा॥
नित परकाश आनन्द आगामी। चराचर भूत सरब का स्वामी॥
अगम अगोचर सरब गत धारी। सिमरो साचा पुरख मुरारी॥
सिमर सिमर मन तजो विकारा। नित मंगल सत तत्त उज्जियारा॥
काल करम जाल बिख नासे। सत-पुरष की करो अरदासे॥
सतनाम आवे चित वास। परम पुरष भेंटे अबनाश॥
नाम रूप मन तजे तुरंग। साचे शबद का लागे रंग॥

**चेतन तत्त शबद अगम, भेंटे गुर परताप।**
**'मंगत' मन निर्मल भया, तत्त ज्ञान कियो जाप॥ 222**

सतगुर साध मिलावा होई। विजय परापत संशय खोई॥
पाँच पचीस का निरनय कीना। साखी पुरष ज्ञान तत्त चीना॥
सकल भरम इच्छया गया दोख। सतनाम परसा तत्त मोख॥
पुरख निरंजन अपरम अपारा। सकल जगत जिसका पासारा॥
बारमबार सत धर परतीत। जीवन मुकत लख शबद पुनीत॥
मन बानी करम से पार। आदी पुरष चरन बलिहार॥
जिस जन लखिया सो तत्त अबनासी। आवागवन गई भरम चौरासी॥
पूरन चित विरत निषकाम। जप जप ठाकर पायो बिसराम॥
साचा करम धरम ये साच। सतनाम जप पद निर्वाच॥
साध वेद नित करें वडयाई। विज्ञान सरूप सिमरो सुखदाई॥
मोह माया का अधिक पसारा। ज्ञान बिनाँ डूबा संसारा॥
पूरन पुरख कोटाँ में को एक। सिमरे नाम तजे भरम भुलेख॥
सत करम की परसे सार। सत ध्यान लीना विचार॥
सत विश्वास माईं भयो लीन। सत मारग में भयो परबीन॥
जनम जनम की तृखा भई दूर। परम तत्त घट प्रगट हज़ूर॥
अनुभव परकाश बानी निर्वान। रूप रेख ना तिसका निशान॥
आदी अन्त एक रंग समाई। अपरम अपार तिसकी वडयाई॥

सो परमेश्वर अन्तरयामी। सरब रखयक सो पारगरामी॥
सरब जीयाँ को इक सूत परोई। गुरमुख विरले सोझी होई॥

**सत ठाकर को जानया, मन तन भयो परसन्न।**
**'मंगत' तत्त समाया, सतनाम का पायो धन्न॥ 223**

सतपुरखा सतनाम विचारी। तिसके चरन जाऊँ बलिहारी॥
मन पवन मिल नाम कमाए। जीवन मुकत अभय पद पाए॥
तुच्छ जीवन का लाभ पहचानी। साचा नाम अन्तरगत जानी॥
छिन छिन वाट वटावे नाम। सोधे बोधे पुरष का ठाम॥
गुप्त द्वार का खोले किवाड़। साचे नाम का लखे असरार॥
अपनी आप की करे पहचान। अन्तर माहीं अन्तरगत जान॥
सो ही शूरबीर परम बलवाना। मन को ठाके रख शबद ध्याना॥
जीवन जीवे निज रूप सम्भाले। अमर लोक की घालन घाले॥
नाम बैरागी तत्त परबीन। तीन काल निज रूप में लीन॥
इच्छया पूरन सम तत्त परगास। सत सरूप निज लीना बास॥
औगुन नास बुद्धी निरवान। आलख शबद भेंटा भगवान॥
पाँच तत्त गुन तीन से पार। साचे नाम का कियो विचार॥
भुख प्यास एके प्रभ नाम। आस भरोसा केवल सतधाम॥
काया करम से चित उपरस होई। आज्ञा ठाकर हिये परोई॥
गरभ विकार गयो दुःख का मूल। एको दरसाया सूक्षम अस्थूल॥
निर्भय पुरष निर्भय धाम। तीन काल निर्भय बिसराम॥
साचा ठाकर नित लयो मनाई। नाम विसार परम दुःख पाई॥
तिस बिन तेरा नहीं कोई संग। आदी अन्त रहे अंग संग॥
मिल सतसंग नाम विचार। मानुष देह नहीं बारम्बार॥

**बालू की ये भीत है, पवन करे उजयार।**
**'मंगत' तत्त सत खोजिए, जो जग जीवन सार॥ 224**

सिमरत वेद का सुन परमान। सतपुरषों का खोज निधान॥

ज्ञान ध्यान की मात्रा धार। सतनाम करो हिरदे विचार॥
आवागवन संशा चित जाई। निज रूप की पावें वडयाई॥
एको नाम का पसरयो पासार। सरब माईं तिसका चमकार॥
बाहिर भीतर सब तिसका खेल। हरजन कीना तिसका मेल॥
अपनी शकत से सबको सरजावे। बिस्माद जन्तर का खेल चलावे॥
अन्त ना पारावार कोई पाई। अनक भाँत बहु गुनी ध्याई॥
तिसे विसार जीव दुःख पाए। असत भरम में आवे जाए॥
चारखानी में जनमे मरे। अपने भरम में आप ही कढ़े॥
अनेक जतन सब बिरथा जाए। बिन तत्त सूझ ना चित ठहराए॥
नाती संग बहु रंग परिवार। धन जोबन मध मान विचार॥
हिकमत हुकम बहुती तदबीर। कारन विजे भयो रनधीर॥
कुल जाती का धरे अभिमाना। भगतहीन फिरे पशु समाना॥
आशा तृषना अधिक कलेश। बाँधे गुनी मुनी दरवेश॥
बिन तत्त ज्ञान जुग जुग डोलाए। करम का बाँधा आवे जाए॥
तीरथ बरत पाखण्ड बहु धरे। ग्रन्थ कतेब इतिहास बहु पढ़े॥
देह अभिमान ना जाए भ्रम मूल। बारमबार सहवे जम सूल॥
अबगत माया देख भरमाए। आस अन्देसे में दुःख पाए॥
भवजल दुस्तर ना सूझे पार। अन्धमत जीया जले अँधयार॥

**दुःख में ही नर जनमया, दुःख में जनम गँवाए।**
**'मंगत' देहधारी जो आया, तीन काल दुःख पाए॥ 225**

सत सुकृत सुन सत उपदेशा। सतनाम जप मिटे कलेशा॥
तत्त निरंजन नित आनन्दा। सिमर सिमर काटे जम फंदा॥
पाँच भूत की कला बनाई। तिसके अन्तर रह्या समाई॥
सतगुर पूरन से भेंट जब भई। गुपत कला परगट घर लई॥
उदर दीप मध पवन समाई। तिसको बाँधे तत्त ज्ञान लखाई॥
उलट कँवल नाद परगासे। चंचल मनुवाँ सत रूप समासे॥
अमरत कुम्भ शबद अबनाशी। जो जन परखे कटे जम फाँसी॥

कलप कल्पना विखाद निवारी। सतगुर पूरे भए किरपाधारी॥
नित आनन्द शबद घनघोर। निर्मल सुरत पदपंकज जोड़॥
सरब का ठाकर शबद अबनाश। तिसका सिमरन परम सुखरास॥
ज्ञान विज्ञान ले शबद को पीवे। गुर परसादी जन मर के जीवे॥
पाँच तत्त का सूल त्यागी। अबगत शबद में विरती जागी॥
वेद कतेब की जानी गत सार। अन्तरगत परसा करतार॥
पूरन चित हर नाम परोई। माया छाया दुर्मत सब खोई॥
नौ दर काया पर पाई जीत। दसवें गुपत आई परतीत॥
अनहद नाद बोले तिरबैनी। हरजन छूटे सुन गुर की कहनी॥
अखण्ड नाद जोत चमकार। आप बिराजे अन्तरगत धार॥
पूरन करनी कोई जाने भेद। काल करम ना लागे छेद॥
निरभय जीवन पद परगास। पल पल कीजे हर की अरदास॥

**जाँ से उतपत होया, ताँ में भए लवलीन।**
**'मंगत' कथा विज्ञान की, कोई गुरमुख लेवे चीन॥ 226**

शबद अगोचर पुरख निरवानी। गुरमुख परसे मन प्रेम की खानी॥
तीन सुन्न के परले पार। अबगत शबद करे किलकार॥
पाप पुन्न से भयो जन मुक्ता। चौथे सुन्न शबद संजुगता॥
अपने रूप को आप ध्याए। अपनी महमाँ आपे मुख गाए॥
अपना आप देखे परताप। अपने रूप को आपे जाप॥
दुर्मत भरम छाया सब नासी। सम सरूप कला परगासी॥
पूरन पुरख पूरन पायो धामा। अगम शबद अपार अनामा॥
जत सत मन का पूरन होए। आलख शबद नित सुरत परोए॥
चढ़ी ख़ुमारी मन शून समाया। ज्ञान रतन तत्त नाम रस पाया॥
सरब माया पर पाई जीत। निज सरूप में लीनी परतीत॥
सुन्न समाध शबद उज्जयार। परखे गुरमुख ले साची कार॥
जरा मरन नहीं व्यापे काला। नित आनन्द शबद उज्ज्याला॥
पूरन सूझ बूझ जन पाई। गुरमुख ज्ञान में लीन समाई॥
सो ही पीर पैग़म्बर ग़ौसा। सो ही अवतार तत्त लक्खे अनोखा॥

विचित्तर लीला सो जन धारी। जीवनमुक्त चित चढ़ी ख़ुमारी॥
करम करत निहरकमत होई। अचल समाध सत शबद परोई॥
फोड़ ब्रह्मण्ड ब्रह्म तत्त समाई। पूरन करमी पूरन गत पाई॥
अन्तरगत नित भयो लवलीन। कोट भान छबी दर्शन कीन॥
सरब जगत का सो उद्धारी। जिस घर परसा साच मुरारी॥

**मन जीतया जग जीतया, भयो शाहन का शाह।**
**'मंगत' काटी करमगत, टूटे भरम असगाह॥ 227**

आद जुगादी रहे भरपूर। सत शबद घर बोले तूर॥
घर में घर की पाई सार। पूरन पुरख पायो निरंकार॥
जिसको खोजे मुनी मुनीशा। घर में देखा सो जगदीशा॥
आसा मनसा जाल विनासी। गुरमुख जोत अन्तर परगासी॥
रिद्ध सिद्ध खड़ी तिसके चरने। आलख पुरख का जो कीजे निरने॥
करम रहित शबद अपार। सरब का ठाकर सो ही मुरार॥
जीवन जीवे शबद गत जाने। अपने रूप की करे आप पहचाने॥
भवजल दुस्तर जाल समाई। सत शबद निरना जब पाई॥
नित बलिहारी सद हूँ बलिहार। आलख शबद जो करे विचार॥
मन की तृखा जलन सब नासे। अबगत नाम बानी परगासे॥
भूख प्यास निंद्रा को जीते। निर्मल शबद सुरत परतीते॥
महापुरष सो इच्छयाचारी। अखय शबद जिस चढ़ी ख़ुमारी॥
गिनी ना जाई तिसकी गिन्त। अचरज लीला धारे वोह सन्त॥
देव मुनी करें अरदास। जिस घर पायो पुरख अबनास॥
महा त्यागी तत्त परबीन। इच्छया रहित आतम पद चीन॥
बारमबार करो आदेस। सतगुर पूरन रूप जगदीश॥
आप भए मुक्ता औराँ निस्तारे। गुरमुख चरन जाऊँ बलिहारे॥
संकट दोष नहीं मन व्याप। साचे शबद का कीजे जाप॥
शबद अगोचर शबद स्वामी। शबद को चीने विज्ञान तत्त गामी॥

**मन बच करम से ध्यायो, साचा शबद अगाध।**
**'मंगत' मन निर्मल भया, सब हरया द्वैत उपाध॥ 228**

सत भगती सत धरम विचार। मानुष देह की लख सत कार॥
पूरन पुरख क़ादिर करतार। हिरदे माहीं करो विचार॥
खिमा ग़रीबी चित माहीं बसाओ। प्रेम प्रीत हरि चरन ध्याओ॥
एक ओट रख एक आधार। बन्ध ख़ुलासी करे करतार॥
तेरा रखयक पूरन स्वामी। सरब में व्यापक सो अन्तरयामी॥
नित ही नित तिस चरन ध्याओ। दुःख परहरो आनन्द घर जाओ॥
पलक ना विसरो सो किरपानिधान। सरब किरपाल सो पूरन भगवान॥
तिसकी दात बल तेज विचार। ज्ञान विवेक तत्त रूप आपार॥
मन मनसा के जेते रंग। तिसकी माया के सकल तुरंग॥
नित ही मन में किया विचार। तूँ ठाकर सरब आधार॥
देह जोबन बल शूर लखाई। सब ही साहब तेरी प्रभताई॥
बिन्दू से कीना पिण्ड आकार। सरब आधारी पुरख मुरार॥
तीन गुन माया तेरा परताप। भाँत भाँत रंग दीना थाप॥
असुर देव मुनी मुनीशा। सरब ध्याएँ तुध एक जगदीशा॥
मूल रूप हो पसरयो बहु रंग। अन्तरगत नित आप निहसंग॥
देख पसार जीव भयो अनजान। काल करम संशय लयो ठान॥
अपनी हिकमत बहु भाँत बनाए। अनक सयानफ करम बन्द पाए॥
सूझे बूझे ना तदबीर। मिथ्या रोए धर तक़सीर॥
बख़शनहार सिमर दातार। तिसकी भगत करे छुटकार॥

**इस सागर संसार में, सुनयो सत परसंग।**
**'मंगत' नाम प्रभ सार है, जो व्यापे सभी रंग॥ 229**

दुर्लभ कारज साच विचार। साचा नाम जपो करतार॥
सरब का आदी अन्ती मूल। व्यापे सूक्षम और अस्थूल॥
अखण्ड परगास परम सुखरासी। सरजनहार सिमर अबनाशी॥
मन निर्मल चित शान्त समाए। साचा सिमरन हरी प्रीत कमाए॥
तिस बिन सूझे ना पारावार। अदभुत माया का अधिक पसार॥

नाम रूप गुन करम का भेद। इच्छया भरम करे चित छेद॥
दीरघ रोग जीव को लागा। पच पच मरे अन्धमत अभागा॥
पाप पुन्न करे बहू विचार। दुःख सुख परसे नित फल सार॥
जनम अनेक रूप वटाए। करम का बाँधा जूनी भरमाए॥
अधिक कलेश नहीं शान्त पेखे। असत प्रीत रख फिरे भुलेखे॥
जैसी करनी सो फल पाए। माया चक्कर में आवे जाए॥
ऐसी गत सभी की होए। राजा राना इक लड़ी परोए॥
कभी ऊँच कभी नीच गत पावे। त्रैगुन माया बहु खेल खिलावे॥
संशे शोक में रहे दिन रात। तत्त ना सूझे मन कमज़ात॥
संग कुसत्ती करम कुसत्त। दिवस रैन बीजे कुसत्त॥
मानुष देह करतूत चंडाल। मारे मुदगर जम बिकराल॥
अन्धमती बहुता गरबावे। धार पलीती जमपुर जावे॥
औध गँवाए विच विकार। भोगे भोग अधिक अन्धकार॥
सतपुरषों की ना संगत कीनी। ना सत रूप को हिरदे चीनी॥

**खल बुद्धी को धार के, हीरा जनम गँवाए।**
**'मंगत' बिन हरी भगत के, अन्त सभी पछताए॥ 230**

इस्थिर रहे ना भूप भूपाल। लशकर तेज और धन माल॥
महल सराओं कोट गढ़ औसारे। निकले प्रान तब भयो जन छारे॥
क्यों उलझाए मूरख जन्नाँ। क्यों ना संचे सत का धन्ना॥
जो जनमे सो होए विनास। निस्चे जान छाड कूड़ भरवास॥
साची करनी जग लाभ पहचान। साचा ठाकर नित हिये बखान॥
सब ही तिसकी दात दातार। अदभुत शक्त सरब आधार॥
नित ही मन में रख भरवास। सरब माहीं सो ही अबनाश॥
सत बन्दगी नित सेव कमाओ। साची संगत मिल नाम ध्याओ॥
करो वडयाई तिसकी नित नीत। राखो तिस में अधिक परीत॥
सतगुर पूरे के चरन समाओ। साचा ठाकर तब घर में पाओ॥
मन का संशय भयो काफ़ूर। घर में सूझा अमरत तूर॥

पुरख अगम घर परगट होए। जनम मरन संताप को खोए॥
होई परतीत मन भयो निहाल। सतगुर भए परम दयाल॥
सुपन समान भयो संसार। परतक्ख देखा जभी करतार॥
सुफल जनम तब जग में होया। सत परतीत सतनाम परोया॥
दुःख जंजाल भयो बन्धन नास। आनन्दसरूप संग कियो बिलास॥
गुरमुख जीवन अमर पद पाई। साचे सन्त की भयो सरनाई॥
निरमल रूप वाँग आकास। परम प्रभ अबगत अबनास॥
सिमरन सार सो गुर दिखलाई। सिमर सिमर तिमर भ्रम जाई॥

**आशा दीरघ रोग से, जीव भयो आज़ाद।**
**'मंगत' औखद नाम की, हर लीना परमाद॥ 231**

ज्ञान ध्यान का मूल एक नाम। यज्ञ दान से ऊँचा धाम॥
बन्धन से करे जीव मुकता। साचा नाम सत जुगत संजुगता॥
मंगल होवे कलह चित नासे। साचे नाम की करो अरदासे॥
कथा कीरत इक नाम सम्भाल। बन्धी छूटे सकल जंजाल॥
पूरे सतगुर से हूँ क़ुरबान। सतनाम का जो देवे निशान॥
सत संतोख संजम सम्भाल। साचा नाम नित सिमर दयाल॥
मन इन्द्री के विखे त्याग। एक रसना नाम की लाग॥
छिन भंगर से पावें छूट। मिल अबनाशी तत्त्व अनूप॥
अजर अमर घर जाए समाओ। दुर्लभ जीवन प्रभ नाम ध्याओ॥
साचे नाम की अधिक वडयाई। अनक भाँत कर वेद में गाई॥
जिस जाना सो नाम अनामी। तिसको भेंटे आप स्वामी॥
मन का आवन जावन नास। अदभुत बानी नाम परगास॥
स्वास सुरत की करे सम्भाल। साचा नाम तब लखे दयाल॥
जिसकी कीरत में भयो लवलीन। गुरमुख तत्त लेवे हिरदे चीन॥
शबद अगोचर अजर अबनाश। नाम का सिमरन करे परगास॥
काची काया भई मनूर। घर में बोले अनहद तूर॥
सहज ध्यान जम भय मिटायो। नाम ध्यान कर गरभ नहीं आयो॥

अबगत नाम की नित माल परोवे। प्रान लड़ी संग नित नित जोवे॥
खुले कपाट घर चानन होई। अबगत रचना परखे जन कोई॥

**पारब्रह्म बानी निर्वान, कोई गुरमुख जाने भेद।**
**'मंगत' गयो सतधाम में, हरयो काल का छेद॥ 232**

कुल जाती का तज अभिमाना। सम दर्शन तत्त खोज निर्वाना॥
कुल जाती मध नरक दिखावे। सत मारग नहीं सोझी पावे॥
प्रभ दरबार नहीं जात जमाती। कुल अभिमानी को करे जम घाती॥
विद्या ज्ञान नहीं सार को पाए। कुल अभिमान धर नरकी दर जाए॥
करनी त्याग कुल ज़ात जमात मध राखे। कीरत नाश अपमान को भाखे॥
कुल ज़ात का त्याग मध मान। इस जग में करनी परवान॥
करनी मान तेज बढ़ावे। करनी जम की फाँस छुड़ावे॥
करनी परम गती को देवे। करनी जीवन अर्थ को सेवे॥
करनी राज तेज दिखावे। साची संगत मिल सत करनी पावे॥
सरब जीयाँ का होवे अधिकारी। परदु:ख हरना सत करनी विचारी॥
मान त्याग ग़ुरबत चित पाए। सेव सेव कर दास कहलाए॥
सरब पापों से होए छूट। साचा प्रेम प्रभ मिले अनूप॥
मानुष जीवन की ये करनी सार। परहित चित करे विचार॥
पर-उपकार मन जीवन धारी। सो कुलवन्त ऊँच परवारी॥
अपना सुख दूजे वरतावे। कल्यान सरूप आतम को पावे॥
सत विचार करे दिन रात। सत सेवे उठ नित परभात॥
ऊँच नीच से करे प्यार। निम्र भाओ मन लेवे धार॥
एक साहब की निरमल जात। निस्चे राखे तिसका परताप॥
उपजे विनसे सो क्या वडयाई। अमर पुरष का लेख लखाई॥

**जात वरन गुमान धर, क्यों भरमें दिन और रैन।**
**'मंगत' करनी सार है, जो करे सो पावे चैन॥ 233**

काम क्रोध अगन वड भारी। सरब जीयों की करे ख़वारी॥

दिवस रैन अती दु:ख पावे। लज्या शरम सभी गंवावे॥
मन का वेग ना थामे जाई। पढ़ पढ़ पुस्तक नहीं शान्त आई॥
बिना विवेक ना मारग कोए। जाँ से ये मन निर्मल होए॥
बिना सतसंग ना होवे विवेक। जो लखाए सच का लेख॥
नित सतसंग में राखो चीता। पावें शान्त सुन बचन पुनीता॥
सत सरूप पर निस्चय आवे। सत ध्यान में मगन समावे॥
सत मारग में मनुआँ जागे। सन्मुख होवे सतपुरष के आगे॥
चंचल मनुआँ लीन समाए। सत परतीत परम सुख पाए॥
साचा बचन सुनो गुनी मीता। मिल सतसंग करो सत परीखा॥
बिन सत सूझे नित गँवार। भरमें जूनी बारम्बार॥
पूरन सतगुर की ओट सम्भाल। परगट देखें घर दीनदयाल॥
अमरत नाम रस अलेप समाए। अनन प्रीत से चरन चित लाए॥
अबनाशी तत्त परम सुख रास। सिमर सिमर जाए कूड़ भरवास॥
जीवन लाभ अधिक जिन पाया। चरंजीव पद प्रेम से गाया॥
निहचल मनुआँ पीवे अनुराग। पायो कन्त सत मिला सुहाग॥
निज घर माहीं लीना बिसराम। शत्रू मारे जीता संग्राम॥
वैर विरोध संकट सब नास। प्रेमपुंज तत्त आतम परगास॥
जीवन माहीं जीवन तत्त पाया। अभय पद निर्मल नाम ध्याया॥

**गाओ सन्तो सतनाम की बानी, जो चित के हरे विकार।**
**'मंगत' जग बिख रूप है, बिन साचे नाम विचार॥ 234**

ये जग छाया राम की जानो। सत सरूप आपे भगवानो॥
छाया प्रीत होवे वँजोग। नाना दु:ख में करे संजोग॥
साचा नाम सिमर करतार। जल थल माहीं जो भरतार॥
दृढ़ विशवास राखो नीत। गुर के बचन धरो परतीत॥
अमरत वेला सत रूप विचार। दुर्लभ जनम की खाटो सार॥
सरजनहार पुरखोतम देव। पल पल कीजो तिसकी सेव॥
सरब का ठाकर सो ही मुकन्द। सिमरो नाम हरो दुरगन्ध॥

पूरन करम पूरन परताप। पूरन रसना नाम प्रभ जाप॥
अखय पद निर्मल अती परगास। अन्तर गगन में करे बिलास॥
अन्धकार नासे अन्तरगत सूझे। अजर पुरष को प्रीत से पूजे॥
सो पूजारी सरब ज्ञात। अन्तर माहीं जो सुरती थाप॥
गंग जमन सरस्वती सिन्ध। राज प्रयाग खोजे बिन्ध॥
चन्द सूरज इक थाँ सम्भाल। अबगत शबद परसें दयाल॥
इरध उरध सुरती ठहराए। जोग निर्वान की गमता पाए॥
कोट भान कँवल परगास। तत्त निरंजन सिमरो अबनास॥
जुग जुग जीवे नहीं काल व्यापे। जाप अजपा अन्तर माहीं जापे॥
सुरत निरत की चौसर खेले। सुगढ़ खिलाड़ी चरन चित मेले॥
विमल शबद घर करे किलकार। गुरमुख पाए साची देहकार॥
परमानन्द तत्त विज्ञान। पूरन करमी करे पहचान॥

**मिरतक इस संसार से, अजर पायो बिसराम।**
**'मंगत' सिमरन नाम का, देवे परम पद धाम॥ 235**

सत करम सत धरम विचार। मानुष देह की सुन साची कार॥
जत का खण्डा तत्त डण्डा लेवे। दीनदयाल चरन चित देवे॥
झूट विकार ये मन तुरंग। नित ही भरमे जड़ माया संग॥
सत साधू का सुन सत बोल। पुरख निरंजन हिरदे में तोल॥
पूरब जनम का लेखा पाओ। साध बचन हरी नाम कमाओ॥
लोक कटुम्ब कुल जात गुमान। सब ही दुःख की जानो खान॥
दीन ग़रीबी बन्दगी पाओ। खेम कुशल हरीचरन समाओ॥
महमा तिसकी नित चितार। नित दयाल सो सरजनहार॥
माँगो रसना साहब दरबार। जापो नाम अबचल भंडार॥
सो ही धन तेरी मीरास। साचे नाम का लीजो चित वास॥
देख माया ना साहब भूल। सत साधू का सुन बचन अनुकूल॥
बारमबार नर करूँ पुकार। झूट जगत सत सरजनहार॥
अपने अन्तर की खोलो पाट। चंचल मनुआँ आवे वाट॥
प्रेम हरी का चोला धारो। अनक जीवों के संकट टारो॥

बार बार ना आवें इस देस। पूरे गुर का सुन संदेश॥
आवन जावन मिटे ग़ुबार। जल थल माहीं एक करतार॥
सो ही सत आदी अन्त। सकली माया होवे भसमन्त॥
उट्ठत बैठत गुरमुख रस पीयो। निज सरूप में जीवन जीयो॥
ये ही लाभ इस देही चाम। अन्तर ध्याओ सरब सुखधाम॥

**नित ध्याओ अन्तरगत माईं, एक नाम अगाध।**
**'मंगत' तत्त विज्ञान से, परसी सुन्न समाध॥ 236**

करूँ बन्दना पार मुरारी। नित किरपाल किरपाधारी॥
तूँ परमेश्वर नित आनन्दा। हरो विकार मन दुरगन्धा॥
तेरी दात अधिक अपार। पवन पानी बसन्तर धार॥
सरब जीयाँ रिज़क़ रजाए। कुदरत तेरी अगम अगाहे॥
नित नित करूँ अरदास। परम पुरख तू ही अबनाश॥
दीन ग़रीबी माँगू भीख। करुनाकर तूँ ठाकर अलेख॥
नित सलाहूँ तेरा नाम। नित ध्याऊँ तुध अमरत धाम॥
एको सिफ़त तेरी चित भाए। दूजा भाओ सभी विसराए॥
पिण्ड ब्रह्मण्ड सब तेरा खेल। तूँ क़ादिर सब क़ुदरत मेल॥
भाँत भाँत की रचना रचाई। एक भाओ सब माहीं समाई॥
खेल विनासे रह्यो आप सरूप। माया छाया तेरी शकत अनूप॥
अपने भाने कीजो बख़शीश। दीनदयाल सरब का ईश॥
नित सरनाई तेरे दरबार। नाम पदारथ मागूँ सार॥
पलक ना विसरे तेरा परसंग। दीनदयाल रँगो ये रंग॥
सिद्ध बुद्ध ज्ञानी देव मुनीशा। करें अरदास तेरी जगदीशा॥
विषन वरंच आद महेशा। करें बन्दना नारद शेषा॥
तेरी महमा का नहीं पायो पार। अनमत जीया क्या करे विचार॥
पूरन दात से हो दयाल। दीजो सेव चरन रछपाल॥
सकल विकार हरयो चित नाथा। बारमबार करूँ अरदासा॥
तुध बिन जग में कोई ना थाओं। नित निहथाँवाँ आऊँ जाऊँ॥

मेहर करो चित नाम बसाओ। अपनी महमा का भेद लखाओ॥
तेरे दरस की रहे प्यास। मन तन माईं करो निवास॥
तूँ मात पिता तूँ ही संग साथी। तूँ ही आद अन्त में साखी॥
क्या वडयाई कह बिध बखाना। अन्धमत राखे विचार अनजाना॥

**दीनदयाल दया करो, चित चरन पावे विश्वास।**
**'मंगत' कीजे वन्दना, तूँ परम पुरख अबनास॥ 237**

करो आरती सतनाम समाए। मंगल भयो सत सिमरन पाए॥
दुबधा दुरमत सकल विनास। भज जगदीश परम सुखरास॥
मन निहचल सत रूप समाए। आलख परकाश आतम दरसाए॥
पाँच दूत सभी उठ भागे। अन्तरगत हरी चरन चित लागे॥
ऊँच द्वार गगन के तीर। बजे बजन्तर सुने मतधीर॥
पाँच सखी मिल कीनी अरदास। अखण्ड दीपक जोती परगास॥
अठसठ तीरथ और दानव देव। अपरम पुरष की करें नित सेव॥
पारावार ना नज़री आवे। अबगत लीला ठाकर घर पावे॥
पाँच पचीस मिल मंगल गायो। अभय पुरष को सीस निवायो॥
अगम अगोचर सब से न्यार। पुरख निरंजन कर दीदार॥
पवन पानी पावक समेरा। अम्बर ध्याए सत रूप गंभीरा॥
चार चौधाँ ने लीना घर वास। परगट पुरख देख अबनास॥
आवन जावन होत रहाई। सतनाम चित आरती गाई॥
देह देवल विच आतमराम। पूजे गुरमुख ले बिसराम॥
सुरत का थाल दीपक सत नाओं। चित्त इकागर का ताल लगाओं॥
खिमा दया का धूप धुखाए। सत बैराग का शंख बजाए॥
बिरह विवेक राग को गाए। प्रेम पुरख घर परगट पाए॥
निमख निमख कर डण्डवत करे। अजर पुरष की सोझी पड़े॥
पुन्न दान मन मनसा त्याग। सत परतीत का गावे राग॥
लख चौरासी बन्धन छूटे। सत सरूप की रसना लूटे॥
विमल शबद जोत निरंकार। नज़री आवे दसवें द्वार॥

पवन पंख ले सुरत उड़ाई। साचे नाम के धाम को जाई॥
पंध निराला अगम की घाटी। मर के जीवे परसे सो वाटी॥
आवागवन ना लागे फेरा। जो जन परसे पार गहीरा॥

**खोल किवाड़ गगन का, जोती लख निरंकार।**
**'मंगत' कीजे सत आरती, भवजल उतरे पार॥ 238**

ऐसा सन्तो करो विचार। बोलनहारा पुरख निरधार॥
हाड मास नाड़ी और खाल। प्रान पुरख बीच करे निहाल॥
तिस पुरख की जाने जानाई। दुर्मत जाल सकल मिट जाई॥
प्रान बन्ध सरूप करतार। गुरमुख कीजे उलट विचार॥
उलटे मारग मिले भगवन्ता। संकट जाए पाए चित परसन्ता॥
खोजो खोजो वस्त तत्त ज्ञान। दो तलवार धरो एक म्यान॥
पूरे सतगुर का वड परताप। उलट मारग कीना प्रभ जाप॥
इरध उरध प्रान का बन्ध। राखे सुरती जोती परचण्ड॥
परमानन्द सरूप अगाध। गुरमुख लखे अनुभवी समाध॥
जीवन जीवे सतनाम कमाए। निज घर बसे नहीं जमपुर जाए॥
अमरत खानी ये प्रान की धारा। जो जन सोधे उतरे भव पारा॥
घर में अमरत बाहर बिख खाए। अन्त काल जम देवे सज़ाए॥
लेखा लखया सरब दुःखदाई। जनम गँवायो ना हाथ कछु आई॥
इस नगरी में रहन ना पाए। जतन अनेक करें गुनी राए॥
उठ के सिमर तूँ नाम अमोल। प्रेम प्रीत से हिरदे तोल॥
अमरत कुण्ड घर में भरया। गुप्त द्वार में है सो धरया॥
मिल सत साधु लख सत लेख। बोलनहार का सुन सत भेख॥
दुरमत रोग सकल मिट जाए। साचा नाम जो मन माईं कमाए॥
और उपाय छाड रे गुनिया। सुपन समान सकल है दुनिया॥
ना कोई तेरा ना तू काऊ काए। सुख के कारन बहु साथ बनाए॥
साचा सुख एको प्रभ नाम। सबके अन्तर करे बिसराम॥
निर्मल सुरती प्रान तत्त खोजो। सतगुर पूरे का निरनय बूझो॥

अन्तर माईं आनन्द भण्डार। पल पल खोजो रूप मुरार॥
नित आनन्दघन रूप स्वामी। बिगनरहित सो रमे अनामी॥

**घट खोजो निज आपना, पियो प्रेम की धार।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, जीते जम द्वार॥ 239**

घर में स्वासा नित गुंजारे। भेद को बूझे उतरे पारे॥
वस्त अमोल प्रान की धार। छिन छिन खोवे मूढ़ गँवार॥
झूट सराए डेरा कीना। पन्ध अगाध की ख़बर नहीं लीना॥
होए मुसाफ़र करें बहुरंग। होए निहसंगी बनावे संग॥
क्यों भरमाए देख जग मेला। पलक घड़ी का जीवन खेला॥
निज धाम का करो विचार। छिन छिन जाए स्वास की धार॥
पन्ध निराला मुक़ाम बहु दूर। ग़फ़लत धार रोएं मन मूढ़॥
सत पुरखों का सुन विचार। साचा नाम जप बारमबार॥
पूँजी स्वास खाट हर नाम। अन्तकाल पावें बिसराम॥
काल सिर पर करे पुकार। उठ साजन सत लेख विचार॥
नाम विसारे क्यों मन मूढ़े। पल पल गूँजे काल करूरे॥
सत स्वामी सिमर दयाल। साचा लाभ जीवन का भाल॥
करमफल इच्छया भरम तुरंग। जनम मरन देवे बहुरंग॥
साचे ठाकर का हुकम पहचान। सकल जगत जिसका निशान॥
छाड करतूत पशु समानी। सिमर गोपाल परम सुख खानी॥
चार वेद नित करें दोहाई। सत पदारथ हर नाम कमाई॥
मूढ़मती सकल नर त्याग। हरजन के उठ चरनी लाग॥
सत विचार करो दिन रात। तपन जाए सत रूप समात॥
साहब साचा दोहे जहानी। नित आनन्द पुरख निर्वानी॥
राख भरोसा एक तिस गुनिया। चार पदारथ घर पावें दुनिया॥
सरब जगत को जो प्रतिपाले। सरब का स्वामी जो दीनदयाले॥
सकल तपन जीव की करे नासा। सिमरो सिमर सतनाम अबनाशा॥
क्या राजा क्या मीर ग़ुलाम। बिन हरी सिमरन नहीं पाए सुखधाम॥

नित सतसंग में चित लगाओ। अपने जीवन के महरम को पाओ॥

**दुस्तर माया कठन है, हरजन निस्तर होए।**
**'मंगत' साचे नाम को, जो पल पल हिये परोए॥ 240**

भरम का जाल सकल मिट जाई। साध चरन होवे सरनाई॥
मध मान माया का नासे। दीन बन्दगी कर अरदासे॥
चरन अमरत चरन धूल समाओ। सतपुरषन के भेद को पाओ॥
बिन सत सूझे नहीं परसे आनन्द। तीन काल नर तपे द्वन्द॥
झूट माया सत कर मानी। नागन विष चढ़ी अभमानी॥
सत यतन बिन नहीं जाए अंधकार। साध जनाँ ने कियो पुकार॥
सत मारग में धरो ध्यान। सत विचार करो कल्यान॥
मोह मन्दर से उठ के जाग। सच ध्यान हरी चरन लाग॥
काम क्रोध अत बड़े ग़नीम। साधन कठन ये भरम मुहीम॥
बिन साधे नहीं पावे बिसराम। नित डोलावें ये दूत बेकाम॥
होवे शूर लड़े मैदाना। मुकत मैदान मारे घमसाना॥
पल पल घायल होवे प्रेम के बान। शबद विवेक गढ़ करे पहचान॥
दिवस रैन रहे होशयार। एक एक कर शत्रु सब मार॥
साची जुगत धरे निशान। एक एक पर चलावे बान॥
मोह मन्दर का राजा मारी। विज्ञानसरूप विजे भई भारी॥
ऊँच सिंघासन अगमपुर देस। सकल माया का भयो नरेश॥
समदृष्ट छतर को धारे। जुग जुग राज अटल विचारे॥
अबगत नाम धाम अनूप। चक्कर प्रेम चलावे वोह भूप॥
बिखया अगनी उपद्रव सब नास। परम आनन्द भान परगास॥
सत करनी सत करे न्याय। सब में अपना रूप लखाए॥
निष्काम विरत का पाए ख़ज़ाना। निर्भय पद जीवन लश्कर पहचाना॥
अगम देस अजर का कोट। अखण्ड परगास परसे ब्रह्म जोत॥
अपना आप एक नहीं दूजा। सरब आधार एक तत्त सूझा॥
निर्वान सरूप भूप का होई। करे दीदार सब संकट खोई॥

**आलख पुरख परमेश्वर, घट में रह्यो समाए।**
**'मंगत' पूरन गुर मिले, तब परगट सो दरसाए॥ 241**

गुरमुख साची जुगत पहचानी। साचा नाम जपे निरवानी॥
इत उत माया भरम गँवाए। सत विचार नाम का पाए॥
परविरत निरविरत मारग पहचान। साचा शबद हिरदे में ध्यान॥
देह अभिमान छिन छिन त्यागे। सत सरूप में नित रहे जागे॥
माया भरम से भए निस्तार। सच प्रीत हरी नाम विचार॥
नाम ही खावे नाम ध्याए। एको नाम नित पान कराए॥
सुरती बाँधे इक नाम के संग। सत विचार सुने नाम परसंग॥
जीवन में करे शंका नास। सत शबद सिमरे अबनास॥
इन्द्रीजीत मन निषकाम। साचे नाम का परसे धाम॥
निमख निमख नाम प्रभ ध्याए। चंचल मनुआँ पर लात चलाए॥
सत शबद कँवल परगासे। इकागर चित करे अरदासे॥
नाभकँवल में सुरती गाड़े। साचा नाम का लेख विचारे॥
विखमी सन्धी खोली नाड़ा। आलख पुरख का लखे पसारा॥
अलप आहारी निंद्रा अलप। साचे नाम की कल्पे कलप॥
हंग बुद्ध विकार विनासे। सत शबद आतम परगासे॥
निरख परख शबद की कीजे। दुरमत भेद भरम को दीजे॥
दृढ़ विश्वास मन नाम सँभाल। उलट पियाला गगन को भाल॥
स्वास सुरत नित ही नित मेले। अगम पन्थ में गुरमुख खेले॥
पायो भेद भयो उजयारा। साहब दरसया एक ओंकारा॥
पूरन गत गुरमुख धारी। सत सरूप का भयो ब्यौपारी॥
सत मारग में जीवन जीया। गुरमुख ज्ञान आतम दरसीया॥
भयो परगास मन शबद आनन्दा। आवन जावन मिटी द्वन्दा॥
अपनी करनी का फल पायो। सत बन्दगी हरीचरन समायो॥
प्रेम मारग आया परतीत। साचे नाम का गायो गीत॥

**नाम साहब का सिमरिए, ज्यों सूई में डोर।**
**'मंगत' जीवन लाभ है, घर परसे शबद अघोर॥ 242**

तू साचा साहब सरब समराथा। दीनदयाल सरब के नाथा॥
तेरी कुदरत अपरम अपारी। तेरे चरनी नित बलिहारी॥
कोट आकास कोट पाताला। अपनी शकत परकास दयाला॥
चार अठारह नौ पढ़ थाके। नेती नेती नित कर जापे॥
कोट अट्ठासी मुनी ध्यावें। मच्छ कच्छ नहीं पार को पावें॥
सिद्ध चौरासी नौ नाथ ध्याए। सप्त रिखीशर तेरा जस गाए॥
गुर अचारज और ज्ञानी। आलख लेखा नहीं आवे ध्यानी॥
पीर पैग़म्बर नबी अवतारा। भाँत भाँत कर करें विचारा॥
आद जुगादी तेरा पासार। लख लख थाके ज्ञानी अपार॥
पाँच तत्त गुन तीन प्रगटाए। चारखानी का परबाह चलाए॥
सरब व्यापक आप अलेपा। वाँग आकाश सरब रमीता॥
ग्रन्थ कतेब बहु इतिहास। सिद्ध बुद्ध कीजें तुमरी अरदास॥
जिस जाना सो भेद आगाही। तिसमें ही सो गया समाई॥
दूजा हुआ ना नज़री आए। शकत अगम कौन भेद दिखाए॥
नानां मारग से पूजें तुध देवा। जुगा जुगन्तर करें नित सेवा॥
तूँ विसरें तब काल गरासे। करम जाल में जीया फाँसे॥
जतन किए ना छूटन पाए। भरम का बाँधा नित भरमाए॥
काम क्रोध लोभ विकारा। तिसमें डूब रह्या संसारा॥
होवें दयाल करें बख़शीश। अपनी भगत मुकत संदेश॥
काडें बिख माया से जन्त। अपरम पुरख पूरन भगवन्त॥
दीन ग़रीबी तिस मन समाए। अनन प्रीत से नाम को गाए॥
छाया द्वैत जाए बकारा। सरब आधार तू ही भरतारा॥
निर्मल बुद्ध परसे आनन्दा। जम जुरमाना जाए दुःख द्वन्दा॥
पूरन करमी हर भगत कमाए। तृखा विनास तृप्त घर जाए॥

**नित आनन्द पुरखोत्तम, नित मूरत कल्यान।**
**'मंगत' सिमरन तिसका, जग जीवन सार निधान॥ 243**

अचरज लीला ये जग खेला। पूरन पुरख ने रचयो मेला॥
आप ही सब में रह्या वरताई। अपनी गत मित आपे पाई॥
आप देव असुर का रूप। आपे रंक आपे भयो भूप॥
आपे पण्डत करे विख्यान। आपे श्रवण करे धर ध्यान॥
आपे दाता होवे दातार। आपे माँगे भीख भुख धार॥
आपे शूर बीर बलवाना। आपे कायर तजे मैदाना॥
आप तपीशर नित तपधारी। आपे भोगी भोग विचारी॥
ऊँच नीच में आप समाना। हस्ती कीटी और चारे खाना॥
आपे भगत रूप को धारी। अपनी लीला आप विचारी॥
आपे धरती अम्बर परगासे। आपे पावक नीर बिलासे॥
आपे सरजन दुरजन होई। सरब जन्त इक लड़ी परोई॥
आपे हिकमत हुकम रवाल। आपे सरब में रहे दयाल॥
अपना आप पहचाने जोए। सब में देखे एको सोए॥
इन्दर चन्दर भान परगासे। देवी देव करें अरदासे॥
गुपत परगट आप समाई। आपे नाथ और दास कहलाई॥
अपनी पूजा आप पुजावे। इत उत आपे आप दिखावे॥
अपरम अपार पुरख परताप। आपे कीजे अपना जाप॥
निर्मल तत्त सरब समाई। सब से न्यारा आप रहाई॥
बिस्माद ज्ञान अपरम अपारा। अपनी करनी करे विचारा॥
आद अन्त ना तिसका कोए। सरब परापत न्यारा सोए॥
जिस जाना ये तत्त ज्ञान। सर्वज्ञ ब्रह्म करी पहचान॥
पूरन पूर सरब इक रंग। विरला बूझे ये परसंग॥
इच्छया करम से भयो जन मुक्ता। तत्त्वसरूप आतम संजुगता॥
मोह माया सब गयो अन्धकारा। सरब आतम आए दृष्टारा॥

**सब जग रूप ब्रह्म का, भेद भरम नहीं कोए।**
**'मंगत' सत तत्त खोजिए, फेर जनम नहीं होए॥ 244**

## तीसरा मार्ग - योग चिंतामनी

**ब्रह्म अक्खर अद्वैत नित, परचे विरला कोए।**
**जाँ को सतगुर मिलनगे, ताँ घट सोझी होए॥**

ओ३म् अक्खर है अपर अपारा। जिन ये सरजया सकल आकारा॥
प्रथमे सहज मनसा बन आई। तीन गुनाँ रच जगत बनाई॥
तेज बाई जल पृथ्वी आकासा। इन पाँचों का सकल तमाशा॥
नानां बासन रूप बहु घड़िये। नाम रूप ताँ भिन्न भिन्न धरिये॥
जैसा नाम तैसा रूप होए। ताँ सों भेद पावे ना कोए॥
पिण्ड आकार मँजार ये साजा। तिसमें पवन बजाया बाजा॥
आकार ऊकार मकार बखानी। त्रै मात्रक ये शबद पछानी॥
उतपत परले इस्थित काजा। सरब सो रख्यक ग़रीब निवाजा॥
ब्रह्मा विषन रुद्र नित ध्याए। ताँ का वारापार ना पाए॥
घट घट रमे पर सदा अलिप्ता। मिल सतगुर जानी किसे जुगता॥
अच्छर से छर इच्छया होई। बूझे भेद ये विरला कोई॥
मूल अच्छर सभी सिर धामा। सिमरे योगी ले बिसरामा॥
तीन गुनों का बनत बनाया। लक्खी ना जाई अनवरचित माया॥
सूक्षम अस्थूल बहु लीला धारी। सब का कारन प्रभु आप मुरारी॥
निस दिन सिमरो तत्त गुनवन्ता। पारगरामी पुरख अनन्ता॥
सिमरे सो जाँ को गुर दिखलाए। **'मंगत'** रुच रुच तिस चरन समाए॥**245**
तिस पुरख का अन्त ना पार। वेद ग्रन्थ करें पुकार॥
अनेक जतन कर सन्ताँ प्रभ पाया। नित आनन्द सब घटे समाया॥
अगम अगोचर ऊँच मुक़ामी। परसे गुरमुख तत्त अन्तरयामी॥
झूटा जग परपंच बकारा। जाँ की सिमरत में विसरे करतारा॥
आद अन्त कछु मूल ना ताँ का। कलह कलंक भरम सब मन का॥
सतगुर सन्त मिलावा होई। **'मंगत'** दुरमत दुबधा खोई॥**246**
अज अबनाशी पुरख निरालम। जाने भेद गुनी कोई आलिम॥
जानत भेद मिटे सब खेदा। पीवे अमरत मिटे चित छेदा॥
जनम जनम के रोग निवारे। अच्छर नाम जब हिये विचारे॥

उस्तत कही ना कथनी जाए। सरब निरालम पुरष समाए॥
अबगत अज अनील अबनाशी। सिमरन कीजे मिटे जम फाँसी॥
सिद्धाँ गुनियाँ बहु सालाहिया। अपरम अपार पुरख निरमाया॥
घट घट रमे नहीं जाने भेदा। राम विसार काल दल छेदा॥
राजा राना सभी भरमाए। आस अन्देस में जनम गँवाए॥
भोगे भोग नहीं मन तृपताए। जन्मे मरे बहु दुःख पाए॥
काची माया इस्थिर जानी। डूब रहे सकले जग प्रानी॥
अती कलेश में जीव नित घेरा। कौन मिटावे गवन का फेरा॥
भाई बन्ध मित्तर बहु साथी। कोई ना भयो अन्त को नाती॥
ताँ सो अपना जीवन विचार। काहे मरें विच कूड़ बकार॥
परम शान्त पद निरवाना। अदभुत रूप रमे भगवाना॥
मिल सतसंग गुर दीखया ले। **'मंगत'** संशे सकल चित गए॥**247**
अपना जीवन आप उद्धार। कोई ना साथी इस संसार॥
जिस जोबन को अती मन मानी। सो जोबन होए राख निशानी॥
हाड मास का पिंजर धारी। भरमत फिरें क्यों मूढ़ गँवारी॥
छिन में उपजे छिन में बिनसावे। जल का कुम्भ ज्यों खेल खलावे॥
दृष्ट उघाड़ देख संसार। कोई ना इस्थिर रिह्या बार॥
राजा राना भूप भूपाल। छाड गए हिकमत हुकम कमाल॥
महल सराओं भए सुनसान। अचरज माया देखी भगवान॥
भज गोबिन्द कीजो सतकार। **'मंगत'** जनम कदारथ सार॥**248**
जिस जीवन को जीवन मानी। सो जीवन होए भसम निशानी॥
सच जीवन मिल गुर पहचान। अच्छर ब्रह्म सुन अबगत तान॥
श्रवन मनन कीजो निध्यास। उज्जल मनुआँ बुद्ध परगास॥
खिमा ग़रीबी आए बसाए। भाओ भगत प्रभ शोभा गाए॥
ऐसी रहनी जो नर रहे। सुफल जनम ताँ का जग भए॥
निराकार निरालम जोई। घट घट व्यापे पुरख सोई॥
पावक पवन अम्बर समेरा। तिसकी शकत में विचरे नीरा॥
स्वेदज अण्डज जेरज राची। उद्भुज रचना बहु भाँत कर साजी॥

सब का साखी आप निरंकारा। मिल सतसंग कर भेद विचारा॥
तिस से भिन्न ना दूजा कोए। **'मंगत'** नित प्रति हिये परोए॥**249**
प्रभ विसार पावे बहु दूखा। भोग भुगत पर रहे नित भूखा॥
चौधा लोक की जो सम्पत पाई। पर मन को नहीं शान्ति आई॥
ढूँडत फिरा बन कन्द्रा माईं। चौधां लोक के राज को पाईं॥
तृष्ना नागन देवे संतापा। कौन मिटावे ये दीरध तापा॥
सतसंग विचार वैराग परधाना। ताँ को परस होवे कल्याना॥
सतपुरखों ने ये कथा बखानी। राम रमत परम सुखखानी॥
काची देह का क्या बिश्वासा। छिन में आवे टूटे साँसा॥
दुरलभ समाँ विचारो मीत। करो उद्धार ये जनम पुनीत॥
अगम अगोचर सरब से दूर। मिल सतगुर लयो परस हज़ूर॥
चाम दृष्टी से नज़र नहीं आवे। अन्धमत मनुआँ कैसे तृप्तावे॥
ना सतसंग ना सत विश्वासा। मोह अगन में करे निवासा॥
काम क्रोध अधिक अहंकारा। नित ही भरमे जीव गँवारा॥
छिनकारक जग जीवन जोई। धार कपट सब औसर खोई॥
कपट के भेख नहीं पावे बिसरामा। जनम अनेक धारे दुःख जामा॥
भए बैरागी और डंडी सन्यास। मन में लागे तृष्ना की फाँस॥
अनेक कठन कर देह को गाले। पर छूटत नाईं मन मोह जंजाले॥
सीस जटा तन भसम रमाई। बसे बीबान नहीं शान्त पाई॥
गृहस्ती विरक्ती बहु भेख कर हारे। करम संदेस नहीं जाए बकारे॥
कोई विरला जग में गुरमुख आए। खिमा ग़रीबी हरी सेव कमाए॥
नित उदास काया मोह त्यागी। **'मंगत'** प्रीत अनन प्रभ जागी॥**250**
सत संतोख मन आए समाया। अजब गम्भीरी जीवन पाया॥
दरस परस एको सतनामा। मिल सतगुर परसा सत धामा॥
साची कहनी साच कर धारी। साच शबद का भया वापारी॥
अगम निगम में सुरता तोले। समदृष्ट की बारता बोले॥
इकागर चित विषयन से दूरा। टपके ज्ञान मस्तक हज़ूरा॥
एह बिध रहनी जो जन रहाई। काल परहरे अकाल घर जाई॥

पूरन भाग सो गुरमुख मिलाए। मन के दोष सकल बिनसाए॥
ज्ञान विज्ञान जागे वैरागा। निज सरूप आतम घर गाजा॥
सत पुरषारथ मन में आया। करी परीखत दुर्मत माया॥
मन चंचल की दिशा पहचानी। गुरमुख जुगता अन्तर जानी॥
साध पुरख के चरन बलिहार। पायो ज्ञान अबचल भण्डार॥
ज्ञान कथे विज्ञान मन मानया। **'मंगत'** सतगुर मेल परमतत्त जानया॥**251**
नित ही नाम की रसना लागी। जुगती योग में सुरता जागी॥
काची काया मम भाओ त्यागा। जनम जनम का सोता जागा॥
सदा उदास शबद रस पीवे। अबनाशी पुरष घट माईं लखीवे॥
गुर के शबद में जीवत मरे। अचरज वस्त नज़र तिस पड़े॥
जनम मरन नहीं काल भ्रम बूझा। सतगुर परस अबनाशी तत्त सूझा॥
अपनी हिकमत सकल त्यागी। दीन भाओ मन भया अनुरागी॥
एक साहब की धारी मन आसा। एक घर राखे नित विश्वासा॥
राजा रंक सब एक का खेला। एक को परसे सो गुर का चेला॥
अपनी ग़फ़लत आप मटाई। अबगत सोभा तब घर में पाई॥
दूजा हुआ ना दृष्टी आए। केवल एको सरूप समाए॥
आपा मेट लक्खो नरंकार। **'मंगत'** बखान करे तत्त सार॥**252**
सादगी समता नित हिये परोए। तब इस मन की दूषन खोए॥
नित ही धारन एके सच नाम। तब जन परसे निर्मल धाम॥
नित ही मन के दोख त्यागे। सेवे नाम शबद बैरागे॥
अपरम नाम जो गुर दिखलाई। मन तन अन्दर तिस करे कमाई॥
काल करम का फंदा तोड़े। दीन ग़रीबी चित रसना जोड़े॥
आठ पहर ये करे कमाई। नाम जपे मन चित लाई॥
अक्षर नाम जो बिस्मे बिस्माद। तिसको घाले कोई गुरमुख साध॥
शिव सनकादक नारद शेषा। अबगत नाम जपें नित ईशा॥
एक नाम का सकला बिस्तारा। चार वेद बानी अपारा॥
नाम की महमा गावें सती सन्यासी। नाम दृढ़े काटे मोह फाँसी॥
ऐसा नाम निरालम जोई। सतगुर मिले परापत होई॥

नाम बिना नहीं मनसा ठहराए। नाम बिना नहीं डोलन जाए॥
नाम बिना नहीं मन सुखरासी। नाम बिना नहीं मिटे चौरासी॥
नाम बिना नहीं होवे योग। नाम बिना सब रोग और सोग॥
ऐसा नाम अमोलक आया। सकल जीवों की त्रास मिटाया॥
नित ही सिमरो सो नाम जगदीशा। **'मंगत'** सिमरन सब हरे कलेशा॥**253**
सकल जगत की सार इक नाम। जाने गुरमुख ले बिसराम॥
पढ़ पढ़ विद्या मन अन्धकारी। अन्तर लागी विषे की खारी॥
अनेक तपस्या मन में धारी। नाम परतीत बिन नहीं मिले मुरारी॥
बारम्बार करो विचारा। साचा नाम जग जीवन सारा॥
नाम साहब दा वड परतापी। गुरमुख जाने मन अन्तर जापी॥
ग्रन्थ कतेब क़ुरान हदीसा। नबी पैग़म्बर इक नाम जपीसा॥
करें पुकार पद पद सार। नाम जपे उतरे जन पार॥
जग में वस्तु कोई स्थिर नाईं। छिन भंगर ये नित भरमाईं॥
आलख पुरख का नाम पहचान। **'मंगत'** चीने पद निरवान॥**254**
ऊँची घाटी नाम बसेरू। पहुँचे सतगुर सिख आख़ीरू॥
नाम ख़ुमारी जिस मन आई। तीन लोक का नाथ कहलाई॥
सभी जन्त तिस सीस निवावें। परम पुरख का पार नहीं पावें॥
अधिक वडयाई नाम से पाई। नाम जपो तीन लोक दोहाई॥
नाम ही सार अधिक परगासा। विरला चीने कोई गुर का दासा॥
अपनी दुर्मत आप गँवावे। नाम जपे सहजे तर जावे॥
सो वडभागी जिस नाम कमाया। आप तरे और जगत तराया॥
सतगुर रूप सो ही जन होई। सत मारग में सुरत परोई॥
अमरत नाम जप काल परहरया। चरंजीव पद में जाए पसरया॥
मिरतक काया कञ्चन सम होई। सत सरूप में गयो समोई॥
मन तन अन्दर दृढ़ विश्वासा। नाम कमावे संग सास गरासा॥
अनन भगत तब परगट होए। अखण्ड ब्रह्म सब माईं लखोए॥
मन का चूका भरमन गवना। अन्तर जापे नाम संग पवना॥
घट की पवन जागरत कीनी। बाजे नाद मिरदंग और बीनी॥

सुन सुन मनुआँ निहचल होई। अगम ठौर में जाए बसोई॥

**ऐसी महमा नाम की, लाखे गुरमुख कोए।**
**'मंगत' ताँ के पद मस्तक लगे, जनम जनम मल खोए॥ 255**

नाम नाम सब कहत हैं, नाम ना जाने कोए।
आपा पर का छेदिए, नाम कमावे सोए॥
उज्जल रूप है सन्त का, जाँ से मिले नाम की दीख।
कोई गुनी भिखारी नाम का, लेवे नाम की भीख॥
चरन-अमरत को पान करो, कर डंडवत साध सरूप।
ताँ के दर्शन से मिटे, गवन चौरासी कूप॥
सार असार निरना करें, बन्धी करें ख़ुलास।
भाग पाए सतसंग मिल, तन मन हो परगास॥
टूटे बन्धन मुकत होए, पावे नाम अगाध।
किरपा दृष्टी साध से, सब ही मिटी व्याध॥
ऊँच घराना सन्त दा, ऊँचा करें विचार।
ऊँच कमाई सन्त की, सब जन्त भए निस्तार॥

**निश्वैरी निष्कामता, सतपुरखों से हेत।**
**दुर्लभ पाइये सन्त जन, 'मंगत' मस्तक टेक॥ 256**

वैर विरोध ममता तज, विरत रहे निष्काम।
होए दयालू जगत में, देवे हर का नाम॥
आप कमावे पल छिने, अपरम पुरख अपार।
सुध बुद्ध ममता त्याग के, घाले साची कार॥
रैन जपें नित नाम को, दिन में करें विचार।
जनम कदारथ तिनका, जिन भाखी अचरज सार॥
नित नित बाँधें मन को, एक नाम टकसार।
बूझे शबद अगम का, धन्न योगी अपरम अपार॥
सत आसन संतोख की मुद्रा, खिमा का चोला पाए।
जप तप संजम आहार करे, नित ज्ञान भभूत रमाए॥

जत सत का आड़ बन्ध लगावे, जुगती कंठी पाए।
जाप अजपा को जपे, मन मुकत धाम को जाए॥
अगम निगम के घाट में, बाजे अनहद तूर।
पूरा गुरु जोगिन्दरा, घर परसे पूरा पूर॥
पाखण्ड तोड़े बन्धन हरे, सब से कीजे नेह।
चेतन चित उद्धार करे, तन को कीजे खेह॥
मन को भसम कराए के, लखे नाम निरवान।
ऐसा साधू जब मिले, तब होए कल्यान॥
बिना जुगत नहीं साधना, बिना जुगत नहीं सार।
बिना जुगत नहीं पाइए, अपरम पुरख अपार॥
बादमुबाद सब ही तजे, पंथा पंथी खेद।
होए निर्मान जग विचरे, तब पावे सत भेद॥
मन इन्द्री दमना करे, तोड़े बुद्ध हंकार।
सिदक़ सेवा मन में धरे, तब उतरे भवनिध पार॥
मन का थामन कठन है, थामे कोई गुरमुख सूर।
बिना जुगत नहीं वस होवे, अत चंचल कठोर॥

**लाख बरस तप जो करे, जुगत बिनां निर-आस।**
**जुगत पाए गुरदेव से, 'मंगत' मन विशवास॥ 257**

करनी कथनी सब तजे, और हिकमत हुज्जत त्याग।
सतगुर की मिले दीखया, तब उठे आतमा जाग॥
आहार ब्यौहार करे जुगत से, मन में राखे धीर।
बिखे व्याध सब ही मिटे, जीत पाई जम बीर॥
आलसी और परमादी, नहीं पावे भगत विचार।
भगत करे कोई सूरमा, छेदे मन गँवार॥
छिनभंगर तन जान के, अबनाशी करे विचार।
ऐसी विरती जब मिले, तब होवे सत कार॥
कूड़ कपट की पोटली, गहरे नीर बहाए।
प्रेम चिंगारी जब लगी, तब ही सार को पाए॥

जिनाँ नाम कमाया, बह के मन दरयाओ।
नित ही रहंदे शील सो, लागत कभूँ ना ताओ॥
नाम कमावे जौहरी, मिल सतगुर परतीत।
काल गरासे ना तिसको, नित सो सरबाजीत॥

**नित अनादी ज्ञान में, सुरत रहे घनघोर।**
**'मंगत' मिटे सब कल्पना, मिल सतगुर परसे ठौर॥ 258**

भगती तब ही सूझिए, जो मन छाडे निज दाओ।
आज्ञा माने साहब की, सकल करम भसमाओ॥
ऐसी जुगती में विरला, सन्त कोई रहाए।
नाम सार नित जाप के, मन तन मंगल पाए॥
ज्ञान ध्यान और सीलवन्त, मन तिनका निष्पाप।
उट्ठत बैठत नित जापते, आलख पुरख का जाप॥
बिखे बिखाद सब ही मिटे, जब सुनया सच हरी नाम।
मिल के संगत साध की, परस लिया निज धाम॥
जिस पद गए नहीं घूमते, बौहड़ चक्कर संसार।
सो पद पाया मन में, सन्तन के परसाद॥
राम कृष्न और गुनी बहू, सब सन्तन के शीष।
ऊँच घाटी है साध की, आलख पुरख का भेस॥
चार वेद जस गाँवदे, महमा अपरम अपार।
सरजनहार वखाँवदे, जब खोलें उज्जल मुखार॥
शिव सनकादक गाँवदे, बैठे धुर कैलाश।
सन्त की सेवा से मिले, निर्भय पद अबनाश॥
उठ रे मनुआँ मूढ़या, सुन साचा उपदेश।
मानुष देह दुर्लभ है, घालो शबद संदेश॥
जग में बहु सम्पत मिली, माल मुलक अपार।
बिन सिमरे तत्त ज्ञान के, फिर फिर जूनी धार॥
नित निर्मानी हो रह्यो, राख साहब की आस।
मन मन पावें शान्ती, निर्भय पद अबनास॥

भेख किये ना साध होई, वासना तजे सो साध।
प्रेम पदारथ पाए के, किलविख हरे व्याध॥
आओ मिलो सतसंग में, जीवन करो उद्धार।
लोहा पारस परस के, हो गया कञ्चन सार॥
साची पट्टी ज्ञान की, साची जुगती योग।
साच कमावे जो गुनी, तिसे नहीं व्यापे रोग॥
नाम ही सत सार है, सतगुर मलाह के हाथ।
बहू गुनी निस्तर भए, रख प्रेम प्रीत गुर साथ॥
जाँ को साध मिलाया, गयो अन्तर का पाट।
लाख बरस के पन्ध को, पल में दियो पुगात॥
ज्ञान सनेही साध को, नित मन माहीं चितार।
पावें जुगती योग की, पूरन तिन उपकार॥

**महमा सन्त की क्या गिनूँ, कथ कथ वेद विचार।**
**जीव उद्धारी सन्त हैं, 'मंगत' लेखा सार ॥ 259**

लाख चौरासी भरमते, मिटा ना मन ग़ुबार।
मानुष जनम को पाय के, अब कुछ करो विचार॥
भरमत भरमत नित फिरें, रंग रंग जूनी पाए।
संशय मन का ना मिटे, बिन सतसंग सहाए॥
विलम्म ना कीजे बावरे, काल बजावे ढाँड।
समा गया फिर ना मिले, ना सिर चूके जमफाँद॥
ये ही मन विचार के, छिन छिन घालयो नाम।
अगम पन्थ अनूप है, सतपुरष करे बिसराम॥
ज्ञान ध्यान बहुता कथे, जुगत बिना नहीं थाहे।
दुर्मत माहीं मर मिटे, ना कुछ काज सराहे॥
बहुता कथना काम नहीं, इक नाम का सार विचार।
जीवन तब सुफला भयो, जब मन का गयो ग़ुबार॥
उट्ठत बैठत हर जपो, सुन सन्तन का लेख।
पारब्रह्म परगासिया, पूरे गुर के भेख॥

जाँ के मन तत्त ज्ञान नहीं, थोथा है सो साध।
गल्लाँ करे घनेरियाँ, मन में धरे उपाध॥

**अपना मन सोधा नहीं, औराँ दे उपदेश।**
**'मंगत' मनमुख भरमते, जग को देवें कलेश॥ 260**

कथ कथ बादी बहु मरे, ऊँचे चढ़ मुक़ाम।
मन की दूषन ना मिटी, कहबिध परसे धाम॥
प्रेम बिना कुछ ना सरे, ना कुछ पावे सार।
बाद बदी में मर मिटे, जम नित करे ख़्वार॥
जिन घट में प्रेम है, गूढ़े ताँ के नैन।
मुखड़ा रहत उदास नित, तिन बोले अमरत बैन॥
सत का हाट लगाय के, पूँजी तोलें नाम।
बिरले प्रेमी जगत में, परस गए सतधाम॥
प्रेम कमावन कठन है, दुरगम प्रेम की बाट।
प्रेम बिना ना तृप्त हो, दुरजन मन कमज़ात॥
प्रेमी सतगुर जब मिले, दीना प्रेम लखाए।
काल कराल को मेट के, अमरलोक पहुँचाए॥
प्रेम की सार क्या गिनूँ, प्रेमी हर का रूप।
दुबधा दुर्मत मेट के, नित ही रमे सरूप॥

**अहंकारी मन प्रेम नहीं, ना चित होए सुचेत।**
**'मंगत' विखे की अगन में, नित नित भरमें नीत॥ 261**

जाँ के मन बैराग है, वहाँ प्रेम करे परगास।
बिरह अगन में जल गए, अनंक पाप दु:ख नास॥
बिना प्रेम ना हर मिले, ना उपजे आनन्द।
तृष्ना अगनी में जले, बिनाँ प्रेम जमफंद॥
प्रेम उपजावन का, ये निरमल विचार।
आपा मेटे हर जपे, उपजे प्रेम की सार॥
गदगद होवे हरी चरन में, नैनों विगसे नीर।
एक तृष्ना हरी नाम की, मेटे जग की पीड़॥

**प्रेम पाए गुरुदेव से, जाँ मन ज्ञान का रंग।**
**'मंगत' परसे जो गुनी, पाए अजर धाम परसंग॥ 262**

रल मिल सन्ताँ आखया, भोगो नाम निजसार।
तरन तरावनहार है, जप जप लागें पार॥
घड़ी घड़ी तन छीजता, ताँ सों करो विचार।
एक नाम चितार लो, जो जग जीवन सार॥
आसा जीवन राख के, भरमे राए और भूप।
जीवन में मरना मिले, देखे काल सरूप॥
साची संगत में मिलो, प्रभ का करो विचार।
मौज पावें इस जनम की, नाम लखें टकसार॥
मन का क़ुफ़ल उगाढ़ के, पाप करो सब नास।
रोम रोम में रम रह्या, सो साहब अबनाश॥

**सतगुर सेती प्रीत कर, जो खोले अन्तरपाट।**
**'मंगत' कहे विचार के, तब पावे सच वाट॥ 263**

गुरमुख सुन सयानया, गुर बिन भेद ना पाए।
नेमी धरमी मर मिटे, बिना शबद नहीं थाहे॥
ज्ञान ध्यान की सार है, एक शबद निर्वान।
परखे गुर की जुगत से, जीव लेवे बिसराम॥
आलख अनादी रम रहा, अन्तर बाहर मीत।
बिन सत जुगती योग की, कभू ना होए परतीत॥
काची काया भीतर, अबनाशी खेल रचाए।
विरला गुरमुख जगत में, सार भेद को पाए॥
निर्मल योग विचार के, दृढ़ कीजो अभ्यास।
मनसा निस्चल तब होए, काल करम दुःख नास॥
ग्रन्थ कतेब विचार से, कभू ना होये योग।
बिन सतगुर के साधन करे, उपजे व्याधी रोग॥
योग बतावे भेद को, देह में निरदेह सार।
अखिल निरंजन जोत तब, घट देवे दृष्टार॥

**ऐसी जुगती योग की, 'मंगत' करे बखान।**
**सुन पुरखा गुनवन्तया, भेंट करो भगवान॥ 264**

प्रथमे आसन सहजे बाँधे। इन्द्री इस्थिर मनुआँ खाँडे॥
काची काया करे विचार। आवत जावत पवन संचार॥
अपने माहीं ब्रह्म तत्त चीन। सो ही जोगिन्दर योग परबीन॥
पवन को छेदे मन ठहराए। पवन को सोधे सत शबद को पाए॥
पाँच तत्त पच्चीस धारा। काचे गढ़ का करो विचारा॥
नौ द्वार ये गढ़ के जानी। दसवाँ गुपत लखे कोई ज्ञानी॥
खट चक्कर इस काया माईं। बूझे गुरमुख योग लखाईं॥
सार योग की जानो मीता। थामे पवन भए पुनीता॥
गुदा लिंग नाभी अस्थाना। हिरदे कंठ धरे मकाना॥
त्रिकुटी चक्कर पछाने जोई। तिस जन को फिर गवन ना होई॥
खट चक्कर और पाँचों मुदरा। ब्रह्म परकाश शबद निरद्वंदरा॥
नाभकँवल है अचरज थाना। जाँ में वसया श्री भगवाना॥
तिससे उपजे स्वास का थम्बा। सुरती खेले खेल अचम्बा॥
दस पवना देह में बिस्तारी। दो पवना सब की अधिकारी॥
प्रान उपान ताँ को नामा। करे पछान ले बिसरामा॥
गुर की सिखया जाप जपावे। अकथ कथे शबद रस पावे॥
अपना रूप आप मिलाए। **'मंगत'** बोले ज्ञान आगाहे॥**265**
बाहर जाती पवन हकारी। भीतर आवे रूप साकारी॥
हकार साकार मिलावे दोई। निरबिख नागन सीधी होई॥
हकार साकार को एह बिध मिलाए। बाँधे पवन पच्छिम घर जाए॥
ईड़ा पिंगला में सुरती धारे। गुर का शबद पल पल विचारे॥
उलट पवन कमल परगासे। उपजे शबद ज्ञान धुन रासे॥
उठके शबद चढ़े आकास। बाजे अनहद नाद निर्बास॥
स्वास सुरत और नाम का बन्धा। गुरमुख खोले बिखमी सन्धा॥
उलट पलट पवन को देवे। मूल शबद नित मन में पीवे॥

नाभकँवल में गरजे बाई। दसवें द्वार तब सोझी पाई॥
बाजे अनहद नाद अखण्ड। धन्न योगी छेदा ब्रह्मण्ड॥
मूल योग की सार पहचान। मन पवन की लाओ तान॥
मन पवन कीजे इक ठौर। गुरमुख बूझे मता अघौर॥
पवन आरम्भ संग नाम सम्भाले। बंकनाल के तोड़े ताले॥
उलट पवन घर उमगे नीर। पीवे कोई कामिल फ़क़ीर॥
उलटा नीर चढ़े आकास। देखे खेल अबगत अबनास॥
मन पवन को नित परचेले। अबगत नाद गगन में खेले॥
सतगुर मिले तब जाने पन्ध। **'मंगत'** खोले विखमी सन्ध॥**266**

ध्रुव लोक से पवन को बाँधे, सुरत पाताल पठाए।
इरध उरध में आसन करके, गुरमुख योग कमाए॥
बाहर सोलह पवन की गमता। सम कर पावे तत्त समता॥
पवन सम्भाल आरम्भत करे। धरती उलट आकासें चढ़े॥
उपजे नाद सारंग तार। धन्न योगी गत लखी अपार॥
निरगुन सरगुन जाने भेद। सतगुर मिलें मिटावें छेद॥
निरगुन सरगुन दोई बन्धाए। तत्त निरंकार तब परगट पाए॥
नौ दवारे बन्धे नीत। पवन को पीवे सो चरंजीत॥
पवन को सोधे उपजे नाद। अगम निगम की खेड अगाध॥
ऐसी जुगती जाने जोई। अनुभवी समाध में सुरत परोई॥
मन की विरती होई लवलीना। आलख शबद घट अन्तर चीना॥
उपजे शबद बहु रंग की तार। अमरत धुनत बाजन्त सार॥
त्रिकुटी भीतर शबद किलकारी। तब जोगिन्दर इच्छयाचारी॥
त्रिकुटी ऊपर परस सुखसीर। भँवर गुफ़ा के लागे फेर॥
नानां रंग जोती दरसाई। कोट भान छबी गिनी ना जाई॥
ज्यूँ ज्यूँ नाद गरजत करे। त्यूँ त्यूँ जोती से रस झरे॥
दमके दामन नाद रस पीवे। **'मंगत'** विरला कोई मर के जीवे॥**267**
सहँस हज़ार दल कँवल को फोड़ी। अजपा जाप की लाई झकझोरी॥
अगम जोत अखण्ड अनूप। परसे कोई गुर का पूत॥

पाँच शबद रंग उपजे नाद। सुरत समाई वड बिस्माद॥
बूझे शबद मन मगन समाए। होए निरास परम पद पाए॥
तिस ते परे ना कोई योग। मन पवना शबद रस भोग॥
तीनों बन्ध लगावे ताली। ब्रह्म कपाट खुले तिरनाली॥
निस दिन सोधे गुर का पूत। पाँच-पच्चीस बाँधी इक सूत॥
मनुआँ ठाके विरत रजाए। प्रन अपने को सम कर पाए॥
पवन पखारे शबद गुर जुगता। एह बिध उरध कँवल मुख खुलता॥
जब लग पवन ना सोधे मीत। तब लग पाए ना मन परतीत॥
काची काया करो विचार। ब्रह्मरूपनी पवन रीजार॥
पवन को सोधे मनुआँ ठहराए। नाम को सोधे पवन शुद्धाए॥
मूल नाम सतगुर बतलाया। अगम निगम की गम को पाया॥
चन्द सूरज का करे आहारा। सो योगी पावे भरतारा॥
ऐसा नाम कमावे जन कोए। जीवन जीवे सत रूप समोए॥

**चन्दर सूरज दो ही बाँधे, पच्छम दिशा के घाट।**
**'मंगत' कँवल परगासिया, निर्मल सूझी बाट॥ 268**

दिन दिन पवन को बाँधे योगी। अमरत पीवे ज्ञान संजोगी॥
चार उंगल आकास फैलाओ। गुरमुख ताँ में आसन लाओ॥
आसन आकास सुरत मतवाली। अमरत शबद पियो सुखसाली॥
अखण्ड नाद परगट तिरबैनी। जीवे योगी गुर की कहनी॥
मन पवन जब मेला होए। सुखमन बोले गगन धुर जाए॥
ऐसी करे कमाई जोए। गोरख ताँ के चरन को धोए॥
गगन गृह खेत उरध गृह माली। उल्टा फूल लगा बिन डाली॥
बिन फूले फल परगट होए। **'मंगत'** बोले सूझे जन कोए॥**269**
सोध कुण्ड में नीर बहंता। तिसको बांध आकास चढ़ंता॥
सिद्धाँ पुरखाँ की ये ही कार। धरती उलट आकास बठार॥
जब लग धरनी आसन नाहीं। तब लग आकास की गम कछु नाहीं॥
सतगुर मिले घर आसन पाया। बांधी पवन शबद रस ध्याया॥
उलटी पवन करे हलोल। बिन चंद चकवा करे कलोल॥

बोले पवन गगन गराजे। अनहद सुन बहु भाँत से बाजे॥
बजे बजन्तर सुने सब तार। तब ही नासियो मन विकार॥
विखे त्याग मन भया निर्वानी। घर में सूझे अकथ कहानी॥
नाम पवन सुरत त्रै बाँधे। गुर परतीत चौरासी खाँडे॥
अलप आहारी सूखम निद्राई। गुरमुख बूझ मन गत पाई॥
उल्ट पवन का करे नित आहारा। सदा तृपत नित नित जयकारा॥
भुख प्यास निद्रा जब गई। अगम शबद तब सोझी भई॥
सदा मतवाल शबद के संग। नाम ध्यावे परसे आनन्द॥
शबद सुरत मिलावे इक बन्ध। चढ़ी समाध नित अखण्ड॥
गुपत योग ये सार लखाई। सतगुर मिले तब परचे भाई॥
क्योंकर मन की मनसा जाए। क्योंकर सुरती ठौर को पाए॥
क्योंकर भरम गण्ठी जड़ टूटे। क्योंकर जीव दुर्मत से छूटे॥
बोले **'मंगत'** करे विचार। बूझे कोई गुरमुख गुनकार॥**270**
पवन को बाँधे मनसा ठहराई। शबद को बूझे सुरती गत पाई॥
इरध उरध पवन को बेधे। भरम गण्ठी का कीनो छेदे॥
खुली गण्ठी इक अण्डा थाया। गगन गुफा में जाए नाद वजाया॥
बूझे नाद दुर्मत मैल हरया। पारगरामी तब नज़री पड़या॥
चंचल मनुआँ पाए बिसराम। आवागवन का टूटे जाम॥
ऐसी कमाई करे जोए। तिस जन कोई बिगन ना होए॥
सदा निर्गुन उदासी मत। एक नाम की लाखे मित गत॥
नाम पवन जो मेला होई। तब ही मन की जड़ता खोई॥
साचा राह योग ये ही। होए जोगिन्दर परखे सनेही॥
पवन उलटाए सुने रबाब। अबगत पुरख का लखे हिसाब॥
बाजे घंट बीनी नफ़ीर। **'मंगत'** बूझे परम फ़क़ीर॥**271**
अन्तर में जो रहे समाई। तिसको व्यापे काल कभूँ नाहीं॥
भरम त्याग शबद को बेधे। गुर परताप चौरासी छेदे॥
नौ द्वार को अन्तर उलटाए। सुरती बाँध पवन घर जाए॥
अरच परच पवन घर खेले। जनम जनम का छूटा मेले॥

आलख शबद गुरमुख विचारी। सत मारग का भया वापारी॥
गृहस्ती विरक्ती जो कोई होए। मारग बूझ भरम चित खोए॥
बन्ध खुलासी का मारग एका। गुरमुख परसे धर विरत विवेका॥
अपान पवन को प्रान में मेले। ले प्रान अपान में खेले॥
नित अश्वमेध करे मुनी ज्ञानी। शबद अखण्ड पाए पुरख निर्वानी॥
शबद भेद जब पूरन पाए। तब जीवन नर सुख वरताए॥
धन्न सतगुर जिस मारग दिखलाया। अजर पुरष का दर्शन पाया॥
धरती पदम शीश धरे अरशे। आलख शबद निस बासर बरसे॥
गुर का शबद बिमल तत्तसार। **'मंगत'** बूझे होए भ्रम छार॥**272**
ऐसे शबद की कथा अनूप। करे बखान कोई सतगुर रूप॥
जिस सूझा तिस पाई जुगत। विचरे जग में सो जीवन मुकत॥
बिना योग नहीं मनसा ठहराए। बिना योग नहीं तृप्ती आए॥
सतगुर मिले तब सार को पाया। अमरलोक में जाए समाया॥
तीन भवन सुख सहज अस्थाना। विचरे शबद आलख निर्वाना॥
गंग जमन सरस्ती बन्ध। अबगत पुरख का प्रगटयो सन्ध॥
सुर नासका मद्ध सुरती ठहराए। सार शबद को सो जन पाए॥
उलट सुरत घट पवन को पीवे। अछल अछेद अर्थ को लेवे॥
रमज़ गुपत जाने कोई सूर। ऊँचा शिखर बजावे तूर॥
चंचल मन को कीजे घात। अमरत पीवे सुन्न के घाट॥
सहज सुन्न में वास नित करी। अचल समाध शबद रस भरी॥
पावे कोई गुरमुख भेद। आद निरंजन पुरख अछेद॥
नाम बिना नहीं पावे योग। पावे नाम सतगुर संजोग॥
योग पाए मन मल हरया। अखण्ड दीपक कपाट में धरया॥
खुले कपाट भया उजियारा। **'मंगत'** योगी सत जुगत विचारा॥**273**

आसन धरती सुरत आकासे, लखे ज्ञान निर्वानी।
उपजे शबद जोत दरसावे, सुरत भई इकलानी॥
तन मस्जिद प्रान मुसल्ला, तिस पर पढ़े नमाज़ हकानी।
तरक ख़ुदी दा सजदा कीजे, घर बूझे रमज़ रूबानी॥

पीर मुरीदी रिश्ता टूटा, हदीस नबी बिसराई।
मनुआँ मार चढ़े गढ़ ऊपर, विजे निशान बजाई॥
ऐसी रहनी जो नर रहे, सो ही आरिफ पूरा।
दम दम नाम जपे नित साईं, बजावे अनहद तूरा॥
तीन अवस्था सब बिसरानी, चौथे सुरत समाई।
पंजवें गहर गम्भीर निरालम, विरला लेख लखाई॥
निरगुन सुरत करे बिसरामा। प्रथम सुन्न का लखयो धामा॥
सरगुन सुरत जाए समाए। दुतिया सुन्न के भेद को पाए॥
निरगुन सरगुन जब मेल मिलाई। तीन भवन सुन्न परगट पाई॥
उपजे अनहद अखण्ड धारा। चौथी सुन्न का करो विचारा॥
नाद सुरत जब एका होए। पंजम सुन्न पछाने सोए॥
अबगत कथा लखे अबधूता। काया जीते पाए शबद अनूपा॥
तत्त ज्ञान की ये ही सार। बूझे गुरमुख करे विचार॥
तिस ते परे ना कोई ज्ञान। पंजाँ जीते होए निर्वान॥
पंजाँ जीते सतगुर की सेव। अन्तर भाखे निरञ्जन देव॥
सुरत निरालम बूझे नाद। धन्न योगी अगम अगाध॥
हरी का नाम ले हिये परोई। सुरत निरत रस पावे कोई॥
पवन की चौसर नाम की गोट। सुरत निरत की बाँधे पोट॥
सँभल कर खेले गुपत ये खेला। अबनाशी पुरष संग होवे मेला॥
खुले कपाट अन्तर समाई। शशी मण्डल में लेख लखाई॥
अगम पुरख बराजे आप। नित प्रति देखे अपना परताप॥

**ऐसी करनी करे, सो ही गुर का पूत।**
**'मंगत' कहे बखान के, सो परसे तत्त अनूप॥ 274**

योग जुगत में बिचरे सो ही। जत सत संजम जे पूरा होई॥
त्याग बैराग का आसन धारी। गुर का सिख सो योग आचारी॥
इन्द्री लालसा सकल त्यागी। एक नाम में जीवे अनुरागी॥
रहत एकान्त नाम संग खेले। पावे सतपुरष का मेले॥
नित उदास मनुआँ अचिन्त। परखे एक गुरु का मन्त॥
निन्दा उस्तत दोऊ त्यागी। बिरह बैराग में जीवे बैरागी॥

सुन्न मण्डल में लाए धूनी। अगम अछेद समाध सगूनी॥
एह बिध रहनी निस दिन रहे। ताँ के दर्शन विरंच नित करे॥
ऐसी जुगता बूझे योग। हरे ममता बिख माया शोक॥
अबनाशी तत्त का करे विचार। छिन छिन सेवे तत्त निरंकार॥
सच कर सेवे पाखण्ड विनासे। एक नाम की करे अरदासे॥
गुर की सिखया जो मन तन धारी। सो ही जोगिन्दर रूप मुरारी॥
इस दे परे ना दूजी सार। नाम जपे उतरे भवनिध पार॥
अडोल अचाहक अगोचर जोई। सिमरन करे परापत होई॥
सिमरें नाम मिल गुर की दीखया। अट पट भीतर सच परीखया॥

नाम पवन मन इस्थिर करे, सुन्न लगावे ध्यान।
सो ही जोगिन्दर आखिए, जो ये घट परवान॥
अहमदाबाद नगर के भीतर, सन्त रतनदास अधिकारी।
शुद्ध आचार विचार चित राखे, और शरधा अपारी॥

**आज्ञा पुरख अगाध से, गुपत ज्ञान अरथाई।**
**ब्रह्म योग की खिनता, दास 'मंगत' तिसे पहनाई॥ 275**

सुन सन्ता ये बात हमारी। बिना योग नहीं मिटे ख़वारी॥
बिना योग ना सिद्धता कोए। बिना योग ना सार कुछ पाए॥
योग करम असाध को साधे। जनम जनम का टूटा गाँढे॥
योग बिना थोथा विद्या विचार। अन्तर डोले नर बारम्बार॥
योग की सिद्धता में मन निर्मान। मुकत रस पेखे एके भगवान॥
शिव सनकादक नारद गुनचारी। योग में रमते बड़े अचारी॥
कृष्ण कहे सुन धनंजय राओ। साधन योग जुगत को पाओ॥
परसो योग परम पुनीत। चित में राखो ये निर्मल सीख॥
खट शास्तर के कथने हारे। जुगत योग से उतरे पारे॥
रिखबदेव मुनी महावीरा। योग विचार से लागे तीरा॥
ईसा मूसा नबी और ग़ौस। योग परीखत से भए निरदोष॥
काची काया का गरब तब जाए। सत योग समता चित आए॥
सब का सरजनहारा योग। योग पाए मिल गुर संजोग॥

सरब का शक्तीमान सो सूरा। विचरे योग होए जगत की धूड़ा॥
सबसे ऊँचा मत्ती उज्जल धारी। योग साधन की महमा भारी॥
बिना योग भटके दिन रैना। बिना योग नहीं पावे चैना॥
बिना योग नहीं उपजे तत्त ज्ञान। बिना योग नहीं होए करम का हान॥
बिना योग नहीं तृष्ना जाए। राजे रंक सभी भरमाए॥
काया खप्पर का नहीं टूटे मान। बिना योग नहीं पावे तत्त ज्ञान॥
ऐसे योग की करो वडयाई। रम्मत योग मिले प्रभताई॥
योग में रमता नानक कबीर। योग के रमते सो ही फ़क़ीर॥
गोरख दत्त मछन्दर जानी। गौतम बुद्ध चित योग पछानी॥
राम कृष्न जनक निरदेही। योग पछान परम गत लेई॥
सब से ऊँची योग प्रभताई। योग करम से आलख लखाई॥
वेद पुरान पोथी और ग्रन्थ। योग उपजावे सब की सन्थ॥
विद्या ज्ञान विवेक विचार। सत असत की परसे सार॥
हिकमत सकल और तदबीर। योग बनावे सब की तकदीर॥
पिण्ड ब्रह्मण्ड की गिनती करे। जुगत योग तत्त सोझी पड़े॥

सच योग पहचानिए, साधिए साची जुगत।
तन मन की जाए कल्पना, पद परसे जीवन मुकत॥
वेद ग्रन्थ पुकारदे, सिद्ध मुनी अवतार।
नबी ग़ौस सलाँवदे, महमा अपरम अपार॥
सार योग की जान के, मन ममता करो त्याग।
पूर मनोरथ पाविए, प्रेम हरी रस लाग॥
तृष्ना भरम का चौका टूटा, नाम रस जब पाया।
निस दिन घाले जौहरी, धन्न जनम सुफलाया॥
निर्मल दिसा है योग की, निस दिन सोधे नाम।
निस्तर भए संसार से, विरत धार निष्काम॥
सार जगत में है ये ही, खाटो साचा लाह।
काया गढ़ साधन करो, देखो बेपरवाह॥
करम की फाँसी सब मिटी, शबद योग पहचानया।

सतनाम परतीत होई, पूरन ये मन मानिया॥
विखे विखाद सकले गए, चित चिन्ता होई चूर।
अबगत शबद पहचानिया, बहु रंग बाजे तूर॥
ऐसा शबद अगम का, जरा मरन से भिन्न।
योग जुगत से पाइए, मन होवे परसन्न॥
मुँदरा पहने योग ना, ना सिर जटा बढ़ाए।
भसम रमाए योग ना, ना पाखण्ड बहु दिखलाए॥
योग है धारा ज्ञान की, मन को छेद करी।
काम क्रोध का ताप जो, गुर बचने सहज हरी॥
काची काया के करम को, जो चित से करे त्याग।
सच जोगिन्दर आखिए, जो आलख पुरख घर जाग॥
भाओ भगत और प्रेम में, निस दिन मन समाए।
देह अभिमान को छाड के, तत्त आतम को पाए॥
मन को छेदे ज्ञान से, बैराग जलावे आग।
नाम सुराही भर पीवे, जाए भरम दिल दाग़॥
जैसा निर्मल था तैसा ही मिला, भेद भाओ सब नास।
सलले सलल समाया, मिल योग युगत परगास॥

**सबसे ऊँची रहनी योग की, सबसे ऊँच धनी।**
**'मंगत' कहे बखान के, ये योग चिन्तामनी॥ 276**

**जो कोई खोजे प्रेम से, कर सिद्ध साधू का संग।**
**'मंगत' कहे समझाय के, तब चढ़े योग का रंग॥ 277**

## मारग चौथा - विवेक माला

माला फेर विवेक की, जो हिरदा करे निषकाम।
सूझ मिले सत रूप की, जीव पाए बिसराम॥
भवजल दुस्तर है अती अपारा। करो सतसंग पावें निस्तारा॥
काम क्रोध अगन अति भारी। राज रंक की करे ख़वारी॥

सदा अशान्त विखयों में धावे। जतन करे पर सार नहीं पावे॥
मिल सत साधू पाप सब खोए। गुर के शबद में सुरती जोए॥
बिमल शबद अमरत की खान। अकथ कथे पावे कल्यान॥
अधिक परकास घर दियो दिखलाई। सम्पत नाम माईं विरत समाई॥
अखण्ड निरंकार पुरष निर्वान। सेव सेव परम तत्त ज्ञान॥
निर्मल सुरती विरत अडोल। परस लयो सत शबद अमोल॥
रोम रोम में धुन्न अपार। **'मंगत'** बूझे कोई गुनी संसार॥**278**
धन दारा सम्पत बहु भारी। भगत हीन नर होए ख़वारी॥
गुर परसाद सिमर सत नाओं। सत परतीत पावें सत थाओं॥
निर्मल मनुआँ चंचल मत त्यागे। साधजनाँ की चरनी लागे॥
तन मन सौंपे सतगुर की चरनी। खेम कुशल पाए जाए हर सरनी॥
जनम जनम की मैल उतारी। सतगुर शबद निरख अति भारी॥
खुले कपाट देखे परगास। रोम रोम में राम निवास॥
मिटे तृष्ना सब भरम विनास। अचल बुद्ध कर नित अरदास॥
ध्यान आरूढ़ गुर शबद को सेवे। साध संग मिल पाप तन खोवे॥
अधिक वडयाई सन्त की मीत। **'मंगत'** माँगे रज चरन पुनीत॥**279**
साध मेल से होत उद्धार। पाप पुन्न से पावे छुटकार॥
भरम विनासे परसे अबनास। जनम कदारथ पावे सुखरास॥
वस्त अगोचर सतनाम ध्यान। अन्ध ग़ुबार जाए भ्रम खान॥
मन तन अन्दर आवे धीर। जनम मरन की बिनसे पीड़॥
पारब्रह्म परमातम देव। अनहद नाद पाई सत सेव॥
मन के संशे भए काफ़ूर। साचा शबद घर बोले तूर॥
अखण्ड नाद में सुरत निवास। जनम जनम की मिटी जम प्यास॥
सर्वज्ञ ठाकर सरब अलेप। भाओ भगत राखो तिस एक॥
परम आनन्द खोजो मुनी देवा। होए परापत पाए साध की सेवा॥
अनेक जनम की तृखा निवारी। पायो ठाकर गुरचरन बलिहारी॥

**सत पुरख निरञ्जना, घट घट रह्यो व्याप।**
**'मंगत' सन्त की सेव से, पायो सच परताप॥ 280**

भव मारग दुस्तर आपारा। नाम जपत से होए निस्तारा॥
सार वस्त घट अन्तर पाई। मन तन की सब तृखा बुझाई॥
सतनाम अगोचर बानी। मिल सतसंग शोभा घर जानी॥
अमरत नाम हिरदे कियो बासा। सहज सुभाओ मन शबद निवासा॥
नित नित हर का नाम ध्याए। खेम कुशल निज घर में आए॥
परमानन्द मन मगन सरीरा। जनम जनम की मिट गई पीड़ा॥
अनहद नाद अखण्ड धुन बानी। तीन भवन में सोभा जानी॥
उठ रे मनुआँ निज देस को धाओ। साध संगत मिल परम गत पाओ॥
सत सरूप सिमर निज नाओं। पूरे सतगुर से बल जाऊँ॥
पलक पलक चित राख विश्वाशा। मिटे ग़ुबार होवे परकाशा॥
अखण्ड सुरत निज नाम सम्भाल। **'मंगत'** कथे सत जुगत दयाल॥**281**

ये संसार है माया छाया, पारावार ना कोए।
बिना भगत नहीं छूटिये, तीन काल नर रोए॥
सत सरूप नारायन, घट घट रह्या व्याप।
सहजे में परगट हुआ, प्रेम भगत परताप॥
करमफल की वासना, आवागवन को देत।
संकट ये अपार है, मिथ्या भरम भवेत॥
चारखानी सब भरमती, इस माया विकार।
अदभुत कौतक प्रभ रचा, जाँ का पार ना वार॥
गुरमुख उभरे तिस से, पाए ज्ञान की टेक।
आपामत त्याग के, सिमरे शबद विवेक॥
सकले करम प्राकिरत के, प्रभ आज्ञा में त्याग।
अनन भाओ सिमरन करो, चित में धर अनुराग॥
खुले ग्रन्थी भरम की, दीन बन्दगी पाए।
अगम शबद अनाद स्वामी, नित तिस चरन समाए॥
पलक ना विसरे नाम प्रभ, लागी रहे लिवतार।
उट्ठत बैठत सोवना, एक ही शबद प्यार॥
दृढ़ पुरषारथ राख के, द्वैत भरम करे नास।

अनहद गरजे गगन में, कोट सूर परकास॥
रग रग अन्तर रमया, पारगरामी सोए।
अमरत शबद पहचान के, भय भरम सब खोए॥
शबद अनादी पुरख है, रूप रेख से न्यार।
होए परापत जिसको, तिस चरनी बलिहार॥
जिस चाखा सो तृपत हुआ, भई कामना नास।
राग द्वेष गई कल्पना, पाए शबद परकास॥
शबद लखे कोई पारखू, तन मन करे त्याग।
खिमा ग़रीबी चित धरे, दुर्लभ पावे भाग॥

**ग्रन्थ वेद पुकारदे, और सिद्ध पीर अवतार।**
**'मंगत' सिमरे शबद जो, पावे पद निरधार॥ 282**

कारन करता सो परमेश्वर, मन में नित ध्याओ।
आज्ञा तिसकी मान के, जनम सुफल कर जाओ॥
इस सागर संसार में, निरमल ये ही विचार।
सेवा कर सत पुरख की, और सिमरन करतार॥
माया चक्कर अथाह है, डूबे गुनी गहीर।
ना कुछ लेन और देन है, झूट करे तदबीर॥
ये तन बिख की खान है, हीरा नाम गोपाल।
स्वाँसा जाए जो नाम में, मिले छूट तत्काल॥
सिमर सिमर निज ठाकर सोए, जो नित होवे किरपाल।
राखे टेक जो चरन की, ग्रस सके नहीं काल॥
सकल जतन नर मिथ्या, जीव को देवें कलेश।
नाम भगत तत्त सार है, सुन साचा संदेश॥
हाड मास का पिंजरा, जो नित सरजनहार।
इस बालू की भीत में, जो रमा तेज बलकार॥
अन्तरयामी सकल स्वामी, नित अन्तर करे बिसराम।
तिसका सिमरन सार है, सत है जिसका नाम॥
साचा सतगुर जब मिले, देवे जुगत आपार।

प्रेम प्रीत से साधन करे, घर परगट होए मुरार॥
छिन छिन तिस की सेव से, मन होवे निष्काम।
जनम मरन संशय जाए, ले परम धाम बिसराम॥
आवन जावन जीव का, तब ही भयो विनास।
मिथ्या नासी कलपना, पद परसा अबनास॥
सत मारग को खोजयो, परम तत्त निर्वान।
साचा नाम तत्त सिमरयो, जग जीवन सार निधान॥

**वस्तु नहीं संसार में, जो मन को देवे शान्त।**
**'मंगत' मारग ज्ञान का, सकले हरे भरान्त॥ 283**

ज्ञान को खोजे ज्ञान में जीये। तत्त ज्ञान को घट अन्तर पीये॥
शबद सरूप पावे तत्त ज्ञान। मर जीवे तब करे पहचान॥
अबनाशी तत्त खेद से रहत। नाम ध्यान कोई गुरमुख लेत॥
ज्ञान पदारथ जीव तृप्तावे। ज्ञान पाए नहीं जूनी आवे॥
ज्ञान का सबसे ऊँचा निधान। सकल कलेश से देवे कल्यान॥
नित जापो शबद परसंग। निर्मल ध्यान रँगो ये रंग॥
बिस्माद शबद घर परगट पाए। आस अंदेस सब भय मिटाए॥
रुच रुच हिरदे धरो प्यार। शबद सरूप इस्थिर जग सार॥
तपन निवारे हरे भ्रम खानी। अनहद नाद घट करो पछानी॥
सुरत पवन इकागर होई। शबद अगम चित लयो परोई॥

**शबद ज्ञान शबद ध्यान, शबद मूल संसार।**
**'मंगत' सो ही सिद्ध है, जो पावे शबद विचार॥ 284**

उठो रे नाम को सिमरो, यह जीवन लाभकारी है।
मिटाओ भरम की अगनी, जनम की सार भारी है॥
करो सतसंग को निस दिन, विचारो ज्ञान की खानी।
उठे निर्वान तत्त अन्दर, जलावे करम की बानी॥
ये ही परमान जीवन का, सन्तन ने विचारा है।
जपो निज नाम को निस दिन, भरम का जाल टारा है॥
सदा माँगो पदारथ ये, करूँ नित साध की सेवा।

मिले तत्त ज्ञान घट अन्तर, जपूँ देवन के देवा॥
बिना सतनाम के सिमरे, मिटे नहीं दोख जीवन का।
जपे सतनाम को गुरमुख, लखे ब्रह्मज्ञान का भेदा॥
सकल जग चक्कर इच्छया का, हुआ भ्रम जीव को भारी।
बिना सतसंग नहीं उतरे, ये दुस्तर मैल अति खारी॥
पधारो नाम की नाओ, जो खेवट गुर के है हाथे।
करो नित प्रेम से सेवा, उठे निर्वान धुन माथे॥
सदा ये औध जाती है, घड़ी पल की खबर नाईं।
सदा क़ुरबान मैं जाऊँ, जो सिमरे नाम मन माईं॥
ये ही सार जीवन का, ये ही है काम वड भारी।
लखे कोई गुरमुख परम जौहरी, जलावे मैल भ्रम खारी॥
सदा बलिहार मैं जाऊँ, पूरन गुरदेव के चरने।
यथारथ कर दिखाए हैं, मरन जीवन के निरने॥
करो विश्वास निसदिन ये, सुधारो जनम अपने को।
नहीं कुछ संग जाएगा, ये निश्चे मान मन लीजो॥

**सदा आनन्द की खानी, वोह दयालु आप परमेश्वर।**
**'मंगत' जप जपे निस दिन, अनादी पुरख जोगेश्वर॥ 285**

पततपावन भगवन्त को, निस्चे से चित राख।
बिघन हरे मंगल करे, सत कीरत मन भाख॥
साची प्रीती राख के, जो सिमरन करे दयाल।
बाल ना बींका कर सके, चकरवरत भूपाल॥
दीनानाथ दयाल है, निहमानयाँ देवे मान।
जुग जुग सहायक होत है, भगतवत्सल भगवान॥
नित ही राखो टेक तिस, कर सत मारग की खोज।
पावें वड परताप को, मिले जनम की मौज॥
काम क्रोध को त्याग के, शरधा सेवा धार।
अपना सुख सौंपो सदा, मन में धर उपकार॥
तुच्छ जीवन का मान तज, प्रभ चरनी चित जोड़।

नित ही पावें जीत, जो शत्रु होवें करोड़॥
सरब शक्ति दातार है, सो साचा करतार।
सिमरो प्रेम प्रीत से, पाओ नित जयकार॥
बस्ती को जंगल करे, जंगल गाम बसाए।
भूप को करे दलिद्री, रंक को राज बिठाए॥
जीतन वाले हार गए, हारे चले हैं जीत।
गरबप्रहारी सो परमेश्वर, राखो मन परतीत॥
विच ग़रीबी जो रहे, त्यागे मन का मान।
सरनी जाए करतार की, कभी ना पावे हान॥
जिनका मन मग़रूर है, नित चालें टेढ़ी चाल।
जब छूट गई सब सम्पदा, होए तिनके बुरे अहवाल॥
माटी का ये पिंजरा, अनमत कीजे मान।
खाली हथ्थीं चल गए, अन्त को बेनिशान॥

**सत सरूप भगवान है, तीन काल निरदोख।**
**'मंगत' सिमरो प्रेम से, होए जनम मरन से मोख॥ 286**

इस सागर संसार में, दुर्गम दोनों तीर।
एक कनक इक कामनी, मोहे बड़े फ़क़ीर॥
माँगो भिखया नाम की, सतगुर के दरबार।
जाँ के सिमरन करन से, उतरे भवनिध पार॥
स्वास स्वास नित जापिए, तजिए मन का मान।
खेम कुशल परगट होवे, जीव भए कल्यान॥
पूरन जतन से त्यागयो, इस मन का विकार।
दीन ग़रीबी बन्दगी का, नित कीजो आहार॥
हाड मास का पिंजरा, जो परकाशे नित।
ध्याओ प्रेम प्रीत से, सो ही परम है मित॥
अन्तरयामी सकल स्वामी, घट घट करे परगास।
तिसका सिमरन सार है, नित सिमरो स्वास स्वास॥
साचा सतगुर जब मिले, पावे ज्ञान की सार।

सत परतीत साधन करे, घर परगट होवे निरंकार॥
छिन छिन तिसके चरन में, सुरत होवे लवलीन।
जनम मरन संशा जाए, परम धाम लयो चीन॥
मन की जाए सब दूषना, सिमरे तत्त अबनास।
बानी धुर पहचान के, निर्भय लीजे वास॥
साचा मारग खोजयो, सुन वेद ग्रन्थ का बोल।
मानुष देह की सार है, कटे चौरासी ख़ोल॥
**सत वस्त संसार में, राम नाम तत्त भाल।**
**'मंगत' मारग मुकत ये, नित चलो हंस की चाल॥ 287**

ख़ाक समाना हो रहो, सुन सतपुरखन की सीख।
पूरन प्रभ से माँगयो, दीन ग़रीबी भीख॥
मान मध को धार के, डूबे मुनी अनेक।
ताँ सों कभूँ ना छाडिए, एह ग़रीबी लेख॥
सतनाम हिरदे धरो, मन का तजो विकार।
अबनाशी की पूजा करो, जो जग जीवन सार॥
छिन छिन औधी जात है, छाड कपट का रंग।
खोज करो सत शान्ती, सुनो नाम परसंग॥
माल मुलक ना संग चले, अन्तकाल दी वार।
मूरख मन उठ चेत लो, साचा सरजनहार॥
सम्पत जेती पाविए, उतना घना कलेश।
मन नहीं धीरज पकड़े, दु:खिया रहत हमेश॥
सुपने की रचना रची, सकल जगत बिस्तार।
ना अपना ना दूसरा, केवल भरम विकार॥
जागो साचे नाम में, खोजो ब्रह्म परगास।
काल करम संशा जाए, निर्भय जीवन वास॥
साचे पन्ध में चालयो, तजो कुसत्ती संग।
सत सील हिरदे धरो, गुरमुख पाओ रंग॥
ग़फ़लत मनों त्याग कर, क्यों विच मुसाफ़त सोए।

बिन हरी भगत ना छूटिए, जनम अकारथ खोए॥
सत पुरष पुकारदे, नित आनन्द प्रभ नाम।
विगन दोख व्यापे नहीं, जो मन में सिमरे धाम॥
मन की होवे तृप्ती, जीवन सीतल होए।
पलक पलक हरनाम की, जो जन मनी परोए॥
गुरमुख जीवन पाया, निज नामे किया प्यार।
सिमर सिमर ममता गई, घट परसी वस्त अपार॥
ना ओह जन्मे ना ओह मरे, घाट वाध ना पाए।
पद परसा नारायन का, जो वेद पुराना गाए॥
जल थल भरपूर है, अज अबनाशी देव।
तृखा मिटी सब जीव की, पाई चरन की सेव॥

**जनम जनम का बिछड़ा सतगुर दियो मिलाए।**
**'मंगत' महमा नाम की, मन तन रही समाए॥ 288**

राज संघासन में राजा मध माती। कूड़ कपट की अन्तर टाटी॥
काम क्रोध अगनी भरमार। जल जल भयो जीव अंगार॥
बाल जोबन जरा विताई। रंचक नहीं मन शान्त आई॥
चतर चतराई बहु बिध धारी। सरजनहार दियो मूढ़ विसारी॥
कूड़े आए कूड़ समाए। ओड़क सब ही कूड़ ने खाए॥
उठ सतनाम का करो विचार। दुर्लभ देह का होए उद्धार॥
इन्द्री जीता मन निष्कामी। भेंट करो गुर पार स्वामी॥
उनमुन घाटी जो नित बराजे। ज्ञान विज्ञान सुख सहज समाजे॥
अबगत नाद में करे बिसरामा। केवल पायो धाम सतनामा॥
नित प्रेम में सुरत गम्भीर। सो गुर साचा सब हरे तक़सीर॥
रोम रोम में नाद परबीने। अजर पुरष की शोभा चीने॥
सदा अतीत मन शबद निवासी। तिसकी संगत करे बन्ध ख़ुलासी॥
आतम धुन में मन तन इस्थीर। कोटाँ मद्धे कोई फ़क़ीर॥
सतनाम घर आसन धारी। सत सरूप का भया पुजारी॥

तिसकी सिखया से मोह भ्रम जाए। **'मंगत'** रुच रुच रह्यो चरन समाए॥289

धरती अम्बर ना थिरे, ना थिर पावक नीर।
लोक कुटुम्ब ना थिर रहे, ना थिर रहत सरीर॥
थिर है साचा नाम प्रभ, और सतगुर की सेव।
थिर रसना तत्त ज्ञान है, सत पूँजी गुरदेव॥
सतगुर साचा सेविए, जनम जनम मल जाए।
शोभा कीरत राम की, हिरदे माहीं समाए॥
आतम तत्त निरनय करें, शबद लखावें भेद।
तिनकी सरनागत में, पायो निरञ्जन देव॥
पीर पैग़म्बर औलिया, रिखी रखीशर साध।
पूरे गुर की सेव से, सबकी मिटी उपाध॥
ग्रन्थ कतेब पढ़ थके, बिन गुर ना पाए सार।
साचा सतगुर भेंटिए, जो सत दिखलावे कार॥
दुर्लभ जीवन होया, जब गुरमुख साध मिलाए।
अन्तर का परदा खुले, भेद भरम सब जाए॥
तन मन धन वारो सदा, महापुरख के हेत।
तो भी दुर्लभ जानिए, जो पाइए सच लेख॥
सब से ऊँचा भाग है, जो मिले हर का दास।
चरन अमरत नित पीजिए, हरिए मन की प्यास॥
मिथ्या भोग विकार में, जीव जले दिन रात।
मिल सतसंग हरी सिमरिए, बैठ सदा परभात॥

**सतनाम सत सेव को, मन में लीजो धार।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, सुन सतगुर बचन अपार॥ 290**

सत सरूप चित दियो विसार। आवे जावे चौरासी धार॥
तन मन भोग अगन में तापे। छाया प्रीत हिरदे दुःख थापे॥
भोग सोग सम्पत बहु कीनी। नरक निवास अन्त को चीनी॥
सत वनज नहीं नाम कमाया। चले निरासा जीव पछताया॥
वस्तु तृन ना चाले संग। तज परिवार भया निहसंग॥

जो करना सो किया ना अन्ध। कूड़ कपट धारी दुरगन्ध॥
विषे विकार में मनमुख धाए। अमरत छाड बिख को नित खाए॥
आसा तृष्ना मन धरा ग़ुबार। भवजल सूझे नहीं वार पार॥
करम चक्कर में जीव फँसाया। जन्मे मरे फिर जन्मे आया॥
ना सत सूझे अमरत नाम। औगन धार नहीं पाए बिसराम॥
अरब खरब धन राज वडयाई। पाए ना धीर बहु सम्पत पाई॥
तीरथ बरत वेद निध्यासी। धार मान नहीं होवे ख़ुलासी॥
कर सतसंग मारग लो साच। ज्ञान ध्यान को मन में राच॥
साची भगत मन विखया को हरे। गुर परसादी जिस सोझी पड़े॥
प्रभ की आज्ञा में करम सब त्यागे। अकरम सरूप घट आतम जागे॥
जड़ काया में सत रूप पहचाने। निर्मल धाम निष्काम चित आने॥
मिटे तृष्ना मन नाम समाए। आलख शबद घर निरना पाए॥
प्रेम की रसना मन मगन समाया। अखण्ड अछेद आतम तत्त पाया॥
कही ना जाई महमा उस धाम। अनहद नाद में लियो बिसराम॥
सुन के नाद मन होया नहकरम। सत सरूप पायो पारब्रह्म॥
धन्न भाग तिस जीव के होए। जो जीवन में सतनाम परोए॥
नाम ध्यान सुरत अघानी। अकल्पत मुदरा लखे तत्त ज्ञानी॥
नित नहकरम नित निहकामी। पायो ठाकर पद पारगरामी॥
तत्त ज्ञान जोत परगासा। इस्थिर बुद्ध शबद घर वासा॥
परम आनन्द जीव घर पाया। पुरख बिधाता मन माईं ध्याया॥
भरम भयान से भई ख़ुलास। शबद समाध मन निर्वास॥
नित ही जतन हरी नाम ध्यान। पूर मुशक़्क़त तत्त करी पहचान॥
अजर वस्त शबद परसंग। गुरमुख पीवे भयो निशंग॥
जल का तुरंग जल माईं समाया। सत पहचान गई दुर्मत माया॥
निर्मल धाम की अधिक वडयाई। विरले गुरमुख ये सोभा घर पाई॥

**जाँ से उपजे ताँ जाए समाया, गुरमुख पाई सुद्ध।**
**'मंगत' पद परगास में, लीन भयो चित बुद्ध॥ 291**

एक भरोसा राम का, हिरदे धारे सन्त।
सकल दोख और रोग, सहज होवें भसमन्त॥
अनहोनी होनी करे, सरब कला समरथ्थ।
एक टेक तिसकी धरो, मिट जाए सकल कुपथ्थ॥
जो जो सिमरे सो सुख पावे, पद परसे पारगरामी।
नित रखयक सब खेद निवारे, सरब जीयाँ का स्वामी॥
आपत हरे सम्पत देवे, पूरन पूरा देव।
स्वास स्वास नर सिमर लो, पलक ना विसरे सेव॥
अधिक वडयाई तिसकी, मन में करो विचार।
तिस बिन भरम ग़ुबार में, जीव भया गँवार॥
सुख सम्पत को पाय के, बुद्धी होए मलीन।
नित ही रमया भोग में, अन्धकार नित चीन॥
दु:ख को जो जन मित्तर करे, पावे सुख अगाध।
प्रभ सेती विश्वास हो, दूर होवें अपराध॥
अमर शबद हिरदे जपे, नाशवान जग पेख।
दु:ख की भाओ प्रीत से, सुख आतम लखया लेख॥
जब लग देह के भोग को, सुख कीजे परतीत।
काल करीड़ा ना मिटे, भय में फिरे अनीत॥
अमर शबद सुख आत्मा, जिसने करी पहचान।
मन तिसका निर्मल हुआ, पद परसा कल्यान॥
जो आया सो दु:खिया, इस सागर के माहीं।
गुनी ज्ञानी जपी तपी, दु:ख से छूटत नाहीं॥
काची देह का पिंजरा, छिन में होवे राख।
सो ही मूरख आखिए, जो इसमें सुख को भाख॥
आनन्दसरूप भगवान है, निराकार निरवान।
सो ही जन सुखिया भया, जिस ये करी पहचान॥
साचा सिमरन नित करो, दुर्लभ समाँ विचार।
वक्त गँवाए दु:ख पावना, जब काल ने करी पुकार॥

सार तत्त ये बूझिए, अपरमपार निधान।
साची भगत भगवान की, नित देवे कल्यान॥
ग़फ़लत मनों त्याग कर, उठ के नाम चितार।
जिस घड़ी हर सिमरिए, सो घड़ी बलिहार॥
राजा राना दुःखिया, भय में जीव भरमाए।
साचा सुख ताँ को मिले, जो हरचरन समाए॥
मूढ़ मनाँ तू जाग कर, सिमर नाम अपार।
पाप पिण्ड से छूटिए, दरगे हो सचियार॥
साध संगत मिल गाया, परम पुरख निरंकार।
दुःखी जीव पाए शान्ती, बिनसे भरम ग़ुबार॥
धन्न साधू धन्न, तिसका सत उपदेश।
गुपत रूप प्रभ पाया, सरब जीयाँ जगदीश॥

**प्रभ अपने को सिमर लो, चलें अन्त को जीत।**
**'मंगत' सिमरन नाम का, तीन काल सुखरीत॥ 292**

सिमर गोबिन्द आठों याम। भाओ भगत में लियो बिसराम॥
कर्ता हरता सरब का स्वामी। सदा आराध परम सुखधामी॥
बारम्बार कर पद परनाम। सिमर दयाल पावें बिसराम॥
पततपावन करनाकर स्वामी। घट घट व्यापक अन्तरयामी॥
होवो दयाल सब दोख निवारो। भाओ भगत चित बसे विचारो॥
तुम रखयक चराचर गामी। बन्धन काटो तुम पार स्वामी॥
तुम बिन और नहीं भरवासा। पुरख अनादी घट करो परगासा॥
अनन भगत घट दीजो देवा। पलक ना विसरे तुमरी सच सेवा॥
जब जब भगतन पर आपदा आई। करनाकर स्वामी भए सहाई॥
बिपतकाल में दीजो धीरा। सत सील आए रमे सरीरा॥
चार पदारथ नौ निध पाए। तुमरी भगत मन माईं कमाए॥
तुमरा नाम सब ताप निवारे। दीनदयाल के चरन पधारे॥
निमख निमख फल माँगूँ स्वामी। अनन भगत में पाऊँ बिसरामी॥
जग जंजाल अधिक दुःखखानी। हाहाकार सब करें प्रानी॥

मध मान की अगनी अपार। जल जल पड़े सकल संसार॥
काल का भय करे चित छेद। हर भगत परापत जाए सब खेद॥
साचा नाम मन आवे परतीत। गुरमुख ज्ञान से पायो जीत॥
प्रान आधार पुरखोतम नारायन। सत भगत से भयो जीव परायन॥
जीवन जीया उद्दम ये धारे। मिल सतसंगत प्रभ नाम विचारे॥

**करो अरदास समरथ की, जो सरब करे परगास।**
**भवजल से राखो प्रभू, 'मंगत' पूरन आस॥ 293**

अबगत नाम सरब का स्वामी। सकल घटाँ का अन्तरयामी॥
सिमरे नाम विगन होए नासा। तत्त निरञ्जन कियो परगासा॥
मल ममता सब रोग विनासे। अबगत नाम चित माहीं उपासे॥
द्वैत ग़ुबार व्यापे नहीं खेद। साचे नाम का जब पावे भेद॥
डोलन विरत से मन निहचल होए। आलख अपार शबद ब्रह्म जोए॥
बोले पवन सूखम धारा। दसवें द्वार में झलके तारा॥
सतनाम में सुरती लवलीना। कोट भान उज्जयार घट चीना॥
अमरत बरसे नाद धुनकार। अगम जोत भई उज्जयार॥
विचित्तर लीला घट माहीं विचारी। मार संग्राम जीत भई भारी॥
ब्रह्मा विषन रुद्र और शेषा। सत सरूप में किया परवेशा॥
पारब्रह्म घट नज़री आया। गुर परसाद अमर पद पाया॥
संशे शोक का मिटे अँधेरा। अनहद ध्याए सो गुर का चेरा॥
साच झूट का भेद लखाया। काल त्याग सच जीवन पाया॥
क्या बखानूँ नाम वडयाई। अजर अमर प्रभता घर पाई॥
चरंजीव पद विगन से न्यारा। नाद सरूप घर कियो विचारा॥
मन पवन को बाँधे इक सूत। उल्टे मारग प्रभ मिला अनूप॥
काल करम का डेरा दूर। घट घट बोले अनहद तूर॥
भूख प्यास सब दोख निवारी। तृपत भयो गुरु पद बलिहारी॥
अन्तरयामी पुरख अनादी। मिल सतगुर परसे बिस्मादी॥
घट अपने विच सोभा पाई। सिमर सरूप मन शान्त समाई॥

अकथ कथा सुरती लवलीना। घर में प्रभ का दर्शन कीना॥
नाम पदारथ सम कुछ नाहे। हरजन सिमर परम सुख पाए॥
जप तप संजम अन्तर पूजा। एके चितवे बिसरे दूजा॥
मिल सतगुर हर सेवा पाई। नज़र सराफ़ी भरमत बिनसाई॥

**स्वास स्वास सिमरन करूँ, परम पुरख अचिन्त।**
**'मंगत' शबद समाया, मेल भया गुर मन्त॥ 294**

तन मन धन को सौंपिए, पारब्रह्म के हेत।
जनम कदारथ होया, रख सतगुर की टेक॥
चलाचली का खेल था, एह सकला संसार।
इस्थिर रूप पहचानिया, सत शबद निर्धार॥
मन सुतन्तर होया, सत मारग परबीन।
पाया निश्चल धाम को, विखाद भए सब छीन॥
जिस से सब कुछ पाया, तिस के चरन समाए।
आज्ञा तिस की मान कर, निर्भय सुख को पाए॥
राम क्या रावन क्या, सब माया चक्कर में आए।
मिटे चक्कर संसार का, जब सत शबद कमाए॥
रे मन उठ के जाग तूँ, मारग कर पहचान।
नाम पदारथ खाय लो, अन्त पावें कल्यान॥
भवसागर में आय के, अमर पदारथ खोज।
घालन में सुख देत है, भोगन में दे मौज॥
चंचल मन को बाँधिए, सतगुर शबद के संग।
सुफल जीवन संसार में, चढ़े अमोलक रंग॥
भरमत भरमत आया, परस लिया सच ठौर।
अमरलोक में जा बसा, काल को किया ठगोर॥
नाम सिमर सतनाम सिमर, ये जग जीवन सार।
तन जोबन मध स्थिर नाहीं, कूड़ा सकल पासार॥
औगन मेरे अधिक थे, भसम भए गुर संग।
शबद गुरु मीठा लगा, काल जाल भयो भंग॥

उठ मन मेरे जाग तूँ, सतगुर शबद विचार।
जो आज था सो कल नहीं, तूँ खाट जनम की सार॥
बाल जोबन जरा भई, एह काया दा फेर।
साचो नाम चितार तूँ, मिटे चौरासी गेड़॥
जिस धाम से आया, तिसको करो विचार।
देख जगत ना भरमिए, यहाँ रहना है दिन चार॥
झूटे भोग विकार में, बिसरे ना सच धाम।
उठो सवेरा जाग तूँ, चेत लयो हर नाम॥

**ये लाभ इस जगत में, जानयो चतर सुजान।**
**'मंगत' मन उपकार हो, हाथों से हो दान॥ 295**

विखे त्याग गुर शबद पहचाने। मारग मुकत करें सन्त बखाने॥
निर्मल नाम जभी चित धारे। आलख शबद चित माहीं चितारे॥
स्वास सुरत सतनाम पहचाने। परगट पुरख घट अन्तर जाने॥
आस अंदेसा भयो विनास। गुर परसादी आतम परगास॥
छिन छिन निस्चय ये ही धारे। आलख शबद चित माहीं चितारे॥
प्रेम भगत मन माँगो नीत। भवजल दुस्तर चलयो जीत॥
साचा उद्दम साचा विचार। सच सिमर होवे सचियार॥
नाम साहब बिन झूटा ठाठ। धन जोबन सम्पत मध माठ॥
सत परतीत बिना दु:ख पावे। भरम का बाँधा फिर जूनी भरमावे॥
काची देह संग करे ब्यौहार। विषे भोग अत धरे बकार॥
जनमे मरे नहीं पावे धीर। पल पल सहवे जम की पीड़॥
कूड़ विकार में जीया लपटाए। साच बिना सब उज्जड़ पाए॥
छिन छिन औसर जात पुनीता। राम नाम भज सरब समीपा॥
मिल सतसंग सत कथा विचार। कूड़ पाप से भए निस्तार॥
सत सरूप नाम रस चाख। नित आनन्द मुकत पद लाख॥
सरब जीयाँ में रहे भरपूर। तेरा राखनहार नहीं दूर॥
भरम भुलेख का कर त्याग। सत सरूप में उठ के जाग॥

**चेतन पुरख पहचानयो, जो तीन काल सच होए।**
**'मंगत' दुर्लभ धाम है, विरला पहुँचे कोए॥ 296**

नाम सिमर लो अमरत मीता। मानुष जनम की निर्मल रीता॥
साचा करम जगत में जानी। राम भगत सोभा चित आनी॥
सरब विकार जीव के नासे। जुग जुग नाम करो अरदासे॥
भय भरम सब दुबधा खोए। राम सिमर बुद्ध उज्जल होए॥
मरन जीवन का निरनय कीयो। आतम परस परम सुख लीयो॥
काम क्रोध बिख भयो नासा। आलख शबद संग कियो बिलासा॥
सतगुर संग जब मेला होए। निर्मल भया सकल मल खोए॥
राम भगत की आई परतीता। निस्चल बुद्ध शबद रस लीता॥
अचरज आनन्द कहा ना जाई। तृप्त भयो सब दुःख बिनसाई॥
ज्ञान गम्भीर सो पुरख अनादी। अगम अगोचर अपार अगाधी॥
सकल रसना रस करे त्यागा। पारब्रह्म रस अन्तर लागा॥
पलक ना विसरे सो प्रभ देवा। अखण्ड चित से कीजे सेवा॥
उनमुन घाटी सारंग बोले। गुरमुख जोगी जुगत से तोले॥
उल्टे नैन शबद को घाले। सो ही पुरख निरञ्जन बाले॥
अजपा जाप सुरती नित खावे। तीन गुन नास सत रूप समावे॥
चढ़े आकास खोल बंकनी नाली। गरजे शबद भीतर तिरनाली॥
सुन के शबद मनुआँ कुमलाए। खेम कुशल घर जाए समाए॥
ग़ैब की बानी ग़ैब से आई। नित नित ध्याओ हो गुर सरनाई॥
पूरन भाग जीव जो होई। **'मंगत'** बन्दगी पावे सोई॥**297**
सकल वस्तु है दुःखदाई। देख के मनुआँ खेद मचाई॥
उठ के जीवन समाँ विचारो। महापुरख के चरन पधारो॥
नाम रतन से लागे डोरी। कलप विखाद से सुरता मोड़ी॥
नित ही ये परयतन कमावे। जप तप संजम सेवा पावे॥
गुर के बचन में जीवता मरे। तब जोत निरालम नज़री पड़े॥
स्वास सुरत की सन्धी जोए। सत शबद मन माहीं परोए॥

उलट कँवल जब भए परगासा। निरगुन नाद गरज आकासा॥
छिन छिन सुरती उनमुन जोड़े। प्रभ आज्ञा में करम सब छोड़े॥
गरजे नाद उरध कपाली। दमके दामन घट तिरनाली॥
मन विखाद कलपना नासे। साचे नाम की अधिक प्यासे॥
काल करम का सीस कटावे। पारब्रह्म में जाए समावे॥
आवागवन जीव की नासे। अखण्ड जोत ब्रह्म परगासे॥
अपने आप में सोझी पाई। सकल देवों ने दीनी दोहाई॥
जड़ तज चेतन नगर को धाया। महा परसाद परम सुख पाया॥
आसन ऊँचे अरश करीना। अखण्ड सुरत नाद तत्त चीना॥
आस निरासे आतम बोधे। मन अपने को एह बिध सोधे॥
अपने आप का करे उद्धारा। तीन लोक में होए जयकारा॥
अमरत नाम ये सार निधाना। जाँ के सिमरन से गए दुःख नाना॥
हिरदे शान्त शबद परगासा। सरजनहार संग कियो बिलासा॥
जनम मरन का मूल चुकाया। भाओ भगत हर अन्तर पाया॥
सरब दयाल आनन्द घन देवा। गुर परसाद पाई सच सेवा॥
पततपावन सो दीनदयाला। अचपच मूरत नित किरपाला॥
जो जन तिसकी सरनी आया। मनबांछित तिसने फल पाया॥
अगम अपार अगोचर स्वामी। घट घट व्यापे अन्तरयामी॥
छल कपट तज सत भाओ विचारी। सहज परगट भए आप मुरारी॥
दीनबन्धू नित दुःखहरता। सिमर सिमर प्रभ कारन करता॥
जनम जनम की किलविख नासी। आनन्दघन नाद घट परगासी॥
मिल सतगुर जब सार लखाई। अन्तरगत लखी प्रभताई॥
बन्धन काटे भया निष्कामी। पायो ठाकर सरब का स्वामी॥
नित ही साहब की करो अरदासा। **'मंगत'** नित हर नाम प्यासा॥**298**
सरब निरन्तर सरब का साखी। अद्भुत कौतक होए दिन राती॥
अनहद नाद गगन में बोले। गुह्य ध्यान में शबद को तोले॥
मनुआँ निर्मल कम्पे सरीर। बानी उठी गगन के तीर॥
रोम रोम अन्धकार विनासे। ब्रह्म जोत घट भई परगासे॥

पूरन भाग ये दिसा विचारी। मानुष जनम की सार चितारी॥
मिट गयो भरम मन इस्थिर होए। पल पल साचा नाम परोए॥
आलख अपार निरञ्जन राए। मन तन अन्दर रिह्या समाए॥
क्या कहूँ साध वडयाई। गुपत रूप प्रभ परगट पाई॥
तृपत भई सब तृखा निवारी। सत सिखया सतनाम विचारी॥
अखण्ड नाद सरब जगदीश। सच परतीत मन ध्याओ ईश॥
जाँ देखाँ ताँ रिह्या भरपूर। सरजनहार पूरन का पूर॥
साचा नाम तिसका सुखधाम। जो जो सिमरे पावे बिसराम॥
हाड मास का देवल ये साजा। करे परकाश ग़रीब निवाजा॥
तिसकी भगत मन ठाँड वरताई। भाओ भगत रह्यो चरन समाई॥
अटल धाम नरूपम देस। चेतन पुरख का पायो वेस॥
काची काया की ममता खोए। अघट चानन घट परगट होए॥
अमरत चोवे पीवे जन कोए। सतगुर जाँ पर दयालू होए॥
खुले कपाट करे मज्जन तरबैनी। अमर भयो सुन सतगुर कहनी॥
नित ही मन में राखो चाओ। अगम पुरी की सूझ कमाओ॥
नाम जप रख गुर की टेक। मानुष जनम का लख साचा लेख॥
ज्यूँ ज्यूँ नाम रमे घट माहीं। शबद ध्यान से मिटे परछाईं॥

**नाद निरन्तर मनुआँ छेदे, पलक ना विसरन पाए।**
**'मंगत' सो उपरस भया, निज रूप में गयो समाए॥ 299**

मुख से सिमरो नाम को, श्रवन करो तत्त ज्ञान।
हिरदे में माला फिरे, सतगुर शबद पहचान॥
बिनसनहारे जगत में, देख ना भूलयो मीत।
सब कुछ त्याग हरीचरन में, सुनयो सतगुर सीख॥
सखा संग ना को भयो, सुन ले मूढ़े चीत।
सत नाम जप उतरो, भवजल गहरी भीत॥
क्या जोबन क्या माल धन, क्या बड़ा परिवार।
क्या हकूमत देस की, सिर झूले छतर अपार॥

मटक मटक कर चालता, जोबनवन्त सरीर।
भया दीवाना बावरा, रोवत फिरे आख़ीर॥
सब कुछ सम्पत छाड के, चला अकेला अन्त।
मोहे बताओ मूरखा, कहाँ रही बनाई बन्त॥
इस सागर संसार में, कथन आया हरनाम।
वनज ये ही अनूप है, घालत हो बिसराम॥
स्वास स्वास हर सिमरिए, ये ही तेरी रास।
बिन सिमरे दम जो गया, सो दम जम घर वास॥
एह कथा विचार के, प्रभ नाम में रहो लवलीन।
काल करीड़ा करत है, एह तन कीजे छीन॥
तन धन सकला त्याग के, अन्त भयो नर राख।
उठ मूरख समाँ विचार के, हीरा हर को चाख॥
महल मंडप छाड के, ओड़क जंगल बास।
चाम चरन्ते गीध नित, राख़ में उमगे घास॥
माटी से माटी मिला, ये तो असली बात।
माटी देख जो भूलया, सो बड़ा कमज़ात॥
तरवर रूपी जगत है, गन्ध रूप हैं साध।
जो परसे हरनाम को, ताँ का मत अगाध॥
भवसागर के तरन को, करम करे निष्काम।
आज्ञा प्रभ की में रमे, जापे निज प्रभधाम॥

**जीवन है दिन चार का, उठ सत सरुप विचार।**
**'मंगत' बिन हरी भगत के, सब ही कूड़ पसार॥ 300**

अजर अजन्मा, घर परगट नाद अपार।
पाँच सखी मिल गायो, सुध बुद्ध सकल विसार॥
अमरत कूआँ गगन समाया, बहती अमरत धार।
निरगुन सरगुन दो पनहारी, भर भर सुरत उघाड़॥
काल को खावे करम वंजावे, सुरत निरालम होई।
उल्टे मारग को उठ धाया, ज्ञान लखा दिल जोई॥

बिना बजन्तर बाजा बाजे, आद पुरख बिन सीसा।
सुन्न मण्डल में आसन माँडे, जोत लखे जगदीशा॥
सीस उतार तली पर धरया, धरम करम भयो पूरा।
काम क्रोध की गरदन मारे, गढ़ में जूझे सूरा॥
सहज सील का पानी पीता, अबगत नज़री आया।
सरब निधान देखा प्रभ एके, जल थल रहे समाया॥

**तीखन सुरती शबद आहारी, नाम निरालम चाखा।**
**'मंगत' मन तन भया बैरागी, तत्त ज्ञान लखी शाखा॥ 301**

स्वास स्वास सिमरन कर, सच्चदानन्द मुरार।
पावें परम आनन्द को, बिनसे मन अहंकार॥
सिमरन पूरा योग है, सिमरन पूरा ज्ञान।
सिमरन के परताप से, देह का तजे गुमान॥
जिनाँ राम चितारया, सो ही पुरख अजीत।
भाओ भगत मन धार के, त्यागे करम पलीत॥
सब जीवों से हेत भया, प्रेम से कीनी सेव।
मारग ये है ज्ञान का, वरनन करें गुरदेव॥
तन जोबन ना थिर रहे, पलक वटावे रंग।
नाम सिमर दु:ख काढिए, जीवन भयो निशंग॥

**सत विश्वास हिरदे धरो, मारग साचा भाल।**
**'मंगत' पावें परम पद, जीतें जम बिकराल॥ 302**

भाग वडाई मन नाम समाया। अभय पद निर्मल घर में पाया॥
पारब्रह्म रस गगन में झरिया। अखण्ड परगास दीपक उजरिया॥
उस्तत पारावार ना कोई। बिस्माद सरूप में सुरत परोई॥
पूरन ठाकर मुकन्द अबनाशी। सच्चदानन्द नित्यम परगासी॥
प्रीतम प्रेम अखण्ड चित पायो। बारम्बार तिस सीस निवायो॥
एक न दूजा भरम दिखाए। सर्वज्ञ पुरख मिला सुखदाए॥
सुरत निरत नाद परबीने। निरआधार पद अन्तर चीने॥
पाँच सहेली करें अरदास। पूरन पुरख अबगत अबनाश॥

रंचक ध्यान करम मल नासे। सत सरूप केवल परगासे॥
सब कुछ दात तिसी की होई। पाँच पचीस मिल खेल खिलोई॥
घट घट व्यापक नित अलेपा। जुगाजुगन्तर बसे रूप अनेका॥
सरब आधार सरब की ओट। घट घट व्यापे पुरख अनूप॥
पूरे गुर संग मिल सुख पाया। सतनाम ठाकर घर ध्याया॥
अखण्ड प्रीत नाम रस पीना। द्वैत भरम विकार भयो छीना॥
कलह कलंक जीव दुःख नासा। नित आनन्द आतम परगासा॥
सकली तपन से जीव छुटाया। सतगुर सन्त ने अमरत वरताया॥
मूल पहचान घट रह्यो समाए। दुर्मत छाया विकार सब जाए॥
सिमर सिमर कर नित अरदासा। उदे दीप भयो परगासा॥

**भाओ भगत से परसन्न होवे, दीनानाथ दयाल।**
**'मंगत' पलक ना विसरो, सरब जीयाँ रछपाल॥ 303**

सहज भाए सो सुख वरताए। दृढ़ विश्वाश हरचरन ध्याए॥
एक भरोसा जिस मन राखा। निर्मल चित प्रेम रस चाखा॥
करो वडयाई प्रभ अन्तरयामी। संकट हरे ले सुख बिसरामी॥
तिसकी ओट राखो आधार। पततपावन सो सरजनहार॥
नित ही नित धरो विश्वासा। सिमरो नाम कटे जम फाँसा॥
मिल सतसंग सच लेख लखायो। आनन्द सरूप परमेश्वर ध्यायो॥
सरजनहार जगत परगासे। नित्यानित करो अरदासे॥
निहमानयाँ को देवे मान। धूड़ मिलावे तख़त शाहान॥
पूरन पुरख होवे किरपाल। कीटी दीजे तख़त बहाल॥
बारम्बार सुन सत उपदेश। सिमरो ठाकर कर सदा आदेस॥

**एक भरोसा राखयो, साहब के दरबार।**
**'मंगत' विजे परापती, जब तुट्ठा करतार॥ 304**

निष्काम करम बुद्ध निर्मल कीजे। आतम तत्त निरालम लीजे॥
तन मन धन कर अर्पन गुरचरना। परम त्याग रस अन्तर भरना॥
साध सोई जो एह बिध साधे। आप त्याग काल को बाढे॥
काम क्रोध अगन की धारा। निष्काम करम से भए निस्तारा॥
धर उपकार करे नित सेवा। मन का बिनसे दूजा भेवा॥

अपना रूप सब जग में पेखे। गुर परसाद जनम भया लेखे॥
आध व्याध उपाध विनासे। साध दया आतम सुख भासे॥
भरम विखाद से भयो विखादी। अल्पज्ञ जीव मोहे माया परमादी॥
सतगुर भेंट नाम सत जापे। जनम जनम के गए सन्तापे॥
अनन भगत प्रभ अमीरस पीवे। सत परतीत **'मंगत'** जन जीवे॥**305**

नाम आधारी जीवड़ा, तन आसा करे त्याग।
मिटे जनम का अन्तरा, घट उठे आतमा जाग॥
सतनाम सिमरन करे, पल पल एके रंग।
पद परसे निरवान का, जीवन होए निशंग॥
हिरस ख़ुदी के जाल में, भटकत था दिन रैन।
शस्तर पकड़ त्याग का, जीव पायो सुख चैन॥
सोधत सोधत सोधया, आलख नाम निरधार।
मन मन पाई शान्ती, सुन पूरे गुर विचार॥
धुन उठी आकास में, मनुआँ भया उदास।
मोह मन्दर से जाग के, सत शबद में कियो निवास॥
निर्भय पद को पाया, सतगुर की परतीत।
काल जाल को त्याग के, सुरती भई अतीत॥
अपने रूप में जा मिला, उड़ गयो द्वैत ग़ुबार।
पारब्रह्म तत्त पाया, जीव भया निरधार॥

**उठ के मनुआँ घाल तू, हरनाम परम सुख खान।**
**'मंगत' औसर जात है, सिर गरजत काल सवान॥ 306**

आध व्याध परमाद में, डूब रहा संसार।
राख लिया गुर आपने, दे के नाम आधार॥
पाँच विखे सब दूर भए, मिट गए तीनों ताप।
पाया ज्ञान अगम का, वड गुर का परताप॥
शिष्य चितवे गुरज्ञान को, गुर चितवे हरनाम।
दोनों गए सतलोक को, एह साधन फ़रमान॥
अगम अगोचर सरब का ठाकर, सतगुर ने पतयाया।

सत उपदेश तिसका सुन के, तीन लोक तराया॥
सदा आनन्द विमल प्रभ रमता, काल करम से दूरे।
रंचक ध्यान आवे निज कर्ता, मन के मिटे वसूरे॥
सिद्ध बुद्ध नाथ जपें मन भीतर, आलख तत्त निरवानी।
सदा सदा सालावें तिसको, कथें अमर पद खानी॥
प्रेम प्रीत से जिसने सिमरा, छाड जगत की लाजा।
करम भरम का शंका नासा, पायो ज्ञान समाजा॥
लख चौरासी जीव जन्त में, मानुष तन को धरया।
सिमरन कीरत प्रभ की पाके, भवजल पार उतरया॥
अमरत नाम जपे निस बासुर, दृढ़ चेता चित धारी।
गुपत रूप प्रभ परगट देखा, अखण्ड तत्त निरंकारी॥
जाँ को परस मन भया आनन्दित, चित चिन्ता भई चूरे।
सहज समाध नाम रस खानी, बाजे अनहद तूरे॥
पढ़न पढ़ावन करम विनासे, जग का मूल पछाता।
एको देखा तीन जहानी, आदी पुरख बिधाता॥

**आसा तृष्ना बन्धन टूटा, सुन्न शिखर कियो बासा।**
**'मंगत' सत सरूप समाया, जो घट घट रहे परगासा॥ 307**

कथनी की ये बात नहीं, रहनी रहे सो ज्ञान।
जीवत को पहले तजे, पाछे शबद पहचान॥
घने रोग इस जीव को, गिनती नहीं शुमार।
सबका दारू एक है, सतगुर शबद विचार॥
शबद आया अगम से, परखे गुरमुख कोए।
शबद का लेखा जो लखे, करम बन्ध सब खोए॥
शबद शबद बहु कहत हैं, रमे शबद में कोए।
सुरत निरत एका करे, मन की व्याधी खोए॥
परचण्ड अगन ज्ञान की, भसम करे चित आस।
गुर के शबद में जीवन पाए, निरभय कीना वास॥
जब लग ममता करम की, मनुआँ आवे जाए।

करमफल इच्छया त्याग के, शबद भेद तब पाए॥
शबद स्वास में राखिए, स्वास शबद के माईं।
एह बिध जो साधन करे, सार शबद लख पाईं॥
अच्छर जपे गुरमुख, पाए निरअच्छर योग।
शबद ब्रह्म परगट होवे, पूरे गुर संजोग॥
मन मुरीद ना होविए, ये नाना करे विकार।
मन का मुरशद जो होए, पाए शबद तत्त सार॥
नाम रूप विकार में, मनुआँ उठ उठ धाए।
गुन करम के भोग में, आठ पहर ललचाए॥
अन्तर शबद परगासया, पूरे गुर परसाद।
तब ये मन निस्चल भया, दूर हुआ परमाद॥
जग को देखन आया, देख लिया करतार।
उगढ़े भाग ग़रीब के, असार से मिलया सार॥
धन्न करनी है साध की, धन्न तिन का उपकार।
संसे से जन राखया, दे के ज्ञान आधार॥
मरने से जीवन मिला, अमर बताया लेख।
डोलन से निश्चल किया, परम शान्त लिया पेख॥
महमा साध की गाविए, तीन ताप होए नास।
गुपत शबद परगट होवे, निहकरम निरवास॥
धारा शबद पहचान के, जीव गया सतलोक।
बन्धन से मुक्ता भया, निज रूप का भयो संजोग॥

**पूरन जुगती पूरन भगती, पूरन रूप समाए।**
**'मंगत' महमा शबद की, कहबिध वरनी जाए॥ 308**

शबद सरूप नारायन, घट घट रह्या व्याप।
सन्तन की बख़शीश से, परगट करके जाप॥
बिन साधे सत शबद के, जीव परम दुःख पाए।
आसा तृष्ना अगन में, तीन काल तपताए॥
करम भोग में नित रमे, रंचक मिले ना धीर।

जनम अनेक भरमत फिरे, धार करम तक़सीर॥
पूरन भाग से आया, मानुष जामा धार।
सत संगत साधू मिला, लखा शबद असरार॥
अपने आप सोझी होई, आनन्द कन्द शबद निधान।
चक्कर मिटा संसार का, जीव भया निरवान॥
शबद रूप निज रूप है, सरब जगत का मूल।
तीन गुन माया तान के, रचा सूखम अस्थूल॥
आद शबद जुगाद शबद है, जल थल शबद व्याप।
शबद भेद जब जानया, गयो काल करम सन्ताप॥
मन की मिट गई कल्पना, शबद समाध को पाए।
नौ दर से मुक्ता भया, दसवें जाए समाए॥
अंजन माहीं निरञ्जन देखे, अपने आप सुख पाए।
तीन लोक में पसरया, एके शबद सुखदाए॥
ज्ञानी ज्ञान विचारते, भगत प्रेम में लीन।
अपार भाग उस जीव के, नाम साहब जो चीन॥
बल जोबन की आस तज, नाम जपो निर्वान।
सरजनहार पहचान के, चित चरन रहो ग़लतान॥
एक नाम का सिमरना, दूर करे सब बाद।
जीवन में जीवन मिले, काल हरे परमाद॥
आतम राम पहचान के, मन तन पाई शान्त।
सर्वज्ञ करके देखया, मिट गए सकल भरान्त॥
सतगुर साध बचन में, जिन कीना विशवास।
तीन लोक की सम्पदा, सदा रहे तिन पास॥
सत पुरषारथ धारयो, सतलोक परतीत।
मन की मैल उतारयो, सुन साधू बचन पुनीत॥
अपरम अपार गोपाल को, पल पल लयो चितार।
सत सील पद सेवियो, जतन ये ही गुनकार॥
सब जग काल सरूप है, सत नाम अबनास।

सिमरन करो प्रीत से, जम की मिटे तिरास॥
सत बीज्यो सत खाइयो, सत में रह्यो समाए।
सत साधन संसार में, जीवन फल अधिकाए॥

**सतनाम सत साधना, सत शबद पहचान।**
**'मंगत' धन अमोल है, आनन्द रूप कल्यान॥ 309**

क्या भरवासा देह का, पल में होए वँजोग।
घड़ी सुलखनी जानिए, जो सत शबद संजोग॥
देख ये रचना जगत की, क्यों मूढ़ मन भरमाए।
ना थिरता इस जगत की, ना देह थिरी रहाए॥
जिस दर बाजत नौबताँ, गज झूलें बहु शान।
उज्जड़ खेड़े हो गए, सब चल गए बेनिशान॥
छिनभंगर ये पिंजरा, छिन में गरद समाए।
ताँ सों समाँ विचार के, करो भगत मन लाए॥
ज़ोर ज़ुलम दोनों तजो, आजिज़ हो दरबार।
सिमर नाम गोपाल का, सत सम्पत अपार॥
कहाँ सिकन्दर बिक्रमा, दुर्योधन मध मान।
कहाँ राम कहाँ रावना, नहीं देखत आए निशान॥
गुनी गए मुनी गए, साध तपोबल धारी।
सतसरूप केवल प्रभ एके, अगम शबद निरंकारी॥
वस्त अमोलक गुर दिखलाई, अगम धार अबनाशी।
मानुष जनम कदारथ होया, भरमन मिटी चौरासी॥
नित ही नित माँगो, सतनाम सत सेवा।
भाओ भगत धर सिमर लो, पारगरामी देवा॥
इस मन को शान्त मिले, सतपद ले बिसराम।
अपने आप में आप समावे, लखे शबद का धाम॥

**खेम कुशल पद जपो निरंजन, करें सन्त वेद पुकार।**
**'मंगत' ये ही सत सम्पता, जग जीवन धन सार॥ 310**

स्वास स्वास हरनाम जप, जीवन सुफला होए।
काम क्रोध मल सब हरो, नाम साबन ले धोए॥
सब साधन की साधना, सब गुनियाँ दा ज्ञान।
प्रेम भाओ अन्तर जपे, जीव पाये बिसराम॥
स्वास सुरत से पीविये, साचो नाम अगाध।
उल्ट कँवल परगासया, मिटी तृष्ना व्याध॥
सतनाम जग में सार है, और सकल असार।
प्रेम भगत अन्तर जपे, परसे पद निरधार॥
लाख करोड़ी सम्पत, छिन आवे छिन जाए।
इस्थिर नाम गोबिन्द दा, जो सिमरे सुख पाए॥
चार वेद खट शास्त्र पढ़े, निध्यासन बिन भरमाए।
मिटी ना मन की कामना, बाद बदे दु:ख पाए॥
तीरथ नहावे ब्रत को साधे, ज्ञान बिना अन्धकार।
मन की कलपन तब मिटी, जब गुर शबद विचार॥
मानुष देह दुर्लभ भई, सतनाम को खाए।
तृखा मिटी संसार की, पारब्रह्म रस पाए॥
बारमबार विचारयो, साचो नाम अनमोल।
मिरतक से जीवन मिले, पूरे गुर के बोल॥
इस सागर संसार में, सभी जीव दु:ख पाए।
क्या राना क्या रंक, क्या धनी अधिकाए॥
सम्पत जेती कीजिए, अन्त चले सब छाड।
आस अँदेसे में गए, अनक जीव परमाद॥
परसो नित सतसंग को, सुनयो हर का नाम।
दुर्लभ समाँ विचार के, कर लीजो हथ दान॥
पिंजर भूम समावसी, सुन्दरवन्ता रूप।
राजसिंघासन छाड के, मिले गरद में भूप॥

**ऐसो ही एह चक्कर है, आवे जावे नीत।**
**'मंगत' सुफला जीवना, जब हर भगत परीत॥ 311**

काया छीजत जात है, ज्यूँ बालू की भीत।
हर का नाम चितार मन, दुरलभ जग में रीत॥
धन जोबन ना थिर रहे, ना थिर रहे परिवार।
ना थिर रहेगा तन ये, काचा चाम मंजार॥
धरतर जाए पवन जाए, जाए पावक और नीर।
राजा जाए राना जाए, जाए गुनी गहीर॥
इस्थिर साचा नाम है, एह नित करो विचार।
पलक पलक कर सिमरिए, दुरलभ ऐसी कार॥
जो जनमें सो ही पछताए, राजा राना मीर।
वेद पढ़ता पण्डत रोवे, नहीं चित आवे धीर॥
अरब खरब का धनी रोए, और रोए बड़ा परिवारी।
एक भगत बिन सब दुःख पावें, देखो ज्ञान विचारी॥
बाल गया जोबन गया, जरा आई सिर धाए।
ओड़क सभ्भे छूट गए, तनुआँ ख़ाक समाए॥

**क्या गत होई तेरी, जो बड़ा गुनी कहलाया।**
**'मंगत' साचे नाम बिन, जीव अन्त पछताया॥ 312**

साचे नाम को सिमरिए, जो देवे सुखसार।
प्रेम भगत परगट होवे, नासें रोग अपार॥
मन अपने को सुख मिला, जो मुख से नहीं बखान।
आठ पहर आनन्दघन, सुरत भई ग़लतान॥
नित एह सम्पत संचिए, अन्त करे उद्धार।
बिन खाए सतनाम के, ये सकलो कूड़ ब्योपार॥

**उठो करो नित साध की संगत, पेखो नाम गोपाल।**
**'मंगत' साचा धन रचो, तन मन करो निहाल॥ 313**

## पाँचवाँ मार्ग-सतसार प्रकाश

आदेस नाथा पुरख बिधाता। आदेस देवा सरब समाता॥
आदेस पुरखा अखण्ड सरूपा। आदेस अनुभव परकाश अनूपा॥
आदेस स्वामी अपार परया। आदेस शक्ती काल प्रहरया॥

आदेस ज्योती अखण्ड परगासा। आदेस पुरखा अगम तत्त वासा॥
आदेस कीजो सकल दुःख नासे। आदेस निरञ्जन अजर अबनासे॥
आदेस गोबिन्द जीवन धारा। आदेस कीजो आपार मुरारा॥
आदेस ठाकर को जो जन कीजे। भगत परापत शबद सार पीजे॥
आदेस मन से करे जो ज्ञानी। सुरत अडोल मिटे भ्रम खानी॥
आदेस कीजो प्रभ आलख अनामी। विगन विनासे होएँ प्रापत स्वामी॥
रूप वरन नहीं जाँ को आकारा। आदेस करो पद पंकज सारा॥
नित बलिहार हूँ तिसके चरना। जो करे आदेस प्रभ कारन करना॥
सत साधन सत जुगत को जाने। अन्तर शबद आदेस पहचाने॥
अगम अगोचर अजर अबनासी। नित आदेस अखण्ड परगासी॥
भरम ग़ुबार मन दुर्मत जाए। करे आदेस हरचरन समाए॥
नित आदेस पद पुरख जगदीशा। मंगल होए जाए काल संदेशा॥

**आदेस करो निज रूप को, जो घट घट रह्या समाए।**
**'मंगत' करनी सार है, गवन जीव बिनसाए॥314**

सतसार निध्यास से, मन तन आवे शान्त।
जनम मरन जाए दूषना, किलविख हरे भरान्त॥
सत साधन ही सार है, मानुष जनम की मौज।
मिल सतसंगत नित गुनी, सत की कीजो खोज॥
भरम ग़ुबार अति दुःखदाई, जीव को देवे त्रास।
सत औखद जो जन खाए, तिनकी मिटी प्यास॥
सत औखद प्रभ रूप है, जो नित आनन्द की खान।
जिस जन ने सेवन किया, सो तीन लोक परवान॥
परम जतन परम रतन, परम तेज परकाश।
परम गती सत रूप है, निर्भय पद अबनास॥
परम ज्ञान परम ध्यान, परम विवेक विचार।
परमारथ तत्त सार है, परम धाम निरधार॥
परम भगती परम युगती, परम योग निरवास।
परम सिद्धता जगत में, सत सार परकाश॥

पूरन भाग सो जीव है, जो सत में रहे परबीन।
तप योग और साधना, केवल सत आधीन॥
गुरमुख विरले जगत में, नज़र सराफ़ी पाई।
मानक लख हरी नाम का, तृखा जीव बिनसाई॥

**अचरज सत का खेल है, खेले कोई गुनवन्त।**
**'मंगत' नित बल जात है, सत साधे जो सन्त॥ 315**

सतसरूप अजर अबनासी। सिमर सिमर मन पाए ख़ुलासी॥
निर्मल चित धर करो विचारा। सत तत्त खोज पाएँ छुटकारा॥
नाम रूप गुन करम विखेपा। सत परतीत से मिटे कलेशा॥
सत मारग सत जुगत लखाई। सतगुर पूरन सो कहलाई॥
सत परतीत जीव सुख पाया। निर्मल ध्यान हरिचरन ध्याया॥
आद अनादी पुरख आनन्दा। काल करम नहीं धारे द्वन्दा॥
जिसने खोजा तिस सुख पाया। सरब का ठाकर घर दरसाया॥
सूक्षम अस्थूल का पायो निधाना। सरब आधार एको दृष्टाना॥
परम कला अत तेज समाई। सत तत्त सिमरो परम सुखदाई॥
सकल जगत का निरनय पाए। एक रूप का लेख लखाए॥
दृढ़ विश्वास तब ही जन पाए। सतगुर मिल सतनाम कमाए॥
जीवन मरन की सार लखाए। जब सतसार ध्यान में आए॥
मित्तर शत्रु एक दिखाए। सत सम्पत समता चित आए॥
दु:ख सुख दोनों इक रंग पेखे। सत तत्त परगट जब घर में देखे॥
लाभ हान जाए मन अन्धकारा। सत तत्त परगट पुरख निर्धारा॥

**शोक मोह सकलो मिटे, सत तत्त धरे ध्यान।**
**'मंगत' नाम प्रभ सिमरिए, ये ही सार निधान॥ 316**

बिस्माद ये रचना साहब रचाई। देख देख मन तृपत ना पाई॥
दृष्ट ना आवे ना कोई परमाना। कह बिध सिमरूँ साहब निर्वाना॥
मिल सतसंग सत करी पछाता। सरजनहार पुरख बिधाता॥
अपने आप में सो रह्या समाए। मिल सतगुर तत्त सिमरत पाए॥
सरब जीवों का सरजनहारा। सरब कलाँ का जो आधारा॥
सरब रसों में जो आनन्द दिखलाई। सरब तेज में जिसकी वडयाई॥
सो अजर पुरष अखेद अमोला। व्याप रह्या सूक्षम अस्थूला॥

सरब आधार सो एक समाई। अपरम अपार साहब वडयाई॥
जुग जुग सत सो ही प्रभदेवा। तिसका सिमरन सुख सार लखीवा॥
वडी वडयाई प्रभ कीरत गाओ। जनम मरन नहीं संकट पाओ॥
हाड मास नाड़ी का देवल। करे परकाश शकत प्रभ केवल॥
सब कुछ तिस से परगट होए। सरब न्यारा आप बसोए॥
सुन अस्चर्ज सिमर अस्चर्जा। आद अनादी पुरख जग सरजा॥
जिस जिस सिमरा सो तत्त बिसमादी। तृपत भयो मन तजी उपाधी॥
जग आवन का लाभ पछानी। सत सिमरन प्रभ हिये समानी॥

**परम आनन्द परम सुखरासी, साहब नाम अमोल।**
**'मंगत' पल पल सिमरिए, जाए भरम का ख़ोल॥ 317**

नित ही नित कर गुनी विचार। क्या मरे क्या जीवन सार॥
क्या उतपत क्या परलय होई। कहाँ से आवे कहाँ जाए बसोई॥
कौन मित्तर जो नित संग बासी। कौन ज्ञान जो कटे चौरासी॥
एह विचार करो अत सुखदाई। कह बिध मनुआँ शान्त समाई॥
सुख के कारन बहु जतन विचारी। माल मुलक सम्पत बहु धारी॥
सुत दारा नाती परवारा। रैन दिन करे जतन बहु भारा॥
उठ उठ धाए मन अंधकारी। ठौर ना पावे बिन सत विचारी॥
सच वक्खर जिस वनज करीना। गुर परसाद शान्त परखीना॥
संसा त्याग राख विशवासा। सत करतार जल थल निवासा॥
गरब गुमान दूषना त्यागो। मिल सतसंग सत पद में जागो॥
छिन छिन काल रह्या विताई। सत तत्त खोज लाभ जग पाई॥
अन्तर वसया सो परमानन्दा। नित ही सिमर जाए जमफंदा॥
परम कलेश में जीव रहाई। सरूप विसार परम दुःख पाई॥
अबनाशी पुरख को दिया बिसराई। झूट माया संग रहे लपटाई॥
चले निथावाँ अन्त की बारी। सम्पत तजी माल परवारी॥

**आसा माहीं जनमया, आसा में मर जाए।**
**'मंगत' घने कलेश में, नित प्यासा रहाए॥ 318**

काल करम का जाल अपारा। जतन करे ना होवे छुटकारा॥

नैनों देखत सब जग जाए। मूढ़े मन को नहीं शान्त आए॥
सब कुछ देखे होए बेगाना। मोहवस होय के नित दुःख ठाना॥
अद्भुत माया अन्तरगत धारी। तीन काल करे करम बकारी॥
मरन विसार किए बहु पापा। ज़ोर ज़ुलम को अन्तर थापा॥
अपने आप का बनया घाती। चले निमाना उठ परभाती॥
कुछ तो जीवन करो विचार। क्यों नर आया विच संसार॥
कौन सखा तेरा संग सुहेला। क्यों भरमें जग देख के मेला॥
कोई आवे कोई जावन जाई। वाह वाह रचना साहब रचाई॥
सत पुरषारथ कर गुन मीता। नित सत सिमर तू होवें पुनीता॥
चौधाँ लोक में वस्त ना कोए। जो इस मन में शान्त परोए॥
मात पिता पुत्तर और धीया। अपने सुख के बने सनेह्या॥
मूरख हो के क्यों जनम गँवाई। राम विसार नित जिया जलाई॥
सब गुनियों ने कियो बखाना। जप प्रभ नाम मिटे दुःख नाना॥
वेद ग्रन्थ करें विचारी। भज दीनदयाल परम सुखकारी॥

**जग आवन में लाभ है, सतनाम चित्त आए।**
**'मंगत' बिन प्रभ सिमरने, तीन काल दुःख पाए॥ 319**

सतगुर सेव से बन्धन छूटे। निर्भय नाम अमीरस लूटे॥
रहत कहत में पूरन होई। निर्मल दिसा सतनाम परोई॥
डोलन धावन सकल विनासा। निज पद परस आयो विश्वासा॥
इक चित सिमरन नाम प्रभ पाया। सत सरूप आतम दरसाया॥
पूरन साध खेम वरताई। भरम गयो सत सम्पत पाई॥
जीवन माहीं जीवन को पाया। सत तत्त शबद योग समाया॥
नित ध्याओ सतगुर की रसना। मिटे विकार भरम जग सुपना॥
करम धरम की सार पहचानो। सतगुर सेव परस सुख ठानो॥
करम बन्धन ही नित दुःखकारी। भरमे जीव जून बहु धारी॥
इच्छया करम में नित बन्धाए। बिन तत्त ज्ञान नहीं छूटन पाए॥
पाँच तत्त विकार बहु धारी। शबद स्पर्श गन्ध रूप रस बकारी॥
इन्द्री विखयों में नित प्यासा। भोग भोग के भयो निरासा॥

छिनभंगुर ये भोग विकारा। अद्भुत माया रचा पसारा॥
सत परतीत बिन दुःख पाई। आस भरोसे जनम गँवाई॥
गुरमुख विरले लई जिज्ञासा। सत को खोज के तजी प्यासा॥

**आनन्दरूप प्रभ सिमरिए, मन तन आनन्द होए।**
**'मंगत' साधन सार है, सतनाम की मनी परोए॥ 320**

सत साधन बिन सिद्धता ना होई। खप खप मरे भरम ना खोई॥
परचण्ड माया विगन बहु धारी। बिन सत सोध नहीं मिटे ख़वारी॥
सत अर्थ विद्या का बूझे। सत करम की सिमरत सूझे॥
पल पल सत में चेता धारी। द्वैत ग़ुबार मिटे भरम बकारी॥
सत पुरषों का सुने फ़रमाना। सतगुर चरन की सेव पछाना॥
सत विश्वास गुर बचन में राखे। नित सत ध्यान में अमरपद चाखे॥
कठन कराल तृष्ना दुःख खानी। सत तत्त सेव होवे दुःख हानी॥
काम क्रोध मध लोभ बकारा। मोह अगन में जले संसारा॥
सुख दुःख इच्छया नित तपावे। शबद पछान परम गत पावे॥
शबद सत शबद नित न्यारा। सरब सार ये शबद अपारा॥
शबद पछान सत साधन होई। शबद ध्यान मनमुखता खोई॥
शबद अनुराग भ्रम अगन बुझावे। शबद का निर्नय कोई गुरमुख पावे॥
सत सार शबद अजनमा। पारब्रह्म पुरख निहकरमा॥
पूरन सतगुर सो ही पछानी। सार शबद मारग दिखलानी॥
नित परकाश अगोचर स्वामी। शबद आगाध अपार अनामी॥

**सत सार सत शबद है, मिल सतगुर कर पहचान।**
**'मंगत' घट घट रम रहा, सो पूरन पुरख सुजान॥ 321**

नेम धरम नीती परवान। सत सुकृत करे शबद पछान॥
जनम मरन नहीं तिसे व्यापे। इच्छया ग़ुबार ना कोई सन्तापे॥
आपा पर नहीं दुर्मत भेदा। सरब काल सो बसे अछेदा॥
सत सार सरूप परवानी। शबद अगोचर की करो कहानी॥
सो परमानन्द सो ही जगदीशा। सो परमेश्वर सरब का ईशा॥
सो दीनदयाल पतत उद्धारी। आद बिशम्भर सो पुरख मुरारी॥

उस्तत कही ना वरनी जाए। पुरख अपार नहीं गमता पाए॥
विघन दोख से रहत न्यारा। सकल स्वामी भज करतारा॥
शबद सार केवल इक जानी। सकल भरमन और पहचानी॥
शबद ध्यान जो गुरमुख पाई। उपरस भए जो सुख जग वरताई॥
महापुरष सो सतगुर होई। शबद समाध सत सार परोई॥
पढ़ पढ़ जनम अनेक विताए। अठसठ तीरथ नित उठ नहाए॥
अरब खरब द्रभ सम्पत धारी। उदे अस्त तक राज विचारी॥
हिकमत हुनर सयानफ़ अनेके। बिना शबद सब फिरें भुलेखे॥
खप खप मरे नहीं सार को सूझे। भाँत भाँत कर देव को पूजे॥

**सत परमेश्वर ज्ञान बिन, नहीं बिनसे जीव कलेश।**
**'मंगत' शबद विवेकी जो साध है, तिसको नित आदेस॥ 322**

सत मारग में उठ के चालो। सत करम की घालन घालो॥
सत करम करे उज्जल नीती। भरम ग़ुबार हरे बद नीती॥
सतकरमी सत मारग बूझे। मलीन करम में नरक दर सूझे॥
जब लग करम ना निर्मल होई। तब लग शबद ना परसे कोई॥
साचा धरम ये ही नर पहचानी। सत करम में प्रीत समानी॥
सत करम कल्यान को देवे। सत सरूप शबद को लेवे॥
सत करम का सुनो निधाना। सतगुर साध इयों करें बखाना॥
मान त्याग होवो निरमानी। कारन करता साहब पहचानी॥
सरब जियाँ संग राखो हेता। सर्वज्ञ पूजो पुरष पुनीता॥
पर दुःख हरना कार विचारो। निज सम्पत परदुःख में वारो॥
पर उपकार मन साधन कीजो। निष्काम भाओ मन करम करीजो॥
करम शरीर प्रभ आज्ञा में त्यागो। मान त्याग हरचरन में जागो॥
दृढ़ निस्चय हरिनाम चितारो। पल पल तिसकी सेव विचारो॥
बिन प्रभ दूजे निहों नहीं राखो। सतगुर बचन मन अन्तर चाखो॥
तज अभिमान ग़रीबी पाए। त्रैगुन जाल माया बिनसाए॥

**सत शबद परगासया, घट घट चानन पाए।**
**'मंगत' मन परसन्न भयो, ताप तपन सब जाए॥ 323**

मोह माया का जाल अधिकाई। शबद सार नहीं मन में आई॥
तुच्छ जीवन में प्रीत विचारी। करम क्रूर हिरदे में धारी॥
विषे विकार में बुद्ध भरमानी। देख माया भयो मूढ़ अज्ञानी॥
असत वस्तु को सत कर माने। विख को तुल अमरत की जाने॥
काल रूप सरीर को धारी। तिस में जीवन आस विचारी॥
सत सरूप कह बिध परगासे। छल कपट माहीं नित निवासे॥
अपने पाप की ख़बर ना कोई। पर की निन्दा चित्त माईं परोई॥
आप ना सोधे औराँ उपदेशे। कपट को धार नहीं जाएँ सँदेशे॥
सरजनहार घट रिह्या समाई। मनमुख मूढ़ा बाहर उठ धाई॥
सत सम्पत हरीनाम विसारी। बिख माया दुःख जाल पसारी॥
सत स्वामी नहीं मन ध्यायो। नाती संग बहु साथ बनायो॥
मन जो दुःख देवे अपारी। पल पल तिसके भोग विचारी॥
नाशवान से करे परीती। तज अबनाशी सब भई अनीती॥
अपनी करनी का फल पायो। तीन ताप में नित जलायो॥
जो कुछ कीया सो ही दुःखकारी। कौन छुड़ावे जमसंकट भारी॥

**करम विलक्खन नित करे, मन बहु चतराई राख।**
**'मंगत' मनमुख जीवड़ा, अन्त नरक दर भाख॥ 324**

करनी मलीन चित्त में धारी। कह बिध मिटे जमराज ख़वारी॥
जो कुछ बीजे सो ही फल पावे। करनी का बाँधा आवे जावे॥
जनम मरन का कारन ये ही। सत त्याग भयो करम सनेही॥
मारग करम पहचाने जोई। पूरन पण्डत जग में सोई॥
करम विखाद करम परमादा। चारखानी सब करम का वाधा॥
जब लग करम नहीं सोझी होई। सत करतार ना परगट होई॥
उठ कर अपना करम विचार। बन्धी छूट पावें सुख सार॥
मन शरीर बुद्ध करम कमाए। अपनी ग़फ़लत में भरमाए॥
संकल्प विकल्प इच्छया का रोग। छिन छिन तिसमें करे सँजोग॥
कठन वेग माया नित धारी। बिना जतन नहीं मिटे ख़वारी॥
साचा जीवन मन माहीं विचार। भवजल दुस्तर से उतरें पार॥

सत पुरष सरब परगासी। तिसकी भगत परम सुखरासी॥
नित ही तिसमें अनुराग विचारो। शुद्ध विचार तिस सेव चितारो॥
पाँच पचीस आठ अट्ठारा। चार चौधां से भए निस्तारा॥
सत परकाश आतम घर देखे। सतगुर दया सब मिटे भुलेखे॥

**मूल पहचाने प्रभ एक को, सरब का साखी जोए।**
**'मंगत' ये सत साधना, विरला गुनी परोए॥ 325**

साचा जीवन दुरलभ विचारी। मानुष देह की पावे सतकारी॥
कपट विकार मन के त्यागी। दीन ग़रीबी में सुरता जागी॥
सत तत्त आतम को नित सोधे। सतगुर जुगत को मन में बोधे॥
इच्छया रोग का करे उपाए। आध व्याध मन की बिनसाए॥
अपने आप की सोध नित लीजे। अपनी करनी की ख़बर करीजे॥
वैर बदी मन से गँवाए। नित ही प्रीत मन में प्रगटाए॥
सब जीवों संग हेत विचारी। गुर परसाद तब मिटे ख़वारी॥
अपना सुख औराँ वरतावे। मान त्याग नित दास कहलावे॥
असुर बुद्धी अन्तर से त्यागे। देव समता में गुरमुख जागे॥
देह अभिमान बकार को छोड़े। सत करतार के चरन चित जोड़े॥
दृढ़ विश्वास जतन ये कीजे। पर का दोख नहीं हिरदे लीजे॥
सरब जीयाँ में सुख वरताई। सतसार भज जीव गत पाई॥
मन अपने का हरे ग़ुबार। सत नाम जपे बारम्बार॥
उट्ठत बैठत निस्चय इक राखी। भाओ भगत मन अन्तर चाखी॥
मन निरमल सतनाम आहारी। सत सरूप का लेख विचारी॥

**निहचल थाओं में जा बसा, सत करनी वाला जोए।**
**'मंगत' नित ही प्रेम से, चरन तिन्नां दे धोए॥ 326**

सतनाम महमा परगासी। जीवन मुकत अभय पद वासी॥
अन्तरमुख चित रह्या समाई। शबद धार जानत जानाई॥
तीन भवन शबद किलकारी। गुरमुख अन्तर युगत विचारी॥
अनन प्रीत मन लीन समाई। सुख दुःख परे परम गत पाई॥
चेतन पुरख आनन्द की खानी। सत सरूप की सोभा जानी॥

खिमा दया चित धीर समाई। साचे नाम की लख वडयाई॥
जन्मे मरे ना शोक को पाई। नित आनन्द पुरख सुखदाई॥
पूरन भाग हरजन जागे। आलख पुरख के चरनी लागे॥
अगन विनासी चित ठाँड समाई। सत परमेश्वर सिमर गत पाई॥
जग मिथ्या सत आप करतारा। जल थल माहीं रहे भरतारा॥
लोक परलोक सब मन की रचना। सत परतीत से भयो सब सुपना॥
करूँ दुहाई जप नाम तत्त सार। हरजन चरनी नित नित बलिहार॥
सूखा चित्त नाम जप हरया। सतगुर साध की सरनी पड़या॥
निहथाँवाँ मन आया ठौर। चंचल त्याग चरनी चित जोड़॥
साची घालन गुरमुख पाई। पूरन पुरख की सोभा गाई॥

**आलख पुरख को सिमरिए, तन मन शान्त समाए।**
**'मंगत' नाम प्रभ सार है, पल-पल लयो ध्याए॥ 327**

वेद ग्रन्थ सकल इतिहासा। सतसार नाम परकासा॥
अमरत नाम की सब वडयाई। गुन ज्ञानी कीरत नित गाई॥
पाप विरत संशा सब जाए। सत परतीत हर सेव कमाए॥
पूरन करम हरजन ने पाया। सत परकाश हरीचरन ध्याया॥
कोट जनम की मैल उतारी। मिल सतगुर तत्त नाम विचारी॥
साचा सुहेला साहब का गाया। पूरन पुरख ठाकर घर पाया॥
पलक ना विसरे अंतरयामी। बिनसे रोग परसे सुखधामी॥
साची भगत मन माहीं समाई। कोट विगन सहजे बिनसाई॥
जिस सुख को सनकादिक ध्याए। मुनी सुखदेव नित प्रीत कमाए॥
सतगुर मेल सो सुख घर पाया। परम आनन्द मन मगन समाया॥
झूठ भरमना मिटी उपाधी। आलख शबद में पाई समाधी॥
गवन विनास परम पद पाया। सतसार शबद को ध्याया॥
सुकृत जीवन हरजन पाई। सत मारग में उठ के धाई॥
शान्त सरोवर शबद अबनासी। सिमर सिमर काटी जमफाँसी॥
पूरन योग पूरन विचारा। पूरन जतन भज पद निर्धारा॥

**सत सम्पत हरीनाम है, छिन छिन लयो चितार।**
**'मंगत' आवन जगत में, हरजन का भयो बलिहार॥ 328**

हरजन लीना सच घर बासा। अद्भुत शबद लखे परकासा॥
सत सिमरे सत करे बखाना। प्रेम प्रीत जपे नाम सुजाना॥
दुरमत त्याग इक प्रीत कमाए। पल पल हर के चरन समाए॥
सकल प्रभता हर की सेवे। जीवन रूप शबद रस लेवे॥
स्वास सुरत को पल पल जोड़े। अगम शबद का चढ़े सरूरे॥
मान मध का भयो त्यागी। निर्मल प्रीत चरन चित लागी॥
काल त्याग अकाल पहचानी। गुरमुख तीन लोक परवानी॥
सत्तसार शबद चित गाई। रूप रेख से परे समाई॥
जनम मरन जम संकट नासी। निर्मल ध्यान हरचरन निवासी॥
आलख शबद अन्तरगत जानी। निमख निमख तिस प्रीत पछानी॥
आज्ञा तिसकी मन माहीं समाई। भाओ भगत जप परमगत पाई॥
साचा ठाकर कह बिध सालाहिए। मिल सतगुर सत प्रीत कमाइए॥
अमर पदारथ जप नाम भगवाना। सुफल जनम जन भयो परवाना॥
एक भगत हरचरन विचारी। जुग जुग हरजन करें पुकारी॥
हर की सेव करे ख़ुलासी। गवन त्याग अमरपुर बासी॥

**सतनाम प्रभ सिमर लो, जो जग जीवन सार।**
**'मंगत' पावें परमगत, सुन साधू बचन अपार॥ 329**

साध सरन अमरत फल पाया। अगम अगोचर पुरख ध्याया॥
सत के ताईं करे बहु जतना। तीरथ बरत धारे बहु कठना॥
गृह त्याग भयो बीयबान निवासी। वेद ग्रन्थ का भयो निध्यासी॥
कभी नगन रहे कभी बस्तर श्रृंगारी। कभी कथा विचारे कभी मौन को धारी॥
अंग भभूत तीन काल रमाई। बिन सतगुर नहीं दूषना जाई॥
सतगुर दया जीव सुख पाई। सत सरूप की लखी वडयाई॥
पाँच भूत की मढ़ी पहचानी। आलख परगास परसा निर्वानी॥
अपने अन्तर रतन प्रभ पाई। पूरन साध निरनय दिखलाई॥
कठन साधना सकल निवारी। सहज भाये मन भया निस्तारी॥
मारग सहज सुरत का जाना। प्रेम प्रीत का लेख पछाना॥

सुरत शबद एक चित परोए। गुर परसाद मन निर्मल होए॥
रूप निरंजन घट माहीं पहचानी। पल पल तिसकी शोभा जानी॥
अपरम अपार पुरख परिपूरा। घट में परगट भयो ज़हूरा॥
सरब व्यापक सरब अलेपी। अगम पुरष की सोभा पेखी॥
मंगल भयो मन लीन समाई। अखण्ड शबद जोती दरसाई॥

**उल्ट सुरत अन्तर करी, गई गगन के तीर।**
**'मंगत' एह गत जो लखे, कामिल सो ही फ़क़ीर॥ 330**

आलख अपार शबद निर्वानी। गुरमुख साधू करे पहचानी॥
जीवनमुक्त सरूप विचारी। पाप पुन्न से भई निस्तारी॥
करमजाल बिख ममता नासी। अगम पुरष कला परगासी॥
नित न्यारा नित निहकर्मी। सत तत्त सिमर गुनी वडधर्मी॥
बिस्माद सोभा साहब की जानी। कथ कथ थके मुनी देव ज्ञानी॥
बिना कारन रह्या समाई। बिना कारज नित होत सहाई॥
अचल अडोल अनाद निरवानी। घट घट अन्तर जोत पहचानी॥
सकल विकार जीव के नासी। निर्मल ध्यान सत नित परगासी॥
आसा मनसा लीन समाई। अखण्ड जोत आतम दरसाई॥
सरब थाईं सो करे बिसरामी। सरब का ज्ञाता सो अन्तरयामी॥
गत मित तिसकी विरले पाई। पूरन साध रज सीस रुमाई॥
कामना त्याग भया निषकामी। सरब आधार परसा स्वामी॥
पूरन मन नित यतन समाए। सतसार शबद प्रभ ध्याए॥
तत्तवेता कोटाँ में कोई। अगम शबद जो नित परोई॥
परमानन्द में मगन समाई। सत सरूप परगट घर पाई॥

**सत पुरष को बन्दिए, जिस जानी सतसार।**
**'मंगत' तिसकी सिखया, करे तीन लोक निस्तार॥ 331**

सत साधू की सीख विचारी। सतसार पायो रूप मुरारी॥
जनम मरन संकट भयो नासी। सत सिखया से पायो अबनाशी॥
पाँच तत्त की दूषना त्यागी। इन्द्री विकार से सुरता भागी॥
छिनभंगर से भई उदासी। साधू मेल पायो अबनासी॥

दोख द्वन्द सकल परहरया। साध बचन ले जन निस्तरया॥
पूरन सन्त के चरन बलिहारी। जग जीवन जिस सार लखारी॥
अजर पुरष संग प्रीत कमाई। सत विश्वास गुनी चित पाई॥
कपट विकार मैल को धोई। सत परतीत बुद्ध निर्मल होई॥
निहचल धाम सचखण्ड पहचानी। सतगुर सेव मिटी भ्रम खानी॥
साचा जीवन साध दिखलाई। भाओ भगत सत प्रीत कमाई॥
संशे भरम से निर्मल होई। सत सिखया मन माहीं परोई॥
जग मिथ्या सतनाम विचारी। सत करम में सुरत उगाड़ी॥
परहित चित उपकार कमाई। परदु:ख में निज सुख वरताई॥
अनन प्रीत प्रभ नाम विचारी। स्वास सुरत एका गत धारी॥
शबद स्वास सुरती इक धारी। अगम जोत घट भई उजियारी॥

**सत सिखया अन्तर रसी, मन के मिटे ग़ुबार।**
**'मंगत' प्रभ प्रगट भया, इस काची देह मँजार॥ 332**

सत करनी मन माहीं विचार। मानुष जनम नहीं बारम्बार॥
एको नाम सुफला जग जान। साध जनाँ ने करी बखान॥
नाम बिना जन पशु समानी। निसदिन भरमे भरम की खानी॥
धन बल परवार बहु होई। अन्तकाल सुख देवे ना कोई॥
झूट पाखान संग करी परीती। करम विलक्खन धरी बदनीती॥
छल कपट बहु चित्त विचारी। अनंक पाप में सुरता धारी॥
सकली सम्पत अन्त को छाड़े। जमराज सिर खूँटा मारे॥
होए निमाना रोए अन्त की बारी। करनी भोगे जो करी बकारी॥
जनम अमोलक नर दियो गँवाई। मरन विसार बहु पाप कमाई॥
उठ के सोच तू जीवन सार। भाओ भगत मन करो विचार॥
हर की भगत मुकत की दाती। साधजनाँ ने सार पछाती॥
छिन छिन उद्दम लयो चित धारी। अबगत नाम सिमर मुरारी॥
सकले संकट भसमत होई। दृढ़ निस्चय ले नाम परोई॥
कारन करता प्रभ अन्तरयामी। तिसकी सेव परम सुखधामी॥
छिन छिन औसर रही वंजाए। राम नाम जप परम गत पाए॥

**उट्ठत बैठत सिमर लो, सत सरूप निरधार।**
**'मंगत' समय अमोल में, खाट रतन प्रभ सार॥ 333**

अखण्ड आनन्द केवल प्रभ नाम। सिमर सिमर पावें बिसराम॥
सत सरूप सरब जगदीशा। दीन भाओ जप नाम सुखरीशा॥
नित सुख देवे सो ही दयालू। करुनाकर सो नित किरपालू॥
नित ध्याओ नित करो अरदास। पाप कूप का होवे नास॥
दुःख निवारी सो किरपाधारी। तिसके दर का जो होए भिखारी॥
देवन देव सो वड परतापी। पल पल लयो तिसे मन जापी॥
अन्तरगत निरन्तर ध्याओ। सिमर सिमर अखण्ड सुख पाओ॥
सो ही थाओं सो ही सतधामा। गुरमुख सिमर लेवे बिसरामा॥
विखे विकार भसम नर होई। निर्भय नाम जपे जन जोई॥
सर्वज्ञ ठाकर ऊँच बिसरामी। सकल घटाँ का अन्तरयामी॥
सो दीनदयाल बिशम्भर देवा। निर्मल चित धर कर तिस सेवा॥
तिसकी सेव लाभ अधिकाई। वेद ग्रन्थ नित करें दुहाई॥
जग आवन का ये ही निधाना। निस्चे आवे एक भगवाना॥
अनन्त नाम अनन्त सरूपा। अनन्त शकत धरे आप अनूपा॥
कथी ना जाई तिसकी वडयाई। कोटाँ कोट ब्रह्मण्ड उपजाई॥

**जुग जुग आदी सम रूप है, जनम मरन नहीं पाए।**
**'मंगत' सब जग तिसमें, वाँग नीर तरंग समाए॥ 334**

सब साजन मिल ध्याओ प्रभ देवा। सुफल जनम पूरन होए सेवा॥
सरब का प्रीतम सो एक स्वामी। रल मिल सिमरो प्रभ अन्तरयामी॥
संकट नासे आनन्द घर पाई। जो जो सिमरे नाम सुखदाई॥
करो अरदास सिमरो नित चरना। दुःख परहरे सो कारन करना॥
सन्त वेद जुग जुग बखानी। भज भगवन्त अमृत की खानी॥
कालजाल भ्रम संकट जाई। सत परतीत जो सेव कमाई॥
जो प्रभ सिमरे होऊँ धूड़ी तिस चरना। नित बलिहार जाऊँ नित सरना॥
अद्भुत तृषना जाल को धारी। प्रभ का सिमरन देवे छुटकारी॥
नाम सिमर और टेक त्याग। प्रभ अपने की चरनी लाग॥
ज्यूँ ज्यूँ राखे त्यूँ सुख जाने। करनहार को सत कर माने॥
अधिक प्रीत जप नाम दयाल। मानुष जनम की सत घालन घाल॥

परम सुख हरजन नित लेवे। भाओ भगत जो चरन को सेवे॥
रोग शोक निकट नहीं आए। नित बलवान सो गुरमुख रहाए॥
बारम्बार सुनें सत उपदेशा। भज करतार सरब जगदीशा॥
सकल विखाद तज हर सेव कमाओ। जग आवन की सार को पाओ॥

**प्रभ को सिमरन कारने, आया इस संसार।**
**'मंगत' जिस प्रभ सेवया, तिस चरनी बलिहार॥ 335**

सतनाम सिमरन करो, ये साधन की सार।
सिमरन पूरा योग है, सिमरन सत विचार॥
कुटल मन निस्चल भया, जब सत सिमरन को पाए।
नाम रूप जाए कल्पना, तत्त परगास समाए॥
सिमरन मन सरूप है, सिमरन में संसार।
सत सिमरन जब जानयाँ, तब पाई सुख सार॥
जैसी मन की सिमरती, ऐसी कामना होए।
सतनाम सिमरन करे, मैल भरम की धोए॥
जतन यथारथ जगत में, सिमरन नाम प्रभ एक।
पल पल तिसे ध्याइए, विसरे पलक ना एक॥
झूट कलपना सब मिटे, जब सत सिमरन को पाए।
नित ही निश्चल ध्यान में, जीव अमरत को खाए॥
साचा सिमरन कीजियो, सच संग करो निवास।
जाए भरम की दूषना, काल करम की प्यास॥
भरमत भरमे जीव ये, सत सार बिसराए।
घनी सयानफ़ धार के, बाँधा जमपुर जाए॥
वेद ग्रन्थ की सार ये, और सतगुर का विचार।
निस्चे आवे नाम प्रभ, पल पल करें चितार॥

**दुर्लभ जीवन पाया, उठ के लाभ विचार।**
**'मंगत' नाम प्रभ सिमरिए, जो तीन काल सुखसार॥ 336**

विषे विकार की अगन में, दु:खिया रहे दिन रात।

सतनाम विसार के, भयो मूढ़ कमज़ात॥
सुफल जीवन संसार में, तब ही ये नर होए।
सत सिखया हिरदे बसे, सत करनी चित जोए॥
सत साधन प्रभ नाम है, पल पल लयो परोए।
दीरघ पावें शान्ती, पूर मनोरथ होए॥
जाप ताप और साधना, सब का ये ही निधान।
सत करतार ध्यायो, निस्चल करके ध्यान॥
मीठा सब संग बोलिए, परदुःख हरिए नीत।
सत सिमरन प्रभ का करे, ले जम दरवाज़ा जीत॥
सतगुन को हिरदे धरो, औगुन दियो त्याग।
मिल सतसंग साधन करो, सत विवेक अनुराग॥
सादगी मन साधन करो, और लीजो सत विचार।
सत संगत में नित रमो, मन धारो सत उपकार॥
सतगुर बचन मन में रखो, और सिमरो सत करतार।
सब जीवों से हेत राखो, लखो धरम की सार॥
पढ़ पढ़ अन्धा ना हो, उठ कुछ करनी धार।
बिन करनी मानुष ये, निसदिन ढोर गँवार॥

**सार जीवन की सुन गुनी, मन शान्त पद को पाए।**
**'मंगत' सत् तत्त सिमरना, परम जतन सुखदाए॥ 337**

ब्रह्म सत्यम् सरब आधार। करो अरदास पावें जयकार॥
पुरख अनादी नित सम परकास। सरब जीयाँ में करे निवास॥
सब साजन मिल प्रेम से गायो। आलख अपार मन माहीं ध्यायो॥
नित आदेस नित प्रीत कमाओ। रख विश्वास अभय पद पाओ॥
अजर अमर शकत निरवानी। नित आनन्द परम सुख खानी॥
जो जन प्रीत से नाम ध्याए। संकट नास परमगत पाए॥
अतुल शकत सरब का स्वामी। सरब ज्ञाता सो पारगरामी॥
साध संगत मिल शबद ध्याओ। पूर मनोरथ निज रूप समाओ॥

सरब व्यापक सरब अतीता। तीन काल सो रहे पुनीता॥
घट घट की सब बनत बनाए। अपरम अपार पुरख अगाहे॥
नेहचल बुद्धी तत्त ज्ञान विचारो। सत परकाश जोत निरधारो॥
करता हरता सरब सुखदानी। ब्रह्म सत्यम् जप पद निर्वानी॥
सूक्षम अस्थूल इक सूत परोई। सरब आधार शकत नित सोई॥
मन पुनीत मुख बोल पुनीता। अखय शबद नित जाप जगदीशा॥
करो परनाम तिस पुरख के चरना। नित रखयक प्रभ कारन करना॥
पल पल घड़ी जप नाम सुखरासी। भाओ भगत ले मिटे चौरासी॥

**पूरन पुरख को बन्दिए, नित धर निर्मल चीत।**
**'मंगत' अरदास बखानिए, रख सतगुर की परतीत॥ 338**

दूसरा अंग ''समदर्शन योग'' समाप्त हुआ

समता अपार शक्ति

ब्रह्म सत्यम् सर्वाधार

ओ३म् ब्रह्म सत्यम् निरंकार अजन्मा अद्वैत पुरखा

सर्व व्यापक कल्याण मूरत परमेश्वराय नमस्तं

# तीसरा अंग
# समता स्थिति योग

पहला प्रसंग - निर्बन्ध जीवन प्रकाश

सत तत्त की महमा

**सत तत्त सरब आधार है, नित नित करो विचार।**
**'मंगत' जीवन निर्बन्ध होवे, घट अगम जोत उजियार॥ 339**

आलख शबद तत्त रूप विचारो। मिल सतसंग सत निरना धारो॥
सरजनहार जप पुरख निर्वानी। सन्त वेद नित कथें कहानी॥
आद जुगादी सब माईं पसरया। भज करतार जल थल जिस हरया॥

पूरन रूप रह्यो सरब समाई। अखण्ड अद्वैत कला सुखदाई॥
तिसकी कथा सब संकट नासे। परम परकाश तत्त जोत परगासे॥
अचरज सम्पत सत शबद ध्याना। मिल सतगुर घट करो पहचाना॥
पाँच तत्त का अदभुत बिस्तारा। नित तिरखावे जीव अंध्यारा॥
शबद स्पर्श रस रूप बिखादा। दुर्मत विकार चित गंध परमादा॥
इन्द्री विकार ये अधिक दुःख दाई। करम भोग में जीव फँसाई॥
पारावार ना सूझे कोई। फिरे चौरासी शान्त ना होई॥
चारखानी सब जीव दुःख पाये। इच्छया भोग में नित ललचाये॥
मानुष जनम अमोलक जूनी। निर्बन्ध जीवन मिले शगूनी॥
उठ सत कथा ज्ञान विचारो। दुस्तर जग से पावें पारो॥
ये ही जनम निज रूप मिलाये। सतगुर साधु भेद बतलाये॥
पीर पैग़म्बर सिद्ध अवतारी। परगट होये मानुष देहधारी॥
सुकृत जीवन का करो विचारा। दुर्लभ जनम नहीं बारम्बारा॥
मिल सतसंग नित सुनो विवेका। सत सरूप सिमर प्रभ एका॥
घड़ी घड़ी पल जुगत विचारो। सुन सुकृत सीख परम सुखकारो॥
पूर मनोरथ करम बन्ध नासे। सत तत्त की नित करो अरदासे॥

**मोह माया के बन्ध में, सब ही जीव दुःख पाये।**
**'मंगत' सत तत्त खोजना, परम शान्त अगाहे॥ 340**

पाप पुन्न का करो विचारा। मानुष जनम का खाट ब्यौहारा॥
करम करूर मन से त्यागो। दीनदयाल की चरनी लागो॥
नित नित तिसकी कीरत गाओ। सरब दयाल भज केशवराओ॥
सकल पदारथ तिस से माँगो। सिमर गोपाल भव दुस्तर लाँगो॥
अपरम शकत सरब समराथा। भज भगवन्त सरब सुखदाता॥
बल बुद्धी अत तेज को धारी। निज मन माहीं सिमर मुरारी॥
कष्ट कठन जाये हंकारा। इक चित सिमरो सो दातारा॥
भूक प्यास राखो इक नाओं। अज अबनाशी सिमर सुखथाओं॥
सरब जीवों की बन्त बनावे। सरब न्यारा आप रहावे॥
सरब भीतर रहे आप समाई। सरब भेद जानत जानाई॥

सरब से ऊँच धाम बिराजे। कोट ब्रह्मण्ड पल माईं निवाजे॥
सरब आधार अखण्ड सुखरासी। अंतरयामी भज तत्त अबनाशी॥
सरब तेज बल को नित धारी। सरब ज्ञान का आप गुनकारी॥
एक तृन की महमा अपारी। कौन लखे गत पार मुरारी॥
सब कुछ धारे अपने माहीं। सरब से न्यारा अखण्ड सुख थाहीं॥
जीवन रूप सो आप समाई। भाँत भाँत रचना दिखलाई॥
पाँच तत्त का चक्कर चलाई। करम रहत रह्या आप समाई॥
अत वडयाई करो मन मेरे। इत उत रचना छाया प्रभ केरे॥
तिसकी ओट मन अन्तर राखो। संत जनां की बानी भाखो॥

**सत परमेश्वर ध्याय लो, जो आद अन्त सहाई।**
**'मंगत' दुर्लभ जगत में, सिमरन साहब वडयाई॥ 341**

साची कीरत प्रभ की कीजो। नित आनन्द बानी घर लीजो॥
सत बानी में सुरत लगाओ। अटल भगत गुरमुख पद पाओ॥
प्रभ की आज्ञा में सब बिस्तारी। आज्ञा बूझ परम सुखकारी॥
प्रभ की आज्ञा में आकाश रमीना। प्रभ की आज्ञा में पवन विचरीना॥
प्रभ की आज्ञा में बुद्ध परगासे। ज्ञान विज्ञान में करत निवासे॥
प्रभ की आज्ञा में अगन परगासे। आज्ञा माहीं नित नीर बिलासे॥
प्रभ की आज्ञा में धरन इस्थिरता। सकल का ठाकर आप जग करता॥
पाँच तत्त का विचरत भयो। सरब का स्वामी आपे थीयो॥
हेल मेल तत्तों का होई। अनक भाँत करम प्रगटोई॥
करम का करता मनमुखता धारी। ये अज्ञान नित करे ख़वारी॥
तत्त विकार का भुगता जन होई। राग द्वेष में जीव जलोई॥
अधिक संकट माया दुःखकारी। करम का बाँधा जून बहु धारी॥
साचा हुकम साहब विसराई। हिकमत धार परम दुःख पाई॥
सतगुर मेल सत सीख पहचानी। हुकम पहचान मिटी भ्रम खानी॥
छिन छिन तिसका हुकम पहचाने। सरब आधार एको प्रभ जाने॥
खिमा ग़रीबी मन आन समाई। दुर्मत जाल सहजें बिनसाई॥
करमफल इच्छया सकल त्यागी। प्रभ आज्ञा में दृढ़ अनुरागी॥

प्रभ आज्ञा में जीवन जीवे। गुरमुख रसना विरला जन पीवे॥
उट्ठत बैठत निश्चय इक धारी। साध शरन सब मिटी ख़वारी॥

**सकल देही के करम को, अन्तर मन से त्याग।**
**'मंगत' आज्ञा प्रभ माहीं, तीन काल उठ जाग॥ 342**

सतगुर साध जब मेल मिलाये। दुस्तर जग के पार को पाये॥
कारन सरब इक धार लखाई। सकल जगत तिसकी प्रभताई॥
सब कुछ साहब आधार पहचानी। साची सीख सुन अमरत खानी॥
सकल प्रभता का मालिक निज सोई। तत्त ज्ञान सुन भ्रमता खोई॥
चार पदारथ का सो दातारी। अपरम शकत रूप नरंकारी॥
नित साहब की शोभा गाओ। आठ पहर तिस माहीं समाओ॥
तिस का सिमरन मन धीरज देवे। सम्मत ज्ञान की सिमरत लेवे॥
करम जंजाल अधिक बिस्तारी। प्रभ की भगत नित बलिहारी॥
तीन काल भज सोही स्वामी। साचा मित्तर परम सुखधामी॥
जीवन देवे काल भ्रम टारी। सिमर सिमर नित पार मुरारी॥
साची रसना जब प्रभ की पाई। सत सन्तोख घर आन समाई॥
पाप करम से भयो निस्तारी। प्रभ की भगत चित अन्तर धारी॥
सत करम में जाग्रत पाई। पर उपकार रसना चित आई॥
बन्ध मोक्ष का भेद लखाई। सतगुर मेल सत ठाकर ध्याई॥
मन की विरत इकागर होई। सत अनुराग सतनाम परोई॥
जो बूझे तत्त रूप मुरारी। अखण्ड आनन्द सो नित वरतारी॥
सकल विकार जीव बन्ध नासी। सत सरूप जोत परगासी॥
आठ पहर तिस सेव कमाई। आज्ञा तिसकी पल पल ध्याई॥
दुर्मत अंधकार सकल भ्रम नासी। गुर परताप सब मिटी चौरासी॥

**सत ठाकर मन ध्याओ, सम्पत ये तत्त सार।**
**'मंगत' पावे परमगत, काल से भयो छुटकार॥ 343**

साचे नाम की प्रीत चित राखो। गरब त्याग अमीरस चाखो॥
सो अबनाशी नित निर्द्वन्दा। सम सरूप तेज परचण्डा॥
निर्मल सुरती प्रभ चरन ध्याओ। अखण्ड अबनाश परमपद पाओ॥

करम विकार तजो अभिमाना। निष्काम सरूप भजो निर्वाना॥
भरम ताप सब मन का जाई। दीनदयाल कीरत लयो गाई॥
अगम बानी घर परगट पाये। खेम कुशल रह्यो सदा समाये॥
अधिक विकार से जीव छुटाई। सतनाम घर उस्तत पाई॥
नाम का मानक गुरमुख सराफ़ी। परख परख गई काल की फाँसी॥
सत की ओट राख नित गुनियाँ। भरम विकार सकल है दुनिया॥
बारम्बार प्रभ चरन ध्याओ। सुफल घड़ी जग लाभ कमाओ॥
अन्तर अमरत रह्या समाई। मनमुख उठ उठ बाहर धाई॥
अनेक जनम नर विरथा गाले। अधिक संकट लागा जमकाले॥
सत संगत में प्रीत विचारो। सत सरूप मन कीरत धारो॥
जीवन अपना त्यागो प्रभ शरनी। सुफल विचार सुनो वडधरमी॥
नित परभाती प्रभ सिमर प्यारा। संध्याकाल नित जप करतारा॥
सरब शकत का धारन हारी। आद बिशम्भर भज सुखकारी॥
कर्ता हर्ता स्वामी मन ध्याओ। आज्ञा मान परम सुख पाओ॥
अधिक वडयाई राख मन माईं। तिस बिन दूजा भरम परछाईं॥
साखी पुरष सरब आधारी। सरब जीयां पर किरपाधारी॥

**नाम साहब का सिमरिये, बन्ध ख़ुलासी होए।**
**'मंगत' सिमरन सार है, पलपल लयो परोये॥ 344**

सरजनहार की सेव कमाओ। पल पल कीरत तिसकी गाओ॥
सिफ़त अनन्त नहीं पारावार। कोट ब्रह्मण्ड का कियो पसार॥
इक चित प्रीत पल इक ध्याओ। जरा मरन सब भय मिटाओ॥
शारद शुरती कतेब बखानी। ऊँच सलाहें साहब वडयानी॥
गिनती लेखा ना तिसका पाई। आलख सरूप आपार वडयाई॥
सिद्ध रिखीशर मुनी योग आचारी। पलपल सिमरें इक सुरत निहारी॥
आपे बीज भयो बरिच्छ सरूप। रवि किरन नहीं भेद का कूप॥
आपे ठाकर सकल जग धरता। सरब सरूप आपे पसरता॥
सरूप विसार के जीव दुःख पाये। संशा धार के आवे जाये॥
तत्त ज्ञान जब सोझी पाई। सरब इक दूजा बिनसाई॥

आपे ठाकर आप पुजारी। आप गुनवंता सरब आधारी॥
अपनी सोभा आप ही गाये। अपने आनन्द में मगन समाये॥
नित आदेस करो निज रूप। नित नित ध्याओ शकत अनूप॥
अपना बिकार आप निवारी। पूरे गुर की सिखया धारी॥
जाँ से आया ताँ मेल मिलाये। दुर्मत भेद भरम उड़ाये॥
सत परतीत सतनाम विचारी। अमरलोक जाये आसन धारी॥
घट भीतर मन मगन समाये। निरमल ध्यान शबद रस पाये॥
अन्तर शबद सुरती रस पीवे। काल त्याग जुगाजुग जीवे॥
सकल ताप मनमुखता नासी। गुरमुख रूप जोत परगासी॥

**पारब्रह्म प्रभ ध्यायो, नित नित करो आदेस।**
**'मंगत' सो सुख सार है, जाँ जरा मरन नहीं भेस॥ 345**

सत सरूप की उस्तत कीजो। मानुष जनम सुफल कर लीजो॥
दीन ग़रीबी नित मन राखो। भगतवत्सल साहब चित्त भाखो॥
ऊँच घराना जाँ साहब वसीना। सीस दिये तब दर्शन लीना॥
पूरन भाग कर बंदगी पाओ। अजर पुरष की टहल कमाओ॥
अखण्ड प्रीत हरचरनी राखो। शबद समागम अमरत तत्त चाखो॥
कूड़ वस्त में जिया भरमावे। विषे विकार में नित तपतावे॥
अनन्त भोग की सम्पत कीना। भोगे भोग रोग देही लीना॥
नाती संग बहु मित्तर बनाये। अन्तकाल ना कोई सहाये॥
काल सरूप को सत कर मानी। कठन कराल दुबधा चित ठानी॥
खटरस भंजन भोजन कीने। मन की खुदिया नहीं तृपतीने॥
काम क्रोध बड़वानल भारी। तीन काल जले जीव अंगारी॥
कोई ना शान्त सरूप दिखाई। चौधां लोक का फेर फिराई॥
मानुष पशु जंगम अस्थावर। सब ही भरमें देख जग बावर॥
करम कूप में नित भरमाई। गरभ धार बहुता दुःख पाई॥
मंगलकारी नारायन सरूप। करें पुकार गुनी मुनी भूप॥
नित सतसंग में प्रीत कमाओ। दृढ़ विश्वास प्रभ चरन ध्याओ॥
और उपाय ना कोई दिखलाये। चिन्ता रोग जाँ से मिट जाये॥

अधिक कलेश में कुल संसार। सुखिया सो जिस नाम आधार॥
पलक पलक कर कीरत गाओ। सरब स्वामी घर दर्शन पाओ॥

**अनन्त शकत सत रूप को, बारम्बार विचार।**
**'मंगत' सो निज रूप है, जल थल में भरतार॥ 346**

किस बिध गावाँ नाम प्रभ तोरा। मनमुख भरम अधिक चित चोरा॥
कहा नहीं मानत दूत अभिमानी। मिथ्या भरम में लीन समानी॥
अपने जीवन का घातक होई। करनी मलीन में नित नित रोई॥
देख देखे सब काल तमाशा। तो भी धारयो कूड़ भरवासा॥
देखत में सब संग त्यागे। मोह अगन तो भी चित लागे॥
सब कुछ ओड़क छोड़ के जाना। मिथ्या में तो भी ग़लताना॥
मन्द करनी से सरे ना काजा। अनक सयानफ़ कलप समाजा॥
मोह अगन नित जीव जलावे। मूल लाभ कछु नहीं पावे॥
सरब का सरजनहार स्वामी। अन्धमत वैर में ले बिसरामी॥
सबका पालनहार बिशम्भर। करे गुमान नर धारे आडम्बर॥
अन्तकाल सब राख हो जाई। तुच्छ जीवन बहु मान धराई॥
अन्त नथावां सब जग चाले। जीवत में बहु गाम सम्भाले॥
स्वारथ के बहु साथ बनाये। अन्तकाल होये कौन सहाये॥
छिन छिन रंग अनेक को देखे। अन्धमत मूढ़ा पड़े भुलेखे॥
सरब जतन भयो दुःख की खानी। कौन लखावे मारग सुखदानी॥
अन्तर बाहर नित भरमाई। भरम का बाँधा ठौर नहीं पाई॥
बख़शनहार तूँ आप स्वामी। हरयो पाप भरम दुःख जामी॥
अपना रंग आप लखाओ। अनमत राखे जतन ना भाओ॥
तेरे दर का भया भिखारी। दीजो ग़रीबी दान अपारी॥

**किरपा करी प्रभ आन के, दीनो सुफल विचार।**
**'मंगत' परसे दीनता, प्रभ सिमरन और उपकार॥ 347**

साहब साचे ने कीनी दात। हरयो हरख मान कमज़ात॥
निर्मल धीर मन तन समाई। प्रभ आज्ञा सब में वरताई॥
राग द्वेष मन अगन निवारी। साची जुगत सतनाम विचारी॥

एक नाम पल पल ध्यायो। सतगुर सीख का निरनय पायो॥
तीन ताप से भयो न्यारा। तीन गुन माया का मिटा पसारा॥
सत पद शबद अगमपुर वासी। गुर परतीत वहाँ कियो निवासी॥
करम विकार गयो अहंकारा। साचे रूप का लखा पसारा॥
गुरमत जीवन सत सम्पत पाई। पल पल ठाकर लयो मनाई॥
सत को परस पाई परतीत। सत ध्यान से पाई सुखरीत॥
नाम अमोलक हरचरन पहचानी। सहज ध्यान से मिटी भ्रम खानी॥
वेद कतेब की सार गत पाई। अबगत रूप साहब दरसाई॥
नित आनन्द पद साहब अनूपा। सिमर सिमर पायो सत रूपा॥
बारमबार करो आदेसा। सत सरूप पार जगदीशा॥
नमों नमों सतनाम अनामी। करो दंडोत अपार बिसरामी॥
अन्तर कँवल उरध परगासी। तीन भवन लख शबद अबनासी॥
लिख लिख लेख गुनी मुनी हारे। अबगत पुरष का पायो ना पारे॥
जाँ की सुरत तीन भवन समाये। काल विनाश फिर गरभ ना पाये॥
नित नित रूप समागम होई। जुग जुग तिसमें रह्यो समोई॥
आवन जावन चक्कर विनासी। साध बचन मन नित सुखरासी॥

**अन्तर शबद परगासया, निरन्तर कीना वास।**
**'मंगत' घालन पूरन भई, सतगुर सीख परगास॥ 348**

शबद सरूप ठाकुर घर पायो। नित नित तिसके चरन समायो॥
अचरज शबद परम सुख खानी। तत्त गत रूप जोत निरवानी॥
प्रेम सरूप शबद की धारा। यथागत सिमर पद निर्धारा॥
अत निर्मल तत्त करो पहचानी। करम विकार की होवे हानी॥
इच्छया ममता भोग विकारा। साचा शबद देवे निस्तारा॥
सतगुर पूरन की प्रीत कमाओ। अबगत शबद का लेख लखाओ॥
आवे जावे देह का धरमा। अबनाशी शबद सदा निहकरमा॥
देह अभिमान जीव को भारी। करम भोग आसक्ता धारी॥
आवागवन में आप को देखे। बिना ज्ञान सब पड़े भुलेखे॥
शबद अबनाशी की सब खोजन पाओ। सकल विकार का होवे अभाओ॥

एक नाम को नित नित गाओ। सरब आधार शबद लख पाओ॥
सुरती शबद मिल योग विचारो। गुर परसाद फिर जनम नहीं धारो॥
परगट शबद सब खेद मिटाई। परगट शबद परतीत चित पाई॥
परगट शबद से समदरशी होई। परगट शबद से करम बन्ध खोई॥
परगट शबद करे भव पारी। परगट शबद प्रभ आप मुरारी॥
सतगुर बचन प्रीत अधिकाई। सत सेवा मन तन रमाई॥
सब विषयों से पावे संजुगती। सत मारग में गाढ़े सुरती॥
मन पवन की समता कीजे। आलख शबद तब परगट लीजे॥
शबद समागम काल भ्रम जाई। पूरन पूर तत्त रूप समाई॥

**अन्तर शबद पहचान के, मगन भये हरि सन्त।**
**'मंगत' फूल इक फूलया, भई आठ पहर बसंत॥ 349**

शबद विवेकी जो साधू होये। ताँ के चरन वरंच उठ धोये॥
अपरम अपार शबद का थाना। गोबिन्द रूप सरब सुजाना॥
नित अरदास हरीचरन गुज़ारो। अनन भगत कर नाम पुकारो॥
ज्ञान विज्ञान मन सहज समाओ। आँकुस ज्ञान मन सीस लगाओ॥
बार बार मन दुर्मत टारो। शबद आँकुस पल पल सिर मारो॥
पूरन प्रेम हरिचरन में राखो। मिल सतसंग सत कीरत भाखो॥
छिन छिन मन में नाम कमाओ। सत सरूप तब परगट पाओ॥
अचपच हुआ ये मन निरमानी। अचरज शोभा घट करी पहचानी॥
उस्तत करे बहु रंग धारी। महमा साहब दी नहीं कथन कथारी॥
अपना स्वामी सरबगत पूरा। तिसे मनावे तजे भ्रम झूरा॥
जंगल फिरे बसे बियाबानी। अनक भाँत सोभा प्रभ गानी॥
तन मन जीवत ही तज दीना। भयो दीवाना चित नाम वसीना॥
साहब दरस की अधिक प्यासा। अन्तर ध्यान धरे निरवासा॥
काल सरूप रचना जग जाने। अकाल ध्यान में नित ग़लताने॥
एक पलक जो सोभा विसराये। तब ये मन विकार में धाए॥
परम प्रीत से साहब ध्याई। पलक एक ना विसरन पाई॥
अखण्ड जोत कोट भान परगासी। दरस पाए सब संकट नासी॥

तिस जन का जीवन बलिहारी। जिस जीवत में हरी दरस निहारी॥
तृपत भये परमपद पाया। साध संगत मिल नाम कमाया॥

**धन्न वंजारा आखिये, जिस प्रभ की पाई रास।**
**'मंगत' भयो निहाल सो, लयो मुकत घरबास॥ 350**

शबद भेद जिस जन ने जाना। अटल धाम का पंथ पहचाना॥
नित ही शबद में जीवन जीवे। अखय पुरष की रसना पीवे॥
कुफ़र मान का सीस उतारे। पल पल हुकम साहब विचारे॥
भावी साहब में जीवन धारी। तजी सयानफ़ भरम बकारी॥
स्वास स्वास करतार ध्याये। प्रेम पाय नित सोभा गाये॥
शान्त सरूप जीवन में खोजे। सतगुर पूरे की सिखया सूझे॥
अपने पाप की करे रखवारी। बाँधे मनुआँ सतनाम विचारी॥
एक टेक एको भरवासा। सारंगबानी में लयो निवासा॥
सत शरधा नित मन में धारे। साचा ठाकर नित नित चितारे॥
सतधाम सत शबद समाना। नित ही खोजे पार ठिकाना॥
मन की क़ीमत मन में पाई। मन को मन से ही समझाई॥
साची रास हरीनाम पहचानी। मन वन्जारा सत वनज कमानी॥
मन वन्जारा जगत ये हाटी। साच रास नित गुरमुख खाटी॥
भँवरा रूप नित जीवन धारी। साचे नाम सुगन्ध विचारी॥
सीप सुभाओ नित साध विचारी। पीवे नीर नहीं सागर खारी॥
विषे भोग सब खार त्यागे। नाम नीर नित पीवन लागे॥
जग आवना सुफल कर लीना। सतनाम सम्पत घर चीना॥
आनन्द सरूप को नित ही ध्याई। अन्तकाल सत रूप समाई॥
सत को पूजे नित सत परचारी। गुरमुख जीवन नित बलिहारी॥

**अबनाशी शबद पहचानया, सतगुर के उपकार।**
**'मंगत' मंगल पाया, अखण्ड नाम निरंकार॥ 351**

सत विश्वास हिरदे में राखो। सतनाम की रसना चाखो॥
बिन विश्वास नर पशु समाना। छिनभंगुर में नित ललचाना॥
सर्व धरम की सतसार पहचानो। दृढ़ विश्वास कर जप भगवानो॥

यज्ञ दान तीरथ बहु जतना। बिन विश्वास मिले नहीं रतना॥
हिकमत हुनर बहुती तदबीर। बिन विश्वास रहे दिलगीर॥
सब करनी तब पूरन होवे। दृढ़ विश्वास मन अन्तर जोवे॥
शास्त्र सिमरत का सुफल विचारी। दृढ़ विश्वास चित चरन मुरारी॥
मानुष जनम पूरन फल देवे। दृढ़ विश्वास सत करम को सेवे॥
कथनी बहुती नहीं करे कल्याना। भाँत भाँत इतिहास बखाना॥
विद्या गरब में आवे जाए। सत धरम की सार ना पाए॥
कथनी कथ कथ मरे दिन राती। रंचक रहनी नहीं मन समाती॥
थोथे पण्डत नहीं सार को जानी। विद्या मान ये गवन निशानी॥
पूरन विद्या का पूरन फल ये ही। आवे विश्वास प्रभ चरन सनेही॥
भय भरम सब संकट नासी। सत विश्वास जब चित परगासी॥
जाँ के मन आयो विश्वासा। गुरु की सीख में लयो निवासा॥
सरब जतन तब पूरन फल देवे। दृढ़ विश्वास प्रभ चरन को सेवे॥
नाना इतिहास में बुद्ध भरमाई। लख विश्वास की कथा अगाही॥
बिन विश्वास नर पशु सरूप। छल बल करे धारे संशे कूप॥
सत संगत की रसना गाओ। सत विश्वास तब हिरदे पाओ॥

**सकल जगत की सम्पता, तब ही पूरन होये।**
**'मंगत' दृढ़ विश्वास से, सत करनी चित जोये॥ 352**

होवे रंक छतर सिर धारी। जब विश्वास मन माहीं विचारी॥
खल बुद्धी नर होये बुद्धिमाना। दृढ़ विश्वास जिस रतन पहचाना॥
मोह बिकारी मुकत रस पाये। सत विश्वास जब हिरदे में आये॥
अचरज शकत साहब प्रगटाई। बीच विश्वास सब कला चलाई॥
जैसा मन आवे विश्वासा। ऐसो रूप हिरदे परगासा॥
जैसा रूप चित कलपत करी। मोहवस होये जतन तब धरी॥
अनक जतन मन अंतर राखी। भांत भांत करम को भाखी॥
इक दिन करनी पूरन फल देवे। पूर मनोरथ जीव सुख लेवे॥
सकल चक्कर विश्वास आधारी। सत विश्वास कोई गुनी विचारी॥
माया मोहवस करे विकारा। करम विलक्खन विश्वास विचारा॥

मंद निश्चय मंद ही फल देवे। आवागवन नित्यानित सेवे॥
मानुष जनम की सुन वडयाई। मंद विश्वास भरम सब जाई॥
सत विश्वास नित नित विचारे। सतपुरषों का जीवन धारे॥
अन्ध ग़ुबार से मन को ठाके। मिल सतसंग सत रसना चाखे॥
विश्वास धार साहब दरसावे। चिन्ह वरन से जो अलेप रहावे॥
सत सिखया जब दृढ़ कर मानी। अनुभव परगास साहब पहचानी॥
नित नित राखो ये ही जतना। आवे विश्वास सब मिटे कलपना॥
सब से ऊँच विश्वास ज्ञाई। अमर सरूप विश्वास से पाई॥
जुग जुग कथा बखानत होई। दृढ़ विश्वास का जीवन जोई॥

**शोभा अपरम अपार है, जिस पायो सत विश्वास।**
**'मंगत' जीवन अमर भयो, निरभय धाम निवास॥ 353**

सत विचार जो नर विचारी। पावे विश्वास परम सुखकारी॥
सतगुर पूरन जब मेल मिलाई। तिसकी सीख विश्वास दिखलाई॥
अनक मारग में जो फरावे। चतुर बुद्धी बहु लेख लखावे॥
इक दिन सत पर निश्चय पाये। सकल जतन भयो फलदाये॥
नित सतसंग में प्रीत विचारी। आवे विश्वास मन सत को धारी॥
अधिक संकट बिपता सिर आई। तब विश्वास प्रभ चरन लखाई॥
अपना जीवन जब मरन विचारी। सत विश्वास का होवे पुजारी॥
अनक शत्रु जब सिर पर धाये। सच ठाकर पर विश्वास तब पाये॥
अपनी हिकमत न चले तदबीर। आवे विश्वास एक तक़दीर॥
सतगुर साधू जब किरपा धारी। दृढ़ विश्वास भयो रूप मुरारी॥
सकल जगत दु:ख रूप जब जानी। तब विश्वास की कथा पहचानी॥
शुद्ध विचार शुद्ध करनी जब होवे। सत विश्वास तब मन माहीं परोवे॥
सब जीवों का होवे हितकारी। परदु:ख हरना नित कार विचारी॥
मान गुमाना जब मन का नासी। सत विश्वास तब कला परगासी॥
पर का दु:ख जो हिरदे विचारी। अपना सुख जो नित वरतारी॥
दीन दु:खी की सेव कमाये। सत विश्वास तब साहब का पाये॥
सब जीवों में एक दिखाई। सब का सुख उपकार कमाई॥

खेम कुशल आनन्द चित होई। सत विश्वास की कथा परोई॥
निर्मल कीरत सुफल विचारी। सत विश्वासी छतर सिर धारी॥

**घट घट व्यापक आप प्रभ, सच्चिदानन्द परगास।**
**'मंगत' तब परगट होवे, जब गुर सीख विश्वास॥ 354**

आनन्द सरूप विश्वास का होई। नित सुखरास कलपत सब खोई॥
विश्वासी के दर्शन आवे विश्वास। दुबधा जाये होवे प्रेम परगास॥
सत सिखया नित गुनी विचारो। सत विश्वास तेज को धारो॥
सतगुर साचा दृढ़ विश्वासी। सत विचार का नित भरवासी॥
इत उत जगत की रचना विचारी। सत सरूप का निरनय धारी॥
सत धरम में नित उठ चाली। रख विश्वास हरें करम की जाली॥
तिसकी संगत नित पधारो। तिसके बचन में तन मन वारो॥
दिवस रैन जतन ये ही राखो। सतपुरषों की कथनी चाखो॥
अधिक ग़ुबार में मन भरमाई। बिना विचार परम दुःख पाई॥
क्या गृहस्ती क्या त्यागी। बिना विचार अगन घर लागी॥
सत सरूप नहीं दृष्टि आवे। कूड़ चक्कर में नित भरमावे॥
इन्द्री विकार अधिक दुःखदाई। सत विश्वास कैसे नर पाई॥
एह बिध करो विचार ज्ञानी। साचे सुख की करो पहचानी॥
छिनभंगुर सुख भोग विचारी। अटल सुख सत रूप निरंकारी॥
देह के सुख देह के संग नासे। अन्तकाल चला जीव उदासे॥
अनक सम्पत भोग की कीनी। भयो निरास देही जब छीनी॥
सकले सुख दुःख रूप दिखाये। अन्तकाल जब जम दरसाये॥
अपनी सम्पत भई बेगानी। कूड़ विकार की करो पहचानी॥
ऐसे जनम अनेक विताये। भरम कलेश नहीं जीव का जाये॥

**आवन जावन जगत में, क्यों नर निहों लगाये।**
**'मंगत' सत विचार कर, एह समाँ हाथ नहीं आए॥ 355**

अजर अमर अबनाशी ध्याओ। मिल सतगुर सत प्रीत लखाओ॥
प्रभ का सिमरन आनन्द सुखरासी। काल करम जाये गवन चौरासी॥
नित ही तिसकी सिफ़त विचारो। आवे विश्वास परम सुखकारो॥

सरब को जीवन देवे जोई। तिसका नाम मन माहीं परोई॥
अद्भुत रचना जिसने रचाई। तिसका लेख लखो सुखदाई॥
ना जनम में आवे ना मरन को धारी। अनादी रूप मन लयो विचारी॥
सरब आधारी आप निर आधारो। रे मन तिसको नित्त विचारो॥
सब में शक्ती जिसकी वरताई। सिमर सिमर तिस की प्रभताई॥
जिसका हुकम सब में परवानी। तिसकी सोभा नित गाओ ज्ञानी॥
सबके आद अन्त जो रहाई। अखण्ड सरूप को लयो ध्याई॥
सब विद्या जिससे परगासी। परबोध सरूप परम सुखरासी॥
नित परगास सरब रमाई। साचा ठाकर मन लयो ध्याई॥
काल करम जाँ को नहीं विखादा। आपा पर जाँ को नहीं परमादा॥
ऊँच नीच में सम परगासी। अबगत पुरष का हो विश्वासी॥
आसा तृष्ना जाँ नहीं विकारा। आवागवन जाँ नहीं दुःख भारा॥
नित निरालम जो सरब का ज्ञाता। अन्तरयामी भज पुरख बिधाता॥
सबको सरजे सरजनहारा। सरब आनन्द का जो है भंडारा॥
देवों का देव नाथों का नाथा। भज करतार निवाओ माथा॥
कोट पिण्ड ब्रह्मण्ड को धारी। अपार शक्त जप परम सुखकारी॥

**सत सरूप नारायन को, पल पल हिये विचार।**
**'मंगत' ये ही विश्वास है, अन्त देवे जयकार॥ 356**

दुःखी दीन का जो संकट टारी। पततपावन जप पार मुरारी॥
करता हरता जो सरब आधारी। रख विश्वास नित चरन सुखकारी॥
भेद भावना जो नाहीं विचारी। अभेद रूप जो इक रस धारी॥
घट घट में जो नित परगासी। चेतन पुरष सिमर अबनाशी॥
जिसकी गत मित लखी ना जाई। अपने तेज में आप समाई॥
अपने बल में जो बलकारी। भज गोबिन्द मुकत रस धारी॥
सरब विचार जाँ से परगासी। ज्ञान विज्ञान जप जोग बिलासी॥
सो परिपूरन सरब गत पूरा। रख विश्वास हो चरनी धूड़ा॥
जिस वस्तु को नित मन ध्याए। कारन आनन्द बहु जतन कमाए॥
अखण्ड आनन्द सो आप स्वामी। जो जन बूझे पाये बिसरामी॥

निर्भय रूप त्रैकाल समाई। आवागवन नहीं काल की फाही॥
सरब काल इक रंग बिताई। अकाल पुरख जप सम्पत सुखदाई॥
ना शस्तर काटे ना अगन जलाई। ना पवन सुखावे ना जल भीजाई॥
सबसे न्यारा जो सरब समाई। पारब्रह्म जप रूप आगाही॥
सबसे नेड़े सब से दूर। जल थल मइय्यल शकत भरपूर॥
ऊँचे से ऊँचा सरब बिस्तारी। सूखम रूप रहे सबसे न्यारी॥
अगम अगोचर की कथा विचारो। रख विश्वास उतरें भव पारो॥
सरब का थाओं सरब का धामा। सरब जगत जिसमें बिसरामा॥
पूरन परकाश तेज परचण्डा। सिमर दयाल रूप अखण्डा॥

**पारब्रह्म जगदीश को, सिमरो बारमबार।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, बिनसे गवन विकार॥ 357**

सत विश्वास सुख सार निधाना। सत सरूप पररसें भगवाना॥
आनन्द जीवन ताँ का होई। दृढ़ विश्वास प्रभ नाम परोई॥
आवे जावे मन औगनकारी। पाप कूप में नित वरतारी॥
संशे अनेक तरंग उपजाये। धार चतुराई बहु करम कमाये॥
बिन विश्वास सब निहफल होई। बिपता माहीं सब अवसर खोई॥
सतपुरषों की ना कहनी मानी। सत विचार ना कियो पहचानी॥
मध को धार बहु किये विकारा। अन्तकाल सहवे दण्ड भारा॥
कूड़ भरवास में भयो ग़लताना। छल कपट में फिरे मस्ताना॥
ना सतसंग में चीत लगायो। ना सत करम का निरनय पायो॥
ना जनम मरन का लेख विचारी। पशु समान सब औध गुज़ारी॥
जीवत में ना तृप्ती पाई। जीवत में ना सेव कमाई॥
जीवत में ना जपा करतारा। चले निरास जब काल पधारा॥
अपने दुःख का ना कियो विचारा। साच सम्पत नहीं धन संचारा॥
साचा मित्तर नहीं किया पहचाना। कूड़ परिवार में नित ग़लताना॥
असत सरीर का नहीं लेख विचारा। निसदिन भरमें विच कपट विकारा॥
चंडाल सरूप सम जीवन वितायो। अन्तकाल नर बहु पछतायो॥
बाल जवानी जरा विताई। एक पलक की सार नहीं पाई॥

आसा माईं नहीं खबर नर कीनी। किस मारग को अन्त में चीनी॥
अन्धकार में जनम को धारी। अन्धकार में उठ चले बकारी॥

**पाप करम को खाटियो, रुच रुच प्रेम लगाये।**
**'मंगत' मिरतक काल में, ना कोई भयो सहाये॥ 358**

सत विचार सुनो बुद्धिमाना। दुस्तर जगत का करो पहचाना॥
सब संसार का कारन जोई। अबगत रूप का लेख लखोई॥
साच सयानफ़ सुनो घनेरी। सतपुरषों की सुन बात आख़ीरी॥
सत परमेश्वर झूट संसारा। जगत प्रीत अधिक दु:ख भारा॥
मानुष जनम की ये ही वडयाई। सत परमेश्वर का सिमरन चित पाई॥
हर का सिमरन परम सुखरासी। जनम जनम की सब तपन विनासी॥
छल बलकारी जो मन दु:खदाई। प्रभ की भगत से शांत समाई॥
काल का भय जो नित डराई। गोबिन्द सेव से सब भ्रम जाई॥
आसा तृष्ना जो अगन अपारी। सत सिमरन शीतल चित धारी॥
धन की तृष्ना जो अधिक चित लागी। राजे राने नित फिरें अभागी॥
लाख करोड़ी संचित कर डारी। पाये ना धीर ये मन दु:खकारी॥
सत सिमरन धन संचित करी। अधिक व्याध तब बिपता टरी॥
मान वड़ाई भरम चित लागी। लज्या ग़ैरत को नित साधी॥
अपनी उस्तत हर भाँत से माँगी। वैरी मित्तर की नित दूषना लागी॥
प्रभ के सिमरन से सब तृखा विनासी। दीन ग़रीबी परहेत परगासी॥
असत भोग में जो नित रमाया। भोग भोग नहीं धीर लखाया॥
जोबन नाश काया जरजर होई। भोग अगन दर पकड़ खलोई॥
सत प्रीती हरिचरन ध्याओ। उपरस शांत अमरफल पाओ॥
सकल विकार से होवे छुटकारी। दीनदयाल भज पार मुरारी॥

**बिपता रूप संसार में, केवल एक उपाए।**
**'मंगत' दृढ़ विश्वास से, लयो हर जस कीरत गाए॥ 359**

पूरन पुरख सो ही गुनवन्ता। एक टेक राखे भगवंता॥
जिस मन अन्दर विश्वास प्रभ आया। कलह कलेश सब भरम मिटाया॥
सतपुरषों की सीख मन मानो। दृढ़ विश्वास हरिचरन पहचानो॥

ये ही जतन परम सुखकारा। आवागवन से देवे निस्तारा॥
दृढ़ विश्वास जिस सेव कमाई। जुग जुग अटल तिसकी प्रभताई॥
दृढ़ निश्चय से सब दूषना टारी। परम आनन्द चित प्रीत विचारी॥
दृढ़ निश्चय से प्रभ पल दरसायो। जुगाजुगन्तर सब कठन मिटायो॥
दृढ़ निश्चय से भयो ऊँच परतापी। सत करनी को नित्यानित जापी॥
दृढ़ निश्चय से पिंगु गिरी को लाँघे। कायर पुरष असुरों को बाँधे॥
दृढ़ निश्चय से जन होये तत्तवेता। समदृष्ट सुख लखे अलेखा॥
दृढ़ निश्चय से नीच राज को पावे। सकल हकूमत विचार चित आवे॥
दृढ़ निश्चय से मन सतपद पाई। अगम सरूप प्रभ कला दिखाई॥
दृढ़ निश्चय से मन पराक्रम धारी। सब शत्रुओं पर जीत विचारी॥
दृढ़ निश्चय से अंधा वेद परगासे। अंतरदृष्ट से सब सार को भासे॥
दृढ़ निश्चय से बल तेज सब पाई। पाप कूप पर विजे लखाई॥
दृढ़ निश्चय से साधन सब पूरी। सकल यतन की पाये मज़दूरी॥
दृढ़ निश्चय से जीव भ्रम जाये। अखण्ड सरूप निज रूप लखाये॥
दृढ़ निश्चय से तत्त रूप समाई। निहकरम जोत आतम दरसाई॥
दृढ़ निश्चय सब गुनियों की रास। काल त्याग पद परसें अबनास॥

**निश्चय रूप ये धरम है, सबका जीवन सार।**
**'मंगत' निश्चय हीन जो, सो ही पशु विचार॥ 360**

सतपुरषों की संगत सुखदाई। सत करनी पर निश्चय पाई॥
अपने विगन सब दोष निवारी। सतपुरषों की सिखया धारी॥
अपने मन की तजे कुटलाई। सत विचार में प्रीत लगाई॥
झूट देही को जो सरजनहारा। अनक भांत बुद्ध दियो विचारा॥
जिस परकास से सब कला चलाई। नाम रूप गुन करम लखाई॥
जल के बिन्ध से मन्दर देह साजा। अचरज भांत कर रचा समाजा॥
लोकाँलोक पुरी देश रचाये। मेर सुमेर रवि चन्द प्रगटाये॥
चराचर भूत की उतपत कीनी। अद्भुत बिस्तार नहीं लेख लखीनी॥
चारखानी का अधिक पसारा। चार बानी का सब रचा विचारा॥
सूक्षम अस्थूल कारन सब आदी। रचना रची साहब बिस्मादी॥

चार चौधाँ का कीना बिस्तारा। तत्त छब्बीसों निरनय कर धारा॥
अगिनत कथा अलेख ज्ञान। अपरम आपार सोभा भगवान॥
गुर पीर अचारज ज्ञानी। सिद्ध रिखीशर तपी तप दानी॥
पीर पैग़म्बर नबी अवतारा। ज्ञान विज्ञान तत्त रूप विचारा॥
सकली सम्पत प्रभ आपे धारी। रख विश्वास मुनी गुनीकारी॥
चारों वेद संथा परगासे। खट दर्शन नित लेख लखासे॥
क़ुरान अंजील तौरेत बखानी। अपरम अपार शोभा पहचानी॥
सरब शक्ति सब जुगती को धारी। रख भरवास तिस शक्त अपारी॥
जिस मारग में पद परसें पूरा। सो मारग अखण्ड भगत हज़ूरा॥

**एक भरोसा राखियो, सरब शक्त निरंकार।**
**'मंगत' निश्चय सुफल ये, कटे गवन संसार॥ 361**

एह बिध रखो मन में विश्वासा। मीन को ज्यों नीर प्यासा॥
दाम कंगाल ज्यों प्रीत अधिकाई। चन्द चकोर ज्यों लेख लखाई॥
चात्रक ज्यों वरखा जल प्यासा। अनन प्रीत रख प्रभ विश्वासा॥
बिन प्रभ तेरा मित्तर ना कोई। बिन प्रभ तेरा कोई ठाम ना होई॥
बिन प्रभ तेरी नहीं बिपता जाये। बिन प्रभ अन्त ना कोई सहाये॥
बिन प्रभ तेरा जीवन नासे। मिरतक देह करे राख बिलासे॥
सुफल विचार हिरदे विचारो। आद अन्त इक साहब आधारो॥
साहब सिमरें पावें परम ख़ुशहाली। जरा मरन जाये काल की जाली॥
प्रभ सेवें तब होवें परधाना। ऊँच गुनों में जीवन बिताना॥
साची भगती की मुकती दासी। भगत परापत मिले अबनासी॥
पूरन सिखया तत्त ज्ञान उपदेशा। आवे विश्वास सरब जग ईशा॥
पूरन बल जग विजे दिखलाई। साची प्रीत इक नाम समाई॥
प्रभ विश्वासी सब तेज को धारी। राजे राने सब भये भिखारी॥
प्रभ विश्वासी अतुल बुद्ध राखे। अनुभव ज्ञान अकथ को भाखे॥
प्रभ विश्वासी रहे सबसे न्यारा। एक प्रीत चित में करतारा॥
प्रभ विश्वासी नित विजे को धारी। आहंग विकार तजे दु:खकारी॥
प्रभ विश्वासी नित एक प्यासा। सत सरूप सिमरे अबनाशा॥

प्रभ विश्वासी कोई भेख ना राखे। निरभेख सरूप आतम रस चाखे॥
प्रभ विश्वासी सत ओट पहचानी। काल त्याग शबद तत्त जानी॥

**पूरन सम्पत जगत में, प्रभ विशवासी पाये।**
**'मंगत' ताँ के दरस से, सब संकट मिट जाये॥ 362**

प्रभ विश्वासी सुख दु:ख सम जानी। एक धीरज हो प्रभ चरन समानी॥
प्रभ विश्वासी को नित परसन्ता। इच्छया रोग की कीनी हन्ता॥
प्रभ विश्वासी सरब दयालू। परदु:ख हरना मारग भालू॥
प्रभ विश्वासी प्रभ कला दिखलाये। अनहोनी गत दियो बरताये॥
प्रभ विश्वासी प्रभ प्रेम परगासी। ताँ के दरस प्रभ निश्चय भासी॥
प्रभ विश्वासी नित प्रभ को लोचे। सकल विकार अन्तर संकोचे॥
प्रभ विश्वासी मुख घनी उदासी। प्रभ दरशन की सुरता प्यासी॥
प्रभ विश्वासी प्रभ धाम को पाए। जनम मरन जाँ काल नहीं खाये॥
प्रभ विश्वासी आप को बोधे। पाप करम से मन को सोधे॥
प्रभ विश्वासी पाखण्ड को खण्डे। सतसरूप नारायण मंडे॥
प्रभ विश्वासी नित निर्मल ध्यान। आलख सरूप का कथे ज्ञान॥
प्रभ विश्वासी होये सरब ज्ञाता। पलपल सिमरे लेख बिधाता॥
प्रभ विश्वासी सब हिकमत त्यागे। आज्ञा प्रभ में नित उठ जागे॥
प्रभ विश्वासी का मनोरथ पूरा। सरब सिद्धी जपे नाम हज़ूरा॥
प्रभ विश्वासी सब विद्या का वक्ता। अद्भुत ज्ञान आतम को लखता॥
प्रभ विश्वासी भयो सरब अजीत। कामना त्यागी सब दु:ख की रीत॥
प्रभ विश्वासी का अचरज खेल। छिन गाये छिन करे कुलेल॥
प्रभ विश्वासी बंधन से मुकता। नित नित नाम साहब का भुगता॥
प्रभ विश्वासी तृपत को पाये। नित आनन्द रस राम ध्याये॥

**ऊँची करनी जगत में, चित आवे प्रभ विश्वास।**
**'मंगत' पावे परमगत, मन नित आनन्द परगास॥ 363**

कोट मद्धे कोई विरला संत। पायो विश्वास एक भगवन्त॥
निर्मल करनी पाये निर्मल विचारा। सत को लोचे बारमबारा॥
मन की व्याधि पल पल विचारी। औखद नाम निश्चय चित धारी॥

सरब पदारथ की मनसा नास। एक सरूप मन माईं प्यास॥
सब से नीचा आप विचारी। आप को जाने नित औगनहारी॥
दासाभाओ ग़रीबी पाई। एको प्रीत साहब संग लाई॥
छिन-छिन वाट साहब की देखे। मरन क़बूल नहीं जीवन पेखे॥
तन मन से सच प्रीत कमाई। इत उत देखे साहब वडयाई॥
देह मिथ्या तीन काल पहचानी। सच कला एक साहब जानी॥
देह के विकार से निर्मल होये। कँवल अलेप ज्यों नीर समोये॥
मुरग़ाबी ज्यों नीर नहीं लेपा। प्रभ विश्वासी रहे अलेपा॥
विगन दोष से ज्यों आकाश न्यारा। प्रभ विश्वासी ऐसो जीवन धारा॥
नित नित साहब में मगन समाये। नित नित तिसकी कीरत गाये॥
सब जीवों में प्रभ दिखलाई। प्रकिरत दोख सकला बिनसाई॥
निश्चल चित अरदास गुज़ारी। दीनदयाल की सिफ़त विचारी॥
भरम करम सब दुबधा त्यागी। निहचल ध्यान प्रीत चित लागी॥
आवागवन मन गयो संदेशा। पायो विश्वास पुरख जगदीशा॥
तू तू करके नित पुकारे। आपा त्याग सत रूप विचारे॥
साचा जीवन सत करनी से पायो। दृढ़ विश्वास प्रभ एक ध्यायो॥

**साधन सब पूरी भई, चित चरन लियो विश्वास।**
**'मंगत' पायो अमर पद, सतगत रूप अबनाश॥ 364**

## सत साधन

सत साधन पर निश्चय धारो। साधन से मिले सुखधाम न्यारो॥
साधन करे सो साधू होई। वासना विकार को चित से खोई॥
साधन से सिद्धता फल पावे। सत साधन फल अमृत खावे॥
साधन से ही जीवन फल पावे। ज्ञान विज्ञान सुख सहज समावे॥
साधन से होवे कठन सुखाला। साधन से पद परसें दयाला॥
साधन ही बल तेज अपारी। सतगुर मिल जो सिखया धारी॥
सब से उत्तम साधन सार। परमारथ तत्त आवे विचार॥
सकल कुरीती से जीब बन्ध छूटे। सत साधन रसना चित लूटे॥
साधन से जरा मरन विनासे। साधन से तत्त शान्त परगासे॥
साधन से गुपत प्रगटावे। सकल व्याध पर जीत लखावे॥

साधन से ही गुरमुख तत्त बूझे। मनमुख विकार भरम नहीं सूझे॥
साधन में गुरु पीर अवतारी। साधन में ब्रह्मा बिषन अपारी॥
साधन में सनकादिक परबीना। बालक सरूप में अनुभव चीना॥
साधन में मुनी ज्ञानी तपीशर। साधन में जपी तपी रिखीशर॥
साधन में विचरे सब संसार। सत तत्त साधे पावे जयकार॥
साधन सुभाओ जीव का होई। तत्त साधे तब दुर्मत खोई॥
भरम ग़ुबार जीव का जाये। सत साधन में जो नित समाये॥
तिसको सिखया पूरन फल देवे। यथारथ रूप जो साधन लेवे॥
खल बुद्धी जड़ता जिस धारी। सत साधन से पाये छुटकारी॥

**सतगुर पूरन भेंटिये, पाइये साची जुगत।**
**'मंगत' साधे प्रीत से, पद परसे जीवन मुकत॥ 365**

साधन से पारस पद परसे। साधन करे नहीं काल नर गरसे॥
साधनहीन जो नर होई। तीन लोक में मिले ना ढोई॥
साधन से ऊँच धाम को जावे। आवागवन सब चक्कर मिटावे॥
साधन से चित अगन विनासे। सच्चिदानन्द बानी परगासे॥
साधन से सब ताप निवारे। खेम कुशल पद परस अपारे॥
साधन से मन शांत समाई। साधन की अतुल वडयाई॥
सो कुलवंता कुल परगासी। सत साधन मन माहीं उपासी॥
साधन से असाध को साधे। साधनहीना फिरे परमादे॥
साधन से बुद्ध होवे सुतन्तर। साधन से मन मिटे भयंकर॥
साधन से सतकरम परगासे। इन्द्री विकार सब दूषना नासे॥
साधन से देह चेतन होई। आलस निंद्रा सकलो तम खोई॥
साधन से मनुआँ घर आवे। सच ठाकर का दर्शन पावे॥
साधन से नर निर्बन्ध होवे। काल कलपना सकली खोवे॥
मानुष जनम सो ही परवानी। सत साधन की कथे कहानी॥
काल भय से जीव छुटाई। सत साधन जो हिरदे आई॥
क्रोध अगन शांत हो जाई। सत साधन नीर चित पाई॥
साधन से मिरतक से छूटे। सतपद ज्ञान अन्तर में लूटे॥

वेद पढ़े का फल ये मीता। सत साधन आवे परतीता॥
साध मिले का फल ये ही अपार। सत साधन आवे विचार॥

**सरब जतन इस जीव के, पूरन फल तब देत।**
**'मंगत' साधन सार जो, मिल गुर सिखया लेत॥ 366**

सत साधन ही परमगत देवे। मंद साधन दुःख रूप लखेवे॥
पूरन सिखया साधन की पाई। निर्मल यतन से सतधाम को जाई॥
साधन ही नर तेज अपारी। तीन लोक कम्पत कम्पारी॥
साधन ही से नर सत भरवासा। साधन करे तब मिटे प्यासा॥
मन विकारी विकार में धाये। इन्द्री भोग में नित गरसाये॥
भांत भांत विकार को लोचे। बिन साधन नहीं आप संकोचे॥
अपने जीवन को मिरतक नित कीजे। साधन हीन विकार को सीजे॥
अती बलकार दूत दुःखकारी। पल पल तिसकी कर ख़बर गुज़ारी॥
जब तक मनुआँ नहीं सत को सोधे। अगन तृष्ना कभू नहीं बूझे॥
भोग भोग कर नित दुःख पाई। कलह कलेश चित माहीं समाई॥
काम क्रोध मोह लोभ अहंकारा। बड़वानल वाँग करे उसारा॥
जनम अनेक तिस अगन में धारी। जल जल पड़े जीव अंधकारी॥
अतिअत संकट में जीव नित घेरा। आवे जावे चौरासी फेरा॥
और उपाय जग में ना कोई। जाँ से ये मन सीतल होई॥
सत साधन इक सार है जुगती। जो जो साधे पावे मुकती॥
मिथ्या विकार से मन को ठाके। सत साधन को अन्तर राखे॥
सत सरूप पर निश्चय धारी। अनुराग अगन मन माहीं विचारी॥
परम आनन्द केवल प्रभ एका। मिल सतसंग नित सुनो विवेका॥
पाप करम की करे पहचाना। सत करम साधन चित ठाना॥

**करम जाल अपार है, छूट सके न कोए।**
**'मंगत' साधे जुगत से, तब बंधन सकले खोए॥ 367**

करमभोग में रखे मरयादा। पाप करम हरे नित परमादा॥
अपने पाप की करे नित हानी। सत करनी मन माहीं पछानी॥
जीवन सादा मुख साधन सार। सादा जीवन सब हरे विकार॥

सादा जीवन देव सरूप। वैश्या साँग अगन का कूप॥
भूल कर ना मन लियो अय्याशी। यही कलपना काल की फाँसी॥
पहनावा सादा नित राखे। जाँ से गरब देही नहीं भाखे॥
सादा पहनावा गुन रखे अपारा। तुच्छ सम्पत में चले गुज़ारा॥
सब जीवों से प्रीत लखाई। सादा रहनी जब चित में आई॥
ग़रब ग़रूर देही सब नासे। सादा रहनी जब मन परगासे॥
दु:ख सरूप सुख रूप हो जाये। सत सादगी जब हिरदे आये॥
नित सुतन्तर नहीं तमोगुन व्यापे। ज़ोर ज़ुलम नहीं पाप को जापे॥
सादा रहनी परहित उपजावे। साहब शोभा हिरदे में आवे॥
सादा रहनी चित पर उपकारी। पाप करम से पावे छुटकारी॥
सादा रहनी मन देवे खुशहाली। सब जीवों से मिले साँझ निहाली॥
सादा रहनी प्रभ याद करावे। भाओ भगत अन्तर में पावे॥
सादा रहनी विकार मल धोवे। सत विचार हिरदे में जोवे॥
सादा रहनी प्रेम सरूप। बादमुबाद हरे बिख का कूप॥
सादा रहनी परताप बढ़ावे। परदु:ख हरना चित कारज आवे॥
सादा रहनी प्रभ धाम पहुंचाये। विच ग़रीबी सत सम्पत पाये॥

**सादा जीवन जिसका, तिसका मन परसन्न।**
**'मंगत' साधन जो करे, पाए अमोलक धन्न॥ 368**

सादा रहनी देवगत देवे। भाओ प्रीत जो हिरदे में सेवे॥
मन में सादगी जब आन समाई। तब ही सादा जीवन पाई॥
छिनभंगुर जब देही पहचानी। सत करनी चित आन समानी॥
काल सरूप जब कियो विचारा। सत धरम का मारग तब धारा॥
सादा रहनी से देही अरोग। नित नित पावे धरम संजोग॥
सादा रहनी इस भाँत रहावे। जम का कंकर तब नहीं पावे॥
आहार व्यौहार को सादा कीजे। सत विचार पल पल लीजे॥
मदरा मांस और नशा विकारा। तिनको त्यागे करे धरम विचारा॥
जैसा आहार मन रूप सो धारी। कभु ना कीजो नर आहार विकारी॥
आहार पवित्र जो जन कीजे। पवित्र विचार सो ही जन लीजे॥

जैसा आहार से रक्त उपजाये। ऐसी कामना मन में उठ धाये॥
जैसी कामना ऐसे करम को कीजे। पाप भोग नित दुःख लखीजे॥
कुल जाती का परकाश जो माँगे। आहार पवित्र संजम चित बाँधे॥
दीरघ आयु अरोग को देवे। आहार पवित्र जो नित सेवे॥
नित का करम ये करो सुधार। गुन अनेक तिसमें विचार॥
जैसा आहार वीरज होए ऐसा। तिस अनुकूल चले बंस ही तैसा॥
मलीन करम अशुद्ध आहारी। तीन लोक में तिन होये ख़्वारी॥
प्रथमे साधन ये ही विचार। अनयुक्त पदारथ नहीं कीजो आहार॥
अनक पदारथ हैं जग माहीं। भ्रष्ट आहार नर दुष्ट कमाईं॥

**जीभा की रसना माहीं, मत होवो ग़लतान।**
**'मंगत' कूंडी नरक की, जीव करे हैरान॥ 369**

## पवित्र आहार

आहार पवित्तर देव बुद्ध परगासे। देव करम में कीजे बासे॥
आहार पवित्तर सब नीती परगासे। राज सुराज की सतगत भासे॥
आहार पवित्तर अपरम गुन देवे। पवित्र आहारी प्रभ चरन को सेवे॥
आहार मलीन नित करे अशांत। संशे उपजें नाना भ्रान्त॥
सतपुरषों की कहनी ये सार। आहार मलीन देवे विकार॥
भंग तम्बाकू चरस को पीवे। बुद्ध मलीन नहीं धरम को लीवे॥
मदरा माँस का जो नित आहारी। बुद्ध चण्डाल तिसमें विस्तारी॥
ग़ज़ब ग़रूर देही बहु राखे। अत ही पाप करम को भाखे॥
ना चित शांत दया नहीं बोधे। क़हर को धार नरक दर सूझे॥
जो जन खाना विचार से खाये। तीखण सुरती नहीं रोग को पाये॥
देह का पिंजर आहार परमानी। जैसा आहार तेही देह प्रगटानी॥
द्रभ को धार ना अनमत होई। आहार भ्रष्ट सकली मत खोई॥
जो कोई अपना जीवन सुधारे। शुद्ध आहार मन माहीं विचारे॥
जीभा रसना ना नर तृपताई। भाँतक भाँत जो रस को खाई॥
सब से ऊँच नीती परमान। शुद्ध आहारी सब में परधान॥
पाप पुन्न का आवे विचार। निर्मल रीती से कीजे आहार॥
प्रभ ने कला ये अजब बनाई। शुद्ध तेल से नित संचाई॥

सत पुरषारथ रहनी सत पावे। सूक्षम आहार शुद्ध रूप का खावे॥
मन की अगनी को नित बुझाये। जल विचार तिस ऊपर पाये॥

**खट्टा मीठा तीखना, चटपटा नित खाए।**
**'मंगत' दीरघ वासना, मन को नित भरमाए॥ 370**

सत साधन ब्यौहार में धार। उज्जल नीती का आवे विचार॥
अपने हक़ पर रहे संतोखी। पावे शांत सरब तिरलोकी॥
ऐसा ब्यौहार कभू ना कीजो। दूजे कष्ट जिस माहीं लखीजो॥
हक़ परमान नफ़ा सुखदाई। परहक़ अगन बड़ी दुःखदाई॥
मान धार नहीं करे विचारा। परहक़ सेव पायें नरक द्वारा॥
दीन दुःखी क्या नर द्रभ धारी। एक दृष्ट से करो ब्यौहारी॥
भूल करके ना दूजा हक़ खाओ। दीरघ पाप ये ही दुःखदाओ॥
ब्यौहार पवित्र में लछमी जो पाये। अनखुट होवे नहीं घाट को जाये॥
अपने मन में नित शांत समाये। परहक़ में जो चीत ना लाये॥
शुद्ध ब्यौहार ये देव खज़ाना। रिद्ध सिद्ध तिसमें रहे परधाना॥
शुद्ध ब्यौहारी शोभा आपार। साचा हुकम माना करतार॥
बाल न बीका तिसका होये। सत ब्यौहार जो मन में जोये॥
सत ब्यौहार का धन सुखदाई। साचे धरम में सो वरताई॥
शुद्ध ब्यौहारी त्रैलोक को जीते। तिसका पदारथ करे शुद्ध नीते॥
सत ब्यौहारी मन परसन्ता। यथा परापत आज्ञा भगवन्ता॥
साधू संत गुरु पीर आचारी। तिस दाते दर भये भिखारी॥
सत धरम से द्रब्य कमाये। साचे करम में नित वरताये॥
प्रजापत रूप सो शुद्ध ब्यौहारी। तिसका दर्शन करे आप मुरारी॥
सो गृहस्ती बैकुण्ठ को जाये। उज्जल करम मन माहीं कमाये॥

**शुद्ध ब्यौहारी पुरष जो, अघट्ट लछमी पाये।**
**'मंगत' सत ब्यौहार में, लछमी वास कराये॥ 371**

ब्यौहार सरूप ये मन का होई। जैसा ब्यौहार ऐसी पत जोई॥
शुद्ध ब्यौहारी मन सदा अचिन्त। सत संतोख हिरदे जपन्त॥
शुद्ध ब्यौहारी का देव परिवार। प्रेम सरूप का वाँ परचार॥

शुद्ध ब्यौहारी चित धरम में धारे। पलपल आज्ञा साहब विचारे॥
शुद्ध ब्यौहारी नहीं करे गुमाना। सकली सम्पत पेखे भगवाना॥
शुद्ध ब्यौहारी का चलन सुखदाई। नित नित प्रभता साहब की गाई॥
शुद्ध ब्यौहारी द्रब्य धरम के ताहीं। अशुद्ध ब्यौहारी निज भोग कमाईं॥
शुद्ध ब्यौहारी मन शुद्ध आचार। भाओ भगत हिरदे विचार॥
शुद्ध ब्यौहारी दूजे सुख देवे। साचा साहब तब हरखीवे॥
शुद्ध ब्यौहारी की साहब रास। आज्ञा साहब में करे बिलास॥
शुद्ध ब्यौहारी के मन संकोच। अर्थ यथारथ ख़र्च को लोच॥
शुद्ध ब्यौहारी नित पाप त्यागे। मरन विचार सत धरम में जागे॥
शुद्ध ब्यौहारी उत्तम गत पावे। जुग जुग जीवन निर्मल ध्यावे॥
शुद्ध ब्यौहारी शुद्ध नीयत राखे। सकली सम्पत तिसका दर भाखे॥
देव परिवार पावे शुद्ध आचारी। जो जन होवे सत ब्यौहारी॥
सब मानुषों का ये ही अधिकार। पलपल कीजो शुद्ध ब्यौहार॥
साची करनी ये ही परधान। परहक़ देखे ज़हर समान॥
मन मूरख के नहीं दाओ विचारे। सँभल सँभल कर करे ब्यौहारे॥
परम साधन नित ही साधो। निर्मल करनी अन्तर अराधो॥

**सत विचार तब जानिये, जब करनी निर्मल पाये।**
**'मंगत' साधन सार है, मिटे भरम परछाये॥ 372**

## अशुद्ध ब्यौहार

सो गृहस्ती मुक्त सरूप। शुद्ध ब्यौहार लखे जुगत अनूप॥
लेन देन में शुद्ध नीयत राखे। परहक़ कौड़ी नहीं चित चाखे॥
करम बंधन ही दु:ख ये भारा। पाप करम उपजावे ग़ुबारा॥
अशुद्ध ब्यौहार बुद्धी को नासे। विचार रहित दुर्मत परगासे॥
अशुद्ध ब्यौहार मोह अगन बढ़ावे। लाख करोड़ी में नहीं तृपतावे॥
अशुद्ध ब्यौहार अधिक भय देवे। चोर चतर का संकट लेवे॥
अशुद्ध ब्यौहारी को लज्जित नाहीं। निरलज होके पाप कमाईं॥
अशुद्ध ब्यौहारी का कपटी परिवार। अन्तरगत सब करें बकार॥
लज्या शरम अदब ना कोई। एक एक पर शत्रू होई॥
अशुद्ध ब्यौहारी का चित बिकराल। कभूँ ना सिमरे दीनदयाल॥

अशुद्ध ब्यौहारी अन्तर बदनीत। अपने सुख की पाले प्रीत॥
अशुद्ध ब्यौहारी का कपट विचार। परनिन्दा परहान को धार॥
अशुद्ध ब्यौहारी चित मित्तर ना कोई। वैर बिकार की माल परोई॥
अशुद्ध ब्यौहारी का गुरु पीर ना कोई। धर अभिमान धरम पत खोई॥
अशुद्ध ब्यौहारी भये सब का दोखी। निसदिन चाल चले अनोखी॥
अशुद्ध ब्यौहारी चित सदा बकार। पलपल जीवन में दुःख धार॥
नरक सरूप तिस जीवन होई। एक पलक में सब सम्पत खोई॥
तिसका जीवन अती दुःखदाई। पाप की सम्पत पल नाश हो जाई॥
अपनी करनी पर अन्त को रोवे। जीवत में जो पाप को जोवे॥

**पाप करम जमरूप हैं, अन्त देवें दुःख भारी।**
**'मंगत' ऐसा करम ना कीजियो, जो अन्त होवे दुःखकारी॥ 373**

## सत सेवा

सत सेवा को हिरदे धार। सत साधन ये परम गुन सार॥
सत सेवा सब बंधन नासे। परम धरम में कोई गुनी निवासे॥
नित उठ राखो ये ही जतना। पाप करम सब मिटे कलपना॥
अपना पाप तब ही नर जाये। सेवा धरम जो सार को पाये॥
निष्काम सेवा सत सेवा होई। कल्यान सरूप ये धरम पिरोई॥
सेवादार मन सदा निहाल। पाप कूप काटे जंजाल॥
अर्थ छोड़ जो सेवा धारी। तिस जन को आये मिले मुरारी॥
सेवा कर नहीं पाये अभिमाना। साचा मारग धरम पहचाना॥
सेवा से शुद्ध नीयत होवे। सत परतीत धरम ये जोवे॥
सेवा से मन परहक़ छोड़े। गरब शैतान की गरदन तोड़े॥
सेवा करे से बुद्धि परगासे। सत सरूप अन्तर में भासे॥
सेवा करे मन होये निर्माना। साचा ठाकर तिस कियो पहचाना॥
सेवा करे से मन सुख छोड़े। निज सुख आतम हिरदे जोड़े॥
सेवा करे पावे गत देवा। धरम सरूप केवल ये सेवा॥
जिस मन को कुछ सोझी आई। पर उपकार जीवन तब पाई॥
मन की अगन शांत ना होई। पर की सेव ना हिरदे जोई॥
सब वस्तू संसार की जोई। पर-अर्थ जीवन सब का होई॥

बरिच्छ सरूप पर-के ताँईं। फल छाया को नित वरताईं॥
जल का रूप दूजे सुख धरे। आपा मिटा सरजीवत करे॥

**अम्बर वायू अगनी, नित ही सेवा धार।**
**'मंगत' मूढ़ा मानुष, नहीं सूझे कुछ सार॥ 374**

सेवा सरूप आप प्रभ धारी। सरब न्यारा सरब वरतारी॥
सत सिखया ये ऊँच परवानी। सेवा धरम हिरदे पहचानी॥
सेवा माहीं सब रिद्ध सिद्ध मीता। दृढ़ निश्चय राखो नित चीता॥
सेवा से ही अवतार गत पावे। सेवा से ही जगतगुरु कहलावे॥
सेवा से ही मिले पैग़म्बरी। सेवा से ही पाये ज़ात अम्बरी॥
सेवा से ही अचारज कहलाये। सेवा से ही सिद्ध गत को पाए॥
सेवा से मन कपट को छोड़े। सेवा से ही सतधाम को फोड़े॥
सेवा धरम साचा निशान। जो जो सेवे होवे परधान॥
सेवा कारन प्रभ खेल रचाई। सेवा सरूप देखे प्रभताई॥
सेवा धरम मुकती को देवे। परम प्रीत जो गुरमुख सेवे॥
नदियाँ नीर सेवा नित धारी। शीतल करें हरें तपन अपारी॥
अन्न के बीज नित ही सुख देवें। आप मिटाये औराँ जीवन सेवें॥
खोलो नैन तूँ गुरमुख गुनिया। सेवा धरम में विचरे दुनिया॥
मानुष जीवन धार गम्भीरा। सेवा विसार करें तक़सीरा॥
सब से नीच तेरी करतूत। सेवा धरम नहीं धारयो अनूप॥
सब से नीच गती को जावें। सेवा विसार परम दुःख पावें॥
आठ पहर चित जलन रहाई। आपामती धारी दुःखदाई॥
अपने आप का बनियो चोर। आवे जावे चौरासी घोर॥
सकल गुमान भयो ख़ाक की ढेरी। काल ग्रासयो जब घड़ी आख़ीरी॥

**जीवन का ये लाभ है, जो परसेवा चित आये।**
**'मंगत' जाये सब दूषना, अन्त मंगल को पाये॥ 375**

सेवा धरम मुकत द्वार। जो जन धारे पावे छुटकार॥
वेद ग्रन्थ पुस्तक अनेक। सेवा धरम पुकारें लेख॥
सेवा धरम करे उज्जल नीती। आपामत जाये पलीती॥

सेवा धरम से जाये हंकारा। परहित जीवन परसे सारा॥
सेवा धरम से मोह तम नासे। कारन करता अन्तर चित भासे॥
सेवा धरम से कामना जाये। तुच्छ जीवन से वैराग को पाये॥
सेवा धरम से वैर हटाये। सम सरूप सरब दिखलाये॥
सेवा धरम हरे हंग विकार। पल पल सेवे आज्ञा करतार॥
सेवा धरम मन भूख मिटाये। ज्यों ज्यों पर-की सेव कमाये॥
सेवा धरम ग़रीबी देवे। भाओ भगत हरिचरन को सेवे॥
सेवा धरम देवे परताप। राजे राने सीस निवात॥
साहब शक्त का ये चमकार। तीन लोक देवे जयकार॥
नित नित हिरदे करो विचार। सेवा साधन धरम अपार॥
सो ही गुरमुख तत्त का वेता। इक चित प्रीत सेव परतीता॥
सोही पण्डत सरब आधारी। सत सेवा जो हिये विचारी॥
सो ही गुरु सत मारग भेदी। सत सेवा से दुर्मत छेदी॥
सो ही तपीशर तप में पूरा। सेव कमाये होए चरनी धूड़ा॥
सो ही ज्ञानी अगम गत वादी। पर उपकार जो अन्तर साधी॥
सो ही धनी परम सुख पाई। सत सेवा जो हिये कमाई॥

**और जतन को छाड के, सेवा मन में साध।**
**'मंगत' निश्चे तर जाये, मिट जाये भरम अगाध॥ 376**

सो ही गुनी परताप को पावे। निज गुन अपना नित वरतावे॥
सो बैरागी बैराग को पावे। पर-उपकार जतन चित लावे॥
मन का दोष नहीं सहजें जाए। छिन छिन धोवे पर-सेव कमाए॥
सो जोगिन्दर जोग को परसे। अधिक प्रेम सब जीवों में दरसे॥
सो ही भूप नित रहे खुशहाल। सरब जीवों पर होए किरपाल॥
जग को सेवक जो जन होई। सच्च बंदगी पावे सोई॥
करम बंधन जग करड़ा सार। बंधन नासे जब करें उपकार॥
काल का भय परम दुःखदाई। सत सेवा सब भरम मटाई॥
मन की तृखा शांत तब होई। पर-उपकार जब माल परोई॥
आवागवन संकट बहु भारी। साधन सेवा सब हरे ख़वारी॥

भोग की अगनी नित परचण्ड होवे। परहित जीवन सब ताप को खोवे॥
माल मुलक पाये धीर ना आवे। सम्पत सेवा जीवन तृपतावे॥
लाख करोड़ी चित धन अभलाषा। पर-उपकारी का बंधन सब नाशा॥
ज्यों सेवे परसुख की रीता। प्रेम पाये मन होये पुनीता॥
सुकृत जीवन सो ही जन धारी। सत सेवा जिस कथा विचारी॥
अमरत पान सो ही जन कीजे। निज सुख को जो नित वरतीजे॥
भरम त्याग उठ समाँ विचार। चाम देही होवे नर छार॥
जीवन में ये ही सार कमाओ। सेवा में तिसको वरताओ॥
आलख पुरख का हुकम पहचान। नित सत सेवा हिरदे आन॥

**साखी सत करतार की, सो ही परसे मीत।**
**'मंगत' भाओ प्रेम से, जो सेवा धारे चीत॥ 377**

जो जो जग आये अवतारी। तिन का जीवन पर-उपकारी॥
राम कथा क्या कृष्न का खेला। पर-उपकार का रचियो मेला॥
हरीचन्द और मोरधज भूपा। पर-उपकार का शुद्ध सरूपा॥
ब्रह्मा विषन महेश अगाधी। पर-उपकार को नित नित साधी॥
बावन परशु नरसिंघ आये। पर-उपकार ताईं सीस धराये॥
कपिल कनाद गौतम और व्यास। पर-उपकार में करें निवास॥
गौतम बुद्ध ऋखब महावीरा। पर-उपकारी धर आये सरीरा॥
रामानन्द शंकर आचारी। सीस दियो नित पर-उपकारी॥
दादू कबीर नानक तपधारी। पर-उपकार ताईं चोला धारी॥
ईसा मूसा दाऊद और हातम। इब्राहीम मुहम्मद सुखदातम॥
फ़ैसाग़ौरस और सुकरात। ज़रोदश्त उपकार कमात॥
अनगिनत ना गिनती करूँ शुमार। साध का चोला करे उपकार॥
साची सिफ़त साचा निशान। पर-उपकार साचा फ़रमान॥
बन्ध ख़ुलासी सो ही जन पाये। पर-उपकार में चीत लगाये॥
सतपुरषों का जीवन सार। रुच रुच मन में धरें उपकार॥
परदुःख हरना हिरदा निर्मल कीजे। सत परतीत जो अन्तर सीजे॥
परम धरम शकत आपार। जो जन परसें तिस तों बलिहार॥

वडी क़ुरबानी साचा ये त्याग। हिरदे आवे सेवा अनुराग॥
अपना सीस निवारे जोये। साचा सेवक जग में सोये॥

**मन अपने को सोधिये, विच मारग पर-उपकार।**
**'मंगत' ये ही बन्दगी, भव से करे निस्तार॥ 378**

अपना सुख जो मन से त्यागे। सत सेवा में सो ही जन लागे॥
अपना मरन जीवन में देखे। सत सेवा के लेख को लेखे॥
अपना जीवन जो निसतारे। सत सेवा का करे ब्यौहारे॥
काल भय जिस जन चित आयो। सत सेवा का महरम पायो॥
साचा सिमरन जो प्रभ का पाई। पर-उपकार रतन को ध्याई॥
बिनसनहार जो देखे संसार। तिस चित आवे पर-उपकार॥
साचा प्रेम जाँ होवे परगास। सत सेवा में करे निवास॥
जाती देश और देह अहंकार। तिन को त्यागे पावे उपकार॥
सत परमेश्वर जो पहचानी। पर-उपकार की सिफ़त बखानी॥
मान मध जो हिरदे राखे। सेवा धरम की सार नहीं चाखे॥
कामना सहित जो सेवा होई। तिसमें धरम की सार नहीं कोई॥
कामना धार सेवे सब कोई। बुद्ध मलीन नहीं निर्मल होई॥
कामना तयाग जो फ़रज़ पहचानी। सो जन दरगे होये परवानी॥
आपा पर का दोष त्यागी। मान अपमान नहीं हिरदे जागी॥
एक दृष्ट होये सेवा धारे। सरब जीवों से हेत विचारे॥
मित्तर शत्रु का भाओ त्यागी। सरब सुखदाई सिमरत जागी॥
सबमें प्रीती चित से राखे। पर-उपकार की सार को चाखे॥
नित आनन्द जिस मन वरताई। पर-उपकार रतन सो पाई॥
तन मन धन तीनों को त्यागे। गुरमुख विरला कोटाँ में जागे॥

**अपना सीस त्यागिये, और जीवन के ताईं।**
**'मंगत' सेवा धरम ये, साचे हरिजन पाईं॥ 379**

सतपुरषों का जीवन सार। पर का हेत करें विचार॥
छिनभंगुर से रहें उदास। सत सरूप में दृढ़ विश्वास॥
चला चली सब खेल को देखें। सत करनी अन्तर में पेखें॥

ना कोई मित्तर संग सुहेला। अन्त को चले ये जीव अकेला॥
अपनी वस्त ना होवे परतीत। प्रानधारा की ये सब प्रीत॥
माल मुलक और हस्ती घोड़। इक दिन चलना सब को छोड़॥
जोबनवन्ता जो देह मँजार। अन्त की वारी होवे सब छार॥
मिथ्या भोग जो मन भरमाई। होवे वंजोग तब परम दुःख पाई॥
मान मध जो अधिक ग़ुबार। राजा रंक होवे सब छार॥
अन्त की बारी भूमी अस्थान। क्या रंक क्या राज राजान॥
सब से वैर जो अन्तर धारी। किस भरोसा पर धरें बिकारी॥
आलस निन्द्रा मध में ग़लतान। पल पल बिनसे देही पहचान॥
पाप करनी क्यों मन में धार। जो बीजें सो पावें सार॥
कूड़ विकार में अधिक परीत। अन्तकाल सब दुःख की रीत॥
सुन्दर देही अन्त त्यागे। किस मारग को जायें अभागे॥
सरब जतन होये बेकार। काल पुरख जब कियो पुकार॥
सकली आस भई निरास। निकले प्रान कियो भूम निवास॥
घाल मुशक्कत सत लेख विचार। मानुष जनम जग दुर्लभ सार॥
आवे जावे ये सब संसार। इस्थिर नाम साहब विचार॥

**पलक घड़ी का खेल है, ये जग जीवन सार।**
**'मंगत' सत कमाये लो, जब लग प्रान की धार॥ 380**

एक ही साँस का सब ही खेला। मूढ़मती क्यों धार झमेला॥
सत करनी मन माहीं विचार। पल पल छीजे ये धुँआ अंबार॥
काल गरासे तब भयो निमाना। करे पछताप मूढ़ अन्जाना॥
वक़्त गँवाये कुछ बन ना आई। भरम ग़ुबार में औध गँवाई॥
जीवन में ही नर कुछ घाल। महा उध्यान मारग करें भाल॥
सकल सयानफ़ तेरी दुःख रीत। कूड़ माया संग धरी परीत॥
साचा मारग मन माहीं विचार। सतपुरषों ने करी पुकार॥
करम सरूप ये जग का बिन्द। करमगती देवे नित पिण्ड॥
करम प्यासा जीव को भारी। करम का बाँधा जम करे ख़वारी॥
एक पलक नहीं करम से छूटे। करम फल भोग अन्तर रस लूटे॥

अचरज लीला ये प्रभ का खेल। सत विचार बिन दुःख का जेल॥
मानुष जनम प्रभ भगत के ताईं। प्रभ की भगत से मुकत समाईं॥
यथारथ ज्ञान ये नित विचार। करनी बाँधा फिरे संसार॥
जैसी करनी जो नर धारी। तिस अनुकूल सुख दुःख विचारी॥
निर्मल करनी ये जीवन सार। करनी देवे मुकत द्वार॥
पर-उपकार सत करनी मूल। नित नित सोधो ये अमरत फूल॥
जीवन शान्त परापत होई। अन्तकाल परमगत लोई॥
करो पुरषारथ ये सुखदाई। पर की सेव नित नित कमाई॥
साचा नाम होवे परगासो। हंग विकार जब चित का नासो॥

**साबन सेवा लायके, दुर्मत मैल बहाये।**
**'मंगत' भयो कदारथ, दुर्लभ सो जन आये॥ 381**

## नीच की संगत

संग कुसंग को नित विचारो। कुसंग डोबे संग दे निस्तारो॥
नीच की संगत नित दुःखदाई। बिना अर्थ जीवन डोलाई॥
नीच की संगत पाप को देवे। बल बुद्धी यश को हर लेवे॥
नीच का संग केवल जम रूप। मीत बना के देवे बिख कूप॥
नीच का संग बाद बदावे। वैर बखीली का सबक पढ़ावे॥
नीच का संग पर-हान दिखावे। निन्दया मान चित में प्रगटावे॥
नीच का संग सत सिमरत नासे। करम विकार में रहत निवासे॥
नीच का संग सब पत को हरे। अनक भाँत सिर बिपता पड़े॥
नीच का संग छल कपट को देवे। मन मानी हिकमत को सेवे॥
नीच का संग नीच बनावे। कुल जाती को कलंक लगावे॥
नीच का संग राज भय देवे। करनी मलीन ज्यों मन सेवे॥
नीच का संग नरक दिखावे। कूड़ कपट नित धरम कमावे॥
नीच का संग बनावे घाती। वैर बिकार जो अन्तर थापी॥
नीच का संग पुरषारथ को नासे। आलस निन्द्रा तमोगुन वासे॥
नीच का संग अधिक दुःख रूप। सत मारग का तजे सरूप॥
नीच का संग बिपत में राखे। लोक लाज शरम नहीं भाखे॥
नीच का संग सत धरम से हीना। कपट विकार मारग को चीना॥

नीच का संग नित जीयो जलावे। पाप कूप में धीर ना आवे॥
नीच का संग अत संकट धारी। तीन लोक में होवे ख़वारी॥

**नीच की संगत जो करे, नीच गती को पाये।**
**'मंगत' नित विचार के, सतपुरष से प्रीत लगाये॥ 382**

नीच की संगत चंचल मत देवे। धीर धरम सब को हर लेवे॥
नीच की संगत मन कुटल कठोर। दया ग़रीबी दीनी चित छोड़॥
नीच की संगत मन अधिक अभमानी। विचारहीन भयो सो प्रानी॥
नीच की संगत पाप सुख जापे। संशे धार चित अधिक सन्तापे॥
भूल कर करिये ना नीच का संग। पाप करम का चढ़े नित रंग॥
संगत जैसी जीव ये राखे। ऐसी रंगत अंतरगत भाखे॥
जो कोई अपना करे सुधार। साची संगत में नित पधार॥
नीच की संगत रूप बेकारी। नशे भोग नित चित विचारी॥
अधिक संकट अधिक संताप। नीच का संग मूल है पाप॥
सत सिखया को अन्तर धारो। तेरा जीवन होये सुधारो॥
सतपुरषों की संगत पेख। सत मारग धरम को लेख॥
सतपुरषों का संग सुखदाई। सुख सरूप हो जाए सिर बिपता आई॥
सतसंग साधन धरम का मूल। मिल सतसंग जावे सब भूल॥
नित नित संग का करो विचार। सत रहनी पावें सत सार॥
पाप करमी का जीवन पाप। पापी संग नित रहे व्याप॥
पाप करमी बेग़ैरत होये। छल बल अन्तर जीवन खोये॥
बेहयाई और बेइतबारी। पाप करमी की ये कारगुज़ारी॥
अन्तर और बाहरों और दिखलावे। हस्ती दाँत ज्यों भेद रखावे॥
पाप करमी शैतान सरूप। पल पल बचन का पलटे रूप॥

**गुरमुख मनुआँ डूबिया, मन-मुखियों के साथ।**
**'मंगत' कहे विचार के, नित सम्भल मिलाओ हाथ॥ 383**

पाप करमी का खोजन पाप। सत पुरषों को दे संताप॥
गिरी समान पाप को भोगे। लोक लाज नहीं चित में बोधे॥
चण्डाल सरूप तिसका जान। नित नित पाप में रहे ग़लतान॥

गुरु पीर ना सीख सुहाई। अपने समान देखे ना काई॥
सब जग को पाओं तले दबावे। मान धार नष्ट हो जावे॥
दुरयोधन संग भीषम बुद्ध नासी। राज नीत सब भई विनासी॥
जिसकी संगत खोटी होई। पत परताप सो ही जन खोई॥
लाखों जीव भये नादाने। दुष्ट की सीख कई किये दीवाने॥
नीच की सिखया युधिष्ठिर जुआ खेला। किस दुर्गती का सिर पड़ा झमेला॥
नीच के संग भये भूप भिखारी। करो विचार गुनी गुनकारी॥
नारी पुत्तर और सखा अधिकाई। नीच सुभाओ सब का दुःखदाई॥
पाप करमी नारी जो होवे। भरता तिसका सिर अपना खोवे॥
पुत्र कलंकी जिस कुल में होई। पिता पितामह का नाम डबोई॥
नीच सखा जो जन धारी। वाँग दुरयोधन होवे ख़वारी॥
मात पिता जो भी कोई होवे। तिस का पाप परिवार को डबोवे॥
साजन सीख ये ही सुखकारी। नीच पुरष का संग दुःखसारी॥
धनी दलिद्री इक पल में होवे। पाप करमी संग प्रीत जो लोवे॥
अपना जीवन जो सुखिया चाहे। नीच की संगत न भूल के जाये॥
साचा साधन ये सुखकारी। पल पल प्रीत गुरमुख विचारी॥

**तीन काल सुख तिस को, जो सतसंग में रखे प्यार।**
**'मंगत' ये सत साधना, जो साधे पाये उद्धार॥ 384**

परम विचार ये नित विचारो। साची संगत मिले सुखकारो॥
सो गुनवंता सुगढ़ स्याना। संग कुसंग जिस करी पहचाना॥
संगत का तेज अती बलकारी। जैसी संगत ऐसो रूप विचारी॥
जो कोई अपनी सोभा चाहे। सत्पुरषों संग प्रीत लगाये॥
जो कोई साचा सुख विचारे। गुनी पुरष की सिखया धारे॥
जो कोई जीवन बंध को नासे। सत साधू संग कीजो वासे॥
जो कोई मन के दोष निवारे। सतपुरषों की कथा विचारे॥
जो कोई सत सरूप को खोजे। सतगुर पूरे का निरनय बूझे॥
जो कोई सदा अरोगत माँगे। भृष्टकारी के संग से लाँगे॥
देव सरूप जो जीवन लोचे। सतकरम मिल सतसंग सोचे॥

जो कोई माँगे अधिक धनवंता। सत ब्यौहार की पढ़ियो संथा॥
जो कोई नित का जीवन बाँछे। मिल सतसंग सत कीरत राँछे॥
जो कोई माँगे सुखिया परिवार। नीच पुरष संग तजे विकार॥
जो कोई ऊँच गती को चेते। सत संगत में धरे परतीते॥
जो कोई अपना शत्रु मटावे। सतपुरषों की सिखया ध्यावे॥
जो कोई जीवन आनन्द खोजे। साचा मारग धरम का बोधे॥
जो कोई मन की शांत पहचाने। साचा करम मन अन्तर ठाने॥
सरब सुख इक छिन में पाये। साची प्रीत हरी चरन लगाये॥
बचन अमोलक हिरदे धारो। साची संगत सतनाम विचारो॥

**आवागवन के चक्कर से, सो नर पावें छूट।**
**'मंगत' मिल सतसंग में, जो नाम अमीरस लूट॥ 385**

बुद्ध उज्जल मन शांत निवासे। सत बानी हिरदे परगासे॥
करम कुकरम का मिले विचार। नित सतसंग में धरो प्यार॥
मिल आनन्द विनासे खेद। सतसंग महमा परसें वेद॥
पूरन साधन तब ही होई। दृढ़ निस्चय गुरु चरन परोई॥
अदृष्ट वस्तु का वेखन पावे। सतगुर बचन जो हिरदे लावे॥
सकल विकार से जीवन छूटे। सतगुर कहनी रसना रस लूटे॥
पूरन मनुआँ मनोरथ पूर। मिल सतसंग जप नाम हज़ूर॥
बादमुबाद संकट सब जाये। साची संगत की सेव कमाये॥
सब से ऊँच धाम निवासी। सतसंग प्रीत जिस मन परगासी॥
खल बुद्धी भ्रष्ट करम निवारी। सतसरूप महमा विचारी॥
तीरथ बरत और पुन्न दाना। अतुल परताप सतसंग पहचाना॥
अपना जीवन करो बलिहारी। सरनागत हो गुर उपकारी॥
साचा बचन धारो नित अन्तर। आरूढ़ ज्ञान गुपत जप मन्तर॥
सरब आधार पायें प्रभ एका। मिल सतसंग सत सुनो विवेका॥
कपट त्याग सतमारग भाल। साचा धरम हिरदे में घाल॥
तिसके ऊपर नहीं विचार। मिल सतसंग पावें उद्धार॥
रल मिल संगत सोध विचार। साची करनी हिरदे में धार॥

संगत साची महमा अधिकाई। संगत चरन कृष्न धुलाई॥
संगत साची हेत जो राखी। साचे धरम की परसे साखी॥

**साची संगत प्रभ रूप है, नित प्रभ का करें विचार।**
**'मंगत' संगत दरस से, नित हूँ नित बलिहार॥ 386**

## साध की संगत

अधिक संकट जीव का जाये। सत साधू का दरशन पाये॥
साध की संगत हर चरनी मेला। साध की संगत प्रभ मिले सुखेला॥
साध की संगत कपट छल जाये। दीन ग़रीबी चित अन्तर आये॥
साध की संगत भरम निवारे। एक सरूप का लेख लखारे॥
साध की संगत सरब सुख दाती। दृढ़ निश्चय आवे प्रभ साखी॥
साध की संगत नित कल्याना। सतसरूप आवे पहचाना॥
साध की संगत धीरज देवे। पाप कूप से निवरत लेवे॥
साध की संगत सभी मनायें। सिद्ध तपीश्वर अवतार जस गायें॥
साध की संगत नीती परगासे। अनुभव रूप अन्तर गत भासे॥
साध की संगत मनसा पूरी। साची करनी फल मिले हज़ूरी॥
साध की संगत परमारथ सिखलाये। मन बच करम शुद्ध जीवन पाये॥
साध की संगत प्रेम चिंगारी। गत को पावें कई अनाड़ी॥
साध की संगत जुगत अनेक। जो जो बूझे पावे सत टेक॥
साध की संगत पाये सब निरनय। आवन जावन जरा और मरना॥
साध की संगत अनोखी धार। सत परमेश्वर मिथ्या संसार॥
साध की संगत जीवन न्यारा। अखण्ड सरूप संग हेत विचारा॥
साध की संगत मन तृपतावे। अभोग सरूप परमेश्वर ध्यावे॥
साध की संगत सब सुखरासी। निरनय पाये तत्त अबनाशी॥
साध की संगत कोई गुरमुख पाये। मनमुख भरम की आग बुझाये॥

**सत साधू के संग से, सत आई परतीत।**
**'मंगत' साधन सत किया, गई कलपना चीत॥ 387**

उट्ठत बैठत करो विचार। भवजल दुस्तर वार नहीं पार॥
किस करनी में मूढ़ लिपटाया। अपने जीवन का सार नहीं पाया॥
कौन तेरो तूँ किसका होई। भरम बकार क्यों चित में जोई॥

अधिक सयाना जो तूँ होई। अन्त सियानफ़ चले ना कोई॥
तजो विकार सत संगत पेखो। अपनी करनी निर्मल कर देखो॥
झूट विकार से मुकत ना होई। जब सतनाम ना हिये परोई॥
साहब विसार क्यों हुआ अंजाना। अन्त की बारी नर बहु पछताना॥
शरीर चाम ये राख समाई। जीवत में कुछ करो कमाई॥
साचा ठाकर घट अन्तर थीया। मिल सतसंग निज भेद को लीया॥
सत विचार ये सुख की खानी। सत की कथा मनसा तृपतानी॥
सत का जीवन परम आधार। सत को खोजे तिस की जय कार॥
प्रीतम प्रेम जो पीवे गम्भीर। आवागवन जाये तक़सीर॥
साची बन्दगी का लेख विचार। माल मुलक सब दुःख की सार॥
नित ही साचा भेख पहचान। सत सरूप का कथो निधान॥
बारम्बार ये चिन्ता राख। अचिन्त सरूप शबद को चाख॥
सतकरम में जीवन ढाल। तब पद सूझे दीनदयाल॥
सतपुरषों ने लेख लखाया। अबगत नाम सिमर सुख पाया॥
करो पुरषारथ ये निर्मल रीता। साची संगत से रखो परीता॥
मन बच करम नित सेव कमाओ। संगत सेवा धरम अधिकाओ॥

**सतकरम की साधना, सत्संग से मिले विचार।**
**'मंगत' राखे जतन जो, पावे प्रभ भगती तत्त सार॥ 388**

साची संगत हरी चरन पुजावे। साचा प्रेम हिरदे में आवे॥
साची संगत प्रभ भेद दिखलाई। अन्तर शकत जो सरब समाई॥
साची संगत सत्पुरषों की जान। साचे धरम का वहाँ मिले निधान॥
मिल संगत चित निर्मल होवे। भय भरम भयंकर खोवे॥
मिल संगत पाये देश उद्धार। साची करनी का आवे विचार॥
मिल संगत जम दर्शन चूके। भाओ भगत अन्तर में सौंपे॥
परम ज्ञान परापत होये। सत विचार करनी सत जोये॥
नाम अमोलक आवे चीत। मिल सतसंग पाये परतीत॥
हिकमत सकल होई सुखदाई। साचे मारग में नित वरताई॥
दुस्तर घाट ये जगत पसार। मिल सतसंग नित करो विचार॥

सब जीवों की उन्नति लोचो। अपनी करनी अन्तर में सोचो॥
जो कुछ किया सो ही दरसाई। आज्ञा साहब ऐसी वरताई॥
निर्मल करनी यथारथ ज्ञान। मनुआँ पावे सत धरम निधान॥
आहार ब्यौहार सत संगत विचारी। धरम का लक्षन ये अपरम अपारी॥
जिस ने धरम ऐसा विचारा। तिस ने पायो मोख द्वारा॥
उत्तम कीरत तिस जन पाई। साचा साधन जो नित कमाई॥
मानुष जनम कदारथ होये। साचा धरम कमावत जोये॥
सतगुर किरपा दीनो फल सार। अखय धरम पायो तत्त विचार॥
जो जो बूझे चीत लगाये। मन में साध परमगत पाये॥

**निरनय साचे धरम का, सुनयो मन चित लाये।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, जो एह बिध धरम कमाये॥ 389**

## प्रभ सिमरन महमाँ

सत सिमरन मन साधन साधो। पारब्रह्म पल पल आराधो॥
ये जीवन तब ही सुखरासी। प्रभ की भगत जो हिरदे भासी॥
साचा मालिक नित चित ध्याओ। सरब जतन का पूरन फल पाओ॥
प्रभात समय प्रभ सिमरन कीजो। दृढ़ निश्चे ये नीयम लीजो॥
साचा पुरख सरब आधारी। नित ही चित शोभा विचारी॥
संध्याकाल निश्चे प्रभ पूजो। सकल विकार से मुक्ता सूझो॥
पाप करम मन नित विचारी। नाम जपे तब हो छुटकारी॥
अपरम अपार नाम वडयाई। सब साधन का तेज लखाई॥
प्रभ सिमरन ताईं साधन सारी। जो पल आवे चित नाम मुरारी॥
प्रभ सिमरन ताईं सकली किरया। जो हिरदे आवे पुरख निष्किरया॥
प्रभ सिमरन ताईं जग जीवन पाया। हिरदे आवे हरी हर राया॥
प्रभ सिमरन ताईं आचार विचार। कारन करता चित लेवे धार॥
प्रभ सिमरन सिद्धता सब देवे। ज्ञान विज्ञान छतर सिर लेवे॥
प्रभ सिमरन से मन निर्मानी। सकल जगत की जुगत पहचानी॥
निर्मल बुद्धी जब ही नर होई। प्रभ का सिमरन तब ही परोई॥
सतगुर पूरा जब आन मिलाई। साचे ठाकर की उस्तत पाई॥
नित ही सिमरो दीनदयाला। निर्मल बुद्ध पाओ ज्ञान विशाला॥

पूरन करम जीवन का ये ही। हिरदे आवे हर भगत सनेही॥
पूरन जतन ये ही सुखकारी। साचा ठाकर चित आये विचारी॥

**साचा नाम कमायो, सब विगन दोष करे नाश।**
**'मंगत' मिले मुकत रस, निर्भय पद परकाश॥ 390**

पूरन करनी ये ही पहचान। सिमरन आवे एक भगवान॥
पूरन भाग उस जन के जागे। साध संगत मिल नाम रस लागे॥
पूरन रीत तिसने कमाई। सिमरन साहब में लीन समाई॥
पूरन रूप सो ही उपकारी। सत शरधा प्रभ नाम को धारी॥
पूरन पंडत सो वेद का मानी। प्रभ की भगत जिस मन पहचानी॥
पूरन सुखिया सो ही नर होये। सत विश्वास हरी चरन परोये॥
पूरन जुगती तिसने बूझी। प्रभ का सिमरन जो हिरदे सूझी॥
सब संकट छिन होये विनासा। एक साहब की पाई अरदासा॥
सरब शकत का सो ही दाता। लिखयो लेख जिस पार बिधाता॥
मूल करम ये जीवन परगासे। नित नित साचा साहब उपासे॥
प्रभ की भगत मुकत का धाम। प्रभ का रूप सरब का ठाम॥
निश्चे सिमरन जिस जन आया। सकल आचार का भेद लखाया॥
वासना अगन से मनुआँ छूटे। साचा सिमरन नाम प्रभ अंतर लूटे॥
गुरमुख जीवन हिरदे धार। पल पल सिमर लीजो करतार॥
सकले करम मनसा होवे पूरी। हिरदे ध्याओ सतनाम हज़ूरी॥
सकल अगन से शांत समाई। हिरदे राखो सतनाम आगाही॥
सरब चतुराई का सो ही ज्ञाता। आलख पुरख जिस हिरदे जाता॥
सरब जगत का बिन्ध पहचानी। निस दिन ध्याये प्रभ आलख वडयानी॥
सरब रतन का सो ही भंडारी। साची प्रीत प्रभ कथा विचारी॥

**पूरन नाम भगवंत का, जो सिमरे सो पूरन होये।**
**'मंगत' और संसार सब, भरम में जीवन खोये॥ 391**

अधिक जंजाल में जीव ये घेरा। हर का सिमरन मिटावे फेरा॥
करम बंध से तब होये मुक्ता। भाओ भगत इक नाम संजुगता॥
भव दुस्तर से होये ख़ुलासी। सिमरन आवे इक नाम अबनासी॥

जनम मरन रोग तब जाये। सच्चिदानन्द प्रभ हिरदे आये॥
काम क्रोध अगन तब नासे। निर्मल बुद्ध इक नाम उपासे॥
द्वैत भरम तब जीव का जाये। एक भगत हरि चरन लखाये॥
अपरम अपार साहब की सेवा। जो सेवे पाये ज्ञान अभेवा॥
प्रभ की कीरत से मन सुखवासी। खेम कुशल तत्त रूप उपासी॥
प्रभ की सिफ़त जिस जन पाई। आवागवन की तिरास मिटाई॥
प्रभ का सिमरन घालन सार। जो जो घाले पाये उद्धार॥
क्या बखानूँ नाम वडयाई। नाम जपे निज रूप समाई॥
पल पल अपना साहब पुकार। होयें किरपालू आप दातार॥
अनन प्रीत नित चरन ध्याओ। मनसा पूरन परमगत पाओ॥
निमख निमख में करो अरदास। आनन्द होवे मिटे भ्रम फाँस॥
तूँ तूँ करके हिरदे ध्याओ। सुफल घड़ी का लाभ कमाओ॥
तन मन त्यागो प्रभ चरन के माईं। सकल पदारथ सम्पत को पाईं॥
महा विचार ये ही सुख रूपा। हिरदे ध्याओ नित चरन अनूपा॥
सतपुरषों की ये ही कमाई। रसना राम में लीन समाई॥
सो ही घड़ी नर लेखे आई। जिस घड़ी प्रभ नाम ध्याई॥

**साचे नाम का सिमरना, सत जग जीवन सार।**
**'मंगत' जिस प्रभ सेवया, तिसके भाग अपार॥ 392**

सकल ताप को हरनेहारा। पततपावन भज सो करतारा॥
सरब जीवों की करे रखवारी। सत जगदीश जपो सुखकारी॥
उतपत परले जिसका काजा। भज करतार ग़रीब निवाजा॥
सरब का पालनहारा जोई। सिमर बिशम्भर अखय सुख होई॥
नीच ऊँच को सम परगासी। पारब्रह्म भज रूप अबनासी॥
आद अन्त जिसका नहीं कोई। अनाम अनादी जप पुरखा सोही॥
सरब जीवों की अन्तरगत जाने। अन्तरयामी जप नाम सुजाने॥
दीन दुःखी का संकट टारी। दीनदयाल भज पार मुरारी॥
सकल पदारथ का दातारी। भज गोपाल रूप सुखकारी॥
सब जीवों को दे कल्याना। शबद अगोचर करो पहचाना॥

सरब उद्धारी जिसका रूप। जो जन सिमरे हरे भ्रम कूप॥
सब देवों को जो गत देवे। अबगत नाम सिमर सुख लेवे॥
अनन्त सिफ़त तिसकी गाई। मुनी ज्ञानी करें वडयाई॥
सब कुछ आपे आप विचारी। आलख निरंजन पुरख निरधारी॥
आदी अन्ती इक रस रहाई। अखण्ड सरूप सिमर सुखदाई॥
मन बानी जाँ लीन समाये। जप निर्वान पुरख आगाहे॥
दु:ख सुख का जाँ नहीं परवेशा। सिमर सिमर आनन्द घट ईशा॥
ज्ञान विज्ञान जो नित परगासी। आतम जोत सिमर सुखरासी॥
कोट पिण्ड ब्रह्मण्ड को साजे। सरब के भीतर आप बिराजे॥

**सरजनहार गोबिन्द को, पल पल मन में चेत।**
**'मंगत' सो सत रूप है, दूजा भरम वखेप॥ 393**

प्रभ सिमरन की अतुल वडयाई। विरले हरजन क़ीमत पाई॥
प्रभ की भगत में मन निर्वानी। चेतन कला घट में दरसानी॥
प्रभ की भगत सब दूषना धोवे। विरला गुरमुख भेद को लोवे॥
प्रभ की भगत में जो मस्ताना। तिसके चरन रज सीस रमाना॥
अतिअत निर्मल ताँ की बिरती। काल त्याग अकाल में फिरती॥
प्रभ की भगत प्रेम का सागर। दुर्लभ भाग कोई करे उजागर॥
प्रभ की भगत निर्भय पद देवे। बिख अमरत इक चित लखीवे॥
प्रभ की भगत त्रैकाल दरसी। भगत करे तब दिव्यदृष्ट परसी॥
प्रभ की भगत अचिन्त सरूप। काल कलपना नहीं बिख कूप॥
प्रभ की भगत कलह सब नासे। अती परताप घट परगासे॥
प्रभ की भगत चित भरमन तोड़े। दृढ़ निश्चय जो चरन में जोड़े॥
प्रभ की भगत देवे ऊँच श्रेनी। आवागवन जाँ होवे छीनी॥
प्रभ की भगत इक निश्चय धारी। द्वैत ग़ुबार भयो भ्रम छारी॥
प्रभ की भगत में अजब ख़ुमारी। बिन मध पिये रहे मतवारी॥
प्रभ की भगत से करम फल नासे। निष्काम विरत में लीना वासे॥
प्रभ की भगत भ्रम अगन निवारी। निरइच्छया पद परसा सारी॥
प्रभ की भगत शकत अत देवे। जीव जन्त उठ चरन को सेवे॥

प्रभ की भगत खेम परगासी। सरब जीवों संग प्रीत बिलासी॥
प्रभ की भगत दुर्लभ काजा। हर का भगत तिरलोकी राजा॥

**नाम की रसना खाय के, नित सत रूप समाओ।**
**'मंगत' भगती परस के, अमरलोक को जाओ॥ 394**

प्रभ की भगत विकार सब हरे। निर्मल रंग जिस जन को चढ़े॥
प्रभ की भगत हंग बुद्ध निवारे। सम सरूप अन्तर में धारे॥
प्रभ की भगत दुर्मत को नासी। एक सरूप सरब घट भासी॥
प्रभ की भगत तीरथ अपार। जाँ विचरे ताँ पूजा धार॥
प्रभ की भगत मुकत सरूप। राग द्वेष नासे बिख रूप॥
प्रभ की भगत सत तत्त परगासे। अगम घाट में लीना वासे॥
प्रभ की भगत प्रभ रूप समाई। जल में जल ज्यों इक रूप लखाई॥
प्रभ की भगत कारज वड भारा। भगत कमाये ताँ चरन बलिहारा॥
पाँच दोख तीन ताप निवारे। पाँच कोष से उतरा पारे॥
सकल व्याधी मन भरमन नासी। सत परतीत जाँ भगत निवासी॥
सब संसार रहट की घड़िया। आवन जावन नित दुःख धरिया॥
सतगुर साचा जब आन मिलाये। चक्कर विनास हर भगत दिखाये॥
सतगुर के नित चरन बलिहारी। नौका मुकत जिस दीना विचारी॥
सत सरूप की सोझी पाई। साची भगत चित आन समाई॥
तृखा विनासी मन तृपत समाया। गुर के चरन नित सीस निवाया॥
नित बलिहारी जाऊँ बलिहार। भव जल छूटा गुर के उपकार॥
वाँग सुमेर चित निहचल होई। प्रेम समाधी हर भगत लखोई॥
पूरन चित विरती को त्यागे। साची भगत में गुर सिख जागे॥
अचरज रूप घर परगट होये। गिनती लेखा ना जिसका कोये॥

**बिस्माद कथिये बिस्माद देखिये, बिस्माद रहिये लवलीन।**
**'मंगत' सब बिस्माद है, जब गुर सिखया चित चीन॥ 395**

प्रभ की भगत जिस जन चित आई। स्वपच रूप देवगत पाई॥
प्रभ की भगत देवे ऊँचा थान। निहमानियाँ का राखे मान॥
सरब की ओट हर भगत विचारी। चक्करवरती भये भिखारी॥

प्रभ की भगत सरब ज्ञाता। अन्तरगत सत रूप समाता॥
प्रभ की भगत घट घट सुध देवे। सर्वज्ञ ठाकर के चरन को सेवे॥
प्रभ की भगत में सिद्ध पीर तपीशर। पल पल सिमरें सरब जगदीश्वर॥
प्रभ की भगत में गुरु पीर अवतारा। आज्ञा प्रभ में सत निश्चय धारा॥
प्रभ की भगत में तत्तवेते ज्ञानी। निहकरम सरूप संग प्रीत पहचानी॥
प्रभ की भगत में वली नबी रसूल। पल पल सिमरें आज्ञा अनुकूल॥
प्रभ की भगत में पवन और नीरा। पावक अम्बर सिमरे समेरा॥
प्रभ की भगत में विचरे महेशा। नारद शारद शुरती शेषा॥
प्रभ की भगत का विरंच पुजारी। भगत आरूढ़ विष्नु घट धारी॥
लोमस मुनी तत्त का वेता। हर की भगत में नित रमीता॥
मारकण्डे भसुण्ड ज्ञानी। हर की भगत जुगजुग पहचानी॥
जनक निरदेही राम अवतारी। याज्ञवलक और व्यास विचारी॥
तीबर भगती कृष्न निरनाये। निर्बन्ध जीवन रूप दिखाये॥
सिद्ध चौरासी नौ नाथ बखानी। अपरम अपार सोभा प्रभ ध्यानी॥
गोरख दत्त मछन्दर ध्याये। आरूढ़ ध्यान में योग कमाये॥
मुनी रिखब बुद्ध आद ध्याई। राज त्याग हर भगत कमाई॥

**गिनती गिने ना आ सके, जिन ध्यायो पद निर्वान।**
**'मंगत' भगती योग से, पायो मुकत निधान॥ 396**

मीरांबाई और रविदासा। साची भगत की अधिक प्यासा॥
नामदेव कबीर ध्याये। नानक पल पल में जस गाये॥
अनगिनत गुनी जग आये अवतारी। साची भगत के भये ब्यौपारी॥
उठ गुनवंता समाँ विचार। मानुष जीवन करो उद्धार॥
बिन भगती मन नित डोलाई। निहथावाँ होके आवे जाई॥
बिन भगती मन संकट धारी। पर का दोष हिरदे विचारी॥
बिन भगती नर पशू से नीचा। कूड़ कपट विकार चित सींचा॥
बिन भगती मन भय गरासी। काल चक्कर धारी गल फाँसी॥
बिन भगती नर स्वपच से मंदा। दुष्ट विकार धारी दुरगंदा॥
बिन भगती नर प्रेत सरूपा। तिसका दर्शन होवे दुःख रूपा॥

बिन भगती नर दीरघ अभमानी। करनी मलीन नित चित ठानी॥
बिन भगती मन अन्ध विश्वासी। मढ़ी मसान की करे उपासी॥
बिन भगती मन दाओ बहु खेले। दुष्ट करम की प्रीत को मेले॥
बिन भगती मन जाये निरासा। भोगे भोग पर रहे प्यासा॥
बिन भगती सब कारज खोटे। बारम्बार गरभ में लोटे॥
बिन भगती सब सम्पत दुःखदाई। आस आस में जनम वरताई॥
बिन भगती नहीं मारग सूझे। पर-निन्दया पर-हान में लूझे॥
बिन भगती नर रूप शैतानी। अन्तर बाहर भेद दृष्टानी॥
बिन भगती नर दोख नित चीना। नित अपराध में रहे लवलीना॥

**मनमुख पूरन रोग है, व्यापे कुल संसार।**
**'मंगत' औषध नाम की, सब ही हरे विकार॥ 397**

बिन भगती मन अर्थ नहीं पाये। आस आस में जनम विताये॥
बिन भगती मन अन्तर अन्धकार। भय में भरमे बारमबार॥
बिन भगती मन भूक समाई। अरब खरब सम्पत जो पाई॥
बिन भगती मन अपना घाती। मिथ्या कलपना पल पल थापी॥
बिन भगती मन उड उड जाये। छिन आकाश पाताल लखाये॥
बिन भगती मन नित दुःख लोचे। सुख सार नहीं अन्तर सोचे॥
जल जल पड़े वाँग पतंगा। अगन भोग के रहे नित संगा॥
अती विकार इस मन ने धारे। बिना भगत नहीं पावे पारे॥
शबद स्पर्श रूप रस खेदा। गन्ध विकार ने मन को छेदा॥
छिनभंगुर ये भोग विकारा। छिन छिन डोले मन अंध्यारा॥
जतन सभी नर बिरथा जाये। एक पलक नहीं शांत समाये॥
भोग वासना अन्तर धारी। कलप कलपना धरी अपारी॥
छिनभंगुर जो प्रीत नित राखी। अन्तकाल परम दुःख भाखी॥
चौधाँ लोक में जिसने देह धारी। दुष्ट माया नित करे ख़वारी॥
पाँच तत्त का ये पुतला साजा। नित ही झूट विकार समाजा॥
जिस जन ने नहीं कियो विचारा। लूट गयो दिन माहीं अंध्यारा॥
जीभा रसना इक मीन ने धारी। कण्ठ में कूण्डी लई दुःखकारी॥

नैन रोग में पतंग जर गयो। काम रोग हस्ती गरसीयो॥
मोह रोग सब जीवों में आई। शोक अगन में तीन काल जलाई॥

**देह सागर विकार का, जीव नित ग़ोता खाये।**
**'मंगत' बिन प्रभ भगत के, तीन काल दुःख पाये॥ 398**

बिना भगत नहीं होवे ख़ुलासी। काल करम धारी गल फाँसी॥
भगत बिना सब उज्जड़ पाये। मेघ बिना ज्यों खेती जाये॥
भगत बिना मन नित ग़ुलामी। राज तेज जतना बिसरामी॥
भगत बिना नित शंका धारी। आठ पहर धरे बेइतबारी॥
साची भगत उठ करो विचार। परम रतन ये साधन सार॥
साध तपीशर सब डहकाये। सीस जटा अंग राख रुमाये॥
धूनी तापें जल शैन निहारे। अठसठ तीरथ का पंध पधारे॥
उदे अस्त परकरमा देवे। चार वेद की संथा को सेवे॥
माला हाथ ललाट गंध लेपी। बसे बियाबान भयो सरब अलेपी॥
बरत नेम बहु भाँत के राखे। सरब अकारथ बिन भगत रस चाखे॥
गादीपत कोई भयो घँडियार। दावा पीरी धरे अपार॥
जादू तन्तर तावीज़ को साधे। गुरु गुसाईं धरे मान उपाधे॥
इन्द्री विकार ना दूषना टारी। ऐसे गुर की होई भली ख़वारी॥
वस्तर निर्मल पग फूँक के राखे। मुख को बाँधे कठन बहु चाखे॥
अहिंसा धरम नहीं हिरदे आई। जब लग अन्तर कामना दुःखदाई॥
नाना भेख में जीवन काढ़े। छिन सन्यासी पल उदास बिचारे॥
गृह को त्याग नहीं मन दुःख नासा। भेख पाखंड में कियो निवासा॥
चरस तम्बाकू बिजिया को पीवे। बुद्ध मलीन कुछ सार नहीं थीवे॥
कूड़े त्याग में जनम गँवाई। साचा त्याग नहीं भगत कमाई॥

**जब लग बिरह नहीं राम से, मनुआँ सदा अधीर।**
**'मंगत' सरोवर शान्त का, नारायन पद सीर॥ 399**

देह भेखी बहु मिले पुजारी। साची भगत कोई विरला विचारी॥
क्या सन्यासी क्या बैरागी। नाना भेख धरे मंधभागी॥
देह का भेख नहीं धीरज देवे। तप भयंकर जो नित सेवे॥

जब लग मन नहीं आये विश्वासा। जतन बेअर्थ में चित बासा॥
मनसा रोग नहीं जीव का नासी। गृह को त्याग लई झूट उदासी॥
माँग के खाना धरती आसन। साची भगत की ये नहीं उपासन॥
वेद पढ़े औराँ उपदेशे। अन्तर धारे भोग संदेशे॥
कठन कराल साधन को धारी। बिन गुर भेंट नहीं भगत विचारी॥
चन्द्रायन बरत कर नीयम राखे। कातिक माघ अशनान को भाखे॥
गिरी हिमालय पर आसन धारी। बिना ज्ञान सब दु:ख विचारी॥
जब लग मन विरती नहीं त्यागे। करम फल इच्छया नहीं मन से भागे॥
तब लग भगती सार नहीं पाये। सरब जतन अकारथ जाये॥
इन्द्री दमना बहु बिध कीनी। मन से भोग विकार को चीनी॥
बाहरों भेख अतीत का धारी। अंदर हंगता करे ख़वारी॥
तीरथ तट पर नित बराजे। शुद्ध नीर मज्जन देह साजे॥
भूत प्रेत यखनी को पूजे। पेट के कारन विकार नित सूझे॥
पाँच धूनी को नित ही तापे। उलट कपाली योग को जापे॥
बिन तत्त ज्ञान नहीं दूषना जाये। दुस्तर मनुआँ नित भरमाये॥
अद्भुत चक्कर माया बिस्तारी। पूरे गुर बिन ना हो निस्तारी॥

**आतम तत्त परबीन गुर, जब आन मिलाये मीत।**
**'मंगत' तिन की सिखया, हिरदा करे पुनीत॥ 400**

साचे सतगुर चरन बलिहारी। परम निधान हर भगती विचारी॥
हर की भगत में जो लवलीना। तिस गुर मेल होये पाप छीना॥
अन्तरगत की जो रसना जानी। अन्तर माईं रहे ग़लतानी॥
ब्रह्मसरूप शबद का भेदी। शबद समाध से दुर्मत छेदी॥
सरब जीयाँ का भयो अधिकारी। तिस गुर सेव सब मिटी बकारी॥
ज्ञान गमता में पूरन जोई। अचल ध्यान सुरत समोई॥
आतम तत्त अन्तर चित जोड़ी। सत साधन सत धाम को फोड़ी॥
करम अकरम का भेद पहचानी। अकरम सरूप जपे निरवानी॥
इन्द्री करम से मन न्यारा। भुगता भोग नहीं जाँ विकारा॥
सतनाम नित सुरत परोई। तिस गुर भेंट सब बिपता खोई॥

चेतन नगर का जो बिसरामी। चेतन चोला धारयो अनामी॥
पाप पुन्न सब दूषना छोड़ी। अचिन्त सरूप में सुरता जोड़ी॥
भोग विकार से उपरस होई। आतम भोग भोगे गुनी सो ही॥
मिथ्या सब संसार दिखाई। सतकला इक राम ध्याई॥
तुच्छ जीवन से भयो बैरागी। राम चरन चित नित अनुरागी॥
भेख भिखन्तर से रहे अलेपा। तिस गुर भेंट जाय सकल वखेपा॥
सूक्षम गती जोग की जानी। सुरत आरूढ़ शबद पहचानी॥
निर्देह पुरष देह अन्तर पाई। अन्तर घाट रहे तृपत समाई॥
द्वन्द विकार भरम को छेदी। सो गुर साचा सच धाम का भेदी॥

**सतपुरष पहचान के, मगन भयो जिन चीत।**
**'मंगत' ऐसे गुर मिलें, जाये भरम की भीत॥ 401**

शबद भेदी सन्त मिलाये। तिनकी सिखया सब दोख मिटाये॥
निर्वान सरूप शबद को सोधे। विरत रहत मन इकत्तर बोधे॥
मन पवन की जुगती जोड़ी। सुरत इकागर पिये नाम कटोरी॥
मज़हब मज़ाहब बाद निवारी। सच करनी नित अन्तर धारी॥
अपने मन की दूषना धोई। पल पल साचा नाम परोई॥
दृढ़ विश्वास चित्त चरनी पाया। अखय पुरष मन माहीं ध्याया॥
दीन ग़रीबी खिनता ओढ़ी। पर-हित चित्त की लागी डोरी॥
प्रेम प्याला जो पल पल पीये। प्रथमे मरे फिर मर के जीये॥
मर जीवन जो रूप को धारी। तिस गुर भेंट गई काल ख़वारी॥
सत मारग को जो मन में सोधे। साचा नाम निरंतर बोधे॥
पल पल आज्ञा प्रभ पहचानी। शबद ध्याये प्रेम की खानी॥
लोक लाज कुल कीरत छोड़े। सकल जीयाँ चित चरनी जोड़े॥
सकल जगत की धूड़ लखाये। विच ग़रीबी आसन लाये॥
पल पल सरजनहार ध्याई। तिस गुर मिल सोभा बहु पाई॥
अगम निगम का जो नित भेदी। पारगरामी जप माया छेदी॥
अपना जीवन जो आपे काढ़ी। सत मारग में नित सुरता धारी॥
मन की अगनी जाँ शीतल होई। प्रेम ख़ुमारी जिस सुरत परोई॥

उलट बुद्धी घर अपने आये। नित आनन्द प्रभ घर में पाये॥
जब बोले तब ज्ञान की रसना। जब सोचे तब नाम अलखना॥

**सत साधन हिरदे धरी, मनुआँ धोवे नीत।**
**'मंगत' ऐसे गुर की, नित राखो चरन परीत॥ 402**

पर-उपकार जीवन जो धारी। पर-दुःख में निज सुख वरतारी॥
दासाभाव मन माहीं समाई। इक चित प्रीत सरब कमाई॥
राजा रंक संग एक प्रीत। ठाकर सिमरे धर निर्मल चीत॥
साचा रंग चित लयो रँगाई। लखयो लेखा बेपरवाही॥
वैरी मित्तर में भाओ एका। इक चित लेखे सुख दुःख लेखा॥
साध-जनाँ की प्रीत कमाये। साची बंदगी जीवन पाये॥
खिमावान पर उपकारी। तिस गुर भेंट सुख मिले अपारी॥
साची कथा मन माईं परगासी। साचे नाम को नित उपासी॥
अन्तरगत सत शबद लखाई। पल पल कीजे शबद कमाई॥
परले पार शबद बिसरामी। अगम पंथ खोजे सतनामी॥
अलप आहार सूक्षम सोवे। साचा शबद निरंतर जोवे॥
ऐसी रहनी जिस जन पाई। तिस की सीख तीन लोक तराई॥
अकथ कथा का लेख लखावे। सुरत निरत इक धार कमावे॥
आपा त्याग सत जीवन पाये। तत्त अबनाश हिरदे में ध्याये॥
सुपन समान जग रचना देखे। साची कीरत प्रभ अन्तर पेखे॥
भय भरम ग़ुबार मिटाई। अखण्ड जोत निरन्तर पाई॥
दुर्मत मैल से उजला होई। आचार विचार में सुरत परोई॥
नित आनन्द बानी परगासी। तिस गुर भेंट गई काल की फाँसी॥
दिवस रैन निश्चय इक धारी। सो गुर साचा सब जुगत आचारी॥

**तत्त ज्ञानी सतपुरष को, बन्दिये बारम्बार।**
**'मंगत' नज़र निहाल तिन, पल में करे उद्धार॥ 403**

हाट पटन का घाट पहचानी। आलख जोत दरसे निर्वानी॥
पल पल ताँ में सुरत परोई। तब ये काया निर्मल होई॥
सच ठाकर इक चित कमाये। दीपक अखण्ड घर में प्रगटाये॥

दीन दुनी दोनों का वाली। साची प्रीत हर चरन सँभाली॥
मन में बांछा रखे ना कोई। निष्काम प्रीत सब संग होई॥
अत परगास शबद की धारा। निज मन पिये होवे निस्तारा॥
काल करम को नित नित छेदी। आलख शबद को अन्तर बेधी॥
सरब जीयाँ का होये उद्धारी। तिस गुर भेंट परम सुखकारी॥
अठसठ तीरथ जो अन्तर नहाई। राज प्राग के घाट समाई॥
अछल अछेद धुन नाद विचारी। पल पल विरती मन की धारी॥
गरजे मेघ दामन नित दमके। साचे नाम मिल सुरता चमके॥
त्रैगुन जंजाल करम का नासी। सत परतीत पररयो अबनासी॥
अपने मन की सब भूल चुकाई। आज्ञा प्रभ की पल पल मनाई॥
जीवन मिरतक पद परसा अपारी। आलख पुरख की रसना विचारी॥
ऐसी रहनी जिस जन पाई। सो गुर साचा सब पाप मटाई॥
पर का सुख जो हिरदे धारी। तन मन अरपे मारग उपकारी॥
सरब जीवों संग साँझ बनावे। अमरत प्रेम सब में वरतावे॥
अन्तर में रहे सब से न्यारा। सत सरूप गत लखे आपारा॥
कुटल विकार तृष्ना जब जाई। तत्त्वज्ञानी सो गुर कहलाई॥

**आनन्द वस्तू खोजते, भरम रिह्या संसार।**
**'मंगत' आनन्द पाइये, जब सतगुर मिलें आपार॥ 404**

साची जुगत शबद पहचानी। अन्तरघाट सुरत को आनी॥
गंग जमुन सुरसती पार। आलख शबद का करे विचार॥
नित परकास पुरख बिन सीसा। धरे ध्यान चरन जगदीशा॥
चरन पाताल सीस आकासी। आलख पुरख जप नित अबनाशी॥
तीन सुन्न के परले पार। साखी दर्शन जोत निहार॥
पल पल ताँ में सुरता जोड़ी। निर्वास सरूप अबगत को सोरी॥
निर्वान गती नित मन परगासी। सत परगास अधिक घर भासी॥
रोम रोम में नाद गुँजारी। रमता राम का लेख लखारी॥
अदृष्ट पुरष का दर्शन पाई। अकथ कथा को नित कथयाई॥
रूप बिना मन प्रीत लगाई। बिन पग चाले धाम पहुँचाई॥

अपरम प्रेम लटापट धारी। शून्यंकार नित चढ़ी ख़ुमारी॥
ब्रह्मज्ञानी ब्रह्म तेज लखाई। ऐसे गुर तों नित बल बल जाई॥
सतगुर महमा नहीं कथनी आवे। वेद ग्रन्थ बहु उस्तत गावे॥
परचंड माया का ताप निवारी। ऐसे गुर के चरन बलिहारी॥
लाख बरस गुर उपमा कीजे। तिल परमान तो भी ना सीजे॥
साहब रूप गुर आया आप। सकल जीवों का हरयो संताप॥
नित नित बन्दूँ गुर के चरन। गुर समरथ आपे कारन करन॥
पाप कुपथ से मुकता लेवे। सत परतीत सत सिखया सेवे॥
पूरन भाग सो जन जग आई। मिल सतगुर पाई वडयाई॥

**गुर महमा अपरम अपार है, साखी कथी ना जाये।**
**'मंगत' दुर्गम मारग जगत का, पल में दियो चुकाये॥ 405**

सरब सिद्धों ने सिद्धगत पाई। सत परतीत भये गुर सरनाई॥
अगम निगम का भेद दिखावे। सत करनी का राह समझावे॥
सकली भरमन से जीव छुड़ाये। तत्व ज्ञान दे गुरमुख तृपताये॥
सुखदेव मुनी की भरमन नासी। जनक निर्देही की सीख निवासी॥
नारद मुनी का मान तब नास्यो। झीवर गुर की चरन बलास्यो॥
रामचन्द्र नित सिखया धारी। गुरु वशिष्ट तत्व विचारी॥
मुनी दुरबासा की सीख सुहाई। कृष्नचन्द्र ने उपमा गाई॥
अष्टावकर जनक मिलाये। सकल व्याधी पर प्रभता पाये॥
जगत को देख ब्रह्मा चित डोले। आकाश बानी की सुनी कलोले॥
सत भरवासी हो सत को खोजे। रूप बिधाता घट अन्तर सूझे॥
सनकादिक का भरम निशाई। गुपत ज्ञान जब वरंच सुनाई॥
गोरख सीख मछन्दर से लीनी। सिद्धगती अन्तर में चीनी॥
गुरु चौबीस दत्तात्रेय धारी। गुन विचार के भयो निस्तारी॥
गुर की महमा व्यास नित गाये। अनक भाँत परमान दिखाये॥
कबीर गुरु रामानन्द पाया। सतसरूप चित अन्तर आया॥
पीर पैग़म्बर जो भी कोई होवे। अपने गुर के चरन को धोवे॥
पुरख बिधाता ये चक्कर चलाई। सतगुर भेंट सब भेद लखाई॥

सत मारग का भेदी जोई। तिसकी सीख लयो चित परोई॥
तीन लोक की सम्पत सारी। साचे गुर के चरनी वारी॥

**जैसी जिसने प्रीत करी, सतगुर चरनी माईं।**
**'मंगत' ऐसी गत मिली, भेद भरम दुःख जाईं॥ 406**

बचन गुरु में जीवन जीये। सत परतीत परम पद लीये॥
पल पल गुरु की सीख विचारे। भव दुस्तर से उतरे पारे॥
अपनी हिक़मत सयानफ़ छोड़े। गुर के बचन संग प्रीती जोड़े॥
आचार विचार जो गुर समझाई। तन मन से नित करे कमाई॥
गुर की उस्तत रहनी गुरु देखे। गुर के बचन करे जीवन लेखे॥
इक परमेश्वर की सिफ़त कमाये। सतगुर साचा ज्यों बतलाये॥
बादमुबाद कदूरत त्यागे। साचे करम में उठके जागे॥
अपनी ग़फ़लत पाप को खोवे। गुर सिखया साबन ले धोवे॥
पूरे गुर की सेव कमाये। ज्यों ज्यों सेवे त्यों दुःख जाये॥
साचा बचन जो गुर समझाई। मन बच करम तिस प्रीत कमाई॥
बेमुख जीवन अंतर से छोड़ो। गुरमुख जीवन प्रभ चरनी जोड़ो॥
गुर उपकार सब बन्धन नासे। सो सिख साचा गुरु रूप परगासे॥
सतनाम धन हिरदे में धारी। साची भगत पाई पार मुरारी॥
सत सरूप का लेख लखाई। अपने घट में नित दर्शन पाई॥
वस्त अगोचर घर परगट होई। पूरे गुर की सिखया चित जोई॥
पाप कपट सब खेद निसाई। परउपकारी जीवन को पाई॥
वैर विकार से छूटन पाये। मुकन्द सरूप यश हिरदे आये॥
सरब पदारथ का सुख पाई। सतनाम की उस्तत गाई॥
मानुष जनम का लाभ कमायो। सत सिखया सत करनी पायो॥

**मारग साचे धरम का, पायो पूरन रीत।**
**'मंगत' औगन सब गये, रख गुर चरन परीत॥ 407**

साचा उद्दम रक्खे मन माईं। सत करम नित हिरदे ध्याईं॥
साचे नाम में दृढ़ रखे परतीत। पाप विनास होवे निर्मल चीत॥
आहार ब्यौहार की सोझी आए। आपा पर का हक़ दिखलाये॥

उठ परभाती सतनाम कमाये। सत अरदास हिरदे में ध्याये॥
पाप कुपथ से मनुआँ ठाके। अंतरयामी की प्रीत चित चाखे॥
अबगत नाम जो गुर उपदेशे। अन्तर ध्याये सब तजे संदेशे॥
कारन करता सब सुख दाता। नित नित सिमरे पुरख बिधाता॥
साचा मित्तर तीन काल संग बासी। नित ध्यायो प्रभ अज अबनासी॥
सरब कला जो समरथ धारी। निर्मल प्रीत से तिसे चितारी॥
अकाल सरूप जो नित आनन्दा। अंतर ध्याओ धर विरत अखण्डा॥
नित निर्वान ब्रह्म सरूप। पल पल ध्याओ सो शकत अनूप॥
परम अधिकार ये सुखकारी। भज गोपाल अपरम अपारी॥
हिरदे नाम और सत विचार। सरब जीवों संग कीजे उपकार॥
मान मध सब दुबधा खोई। निर्मल प्रीत इक चरन परोई॥
उट्ठत बैठत इक नाम निहारे। आज्ञा साहब चित अंतर धारे॥
गरब त्याग होवे निरमानी। साची भगत तिस गुरमुख जानी॥
प्रभ की भगत में प्रेम आगाही। अंतर शबद की सोझी पाई॥
पारब्रह्म चित में परगासी। अमरत पीया तत्त अबनासी॥
सत मारग में नित परबीना। मुकत सरूप भगती रस लीना॥

**पारब्रह्म के ध्यान में, सुरती आये समाये।**
**'मंगत' भगती भेद को, सो ही गुरमुख पाये॥ 408**

अपने मन को नित समझाई। सत ठाकर की प्रीत ध्याई॥
भवजल दुस्तर से उतरे पार। साचा नाम जिस कियो विचार॥
मूढ़पना छोड़ अभिमान। साची भगत हिरदे पहचान॥
असगाह सागर ये जगत पसार। कारन करता भज करतार॥
तेरा जीवन तब ही सुखदाई। सत परतीत प्रभ एक ध्याई॥
साची सीख सुनो चित लाये। बिन हरी सिमरन नित दुःख पाये॥
उस घड़ी की करो पहचान। जब ये काया जले अगन मचान॥
उस घड़ी का करो विचार। जब त्यागें देही घर बार॥
उस पलक का करो ध्यान। जब निवास करें शमशान॥
वक्त आख़ीर मन माहीं विचार। जब नर छोड़ें भरे अम्बार॥

अन्तकाल की करो तयारी। कोई न संगी उस घड़ी विचारी॥
जब देह छूटी क्या गत होई। करो विचार जीवन ना खोई॥
काल कराल जब आन पुकारे। कौन सहायक होवे सुखकारे॥
जमकाल जब शासना देवे। कौन छुड़ाये मुगदर जब सहवे॥
अती भयानक गरभ की जूनी। उल्टा लटके करम भगूनी॥
कोई ना साथी उस रोज़ का होई। जब जमराज सिर आन खलोई॥
सकली वस्त होई बेगानी। चला निरासा जग से प्रानी॥
नाती सुत दारा परिवार। महल मण्डप द्रब्य अपार॥
हुकम हुकाम तजी जागीर। विच मुसाफ़त भयो दिलगीर॥

**सब जग माया चक्कर में, तीन काल भरमाये।**
**'मंगत' उभरे सो गुनी, जो प्रभ चरन ध्याये॥ 409**

रे गुनियाँ तूँ कर विचार। इस्थिर रहना नहीं संसार॥
भेद कलपना मन से त्याग। निश्चे चलना छोड़ रंग राग॥
साचे शबद का राग विचार। उतरें भव सिन्धू से पार॥
शबद अमोलक रतन चित राख। करें पुकार गुनी मुनी साख॥
मन की तृखा तब ही नर जाई। साचा नाम चित लयो कमाई॥
नाम की औखद विगुन निवारे। शास्तर सिमरत करें पुकारे॥
बिन हरी भगत मुकत ना कोई। करें विचार जेता दुःख होई॥
गोबिन्द सिमर तूँ जाग सवेरा। मानुष जनम अमोलक फेरा॥
मात पिता पितामह नासे। जो जनमे तिस काल गिरासे॥
साचा नाम कमाओ नीत। हिरदे राखो साची प्रीत॥
नाम की रसना मन तृपताये। भयो कदारथ जनम अगाहे॥
नित नित नाम साहब का गाओ। निश्चल ध्यान से प्रीत लगाओ॥
जरा मरन सब भय निवारी। भज गोपाल होवे छुटकारी॥
निर्मल नाम सिमर सुखदाई। सन्त वेद नित कीरत गाई॥
अगोचर पुरष प्रेम की खानी। तिसका सिमरन हिये पहचानी॥
शबद ख़ज़ाना तेरी मीरास। अनखुट रहे नहीं पावे घाट॥
शबद विचार विचारे जोई। नित आनन्द बिपता सब खोई॥

ऐसा शबद मन नित कमाओ। दुबधा दूर मंगल चित पाओ॥
अबगत पुरख नित सुखरूप। तिसका साधन मुकत अनूप॥

**एक नाम को सिमरिये, मन चित प्रीत लगाये।**
**'मंगत' ये धन सार है, तीन काल सुखदाये॥ 410**

अबगत शबद जिस घट परगासा। तृपत भयो सब मिटी प्यासा॥
शबद सार जिस जन ने गाई। नित आनन्द मंगल को पाई॥
शबद अखण्ड अभयगत धारी। तिस शबद का हो पुजारी॥
सकल पदारथ साहिब दर पाये। दीन ग़रीबी जब पाई रज़ाये॥
सब कुटलाई मन की नासी। सत द्वार की लीनी दासी॥
आदी अन्ती जग दुःख का मूल। राम विसार करी बड़ी भूल॥
अमरत छोड़ बिख को नित खाई। अगन तृष्ना भयो अधिकाई॥
जीवन त्यागियो बिख भोग के माईं। घनी घनेर सिर बिपता आईं॥
सतगुर साध की नहीं सीख सुहाई। मन मानी सब करी कमाई॥
मान घमण्ड में फिरे दिन राती। साची संगत नहीं हिरदे जाती॥
जो कुछ किया सो बुरा कमाल। अन्तकाल होवे बुरा अहवाल॥
अब कुछ अपना लयो सँवार। जो बिगड़ी तिस करो विचार॥
बड़ी चतुराई नर कर पहचान। अन्त को होवे सुख परमान॥
बड़ी चतुराई ये ही कमाल। साचे नाम की घालें घाल॥
बड़ी चतुराई ये सुख रास। मिथ्या छोड़ पावें अबनास॥
बड़ी चतुराई तूँ ऐसी धार। जीत लेवें तूँ जम दरबार॥
बड़ी चतुराई तूँ ऐसी सीख। साचे नाम की लेवें भीख॥
बड़ी चतुराई नित खेलो दाओ। आप त्याग साहब को पाओ॥
बड़ी चतुराई धारो ये जुगत। शबद समागम परसें मुकत॥

**सो ही चतुर सुजान है, जो दुर्मत मूँड मुँडाये।**
**'मंगत' तिसकी सीख से, तीन लोक सुख पाये॥ 411**

साचा जीवन जग में पाओ। मिल सतसंग हरी नाम कमाओ॥
हर का नाम परम धन सार। सतपुरषों ने करी पुकार॥
एको नाम की औखद खाओ। जनम मरन सब रोग वँजाओ॥

एको नाम का हो भरवासी। आवागवन मिटे चौरासी॥
एको नाम अमोलक ध्याओ। जग आवन की क़ीमत पाओ॥
एको नाम मन माहीं कमाओ। तीन लोक की सोझी पाओ॥
एको नाम सब ज्ञान का मूल। रह्यो परकाश सूक्षम अस्थूल॥
एको नाम वेद परगासे। साधू सन्त करें अरदासे॥
एको नाम अखंड रस मीता। जो जो खाये परसन्न चित लीता॥
एको नाम काल से न्यारा। जो जन सिमरे पाये उद्धारा॥
एको नाम की अकथ कहानी। विरले गुरमुख करी पहचानी॥
एको नाम रिद्ध सिद्ध दाता। दृढ़ विश्वास जिस हिरदे जाता॥
एको नाम बुद्ध उज्जल कीजे। भाओ प्रीत से जो जन सीजे॥
एको नाम सरब आधारी। जो जन सिमरे तिस विरत न्यारी॥
एको नाम प्रेम का सागर। जो जन सिमरे होये विरत इकागर॥
एको नाम काल करम से न्यारा। गुरमुख सेवे जुग जुग सारा॥
एको नाम निर्बन्ध समाई। जो जन सिमरे मुकत रस पाई॥
एको नाम सब साधन सार। जो जो साधे पाये भगत अपार॥
एको नाम अचिन्त घर बासी। नाम जपे तब पाये ख़ुलासी॥

**साचा नाम प्रभ सिमरियो, ये ही अखुट भंडार।**
**'मंगत' जुग जुग भोगिये, राई घटे नहीं सार॥ 412**

नाम की महमा जिस मन समाई। परम ज्ञानी सतपुरष कहलाई॥
मिथ्या कलपना मन नित भोगे। कलप कलप आवे देह रोगे॥
नाम रूप गुन करम विकारा। मन भोगे नित यही पसारा॥
अनक नाम रूप को धारी। गुन करम विचार कलप अंधकारी॥
अपना किया परतख कर देखे। इच्छया भोग का करे नित लेखे॥
गुन की इच्छया में नित ग़लताना। अनक जतन तदबीर लखाना॥
अन्ध विचार अन्धकार में डाले। कोट जनम ये घालन घाले॥
ना भ्रम छूटे बानी विकारा। मिथ्या कलप में नित दुखधारा॥
नाम रूप ना जाये विखादा। भांत भांत का रचे परमादा॥
अपनी करनी भई दुःख खानी। आवे जावे गरभ निशानी॥
नाम रूप का भुगता होई। नित ही भरमें गवन ना खोई॥

जब सतनाम का भेद लखाया। करम त्याग निहकरम समाया॥
साचा नाम जीवन चित धारे। जायें विखाद निज धाम पधारे॥
मिथ्या नाम रूप को त्यागी। साचे नाम में प्रीती जागी॥
सकली मैल मन की धोई। जब सतनाम की लड़ी परोई॥
सत को सेवे असत भ्रम जाये। सत परकाश मन आये समाये॥
सत मारग को नित विचारे। साचे नाम को अन्तर धारे॥
अन्धकार सब मन का जाये। सत परकाश सतनाम लखाये॥
शान्त परापत संशे सब नासी। सत सरूप भयो परगासी॥

**जैसी चितवन मन करे, ऐसे रूप को पाये।**
**'मंगत' जिन सत सेविया, सो सत परकाश समाये॥ 413**

जिस घट सतनाम परगासा। जनम मरन सब हरी तरासा॥
अमोलक शकत नाम परकासी। अन्धकार सब मन का नासी॥
रोम रोम घट चानन होई। अखण्ड सरूप सतनाम परोई॥
सब पुरषारथ पूरन पाया। सरब अर्थ सतनाम कमाया॥
सरब जुगत भई सुखदाई। सतनाम घर सम्पत पाई॥
पूरन योग की दशा पहचानी। सत परकाश परस सुखदानी॥
पूरन किरया मन आन समाई। सरब गत रूप प्रभ चरन ध्याई॥
आद अन्त सब काल भरम नासा। सतनाम आतम परगासा॥
जप तप में मन पूरन पायो। साचा नाम अखण्ड प्रीत से ध्यायो॥
खल बुद्धी में चानन आया। सतसरूप परकाश लखाया॥
सकल जगत का खेल विनासा। केवल नाम रह्यो परकासा॥
सब ही खेल खिलाड़ी खेल। एक बीज की सब ये बेल॥
सब ही रंग इक रंग समाये। निहरंग रूप नहीं नाश को पाये॥
सकल तमाशा बाज़ीगर खेले। खैंच तमाशा रह्यो आप अकेले॥
नीर माहीं ज्यों कुम्भ बहु रूपा। कुम्भ विनास भयो नीर सरूपा॥
बीज माहीं ज्यों बरिच्छ विस्तारी। बरिच्छ विनास भयो बीज अगाढ़ी॥
सतनाम से भयो पसारा। नाम रूप गुन करम आकारा॥
ऐसा भेद नित करो विचार। साचा नाम केवल जग सार॥

नाम रूप जब दुबधा नासी। सतनाम केवल परगासी॥

**नाम रूप की कल्पना, मिथ्या जीव को रोग।**
**'मंगत' पाये तब शान्ती, जब सतनाम संजोग॥ 414**

पूरन साधन तब नर होई। केवल नाम जब चित परोई॥
अखण्ड प्रीत जब नाम कमाई। आवन जावन से भई रिहाई॥
एको नाम का मन विश्वासी। पूर करम तब जोत परगासी॥
उट्ठत बैठत सोवत ध्याये। खावत पीवत में प्रीत कमाये॥
करम करे अन्तर चित नामा। ऐसी रहनी देवे बिसरामा॥
निमख निमख प्रभ नाम कमाये। मिथ्या रोग भरम सब जाये॥
अन्तर बाहर इक नाम पहचानी। परविरत निरविरत गत योग लखानी॥
उत्तर दक्खन पूरब दिशाई। पच्छम देखे इक नाम वडयाई॥
अपना जीवन इक नाम में धारे। ज्यों जल मीन प्रीत विचारे॥
अनन प्रीत जब नाम की पाई। सत परकाश घर माहीं लखाई॥
नाम सिमर मन दूत को हरया। पारगरामी प्रभ नज़री पड़या॥
अधिक प्रीत प्रभ चरन लखाई। जनम मरन देह रोग सब जाई॥
शास्त्र सिमरत की धार पहचानी। गुनी ज्ञानी की गती लखानी॥
उतपत परलय का भेद विचारी। जब सतनाम सोभा घर धारी॥
गुर की सिखया भई फलदाई। आचार विचार भयो सुखदाई॥
पाप पुन्न से भई छुटकारी। दृढ़ विश्वास जब नाम विचारी॥
साधु संत का मारग पेखा। सन्यास त्याग अन्तर में देखा॥
सरब सिद्धी तत्त रूप लखाया। अजर अमर शबद घर पाया॥
जब गम्भीरी मन आन समाई। राग द्वेष गई भ्रम काई॥

**अमरत नाम ध्यान में, मनसा पूरन होये।**
**'मंगत' जाये सब दूषना, निज रूप में जाये बसोये॥ 415**

नित नित हर का नाम कमाओ। सुरत निरत का खेलो दाओ॥
सो खिलाड़ी सुघड़ सयाना। नरद पक्की जिस शबद पहचाना॥
स्वास सुरत की तार लखाई। सतनाम की चोट लगाई॥
काल करम की काटी फाँस। अमरत नाम में लीना वास॥

भूक प्यास व्याधी जाये। अमरत नाम का भोजन पाये॥
काम क्रोध मन दुरमत नासी। सत सील अन्तर परगासी॥
आपा पर का भेद मिटाई। एको नाम सरब दरसाई॥
जनम मरन का भय सब नासे। सतनाम में कियो निवासे॥
करम फल इच्छया गयो विकारा। निर्द्वन्द शबद अंतर चित धारा॥
देह के भोग से जीव छुटाया। उपरस शबद अन्तर पाया॥
मान गुमान की मिटी ख़ुमारी। निर्मान सरूप शबद को धारी॥
सब जीवों संग हेत पछाता। एको नाम रमत रँगराता॥
अपने में मन आप समाई। जीवन रूप मारग को पाई॥
पापकरम की मिटी निशानी। साचो शबद प्रभ एक पहचानी॥
साचे नाम की अधिक प्यासा। नाम सिमर पाये पद अबनासा॥
ऐसा नाम कमावे जो ही। ताँके चरन चित प्रेम से धोई॥
नित बलिहारी हरजन के चरने। साची प्रीत इक नाम सिमरने॥
ध्याओ ध्याओ इक नाम मुरारी। नाम केवल सुखसार विचारी॥
नाम बिना सकली पत नासी। नाम विसार जीया फिरे चौरासी॥

**सत सम्पत के कारने, जतन करो दिन रात।**
**'मंगत' बसेरा दो घड़ी, उठ चलना परभात॥ 416**

## महमाँ सत् विवेक

अपने जनम का करो विचार। मानुष देह जग दुर्लभ सार॥
सब जीवों में तिसकी वडयाई। सत विवेक तिसमें अधिकाई॥
विवेक हीन जो मानुष होई। पशू समान जीवन सो खोई॥
सत विवेक ये ही परधान। साचे धरम की आवे पहचान॥
सत विवेक ये जीवन सार। हिरदे आवे सतनाम निरंकार॥
सत विवेक ये ही सुखरास। पर उपकार में होये निवास॥
सत विवेक अमरत की खान। सत मारग का मिले निधान॥
सत विवेक अधिक परकास। पाप कुपथ का कीजे नास॥
सत विवेकी सत गती को पाये। सुफल देही धर सै जन आये॥
सत विवेक साहब परगास। विवेकी खोजे तत्त अबनाश॥
सत विवेक तब पूरन होई। साचे नाम में विरत समोई॥
नींद त्याग उठ काल विचार। सत सरूप खोजो जग सार॥

घड़ी घड़ी काया बिनसाए। समाँ गया फिर हाथ न आए॥
सुकरत घड़ी सो ही परवान। साचा नाम मन प्रीत पहचान॥
अजूँ ना बिगड़ा तेरा कुच्छ। सिमरो नाम मन हरो कुपत्थ॥
मुख कथनी नर छोड़ विखाद। हिरदे अन्तर करो प्रभ याद॥
औराँ उपदेश देवन का छोड़। अपने मन का तूँ पाप नचोड़॥
अपनी ख़ुलासी की साध तदबीर। वक़्त गँवाये रोयें आख़ीर॥
साचा नाम तूँ जप करतार। मानुष जनम का ये फल सार॥

**मानुष देह को धार के, सत मारग को घाल।**
**'मंगत' जतन सुखदाई ये, जीवन करे निहाल॥ 417**

प्रभ अपने की चरनी लाग। साचे रूप संग कर अनुराग॥
प्रभ की भगत निषकामता देवे। निर्मान भाओ गत अन्तर सेवे॥
सब विषयों से पाये उदासी। निहचल चित जप नाम अबनासी॥
सतपुरषों ने कथा बखानी। एक नाम सरब गुन खानी॥
दिवस रैन में करो कमाई। अर्थ जीवन का लियो नर पाई॥
ये करनी सब बंधन तोड़े। परमगती सतधाम को फोड़े॥
सत करनी नित मन में धारो। सत करनी कीजे निस्तारो॥
साचे साहब की बंदना कीजो। सत परतीत अभयपद लीजो॥
जो जो नाम साहब का गाये। बन्ध ख़ुलासी मुकत चित पाये॥
मिल संगत हरी कीरत गाओ। साहब वडयाई पल पल ध्याओ॥
दृढ़ नीयम ये अन्तर धारो। प्रभात सन्ध्या हरीचरन चितारो॥
शुद्ध ब्यौहार की नीती पाओ। सत-सेवा मन करम कमाओ॥
सब जीवों से प्रीती राखो। पर दुःख हरना सत कारज भाखो॥
एक साहब का रखो भरोसा। सत करम जग जीवन तोसा॥
पूरन सतगुर की सिखया मानो। आज्ञाकारी पद पहचानो॥
पाप करम से बुद्धी फेरो। साची प्रीत हर चरनी केरो॥
सकले करम प्रभ भाने छोड़ो। दीन ग़रीबी रसना चित जोड़ो॥
सरब हितकारी जीवन धारो। मुकत मारग ये सुन अपारो॥
करम करे निहकरमत सूझे। सत साधन के सार को बूझे॥

**निर्बन्ध जीवन तब मिले, जब सत करम कमाये।**
**'मंगत' अर्थ त्याग के, प्रभ भावी चित लाये॥ 418**

साचा मारग धरम का ये ही। सत करम में धारो देही॥
आपामत दुर्मत को त्यागो। पूरे गुर की चरनी लागो॥
दुष्ट वासना का करो निवार। आज्ञा प्रभ की हिरदे धार॥
पल पल नाम साहब का गायो। सब जीवों से प्रीत कमायो॥
सबसे नीच आप पहचानो। कारन करते की प्रीत चित ठानो॥
अंतरगत नित नाम कमाओ। सुरत इकागर शबद रस पाओ॥
खेम कुशल सत शबद ध्याओ। दुर्गम जग से मुकत को पाओ॥
सब करमों से भुगतापन त्यागो। दृढ़ परतीत प्रभ रूप में जागो॥
सत करम में प्रीत लगाओ। अर्थ त्याग के सेव कमाओ॥
तन मन धन साहब का देखो। सकली प्रभता तिस चरनी लेखो॥
चाम शरीर के गरब को छोड़ो। सत परकाश आतम चित जोड़ो॥
छिन छिन मन की मैल उतारो। अनन प्रीत प्रभ चरन चितारो॥
औगुनकारी मन को बाँधो। साचे मारग को अंतर साँधो॥
सतपुरषों के इतिहास बिचारो। साची कीरत हिरदे धारो॥
बादमुबाद का खेद नहीं चाखो। निर्मल प्रीत इक नाम में राखो॥
दया गरीबी का भोजन खाओ। अभिमान त्याग के नित तृपताओ॥
एक भरोसा साहब का राखो। पल पल प्रेम की रसना चाखो॥
औगन मन के नित विचारो। अपनी दूषना नित नित टारो॥
भवमारग का सुन परमाना। सत को साधन मुकत निधाना॥

**सत कथिये सत सुनिये, सत पाइये विश्वास।**
**'मंगत' साधन जो करे, पाये निर्बन्ध रूप परगास॥ 419**

सतनाम का सिमरना, सत साधू का संग।
सत सेवा चित धारना, जीवन करे निषंग॥

**सतसंगत भरम को हरे, निर्मल मिले विवेक।**
**'मंगत' साधन सार ये, विसरो घड़ी ना एक॥ 420**

## दूसरा प्रसंग - समतत्त विचार

सत करनी से मन निर्मल होये। सत विश्वास हरी चरन में जोये॥
जब विश्वास प्रभ चरन में पाया। भगती प्रेम का लेख लखाया॥
पूरन भगती जब हिरदे समाई। समतत्त ज्ञान की लखी प्रभताई॥
समतत्त ज्ञान पाये आनन्दा। मुकत भयो काटे जमफन्दा॥
त्रैगुन माया का बीज विनासी। समतत्त ज्ञान परम सुखरासी॥
समता सार अमरत खाये। द्वन्द विकार जीव का जाये॥
समता रस जो जन पीवे। पूरन चित भरम सब खीवे॥
समतत्त योग सब मैल गँवाये। चेतन संग मिल चेतन गत पाये॥
समता ज्ञान मूल ठिकाना। सब जग ऊहां जाये समाना॥
समता ज्ञान अनाद सरूपा। जरा मरन नहीं व्यापे कूपा॥
समता ज्ञान आनन्द की धारा। जो जन परसे हरे दुःख सारा॥
समता ज्ञान निहकरम सरूप। बिस्मे बिस्माद तत्त अनूप॥
समता ज्ञान नित निर्वानी। आवागवन वहाँ नहीं निशानी॥
समता ज्ञान सरब आधार। समपद बूझे पावे निस्तार॥
समता ज्ञान ये ब्रह्म सरूप। अच्छर अबगत शकत सुखरूप॥
समता ज्ञान सब जीवों की जान। शबद सरूप पसरे सब थान॥
समता ज्ञान अकथ कहानी। जो जन परसे पाये निधानी॥
समता ज्ञान धरम का रूप। ऊँच नीच की हरे सब कूप॥
समता ज्ञान केवल निज आप। सम सरूप जल थल व्याप॥

**समता ज्ञान आद से आदी, बिस्माद सरूप समाये।**
**'मंगत' ये ही परमगत, जो सकले ताप मिटाये॥ 421**

समता ज्ञान उपरस धाम। गवन त्याग ले जीव बिसराम॥
समता ज्ञान अखण्ड सरूप। जुग जुग विचरे एके रूप॥
समता ज्ञान काल करम से न्यार। अपने आप में कियो पसार॥
समता ज्ञान अदभुत परगास। द्वैत अन्धकार नहीं करे व्याप॥
समता ज्ञान नित आप का भोगी। द्वैत भरम नहीं होवे संजोगी॥
समता ज्ञान सब शक्ति आधार। अनाशक्त नित रूप आपार॥
समता ज्ञान सब जग का बिन्ध। परगट करे पिण्ड ब्रह्मण्ड॥

समता ज्ञान बुद्ध निस्चल कीजे। दृढ़ निस्चे जो भाओ को पीजे॥
समता ज्ञान पुन्न पाप से न्यारा। नित निहकरम रूप निर्धारा॥
समता ज्ञान अकथनी बाट। तिस का लेख ना लिखने पात॥
समता ज्ञान सतमारग सार। सम चित रूप का मिले विचार॥
समता ज्ञान अतुल परमानी। घटघट व्यापे आनन्द की खानी॥
समता ज्ञान ये परम विवेक। संशे पाप विनासे अनेक॥
समता ज्ञान ये सिद्धता पूरी। सम परकाश प्रभ आप हज़ूरी॥
समता ज्ञान मन दूत ठहराये। इच्छया चिन्ता रोग वँजाये॥
समता ज्ञान ये दिव्य दृष्टी। सकल विनासे आकार की विरती॥
समता ज्ञान ये भगती भरतार। जल थल नज़री आवे निरंकार॥
समता ज्ञान ये ताप निवारी। निर्बन्ध शबद की चढ़ी खुमारी॥
समता ज्ञान ये अत निर्मायल। कल्पना द्वैत का कीजे घायल॥

**सम भाओ मन सोधिये, ये ही प्रेम का रंग।**
**'मंगत' जो विचरे तिस जुगत में, करे काल का भंग॥ 422**

समता ज्ञान जीव अल्पगता नासे। ब्रह्म सरूप सर्वज्ञ परकासे॥
दुष्ट विकार जो जीव में आई। करम का कर्ता आप कहलाई॥
इच्छया करम में जो नित दु:ख पाये। समता ज्ञान ये रोग मिटाये॥
नित का नित जो रूप है आप। समता ज्ञान से लखा परताप॥
अनवरचित माया छाया सब नासी। सम परकाश पायो अबनासी॥
सब सिद्धों की सिद्धता पूरी। समदृष्ट पाये शबद हज़ूरी॥
नित लवलीन निज रूप में रहाई। समता ज्ञान के रस को खाई॥
समता रस को जिस पान करीना। सकल विखाद कियो तिस छीना॥
समरस सार कोई गुरमुख पाये। देवन देव तिसे सीस निवाये॥
समता ज्ञान सब ताप को नासे। आनन्द सरूप हो घट परगासे॥
हंग विकार तब बुद्ध से जाई। समता भाओ की करे कमाई॥
अती विकार जो मन नित धारी। समतत्त सोधे पाये निस्तारी॥
योग जप तप सब का फल ये ही। समता दृष्ट पाये ज्ञान सनेही॥
करम फल इच्छया जग बन्धन भारी। नित नित काटे ले ज्ञान कटारी॥

दुस्तर मन की विरती तोड़े। समता ज्ञान हर चरनी जोड़े॥
भाओ भगत शरधा चित बासी। समता ज्ञान अन्तर परगासी॥
निश्चल ध्यान प्रभ चरन समाई। समतत्त पूज्य परम सुखदाई॥
आवन जावन सब भरमन नासी। आतम जोत घट में परगासी॥
समता ज्ञान में मर जीवा होई। रूप ब्रह्म निज आप लखोई॥

**शस्तर पकड़ ज्ञान का, जीत लयो संग्राम।**
**'मंगत' मन तब मानया, पाये गया बिसराम॥ 423**

पूरन योग सो ही परधान। समचित भाओ में होये ग़लतान॥
साधन किरया सब पूरन होई। समभाओ जब ज्ञान परोई॥
चंचल मन तब निश्चल रहाये। समरस पीवे शबद सुखदाये॥
अंधकार सब मन का नासी। सम परकाश शबद परकासी॥
धारा सूक्षम ज्ञान की भारी। विरला गुरमुख पाये विचारी॥
एक निश्चय प्रभ चरन समाई। समता ज्ञान मिले सुखदाई॥
अन्तरगत जिस सोझी होई। समता ज्ञान ले तार परोई॥
अपने मन की करी निगरानी। समता योग शबद पहचानी॥
एक विरत मन इकागर होई। समता रस तब परगट होई॥
पलक पलक प्रभ नाम चितारे। समता रस तब पाये सुखकारे॥
सत विश्वास प्रभ में पाया। समरस जीवन रूप लखाया॥
एक ओट आस इक धारी। समता ज्ञान की चढ़ी ख़ुमारी॥
सकल विकार से बुद्ध निर्मल होई। सम परकाश में जाए समोई॥
बादमुबाद देही अभिमाना। तिनको त्याग समभाओ पहचाना॥
सब विषयों से विरक्ता होई। समरस शबद तब पान करोई॥
आपा पर का जब भेद मिटाई। सम रसना तब अंतर आई॥
दु:ख सुख दोनों जब मन से त्यागी। समता सार तब पाये अनुरागी॥
वैरी मित्तर इक रूप दिखाई। समता ज्ञान पावे प्रभताई॥
लाभ और हान इक चित पेखी। समता ज्ञान तब पाए विवेकी॥

**द्वन्द विकार जब मिटे, पाए जीव कल्यान।**
**'मंगत' समता ज्ञान ये, विरला करे पहचान॥ 424**

उस्तत निन्दिया एक समानी। कंचन माटी एक पहचानी॥
बिख अमरत इक रूप दिखाए। मरना जीना इक भेद में आये॥
एक अनेक को एक में देखे। ग्रहन त्याग नहीं अन्तर पेखे॥
करम वासना जब संकट नासी। समता ज्ञान तब भयो परगासी॥
हस्ती तृन में एक दिखाई। भला बुरा इक रूप चिताई॥
ज्ञानी मूरख संग एक परीती। समता ज्ञान की तब पाई नीती॥
सब जीवों का होये हितकारी। सब में देखे एक रूप मुरारी॥
काहू संग लिपत ना होई। निरलेप ज्ञान समता रस सोई॥
निष्काम करम चित अन्तर धारी। पर-दुःख हरना कार विचारी॥
दोख रहित जो सेवा धारी। समरस ज्ञान सो ही उपकारी॥
करम विकार से मन कियो न्यारा। अन्तरगत इक शबद विचारा॥
इन्द्री विखाद में न भरमाई। समता ज्ञान में लीन समाई॥
पूरन विरती प्रभ चरन को सेवी। पलक ना विसरे सो परम सुख देवी॥
एक प्रेम जब हर में पाई। समता ज्ञान तब परगट ध्याई॥
चंचल मन को पिंगल जब कीनी। मैं मेरी की दुबधा छीनी॥
सत परकाश जब एक दिखाई। समता ज्ञान की तब पाये प्रभताई॥
नौ द्वार की भरमन छोड़ी। दसवें प्रीत गुर जुगता जोड़ी॥
सत सरूप परगट घर पाई। समता ज्ञान ब्रह्म जोत दिखाई॥
राग द्वेष की मनसा नासी। समता ज्ञान तब भयो परगासी॥

**अन्तर बाहर की कल्पना, सभी मिटाये रोग।**
**'मंगत' समता ज्ञान ये, पाइये गुर संजोग॥ 425**

करम फल इच्छया में जीव भरमाई। धार मनोरथ आवे जाई॥
अपनी कलपना आप बँधाई। फिर फिर गरभ जून को पाई॥
ना बंधन नासे ना पाये खुशहाली। आवागवन धारे करम की जाली॥
जुगजुग भरमे शान्त नहीं पाई। ऊँच नीच जूनी भरमाई॥
पाप पुन्न जो नित विचारी। पल पल कीजे जीव जो कारी॥
तिसका फल बहु रूप धर भोगी। फिरे चौरासी करम संजोगी॥
अधिक बिपता में नित रहाई। छाया प्रीत परम दुःखदाई॥

मानुष देही मुकत की धारा। जो चित आवे तत्त ज्ञान विचारा॥
सत विचार जब हिरदे पाई। करनी शुद्ध मन आन समाई॥
निर्मल करनी जब नित उठ कीनी। भगती प्रेम तब अन्तर चीनी॥
देह विनास आतम सत भासी। उपजे बिरह परम सुखरासी॥
साची बिरह जब अनुराग उपजायो। पूरे गुर की शरनी आयो॥
अपने अन्तर का सब ताप मिटाई। साची सीख मन आन समाई॥
सब विनास जो देखन आवे। कालसरूप सब खेल लखावे॥
सबके अंतर इक शकत समाई। तिसका सिमरन गुर दियो दिखलाई॥
ज्यों ज्यों सिमरे प्रभ अंतरयामी। मिटे ग़ुबार पावे बिसरामी॥
भली कमाई मन को नित धोई। साची जुगत सच नाम परोई॥
अधिक प्रीती जब नाम में धारी। अंतरगत सत शबद विचारी॥
शबद में सुरती नित प्रेम से जोड़ी। समता ज्ञान तब सार निचोड़ी॥

**एक प्रीती साहब की, दूजी विसरी आस।**
**'मंगत' समता ज्ञान में, कोई गुरमुख करे निवास॥ 426**

समता ज्ञान परम पद ये ही। गुरमुख ज्ञानी पावें सनेही॥
पल पल प्रभ की कीरत गायें। दीन ग़रीबी मारग पायें॥
देह अभिमान मैल को धोई। साची प्रीत इक चरन परोई॥
आस त्याग मन भये निरासी। आज्ञा प्रभ में नित निवासी॥
निर्देह पुरष देह अंतर जानी। अकथ कथे नित तिसकी कहानी॥
नित आनन्द सरूप ध्याई। करम मैल पल पल उतराई॥
मिल सतसंग सत सेवा धारी। सब जीवों संग प्रीत विचारी॥
नाश रूप काया नित देखी। अवनाशी तत्त्व घट शबद को लेखी॥
नित नित सत की प्रीत कमाई। आज्ञा प्रभ में नित वरताई॥
इच्छया ममता ग़ुबार को नासी। एक साहब चित चरन निवासी॥
निमख निमख मन नाम कमाई। मन पवन की जुगत लखाई॥
दासाभाओ जब चित समाई। अधिक प्रेम सतरूप का पाई॥
खुले कपाट घर चानन होई। अपरम अपार गत लेख लखोई॥
साचे रूप में निहचलता धारी। समता ज्ञान रस खायो अपारी॥

नित ही राखूँ प्रभ चरन की सेवा। पल पल ध्याऊँ सो अबगत देवा॥
निर्मल मन नित शबद रस पीये। देह त्याग निरदेह हो जीये॥
समता ज्ञान घट घट परगासी। सरब जतन भयो सुखरासी॥
अपने रूप का भेद लखायो। अपना आनन्द आपे पायो॥
बंधन छूटा निरबन्ध पद पाई। समता ज्ञान घट घट समाई॥

**ज्ञान की रसना चाख के, मनुआँ भयो परसन्न।**
**'मंगत' समरस ज्ञान का, निरमल पायो धन॥ 427**

समता ज्ञान की ऊँच श्रेनी। वेद कतेब बहु महमा कथीनी॥
निहचल परगास तत्त समता जान। पूरन चित विरत निरवान॥
ब्रह्मा बिषन महेशर होये। समता ज्ञान की सार परोये॥
सिद्ध रखीशर तपी तप धारी। समता तत्त का भये पुजारी॥
पंडत ज्ञानी कवी कवीशर। समता तत्त को गायें मन भीतर॥
जो कोई अपनी दुबधा त्यागे। सम्मत ज्ञान में रहे नित लागे॥
जो कोई अमरलोक को धाई। समतत्त रूप की रसना गाई॥
जो कोई जनम मरन निवारी। सम सरूप का होये पुजारी॥
जो कोई मन की प्रसनता माँगे। समचित रूप अंतर में राँधे॥
समता ज्ञान अत सूक्षम धार। परम पुरख कोई करे विचार॥
एक प्रभ जब केवल चित राखी। समता ज्ञान की परखे साखी॥
एक परमेश्वर सब में दिखलाई। समता ज्ञान ये ही सुखदाई॥
नित नित आतम तत्त को खोज। सम विरत की पावें मौज॥
सब जीवों पर कर उपकार। आपा त्याग पावें सुखसार॥
देह अभिमान अन्तर से त्याग। सब घट एक देख अनुराग॥
पाप कुपथ मनमुखता छोड़। गुरमुख जीवन अन्तर में जोड़॥
वैर बख़ीली तज घनी उपाध। एक परीती सब संग साध॥
अपने पाप को नित पहचानो। पर की कीरत हिरदे आनो॥
सब जीवों की चरनी रज ध्याओ। सम परकाश आतम तब पाओ॥

**सर्वज्ञ रूप पहछानया, पारब्रह्म का एक।**
**'मंगत' तिसमें रम रहे, मिटे भरम की रेख॥ 428**

एक परमेश्वर मन माहीं ध्याओ। नित आनन्द पुरख सुखराओ॥
सरब जुगत शकत का ठाकर। पिण्ड ब्रह्मण्ड को करे उजागर॥
सब में व्यापी अन्तर अलेपा। भज गोपाल पुरख जगदीशा॥
सब जीवों में सो ही समाई। सब का रख्यक आप सहाई॥
हस्ती कीट को सम परगासी। जल थल अन्तर भयो निवासी॥
अस्थावर जंगम रचना को राची। सरब आधार बानी ये साची॥
पूरन पुरख सरब गत गामी। राख परीत चित चरन स्वामी॥
नित नित प्रभ की कीरत गाओ। समरस जीवन तब ज्ञान समाओ॥
परमानन्द प्रभ शबद सरूप। ध्याओ ध्याओ सो ही सुखरूप॥
सब के हिरदे में रहे निवासी। सबकी जुगत को नित परगासी॥
भरमे अन्दर क्यों भटकाये। साचा ठाकर लयो मनाये॥
मन की भरमन अधिक अपारी। सिमरो नाम पाओ छुटकारी॥
इच्छया रोग द्वैत ग़ुबारा। जल जल पड़े जीव अँगयारा॥
जतन अनेक करे दिन राती। भाँतक भाँत रसना को चाखी॥
बिन तत्त ज्ञान नहीं सूझे सार। रूप विसार गरब को धार॥
सतपुरषों ने कथा बखानी। समसरूप सिमरो निरवानी॥
जाँ से उतपत सकल समाजा। ताईं समावें परसें काजा॥
छोड़ ठिकाना नित दु:ख पाये। अनक संदेश में आवे जाये॥
साचा जतन घालो परतीत। सिमरो नाम मुकत की रीत॥

**सत परकाश निज रूप में, रहो सदा ग़लतान।**
**'मंगत' इस्थित सार ये, कटे चौरासी खान॥ 429**

इस्थित ज्ञान जिस जन पाई। परम आनन्द सो गुनी मनाई॥
स्थिर जीवन रूप परगासा। आतम इस्थित में कियो निवासा॥
आवन जावन से पाई रहाई। सत इस्थित सम रूप समाई॥
नित ही नित ये धाम विचारो। करम कल्पना जाए अन्धकारो॥
अपने मन के हरो संदेशा। दृढ़ विश्वास प्रभ चरन परवेशा॥
सत को पूजे सत को ध्याये। सत करतार जप परमगत पाये॥
दुष्ट वासना मिटी अँधेरी। प्रभ की भगत सुख सार घनेरी॥

नित नित भगत में चित रमाई। होवे कुशलता भरम सब जाई॥
सत मारग सत धरम पहछानी। अमरत नाम चेतो निरवानी॥
भवमारग दुस्तर ये घाटी। काल करम की शिखरत बाटी॥
बिना विचार नित शोक समाई। अनमत मूढ़ा नहीं तृपताई॥
मिल सतसंग सत जुगती कमाओ। साचा ठाकर पल पल ध्याओ॥
वाँग आकाश बुद्ध उज्जल होई। सम परकाश सर्वज्ञ परोई॥
रूप रेख आकार त्यागी। निर्गुन रूप में सुरता जागी॥
सत परमेश्वर में निस्चय पाई। अन्तर बाहर एको दरसाई॥
प्रेम का सागर घर परगट पाये। अबगत शबद अपार अथाये॥
उलटी सुरत घर अन्तर आई। प्रेम की रसना में विरत समाई॥
ज्यों ज्यों प्रेम हिरदे परगासी। झूट विकार से पाई खुलासी॥
प्रेम का प्रेम जब सार रहाई। हरजन हर के रूप समाई॥

**साची प्रीत प्रभ सिमर के, पायो प्रभ अनूप।**
**'मंगत' कीटी रूप ज्यों, भयो भरिंग सरूप॥ 430**

जब निज रूप में कियो बिसरामा। समसरूप परस निषकामा॥
सुरत भई निहाल तब मीता। समसरूप प्रभ दर्शन लीता॥
सत पुरषों का जीवन समता। समता खाय के भई परसनता॥
समता समाज हरजन की होई। केवल कथा हर हिये परोई॥
मन इन्द्री के विखाद को त्यागी। समता शबद की रसना लागी॥
नित नित तिसमें सुरत परोई। तब ये काया निर्मल होई॥
चौदस चन्दर सम शान्त परगासी। समता ज्ञान में विरत निवासी॥
समता ज्ञान का नित गुन गायो। साध वेद एह बिध समझायो॥
अभिमान विकार की मैल को धोयो। निर्मान सरूप शबद रस जोयो॥
अखण्ड आनन्द निज रूप का धामा। समता ज्ञान ले पायो बिसरामा॥
बंधन से मन मुक्ता होई। मिल सतसंग सतनाम परोई॥
जब लग प्रान की धार रहाये। जब लग काल गरस नहीं पाये॥
जब लग रोग व्याध नहीं आई। समता ज्ञान खोज सुखदाई॥
मज़हबी बादमुबाद निवारो। साचा मज़हब तत्तज्ञान लखारो॥

आकार सरूप की नहीं ज्ञाई। समता ज्ञान जाँ परकाश समाई॥
पीर पैग़म्बर आये अवतारी। समता ज्ञान के भये पुजारी॥
निर्भय रतन शबद सुखरासी। जो जो सिमरे मिटे चौरासी॥
ज्ञान विचार नित चित परोयो। अन्धमत धार नहीं जनम को खोयो॥
कारन करता जो सब जग का स्वामी। समसरूप सरब बिसरामी॥

**पारब्रह्म के चरन में, दृढ़ राखो विश्वाश।**
**'मंगत' शरधा प्रेम से, होये समता परगास॥ 431**

पारब्रह्म की सेव कमाओ। मिल सतगुर सत कीरत गाओ॥
अजर अमर अबनाशी देवा। पल पल कीजो मन में सेवा॥
आवागवन से रहे न्यारा। भाओ प्रेम से भज करतारा॥
अगम अगोचर जो रहे बिसरामी। सरब व्यापक भज अन्तरयामी॥
जुग जुग एको रसना धारी। सम सरूप भज सो निरंकारी॥
काल करम जाँ नहीं व्यापी। सरब शकत कर नाम प्रभ जापी॥
द्वन्द अन्धकार से रहे न्यारा। रूप निरंजन भज करतारा॥
नाम रूप जग मिथ्या खेला। सतनाम भज शबद अलबेला॥
सकल जीवों का करे उद्धारा। पततपावन भज करतारा॥
अनहोयों को होया बनावे। दीनदयाल लयो पलपल ध्यावे॥
सरब के ऊपर जो किरपालू। किरपा निधान भज दीनदयालू॥
शारद शुरती जाँ का जस गावें। शेष महेश प्रीत कमावें॥
अनन्त सरूप चेतन परगासी। पलपल लयो तिस चरन निवासी॥
आवागवन चौरासी फेरा। सिमर दयाल मिट जाये बखेड़ा॥
राजा रंक की करे रखवारी। सिमर दयाल नित पार मुरारी॥
जल माहीं जो थल परगासे। थल माहीं जो जल विगासे॥
सरब जियाँ को जो नित हरया। पारगरामी भज सुख सरया॥
सूखे तरवर को हरियाई। सूखे सरोवर को भरवाई॥
पाथर माहीं जो जन्त टिकाई। भज परमेश्वर सरब शक्ताई॥

**सरब कला समरथ स्वामी, बारम्बार ध्याओ।**
**'मंगत' बिपता सब मिटे, जिस पल दर्शन पाओ॥ 432**

पूरन पुरख मन माईं ध्याओ। पूर मनोरथ मंगल पाओ॥
सरब शक्ति का सो दातारी। सरब का ज्ञाता सो गुनकारी॥
सब से निकट परापत होई। पलपल तिसका नाम परोई॥
दुबधा दुर्मत भेद को नासी। आसा तृष्ना की काटे फाँसी॥
नित आनन्द रस को सो देवे। रे मन मूढ़ा क्यों ना सेवे॥
बिन्द से जिस पिण्ड परगासा। नाना भाँत विच रचा तमाशा॥
तेज बल सभी चतराई। नित दातार सो नित सहाई॥
राख प्रीत तूँ तिसके चरना। छूट जाये जग जरा और मरना॥
अपरम अपार तेरा रखवारी। अनखुट भंडार का सो भंडारी॥
तिसे त्याग और को ध्याये। डूब गयो भवजल असगाये॥
तिसके चरन की सेव विसारी। जम कंकर लियो सिर पर धारी॥
सत सिखया ना मन में मानी। अकड़ अकड़ चलें धर अभमानी॥
होये निमाना अंत की बारी। राम विसार सिर बिपता भारी॥
लिख तू लेख साचा सुखरासी। घाल मुशक्कत नाम अबनासी॥
टूटक फूटक मन की जाई। सत परताप प्रभ आन समाई॥
सुरत निरत दोऊ इक होई। सत सरूप में लीन समोई॥
परम आनन्द सो शक्त आनादी। होये ख़ुलासी सिमर बिसमादी॥
झूट माया में क्यों गरसीना। राम विसार परम दुःख लीना॥
बारमबार ये सिखया धारो। हिरदे आवे प्रभ चरन सुखारो॥

**रुच रुच प्रेम कमायो, प्रभ के सिमरन माईं।**
**'मंगत' समाँ नहीं आयेगा, जब माटी में लीन समाईं॥ 433**

राम चरन मन ऐसे गाओ। मीन नीर ज्यों प्रेम समाओ॥
चात्रक ज्यों बिलप करीजे। एह बिध रसना राम की सीजे॥
प्रीत कूँज ज्यों निज अंड समाई। लाख जोजन पर सेहत कराई॥
एह बिध प्रीती चरन चित धारो। राम भगत एक रूप निहारो॥
चन्द चकोर ज्यों मन सुख पेखे। पल पल चन्दर कला को देखे॥
ऐसी प्रीती प्रभ चरन ध्याओ। दुर्मत जाल का होवे अभाओ॥
स्वाति सीप ज्यों चित परीती। खारा नीर नहीं सागर का पीती॥

बरखा जल जब पान कराई। सकली दुबधा शान्त समाई॥
विषे वासना दुर्गन्ध त्यागो। भँवरा रूप हो चरनी लागो॥
दीपक देख जयों पतंग जराई। एह बिध प्रेम प्रभु संग लाई॥
दाम कंगाल की ज्यों परीती। ऐसी रहनी धारो नीती॥
पल पल साहब चरन ध्याई। जिस पल विसरे दुःख अधिकाई॥
छीजे मनुवाँ शांत समाई। सत परतीत जब राम ध्याई॥
बारम्बार मन दुबधा टारी। साचे नाम का लेख विचारी॥
जिस पल साहब परतक्ख देखूँ। सुफल जनम सो घड़ी में लेखूँ॥
भयो दीवाना प्रभ प्रीत को धारी। सुध बुध सकली मन विसारी॥
छिन बस्ती छिन बसे बीबानी। राम प्रीत की लगी चित कानी॥
अन्तर बाहर सो दरसाई। आपा-पर मिट गई अशनाई॥
छिन छिन लखूँ नाम अनामी। आवे धीर मन ले बिसरामी॥

**अनन प्रीती चरन की, मन में आई समाये।**
**'मंगत' सब सुख पाया, जो वर्णन में नहीं आये॥ 434**

पूरन भाग जग ठाकर ध्याया। पूरब जनम का लिखया पाया॥
सतगुर साध बैरागी भेंटा। सत ठाकर का पायो लेखा॥
सत सिखया मन अन्तर धारी। रुच रुच तिसकी प्रीत विचारी॥
दुर्मत लश्कर भयो विनासा। सारंग रूप में लयो निवासा॥
घट अपने विच सोझी होई। साचा नाम अबगत चित लोई॥
अधिक प्रीत से नाम परगासो। करम भरम सकल दुःख नासो॥
प्रेम ख़ुमारी चित आन समाई। सम सरूप की लखी प्रभताई॥
दूर निकट सब भेद विनासे। हमाँ तुमाँ सब संकट नासे॥
अलख रूप सरब बिसरामी। सिमर सिमर मन भयो निष्कामी॥
नित आनंद सरब सुखरासी। सो परमेश्वर घट आन निवासी॥
अटल प्रीत तिस चरने केरी। गुर परसाद मिटी जनम की फेरी॥
मृग तृश्ना जग भरम विनासी। गुरमुख कला घट में परगासी॥
नित निरत मन कीजे मेरा। प्रभ के चरन पिये रस घनेरा॥
बिना मुख के नित भोजन कीना। सहज सुभाय राम रस पीना॥

मन मन अन्दर शान्त समाई। पल पल सिमर पुरख सुखदाई॥
पूरन करम जग में आये पाया। मिल सतसंग हरी नाम ध्याया॥
अचरज लीला जगत तमाशा। प्रभ की भगत केवल चित आसा॥
साध-जनाँ की रजनी रमाऊँ। सच संदेश जाँ राम का पाऊँ॥
नित बलिहार साध के चरने। साची प्रीत प्रभ भगत विचरने॥

**प्रभ की भगत को पाय के, जन्म सुफल कर लीन।**
**'मंगत' टूटी करमगत, निज रूप में कियो वसीन॥ 435**

आनन्द खाय मन शान्त समाई। सतगुर साध की सिखया पाई॥
अबनाशी पुरष संग मेला होई। मिथ्या कलपना दुर्मत खोई॥
सत सरूप भजुँ सुखरासी। सकल कलह चित भई विनासी॥
प्रभ बिन दूजा मिथ्या कारा। मन के भरम का रचा चुनारा॥
प्रभ के रूप बिन सब ही गवना। भई परतीत पाई शबद में रमना॥
अधिक जंजाल में सुरता घेरी। बिना प्रभ भगत सब काल की फेरी॥
कर दंडवत नित प्रभ के चरने। कर अरदास परम सुख सरने॥
नित नित प्रभ की टहल कमाओ। साचा बचन सुन परम सुखराओ॥
जिस जन प्रभ की ओट विचारी। तिसके चरन तों नित बलिहारी॥
बिन प्रभ देखा सखा ना कोई। दुःख सुख में निकट बसोई॥
करो आदेस परम गुनवन्ता। प्रभ की भगत मेटे भरमंता॥
छाड पाखण्ड काल की किरया। भज गोपाल होवें निसतरया॥
तिस दर का कूकर हो रहयो। अधिक ख़ुशहाल तिस रूप में थीयो॥
गुनी ज्ञानी देवें गवाही। प्रभ की भगत परम सुखदायी॥
दाने बीने करें बखाना। बिन प्रभ सिमरे पायें दुःख नाना॥
गुरु गोसाईं नित विचारें। भज करतार होवें भव पारें॥
अपरम उस्तत साहब की कीनी। बीच प्रेम भयो लवलीनी॥
मन मूढ़े भज सदा अबनाशी। समाँ अमोलक जाए सुखरासी॥
वस्तु कोई ना होवे सहाई। नाम विसार परम दुःख पाई॥

**खोज खोज कर सूझिया, केवल सत प्रभ एक।**
**'मंगत' तिसकी प्रीत में, पलपल लिखयो लेख॥ 436**

अमरत नाम साहब का ध्याया। औगन दूर परमपद पाया॥
छिन छिन तिसके चरन चितारूँ। तन मन जीवन अपना वारूँ॥
अती ग़ुबार काया गढ़ देखा। पलक पलक में पड़े भुलेखा॥
वार पार ना सोझी आवे। बीच अंधकार जीया घबरावे॥
इस संकट को किसे सुनाऊँ। बिन संकट कोई मिले ना थाऊँ॥
उत्तर पच्छम देश विचारी। भरम की आँधी फिरे ग़ुबारी॥
गुनी मुनी बहु दाने बीने। भरम के चक्कर में सभी फरीने॥
जो देखा सो दुबधा धारी। मोह माया नित करे ख़वारी॥
साचे सुख की कौन बतावे। राजे राने सभी भरमावे॥
इस्थिर रहना तो जग नाहीं। किस संग साची प्रीत बनाईं॥
काल सरूप दरसे संसारा। कैसे पावे ये मन सहारा॥
सकल जतन अकारथ होई। जब उठ चाले जग से रोई॥
परवत कंदरा फिरा बीबानी। सब ही दरसे काल निशानी॥
अतिअत संकट में नित घेरा। अचल मुक़ाम नहीं दरसे सुख सीरा॥
ना संसार ना करता जानी। भरम में डूब रहे सब जग प्रानी॥
सतगुर साधू आया तत्तवादी। तत्त सरूप में धरी समाधी॥
अजर अमर सतधाम निवासी। निर्मल शान्त तिस मुख परगासी॥
दर्शन भेंट मन शांतक आई। रहनी देख मन धीरज पाई॥
तिसकी सिखया सत तत्त परगासी। सत परतीत जो चरन निवासी॥

**गुरमुख दर्शन जब होये, मिट गये तीनों ताप।**
**'मंगत' तिसकी सिखया से, पायो निहचल घाट॥ 437**

सत साधू का दरशन पाया। सत सरूप पर निश्चय आया॥
सत सरूप ताईं उपजा चाओ। पलपल सिखया में प्रीत लगाओ॥
ज्यों ज्यों मन आवे परतीती। गरब ग़ुबार की मिटे पलीती॥
दृढ़ विश्वास चरन चित ध्याऊँ। नित आनन्द मंगल तब पाऊँ॥
भाँत भाँत कर उस्तत धारूँ। अधिक प्रीत से नाम पुकारूँ॥
ज्यों ज्यों सिमरूँ प्रभ अंतरयामी। चंचल मनुआँ लेवे बिसरामी॥
पाये बिसराम मन प्रेम को खाई। झूट जगत में सार लखाई॥

पलपल अपना प्रीतम ध्याऊँ। तन मन देके तिसे मनाऊँ॥
जिस पल बिसरे मरजीवा होई। दुष्ट विकार चित आन बसोई॥
दिवस रैन ये ही जतना धारी। सत सिमरन पाऊँ पार मुरारी॥
निर्भय रूप साहब का देखा। काल जाल वहाँ नहीं भुलेखा॥
नित परगास वहाँ परगासी। उदे अस्त कछू नहीं भासी॥
निर्मल प्रेम का देखा सागर। सत सरूप जाँ भयो उजागर॥
आसा कलेश वहाँ ना दिखलाई। सरब निधान जाँ राम समाई॥
संशय भरम नहीं राग द्वेषा। सतसरूप जाँ परगट देखा॥
उतपत परलय नहीं संसारा। निर्मल जोती का जाँ चमकारा॥
इक ना दूजा वहाँ नज़री आये। सम सरूप केवल सुखदाये॥
ऐसी निर्मल बाट प्रभ जानी। पल पल तिसकी सेव पहचानी॥
तन मन दीजे जो राम को पाई। वनज अनूप ये परम सुखदाई॥

**सरब गुन निधान, सरब कला का नाथ।**
**'मंगत' प्रीत से ध्याइये, जाये भरम का साथ॥ 438**

पूरन पुरख परमेश्वर चित गाओ। सुफल कारज जग में अधिकाओ॥
तिसका सिमरन देवे परतीत। परसन्न चित पाये निर्मल रीत॥
मत भूलो जग देख के मेला। अन्त को चलना केवल अकेला॥
मत भूलो बहु सम्पत पाये। अन्त को खाली हाथ ले जाये॥
मत भूलो देह सुन्दर धारी। अन्तकाल होवे सब छारी॥
मत भूलो बहु धार चतुराई। काल बीर सिर खाक मिलाई॥
मत भूलो बहु पाये परवारी। अन्त सखा ना भयो सुखकारी॥
मत भूलो जोबन तन देखे। पलक पलक करे काल परीखे॥
मत भूलो बहु विद्या पाए। चले अनजाना अंत समाए॥
मत भूलो बहु देख तमाशे। ओड़क रहना पलक की रासे॥
सिमर गोपाल ये लाभ घनेरा। अजर अमर पद परसें सीरा॥
नित नित प्रीती चरने राखो। सतपुरषों की सिखया चाखो॥
प्रभ का सिमरन करे कल्याना। आध व्याध नासे दुःख नाना॥
परम्परा से कथा चली आई। प्रभ की भगत जीवन सुखदाई॥

दृढ़ निश्चय से भज करतारा। भवसिन्धू से उतरें पारा॥
सतपुरषों संग प्रीत कमाओ। तिन की सिखया सुख रूप लखाओ॥
बन्दीख़ाना ये जगत झुमेला। भज गोबिन्द पायें थाँ सुखेला॥
अन्तर तेरे सो रिह्या समाई। सकली शकत तिसकी प्रभताई॥
घट घट की प्रभ जाननहारा। पल पल सिमर ठाकर सुखकारा॥

**राम चरन हिरदे रखो, पल पल करो उपकार।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, जो वनज अनूप ये धार॥ 439**

ऐसे मारग में नित चालो। जाँ से हरखे दीनदयालो॥
सतपुरषों की संगत धारो। सत सिखया हिरदे विचारो॥
दृढ़ निश्चय प्रभ चरन में राखो। सब कुछ तिस की आज्ञा में भाखो॥
दीन दुःखी की सेवा कीजो। सत मारग की रसना लीजो॥
धन सम्पत उपकार में त्यागो। सत सरूप में उठ के जागो॥
सब जीवों पर कीजो दाया। परम पुरख साहब हरखाया॥
खिमा सरूप धारो नित नीता। पर दुःख विचार करो पर हेता॥
पाप पुन्न नित करो विचारा। पाप करम सब तजो विकारा॥
उठ परभाती भज गोबिन्दा। दिवस रैन पावें आनन्दा॥
सन्ध्याकाल नित नाम ध्याओ। पाप करम से मुक्ता पाओ॥
पूरे गुर की सेव कमाओ। मारग सुफल धरम का पाओ॥
सब का सुख मन माईं लोचो। कपट विकार कभूँ नहीं सोचो॥
परनारी तुल मात पहछानो। पर-धन तुल विख के जानो॥
पाप करम से मन को ठाको। सत मारग में निश्चय राखो॥
सरब माहीं देखो भगवंता। सब का दुःख हरो गुनवन्ता॥
चार दिनाँ जग जीवन जानो। सत करनी हिरदे पहचानो॥
मान त्याग जीयाँ सेव कमाओ। दुर्लभ मारग ये धरम का पाओ॥
निर्मल यतन सतगुर मिल कीजो। आनन्द सरूप मोक्ष पद लीजो॥

**मन अपने को सोधिये, मारग धरम के माईं।**
**'मंगत' कहे पुकार के, जुग जुग शान्त समाईं॥ 440**

# तीसरा प्रसंग
## कर्मगति पर विचार

करम सरूप की करो पहचान। मारग पावें तत्व ज्ञान॥
करम सरूप सकल संसारा। आवागवन चौरासी धारा॥
करम शकत सब को भरमावे। करम का बाँधा नित आवे जावे॥
दुर्गम माया का रूप ये करमा। सरब तत्वों का करम ही ये धरमा॥
करम की झाई अपरम अपारा। करम का भेद बहु गहन विचारा॥
करम सरूप को जो निरनाये। परम ज्ञानी सो पुरख कहलाये॥
करम में बाँधे सकले जन्त। पल पल माहीं नित भरमंत॥
जनम से लेकर मरन तक मीता। करम की इच्छया धारी दुःखरीता॥
एक पलक नहीं होये निहकरमी। भटक भटक कर औध विचरनी॥
मानुष पशु जंगम अस्थावर। करम के चक्कर में सभी चलावर॥
करम शकत ये प्रभ की माया। तिसका भेद नहीं लखने पाया॥
जेती बुद्ध जिस जन ने पाई। एता भेद कुदरत अर्थाई॥
जेता भेद जिस मन आया। परम शकत पर निश्चय पाया॥
नाना रंग ये तत्व वटायें। पल में और की और दिखायें॥
उतपत परलय रूप जो होई। गती संसार ये करम फिरोई॥
इस्थिर वस्तु ना कोई दिखलाये। पल पल में बहुरंग वटाये॥
त्रैविखमी माया का ये ही जंतर। सूली चढ़े सब जीव भयंकर॥
करनी का बाँधा दुःख सुख पाये। जैसी करे तैसी मिले सज़ाये॥
चराचर भूत नित भरमायें। करमगती धर आवें जायें॥

**करम शकत आपार है, मिथ्या भरम अंधकार।**
**'मंगत' करम की वासना में, भरमें कुल संसार॥ 441**

पिण्ड ब्रह्मण्ड की रचना जो होई। करम सूत में सकल परोई॥
नाम रूप गुन को परगासी। सब में करम शकत बिलासी॥
अचरज लीला प्रभ ने रचाई। करम रूप माया प्रगटाई॥
ऊँच नीच जूनी गत धारी। करम आधार सब खेद विचारी॥
निस्चे करम ले बुद्ध प्रगटाई। मनन करम में मन उपजाई॥
शून्न करम आकाश रमीना। अस्पंद करम पवन नित चीना॥
जलावन करम अगन विचारी। बहना करम नित जल संचारी॥

जड़ता करम में धरन समाई। अचरज खेल साहब रचाई॥
हेल मेल तत्वों का होई। भाँतक भाँत गुन करम प्रगटोई॥
त्रैगुन माया पासार पासारी। अनक भाँत करम को धारी॥
करम में करम होये लवलीना। करम से करम भयो प्रगटीना॥
भिन्न भिन्न रूप को करम ये धारी। पलपल में बहु रूप वटारी॥
अचरज माया नहीं वरनी जाये। बाँधा जीव परम दुःख पाये॥
इच्छया करम नित अन्तर धारी। करता भुगता नित आप विचारी॥
आपामती ये अधिक दुःखदाई। करम जन्तर में फिर फिर आई॥
सूझे बूझे ना अन्धा अभिमानी। करम का बाँधा भरमे चारों खानी॥
इच्छया करम ये दीरघ रोग। जनम मरन का होवे संजोग॥
करता भाओ जो अन्तर धारी। करम की फाँसी पाई विकारी॥
हंग विकार ना चित का जाई। करम का जाल ना मिटने आई॥

**वार पार सूझे नहीं, करम जाल को धार।**
**'मंगत' उपजे वासना, नाना भोग विकार॥ 442**

लख चौरासी जून भरमाई। करमगती अधिक अधिकाई॥
करम से ही पिंड को धारी। जैसा करम तैसा सुभाओ विचारी॥
सुभाओ बस होये नित खेल नई खेले। करम जाल नहीं मिटे झुमेले॥
घनी सयानफ़ नित नित धारी। अधिक से अधिक जाल पसारी॥
अपनी करनी में नित गरसीना। बारमबार गरभ को लीना॥
अंधकार मिटे नहीं अधिक दुःखदाई। चार खानी नित ही भरमाई॥
नाम रूप कला बहु साजी। करम शकत विच धरी उपाधी॥
ना सत सूझे ना मिटे बिकारा। अपनी करनी का देखे पसारा॥
जैसी रचना पल पल रचाई। तैसा निश्चय मन आन समाई॥
संकट अधिक में जीव हैराने। करम से छूटें ना गुनी सियाने॥
असत ग़ुबार माया का धारी। पल पल होवे घट बड़ी ख़वारी॥
आध ब्याध तीन ताप गरासी। दुस्तर माया की कड़ी ये फाँसी॥
एक पलक नहीं धीरज आवे। भोगे भोग मनुआँ तिरखावे॥
दूषना मिटे ना ये करम की भारी। पल पल होवे इस जीव ख़वारी॥

राजा राना तपी तपीशर। गुनी ज्ञानी गुन ज्ञान लखीसर॥
चौधां लोक जो भी रचनाई। करमगती से ना छूटन पाई॥
ब्रह्मा बिषन महेश आचारी। करम के जाल में कियो पसारी॥
बिन तत्त ज्ञान ना छूटन पाये। इच्छया रोग में आवे जाये॥
माया छाया ये करम की फेरी। छूट ना पाये बिपता नित घेरी॥

**बिना विचार नहीं छूटिये, करम जाल से मीत।**
**'मंगत' इच्छया नित नई, धारी करम पलीत॥ 443**

जब लग करम विचार नहीं पाई। छूट ना पावे भरम दु:खदाई॥
करम विचार बिना शान्त ना आये। दिवस रैन जीया भरमाये॥
करम विचार बिना जीव दु:ख पाई। बारम्बार जूनी भरमाई॥
दु:ख सुख भोग जो नित विचारी। करमगती की ये सकली कारी॥
जैसा करम करे दिन राती। तिस अनुकूल दु:ख सुख को जापी॥
परकिरत भोग ये रोग अपारी। जल जल होवे ये जीव अँगियारी॥
सातक राजस तामस धारी। शुभ अशुभ करम विचारी॥
जैसा करम मन माहीं परोई। तिस अनुकूल प्रापत फल होई॥
करमफल इच्छया पलपल विचारी। संकल्प विकल्प अंतर दु:ख धारी॥
मन चंचल बुद्धी भरमाये। घनी सयानफ़ नित लेख लखाये॥
अपना जाल आपे बिस्तारी। दु:ख सुख भोग सहवे डण्ड भारी॥
अन्धमत जीया नित परदेसी। दुष्ट विकार में नित परवेसी॥
करमफल भोग में नित भरमाई। अनक जतन धारे चतराई॥
मनमुखता भ्रम जाल विस्तारी। कभू ना सूझे मारग निस्तारी॥
लोक परलोक की रचना रचावे। काम क्रोध में लीन समावे॥
लोभ मोह मध में ग़लतानी। करम भोग दुबधा पहचानी॥
इन्द्री विकार को नित नित सोचे। भरम विकार को नित नित लोचे॥
मकड़ी ज्यों मुख जाल प्रगटाई। तिस में फँस नाश को पाई॥
एह बिध जीव करम गत धारी। जन्मे मरे दु:ख सुख विचारी॥

**छिन दु:खिया छिन सुखिया, भयो करम जाल को धार।**
**'मंगत' इच्छया करम की, देवे गवन संसार॥ 444**

मानुष जनम में मिले विचारी। बंधन मुकत का लेख आपारी॥
और जून में भेद नहीं पाये। जिस कर करमगती दुःख जाये॥
मानुष देही की ये ही वडयाई। करम विचार मिले प्रभताई॥
जनम अमोलक जिस नहीं सँवारा। जुग जुग भरमे चौरासी धारा॥
ताँ सों विचार करो सुखदाई। जाँ से जनम सुफल हो जाई॥
सत असत की करो पहचाना। हरो ग़ुबार करम बिख नाना॥
सत करम की करो पहचानी। पाप करम तजो दुःख खानी॥
छिन छिन गत करम विचारो। भव सिन्धू से उतरें पारो॥
पाप करम नित देवे कलेशा। मनुआँ तापे धर पाप वशेखा॥
सो ही मानुष नित करो विचारी। अपनी करनी का जो लेख लिखारी॥
पाप करम से मन को ठाके। सत करम को अंतरगत चाखे॥
सत करम ये सार सुखरासी। काटे जनम मरन की फाँसी॥
सत करम बिन निर्मल ना होई। पाप कूप को नित परोई॥
पाप करम ये दुःख की खानी। हाहाकार करें जग प्रानी॥
पाप करम हैं नरक सरूप। नित नित धारे बिपता सिर कूप॥
पाप करम ये काल की फाँसी। नित ही दुःखिया फिरे जीव चौरासी॥
पाप करम मन को नित तापे। भाँतक भाँत मन में दुःख थापे॥
सुख का मारग ना कोई दिखलाई। सत करम ना जब लग पाई॥

**करम नबेड़ा नित करो, जो पाप पुन्न नित धार।**
**'मंगत' बिपता सब मिटे, जब सत करम विचार॥ 445**

पाप करम में जीव जलाई। सत करम नित शान्त वरताई॥
पाप करम अत बन्धन भारी। भयंकर दुःख पल पल विचारी॥
सकल कीरती नाश करीजे। पाप करम जो जन वरतीजे॥
अपने आप का शत्रु होई। पाप करम जो चित्त परोई॥
नरक सरूप जीवन सो धारी। आठ पहर जो पाप विचारी॥
जल जल पड़े नहीं शान्त पाये। मोह अगन अधिक तपताये॥
मानुष जनम अमोलक खोई। पाप करें ना पावें ढोई॥
पाप करम जम रूप बिकराला। अन्तकाल देवे दुःख जम काला॥

मनमानी नर छोड़ चतुराई। कपट के भेख में नित दुःख पाई॥
अपने जीवन का करो सुधारा। करनी मलीन से पायें छुटकारा॥
पाप करमी की निन्दा अधिकाई। दण्ड नरेश का छिन छिन पाई॥
पाप करमी को नित धृगकार। सब जीव देवें फटकार॥
एह लोक बिगाड़ा आगे दुःख भारी। पाप करमी की तीन लोक ख़वारी॥
अधम जून को धारन कीजे। करनी मलीन कई जनम दुःख दीजे॥
बारमबार करें सन्त दुहाई। अपनी करनी सब रंग दिखलाई॥
अचरज माया का वेग अपारी। त्रैगुन जाल पसर पासारी॥
खोल नैन सम्भल पग चालो। जम कंकर सिर पर बिकरालो॥
अपने मन की नित करो सम्भाल। पाप करम ना हिरदे भाल॥
सत करमी मारग विचार। सत करम से मिले सुखसार॥

**पाप करम नित ताप को देवें, जीवन को करें नाश।**
**'मंगत' ग़फ़लत त्याग कर, ये गहरी जम की फाँस॥ 446**

सत करम नित हिरदे धारो। पाप कूप से होये छुटकारो॥
सत करम मन धीरज देवे। ताप तपन सकली हर लेवे॥
सत करम सुख सार सरूपा। स्वर्ग सरूप सत करम अनूपा॥
सत करम नित बुद्ध परगासे। अपनी करनी की सार नित भासे॥
छिन छिन मनुआँ बिपता को त्यागे। पाप त्याग सत करम को लागे॥
सत करम मन तृप्ती देवे। भाओ भगत रस अन्तर लेवे॥
सत करम नित तेज बढ़ाये। तीन लोक का यश सो पाये॥
सत करम से बाज़ी जीते। आवागवन से भयो पुनीते॥
सत करम सम्पत जग सार। सत करमी नित पाये जयकार॥
सो वडभागी पुरख गुनवंता। सत करम की पाये परसन्ता॥
तिसका दर्शन अधिक सुखरासी। सत करम जिस हिये निवासी॥
बिन सत करनी ना छूटन पाये। आवागवन में नित भरमाये॥
मानुष जनम की सार को भालो। सत करम में नित मनुआँ गालो॥
बिपता जाये शान्त परगासे। सत करम में नित करो निवासे॥
चोरी यारी जाए कपट विकारा। सत करम में जब निश्चय धारा॥

परनिन्दया पर-हान को छोड़े। साचे करम में प्रीती जब जोड़े॥
आलस निन्द्रा भाओ असुर त्यागी। सत करम में जब विरती जागी॥
अपनी करनी की प्रभता जानी। मारग साचा जब धरम पहचानी॥
पाप कुपथ से मिले रिहाई। सत करम का गीत जब गाई॥

**सतसंगत के मेल से, पाए करमगत सार।**
**'मंगत' ममता मध मिटे, जो अधिक पाप बिस्तार॥ 447**

सत करम मन मैल को धोवे। साधन जुगत जो गुनी परोवे॥
सत करम ऊँच गत देवे। मिल सतसंग जो करनी सेवे॥
सत करम जीवन की सार। सत करमी पाये नित जयकार॥
सत करम सब बिपता हरे। गुरमुख विरले जिस सोझी पड़े॥
सत करम में प्रीत नित राखो। पाप कराल नहीं हिरदे भाखो॥
सत करम चानन नित देवे। सत करमी सतधाम को लेवे॥
सत करम नित बंधन काटे। ऊँच गती को जीव नित राटे॥
सत करम मारग सुखदाई। मिल सतगुर परापत पाई॥
अती जंजाल करम का जोई। सत करम से लीन समोई॥
अतिअत इच्छया जो नित जलाई। सतकरम से शान्त समाई॥
भय भरम जो संकट अत भारी। सत करम का साधन देवे छुटकारी॥
भव दुस्तर जाँ वार नहीं पारा। मिले छुटकार जब सत करम विचारा॥
वेद ग्रन्थ का ये ही फ़रमाना। साचा करम मन करो पहचाना॥
सतगुर पूरे की ये ही दीख्या। साचे करम की नित करो परीख्या॥
सतसंग का साधन अधिकाई। सत करम मन चित वरताई॥
खल बुद्धी दुरमत तब नासी। साचा करम चित माहीं उपासी॥
आवागवन जो संकट भारी। निषकाम करम से पाये छुटकारी॥
करमगती को नित नित विचारो। साचा करम अन्तर चित धारो॥
साचा करम प्रभ बिरह उपजावे। दीन ग़रीबी रसना को पावे॥

**सत करम साधन करो, ये ही धरम सरूप।**
**'मंगत' करनी निर्मल, हरे पाप का कूप॥ 448**

यज्ञ दान सत और सेवा। साचे करम का सुनो नर भेवा॥

पर-हित चित और उपकारा। साचे करम का लयो मरम विचारा॥
सत सिमरन सतसंग परीती। साचे करम की साधो नीती॥
पर-दुःख को नित हिये विचारी। निज सुख तजे सत करम आचारी॥
बादमुबाद संकट को त्यागे। खिमा ग़रीबी सत करम में जागे॥
आतम तीरथ सत साधू की सेवा। साचा करम विचारो गुनी देवा॥
सतपुरषों के इतिहास विचारो। साचे करम का निरनय धारो॥
सिनेमा थेटर रास तमाशे। तिनको त्याग सत करम निवासे॥
चौपट जूआ शतरंज को त्यागो। साचे करम में तब उठ के जागो॥
मदिरा मांस चंडू और गाँजा। तजे भंग अफ़ीम चरस का वाधा॥
सकल विकार निवारन कीजो। सत करम मारग तब लीजो॥
सतपुरषों संग रखो परीती। सत करम की पाओ तब नीती॥
जीवन मरन का करो विचारा। साचा करम धारो नित धारा॥
सत करम की धार पहचानी। पाप विनास सुख सम्पत जानी॥
सतगुर सेवा सतनाम परीती। जो जन साधे जाये पाप कुरीती॥
परउपकारी जीवन नित धारो। साचे करम का तब पायें विचारो॥
तन मन धन का त्याग नर पाये। साचा करम जब चित समाये॥
ज्यों ज्यों साधे मारग सत करम। त्यों त्यों परसे पद निर्मल धरम॥
साचा लाभ पायो सुखरासी। नित सत करम में प्रीत बिलासी॥

**सत करम की साधना, मन करे निषकाम।**
**'मंगत' दुबधा सब मिटे, जीव पाये बिसराम॥ 449**

निष्काम विरत जब आन समाई। सत करम की पाई प्रभताई॥
निष्काम करम ही नर सत करम। निष्काम करम ही निर्मल धरम॥
निष्काम करम चित निर्मल कीजे। भाओ भगत की रसना लीजे॥
निष्काम करम ही नेहकरम सरूप। इच्छया रहित सो गुरमुख रूप॥
यज्ञ करम का ऊँच परतापा। कोट उपद्रव हरे संतापा॥
यज्ञ करम धरम परगासे। यज्ञ करम से शान्त निवासे॥
महा करम ये ही गुनी मीता। साची जुगती में करे वरतीता॥
एह बिध यज्ञ करम जो धारी। कर्ता भोगता सबका ताप निवारी॥

ऐसे यज्ञ में जो सेवा कीजे। तन मन धन सुफल कर लीजे॥
एक कौडी सच धाम पहुँचाए। ले सच शरधा जो सेव कमाये॥
ब्रह्म यज्ञ ये ही ब्रह्म सरूप। जो ना परसे सहवे जम कूप॥
बिना कारन यज्ञ-शाला त्यागे। अनक पाप तिस जन को लागे॥
यज्ञ शाला में जो नाहीं पधारे। जम की त्रास सहवे दण्ड भारे॥
सो मन मुखिया चंडाल सरूपा। यज्ञ सरूप नहीं परसे अनूपा॥
यज्ञ के करने-हारे जोई। यज्ञ में रसना खावत जोई॥
यज्ञ की सेवा जिस बिध जो धारी। परतक्ख रूप पावें छुटकारी॥
सब को फल अमरत होये। यज्ञ करम जो प्रीत लखोये॥
निष्काम सेवा निरपख नित रसना। अद्वैत दृष्ट यज्ञ करम की रचना॥
समता भाओ सब में दिखलाई। एको ब्रह्म सरब दरसाई॥

**क्या करता क्या भोगता, सब ही प्रेम समायें।**
**'मंगत' महमा यज्ञ की, देव मुनी नित गायें॥ 450**

द्रभ सरूप भी ब्रह्म पहचानी। करनेहार एको प्रभ जानी॥
यज्ञ के भोगते भी ब्रह्म सरूप। सरब दिखाये एको प्रभ अनूप॥
द्वैत भाओ जाँ नहीं भासे। ब्रह्म यज्ञ सो धरम परगासे॥
जो जो गुरमुख आन पधारे। सत परसंग सुन धीरज धारे॥
कपट विकार नहीं पख जाँ होई। सरब भाओ एको दृष्ट लखोई॥
मान गुमान जाँ ताप मिट जाई। आज्ञा प्रभ की चित बीच समाई॥
दासा भाओ जो मन में राखी। सरब संगत की धूड़ी बाँछी॥
एक परीत सब में समाई। एह विध दृष्ट जिस गुरमुख पाई॥
सो ही यज्ञ का करता होई। निर्मान भाओ जब मन परोई॥
गुरमुख खावे गुरमुख वरतावे। गुरमुख प्रीती सरब दिखावे॥
पाखण्ड विकार दुर्मत सब नासे। ब्रह्म यज्ञ सो सत करम परगासे॥
जिस धरनी पर ऐसा कर्म होई। सकल देव तिस थाँ की धूड़ रमोई॥
कोट उपद्रव पाप को नासी। समता यज्ञ जाँ धरम परगासी॥
सब जीवों को ये करम अधिकाई। रल मिल साजन नित सेव कमाई॥
प्रभ परसन्न देश सुख पाये। करते भुगते सत धरम लखाये॥

वैर बकार नासे मध माना। यज्ञ करम जहाँ परसे परधाना॥
सोते मूरख जाग्रत को पायें। धरम सरूप कला चमकायें॥
गृहस्ती विरक्ती प्रभ रूप दिखलाई। यज्ञ करम ही बहु ऊँच प्रभताई॥
ऊँच नीच नहीं आपा पर देखी। सरब सरूप नारायन पेखी॥

**यज्ञ करम सत धरम है, द्वैत भरम करे नास।**
**'मंगत' धूड़ी यज्ञशाल में, नित नित करूँ निवास॥ 451**

सतसंगत सत करम अनूपा। रल मिल गायो नित राम सरूपा॥
सतसंगत में प्रीती राखो। साचा धरम मन अन्तर चाखो॥
साची कथा में प्रीत लगाओ। सकले पाप से मुक्ता पाओ॥
इक परमेश्वर की उस्तत बूझो। सत-पुरषों की करनी सूझो॥
सकले भरम ग़ुबार विनासे। सत करम सतसंग निवासे॥
परम जतन ये ही सुखदाई। मिल सतसंग सत-करम कमाई॥
पुत्तर धीया नाती परिवारा। सतसंगत से पावें सुधारा॥
पाप कूप सरब नर नासे। सतसंगत में करो निवासे॥
निस दिन जो जन नीयम धारी। सतसंग जाये सत कथा विचारी॥
कोट विगन होये पल में नासा। सत-धरम में आवे विश्वासा॥
देव सरूप को सो जन पाई। नित सतसंग जो सेव कमाई॥
मूढ़मती जाये पाये विवेका। सत सरूप का परखे लेखा॥
अपने पाप की करे निगरानी। करनी मलीन में पावे पछतानी॥
मानुष जनम की सार लखाई। जब सतसंग में प्रीत लगाई॥
दुस्तर जाल से निस्तर होये। मारग धरम में प्रीत लखोये॥
हिरस ख़ुदी की दुर्मत नासे। सत सेवा में नित निवासे॥
गरब मूल जो पाप का होई। तिसे त्याग मन निर्मल होई॥
दीन भाओ ग़रीबी पाये। सरब कला प्रभ एक दिखाये॥
शुद्ध विचार प्रभ पर विश्वासा। सतसंगत मिल होये जग दासा॥

**मान मध सब नासयो, चित पायो ग़रीबी भेख।**
**'मंगत' नित सतसंग से, अबगत लखयो लेख॥ 452**

अधिक पाप से होवे रिहाई। नित सतसंग में जो नर जाई॥

मूरख मन सत करनी में धाये। नित सतसंग जो प्रीत कमाये॥
जनम मरन की सब सार पछानी। सुख दुःख सकल भेद को जानी॥
पाप पुन्न की करी परीख्या। मिल सतसंग पाई सत सिखया॥
गरब ग़ुबार वैर बुद्ध नासे। एक प्रेम मन में परगासे॥
मोह अगन मन शान्त होई। सरब का ठाकर चित चरन परोई॥
पर-दुःख की जो नीयत धारी। निज सुख का जो बना पुजारी॥
अपने तुल ना कोऊ दिखलाई। धार गरब बहु कीजे चतुराई॥
लोक लज्या नहीं ग़ैरत चित पाये। पाप करम जो धारे अधिकाये॥
सकल बिपता नर होई विनास। जब सतसंग में कियो निवास॥
असुर भाओ से सुर गत पाई। दुष्ट विकार से भई रिहाई॥
सत-करम की सोझी होई। मारग शान्त सतसंग लखोई॥
दीन दुःखी की जानी गत सार। साचा शुकर कीना करतार॥
सत पुरखों की साखी नित गाई। तिनका जीवन सत धरम दिखाई॥
अपनी उन्नति करन की सूझी। अन्तकाल जम संकट बूझी॥
सतगुर सेव में आये विश्वासा। साची सिखया मन तन परगासा॥
दुर्जन भाओ सब मन का जाये। मिल सतसंग फल अमरत पाये॥
सकल पदारथ जो घर पायें। बिन सतसंग नहीं आनन्द खायें॥
साची करनी ये धरम विचारो। आपामत ये तजो ग़ुबारो॥

**सतपुरषों के संग से, सत मारग की पाई सुद्ध।**
**'मंगत' जनम कदारथ होया, सत धरम की पाई बुद्ध॥ 453**

अपने आप का करो कल्यान। सत करतार का सुन फ़रमान॥
सतकरम सत-सेवा धार। मन का नासे पाप ग़ुबार॥
अर्थ रहित जो सेवा धारी। मानुष जनम की पाई सतकारी॥
दीनदयाल परमेश्वर ध्याये। साचा हुकम सत-सेव कमाये॥
सरब जीयाँ का भयो हितकारी। पर-दुःख हरना नित कार विचारी॥
धरम का मूल सेवा ये जानी। दिन दिन प्रीत प्रभ हिये पछानी॥
इच्छया रोग का दारू ये ही। सत-सेवा मन होवे सनेही॥
ज्यों ज्यों सेवा में प्रीत बढ़ाये। आपामत दुःख मूल उड जाये॥

पर का सुख निज दुःख भुलाई। मारग शान्त का लेख लखाई॥
पर-हित जीवन वैर विनासे। एको प्रीत सब में परगासे॥
दीन दुःखी की सेवा जोई। मोह अगनी तब शांत समोई॥
पलपल सेवा जो हिरदे धारी। साचे प्रेम की चढ़ी ख़ुमारी॥
जग को मिथ्या सच राम दिखायो। साची सेव से परम गत पायो॥
लोक परलोक में पाई जयकार। साची सेव जो कियो विचार॥
अगनी तृष्ना शांत समाई। सत सेवा जब हिरदे आई॥
छिन छिन सत सरूप को गाये। आपा त्याग परम सुख पाये॥
तन मन धन का जो दातारी। साची सेव तिस हुकम विचारी॥
साची सेव ये साचा करम। साची भगती ये साचा धरम॥
मन की मैल सहजें उतराई। साची सेव का साबन लाई॥

**सेवा तुल नहीं धरम है, सेवा तुल नहीं ज्ञान।**
**'मंगत' सेवा धरम से, हरी भरम बिख खान॥ 454**

भव दुस्तर में घालन घाल। साचा हुकम सुन दीनदयाल॥
सरब का ठाकर एक जगदीशा। सरब का रख्यक एको प्रभ ईशा॥
सरब व्यापक सरब से न्यारा। तिसका सिमरन केवल जग सारा॥
मिथ्या तन मन का मान त्यागो। साची सेवा में उठके जागो॥
करम जंजाल फाँसी को तोड़ो। पर-उपकार चित अन्तर जोड़ो॥
आपामत ये भरम की खानी। भरमें जीव नहीं शांत पछानी॥
छिनभंगुर ये सकली किरया। मूढ़ मनाँ तू क्यों पसरिया॥
देह के सुख छिनकारक होई। सुख विनासे दुःख रूप लखोई॥
साचा सुख मन करो विचार। जो ना नासे ना होये दुःख सार॥
साध-जनाँ ने कियो फ़रमान। साचा सुख प्रभ एको जान॥
काल करम से जो नित न्यारा। अपने आप में जो बल धारा॥
सब जग जिसके आधार चलाई। सरब न्यारा आप रहाई॥
ना तिसे बनावे दूजा कोई। सबकी बनत सो आप बनोई॥
तिस साहब की सेव विचार। मन का नासे गरब ग़ुबार॥
सत अस्थान नित परगासी। तिसका सिमरन कटे चौरासी॥

अखण्ड सुख नित नित रहाई। वाध घाट सो कभूँ ना पाई॥
निहकरम सरूप निरइच्छित देवा। गवन विनासे तिसकी सेवा॥
मानुष चोला सो दुर्लभ होई। साची भगत प्रभ हिये परोई॥
करम विकार से भई ख़ुलासी। आनन्द कला घर में परगासी॥

**पाप पुन्न दोनों मिटे, मन निहकरमी पद पाये।**
**'मंगत' सो ही परमपद, साध वेद जस गाये॥ 455**

करम रूप सकल आकारा। बाँधा जीव नित गवन विचारा॥
शान्त सरूप नहीं लखने आई। जाँ से जीव सुख सम्पत पाई॥
अनक जतन चतुर बुद्ध धारी। शान्त सरूप नहीं आये विचारी॥
करमयुक्त सकलो पासारा। पल पल रूप विटावे आपारा॥
छिन में और छिन और दिखाई। पल पल में मन रूप वटाई॥
जिस वस्तु संग प्रीत लगाई। ऐसी रचना सब में पाई॥
अनक जून भरमत भरमावे। शान्त सरूप ना हिरदे आवे॥
छिन संजोग छिन होवे वँजोग। राग द्वेष लागा वड रोग॥
पल सुखिया पल दुःख में धाई। चार खानी एह बिध भरमाई॥
नित नया नित होये पुराना। काल का बाँधा जीव दुःख पाना॥
अधिक जतन जो भी जन धारी। तो भी धीर ना हिये विचारी॥
परबत कंद्रा जाए बियाबानी। सागर परसे नहीं पाए सुख खानी॥
शास्तर सिमरत बहु बिध गाई। दुस्तर मन नहीं सार को पाई॥
पल पल में जो बन्द कटावे। दुर्मत रोग नहीं मन से जावे॥
करम चक्कर में सभी भरमायें। मन बानी की गम में जो आयें॥
त्रैगुन जाल अधिक बिस्तारी। जनमे मरे नहीं मिटे ख़वारी॥
अनक भाँत मन रचना रचाई। सत विसार परम दुःख पाई॥
दृष्टादृष्ट सब करम विकारा। भरमे जीव जूनी बहु धारा॥

**करम चक्कर संसार है, नित जीव दुःख पाये।**
**'मंगत' जो परसे निहकरम गत, बौहड़ गवन नहीं आये॥ 456**

निहकरम सरूप केवल जगदीशा। सरब आधार सरब का ईशा॥
निहकरम सरूप आतम तत्त जान। सरब निरन्तर बसे विज्ञान॥

निहकरम सरूप आप परमेश्वर। काल जाल नहीं भरम लखीशार॥
निहकरम सरूप चेतन परगासा। सर्वज्ञ रूप नित करे निवासा॥
निहकरम सरूप नित पारब्रह्म। अछेद अभेद पुरख अगम॥
निहकरम सरूप केवल निर्वान। सत परकाश सरब परवान॥
निहकरम सरूप शबद अनादी। अनहद नाद पुरख बिसमादी॥
निहकरम सरूप पुरख आनामा। अलोक धाम में करे बिसरामा॥
निहकरम सरूप सब जग का बिन्द। जिसकी माया धारे पिण्ड ब्रह्मण्ड॥
सरब निरन्तर रह्या समाई। काल करम तिस आधार चलाई॥
सरब न्यारा सो पुरख पहचानी। देख के लीला मोहे बड़े ज्ञानी॥
सब के भीतर नित परगासे। दोख रहत नित करे निवासे॥
करम जाल मध रहे समाई। अकरम रूप नित नित सुखदाई॥
ताँ सो भेद ना लखया जाई। सरब भीतर नित न्यारा रहाई॥
जिस जाना ये अचरज खेला। मिटा भरम करम झुमेला॥
नित सत रूप में लीन समाये। करम जाल सब भयो फ़नाये॥
आनन्द रूप परमेश्वर पाया। अखण्ड सरूप पुरख निरमाया॥
बिन प्रभ सिमरे नहीं होये कल्याना। करम जाल की होए नहीं हाना॥
परमधाम सरब का स्वामी। निहकरम सरूप सरब अंतरयामी॥

**पारब्रह्म परमातमा, काल करम से न्यार।**
**'मंगत' तिसकी भगत से, पाए जीव छुटकार॥ 457**

ग़फ़लत छोड़ उठ लेख विचार। बिन प्रभ भगत सब दुःख सार॥
साध-जनाँ ने निरना कीयो। परम आनन्द केवल प्रभ थीयो॥
माया विकार नित भरमाई। खप खप मरे नहीं शान्त पाई॥
सत ठाकर की सुध नहीं जानी। धार गरब भरमें अज्ञानी॥
अचरज रचना जगत पसारी। देख के मोहे बड़े गुनकारी॥
बिना विचार नहीं परसे सुख सारा। इच्छया भरम नहीं मिटे अंधकारा॥
उठ रे गुनियाँ तूँ लेख विचार। अबगत रूप सिमरो करतार॥
बंध ख़ुलासी प्रभ सिमरन से पाए। शास्त्र वेद गुनी भेद बताए॥
नित आनन्द सरब सुख खानी। पारब्रह्म सिमर निरवानी॥

नित परिपूरन सरब ज्ञाता। भज गोबिन्द सरब बिधाता॥
अबनाशी शकत सरब समराथा। भज परमेश्वर नाथन का नाथा॥
जुग जुग आदी सम रूप समाई। शबद सरूप चेतन सुखदाई॥
अगम निगम की जाननहारा। विज्ञान सरूप सिमर करतारा॥
नित अजन्मा अकाल सरूप। सिमर दयाल शकत अनूप॥
सकल जगत को आप बिस्तारी। सरब न्यारा रहे मुरारी॥
उस्तत कही ना कथनी आवे। जो जो सिमरे परम सुख पावे॥
सत परकाश सरब परकाशी। अनहद नाद पुरख अबनाशी॥
मन बानी से रहे न्यारा। शून्न रूप आनन्द निरंकारा॥
सब का परगट तिससे होये। परम पिता भज प्रीत समोये॥

**महमा सत सरूप की, रंचक कथी ना जाये।**
**'मंगत' जिस प्रभ पाया, तिस चरनी धूड़ रमाये॥ 458**

साची भगती प्रभ की विचारो। जनम मरन से पावें छुटकारो॥
दुस्तर जग ये भरम फुलवाड़ी। जो जो विचरे पावे ख़वारी॥
अतिअत संकट करम जंजाला। आवे जावे परसे जम काला॥
इक परमेश्वर की जिन ओट विचारी। मोह माया से भये छुटकारी॥
केवल निधान ये ही परवाना। बन्धी छूटे जब भजें भगवाना॥
बारबार ये कियो विचारी। बिन प्रभ भगत सरब दुःखकारी॥
सरब जतन तब पूरन होई। जब पारब्रह्म की माल परोई॥
साचे धरम की जानी सार। प्रभ की भगत जब कियो विचार॥
साचा करम तब ही चित भासी। एक परतीत जब पाई अबनासी॥
साचा सुख तब घर में पाया। दीनदयाल जब राम ध्याया॥
मानुष जनम की मौज तब पाई। सत सरूप जब शबद ध्याई॥
सरब ज्ञाता तब जन होई। सरब सिद्धी जब शबद परोई॥
बंधन मुकत तभी जन जानी। मुकत सरूप जब भजे निर्वानी॥
सरब शकत का भेद नर पाई। प्रेम प्रीत प्रभ सेव कमाई॥
मन मूरख को भई खुशहाली। सत सरूप जब भजें किरपाली॥
सकली तृखा जीव की नासी। मिल सतगुर जब सिमरा अबनासी॥

सकली किरया से छूटन पाई। परिपूरन जब शबद ध्याई॥
अमोल रतन प्रभ नाम जग माईं। जो जो परसे पावे सुख थाईं॥
मिल सतसंग जिन नाम ध्याया। विगन विनास घर मंगल पाया॥

**सरब शकत परमेश्वर, नित आनन्द की खान।**
**'मंगत' बँधी तब छूटे, जब प्रभ करें पहचान॥ 459**

एक परमेश्वर मन माईं ध्याओ। करम जाल से छूटन पाओ॥
अपरम अपार पुरख सुखदाई। तिसका सिमरन सब खेद मिटाई॥
प्रभ का सिमरन सुखसार अबनासी। आवागवन भ्रम मिटे चौरासी॥
सरब के अन्तर रिह्या समाई। आलख शबद रतन सुखदाई॥
सत जुगती जिस नाम ध्यायो। परम आनन्द पुरख घर पायो॥
साची भगत से धीरज पाई। करम रहित मन लीन समाई॥
भाग वडाई जिस सार पहचानी। निहकरम सरूप की कथी कहानी॥
पल पल सिमरो प्रभ अंतरयामी। परमानन्द पुरख सुखथामी॥
अखण्ड प्रीती तिस चरन ध्याओ। दुस्तर जाल का होवे अभाओ॥
अखण्ड प्रीती प्रभ रूप विचारो। ज्ञान विज्ञान परसें सुख सारो॥
अखण्ड प्रीती प्रभ सेवा धारो। काल करम से पायें छुटकारो॥
अखण्ड प्रीती राखो विश्वासा। आवन जावन होवे दुःख नासा॥
अखण्ड प्रीती प्रभ उस्तत बूझो। अंतरयामी घट अंतर सूझो॥
अखण्ड प्रीती राखो गुर चरना। जो सत परमेश्वर का समझावे निरना॥
अखण्ड प्रीती हरजन संग राखो। उपजे प्रीती भगत प्रभ चाखो॥
अखण्ड प्रीती सतपुरष की पाओ। निर्मल नाम पल पल चित गाओ॥
अखण्ड प्रीती सत मारग सोधो। भरम ग़ुबार का करो निरोधो॥
अखण्ड प्रीती जग सेव कमाओ। खिमा ग़रीबी घर अन्तर पाओ॥
अखण्ड प्रीती पर दुःख नित हरयो। पारगरामी प्रभ नज़री पड़यो॥

**अखण्ड प्रीती राख के, नित साचा नाम कमाओ।**
**'मंगत' यतन ये सार है, सब भरम का करे अभाओ॥ 460**

ऐसी प्रभ की भगत जो पाये। काल करम से भयो रिहाये॥
सत सरूप केवल प्रभ जानी। और जगत सब भरम पछानी॥

सत विचार मन सेव कमाये। प्रन अपना नित चरन समाये॥
स्वास स्वास प्रभ नाम चितारे। पल पल आज्ञा प्रभ विचारे॥
सकले करम प्रभ आज्ञा में छोड़े। करम फल इच्छया भरम को तोड़े॥
दीन भाओ मन अंतर राखे। मिल सतगुर सत बानी चाखे॥
सब जीवों संग साँझ बनावे। वैर बदी की मैल वँजावे॥
काल सरूप को नित विचारी। पावे वैराग मिटे दु:ख सारी॥
नित नित मन को हर चरन में राखो। सत विश्वास हिरदे में चाखो॥
सरब जगत का ठाकर प्रभ देखो। सरब जीयाँ संग नित प्रीती लेखो॥
उट्ठत बैठत हरनाम चितारो। सोवत जागत तिस प्रीत विचारो॥
कारन करता प्रभ एक पहचानो। तिसकी सेव परम सुख ठानो॥
मोह माया का भरम त्यागो। सत परमेश्वर की चरनी लागो॥
नाम का धन नित संचत कीजो। अबनासी पुरख सब अंतर सीजो॥
मन अपने की भ्रमता तोड़ो। सत सरूप चित चरनी जोड़ो॥
निर्मल जुगती सतनाम कमाओ। मन पवन इक ठौर लगाओ॥
पलट के सुरती घर अन्तर राखो। अमरत रूप शबद रस चाखो॥
निमख निमख प्रभ चरन ध्याओ। दुर्लभ मारग मुकत का पाओ॥
शबद सरूप मुक्त सुख थाना। शबद ध्याये पावे कल्याना॥

**शबद सरूप पारब्रह्म, परमेश्वर नित ध्याओ।**
**'मंगत' ये ही प्रभ भगत है, पल पल प्रीत कमाओ॥ 461**

उठ गुनवंता प्रभ नाम चितार। जग में रहना है दिन चार॥
सखा संग ना अन्त कोऊ होई। झूट प्रीत क्यों चित परोई॥
सकली सम्पत ओड़क तज जावें। अन्तकाल नर होवें निहथावें॥
कूड़ कपट को जो नित धारी। जमराज करें अन्त ख़वारी॥
झूट देही संग प्रीत अधिकाई। निकले प्रान तब राख़ समाई॥
इन्द्री भोग जो पल पल विचारी। सकल त्यागें अन्त की बारी॥
चलें निरासा इस जग से मीता। जो जुग चारे औध वतीता॥
पल पल जावे औसर तेरी। क्यों भरमें कर मेरी मेरी॥
सत सरूप में उठ के जाग। साचा सिमरन प्रभ चरनी लाग॥

आदी अन्त सो एक रहाई। निमख निमख तिसे लयो ध्याई॥
सत की ओट सदा सुख रास। सत का सिमरन अभय पद वास॥
सब जग मिथ्या सतनाम विचार। दुर्लभ मारग ज्ञान का धार॥
नाम कमावें तब पावें अबनाशी। जुग जुग जीवन मिले सुखरासी॥
औगनकारी ये मन अंध्यारा। नाम ध्यान से पायें निसतारा॥
नाम साहब दा सब भूख मिटाये। तीन ताप सब दोख वँजाये॥
जो सिमरे नित अन्तर धारी। साची प्रीत मन मुकत विचारी॥
निरबन्धन जीवन को नित पाई। निहकरम सरूप जब आतम ध्याई॥
अन्तर बाहर सम रूप परगासी। अपरम अपार पद परसा अबनासी॥
जनम मरन तब भयो दुःख दूरे। साची प्रीत चित चरन हज़ूरे॥

**नाम साहब जिन गाया, प्रेम प्रीत की डोर।**
**'मंगत' भव से छूटन पाया, निर्मल परसा ठौर॥ 462**

जो आये चले अन्त पछताये। गुनी ज्ञानी बहु लेख लखाये॥
साचा लेखा जिस जन लख पाया। जग आवन तिस सुफल कराया॥
भवसिन्धू ये दुस्तर भारी। बिना जतन नहीं होये निस्तारी॥
पारगरामी जिस ठाकर ध्याया। साचा जतन तिस जन ने पाया॥
मन में मन की करे निगरानी। सिमर दयाल चित धीर पछानी॥
छिन छिन मन के औगन धोवे। सत धोबी की कार को जोवे॥
साचा महरम साचा स्वामी। मुकन्द सरूप भज अन्तरयामी॥
बख़शनहार सो ही दातारा। हो भिखारी तिसके द्वारा॥
साचा करम धरम प्रभ देवे। तब ये जीव परम सुख लेवे॥
और थाओं ना कोई देखा। जाँ से मिले धरम की भीखा॥
हूँ कूकर तेरे दर आया। भगतवत्सल तूँ नाम धराया॥
हमरे औगन नहीं चित धरना। होवो दयाल प्रभ कारन करना॥
सब जग तेरी ओट सम्भाले। नित रखयक तूँ दीनदयाले॥
नित नित नाम करो बख़शीशा। खड़ा भिखारी दर तोरे जगदीशा॥
तेरी महमा का अन्त ना पाई। भाँत भाँत कर उस्तत गाई॥
जेता ध्याया प्रभ तेरा धाम। रंचक सार नहीं लखा मुक़ाम॥

तूँ सच जाने सच तेरी कार। तेरे चरनी नित हूँ बलिहार॥
पतिपावन तूँ अंतरयामी। दियो भरोसा तू सरब का स्वामी॥
पल पल माँगूँ साचा ये लेख। साची भगती प्रभ दीजो भेख॥

**गुन ज्ञान कछु ना धरूँ, ना मन में तप योग।**
**'मंगत' होवें दयाल प्रभ, जब पूरन भाग सँजोग॥ 463**

तूँ परमेश्वर नित सुखरासी। एको तेरी चित में भरवासी॥
तेरी माया का अन्त ना कोई। सकल सामिग्री की गत जाने तू ही॥
तुमसे सब कुछ परगट होये। तुम ही व्यापक तुम सरब समोये॥
अपना खेल तूँ आपे खेलें। आपे न्यारा आपे मेलें॥
सब कुछ लेखा तूँ बनाई। सकल जगत तेरी प्रभताई॥
तू क़ादर सब क़ुदरत तेरी। सरब जीयाँ संग प्रीत चंगेरी॥
तू सूक्षम तू ही अस्थूला। समदृष्ट कर सब में फूला॥
लखा न जाई तेरा पासारा। अपरम अपार तूँ सरजनहारा॥
जो जन तेरी सरनी आये। तेरे भाने परम सुख पाये॥
तेरी महमा चित आये विचारा। तूँ जगदीश सरब दातारा॥
हस्ती कीटी तृन आद सुमेरा। सरब स्वामी तूँ ठाकर मेरा॥
कह बिध गावाँ तेरी वडयाई। तेरी क़ुदरत तूँ आप समाई॥
साचा करम दीजो प्रभ देवा। अनन परीती पाऊँ जग सेवा॥
तोरे जन की नित धूड़ लखाऊँ। सब में तेरी कला दरसाऊँ॥
हरो ग़ुबार ग़रीबी दीजो। सरनागत की रखया कीजो॥
ऐसी भगती माँगूँ प्रभ देवा। विषन विरंच करें ज्यों सेवा॥
ध्रुव प्रहलाद चित सार विचार। अनन भगत मोहे दियो मुरार॥
दीजो नाम मिटाओ भ्रम भूख। करुनाकर तूँ प्रभ निरदोख॥
अनमत बुद्धी धर करूँ विचारा। महमा तेरी प्रभ अपरम अपारा॥

**सरब जीयाँ आधार है, सो ठाकर प्रभ एक।**
**'मंगत' नित सरनागती, राखे चरन की टेक॥ 464**

सत सरूप की कीरत गाओ। परम आनन्द घर अन्तर पाओ॥
सतगुर साध ने निरना कीया। परम आनन्द सत रूप घनैह्या॥

सरब के अन्तर रह्या समाये। गत मित सबकी सो ही लखाये॥
तिससे न्यारा नहीं कुछ सार। सरब सरूप आप बलिहार॥
नित नित तिसकी सेव कमाओ। आज्ञा तिसकी मन माहीं मनाओ॥
अन्तर बाहर उस्तत कीजो। भाओ भगत की रसना लीजो॥
सच ठाकर की ओट नित राखो। सरब स्वामी जगदीश को भाखो॥
काम क्रोध अगन मध त्यागो। साचा शबद मन अंतर अराधो॥
पाप दोख से मन को बाँधो। सत करम हरी चरन को साँधो॥
सतपुरषों की रसना गाओ। तिन आधार जीवन नर पाओ॥
सत सिखया नित अंतर सोधो। दुष्ट करम का करो निरोधो॥
इक चित नाम की मनी परोये। सुकृत जीवन तब जग में होये॥
सत सरूप केवल निरंकार। बारम्बार कर चरन विचार॥
जीवन में हरी रूप ध्यायो। अन्तकाल हरी रूप समायो॥
मानुष जनम सुकृत कर जानी। साची कीरत प्रभ चरन पछानी॥
सरब प्रतिपालक एक जगदीशा। पल पल सिमर तूँ सरब का ईशा॥
नारायन पद चित समाये। तब ये जीव परम गत पाये॥
मिल सतगुरु सत रूप विचार। मानुष जनम की खाटो सार॥
साची प्रीती प्रभ नाम ध्यान। साची सेवा मन कर पहचान॥

**बन्धन से मुक्ता भया, पद परसा निर्वान।**
**'मंगत' नज़री आया, प्रभ एको तीन जहान॥ 465**

## मंगलाचरन

नारायन पद बंदिये, ताप तपन होये दूर।
नमों नमों नित चरन को, जो सरब आधार ह ज़ूर॥
हिरदे सिमरो नाम को, नित चरनी करो दण्डौत।
सत शरधा से पूजिये, रख सतगुर की ओट॥
दुबधा मिटे मंगल होये, जो चरन कँवल चित धार।
रिद्ध सिद्ध आवे घर माहीं, पावें जय जयकार॥
**साचा ठाकर सरब समराथा, अपरम शकत अपार।**
**'मंगत' कीजे बन्दना, नित चरनी बलिहार॥466**
सत मारग सोझी मिली, तन मन भया निहाल।

गवन मिटी संसार की, सतगुर मिले दयाल॥
**बार बार करूँ बन्दना, सतगुर चरनी माईं।**
**'मंगत' सतगुर भेंट से, फेर गरभ नहीं आईं॥ 467**

## ईश्वर महमाँ

तू करता करतार है, सब जग सरजनहार।
पल पल कीजूँ बन्दना, तू साखी पुरख अपार॥
बार बार करुँ बन्दना, तू दीनानाथ दयाल।
निहमानियाँ का मान तू, सरब काल रछपाल॥
अपनी कला को धार के, रचियो जगत पसार।
अनक भाँत उस्तत करूँ, तू दीनबन्धु दातार॥
सरब जगत का रखयक, नित ही करे प्रतिपाल।
निमख निमख सिमरन करो, गोबिन्द सरब किरपाल॥
चार वेद जस गाँवदे, गुनी मुनी जन अनेक।
सब जग तुमरा खेल है, नित राखूँ तुमरी टेक॥
अनमत मूढ़ा आया, प्रभ तोरे दर भीखार।
दीजो भगती दान प्रभ, नित मन करूँ पुकार॥
आठ पहर तुम प्रेम में, मनुआँ रहे लवलीन।
दीनदयाल दया करो, हरयो बुद्ध मलीन॥
शेष सहँस मुख गाँवदा, पल पल नाम अपार।
महमा तेरी क्या कथूँ, तूँ आपे सरब आधार॥
पाप कूप भसमत करो, दीजो सत विचार।
नित सिमरूँ तेरे नाम को, नित चरनी सुख धार॥
कलयुग घोर आ वरतया, सत धरम भयो नाश।
कूड़ कपट की सम्पता, सब घट कियो परगास॥
**राखनहार आपार तूँ, नित ही तेरी आस।**
**'मंगत' नित सरनागती, हरयो भरम की प्यास॥ 468**

तूँ सरब स्वामी आनन्द बिसरामी, सरब करें परगास॥
निमस्कारं निमस्कारं, नित चरन कँवल अरदास॥

तूँ परमेश्वर तू जगदीश्वर, तू देवन का देव।
नित करूँ डंडौत प्रभ, चित चरन कँवल की सेव॥
बार बार करूँ बेनती, परम पिता के द्वार।
राख लें प्रभ आपने, आयाँ सरन तुम्हार॥
ना बुद्धी सत करम की, ना सत धरम विचार।
केवल प्रीती चरन की, दीजो पूरन सार॥
मन की हरो वखेपता, दीजो प्रेम परसाद।
पल पल हिरदे में रसे, केवल तुमरी याद॥
दीन ग़रीबी रसना की, माँगूँ निस दिन भीख।
तू दाता दातार हो, कीजो ये बख़शीश॥
भरम रूप संसार से, प्रभ जी करो उद्धार।
पततपावन तेरो नाम है, हरजन करें पुकार॥
धूड़ रमाऊँ सीस पर, सरब जीयाँ कराँ सेव।
हिरदे जपूँ सतनाम को, सीख सुनूँ गुरुदेव॥
सत शरधा हिरदे बसे, पूरन हो विश्वास।
केवल तेरी प्रीत में, राखाँ गिन गिन स्वास॥
बँध बँध सीस का कट जाये, पर प्रीती रहे चित माईं।
अनन भगत माँगाँ प्रभू, पल पल चरन ध्याईं॥

**रसना तेरे नाम की, रस जाये मोर शरीर।**
**'मंगत' पलक ना विसराँ, पद नारायन सुखसीर॥ 469**

उस्तत तेरे नाम की, दिवस रैन चित भाये।
दीजो परम उद्धारता, गोबिन्द केशवराये॥
सकल पदारथ की दूषना, मन से होवे दूर।
चरन कँवल की प्रीत में, मन तन रहे मख़मूर॥
काल जाल सकला मिटे, परसाँ शबद अनूप।
प्रेम ख़ुमारी नित चढ़े, जाये भरम का कूप॥
राग द्वेष मनसा जाये, मनुआँ हो इस्थीर।
घट घट देखूँ तुध रूप को, मिटे करम तक़सीर॥

मान मध सब नाश हो, खिमा करे परवेश।
दया धरम और धीरता, परसाँ सुख सन्देश॥
वैर बदी मन से मिटे, प्रेम पाऊँ परगास।
सिमरूँ निस दिन नाम को, धार पूरन विश्वास॥
अन्तर का जाये पाट सब, परतक्ख करूँ दीदार।
नित ही तेरे रूप में, जीव रहे मस्तार॥
छल कपट को त्याग के, सब से राखाँ हेत।
समाँ विचारूँ अन्त का, तजूँ पाप की नीत॥
मोह माया के भरम से, जीवन होवे शान्त।
निर्मल दीजो ज्ञान प्रभ, मिट जायें सकल भरान्त॥
द्वैत भरम सब नास होये, सम तत्त कराँ पछान।
निस दिन रसना नाम में, सुध बुद्ध हो ग़लतान॥

**सम्पत माँगूँ सत धरम की, दात करो दातार।**
**अनमत 'मंगत' नित करे, प्रभ तुमरे दर पुकार॥ 470**

सतगुर पूरन मेल भयो, पाई साची जुगत।
सत असत निरनय किया, पद परसा जीवन मुकत॥
सत सरूप को खोजया, पूरन जुगती पाये।
शाखा लखी तत्त योग की, सतगुर सेव कमाये॥
पाँच तत्त का पुतला, ये देह धाराकार।
सत सरूप तिसमें रमे, सतगुर सुनो विचार॥
चेतन पुरष नित अनादी, घट घट रह्यो व्याप।
परगट होवे गुर जुगत से, जो नित सेव कमात॥
अखल निरंजन जोत, सरब को सरजनहार।
साची जुगत जिन सेवया, तिन पाया दीदार॥
सकल परकिरती नश्वर, छिन आवे छिन जाये।
सत सरूप इक आतमा, घट घट रह्या समाये॥
जब लग सत परतीत नहीं, मन नहीं पावे ठौर।
बाँधा करम की जेवड़ी, फिरे चौरासी घौर॥

अधिक कलेश में जीव ये, भरमे दिन और रात।
बिन सिमरे भगवंत के, कभूँ ना छूटन पात॥
मानुष देह को पाय के, सत तत्त आतम खोज।
छूट पावें संसार से, मिले अमर पद सूझ॥
आनन्द सरूप है आतमा, अजर अमर अबनाश।
सिमरन तिसका कीजिये, कटे करम की फाँस॥
सत साधन सत जुगत को, हिरदे करो विचार।
परम तेज घट में मिले, इच्छया जाए अंधकार॥

**आतम तत्त विचार से, जाए भरम चित रोग।**
**'मंगत' पद तब परसिये, जब पूरन गुर संजोग॥471**

एह बिध तत्त को खोजिये, भाओ प्रेम के साथ।
तिमर जाये सब जीव का, परगट पावें नाथ॥
आहार विहार करे जुगत का, जो मन को धीरज दे।
सतनाम सिमरन करे, योग जुगत को ले॥
उठ परभाती बैठ के, मनुआँ कर सुचेत।
जिस ठाकुर की रचना, तिस चरनी धर परतीत॥
मन पवन को एक कर, सतनाम जप सार।
जाये व्याधी मन की, पाएँ शबद की धार॥
सुरत रूप अंतर को आवे, ले के साचा नाओं।
शबद रूप हो परगट होवे, पावे गुरमुख थाओं॥
अन्तर बाहर सम कर राखे, मनुआँ नाम कमाये।
उलट पलट पवन को देवे, पलपल जुगत लखाये॥
छिन छिन मन से दुर्मत छोड़, सतनाम चित लाये।
अबगत रूप शबद घर परसे, उदर दीप सुख पाये॥
सुरत समानी प्रान की धारा, प्रान शबद को खाये।
प्रन अपने को नेहचल करके, गुरमुख जुगत कमाये॥
खैंचा खैंची मन की टूटे, पवन की सोध कमाये।
जाग्रत भयी सुती होई नागिन, सुखमन बन्ध खुलाए॥

शबद गरज आकाश जाये कीनी, सहज सुन्न के घाट।
ताँ में प्रीती जिसने पाई, फिर गरभ नहीं आत॥
**सतनाम नित साधिया, बैठ पवन के तीर।**
**'मंगत' दृष्टि दिव्य खुली, घट पायो शबद का नीर॥ 472**
जीवन रूप मुरारी, नित ध्याओ मन के माहीं।
बिन सिमरे भगवन्त के, फिर फिर जूनी पाईं॥
परम आनन्द सो रूप है, तीन काल परकाश।
नित सिमरो साची जुगत से, नित मन करो बिलास॥
तृखा जाये सब जीव की, जब सतनाम कमाये।
पूर मनोरथ सब होवे, प्रभ चरनी लीन समाये॥
अन्तर नाम पछान के, मन की हरी वियाध।
शबद रूप घर परसिआ, धारी सुन्न समाध॥
ऊँचे शिखर समाया, सुनी शबद की तान।
मन में मन परसन्न भया, घर भेंटे पुरख सुजान॥
निस दिन प्रीती शबद में, अधिक परापत पाये।
सतगुर साध की सेव से, निज घर आन समाये॥
अघट नाद घट में होवे, पाँच दोख भये नास।
अपने आप समाया, अबगत जोत परगास॥
घालन साची नाम की, गुरमुख घाले कोये।
नाम रतन जिस पाया, फिर जनम नहीं होये॥
उट्ठत बैठत सिमर लो, अमरत नाम सुखसार।
मनसा होवे लीन सब, परसें शबद निर्धार॥
अगोचर बानी घर परगट जानी, तीन ताप भये दूर।
अनहद नाद घर परगट हुआ, साखी रूप हज़ूर॥
**ये ही साची बन्दगी, सकले दोख मिटाये।**
**'मंगत' शबद पहचानया, जो जल थल पूर समाये॥ 473**
अबगत नाम साहब का सिमरो, मन तन होये खुशहाल।
बंधन से मुक्ता होवे, जीवन पाये निहाल॥

पूरन पुरख की सेव से, मनसा पूरन होये।
काल करम संकट मिटे, आवागवन सब खोये॥
अबनासी संग नित रमे, सतगुर सीख लखाये।
माया जाल सब लीन हो, जब सत सेव कमाये॥
नित ही नाम को सिमरिये, अन्तर पवन समाये।
बार बार साधन करे, घर में सतपद पाये॥
मूढ़पना जाये जीव का, भय भरम होए नास।
गुपत शबद पहचान के, नित नित प्रीत बिलास॥
सुफल जनम तिसका भयो, जिस पाई सतसार।
अन्तरमुख हो गाया, अबगत नाम मुरार॥
नाम सिमर नाम सिमर, नित कारज साचा भाल।
झूट जगत में आय के, भज लो दीनदयाल॥
अन्तर तेरे नित रमे, घट घट जाननहार।
भाओ प्रीत से सिमर लो, खाट जनम की सार॥
परम धाम सो रूप है, सब जग वहाँ समाये।
साचा थाओं पहचान के, नित लियो प्रीत कमाये॥
नित आनन्द नित परगासा, नित ही सरब आधार।
पल पल तिसको सिमर लो, सुन साधू बचन आपार॥

**एक नाम की प्रीत में, तन मन दीजो वार।**
**'मंगत' प्रभ की भगत से, नित हूँ नित बलिहार॥ 474**

पूरन पुरख प्रभ सिमर लो, दुर्लभ जग में कार।
बंधन से मुक्ता होवे, मिटे चौरासी धार॥
सत रूप है तिसका, जुग जुग पूर समाये।
सिमरन कर पलपल माहीं, भरम करम दु:ख जाये॥
प्रभ अपने से माँगयो, सत धरम निज सार।
कूड़ कपट जाये दूषना, होवे जीव निस्तार॥
करुनाकर तूँ आप स्वामी, दीजो सुफल विचार।
कूड़ भरोसा छाड के, नित चरन कँवल आधार॥

सब कुछ तेरी दात है, तू नित बख़शनहार।
नित सिमरूँ तुद चरन को, पल नहीं विसरूँ सार॥
मन मूरख नहीं सूझता, पल आवे पल जाए।
राख लीजो प्रभ अनमत, नित तेरी सरनाये॥
अजर अमर अबनाशी तूँ ही, पल में होत सहाए।
जिस जन राखी टेक प्रभ, तीन काल सुख पाये॥
मन की दुर्मत सब हरो, परचंड करो ज्ञान।
सर्वज्ञ करके सिमराँ, प्रभ तुझको तीन जहान॥
मोह माया ममता हरो, दीजो विवेक आपार।
प्रीती तेरे चरन की, घट घट हो संचार॥
लाख तपीशर तप करें, और देव करें अरदास।
कह बिध उपमा मैं कराँ, कूकर अन्ध भरवास॥

**अपने भाने बख़श दे, तूँ नित बख़शनहार।**
**'मंगत' माँगे दीनता, रज सकल जीयाँ पदसार॥ 475**

तूँ परमेश्वर नित सुखदाता, दीजो चरन की सेव।
निमख निमख कर सिमरन कराँ, सत परतीती गुरुदेव॥
सूखे तरवर को फल लावें, पाथर जन्त टिकायें।
सूखे सरोवर नीर बहावें, पिंगू गिरी चढ़ायें॥
बिन्ध से तूँ पिण्ड को साजें, पाथर नीर तरायें।
गूंगा करे अकथ की कथना, तेरा अन्त पार नहीं पायें॥
बिना मूल के परगट कीनी, भव दुस्तर की बेला।
गिन गिन थके ना गिनती आवे, प्रभ अचरज तेरा खेला॥
सबके भीतर आप समाया, रहत सदा अछेदा।
सिद्ध तपीशर नित जस गावें, पायो किसे नहीं भेदा॥
आलख रूप निरंजन तेरा, जोगी जती नित ध्याये।
अपरम अपार तेरी प्रभ लीला, कथने में नहीं आये॥
पल में मूरख होये सयाना, रंक को राज बिठाये।
पल में भूप होवे भिखारी, दर दर भीख मँगाये॥

सूखे फ़रश करें हरयावल, हरियाँ देवें सुखाये।
अनहोइयाँ नूं तू करें, होईयाँ करें फ़नाये॥
तूँ जगदीश्वर सरब रमीना, अपरम अपार अथाये।
ज्यों ज्यों भावी त्यों चलावे, ठाकर बेपरवाहे॥
नित करो अरदास स्वामी, पल पल प्रीत कमाओ।
जैसी तिसकी आज्ञा, ऐसी मन रीझाओ॥

**पारगरामी भज सुखदेवा, जो सकले ताप विनासे।**
**'मंगत' अधिक प्रीत से, करो चरन कँवल अरदासे॥ 476**

सतनाम हिरदे जपो, सत सेवा चित धार।
पावें दीरघ शान्ती, जो मन से करे विचार॥
सरब रसों में रस भरे, सब में करे पसार।
अजर पुरख परमात्मा, पल पल हिये चितार॥
बिपता तेरी सब मिटे, आनन्द जीवन पाये।
दीनदयाल प्रभ सिमर लो, जो पल पल होत सहाये॥
सब कुछ साहब दात है, धन माल इक़बाल।
सिमरो भाओ प्रीत से, सरब नाथ गोपाल॥
भव जल दुस्तर अपार है, बिन सिमरन दुःख पाये।
अधिक सयानफ़ मन धरी, अंत निरासा जाये॥
सखा संग ना को होये, अंत चलन की वार।
एको जप नारायन को, जो देवे सुखसार॥
अन्तर तेरे वसदा, नित अमरत की खान।
तीन काल सुख देत है, नहीं मूढ़ा करे पछान॥
सत साधू के मेल से, अंतर की गत पायें।
गुपत रूप परमातमा, तीन काल दरसायें॥
पाप करम सब दूर हो, मन आवे उपकार।
केवल प्रीती सतनाम की, मन में करो विचार॥
कलह कलेश सब मिटे, अमरधाम को जाये।
नित प्रीती सतसंग में, गोबिन्द के गुन गाये॥

**करता हरता जान के, हर चरनी चित धार।**
**पावें पद निर्वान को, 'मंगत' करी पुकार॥ 477**

सोवत समाँ ना खो गुनी, उठ के लेख विचार।
विच मुसाफ़त आय के, सत मारग लख सार॥
मिथ्या भरम ये जीव को, तीन काल भरमाये।
बिन सतसंग ना छूटिये, कोटक करें उपाये॥
मानुष जनम को पाया, उठ साचा अर्थ विचार।
छिनभंगुर सब जाल है, क्यों भरमें अंधियार॥
पारब्रह्म प्रभ सिमर लो, पावें इस्थित धाम।
दुर्लभ जीवन जगत में, हर भगती बिसराम॥
माया के अभिमान में, नित प्यासा जाये।
भरम की लागी दूषना, कोट जनम भरमाये॥
करम भोग की इच्छया, कभूँ ना पूरन होए।
दिवस रैन रुत मास में, परचंड कित गुन होए॥
आसा ले के जनमया, आसा में औध गँवाए।
जरा जवानी बालपन में, नानाँ खेल खिलाए॥
करम रूप जंजाल ये, पल पल रूप वटाये।
छिन सुखिया छिन दुःखिया, नहीं पलक शान्त चित आये॥
क्या राजा क्या भिखारी, क्या पण्डत गुनवंत।
ऐसे भरम ग़ुबार में, तीन काल भरमंत॥
सुख के जतन बहु करें, कोटक करें तदबीर।
बिन सिमरे प्रभ नाम के, रोवत जायें आख़ीर॥

**सत सरूप की खोज कर, जो मन को देवे शान्त।**
**'मंगत' करम की दूषना, ये दीरघ जीव भरान्त॥ 478**

आलख शबद विचार कर, जो सरब जीयाँ आधार।
साचे गुर की सीख से, उतरें भवनिध पार॥
सदा अजन्मा नित परिपूरन, सो ठाकर निरधार।
मनमुखता को छोड़ के, जप लो बारम्बार॥

साची सिखया जगत को, सत हुकम करतार।
जो चाहें सत शान्ती, सतनाम चित धार॥
औगनकारी मन ये, नित रहे तुम्हारे पास।
संकट से कैसे छुटें, नित धारे बिख की बास॥
छिन धावे आकाश में, छिन सोधे पाताल।
मूरख जीव नहीं सूझता, पल पल प्रीती पाल॥
विख अगन को भोगता, जल जल होये अंगार।
सत सीतल होवे नहीं, जुग जुग भरमें सार॥
मत भूलो इस दूत से, जो तीन काल भरमाये।
शमशीर पकड़ विचार की, नित तिस घात लगाये॥
मन मानी सब छाड के, भावी प्रभ विचार।
छिन छिन सिमरो सतनाम को, शान्त पायें अपार॥
देव मुनी नित गाँवदे, पततपावन सतनाम।
मन की बिपता सब हरे, जीव देवे बिसराम॥
समाँ अमोलक जान तू, मानुष देह जो पाये।
सतनाम प्रभ सिमर लो, घालन ये सुखदाये॥

**सत सरूप भगवन्त है, परम आनन्द की खान।**
**'मंगत' पल पल सिमर लो, जग जीवन लाभ पहचान॥ 479**

सतनाम की प्रीत से, मन आया सत ठौर।
रोम रोम सुख पाया, मिटा करम का शोर॥
निर्मल प्रीती नाम से, पायो अबचल धाम।
शबद समागम होया, मन लीना बिसराम॥
सहज सहज मन रस गया, पार बह्म के रूप।
दुर्मत गई सब कल्पना, पाई दिसा अनूप॥
प्रेम साहब का पाये के, मनुआँ पिंगल होये।
मिटी जगत की कामना, काल जाल सब खोये॥
आवन जावन विसरया, लोक परलोक भरम।
सत सरूप समाया, पूरन पाया करम॥

सत साधू की सेव से, जीवन भया उद्धार।
घर में घर को पाया, अनहद शबद गुंजार॥
सुनो सहेली उस देश की, जाँ साचा कंत समाये।
बिन धरनी के देश है, बिन देह पुरष दिखाये॥
दीपक जले अगम का, सम कोट भान छबि धार।
दमके निस दिन दामनी, बिन बादल गड़कार॥
उतपत परले वहाँ नाहीं, नहीं काल परवेश।
विरले गुरमुख जौहरी, पाया निर्मल देश॥
अमरत भोजन खाया, अमरपुरष के संग।
रल मिल एको होया, रूप रेख भयो भंग॥

**ऐसे निर्मल देस की, नित ही कथा विचार।**
**'मंगत' जो गये धाम को, नहीं बौहड़ गवन संसार॥ 480**

अगम पुरष को सिमरिये, जीवन हो कल्यान।
अन्तरगत में गत मिले, शबद पुरख निर्वान॥
साची कामन कंत मनावे, पलपल हुकम पछानी।
अपना आप मिटाये जोई, कामन सो ही सियानी॥
जब लग अपनी हिकमत धारें, ख़सम नहीं पतियाए।
छल बल किये ते भूले नाईं, बिरथा जनम गँवाए॥
साचा ठाकर बड़ा सयाना, घट घट जाननहार।
प्रेम बिना नहीं परसन होवे, कोटक करें विचार॥
आप मिटावें प्रेम को पावें, पल पल शुकरगुज़ार।
देख निमानी साहब हरखावे, करे परगट रूप आपार॥
देख छबी मन होई खुशहाली, सुध बुद्ध सभी विसराई।
निज घर में मंगल को पाया, तीन ताप दु:ख जाई॥
मारग पिया का कठिन कुठाला, ऊँचे शिखर की बाटी।
बिना सीस के मारग चाले, करके जीवन घाती॥
साचा जीवन जब साहब का पाया, होई मुशक़्क़त पूरी।
अगम देस में चाले सो ही, जो राखे सिदक़ सबूरी॥

औगनहारी गुन ना राखे, कैसे कंत मिलाये।
बिना सुहाग जीवन सब खोटा, मिथ्या औध गँवाये॥
सच सुहागन संग प्रीत रख, जो निहों तोड़ निभाये।
पल पल प्रीत पिया की गावे, साचा धीर बन्धाए॥

**साची प्रीत जभी चित आई, सत ठाकर दरसाये।**
**'मंगत' औगन सकल विनासे, जब साचा कंत मिलाये॥ 481**

तूँ साचा साहब अपरम अपारी, नाम कीजो बख़शीश।
सिमराँ भाओ प्रीत से, अधिक शोभा जगदीश॥
तुमरी किरपा सब संकट नासे, आनन्द जीवन पाये।
पलपल नाम तेरा मैं गावाँ, नहीं पलक एक विसराये॥
अनन भगत दीजो प्रभ देवा, नित ही भीख ये माँगे।
भव दुस्तर जल अती भयंकर, तुम किरपा से लाँगे॥
ज्ञान ध्यान कछु रसना नाईं, ना यतन कोई पाई।
एक टेक चित चरन कँवल की, नित पाऊँ सरनाई॥
भगतवत्सल नाम स्वामी, गुनी मुनी विचारे।
दीनदयाल कीजो नित दाया, भव जल कीजो पारे॥
एक टेक नित एक भरोसा, मन में रह्यो समाई।
बिन तेरे दर सूझे नाही, तीन लोक दुःखदाई॥
हो किरपाल पूरन गत स्वामी, दीजो सत विश्वासा।
भरमन सकल जीव की नासे, इक चरन कँवल की आसा॥
बार बार करूँ बेनती, और करूँ अरदास।
एको सिमरन नाम का, दीजो चित भरवास॥
सरब जगत आधार तूँ, सरब शकत दातार।
निहथावाँ जन राख लें, अपने सच दरबार॥
टूटी को मेलें प्रभू, जो किरपा करें आपार।
सत कीरत अपनी देवें, अनमत करें उद्धार॥

**तूँ दाता इक देखिया, सरब कला समरथ्थ।**
**'मंगत' माँगे नाम रस, प्रभ हरयो भरम कुपथ्थ॥ 482**

तूँ दाता दातार है, सरब जगत प्रतिपाल।
तुमरा सिमरन जगत में, तन मन करे निहाल॥
सब जग तुमरा तेज है, कियो अपना आप पसार।
जब अंतरगत में सोधया, इक पाया तेरा विचार॥
आद अनादी सत तूँ, सरब कला जगदीश।
अपनी माया धार के, बहुरंग खेलें ईश॥
अन्तर सब के रम्मया, सब से रहत न्यार।
बिस्माद ये लीला प्रभ तेरी, नहीं आवे चित विचार॥
झूट पसारा जगत का, सरजनहार सच एक।
बाज़ी झूट बाज़ीगर साचा, एह बिध लिखिया लेख॥
झूट जगत विसारया, इक राम चरन की प्रीत।
भरम माया का काटया, जो दुरगम गहरी भीत॥
सच को सच कर जानया, झूट गई परतीत।
तन मन में भई शान्ती, परसी दिशा पुनीत॥
मन के औगन नित धोये, नाम की रसना लाये।
दीनदयाल दया करी, तब काल जाये बिनसाये॥
नित सिमरो प्रभ नाम को, जो पलपल होत सहाये।
बख़शनहार दातार है, लियो चरनी सीस निवाये॥
सच ठाकर जिन सेवया, पूर मनोरथ पाये।
तीन लोक उपमा करे, हरजन की सेव कमाये॥

**साची प्रीती राख के, भज लो नाम गोपाल।**
**'मंगत' भगती रसना, तन मन करे निहाल॥ 483**

सतनाम साहब का गाओ, जग जीवन लाभ विचार।
अन्तरयामी सरब का ठाकर, हिरदे माहीं चितार॥
उट्ठत बैठत सिमर लो, हरजन सेती प्रीत।
दुर्मत जाल सकल भ्रम नासे, हरचरनी लागे चीत॥
इन्द्री विखे विखाद से, मनुआँ छूटन पाये।
अन्तरगत हरनाम में, नित ही सेव कमाये॥

मन अपने को ठाक के, पकड़ो धारा नाम।
निस दिन सिमर प्रीत से, पावें दृढ़ बिसराम॥
मोह माया ग़ुबार में, क्यों नर पाये पसार।
बन्धन निस दिन है घना, बिन सिमरन दुःख सार॥
मान गुमानी बहु गुनी, अन्तकाल पछताये।
छाड चला जब पिंजरा, काल गरासत पाये॥
सहायक कोई ना हुआ, जब जम दीनी पीड़।
देख देख पछतावता, नैनों विगसे नीर॥
धरी धराई छाड के, उठ चलया नाँगे पाये।
संग सखा परिवार ना, होवत कोई सहाये॥
कूड़ कपट की पोटली, भारी सिर असगाह।
मारग दुस्तर चलया, कौन दिखावे थाह॥
जैसी करनी कर लई, होत सहाई अन्त।
मूरख छूट ना पाइये, बिन सिमरे भगवन्त॥

**पल घड़ी प्रभ याद कर, जो तीन काल सहाये।**
**'मंगत' तिसे विसार के, निहथाँवाँ जग से जाये॥ 484**

अजर अमर अबनाशी गोबिन्द, सिमरो मन में नीत।
झूट जगत की कामना, और झूट जगत की प्रीत॥
निर्मल सुरती राख के, सतनाम लयो गाये।
यहाँ सुखेला नर बसें, आगे सुख अधिकाये॥
नाम का सिमरन जगत में, सकल मिटावे ताप।
पारब्रह्म परगट होवे, जो अन्तर कीजे जाप॥
सत करम विचार करे, सरब जीयाँ संग हेत।
पाप करम की मैल को, धोवे नित्यानीत॥
चार दिनाँ दा जीवनाँ, देखे इस संसार।
सब से प्रीती नित कर, नहीं दुर्बचन विचार॥
परभाती सन्ध्या काल में, सिमरे नाम अखण्ड।
दुःख सुख भावी राम की, परस पावें आनन्द॥

छाया रूप इस जगत से, मन को बाँधे नीत।
अन्तरगत नित सिमरिये, साचा नाम पुनीत॥
संकट सकले नाश होवें, प्रभ भगत चित आये।
ज्ञान विज्ञान की रसना, नित मन को तृपताये॥
सत करम को साध के, बाज़ी लीनी जीत।
पाप कूप मन का तजे, हरजन सेती प्रीत॥
अपना सुख त्यागया, पर को नित सुख देत।
सतनाम हिरदे जपें, ले सतगुर परतीत॥

**मारग धरम पहचान के, जीवन भयो सुख रूप।**
**'मंगत' धरम विचार से, मिले अबगत शबद अनूप॥ 485**

निर्भय रूप नारायन का, संताँ किया विचार।
जो जो सिमरे प्रीत से, पावे मोख द्वार॥
मिथ्या माया की रचना, तीन काल भय माईं।
उतपत परलय नित होवे, जीव को धीरज नाईं॥
बिनसनहारी वस्त जो, तीन काल दुःख रूप।
बिन सिमरन भगवन्त के, सब ही भय सरूप॥
आवन जावन चक्कर ये, काल रूप संसार।
निर्भय एक भगवंत है, जो जनम मरन से न्यार॥
जिनाँ सच पहचानया, निर्भय पायो धाम।
मिटी जीव की भरमना, नित आनन्द बिसराम॥
साची सीख विचार के, सतगुर चरन पधार।
सतनाम की गत लखें, उद्धरें भवनिध पार॥
मनमानी सब छाड के, मारग पायें विवेक।
पल पल नाम विचारिये, राखिये प्रभ की टेक॥

**जीव पावे सत शांती, मिटे गवन संसार।**
**'मंगत' साचे नाम को, पल पल हिये विचार॥ 486**

रे मन मेरे हरी चरन चितारो। रे मन मेरे.....॥
बिन हरी सिमरन शान्त न होई। बिखे व्याध नित चित परोई॥
मिल सतसंग सत जतन विचारो। रे मन मेरे हरी चरन चितारो॥

खल बुद्धी ममता में घेरी। नित डूबे विच करम की फेरी॥
उठ धार बचन सुख कारो। रे मन मेरे हरी चरन चितारो॥
मात पिता ना संग कोऊ नाती। अपने सुख के बने सब साथी॥
उठ मारग मुकत लखारो। रे मन मेरे हरी चरन चितारो॥
जम करीड़ा करे नित भारी। अन्तकाल तेरी करे ख़वारी॥
विच जीवन करनी धारो। रे मन मेरे हरी चरन चितारो॥
माल मुलक कुछ संग ना चाले। निस दिन बिपता मन ये घाले॥
**'मंगत'** भगत प्रभ धारो। रे मन मेरे हरी चरन चितारो॥**487**

कह बिध गावाँ प्रभ नाम अमोला। कह बिध गावाँ ..... ॥
कूड़ कपट अन्तर चित थापी। अपने आप का बनया घाती॥
नित पाप करम में मन भूला। कह बिध गावां प्रभ नाम अमोला॥
जनम जनम मन दुबधा धारी। इच्छया रोग लगा वड भारी॥
विच विषयन में चित डोला। कह बिध गावां प्रभ नाम अमोला॥
ना सतगुर का ज्ञान पछानी। ना सतसंग ना कीरत जानी॥
धार गरब फिरे नित फूला। कह बिध गावां प्रभ नाम अमोला॥
पूरन भाग जभी चित पाये। गुरमुख साधु मेल मिलाये॥
तब सार शबद सुख खोला। कह बिध गावाँ प्रभ नाम अमोला॥
निसदिन शबद में प्रीती राखी। पल पल ध्यावां साहब साखी॥
मिट गयो जम दा रौला। कह बिध गावां प्रभ नाम अमोला॥
सतसंगत सत सेव कमाई। सत विश्वास हिरदे में आई॥
**'मंगत'** सत पद तोला। कह बिध गावां प्रभ नाम अमोला॥**488**

रे मन अन्त की करो त्यारी। रे मन अन्त .....।
यह दुनियाँ दिन चार तमाशा। पल पल में छीजत नर साँसा॥
नित जम करे पुकारी। रे मन अन्त की करो तयारी॥
सत विसार कूड़ चित भाखे। पाप करम की रसना चाखे॥
ओड़क बड़ी ख़वारी। रे मन अन्त की करो तयारी॥
सत विसार क्यों भरमाया। कूड़े लालच क्यों लपटाया॥
छड जाना महल अटारी। रे मन अन्त की करो तयारी॥
नाम साहब दा पल नहीं लीना। पाप कूप में नित लवलीना॥
सिर बिपता ओड़क भारी। रे मन अन्त की करो तयारी॥

ज़ोर ज़ुलम में नित ग़लताना। भूल गयो साहब फ़रमाना॥
नित फिरे गरब को धारी। रे मन अन्त की करो त्यारी॥
जो कीना सब ही दुःखदाई। मोह में दीना धरम भुलाई॥
परसें नरक द्वारी। रे मन अन्त की करो त्यारी॥
जीवन का कुछ समाँ विचारो। सत करनी हिरदे में धारो॥
**'मंगत'** पायें छुटकारी। रे मन अन्त की करो त्यारी॥**489**
ऐसी करनी रे मन धारो। ऐसी करनी.....।
सत करम हिरदे में राखो। सत पुरषों की सिखया चाखो॥
पायें शबद निर्धारो। ऐसी करनी रे मन धारो॥
सब जीवों की सेव कमावें। भाओ भगत सत प्रीत लखावें॥
परसें शांत अपारो। ऐसी करनी रे मन धारो॥
एक प्रीती प्रभ चरनी राखे। साचा नाम अन्तर रस चाखे॥
मिट जायें मन बिकारो। ऐसी करनी रे मन धारो॥
खिमा ग़रीबी चित में साधो। पारब्रह्म हिरदे आराधो॥
निज रूप से प्रीत विचारो। ऐसी करनी रे मन धारो॥
अमरत शबद घट परगट कीजो। मिल सतगुर सत मारग लीजो॥
मन के हरो विकारो। ऐसी करनी रे मन धारो॥
नित नित प्रीती चरनों में राखो। सब जीवों की सेवा भाखो॥
घट के पाट उगाड़ो। ऐसी करनी रे मन धारो॥
पूरन पुरख एको परमेश्वर। सरब व्यापक सो जगदीश्वर॥
नित प्रीती चरन विचारो। ऐसी करनी रे मन धारो॥
गुनी ज्ञानी नित समझायें। अपना कीया पल पल पायें॥
सत करनी लेख लिखारो। ऐसी करनी रे मन धारो॥
सत संगत में प्रीती राखो। सतगुर बचन की रसना चाखो॥
**'मंगत'** पावें मोख द्वारो। ऐसी करनी रे मन धारो॥**490**
सुकृत सीख सुनो मन मेरे। सुकृत सीख.....।
एक नाम पल पल में ध्याओ। अंतरगत तिस का जस गाओ॥
पावें सुख घनेरे। सुकृत सीख सुनो मन मेरे॥
नाम साहब दा भरम चित नासे। खिमा ग़रीबी घट परगासे॥
मिट जायें पाप दुःख केरे। सुकृत सीख सुनो मन मेरे॥

परम सम्पत जीवन सुखरासी। मोह माया की काटी फाँसी॥
जो प्रभ चरन चितेरे। सुकृत सीख सुनो मन मेरे॥
सत सिखया ये ही सुखरासी। पल पल सिमरो पुरख अबनासी॥
सत मारग लेख नबेड़े। सुकृत सीख सुनो मन मेरे॥
कोई वस्तु ना सुखदाई। छोड़ जावें नर धरी धराई॥
जब चलेंगा साँझ सवेरे। सुकृत सीख सुनो मन मेरे॥
कूड़ मुशक़्क़त नित उठ घालें। पाप करम जम फ़ाँसी डालें॥
नित फिरें चौरासी फेरे। सुकृत सीख सुनो मन मेरे॥
बारम्बार तोहे समझाई। साचे मारग की लयो प्रीत कमाई॥
ये लाभ है चाम शरीरे। सुकृत सीख सुनो मन मेरे॥
जो कीना सो निश्चे पावें। क़दम क़दम पर दु:ख उठावें॥
उठ छोड़ो कूड़ बखेड़े। सुकृत सीख सुनो मन मेरे॥
बाल जोबन का मध नित राखी। काल पुरख की सुनी नहीं साखी॥
भज गोबिन्द भाग वडेरे। सुकृत सीख सुनो मन मेरे॥
नित नाम साईं दा ध्याओ। तिस आज्ञा पलपल गाओ॥
चल मारग सुख चंगेरे। सुकृत सीख सुनो मन मेरे॥
नित नौबत चलन की बाज रही। पल पल में सिर पर गाज रही॥
**'मंगत'** आयो समाँ आख़ीरे। सुकृत सीख सुनो मन मेरे॥**491**

ऐसा मारग धरम विचारो। ऐसा मारग .....॥
मन की कलपना सब ही नासे। शरधा प्रीती घट में बासे॥
चित में आवे उपकारो। ऐसा मारग धरम विचारो॥
पर दु:ख हरना काज विचारी। निज सुख को नित ही वरतारी॥
परसें ग़रीबी सारो। ऐसा मारग धरम विचारो॥
छिन छिन नाम साहब दा पीयो। साची प्रीत में जीवन जीयो॥
चढ़े प्रेम का रंग अपारो। ऐसा मारग धरम विचारो॥
बादमुबाद ना हिरदे पेखो। साँझ प्रीती सब संग लेखो॥
देखें सर्वज्ञ रूप मुरारो। ऐसा मारग धरम विचारो॥
मन अपने की मैल को धोयो। पर का दोख ना हिरदे में लोयो॥
सब जतन ये ही सुखकारो। ऐसा मारग धरम विचारो॥
सत करनी नित कारज कीजो। सतसंग से प्रीती सीजो॥

पावें शुद्ध विवेक अपारो। ऐसा मारग धरम विचारो॥
सब जीयाँ की टहल कमाओ। मन में आज्ञा प्रभ वरताओ॥
पावें शबद रतन निर्धारो। ऐसा मारग धरम विचारो॥
नित शबद को अंतर सोधो। पद निर्मल मन अंतर बोधो॥
पाएँ समता ज्ञान विचारो। ऐसा मारग धरम विचारो॥
सत खोजन में चित राखो। सत शबद की बानी भाखो॥
**'मंगत'** आवागवन भ्रम टारो। ऐसा मारग धरम विचारो॥**492**

सो धोबी जो मन को धोवे।
मोह माया की मैल उतारे, अन्तर नाम परोए।
शबद सिला पर खुम्ब चढ़ाई, प्रेम का नीर बिरोए॥
साबन नाम से घिसना कीनी, धीर मुशक़्क़त जोवे।
काम क्रोध अगन सब नासी, जब ऐसी धोनी धोवे॥
ध्यान धूप में खोल सुखावे, ज्ञान रतन चढ़ावे।
ऐसी चादर जो जन ओढ़े, उस धोबी का पास ना छोड़े॥
जो चादर ले जग से सोवे, **'मंगत'** जीवन सुफल तिस का होवे॥**493**

हमरे दिल का शौक़ फ़क़ीरी है।
सुन्न शहर में जलसा कीना, लिया सिदक़ सबूरी है।
एक ब्रह्म सब जग में देखा, ऐसी लेई गम्भीरी है॥
पाँच चोर महल में पकड़े, पाई अधिक शूरबीरी है।
भँवर गुफ़ा में आसन कीयो, सुनी रबाब नफ़ीरी है॥
आवन जावन जग को देखा, पाई अजब दिलगीरी है।
शोक रोग सब मन के नाठे, पायो घर अमीरी है॥
**'मंगत'** जीवन अमर भयो, जब सुनी शबद गत पूरी है॥**494**
कोई मिले हमारे देस का, तब पाऊँ पूरन संदेश।
बिन धरनी के मन्दर साजा, बिन देह बसे नरेश॥
नैन बिना सब कुछ देखा, बिन जीब्भा कथे सो लेख।
बिन चरन के मारग सोधा, अगम निगम तत्त भेस॥
बिन बादल वहाँ मेघ किलकारे, दामन दमके विशेख।
जो जाये सत रूप समाये, मिट जायें काल कलेश॥

आवागवन का संसा नासे, करे अमरधाम परवेश।
निर्मल नीर पीवे घर भीतर, सत शबद सुखरीश॥

**एक ना दूजा देखन आवे, आद पुरख बिन सीस।**
**'मंगत' जीवत मरन पछाने, सो पद परसे जगदीश॥ 495**

राम नाम सिमरन करो, सतसंग राखो प्यार।
साचा मारग धरम का, सन्ताँ करी पुकार॥
जीवन को निर्मल करो, सत सेवा चित धार।
सरब जीवों की सेव से, पावें दरस मुरार॥
उट्ठत बैठत सिमर लो, साचा इक करतार।
जाये भरम की दूषना, जीव पाये छुटकार॥
इस सागर संसार में, सब ही दु:खिया जन्त।
तिस पाई सुख शान्ती, जिन सिमरा नाम भगवंत॥
औधी निसदिन जात है, पल पल करो विचार।
बिन सिमरे भगवंत के, अंत पायें दु:ख आपार॥
साचा मित्तर साचा स्वामी, साचा सरजनहार।
निमख निमख तिस याद कर, मिट जाई करम बिकार॥
एक उपाये जान लो, जो हरे करम का रोग।
सतनाम सिमरन करो, जो पावें गुर संजोग॥
सब से प्रीती राखयो, मीठा बोलें बोल।
हिरदे में इक नाम को, भाओ भगत से तोल॥
झूट विकार इस देह के, मन से करो त्याग।
सत मारग प्रभ नाम में, नित उठ के तूं जाग॥

**ये करनी सुख देत है, आवागवन करे नास।**
**'मंगत' कहे पुकार के, हर चरनी करो निवास॥ 496**

## जिज्ञासु-धरम

सत जिज्ञासा धरम पहचानी। शबद रूप मिले निर्वानी॥
सत असत विवेक विचारी। सत आधार जीवन को धारी॥
तन मन अरपन गुर चरन में कीजे। एको पहचाने दूजा छीजे॥

सुध बुद्ध एको प्रभ की राखे। जिज्ञासा धरम मुकत रस चाखे॥
मन के दोख सकल निवारे। निर्मल जीवन प्रभ भगत चितारे॥
बाहरों रोए अंतर उदास। पलपल सिमरे तत्त अबनास॥
एक बिरह हरी चरन प्यास। एको प्रीत पावे गत जिज्ञास॥
राम बिना सब मिथ्या भासे। नित नित खोजे तत्त अबनासे॥
सतपुरषों संग हेत विचारी। सत कीरत नित हिरदे धारी॥
माया बन्धन रूप पहचानी। मुकत सरूप शबद चित आनी॥
पल पल प्रीत धारे जिज्ञासा। तज अभिमान भयो जग दासा॥
निर्मल नीर पीवे हर चरना। सत जिज्ञास पद कीजे निरना॥
एको टेक एको भरवासा। पल पल सिमरे तत्त निरबासा॥
खान पान की सुध बिसराई। शोभा राम चरन चित पाई॥
बाहर की सब दुबधा छोड़ी। अंतर प्रीत हरी चरन में जोड़ी॥
छिन छिन वाट साहब की देखे। पलपल जीवन लावे लेखे॥
जीवन मिरतक जीवन पाये। जिज्ञासु धरम का लेख लखाये॥
ज्ञान बैराग नित अंतर धारे। सतपुरषों की प्रीत विचारे॥
हंग विकार माया भ्रम नासे। जिज्ञासु धरम कोई गुनी उपासे॥

**मोह माया को त्याग के, पद खोजो जिज्ञास।**
**'मंगत' जीवन निर्भय होवे, पद परसे अबनास॥ 497**

गुरमुख जीवन जिज्ञासु पाये। दृढ़ अनुराग हर चरन ध्याये॥
भय रूप माया बिख त्यागे। नित नित सेव हर चरनी लागे॥
एक विश्वास सत रूप में पाये। अबगत नाम निरन्तर गाये॥
परम सखा प्रभ एक पहचानी। नित रखयक चितवे निर्वानी॥
भेद कलपना सकली नासी। जिज्ञासु धरम जब कियो उपासी॥
मीन नीर ज्यों प्रीत विचारी। एह बिध सिमरन साहब का धारी॥
भँवरा ज्यों सुगन्ध लिपटाये। ऐसी प्रीत हर चरन ध्याये॥
उट्ठत बैठत एक ध्याना। सत जिज्ञासु होवे कल्याना॥
प्रभ पावन का मारग एका। जिज्ञासु धरम का करो विवेका॥
सकल पदारथ मिथ्या जानी। एक शोभा हरी चरन पहचानी॥

लोभ मोह विकार हटाये। सतपद आतम के गुन गाये॥
मिल सतगुर सतनाम पहचानी। जिज्ञासु रूप देवे कल्यानी॥
मारग मुकत तभी नर पाये। दृढ़ जिज्ञास प्रभ सेव कमाये॥
साधजनाँ की धूड़ रमावे। सो जिज्ञासु राम गत पावे॥
सकल दोख तज होवे बैरागी। एक बिरह हरी चरन की लागी॥
सुपन रूप जग देखे खेला। सो जिज्ञासु पावे प्रभ संग मेला॥
साची सेव में औध वँजाये। रसना राम की घटघट पाए॥
जग आवन तिस सुफल विचारी। एक टेक प्रभ चरन निहारी॥
कठन दूषना मन की धोई। नित जिज्ञासु धरम परोई॥

**एक प्रीत हर चरन की, दूजी तजी प्यास।**
**'मंगत' पाया परमपद, जीवन रूप अबनास॥ 498**

आवन जावन जगत पहछानी। संकट रूप करम की खानी॥
छिन ठाँडा छिन तपन विचारी। राग द्वेष अधिक दुःखकारी॥
करमफल इच्छया में नित भरमाई। संकट रूप जगत दरसाई॥
सतपद शांत सरूप विचारी। सो जिज्ञासु तत्त सार को धारी॥
मिथ्या माया अन्धकार त्यागी। सो जिज्ञासु परम बैरागी॥
एक आधारी जगत पहचानी। एक प्रीत हरचरन समानी॥
सत जुगती सतगुर की धारी। सो जिज्ञासु सब ताप निवारी॥
आतम तत्त नित खोजन खोजे। दृढ़ विश्वास नाम तत्त सूझे॥
इन्द्री विकार से उपरस होई। सो जिज्ञासु हरचरन परोई॥
ज्यों ज्यों प्रीत हर चरन की पावे। दुबधा नास मंगल चित आवे॥
दीन ग़रीबी मन आये समाये। आज्ञा प्रभ में सब कुछ दिखलाये॥
सत बचन मन धीर समाई। पल पल सिमरे नाम सुखदाई॥
पूरन जतन मन अन्तर राखी। जिज्ञासु धरम की रसना चाखी॥
मन पवन की माल परोई। सतनाम घर परगट होई॥
अन्धकार दुबधा चित नासी। आनन्द सरूप कला परगासी॥
मन की अगन सीतल तब होई। सत जिज्ञासा धरम परोई॥
मानुष जनम सुफल कर जानी। अबगत नाम साहब पहचानी॥

सतनाम जग सार को पाई। सतगुर दया अमरपुर जाई॥
जनम जनम का औगन नासी। सत जिज्ञास में कियो निवासी॥

**माया दुस्तर अथाह है, मिले नहीं वारापार।**
**'मंगत' गुरमुख जुगत से, हरजन उतरे पार॥ 499**

सतनाम परीखा कीजे। सो जिज्ञासु परमपद लीजे॥
सतनाम की खोज अधिकाई। सत-पुरषों के चरन समाई॥
अगम मारग की कथा चित भाये। परबत कन्द्रा में उठ उठ धाये॥
परमपद शान्त सरूप विचारी। सतगुर सेव चरन बलिहारी॥
मन तन करके सेव कमाये। सतगुर बचन में प्रीत अधिकाए॥
दृढ़ विश्वास चित उद्धारी। सतगुर बचन पल पल विचारी॥
नाम साबन संग मन मल हरे। सत परतीत जिज्ञासु निस्तरे॥
संशय त्याग सत मारग चाले। नाम गोबिन्द पल पल चित घाले॥
नित आनन्द पुरख निर्वानी। सतगुर मेल करी पहचानी॥
जीवन में नर आप पहचाने। परम जिज्ञास धरम चित जाने॥
गरब त्याग होये निरमानी। साची सेव अन्तर पहचानी॥
स्वास सुरत का मारग सोधे। सो जिज्ञासु परम तत्त बोधे॥
जीवन में जो मरन विचारी। सो जिज्ञासु सतनाम अधिकारी॥
सत मारग में जीवन काढ़े। सत अनुराग हरी चरन विचारे॥
अमरत मारग अगम की घाट। सतगुर मेल पावे सत वाट॥
लोक लज्या कीरत मध छोड़े। सो जिज्ञासु सत धाम को फोड़े॥
जीवन में सत नाम कमाये। गवन त्याग निज रूप समाये॥
शीतल चित मन अनुरागी। एक बिरह हर चरन की लागी॥
सकल विकार से मन उदासी। सो जिज्ञासु सत रूप निवासी॥

**काया मान को त्याग के, आतम परसे जोग।**
**'मंगत' सो जन सिद्ध भया, पाये गुर संजोग॥ 500**

अधिक बंधन कुल संसारा। काल करम का जाल पसारा॥
जनम अनेक जीव भरमाये। तृखा ना मिटे शान्त ना आये॥
करम भोग रोग अधिकाई। गुनी ज्ञानी नित भरमाई॥

नाना भाँत की विद्या साधी। करम रोग नहीं मिटे उपाधी॥
त्रैगुन माया खेल खिलावे। चक्कर चाढ़ सब जीव भरमावे॥
राजा राना बहु सम्पत वादी। तो भी तृश्ना नहीं मिटे उपाधी॥
चार खानी सब जीव भरमाये। करम जाल नहीं मिटने पाये॥
बाल जोबन जरा विताई। भाँतक भाँत करम कमाई॥
पाप पुन्न बहु भाँत विचारी। राग द्वेष नहीं मिटे अँगारी॥
क्या घर बाहरी क्या विरक्ती। बिन तत्त ज्ञान नहीं मिले शुद्धगती॥
जिज्ञासु धरम जब चित समाया। दुस्तर जग से पार तब पाया॥
भरम विकार निरोधन कीना। तत्त जिज्ञास धरम को चीना॥
एक हरी चरन की ओट विचारी। नित पद सिमर भयो निस्तारी॥
ब्रह्म सत्यम् जग मिथ्या जाता। सत जिज्ञास धरम पछाता॥
अन्तर की गत सहज पछानी। सतगुर मेल सोभा प्रभ जानी॥
निहकरम सरूप शबद रस खाई। सो जिज्ञासु सिद्धगत पाई॥
देह मन्दर विच सुरत समाई। अनहद नाद मंगल चित गाई॥
भरमन मिटी मुकत घर पाया। सतगुर मेल सतनाम ध्याया॥
तीन ताप की तपन निवारी। होये जिज्ञासु प्रभ रूप विचारी॥

**माया भरम गुबार से, जीवन भयो निहाल।**
**'मंगत' मुकत रस पाया, जब सतगुर मिले दयाल॥ 501**

पूरन पुरख कोई गुनकारी। जिस घर अपने की सुध विचारी॥
पाँच तत्त का मन्दर साजा। पचीस प्रकिरत का रचा समाजा॥
कारीगर विच आप समाई। अजब बनत का कोट सराई॥
दस पवन विच खेला कीना। आवत जावत किसे ना चीना॥
पवन को खोजे प्रन को राखे। सतगुर मेल अभय पद चाखे॥
सुरत निरत की तार लगावे। राग छतीसों घर विच गावे॥
देव महेश सीस निवावें। अबगत पुरख का पार नहीं पावें॥
लोकालोक की रचना बहु धारी। सदा अलिप्त विच आप मुरारी॥
सुगड़ सयाना कोई गत बूझे। सत ठाकर को अन्तर सूझे॥
उलट सुरत गगन चढ़ावे। अबगत पुरष का दर्शन पावे॥

काल त्याग अकाल समाई। सतगुर मेल परमगत पाई॥
कोट आकास कोट पाताला। सरब को सरजे दीनदयाला॥
सतपुरषों की जिस सीख विचारी। घर अपने विच मिले मुरारी॥
गरब गुमान काल भय नासा। उदे दीप देख परगासा॥
जीवन जीवे मरन ना पाये। मिल सतगुर सत कथा लखाये॥
अमरत नाम केवल चित जानी। सत ठाकर पायो निरवानी॥
रोम रोम में ठाँड वरताई। सत शबद रसना चित आई॥
काया माहीं देखे निरकाया। आलख पुरख का भेद लखाया॥
द्वन्द विकार गयो परमादा। कठन संग्राम किसे गुरमुख साधा॥

**बाहर की तज कल्पना, अन्तर के पट खोल।**
**'मंगत' रूप नारायन का, रग रग करे कलोल॥ 502**

हर दरजी का महरम पाये। आवागवन का संसा जाये॥
पाँच तत्त गुन तीन का चोला। करम सूत से सीवे निरोला॥
नौ दस मास सीवन में लागा। नाना रंग विच रँगे सवाँगा॥
अजब चोले की बनत बनाई। लखी न जाये साहब प्रभताई॥
पवन गाँठ सहज बन आई। नौ द्वार का कोट बनाई॥
जर जर होया ये चोला पुराना। संग सखा सब भयो बिगाना॥
जनम जनम मैल चित धारी। सुगड़ सुजान कोई मैल उतारी॥
नाम का साबन प्रेम का नीरा। ध्यान सिला धर धोवे मतधीरा॥
सत विचार की चोट लगावे। दुरमत मैल जनम की बहावे॥

**माटी का ये चोला बनया, ज्यों कारीगर दी मरज़ी।**
**'मंगत' चोला अमर तब होवे, जब सतगुर भेंटे दरज़ी॥ 503**

**ऐसा कोई गुनी दरवेशा।**

मोह माया की मैल उतारे, पाप पुन्न नहीं लेशा॥
सुरत संगड़ी अन्तर कीनी, नाम साहब दा पेखा।
स्वपन समान देखी जग रचना, हर पद कीना लेखा॥
काम क्रोध की दुबधा छोड़ी, शबद पायो सुखरीता।
मोह अन्धकार जीव का नासा, हरि चरन प्रेम रस पीता॥

मान गुमान रोग चित नाठे, विच ग़रीबी भेसा।
पारब्रह्म पूरन घर देखा, दुर्मत मिटा अन्देसा॥
सत मारग में इस्थिर हुआ, शबद में कियो परवेशा।
निर्भय नाद गगन में बोले, जम काल का मिटा अंदेशा॥
सत परवाना शबद रस जाना, घट अंतर अबगत देखा।
पूरन सतगुर भेदी मिलया, निज धाम का पायो संदेसा॥

**बिख अगनी सब मन की नासी, सतनाम पायो सत लेखा।**
**'मंगत' विच ग़रीबी रह के, दरस पायो जगदीशा॥ 504**

सिमरो नाम परम सुखदाई, नित सन्त करें पुकारा।
तीन ताप का संकट नासे, घट परस लियो सुखकारा॥
जरा मरन दु:ख व्यापे नाहीं, जो सतगुर सरनी आवे।
भाओ भगत रस अमरत पीवे, सकलो भरम मिटावे॥
अखण्ड भगत आतम परगासी, मिल सतगुर उस्तत कीजे।
भेद पाखण्ड सकल मन नास्यो, गुरमुख जीवन लीजे॥
आठ पहर कीरत रब गाये, तन मन मंगल होई।
सरब जीयाँ दा ठाकर ध्याया, निर्मल दिसा परोई॥
दीन ग़रीबी आसन पर बैठे, खिमा नीर को पीये।
सरब आधार पुरखोत्तम ध्यायो, कोई विरला मर के जीये॥

**दीनदयाल शबद आनादी, छिन छिन प्रीत कमाये।**
**'मंगत' जीवन निर्मल होया, सत कीरत प्रभ पाये॥ 505**

औषध खाए से रोग विनासे। नाम ध्याये से बंधन नासे॥
वेद पढ़े से बुद्ध परगासे। दया करे तब धरम निवासे॥
गुर चरन प्रीती प्रभ मेल कराये। परम लाभ जीवन का पाये॥
धरम की नौका गुरदेव से माँगे। भवजल दुस्तर कठन को लाँगे॥
दृढ़ विश्वास गुर बचन में राखे। सकल करम का पूरन फल चाखे॥
गुर चरनी जब प्रीत अधिकाई। सब साधन का पूरन फल पाई॥
माँगो साचा धरम पुनीता। सतगुर दयाल होवें सुखरीता॥

**जैसी मन की भावना, ऐसा ही फल पाये।**
**'मंगत' सत परतीत से, नित ही धरम कमाये॥ 506**

प्रीतम सिमर परम सुखदाई। पूरन संत नित करें दोहाई॥
अखंड आनन्द पूरन पद सो ही। पलपल लयो मन चरन परोई॥
परम सखा नित सुख दातारी। ताप तपन सब दूर निवारी॥
और ठिकाना ना देखा कोए। काल भय जाँ व्यापत नाहे॥
वस्त ना कोई देखन में आई। जो इस मन की आस बुझाई॥
अमोलक नाम केवल जगदीशा। रोग सोग सब हरे कलेशा॥
नित नित सिमर रे मन मूढ़े। बिन हरी भगत हैं सकल वसूरे॥
कठन मारग जग में पाई। भज करतार छोड़ चतुराई॥
नाम बिना मन नित दुःख धारी। अनक भाँत जाल पसारी॥
नाम बिना मन नित बकारी। लोभ मोह नित दुर्मत धारी॥
नाम बिना मन नित डोले। काम क्रोध में जीवन खौले॥
भज सतनाम परम सुखरासी। इस्थित होवें मिटे चौरासी॥
घाल मुशक़्क़त पूरन होई। साचा नाम जब हिये परोई॥
सत ठाकर पद परम निधाना। सरब आधार पुरख निर्वाना॥
ध्याओ ध्याओ नित गुनवंता। अचरज कथा चित देवे परसन्ता॥
तूँ परमेश्वर घट घट जानी। महमा तोरी आपार निधानी॥
नित राखो प्रभ सरब दयाला। एक टेक तोरे चरन किरपाला॥
नित निमाना फिरे परदेसी। बिन तोरे चरन ना सखा विशेखी॥

**आसा एको चरन की, सुन बेनती प्रभ मोर।**
**'मंगत' करे पुकार नित, नहीं तुझ बिन सूझे ठौर॥ 507**

सब का साखी दीनदयाला। अगम अगोचर नित किरपाला॥
ब्रह्मा रुद्र बिषन ध्याये। आलख पुरख की सोभा गाये॥
अपनी शकत आप परगासी। आपे खेले अनाद अबनासी॥
सब कुछ देखे अपना परताप। सरब शकत में आपे आप॥
जिस जन साचा रूप पछाता। दुःख रोग बिनसे संतापा॥
पारगरामी प्रभ पूरन देवा। वेद कुतेब नहीं पावें भेदा॥
अन्तर रमया सब जुगत पछाने। तिसका भेद नहीं अनमत जाने॥

सत पहचाने सब जाल बिनासे। दुर्मत माया काल गत नासे॥
गुरमुख नित नाम रस पीवे। भरम त्याग सतनाम में जीवे॥
हरजन सुकृत कार पहचानी। एको सिमरे प्रभ निरवानी॥
जो जनमे सो होये विनास। मिथ्या मोह माया की फाँस॥
साचा नाम साहब का एक। पल पल तिस का लखयो लेख॥
नाम विसार दुःख पाये घनेर। आवे जावे चौरासी फेर॥
मानुष जनम कदारथ होई। सत सम्पत हरी नाम परोई॥
अबनाशी पुरष सदा निरदोख। सिमर सिमर नित पावें सूख॥
औगन तेरे सकल निवारी। भज परमेश्वर किरपाधारी॥
साची सीख मन माहीं विचार। जग जीवन केवल दिन चार॥
लाभ कमाओ जग आवन मीत। भज करतार परम सुखरीत॥
सत साधू की प्रीत विचार। पावें आनन्द मोक्ष द्वार॥

**अमरत नाम नित सिमर लो, छिन छिन औध विहाये।**
**'मंगत' मिथ्या जगत में, सत सम्पत लयो कमाये॥ 508**

सत खोजो आनन्द की खानी। सत बूझो अभयपद ज्ञानी॥
सत परकाश जाँ रह्या समाई। द्वन्द कलह वहाँ जाल बिनसाई॥
सत परकाश आनन्द सरूप। आद अन्त नहीं व्यापे कूप॥
सत सिमरो पावें सुखधामा। अजर पुरष निरंजन नामा॥
सत की टेक परम ख़ुशहाली। सत का जीवन हरे भ्रम जाली॥
पाँच तत्त माया विकार। सत पहचान से मिटे अंधकार॥
नाम सिमर सत शबद की धार। उतरें भवसिन्धू से पार॥
नाम अमीरस गुरमुख बूझे। आपा त्याग के हरपद सूझे॥
अगोचर नाम उठ चेत सवेरा। दुरलभ पाया जग में फेरा॥
चेत चेत सतनाम अपार। बिनसे गवन पावें छुटकार॥
करम का दीरघ रोग विनासे। सतनाम भज अबगत वासे॥
परम शकत अबनाश सरूप। आनन्द खानी केवल हर रूप॥
घट अंतर जिस सोझी होई। अपरम अपार लखे पद सोई॥
अनहद नाद प्रेम की खान। गुरमुख साधु करी पहचान॥

गरजे शबद करे किलकार। विरले हरजन करी विचार॥
रोम रोम में ठाँड वरताई। शबद पुरख घर भेंटे आई॥
दीनदयाल अपार जगदीशा। सिमर सिमर सब मिटे कलेशा॥
एक घड़ी ना विसरन पाये। अखय पुरष घट परगट ध्याये॥
भरम विकार से मनुआँ छूटे। निर्भय नाम की रसना लूटे॥

**नाम साहब में लीन भयो, जिस बिध नीर तरंग।**
**'मंगत' दुर्मत सब मिटी, मन रँगयो प्रेम के रंग॥ 509**

राम नाम का करो नबेड़ा। दुर्लभ पायो भव जल फेरा॥
रमता पुरष शबद अखंड। धारे नाना पिण्ड ब्रह्मण्ड॥
अपनी माया परगट करी। बिस्माद रचना सहज रच धरी॥
सबके अन्तर रह्या समाई। रमता राम कोई गुनी ध्याई॥
आपे बाज़ीगर हो खेले। आपे न्यारा आपे मेले॥
आपे दाना सरब का स्वामी। घट घट जाने अंतरयामी॥
आपे भुगता आपे त्यागी। आपे ज्ञान सरूप बैरागी॥
आपे खेले आप न्यारा। रमता राम का अजब पसारा॥
सरब का साखी निर्मल देवा। भाओ प्रीत से कर मन सेवा॥
रोम रोम रमत स्वामी। राम नाम भज अन्तरयामी॥
जनम मरन नहीं तिसको रोग। अजर अमर सरब संजोग॥
ऐसा राम विचारे जोई। आवागवन का संशय खोई॥
रोम रोम में शबद गुंजारे। राम नाम तत्त कियो विचारे॥
साची भगत परापत होई। सत सरूप में सुरत समोई॥
मानुष जीवन का करो सुधार। अमरत नाम प्रभ लयो चितार॥
अंतर ध्याओ प्रीत लगाए। अच्छर पुरष शबद सुखदाये॥
शबद की रसना अंतर सूझी। राम भगत यथारथ बूझी॥
बादमुबाद माया बिख त्यागो। सत ठाकर के चरनी लागो॥
आपा त्याग सतनाम चितार। घर विच पावें दरस मुरार॥

**दुर्मत भरम त्याग के, राम नाम तत्त चेत।**
**'मंगत' पलक ना विसरे, अखंड शबद अलेप॥ 510**

सरजनहारा पार परमेश्वर। राम नाम जप पुरख जगदीश्वर॥
चेतन पुरष सरब गत धारी। राम नाम तत्त लयो विचारी॥
जुग जुग पसरयो एक सरूप। अबगत राम सिमर अनूप॥
मुकतसरूप आनन्द की खानी। राम नाम भज पद निर्वानी॥
सरब व्यापक सरब अलेपा। शबद सरूप सिमर प्रभ एका॥
अतुल शकत सरब का स्वामी। मिल सतगुर भज अपार अनामी॥
पल पल प्रभ के चरन ध्याओ। पल पल नाम की रसना खाओ॥
काल जाल भरम चित जाये। साची प्रीत लयो नाम कमाये॥
आसा तृष्ना मिट जाये ग़ुबारा। अबनाशी नाम जब हिये विचारा॥
उतपत परले भरम चित नासे। सम तत्त शबद घट माहीं परगासे॥
अदभुत माया लीन समाई। सत सरूप इक शबद लखाई॥
भरमन मिटी नाम रस पाया। दीनदयाल चित चरन ध्याया॥
आपा पर का गयो भरवासा। नज़री आया पुरख अबनासा॥
राग द्वेष अगन चित नासी। सम सरूप में लयो निवासी॥
एक पलक ना नाम विसार। अखण्ड आनन्द भज नित करतार॥
कूड़ जंजाल जगत की रचना। बिन प्रभ नाम कोई नहीं अपना॥
मिल सतसंग नित कथा विचारो। राम भगत से पावें पारो॥
साचा थाओं आनन्द की धारा। अन्तरगत भज नाम अपारा॥
सकल करम की दुबधा जाये। आनन्द सरूप जब राम ध्याये॥

**अखण्ड आनन्द सरब का स्वामी, भज परमेश्वर नीत।**
**'मंगत' भगती सार ये, मन तन करे पुनीत॥511**

नाम सिमर ये सार निधाना। जाँ सिमरन से गये दुःख नाना॥
हिरदे शांत आनन्द परगासा। सरजनहार संग कियो बिलासा॥
जनम मरन का मूल चुकाया। भाओ भगत हर अन्तर पाया॥
सरब दयाल आनन्द घन देवा। भाओ भगत कर तिसकी सेवा॥
पततपावन सो दीनदयाला। अच पच मूरत नित किरपाला॥
जो जन तिसकी सरनी आया। मनबाँछत तिसने फल पाया॥
अगम अपार अगोचर स्वामी। घटघट व्यापक सो अन्तरयामी॥

छल कपट तज सत भाओ विचारी। सहज परगट भये आप मुरारी॥
दीनबन्धु नित दुःख हरता। सिमर सिमर प्रभ कारन करता॥
जनम जनम की किलविख नास। आनन्दघन घट भयो परगास॥
मिल सतगुर जब सार लखाई। घट घट अन्तर लखी प्रभताई॥
बन्धन काटे मन भया निष्कामी। पायो ठाकर सरब का स्वामी॥
कही न जाई हर की रासा। **'मंगत'** नित हर नाम प्यासा॥512

मानुष ताँ को आखिये, जाँ के चित अनुराग।
करनहार प्रभ सिमरिये, रहे प्रेम लिवलाग॥
सत असत निरनय करे, चेतन कीजे बुद्ध।
सत भावना चित में धरे, पावे ज्ञान की सुद्ध॥
सत ही जग का मूल है, नित ही करे परकास।
मिल सतसंग खोजिये, सतनाम निरवास॥
तन मिथ्या मन मिथ्या, मिथ्या इन्द्री भोग।
सत बन्दगी उपकार बुद्ध, मेटे करम का रोग॥
मिथ्या भरम इस जीव को, सूझ ना वारापार।
आस आस में मर मिटे, बड़े गुनी संसार॥

**छत्रपती भूपाल बहू, गये सिंघासन छोड़।**
**'मंगत' अत अस्चरज है, काल चक्कर की दौड़॥ 513**

सादगी सत्य सेवा, चौथा प्रभ अनुराग।
दुर्लभ जग में जानिये, पावे कोऊ वडभाग॥
सतसंगत सत भावना, हरजन का इतिहास।
निस दिन साधे प्रेम से, भाओ भगत परगास॥

**दुर्लभ घड़ी सो जानिये, जाँ में हरजस कीरत होये।**
**'मंगत' पावे भाग से, फाँस भरम की खोये॥ 514**

आशा काल की बेलड़ी, करम लगा तिस फूल।
ज्ञानी ध्यानी चतुर बुद्ध, गये भरम में भूल॥
हर भगती सत कीरती, मेटे भरम कलेश।
गुरमुख जापे जौहरी, मिल सतगुर उपदेश॥

सतनाम जग सार है, जापो घट के मांह।
आतम पूजा जीव दया, धरम तुल तिस नांह॥

**माया की निंद्रा तजो, जीवन करो सुधार।**
**सत कीरत हरी भगत मन, 'मंगत' जीवन सार॥ 515**

इस सागर संसार में, सुनयो सार उपाये।
सत करम हिरदे धरो, तीन काल सुखदाये॥
जगत का झूट पसार है, नाना रूप वटाये।
साची करनी रहित नर, कभूँ ठौर ना पाये॥
सत सील और सादगी, धीरज चित उपकार।
दृढ़ कीजे विश्वास को, मिल सतगुर विचार॥
मारग धरम का जानिये, ये गुन हिरदे धार।
अगन मिटे संसार की, पावे शान्त अपार॥
करता हरता प्रभ जान के, आज्ञा मानो नीत।
तत्त ज्ञान विचार के, राखो चरन परीत॥
सकले करम प्राकिरत के, प्रभ आज्ञा में छोड़।
अनन भाओ हर सिमरिये, पायें आनन्द घर ठौर॥
सत सरूप विसार के, नित धावे अन्धकार।
पूरे गुर के मेल से, उतरा मन मध छार॥
मीठा बचन नर बोलिये, राखिये मन निर्मान।
सरब कला समरथ है, एको सो भगवान॥
पल पल तिसको सिमरिये, दे प्रेम का ताओ।
दीन ग़रीबी धार के, भव जल से तर जाओ॥
करनी से सुख मिले, करनी देवे धाम।
करनी से रहनी मिले, जीव पाये बिसराम॥
उठ साचा मारग जान के, तन मन दीजो वार।
फिर समाँ ना पायेंगा, नित खाटो धरम आचार॥

**सरब जियाँ सुख देवनाँ, ये मारग धरम विवेक।**
**'मंगत' नित बलिहार जाँ, जिस राखी ऐसी टेक॥ 516**

मानुष तन को पाय के, सतगुर खोजो मीत।
मिटे जनम का अन्तरा, परसो शबद पुनीत॥
जड़ बुद्धी इस जीव की, छिन छिन रही भरमाये।
मिटे ना करम की वासना, जेता करे उपाये॥
मन की दुबधा छोड़ कर, साधे निर्मल धाम।
पूरे गुर बख़शीश से, जीव पाये बिसराम॥
करम इच्छया में भरम रहे, लाख चौरासी जीव।
नित जन्मे नित ही मरे, शान्त कभूँ नहीं लीव॥
पूरा गुरु मिलावड़ा, सूझा तत्त निर्वान।
मिटी करम की वासना, जीव भया कल्यान॥

**सुख को खोजत जग मुआ, मिली ना सुख की सार।**
**आस आस में मर मिटे, 'मंगत' गुनी अपार॥ 517**

ज्ञान बिना अन्धकार बहु, जीव अधिक ललचाये।
ज्ञान पाये बड़भाग से, गुर की सेव कमाये॥
सतनाम परगट कियो, मुकतधाम जो मूल।
सिमर सिमर बहु निस्तरे, मिट गये संशे सूल॥
नित ही संगत साध की, सतनाम विश्वास।
नित निध्यासे मन माहीं, सतगुर बचन अहसास॥
तन मिथ्या मन मिथ्या, मिथ्या भोग विकार।
सतनाम जग सार है, नित ही चित में धार॥
तन मन की ये वासना, जीव तृप्त नहीं होये।
गुर का शबद कमाइये, भरम करम सब खोये॥
सब घट शबद गरजता, चेतन रूप अपार।
बिन गुर ना किसे सूझया, निराकार निरधार॥
उठ के नाम चितार तूँ, जो करे भरम का नास।
निसदिन बानी उज्जली, भाओ भगत परकास॥

**दीन ग़रीबी मन बसी, निहूँ लगा करतार।**
**'मंगत' माँगे नाम नित, देवे प्रभ दातार॥ 518**

सकल पदारथ बिनस गये, राज तेज भरमार।
सत नाम जग सार है, मिल गुर कर चितार॥
नाम बिना नहीं मन टिके, जीव भरम नहीं जाये।
शास्तर सिमरत बहु पढ़े, मन अन्धकार समाये॥
सहज योग सतनाम है, स्वास स्वास चितार।
पूरे गुर उपदेशया, लखा शबद निरंकार॥
जड़ काया को खोज के, मिला चेतन इक भूप।
नित परकाशक आप में, द्वैत वरन नहीं रूप॥
बंधन से मुक्ता भया, शबद मिला रस पार।
देह से मन निरदेह भया, पूरे गुर की कार॥
भय भरम सकले गये, निर्मल पायो वास।
शबद उठे आकास में, पीवे गुर का दास॥
साखी शबद को बूझया, इक धुन राखा धीर।
सतनाम नित जापता, कामिल वो ही फ़क़ीर॥
सकल करम को त्याग के, आज्ञा प्रभ की मान।
मारग ये ही मोक्ष का, सहज होत कल्यान॥

**नित नित जापो नाम को, कारन करता जोए।**
**'मंगत' विसरे ना इक घड़ी, राखो हिये परोये॥ 519**

दुर्लभ समाँ विचार के, कीजो साची कार।
नित सेव हरिनाम को, मन में धर उपकार॥
खिमा ग़रीबी धारिये, एक नाम से प्रीत।
नित सेवा कर साध की, सुनिये ज्ञान पुनीत॥
सब से नीचा हो रहो, साहब कर अरदास।
सतगुर के परसाद से, हुआ मन परगास॥
कलह कल्पना सब मिटी, घट शबद किया विचार।
उट्ठत बैठत सेवया, जग का सरजनहार॥
मोह ममता भरम सकल मिटा, सतनाम की लागी प्यास।
अनहद खेले गगन में, अन्तरमुख कर स्वास॥

आठ पहर निज नाम में, विरती धरें अडोल।
अगम नाद रस पींवदे, तज काया हिरस अती खोल॥
पाँच बिषे दमना करे, साचा शबद कमाये।
इन्द्री जीत ब्रह्म तत्त जुगता, सो पूरा गुर कहलाये॥
चंचल मनुआँ त्याग के, जापे नाम अगाध।
आतम तत्त परगट करे, सो गुर पूरा साध॥
एक घड़ी ना विसरे, अखंड नाद मन ध्यान।
तन मन की इच्छया गई, सो साधू परवान॥
जाँ बोलदे ताँ ब्रह्म तत्त, सत निरंजन देव।
सुन्न समाध नाम अखण्ड, करे सदा तिस सेव॥
दास भाओ हिरदे धरे, गरब ग़रूर मिटाये।
प्रेम भगत परगट करें, सब बादमुबाद हराये॥
सतपुरषों की प्रीत नित, अधिक वैराग चित वास।
तन मन की इच्छया तजे, करे आतम विश्वास॥
सतनाम नित पींवदे, मन पवन की डोर।
एक धार मनुआँ भया, सुने शबद घनघोर॥
सिद्धन की ये साधना, निरतन पुरख प्यार।
काया अन्दर मेल लें, सत पुरख निरंकार॥
ऐसी जाँ की साधना, निर्मल जाँ अहसास।
पूरा गुर सो जगत में, करे भरम का नास॥
पाँच पचीस के भरम को, साधे उद्दम धार।
जाए बसे सत धाम में, मिटे चौरासी खार॥
नित दयालू उदार चित, खिमावान जाँ रीत।
दर्शन जाँ के करन से, उपजे ज्ञान परीत॥
प्रेम आहार है संत दा, भरम करम करे दूर।
ब्रह्म शबद में रम रहे, उपजे अधिक सरूर॥
नेहचल मनुआँ इस्थिर बुद्धी, आतम परसे जोए।
पाँच तत्त विखया हरे, पूरा सतगुर सोए॥

ऐसे गुर को भेंटिये, सुनिये सत उपदेश।
जतन जतन से साधिये, अबगत पुरख अलेख॥
निरद्वन्दी निर्मान मध, निरपख जाँ विचार।
तत्त ज्ञान परबीन जो, कर तिस गुर जयकार॥
भाग बिना नहीं पाइये, ऐसे गुर की सेव।
तन मन दीजो तिस चरन पे, मिटे भरम और भेव॥
अमरत बचन तिस पुरष का, सब में प्रेम उपजाये।
मिटे भरम की फाँस सब, सार वस्त चित आये॥
महापुरष के दरश से, जनम जनम मल नास।
हरख मोह ममता मिटे, उपजे ज्ञान अबनास॥

**क्या लीला सतपुरष की, कथ थाके सिद्ध अवतार।**
**'मंगत' ऐसा गुर मिले, तब पाइये सचयार॥ 520**

सागर ये संसार है, रूप सराये मीत।
कोट जीव नित आवते, कोट जायें नित नीत॥
माया मोह अन्धकार में, सभी पसारें पाये।
सम्पत सकली जगत की, अन्त छाड सभी जाये॥
जुगा जुगंतर खेल है, मारग ये संसार।
इस्थिर कोई ना रहे, बिना रूप करतार॥
आसा माहीं जग आये, चले निरासे अन्त।
प्रभ माया आपार है, नित दु:खिये सब जन्त॥
और का मरना देख के, कर साजन सत विचार।
इक दिन ऐसे जायँगे, छोड़ कूड़ संसार॥
गुनी ज्ञानी औलिया, इस्थिर रहे नहीं कोए।
करनी जिनकी सुफल है, जग नाम तिनां दा होये॥
पूरो पूर नित आवते, जायें पूरो पूर।
सत करनी बिन जो गये, सो जग आये कूड़॥
मान मध को त्याग के, सुन साहब फ़रमान।
विच मुसाफ़त आयके, मत होयो ग़लतान॥

चलन की नौबत बाज रही, नित रहो हुशियार।
ऐसी सम्पत खाट लो, जो अन्तकाल होवे सुखकार॥
सत करनी की खोज कर, जो अन्तकाल सुखदाये।
बिन करनी ये जीवड़ा, पावे घनी सज़ाये॥
सरजनहार दयाल को, नित राखो हिरदे माईं।
सुन पूरे गुर की सिखया, तीन काल सुख पाईं॥
सब जीवों पर मेहर कर, क़हर ज़ुलम को त्याग।
सरजनहार सो देखता, पल पल लेवे हिसाब॥
दुःखियों का दुःख दूर कर, सतनाम चित धार।
सुफल होवे जग आवना, नीती ये विचार॥
रल मिल संगत रूप में, सत का करो विचार।
पावें सब कल्यान को, पाप कूप होये छार॥
मारग भगती सहज ये, भय करे सब दूर।
आज्ञा माने साहब की, पावे आनन्द सरूर॥

**सब साजन मिल गाइयो, सत करतार भगवन्त।**
**'मंगत' करनी सार ये, परम शान्त देवे अन्त॥ 521**

ब्रह्म सत्यम् सर्व आधार

## महमाँ-महामन्त्र

**ओ३म् ब्रह्म सत्यम् निरंकार अजन्मा अद्वैत पुरखा**
**सर्व व्यापक कल्याण मूरत परमेश्वराय नमस्तं**

त्रियोदस अक्षर मंत्र ये, सरब सिद्धी दातार।
जो सिमरे नित प्रेम से, मंगल पाये अपार॥
जनम जनम जाये भरमना, प्रभ चरन पाये विश्वास।
मोह माया संकट मिटे, सब कारज होवें रास॥
महमा सत सरूप की, सब अक्षर पहचान।
चार वेद और सिमरती, सब का सार निधान॥
परम शक्त परकाश अत धारे, कोट पिण्ड ब्रह्मण्ड।

सरब न्यारा आप रहे, तत्त नाद रूप अखण्ड॥
रिखी मुनी और देवते, गायें गुरु अवतार।
महमा अबगत रूप की, पल पल करें विचार॥
ज्ञानी कथा विचारते, जुग जुग पूरन सार।
ओड़क निरना पाया, सरब रूप **'ओंकार'**॥
कथा विचारें वेदान्ती, देवें अनक भाँत परमान।
**'ब्रह्म सत्यं'** तत्त रूप का, निरनय करें बखान॥
शबद रूप को पूजते, जो तीन काल निरदोख।
त्रैगुन से नित भिन्न है, **'निरंकार'** शबद तत्त मोख॥
उतपत परलय जो होये, सो असत माया विकार।
**'अजन्मा'** कर प्रभ पूजते, जुग जुग गुनी अपार॥
केवल सत्ता तत्त रूप को, पूजें सिद्ध बुद्ध अनेक।
दृश्यमान सब भरम है, प्रभ केवल रूप **'अद्वैत'**॥
परम शकत संसार में, ज्ञान मात्रक सार।
सरब आधारी तत्त सो, करें **'पुरखा'** विचार॥
लाख चौरासी जन्त में, जो सम रस रह्या व्याप।
**'सरब व्यापक'** तत्त जान के, हरजन करते जाप॥
राग द्वेष जाँ को नहीं, शुद्ध सरूप त्रैकाल।
**'कल्यान-मूरत'** तत्त ध्यान से, तन मन होये निहाल॥
सरब शकत आधार जो, अतुल शकत निर्धार।
**'परमेश्वर'** कर पूजिये, ताप तपन होये छार॥
नमों नमों प्रभ रूप को, जाँ की महमा अपरमपार।
अनंत शकत तत्त शबद को, **'नमस्तं'** बारमबार॥
तत्त मन्तर महमा अपार है, ज्ञान सागर अथाह।
जिस बिध जो सिमरन करे, भव दुस्तर तरे असगाह॥
सत सरूप परमात्मा, सब अक्षर महमा जाँ।
जो सिमरे चित प्रीत से, कलह ना व्यापे ताँ॥
सत मन्तर सिमरन करे, उट्ठत बैठत नर जोये।
जाये भरम की दूषना, चित शान्त परापत होये॥

विजे पाये संकट मिटे, सत गुन ले सुखसार।
आध व्याध जाये कल्पना, पाये सूझ धरम अपार॥
जो ध्याये नित प्रेम से, परसे नहीं पखवाद।
समता तत्त रसना मिले, मोह ममता मिटे मूल परमाद॥

**कलह कलेश सब दूर होये, पाये ज्ञान तत्त योग।**
**'मंगत' तत्त अक्षर नित गाइये, प्रभ दर्शन होयें संजोग॥ 522**

तीसरा प्रसंग-अथ जीवगती सिद्धान्त

पहला अध्याय

**पारब्रह्म परम परमेश्वर, आनन्द गत दातार।**
**'मंगत' नित ही सिमरिये, अन्त पायें छुटकार ॥ 523**

मिथ्या चक्कर ये संसारा। काल करम का सकल पासारा॥
अनमत जीव सत सरूप विसराये। काल करम में आवे जाये॥
करम भोग नहीं पूरन होई। जनम अनेक धर जीव फिरोई॥
करम जाल सब नित बिनसावे। तिसके मोह में जीव दुःख पावे॥
अनक सयानफ़ मन में धारी। बिन हरी सिमरन सब गवन विचारी॥
अरब खरब धन संचत कीना। अगन तृष्ना करे चित छीना॥
बहु परिवार संग प्रीत लगाई। अन्तकाल भयो मीत ना काई॥
मान गुमान जो देह का धारी। अन्तकाल सो छार विचारी॥
अधिक प्रीत जो मित्तर में राखी। अन्तकाल तेरा कोई ना साथी॥
धन भूमी कछु संग ना चाली। चले निमाना ले हथ ख़ाली॥
जतन अनेक सुख ताईं विचारे। अन्तकाल सब भयो दुःख अपारे॥
पाप कुपथ जो मन में धारे। मिले सज़ा नर जम दरबारे॥
अन्तकाल तेरा सखा ना कोई। क्यों बिपत माहीं नर जीवन खोई॥
काल विसार क्यों नर फूला। काल झुलावे सब को झूला॥
झूट कपट क्यों हिरदे धारी। अन्तकाल नर होवे ख़वारी॥
छाड बिपत सतनाम विचार। निर्मल गत परस निरधार॥
मानुष जनम की सार ये जान। पारब्रह्म चित कथा बखान॥

दुर्मत रोग ना सहजे जाई। बिन हरी कीर्तन नित दु:ख पाई॥
अपनी करनी का नर फल पाये। पाप पुन्न जो लियो कमाये॥
करम डण्ड सहवे नित जीया। छुड़ावनहार कोऊ ना थीया॥
अपनी करनी आप सँवार। सतगुर पूरे इयों करें पुकार॥
लोक कुटम्ब सहायक ना होई। जैसी करनी ऐसी गत जोई॥
जीवन में नर करो विचार। पाप पुन्न का निरनय धार॥
जगत हाट ये जीव वंजारा। सत कुसत का करे ब्यौहारा॥

**जैसा वक्खर खाटया, ले चलया वँजारा।**
**'मंगत' छूट ना पाइये, सच साहब दरबारा॥ 524**

बिख बीजे नर बिख ही पाये। ऊँच नीच जूनी भरमाये॥
मूरख मन में नित मध धारी। पाप पुन्न नहीं हिये विचारी॥
तुच्छ जीवन का नित धरे गुमाना। काल चक्कर नहीं देखे अनजाना॥
किसका कौन जगत में होई। करम संजोग सब चक्कर चलोई॥
लेन देन में भये संग साथी। लेखा चुका नहीं भयो कोई नाती॥
किते लेना लेवे किते देन मुकाये। करमगती संग साक बनाये॥
अनमत जीव का सत मित्तर ना कोई। अपनी करनी का लेख परोई॥
छिन छिन जो नर करें विकारा। धरमराज घट करी पुकारा॥
हिरदे माहीं नित लेख लखाई। शुभ अशुभ जो करम कमाई॥
पाप पुन्न जो मन तन में ध्याई। गुन औगन नित बुद्ध में सँचाई॥
जिस जिस भाँत जीया करम को कीजे। तिस अनुकूल बुद्ध रूप लखीजे॥
सतगुन तमगुन रजगुन माया। हंग बुद्ध अज्ञान सरूप धराया॥
त्रैगुन माया में जीव भरमाई। तिस अनुकूल करम चक्कर चलाई॥
जिस गुन धार करम को भोगे। उस ही सुभाओ वस जीव भयो रोगे॥
सुभाओ सरूप करम का बिन्ध। त्रैगुन माया का असली पिण्ड॥
सुभाओ बस नित जीव रहाई। लख चौरासी में फेर फिराई॥
जैसा करम जीवन में धारी। तिस अनुकूल नित सुभाओ विचारी॥
सुभाओ बस होये जीव पिण्ड को धारे। सुख दु:ख रूप नर्क स्वर्ग विचारे॥
सातक करम से सुभाओ सातक होई। सातक सुभाओ से देवगती लखोई॥
राजस करम से सुभाओ राजस पावे। राजस सुभाओ मंदगती दिखावे॥

तामस करम से सुभाओ तामस होई। तामस सुभाओ नीच गती फिरोई॥
सुभाओ वस होये नित गवन विचारी। सुख दुःख करम फल भोग लखारी॥
जैसा सुभाओ धर देह को धारे। तिस अनुकूल करे करम ब्यौहारे॥
ज्यों ज्यों नवीन करम संचारी। अतिअत चंचल सुभाओ वरतारी॥

**करमगती अपार है, जीव नहीं छूटन पाये।**
**'मंगत' जैसी कामना, ऐसे रूप समाये॥ 525**

करम संजोग जीव पिंड को धारी। पिंड को धार नित करे बिकारी॥
भोग विकार में नित दुःख पाई। आवे जावे नहीं तृपते काई॥
जतन करे नित शान्त के ताईं। करम विकार में शान्त ना पाईं॥
छिनभंगुर ये करम संजोगा। राग द्वेष लागा चित रोगा॥
ग्रहन त्याग की नित बुद्ध धारी। संकल्प विकल्प उपाध विचारी॥
संकट अधिक करम जंजाला। आवागवन नित मारग घाला॥
करम भोग सयानफ़ धारी। जन्मे मरे नित होवे ख़वारी॥
वैतरनी ये करमगत मीता। भव दुस्तर में फिरे जीव अनीता॥
पाप पुन्न रंग रंग विचारी। सुख दुःख भोग अगन चित धारी॥
करम बन्ध ना टूटन पाई। आवे जावे जून भरमाई॥
एह गती प्रभ खेल नित खेले। सकल माया की देख कुलेले॥
कित उतपत कित परलय होई। सरब न्यारा रहे आप बसोई॥
आनन्द सरूप करम से न्यारा। तिसको जपे तब होये छुटकारा॥
दुस्तर जाल माया बिस्तारी। बिन प्रभ सिमरन ना पाये छुटकारी॥
दानव देव सिद्ध रिखी अवतारा। त्रैगुन माया सब में वरतारा॥
परकिरत रूप जो नर धर आई। त्रैगुन माया सब को भरमाई॥
देह को धार सत रूप जिस ध्याया। दुस्तर माया के पार को पाया॥
पारब्रह्म शबद अबनाशी। सकल का कारन आनन्द सुखरासी॥
सरब जीयाँ के मध समाई। सरब परकाश न्यारा रहाई॥
परकिरत विकार ना तिसमें कोई। नित अखण्ड अखेद समोई॥
सब से परे सरब के माहीं। सत-सरूप सो आप गोसाईं॥
तिसका आद अंत ना होई। जुग जुग पूरन रूप समोई॥

करम विखाद नहीं इच्छया को धारी। आनन्द कंद रूप सो शबद मुरारी॥
सतसरूप सोई सतनामा। परमगती सो ही सतधामा॥

**सत सरूप पहचान से, त्रैगुन मिटे विकार।**
**'मंगत' सो सत शान्ती, निर्भय पद निर्धार॥ 526**

सतसरूप जब जीव पहचानी। इच्छया करम मिटी गवन निशानी॥
सकले करम प्रभ आज्ञा में देखे। द्वन्द विकार का मिटे संदेशे॥
सुख दु:ख इच्छया लाभ और हाना। प्रभ की आज्ञा में सरब पहचाना॥
नेहचल चित हरी चरन ध्याई। अन्तरगत नित रह्यो समाई॥
निमख निमख सतनाम चितारी। त्रैगुन की मिटी अगन अपारी॥
पल पल साहब सत कर जानी। मिथ्या भरम की बिनसी खानी॥
सतगुर साजन मारग दिखलाई। अबनासी पुरष की सोझी पाई॥
अपना भरम नर आप निवारी। सत करतार का भयो पुजारी॥
दृश्यमान सब मिथ्याकारा। सत सरूप केवल करतारा॥
एह बिध निश्चय जब जन पाई। जीवन मुकत धाम समाई॥
नित ही सत सरूप ध्याये। नित ही सत की कीरत गाये॥
नित ही सत का खोज विचारी। नित ही सत का भयो पुजारी॥
नित ही सत में जीवन धारे। मिथ्या देह का हरे विकारे॥
नित ही सत विश्वास को पाई। नित ही संगत सत ध्याई॥
नित ही अपने बन्धन तोड़े। पारब्रह्म चरनी चित जोड़े॥
नित ही जग से रहे उदास। सत सरूप मन माहीं उपास॥
नित ही जग में रहे निमाना। गरब ग़ुबार सब काल निशाना॥
नित ही जापे एको सतनाम। बिनसे गवन पावे बिसराम॥
नित ही देह का नाश विचारी। सत आतम का होवे पुजारी॥
नित ही जग दु:ख रूप पहचानी। आनन्द सरूप केवल प्रभ जानी॥
नित ही सत असत विचार। सत परतीत पावें छुटकार॥
नित ही अपना राह सँवार। निर्मल करम हिरदे में धार॥
नित ही खोजो निरंजन देव। पूरन जुगत में पावें सेव॥
नित ही मन की मैल उतारो। पद परसें सत सरजनहारो॥

**इक परमेश्वर की टेक रख, मन की दुर्मत त्याग।**
**'मंगत' पावें परमगत, मिल साध संगत रँग लाग॥ 527**

कठन जाल माया बिस्तारी। बिन तत्त ज्ञान नहीं होये निस्तारी॥
सत सरूप का निरनय विचार। सत सरूप में निश्चय धार॥
सत सरूप संग प्रीत लगाओ। सत सरूप का जस नित गाओ॥
सत सरूप का सिमरन धारो। सत सरूप का ध्यान विचारो॥
सत सरूप में नित विरत लगाओ। कठन मन के वेग मटाओ॥
सत सरूप शुद्ध निश्चय से जापो। भाओ भगत कीरत नित चाखो॥
सत सरूप जग सार विचारो। सकल जगत सम छाया लखारो॥
सत सरूप जीवन की सार। हरख शोक सब मिटे विकार॥
सत सरूप धन अपरम अपारी। तृपत होवे ये मन बिकारी॥
सत सरूप जग मूल पछानी। ज्ञान विज्ञान सब तिसकी कहानी॥
सत सरूप नित खोजन खोज। मानुष जनम की पावें मौज॥
सत सरूप चित अगन निवारी। जो सिमरे तिस तों बलिहारी॥
सत सरूप जीव बन्ध छुड़ावे। आवागवन का चक्कर मिटावे॥
सत सरूप की अचरज धारा। अन्तरगत में करे पुकारा॥
मिल सतगुर सत रूप ध्याओ। जनम कदारथ शांत समाओ॥
मन के दाओ सकल त्यागो। सत सरूप में नित उठ जागो॥
पल पल घड़ी नर देह बिनसाई। सत विचार बिन अकारथ जाई॥
मानुष जनम का फल ये मीता। सत परमेश्वर आवे चीता॥
औगन मन के सकल निवारी। सत सरूप में निश्चय धारी॥
करूँ दोहाई सुन गुनवन्ता। सत सरूप केवल भगवन्ता॥
झूट विकार में ना भरमायो। सत करनी में उठ के धायो॥
तृष्ना अगन ये अधिक अपारी। सत विचार बिन करे अँगारी॥
बिन प्रभ सिमरे ना शंका जाई। जुगाजुगन्तर जीव भरमाई॥
अमरत नाम जग लाभ विचारी। जो सिमरे तिन चरन बलिहारी॥

**सत सरूप जस गाये लो, पावें अबगत धाम।**
**'मंगत' कहे पुकार के, बिन सिमरन नहीं जीव को ठाम॥ 528**

अमरत नाम साहब का मीता। साध संगत मिल गाओ पुनीता॥
बिपत हरे सब कलह निवारी। खेम कुशल नित ही वरतारी॥
करम करूर से छूटन पाई। एक पलक हरी चरन ध्याई॥
प्रभ विश्वास बिन नित अँधयारा। आवे जावे चौरासी धारा॥
प्रभ विश्वास सत धरम सरूप। प्रभ विश्वास हरे भरम का कूप॥
प्रभ के सिमरन की महमा आपार। विखम माया से पावें पार॥
नीच गती से ऊँच गत देवे। प्रभ का सिमरन जो हिरदे लेवे॥
बार बार गुनी करें पुकारा। मिथ्या जगत सत रूप करतारा॥
सत की ओट राखो मन माहीं। भव दुस्तर से निस्तर पाईं॥
अबगत रूप साहब बिसरामी। घट घट रमियाँ अन्तरयामी॥
माया छाया भरम तब नासी। इक चित सिमरन आवे अबनाशी॥
छिन छिन में उठ उठ धाये। पलक पलक बहुरंग वटाये॥
दुष्ट मन की कर खबर गुजारी। दृढ़ निश्चय जप नाम मुरारी॥
प्रभ की भगत मन देवे ठिकाना। ग्रन्थ कुतेब गुनी करें बखाना॥
परम शकत जब हिरदे ध्याई। चंचल मन तब ठौर को पाई॥
अपनी हिकमत सकल निवारी। सरब शकत जब जपा मुरारी॥
प्रभ की प्रभता जब मन में आई। मनुआँ नीच सत करम ध्याई॥
अपनी मैल को आपे धोई। गुर परसाद सत सोझी होई॥
अपने विखाद को नित ही निवारी। पल पल निश्चय हरि चरन में धारी॥
पूरन औगन मन के पछानी। नाम साबन से धोये ज्ञानी॥
परम कमाई तिसने जानी। मारग शान्त धरम पछानी॥
दुर्लभ आवन तिसका होई। सत सरूप चित चरन परोई॥
दुर्मत विकार माया बिख नासी। आनन्द सरूप पायो अबनाशी॥
आवागवन तज मन लीन समाई। जल तरंग ज्यों भेद ना रहाई॥

**सत सरूप पहचान के, जिन हिरदे लियो परोये।**
**'मंगत' यथारथ गत मिली, बौहड़ गवन नहीं होये॥ 529**

सत सरूप अजर अबनासी। आनन्द सरूप अलोक निवासी॥
घट घट परगासे सो ही निज देवा। शेष महेश करें नित सेवा॥

मन की तपन तभी नर नासे। निश्चल चित सत रूप उपासे॥
देह विकार अत दुस्तर भारी। तीन काल करें जीव ख़वारी॥
भोगे भोग नहीं तृप्ते काई। आसा माहीं जनम गँवाई॥
भोग मिथ्या आवे जाये। छिन छिन माहीं बहु रंग दिखलाये॥
मूढ़ा जीव तिन सत कर मानी। तिनके भरोसे में अत दुःख ठानी॥
सम्पत भोग अत संचत कीजे। देह विनाश नहीं मन परतीजे॥
अत अज्ञान में जीव भरमाये। सत विचार बिन पार नहीं पाये॥
इन्द्री विकार जो नित दुःखदाई। अनमत जीया सुख लेख लखाई॥
काम क्रोध बड़वानल भारी। पलक न तृप्ते ये जीव अन्धकारी॥
सत कुसत करम नित कीजे। इच्छया भोग नहीं चित की छीजे॥
राजा राना साध तपीशर। नित दुःख पावें मोह अगन के भीतर॥
त्याग बैरागी सेवड़ा उदासी। मोह माया की सब गल फाँसी॥
बसे कैलाश तप को धारी। आठ पहर करे पवन आहारी॥
तो भी मन का शंका नहीं नासी। जब लग सत का नहीं भरवासी॥
अगन सरूप परकिरती धारी। मूढ़ा जीव नित होवे अँगारी॥
वासना भोग में कई जनम विताये। कर्म कुकर्म नित जीव कमाये॥
अद्भुत चक्कर माया का जाल। लख चौरासी सब जन्त बेहाल॥
मिल सतसंग सत हिये ध्याओ। भव सिन्ध दुस्तर से निस्तर पाओ॥
पल पल सत की करो परीख्या। पूरे सतगुर की सुन सत दीख्या॥
सत तत्त का नित रहो विश्वासी। सत विचार मन माहीं उपासी॥
नित सतसंग में प्रीती कमाओ। नित सतनाम को हिरदे ध्याओ॥
चंचल मन की गरदन तोड़ो। सत विश्वास हरी चरन चित जोड़ो॥

**सत साधन धारन करो, मिटे दुर्मत का पाट।**
**'मंगत' निर्मल गत पावें, घर लखे शबद की साट॥ 530**

सत सरूप जब शबद पहचाना। दुष्ट माया से भई कल्याना॥
निराकार सर्वज्ञ पूरा। गगन कपाली बज रह्या तूरा॥
चौधाँ लोक के पार हो जाई। शबद सरूप जब लेख लखाई॥
नित सतनाम जब हिरदे ध्याई। सत परतीत प्रभ चरन समाई॥

उट्ठत बैठत निश्चय इक धारी। सत करतार मन माहीं विचारी॥
झूट देही का गरब त्यागो। सत परतीत गुर चरनी लागो॥
सतगुर बचन मन तन में धारो। मिटे अभिमान सब मूल विकारो॥
दीन ग़रीबी जब हिरदे आवे। आनन्द कन्द मूरत घट माहीं दरसावे॥
बन्धन टूटे जीव शान्त पधारी। पूरन परमेश्वर पाये किरपा धारी॥
लखी ना जाये साहब वडयाई। होवे दयाल तब लेख लखाई॥
अदृष्ट पुरष बिन देह समाया। सर्वज्ञ रूप निहथाईं लखाया॥
सरब शक्त पर सरब न्यारा। पूरन प्रभ का नर अजब पसारा॥
जिस सिमरा मेरा प्रभ अनूपा। सतपुरष सो सरब का भूपा॥
तिसके चरन की धूड़ रमाऊँ। तिसके दर्शन से बल बल जाऊँ॥
अखण्ड आनन्द जिस रसना गाई। आसा तृष्ना उपाध मिटाई॥
तिसकी सिखया तीन लोक निस्तारे। परतक्ख रूप जिस कियो विचारे॥
काम क्रोध लोभ मोह हंकारा। ताप तपन सब मिटा विकारा॥
नित ही नित मन शान्त समाई। अखण्ड सरूप रोम रोम ध्याई॥
छाड विकार नर लेख विचार। सत सरूप प्रभ हिये चितार॥
चार दिनां जग जीवन पाया। सत विसार नर अन्त पछताया॥
साधजनां ने करी पुकार। भज करतार जग जीवन सार॥
छाया समान ये जग की रचना। करो विचार नर कोई नहीं अपना॥
जिस साहब ने देह पिण्ड साजा। मिरतक शरीर में आये बिराजा॥
जिसकी शकत सब बलधारी। सो परमेश्वर जप पार मुरारी॥

**एक परमेश्वर ध्याय लो, पावें निर्मल ठौर।**
**'मंगत' बिन सत सिमरने, नहीं बिनसे करम का शोर॥ 531**

सरब देवों का सो ही देवा। पल पल कर लो तिसकी सेवा॥
जतन यथारथ जग में ये ही। साचा धरम करम सुख देई॥
निर्मल करम साधन की सार। मन का हरे सकल ग़ुबार॥
दु:खी दीन की सेव कमाओ। प्रभ की आज्ञा पल पल ध्याओ॥
अनयुक्त पदारथ मन से त्यागो। सत विचार में उठके जागो॥
करमगती नर करो पहचान। पाप पुन्न का खोज निधान॥

सत करम नित हिरदे धारो। प्रभ की आज्ञा में तिसे विचारो॥
पर उपकार जीवन चित लाओ। पर दुःख हरना कार कमाओ॥
साचे नाम का सिमरन कीजो। साध संगत मिल प्रभ रस लीजो॥
कुटल कठोर मन दूषन त्यागो। शरधा प्रेम सत धरम में लागो॥
आठ पहर मन लेख विचारो। दुष्ट करम की नीयत टारो॥
सतपुरषों की सीख पहचानो। प्रभ अपने को घट में जानो॥
वैर बदी अत पाप मटाओ। परहित जीवन चित में ध्याओ॥
पर सुख में नित मनसा धारो। निर्मल सीख मन माहीं विचारो॥
निर्मल करम मन निर्मल कीजे। छल कपट विकार हरीजे॥
निर्मल करम नित बुद्ध परगासे। संकट सकले जीव के नासे॥
निर्मल करम यतन सत सार। पल पल मन की विखेप निवार॥
दृढ़ निश्चय कर करमगत सोधो। साचे नाम को मन में बोधो॥
सतपुरषों का जीवन धारो। सत करम पल पल विचारो॥
बन्धी छूटे मुकत रस पाये। दीन दयाल की चित प्रीत समाये॥
ज्यों ज्यों सत करम चित धारी। दुर्मत मिटे परम दुःखकारी॥
हिरदा शीतल निर्भय बुद्ध होई। निर्मल करनी से शान्त समोई॥
जग जीवन छिन काल पछानी। साचो मारग लख मुनि ज्ञानी॥
सत मारग पद शान्त परगासी। आवागवन मिटे चक्कर चौरासी॥

**एक नाम में नित रमो, रख पूरन विश्वास।**
**'मंगत' यतन ये सार है, करे भरम का नास॥ 532**

जग जीवन का करो विचार। सतपुरषों की सुनो पुकार॥
भोग विकार चित अगन बढ़ाये। भोगे भोग नहीं शान्त आये॥
चित की अगन ताप ये भारी। जरा मरन नित पाये ख़वारी॥
आवे जावे चंचल जीया। भरम ग़ुबार में नित लपटीया॥
करम विलक्खन करे दिन राती। अपने जीवन का बनयो घाती॥
उस घड़ी का नर करो विचार। जिस घड़ी होवे ये देह अँगार॥
उस घड़ी का नर लेख लखायो। बसे बीबान घर बाहर बिसरायो॥
उस घड़ी को ना मन से भुलाओ। जोबनवन्त जब देह तज जाओ॥

उस घड़ी का नर लेख विचारो। लोक सखा जब सकल तज डारो॥
उस पलक को क्यों नर भूले। जब उलट शरीर गरभ में झूले॥
मूढ़मती नित मन से त्याग। साचे ठाकर के चरनी लाग॥
तिसकी सेव करो दिन राती। मात गरभ में जो बनया साथी॥
तिसका सिमरन अत प्रीत से कीजो। जिसकी शकत से सब जग सीजो॥
अनाशक्त को जो शक्ती देवे। मूढ़मती को सत ज्ञान लखीजे॥
निहथावाँ जीव की रखया जो कीजे। सकली बिपता पल माहीं हरीजे॥
एक से रूप अनेक जो धारी। सरब शकत भज पद बनवारी॥
साचा ठाकर साचा स्वामी। सरब आधार सरब गत गामी॥
नित ही तिस का नाम ध्याओ। सुफल जीवन जग आवन पाओ॥
नाम रतन प्रभ केवल सार। आदी अन्त सुख देवे दातार॥
नित सिमरो नित रूप समाओ। आनन्द सरूप करतार गुन गाओ॥
बन्धन टूटे घर चानन होई। सत अस्थान में जाये बसोई॥
जाँ में गये नहीं गवन विचारी। परमानन्द सो धाम निर्धारी॥
जनम जनम की तृखा चित नासी। अजर अडोल पद परस अबनाशी॥
गुन औगन दोऊ लीन समाये। निरगुन धार परापत पाये॥

**करम गाँठी खुल गई, जब सत सिमरन चित पाये।**
**'मंगत' जीव अभय भयो, निज रूप में लीन समाये॥ 533**

सत ठाकर का नाम ध्याइये। सतसंगत मिल अमीरस खाइये॥
ध्याय ध्याय लो नाम गोबिन्दा। सिमर सिमर लो परमानन्दा॥
पतत-पावन सो कारन करना। नित रखयक प्रभ रहो तिस सरना॥
साचा पुरष सरब समराथा। दीनदयाल अनाथों के नाथा॥
अपनी महमा आपे बिस्तारी। आपे खेले खेल खिलाड़ी॥
आपे देखे अपनी किरया। सरब गत रूप आप पसरया॥
सकल जीयाँ को सूतर धारी। सकल आधार प्रभ आप मुरारी॥
जब भावे तब खेल बिस्तारे। इत उत माया परगट धारे॥
अपनी लीला ठाकुर धारे। सरब भीतर खेल खिलारे॥
आपे खेले आपे न्यारा। बिस्माद कौतक साहब पसारा॥

अपनी शकत दे सब परकासे। सरब अतीत आप बिलासे॥
सरब माहीं आप पसरया। आपे माहीं अलेप विचरया॥
कथी ना जाये अकथ कहानी। बिस्माद रचना जगत पछानी॥
सरब करम का साखी आपे। सरब न्यारा नित व्यापे॥
सिमर लीजो पद निर्मल देवा। बिनस जाये सब ताप का भेवा॥
उठ परभाती कर अशनाना। सच ठाकर का करो ध्याना॥
तिसकी वडयाई मन में ध्याओ। तन मन तिसकी दात लखाओ॥
दासाभाओ चित में धारो। सत ठाकर की सेव विचारो॥
निर्मल करम प्रभ सिमरन सार। पलपल मन के माहीं विचार॥
देह अरोग संकट नासे। खेम कुशल चित माहीं परगासे॥
रिद्धी सिद्धी प्रभ नाम विचार। नित दातारी अनखुट भण्डार॥
भले संजोग परगट पायें। सत ठाकर की कीरत गायें॥
साची प्रीती केवल तिस चरना। भज करतार मुकत का निरना॥
औगनकारी ये मन दुःखदाई। बिन प्रभ ओट धीर ना पाई॥

**साची भगत प्रभ चरन की, नित उठ गुनी विचार।**
**'मंगत' बिन हरि नाम के, दुःखिया कुल संसार॥ 534**

साचा नाम मन माहीं ध्याओ। जलन मिटे सब ताप बुझाओ॥
पाँच दोख विकार अत भारी। तीन ताप का दुःख नित धारी॥
कोट यतन बिन सिमरन करे। मोह माया में खप खप मरे॥
दिवस रैन कर साची कार। आनन्दमूरत प्रभ लयो चितार॥
करता करता कर नाम ध्यायो। सरब स्वामी के चरन समायो॥
जनम मरन तुल ताप ना कोये। नित नवाँ नित पुराना होये॥
नित जनमें नित मरन भय पाये। आस अँदेसा नहीं भरमन जाये॥
अनक सयानफ़ पलपल धारी। बिन हरी सिमरन ना मिटे ख़वारी॥
साचा साजन परम सुखरासी। नाम सिमर होये बन्ध खुलासी॥
भय भरम सकलो दुःख नासे। साची प्रीत हरी चरन उपासे॥
आपत सकली पलपल में जाये। सच परतीत प्रभ नाम ध्याये॥
दीरघ रोग लागे इस जीया। बिपत माहीं सब जनम वतीया॥

साचा सुख ना जानत जानी। कूड़ भरोसे परम दुःख ठानी॥
देह के सुख को नर सत कर मानी। देह विनास सुख कहाँ पछानी॥
भरम त्याग गुरमुख तत्त चेत। सरजनहार रख चरन परीत॥
साचा करम नित ही नित घाल। आज्ञा मान प्रभ दीनदयाल॥
सुख दुःख करम भोग विचार। आज्ञा माहीं नित जीवन धार॥
जिस साजन ने बनत बनाई। सत कर मानो तिसकी प्रभताई॥
साचा जीवन जग माहीं विचार। साची कथा केवल निरंकार॥
उट्ठत बैठत लयो ध्याये। मीन नीर ज्यों प्रीत कमाये॥
आवन जावन देख ये मेला। अन्त की बारी तूँ चलें अकेला॥
कोई ना रह्या ना रहना पाए। ये जग देख तूँ रूप सराये॥
राजे राने भूप भिखारी। गुनी ज्ञानी और गुरु आचारी॥
आवें जायें प्रभ आज्ञा माईं। जुग जुग रचना अनूप लखाईं॥

**कोटाँ कोट उतपत भये, पीर वली बल शूर।**
**'मंगत' इस्थिर ना रहे, बिन अवगत रूप हज़ूर॥ 535**

## दूसरा अध्याय

## कल्यान सरूप निधान

कल्यान सरूप केवल जगदीशा। सरब गत पूरन सरब का ईशा॥
कल्यान सरूप शबद मुकन्दा। सचखण्ड बसे पुरख अखण्डा॥
कल्यान सरूप आतम तत्त जान। सरब परकाशी जोत निर्वान॥
कल्यान सरूप निज रूप विचार। घट घट बोले जो पुरख आपार॥
कल्यान सरूप इक पुरख बिधाता। घट घट व्यापक सरब गत जाता॥
कल्यान सरूप इक जोत निरंकारी। सरब व्यापक बिन रूप आपारी॥
कल्यान सरूप ब्रह्म नाद पछान। बिन्ध पिंड को जो करे सावधान॥
कल्यान सरूप निरअच्छर देवा। बानी रहित रूप लखीवा॥
कल्यान सरूप प्रभ अजर अबनासी। जुगा जुगंतर समरूप परगासी॥
कल्यान सरूप इक निरगुन धार। दसवें द्वार में करे पुकार॥
कल्यान सरूप आलख अनामी। हस्ती तृन में सम बिसरामी॥
कल्यान सरूप अबगत जोती। शबद सरूप सब घट अलोपी॥
कल्यान सरूप नित पारब्रह्म। सरब न्यारा नहीं व्यापे करम॥
कल्यान सरूप नर पेखो सोई। जगत का जीवन रूप है जोई॥

कल्यान सरूप अद्वैत अनादी। चिन्ह वरन नहीं धरे उपाधी॥
कल्यान सरूप इक परमेश्वर जान। जिसकी महमा नहीं होवे बखान॥
नेती नेती कर वेद विचारे। अनन्त अपार कर सिद्ध मुनी पुकारे॥
सरब के अंतरगत निवासी। कल्यान सरूप सो ही अबनासी॥
असंख नाम तिसकी कीरत। अनन्त सरूप है तिसकी मूरत॥
जगत बिस्तार तिसकी प्रभताई। अकारन रूप सब घट समाई॥
इच्छया भरम सब तिसकी माया। आनंद सरूप नित आप समाया॥
वारापार ना तिसका पाई। जो जो सिमरे कल्यान समाई॥
अपना कौतक आपे धारी। कल्यान सरूप पुरख निर्धारी॥
अखण्ड शकत निर्वान सरूपा। सम सरूप बसे नित अनूपा॥

**कल्यान सरूप प्रभ जान के, नित ही धरो ध्यान।**
**'मंगत' ये ही परमगत, जीव भये निर्वान॥ 536**

कल्यान सरूप केवल सतनाम। बन्ध छुड़ावे दे बिसराम॥
कल्यान सरूप सतसंग विचार। शुद्ध विवेक मिले सुख सार॥
कल्यान सरूप सतगुर का मेल। सत सरूप का परसे खेल॥
कल्यान सरूप सतगुर की दीख्या। अबगत रूप घट माहीं परीख्या॥
कल्यान सरूप सत करम विचार। पाप विनासे पाये सत सार॥
कल्यान सरूप सत सेवा साधन। खेम कुशल तत्त रूप आराधन॥
कल्यान सरूप पर दुःख हरना। सत सरूप का पावे निरना॥
कल्यान सरूप मन सत बिश्वासी। पाप करम की काटे फाँसी॥
कल्यान सरूप निज मरन विचारी। दुष्ट विकार की मिटे ख़वारी॥
कल्यान सरूप सब जीवों से हेता। साचे धरम की जाने नीता॥
कल्यान सरूप निज पाप विचारे। सत करनी की बुद्ध उजयारे॥
कल्यान सरूप मन राखे नीचा। गरब विनासे दुःख सरूपा॥
कल्यान सरूप सत कथा विचार। उपजे प्रीती सत करनी सार॥
कल्यान सरूप मन भोग त्यागी। आतम रस की शोभा जागी॥
कल्यान सरूप सत मारग ध्यान। पूरन सतगुर का सुने निधान॥
कल्यान सरूप सत नीयम धारी। पाप कुपथ की मिटे ख़वारी॥

कल्यान सरूप चित पर-उपकार। पाँच दूत का हरे बिकार॥
कल्यान सरूप ब्रह्मचर्य विचारी। आयू दीरघ अरोग पधारी॥
कल्यान सरूप सादा जीवन धारी। सरब धरम की मिले जुगत अपारी॥
कल्यान सरूप प्रभ चरन परीत। आवागवन की बिनसे रीत॥
कल्यान सरूप सब जीवों से एका। रल-मिल संगत सुने विवेका॥
कल्यान सरूप प्रभ आज्ञा सेवे। द्वन्द विकार को नित हर लेवे॥
कल्यान सरूप सत जुगत विचार। दृढ़ कर राखे ये मन गँवार॥
कल्यान सरूप प्रभ चरन अनुराग। झूट भोग से मिले बैराग॥

**मन के भरम को त्यागना, मारग ये कल्यान।**
**'मंगत' मन जब निर्मल भया, दरस पायो भगवान॥ 537**

कल्यान सरूप नित शुद्ध विचार। सत असत की परसे सार॥
कल्यान सरूप मन दोख को हरना। सत विश्वास में नित विचरना॥
कल्यान सरूप दुःख निरना कीजे। हंग विकार की मैल हर लीजे॥
कल्यान सरूप नित शुद्ध आहार। बुद्ध सुतन्तर मिटे देही विकार॥
कल्यान सरूप नित शुद्ध ब्यौहार। मिले संतोष निज सम्पत सार॥
कल्यान सरूप दुष्ट मनसा त्यागी। भृष्ट विकार की दुर्मत भागी॥
कल्यान सरूप प्रभ की अरदास। कल्यान सरूप प्रभ चरन विश्वास॥
कल्यान सरूप अनाथ की सेवा। हरखत भये पूरन प्रभ देवा॥
नित ही सत तत्त कीजे खोज। मिटे विकार पाये मुकत की सूझ॥
सत आधार जीवन नित धारी। पाये कल्यान परम गुनकारी॥
सत सरूप नित हिरदे ध्याये। छीजे बन्धन आनन्द घर पाये॥
समता ज्ञान का मारग बूझे। कल्यान सरूप का निरना सूझे॥
लाभ और हान इक चित देखे। दृढ़ निश्चय प्रभ चरन को पेखे॥
दुःख सुख धारे एके नीती। द्वन्द विकार की हरे पलीती॥
गुपत शबद घर परगट कीजे। सरब कल्यान मारग को लीजे॥
शबद परापत तत्त कल्याना। आनन्द सरूप पद निर्वाना॥
मैं मेरी दुःख बन्धन नासे। सत शबद जब घर परकासे॥
शबद परतीत मुकत तत्त सार। गुरमुख विरले सुनी पुकार॥

अनहद शबद जब घट विचारी। अकल्पत समाध में बुद्ध मतवारी॥
इच्छया भोग सब बन्धन जाई। अजर पुरष संग मेल मिलाई॥
करम विकार दुःख रूप सब नासे। नित आनन्द बानी परगासे॥
मन की भरमन शान्त समाई। आलख शबद कल्यान को पाई॥
पूरन करमी सत मारग पाये। पूरन प्रभ की सेव कमाये॥
आद जुगादी रिह्या समाई। जो जो पूजे सो गत पाई॥

**दुस्तर मारग इच्छया, चारखानी भरमाये।**
**'मंगत' बिन सत साधन, नहीं जीव पार कोई पाये॥ 538**

पारब्रह्म परमेश्वर ध्याओ। मोह अगन दुस्तर तर जाओ॥
मन की तृखा नर कभूँ ना नासे। आवे जावे भरम धर फाँसे॥
कोट यतन करे दिन और रैना। बिन प्रभ ध्यान नहीं पावे चैना॥
छिनभंगुर सब देही की किरया। तिसके मोह में नित दुःख भरया॥
करम नासे मनुआँ उकताये। इच्छया भोग की अगन जलाये॥
वाह वाह रचना साहब रचनाई। ज्ञान बिना नित आवे जाई॥
सत तत्त शबद अनूप पछानो। ज्ञान विज्ञान सुख सहज ग़लतानो॥
कल्पना नासे इक ध्यान समाई। शबद भेद अमरत गत गाई॥
मुकत सरूप शबद अबनासी। सुन्न धाम में नित बिलासी॥
सतगुर मिल जब सोझी होई। अनमत जीव ने भरमन खोई॥
जुग जुग तिस में लीन समाये। आवागवन का चक्कर मिटाये॥
शबद सार शबद ही जुगती। शबद पछाने पावे नर मुकती॥
बिमल शबद सत सारंग बानी। तत्त कल्यान की करो पछानी॥
नित सिमरो नित प्रीत कमाओ। सतगुर दया अभयपद पाओ॥
वस्त अनूप शबद रस मीता। डोलन बिनसे होये निहचल चीता॥
मूढ़ता जाये ज्ञान परगासे। गुरमुख जुगती योग निवासे॥
परकिरत विकार का बंधन काटे। महापरसाद सतनाम को जापे॥
पल पल मन के रोग निवारे। सत परतीत प्रभ नाम चितारे॥
दुर्मत गढ़ माया का फूटे। सत सील रसना नित लूटे॥
खिमा दया चित आये समाये। प्रभ की सेव परम सुखदाये॥

और पदारथ कोई ना मीता। परसन होवे ये मन दुःखरीता॥
साधजनां ने रसना गाई। सत करतार नित लयो ध्याई॥
जिस वस्तु को सब जग खोजे। शबद सरूप संतन दर सूझे॥
किलबिख माया हरो बिकारा। अपने जीवन का करो उद्धारा॥

**सतपुरषों की सीख सुन, मोह माया मध त्याग।**
**'मंगत' हरजस गाये लो, सब ताप तपन जाये भाग॥ 539**

देह के भोग में जीव गरसाया। सत विसार परम दुःख पाया॥
सत विचार करो गुनी मीता। कौन करम है सुख की रीता॥
मोह माया की अन्धमत त्यागो। काल चक्कर से उठके जागो॥
कूड़ प्रीती जग धरी घनेरी। दुःख अपार मिले वक्त आख़ीरी॥
पल पल देह की नाश विचारो। कूड़ कपट का तजो ग़ुबारो॥
अपनी करनी नर आपे पछाने। पाप करम नहीं अन्तर आने॥
जीवन साचा सतनाम ध्याई। सत करम घट सोझी आई॥
आनन्द सरूप इक साहब जाता। अंतरगत तिस चरन समाता॥
नाम प्रभ में आयो विश्वासा। दुस्तर जग का बन्धन नासा॥
साची प्रीती प्रभ चरन ध्याई। तिस बिन दूजा आवे जाई॥
इस्थिर रूप ज्ञान गम्भीरा। जो जो सिमरे मिटे जम पीड़ा॥
एक परमेश्वर मन नित ध्याओ। साचा मित्तर जग में सुखदाओ॥
तिसकी भावी जब चित धारें। मोह विकार की जड़ उखाड़ें॥
तिसकी भावी में जीवन राखें। महापरशाद मुकत रस चाखें॥
सब कुछ जानें भावी करतार। दृढ़ निश्चय पावें चरन निरंकार॥
सब कुछ रचना प्रभ शकत पछाने। अरूढ़ तपस्या की गमता जाने॥
निमख निमख तिस भावी पेखें। भरम विनास साहब घर देखें॥
दुष्ट विकार सकल मन नासी। प्रभ की आज्ञा मन माहीं उपासी॥
करम अभिमान जाये दुःख मूल। इच्छया भरम की काटे सूल॥
प्रभ आधार सत मनसा धारी। साचा ठाकर पलपल विचारी॥
जो हुआ सो सत कर मानी। अपनी सयानफ़ तजे गुमानी॥
जनम का दाता और प्रतिपाला। भज बिशम्भर सरब दयाला॥

दुःख सुख देह आज्ञा में धारो। साचा ठाकर मन प्रीत विचारो॥
अनन भगत प्रभ जब बख़शीशे। त्रैगुन जाल के मिटे अन्देशे॥

**निर्मल तत्त पहचान के, जीव भया परसन्न।**
**'मंगत' देखा प्रभ आप में, नास्यो द्वैत विगन॥ 540**

एक परमेश्वर मन सदा ध्याओ। सुफल कीरत जग में पाओ॥
प्रभ के दर का तूँ होवें भिखारी। सम्पत ज्ञान पावें सुखकारी॥
सत परमेश्वर की ओट पछानें। अगम निगम की रसना जानें॥
उतपत परलय के भेद को पायें। सत ठाकर जब प्रीत से ध्यायें॥
अपने आप में पायें गम्भीरी। आनन्द सरूप की मिली जागीरी॥
बिपत माहीं सुख सार पछानें। अखण्ड वडयाई साहब बखानें॥
औगन मिटे तब ही नर मीता। एक परमेश्वर आवे चीता॥
तूँ करतार तूँ सरब आधारी। अन्तर बाहर तूँ रखवारी॥
राख लयो प्रभ चरन के माईं। और द्वार की सूझत नाईं॥
कर किरपा मन पाप को हरयो। दीनदयाल तुध सरनी मैं पड़यो॥
सुरत चले ना इक पल स्वामी। निश्चल होवे तुध चरन आनामी॥
करूँ परनाम तुध पार जगदीशा। सकल वखेप हरें सरब का ईशा॥
तुमरे प्रेम में मगन समाये। उट्ठत बैठत तुम कीरत गाये॥
एक भरोसा तेरे चरन का पाई। राख लें ये अन्धमत दुःखदाई॥
पाप करम से नित नित राखो। दीनदयाल सरब का साखो॥
आद जुगादी तेरी महमा आपारी। सरन पड़े की रख लाज मुरारी॥
और ना माँगूँ तुध दरबारे। एक चरन प्रीत दीजो सुखकारे॥
करुनाकर तूँ सरब भण्डारी। नाम की दात करो दातारी॥
सरब जियाँ की करां नित सेवा। दीजो प्रेम देवन के देवा॥
सरब काल तुम चरन परीती। अनन भगत दीजो सुख रीती॥
आवन जावन मिटे गरभ का फेरा। नित समाऊँ तुध चरनी केरा॥
जीवतकाल में तुध सिमरन पाऊँ। अन्तकाल तुध रूप समाऊँ॥
काम क्रोध हरो विकारा। सील संतोख मोहे दीजो करतारा॥
सतनाम की रसना नित चित गाऊँ। दीजो ग़रीबी दान सुख थाऊँ॥

**सरब जगत की धूड़ रमाऊँ, चित बसे नाम की प्रीत।**
**'मंगत' कीजे बेनती, सुफल करो प्रभ चीत॥ 541**

अपरम आपार तेरी वडयाई। वेद ग्रन्थ बहु लेख लखाई॥
शेष सहँस मुख सिमरन गाये। विषन वरंच शिव आद ध्याये॥
नारद शारद नित जस गायें। अपरम अपार तेरा भेद ना पायें॥
रनक मातर जिस सेव पछानी। पूरन पुरष तीन लोक परवानी॥
अपनी महमा को आप पछानी। अछेद अभेद अपार लखानी॥
सरब जीवों घट तूँ परगासा। तुध आधार करें सरब बिलासा॥
पवन पानी बैसन्तर धरना। अम्बर तान बीच आप पसरना॥
अदभुत माया परगट कीनी। सकल जीव तिसमें भरमीनी॥
आद जुगाद अचम्भा धारी। सूक्षम अस्थूल रचना बिस्तारी॥
कारन महाकारन परे रहाई। शुद्ध सरूप आपार ज्ञाई॥
सूर चन्दर तारागन धारी। चारखानी की रची फुलवाड़ी॥
करम का चक्कर सब माईं लगाई। भाँतक भाँत खेल खिलाई॥
गुनी ज्ञानी नहीं पावें पारा। किस भाँत साहब रचा पसारा॥
जेता विचार जिस मन आयो। दे परमान जगत समझायो॥
ओड़क निरना एक समझायें। जल में तरंग त्यों जगत प्रभ मायें॥
बीज से बरिच्छ ज्यों परगट होये। पारब्रह्म में जगत बसोये॥
रवी किरन ज्यों तेज परगासे। पारब्रह्म में जगत इयों भासे॥
सकल जगत प्रभ रूप पछानी। मिल सतगुर पाएँ सार ज्ञानी॥
सबके मध नित आप परगासे। सरब अतीत हो नित निवासे॥
अपरम अपार ये अचम्भा धारी। सब कुछ तिससे सो सबसे न्यारी॥
मिल सतगुर जब जुगत पछानी। सकल विकार तब लीन समानी॥
शुद्ध सरूप ब्रह्म इक रहाई। दृष्टादृश्य भरम सब जाई॥
अचरज खेल जगत की रचना। बिन प्रभ रूप केवल है कलपना॥
प्रभ की खोज यतन तत्त सार। मोह ममता का मिटे गुबार॥

**सत सरूप निज आत्मा, तिसकी सेव कमाओ।**
**'मंगत' मिटे सब दूषना, काल करम का ताओ॥ 542**

हरि चरन कँवल में कीजो बासा। जाये जनम जनम की तेरी त्रासा॥
तुम दाता हम सदा भिखारी। तेरी छबी तों जाऊँ बलिहारी॥

अदभुत घन गगन में गरजे। दीनदयाल नित जीवन सरजे॥
सुरत इकागर नाम ध्याई। मिटे विकार शबद रस खाई॥
सूखे सरोवर नाद किलकारी। सुन सुन सुरत भयी मतवारी॥
अमरत कुम्भ घट अन्तर फोड़ी। सुरत निरत की लागी डोरी॥
शबद सिला पर आसन धारी। द्वैत भरम मन सकल निवारी॥
दीनदयाल की लखी प्रभताई। अखंड परगास जोत दरसाई॥
आतम तीरथ में करे अशनानी। भयी कल्यान गुर भेद पहचानी॥
बाहर की भरमन सकल दुःखदाई। आनन्द सरूप घर रह्यो समाई॥
पाँच तत्त गुन तीन का मन्दर। नौ किवाड़ साजे अति सुन्दर॥
करम की चौसर अजब बछाई। चारखानी नित खेल खिलाई॥
सब की खेल अन्तर हो देखे। जैसा खेल ऐसी गत लेखे॥
साचा साहब कारीगर आप। अजब रचनाई दीनी थाप॥
कायागढ़ का जिस किया विचार। बंधन टूटे पायो मुकत द्वार॥
दसवाँ द्वार गुपत समाई। बैकुण्ठपुरी सो नाम धराई॥
सतपुरष वहाँ आप परकासे। द्वैत भरम गवन वहाँ नासे॥
तिस दर की जिस सोझी पाई। परमगती का भेद लखाई॥
अमरत भोजन हंसा वहाँ खाये। अमर पुरष के संग रहाये॥
करम जाल से भई रहाई। निर्मल धाम में जाये समाई॥
जग लग अमर देस नहीं जाता। जनमें मरे नित गवन समाता॥
उठ साजन सत लेख विचार। सतलोक मारग को धार॥
जाँ में जाये जीव बन्ध नासी। आलख पुरख मिले अबनासी॥
अचरज देस जाँ साहब समाया। सतगुर मेल से भेद लखाया॥

**पाया भेद अगम का, मन तन आई शान्त।**
**'मंगत' उस घर जा बसे, जाँ नहीं द्वन्द भरान्त॥ 543**

प्रभ का नाम मुकत की धारा। जो सिमरे सतलोक पधारा॥
प्रभ का नाम शांत परगासे। कोट विगन इक पलक विनासे॥
अदभुत नाम साहब का देखा। मन बानी के परे विवेका॥
जिस जन निर्मल प्रीत कमाई। तज के विकार सतनाम समाई॥

अतिअत शुद्ध सरूप प्रभ नामा। नित परिपूरन पद सुखधामा॥
और जतन तज नाम विचार। साचे प्रभ की रसना धार॥
नाम साहब का मन सरजीवे। सत शबद की रसना पीवे॥
धन्न पुरष जिस नाम प्रभ ध्याई। तिसके चरन रज सीस रुमाई॥
अनगिनत विकार से मनुआँ छूटे। अनगिनत ग़ुबार मन का चूके॥
निहथावाँ मन आये थाँ समाई। प्रभ के नाम की वडी वडयाई॥
सब जग से ऊँच सोभा लीनी। निष्काम सरूप नित हिरदे चीनी॥
निरबन्ध जीवन धाम को पाया। मिल सतगुर सतनाम जस गाया॥
परकिरत भरोसा मन का नास्यो। सतनाम में बुद्ध निवास्यो॥
करम विकार सब दूषन नासी। निश्चल बुद्ध सत शबद बिलासी॥
चंचल मत सब मन की निवारी। निश्चल धार शबद विचारी॥
भरम अगन में जो तन मन जलया। नाम सिमरे भयो सब हरया॥
जीवन जीया कालगत टारी। अबगत रूप देखा प्रभ निर्धारी॥
आपा पर का दोख मिटाई। सतगुर सीख सतनाम ध्याई॥
एक साहब का लियो भरवासा। जनम मरन गई भरम की फाँसा॥
साची सिखया सुन गुनी मीता। प्रभ का नाम मुकत रस पीता॥
अतिअत दुस्तर मन की क्रीड़ा। तीन ताप की तपे जन पीड़ा॥
नाम की तेग़ ले भरमगढ़ जीता। निज मन भयो परमसुख रूपा॥
मारग अगम सतगुर दिखलाई। जुग जुग जीव के बन्ध कटाई॥
अचरज मारग में इस्थित पाई। केवल नाम संग प्रीत कमाई॥

**मुकत सरूप प्रभ नाम है, जो सिमरे निज पद पाये।**
**'मंगत' पलक ना विसरे, प्रभ नाम अधिक सुखदाये॥ 544**

करम संदेसा तब ही जाये। मिल सतसंग सतनाम कमाये॥
साचे ठाकर की ओट विचारो। गुनी मुनी नित करें पुकारो॥
साचे नाम की अधिक वडयाई। वेद ग्रन्थ सिद्ध मुनी ध्याई॥
जप प्रभ नाम नित सुकृत काजा। नित सुख दात सो ग़रीब निवाजा॥
जप प्रभ नाम ये सम्पत भारी। अन्तकाल मिटे जम की ख़वारी॥
जप प्रभ नाम सयानफ़ सार। आवन जावन मिटे ग़ुबार॥

जप प्रभ नाम सब भूक विनासे। अचरज धाम तृपत घर बासे॥
जप प्रभ नाम छाड तीरथ गवना। अन्तरयामी तेरे घट माहीं रमना॥
जप प्रभ नाम छाड करम सकामा। आज्ञा बूझ पाएं निर्मल धामा॥
नाम सिमर निष्काम भाओ धारी। सुकृत मूरत जन मुकत विचारी॥
जो भावी सो निश्चे होई। आरजा दरगाहे चले ना कोई॥
जो कुछ बीजे सो निश्चे पाना। करम रेख अटल परमाना॥
ताँ सो केवल भगत कमाओ। आज्ञा माहीं सब खेड लखाओ॥
करम चक्कर होये बन्धन नासा। अजर पुरष परसें परकाशा॥
ऐसी करनी नित विचार। जग आवन पावें वस्त अपार॥
एक साहब पद पंकज ध्याओ। निर्मल कीरत हिरदे गाओ॥
ग्रन्थ कतेब का मूल विचार। साचा नाम प्रभ हिरदे धार॥
उट्ठत बैठत सोवत ध्याओ। खावत पीवत सतनाम कमाओ॥
एक अनुराग प्रभ चरन में धारो। पूरन भाग पावें मोख द्वारो॥
नाम साहब तत्त योग की समता। नाम साहब तप ध्यान की गमता॥
नाम साहब का परमपद मीता। नित नित सिमर तूँ चरन पुनीता॥
नाम साहब का जगत का मूल। व्याप रह्या सूक्षम अस्थूल॥
पूरन भाग जिस सोझी पाई। सत विश्वास गयो धाम समाई॥
हिरदे में नाम हथ कार करीजो। लाभ हान प्रभ आज्ञा में लीजो॥

**दृढ़ निश्चय इक नाम जप, मिल सत साधू के संग।**
**'मंगत' जाये सब कामना, चढ़े सत प्रेम का रंग॥ 545**

पुन्न पाप ये गवन निशानी। सुख दुःख नरक स्वर्ग पछानी॥
कामना धार करम जो कीजे। अधिक बन्धन जीव ये लीजे॥
जुगा जुगन्तर रह्या भरमाये। करम का जन्तर नहीं टूटन पाये॥
सतपुरषाँ इक जुगत दिखाई। बन्धन नासे मुकत पद पाई॥
सत परमेश्वर पर रख विश्वासा। तिसका नाम भज पलपल स्वाँसा॥
आज्ञा तिसकी मन तन कमाओ। करम चक्कर का होवे अभाओ॥
अकरम सरूप नाद निर्वानी। निज घर बूझे मिटे गवन निशानी॥
नित ही मारग ज्ञान में धाओ। सतसंग प्रीती नित ही नित लगाओ॥

सतनाम आवे परतीत। गुरमुख लीना भवजल जीत॥
कोई योग को साधे जलशैन नहावे। कोई धूनी तापे देह भसम रुमावे॥
कोई कंद्रा में बैठ हठयोग कमाये। धोती नेती आद करम ध्याये॥
कोई मारग जैन में उठके चाले। अहिंसा तप में देही गाले॥
कोई उलट कपाली आसन धारी। कोई धूनी अखंड बीबान उजियारी॥
जतन अनेक में जीवन काढ़े। नाम ध्यान बिन पावें ना पारे॥
गुरमुख मारग जिस जन पहचाना। द्वन्द विकार भयो भरम का हाना॥
कारन करता जाने अबनाशी। आज्ञा बूझे काटी फाँसी॥
अपनी हिकमत उमेद चुकाई। प्रभ के नाम की सोझी पाई॥
अन्तर माईं पवन तत्त सोधा। खुले कपाट शबद घर बोधा॥
अबनाशी शबद मुकत की धार। गुरमुख जुगती लीना विचार॥
इच्छया पाप का खंडन कीना। अखण्ड सरूप में भयो लवलीना॥
मिरतक देही पर पाई जीत। गुर के बचन पाई परतीत॥
सुरती राखे शबद की धार। काल करूर का ताप निवार॥
निश्चल ध्यान जब शबद समाई। जीवनमुक्त अभयपद पाई॥
हरचरन परीती संसा सब नासा। रोम रोम प्रभ रूप परगासा॥

**पूरनगत पहचान के, मनसा पूरन होये।**
**'मंगत' भेद अगम का, कोई हरजन हिये परोये॥ 546**

पूरन भाग तिस जन पाई। तीन लोक नित देवें वधाई॥
धन्न जननी जिस गुरमुख जाया। सतपुरष का चोला पाया॥
झूट जगत से उपरस हूआ। सत सरूप में जीवत मूआ॥
उलट मारग में जाये समाई। अबगत पुरष के दर्शन पाई॥
उलट करम में उठके लागा। निष्काम विरत में नित उठ जागा॥
सम्पत झूट त्यागन कीनी। आपत प्रेम की सिर पर लीनी॥
प्रेम की आपत सम्पत सुखरासी। जिस जन पाई तिस चरन निवासी॥
मारग मुकत का नित परबीने। निरदेह पुरष की रसना चीने॥
जगत आधार इक बिन्ध पछाता। अखण्ड सरूप अलेख बिधाता॥
नित ही तिसके चरन समाई। दुष्ट विकार सब भरम निसाई॥

सत पुरषारथ अन्तर धारी। पद सेवे नित एक मुरारी॥
औगन हरना सुख दात स्वामी। पल पल सिमर ले प्रभ पारगरामी॥
एक पलक ना विसरन पाये। अखंड प्रीत हरी चरन ध्याये॥
निज अन्तरगत सोझी होई। पारब्रह्म संग सुरत परोई॥
मन की गवन पल पल त्यागे। सत शरधा सत शबद में जागे॥
आनन्द सरूप जीवन परवान। सब जीवों में भयो परधान॥
सकल जगत की जुगता जानी। बंध मुकत का भेद पछानी॥
अन्तर बाहर सोझी पाई। अबनाशी पुरष का भेद लखाई॥
करम बन्ध जीव का नासी। पद नारायन अंतर परगासी॥
तिसका जीवन परम सुखकारी। कोट जीवों का ताप निवारी॥
सतपुरष सतशबद ज्ञाता। काल त्याग अकाल समाता॥
जग आवन की पाई सार। जग आवन की घाली कार॥
एक नाम प्रभ लयो कमाई। इस्थिर धाम में गयो समाई॥
पूरन करम हरजन जग पायो। सत ठाकर की प्रीत कमायो॥

**आनन्द सरूप पहचान के, हरजन मगन समाये।**
**'मंगत' मिथ्या जगत में, दुर्लभ सो जन आये॥ 547**

## तीसरा अध्याय

## बन्धन सरूप निधान

बन्धन सरूप का सुनो विवेक। सत मारग का पावें लेख॥
बन्धन सरूप हंग बुद्ध विकार। भरमे जीव जूनी बहु धार॥
बन्धन सरूप ये इच्छया का रोग। शुभ अशुभ पावे करम संजोग॥
बन्धन सरूप मन कर्ता भाओ। करम भोग में नित भरमाओ॥
बन्धन सरूप देह अभिमान। लोक लाज धार के नहीं शांत पहचान॥
बन्धन सरूप नित ऊँचा जाने आप। काम क्रोध की अगन घट व्याप॥
बन्धन सरूप नर विद्या से हीन। सत कुसत नहीं हिरदे चीन॥
बन्धन सरूप जो गुर पीर से हीन। मान मध धार के करे करम मलीन॥
बन्धन सरूप सत सिखया ना भाये। कुबुद्धि को धार के जीव परम दुःख पाये॥
बन्धन सरूप नर दुष्ट का संग। धरम त्याग करे पाप बहु रंग॥
बन्धन सरूप माया मोह बहु धारी। नित अशांत रहे वाँग अंगारी॥
बन्धन सरूप असत का वादी। छल कपट धार के जले परमादी॥

बन्धन सरूप जाँ नहीं धरम प्यार। अधरम विकार में भरमें गँवार॥
बन्धन सरूप जो पुरषारथ से हीन। आलस विकार में फिरे मलीन॥
बन्धन सरूप अत लोभ जो धारी। अरब खरब पाये नहीं धीर विचारी॥
बन्धन सरूप सब देही आकार। सत विचार बिन नित दुःख धार॥
बन्धन सरूप स्वारथ वादी। करे विकार दुर्जन भाओ को साधी॥
बन्धन सरूप जो गरभ जून आया। झूट संसार देख नित भरमाया॥
बन्धन सरूप ये कुल संसार। सार को त्याग विच भरमें आसार॥
बन्धन सरूप सब मन की किरया। झूट संसार में नित पसरया॥
बन्धन सरूप जग सकल परिवार। तिसके मोह में करे बकार॥
बन्धन सरूप कुल जग दृश्यमान। माया मोहनी करी परगट भगवान॥

**सतसरूप भगवान बिन, सब जग बन्धन रूप।**
**'मंगत' लीला देख के, मोहे गुनी मुनि भूप॥ 548**

नाम रूप गुन करम आकारा। बंधन रूप ये सकल विकारा॥
बन्धन सरूप नर अंध विश्वासी। सत विसार धारे भ्रम फाँसी॥
बन्धन सरूप जग जीवन आसा। काल सरूप की माने त्रासा॥
बन्धन सरूप जो सार नहीं पछाने। संकल्प विकल्प परम दुःख ठाने॥
बन्धन सरूप ये मन नित दोखी। पल पल चाल चले अनोखी॥
बन्धन सरूप जो दुःख भेद नहीं जानी। असत विकार में नित सुख मानी॥
बन्धन सरूप सब इन्द्री की रसना। भोगे भोग नित बढ़े तृष्ना॥
बन्धन सरूप जो देह सत कर मानी। तिसके भोग में नित ग़लतानी॥
बन्धन सरूप ये मज़हब की फाँसी। समता ज्ञान की कीजे नासी॥
बन्धन सरूप जो नहीं चित हेता। वैर बदी में नित रमनीता॥
बन्धन सरूप जो चले मनमाना। धर अभिमान करे पाप बिध नाना॥
बन्धन सरूप जो साधन बिन विद्या। धर अभिमान नित पाप में फंदया॥
बन्धन सरूप नर नित नित सूझे। बिन प्रभ ध्यान नर और को पूजे॥
बन्धन सरूप मढ़ी मसान की पूजा। हीन विश्वास होये नर नित दुःख सूझा॥
बन्धन सरूप सब बिन तत्त ज्ञान। करम का संसा धर फिरे चारों खान॥
बन्धन सरूप जो नर बाद बधावे। कथनी कथ कथ जनम गँवावे॥

बन्धन सरूप नर आहार विकारी। तमोगुन बढ़े चित अगन अपारी॥
बन्धन सरूप जो परहक़ खाये। छल सरूप धर परम दुःख पाये॥
बन्धन सरूप जानो सतकर्म बिन मीता। करम मलीन धर फिरे अनीता॥
बन्धन सरूप का मूल ये जान। देह के सुख में जो रहे ग़लतान॥
बन्धन सरूप सब रंग तमाशे। काल गँवाये नर कूड़ भरवासे॥
बन्धन सरूप राज तेज की आसा। करम करूर की धारी नित फाँसा॥
बन्धन सरूप बिन प्रभ आज्ञा माने। द्वन्द विकार नित भ्रम चित ठाने॥
बिन तत्त ज्ञान सब बंधन होई। मिथ्या भरम में सुरत परोई॥

**निर्बन्ध रूप सत शबद है, जो घट घट रह्या व्याप।**
**'मंगत' जिस जन सोधिया, नहीं परसे दुःख सन्ताप॥ 549**

बन्धन सरूप करमफल ममता। इच्छया भोग में नित नित रमता॥
बन्धन सरूप मन कलपना सारी। मोह माया नित भरम विचारी॥
करो विचार नर चतुर सुजाना। बन्धन रूप माया भगवाना॥
अदभुत जाल माया बिस्तारी। गरब ग़ुबार में नित गवन विचारी॥
बन्धन रूप करम जंजाला। पलक ना छूटे जीव दुःख भाला॥
बन्धन रूप मन ममता पेखो। भाँतक भाँत भरम को देखो॥
संकट भारी में जीव गरासा। भय भरम की धारी फाँसा॥
नित तृखत नित भय समाई। दुःख सुख भरम चक्कर भरमाई॥
छिन हरखे छिन शोक व्यापे। राग द्वेष अगन में तापे॥
बिना विवेक नहीं छूटन पाये। मोह जंजाल अनवर्चित माये॥
गुनी ज्ञानी भये दीवाने। बन्धन माहीं नित ग़लताने॥
लोक परलोक की इच्छया जो धारी। बन्धन सरूप ये निश्चय दुःखकारी॥
जीवन की आसा मरन भय जो पाई। माया बन्धन की ये सब प्रभताई॥
काम क्रोध अत चित हँकारी। बन्धन सरूप ये कलपना सारी॥
पाँच पचीस परकिरत जंजाला। बन्धन रूप ये ही जमकाला॥
तिसके मोह में जीव दुःख पाई। तीन ताप अगन में नित जलाई॥
मान मध धार नर अनमत होई। नाश रूप जगत में निश्चय परोई॥
आठ पहर भय में जीव गरासे। इच्छया विकार धारी दुस्तर फाँसे॥

करम के भोग आनन्द सुख पेखे। करम विनाश से भये दुःख विशेखे॥
माया भरम से मुकत ना होई। करम के जाल में नित फिरोई॥
औगन अपार करे दिन और राती। पल पल जीवन की करे नर घाती॥
दुर्मत धार के नित भरमाई। बन्धन में बन्धन पड़े जीव दुःख पाई॥
अधिक सयानफ़ नर मन में धारी। सतगुर मेल बिन नहीं बन्धन निवारी॥
मुकतसरूप जब सतगुर पाये। निरबंध रूप का भेद लखाये॥

**माया छाया दुस्तर में, अनर्थ जीव भरमाये।**
**'मंगत' बिन परसे गुरपदम के, कभूँ नहीं छूटन पाये ॥ 550**

चौधाँ लोक में जीव जो आई। त्रैगुन जाल में नित दुःख पाई॥
पीर पैग़म्बर अवतार ज्ञानी। माया चक्कर में फेर फरानी॥
सिद्ध तपीशर गुरु गोसाईं। माया भरम में नित भरमाईं॥
भोगी रोगी और सम्पत वादी। अचरज माया सब में उपाधी॥
मानुष पशु जंगम अस्थावर। माया चक्कर में सभी चलावर॥
पवन पानी आकास धरती। फिरे बैसन्तर धर माया शक्ती॥
ऊँच नीच जो जीव गत धारी। सकल प्रभता माया दुःखकारी॥
बन्धन सरूप में सब आवें जायें। बिस्माद चक्कर में फिरें फरायें॥
करम के बन्ध में चराचर समाई। कुदरत साहब नहीं वरनन जाई॥
गुनी ज्ञानी बहु भाँत विचारे। अचरज खेल का पार ना पावें॥
दृष्ट माहीं जो दिखलाई। माया चक्कर में फिर फिर आई॥
अत संताप में जीव तप्तावे। चारखानी में नित भरमावे॥
अनक नाम रूप को धारी। अचरज माया करे बिस्तारी॥
कोई दिशा कोई थाँ ना पाई। काल चक्कर जाँ ना फिराई॥
आकास पाताल मृतलोक का पसारा। काल चक्कर में सब खेल खिलारा॥
वारापार कछू ना पाई। अद्भुत शकत साहब दिखलाई॥
इच्छया में जन्मे इच्छया में जाये। इच्छया में बहु रूप विटाये॥
इच्छया में राजा राज विचारी। इच्छया में फिरें जन कई भिखारी॥
इच्छया में बहु द्रभ को धारी। इच्छया में करम कुकर्म विचारी॥
इच्छया में नर उठ उठ धाये। चार कुंट में गवन लखाये॥

इच्छया में नर भयो परवारी। इच्छया में मान तेज को धारी॥
इच्छया में गुनी ज्ञानी धायें। पढ़ पढ़ वेद कुतेब सुनायें॥
इच्छया में पीर गुरु आचारी। सच झूट का निरनय विचारी॥
इच्छया में रोगी वैद बुलाये। इच्छया में वैद हिकमत दिखलाये॥

**इच्छया भरम को धार के, साधे जतन अनेक।**
**'मंगत' छूट ना पाइये, बिन साचे नाम विवेक ॥ 551**

उठ गुनवन्ता कर सुफल विचार। दुस्तर भरम से उतरें पार॥
अन्तर बाहर सब इच्छया का खेला। भेद पछाने पावें साहब से मेला॥
सकल चक्कर इच्छया का ताना। मोहित भयो ये जीव अंजाना॥
अपनी कलपना आप बंधाई। नाना रंग खेल दिखाई॥
कित तीरथ पर्बत में उठ उठ धाये। कित रन भूमी में जाये समाये॥
इच्छया धार करे जतन अनेक। मिले ना शान्त बिन प्रभ टेक॥
अगनी को ज्यों घृत परचण्डे। करम भोग में एहों जीव नित फन्दे॥
छूट ना पावे ना मारग कोई सूझे। ग़फ़लत धार नित गवन को बूझे॥
कित जनमे कित मरन पछानी। बाल जोबन जरा लखानी॥
कित ऊँचा कित नीच हो धावे। कित सुखिआ कित दुःख भोगावे॥
कित दाता कित भयो भिखारी। कित कायर कित शूर रन धारी॥
कित जोगी सत जुगत लखाई। कित भोगी रँग भोग कमाई॥
कित छलकपटी कित सतवादी। कित विद्वान विद्या को साधी॥
कित हो भूप नित हुकम चलाई। कित हो परजा नित हुकम मनाई॥
कित ग्रीषम कित शीत विचारी। कित बसंत की फुली फुलवाड़ी॥
कित अन्न आहारी कित घास गरासी। कित हो पंछी आकास बिलासी॥
कित नदियाँ सागर में धायें। कित सागर मेघ वरखायें॥
कित बीज से बरिच्छ बिस्तारी। कित बरिच्छ से बीज उपजारी॥
कित बस्ती कित भयो बीबाना। कित नगर में बहु रंग दिखाना॥
कित राजा हो फिरे भिखारी। कित दलिद्री उठ राज को धारी॥
कित सयाना मूढ़मत होई। कित ओह मूढ़ा भाओ चतुर परोई॥
कित सम्पे कित नाश हो जाये। वाहवाह रचना साहब दिखलाये॥

सब ही खेल इच्छया बिस्तारी। लिखने न आवे लेख अपारी॥
मन में जेते तरंग समाये। ऐसी भाँत जग रचना दिखलाये॥

**इच्छया चक्कर में भरम रह्या, लोकालोक संसार।**
**'मंगत' इच्छया रहित है, सत सरूप निरंकार॥ 552**

जग संसे का करो विचार। अधिक कलेश से होये छुटकार॥
अचरज रचना पर नाश सरूप। नित विचार करो गुनी भूप॥
जो वस्तु नर दृष्ट में आई। छिनभंगुर सो रूप दिखलाई॥
जो जनमे सो निश्चे मरे। जिसका आद सो अन्ती पड़े॥
जिसका संजोग वंजोग सो पाये। जिसका सुख सो दुःख हो जाये॥
जिसकी उस्तत सो निन्दया पाई। जो तेजस्वी सो कायर हो जाई॥
जाँ सम्पत ताँ बिपता आये। करो विचार गुनी गुनराये॥
जाँ जोबन ताँ जरा व्यापे। जाँ जीवन ताँ मिरतक संतापे॥
जाँ भोग ताँ रोग विचारी। जाँ बस्ती ताँ उजड़ उजाड़ी॥
जाँ परवारी ताँ चले अकेला। खोल नैन देख जग मेला॥
जो वस्तु अपनी कर मानी। एक पलक में होये बिगानी॥
करें चतुराई धरें अभिमाना। काल की नौबत नित बजे निशाना॥
झूट जगत में क्यों गरबावे। एक पलक में छाड के जावे॥
जिस देह संग प्रीत अधिकाई। हीरे मनी का हार पहनाई॥
गंध चन्दन नित मरदन कीजे। अश्व हस्ती की सवारी लीजे॥
महल अटारी गढ़ कियो पसारा। सब कुछ छाड होवे देह छारा॥
निकले प्रान देही कुमलाये। भाई मित्तर नहीं निकट कोई आये॥
एक पलक में दुर्गंध होई जारी। एक जलावें इक भूमी दें गाड़ी॥
मूरख जीव बिरथा दुःख पाये। झूट देही के मोह फँसाये॥
करो विचार नित ही मीता। काल सरूप ये जगत परीता॥
सतपद खोज निर्मल अबनाशी। मुकत समावें सब बंधन नासी॥
मन का संशय नित निवारो। साची कीरत प्रभ हिये विचारो॥
औगन नासे सत रूप परगासी। माया बन्धन से होये ख़ुलासी॥
झूट विकार हैं नित दुःखदाई। तिनकी प्रीत बन्धन कहलाई॥

**झूट की प्रीती त्याग के, सतसंग प्रीती राख।**
**'मंगत' मिटे कलेश सब, मुकत महारस चाख॥ 553**

छाया प्रीती बन्धन दुःखदाई। सदा अशान्त जीव भरमाई॥
नहीं सत सिखया हिरदे विचारी। पाप कूप में रहे मतवारी॥
नहीं सतसंग में प्रीत लगाई। मूढ़मती नहीं मन की जाई॥
सत करम ना कियो विचारी। अन्धमत धार नित करे ख़वारी॥
अपना किया ना कभी विचारा। पशु समान आयो संसारा॥
अपना कभूँ ना मरन विचारी। नहीं निज धाम की करी तयारी॥
दुःखी दीन की सेवा नहीं कीनी। छिनभंगुर निज सुख लवलीनी॥
पल छिन एक नहीं हरजस गाई। रहें ग़लतान जग धार प्रभताई॥
अपनी औध का नहीं कियो विचारा। समाँ गंवायो विच कूड़ विकारा॥
अपने स्वारथ में नित लपटाई। सम्पत राई ना संग नर जाई॥
देह की शोभा में नित ग़लताना। सरजनहार ठाकर नहीं जाना॥
छल कपट जो रुच रुच कमाई। तेरी बुद्धी तेरी देवे गवाही॥
जो कुछ बीजें सो निश्चे पाना। सतपुरषों का सुन फ़रमाना॥
कुल जाती का मध बहु धारी। सत रहनी नहीं हिये विचारी॥
सम्पत अधिक संचित कीनी। चले ना संग नर जब देही छीनी॥
संग परिवार बहु हेत लगाई। कौन सखा तेरा अन्त सहाई॥
वैर विरोध धरें बदनीती। छूट ना पावें नर जो करें पलीती॥
जीवन के बहु साज़ बनाये। निज मरने का नहीं कियो उपाये॥
इस जग में पाई बहु मान बड़ाई। प्रभ दरगाह की नहीं सिफ़्त लखाई॥
रंग तमाशे बहु भाँत बनाये। ख़बर ना कीनी जब छार समाये॥
प्रभ की कथा नहीं कीरत चित पाई। संसा मिटे नहीं करम दुःखदाई॥
जनम अमोलक कूड़ रंग में गँवायो। बौहड़ बौहड़ बावरे गरभ में आयो॥
कूड़ विकार में चतुर सुजान। सत मारग का नहीं लेख पछान॥
ऊँचे महल मण्डप उसारे। धरती शैन का नहीं कियो विचारे॥

**बहुरंग देह सँवारता, बहुरंग राखें मान।**
**'मंगत' निकले प्रान जब, भयो पलक में बेनिशान॥ 554**

इन्द्री रसना में तृप्त नहीं पाई। भोगे भोग बहुरंग अधिकाई॥
खटरस पदारथ नित नर खाये। जीबा की रसना धीर नहीं पाये॥
जुग जुग देखें जग रचनाई। कूड़ भरवास में नहीं नैन तृप्ताई॥
एह बिध भोग सब बेरस होए। देह को त्याग जब जीव चलोए॥
संसार में आये नहीं संसा गँवायो। अपने मन का नहीं रोग मिटायो॥
भाँतक भाँत विद्या विचारी। धन संचन की साधी कार गुज़ारी॥
अपने आवन जावन का लेख नहीं जाता। मूढ़ जीव अन्त पछताता॥
सचखंड देस का भेद नहीं पायो। करम के जाल में फिर फिर आयो॥
सतगुर वैद ना खोजन कीना। बिनसे ना रोग जो मन भ्रम लखीना॥
अपने जीवन की नहीं सार ध्याई। काल करम में सब औध विहाई॥
मन्दर मसीत में उठ उठ धायो। देह मन्दर की सोझी नहीं पायो॥
बद्री केदार तीरथ जाये नहाई। आतम तीरथ की नहीं रसना पाई॥
भोग के कारन जीयाँ खाल उतारी। चली ना देही संग अंत की बारी॥
मन शत्रू की नहीं सार लखाई। और जीयाँ संग वैर कमाई॥
मन अपने को नहीं दियो उपदेशा। और जीयाँ का हरे संदेशा॥
मन की अगन नर नहीं बुझाई। ऊँच शिखर जाए शांत ना आई॥
मन का अन्धकार नहीं नर त्यागा। झूट परकाश जग देखे अभागा॥
मन की ममता नहीं नर त्यागी। जतन करें नहीं मिटे उपाधी॥
आहार पवित्र नर नित नित खाई। बिना विचार मन मलिन नहीं जाई॥
शास्तर सिमरत पढ़े अनेका। बिना अनुराग नहीं मिले विवेका॥
मारग अनेक में मन नित डोलाई। सतगुर भेंट बिन पार नहीं पाई॥
साधन अनेक मन अन्तर धारी। बिना विश्वास निहफल विचारी॥
जुगत मुकत का भेद तब पायो। पूरन भाग जब सतपुरष मिलायो॥
पाखण्ड विकार सब मन ने त्याग्यो। कल्यान सरूप प्रभ चरन में जाग्यो॥

**सतपुरषों की सीख से, मन तन भया निहाल।**
**'मंगत' बंधन सब नासिया, घर परसयो दीनदयाल॥ 555**

बिपत तजी सत सीख लखाई। साचा जतन हिरदे में पाई॥
सकल विकार का निरनय पायो। शुद्ध सरूप की सेव कमायो॥

मन के विकार पलपल त्यागो। शुद्ध सरूप में नित उठ जागो॥
देह के विकार से तभी नर छूटें। सत आतम रस जब घट लूटें॥
छिन छिन मन की सिमरत बाँधो। साचा नाम निरन्तर आराधो॥
आतम तत्त में सुरता राखो। मुकत पदारथ अमीरस चाखो॥
आतम शक्त आनन्द की खानी। विकार सरूप ये देह पछानी॥
सतगुर मेल आतम तत्त खोजो। मारग मुकत का ये नर बूझो॥
देह के भोग में तृपत ना पाई। आतम रस खाये मन शान्त समाई॥
छिनभंगुर सब देह की किरया। अकाल सरूप आतम पसरया॥
पल पल में देह रूप वटाये। सत सरूप सम रह्यो समाये॥
गुरमुख विरले तत्त पछाता। निरदेह पुरष सिमर रँगराता॥
पल पल आतम धुन को पीवे। आतम सरूप में जीवन जीवे॥
देह विकार से मुक्ता पाई। सत सरूप में लीन समाई॥
धन्न पुरष जिस काज सँवारा। मान त्याग जप लिया करतारा॥
पलक ना विसरे अमरत खानी। अन्तरगत जो करी पछानी॥
भयो मतवाला सतनाम को खाये। बंधन नास जन मुकत समाये॥
उठ कर नित ही मारग चालो। अचपच रूप जप दीनदयालो॥
बिलम ना कीजो सतनाम कमाये। गया समाँ फिर हाथ ना आये॥
भज दीनदयाल शबद सुखरासी। बन्धन चूके सतधाम निवासी॥
चतर चतुराई नर मन की छोड़ो। साचे नाम में सुरता जोड़ो॥
मन की दूषन छिन छिन त्यागो। सत पुरष के नित चरनी लागो॥
बिन सत सेवे छूट ना पायें। भरम को धार के आवें जायें॥
बिन सत सेवे ना ठौर कोई पाई। करम संदेश में नित भरमाई॥

**सत खोजो सत सिमर लो, सत में धरो विश्वास।**
**'मंगत' ये मारग मुकत का, करे भरम का नास॥ 556**

खल बुद्धी नर बड़ी दुःखदाई। पाप भयंकर नित उपजाई॥
करम विलक्खन नित हिये विचारी। भूत समान नित विरता धारी॥
मान को धार सत धरम विसराई। संकट अपार में नित भरमाई॥
अपने सुख की नित बाँछा धारी। कर्म कुकर्म की नहीं सार विचारी॥

कपट को खाये कपट परगासे। खल बुद्धी धार नर भय गरासे॥
भय में जन्मे भय में उठ धाये। मिटा ना भय कियो बड़े उपाये॥
जिस वस्तु संग हेत लगाई। भय सरूप सो ही दिखलाई॥
जो पदारथ प्रेम से भोगे। भय सरूप भयो लाये जीव रोगे॥
देह को राखन के किये बहु जतना। देह विनासे पायो भय घट रतना॥
अनक मित्तर संग हेत लगाई। मन का भय नहीं गुनी जन जाई॥
एह निधान सन्ताँ फ़रमाया। बिन हरीनाम सब भय लखाया॥
भय निवारन ताईं जीव उठ धाई। बिन सत बूझे निरास रहाई॥
भय को धार सूर लड़े मैदाना। शत्रु विनाश की सोचे बिध नाना॥
भय को धार के नरेश दु:ख पाये। रखया कारन गढ़ लश्कर बनाये॥
भय को धार धनी दु:ख पावे। धन की रखया में कष्ट उठावे॥
भय को धारें चराचर भूत। करम चक्कर में ना मिटे भ्रम कूप॥
भय में धरती जड़ता धारी। भय में नीर द्रवता विचारी॥
भय में पवन अस्पन्ध लखाई। भय में बसन्तर नित जलाई॥
भय में आकाश शून समाया। भय में मन नित भरम भुलाया॥
भय में बुद्धी कर्म इच्छया धारी। अनमत जीव की होई ख़वारी॥
ममता रूप ये भय विचारो। इच्छया भरम का दु:ख अपारो॥
समता बूझे भय भरम विनासे। आनन्द सरूप घट शबद परगासे॥
सुख दु:ख इच्छया भय की किरया। आनन्द सरूप तिन परे पसरया॥
अपना आप जाँ द्वैत नहीं भरमा। निर्भय पद निष्काम निष्करमा॥

**अबनाशी शबद जिस जानया, भय तिनको व्यापे नाहीं।**
**'मंगत' उस घर जा बसे, जाँ द्वैत भरम नहीं पाईं॥ 557**

निर्भय रूप भज दीनदयाला। सुकृत मूरत आनन्द जवाला॥
भय रूप भव दुस्तर मीता। निर्भय होवें जपें नाम पुनीता॥
एक साहब में रख विश्वासा। सिमर नाम होवे भय नासा॥
साधन अनेक से निरनय पायो। भय विनासे प्रभ चरन ध्यायो॥
सब सम्पत मन को दु:खदाई। भजो निरंजन सुख रूप समाई॥
सरब जतन नर पूरन होई। जब हरी चरन लयो चित परोई॥

भय विनास सत रूप समाई। बौहड़ चक्कर संसार ना पाई॥
खोज तत्त ज्ञान मन लीन समाये। जनम जनम रोग नर सहज बिनसाये॥
केवल प्रीती प्रभ चरन की धारो। काल चक्कर से पावें पारो॥
सिमर सिमर सतनाम गुनवन्ता। प्रभ का नाम जग जीवन परसन्ता॥
जिस जन अपनी सोझी पाई। अपने पाप से पाई रिहाई॥
नित ही सत रूप ध्याई। गुरमुख चोला सो जन जग पाई॥
अपने पाप का खंडन कीना। अपने जीवन में आनन्द को चीना॥
अपना काज तिस जन ने सँवारा। तीन लोक से लियो जयकारा॥
सब देवों ने दीनी वधाई। सत पुरष की बडी वडयाई॥
अपने मन का विगन निवारा। तीन लोक में सुख वरतारा॥
सत मारग में जीवन त्यागी। गुरमुख आया जन वडभागी॥
अपने जीवन का कियो उपाये। मरन त्याग निर्भय समाये॥
सत वस्तु का हेत विचारा। हरजन आयो दुर्लभ संसारा॥
अपने मन की अगन बुझाई। सब जीवों में ठाँड वरताई॥
मोह अगन से जाये पार समाया। बन्धन त्याग सतरूप ध्याया॥
नित नित मन की करे सुथराई। सतनाम औखद को खाई॥
नाम को खाये नाम रस पीवे। नाम ध्यान में जीवन जीवे॥
कलपना त्याग अकल्प समाई। गुरमुख साजन परमगत पाई॥

**बन्धन रूप संसार से, हरजन निस्तर होये।**
**'मंगत' निहचल ध्यान में, सतनाम की मनी परोये॥ 558**

सत सुकृत प्रभ नाम ध्याओ। विगन विनासे अमरपद पाओ॥
मन तृप्ती का मारग एका। सत सरूप का खोज विवेका॥
सत विवेक मन धीर दिखाये। जाँ से उतपत ताँ जाये समाये॥
जनम अनेक की दुबधा नासे। अबगत रूप सिमर अबनाशे॥
जीवन खोज तज काल सरूप। सतगुर बचन मन धारे अनूप॥
साकत गवना मन की निवारो। सत परतीत प्रभ चरन पधारो॥
भरम जाये जब नाम ध्याई। निश्चल ध्यान में ये जीवगत पाई॥
एक नाम में धरो विश्वासा। एक नाम से बन्धन नासा॥

एक नाम से मन परमगत पाये। अगम निगम की सूझ लखाये॥
एक नाम प्रभ रूप मिलाई। नित आनन्द में जाये समाई॥
एक नाम सब विद्या की सार। जो जो सिमरे पाये ज्ञान विचार॥
ऐसा नाम मन माहीं ध्याओ। गुर परतीत परमगत पाओ॥
आसा मनसा नर मन की नासे। दृढ़ निश्चे सतनाम उपासे॥
जनम मरन का भय सब जाई। साचा नाम मन लियो कमाई॥
मुकतसरूप ये प्रभ का नाऊँ। जो सिमरे तिस तों बल जाऊँ॥
जो सिमरे प्रभ नाम अनामी। बन्धन त्याग भयो मुकत का गामी॥
भज परमेश्वर जग लाभ विचार। अपना जीवन नर लयो सँवार॥
सत सम्पत नाम जगदीशा। जो जो सिमरे तिन मिटा संदेशा॥
अखंड विरती सतनाम ध्यान। हरजन भयो जग में परवान॥
निर्मल बुद्धी निर्मल तिन काजा। पूरन चित प्रभ जपें सुख साजा॥
अपने मन को नित सीख सिखाओ। साचे नाम की प्रीत कमाओ॥
अन्तर बाहर इक चित ध्याओ। सत-पुरष की घर सोझी पाओ॥
नित ही कीरत तिस चरन विचार। दुर्लभ रीती ये सुन संसार॥
प्रभ सिमरन ताईं जन जग आया। सिमरे नाम प्रभ चरन समाया॥

**आवागवन का पँध मिटा, जीव पायो सत धाम।**
**'मंगत' रीती मुकत की, सत सिमरन प्रभ नाम॥ 559**

## चौथा अध्याय

## सत विचार निधान

सत विचार मन माहीं विचारो। शान्त सरूप का पावें पारो॥
बिना विचार नर पशु समान। मान मध धार नित रहे ग़लतान॥
बिना विचार नर नित डोलाये। धरम करम की सूझ नहीं पाये॥
बिना विचार मन नित दु:खदाई। करम करूर में नित प्रीत बढ़ाई॥
बिना विचार नर अत दु:ख पावे। प्रभ की माया बहु नाच नचावे॥
बिना विचार नर पद पद दु:ख पाई। करम विलक्खन नित देवें सज़ाई॥
बिना विचार नर नित भरमाये। अगन तृष्ना कीजे नित घाये॥
लोक परलोक सब दु:ख का सरूप। बिना विचार नर सहवे जम कूप॥
बिना विचार नर जुगत ना पाये। सागर माहीं प्यासा रहाये॥
बिना विचार नर होवे ना ढोई। बिपता सरूप सिर रहे खलोई॥

बिना विचार दीन दुनी बिगाड़ी। किये अत पाप लई जग धृगकारी॥
बिना विचार नर बिख अगन में जलता। मान मध धार अपने दाओ में चलता॥
बिना विचार सुख रंचक ना पायो। अत कुपथ माहीं जनम गँवायो॥
बिना विचार नहीं मिटे संदेशा। गृहस्थी विरक्ती नित धारें कलेशा॥
बिना विचार नर उज्जड़ पाये। मानक काँच के भाओ विकाये॥
बिना विचार नर भटके दिन रैन। करे उपद्रव नहीं पावे सुख चैन॥
बिना विचार कोई साथ ना होई। मूढ़मती अपनी गहरे नीर डबोई॥
बिना विचार कोई मारग ना सूझे। वैर विकार मध मान में लूझे॥
बिना विचार कैसे बन्धन टूटे। दुस्तर माया से कह बिध छूटे॥
बिना विचार भाओ भगत नहीं पाये। सत कुसत का नहीं भेद लखाये॥
बिना विचार नित जीवन काढ़ी। पर-का दोख नित चित विचारी॥
बिना विचार नहीं सत तत्त सूझी। पाप बुद्धी नित पाप को खोजी॥
बिना विचार नहीं पाये सुख सारा। क्रोध बिकराल नित करें अँगारा॥
बिना विचार जनम अकारथ जाये। जम दरबार मिले घनी सज़ाये॥

**बिना विचार ना पाइये, जनम मरन की सार।**
**'मंगत' मानुष परधान सो, जिसका शुद्ध विचार ॥ 560**

जनम मरन का भेद लखाई। सुख दुःख सार का निरना पाई॥
जब तक सुख दुःख सार नहीं पेखे। तब तक सुरती पड़ी भुलेखे॥
सत विचार जब लेख लखाई। सार असार का भेद अर्थाई॥
दुःख सरूप का सुनो विचारा। बन्धन नासे हरे विकारा॥
जब ये जीव मात गरभ में आया। उरधमुख होये केता दुःख पाया॥
परसूत पवन ने जब बाहर निकाला। ग्रस लीयो त्रैगुन जंजाला॥
ज्यों ज्यों सोझी जगत की पाई। त्यों त्यों वासना बढ़ती जाई॥
बालपना जब देह पर आया। कूड़ कुलेल में जीव फँसाया॥
चंचल विरती अत नित भरमाये। देख अचम्भा बहु तिरखाये॥
ज्यों ज्यों वस्त अनूप को देखे। उठ उठ धाये करे जतन विशेखे॥
नित अधीर शान्त नहीं पाये। बालपना दुःख है अधिकाये॥
ज्ञानहीन बुद्धी दुःख देवे। अनयुक्त किरया को नित नित सेवे॥

छिन रोये छिन में हरखाये। मात पिता बहु धीर बँधाये॥
आगे काया ज्यों जोबन को धाई। मान मध काम में जीव गरसाई॥
देख के आनन्द पाये मुख रतनाई। अकड़ अकड़ पग भूम धर चलाई॥
वासना परचण्ड वेग परगट होई। इच्छया भोग में जीव जलोई॥
काम क्रोध नित काया को गाले। जीव अति भोग में देही जाले॥
नरक अगन सम जोबन काया। अति अत चंचल होये नित दुःख पाया॥
जोबन नासी देही जरजर होई। किये पाप दुःख रूप लखोई॥
इच्छया वेग अत भयो घनेरा। हीन शक्त जीव पाये नित पीड़ा॥
धन परिवार दुःख रूप दिखाये। चलन की नोबत जब बाज बजाये॥
सुत दारा ना धीर कोई देवे। मोह माया का ताप तपीवे॥
देही आए रोग नैन जोत त्याग। अतिअत दुःख में जीव मंध भाग॥
करें निरादर देवें धृगकार। पुत्र कलत्तर सभी परिवार॥

**जरा अवस्था प्रापती, जीव घोर दुःख पाये।**
**'मंगत' एथे थाँ नहीं, आगे की सुध नाये॥ 561**

जरा अवस्था दुःख की खानी। सकल वस्त दुःख रूप पछानी॥
ऐसे जल जल जीव तजे ये काया। करनी बाँधा आगे पिण्ड धराया॥
तुच्छ जीवन की ये गत भई। सब जीवों का मारग ये ही॥
माया विकार में सुख नहीं पाये। आस आस में आवे जाये॥
चारखानी के जीव हैं जोई। सबकी दशा ऐसी नर होई॥
भरमे भूला ये जीव अज्ञानी। साचा सुख नहीं कियो पछानी॥
सुख कारन सम्पत बहु धारी। अन्तकाल सब बिपत विचारी॥
जिस जोबन का मान धराई। देखत में गई जरा को पाई॥
जो परवारी अपना विचारी। होय यगाना अन्त की बारी॥
सुख कारन जो उठ उठ धाये। जतन अकारथ नित दुःख समाये॥
जिस जीवन को नित का मानी। एक पलक में नाश पछानी॥
धन भूमी का मान मध राखी। होये निमाना काल जब ताकी॥
हिकमत हुनर बहुता विचारी। कालगती नर टरी न टारी॥
असत वस्तु सब ही दिखलाई। तिसका संग परम दुःखदाई॥

उठ रे गुनियाँ कर विचार। दुःख का रूप सकल संसार॥
देह सरूप मूल दुःख पछान। तिसको धार अन्ध ग़लतान॥
दुःख सरूप ये करम विकार। पल छिन का नर मिले आधार॥
दुःख का मूल नहीं चित से जाये। जुगा जुगन्तर करम कमाये॥
दुःख का रूप इच्छया विकार। मिले ना शांत पाये सम्पत अपार॥
सम्पत पाये अत बढ़े कलेशा। काल चक्कर सिर बड़ा अंदेशा॥
दुःख सरूप ये मन कलपना। देख भरमाया खेल जग सुपना॥
दुःख का रूप आपा भरमीत। ग्रहन त्याग लगी अगन पलीत॥
दुःख का रूप ये जीवन संसार। काल कराल करे नित शिकार॥
दुःख का रूप जग खेल ये जान। अचरज माया पसरी भगवान॥

**सुख को खोजत खोजते, जीव जूनी बहु पाये।**
**'मंगत' माया मोह धर, निज आतम सुख विसराये॥ 562**

मन का संसा ये संसार। तिसमें मिले ना सुख की सार॥
मूढ़ा जीव भयो भरम भुलेखे। असत रचना को सत कर देखे॥
ये ही माया भरम आपार। डूब गये बड़े गुनी गुनकार॥
करम अभिमान धर अंधमत भरमाये। करम फल रूप बहु लेख लखाये॥
करम फल इच्छया का भुगता होई। करम भरवास में गवन फिरोई॥
करम फल सुख नित छिनकारी। होये परापत नहीं मिटे करारी॥
और के और मनोरथ उपजाये। जतन अनेक रैन दिवस कमाये॥
मन के मनोरथ पूरन ना होई। करमफल इच्छया नहीं शान्त समोई॥
धन्दूकार में जीव फँसाया। मिथ्या भरम में नित भरमाया॥
अपने दुःख का नर करो विचार। वस्तु कौन इस्थिर जग सार॥
भरम की टाटी दुःख बड़ा घनेर। फिर फिर आवे चौरासी गेड़॥
एक जूनी की बिपता काटी। नवीन देही का बनयो साखी॥
ऐसे जनम अनेक विताये। परमानन्द सुख सार नहीं पाये॥
राजा राना मुनी मुनिन्दर। मोह माया में फिरें जोगिन्दर॥
अंडज पिंडज सेतज रचनाई। औहदज जूनी में जीव भरमाई॥
इच्छया धार सब देखे तुरंग। बिस्माद माया के अचरज रंग॥

भरम विकार में जीव भरमाये। एक पलक नहीं धीरज आये॥
जो वस्तु सुख रूप दिखाई। तिन का अन्त दुःख रूप हो जाई॥
गुन औगुन करे नित विचार। विगन न जाये इच्छया अन्धकार॥
छिन हरखे छिन शोक समाई। छिन ग्रहन करे छिन त्याग लखाई॥
छिन में और छिन और दिखाये। अचरज खेल मन खेल खिलाये॥
अपने दुःख की नहीं करे विचार। घनी सयानफ़ गई बेकार॥
जगत अचम्भा देखी फुलवाड़ी। भूल गयो सतधाम सुखकारी॥
इस्थिर वस्तु कोई रहन ना पाई। करता भुगता सब ही तिरखाई॥

**दृष्टा दृश्य सब संसा, माया भरम विकार।**
**'मंगत' इस्थिर ना रहे, बिन चरन कमल निरंकार॥ 563**

जग की रचना अजब रचनाई। देख देख जीया भरमाई॥
इक उठ चाले इक आन व्यापे। इक त्याग चले इक अपनी कर थापे॥
एक संजोग वंजोग को पाई। एक वंजोग में संजोग समाई॥
एक नवीन इक होये पुराना। इक हार चले इक जीत की चाहना॥
इक कुमलाये इक खिली किलारी। अपने रंग में सब ही मतवारी॥
पुत्तर पिता की थाओं सम्भाले। ऐसे पौत्तर देख पुत्तर उठ चाले॥
कोई आवे कोई जावे मीता। वाह वाह खेल जगत की रीता॥
कोई जग में निशान बनावन आवे। कोई बने निशान को मेट के जावे॥
कोई हिकमत सयानफ़ कीजे जारी। कई बनी बनाई को देन उखाड़ी॥
कोई जन गुन अस्थापित कीजे। कोई जन उसका रूप मटीजे॥
एक एक से आया सियाना। अपने गुन की बहु करी बखाना॥
सत सोझी बिन निरास सब चाले। कूड़ जतन में जीवन दियो गाले॥
एक के पीछे दूजा आया। मान तेज का चक्कर चलाया॥
जैसे एक गया दूजा उठ जाये। धार सयानफ़ सभी पछताये॥
इक मिरतक होये दूजा जीवन माँगे। इक धन को सम्पें दूजे चले हैं नाँगे॥
इक की वस्त बेगाना लेवे। एक बेगानी अपनी कर सेवे॥
चलो चली खेला संसार। अनमत जीया तूँ नैन उघाड़॥
बसें खुशी से चलें पछताये। देख अचम्भा काल चक्कर चलाये॥

निश्चे मरना सबको दिखलाई। तो भी जीवन आस बँधाई॥
पिता पितामह जग रिह्या ना कोए। एह बिध चलना नर सबने होए॥
सब कुछ छाड ज्यों ओह जायें। एह बिध चलना जान मन मायें॥
भरम की नींद से उठके जाग। करो विचार सत सुख वडभाग॥
जिस वस्तु पाये मन धीर समाई। बौहड़ चक्कर संसार ना आई॥
साचा सुख सो ही संसार। तृपत भये ये जीव अंध्यार॥

**भरम अगन संसार है, सभी जीव भरमाये।**
**'मंगत' दुःख को देख के, फिर उठ दुःख में धाये॥ 564**

मोह माया का अधिक ग़ुबारा। दृश्यमान सकल संसारा॥
देख देख नित जीव ललचाये। अधिक सयानफ़ धर नित फँसाये॥
सब कुछ देखे बिनसनहारा। तो भी मिटे ना मोह अन्धकारा॥
अधिक विचार मन माईं विचारी। दुर्मत जाल नहीं मिटे दुःखकारी॥
नैनों देखे जग कूड़ परीत। तो भी जिया भरमे नित मीत॥
कल्यान के करे नित जतन अनेके। अंधमत धार पड़ें बंधन विशेखे॥
छूट न सके ना छूटन पाये। अद्‌भुत रचना मोह रूप दिखाये॥
कठन कराल नर साधन धारी। ममता विकार नित करे ख़वारी॥
अनक पदारथ में बुद्ध भरमाई। संशे माईं जीवन विताई॥
दुःख रूप ये जग का सकल पसारा। बिना ज्ञान नहीं उतरे पारा॥
अत कठनाई जीव नित धारी। तृष्ना अगन नित करे ख़वारी॥
शास्तर सिमरत अनेक विचारी। मिले ना धीर इस जीव दुःखकारी॥
गुनी ज्ञानी बहु खोजे सयाने। मोह चक्कर में सब भये दीवाने॥
जाँ देखूँ दुःख रूप दिखाये। अगन तृष्ना सब जीव जलाये॥
ऐसा कोई ना दृष्टी आवे। जाँ के चित सत शांत समावे॥
धनी दलिदरी पण्डत ज्ञानी। गुरु गोसाईं सब बिपत पछानी॥
कठन चक्कर माया बिस्तारी। थर थर काँपें देव अवतारी॥
जतन करें तो भी पार ना पायें। बिना जतन कौन दिशा लखायें॥
जगत संग्राम अत दुस्तर मीता। गुरमुख विरले पाई जीत पुनीता॥
उठ उठ धाओ सत मारग ताईं। इक दिन पावें परम सुखथाईं॥

भरम त्याग ना आलस धार। बिना जतन ना उतरें पार॥
भव मारग ये अती भयाना। बिन साधन नहीं मिले ठिकाना॥
औगन त्याग मन करो सुचेत। सतपद खोज चित तजो विखेप॥
सत सम्पत घालो सुखरासी। सत सरूप केवल अबनाशी॥

**माया भरम त्याग के, हिरदे सत विचार।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, जीव पाये सुखसार॥ 565**

सत सरूप प्रभ मूल पछानो। दुस्तर माया से मिले ठकानो॥
अचरज रचना नहीं पार कोई पाये। कथ कथ थाके गुनी कथा अथाये॥
सत विचार जिस प्रभ का पाया। सत परतीत सो मुकत समाया॥
बिना प्रभ ज्ञान नहीं भरमन नासे। बौहड़ बौहड़ जीव काल चक्कर निवासे॥
सत सरूप इक शकत अपारा। जिसका खेल ये जगत पसारा॥
जिस जन सत की सोझी पाई। सकल जंजाल गयो लीन समाई॥
भव छूटन का मारग एका। सत सरूप का नित सुनो विवेका॥
सत के ताईं नित जतना धारो। तन मन कीजो नित सत आधारो॥
भरम ग़ुबार तब जीव का जाये। सत करतार घट माहीं दरसाये॥
सतगुर मिले तब मारग सूझा। एक पछाने बिनसे दूजा॥
एक संग प्रीती नित गुर दिखलाई। दृढ़ विश्वास धर सत सुख पाई॥
निर्मल जतन सतगुर दिखलायो। अपने सरूप में आप समायो॥
द्वन्द विकार जाल सब नासी। सत सरूप जब घट परगासी॥
नित आनन्द प्रभ नाम कमाई। झूट जगत से मिली रिहाई॥
अमरत नाम सुख सार निधाना। साध मुनी वेद नित करें बखाना॥
पूरन भाग सो जीव जग आई। सत विश्वास हरि चरन ध्याई॥
मिथ्या विकार सब कलपना नासी। प्रभ का नाम पलपल उपासी॥
हिरदे माहीं नित नाम चितारी। आज्ञा पल पल प्रभ की विचारी॥
दुर्मत जाल माया बिख हरया। पूरन सतगुर की जब चरनी पड़या॥
अबनाशी सरूप सुख अपरम अपारा। गुर परसाद घट कियो विचारा॥
सुफल करम धरम चित पाई। काल रूपी रोग सब शान्त समाई॥
अपरम अपार घट कथा परगासी। अखंड सुख पाये जीव भया निर्वासी॥

जनम जनम की तपन सब हरनी। दीनदयाल की पड़यो जब सरनी॥
परम ज्ञान परम तप सार। मिले विश्वास प्रभ चरन अपार॥

**सत सरूप जब पाया, तब जीव भयो निरबन्ध।**
**'मंगत' मिले सुखसार ये, जब पूरे गुर बख़शन्द॥ 566**

नीच करम तब जीव का जाये। सतगुर सिखया का लेख लखाये॥
समता ज्ञान पाये गुर परतीत। जीवन मुकत अभयपद मीत॥
सत शरधा सत लयो विश्वासा। सतगुर चरन का भयो नित दासा॥
तत्त्व ज्ञान छिन छिन निरनाये। दृढ़ विश्वास मन माहीं ध्याये॥
खेम कुशल होये जब प्रभ पायो। परम आनन्द सुख गीत तब गायो॥
भई खुशहाली मन निरबन्ध होया। जाये चरंजीव मारग में सोया॥
करतूत चंडाल सब मन की नासी। देव समता हिरदे परगासी॥
सत सरूप शबद अबनासी। निश्चल चित निरन्तर भासी॥
चुन चुन शत्रू का सीस उतारे। सत सील मन माहीं विचारे॥
करे बन्दना नित सीस निवाये। अनक बार तिस कीरत ध्याये॥
सत पुरखोत्तम चरन विश्वासा। निमख निमख कीजे अरदासा॥
दुस्तर मन की बिखया त्यागे। दृढ़ अनुराग हरि चरन में जागे॥
उस्तत एक एक आधारा। एक करम एको ब्यौहारा॥
एक जुगत एक रसना पाये। जल थल मइय्यल एक दिखाये॥
अन्तरगत मन अन्तर धारे। रंचक पाप ना हिये विचारे॥
आसा त्याग भावी चित पाई। पल पल तिसके चरन समाई॥
एक ओट मन माहीं धारी। सत सरूप का भया पुजारी॥
सकल उपाधी मन से त्यागी। दृढ़ निश्चय प्रभ नाम में लागी॥
मीन नीर ज्यों प्रीत अधिकाई। प्रभ के चरन एयों बलबल जाई॥
दुष्ट विकार वासना नासी। मिथ्या जग से भई उदासी॥
भोग रोग सब संशे छूटे। नारायन पद कँवल रस लूटे॥
आदी अन्ती एक दिखाया। मध में खेल तिस का वरताया॥
दृष्ट द्वैत से छूट नर पाई। अखण्ड अद्वैत प्रभ दरसाई॥
प्रभ के चरन में प्रीत निहारी। सकली दुबधा दुर्मत बिख टारी॥

**आनन्दकन्द प्रभ सिमर के, जीव परम सुख पाये।**
**'मंगत' उस पद जा बसे, जाँ दुःख सुख एक दिखाये॥ 567**

सरजनहार सो देवन देवा। भाओ प्रीत से कर मन सेवा॥
तिसका सिमरन सुखसार विचार। भवनिध दुस्तर से पावें पार॥
जुग जुग हरजन करें दुहाई। साचा नाम सिमर सुखदाई॥
क्यों नर मन को नित भटकाये। रुच रुच दुरजन करम कमाये॥
दुःख परापत क्यों नर रोयें। अपना बीजा आपे पायें॥
क्यों नर जीवों से वैर कमाई। दुष्ट करम ये परम दुःखदाई॥
क्यों नर मोह मँदर में सोया। जनम अमोलक भरम में खोया॥
क्यों नर और के दोख विचारे। अपने पाप का नहीं भेद लखारे॥
क्यों नर धारें अधिक चतुराई। समाँ गँवाये अन्त पछताई॥
क्यों नर अपना नहीं जीवन विचारा। किस कारन आयो संसारा॥
क्यों नर सत सिखया नहीं मानी। पावें ना धीरज करें अभिमानी॥
क्यों नर स्वारथ में नित लागा। अगनी भोग में जलें अभागा॥
क्यों नर अपनी नहीं तजी कुटलाई। अपने आप में गयो ठगाई॥
क्यों नर अब तक सोता नहीं जागा। जम का मुदगर आये सिर पर बाजा॥
क्यों नर अन्त की नहीं दिशा विचारी। कौन सहायक संग सखा परवारी॥
क्यों नर जीवन में नहीं धरम कमाया। चलती बार बहुता पछताया॥
क्यों नर अपनी नहीं सोच विचारी। और जीयाँ संग बाद बधारी॥
क्यों नर मन का नहीं संसा जाता। पाप भोग में नित पछताता॥
क्यों नर अपना जीवन काढ़ी। अगनी भोग में होवें अँगारी॥
क्यों नर अपने संग वैर कमाई। दुष्ट करम धर संकट पाई॥
क्यों नर मारग नहीं मुकत पछाता। सतगुर मेल नहीं कियो मदमाता॥
क्यों नर पलक नहीं सार पछानी। आसार भरम में औध गँवानी॥
क्यों नर रोवें अन्त की बार। अपना किया नर आप विचार॥
संग सुहेला दे सके ना धीर। अब रोवत क्या बने आख़ीर॥

**मनमानी अपनी करी, ना गुर सीख सुहाई।**
**'मंगत' सखा ना को बने, जब सिर पर बिपता आई॥ 568**

सुत दारा नाती परवार। स्वारथ के सब बन्धु विचार॥
अपना खोटा खरा पछान। नर राई ना मिटे जो करी अंजान॥
ना सत करम से प्रीत विचारी। ना सत रहनी हिरदे धारी॥
ना मन में कियो उपकारा। दुःखी दीन नहीं कियो विचारा॥
ना सतसंग निश्चय धारी। अपनी करनी नहीं करी विचारी॥
ना प्रभ का मन सिमरन पायो। मरने का भय नहीं हिरदे आयो॥
मानुष जनम सब दियो गँवाई। सत मारग नहीं सोझी पाई॥
झूट विकार में धरी परीती। पाप करम की साधी नीती॥
सबसे ऊँचा बनयो मानी। धन जोबन जब सम्पत पानी॥
करनेहार नहीं साहब जाता। कूड़ देही को जो रँगराता॥
माटी सरजनहार जो देवा। पलक ना कीनी मूढ़े सेवा॥
माटी देख माया भरमाया। कूड़ कपट में उठ उठ धाया॥
नाना करम भोग चित ठानी। अगन सरूप तृष्ना लिपटानी॥
धर अभिमान नहीं दूजा सूझे। अपनी शोभा कीरत नित बूझे॥
माटी में सुख अधिक लखाई। रंचक धीर नहीं अन्धमत पाई॥
माल मुलक धर बनयो भूप। नित सँवारे माटी सरूप॥
छतर सुहाना सीस धराई। मनियों की माल कण्ठ लटकाई॥
भाँतक भाँत भूखन अंग धारी। माटी देवल अजब सँवारी॥
ओड़क माटी माटी हो गई। कौन गती अन्ध जीव की भई॥
झूट भुलेखे इतना भरमाया। माटी सरजनहार नहीं ध्याया॥
अधिक सयानफ़ खोटी चतराई। इस माटी की जो सार नहीं पाई॥
माया मोह का ये अधिक ग़ुबार। वाह वाह खेल रचा करतार॥
सत विसार झूट भरमाया। झूट जीवन में पाप कमाया॥
रो रो चले सब अन्त की बारी। बिना विचार भई बड़ी ख़वारी॥

**अत संकट में जगत सब, तीन काल भरमाये।**
**'मंगत' छाया प्रीत ये, कब तक साथ निभाये॥ 569**

झूट पसारा सत कर मानी। अचरज खेल जगत पछानी॥
मिरतक रूप को जीवन जाता। मिरतक काल जीव पछताता॥

चला चली को इस्थिर मानी। चलती बार रोवे अभिमानी॥
विखे भोग अमरत तुल खाई। अगन तृष्ना पल पल जलाई॥
वस्त बगानी अपनी कर जाने। भई बगानी जब जीव दु:ख ठाने॥
सबसे ऊँचा निशान बनाई। देह विनास की गत नहीं पाई॥
अपने तुल जग देखे ना कोई। तुलें तराज़ू रत्ती ख़ाक की होई॥
नित सुख की नर करे तदबीर। लिखया नहीं देखा जो लेखा तक़दीर॥
नाना भाँत की बनत बनाई। अपने बने की ख़बर नहीं पाई॥
रंग रंग भोग में जीव ललचाये। वक़्त विछोड़े की ख़बर नहीं पाये॥
सरब जगत पर हुकम चलाई। अपने हाकिम की ख़बर नहीं पाई॥
पल पल छीजे ये मिरतक काया। अन्धमत हरखे देख जोबन अधिकाया॥
तृष्ना निवारन के कीये जतना। खा गई तृष्ना नहीं मिटी कलपना॥
और जीवों को धीर बन्धाई। अपनी बिपत का लेख नहीं लखाई॥
और जीवों को राह दिखलाये। अपने ग़ुबार की सूझ नहीं पाये॥
जन्तर मन्तर किरया विचारी। काल गुरु पर चली नहीं कारी॥
रंग रंग महूरत लेख लखाई। अन्त की महूरत नहीं लेख विच पाई॥
लोक कटुम्ब की प्रीत कमायो। सरजनहार मूढ़े विसरायो॥
नाना औखद वैद विचारी। जनम मरन नहीं रोग छुटकारी॥
रंग रंग सम्पत संचत कीनी। मन की बिपत नर भई नहीं छीनी॥
कपट को धार और जीयाँ छल देवे। काल छल लियो नहीं चाल चलीवे॥
महल औसार दर नौबत बजाई। अपना निशान मिटा देखन नहीं पाई॥
पशु करतूत तज भज प्रभ देव। सत सरूप केवल चित सेव॥
साच निशान सच्चा तिसका सरूप। जुग जुग पूरन अखंड अनूप॥

**सत विचार मन धार के, सिमर लीजो प्रभ एक।**
**'मंगत' जग बिपता घनी, रख नारायन पद टेक॥ 570**

मन नहीं माने ये अभिमानी। नित नित करनी मलीन पछानी॥
अपने दाओ में रहे दिन राती। पाप कूप की अन्तर थापी॥
दुरजन भाओ नित विचारी। कह बिध पावे जीव छुटकारी॥
छिन आवे नर छिन में जाई। पलक पलक बहु रँग बनाई॥

बहु कुछ करे पर सदा अधीर। परतीत ना पाये ये दुष्ट बेपीर॥
कथा विचार सभी को त्यागे। मूढ़पना जब घट में जागे॥
अतिअत दुस्तर ये शत्रु घनेरा। बारम्बार दे जीव को फेरा॥
और उपाय ना जग में कोई। दुरजन मन ये शांत समोई॥
सत सरूप में उलट के राखो। सतनाम को नित नित चाखो॥
पल पल आज्ञा प्रभ की धारो। सकली दात प्रभ की विचारो॥
सकल जगत प्रभता प्रभ पेखो। घट घट अन्दर परगट देखो॥
पलक ना मन से नाम विसार। कारन करता प्रभ चरन चितार॥
अपनी ममता का सीसा काटो। साचा नाम निरन्तर राटो॥
जतन जतन ये ही नित धारो। दुस्तर मन से पावें पारो॥
पूरन पुरख की कृपा जब होई। तब ये मन सतनाम परोई॥
नाम आधार जब मनसा धारी। तब इस मन ने बिपता निवारी॥
बीच रज़ाई पल पल गुज़ारे। अपनी हिकमत सकल निवारे॥
मिटे चतुराई मन निर्मल होई। पल पल साचा हरनाम परोई॥
डोलन नासे मन इकत्तर होई। सत सरूप में लीन समोई॥
गुरमुख जीवन गुर दिखलाई। दुस्तर मन ये ठौर को पाई॥
दिवस रैन प्रभ प्रीत विचारी। कूड़ कपट की दूषन टारी॥
द्वन्द विकार आसक्ता नासी। समता भाओ सतरूप परगासी॥
पूरन सिमर मन पूरन होई। पूरन दरस सब बिपता खोई॥
सत विचार पूरन का पाई। सतगुर किरपा कीनी अधिकाई॥

**पूरन पुरख की भेंट से, पायो पूरन भगवन्त।**
**'मंगत' एको पाया, जो बिचरे रूप अनन्त॥ 571**

## पाँचवाँ अध्याय

## धर्म परायन निधान

सत धरम का सुनो निधान। मानुष जीवन को देवे कल्यान॥
धरम सरूप का निश्चय जोई। सकली बिपता जीव की खोई॥
धरम मूल धरम आधार। धरम ही बन्ध छुड़ावनहार॥
धरम का रूप चिन्ह आकार कोई नाहीं। समूह सतकरम सो धरम लखाईं॥
अत सतकरम में धरी परीती। साच धरम की पाई नीती॥
मज़हब पंथ के नहीं धरम आधार। धरम सहत चले चक्कर संसार॥

प्रभ की निर्मल रीती जोई। धरम सरूप कहलाये सोई॥
शान्त मारग जो जतन लखाई। धरम सरूप जानो गुनी राई॥
जिस जतन से मन निर्मल होई। सो साधन नर धरम कहलोई॥
जिस वस्तू से मन तृपताये। निरना धरम का सो वस्त कहलाये॥
पाप करम जिस भाँत से नासे। कल्यान सरूप सो धरम बिलासे॥
जीव की भरमन अविद्या जाये। साधन सार धरम जब पाये॥
अनेक सरूप धरम ना धारी। कल्यान का मारग एक लखारी॥
पूरब पच्छम का जीव जो होई। कल्यान धरम सब एक लखोई॥
जिस जुगती से जीव कामना जाये। मारग धरम सो सत कहलाये॥
जिस करनी से जाये गुमाना। सत सरूप सो धरम पछाना॥
जिस साधन से काल परहरे। सो साधन रूप धरम उच्चरे॥
जो मुशक़्क़त करे बंध ख़ुलासी। मारग धरम सो सत परगासी॥
हंग बुद्ध विकार को छेदे। मारग धरम का तब जन बेधे॥
एक परमेश्वर पर आयो विश्वासा। सो जन मारग धरम निवासा॥
कल्याण का उद्दम जब जीव चित धारी। मारग धरम तब लेख विचारी॥
अपने बंधन का जब करे उपाये। मारग धरम शान्त तब पाये॥
भय भरम जब मन निवारी। सत धरम तब कथा विचारी॥

**धरम का रूप ना जीव कोए, ना कोई मज़हब और पंथ।**
**'मंगत' यतन जो मुकत का, सो धरम कर वाचें ग्रन्थ॥ 572**

मारग जो कल्यान दिखाई। धरम सरूप जानो सुखदाई॥
सब गुनियों ने सार लखाई। एको धरम सब में विचराई॥
देश नीती भाँत भाँत दिखावे। पल पल माहीं रूप विटावे॥
वोह तो धरम ना करो पहचानी। लोकाचार रवाज लखानी॥
धरम नीती नहीं रूप विटाये। जुगा जुगन्तर इक भाओ लखाये॥
लोकाचार रवाज जो धारी। बादमुबाद की सकल बकारी॥
अनमत जीव ना धरम पछानी। लोकाचार में बाद बखानी॥
सतपुरष सत धरम लखाये। कल्यान का मारग एक दिखाये॥
बादमुबाद में मनमुख धायें। सार विसार अन्त पछतायें॥
नाना रँग का वैर परगासे। सत ना सूझे नर अन्ध भरवासे॥

धरम सरूप तो जानत नाहीं। सबसे ऊँचा मान धराईं॥
पण्डत क़ाज़ी कई डूबे सयाने। साचे धरम की सार नहीं जाने॥
रवि प्रकाश ज्यों सबको सुखदाई। साचा धरम सब में शान्त वरताई॥
पवन पानी से ज्यों सब सुख पावें। मारग धरम में सब कल्यान समावें॥
बादमुबाद जाँ नर होई। साचा धरम ना जानो कोई॥
जो परचार सब हेत दिखाई। कल्यान का जतन सब में प्रगटाई॥
बाद त्याग एकता पाये। साचा धरम सो जान गुनी राये॥
जिस विद्या से मन भरम निवारे। एक भरोसा प्रभ चरन विचारे॥
परहित जीवन ज्ञान परगासी। धरम सरूप सो जानो सुखरासी॥
जिस जुगती से परमेश्वर देखे। करम जाल का मिटे संदेसे॥
आसा मनसा सब विगन निवारी। निर्मल धरम सो करो विचारी॥
जिस रहनी से मन पाप को छोड़े। पर-उपकारी रसना को लोड़े॥
सब जीवों की सेव कमाये। मारग सो सतधरम कहलाये॥
धरम की रसना सब बन्धन तोड़े। गुरमुख विरला ये सार निचोड़े॥

**सतपुरषों का है एक धरम, परमादी बहुरंग धार।**
**'मंगत' मिथ्या बाद में, नित डूब रहा है संसार॥ 573**

जो करम शान्त वरताये। छल कपट का लेप नहीं पाये॥
आपा पर का कल्यान समाई। सो करम सत धरम कहलाई॥
जिस गुन से मन औगन छोड़े। एक साहब चित चरनी जोड़े॥
जीवत में सतसार को पाई। धरम सरूप सो ही सुखदाई॥
जो किरया देवे विश्वासा। एक साहब की चरनी आसा॥
इन्द्री विकार दूषना जाये। सो साधन सत धरम कहलाये॥
जिस साधन से मन प्रेम परगासी। मोह ममता की काटे फाँसी॥
मिथ्या जग से उपरस होई। मारग धरम पछानो सो ही॥
जो कीरत मन भरम को टारे। सत विश्वास आतम विचारे॥
देह विकार करम मल नासे। सो कीरत सत धरम बिलासे॥
जो रसना मन भय निवारी। शत्रु मित्तर सब एक दिखारी॥
निष्काम प्रीती सब संग बन आई। सो रसना सत धरम कहलाई॥

जो जीवन पर-ताईं पछानी। पर के दु:ख में निज सुख वरतानी॥
गरब ग़ुबार मान को त्यागी। भेद पछानो सत धरम वडभागी॥
जो मरना जीवन में धारी। तन मन धन अरपे उपकारी॥
सरब जीयाँ की धूड़ लखाई। सो मरना जीवन को पाई॥
जो उपदेश देवे प्रभ चरन विश्वासा। काम क्रोध करे भरम का नासा॥
इकागर चित सतनाम विचारी। सो उपदेश सत धरम संचारी॥
जो निश्चय सत करम को धारी। रहनी कहनी सब सत विचारी॥
अपने मन की मैल नित धोई। सो निश्चय सत धरम परोई॥
जो बानी वैराग परगासे। मिथ्या रूप जगत सब भासे॥
केवल प्रभ चरनी आवे अनुराग। सो बानी सत धरम की जाग॥
जो कथा निरपख परगासी। एक साहब की सिफ़त बिलासी॥
गुन औगन दोनों निरनाये। सो कथा सत धरम प्रगटाये॥

**प्रेम का रंग जाँ रंगया, द्वेष ग़ुबार विनास।**
**'मंगत' विरले हरजन, सत धरम में लियो निवास॥ 574**

मिथ्या जगत सतनाम विचारी। मारग धरम का सो ही पुजारी॥
इक उस्तत प्रभ चरन बखानी। आपा मेटे पाये धरम की खानी॥
जो ज्ञान निरद्वन्द परगासे। करमफल इच्छया भरम करे नासे॥
सत यतन शरधा उपजावे। सो ज्ञान रूप धरम समावे॥
जो करम प्रभ आज्ञा में छोड़े। करता भाओ अपने को तोड़े॥
निरद्वन्द भाओ में लीन समाई। ये साधन सत धरम वरताई॥
सत सरूप विवेक जो धारी। सदा अतीत प्रभ रूप विचारी॥
मन की उपाधी सकल त्यागी। धरम सरूप पाये सो बैरागी॥
दान जो अधिकारी को देवे। आपा मान नहीं हिरदे सेवे॥
प्रभ की वस्त प्रभ आगे भेंटे। साचा दान सो धरम विशेखे॥
जिस यज्ञ में नहीं द्वैत कोई भासे। करता भोगता इक प्रेम बिलासे॥
सरब जीवों में सत ठाकर जानी। सो यज्ञ धरम अनुकूल पछानी॥
जो परवारी नित रहे निर्मान। सकली सम्पत प्रभ दात पछान॥
दीन दु:खी की करे ख़बर गुज़ारी। धरम सरूप सो जानो परवारी॥

जो तिरया निज पती सँग हेता। निष्काम सरूप में राखे प्रीता॥
दासी रूप में जीवन गुज़ारी। पतिब्रतायुक्त धरम सो नारी॥
जो ब्यौहारी निज हक़ पछानी। पर का हक़ सम बिख कर जानी॥
सादा जीवन नित सतसंग प्रीती। सो ब्यौहारी जाने धरम की नीती॥
आहार जो नहीं तमोगुन देवे। बुद्ध सुतन्तर नहीं पाप को लीवे॥
भूख समान जो आहार करीजे। सो आहारी मारग धरम लखीजे॥
जो नरेश परजा का हेती। परजा का सेवन करे संग प्रीती॥
अन्याए पुरष को डण्ड नित देवे। धरम सरूप नरेश सो लेवे॥
परजा का दुःख नित निरवर्त करी। अपना सुख नहीं हिरदे धरी॥
जगत सेवा प्रभ हुकम पछानी। साचे धरम की रीती नरेश सो जानी॥

**कामना रूपी अगन में, जीव जले दिन रात।**
**'मंगत' मारग धरम में, जीव शीतल हो जात॥ 575**

मुकत सरूप धरम विचार। मिले आधार पायें छुटकार॥
सत असत मन निरना कीजो। सत जतन में जीवन दीजो॥
पाप कूप से होए ख़ुलासी। ये विचार धरम परगासी॥
नित जीवन की उनती कीजो। भाओ भगत रस अमरत पीजो॥
सब जीवों की सेव कमाओ। दुर्लभ सार धरम ये पाओ॥
अपना बन्धन मुक्त पछानो। बन्धन करम नहीं हिरदे आनो॥
निरबन्ध रूप संग रखो परीती। साचे धरम की सार ये नीती॥
परधन पर नारी विख पेखे। दुष्ट का संग नहीं भूल के देखे॥
सत पुरषों संग हेत विचारी। सो साजन जानो धरम आचारी॥
अपने मन को जो नित सोधे। पल पल ठाकर अन्तर बोधे॥
दुर्मत जाल माया बिख टारी। सो गुर साचा सतधरम विचारी॥
जो साधू नित मन को साधे। एक प्रीत जपे नाम अगाधे॥
निष्काम भाओ जो हिरदे धारी। सो साधू सतधरम लखारी॥
जो गुनिया साचा गुन तोले। भाओ प्रीती सब संग बोले॥
निज औगन को नित निवारी। सो गुनिया सतधरम विचारी॥
जो पंडत सत कथा विचारे। निरमान भाओ का चोला धारे॥

सत जीवन में जतन नित राखे। सो पंडत सत धरम को चाखे॥
भगत सो ही जिस प्रभ से हेता। बाद बदी नहीं हिरदे लेपा॥
प्रेम रंग मन मगन समाई। ऐसे भगत धरम गत पाई॥
ऊँच नीच संग एक परीती। सब सुखदाई राखे नीती॥
खिमा ग़रीबी घट माहीं बसाई। सतपुरष सतधरम कमाई॥
औगनकारी मन ये मीता। मारग धरम से होये पुनीता॥
नित ही मारग धरम में धायो। दुर्लभ कीरत जग में पायो॥
सत भरवास सत जतन कमाई। गुरमुख चोला धरम का पाई॥

**मारग धरम कल्यान का, सतपुरषाँ करी विचार।**
**'मंगत' जो साधे नित प्रेम से, उतरे भवनिध पार॥ 576**

आतम धरम का निश्चय जोई। साचा धरम पहचानो सो ही॥
आतम तत्त की कथा विचार। आतम ध्यान मन अन्तर धार॥
दृढ़ विश्वास आतम पद में राखो। अनक उस्तत कर रसना चाखो॥
अन्धकार तब दुर्मत जाई। निर्मल धरम परापत पाई॥
नित सरूप सरब व्यापी। भाओ प्रेम से नित तिसको जापी॥
आनन्द सरूप सरब अतीता। अपने रंग में आप रमनीता॥
नित ही मन से सिमरन धारो। अभयपद निर्मल धरम विचारो॥
अपरम अपार आतम धुनकार। रोम रोम में करे किलकार॥
सुरत उघाड़ अन्तर को खोज। अबगत धरम की पावें नर मौज॥
आलख अनादी शबद निर्वान। अपने अन्तर करो पछान॥
बन्धन नासे मन जीवन जीवे। साचे धरम का सार तब पीवे॥
अखंड अजूनी तत्त परिपूरा। तिसकी प्रीत में राखो मन मूढ़ा॥
वासना नास निरवास समाई। धरम सरूप तब भेद लखाई॥
पल पल मन कलपना त्यागे। अन्तरमुख सतनाम में जागे॥
सत सील चित आये समाई। पूरन भाग तत्त धरम ध्याई॥
सत शरवन सत मनन कीजे। सत निध्यासी जतन से लीजे॥
रसना रस में पूरन होई। गुरमुख विरला धरम परोई॥
अपने अन्तर सतपुरख ध्याये। तिसकी प्रीत बिन दूजा नहीं पाये॥

अनन प्रेम संग लीन समाई। पूरन पुरख मिल सार धरम की पाई॥
खल बुद्धी अभिमान निवारे। सत की खोज में जीवन काढ़े॥
बिरह बैराग पूरन चित धारी। सतपुरष सतधरम विचारी॥
मन को नित औगन से बाँधे। सुरती सत शबद नित साँधे॥
दृढ़ निश्चय अनुराग विचारी। साचे हरजन पाई धरम की कारी॥
आतम अनुभव अन्तर आई। मिथ्या जग से उदासी पाई॥

**नित तत्त आतम खोज में, हरजन रहे परबीन।**
**'मंगत' मिले तब धरम रस, कोट मद्धे कोई चीन॥ 577**

आतम परगट अन्तर देखे। छिन छिन तिसकी आज्ञा लेखे॥
करम विकार से मुक्ता होये। पल पल साचा शबद परोये॥
अनन प्रीती जब प्रभ संग पाई। दीनदयाल घट में दरसाई॥
दर्शन पाये मन आनन्द होई। निर्मल सार तब धरम लखोई॥
त्रैगुन माया जाल बिस्तारी। शुभ अशुभ नित करम विचारी॥
काम क्रोध मध लोभ विकारा। पाप सरूप का रचें चुनारा॥
भरम की अगन नहीं शान्त होये। जुगाजुगन्तर बहु भोग लखोये॥
जब निश्चय सत रूप में आई। मिले बैराग परम सुखदाई॥
जग मिथ्या कर मन माहीं विचारा। सत के ताईं जतन नित धारा॥
सत की खोज सब भरम गँवाये। निर्मल करम हिरदे प्रगटाये॥
सत परापत मन भयो निहाल। धरम सरूप मिले आप दयाल॥
बन्धन नासे जीव निर्वानी। सरब गत अन्तर इक सार लखानी॥
मन का आवन जाना नासी। निश्चल चित प्रभ चरन निवासी॥
सकल जगत का भेद तब पायो। मोह माया का भरम मिटायो॥
सच्चिदानन्द शबद निर्वान। ताँ में लागा सहज ध्यान॥
काल करम का बन्धन नासी। सतपुरख सत धरम निवासी॥
जीवन में सत कारज धारी। झूट भरम का त्याग विचारी॥
धीरज धार सत मारग बेधे। त्रैगुन जाल दुस्तर को छेदे॥
निर्मल प्रीत हरी चरन समाई। तीन काल तिस नाम कमाई॥
मिटे ग़ुबार घट भयो परगासा। हरजन लीना सत धरम में बासा॥

करम जंजाल सकला बन्ध तोड़े। निहकर्म सरूप चित चरनी जोड़े॥
निर्भय धाम में जाये समाई। जाँ में उतपत परलय नाही॥
नित सत रूप संग मेल मिलाये। द्वैत ग़ुबार नहीं दृष्टी आये॥
अखण्ड आनन्द शबद तत्त सार। जो जन परसे सो धरम अवतार॥

**सत आधार जीवन करे, सत में निश्चय पाये।**
**'मंगत' मिले सत धरम तब, जब इच्छया रोग सब जाये॥ 578**

अबगत रूप धरम विचार। मानुष देह की सुन निर्मल कार॥
झूट भरम संसार में आई। सत की खोज धरम सुखदाई॥
झूट परतीत में नहीं धीरज आये। अनेक जनम जूनी भरमाये॥
कलह कलेश मन में रहाई। झूट परतीत परम दुःखदाई॥
माया ग़ुबार में शान्त ना पाई। चौधाँ लोक सम्पत घर आई॥
इच्छया रोग में नित गरसाया। सरब छाड नर अन्त पछताया॥
जम की शासना सिर पर भारी। धरमहीन होये बड़ी ख़वारी॥
देख ये रचना धरम ना भूलो। धरम मित्तर सुख सार अमोलो॥
बिपत माईं शान्त परगासी। जलन माईं ठाँड सुख भासी॥
भय माईं निर्भय समाई। गवन त्याग अमरपुर जाई॥
सब सम्पत उठ सीस निवावे। धरम परकास जिस हिरदे आवे॥
तीन लोक में मिले प्रभताई। राजा राना उठ सीस निवाई॥
कल्यान सरूप धरम जब जाता। सकल जगत का सो जन नाथा॥
झूट माया का नित त्यागी। सत आतम में सुरती जागी॥
निष्काम सरूप में लीन समाई। सकल माया का दोख मिटाई॥
तृपत भयो प्रभ दर्शन पाये। तिसके दरस से जग तृप्ताये॥
अपरम अपार महमा बन आई। निर्मल धरम जिस लेख लखाई॥
जीवत में सत शान्त समायो। बौहड़ करम का भरम मिटायो॥
बन्धी छूट मुकत घर वासे। अबगत धरम जीवन परगासे॥
अपने मारग से कभूँ ना डोले। सत विचार में रहे नित अडोले॥
शत्रु मित्तर संग एक परीती। प्रेम धरम रसना जब पीती॥
साची औखद धरम कमाई। मन का रोग सकल मिट जाई॥
अमरत नाम पल पल चितारी। सत सरूप पायो सुखकारी॥
उल्टा मारग सत धरम परगासी। सतपुरषों की लीला दुःख नासी॥

**मारग धरम का उलट है, जीवत मरन को धार।**
**'मंगत' हरजन विरले, पाई रतन सुखसार॥ 579**

साचे धरम का गीत नित गाओ। विजय परापत परम सुख पाओ॥
मन अपना सत धरम में राखो। सतपुरषों की कीरत भाखो॥
विगन त्याग निरविगन समाओ। मारग धरम में नित उठ धाओ॥
ऐसा समाँ नर फिर ना आई। मानुष चोला सत धरम लखाई॥
असत जगत है काल की फाँसी। सत धरम अखंड शान्त परगासी॥
आतम धरम को नित निरनायो। देह विकार से छूट तब पायो॥
ज्ञान विज्ञान नित कथा विचार। साचा नाम निरन्तर धार॥
सकल धरम का सार प्रभ नाम। जो जो सिमरे ले बिसराम॥
नाम सिमर सब गमता पाये। अगम निगम का लेख लखाये॥
साचा नाम जब हिये समाई। सत धरम समता तब पाई॥
सत की ओट सतनाम विचारो। कारन करता हिये लखारो॥
आन त्याग निर्मान समाओ। सुफल जीवन तब धरम लखाओ॥
बादमुबाद के निकट नहीं जाओ। साचा नाम मन माहीं कमाओ॥
अपने पाप आपे नित धोयो। साची सेव मन माहीं परोयो॥
तन मन धन से सेवा धारो। साची प्रीत प्रभ चरन विचारो॥
असुर भाओ अहंकार विनासी। सतपुरख भयो धरम निवासी॥
शांत तत्त में प्रीत विचारो। एक पलक ना गुनी जन टारो॥
मन के वेग पर जीत लखाओ। अनन प्रीती सतनाम ध्याओ॥
खेम कुशल शबद परगासी। हरजन लीना सतपद अबनाशी॥
इच्छया विकार अधर्म मिटाई। निरइच्छया ध्यान सतधरम लखाई॥
परदु:ख हरना मन कार विचारी। हरजन आये सत धरम अवतारी॥
धरम ही मित्तर धरम ही सुहेला। धरम ही मज़हब पंथ अलबेला॥
धरम में जीवन धरम में धाये। अन्तर बाहर सत धरम दिखाये॥
नित आनन्द प्रभ चरन समाई। वाह वाह सम्पत धरम घर पाई॥

**मारग धरम में जो गये, सो पा गये बिसराम।**
**'मंगत' पलक ना विसरे, सत मारग सतधाम॥ 580**

एह बिध धरम कमाओ मीता। सुफल जनम आगे सुखरीता॥
नित सतसंग सत कथा विचार। सत करम नित हिरदे धार॥
पूरन विश्वास प्रभ चरन में राखो। सकल जगत प्रभता तिस जापो॥
संध्या प्रातःकाल नित ध्याओ। दृढ़ नीयम ये गुरमुख पाओ॥
शुद्ध ब्यौहार करो दिन राती। कपट विकार कभूँ ना चाखी॥
एक दिन जग से चलना विचार। ताँ सों सत करम नित धार॥
दीन दुःखी की सेवा धारो। परम प्रीत सब संग विचारो॥
जतन जतन कर सतधरम कमाओ। दुर्लभ शांत परमगत पाओ॥
इन्द्री विकार से मन को ठाको। सत किरया नित अन्तर राखो॥
साहब चरन संग प्रीत अधिकाई। सिमर सिमर परम सुख पाई॥
सकली दात प्रभु हुकम पछानी। भूल कर हिरदे ना धरें अभिमानी॥
सरजनहार जो पुरख अबनाशी। भाओ प्रीत जप नाम सुखरासी॥
करम विकार नर सहज ना जाई। आवागवन का फेर फिराई॥
सत परतीत प्रभ नाम जब पावें। करम विकार की मैल तब बहावें॥
मन अपने में मान नहीं राखो। सतधरम की कीरत नित चाखो॥
झूट देही का पावें विछोड़ा। सिमर दयाल सरब गत पूरा॥
उट्ठत बैठत प्रभ चरन चित रहाई। सत विश्वास पावें परम सुखदाई॥
सुपन समान जग देखन आया। नाम विसार के अन्त पछताया॥
गरब ग़ुबार में अन्धमत होई। धरम विसार नर पावें ना ढोई॥
मानुष जनम का फल अधिकाई। सम्पत धरम जो हिरदे आई॥
सत मारग की रसना पाई। सतनाम की प्रीत लखाई॥
सत यतन नित हिरदे धारी। महा विकार रूप गरब निवारी॥
निहचल चित सत शांत परगासी। मानुष चोला तब भयो सुखरासी॥
प्रेम प्रीत सतनाम ध्याई। कोट विगन छिन नाश समाई॥

**बिपत हरन मंगल करन, प्रभ का नाम अपार।**
**'मंगत' जो ध्याये नित प्रेम से, तिस चरनी बलिहार॥ 581**

दुःख से छूटन का सुनो उपाये। रुच रुच साचा नाम ध्याये॥
संकट नासे आनन्द परगासी। निर्मल नाम सिमर सुखरासी॥

अगनी वाँग नर तूँ तपताया। काम क्रोध ने राख बनाया॥
भज गोबिन्द जीवन होई हरया। अपरम अपार पुरख सुख किरया॥
पूरे गुर से माँग ये दीख्या। साचे नाम चित आये परीख्या॥
पूरे गुर से ये पदारथ लोचो। शबद ज्ञान नित हिरदे सोचो॥
पूरन करम उठ घालन घाल। तत्त अबनाशी सिमर दयाल॥
सदा अगोचर पुरख निराला। सतगुर मेल से पायें सुख दयाला॥
नित मारग धरम में चालो। मोह माया का मिटे जंजालो॥
देह के भोग नर पूरन ना होई। छिन सुखिआ छिन दुःख लखोई॥
छिन हरखे छिन शोक विचारी। राग द्वेष रोग लगा अति भारी॥
करो उपाय खाओ नित सचनाम। आपत जाये नर लें बिसराम॥
साची कीरत धरम की चाखो। निर्मल ध्यान सुरती में राखो॥
मन की भरमन नित नित छोड़ो। दीनदयाल के चरनी चित जोड़ो॥
अगनी विनासे आसा बिख मीता। पारगरामी घर दर्शन लीता॥
मत भरमो नर मन के भाये। औगनकार ये मन दुःखदाये॥
छिन छिन भरमे चौकुंट में धावे। एक पलक की धीर नहीं पावे॥
नाना रंग पल में दिखलाई। मन की डोलन बड़ी दुःखदाई॥
अतिअत चंचल रूप भयाना। चराचर भूत भयो दीवाना॥
सबका जीवन नित तपताई। अगन सरूप ये मन दुःखदाई॥
कहाँ से पूछूँ सतधाम की मीता। सो दिखलावें जिन मन वस कीता॥
चंचल मन पर लात चलाई। सत सरूप में लीन समाई॥
अनन प्रीती प्रभ चरन में राखी। निर्मल धाम की बानी भाखी॥
बानी सुन के मन मगन समाई। साचे सुख की सो कथा कथाई॥

**मन राखा जिन घर माहीं, बाँध शबद की धार।**
**'मंगत' सो जन निस्तरे, ले के धरम आधार॥ 582**

दृढ़ निश्चय सत शबद में राखी। निर्मल धरम की सुनयो साखी॥
मिरतक रूप जगत दिखलाई। जीवन रूप प्रभ कला लखाई॥
दुस्तर मन को प्रभ चरन में राखी। दुर्मत भरम को पल पल काटी॥
भाओ भगत रस खाये घनेरा। आनन्द सरूप मन मगन सरीरा॥

जीवत में जीवन को ध्याई। सो सतपुरख पद जीवन पाई॥
बड़ी कमाई तिस जन जानी। उत्तम पदारथ तिस करी पछानी॥
अत चतुर हरजन जग आई। झूट त्याग सत सार कमाई॥
रूप दीवाना तिसका दिखलाये। तिसकी महमा सो आप ही पाये॥
झूट जगत से लई उदासी। सत सरूप में कियो निवासी॥
काम क्रोध की गरदन मारी। मुकत मैदान में खेले खिलाड़ी॥
कोई शत्रु ना सीस उठाये। मूँह मूँह पर चोट लगाये॥
अलप आहार निंद्रा छिनकारी। साचे मारग में करे ख़बर गुज़ारी॥
शबद ख़ज़ाना मानक अत पाई। बौहड़ ना व्यापे मन को तिरखाई॥
शान्त सरोवर में जाये समाया। धरम का छतर तिस सीस धराया॥
माया भरम विखम गढ़ तोड़ा। विच दीवानी भयो नर शूरा॥
अपना विखाद आप निवारी। अपना तेज आप सँवारी॥
अपना जीवन निर्मल कीना। निर्मल ध्यान प्रभ दर्शन लीना॥
काल चक्कर की नैया तोड़ी। निर्मल धाम में सुरता जोड़ी॥
भरम विनास चानन घर पाई। डोलन त्याग नेहचल समाई॥
निर्मल बानी सुन्नधाम से आई। तिसको पीके अमरपद पाई॥
बानी में धरी सुरती इक रंग। भाँतक भाँत सुने परसंग॥
अजर पुरष अखय निर्वानी। अत परकाश सरूप पछानी॥
अखंड प्रीती तिस संग लखाई। त्रैगुन जाल माया बिनसाई॥
कठन मुहीम हरजन ने घाली। पंज ग़नीम मारे बिकराली॥

**शान्त सरोवर धरम में, धरमी गये समाये।**
**'मंगत' गये उस लोक को, जाँ भय भरम दुःख नाये॥ 583**

## छटा अध्याय
## सतकर्म साधन निधान

करम सरूप का करो विचार। निरना पावें इस संसार॥
त्रैगुन माया करम परगासी। करम आधार पँज भूत बिलासी॥
हेल मेल तत्तों का होई। अनक भाँत करम प्रगटोई॥
करम में तत्त चक्कर लगावें। बहुरंग रूप करम प्रगटावें॥
जीव अभिमानी करम का होई। माया फाँस ये रूप लखोई॥
रंग रंग करम का भुगता होई। रंग रंग रस में सुरत डबोई॥

इच्छया गरब ग़ुबार घनेरा। करम का भोग ये गवन का फेरा॥
इच्छया भरम में नित भरमाई। शुभ अशुभ बहु करम लखाई॥
जैसा करम मन मनसा धारी। तिसके भोग में दुःख सुख विचारी॥
अत जंजाल माया बिस्तारा। करम चक्कर से नहीं पाये निस्तारा॥
चारखानी नित नित भरमाई। करम चक्कर आपार अथाई॥
नित ही करम का भोग विचारी। भोगे करम नित सुख दुःख लखारी॥
छिनकारी ये करम की रचना। भोग विनासे जीव धरे कलपना॥
जतन अनेक मन में नित धारे। सम्पत अनेक संचित विचारे॥
सम्पत भुगता आप को मानी। मिले ना धीर फिरे चारेखानी॥
बहुरंग इच्छया बहुरंग भोग। बहुरंग करम का किया संजोग॥
ये जंजाल सरूप संसारा। त्रैगुन माया का सकल पासारा॥
ऊँच नीच करमगत देवे। रंग रंग जूनी में नित भरमीवे॥
संसा मिटे ना अधिक अपारी। जन्मे मरे नित होवे ख़वारी॥
करम की इच्छया ना पूरन होई। ना ये जीव सत शांत समोई॥
जैसा करम मनसा में धारी। तिसके भोग में जतन विचारी॥
भोग परापत छिन होये विनासा। अधिक सयानफ़ धर जीव प्यासा॥
इच्छया चक्कर ना भरमन जाई। त्रास त्रास सब जीव लखाई॥
त्रैगुन ताप में जीव नित तापे। जनम अनेक धारे संतापे॥

**करम चक्कर संसार है, करम ही बन्ध सरूप।**
**'मंगत' मिले तब शान्ती, जब पाये निज रूप॥ 584**

करमगती का लेख विचार। मन से जाई भरम ग़ुबार॥
देह इन्द्री से करम जो धारी। मन बुद्धी में जो करें विचारी॥
सब ही करम का जाल पछान। पलक ना छूटे जीव अंजान॥
करम फल इच्छया बंधन पाई। नाना जतन दिन रात कमाई॥
भोग परापत भोग विनासे। कोट जनम नहीं मिटे प्यासे॥
ऐसे भरम में सब ही जन्त भरमायें। माया चक्कर में शान्त नहीं पायें॥
राजा राना गुनी गुनवन्त। साध तपीशर और गादी महंत॥
पंडत ज्ञानी जती बैरागी। साध सन्यास और जंगम आदी॥

नाना मज़हब पंथ के धारी। देह को धार जो आये संसारी॥
पशु पन्छी जलचर निवासी। भूम में विचरें और अन्तर बिलासी॥
पवन आकास में विचरनहारे। सब ही करम चक्कर को धारे॥
दृश्यमान जो दिखलाई। करम चक्कर में सब भरमाई॥
करम का भोग करम का ज्ञान। करम की जुगती करे पछान॥
करम संजोग करम वंजोग। करम भोग करम ही रोग॥
करम ही जीवन करम में मरना। अदभुत माया का कीजो निरना॥
करम में बन्ध करम में मुक्ता। करम में काल त्रास को भुगता॥
करम में एक अनेक दिखाये। करम का लेख अगम अगाहे॥
करम में ऊँच करम में नीचा। करम में पाप पुन्न को सींचा॥
करम में जुगता सब किरया जानी। बन्धन नास की सुनी कहानी॥
त्रैगुन रूप करम बिस्तार। अदभुत खेल नहीं पारावार॥
पवन पानी बैसन्तर धारी। धरती अम्बर करम विचारी॥
सकल जगत करम का खेला। अनवर्चित माया ने रचया मेला॥
भय भरम सब करम का जाल। करम में जीवन करम में काल॥
दृष्टा दृश्य करम का भेद। भुगता भोग करम का छेद॥

**उतपत परलय जो होये, सो ही करम सरूप।**
**'मंगत' सत सरूप है आतमा, जो तीन काल समरूप॥ 585**

ऐसी जुगती करो विचार। करम बन्ध से होये निस्तार॥
इच्छया करम भ्रम जीव अधिकाई। एक पलक नहीं धीर लखाई॥
भोग वस होए बहु जुगत विचारे। सत कुसत करम को धारे॥
करम की गिनती नहीं शुमार। पाप पुन्न बहु बिध विचार॥
पाप करम अनन्त सरूप। भोगे जीव पाये दुःख रूप॥
पुन्न करम का ये ही विचार। भाँतक भाँत लेवें गुनी धार॥
पुन्न करम का फल सुखदाई। सुख को भोगे फिर दुःख लखाई॥
शुभ अशुभ करम की किरया। जनम अनेक जीव ये फिरया॥
करम का जाल ना निरविरत होई। ना शान्त में जीव समोई॥
पुन्न करम बहु भाँत के धारी। यज्ञ दान तपस्या विचारी॥

मन अभिमान ना जाये मीता। कर्ता भाओ परम दुःखरीता॥
सुख से दुःख दुःख से सुख पाई। इत उत रचना माया रचनाई॥
द्वन्द विकार का ये दुस्तर जाल। फिरे अशान्त जीव दुःख भाल॥
दुर्मत रोग ये अत दुःखकारी। छिन हरखे छिन शोक विचारी॥
जतन अनेक करे दिन रैन। मिले ना शान्त अखण्ड सुख चैन॥
ज्ञान ध्यान बहुता विचारे। दुर्मत मैल नहीं उतरे पारे॥
इच्छया से करम करम से भोग। दुःख सुख का नित बने संजोग॥
अनेक जूनी धर करम कमाई। मन को धीर कभूँ नहीं आई॥
आवे जावे ये जीव अभिमानी। निसदिन भरमे विच चारेखानी॥
सतपुरषाँ इक जुगत लखाई। सत मारग की कथा अर्थाई॥
सत सरूप अजर अबनासी। काल करम नहीं धारे फाँसी॥
नित आनन्द घट घट समाई। सरब जगत को खेल खिलाई॥
तिसकी भगत सब बिपता टारे। दुस्तर माया से निस्तारे॥
तिसकी महमा जिस जन गाई। निहकरम सरूप में लीन समाई॥

**माया जाल से छूटिये, जब ध्याइये प्रभ नाम।**
**'मंगत' सत परकाश में, जीव लेवे बिसराम॥ 586**

मुकत सरूप हरनाम चितार। सत करम निश्चे ये धार॥
साखी कर्ता देह का जोई। तिसका नाम मन माहीं परोई॥
अखंड सरूप नित परगासी। जो सिमरे निर्भय निवासी॥
इच्छया करम रोग सब जाये। पूरन रूप हरी चरन ध्याये॥
करम फल इच्छया ममता को छोड़। कारन करता के चरनी चित जोड़॥
तिसकी आज्ञा में सब कुछ देखो। आपा त्याग सतरूप को पेखो॥
पलपल तिसकी सिफ़त विचारो। सत करतार चित माहीं चितारो॥
मिथ्या देह का अभिमान विनासे। सत सरूप घट में परगासे॥
अखण्ड प्रीती सतनाम कमाओ। पलपल आज्ञा तिसकी चित पाओ॥
निष्काम करम का सेवन कीजो। सब कुछ भावी प्रभ की लखीजो॥
करम अभिमान होए विनासा। अखण्ड सरूप देखें परगासा॥
सत सील हिरदे विचारो। पर-उपकारी जीवन धारो॥

देह के करम जो छिन छिन होई। प्रभ की आज्ञा में लियो परोई॥
आपामत ग़ुबार त्याग। दीन ग़रीबी रसना में जाग॥
सरब शक्ती सतरूप विचार। छाया भरम नित आप लखार॥
आप त्यागे सतरूप समाये। गुरमुख जीवन सार को पाये॥
ऐसी जुगती में निश्चय धारे। नित सतनाम की प्रीत विचारे॥
सत सरूप में आये विश्वासा। तिसकी आज्ञा में लीया वासा॥
सरब आधार सेवे प्रभ देव। आप मिटाये पाए सुख सेव॥
करम जंजाल देही अभिमान। निर्मान भाओ में पाई कल्यान॥
सबसे नीच आप पछाने। निष्काम प्रीती नित सेव बखाने॥
सरब जीयाँ पर मेहर वरतावे। मान त्याग परम सुख पावे॥
सत आधार सतकरम विचारे। तज अभिमान उतरे भव पारे॥
करता भाओ त्रैगुन मिटाई। दीन ग़रीबी रसना घर पाई॥

**मिथ्या देह विकार से, निर्मल भयो तिन चीत।**
**'मंगत' आज्ञा प्रभ में, जो करम त्यागे नीत॥ 587**

दृढ़ उपासना मन में उपासे। इच्छया करम का बंधन नासे॥
निर्मल कीरत हरिचरन ध्याई। गवन विनास परमगत पाई॥
आहार ब्यौहार जुगत का कीजे। सब कुछ अर्पन प्रभ चरनी दीजे॥
आपा त्याग ग़रीबी पाये। साचा नाम पल पल ध्याये॥
आस अन्देसा जीव का जाई। तत्त निर्वान शबद घर पाई॥
पर-उपकार का साधन कीजे। लोक सेवा मन पाप हरीजे॥
ज्यों ज्यों सिमरे सतनाम अनामी। बंधन नासे पाये बिसरामी॥
निर्मल ध्यान में लीन समाई। त्रैगुन जाल करम बिनसाई॥
प्रन अपने को निश्चल कीजे। साचे ठाकर की सेवा लीजे॥
मन में बाँछा राखे ना कोई। ज्यों चलावे त्यों चलोई॥
मारग भगती मन मान गिराये। खेम कुशल हरि चरन ध्याये॥
देह से करम जेते प्रगटाये। प्रभ आज्ञा में सौंपत जाये॥
मन में राखे कभूँ ना माना। केवल कीरत प्रभ चरन पछाना॥
सब जीवों संग हेत विचारी। निर्मल जीवन राखे सुखकारी॥

पलपल मन के औगुन धोई। साचा नाम चित अन्तर परोई॥
एक नाम की राखे ओट। करम बिकार जाये बिख खोट॥
इन्द्री भोग से उपरस होये। साचा नाम घट माहीं सिमरोये॥
मिरतक देह का मान निवारी। सहज परापत किरपा धारी॥
आतम तत्त जब परगट पायो। इच्छया करम सब रोग वँजायो॥
निरबंध पद में जाये समाई। करम का बन्ध व्यापे तिस नाही॥
सुरती अन्तर शबद रस खाये। इच्छया करम सब दोख जलाये॥
अबगत पुरष परगासे घर माहीं। पल छिन तिसको विसरत नाहीं॥
सकल विकार चित के नासे। सत बानी में लयो निवासे॥
करम चक्कर से भयो अतीत। साचे नाम में रहे रमनीक॥

**सत सरूप के ध्यान से, करम विकार भये नास।**
**'मंगत' महमा सत रूप की, अखण्ड शान्त परकास॥ 588**

मिथ्या नाम रूप को धारी। अनेक भोग तिन का विचारी॥
छिन में आवें छिन में जावें। तिनकी प्रीत में दुःख अधिक लखावें॥
सत विचार बिन आवे जाये। करनी मलीन देवे अधिक सज़ाये॥
सतकरम मन निर्मल करे। सत विश्वास की सूझत पड़े॥
अनक प्रकार से भई छुटकारी। सतकरम जो हिरदे धारी॥
करम से बंधन जीव बँधाये। करम से मुकत पदारथ पाये॥
ऐसी जुगती नित करो विचार। मुकत करम को हिरदे धार॥
कामनायुक्त करम जो होई। बन्धन रूप पछानो सो ही॥
तिसके अर्थ में नित बँधाया। ग्रहन त्याग में नित गरसाया॥
छिनकारी ये करम का खेला। तिसमें अनमत फिरे अलबेला॥
छिन रोवे छिन में हरखाये। सकाम करम का ये फल पाये॥
निरबन्ध मारग का सुनो विचार। निष्काम करम हिरदे में धार॥
जो होनी सो निश्चे होवे। मूढ़पने में मूरख रोवे॥
जो बीजा सो निश्चे पाये। करम रेख नहीं मिटने आये॥
पीर पैग़म्बर हो अवतार। कोई ना भावी को मेटनहार॥
जो कुछ किया सो निश्चे फल देवे। भरम को धार क्यों मूढ़ा दुःख सेवे॥

भावी सब पर होवे बलवान। मेट ना सके कोई भावी निशान॥
भावी में बांधे बिषन महेशा। नारद शारद शुरती शेषा॥
जो देह धर नर जगत में आई। भावी बहुरंग खेल खिलाई॥
चतुर बुद्धी चतुराई धारे। तो भी भावी आगे हारे॥
भावी रावन को खय कीया। भावी राम को बन फरीया॥
भावी पाँडू पूत नचाये। भावी कौरव नष्ट कराये॥
भावी वरती राज को छोड़े। भये फ़क़ीर भरतरी गौतम सूरे॥
भावी उजड़े वास कराई। भावी छिन में बसी उजड़ाई॥

**सकल चक्कर संसार का, भावी फेर फराये।**
**'मंगत' त्रैगुन रूप जो, भावी सो कहलाये॥ 589**

हिकमत हुनर जाये तदबीर। भावी डाले गहरी तक़सीर॥
भावी ने ईसा सूली चढ़ाया। दूजे मंसूर को लटकाया॥
भावी छिन में राज बिठाये। राज हो तो भीख मँगाये॥
भावी गुनी को करे नादाना। मूढ़ा कथे तत्त्व ज्ञाना॥
भावी खेल अजब मचाई। भये लाचार जीव अधिकाई॥
मनमानी ना किसी की होवे। इक दिन अपनी हिकमत को रोवे॥
दाने बीने घने घनेर। भावी नित फिरावे फेर॥
जनमेजा पर भावी आई। किस दशा का लेख लखाई॥
गिनती गिनत ना आवे मीत। भावी मारे केते रन जीत॥
मानी का मान भावी गिराये। अनहोयाँ नूँ राज बिठाये॥
छिन में धनी दलिद्री होवे। भावी जब सिर आन खलोवे॥
दाना पुरष हो जाए कमीना। भावी ने जब चक्कर फरीना॥
एक सयानफ़ चले ना मीत। अटल हुकम साचा जगदीश॥
भरम ना भूलो गरब ना धार। भावी केते किये उजाड़॥
ज्ञान ध्यान ना रहे विचार। भावी जब आन होई सवार॥
मालिक से ख़ादिम बनावे। पल पल तिसका चरन चुमावे॥
कथी ना जाई महमा आपार। गरब प्रहारी भावी विचार॥
किसी की बनत बनी ना रही। देखत में संग मिल गई खेई॥

अनमत मूढ़ा नहीं करे विचार। माने हुकम नहीं करतार॥
धार सयानफ़ बहु जनम गँवाये। आस अंदेसा नहीं मन का जाये॥
निर्मल चित सुन सत संदेश। अचरज माया अपार जगदीश॥
नित ही तिसकी शरन विचार। तिसकी आज्ञा मन में धार॥
जो होनी सो होवत जाये। बे-वस खेल माया अगाहे॥
तिसकी आज्ञा में सब कुछ देख। जो हुआ सो सुख कर पेख॥

**मन की ममता नास होवे, जब सत रहनी चित पाये।**
**'मंगत' पूरन जतन से, करम जाल बिनसाये॥ 590**

निर्मल जुगती करो विचार। मोह माया का मिटे अन्धकार॥
कारन करता प्रभ सिमर अनामी। घट घट व्यापक अंतरयामी॥
सब कुछ हुआ तिसका जान। पलपल तिसकी सिफ़त बखान॥
मिथ्या मोह माया का जाई। सत विश्वास आतम घर पाई॥
आद अनादी पुरख अपारा। कोट पिण्ड ब्रह्मण्ड पसारा॥
भाँतक भाँत रचना को धारी। अपरम आपार शकत अपारी॥
घट घट व्यापक आप रहाई। सदा निराला खेल खिलाई॥
सरब जीयाँ की गत को जाने। अबगत रूप साहब निर्वाने॥
सदा आनन्द ताप से न्यारा। जो जन सिमरे पाये निस्तारा॥
औगनकारी अन्धा जीया। सत विसार भरम लपटीया॥
अपनी करनी फेर फराये। ऊँच नीच जूनी भरमाये॥
इस्थित मिले ना जीव अंधकारी। करम चक्कर में नित पसारी॥
बिन प्रभ सिमरे ना कोई उपाये। जाँ से जीव संदेसा जाये॥
बारमबार किया विचार। प्रभ का सिमरन दे निस्तार॥
ऊँच नीच जूनी भरमायें। सत सरूप का भेद नहीं पायें॥
मानुष देही मुकत की धार। तिसमें भज लो सरजनहार॥
हिकमत छाड कछु संग ना जाई। मोह माया में क्यों गरसाई॥
साची प्रीती तिस चरनी राख। जो हुआ सो सुख कर भाख॥
मारग भगती प्रभ मेल मिलाये। सहज जुगत सब ताप मिट जाये॥
भरम सयानफ़ नित त्याग। सत सरूप में उठ के जाग॥

मोह माया से हो अनजान। घट में पावें शबद ध्यान॥
इच्छया करम जाये चतुराई। सच सरूप आतम दरसाई॥
ताप तपन से भये निहाल। सत जुगती जो जपे दयाल॥
अखंड प्रीती साहब संग पाई। इच्छया भरम सब दोख जलाई॥

**साचा ठाकर जान के, तन मन दीजो वार।**
**'मंगत' मारग भगती सब, जीव की बिपत निवार॥ 591**

तूँ तूँ करके नित ही जाप। हंग बुद्धी नासे संताप॥
जीवन रूप जानो भगवन्त। नित परकाशे सकले जन्त॥
तिसकी शकत सब में वरताई। तिस आधार सब चक्कर चलाई॥
आद अनादी बिशम्भर देव। पल पल कीजो तिस की सेव॥
अपना भरम ग़ुबार त्यागो। साची कीरत प्रभ सिमरन लागो॥
नित अजन्मा नित अबनाशी। तिसका सिमरन आनन्द परगासी॥
उट्ठत बैठत नित ध्याओ। सत सरूप को सीस निवाओ॥
अन्तरगत में नित रहे बिराज। तिसका भेद नहीं मिले समाज॥
सरब परकाशी सरब न्यार। तेरी क़ुदरत तों नित बलिहार॥
अपनी महमा आप लखाई। सकले जीव के भरम मिटाई॥
आप सच सच तेरा नाम। घट घट लीना तू बिसराम॥
तेरी दात माँगाँ नित नीत। तेरे चरन की लागे प्रीत॥
भरम ग़ुबार सब मन का जाये। तेरी भगती मन रहे समाये॥
सत करम मन नित ही लोचे। भाओ प्रेम विच हिरदे सोचे॥
मान गुमान हरो प्रभ देवा। अबगत शबद की पावाँ सेवा॥
सब जीयाँ की प्रीत चित आये। तेरा रूप सब में दिखलाये॥
अखण्ड अबनाशी तत्त परगास। नित ही तिसका राखाँ विश्वास॥
ज्ञान पदारथ सम्पत दीजो। साची प्रीत इक नाम लखीजो॥
अपरम दात तेरी दातार। पलक ना विसरे तुध नाम आपार॥
मन का आवन जावन विनासी। निश्चल ध्यान तुध चरन निवासी॥
दु:ख सुख दोनों पाऊँ इक रंग। नित आनन्द दीजो परसंग॥
साची कीरत गुन गावाँ तेरे। आप मिटाके पावाँ सुखसीरे॥

शिव सनकादिक सेवा धारी। ये अनमत कूकर किस गिनत विचारी॥
पततपावन तेरा नाम स्वामी। हो दयाल अबगत अगामी॥

**भगती पदारथ माँगियो, सत साहब दरबार।**
**'मंगत' दुर्लभ सम्पदा, जो जीव देवे छुटकार॥ 592**

प्रभ का सिमरन सत करम विचार। प्रभ का हुकम धरम की सार॥
प्रभ का निश्चय परम कल्यान। प्रभ की कीरत परम निधान॥
प्रभ का भाओ परमगत देवे। गुरमुख साजन चित में सेवे॥
प्रभ अरदास सब संकट नासे। खेम कुशल आनन्द परगासे॥
प्रभ की शोभा धीरज देवे। भाग वडाई जो जन सेवे॥
प्रभ का नाम सम्पत अपारा। बंधन से देवे छुटकारा॥
प्रभ की गत मित वरनी ना जाई। जो जो सिमरे परम सुख पाई॥
साचा ठाकर पल पल चेत। मंगल देवे हरे विखेप॥
सब में दर्शन प्रभ का देख। सब में क्रीड़ा तिसकी पेख॥
सब कुछ साहब शक्त पछान। वार ना पार अतुल परमान॥
सरब शकत का सो दातारी। सब सम्पत का सो भंडारी॥
सकल धरम की सार प्रभ जान। गुनी ज्ञानी करें बखान॥
परमानन्द शान्त सरूप। जो जो सिमरे तजे भ्रम कूप॥
सब महमा में सो परिपूरा। लिख लिख थाके गुनी ज्ञान हज़ूरा॥
अपरम अपार साहब वडयाई। हरजन विरले सोझी पाई॥
एह बिध पावे परमपद मीता। केवल निश्चय हर चरन पुनीता॥
जो कीजें सो प्रभ के ताईं। जो पावें तिस शरन लखाईं॥
जो देवें सो तिसकी भेंट। दृढ़ निश्चय मन धार सुखरीत॥
जो हूआ सो हुकम पछान। करुनाकर समरथ भगवान॥
सब सम्पत प्रभ की चित पेख। तन मन धन सब तिसका देख॥
निर्मल करम में जतना धार। पर सुख देना हुकम करतार॥
दान कीजो सौंपों प्रभ चरना। करम का भक्षक सो कारन करना॥
यज्ञ करो तिस चरन में त्यागो। आज्ञा बूझ सतकरम में जागो॥
तीरथ बरत जो कुछ साधो। प्रभ के हेत सरब आराधो॥

**सकली किरया सौंप तूँ, नारायन पद मीत।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, सुन सतकरम की रीत॥ 593**

प्रभ आज्ञा में जो किरया त्यागे। लोक परलोक का भ्रम जाये भागे॥
जीव का संसा सकल मिट जाई। करम करे निहकरम समाई॥
मन की इच्छया ग़ुबार तब जाये। पूरन प्रभता प्रभ की जब पाये॥
और उपाय ना कोई मीता। बंध ख़ुलासी की सुकृत रीता॥
करम चक्कर अत दुस्तर भारी। एक पलक नहीं शान्त विचारी॥
मान मध में नित ग़लताना। काल चक्कर में नित भरमाना॥
काम क्रोध अति अगन अपारी। बिन सत जुगती नहीं मिले छुटकारी॥
ममता भाओ ये रोग आपारा। ममता माहीं सब रचा संसारा॥
ममता रूप माया का जानो। त्रैगुन भेद में खेल खिलानो॥
जतन करे बहु रंग के मीता। ममता मैल से नहीं होये पुनीता॥
तप तपस्या बीबान निवास। जल शैन कभी धूनी उपास॥
कभी नाँगा होवे कभी वस्तर धारे। कभी मौन रहे कभी बोल उचारे॥
वेद कतेब का भयो निध्यासी। भाँतक भाँत पुन्न दान बिलासी॥
नाना रंग का त्याग विचारी। नारी द्रभ गृह गाम विसारी॥
कठन तपस्या में जीवन काढ़े। ममता मैल नहीं उतरस पारे॥
जो कुछ किया भयो तिसका अभिमानी। तिसका भोग फिर गवन निशानी॥
ऐसे जनम अनेक विताये। नाना रंग के करम कमाये॥
छूट के ताईं जतन बहु कीना। उलटा जतन करम लपटीना॥
शुभ अशुभ जो करम कमाई। तिसका मान फिर गवन फिराई॥
शुभ करम से जूनी शुभ पाये। सुख सरूप सम्पत मिलाये॥
अशुभ करम जूनी अशुभ देवे। कष्ट सरूप का भोग लखीवे॥
करम फल नास जिस छिन होई। सुख विनास दुःख रूप लखोई॥
करम चक्कर नहीं बिपता जाये। अनक जतन जो जीव धराये॥
बिन तत्त ज्ञान नहीं जाये अन्धेरा। आवागवन चौरासी फेरा॥

**दीन ग़रीबी बन्दगी, जिस मन आई समाये।**
**'मंगत' ममता भरम मिटे, सत कीरत प्रभ पाये॥ 594**

एक प्रीती प्रभ चरन विचार। तिस बिन पावें कभू ना पार॥
सकल जतन अकारथ जाई। जो नहीं शरधा प्रभ चरन लखाई॥
सकल धरम दु:ख रूप पछान। जाँ में निश्चय नहीं इक भगवान॥
सकल विद्या नर बन्धन देवे। जो नहीं प्रीत प्रभ चरन लखीवे॥
तप जप सब संकट को देवे। जो नहीं आज्ञा प्रभ की चित सेवे॥
क्या गृहस्थी क्या विरक्ती दरवेशा। बिना ज्ञान सब धरें कलेशा॥
चतुर चतुराई भई दु:ख रूप। जो नहीं सूझा प्रभ नाम अनूप॥
हिकमत ज्ञान सब निहफल जाई। सतगुर मिल जो नहीं सिखया पाई॥
अनेक जनम साधन को धारें। बिन गुर सीख ना उतरें पारें॥
ज्ञान ध्यान सब थोथा जान। जो नहीं ध्याया गुर सीख निधान॥
उठ उठ धाये नहीं मारग बूझे। भरम को धार अन्धकार को सूझे॥
भरम के मारग नहीं पावें शान्त। जुगाजुगन्तर खोजें सिद्धान्त॥
जनम अनेक बिरथा नर जाये। बिन प्रभ कीरत सार नहीं पाये॥
सकले करम माया जंजाल। ठाकर सिमरे तब होये निहाल॥
करता भुगता परमेश्वर जानी। उट्ठत बैठत सिमरन चित ठानी॥
कूड़ देही का कपट त्यागी। भेख ना रीझे प्रभ बैरागी॥
साची कीरत शोभा विचार। मूल माया नासे हंकार॥
सब कुछ शक्ती तिसकी दिखलावे। दुष्ट हंकार मन का जावे॥
ज्यों ज्यों प्रभ की प्रीत विचारी। अनंक ग़ुबार मिटे अन्धकारी॥
चेतन परगास सरब परगासी। तिसकी महमा में विरत बिलासी॥
देह का मान गुमान सब जाये। निर्मल बुद्धी आतम दरसाये॥
सत सरूप जब अन्तर पाई। ममता जाल करम बिनसाई॥
जाँ से परगट ताँ लीन समाई। द्वन्द विकार अन्धकार मिटाई॥
शबद सरूप प्रभ अन्तरयामी। करी पहचान घट माहीं स्वामी॥

**अबगत शबद पहचानया, प्रेम प्रीत चित धार।**
**'मंगत' आनन्द रूप में, करम भरम सब टार॥ 595**

## सातवाँ अध्याय
## सत सरूप विश्वास निधान

सत सरूप पाओ विश्वासा। करम जाल होये भ्रम नासा॥
बिन विश्वास नहीं प्रीती पाये। बिना प्रीत नहीं सेव चित आये॥

बिना सेव नहीं निरमल होये। जनम जनम के जो पाप लखोये॥
सकल धरम की सार ये जान। आवे विश्वास प्रभ चरन निधान॥
सकल जतन तब मुकत समाये। भयो विश्वास प्रभ चरन धियाये॥
आवागवन का जाल उतारी। भयो विश्वास प्रभ पार मुरारी॥
मन का चलन सुभाओ जान। जब विश्वास जतन बखान॥
मिथ्या माया से पाये ख़ुलासी। आवे विश्वास केवल अबनाशी॥
काल कलपना सकली जाये। सत विशवास जो अन्तर पाये॥
हरख शोक मन वेग विनासी। निर्मल प्रीत प्रभ चरन परगासी॥
सकल ज्ञान की पाई सार। कारन करता जाना करतार॥
सकले बन्धन बिपत निवारी। आनन्दसरूप की शोभा जब धारी॥
देह का मान तब नास हो जाई। जब देह का करता हिरदे ध्याई॥
सकली शक्ति मन भरमन नासी। सत सरूप का होये विश्वासी॥
कोटाँ कोट जीव फिराने। प्रभ विश्वास कोई विरला जाने॥
मिथ्या जगत जब मन से देखा। सत विश्वास का पाया विवेका॥
दु:ख सरूप जग जीवन जानी। सत विश्वास पाये सो ज्ञानी॥
भरम सरूप जब रचना देखी। निरमल विश्वास पायो अलेखी॥
द्वन्द विकार जब बंध पछानी। निरबंध सरूप की खोज लखानी॥
आवन जावन जग जीवन देखा। भयो विश्वास प्रभ चरन अलेखा॥
छिनकारी मन मिथ्या चतुराई। तिनको त्यागे तब प्रेम प्रभ पाई॥
सो ही गुनी परम गुनवन्त। पायो विश्वास चरन भगवन्त॥
सो ही जीव परमगत पाये। सत विश्वास प्रभ चरन धियाये॥
सकली बिपता तब जीव की नासे। दृढ़ विश्वास प्रभ चरन उपासे॥

**आनन्द को तब पाइये, जब आवे सत विश्वास।**
**'मंगत' जनम जनम की भरमना, पल में होये खुलास॥ 596**

अगन सरीखा जग का ताओ। लख चौरासी दु:ख में भरमाओ॥
उठ उठ धायें करें बिकार। भवजल सूझे नहीं वारापार॥
अनक भरम में नित भरमाई। पल पल डोले धार चतुराई॥
मोह माया का भयो मदमाती। मूढ़पना धर बने निज घाती॥

वस्त अनेक संचित कीनी। नहीं धीर परापत अन्धमत चीनी॥
धार कुबुद्ध नित औगन कीजे। अती भयानक सिर बिपता लीजे॥
ना भ्रम जाये ना जीव सुख पाई। जनम अनेक जीव ऐसे विताई॥
अगनी खाये अगन परगासे। पल पल छार में लीजे बासे॥
'मैं' 'मेरी' सयानफ़ धारी। गरब ग़ुबार अगन ये भारी॥
सतगुर मेल जब सोझी पाई। मिले विश्वास परम सुखदाई॥
पाप भयंकर जीव के नासे। एक भरोसा मन पाये अबनासे॥
झूट विकार बन्धन तब नासी। भयो विश्वास प्रभ चरन सुखरासी॥
ज्यों नदी का वेग नहीं बाँधा जाई। ऐसे मन की जानो प्रभताई॥
नीर तरंग ज्यों गिनत नहीं आवे। ऐसे संशे में मन भरमावे॥
पवन सरूप ज्यों नित झुलारी। ऐसे चंचल मन विरती धारी॥
अतिअत कठिन मन की धारा। जनम जनम का पाप संचारा॥
ऐसे दुष्ट से नहीं मिले ख़ुलासी। अन्धमत जीया नित अन्ध भरवासी॥
मन के मते में मगन रहाई। एक पलक की चैन ना पाई॥
नित जीवन को घायल कीजे। सोही सयाना भेद ये लीजे॥
सत विश्वास का बंध लगाई। मन चंचल को नित फँसाई॥
पल पल कीजो सत विचारा। निरमल टेक साचे करतारा॥
दृढ़ निश्चय नित राखो सत स्वामी। चंचल मन तब लेवे बिसरामी॥
मन को थामन का ये ही उपाये। प्रभ के चरन चित टेक समाये॥
सत भरवासा राखो मन मेरे। प्रभ की शरन में सुख घनेरे॥

**एक निश्चय प्रभ चरन में, जब मन आन समाये।**
**'मंगत' जाये सब दूषना, जनम मरन दुखदाये॥ 597**

जुग जुग आद जो रिह्या समाई। तिसका सिमरन अधिक प्रभताई॥
तीन काल जो है रखवारी। संकट मोचन सुख वरतारी॥
सकल ज्ञान जो घट परगासी। कारन करता धर मन भरवासी॥
जिसका चानन घट पट में देखे। जिसकी शकत अनन्त अलेखे॥
भज करुनाकर किरपाधारी। दृढ़ विश्वास मन लीजो धारी॥
सब बिपता को हरनेहारा। सकल बंधन से देवे छुटकारा॥
जनम के पहले जो साथ रहाई। अन्त समय जो होए सहाई॥

परम मित्तर भज सो सुखरासी। साची प्रीत चित चरन बिलासी॥
सब रसना का रस दिखलाई। सबसे न्यारा आप रहाई॥
आवागवन में जो नहीं आवे। जिसकी माया सब रंग दिखलावे॥
काल करम जाँ व्यापे नाईं। भज दीनदयाल परम सुख थाईं॥
साची टेक राखो तिस चरना। सतपुरषों का सुन ये निरना॥
सकल विखेपत पल नास हो जाई। दीनदयाल जब होये सहाई॥
बिपता से नित जीव को राखे। पततपावन कर गुनी अलापे॥
तपन माहीं पल ठाँड वरताये। भज अमरत रूप शबद सुखदाये॥
बिन विश्वास ना साहब पायें। अंध भरवास में आवें जायें॥
साची नीती पल पल विचार। पावें टेक केवल करतार॥
मोह माया ये रैन अन्धेरी। पलपल बिपता पायें घनेरी॥
रख विश्वास केवल प्रभ एक। मिट जाये सकला भरम विखेप॥
सत साधू का बोल पछान। शास्त्र सिमरत का सुन निधान॥
माया झूट सत करतार। तिसके चरन में निश्चय नित धार॥
अपना करता हरता पहचान। सरजनहार ठाकर निर्वान॥
तिस बिन दूजे नहीं निहों राख। करो डण्डौत सत सेवा भाख॥
बारमबार मन माहीं पुकार। तूँ करता साजन करतार॥

**सत साजन संसार में, एक परमेश्वर जान।**
**'मंगत' निश्चय राख के, पलपल सेव पछान॥ 598**

प्रभ विश्वास सत शान्त परगासे। कोट विगन इक पल में नासे॥
शरधा सेवा प्रेम चित आए। बिरह वैराग में वास कराये॥
सत सील संतोख घर बासा। ज्ञान विज्ञान सुख सहज निवासा॥
निष्काम विरत निर्मान सुभाओ। पर-उपकार मन उपजे चाओ॥
गुन अनन्त प्रभ प्रीत से पाए। नित आनन्द जीव मंगल गाये॥
उट्ठत बैठत रख भरवासा। सच ठाकर के चरनी निवासा॥
बारमबार तिस सेव पछान। जिसने कीया सकल जहान॥
बारमबार तिस नाम ध्याओ। अजर अमर जो नित समाओ॥
बारमबार मन को समझाओ। साची प्रीत प्रभ चरन कमाओ॥
मिथ्या विकार ना सहजे जाई। जतन किये ते रतन प्रभ पाई॥

मन दुस्तर की वाट लखाओ। फिर समाँ ऐसा ना पाओ॥
इक विश्वास चित चरनी धार। कोट विगन से पावें जयकार॥
निर्मल रीती जग में चली आई। सत परमेश्वर की टेक सुखदाई॥
जिस जन सत विश्वास चित पायो। सच वक्खर तिस वनज करायो॥
परकिरत विकार ना गिनने आई। तिसका मोह अधिक दुःखदाई॥
छिन छिन काया रूप विटाये। मोह वस होए जीव ललचाये॥
बालू की भीत धुएं का अम्बार। चाम नाड़ी का देह मंजार॥
दुर्गन्ध अंतर पूरन भरया। अज्ञान धार ये जीव पसरिया॥
दुर्गन्ध भोग में नित ललचाई। नित प्यासा भरम को पाई॥
अदभुत खेल ना कथने आई। छाया की प्रीत में अंध लपटाई॥
सत सरूप पाओ विश्वासा। दुर्गम फाँस की होए विनासा॥
ज्यों ज्यों सत परीती आए। असत विकार भरम मल जाए॥
नित परकाश पुरख अबनासी। सत विश्वास से घट में भासी॥
देह पिण्ड का धरता सोही। शुद्ध सरूप मन माहीं परोई॥

**सत मारग की खोज बिन, जीव भरम नहीं जाये।**
**'मंगत' मोह विकार में, नहीं पलक शांत चित आये॥ 599**

छिन तापे छिन ठाँड विचारी। हरख शोक की लगी चिंगारी॥
धावन धावे दिन और राती। नाना जतन मन अन्तर थापी॥
अन्धबुद्धी विश्वास से हीना। कह बिध दुर्मत मल होये छीना॥
अधिक ताप पल पल बढ़ जाई। जतन अकारथ सकल रहाई॥
अतिअत दुःख में जान नित घेरी। चार कुण्ट उठ लावे फेरी॥
ना कोई थाँ ना दिशा दिखाई। जाँ से रोग जीव का जाई॥
जिस सुख की मन में परतीत। सो सुख तो भया दुःख की रीत॥
जिस मित्तर संग हेत अधिकाई। वोह तो अपने सुख का भाई॥
जिसको अपनी करके मानी। देखत में सब भई बिगानी॥
भरम फाँस में भयो लाचार। बिन विश्वास नहीं पावे पार॥
उठ गुनियाँ ये लेख विचार। सत वस्तू का निरनय धार॥
सरब विगन से जो रहे अतीत। तीन काल आनन्द सुखरीत॥

अपने आप में सरब गत पूरी। अपरम अपार भज रूप हज़ूरी॥
सकले भरम तेरे उठ जायें। निहचल चित इक पलक ध्यायें॥
आद जुगादी पुरख बिधाता। तिसकी सेव आनन्द सुखदाता॥
घड़ी घड़ी तिसका जस गाओ। कारन करता कर सीस निवाओ॥
सकल सामग्री जो धारनहारा। पलक में खेले बहु खेल न्यारा॥
मान त्याग नित सेव पछान। पूरन पुरख देवे कल्यान॥
अत वडयाई प्रभ की मन राख। अत प्रीती तिस नाम की चाख॥
अत जतन नित गुनी विचार। साचा ठाकर पल पल चितार॥
दृढ़ निश्चय तिस नाम संग पाओ। घट घट मंगल आन समाओ॥
परम परसनता प्रभ सिमरन माईं। दुबधा दुर्मत सब लीन समाईं॥
जग आवन ये लाभ विचार। साची सेव सीख करतार॥
करुनाकर मन माहीं ध्याओ। सत विश्वास परमपद पाओ॥

**साच कमाई जगत में, नारायन से हेत।**
**'मंगत' जिसने घाल करी, तिसकी मिटी विखेप॥ 600**

साचे नाम का हो विश्वासी। सत सिमरन में धर भरवासी॥
तीन काल मन सुख समाई। साची कीरत में भाओ लखाई॥
पलक पलक छीजे ये काया। सिमर दयाल हरी हर राया॥
पलक पलक मन पाप लखाई। बिमल शबद मन लयो ध्याई॥
सत करनी आवे विश्वासा। साची सीख पावें सुखरासा॥
अपनी करनी कल्यान दिखाये। मिल सतगुर जो लेख लखाये॥
सत मारग में जो जन जाई। सकल दूषना भरम नसाई॥
दिन दिन आनन्द मिले अत भारी। मन की खुशी मन माहीं विचारी॥
भरम विकार मिथ्या भरवासा। सत विचार से भई ख़ुलासा॥
सत विश्वास साहब का पाया। अन्तर बाहर तिसका जस गाया॥
अपनी भरमन आप निवारी। साची सीख मन माहीं विचारी॥
अपनी करनी का लेख लखायो। आलख पुरख जब मन माहीं ध्यायो॥
मन की विखेप करी शुमार। बहु पछताया देख रंग गवार॥
सम्भल सम्भल कर मैल मन धोई। दृढ़ विश्वास प्रभ चरन परोई॥

साखी पुरष अबगत आपार। धन्न पुरष जिन पाई सार॥
झूट जगत में सत कीरत पाई। भाओ भगत सतनाम कमाई॥
तीन ताप की जलन विनासी। सतपद का जब भयो भरवासी॥
अपने जीवन में जीवन को जानी। काल जाल भय मिटी निशानी॥
पूरन चित सतपुरख ध्याई। दृढ़ विश्वास पायो सुखदाई॥
तिस बिन दूजी नहीं शक्त दिखाये। करता हरता प्रभ आप समाये॥
सूखे कँवल रसना परगासे। निर्मल प्रीती कीजो अरदासे॥
सत विश्वास मोख द्वार। गुरमुख विरले पाई ये सार॥
मिथ्या जग का सब भाओ विनास। साची प्रीती प्रभ चरन निवास॥
औगनकारी मन सुख वरताई। सत विश्वास सोझी जब पाई॥

**प्रभ चरनी विश्वास भयो, जग से उपरस होये।**
**'मंगत' भगती मूल ये, कोई हरजन हिये परोये॥ 601**

जनम मरन से चाहें ख़ुलासी। सत सरूप का हो विश्वासी॥
सत कथा नित सतसंग प्रीती। सतपुरषों की विचारें नीती॥
अपना जीवन नित अन्तर देखे। पाप कूप के नित करे लेखे॥
नित ही मन की तजे कुटलाई। सतपुरषों संग निहों लगाई॥
भाग उदे गुर मेल मिलाये। तिनकी सीख मन तन समाये॥
कूड़ भरमन सकल चित नासे। हरजन पाया सत विश्वासे॥
मन को एक थाईं लगाया। अनेक भरमन का मूल चुकाया॥
साचा ठाकर सत कर मानी। सत विश्वास पायो ज्ञानी॥
अपने पाप को नित निवारी। सत करनी को हिरदे धारी॥
छिन छिन प्रभ की टेक लखाई। नित अरदास चरन कँवल ध्याई॥
उपजी बिरह जब मन के माईं। दृढ़ विश्वास तब हरजन पाईं॥
प्रभ की प्रभता जब सत कर मानी। तीन काल रखयक पहचानी॥
आनन्द सरूप जब भेद विचारा। आये विश्वास प्रभ चरन आधारा॥
करम चक्कर जग खेल विचारी। ऊँच नीच जो शोभा धारी॥
आवन जावन सब खेल लखाई। चारखानी की सब रचनाई॥
सरब परकाशी आतम तत्त बूझा। भयो विश्वास मुकत तत्त सूझा॥

मोह माया दु:ख रूप पछानी। अती कलेश में जीव अज्ञानी॥
निश्चे इक दिन चलें निरासा। काल चक्कर का देख तमाशा॥
सत सरूप की खोज लगाई। पायो विश्वास परम सुखदाई॥
मन का डोलन जो काल सरूप। दु:ख में फिरें गुनी मुनी भूप॥
मिथ्या देह छार हो जाई। जिसकी माँगे बहु मान बड़ाई॥
तुच्छ जीवन जग कियो विचारा। पायो विश्वास चरन करतारा॥
अपनी शकत से कुछ ना देखे। देह का रोम नहीं बने विशेखे॥
पर-आधार देखे रचनाई। आवे विश्वास प्रभ की प्रभताई॥

**जगत का खेल विचारया, जब निर्मल बुद्ध के साथ।**
**'मंगत' सब मिथ्या भया, बिना चेतन परगास॥ 602**

मन अपने का छोड़ अभिमाना। पावें विश्वास सरूप कल्याना॥
मन का मान गवन फिराई। मन का मान बहु नाच नचाई॥
मन का मान काम क्रोध परगासे। मिथ्या विकार में जीव निवासे॥
मन का मान अत पाप घनेरा। काल सरूप गवन का फेरा॥
मन का मान सब गुन विनासे। खल बुद्धी धर पाप परगासे॥
मन का मान नित औगन धारी। नित स्वारथ का बने पुजारी॥
मन का मान भ्रम मूल पछान। विसरे गोपाल रोये नादान॥
मन का मान अगन अत भारी। जल जल पड़े जीव अन्धकारी॥
मन का मान ये शत्रु आपार। जीव भरमावे खानी चार॥
मन का मान अविद्या जान। सत सरूप नहीं होवे पछान॥
मन का मान जब अन्तर रहाई। सत विश्वास कभूँ ना पाई॥
लख चौरासी जीव भरमाने। मन के मान ने किये दीवाने॥
मन का मान ये विखमी घाटी। तिसको तोड़े होए सचखण्ड वासी॥
मन का मान कारन इच्छया। करम भोग में नित नित रसया॥
जतन अनेक जो भी नर पाये। दुर्मत रोग ये मान नहीं जाये॥
गुनी ज्ञानी खट शास्तर वादी। पढ़ें क़ुरान हाफ़िज़ क़ाज़ी॥
मन का मान नहीं जाये अन्धकारा। पढ़ पढ़ थाके नहीं मिटे विकारा॥
गृहस्ती विरक्ती फिरें भुलेखे। मन का मान नित धरें विशेखे॥

मुख से कथनी बहु कथनाई। दुष्ट विकार मन मान नहीं जाई॥
कोट मद्धे कोई गुरमुख आये। सत विश्वास प्रभ चरन लखाये॥
साची कीरत मन तन परोई। तब ये मनुआँ निर्मल होई॥
मान त्याग समता पाये। आज्ञा साहब पलपल मनाये॥
अन्धकार नासे घट चानन होई। गुरमुख साजन सतगती लखोई॥
भव से उतरे सतनाम गाई। सत विश्वास चित अधिक समाई॥

**मन का मान त्याग के, सत ठाकर नित चेत।**
**'मंगत' करनी सार ये, भ्रम दुबधा मिटे अनेक॥ 603**

साचा जीवन जग में सोई। साची कीरत प्रभ चरन परोई॥
अधिक विकार मन के सब नासी। सत परतीत प्रभ चरन उपासी॥
त्रैगुन मैल नाम से जाई। गुरमुख साजन नित हिये कमाई॥
ज्यों ज्यों धोवे चित शान्त आये। अनेक विकार विगन सब जाये॥
नित धोवे संग प्रेम की रीती। जनम जनम की जाये पलीती॥
अपना मान तज साहब ध्याई। सत विश्वास रतन को पाई॥
ज्यों ज्यों मध की मैल विनासे। दीन ग़रीबी समता भासे॥
वैर त्याग मन हेत समाई। सब जीवों की सेव चित आई॥
भाओ प्रेम से सेवा धारी। निष्काम प्रीत सब संग विचारी॥
वैतरनी मन मान गँवाई। कल्प बरिच्छ प्रभ नाम ध्याई॥
संकट नास आनन्द परगासी। गुर प्रसाद भयो विश्वासी॥
निर्मल मन प्रभ प्रीत लखाये। ज्यों ज्यों सिमरे परमसुख पाये॥
प्रभ कीरत सुख कथा नित जानी। हरजन मन में मगन समानी॥
चिंता ममता भय सब नासी। निर्मल प्रीत प्रभ नाम उपासी॥
औखद नाम की ज्यों ज्यों खाये। काल त्याग अमरपद पाये॥
साची सीख तिस गुरमुख पाई। सत ठाकर संग हेत लखाई॥
सब जग भरम में आवे जाये। गुरमुख निज के धाम समाये॥
बिछड़ा जनम अनेक मिलाई। भयो विश्वास अखंड सुखदाई॥
सच ठाकर की सरन पछानी। जरा मरन गई काल निशानी॥
जग में आके नित लाभ विचारी। सत परतीत प्रभ नाम पुकारी॥

सत को बूझ सत माहीं समाये। सत की कथा सब ताप मिटाये॥
सत विचार से मन शान्त समाई। सत शबद सम्पत घर पाई॥
सत भरवासा नित मन धारी। करम जाल सब मिटी ख़वारी॥
प्रेम विचार मन प्रेम समाई। प्रेम नगर में नित खेल खिलाई॥

**मोह माया का ताप मिटे, जब चढ़े प्रेम का रंग।**
**'मंगत' घट अपने माहीं, सुने शबद परसंग॥ 604**

सतनाम का जिस भेद पछाता। अन्तरगत निर्भय समाता॥
मिथ्या नाम रूप द्वन्द विकारा। ग्रहन त्याग रूप अन्धकारा॥
अनमत जीव नित भरम लपटाया। मिथ्या नाम रूप नित भोग कमाया॥
नाश सरूप संग जो धरी परीती। दुःख सरूप फल मिले कुरीती॥
राग द्वेष मन संशा ना जाई। मिथ्या नाम रूप भरमाई॥
सतनाम जब सोझी पाई। पूरन चित निरभय समाई॥
द्वन्द विकार से नित न्यारा। सम सरूप पद निर्धारा॥
तीन काल परकाश समाई। सतनाम सो अबगत ध्याई॥
उट्ठत बैठत सतनाम ध्यान। ममता भरम की होवे हान॥
सत विश्वास सरूप ये मीता। सतनाम आवे नित चीता॥
आपा मध ग़ुबार विनासे। सतनाम बानी परगासे॥
सतगुर भेदी जभी मिलाये। अच्छर सरूप की कथा लखाये॥
सब जग छर के रूप समाना। अच्छर रूप केवल भगवाना॥
छर माहीं जब लग परीती। मिले ना शान्त परम सुखरीती॥
छर संग हेत मन नित डहकाई। संशा धार के नित भरमाई॥
अच्छर रूप जब हिये परोई। दुबधा दुर्मत सकली खोई॥
मुकत सरूप अच्छर नित ध्याओ। भरम त्याग अभयपद पाओ॥
नित अजन्मा आनन्द सरूप। सतनाम शबद अनूप॥
जिस जन नाम हिये परोई। भरम विनास दुबधा सब खोई॥
उट्ठत बैठत इक विश्वासा। सतनाम में धारे साँसा॥
मिथ्या जगत सतनाम पछानी। निर्मल कीरत लखे सो ज्ञानी॥
ज्यों सतनाम हिरदे परगासी। भरम विकार दुर्मत सब नासी॥

निर्मल चित अखण्ड रस ध्याई। सतनाम गत अन्तर पाई॥
मन इन्द्री जब शून विचारी। सतनाम तब भेद लखारी॥

**मन बानी को त्याग के, बुद्धी निश्चल होये।**
**'मंगत' अलख शबद पहचानया, सतनाम तत्त सोये॥ 605**

भरमन नासी पाया विश्वास। सतनाम घट भयो परगास॥
सकल करम से भया विरक्ता। सतनाम अंतर संजुगता॥
पूरन चित प्रभ चरन में धारी। सतनाम तब चढ़ी ख़ुमारी॥
आपा पर का दोख मिटाई। सतनाम घर सोझी पाई॥
नित ही पीवे नाम अनामी। नित ही खाये नाम सुखधामी॥
दिवस रैन मनसा इक धारी। सतनाम हिरदे विचारी॥
मुख नैन जीभा को बाँधे। साचा नाम हिये में साँधे॥
सतगुर मिले भेद पछाना। लखया शबद अगोचर निर्वाना॥
पूरन विश्वास पूरन भई किरया। पूरन देखा सब माहीं पसरया॥
द्वैत भरम जीव का नासी। सतनाम पल पल उपासी॥
सुरत अडोल मन इक रंग। तब सतनाम का सुने परसंग॥
अखंड नाद गगन घनघोर। सतनाम जप शबद हज़ूर॥
मनमानी सब खेल त्याग। सतगुर खोज पावें वडभाग॥
भेखाचारी गुरु मिलाये। सत विश्वास नहीं हिरदे आये॥
सतगुर पूरा सतनाम आचारी। आलख पुरख की जिस चढ़ी ख़ुमारी॥
इच्छया द्वन्द विकार त्यागी। सतनाम केवल अनुरागी॥
अबगत नाद में मन लीन समाई। निश्चल ध्यान में सुरती ठहराई॥
काम क्रोध बिख ममता छोड़ी। पलपल पीये सतनाम कटोरी॥
उपरस जीवन गुना अतीत। सतगुर पूरा पूरी तिस रीत॥
बचन निर्मान चित घनी उदासी। पल पल प्रभ के चरन निवासी॥
सुद्ध बुद्ध सकली प्रभ के हेत। प्रेम प्रीत से पाये सत लेख॥
सुरत की धार राखे इक रंग। ऊँचे धाम सुने परसंग॥
अनहद नाद करे किलकार। कोट मेघ सम जाँ गुंजार॥
सुरत अडोल निज रूप समाई। सतनाम की पाई प्रभताई॥

**निर्मल सुरत सतनाम आहारी, फोड़ गई ब्रह्मण्ड।**
**'मंगत' लीन भई निज आप में, त्याग के भरम द्वन्द॥ 606**

पल पल साजन करो विचार। दुस्तर जग से पावें पार॥
जिस मारग से जग में आया। तिसका भेद नर क्यों नहीं पाया॥
देह त्याग नर कहाँ ते जाये। मारग सूझ बिना भटकाए॥
करम भुलेखा ये संसार। आवागवन का रूप विचार॥
संशा धार नित भरमाई। इस्थित जग में कोई ना पाई॥
भरमे आवे भरमे जा। भरमे अनेक सरूप धरा॥
भरमे रोवे भरमे मानी। भरमे बाँधे मूढ़ ज्ञानी॥
वारापार ना जग का पाई। वाह वाह खेल भरम मचाई॥
सत विसार कूड़ लपटाया। कूड़े अन्दर नित भरमाया॥
जनम अनन्त कूड़ में धारे। मोह माया नहीं मिटे ग़ुबारे॥
सतनाम जब जुगत पछानी। आपा त्याग के सिमरन ठानी॥
विच रज़ाई क़ज़ा निवारी। सत सरूप पाया सुखकारी॥
सकल विकार लीन समाई। साचा निहों प्रभ चरन ध्याई॥
उट्ठत बैठत सोवत ध्याई। गुन अनन्त शोभा घर पाई॥
पीर पैग़म्बर जिस मारग चाले। सिद्ध रिखीशर जो घालन घाले॥
साचा नाम एक करतार। सबका बन्ध छुड़ावनहार॥
जो ध्याये सत प्रेम को पाई। सरब का ठाकर घट में दरसाई॥
दर्शन भेंट मन भये खुशहाल। भरम विनासे माया जाल॥
करनी निर्मल ये ही सत रीत। प्रभ के चरन राखो परतीत॥
मिटे विकार पायें संतोख। शबद ध्याए पायें सत मोख॥
निरबन्ध जीवन जीव समाई। सत ठाकर की शोभा गाई॥
आतम तत्त भया विश्वास। संशा नासे काल की फाँस॥
परमगती पाया शुभ धाम। सत ठाकर को कीना परनाम॥
सब कुछ तूँ सब तेरा रंग। अज अबनाशी पुरष निहसंग॥

**सत सरूप के ध्यान से, मन मनसा पूरन होए।**
**'मंगत' सत विश्वास ये, भय भरम सब खोए॥ 607**

# आठवाँ अध्याय

## आनन्द सरूप साधन निधान

आनन्द सरूप मन माहीं विचार। परमगती जग जीवन सार॥
आनन्द सरूप का खोज निधान। मिटे द्वन्द परम दु:ख खान॥
आनन्द सरूप का लेख लखाओ। राग द्वेष मन लीन समाओ॥
आनन्द सरूप का धर विश्वास। इच्छया दोख की नासे फाँस॥
आनन्द सरूप कथा कर श्रवन। करम भरम से बिनसे गवन॥
आनन्द सरूप की सिखया धार। पूरे गुर के चरन पधार॥
आनन्द सरूप का थाओं लखाओ। जरा मरन का जाँ होये अभाओ॥
आनन्द सरूप ताईं राख नित जतना। दुर्लभ देह की सुन सत लखना॥
मिथ्या विकार में जो आनन्द पछानी। ये ही कलपना गवन निशानी॥
भरम ग़ुबार में नित लिपटाई। परमानन्द की सार नहीं पाई॥
ना सत कथा ना कीरत जानी। मान धार सब औध विहानी॥
इन्द्री भोग रसना चित भाई। संसा करम ये फेर फराई॥
चले निरासे देह को त्याग। आनन्द सरूप में नहीं पाई जाग॥
खोल बुद्ध के नैन गुनवंता। आनन्द सरूप खोज परसन्ता॥
जुगाजुग पूरन जो समाई। कल्पना द्वैत जाँ भेद ना पाई॥
नित परकाश घट घट व्यापी। आनन्द सरूप सो लयो नित जापी॥
देह के अन्दर रिह्या समाई। देह विकार से न्यारा रहाई॥
देह के नाश से नाश ना होई। सदा अजन्मा अखेद अखोई॥
सरब ज्ञाता आप स्वामी। तिसका भेद आलख अगामी॥
आनन्द सरूप सो आप दयाला। शबद सरूप घट करे रवाला॥
जीवन रूप देह का सोई। तिस आधार सब खेल खलोई॥
विगन रहित अखण्ड सरूप। सरब परकाशी जोत अनूप॥
हस्ती तृन में रिह्या समाई। सत परकाश प्रभ सुखदाई॥
तिसकी खोज आनन्द को देवे। सतगुर मेल पदपंकज सेवे॥

**अमृत शबद की खोज कर, जो तीन काल निर्वान।**
**'मंगत' सिमरन तिसका, सत साधन निधान॥ 608**

आनन्दसरूप का लख परताप। जरा मरन नहीं काल व्याप॥
दृश्यमान जो नर दिखलाई। द्वन्द विकार सो सब रचनाई॥
कर कर विचार थाके मुनी दाने। आनन्द सरूप कोई विरला पछाने॥
अत सूक्षम तत्त चेतन परगास। जल थल मइय्यल करे निवास॥

गुपत रूप देह में बिसरामी। अबगत आपार पुरख अनामी॥
अनक जतन कर सन्तां ध्याया। अपरम आपार पुरख निरमाया॥
आनन्द सरूप कर सिफ़त बखानी। द्वैत विकार जाँ नहीं भरम निशानी॥
सरब जगत का जीवन सोई। नित आनन्द घट घट समोई॥
जिस जाना तिसने सालाहिया। तपन त्याग ठाँड समाया॥
कोट मद्धे कोई सार को पाई। अकथ कथा का लेख लखाई॥
करम वासना जब मन की नासी। आनन्दसरूप तब घट परगासी॥
इन्द्री विकार से उपरस होई। आनन्दसरूप तब भेद लखोई॥
जरा मरन जब भय चित मानी। आनन्दसरूप तब कथा पछानी॥
देह को मिथ्या कर जब ध्याई। आनन्दसरूप तब सोझी आई॥
करम अभिमान जब चित का नास्यो। सत तत्त आतम तब परगास्यो॥
द्वन्द विकार जब करम फल त्यागी। आनन्दसरूप तब पाये वडभागी॥
मुख की कथनी जब सभी त्यागे। अकथ कथा में नित रहे जागे॥
इन्द्री विकार से मन करे न्यारा। आनन्दसरूप तब ध्यान विचारा॥
आहार ब्यौहार में नेयम्म धारी। सत संजम नित हिरदे विचारी॥
खिमा दया ग़रीबी पाये। सतगुर जुगत तब शबद लखाये॥
मरजीवा जो जग में होई। साची बिरह मन माहीं परोई॥
मिल सतगुर सत जुगत पछानी। आनन्दसरूप मन मगन समानी॥
झूट जगत से मन उकताये। सत का सिमरन चित में पाये॥
ममता विकार गरब देह नासे। आनन्द सरूप तब घट परगासे॥

**अजर अमर परमात्मा, घट घट रह्या व्याप।**
**'मंगत' आपा त्याग के, सिमर साहब परताप॥ 609**

मारग कठिन अगम का मीता। आनन्द सरूप जाँ बसे पुनीता॥
माया दुस्तर अत दुःखकारी। जल जल पड़े जीव अंधकारी॥
इन्द्री विकार में अत गरसाया। कह बिध मिले अखंड सुखराया॥
जीवन का जो हरख मनाई। आनन्द सरूप नहीं मिले आगाही॥
साचा भेद ये ही विचारा। आपा मेट परस करतारा॥
साची जुगती का लिख लेख। कर मरन कबूल साहब को देख॥

साचा ज्ञान ये ही सुखसार। हो निर आस पायें आनन्द आपार॥
साची गिनती गिन नित गुनियाँ। प्रभ पावें होये सुपन सम दुनियाँ॥
साचा करम ये ही नित धार। पल पल सिमरन करो मुरार॥
साचा धरम हिरदे में जान। सरब जगत की सेव पछान॥
ज्ञान विज्ञान का लेख लखाओ। प्रभ की आज्ञा पल पल मनाओ॥
साची प्रीती छीजे हंकार। अंतरगत पावें तब सार॥
निर्मल जुगती योग पछान। अखण्ड जाप जापो भगवान॥
दुस्तर मन को घट अंतर राख। सतनाम की रसना चाख॥
आवत जावत पवन पछान। नित नित सिमरो ठाकर निर्वान॥
भाओ प्रीती रख चरनी टेक। कारन करता भज ठाकर एक॥
सुरत इकागर घट पवन विचारी। सतगुर मिले तब भेद लखारी॥
उलट कँवल भयो परगासा। आनन्दसरूप में लीना बासा॥
देह के भीतर निरदेह लखाई। काल के भीतर अकाल समाई॥
घट घट व्यापक सरब न्यारा। शबद सरूप पायो निरंकारा॥
निहचल चित सत शबद कमाई। पल पल करम की मैल मिटाई॥
सत-पुरषों का संग विचारी। मारग चले तब जीव अगाड़ी॥
सत-संगत में नित राखे प्रीती। परदुःख हरना की साधे नीती॥
मन का अभिमान अत भरम मिटाई। आनंद सरूप रसना तब पाई॥

**आवागवन जगत सब, साहब नाम अडोल।**
**'मंगत' पल पल सिमर लो, सिर कीजे काल कलोल॥ 610**

आनन्दसरूप जीवन में ध्याई। गुरमुख पत लेके घर जाई॥
विच परदेस जीव ये आया। सच वक्खर का वनज कमाया॥
कारन करता साचा भगवन्त। तिसकी आज्ञा में नित रमंत॥
ज्यों चलावे सो सतगुर मेरा। त्यों ही सुख मन में वरतेरा॥
जगत रचना सब तिसकी प्रभताई। करो अरदास सब संकट जाई॥
दीनानाथ दयाल गोबिन्दा। पल पल सिमर पद परमानन्दा॥
तुम बिन दूजा कोई नहीं देवा। चार कुण्ट का भेद लखेवा॥
अन्तर बाहर तूँ ही समाया। सरब गत पूरन तुझको पाया॥

दया करो जग धूड़ी लखाओ। सरब जीयाँ की सेव चित पाओ॥
गरब गुमान पाप को हरयो। ज्ञान सरोवर मन अन्तर भरयो॥
एक प्रीती तेरे चरन रहाये। पलक पलक तुझ माहीं समाये॥
अनन भगत प्रभ घट में दीजो। माया विकार पल में हरीजो॥
तूँ सच ठाकर सरजनहार। करूँ बेनती नित तेरे द्वार॥
भरम अगन से प्रभ छुड़ायो। सत कीरत निज चरन लगायो॥
तूँ दाता मैं तोर भिखारी। दीजो दान प्रभ नाम अपारी॥
ऐसी प्रीती तुध चरन की रहाये। एक पलक ना विसरन पाये॥
ऐसी प्रीती माँगूँ प्रभ देवा। बंध बंध कटें ना विसरे सेवा॥
विच फ़रमान तेरे तन मन वाराँ। पल पल सुकृत प्रीत निहाराँ॥
अखण्ड ध्यान चित रहे लवलीना। मन का वेग सकल होए छीना॥
नित तोरे दर की टहल कमावाँ। पल पल तोहे सीस निवावाँ॥
करुनाकर तूँ सरब जगदीशा। साची कीरत दात कर ईशा॥
निर्मल नाम तेरा मन तन समाये। इत उत खेल तेरा दरसाये॥
तूँ ही तू सब में दिखलाई। माँगूँ प्रेम प्रीत सुखदाई॥
सिमरन तेरा ध्यान तेरा रहाई। नेहचल सरूप घट नित दरसाई॥

**नित आनन्द सरूप को, पल पल मन में ध्याओ।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, जो निर्मल सेव कमाओ॥ 611**

आलख नाम संग करो परीती। आनन्द सरूप मिले सुखरीती॥
मान त्याग प्रभ भगत कमाओ। साचा ठाकर निश्चल ध्याओ॥
तिस बिन दूजा मिथ्या पेखो। सत नारायन अन्तर देखो॥
पाप करम नहीं हिरदे धारो। सुकृत ज्ञान मन माहीं विचारो॥
सहज ध्यान सत सेव कमाओ। सच ठाकर के चरन समाओ॥
मन का मान नहीं सुपने पाओ। सरब दयाल सिमर सुखराओ॥
एह बिध निश्चय जो बन आई। आनन्द सरूप मिले सुखदाई॥
ज़ोर ज़ुलम ग़ुबार त्याग। साची कीरत प्रभ चरनी लाग॥
द्वन्द विकार ये देह मंजारा। नित त्रिखत जीव अंधियारा॥
काम क्रोध अत बड़े ग़नीम। पार ना पाये ये कठन मुहीम॥

जुगा जुगन्तर रहे भरमाई। तीन दोख में नित तपताई॥
मोह वस होये भया लाचार। भव जल सूझे नहीं पारावार॥
मन के पीछे उठ उठ धाए। मन माने नित पाप कमाये॥
धन जोबन अत धरा गुमाना। नीच करम नित हिये पछाना॥
काल बली जब सिर पर आये। तब दुष्ट करम पर बहु पछताये॥
अब रोवत कछु होये ना मीता। चला चली ये जग की रीता॥
जो कुछ किया सो निश्चे पायें। सच नियाँ साहब फ़रमायें॥
सब जीवों की ये गत होई। अन्तकाल जग छाड चलोई॥
खोल नैन तू कर विचार। करो कमाई नित सुख की सार॥
झूट देही नर संग ना जाई। राजे राने भूम समाई॥
गुनी ज्ञानी सब ही जायें। इस्थिर जग में रहन ना पायें॥
गुरमुख खाट चले प्रभ लाहे। ठाकर पायो बेपरवाहे॥
मनमुख धार सयानफ़ जायें। इच्छया चक्कर में नित भरमायें॥
पशू कीट सम जनम गँवाई। सत विसार परम दुःख पाई॥

**जग जीवन देख ना भूलयो, ये पलक घड़ी का खेल।**
**'मंगत' सत सिमरन भगवान बिन, नहीं मिटे चौरासी जेल॥ 612**

ऐ मन मेरे तू कर विचार। पल पल सिमर लो सरजनहार॥
ऐ मन मेरे तू मान त्याग। दीन ग़रीबी सेवा लाग॥
ऐ मन मेरे नित जाग सवेरा। राम विसार पायें दुःख घनेरा॥
ऐ मन मेरे तूँ क्यों भरमाया। इस्थिर रहे ना जो जग आया॥
ऐ मन मेरे करनी सत धार। एक दिन चलना छोड़ संसार॥
ऐ मन मेरे तूँ क़हर त्याग। खिमा दया चित धर अनुराग॥
ऐ मन मेरे सत साजन जान। कारीगर जो तीन जहान॥
ऐ मन मेरे तेरा कोई नाये। क्यों भूला जग देख सराये॥
ऐ मन मेरे तू क्यों हरखाया। साचा ठाकर नहीं पतियाया॥
ऐ मन मेरे तेरी रचना झूट। काल बली लेवे छिन लूट॥
ऐ मन मेरे तू क्यों नित मानी। निहथावाँ उठ चलें अनजानी॥
ऐ मन मेरे क्यों भोग फँसाया। देह त्याग तूँ कहाँ समाया॥

झूट देही संग किया बसेरा। जग में भयो ना मेरा तेरा॥
सुपन समान सब खेल को पाई। अन्त की बारी सुपन हो जाई॥
अचरज लीला धारी करतार। अचरज माया कीनी बिस्तार॥
साची ओट साहब की पेख। भरम ना भूलो रचना जग देख॥
सरब आधारी आप जगदीश। तिसकी सेव सब हरे कलेश॥
जुग जुग सोभा अपरम आपार। गावें पीर वली अवतार॥
तिसकी टेक नेहों तिस राख। तिसकी सेव रसना तिस चाख॥
तिसकी शकत में निश्चय धार। तिसका नाम जप बारम्बार॥
होवे ख़ुलासी प्रभ रूप ध्याये। जाँ से उतपत ताँ लीन समाये॥
सुरत इकागर चेता प्रभ राख। झूट माया की रसना नहीं चाख॥
अगम अगोचर अपार बड़ाई। भज परमेश्वर आनन्द समाई॥
कीरत ध्यायो कीरत परगास। साची प्रीत प्रभ चरन निवास॥

**औगन पल में बिनस गये, जब प्रीत पाई भगवन्त।**
**'मंगत' मिली सत शान्ती, अचरज शक्त अनन्त॥ 613**

जीवन रूप मुरारी ध्याओ। देह त्याग आनन्द घर जाओ॥
आवागवन चौरासी फेरा। नित नित धारे ताप घनेरा॥
मानुष देही मुकत तट पाई। सिमर दयाल सब बिपत मिटाई॥
साचा थाओं साचा प्रभ धाम। जो जो सिमरे पावे बिसराम॥
साची उस्तत साचा तिस ध्यान। साचा सिमरन पल पल बखान॥
साची महमा आपार आगाही। सिद्ध मुनीशर जुग जुग ध्याई॥
साचा तेज सरब परगासी। नित आनन्द सरूप अबनाशी॥
साचा प्रेम साहब का रूप। प्रेम में बाँधे चराचर भूत॥
साची सोभा पल पल चित गाओ। पूर मनोरथ मंगल को पाओ॥
निर्मल प्रीत जब राखें चरना। घट में पायें प्रभ कारन करना॥
दुबधा नासे आनन्द घर बासी। अदभुत शबद परसें अबनाशी॥
सुरत अडोल सतनाम कमाई। कौतक बिस्माद घर में दिखलाई॥
सूक्षम धुन नाद गुँजारी। गुरमुख पावे ये सुकृत कारी॥
शबद अजन्मा शबद अबनाशी। शबद अद्वैत सरब परगासी॥

शबद आनन्द द्वन्द से न्यारा। इत उत सकल शबद पसारा॥
घट पट शबद रिह्या भरपूर। सतगुर मिले तब पाएँ हज़ूर॥
सबके अंतर नित पुकारी। गुर का शिष कोई बोल विचारी॥
अमरत नाम अमरत तिस ध्यान। अमर परकाश रमे तीन जहान॥
जिस जन खोजी काया की सार। आनन्द सरूप तिस मिले मुरार॥
आनंद पछान आनंद समाई। शबद अगोचर घर लेख लखाई॥
पाँच पचीस विकार विनासी। शबद ध्यान काटे सब फाँसी॥
औगन गुन दोनों उठ भागे। सत शबद में सुरता जागे॥
दुर्मत जाल सहजे बिनसाई। शबद नबेड़ा जब गुरु दिखलाई॥
शबद ज्ञान शबद सतधाम। शबद पछाने लेवे बिसराम॥

**अबनाशी शबद पहचानया, जो सरब शक्त निधान।**
**'मंगत' तिस की सेव से, जीव पाये कल्यान॥ 614**

परकिरत का जाल अधिक बिस्तारी। बिना जतन नहीं उतरे पारी॥
साचा जतन नित मन माहीं विचार। अबगत रूप पावें मुरार॥
जुगत आहार ब्यौहार में धारे। संजम बुद्ध नित लेख विचारे॥
आहार पवित्र ख़ुदया परमाना। ब्यौहार पवित्र जग निर्बाह वरताना॥
साची संगत सतपुरषों की धार। समाँ पाये सत कथा विचार॥
संध्या प्रात प्रभ नाम चितार। बैठ इकान्त निश्चय ये धार॥
सब जीवों संग हेत पछान। सबकी सुख मन माहीं बखान॥
जगत की रचना पल पल विचार। अंत समे का नित करो शुमार॥
धरम के मारग में प्रीत बढ़ाओ। संचत माया सत करम लगाओ॥
सतपुरषों की सीख नित जाप। पाप करम का बिनसे ताप॥
साची प्रीत प्रभ चरन पछान। मन में बाँछो नित नाम निधान॥
साचे धरम का निरना धार। दिन दिन प्रीती अधिक विचार॥
वैर बखीली मध मान नहीं पेख। दासा भाओ में जीवन देख॥
अपने बंधन का करो विचार। अपनी औधी का निरनय नित धार॥
समय गया नर हाथ ना आई। विचरत काल में सत करो कमाई॥
कर दीन अनाथ दुःखियों की सेव। मान त्याग पायें सत भेव॥

औगन मन के जो नित अधिकाई। रसना प्रेम में दियो जलाई॥
एक दिन चलना निश्चय कर मीत। पर-उपकार धारो नित नीत॥
पर-दुःख हरयो सुख नित वरताओ। साचा हुकम साहब चित पाओ॥
लोक की सेवा मन मैल गँवाई। लोक की सेवा चित धीर लखाई॥
लोक की सेवा मोह भ्रम नासे। निर्मल प्रेम घट में परगासे॥
लोक की सेवा मारग कल्यान। सतपुरषों का ये सत फ़रमान॥
लोक की सेवा परलोक सहाई। जम का संकट नहीं सुपने पाई॥
लोक की सेवा में होये निरमान। साची कीरत पाई भगवान॥

**लोक सेवा संसार में, निर्मल धरम विचार।**
**'मंगत' भाओ निष्काम से, नित ही खाटो सार॥ 615**

निष्काम करम मन निर्मल कीजे। भाओ भगत प्रभ की तब सीजे॥
सत-सेवा जो नित विचारी। कोट पाप मन मैल उतारी॥
पर सुख जो नित हिरदे ध्याई। पाप कूप तिस निकट ना जाई॥
सरब जीयाँ संग साँझ विचारी। दुर्मत मैल का कष्ट निवारी॥
सतपुरषों के नित सुने इतिहासा। सत करनी में लेवे नित बासा॥
मोह अधिक सत धरम में राखी। सो जन रसना निर्मल चाखी॥
सत करम बुद्धी परगासे। सील संतोख आये घर बासे॥
तुच्छ देही का जीवन मानी। साची सेव हिरदे पछानी॥
जो कुछ कीजे सब हुकम विचार। साची कीरत पावें करतार॥
मन का मान ये भरम की खाई। सत विचार से ताप मिटाई॥
झूट जगत से फीका मन होये। निर्मल प्रीत प्रभ चरन लखोये॥
साचा ठाकर सत कर ध्याई। नित नित सुने तिसकी प्रभताई॥
प्रभ की प्रीत में हरजन रोए। साची कीरत चित आन समोए॥
झूटा जगत तब निश्चय पाई। सतनाम चित प्रीती आई॥
सिमरे नाम छिन छिन को धार। उट्ठत बैठत करे विचार॥
बैठ इकान्त मन देखे खेल। बहु पछताए लख दुर्मत मैल॥
दृढ़ पुरषारथ मन में धारी। सकल व्याध पाखंड निवारी॥
मन का डोलन नित ही थामे। केवल प्रीती प्रभ चरन अनामे॥

जीवन झूट पसारा त्यागे। साचा मारग प्रभ सिमरन जागे॥
दुष्ट विकार तजे कुटलाई। कोमल चित पर हेत लखाई॥
पूरन सतगुर की सिखया पाये। मारग साहब की सोझी आये॥
दृढ़ विश्वास गुर चरनी राखे। गुर की कहनी पल पल चित चाखे॥
दुर्मत पड़दा माया का नासे। आनन्द सरूप साहब परगासे॥
साची कीरत सुने सच लेख। साचा जतन साचा पाए भेख॥

**सत करम हिरदे धरे, मन का तजे बिकार।**
**'मंगत' पाए आनन्द को, नित घाल यतन तत्त सार॥ 616**

जैसा करम करे दिन राती। तिस ही रंग मनसा उतपाती॥
मलीन करम से होए मनसा मलीन। सत असत नहीं भेद को चीन॥
ऐसे जीव करम संजुगता। जैसा करम ऐसा फल भुगता॥
मिल सतसंग नित खोज विचार। पाप करम नहीं परसे सार॥
छिन छिन मन में सत करम विचारे। मिले आनन्द मिटे भरम ग़ुबारे॥
शुद्ध बुद्धी प्रभ सिमरन पाये। शुद्ध बुद्धी सुख सार को ध्याये॥
हिरदे साहब नाम को गाई। सत करम में प्रीत अधिकाई॥
सत विचार करे दिन राती। जग में कोई नहीं संग साथी॥
साचा मित्तर प्रभ आवे चीत। पल पल तिसका गावे गीत॥
सिमर सिमर सतनाम सुखरासी। मिथ्या विकार भरम सब नासी॥
सत परतीत मन में होई। सत सिमरन नित चित परोई॥
हक़ पराया मन से नित त्यागी। साची सिफ़त साहब चित लागी॥
जो कुछ कीजे फल तिसका त्यागे। सत सिमरन में नित रहे लागे॥
साहब दाता बड़ा दातारी। सरनागत को नित उभारी॥
एक टेक राखो निज स्वामी। गवन विनासे ले बिसरामी॥
साच कमाई नित उठ घाल। आज्ञा बूझ पूरन प्रभ दयाल॥
प्रेम भाओ प्रभ नाम के संग। प्रेम से वाचे कथा परसंग॥
प्रेम से ठाकर सेव कमाओ। निश्चल चित सतनाम ध्याओ॥
जो उतपत और बिनसे जाई। तिसकी प्रीत अधिक दु:खदाई॥
तीन काल जो सदा सम रूप। सिमर सतनाम आतम सुख भूप॥

मोह माया नर नित डोलाये। सँभल सँभल कर नित चाल चलाये॥
दृढ़ निश्चय केवल प्रभ चरना। तिसकी आज्ञा नित तिस सरना॥
मिले विवेक शबद निर्वान। सुरत समाई भई ग़लतान॥
करम का संसा मन से जाये। अधिक प्रीत प्रभ चरनी पाये॥

**एह बिध साधन जो करे, साच प्रीती को धार।**
**'मंगत' मन निर्मल होये, पावे शबद विचार॥ 617**

बिना पछान मन प्रीत ना पाए। आदि काल से ये मन का सुभाये॥
पूरन वस्तू की पाये जब मत्तया। ग्रहन त्याग की परसे गत्तया॥
जब तक मन में नहीं विचार। कभू न पावे सत मारग सार॥
धरम सरूप नहीं मन में जानी। कैसे सोधे ये मन अज्ञानी॥
सत करम नहीं निरना चीत। कैसे होवे सत करम परीत॥
जीवन मरन नहीं पाया विचार। कैसे पावे तत्त ज्ञान आधार॥
सुख दुःख का नहीं लेख पछाना। सुकृत मारग कैसे चले नादाना॥
जिस वस्तु का ज्ञान ना होई। मन नहीं तिस सिमरत परोई॥
विद्या हीन नहीं मन विचार। कैसे परसे आनन्द करतार॥
शुद्ध बुद्धी धार विवेक। तब मन पकड़े यथारथ लेख॥
सरब धरम की ये ही सार। हिरदे आवे सत विचार॥
सब साधन का ये फल मीत। निश्चय पावे प्रभ चरन पुनीत॥
सबसे उत्तम ये ही गत जान। सत असत की मिले पछान॥
वेद ग्रन्थ पढ़न की ये सार। साची प्रीत आवे निरंकार॥
सत पुरखा ये रमज़ आपार। केवल प्रीती सतनाम विचार॥
सिमरो नाम मन एक परीत। घट में पावें आनन्द सुखरीत॥
जब लग जीवन जग में रहाई। नित सुधारो ये मन दुःखदाई॥
जब लग साँस की धारा जारी। सत करम नित लयो विचारी॥
जब लग धरनी पर उठके चाले। अपने छूटन का राह सम्भाले॥
जब लग देह में बल रहे समाई। पर की सेव लयो करम कमाई॥
जब लग इन्द्री विचार लखाई। साचा ठाकर सिमरो सुखदाई॥
जब लग जम नहीं गरसे काया। साचा नाम नित लयो ध्याया॥

जब लग हंस नहीं छाड शरीर। भज करतार परम सुखसीर॥
समय गँवाये फिर बने कछु नाहीं। जो करना कर जीवन माहीं॥

**जीवन में जो कुछ किया, सो ही जीव की रास।**
**'मंगत' पाछे के यतन से, नहीं कटे जीव की फाँस॥ 618**

जो कुछ किया जीवन के माईं। तिसका फल नित जीव लखाईं॥
पाछे किया जो कुछ मीत। करनेहारा फल लेवे नीत॥
अन्ध भरवासे मत कोई रहाये। अपनी करनी नर छुड़ाये॥
जो कुछ किया बेसुद्ध मीत। तिसका फल ना पावे चीत॥
अपनी करनी का मन नित साखी। तिसका फल निश्चे भोगासी॥
करम चक्कर की ये ही रीत। जो करता सो लेवे फल मीत॥
ताँ सो समाँ कर विचार। निर्मल करनी लयो हिरदे धार॥
पूत धींया ना कोई छुड़ावे। अपनी करनी फल दिखलावे॥
जो कुछ कीना जीवत माईं। तिसका फल निश्चे को पाईं॥
भूल ना पड़यो करो विचार। अपनी करनी दे आधार॥
पूत करे तो पूत फल पाई। जैसा बीजा ऐसा खाई॥
तेरी करनी तुझको ओट। पाप करम का त्यागो खोट॥
ना कोई संग ना होये सुहेला। लेखा देवे जीव अकेला॥
माया मोह में क्यों गरसाया। नाँगा जायें नाँगा जग आया॥
कूड़ पसारा अधिक पसारी। जो कुछ कीजें सिर बिपता भारी॥
एक साहब की टेक विचार। बन्ध खुलासी होवे ग़ुबार॥
साची करनी कीजो नित नीत। दोहे जहाने सुख की रीत॥
अपना बन्ध आपे काट। साची करनी लीजो खाट॥
पर-भरवासी अन्त पछताये। केवल लेखा जब सिर पर आये॥
अचरज रचना जादू का खेल। मत भुलाओ सत करनी मेल॥
बड़े चतुर नर गये ठगाये। संशे में गये जनम गँवाये॥
आज कल का धर भरवास। ना कुछ कीना कारज रास॥
विच भुलेखे सब औध गँवाई। काल पछाड़े तब जीव पछताई॥
घड़ी घड़ी नर करो शुमार। साची कीरत प्रभ चरन विचार॥

**समाँ गया जो औध का, सो ही काल गयो खाये।**
**'मंगत' भरम त्याग के, नित सिमर लीजो प्रभराये॥619**

## नौवाँ अध्याय
## आनन्द सरूप अनुभव निधान

आनन्द सरूप जब अनुभव होई। सकल भरांत जीव ये खोई॥
निर्मल बुद्ध तब परगट पाई। आनन्द सरूप जब अनुभव लखाई॥
पूरन करमी तिस भाग वधाई। आनन्द सरूप जो अनुभव पाई॥
जड़ बुद्धी अन्धकार विनासा। शुद्ध विवेक अंतर परगासा॥
सत असत का तब निरना पायो। सरूप अनुभव जब घट लखायो॥
परम विवेकी कोट मद्धे कोई। सत अनुभव जो हिये परोई॥
सकल संसार से निस्तर पाया। सरूप अनुभव जब भेद लखाया॥
अत सूक्षम तिस बुद्ध परगासी। जगत आधार कला इक भासी॥
छिन छिन विचार निर्मल राखी। सत सरूप की खोजे साखी॥
जो कुछ देखे परगट संसारा। दुःख सरूप भरम विकारा॥
अंतर विखे विश्वास को पाई। निर्मल झलक सत रूप दिखाई॥
मन माहीं मन करे विचार। अपनी दुबधा की करे शुमार॥
सरूप अनुभव जो शान्त दिखावे। तिसकी बिरह चित को मुरझावे॥
बारमबार तिस रसना गाई। तिस बिन मनुवाँ धीर नहीं पाई॥
अपने बन्धन देखके रोवे। सरूप अनुभव का प्रेम लखोवे॥
पूरन निरना संसार का लखाई। आनन्द सरूप जब अनुभव पाई॥
बन्धन मुकत यथारथ जाना। मुकत के ताईं जतन करे बिध नाना॥
जनम मरन यथारथ जाता। आनन्द सरूप जब पाई ज्ञाता॥
सकल भरम को आप निवारी। आपे सेवक आप आचारी॥
अपनी बिपता यथारथ जानी। जब अनुभव सत रूप पछानी॥
शास्त्र सिमरत का पाया परमाना। सुख दुःख इच्छया का भेद लखाना॥
साची शान्त सत रूप दिखावे। तिसके ताईं मन नित तरसावे॥
मिले वैराग परम सुखदाई। इच्छया भोग सब अगन मिटाई॥
चंचल नासी मन धीर समाई। सत सरूप जब अनुभव पाई॥

**मुकत किवाड़ तब खुल गया, जब सरूप अनुभव पाये।**
**'मंगत' बिरह परापती, जो परतक्ख भेंट कराये॥ 620**

पूरन भाग पूरन तिस करम। पूरन जुगत पूरन पाये धरम॥
पूरन निरना नित निरनाई। सत सरूप जब अनुभव पाई॥
बंधन मोक्ष की जुगत पछानी। करम अकरम का भेद लखानी॥
युक्त अनायुक्त साधना पेखी। युक्त ज्ञान अंतरगत लेखी॥
संशे भरम का मूल पछाना। अनुभव पायो जब रूप भगवाना॥
ताप द्वन्द मन के त्यागी। सत सरूप रसना चित लागी॥
सकली किरया यथारथ जानी। सत परतीत जब प्रभ पछानी॥
अतीअत यतन राखे मन माहीं। सत सिमरन नहीं पल विसराईं॥
सरब शकत आधार प्रभ देखा। परगट भई तिस प्रीत विशेखा॥
डंडौत करे पायो अरदासा। पल पल प्रभ के चरन निवासा॥
अती भयानक जग दिखलाई। निर्भय रूप प्रभ एक लखाई॥
निर्मल प्रेम प्रभ चरन में जागा। सत अनुभव भयो उगड़े भागा॥
जनम जनम की करनी पाई। जगत का बिन्ध प्रभ रूप लखाई॥
निमख निमख तिस चरने प्रीती। भरम त्याग पाई सुख रीती॥
पल पल रोवे प्रभ धर अनुरागा। दुर्मत भरम से सो जन भागा॥
छिन विचारे छिन शून समाई। सरूप अनुभव जो गती लखाई॥
अनक विगन संसे सब टारी। इक चित प्रीत पाई चरन मुरारी॥
करता हरता सरब स्वामी। भयो विश्वास प्रभ अंतरयामी॥
सत मारग में होए सावधाना। साची सेव चित पाये भगवाना॥
पूरन प्रभ की जाँ कथा परगासे। अती प्रीत वहाँ करे निवासे॥
जल की बूँद ज्यों तपत बुझाई। एह बिध कीरत पेखे सुखदाई॥
दीनदयाल दर करे पुकारा। नित बख़शें तूँ सरजनहारा॥
साची भगती प्रेम चित ध्याई। सतपुरषों के चरन समाई॥
उत्तम कीरत तिस जन जानी। आनन्द सरूप जिस भेद पछानी॥

**अनक जतन को धार के, मन को बाँधे नीत।**
**'मंगत' निश्चय पाया, प्रभ के चरन पुनीत॥ 621**

सत सरूप को सत कर माना। सत विश्वास हिरदे पहचाना॥
मन की मैल को नित नित धोये। सतगुरु की नित कथा परोये॥

सत आधार जीवन को पाई। जब सत सरूप अनुभव लखाई॥
जलन माहीं तिस ठाँड पछानी। मिरतक में जीवन को जानी॥
संशे त्याग निहसंशक होई। केवल संशा प्रभ रूप लखोई॥
भयो बौरा और नादाना। लागी प्रीत चरन भगवाना॥
लोक कटुम्ब नहीं हिरदे भाये। फीका जीना जग दिखलाये॥
मन अन्तर से भयो विरक्ता। सत सरूप अनुभव संजुगता॥
मन की बात मन में धारी। मुख से कहे ना भेद आपारी॥
जिस तन लागी बिरह प्रभ आए। प्रेम अगन में राख हो जाए॥
खाना पीना मूल ना भावे। छमछम नीर नैनों से आवे॥
आसा जीवन की सब त्यागी। प्रभ के चरन की प्रीती जागी॥
रंग पीला मुख घनी उदासी। नैनाँ गम्भीर प्रभ दरस प्यासी॥
नित नित पन्थ पिया दा खोजे। बिन हरी रूप ना दूजा सूझे॥
मिल सतगुरु सब प्यास बुझाई। प्रभ मिलन का लेख लखाई॥
निर्मल नाम चित लड़ी परोई। जनम जनम की मैल को धोई॥
सिमरे नाम केवल प्रभ एका। निश्चल चित धार विवेका॥
प्रभ का नाम एयों चित गाये। स्वाती सीप ज्यों प्रीत लखाये॥
द्वन्द विकार से उपरस होई। परमानन्द चित प्रीत परोई॥
पूरन भाग सो जन जग आया। मुकत अमीरस भेद लखाया॥
वारापार कठन संसारा। हरजन पायो केवल निस्तारा॥
उत्तम कीरत प्रभ की जानी। सरब जगत का ठाकर मानी॥
सत परीती प्रभ संग पाई। पूरन जुगत अनुभव लखाई॥
अनुभव रूप मुकत परकाश। सहज सहज मन लेवे निवास॥

**मन की व्याधी त्याग के, प्रभ चरन पायो विश्वास।**
**'मंगत' प्रभ के ध्यान से, निर्भय लीना वास॥ 622**

साची भगत तिस मन आई। सरूप अनुभव जिस कथा लखाई॥
उट्ठत बैठत नाम कमाये। पल पल प्रीती चित चरन लखाये॥
आरूढ़ ध्यान बुद्ध नाम चितारे। निमख निमख भज रूप करतारे॥
सरब आधार प्रभ निश्चय पाया। तिस आधार सकल जग माया॥

निर्मल परताप प्रभ का चितारे। अपने विगन खोट निवारे॥
मन अपने विच पाई परसन्ता। पायो अनुभव सतरूप भगवन्ता॥
बड़ी खुशहाली चित आया चाओ। प्रभ अपने संग निहों लगाओ॥
मन से केवल ये ही इच्छया। निर्मल प्रीत प्रभ जाए चित रसया॥
अनन भगत मन बाँछे नीता। अखण्ड ध्यान भजो पुरख पुनीता॥
प्रभ मिलने की शगन पछानी। निष्काम विरत घट आये समानी॥
जगत से न्यारा मन को राखे। अंतरगत सतनाम को चाखे॥
मन की दूषना नित विचारे। प्रभ अनुराग से ताप निवारे॥
दीन ग़रीबी की ठाँड लखाई। जगत ठाठ से चित को हटाई॥
निज सम्पत पर-सुख में त्यागे। अधम जीव के भी चरनी लागे॥
नित प्रति जगत की टहल कमावे। पशू पंछी चित हेत समावे॥
सब जीवों में प्रभ को देखे। सब की सेव चित धरे विशेखे॥
दयावान नित पर-उपकारी। खिमा सरूप जीवन को धारी॥
निष्काम करम निर्मान सुभाओ। सरूप अनुभव ये लेख लखाओ॥
सब संग प्रीत इक चित राखे। ऊँच नीच नहीं भेद को भाखे॥
तन मन करके सेवा धारे। कोट जनम का पाप निवारे॥
साँच लक्षन बुद्ध परवेसे। प्रभ मिलने का सुने संदेशे॥
आज्ञाकारी नित जीवन धारी। गुर के बचन अत प्रीत विचारी॥
सतगुर रूप परमेश्वर तुल जानी। तिनकी सिखया चित ठाँड समानी॥
निष्काम सरूप गुर भेदी पाये। अगम मारग में उठ उठ धाये॥

**निर्मल करनी चित बसी, गुर बचन धारे विश्वाश।**
**'मंगत' शोभा बहु मिले, नित सिमरे तत्त अबनाश॥ 623**

करता हरता परमेश्वर ध्याई। निर्मल सिखया सतगुर दिखलाई॥
सकले करम प्रभ आज्ञा में छोड़े। निर्मल प्रीत चित चरनी जोड़े॥
छिन छिन इच्छया मैल को धोये। आज्ञा प्रभ की पल पल परोये॥
करमफल रोग मृगतृष्ना जाये। प्रभ को सिमरे नित सहज सुभाये॥
करम करूर का संग त्यागे। सत करम में नित रहे लागे॥
गुरमुख संगत संग परीती। प्रभ वडयाई की भावे नीती॥

भोग विकार सहजे भये नासे। साचे नाम संग प्रीत बिलासे॥
केवल ओट साहब की जानी। जग भरवासा सब मिथ्या मानी॥
मन को ठाके प्रभ चरन ध्याये। आँकुस ज्ञान से चोट लगाये॥
दृढ़ नीयम संजम दृढ़ धारी। शुद्ध विचार नित बोल विचारी॥
मनसा रोग का दारू खाये। साचा नाम नित चित ध्याये॥
सकली सम्पत प्रभ दात पछाने। मोह त्याग प्रभ सेव लखाने॥
कारन करता पल पल कर जानी। भावी तिसकी सब खेल पछानी॥
अपनी हिकमत मान गँवाई। सत अनुभव शान्त वरताई॥
निर्मल चित जग खेल विचारे। मिथ्या पेख मोह भरम को टारे॥
नित सतसंग में मनसा धारी। सत विचार की भूख लखारी॥
अन्तर बाहर प्रभ कीरत बूझे। जगत कुलेल सम अगनी सूझे॥
विरत इकागर भाओ विचारी। साची प्रीत प्रभ चरन निहारी॥
सादा जीवन नित नित धारी। कपट त्याग सत बचन विचारी॥
मन की विखेप दु:ख अधिक पछानी। तिसके त्याग की कथा चित भानी॥
अमृत नाम को ज्यों ज्यों खाई। मिटे विखेप मन धीरज आई॥
दृढ़ अभ्यास अन्तर में राखी। साचा नाम अकथ कर चाखी॥
पल पल एको नाम विचारी। सुकृत जीवन सो जन धारी॥
पाप विखाद करमगत तोड़ी। सत अनुभव चरनी चित जोड़ी॥

**मन को राखे नाम में, और सिमरती त्याग।**
**'मंगत' मारग मुकत में, तिस जन पाई जाग॥ 624**

नित नित बन्धन अपना तोड़े। आज्ञा प्रभ की हिरदे जोड़े॥
अपनी दुबधा मान गँवाए। सत सेवक हो सेव कमाए॥
दु:ख सुख देही से उपरस होवे। साची प्रीती प्रभ सिमरन जोवे॥
अधिक वडयाई प्रभ की पहचान। नित अरदास तिस चरन बखान॥
करता ठाकर सरब समराथा। दीनदयाल अनाथ के नाथा॥
सब जग तुमरा खेल अपारी। तुमरी महमा नित बलिहारी॥
गुनी ज्ञानी नित जस गायें। अन्त ना पारावार कोई पायें॥
आनन्द सरूप विगन से न्यारा। अदभुत माया रचा पसारा॥

तीन काल तूँ ही रखवारी। पल पल साहब किरपाधारी॥
सरब जीयाँ को तेरा आधार। तेरी परीत रूप जयकार॥
जो सिमरे तेरा नाम स्वामी। भवसिन्धू से ले बिसरामी॥
चार वेद खट शास्तर ध्याये। कुरान अंजील महमा नित गाये॥
पीर वली करें नबी पुकार। तेरी महमा अपरम अपार॥
हस्ती तृन में रिह्या समाई। सकला खेल तेरी प्रभताई॥
दुस्तर माया नित भुलाये। तोरी सेव नहीं चित समाये॥
राख लें तूँ सरजनहार। कूकर होके कराँ पुकार॥
तुध बिन कोई नहीं थाओं विचार। तुध बिन दूजा नहीं आधार॥
करुनाकर तूँ आपार स्वामी। अपरम अपार शक्त अनामी॥
जल थल विचरें तेरे आधार। सूरज चन्दर तेज विचार॥
पवन पावक और आकासा। तेरी महमा का अजब तमाशा॥
सरब परकाशी तूँ आप दयाल। सकल जियाँ को करें निहाल॥
रंचक तोरा भेद ना पायें। सिद्ध मुनी जुगाजुग गायें॥
आपे आप पूरन का पूर। सकल जगत तूँ आप हज़ूर॥
सकला खेल तेरा पासार। दण्डवत करूँ प्रभ बारमबार॥

**अनक भाँत उस्तत करूँ, आपार शकत भगवन्त।**
**'मंगत' दुर्मत त्याग के, पल पल नाम जपंत॥ 625**

करनेहार तूँ ठाकर मेरा। पल पल राखें चरनी केरा॥
तूँ दु:ख हरता मंगलकारी। तोरी महमा अपर अपारी॥
खलबुद्धी मैं अनमत मूढ़ा। कह बिध सिमराँ तुध नाम हज़ूरा॥
अधिक विकार भरे दु:खदाई। तुध बिन मेरा नहीं कोई सहाई॥
बुद्धी हीन मन अती मलीना। तुम बिन रखयक नहीं कोई दरसीना॥
अत ही नीच औगन को धारी। तुध बिन मेरा नहीं कोई रखवारी॥
दुष्ट विकार चित धरे घनेर। आवागवन फिरावें फेर॥
कह बिध छूटाँ प्रभ दीनदयाला। ना कोई जतन ना ज्ञान विशाला॥
ना कोई मारग सोझी आवे। तुध बिन थाओं नहीं कोई दिखलावे॥
बारमबार ये किया विचारा। बन्ध छुड़ावे तुध नाम अपारा॥

बुद्धी हीन नहीं उस्तत पाऊँ। कह बिध प्रीत तोरे चरन कमाऊँ॥
शेष सहँस मुख जो नित गाई। पल पल वरँच मन ध्यान लगाई॥
शिव सनकादिक विषन विचारी। लोमस जुग जुग प्रीत निहारी॥
तेरी महमा का पाया नहीं पार। अनमत मूढ़ा क्या करे विचार॥
साची प्रीती प्रभ चरनी दीजो। साची कीरत प्रभ मन में सीजो॥
अपना तेज आपे परगासो। पल पल चरनी करूँ अरदासो॥
ना तप बल ना विद्या कोए। ना विचार चित घना लखोए॥
केवल किरपा तोरी विचाराँ। पल पल तेरा नाम निहाराँ॥
अपनी मेहर आपे वरताओ। मूढ़े कीट को सूझ लखाओ॥
ध्रुव प्रहलाद गुनी बहू तारे। नामदेव रविदास उद्धारे॥
पीपा सैना की प्रीत बढ़ाई। कबीर दादू नानक तराई॥
कोटाँ कोट प्रभ किये उद्धार। गिनती लेख नहीं पाऊँ शुमार॥
सिद्ध रिखीशर जुग जुग गायें। पततपावन करके नित ध्यायें॥
सच्चिदानन्द तूँ नित किरपाला। मूरख जन्त का तूँ रखवाला॥

**सरब जगत को छाड के, तुध दर धूड़ रमाऊँ।**
**'मंगत' दीन दयाल प्रभ, मत कित दर्शन पाऊँ॥ 626**

आद जुगादी तूँ भरपूर। मेरा राखनहार हज़ूर॥
नित रखयक हो नित किरपाला। आनन्द सरूप तूँ सरब दयाला॥
पल पल तोरी सेव पछाना। सब कुछ बूझूँ तेरा फ़रमाना॥
दीजो शकत भगत चित आये। सिमरन तेरा मन रहे समाये॥
तोरा रूप पल पल लखावाँ। इक चित होके दर्शन पावाँ॥
अत वडयाई तेरी प्रभ मेरे। नित आनन्द नित बसें परेरे॥
ज्ञान विज्ञान तेरा परतापा। खिमा दया प्रभ तेरा जापा॥
औगन हरो सतगुन परगासो। मुकन्द सरूप तूँ अजर अबनासो॥
लिख लिख लेख गुनी मुनि हारे। तेरी क़ुदरत अपरम अपारे॥
जब भावी तब खेल रचाई। अपनी देखें सब प्रभताई॥
तेरा खेल जगत पसारा। बारमबार करूँ निमस्कारा॥
परले पार तूँ नित बिसरामी। घट घट जाने तूँ अंतरयामी॥

सब कुछ करके रहें न्यारा। अद्भुत साहब तेरा पसारा॥
महमा ना वरनी रंचक जाई। तूँ ठाकर सरब शक्ताई॥
बल बुद्धी अंतर परगासो। लेखा लिखाँ तेरा निरवासो॥
तूँ ही सत आद जुगादी। तोरा नहीं पावाँ भेद बिसमादी॥
अचल अडोल पुरखोत्तम देवा। अनन प्रीती दीजो चरनी सेवा॥
सत कर सिमराँ तेरा नाम अनामी। निज घर पावाँ प्रभ नित बिसरामी॥
एक भरोसा तेरे चरन रहाई। साची कीरत मन रहे समाई॥
पाप कूप से राखो नित स्वामी। करो बख़शीश सत सेव निष्कामी॥
तोरे दर की नित आस रहाये। तोरी दात मन सुख मनाये॥
घट का पाट सब दूर करीजो। सन्मुख होके प्रभ दर्शन दीजो॥
जीव प्यासा तेरे दर्शन ताईं। ताप बुझाओ तुम आपार गोसाईं॥
आलख आपार प्रभ तेरा परताप। निमख निमख ध्यावाँ तेरा जाप॥

**दीनबन्धु करतार तूँ, अपनी प्रीत लखाओ।**
**'मंगत' प्रीती चरन की, पल पल हिये समाओ॥ 627**

नित अनमत मैं मूढ़ अनजाना। सरनागत तुध पार भगवाना॥
कर किरपा मोहे करो उद्धार। करूँ दण्डवत मैं बारमबार॥
सरब कला तूँ ही समरथ्थ। राख लें प्रभ दे के हथ्थ॥
और आस ना कोई भरवासा। तुध चरनों का नित हूँ दासा॥
बारमबार प्रभ करूँ पुकार। होवो दयाल सत सरजनहार॥
मूढ़मती अज्ञान को नासो। सत तत्त ज्ञान अन्तर परगासो॥
करम बखेड़ा मन मिटे अन्धकार। घट अन्तर होवे जोती उजयार॥
करूँ बंदना तुध चरन जगदीश। नित हरयो मेरे भरम संदेश॥
निर्मल कीरत पाऊँ पद विश्वास। अती कलेश दुर्मत होए नास॥
जनम मरन का संकट अत जाये। अबगत रूप तेरा मेल मिलाये॥
अनंक संशे में नित हूँ घेरा। दीनदयाल काटो भव फेरा॥
अजर अमर अबनाशी तुध धाम। करुनाकर वहाँ दीजो बिसराम॥
तेरी ओट प्रभ तेरा आधार। पूरन पुरख तूँ सत करतार॥
बख़शनहार तूँ पार मुरारी। सरब जीयों पर किरपाधारी॥

अचरज महमा कर तू परगासा। जल थल अन्दर करें निवासा॥
काल करम ना तोहे व्याप। अपनी गत मित आपे जाप॥
आद अन्त तूँ ही सत एक। नित ही राखाँ तेरे चरनी टेक॥
अबगत लीला धारी संसार। सरब के अन्तर करें पसार॥
आपे खेल आपे नित खेलें। अपना रूप आपे नित मेलें॥
सत सरूप तेरा सब रंग। नित लाख चौरासी गावें परसंग॥
मानुष देव आदी सब ध्यायें। अबगत प्रेम के नित गुन गायें॥
त्राहेमान तेरी सिफ़त आपार। हो दयाल मन दियो आधार॥
सकल बिपत से होए ख़लास। निर्मल ध्यान से करूँ अरदास॥
नित बन्दूँ पद कँवल अपारी। नमों नमों नित हूँ निमस्कारी॥

**अपरम अपार तू ही पुरखोत्तम, करूँ बन्दना बारम्बार।**
**'मंगत' भयो सरनागती, प्रभ दीजो चरन आधार॥ 628**

सत कीरत तेरी हिये समाये। निर्मल ध्यान तुध रूप लखाये॥
नीर बिन ज्यों मीन तड़पाये। एह बिध प्रेम तोरा चित समाये॥
दाम में ज्यों कंगाल नेहों राखी। एह बिध गावाँ प्रभ तेरी साखी॥
चन्द चकोर ज्यों प्रीत अधिकाई। एह बिध रसना तोरी चित भाई॥
भूखा ज्यों पदारथ खोजे। एह बिध प्रीत तोरे चरन की सूझे॥
कपटी पुरष ज्यों छल परबीना। एह बिध चरन तोरे रहूँ लवलीना॥
सूर तेज ज्यों जग परगासे। एह बिध घट में करूं बिलासे॥
सूरा ज्यों रन देख के हरखे। निर्मल प्रेम को चित इयों नरखे॥
नदियाँ ज्यों जाये सागर समायें। एह बिध विरती तुध माहीं मिलायें॥
लोक लाज सकल होये नासा। निर्मल प्रेम तेरा होये परगासा॥
जल में तरंग ज्यों शून समाये। एह बिध मन तेरे रँग रंगाये॥
दीपक पतंग ज्यों प्रेम आपार। एह बिध करूँ चरन चितार॥
निर्मल प्रीती प्रभ कर बख़शीश। टूटा निहुं निभाओ ईश॥
एक सिमरन मन तन समाये। एक प्रीती चित अघट रहाये॥
सत सरूप केवल चित गाई। दीनदयाल तोरे चरन समाई॥
वस्त ना बाँछाँ जग की कोये। साचा नाम घट माहीं समोये॥

नाम पदारथ दीजो प्रभ देव। पूरन होये अनमत की सेव॥
अधिक प्रेम तोरे चरन रहाई। अखण्ड ध्यान में लीन समाई॥
सुध बुद्ध और सकल होये नास। निर्मल रूप में नित करूँ निवास॥
अन्तर बाहर नित मगन रहाऊँ। निमख निमख प्रभ दर्शन पाऊँ॥
दुर्लभ समाँ मैं कैसे पाऊँ। तन मन दे के प्रभ तोहे रिझाऊँ॥
सुकृत काल सो घड़ी कब आये। अखण्ड ध्यान में दिन रैन रहाये॥
भागवान कोई जग में आया। जगत छाड निहों तेरा लखाया॥
सत जीवन सो जग में वरताई। निर्मल प्रीत जिस चरन कमाई॥

**मन की भरमन छाड के, सुरत निरत होये एक।**
**'मंगत' दुर्लभ पलक सो, जो एह बिध राखाँ टेक॥ 629**

दीनदयाल सिमर प्रभ देवा। पल पल कीजो तिसकी सेवा॥
नित आनन्दघन रूप स्वामी। तपन बुझाये अन्तरयामी॥
आनन्द सरूप सो ही परगासा। सरब जीयाँ घट करे निवासा॥
करो अरदास कीरत नित गाओ। प्रभ अपने के चरन समाओ॥
साची प्रीत राखो चित ओट। काल करम नहीं व्यापे खोट॥
पतित उद्धार पुरख भगवन्ता। सिमर सिमर पाओ परसन्ता॥
कूड़े कारज ना भरमाओ। सच ठाकर की सेव कमाओ॥
ऐसी करनी करो नित मीता। अन्तकाल होये सुख की रीता॥
राजे राने सब पछताये। छोड़ संघासन जब भूम समाये॥
गुनी ज्ञानी कथा कथायें। बिना प्रेम के रोते जायें॥
मोह माया का अधिक जंजाल। लख चौरासी नित दुःख भाल॥
सम्पत जग की संग ना चाले। जब गरासे काल कराले॥
भाई मित्तर कोई होये ना साथी। लोक कटुम्ब सब स्वारथ नाती॥
जो कुछ कीना सो ही सत रास। छल गयो जीव धर कूड़ भरवास॥
रचना देख सबकी गत ये ही। सिमर दयाल सुकृत जग देही॥
अपना समाँ नित करो विचार। मानुष जनम नहीं बारमबार॥
कूड़े भरम विच सतनाम भुलाया। अंत की बारी नर बहु पछताया॥
काँच के बदले मानक को छोड़ा। सिर पर आयो अब काल निहोरा॥

प्रभ की माया कई किये दीवाने। जाँ पर किरपा सो मुकत पछाने॥
पूरन पुरख प्रभ लयो ध्याई। दुर्लभ कारज जग में सुखदाई॥
जिन जिन ध्याया अन्तरयामी। बिपत त्याग भये सुख बिसरामी॥
सत विचार ये हिरदे धार। साखी करता भज केवल निरंकार॥
मनमानी करतूत त्याग। सत सिखया ले अन्तर जाग॥
पलक पलक की जाने जानाई। अन्तरयामी भज आपार ज्ञाई॥

**प्रीती साचे नाम की, तन मन करे निहाल।**
**'मंगत' तब ही परचिये, जब प्रभ होयें दयाल॥ 630**

नित ही प्रभ की करो अरदास। घट घट जाने पुरख अबनास॥
कीरत तेरी निहफल ना होई। अन्तरयामी सब सार परोई॥
तूँ नहीं देखें पूरन प्रभ देव। तेरे घट की जाने सब भेव॥
निर्मल करनी जब पावें विश्वासा। होवें दयाल पुरख अबनासा॥
अपनी प्रीत को तोड़ निभाओ। प्रभ की जाने प्रभ बेपरवाहो॥
जतन किया जिन पाया धाम। बिपता त्याग लीना बिसराम॥
प्रभ की किरपा जानो दिन रात। त्याग विखाद इस मन कमज़ात॥
निर्मल बुद्धी से कर अरदास। पूर मनोरथ सब कारज रास॥
अनखुट भंडार का साहब भंडारी। पूरन होया जो चरन पधारी॥
शरधावान शरधा को पाई। सरनागत होए मिली वडयाई॥
निहथावाँ को थाँ दिखाई। सरब जगत तिस धूड़ रमाई॥
भयो भिखारी जो साहब दरबार। साहब ने दीनी सम्पत आपार॥
जगत भिखारी तिस के दरबान। जिस जन पाया साहब फ़रमान॥
तपत बुझाई शान्त रस दीना। निर्मल प्रीत प्रभ चरन जिस चीना॥
अपने दास की आरजा पूर। जो वाँछे सो देवे हज़ूर॥
परम दातारी साहब का रूप। पल में हरे कई जनम का कूप॥
साची दात जन अपने पाई। सम्पत नाम चित घनी समाई॥
मन गम्भीर सब मिटी तक़सीर। दीनदयाल पाया सच पीर॥
विच मुरीदी मन सखाया। जग का ठाकर घर दिखलाया॥
पूरन भाग पाई सन्तन धूड़। नाम ध्यान मनोरथ पूर॥

पूरन पुरख परमेश्वर पाया। आवन जगत का लाभ कमाया॥
तृखा निवारी आनन्द परगासी। पल पल ध्याया प्रभ अबनाशी॥
जानन वाली वस्त जानाई। अब कुछ जानन योग ना काई॥
बिन्ध सरूप जग ठाकर पाया। सरब जगत तिस माहीं समाया॥

**पूरन प्रभ दया करी, अपना जन्त मिलाए।**
**'मंगत' पूरन भाग से, आनन्द सरूप समाये॥ 631**

## दसवाँ अध्याय
## आनन्द सरूप इस्थिति निधान

साची कीरत हरजन पाई। प्रभ के रूप में गयो समाई॥
जनम जनम का रोग निवारी। आनन्दसरूप में गयो पधारी॥
माया भरम मिटा अन्धकारा। पाया ठाकर सरजन हारा॥
सरब कलेश जीव के नासी। हरिचरन कँवल में कियो निवासी॥
पूरन जुगती ने फल दिखलाया। शबद सरूप परमेश्वर पाया॥
सतगुर पूरे की सिखया धारी। मिला गोबिन्द परम सुखसारी॥
घट का भरम संशा सब नासे। सत बानी आतम परगासे॥
अमर लोक से बानी आई। सकल जीव के ताप मिटाई॥
तिस बानी में गयो समाई। हरजन लीनी वडी वडयाई॥
करम विकार ना बौहड़ व्यापी। आवागवन नहीं ताप को तापी॥
इच्छया रोग सब भयो विनासा। जिस घट अन्तर कियो परगासा॥
अमरपुरष सतलोक समाई। जो जो सिमरे निस्तर हो जाई॥
हरजन पाई साची जग कार। पूरन पुरख पाया निरधार॥
शबद सरूप परमातम पाये। सुरत अडोल तिस सेव कमाये॥
शबद मिलावा भयो परगास। अन्तरयामी पाया अबनाश॥
शबद मिलावा परम तत्त ज्ञान। निर्मल जुगत घर करी पछान॥
शबद मिलावा आनन्दसरूप। हरजन भयो हर का रूप॥
शबद मिलावा ये योग निधान। बन्धन नास पाई कल्यान॥
शबद मिलावा धरम का मूल। मगन समाया इच्छया गई भूल॥
शबद मिलावा जुगत निधान। कारन करता पाया भगवान॥
शबद मिलावा ये गुपत विचार। जो जन परसे तिसको जयकार॥
शबद मिलावा परमगत जान। ब्रह्म सरूप भयो जीव निधान॥

शबद मिलावा ये तत्त कल्यान। कोटाँ मद्धे कोई करे पछान॥
शबद मिलावा सब दुर्मत नासे। सहज सुभाय नित आप परगासे॥

**करम धरम पूरन भयो, घर पायो शबद अगाध।**
**'मंगत' परम आनन्द में, नित विचरे सुन्न समाध॥ 632**

शबद मिलावा प्रेम की खानी। विरला गुरमुख करे पछानी॥
शबद मिलावा सुख परम निधान। जल थल एको करी पछान॥
शबद मिलावा भये काल अतीत। अकाल सरूप निज आई परतीत॥
शबद मिलावा नहीं द्वन्द का भेद। अखण्ड सरूप नित बसे अछेद॥
शबद मिलावा ऊँच कोटी ज्ञान। तत्त अबनाश सत करी पहचान॥
शबद मिलावा भयो इन्द्री अतीत। इच्छया भोग पर पाई जीत॥
शबद मिलावा भयो निरदेही। सत परकाश आतम गत लेई॥
शबद मिलावा सुरती लवलीना। सरब सरूप नारायन चीना॥
शबद मिलावा हंग बुद्ध त्याग। निर्वान सरूप में लीनी जाग॥
शबद मिलावा सब भय निवारी। परमानन्द नित चढ़ी ख़ुमारी॥
शबद मिलावा पूरन जग सार। निर्मल ध्यान हरे करम अन्धकार॥
शबद मिलावा सब बन्धन नास। नित आनन्द में लियो निवास॥
शबद मिलावा पाए वडभागी। पूरन करमी कोई गुनी अनुरागी॥
शबद मिलावा पाये दिव्य दृष्टी। एक ब्रह्म देखा सब सृष्टी॥
शबद मिलावा समता रस सार। जिस जन पाया भव उतरा पार॥
शबद मिलावा ये ज्ञान अगाध। जरा मरन सब हरी व्याध॥
शबद मिलावा वड भाग लखाई। अपनी आप जाने प्रभताई॥
शबद मिलावा साधू का पंथ। महमा गावें नित वेद ग्रन्थ॥
शबद मिलावा ये सुन्न समाध। संशे भरम सब मिटे व्याध॥
शबद मिलावा जीवन का रूप। बौहड़ ना व्यापे काल का कूप॥
शबद मिलावा पद ऊँचा घाट। पूरन करमी परसे ये वाट॥
शबद मिलावा अखंड परगास। सरब जीयाँ घट करे निवास॥
शबद मिलावा पूरन ये योग। पाइये भेद जब सतगुर संजोग॥
शबद मिलावा ये गुह्य ज्ञान। त्रैगुन माया से पाए कल्यान॥

**शबद मिलावा जब भया, गया अन्तर का पाट ।**
**'मंगत' एको पाया, जो जल थल रह्या व्याप॥ 633**

शबद मूल शबद बिस्तारा। शबद में रचया कुल संसारा॥
शबद सरूप ब्रह्म अनाद। अद्वैत अखण्ड अपार अगाध॥
शबद ध्यान शबद विचार। भवजल से करे शबद निस्तार॥
अंतरगत सरब परकासी। शबद सरूप केवल अबनासी॥
घट घट व्यापक पारगरामी। कोट मद्धे कोई ले बिसरामी॥
सब घट शबद करे गुंजार। पूरन गुर मिल पाइये सार॥
सकले जतन तब पूरन होये। अखण्ड ध्यान जब शबद समोये॥
शबद का लेख लखयो गुनवंता। शबद परापत अखण्ड परसन्ता॥
नित नित मारग शबद में धाये। छीजे दुर्मत मिले प्रभताये॥
आनन्द सरूप शबद प्रभ एक। जो जो सिमरे पाए सत लेख॥
निर्मल बुद्ध भई शबद रस खाये। रुच रुच तिसमें प्रीत कमाये॥
सो ही धाम जीव का मीता। भयो परसन पाये शबद पुनीता॥
ज्ञानी ज्ञान कथें अपार। ध्यानी नित मन मगन विचार॥
आचारी नित आचार लखाये। एको शबद महमा आपार धराये॥
पूजो घट में सो प्रभ देवा। पूरन पावें जग में सेवा॥
अंतरगत निरंतर जाता। शबद पुरख आप बिधाता॥
लोकालोक की सोझी होई। जब सत शबद मन माहीं परोई॥
जप तप का फल सार पछाना। शबद सरूप पाया निर्वाना॥
देह विकार तब निर्मल होई। शबद ध्यान जब सुरत परोई॥
पाप पुन्न तब लीन समाये। शबद अखण्ड जब परगट पाये॥
सतगुर महमा तब ही पहचानी। अबनाशी शबद जब पायो सुख खानी॥
जगत पसार भयो सुपन समाना। दिव्य प्रकाश पायो शबद निधाना॥
भव बंधन तब भयो सब नासा। अजर शबद जब पायो परगासा॥
आनन्द जीवन तब जग में पाई। आलख शबद की जब सेव कमाई॥

**पूरन पुरख परमेश्वर, शबद रूप घट पाये।**
**'मंगत' निर्मल ध्यान से, द्वैत उपाध मिटाये॥ 634**

पूरन पुरख सो ही तत्तवादी। शबद ध्यान में जिस पाई समाधी॥
पुरख निरंजन नित निर्वाना। सर्वज्ञ रूप शकत विज्ञाना॥
अंतर बाहर पूरन समाई। अपनी आप में कला लखाई॥
नित ही शबद में मगन समाई। सकल भरम जीव बिनसाई॥
शुद्ध सरूप घर लयो पछाना। अगम आपार पुरख सो जाना॥
अनहद नाद शबद अखण्ड। व्याप रिह्या सब पिण्ड ब्रह्मण्ड॥
अगोचर बानी घर में परगट पाई। दीनदयाल प्रभ मेल मिलाई॥
भई खुशहाली जम भय नासा। निराकार घट शबद परगासा॥
महमाँ शबद की अपरम आपार। जो बूझे सो परखे सार॥
शबद की खोज आनन्द निधान। जल थल माहीं शबद पहचान॥
साचा ठाकर घट में समाई। बिना जुगत नहीं परगट पाई॥
सतगुर मेल तत्त सार लखाई। अनहद नाद शबद घर पाई॥
दूध माहीं ज्यों घृत समाना। पुष्प में ज्यों गंध लखाना॥
एह बिध साहब माहीं बिराज। युक्ती योग से पाइये सुखसाज॥
परमगती तत्त शबद विचार। परम सिद्धी मन शबद आधार॥
शबद पुरख आनंद की खानी। जाये विखेपत जीव अज्ञानी॥
निर्मल जुगती मन तन समाई। शबद अगोचर की कथा लखाई॥
मारग अगम नहीं कथने आई। शबद पुरख जाँ रिह्या समाई॥
सतगुर मेल सब पाए भेद। अन्तरगत मिले शबद अछेद॥
शबद का आहार शबद ब्यौहार। शबद में जागन सुपन विचार॥
अंतर बाहर खाये शबद की सार। नित आनन्द ठाकर करतार॥
ऐसी जुगती जिस जन जानाई। दुर्मत जाल सब लीन समाई॥
केवल रूप साहब दरसाई। जीवन मुकत अभयपद पाई॥
जाँ से आया तिस धाम समाये। जनम मरन बौहड़ नहीं पाये॥

**शबद का सिमरन जिस किया, छाड कलपना द्वैत।**
**'मंगत' सो मुक्ता भया, काल जाल नहीं लेप॥ 635**

ऐसी जुगती करो विचार। जाँ से मिले शबद आधार॥
साचा सिमरन प्रभ का जोई। शबद परकाशे निर्मल सोई॥

नाम जपे अनाम समाई। मारग ज्ञान सतगुर दिखलाई॥
आसन दृढ़ मनसा दृढ़ कीजे। सतगुर चरन कँवल चित दीजे॥
विज्ञान सरूप का करे विचार। घट घट व्यापक जो सरजनहार॥
अबगत नाम की जाने जुगत। सिमरन कीजे जन पाये मुकत॥
नौ द्वार देही का कोट। तिसमें परकाशे निर्मल जोत॥
आनन्दकन्द मूरत सदा अडोल। तिसको सिमरे जाये भ्रम ख़ोल॥
मन को राखे पवन के संग। आवत जावत सुने शबद परसंग॥
स्वास स्वास प्रभ नाम ध्याई। कठन मन को नित जाप लगाई॥
जाप अजपा गुर जुगत से पाई। सिमर सिमर मन कलह वँजाई॥
साचे नाम की ज्यों आवे परतीत। मिथ्या नाम रूप जाय भरम पलीत॥
दृढ़ नीयम हरजन नित राखे। स्वास सुरत मिल नाम को चाखे॥
आहार ब्यौहार जुगत का धारी। साचा निहों प्रभ चरन विचारी॥
उट्ठत बैठत सतनाम को गाई। स्वास स्वास में करे टकराई॥
गुर की जुगती प्रन से बूझे। साचे नाम की रसना सूझे॥
मन राखे नित नाम गोबिन्द। करमजाल से छूटे जिन्द॥
निर्मल चित सतनाम को ध्याई। अंतर बाहर सम प्रीत कमाई॥
कारन करते की नित करे वडयाई। रुच रुच साचा नाम कमाई॥
संगत निर्मल विचार शुद्ध धारी। पर उपकार सत साधन विचारी॥
शुद्ध करम ज्यों चित राखे। निश्चय दृढ़ सतनाम को चाखे॥
ज्यों ज्यों मन का जाये ग़ुबार। प्रीती उपजे प्रभ नाम आपार॥
सिमरे नाम मन धीर समाई। बाहरमुख त्याग अंतर को आई॥
प्रभ के नाम की महमा अत पाई। उट्ठत बैठत नहीं पल विसराई॥

**मन का डोलन तब जाये, जब सतनाम प्यार।**
**'मंगत' पल पल जो जपे, पाये आलख शबद आपार॥ 636**

मन को राखे संग स्वास की धार। स्वास में सिमरे सतनाम अपार॥
गुपत नाम नित ही विचारे। केवल सिमरे स्वास आधारे॥
मन की धारन जब शुद्ध होई। भयो इकागर सतनाम परोई॥
निश्चल चित जब नाम विचारी। आनन्द की खानी घर खुली पटारी॥

स्वास सुरत मिल किया हलोल। नाभी अस्थान में पाई कलोल॥
सुखमन नाड़ी ने मुखड़ा खोला। अबनाशी शबद तब उदर में बोला॥
मीठी धुन जब शबद गुँजारी। निश्चल बुद्धी काया कम्पारी॥
बिस्माद हलोल शबद घर कीनी। गुर का दास ये रंग रंगीनी॥
सिमरन नाम पल पल को धारी। घट में शबद अत करे गुँजारी॥
अमरत रूप घर अन्तर पेखा। गुरमुख कीजे छिन छिन लेखा॥
साची जुगत में पाया विश्वास। साचा नाम भयो परगास॥
नाभ कँवल जब नागन जागी। विषे त्याग सो भया बैरागी॥
शबद सरूप संग हेत अधिकाई। तिसमें लीन मन को सुख भाई॥
सकल जंजाल से पाई ख़ुलासी। घर में परगट जब पाये अबनाशी॥
सरूप अनुभव की अवस्था ये ही। सुरती उलट नाभी थल लेई॥
छिन छिन वाँ में करे कुलेल। जनम जनम की धोए मैल॥
तब सतनाम संग हुआ प्यार। गुरमुख गावें पल पल की सार॥
जिस पलक मन शबद को खाई। वाह परसन्ता उस घड़ी में आई॥
चौधां लोक में वस्त ना कोई। जिसका परमान तिस तुल होई॥
घर में ठाकर चमक दिखाई। हरजन बिरह पाई अधिकाई॥
चंचल मन को शबद में राखी। दृढ़ निध्यास जतन ये भाखी॥
पाप करम मन मैल गँवाई। निष्काम सरूप सुगन्धत पाई॥
उट्ठत बैठत प्रभ नाम पुकारे। मोह माया की मैल उतारे॥
मारग योग का सही पछाता। गुर परसाद भयो रँगराता॥

**नाभ कँवल परगासया, शबद सुनी टंकोर।**
**'मंगत' चला निज धाम को, छाड कलपना शोर॥ 637**

दृढ़ अभ्यास गुरमुख पाये। पल पल साचा नाम प्रभ गाये॥
दुर्मत छाया ज्यों ज्यों छीजे। शबद अघोर घट अन्तर सीजे॥
शबद हलोल ऊँची उठ धाई। छाड पिण्ड ब्रह्मण्ड समाई॥
सूक्षम धुन तिरबैनी गुँजारे। गुरमुख देखे घर खेल अपारे॥
ऐसी जुगत जिस जन लखाई। सुपन माहीं नहीं काल डराई॥
जतन जतन कर मन को जोड़े। त्रिकुटी महल में पाये सरूरे॥

साचे नाम में नित मख़मूर। पल पल शबद में होये अरूढ़॥
प्रभ की आज्ञा पल पल विचारे। चंचल मन की दुर्मत टारे॥
मन को राखे सत शबद परोई। तब ये काया निरमल होई॥
मुक्त महासुख किया विचार। त्रिकुटी अन्दर सुना शबद गुंजार॥
संकल्प विकल्प शून समाये। अकल्पित ध्यान शबद लखाए॥
इन्द्री विकार से मन को थामे। शबद अनादी परसे सुख धामे॥
बहुरंग नाद करे किलकार। सुन सुन गुरमुख भयो मतवार॥
माया बन्ध का निरना पाई। त्रिबैनी घाट जब शबद सुनाई॥
करम विकार से भयो छुटकार। अद्भुत शबद सुनी किलकार॥
बहुरंग चानन घर में दिखलाई। अजब गम्भीरी जीव ने पाई॥
उट्ठत बैठत निश्चल ध्यान। विरत इकागर सतनाम का पान॥
दृढ़ पुरषारथ गुरमुख धारी। साचे शबद में लीन विचारी॥
इन्द्री ज्ञान अंतरमुख होई। शबद अखण्ड धुनकार सुनोई॥
घनी उदासी मन तन समाई। मिथ्या देही तब ही दिखलाई॥
देह परकाशक भिन्न कर जाता। अनहद नाद शबद सुखराता॥
पूरन भाग जो ये गत पाये। रुच रुच तिसके चरन समाये॥
जुगत मुकत दोनों का ज्ञाता। त्रिकुटी अन्दर जब नाद पछाता॥
भयो मख़मूर साहब के रंग। कामना त्याग भया निहसंग॥

**पिण्ड छोड़ जब ब्रह्मण्ड चढ़ा, शबद सुनी घनघोर।**
**'मंगत' निश्चल ध्यान में, सूझत ना कोई ठौर॥ 638**

करम का बन्धन नित नित तोड़े। आज्ञा प्रभ की चित में जोड़े॥
सुरत अडोल शबद रस पीये। शबद ध्यान में जीवन जीये॥
पल पल साहब नाम चितारी। हरजन चरनी होवे बलिहारी॥
सरब जगत की धूड़ रमाई। मान त्याग निर्मान समाई॥
शबद आधार जीवन को पाई। पल पल में निज सुरत लगाई॥
करम फल इच्छया से भयो विरक्ता। अनासुरत करम में रहे संजुगता॥
तीखन सुरती नित गगन रहाई। आलख शबद की निरखे प्रभताई॥
शबद घनघोर करी दसवें द्वार। झिलमिल जोती पाई निरंकार॥

अरूढ़ ध्यान में शून समाई। सुन्न समाध अमीरस पाई॥
नित इकान्त मन मगन रहाये। शबद घनघोर अत वेग लखाये॥
बजे मिरदंग नफ़ीरी तान। कड़के मेघ जन भये ग़लतान॥
मन की वासना सकली नास। पायो ठाकर अद्भुत परगास॥
भूख प्यास सब निन्द्रा भागी। शबद अखण्ड में सुरता जागी॥
दु:ख सुख देही पर पाई जीत। गुर के बचन आई परतीत॥
घर में घर को गुर दिखलाया। अनहद नाद रतन चित पाया॥
सकल विखेपत जीव की नासी। कोट भान सम छबी परगासी॥
दीनदयाल परमेश्वर पूर। दसवें द्वार में नित बाजत तूर॥
पाँच तत सब एका होई। शबद ध्यान अरूढ़ परोई॥
बस्ती जंगल ना कुछ भाये। सुन्न समाध शबद रस खाये॥
रोम रोम में नाद गुँजारी। गुरमुख विरले पाई ये कारी॥
सकल विकार से भया अतीत। आलख शबद आई परतीत॥
नित आनन्द प्रभ दर्शन पाई। पल पल तिसके चरन समाई॥
जीवन मरन भय सब नासा। ब्रह्मनाद में लियो निवासा॥
कहन ना आवे कथनी नहीं पाये। अगम सरूप परतक्ख दरसाये॥

**शबद सुरत एको भई, पाँच भूत भये लीन।**
**'मंगत' ऐसी गम को, कोट मद्धे कोई चीन॥ 639**

प्रभ का दर्शन जिसने पाया। ताप त्याग आनन्द समाया॥
वडी वडयाई हरजन लीनी। हर के सरूप बिन और ना चीनी॥
शबद घनघोर मन हरे व्याधी। उट्ठत बैठत नित रहे समाधी॥
धुर की बानी ने धुर पहुँचाया। बिछड़ा जीव प्रभ रूप मिलाया॥
महमा अपरम उस देस की मीता। जाँ में वसया पुरख जगदीशा॥
जिस जाना सो जाने परताप। अमरत पीये सतनाम का जाप॥
मिरतक रूप से अमरपद पाया। सरब परकासी ठाकर दरसाया॥
परमगती तब जीव ने पाई। प्रभ के चरन जब लीन समाई॥
द्वैत भरम सकल भयो नासा। अंतर बाहर प्रभ परकासा॥
द्वन्द त्याग समदृष्ट समाई। शबद की गमता तब हरजन पाई॥

सुरत गम्भीर मन लीन समाई। अनहद नाद घर दर्शन पाई॥
बहुरंग तान शबद नित बोले। पूरन भाग कोई गुरमुख तोले॥
सच सोहाग ठाकर तब पाया। दर्शन करके जन तृपताया॥
शबद ख़ुमारी में नित मतवाला। एक ध्यान चित रहे विशाला॥
परमानन्द भयो तन मन माईं। अबगत रसना नहीं वरनी जाईं॥
जिस जाना सो पुरख घन्हैया। दुबधा त्याग सत रूप रमैया॥
समरस पान करे नित ज्ञानी। शबद ध्यान पल पल बखानी॥
आनन्द सरूप शबद की भेंट। सकल विकार चित गये विखेप॥
आनन्द परापत आनन्द होई। निर्मल दिसा पछाने कोई॥
खिमा सरूप प्रेम का सागर। दसवें महल जिस पाई उजागर॥
समदृष्टी ब्रह्म तत्तवेत्ता। तिसका दर्शन सब हरे विखेपा॥
सत परमेश्वर की शक्त दिखाई। शान्तसरूप सतपुरष मिलाई॥
तिसकी महमा गुनी वेद विचारे। प्रभ का ज्ञाता प्रभ रूप लखारे॥
माया व्याध ना तिसे व्यापे। अखण्ड ध्यान शबद रस जापे॥

**शबदे शबद मिल चानन भयो, भरम अंधकार सब दूर।**
**'मंगत' सो सतधाम है, कोई परसे गुरमुख सूर॥ 640**

सत का चोला गुरमुख धारी। साचा जतन पल पल विचारी॥
सत मारग में नित परबीना। सत ध्यान में नित लवलीना॥
करम विकार प्रभ आज्ञा में त्यागे। निहकर्म सरूप में नित नित जागे॥
शबद ध्यान में नित रहाई। सत परतीत बौहड़ गरभ ना पाई॥
छिन छिन सुरती शबद रस पीये। ज्ञान विज्ञान में जीवन जीये॥
सकल वियाधी पर जीत लखाई। सत शबद प्रभता घर पाई॥
पलक ना विसरे शबद की धारा। सुरती राखे धारे जतन अपारा॥
जीवत मिरतक दिसा पछानी। निर्मल शबद में लीन समानी॥
देह विकार से भयो जीव न्यारा। शुद्ध सरूप पायो निरंकारा॥
दसवें घाट भयो मंगलाचार। अबगत रूप प्रभ किया विचार॥
सुरत गम्भीर शबद रस खाई। आगे सुन्न शिखर को धाई॥
सतलोक ये अनामी धाम। ब्रह्म सरूप भई सुरत निष्काम॥

सुरती अपना आप गँवाया। सत ठाकर संग मेल मिलाया॥
कथी ना जाई कथा अपार। वाजे भेरी शबद गुंजार॥
दृष्टा भाओ सुरती का नासा। ब्रह्म सरूप हो किया परगासा॥
गुरु शिष वहाँ भेद ना रह्या। केवल रूप अगाध रमया॥
ज्ञाता ज्ञान वहाँ कछु ना रहाई। केवल शून्यंगकार समाई॥
पूरन पुरख मूरत बलिहार। इक रंग नाद करे किलकार॥
विरला कोई वहाँ जाये समाई। पूरन मिलके पूरनगत पाई॥
जाननहार ना जाना रहाई। अद्भुत रूप निरवाच लखाई॥
जोती जोत अबगत परगास। अपना आप पुरख निरवास॥
कहन सुनन कुछ बन ना आई। पारब्रह्म केवल रमनाई॥
अखण्ड रूप पद परले पार। एक दो नहीं भेद विचार॥
केवल रूप पूरन का पूर। आलख शबद अनहद तूर॥

**ऊँचे शिखर समाया, जाँ केवल शबद अखण्ड।**
**'मंगत' एको पाया, जो धारे पिण्ड ब्रह्मण्ड॥ 641**

अबगत रूप में लीन समाई। द्वैत कलपना सब बिनसाई॥
नित आनन्द नित परगास। समरस रूप शबद अबनास॥
सतगुर सेव सब तृखा निवारी। पूरन पुरख के चरन बलिहारी॥
दु:ख रोग सब भये विनास। पायो ठाकर शबद परगास॥
आवागवन का चक्कर मिटाई। गुर परताप परमगत पाई॥
परम जुगती घट शबद की सेव। भरम त्याग भयो निरभेव॥
सबसे ऊँचे लोक समाया। अपना दर्शन आपे पाया॥
सबसे न्यारा होये समाई। दृष्टा दृष्ट मिटी सब काई॥
अपनी शकत भया भरपूर। द्वैत भरम माया काफ़ूर॥
शबदे शबद भया ज्ञान। एक ना दूजा मिले निशान॥
पूरन रूप पूरन सब रंग। पूरन भयो सुन पूरन परसंग॥
बन्धन छूटा जन भया निहाल। पूरन भाग प्रभ मिले दयाल॥
सत साजन नित उठके धाओ। आनन्दसरूप का मंगल गाओ॥
जनम कदारथ प्रभु नाम चितार। साचा शबद मन भेद विचार॥

पाँच दोख सब ताप विनास। भज परमेश्वर अज अबनास॥
सिमरो नाम परम सुखरीत। सतगुर बचन में धर परतीत॥
नाम ध्यान नाम ही योग। अनहद नाद नाम का भोग॥
साचा नाम जिस मन पतयाया। गवन त्याग सतलोक समाया॥
उट्ठत बैठत प्रभ नाम सनेही। दुर्लभ कीरत जग में ये ही॥
सब साजन मिल नाम कमाओ। भवसिन्धू से निस्तर पाओ॥
माया जाल का अत बिस्तार। सिमरे नाम पाये छुटकार॥
साचा ठाकर मन में राख। मारग मुकत की रसना चाख॥
खोजत खोज पाई ये सार। प्रभ का नाम सब जगत आधार॥
पूरन भाग जो नाम ध्याई। काल त्याग अकाल समाई॥

**मारग परसा अगम का, जो अत तीखन बाट।**
**'मंगत' दृढ़ विश्वास से, हरजन लीना खाट॥ 642**

अदृष्ट पुरष का दर्शन पाया। दृढ़ विश्वास ने ये फल लाया॥
साध संगत मिल कीजो विश्वास। सतनाम की नित करो अरदास॥
बन्ध ख़ुलासी जीव ये पाए। जनम जनम की दूखन जाए॥
साचे नाम का मन धर आधार। साची सिखया सुन बारमबार॥
साचे नाम की अत ऊँच वडयाई। जो जो सिमरे सो ही गत पाई॥
वैतरनी नदी ये इच्छया की धार। लख चौरासी भरमे संसार॥
मिल सतगुर जब नाम ध्याई। निष्काम सरूप नौका को पाई॥
सत पुरषारथ प्रभ चरन प्रीत। उतरे पार भव गहरी भीत॥
और उपाय ना कोई सुखरास। आवागवन मिटे गरभ निवास॥
करम का चक्कर पल पल फिराई। भरम का बाँधा नित संकट पाई॥
साची भगत प्रभ नाम विचार। वैतरनी असगाह से उतरें पार॥
नित सिमरो नित धरो ध्यान। साचा ठाकर रूप कल्यान॥
जो नहीं प्रभ का नाम ध्याई। पशु समान जीवन विताई॥
जो नहीं राखे प्रभ चरन आधार। आवे जावे जग बारमबार॥
जो नहीं निश्चय सत रूप में पाया। भरम का बाँधा सो नित भरमाया॥
सुकृत सीख ये करो विचार। पार बिशम्भर सिमर मुरार॥

घनी सयानफ़ दुर्लभ ये ही। भज करतार सुख जीवन लेई॥
दुस्तर मन नहीं आवे वाट। नित ही भरमे विच नाना घाट॥
जब सतनाम का टाँक लगाया। मन विकराल तब घर में आया॥
निर्मल मारग प्रभ नाम ध्यान। जो जो सिमरे पाये कल्यान॥
निमख निमख निश्चय ये राख। साचा नाम निरंतर चाख॥
साहब साचा सदा दयाल। सरन पड़े को करे निहाल॥
साची रास प्रभ नाम की खाट। करम बन्धन से मुक्ता पात॥
नाम सिमर प्रभ तत्त गत सार। बन्धन छूटे पायें मुक्त द्वार॥

**निर्मल कीरत नाम की, मन चित लयो ध्याये।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, बौहड़ गरभ नहीं पाये॥ 643**

## ग्यारहवाँ अध्याय
## परमगती निधान

एक परमेश्वर दृढ़ चित ध्याया। परमगती का निरना पाया॥
केवल रूप प्रभ सत कर मानी। परमगती पाई सुकृत बानी॥
दीनदयाल के चरन जब भेटें। परमगती आनन्द को लेखे॥
शुद्ध निश्चय प्रभ नाम प्यार। परमगती पाई तत्त सार॥
करम का बन्धन जिस दीना तोड़। साची प्रीत प्रभ की चित जोड़॥
करता हरता ठाकर ध्याई। इच्छया नास परमगत पाई॥
सरब सरूप जब राम पछाता। परमगती सो ही सुखराता॥
प्रभ की आज्ञा में सब कुछ देखे। आपा त्याग सत शबद को लेखे॥
द्वन्द विकार सब करम विनासी। परमगती तब हिरदे भासी॥
काल सरूप इच्छया का ताप। तिसको त्याग प्रभ एक को जाप॥
अन्तरगत में नित धरे ध्यान। परमगती पाई शबद निधान॥
अंतर बाहर जब एक समाई। तीन भवन में सत शबद लखाई॥
करम त्याग निहकरमत जानी। परमगती सो जन पहचानी॥
एक परमेश्वर का चित अनुराग। झूट जगत से ले बैराग॥
आनन्दसरूप घट अंतर पाई। परमगती तब भेद लखाई॥
पाप पुन्न का बीज विनासे। अंतरगत नित शबद उपासे॥
निहचल ध्यान घट लीन समाई। परमगती तब हरजन पाई॥
करम फल इच्छया ममता त्याग। आज्ञा प्रभ की समता में लाग॥

करम करूर नहीं हिरदे जाप। परमगती का तब पाये परताप॥
साचे नाम में प्रीत अधिकाई। दिवस रैन पल घड़ी ध्याई॥
एक पलक नहीं विसरन पाये। इस्थिर रूपगती तब ध्याये॥
चित के औगन पल पल धोई। साची कीरत प्रभ चरन परोई॥
तज अभिमान निर्मान समाई। नाम ध्यान सत सेवा पाई॥
आतम तत्त में जब लीन हो जाई। आनन्द सरूप तब परमगत पाई॥

**सत सरूप परमात्मा, परतक्ख कर जब ध्याये।**
**'मंगत' मिटे सब वासना, जीव परमगत पाये॥ 644**

ममता ताप जब मन से निवारी। राग द्वेष की भरमन टारी॥
ग्रहन त्याग के परे समाई। समता ज्ञान परमगत पाई॥
शुद्ध सरूप शबद जब ध्याया। अंतरगत तिस माहीं रमाया॥
देह विकार से न्यारा होई। चेतन परगास परमगत सोई॥
काल करम जाँ ना व्यापी। इच्छया दोख जाँ कभू नहीं तापी॥
नित सरूप जो नित न्यारा। परमगती सो करो विचारा॥
सर्वज्ञ रूप करके पसरया। नित अनादी रूप विचरया॥
उतपत परलय जाँ नहीं काजा। परमगती सो पार समाजा॥
नित अकर्ता नित न्यारा। माया परे जिसका पसारा॥
अबगत अनामी पुरख अखण्डा। परमगती सत शबद आनंदा॥
जाँ में सुरती लीन समाई। कभू विखेपत व्यापक नाही॥
शुद्ध सरूप आप बलधारी। परमगती सो ही रूप निरंकारी॥
अपने आप जो केवल व्यापा। द्वन्द विकार जाँ नहीं संतापा॥
दूजी दृष्ट जाँ लीन समाये। परमगती सो ही कहलाये॥
अबगत रूप ठाकर का जोई। घट घट व्यापे नित निर्मल होई॥
आनंद सरूप शबद परगास। परमगती सो ही अबनाश॥
सत सरूप सो ही सत धामा। अपरम अपार पुरख निष्कामा॥
अपना तेज आपे परगासे। द्वैत भरम वहाँ कछू नहीं भासे॥
बिमल शबद सत सारंग बानी। परमगती नर सो ही पहचानी॥
नित अद्वैत नित निर-आधारा। सदा अजन्मा रूप निर-आकारा॥

अपने आप में आप ज्ञाता। आदी पुरख परम समराथा॥
घट घट रमिआ निज आप सुभाए। सो पुरखोत्तम गति परम कहलाए॥
रोम रोम में जो परगासी। अचल अछेद पुरख अबनासी॥
सतगुर मेल घट सोझी पाए। शबद परापत गति परम समाये॥

**आनन्दसरूप परापती, जाए करम भरम का ताप।**
**'मंगत' सो परमागती, शुद्ध रूप में लीन समात॥ 645**

करम भरम ताँ का भयो पूरा। घट में पायो सत शबद हज़ूरा॥
शबद परीती ये साचा विवेक। नेहचल ध्यान राखे सत टेक॥
अन्तर बाहर सम कर ध्याई। पारगरामी सत रूप आगाही॥
मन की भरमन सकल निवारी। सुरती बाँध सतनाम विचारी॥
अंतर ध्यान में लीन समाई। गगन सरोवर जल पान कराई॥
साखी पुरष संग मेल मिलाई। निर्मल प्रीत पल पल कमाई॥
पूरन पूर शबद परगास। गुर का पूत वहाँ करे निवास॥
काल को मार अकाल समाई। शबद परापत विजे लखाई॥
रंग रंग नाद नित करे पुकार। गुर परसादी पाई गत सार॥
सरब महमा का भेद लखाया। अनहद नाद घर परगट पाया॥
साचा सोहला गाओ नित नीत। निर्भय पुरष का साचा गीत॥
माया दूषन सब उठ भागी। साचे शबद का भयो अनुरागी॥
दु:ख सुख परे परमगत ध्याई। साखी शबद सत रूप आगाही॥
अगम अगोचर बानी परगासी। पूरन करम निर्भय निवासी॥
शबद की रसना मन तन समाई। शबद का भोजन नित नित खाई॥
शबद संघासन पर आसन धारी। सरब गत पूरन शबद विचारी॥
ऐसे भाग हरजन ने पाए। दुर्मत त्याग हर चरन समाए॥
वडी वडयाई पाया तिस योग। शबद परापत भयो अरोग॥
भरम की फाँसी सब भये ख़ुलास। शबद सरूप पाया अबनास॥
अबगत रसना जिन अंतर पाई। अमरत भोजन नित नित खाई॥
अधिक बिछोड़ा प्रभ मेल मिलाये। पूर मनोरथ मंगल चित गाये॥
साचा ठाकर घर विच पाया। पूरन करम सो जन जग आया॥

दुबधा नास सतधाम समाई। पूरन किरपा सब ताप मिटाई॥
अबनासी पुरष संग कियो बिसरामा। परमगती लखयो सतधामा॥

**आवागवन को त्याग के, मन निज रूप समाये।**
**'मंगत' दुर्लभ जगत में, सो परमपुरष हैं आये॥ 646**

बिना शबद जीव नित भरमाये। करम की फाँस धर आवे जाये॥
बिना शबद जीव नित कलह धारी। ग्रहन त्याग की लगी ख़वारी॥
बिना शबद नित तृखा समाई। भोगे भोग शान्त नहीं पाई॥
बिना शबद जग सूझे नहीं पार। खप खप मरे विच कूड़ विकार॥
बिना शबद नित संशा धारी। अन्ध विश्वास में अधीर लखारी॥
बिना शबद नर भ्रम कूप समाई। झूट भरवास में नित दुःख पाई॥
बिना शबद नहीं पाये ठिकाना। चलें निरास जग राजा राना॥
बिना शबद नहीं मिले छुटकारी। आवे जावे जून बहु धारी॥
बिना शबद घट नित अंधकार। डोले मनुवाँ बारमबार॥
बिना शबद कुछ सार ना पाई। संशे धार नित ही भरमाई॥
बिना शबद न निहचल होई। छिनभंगुर करम भरम डबोई॥
चिन्ता भय नहीं जाये ग़ुबारा। शबद बिना नित अंध अंध्यारा॥
शबद सरूप नारायन पेख। जरा मरन का मिटे भुलेख॥
सतगुर पूरे की प्रीत कमाओ। बिमल शबद प्रभ सोझी पाओ॥
अगन रूप ये है संसारा। शान्त सरूप केवल करतारा॥
बंधन रूप जगत की रचना। मिथ्या कलप वाँग है सुपना॥
संकट रूप जग आवन जाना। सिमरो गोबिन्द पायें सुख अस्थाना॥
तृष्ना वेग अधिक अधिकाई। बहू भाँत मनोरथ नित उपजाई॥
छूट सके ना छूटन पाए। माया भरम अधिक भरमाए॥
गुनी ज्ञानी नित करें पुकार। भज गोबिन्द सुख पावें अपार॥
सत के खोज बिन तृखा समाई। झूट कलपना नित भरमाई॥
सत विचार मन अगन निवारे। शान्त सरूप अन्तर वरतारे॥
मन का रोग नित करो विचार। औखद साचा मारग नित धार॥
जब लग मन में शान्त ना आई। परमगती कभू धाम ना पाई॥

**बन्ध ख़ुलासी जगत में, केवल मन परतीत।**
**'मंगत' मन निहचल भया, भव से पाई जीत॥ 647**

जब मन अपने की भूल गँवाई। आवागवन का चक्कर मिटाई॥
मन में रचना कुल संसार। मन को राखे मिले करतार॥
सतपुरषों की सिखया सार। मन को बाँधे ले जीत संसार॥
दुस्तर मन की नित करो निगरानी। सन्ताप सरूप ये मन डोलानी॥
शास्त्र सिमरत नित करें पुकार। मन को जीतन मुकत तत्त सार॥
मनमानी सब रचना त्याग। आज्ञा प्रभ की में उठ जाग॥
गरब ग़ुबार जो मन के दूत। तिनको त्याग पावें सुख रूप॥
काम क्रोध लोभ हंकार। मोह सरूप मन लश्कर धार॥
सत सील संतोख विचारी। खिमा बैराग धर लश्कर मारी॥
मिथ्या कल्प मन की रचनाई। नाम रूप गुन करम लखाई॥
साचे नाम की जोत जगाओ। मिथ्या कल्प सब होवे अभाओ॥
करम का भुगता मन नित रहाई। करम फल इच्छया में नित भरमाई॥
छिन हरखे छिन शोक विचारी। चंचल रूप अत विरती धारी॥
सकले करम प्रभ आज्ञा में त्याग। मन को बाँध सत मारग लाग॥
साची प्रीत प्रभ चरनी राख। आपा मेट सत शान्त चाख॥
अबनाशी पुरष जब घर दिखाई। चंचल मन तब लीन समाई॥
स्वारथ बुद्धी मन अगन बढ़ाए। भोग पदारथ अत सम्पत पाए॥
तिसके मध में मन नित मतवारी। सत कुसत नहीं कभूँ विचारी॥
कह बिध पाइये तिस पर जीत। अती भयंकर तिसकी रीत॥
सतगुर सिखया जब पाई सार। सत सरूप चित प्रीत विचार॥
झूटी देही सत आतम राम। आतम प्रीत मन करे निष्काम॥
अपना सुख दूजे वरतावे। पर-उपकारी जीवन को पावे॥
नरक स्वरूप स्वारथ बुद्ध नासी। निष्काम करम सत मारग भासी॥
परहित बुद्ध पाया परगास। जनम जनम की दूषन भई नास॥

**स्वारथ से मन डूबता, परमारथ दे निस्तार।**
**'मंगत' नित विचार के, कर साधन पर-उपकार॥ 648**

पर-उपकारी नित जीवन पाओ। परमगती की तब सार लखाओ॥
स्वारथ बुद्धी अगन त्याग। पर उपकार में उठ के जाग॥
झूट देही के सुख जो मीता। काल सरूप ये ही अनीता॥
देह के सुख से नहीं छूटन पाये। आतम सुख की नहीं रसना आये॥
देह के सुख से तब पावे शान्त। परोपकार जब धारे सिद्धान्त॥
देह के सुख से जब मन उकताये। आतम सुख की रसना तब पाये॥
देह मिथ्या सुख कहाँ नर होई। अती ग़ुबार अंध जीव परोई॥
झूट विकार से नहीं छूटन पाये। सुख की इच्छया में बहु रूप विटाए॥
देह सुख मिथ्या ना इस्थिर रहाई। भुगता जीव परम दुःख पाई॥
जो सुख देखे सो दुःख सरूप। भरम का बाँधा सहवे जम कूप॥
गुरमुख बुद्धी जब आई विचार। परसुख की चित सूझी कार॥
झूट सुख भरम से मुकत समाई। परसुख हेत कीरत चित आई॥
ज्यों ज्यों और का दुःख निवारी। अपने मन की मिटे ग़ुबारी॥
परसुख दे के मन शान्त समाई। साची कीरत प्रभ की तब पाई॥
परमानन्द सुख अनुभव होई। अपने घट में भयो प्रगटोई॥
पर-उपकार नित मारग साधी। जनम जनम की मिटे सब व्याधी॥
देह के सुख से जब उपरस होई। शबद भेद तब कथा परोई॥
सकल पाप की स्वारथ जड़ नासी। परोपकार तत्त ज्ञान परगासी॥
अतिअत वेग मन का बिनसाई। शुद्ध विचार की प्रीत लखाई॥
ज्यों ज्यों सोधे सत करम की रीता। सत परतीत मन होये पुनीता॥
इन्द्री भोग सुख बिख सम जानी। नाम की रसना जब करी पहचानी॥
साचा नाम जब पाया आधार। अबनाशी सुख पाया निरंकार॥
निर्मल चेता तिस चरन पिरोई। दुस्तर मन पर तब जीत लखोई॥
आलख शबद घर परगट पाई। तब ये मनुआँ गयो लीन समाई॥

**सत सरूप को पाये के, मन चंचल भयो अचिंत।**
**'मंगत' मिटी सब कल्पना, ले शबद ज्ञान अनन्त॥ 649**

साचा शबद जब घट परगासी। चंचल मन की विरत सब नासी॥
करम विकार से इकागर होई। साचा सुख प्रभ चरन परोई॥

दु:ख द्वन्द से पाई ख़ुलासी। घट में परसयो प्रभ अबनासी॥
आवन जावन सब बिपत निवारी। निश्चल रूप सत शबद विचारी॥
ग्रहन त्याग भरम भसमाई। सर्वज्ञ रूप में लीन समाई॥
लोक परलोक की इच्छया नासी। एक ब्रह्म पायो सरब निवासी॥
करम का संशय अत भरम मिटाई। निहकर्म सरूप मिल सतगत पाई॥
वैरी मित्तर की दुबधा टारी। साचा ठाकर सब में वरतारी॥
ऊँच नीच सब दुबधा नासी। समदृष्ट नित घट परगासी॥
बाहर मुख की सब भरमत छोड़ी। अंतरमुख प्रभ चरन चित जोड़ी॥
सकल जीयाँ का छाड भरवासा। एक साहब की धारी मन आसा॥
कूड़ी वस्त संग हेत ना रहाई। साचा नाम प्रभ हिये ध्याई॥
जीवन आस मरन भय त्यागा। सत सरूप में नित बिराजा॥
अपने सुख की ना इच्छया मानी। पर का हित पल पल बखानी॥
सरब जीयाँ का चरन-अमरत लेवे। चरनों की रज मन में सेवे॥
सबसे नीच आप कहलाई। प्रभ की कला सब में दरसाई॥
नरक स्वर्ग की गवना नासी। निश्चल ध्यान पाया अबनासी॥
त्रैगुन माया वैतरनी तरया। सत सरूप घर नज़री पड़या॥
तिसकी सेव पल घड़ी ना जाए। रुच रुच साची प्रीत कमाए॥
ममता भरम भूल चुकाया। सरब सरूप परमेश्वर ध्याया॥
सत कर देखा सत कर माना। अंतर बाहर सत पछाना॥
अखण्ड सरूप शब्द रस खाई। जनम मरन की भूख गँवाई॥
निर्मल इस्थित सत रूप विचारी। ब्रह्म प्रकास घट माहीं चितारी॥
सत को पाये जन सत समाई। परमगती निज रूप लखाई॥

**सत सरूप की सेव से, सकल विगन भये नास।**
**'मंगत' अखण्ड रूप प्रभ पाया, जो सरब करे परगास॥ 650**

साखी पुरष शबद जब ध्याया। त्रैगुन जाल तब लीन समाया॥
नित अरदास नित प्रीत कमाओ। स्वास स्वास सत शबद ध्याओ॥
अपरम अपार साहब की रचना। सरब बिस्तार से रहे अलपना॥
शबद ध्यान से मन लीन समाई। अच्छर अबगत घट दर्शन पाई॥

शबद अद्वैत अखण्ड निर्वाना। जो जो पूजे पाए कल्याना॥
सो ही धाम परमगत जान। साखी रूप कर हिये पछान॥
नित ही साची जुगत विचार। करो बन्दना प्रभ रूप आपार॥
सरब आधार पुरखोत्तम देव। पलक ना विसरो पूरन प्रभ सेव॥
सकल व्याधी परमाद विनासे। अबगत रूप मन माहीं उपासे॥
करम विकार से मिले ख़ुलासी। शबद सरूप भज प्रभ अबनाशी॥
महमा तिसकी नर कथी ना जाई। अपनी शकत में आप अथाई॥
बारमबार कर चरन डण्डौत। अपरम अपार सब घट अलोप॥
साची कीरत जिस मन आई। दृढ़ विश्वास प्रभ चरन ध्याई॥
तिस घर परगट होये स्वामी। खेम कुशल पद अन्तरयामी॥
आनन्द परापत जीवन बलिहार। पल पल दर्शन प्रभ चरन निहार॥
अजब सुगंधत फुली फुलवाड़ी। शबद सरूप घट माहीं किलकारी॥
पूरन भाग पूरन तत्त पाई। नित आनन्द प्रभ चरन समाई॥
आवन जावन मारग टूटा। गरभ निवास से हरजन छूटा॥
साचा ठाकर मन माहीं मनाया। दर्शन करके जीवन तृप्ताया॥
सब कुछ देखा साहब परताप। पल पल मन में कीना जाप॥
सकल सयानफ़ पूरन होई। घाल मुशक़्क़त फल अमर लखोई॥
पूरन पुरख की सेव विचारी। दीनदयाल के दर्शन बलिहारी॥
पूरन भाग पूरन पाई जुगत। हरजन परसी चित साची मुकत॥
अबनाशी पुरष परमेश्वर ध्याई। दुबधा त्याग तिस चरन समाई॥

**अबनाशी शबद पहचानया, जो काल करम से भिन्न।**
**'मंगत' परम आनन्द प्रभ, विसरे नहीं इक छिन्न॥ 651**

सिमर सिमर नित दीनदयाल। नित रखयक पूरन किरपाल॥
साची सरन तिसकी पहचान। मिटे विकार पावें कल्यान॥
जो कुछ माँगें साहब दरबार। पूरन पावें तिसकी दातार॥
साहब विसार करे माया सेव। जन्मे मरे नहीं बिनसे भेव॥
सुकृत सीख प्रभ चरन चितार। मानुष जनम पाया बलिहार॥
आप ध्याओ औराँ चितारो। आनन्द साखी साहब निर्धारो॥

दिवस रैन सत धर भरवास। जनम जनम की काटे प्रभ फाँस॥
अपनी हिकमत सकल निवार। भावी साहब हिरदे चितार॥
दुस्तर जाल माया बिस्तारी। सिमर गोबिन्द पावें निस्तारी॥
वेद ग्रन्थ नित करें दुहाई। भज परमेश्वर परम सुख पाई॥
झूटी माया का भरम त्याग। साखी पुरष के चरनी लाग॥
अन्तर व्यापे घट घट की जाने। तिसकी सेव देवे कल्याने॥
बारमबार पल घड़ी ध्याओ। दुर्लभ जीवन जग में पाओ॥
इस जग में नहीं इस्थित रहाई। साचा वनज नर लियो कमाई॥
जनम जनम का पँध छुटारी। भज परमेश्वर किरपाधारी॥
जिसकी शकत में सब कुछ देखे। रंग रंग खेल पल पल में पेखे॥
सरजनहार भज पुरख मुरार। तपन विनास पावें सुखसार॥
झूटी बनत ये जग का खेल। नित विछोड़ा है पल का मेल॥
साचा स्वामी जो संग नित रहाई। तिसका सिमरन नित शांत लखाई॥
ध्याओ ध्याओ सत शबद विवेक। साची प्रीत से राखो तिस टेक॥
सकल मनोरथ पूरन पाई। साची प्रीत प्रभ चरन ध्याई॥
साचा नाम रिद्ध सिद्ध दात। तिसका सिमरन सुख सार लखात॥
परमगती सत शबद अनूप। तिसका ध्यान हरे भ्रम कूप॥
पूरन पुरख सो पूर समाया। साचा शबद जिस मन में गाया॥

**नाम साहब का सिमर के, तन मन भयो निहाल।**
**'मंगत' गत पूरन पाई, जब सत ठाकर भयो दयाल॥ 652**

अगोचर शबद की कथा विचार। पल पल घट में जो करे पुकार॥
निर्मल बुद्धी सतनाम को धारी। आलख शबद की जब कथा विचारी॥
अनहद नाद करे किलकार। उनमुन मन्दर में दीप उजियार॥
बिन बाती तेल दीपक परगासे। बिना देही वहाँ पुरष बिलासे॥
बिना कारन वोह पुरष दिखाई। अपनी आप धरे प्रभताई॥
चंचल सुरती लीन समाई। आलख पुरष की पाई सरनाई॥
भाँत भाँत शबद गुंजारी। बजे दमामा मेघ किलकारी॥
मिटी सयानफ़ जीव की गवना। सतनाम संग सिमरा पवना॥

आध व्याध उपाध निवारी। गुर के शबद में प्रीत विचारी॥
ज्यूँ ज्यूँ सुरती शबद रस खाये। ममता त्याग सम्मत चित पाये॥
ज्यूँ ज्यूँ शबद गुँजार विचारी। करम त्याग भई निरधारी॥
अपने आप की सोझी पाई। अजर पुरष घर माहीं मिलाई॥
सकल जगत का ठाकर जोई। झिलमिल दर्शन घट में होई॥
अनहद नाद गगन में खेले। कोट मद्धे कोई सार को मेले॥
परमगती सो ही सुखधामा। पुरख अनादी शबद सतनामा॥
पूरन भाग कोई भेद विचारी। भँवर गुफा में आसन धारी॥
नाद निरत अचम्भा खेले। लख लख सुरती भई अलबेले॥
अद्भुत शबद सार लखाई। सुरती अपना आप गँवाई॥
चार वेद सिमरत नित ध्याये। आलख शबद का पार नहीं पाये॥
कोटक कोट भये अवतार। शबद की महमा कथें अपरम अपार॥
कोटक सिद्ध तपीशर आये। शबद ध्यान मन मगन समाये॥
कोटक ज्ञानी कथें ज्ञान। कथा अद्वैत नित करें बखान॥
कोटक जोगी नित योग कमाये। शबद भेद नहीं वरनन पाये॥
तीन भवन में शबद किलकारी। जो जन परसे फिर गरभ ना धारी॥

**शबद ज्ञान को नित कथो, शबद ध्यान नित धार।**
**'मंगत' तत्त निर्वान ये, जो कथे सो उतरे पार॥ 653**

साचा शबद जब परगट ध्याई। गुरमुख चोला सो जन पाई॥
साची भगती पाई अमोल। चंचल मुनवाँ भया अडोल॥
पूरन ज्ञान की परखी सार। साचा शबद जब सुना गुंजार॥
सब घट भौर नित गुंजारे। सतगुर सीख बिन नहीं लखारे॥
पूरन पुरख जब मेल मिलाया। अनहद नाद रतन प्रभ ध्याया॥
पलक पलक में उनमुन बासे। पारब्रह्म संग करे निवासे॥
एक पलक ना सुरत डोलाये। उनमुन मन्दर रहे समाये॥
सो तत्तवेत्ता ज्ञान परबीन। अगम निगम की रसना चीन॥
बन्ध मुकत का भेद लखाई। उनमुन घाटी जो समाई॥
नित सम सरूप शबद रस खाई। अपने आप में पाई प्रभताई॥

इच्छया करम से भया पुनीत। सतपुरष सो गुना-अतीत॥
सुरत समागम शबद अखेद। पल पल विचारे तिसका भेद॥
मन का संसा मिटा संसार। शबद ज्ञान सुन भेद आपार॥
आलख आपार शबद ज्ञाई। सुन्न समाध अमीरस खाई॥
एक धुन शबद चित लीना। अकाल पुरख के रूप को चीना॥
निरबन्ध जीवन शबद ध्यान। परम परसनता सत शबद ज्ञान॥
मारग गुपत अगम का मीता। पुरख पुरातन जाँ रमनीता॥
निर्मल बुद्धी पाया परगास। अबगत ठाकर के चरन निवास॥
नाद सरूप आकास की बानी। गुरमुख विरले करी पछानी॥
जिस जानी ये बानी अनूप। संशा त्याग भया आनन्द सरूप॥
बानी की खोज ब्रह्मा नित धारी। बानी की खोज शिव भये मतवारी॥
बानी की खोज सनकादिक लवलीना। बानी के ध्यान नित विषन रमीना॥
कोटाँ कोट साध तपीशर। नबी वली ग़ौस जोगीशर॥
निराकार बानी अगम अनाद। सत सरूप अत बिसमाद॥

**शबद सरूप को सिमर के, भव उतरे गुनी अनन्त।**
**'मंगत' शबद तत्त सार है, साखी रूप भगवन्त॥ 654**

साची जुगत पछानो नीत। साचा ध्यान लख शबद पुनीत॥
मिल सतसंग सत कथा विचार। साखी शबद नित भेद चित धार॥
सच्चदानन्द मुकन्द अबनासी। तिसका सिमरन कटे चौरासी॥
अत निकट नर घट समाई। तिस को खोज बाहर क्यों जाई॥
ऐसी करनी नित मन धार। दरस पावें पूरन करतार॥
मन अपने की मैल त्याग। पर-उपकार मारग में जाग॥
इन्द्री रसना भोग दुःखदाई। करो विचार साचा सुखदाई॥
साचा नाम परमेश्वर चित गाओ। कारन करता कर रूप ध्याओ॥
जड़ देही को जो सरजनहारा। सरब शकत सिमर करतारा॥
जिस आधार जग रचना देखें। तिसकी प्रभता सब माहीं लेखें॥
वैर त्याग नित प्रीत विचार। सरब जीयाँ में साँझ को धार॥
भला विचार करो भली कार। जग आवन की खाटो सार॥

माया भरम को देख ना भूलो। धन जोबन पाये कभू ना फूलो॥
छिन में उड़ जाये धूड़ समान। करो विचार नित चतर सुजान॥
साचा ठाकर जिस बनत बनाई। तिसका सिमरन परम सुखदाई॥
गुनी ज्ञानी नित करें पुकारी। साचा नाम नित सिमर मुरारी॥
दृढ़ नीयम प्रभ सिमरन धार। साची प्रीत मन धर उपकार॥
प्रभ की आज्ञा में सब कुछ देख। हंग बुद्ध त्याग सत मारग पेख॥
साची कीरत जब चित समाई। शबद सरूप तब परगट पाई॥
शबद परापत मन होये निहाल। साहब पाया घर दीनदयाल॥
बन्ध ख़ुलासी का मारग ये ही। साचा करम पायें शबद सनेही॥
सब जीवों पर दया विचार। आज्ञा प्रभ की मन में धार॥
पल पल साहिब नाम चित गाओ। भाओ प्रीत सत भगती पाओ॥
धार ग़रीबी प्रभ दरसयो अपार। दुर्लभ आया सो जन संसार॥

**प्रभ अपने संग जा मिला, त्याग भरम का पाट।**
**'मंगत' अबगत रूप में, हरजन लीन समात॥655**

## सत सिखया संदेश

जीवगती सिद्धान्त ये, जो पढ़े सुने चित लाये।
मन राखे सतकरम में, फिर गरभ नहीं आये॥
बन्ध मुकत का भेद सब, पद पद कियो विचार।
जो कथे नित प्रेम से, पाए ज्ञान आपार॥
भरम भय दोनों मिटे, नित परसे शबद विवेक।
मन में धारे दीनता, राख सतगुर की टेक॥
मारग अगम निगम का, प्रभ हुकम से भयो विचार।
निर्मल मन नित राख के, सत निरना चित धार॥
कोट पाप को नास करे, जो बैठ सुने सतसंग।
पावे शुद्ध विचार को, चित चढ़े प्रेम का रंग॥
जीवगती का लेख ये, लिख चित बारमबार।
धरम करम की सूझ मिले, मन के मिटें विकार॥
असत माया का भरम जाये, सत पाए विश्वास।
निरनय सुन तत्त ज्ञान का, मन होवे धरम परगास॥

आध व्याध संकट मिटे, जीवन होए सुचेत।
अपने घट सोझी पाये, अबगत शबद अलेप॥
मारग शबद पहचान के, नित सुतन्तर रहाये।
जनम जनम जाये दूषना, पूर मनोरथ पाये॥

**कथा विचारो नित प्रती, प्रभ चरन राख आधार।**
**'मंगत' करनी सुफल ये, नित पाये जीव छुटकार॥ 656**

## चौथा प्रसंग - सतनाम प्रबोध मार्ग

**सतनाम प्रबोध मारग, मुकत ज्ञान तत्त सार।**
**'मंगत' महमा अगम सरूप की, प्रीत से करो विचार॥ 657**

सतनाम का नित लेख विचार। ज्ञान विज्ञान का मूल तत्त सार॥
सतनाम ध्यान की खोजो जुगत। सतनाम परापत पद जीवन मुकत॥
सतनाम विचार त्रैगुन खेद निवारे। अपरम अपार तत्त ज्ञान उजयारे॥
सतनाम विश्वास सब हरे सन्तापा। गुरमुख विरले घट सिमरन जाता॥
सतनाम सरोवर अमरत जान। अमर भये जिन कीना पान॥
सतनाम ठौर जुग जुग अनाद। काल करम वहाँ नहीं व्यापे परमाद॥
सतनाम सरूप अबगत अगाई। जो जो सिमरे तत्त रूप समाई॥
सतनाम की धारा बंधन सब नासे। अजर पुरष घट माहीं परगासे॥
सतनाम जुगत परम सुखदाई। सतगुर मेल परापत पाई॥
सतनाम की रसना मन भरपूरे। आसा तृष्ना भरम करे चूरे॥
सतनाम का साधन केवल सार। सिमरे नाम पाए सरजनहार॥
सतनाम की प्रीती प्रेम का सागर। बिरह विवेक करे चित में उजागर॥
सतनाम विवेकी सो ही तत्त ज्ञाता। गुपत सरूप प्रभ घर परगट जाता॥
सरब जतन में पूरन जतना। सतनाम प्रीती पाये सुख रतना॥
सरब विद्या की सार पछाती। जब सतनाम चित प्रीत लखाती॥
अगम निगम का भेद लखाया। सतनाम का सिमरन जब मन आया॥
मन को बाँधन की यथारथ रीती। सतनाम ध्यान में पाए प्रीती॥
दुबधा दुर्मत सब भरम विनासी। सतनाम की शोभा जब मन बिलासी॥
संशे भरम निकट नहीं आए। जब सतनाम मन माहीं कमाये॥

शत्रु वैरी सब सीस निवावें। वशीकरन जब सतनाम ध्यावें॥
तीन ताप की जलन भई दूरे। परम परतीत पाया सतनाम हज़ूरे॥
सतनाम प्रीती से अनुभव ज्ञाता। आलख पुरख प्रभ पाया विधाता॥
सो ही ज्ञानी सिद्ध पीर अवतारा। अखय सरूप जिस सतनाम विचारा॥

**ज्ञान ध्यान की सार है, सतनाम तत्त लेख।**
**'मंगत' भरमन तब मिटे, जब मिले यथारथ भेख॥ 658**

अक्षर ज्ञान परम विवेका। छर माया का मिटे भुलेखा॥
अक्षर रूप जब घर प्रभ पाया। ममता विकार भरम बिनसाया॥
अक्षर महमा गिनी ना जाए। वेद कुतेब सब लेख लखाये॥
एको अक्षर पद निर्वाना। जो जो सिमरे पाये मुकत निधाना॥
एक अक्षर शिव योग कमाई। एक अक्षर विरंच नित गाई॥
एक अक्षर सिद्ध बुद्ध विचारें। भरमन त्याग सिद्धगती पधारें॥
एक अक्षर में सब ज्ञान परगासा। अजर अमर और काल तमाशा॥
एक अक्षर में सब सिद्धी समाये। जो जो सिमरे बल तेज को पाये॥
एक अक्षर आधार चौरासी खाना। सरब-व्यापक तत्त अक्षर पहचाना॥
अक्षर भेद जब जानत पाई। गवन त्याग सत ठौर समाई॥
नाम रूप सब जगत पसारा। बिनसनहार नित करो विचारा॥
अपरम शकत जो नित अनादी। अक्षर सो ही सतनाम बिसमादी॥
गुनी ज्ञानी जुग जुग आयें। सतनाम की महमा पल पल गायें॥
एको नाम तत्त अजर अबनास। भेद पछाने तब मिटे तरास॥
नाम में योग नाम में ज्ञाना। नाम ध्याये पाये कल्याना॥
एको नाम राखे हरजन भरवासा। एको नाम का सब भयो परगासा॥
एक नाम आकाश की बानी। इलहाम कहलाये कलाम रुबानी॥
एको नाम है कताब कुराना। एको नाम नबी वली पछाना॥
जीव का भरमन तब ही जाये। जब सतनाम की चित कथा लखाये॥
कोट जनम अंधकार नहीं जाई। तृष्ना बाँधा नित भरमाई॥
बंध ख़ुलासी नर कभूँ ना होई। बिन सतनाम नहीं शान्त लखोई॥
कोट तपीशर तप को धारें। कोट मुनी मुख मौन विचारें॥
कोट आचारी आचार ध्यायें। सतनाम ध्यान में सब सुख पायें॥
सत असत की सब नीती सार। सतनाम का पावें सब ही आधार॥

**गुनी ज्ञानी जपी तपी, राजा राना शूर।**
**'मंगत' सब ही विचरें, जप सतनाम हज़ूर॥ 659**

सतनाम मूल संसारा। सतनाम में सब बिस्तारा॥
सतनाम का अत परकाश। सरब जीवों में करे निवास॥
सतनाम अभेद अछेदा। सतनाम तत्त गावें वेदा॥
सतनाम अखण्ड अजूनी। सतनाम सरब पसरूनी॥
सतनाम अद्वैत अनादी। सतनाम तत्त अत बिसमादी॥
सतनाम पूरन का पूर। सरब समाया सो अनहद तूर॥
सतनाम जीवों की जान। सतनाम सब में परधान॥
सतनाम सब शकत दातारी। सतनाम आधार सरब सुखधारी॥
सतनाम केवल आनन्दसरूप। गुरमुख बूझे ये तत्त्व अनूप॥
सतनाम तत्त अपरम अपारा। रोम रोम में करे गुंजारा॥
सतनाम पद अगोचर बानी। पूरन भाग कोई करे पहचानी॥
सतनाम पद नित अकारन। सरब जगत का करता कारन॥
सतनाम नित सम परकास। हस्ती तृन में करे बिलास॥
सतनाम सरब का ज्ञाता। तिसका भेद किसे गुरमुख जाता॥
सतनाम जग जीवन सार। हरजन सिमरे पाये निस्तार॥
सतनाम मन तपन बुझावे। आवागवन का चक्कर मिटावे॥
सतनाम तत्त भरम को नासी। अभयपद बिमल शान्त परगासी॥
सतनाम मन निश्चल कीजे। भाओ प्रीती से जो जन सीजे॥
सतनाम जप कलह सब जाई। आनन्द सरूप जोती दरसाई॥
सतनाम घट नित परगास। साध सरन मिले भेद सुखरास॥
सतनाम तत्त अभय निर्वान। शुद्ध सरूप त्रैकाल पहचान॥
सतनाम तत्त नित निरवास। द्वैत भरम वहाँ नहीं तरास॥
सतनाम तत्त रूप अकाल। जो जन परसे होए निहाल॥
सतनाम तत्त जीवन परगासे। आतम रूप हो सब घट निवासे॥

**चेतन शबद सब घट व्यापे, नित आनन्द सरूप।**
**'मंगत' सो सतनाम है, कोई परसे गुरमुख रूप॥ 660**

सतनाम नित धरो ध्यान। सतनाम देवे नित कल्यान॥
सतनाम पल पल ध्याओ। संकट नास चित आनंद समाओ॥
सतनाम का पाओ नित विश्वास। जीवन सुफल पाये धरम निवास॥
सतनाम की घालन घाल। मानुष जनम की कीरत सत भाल॥
सतनाम नित कीजो जाप। घटे कलह बढ़े परताप॥
उट्ठत बैठत लयो नाम ध्याई। आनन्द सरूप मुकत पद पाई॥
जिन सिमरा प्रभ नाम अनामी। बंधन नास मुकत बिसरामी॥
साची कीरत कथा विचार। साचा नाम मन माहीं पुकार॥
नाम आधार जीवन सुखरास। भय त्याग निर्भय पद बास॥
नाम आधार नित विजे लखाई। ज्ञान विज्ञान की प्रभता पाई॥
नाम आधार मन पूरन होये। भरम त्याग नित शान्त समोये॥
नाम आधार मन परसे धीर। जनम जनम की नासे दुःख पीड़॥
नाम आधार मन सदा निहाल। पल पल सिमरे पद दीनदयाल॥
नाम आधार मन परसन होई। मिथ्या कल्पना भरम चित खोई॥
नाम आधारी सो सरबाजीत। विजे परापत पल पल मीत॥
नाम आधारी मन का सुख पाई। सत संतोख चित आन समाई॥
नाम आधारी पुरख गुनवंत। सत सरूप नित हिये जपंत॥
नाम आधार जिस जन ने पाया। कोट जीयाँ का ताप मिटाया॥
नाम आधार मारग आनन्द। भरम व्यापे नहीं दोख द्वन्द्व॥
नाम आधार जीवन नित राख। साध की सीख चित में भाख॥
नाम आधार नर कभूँ ना त्याग। नाम बिना चित संकट लाग॥
नाम की खोज सतसंग विचार। जनम मरन की भरमन टार॥
बिपत त्याग शान्त चित धार। साची प्रीत सतनाम विचार॥
काल त्याग जीवन को पाओ। सतगुर सीख सतनाम कमाओ॥

**काल करम की जेवड़ी, नित जीव को गरभ फिराये।**
**'मंगत' बिन सतनाम के, परम धाम नहीं पाये॥ 661**

साची संगत मिल सिखया धार। आनन्द सरूप की कथा विचार॥
मानुष जीवन तब दुर्लभ होई। साची प्रीत प्रभ चरन परोई॥

दुर्मत रोग ना सहजे जाई। बिन प्रभ नाम नहीं मन ठहराई॥
तृष्ना अगनी नहीं शीतल पाये। नाम पदारथ जो चित नहीं खाये॥
द्वन्द विकार नहीं करम जड़ नासे। जो नहीं प्रीत से नाम उपासे॥
राग द्वेष नहीं मन से जाई। जो नहीं प्रीत सतनाम लखाई॥
'हौमें' रोग अत घना समाई। नाम की औखद सब ताप मिटाई॥
ग्रहन त्याग भरम की फाँसी। सतनाम ध्याये होये सुखरासी॥
वैर बख़ीली जो अन्तर धारी। सिमरे नाम सब ताप छुटारी॥
अत विकार मन के भसमाई। साची सीख ले जो नाम ध्याई॥
दुस्तर जग से पाये उद्धार। निर्मल प्रीत से करे नाम विचार॥
मन का डोलन तब होये नास। दृढ़ विश्वास सतनाम उपास॥
मिथ्या जग से तृपती तब पाये। आनन्द सरूप जब सतनाम ध्याये॥
दु:ख की खानी भरमे संसार। सुख परापत जिन नाम चितार॥
आवन जावन में नित रहाई। सिमरे नाम अचल पद पाई॥
औगन अत जो जीव ये धारी। नाम विचार सब हरे बिकारी॥
सदा परापत प्रभ नाम कमाओ। दु:ख परहरो सुखधाम लखाओ॥
सदा परापत प्रभ घट समाई। सतगुर मेल से सोझी पाई॥
सदा परापत प्रभ आनन्दखानी। मिले विवेक तब करे पहचानी॥
घट घट व्यापक अंतरयामी। जो जन सिमरे पाये बिसरामी॥
पूरन जतन ये मन में धार। अपने भरम को आप निवार॥
पूरन जतन में धर भरवास। साची प्रीत प्रभ चरन बिलास॥
पूरन जतन मुकत फल देवे। निर्मल जुगत सतनाम जो सेवे॥
करम बन्धन से होए जीव निहाल। अंखड चित प्रीत जप दीनदयाल॥

**पूरन जतन चित धार के, मारग मुकत पहचान।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, मिटे गवन चौरासी खान॥ 662**

ऐसी जुगती से जो नाम ध्याई। परम परकाश प्रभ चरन समाई॥
अंत:करन को प्रथमे शुद्ध कीजे। मिल सतसंग विचार तत्त लीजे॥
पाप करम से मन को ठाके। सत मारग की प्रीती चित राखे॥
सत परमेश्वर का प्रताप चित धारी। सतपुरषों की कथा नित विचारी॥

सुख दु:ख जीवन लखे नित लेख। भरम त्याग पाए धरम का भेख॥
साची प्रीत प्रभ चरन विश्वास। मिल सतगुर सत पावे इतहास॥
पूरन गुर जब मेल मिलाई। तिनकी सीख सतनाम अरथाई॥
अनन्त नाम भगवंत के मीत। जो गुर दीख्या सो सुकृत सीख॥
पूरन करमी गुर सब भेद लखाई। तिसका जीवन तत्त शांत वरताई॥
खोज खोज गुर भेख विचार। कोट मद्धे कोई भेदी तत्त सार॥
पूरन भेदी सब जुगत लखाये। आनन्द सरूप की कथा चित भाये॥
निर्मल नाम जब सुनी सत सार। भाओ प्रीती हिरदे में लई धार॥
ओहंग नाद सोहंग नाद अक्षर बिस्माद। तिसकी जुगत पहचाने कोई साध॥
ओहंग ब्रह्म सत्यम् निर्वान। जुगत से पूजे पाये कल्यान॥
ब्रह्म सत्यम् सरब आधार। मन से सिमरे पाये छुटकार॥
ओहंग अक्षर आनाद अखण्ड। सिमरे योगी पाए परमानन्द॥
अहंग ब्रह्म अस्मि की जुगत पहचाने। उपाध त्याग सतरूप समाने॥
तत्त्वमसि सिमरे तत्त सार। अंतरगत पाये शबद अपार॥
निरंकार अजन्मा तत्त शबद ध्याई। परम शान्त सो गुरमुख पाई॥
सत जुगती सतनाम परकासे। जुगती मिले गुरचरन उपासे॥
निर्मल सिखया जो भी शबद ध्याई। अर्थ मूल सतनाम कहलाई॥
महावाक्य तत्त शबद अनादी। जुगत से सिमरे सब मिटे व्याधी॥
बिन मारग जो शबद ध्याई। सकल जतन अकारथ जाई॥
जुगती से मिले मुक्ति सार। पूरन गुर की करे सीख विचार॥

**बिन गुर भेद ना पाइये, सतनाम तत्त सार।**
**'मंगत' भेदी गुर मिले, तब जाए तृखा संसार॥ 663**

साचा नाम सत जुगत से ध्याई। गुर परताप अन्धकार मिटाई॥
परम प्रीत जब नाम उचारी। उट्ठत बैठत निश्चय इक धारी॥
अंतर बाहर सुरती सम राखी। साचे नाम की गाये साखी॥
इरध उरध में आसन धारी। सतनाम का सिमरन गुरमुख विचारी॥
सत परतीत प्रभ नाम ध्याई। अन्त:करन में नाम बीजाई॥
समाँ पाये प्रभ नाम अंगूरी। अन्तरगत पाई सार हज़ूरी॥

शबद बेला सतनाम उपजाई। बिस्माद आनन्द घर में प्रगटाई॥
भगती मूल घर आन समाया। बेला शबद रतन अत पाया॥
हरजन कीजे बड़ी रखवारी। अनेक मृग हरी खेती उजाड़ी॥
छिन छिन करे अधिक निगरानी। तो भी मिरगा करें हैरानी॥
पाँच मिरग ही अत दुःखदाई। एक पलक में करें फ़नाही॥
विचार की बाड़ घनी उसारी। चंचल मृग की चले नहीं कारी॥
सत सील जल बेली को दीना। बिरह वैराग का खाद बछीना॥
दिन दिन बेली जोबन को पावे। निमख निमख हरजन टहल कमावे॥
सुध बुद्ध सकली होई नासा। और ना सूझत कोई तमाशा॥
भय में रहे दिवस और रैना। एक पलक नहीं आवे चैना॥
वाँग सिपाही नित रहे दरबानी। एह बिध हरजन ये कथा सरानी॥
ख़ुशी ग़मी सब जीवन की नासी। अन्तरगत नित करे बिलासी॥
जब बेली आकास बेलाई। बिस्माद सुगन्धत तिससे प्रगटाई॥
रोम रोम में रसना भरीनी। सतनाम की बेली जब जोबन चीनी॥
प्रेम का मध तिससे टपकावे। वैराग सुगंधी से जग ललचावे॥
मन बुद्धी सब भये ग़लताना। सतनाम रसना कियो पाना॥
एक दिन बेला फूलन पर आई। वाहवाह रंग घर माहीं मचाई॥
पाँच पचीस मिरग भये घात। सतनाम बेली जब फूल लगात॥

**शबद बेला परगट भई, अन्तःकरन के माहीं।**
**'मंगत' मन को ठाक के, हरजन रसना खाईं॥ 664**

अखण्ड आनन्द तब हरजन पाई। जब सब शत्रु का नास हो जाई॥
निर्मल ध्यान आकास समाई। अबगत बेली की लखे वडयाई॥
सकल विखाद मन के भये नास। बेली शबद घट होई परगास॥
जीवन माहीं तब जीवन पाया। सकली सेवा ने फल आनंद दिखाया॥
काल का भय इच्छया भ्रम नासा। शबद ध्यान सतनाम बिलासा॥
भयो विश्वास हरजन को पूरा। घर में पायो बिसमाद सरूरा॥
उट्ठत बैठत घट प्रीत लखाई। एक घड़ी नहीं पद विसरन पाई॥
अजब गुंजार नाम गुंजारी। थरहर कम्पे काया सारी॥

छोड़ प्रमाद भई सुरत मतवाली। सतनाम ध्यान की पाई रवाली॥
अमरत धुन में रहे लवलीना। सतनाम का भेद तब चीना॥
अक्षर सिमर निरअक्षर होई। शबद विचार तब घर प्रगटोई॥
अदभुत शबद बेली परगास। चंचल मनुवाँ वहाँ करे निवास॥
अखण्ड आनन्द पद हरजन पाया। सत परतीत सतनाम कमाया॥
पाँच तत्त का सूल विनासा। सतनाम जब भयो परगासा॥
बाहरमुख से अंतरमुख आया। अबनासी रसना सतनाम लखाया॥
पलक ना बिसरे सो आनंदखानी। पूरन भाग जो करी पछानी॥
अखंड मस्तानी रसना को पाया। तृखावन्त तब जीव तृपताया॥
जब बेली फल पाया मीत। सतनाम तब पूरन परतीत॥
नाम बीज से शबद परगासा। शबद बेली से फल नाम का चाखा॥
गुपत विचार जाने कोई सूरा। मारग अगम में पाए हज़ूरा॥
भौरा परसन्न भयो फल खाये। करे कुलेल बेली पर आये॥
सुध बुद्ध विसरी भयो अलबेला। भेद को बूझे सो गुर का चेला॥
सिद्ध बुद्ध नाथ सबने फल खाया। अमर भये भय काल मिटाया॥
करे गुंजार घर अधिक आपार। हरजन पायो सतनाम विचार॥

**पारब्रह्म परगासया, जब घट अन्तर मीत।**
**'मंगत' भई परसन्नता, सतनाम पाई परतीत॥ 665**

साचा ठाकर घट रूप लखाया। सतगुर भेदी मारग दिखलाया॥
धरती उलट आकास समाये। अचरज कथा घट अन्तर पाये॥
पाँच पचीस को कीना आहारा। बिन मुख के तिनको कियो संघारा॥
एक को लखया सब भये मुरदारा। गुरमुख साजन सतनाम विचारा॥
ब्रह्म अगन अन्तर होई जारी। काल करम को कीना छारी॥
अती भयंकर भरम गढ़ तोड़ा। सत परतीत भयो जन सूरा॥
पाँच को बाँधे तीन को मारी। दस वीरों पर करे असवारी॥
नौखण्ड भूमी पर विजे लखाई। साचे नाम की सत चोट लगाई॥
चौधाँ लोक कम्पे अत भारी। सतनाम का लेखक सूरा बलकारी॥
चार चौधाँ इक रन विच मारे। एक दाओ में सबको किया पारे॥

लोक कुटम्ब सब मार मुकाया। काल सरूप हरजन जग आया॥
सबको मार निहसंग हो रिह्या। केवल मन में सतनाम सनेह्या॥
अत संग्राम हरजन ने जीता। तीन लोक पर विजे लखीता॥
सरब शत्रू किये रन घाता। नाम ध्यान में रहे मधमाता॥
पाँच बुरज का महल उडाई। सन्मुख अपना दर्शन पाई॥
सरब सरूप पाई जागीरी। सतनाम सिमर के पाई गम्भीरी॥
अधिक अन्धकार सब मन का नासा। सतनाम निज रूप परगासा॥
चार दिसाँ पर हुकम चलाई। समता ज्ञान की ले रोशनाई॥
जय जयकार भई तीन जहाना। हरजन पायो सतनाम परवाना॥
जीआ जन्त सब सीस निवावें। अपना संकट नित बख़शावें॥
हरजन जग में पाई सतकार। सकल माया पर जीत विचार॥
नाम ध्यान में रहे मख़मूर। अपना देखे सकला जग नूर॥
मन अपने में पाई सुखसार। जिसका रंचक नहीं होवे विचार॥
आनन्द को खाये आनन्द वरताई। सतनाम समागम सतधाम समाई॥

**परचण्ड माया को छेद के, हरजन शान्त समाई।**
**'मंगत' कठिन मुहीम ये, सतनाम से विजय लखाई॥ 666**

सतनाम सिमर मन पूरन होई। दुबधा दुर्मत भरमत सब खोई॥
अन्तरगत प्रभ चरनी मेला। सतनाम ध्यान पावे कोई खेला॥
निराकार निरालम स्वामी। सतनाम ध्यान में मिले अनामी॥
अन्तर बाहर नाम ध्याई। पलक ना विसरे अत नाम वडयाई॥
प्रभ के नाम में जीवन जीवे। शबद की सार अन्तरगत पीवे॥
सहज जुगत मन रहे समाई। अबगत प्रेम प्रभ चरन लखाई॥
अन्तर बाहर शून्न गत सूझे। अनहद नाद सतनाम घर पूजे॥
गंग जमन सरसती घाट। सतनाम की खोजो वाट॥
निरगुन सरगुन का लख भेद। सतनाम समावें अछल अछेद॥
मूल द्वार में पवन को सोध। सतनाम अगाध को करो सरोध॥
निर्मल बुद्धी प्रभ नाम विचार। साचे नाम की लख तत्त सार॥
परमानन्द पुरख अबनासी। तीन भवन लख गत सुखरासी॥

ईड़ा पिंगला सुखमन पार। शबद स्वामी सतनाम विचार॥
नौ द्वार काया के ठाक। अन्तरगत दर दसवाँ झाख॥
पूरन पुरख सतनाम समाई। अनहद नाद अत ही गरजाई॥
पुरख निरंजन अत परकासा। सतनाम सिमर पायो बिलासा॥
अचरज कोट काया का साजा। सतनाम सरूप साहब बिराजा॥
रूप रेख से रहे न्यारा। नित परकास पुरख निरंकारा॥
नित सुतन्तर अत शक्ती धारी। सरब ज्ञाता सतनाम मुरारी॥
अत बलवंत अनंत सरूप। बिस्माद ध्यान सतनाम अनूप॥
खोजत खोज गुनी मुनि हारे। पूरन पुरख का पायें नहीं पारे॥
सत परतीत जिस नाम ध्याया। दुबधा त्याग मंगल को पाया॥
गुपत किवाड़ काया का तोड़ा। सतनाम सरूप पाया प्रभ पूरा॥
पिण्ड ब्रह्मण्ड सब भेद लखाई। सतनाम मूल सोझी जब पाई॥

**महमा साचे नाम की, हरजन जाने आप।**
**'मंगत' पूरन रूप से, जल थल रह्या व्याप॥ 667**

नित ध्याओ सतनाम ज्ञाई। नाम की महमा है पार पराई॥
भाँतक भाँत रसना नित गायें। शास्त्र सिमरत मुनि भेद बतायें॥
दुस्तर जग से तब निस्तर होये। सार सरूप जब प्रभ नाम परोये॥
अचरज वस्त जग मिथ्या माईं। सतनाम ध्यान जो रंचक पाईं॥
सतपुरखों की कीरत चित धार। मन में आवे सतनाम विचार॥
अपने मन की सब भरमन छोड़। साचा मारग चरनी चित जोड़॥
दुर्लभ जीवन समाँ ये पाया। भज करतार परम सुखराया॥
अपनी भरमन दे संकट भारी। अन्तकाल नर होए ख़वारी॥
अपनी भरमन भय रूप दिखाई। जम रूप हो अन्त दरसाई॥
अपनी भरमन लज्या पत नासे। पाप मलीन में नित करे निवासे॥
अपनी भरमन बन्धन आपार। जन्मे मरे जूनी बहु धार॥
अपनी भरमन दिन रैन दुःखदाई। मारग सुकृत नहीं सोझी आई॥
अपनी भरमन है काल सरूप। ज्यों ज्यों भरमे पावे दुःख कूप॥
अपनी भरमन नित वैर परगासे। सकल जियाँ संग खेद बिलासे॥

अपनी भरमन नित अशान्त दिखाई। विच सरोवर प्यासा जाई॥
अपनी भरमन नर करे उजाड़। करम विलक्खन जो लिए चितधार॥
अपनी भरमन ऊँच नीच दरसावे। वैरी मित्तर का भेद लखावे॥
अपनी भरमन अत दीरघ रोग। जरा मरन नित होये संजोग॥
अपनी भरमन दे कष्ट अपार। अन्धमत रोवे नहीं सूझे पार॥
अपनी भरमन अत शत्रू जान। पग पग ऊपर देवे हान॥
अपनी भरमन ही जगत सरूप। भेद पछाने जाये भ्रम कूप॥
अपनी भरमन निवारन जग आया। मानुष चोला दुर्लभ कहलाया॥
अपनी भरमन का जो करे उपाय। सुकृत जीवन सो जन जग पाये॥
ज्ञान ध्यान और कथा विचार। सबका लेख इक नाम विचार॥

**प्रभ चरनी परतीत रख, मन की भरमन त्याग।**
**'मंगत' नाम के सिमरन कारने, जग आया जीव वडभाग॥ 668**

जिस जन कथा सतनाम विचारी। मन अपने की भरमन टारी॥
तृखावन्त सो जग में आया। सिमर नाम चले तृपताया॥
दु:ख को धार जनम जग पाई। नाम सिमर सत शान्त समाई॥
अनेक विगन में मनसा घेरी। प्रभ सिमरन से पाई सुख सीरी॥
आध व्याध संकट बहु धारा। सतनाम सिमर पायो निस्तारा॥
भय में आया जग रचना पाई। नाम जपत निरभय समाई॥
तीन ताप तपन अत भारी। सिमरे नाम परम सुख धारी॥
अधिक वडयाई साचे प्रभ नाम। जो जो ध्याये पाये बिसराम॥
रल मिल संगत नित उपमा गाओ। साचे स्वामी की कीरत नित ध्यायो॥
सुकृत काज जगत में येही। नाम विचार से बुद्ध निर्मल भेई॥
अपना जीवन करो परगास। साचे प्रभ की कीजो अरदास॥
पल पल जाये नर औध विहाई। भज गोबिन्द परम सुखदाई॥
साची सम्पत जग लाभ खटाओ। प्रभ अपने की मन प्रीत लखाओ॥
सो अनमत मूढ़ा पशु समानी। दीनदयाल की नहीं जिस सेव पछानी॥
दोहे जहान सो दु:खिया रहाई। साची सेव नहीं जिस प्रभ पाई॥
अपना जीवन करो निहाल। सुकृत कीरत सेवा चित भाल॥

सरब जगत का ये ही निधान। सतसरूप भेंटे भगवान॥
वस्तु कोई ना संग नर जाई। छाड के चलना सब धरी धराई॥
पलक समाँ ये जग का खेल। सिमर सतनाम गुर संग कर मेल॥
साची रास खट वनज अनूप। अधिक विचार सुन गुरमुख भूप॥
भाओ भगत कीरत प्रभ गाओ। मान मध अत भरम गँवाओ॥
निर्मल प्रीती सत मारग खोज। पूरन भाग सतनाम को सूझ॥
परम सयानफ़ ये हिरदे धार। सत सरूप सतनाम विचार॥
नित बलिहारी रज चरन चित भाये। जो जन पलक सतनाम जस गाये॥

**हरजन चरनी धूड़ को, सीस रुमाऊँ नित नीत।**
**'मंगत' जनम सुफल तब होवे, सतनाम मिले परतीत॥ 669**

जिस जन हर का नाम ध्याया। सुफल जनम सो नर जग आया॥
मनसा सकली पूरन होई। पल पल साचा नाम परोई॥
अभय अचिंत सिमर सतनामा। परम धाम पायो बिसरामा॥
जनम जनम क्रीड़ा जम नासी। सतनाम कला हिरदे परगासी॥
खेम कुशल प्रभ घर में पाया। नित आनन्द मंगल को गाया॥
अपना निरमल धाम पछाना। सतनाम पद ज्ञान निरवाना॥
अपनी निरमल जानी कार। सतनाम पायो निरधार॥
ज्ञान ध्यान हिरदे में पाया। सत परतीत सत ठौर लखाया॥
परम आनन्द सब घट वरताई। सतनाम शोभा अधिकाई॥
नित गाओ साजन नाम गोबिन्द। बौहड़ ना धारें भरम का पिंड॥
परम शान्त पायें सुखरास। हिरदे सिमरें प्रभ अबनास॥
स्वास स्वास प्रभ नाम चितार। उपरस जीवन सतगती विचार॥
ये ही मारग कल्यान का मीत। सतगुर बचन धार परतीत॥
नाम सिमर सत ओट सम्भाल। कभूँ ना पावें दुःख जम बिकराल॥
नाम सिमर सतगुन सुखरास। कभूँ ना व्यापे भरम की फाँस॥
नाम सिमर सुखधाम अडोल। लागे तेरा कछू ना मोल॥
नाम सिमर ये सार निधान। परमगती पावें निरवान॥
नाम सिमर बंधन को काट। आनन्द सरूप की परसें वाट॥

नाम सिमर नित पावें जीत। आठ पहर सुख मिले पुनीत॥
नाम सिमर तन मन ख़ुशहाल। कभूं ना व्यापे दुर्मत जंजाल॥
अपरम अपार ये साचा लेख। सतनाम नारायन मन में पेख॥
अपरम अपार ये गुह्य ज्ञान। सतनाम सिमर जीवन परवान॥
अपरम अपार मारग सुखरास। काल करम की कटे सब फाँस॥
गुरमुख नित नित सतनाम परोये। अनक विकार मन के नित खोये॥

**ऊँच से ऊँची रसना, सतनाम निरंकार।**
**'मंगत' जो सिमरन करे, तिस चरनी बलिहार॥ 670**

परम शकत सतनाम का लेख। पल पल गुरमुख मन में पेख॥
परम शकत नाम भगवंत। जो सिमरे पाये सुख अनन्त॥
परम शकत नाम का ध्यान। दुस्तर मन पावे कल्यान॥
परम शकत सतनाम आगाध। दुबधा त्याग जन पाई समाध॥
नित सिमरो नित रसना चाख। अभय पद बिमल अंतर में भाख॥
नित सेवा साची मन धार। नित सत लेख लिख गुनी अपार॥
इस संसार में केवल ये लाभ। एक परमेश्वर का आवे चित भाव॥
इस संसार में सम्पत ये मीत। जो प्रभ चरन की पाई प्रीत॥
इस संसार में सो ही गुनवंत। बिकार त्याग जिस सिमरा भगवन्त॥
साजन ये रसना सतसार। जुग जुग हरजन करें पुकार॥
मोह माया का जाल गम्भीर। बिन प्रभ सिमरे नहीं मिटे तक़सीर॥
सार उपाये हरजन ने जाना। निर्मल प्रीत प्रभ चरन पहचाना॥
वेद ग्रन्थ का सार निधान। सिमर दयाल पावें कल्यान॥
तीरथ बरत सबका लेख। नारायन पद हिरदे पेख॥
जप तप पूरन तब ही पाये। जो सतनाम मन तन समाये॥
गुर पीर सहाई ताँ का होई। जो सत विश्वास सतनाम परोई॥
जनम जनम की तोड़े सो ही फाँस। हिरदे ध्याये प्रभ नाम अबनास॥
अगम अगोचर मारग भगवंत। जो सिमरे पाये सुख अनंत॥
मन की दुबधा सकल मिट जाई। जो प्रभ चरन में प्रीत लगाई॥
बारमबार रसना सत चाख। जग का ठाकर हिरदे में लाख॥

परम आनन्द साहब का धाम। सिमर सिमर लीजो बिसराम॥
मन अन्धकार तब ही नासी। जो सतनाम चित माहीं उपासी॥
उज्जल मनुवां सीख पाये आपार। अंतर बाहर रसना इक धार॥
द्वन्द विकार माया दुःख जाये। उज्जल मनुवां प्रभ चरन ध्याये॥

**मन जब निर्मल भया, तब पाई सुखसार।**
**'मंगत' सरब सृष्ट में, पायो इक निरंकार॥ 671**

एह बिध साचा नाम जो ध्याई। तिसके निकट भय भरम नहीं आई॥
आवत जावत स्वास पहचानी। सतगुर जुगत का भेद लखानी॥
स्वास स्वास सतनाम ध्याई। सुरत एकागर परमगत पाई॥
स्वास सुरत कीजे इक मेल। घर में पावे अबनाशी खेल॥
स्वास सुरत इक दृष्ट निहारे। जनम जनम की भरमन टारे॥
गुरमुख पन्थ सो ही जन पाई। स्वास सुरत इक धार मिलाई॥
सकल देही परकाशन-हारा। विज्ञान सरूप स्वास की धारा॥
स्वास ज्ञान गुपत अलेख। जो जन परसे पाये नाम का भेख॥
सकल विकार पर पावे जीत। स्वास सुरत राखे जो चीत॥
निर्मल ज्ञान मन माहीं विचार। अबगत रूप ये स्वास की धार॥
ज्ञान विज्ञान का पूरन भंडार। पावे भेद कोई गुनी आपार॥
निर्मल जुगत सो स्वास को पीवे। काल को खाये जुगाजुग जीवे॥
चरंजीव पंथ अगोचर ज्ञान। स्वास सुरत की खेल पहचान॥
अबगत रचना साहब रचनाई। पाँच भूत में रंग रंगाई॥
स्वास ज्ञान समाये प्रभ नाम। करता हरता ठाकर सुखधाम॥
स्वास ज्ञान ये मूल योग। जो जन खोजे भये अरोग॥
स्वास ज्ञान ये मारग अनूप। तिसमें पाये प्रभ रूप अनूप॥
स्वास ज्ञान मुकत रस सार। जो जन पीवे सतनाम आधार॥
सकल तृखा जीव की जाये। स्वास सुरत मिल नाम कमाये॥
सकल वियाध हरे परमाद। स्वास सुरत मिल नाम आराध॥
सकल जुगत में सो परबीन। निज ठाकर ध्याया स्वास गत चीन॥
सकल धरम में दृढ़ता पाये। स्वास स्वास जो प्रभ चरन ध्याये॥

जीवन जीवे जाये काल का भरम। स्वास सुरत जो राखे इक धरम॥
अंतरगत बाहर रंग एके। भेद पछाने पाये शबद अलेखे॥

**स्वासगति की गत लखे, ध्याये नाम तत्त सार।**
**'मंगत' परगट पाइये, तब साखी शबद आपार॥ 672**

उट्ठत बैठत राखे इक चित्त। स्वास सुरत प्रभ नाम जपत्त॥
ज्ञान विज्ञान के खुले भंडार। निर्मल जुगत मन स्वास में धार॥
देह ज्ञाता स्वास गत जान। निर्मल जुगत ये मुकत निधान॥
स्वास को खोजे सहज के भाये। अंतर बाहर सतनाम कमाये॥
ज्यों ज्यों सुरती स्वास में धारे। कोट पाप मन का भयो छारे॥
निर्मल विचार घट में प्रगटाई। अबगत ज्ञान जो स्वास लखाई॥
स्वास की धार मुकत का बँध। मुकत पहचाने जो परसे संध॥
अजर पुरष अबनाशी देवा। स्वासगती में नित रमेवा॥
मिल सतगुर जिस जुगत पहचानी। आलख शबद की कथे कहानी॥
स्वास सुरत जब एका होई। शबद ब्रह्म तब घट प्रगटोई॥
शबद पहचान कलह सब जाये। आनन्द सरूप की रसना खाये॥
पल पल हरजन जुगत समाई। स्वास सुरत सतनाम कमाई॥
अखण्ड ध्यान स्वास में धारे। गवन विनास पाये ज्ञान अपारे॥
प्रेम प्रीत का रंग रँगाई। आलख शबद परमेश्वर पाई॥
दिवस रैन मन स्वास परबीना। गुरमुख विरले ये खेल परखीना॥
नित सतनाम का टाँक लगाई। स्वास सुरत का जोड़ जुड़ाई॥
निर्मल जुगती ये बूझे कोए। काल त्याग अमर धाम बसोए॥
पूरन पुरख तब घट परगासे। स्वास स्वास जब नाम उपासे॥
गुनी पुरष कोट मद्धे कोई। गुपत ज्ञान का भेद लखोई॥
मन अपने में मगन समाई। सिमर सिमर सतनाम प्रभताई॥
चेतन बुद्ध भई नाम रस खाये। अन्तर बाहर सम रूप समाये॥
करम विकार से मुक्ता होई। पल पल साचा नाम परोई॥
नाम आधार जीवन को पाई। तब ये मनुवाँ शान्त समाई॥
भरमन त्याग निज रूप पछानी। दुर्मत नासे सब गवन निशानी॥

**करम विखेपत त्याग के, जब सतनाम को खाये।**
**'मंगत' भगती ज्ञान ये, सब जीव के भरम बिनसाये॥ 673**

भरम विनास भयो परगासा। अन्तर पायो प्रभ अबनासा॥
भई परतीत आनन्द गत पाई। मिल सतगुर पाई प्रभताई॥
सतनाम अलेख पद निर्मल ध्याया। निमख निमख कर जस चित गाया॥
अपरम पुरष घर परगट देखा। करम भरम का मिटा भुलेखा॥
मन में मन ये भयो निहाल। इक चित ध्यान ध्याया रछपाल॥
मन में मन को भई परतीत। स्वास स्वास पाई चरन परीत॥
भरम गुबार से मुकत समाई। शबद अगम घर परगट पाई॥
अनहद नाद में पायो बिसरामा। सतनाम आधार पायो सतधामा॥
निर्मल देश अभयपुर पाया। जाँ में पुरख अकाल समाया॥
स्वास सुरत का मारग जाता। गुपत शबद घट भेद लखाता॥
धन्न सतगुर जिस जुगत बताई। अपने घर में घर को पाई॥
शबद धाम अमरपुर देस। सतनाम ध्यान से पाया परवेश॥
आवागवन का संसय नास। अखण्ड परगास जोत परगास॥
कोई गुरमुख ऐसी कार कमाये। सत परतीत धर सतलोक समाये॥
निर्भय पद को सो हरजन पाई। विज्ञान का छतर सो सीस धराई॥
बंधन काट निरबंध समाया। तब परताप सतनाम का पाया॥
नाम में जीवन हरजन पाई। अंतर बाहर इक प्रभ दिखलाई॥
तृन तृन में पाया परगासा। अखंड सरूप प्रभ सरब निवासा॥
द्वैत भरम अंधकार विनासी। सतगुर सेव भयो सतनाम उपासी॥
अधिक वडयाई प्रभ नाम की पाई। जल थल माहीं इक रूप लखाई॥
सत को पूज सत पद पाया। गुरमुख ज्ञान भेद अरथाया॥
जुग जुग रसना हरजन खाई। अखय सरूप सतनाम ध्याई॥
प्रेम अघट प्रभ नाम परगासा। द्वन्द विकार अगनी भई नासा॥
आलख आपार अगम गत स्वामी। सतनाम कथा आपार अनामी॥

**जो सिमरे सो गत पाये, प्रभ चरन कँवल निर्धार।**
**'मंगत' निर्मल प्रीत से, पल पल सेव विचार॥ 674**

परमगती तिस जन ने पाई। सत परतीत प्रभ नाम ध्याई॥
निर्मल जुगत तत्त सार पछानी। शबद सरूप अमरत खानी॥
भयो सुरजीत शबद रस खाये। सतनाम के भेद को तब अरथाये॥
मन पवन जब इक चित देखी। अन्तर बाहर सम कर पेखी॥
शबद ध्यान उनमुन बासी। सो सतपुरखा सतनाम बिलासी॥
मिरतक देही से मुकत समाया। अमरसरूप शबद प्रभ पाया॥
पलक पलक में शबद रस खाई। काल की भरमन सकल मिटाई॥
मन इकागर बुद्ध निर्वानी। अनहद नाद परसे प्रेम की खानी॥
इच्छया द्वैत छाया तब नासी। सो सत साधू सतनाम उपासी॥
आपा पर दोनों मिट जाई। सरब सरूप इक राम लखाई॥
अधिक प्रेम शबद घर चीना। भरम त्याग सतधाम रमीना॥
द्वन्द विकार करम जड़ नासी। निरवास सरूप सतनाम निवासी॥
पूरन ज्ञान पूरन तिस ध्याना। पूरन त्याग गत योग लखाना॥
पूरन नीती मन आन समाई। सत परतीत इक नाम ध्याई॥
सरब ज्ञाता जो सरब स्वामी। अन्तर बाहर जो सम बिसरामी॥
चेतन पुरष शबद बिसमाद। सतनाम विचार से पायो अगाध॥
सहज समाध मन लीन समाया। अनहद नाद घर परघट पाया॥
विरत अडोल नहीं भरम को पाई। सत परतीत एक नाम ध्याई॥
सकल विकार से मुकत पछानी। जीवनमुक्त सतनाम बखानी॥
अपनी भरमन सब मन ने छोड़ी। सत सिखया प्रभ चरन चित जोड़ी॥
चौसठ घड़ी निश्चय इक धारी। साचे नाम की चित चढ़ी ख़ुमारी॥
अन्तरगत आनन्द रस खाई। शबद अखण्ड पल पल ध्याई॥
अचिन्त सरूप मन मगन समाई। शबद समाध सतनाम ध्याई॥
अगोचर बानी तत्त नाद सतनाम। गुरमुख विरले पाया बिसराम॥

**नाम रसना जब चित रसी, उपरस मनुवां होए।**
**'मंगत' अन्तरगत माहीं, सतनाम की मनी परोए॥ 675**

मिथ्या जग से पाया छुटकारा। अन्तरगत सतनाम विचारा॥
साची ओट मन लीन समाई। सरब सनातन सतनाम ध्याई॥

जो देखा सो काल गरासी। करम विकार से फिरे चौरासी॥
चार दिनाँ जग जीना पाया। तिसको देख मन बहु पछताया॥
राजा राना गुनी गुनवंता। सब ही मोहे माया भगवंता॥
झूट वस्तु संग हेत लगाई। सरब त्याग अंत को जाई॥
सुख की रीत पाई नहीं सार। नाना भोग दुःख लीने धार॥
झूट को देख नर फिर भरमाई। वाह वाह रचना माया रचनाई॥
मरन को देखे पर फिर भुलाया। मिथ्या भोग में नित गरसाया॥
कोटाँ कोट नित आवत जायें। पल पल घड़ी ये लेख लखायें॥
अपना मरन नहीं कियो पछाना। वाह भरमाया माया भगवाना॥
आवत जावत नित देखे अकेला। भरम का बाँधा फिर रचया मेला॥
कोई सखा ना होवत अंत सहाई। नौबत चलने की जब काल बजाई॥
कूड़ भरवास में जनम गँवाया। चलन की बारी नर बहु पछताया॥
तृन ना चलियो संग अंत की बारी। झूटे कोट और महल उसारी॥
द्रब ख़ज़ाना सब भयो बिगाना। चला मुसाफिर जग से हो नमाना॥
कूड़े भरम में गया भरमाई। माया मोह्या नहीं सार को पाई॥
रंग तमाशे सब कूड़ रचाये। अंत की बारी देह छार समाये॥
भरम बकार जो नित धारी। सो ही करे नित जीव ख़वारी॥
ना मोह नासा ना मारग सूझा। सार विसार भाया चित दूजा॥
खल बुद्धी नित भरम भरमाई। झूट भरवास में जनम गँवाई॥
अपनी करनी पर नर पछतावें। जम दरबार जब बाँधा जावें॥
जीवन में लयो होश सँभाल। पल पल लेखा लेवे दलाल॥
साची कीरत सतनाम को चेत। दुर्लभ करनी हरे भरम विखेप॥

**माया भरम विकार में, नित ही जीव भरमाये।**
**'मंगत' भरमन तब मिटे, जब सतनाम चित गाये॥ 676**

झूट जगत में सुन सत संदेसा। सत परमेश्वर नित सिमर सुखरीसा॥
इक दिन चलना हाथ धोये मीत। बिन प्रभ सिमरन सब कूड़ परीत॥
मोह अन्धकार जीवन दुःखदाई। सत परकाश लयो नाम ध्याई॥
बाँधे आए बाँधे नर जाना। करम भुलेख नहीं मिटे जम जुरमाना॥

साची सिखया पल पल चित धार। स्वास स्वास सतनाम विचार॥
झूट त्याग सत की रख ओट। अन्तकाल ना पायें जम की चोट॥
कूच नकारा सिर बाजत भारी। इक दिन करनी जग से त्यारी॥
लोक कुटम्ब सब छाड के जाना। महल मंडप और द्रभ ख़ज़ाना॥
छोड़ सिंघासन छतर को जाई। निकले प्रान गयो राख़ समाई॥
साची नौबत नित लयो बजाए। जग में इस्थिर रहन ना पाए॥
सुकृत जीवन धरम विचार। मानुष चोला नहीं बारम्बार॥
सब जीवों संग हेत लखाओ। पर-उपकार जीवन को ध्याओ॥
वैर बख़ीली ना धरे चीत। इक दिन नासे देह बालू भीत॥
पलक पलक कर सत विचार। समाँ गया नहीं पावे सार॥
नित सतसंग कीरत तत्त धार। अन्तर चित सतनाम विचार॥
जीवन लाभ ये ही सुखदाई। पर की सेव जो हिरदे आई॥
जीवन लाभ ये ही तत्त सार। जो चित्त आवे सतनाम विचार॥
जीवन लाभ ये ही नित खाट। देह से सेवा मन नाम को राट॥
जीवन लाभ ये ही लयो घाल। नित सतसंग सत रसना भाल॥
जीवन में हो जा धूड़ समान। जुग जुग पावें अटल निशान॥
जीवन में सत सेव कमायो। बारम्बार ना गरभ में आयो॥
सत विश्वास प्रभ नाम उपास। साचे करम में लयो निवास॥
करता हरता प्रभ एको संसार। सरब जिआँ संग प्रीत विचार॥
मान त्याग सतनाम कमाई। आनन्दसरूप में लीन समाई॥

**सत मारग को धार के, गुरमुख गये सतधाम।**
**'मंगत' तिनकी कीरती, सुन सुन पायो सतनाम॥ 677**

## सत अनुराग सरोवर

**सत अनुराग प्रभ चरन का, जब चित आन समाये।**
**'मंगत' दुस्तर जाल से, जीव शान्त तब पाये॥ 678**

प्रभ अनुराग मुकतपद मीत। प्रभ अनुराग करे निर्मल चीत॥
प्रभ अनुराग भरम हरे विकार। प्रभ अनुराग चित सील उजयार॥

प्रभ अनुराग वडभागी पाए। दुर्मत तयाग सत सार ध्याये॥
प्रभ अनुराग तत्त ज्ञान परगासे। मुकत सरूप में करे निवासे॥
प्रभ अनुराग केवल जग सार। गुरमुख विरले मन कियो विचार॥
प्रभ अनुराग प्रभ रूप मिलाये। जनम जनम का भरमन जाये॥
प्रभ अनुराग जब चित आई। मोह विकार संसय सब जाई॥
प्रभ अनुराग तत्त योग निधान। त्रैगुन माया से पाए कल्यान॥
प्रभ अनुराग सतनाम परकास। ममता त्याग परसे अबनास॥
प्रभ अनुराग आनन्द सरूप। जो पछाने हरे दुःख कूप॥
प्रभ अनुराग से होये इकागर। अन्तरगत सतनाम उजागर॥
प्रभ अनुराग पर हेत लखाये। सरब जीयाँ की सेव चित पाये॥
प्रभ अनुराग सतसंग की सार। निर्मल ध्यान सुने प्रभ चरन विचार॥
प्रभ अनुराग सब हरे कलेश। पाये विश्वास चित चरन जगदीश॥
प्रभ अनुराग से सुद्ध बुद्ध बिसराई। सत ठाकर की शोभा घर पाई॥
प्रभ अनुराग अचिन्त मन कीजे। सहज सुभाओ जो जन सीजे॥
प्रभ अनुराग सब मैल उतारे। शुद्ध सरूप घर परगट विचारे॥
प्रभ अनुराग पावे जन कोये। अत निरमल बुद्ध जाँ की होये॥
प्रभ अनुराग से पाए सत मत। ज्ञान विज्ञान का लेख लखत॥
प्रभ अनुराग मन मान निवारे। मिथ्या जग में ग़रीबी धारे॥
प्रभ अनुराग इक निश्चय देवे। केवल कीरत प्रभ चरन की सेवे॥
प्रभ अनुराग अभयपद ज्ञान। काल करम नासे बिख खान॥
प्रभ अनुराग कोई गुरमुख पाई। जो झूट देही की प्रीत मिटाई॥
प्रभ अनुराग कल्यान पद मीत। जो जन परसे लेवे जग जीत॥

**सो वडभागी जीव है, जो पाये प्रभ अनुराग।**
**'मंगत' भगती सार ये, हरजन पाये सुहाग॥ 679**

तू ठाकुर सब कारन करना। नित रखयक हूँ तेरी सरना॥
तू ही सबका पालनहारा। उतपत परलय खेल तुम्हारा॥
तू ही सबका नित आधार। सरब जन्त हैं रूप तुम्हार॥
तू ही सबका निर्मल धाम। आद अन्त से परे बिसराम॥
तू ही तू परमेश्वर मेरा। राख लयें प्रभ चरनी केरा॥
तेरी ओट तेरा आधार। दीन दयाल तू सरजनहार॥

तू ही पूरन कला को धारी। निर आधार पुरख मुरारी॥
तू ही अपने आप बलवन्त। पूरन शकत अपार भगवन्त॥
तू ही आनन्दकन्द सरूप। जुगा जुगन्तर रमें अनूप॥
तू ही आद जुगाद इक रंग। बिस्माद कौतक तेरा परसंग॥
तू ही अबगत अगोचर अनादी। सतसरूप आलख समवादी॥
तू ही एक अनेक को धारी। अद्भुत रचना कीनी बिस्तारी॥
तू ही परले पार बिसरामी। अखण्ड सरूप शबद अनामी॥
तू ही अजर अमर निरवाना। अकथ सरूप तूँ ही भगवाना॥
तू ही बिशम्भर सकल जग धरता। आद जुगादी पूरन तूँ करता॥
तू ही सरब का धाम स्वामी। सकले खेल में तूँ बिसरामी॥
तू ही परकाश सरब परकाशी। नित आनन्द शबद सुखरासी॥
तू ही अन्तर बाहर समाया। आलख अभेद सरूप निरमाया॥
तू ही सबकी बनत बनावें। न्यारा हो के खेल खिलावें॥
तू ही पूरन उस्तत योग। जो जो सिमरे भये अरोग॥
तू ही समरथ पूरन प्रभ देवा। कित बिध पावाँ तेरी सत सेवा॥
तू ही ठाकर नित किरपा धारी। सरब जीवों के संकट टारी॥
तू ही सबकी करें न्याये। करनी का फल देवें सज़ाये॥
तू ही सबकी करें सम्भाल। दीनानाथ तूँ दीनदयाल॥

**तूँ ही सत आद जुगादी, तू ही सरब आधार।**
**'मंगत' कीजे बंदना, तुध चरनी बारम्बार॥ 680**

तू ही सरब का संकट नासी। पततपावन पुरख अबनासी॥
तू ही तू तेरी अरदास। चरन कँवल में करूँ निवास॥
तू ही बुद्धी बल दातारी। दीन दुःखी का तूँ उद्धारी॥
तू ही ऊँचे से ऊँचा देव। पल पल ध्यावाँ तेरी सेव॥
तू ही अज अनील अनाम। हस्ती तृन में तूँ बिसराम॥
तू ही सरब ज्ञान का दाना। अपरम अपार पुरख सुजाना॥
तू ही बिस्माद रचना को धारी। महमा तेरी नाहीं जाये विचारी॥
गुपत परगट तेरा परताप। कोटाँ कोट करें गुनी जाप॥

तू ही सत तत्त अखण्ड। अरबाँ खरब धारें ब्रह्मण्ड॥
तू ही मूल सरब बिस्तारी। सरब निरन्तर तूँ ही पसारी॥
सकली रचना प्रभ तेरा पासार। रंचक महमा नहीं होये शुमार॥
तू ही अपनी गत जानत जानाई। सच्चदानन्द पुरख आपार अगाही॥
तू परमेश्वर आनन्द दातारी। जो जो सिमरे होए निस्तारी॥
तू ही वेद ग्रन्थ का मूल। कारन रूप सूक्षम अस्थूल॥
तू ही तूँ तेरा सब खेल। अपरम अपार पुरख अनील॥
तू ही व्याप सरब के रंग। इत उत तेरा साहब परसंग॥
तू ही तूँ देखा सब थाईं। सतगुर मेल से भेद लखाईं॥
तू ही तूँ तुझको डण्डौत। पूरन पुरख तेरी नित ओट॥
तू ही तूँ मन तन समाओ। दुबधा दुर्मत का होवे अभाओ॥
तू ही शुद्ध सरूप निरदोख। जो जन सिमरे पावे तत्त मोख॥
तू ही परमानन्द सरब का देव। दीनदयाल दीजो सत सेव॥
तू ही आद अन्त रखवारा। नित परापत सरजनहारा॥
तूँ ही अनन्त कला को धारी। कोट विरंच भये महेश पुजारी॥
तू ही बख़शनहार दयाल। अनमत कूकर पर होयें किरपाल॥

**सरब शक्त समरथ तूँ, सत ठाकर निर्वान।**
**'मंगत' माँगे रसना, सत प्रीती चरन ध्यान॥ 681**

कोई ना थाओं बिन प्रभ तेरे। तेरी प्रीती सुखसार घनेरे॥
करो किरपा प्रभ अन्तरयामी। साची प्रीत पावाँ बिसरामी॥
पतत उद्धारी प्रभ तेरा सतनाम। नित नित गावाँ धर विरत निष्काम॥
निमख निमख तेरे चरन समाऊँ। अन्तर बाहर कीरत नित गाऊँ॥
औगन हरता सब बन्धन नासी। पारब्रह्म तत्त रूप अबनासी॥
अत वडयाई तेरी प्रभ मेरे। जो जन सिमरे तिस भाग घनेरे॥
जनम जनम की तपन करें दूर। पूरन पुरष सतनाम हज़ूर॥
जल थल पवन पावक आकासा। तेरी शकत सब माहीं निवासा॥
उदे अस्त अत चारे कुंट। सरब व्यापक तूँ साहब अनंत॥
लोकालोक मंडल आकार। सरब परकाश तूँ सरजनहार॥

चार खानी सब माहीं रमीना। चेतन पुरष अछेद अछीना॥
जन्ताँ अन्दर जन्त समाई। सरब निरंतर हो लेख लखाई॥
रसना रस सरब को धारी। उपरस रूप शबद आपारी॥
घट घट की तू जाननहार। सरब जीयाँ को देवें विचार॥
तेरी उस्तत का तू ही मानी। साचा साहब तूँ अतुल परमानी॥
रोम रोम में तेरा परगास। अखण्ड सरूप तू ही निर्वास॥
साची सेवा दीजो प्रभ देव। सिमर सिमर पद पावाँ निरभेव॥
अनमत अन्ध अत अज्ञान। कह बिध ध्यावाँ शुद्ध रूप सुजान॥
औगन भरया मन नित भरमाई। दीनदयाल तेरी सरनाई॥
जुगत मुकत कोई ना जानी। केवल प्रीत तुध चरन पहचानी॥
आस भरोसा कोई नहीं मेरा। नित आधार राखूँ प्रभ तेरा॥
ज्ञान ध्यान कछू नहीं जाता। तेरी टेक नित पुरख बिधाता॥
रंचक गुन नहीं मन के माईं। केवल ओट तेरी पार गोसाईं॥
अत नीच नहीं सूझत कोई। दीनदयाल दर दीजो ढोई॥

**तुम दातार सरब दातारी, मैं हूँ अन्ध भीखार।**
**'मंगत' माँगे प्रेम रस, चित चरन कँवल आधार॥ 682**

मैं अत बिकारी नित हूँ देवा। किस भाँत पावाँ तेरे चरन की सेवा॥
नित निहथाँवाँ नित परदेसी। आवागवन नहीं मिटे संदेसी॥
अतीअत चंचल मन संग धारी। नहीं चित आवे तेरी प्रीत आपारी॥
अन्ध विश्वास बुद्ध अज्ञानी। तेरी महमाँ नहीं करूँ पहचानी॥
विद्याहीन विचार से हीन। अन्धमत नित फिरे मलीन॥
ना कोई ओट सखा ना कोए। अंध ग़ुबार चित घने समोये॥
बिनसनहारी माया संग डूबा। तुध परताप नहीं हिरदे सूझा॥
छाया प्रीत में नित गरसाया। साखी पुरष नहीं सिमरन चित आया॥
आवे जावे पल पल अंधयारा। दुष्ट विकार अंतरगत धारा॥
सूझ बूझ नहीं कोई चित आये। जनम अकारथ दियो गँवाये॥
दीन दुनी दोनों दी हार। समाँ गँवाया विच कूड़ विकार॥
झूटा निहों संग जगत लगाई। अंत की बारी सब छोड़ के जाई॥

अंतर बाहर नित भरम लपटाया। पाप विकार में नित भरमाया॥
ना सत कथा ना प्रेम विचारी। अपनी आप नित करी ख़वारी॥
भोग विकार में नित परबीना। नित आनन्द नहीं प्रभ को चीना॥
सोवन जागन भोग विकार। दुर्लभ जनम में भ्रम खाटी सार॥
जो कुछ कीया सो ही दुःखदाई। बिपतकाल में होये कौन सहाई॥
साचा धरम नहीं कियो विचार। पशु समान दियो जनम गुज़ार॥
जीवन आसा नित नित मानी। अंत समाँ नहीं कियो पहचानी॥
झूट देही संग अधिक प्यार। देखत देख होवे ये छार॥
माया भरम ने अत भरमाया। सत विचार नहीं हिरदे आया॥
कूड़ी सम्पत अंत त्यागी। चले निमाना ये जीव मंध भागी॥
जन्मे मरे नित आवे जाये। अपनी करनी की मिले सज़ाये॥
बिन प्रभ तेरे नहीं बिपता नासे। दीनदयाल करूँ अरदासे॥

**सब जग भरम सरूप है, जीव नहीं छूटन पाये।**
**'मंगत' नित प्रभ सरनागती, पल पल चरन ध्याये॥ 683**

बिन तेरे नहीं सूझे ठौर। आवे जावे चौरासी घोर॥
बिन तेरे नहीं और पछाता। जो हरे मन का संतापा॥
बिन तेरे नहीं कोई शक्त विचारी। जो इस भरम से देवे निस्तारी॥
बिन तेरे नहीं कोई समराथा। होयें दयाल जो पल पल नाथा॥
बिन तेरे नहीं कोई धाम सुखदाई। जाँ में काल नहीं फेर फराई॥
बिन तेरे सब ताप तपाये। आनन्दसरूप केवल प्रभ राये॥
बिन तेरे सब भरम के माहीं। सरब न्यारा तूँ निर्मल साईं॥
बिन तेरे सब काल का खेल। केवल तू ही आनन्द सुख मेल॥
बिन तेरे सब ही दुःख पावें। काल चक्कर में आवें जावें॥
बिन तेरे नित ही मन मूढ़ा। पाप कुपथ में नित भरपूरा॥
बिन तेरे प्रभ कोई नहीं और। जो भव दुस्तर से लगावे ठौर॥
बिन तुध चरन नहीं शांत चित आए। पलक पलक किये कोट उपाए॥
बिन तेरे नहीं कोई सत मीत। जो पार लंगावे ये दुस्तर भीत॥
बिन तेरे सब मिथ्याबाद। आसा तृष्ना भरम परमाद॥

बिन तेरे संकट अत धारी। पल पल रोये ये जीव अंध्यारी॥
बिन तेरे प्रभ कौन छुड़ाए। अधिक कलेश जो चित में पाये॥
बिन तेरे प्रभ नहीं कोई आस। जनम मरन की जो काटे फाँस॥
बिन तेरे नहीं और दिखाई। जो इस जीव का भरम मिटाई॥
बिन तेरे नहीं और कोई मान। तेरी सरन हूँ सत भगवान॥
बिन तेरे नहीं कोई सुने पुकार। दीनानाथ तू ही दातार॥
सकल कलेश कीजो प्रभ दूर। साची भगत दीजो हज़ूर॥
बारम्बार करूँ परनाम। निर्मल प्रीती दीजो बिसराम॥
चरन कँवल को करूँ डंडौत। दीनदयाल तेरी है ओट॥
अपनी महमाँ की कीरत दीजो। सकल माया का विकार हरीजो॥

**माँगूँ नित नित कीरती, प्रभ चरन कँवल आपार।**
**'मंगत' की हरयो तृखा, पल पल करूँ पुकार॥ 684**

तू ही सत आद आनादी। पूरन पुरख आलख बिस्मादी॥
तू ही रहे जुगाजुग पूर। समरथ पुरष हूँ चरनी धूड़॥
तू ही परमानन्द परगास। बारमबार करूँ अरदास॥
तू ही अखण्ड आनन्द सरूप। नमो नमो नित चरन अनूप॥
तू ही संकट हरनेहारा। निमख निमख करूँ निमस्कारा॥
तू ही मात पिता किरपालू। करूँ डंडौत नित दीनदयालू॥
तू ही पल पल होत सहाई। सत ठाकर तेरी सरनाई॥
तू ही अन्ध बुद्धि परगासे। शुद्ध सरूप अबगत अबनासे॥
तू ही किरपा निधान प्रभ मेरा। अनमत राखो नित चरनी केरा॥
नित अरदास करूँ प्रभ देव। रंचक दीजो चित चरन की सेव॥
तेरी सेवा नित करे निहाल। गाऊँ कीरत तुध चरन दयाल॥
तेरी सेवा जो जन पाये। तिसके चरन में रहूँ समाये॥
तेरी सेवा पाए वडभागी। होयें दयाल करें अनुरागी॥
अधिक वडयाई तेरी प्रभ पाए। हूँ बलिहारी जो भेद लखाये॥
बंध ख़ुलासी पल में होई। तेरी महमा जिस जन परोई॥
तपन विनास सुख शांत समाये। पूरन पुरख तेरी शोभा जो गाये॥

आनन्द सरूप तेरा आपार। नित बलिहारी जाऊँ बलिहार॥
दीजो नाम अखण्ड ध्यान। खेम कुशल पूरन भगवान॥
दीजो प्रेम चित चरन आपार। माँगूँ रसना प्रभ बारमबार॥
दीजो भाओ ग़रीबी संग। ध्याऊँ नित तेरा सतसंग॥
दीजो सकल जगत की धूड़ी। तूँ समरथ पुरष हज़ूरी॥
दीजो शुद्ध विवेक आचार। नित बन्दूँ तुध चरन आपार॥
दीजो निर्मल प्रेम इक नाम। दिवस रैन सिमरूँ सुखधाम॥
दीजो अपने जन की सेवा। सेव सेव पाऊँ तुध देवा॥

**हरजन की कीरत माहीं, मन तन रहे समाये।**
**'मंगत' तिन परसाद से, प्रभ दर्शन होयें अगाहे॥ 685**

हरजन के नित चरन बलिहारी। जाँ से पाऊँ तेरी महमा आपारी॥
घड़ी सुलखनी सो ही होई। जिस पल प्रभ का नाम परोई॥
सतनाम मन माहीं ध्याई। सत ठाकर की सेव कमाई॥
एक आधार पायो प्रभ संग। हरजन रंगयो प्रभ का रंग॥
जग में आया सो गुनवंत। साची प्रीत पाई भगवन्त॥
तिसके दरस से जाऊँ बलिहार। जिस जन पाया प्रभ नाम आधार॥
भरम त्याग नित शांत समाई। सत सरूप मन लेख लखाई॥
आलख बानी प्रभ की विचारे। सत विश्वास अंतरगत धारे॥
सुकृत जीवन निर्मल करम। सत ठाकर का पायो धरम॥
पल पल सिखया तिसकी विचारी। जिस जन पाया तेरा दरस मुरारी॥
सुन उपदेश मन ठाँड समाई। एक आधार तेरे चरन का पाई॥
नाम आहार में नित तृप्ताई। सत अनुराग तेरा नित गाई॥
साची बिरह तेरे चरन की धारी। तेरी शोभा घट घट विचारी॥
अपनी प्रीती आप लखाई। अपने जन की करी वडयाई॥
सरब निधान तू ही प्रभ मेरा। सिमर सिमर पाऊँ सुख घनेरा॥
माँगूँ सार सतनाम ध्यान। निमख निमख चित करूँ बखान॥
अनमत की बेनती सुन देव। अपने चरन की बख़शो सेव॥
सेव सेव पाऊँ तेरी प्रीत। अपरम अपार तू ही जगजीत॥

नित सिमरूँ नित करूँ आदेस। तूँ ग़रीब निवाज़ सरब का ईश॥
अत मूढ़े को दयो आधार। पततपावन तू ही करतार॥
तेरी सरन तेरा विश्वास। तेरी महमा चित करूँ उपास॥
तेरा ध्यान चित रहे समाई। अपने जन को दियो भेद लखाई॥
तेरा नाम नित-नित करूँ पान। तेरे दरस से बल जाऊँ भगवान॥
तेरी आज्ञा में तन मन वारूँ। दीनदयाल तेरे चरन पधारूँ॥

**तेरी महमाँ घट घट सिमरूँ, चित विसरे दूजी आस।**
**'मंगत' दुर्लभ पलक सो, जब पाऊँ दर्शन प्रभ अबनास॥ 686**

प्रभ दर्शन वडभागी पाए। दुबधा त्याग मंगल चित गाये॥
आनन्दसरूप मन मगन समाई। जो चित कीरत प्रभ की पाई॥
निहथाँवाँ सतथाओं समाया। सर्वज्ञ कला प्रभ मेल मिलाया॥
नित महमा प्रभ की मन गाई। दीनदयाल की नित सरनाई॥
अनन प्रीत प्रभ चरन की दीनी। अपने जन की नित रखया कीनी॥
औगन सकले चित भसमत होए। जिस पल प्रभ का दरस लखोए॥
परम आनन्द प्रभ दर्शन से पाई। जनम जनम की सब जलन मिटाई॥
प्रभ दर्शन तुल नहीं सुखसार। हरजन के नित चरनी बलिहार॥
कल्यान सरूप आनन्द की खानी। पूरन भाग कोई सोभा जानी॥
दर्शन पाये मन सुध विसराई। आपा त्याग सम्मत चित आई॥
केवल एको देखा सब थाहीं। जल थल हस्ती कीट के माहीं॥
अत परकाश अबगत सरूप। हरजन परसे सत वस्त अनूप॥
अधिक प्रीत तिस चरन समाई। दिवस रैन तिसका जस गाई॥
सिमर सिमर सब भरमत टारी। जग जीवन सत सार विचारी॥
परम आनन्द के गाओ गीत। अचरज वस्त भई परतीत॥
दीनदयाल भये आप दयालू। अत ही अन्ध पर भये किरपालू॥
प्रभ के दर्शन योग कहाँ मूढ़ा। भये दयाल प्रभ आप हज़ूरा॥
जलन मिटाई आनन्द वरताया। बिस्माद सरूप घट दरस दिखाया॥
अपना तेज प्रभ आप लखाये। चरन अमरत घट पान कराये॥
अमीरस पी के जीवन को पाया। अखण्ड प्रीत सतनाम ध्याया॥

रोम रोम में ठाँड समाई। दीनदयाल प्रभ भये सहाई॥
कित बिध उस्तत अंधमत कीजे। अपने भाने जन चरनी लीजे॥
चौसठ घड़ी करूँ प्रभ अरदास। अपने चरन कँवल में दियो निवास॥
जुग जुग सोभा तेरी बन आवे। नीर में नीर ज्यूँ मेल मिलावे॥

**तू ही तू सरबगत देवा, सब तेरा परताप।**
**'मंगत' दृढ़ अनुराग से, सतनाम को हिरदे जाप॥ 687**

## प्रसंग-प्रभु की महमाँ

प्रभ अपने की महमा गाओ, जग जीवन सुफल हो जाई।
गुनी ज्ञानी नित कीरत गावें, प्रभ चरन कँवल सुखदाई॥
एह संसार अगन सम मीता, प्रभ नाम सब ताप मिटाई।
नाम बिना नहीं शान्त आवे, जो अत सम्पत घर पाई॥
सिमर सिमर तूँ सरजनहारा, पल पल करो तिस वडयाई।
बारमबार ना मानुष चोला, साजन जग में पाई॥
प्रभ बिन कोई सखा ना संगी, जो चित शान्त दिखाई।
आदी अंत साखी प्रभ एको, सुन साध बचन अधिकाई॥
दु:ख में आवें दु:ख में जावें, दु:ख में रहन समाई।
साचा सुख हरजन ने जाना, प्रभ चरन कँवल चित ध्याई॥
प्रेम प्रीत में रंगे मन अपना, सतनाम का लेख लखाई।
नाम रतन जग सार पछाता, नित तिस चरन समाई॥
सो ही घड़ी बलिहार है जग में, जो प्रभ शोभा चित गाई।
अपने आप में भई सुहागन, घर साचा कंत मनाई॥
करूँ पुकार पल पल माहीं, कोई गुरमुख भेद अर्थाई।
साचा ठाकर घर परगट देखा, तिस महमा नहीं वरनी जाई॥
जिन प्रेम कियो तिन हर रस पायो, आवागवन का भरम मिटाई।
रस रस रसयो प्रभ के चरने, छिन छिन सेव कमाई॥

**पूरन भाग कोई गुरमुख जागे, रैन दिवस लिव लाई।**
**'मंगत' निरमल गत को पावे, प्रभ चरन भयो सरनाई॥ 688**

हर कीरत मेरे मन बसी, सुन साध बचन सुखरासी।
आवागवन का संसा नास्यो, पायो नाम रतन अबनासी॥
साचे नाम की प्रीत चित लागी, जनम जनम दु:ख दूरे।
खिमा ग़रीबी घर वास करीना, उतरे पाप करूरे॥

पल पल ध्यावाँ कीरत गावाँ, प्रभ चरन कँवल निर्धारी।
भरमन त्याग घर लीन समाये, पायो दर्शन पार मुरारी॥
साध चरन की धूड़ रमाई, चित सतगुर सीख पछानी।
अमरत नाम गाया दिन राती, प्रभ चरन में लीन समानी॥
नाम पदारथ नित नित माँगूँ, चित बिनसे दूजी आस।
सतगुर दया साध की संगत, मन शबद भयो परगास॥
पल पल गाया नाम को, पाई साध सेवा सुखरीत।
प्रेम के रंग में रंगया, सब जीवन भयो पुनीत॥
नाम जपो वडभागियो, सतनाम जपो तत्तसार।
नाम विसारे जो गुनी, तिस जीवन धृग संसार॥
पल पल नाम कमायो, उट्ठत बैठत मीत।
सुफल कमाई जगत में, सुन गुरमुख की रीत॥
भला भयो भला वरतायो, मन पायो नाम विचार।
मिटा संदेसा काल का, सत शबद मिला आधार॥

**साखी साचे नाम की, मन तन में लियो परोये।**
**'मंगत' सिमरन सार है, सब भय भरम दुःख खोये॥ 689**

कोई गुरमुख सिमरे नाम स्वामी, त्याग भरम दुःख खानी।
अंतर बाहर शान्त समावे, घर आलख लेख लखानी॥
प्रेम प्रीत की रसना धारी, सतनाम की सेव पछानी।
आद जुगादी सत कर पूजे, आलख शबद सत बानी॥
बिरह बैराग का भोजन कीना, चित एक आधार समानी।
दुबधा त्याग प्रभ एक ध्याया, चित कीरत सार बखानी॥
गंग जमन का मारग सोधा, स्वास की गत मित जानी।
अंतर बाहर सम कर पूजे, मन चंचल विरत ठहरानी॥
नियम संजम ध्यान पछाता, सतनाम जपन गत जानी।
दुर्मत रोग जीव का नासे, घर सार शबद पहचानी॥
गगन मंडल में अनहद बोले, अमीरस उपजे बानी।
एक सुरत हो मंगल गाया, मिटी काल जाल भ्रम खानी॥

शबद में सुरती पल पल खेले, तज इच्छया करम निशानी।
निर्भय रूप शबद रसखाये, सब आवागवन बिनसानी॥
अद्भुत नाद कुलेल करे घर, लीन भयो मन बानी।
एक सुरत नित रसना खावे, अमरलोक गत जानी॥
इच्छया करम ग़ुबार विनासा, जिस सुनी ये सारंगबानी।
नाम सिमर के जीवन पाया, घर ब्रह्म जोत दरसानी॥

**वडभागी ये मारग सोधे, चित सतगुर सेव पछानी।**
**'मंगत' माया भरमन छूटे, पद परसे अखण्ड निर्वानी॥ 690**

ऐसी कीरत जिस जन पाई, सो ही मुकत समाये।
अमरत शबद अखण्ड सुखरासी, पल पल सेव कमाये॥
बाँध के सुरती अन्तर कीजे, दसवें घाट ठहराये।
अनहद नाद रतन को पीवे, जनम जनम भ्रम जाए॥
त्रैगुन माया जाल विनासे, सतनाम की कीरत पाए।
अखण्ड प्रीती मन में धर के, नाम गोबिन्द का गाये॥
नाम को सिमरे शबद को पीवे, अकथ कथा अरथाये।
गुपत परगट भेद पछाने, सब मन का भरम चुकाये॥
एक आधार अन्तरगत धारी, शबद महमा को ध्याये।
अबनाशी पुरष पछान करी, निमख निमख रस खाये॥
अमरत शबद से अमरपद पाया, सब मन के रोग मिटाये।
मिथ्या भरम की रसना त्यागी, उपरस धाम लखाये॥
शबद में जीवन हरजन पावे, घर अबगत खेल खिलाए।
सत सील मन आन समाया, सब ताप तपन बिनसाये॥
ऊँचे धाम शबद तत्त बूझे, कोई गुरमुख तत्त गत पाये।
अपना आपका दर्शन करके, मन अखण्ड शान्त समाये॥
घर विच घर का दर्शन पाया, शबद सार तत्त ध्याए।
अंतर बाहर प्रभ एक दिखाया, सब दुर्मत ग़ुबार मिट जाये॥

**शबद में सुरती रुच रुच खेले, सच खण्ड लीन समाये।**
**'मंगत' विरले भई परापत, सतनाम कीरत सुखदाये॥ 691**

आनन्द मंगल गाओ मेरी साजन, घर में कन्त बिराज रहे।
सुन्दर छबी तूँ निरख नारायन, जग में जीवन का लाभ ले॥
आनन्द मुकन्द मूरत है प्रभ की, संशे शोक सब दूर भये।
बाहर की सब भरमन नासी, घट भीतर अमरत पान करे॥
प्रेम की खानी अनहद बानी, उनमुन घाट की सूझ पड़े।
अकथ कथा मन नाम ध्याये, भव दुस्तर से सहज तरे॥
आलख शबद पुरख अनादी, ऊँचे शिखर पुकार करे।
चिन्ह वरन नहीं माया छाया, केवल रूप आपार परे॥
निस दिन मारग पिया दा खोजो, जाँ में काल नहीं घात करे।
सिमर सिमर नित साचा स्वामी, वस्त अनूप घर नज़र पड़े॥
जनम जनम की तृखा विनासे, प्रेम प्रीत चित ध्यान धरे।
अजर अमर पद पावे पूरा, जो गुर की सीख विचार करे॥
अचरज वस्त परापत होई, सतनाम में मनुवाँ लीन होये।
प्रेम ख़ुमारी चढ़ी दिन राती, शबद धार चित ध्यान परोये॥
दु:ख द्वन्द से हरजन छूटे, अगम निगम का लेख करे।
चरंजीव पद परसे पूरा, नित जीवे नहीं कभूँ मरे॥
पाँच तत्त का पुतला साजा, छिन आवे छिन नाश भये।
पूरन भाग कोई गुरमुख ज्ञानी, निर्मल नाम का भेद कहे॥

**अंजन माहीं निरंजन देखे, मानुष जनम की सार लये।**
**'मंगत' अन्तर भयो परगासा, हरजन जग को जीत चले॥ 692**

जिन प्रेम से प्रभ नाम ध्याया, तिन घर मंगल होई।
काल करम का चक्कर विनासे, भय भरम सब खोई॥
नाम रूप की कलपन नासी, सतनाम भयो परगासा।
भाओ भगत का पहन के चोला, हरजन करे अरदासा॥
रुच रुच नाम प्रभ दा गावे, लोक लाज बिसराई।
साचा हुकम मन अन्तर जापे, सतरूप लखी प्रभताई॥
जीवन रूप बिशम्भर स्वामी, निमख निमख चित धारी।
खेम कुशल तब घर विच पाया, हरजन लेख विचारी॥

अमरत पीये अमरत ध्याये, अमरधाम बिसरामी।
दुर्मत भरम माया का नासे, घट पायो पार स्वामी॥
छिन छिन सुरती अंतर राखे, शबद सार को ध्याई।
आपा त्याग भया निरबन्धन, सतनाम कथा अर्थाई॥
बाहर की सब सुध बुद्ध छोड़ी, अन्तर ध्यान लगाई।
अनहद नाद रतन को पाया, चित सुन्न समाध समाई॥
जो कोई ऐसी रसना बूझे, हंस गती सो पाए।
पूरन पुरख का दर्शन करके, करम चक्कर बिनसाये॥
शबद ध्यान पावे कोई गुरमुख, जो नाम आधार समाई।
रैन दिवस चित चरन चितारे, आपामत मिटाई॥

**निर्मल होके निर्मल पाया, रूप रेख बिन देवा।**
**'मंगत' किरपा साध से, पाई चरन की सेवा॥ 693**

प्रभ चरन कँवल नित ध्याओ, ये लाभ जगत में भारी।
कलह कलेश मन सहज विनासे, घर परसे शांत अपारी॥
विखयम माया का बन्धन टूटे, सत शबद का लेख लखाये।
गवन त्याग निज घर बासे, अगम कला अरथाए॥
महमा नाम की अपरम अपारी, कोई गुरमुख भेद पछानी।
रैन दिवस इक प्रीत माईं, सिमरे अगम धुन बानी॥
नौ खण्ड भूमी पर विजय लखाई, अगम देस बिसरामी।
चातक वाँग प्रभ नाम ध्याओ, लखया लेख अनामी॥
हंस हंस उठ चले सरोवर, अमरत कीजें पाना।
काग कुबुद्धी भरमत भरमें, नहीं पावें सार ठिकाना॥
ज्ञानी गुनी जप जप थाके, कोई विरला पार को पाई।
सतनाम में जीवन जीवे, सब तृष्ना भरम मिटाई॥
नीर छीर का निरना कीना, तब मानसरोवर नहाई।
जनम जनम की तपन विनासी, जीव शान्त पद पाई॥
छाड परीती जग कुरीती, प्रभ नाम का मंगल गाओ।
समाँ अमोलक हाथ ना आए, हर चरनी सहज समाओ॥

करम चक्कर ना बिनसे मीता, बिन सतनाम ध्याई।
अनेक बिगन को हरनेहारा, सत शबद सुखदाई॥

**सत सील को हिरदे राखो, प्रभ का नाम विचारो।**
**'मंगत' मारग ज्ञान का ये ही, बहु जन उतरे पारो॥ 694**

सत सरूप अजर अबनासी, जो सिमरे सुख पाये।
पलक विचार आवे चित माहीं, कोट पाप बिनसाये॥
सब कुछ कर्ता हर्ता स्वामी, चित चरन राखो विश्वासा।
प्रभ सरनागत बहु सुख होवे, मिट जाये काल तिरासा॥
अनक व्याधी से मन छूटे, राम रतन को पाई।
हरजन सिमरे नाम स्वामी, पल पल लेख लखाई॥
दुर्मत रोग माया बिख नासे, प्रभ कीरत को गाई।
सिमर सिमर सतनाम स्वामी, हरजन करें दुहाई॥
भव-सिन्धू से निस्तर पाये, राम चरन निहों राखी।
निमख निमख परीत कमाये, गावे प्रभ की साखी॥
रे मन मूढ़े हर जस गाओ, छाड सयानफ़ गहरी।
चार दिनाँ सब जगत तमाशा, ना मेरी ना तेरी॥
बड़े बड़े बल शूर जग आये, बहुरंग चक्कर चलाई।
ओड़क चले निरासे जग से, सत सरूप विसराई॥
चौसठ घड़ी सिमर अबनासी, सम्पत ये सुखदाई।
तृपत चले संसार से, चित साची प्रीत कमाई॥
सुन्दर तन को देख ना भूलो, इक पल में राख समाई।
लाभ जीवन का ये ही मीता, इक नाम प्रभू चित आई॥

**अंतर की गत सहज पछाने, जो एक नाम चित धारी।**
**'मंगत' परगट अन्तर देखे, अबगत रूप मुरारी॥ 695**

प्रभ चरन जिस प्रीत विचारी, दुर्लभ सो जग आये।
झूट भरम का छाड भरोसा, सत की सेव कमाये॥
अनेक जन की तपन निवारी, सतनाम सोभा विचारी।
आप तरे भव दुस्तर माया, कोट किये निस्तारी॥

कोमल बचन अधिक सुखदाई, सत सरूप विश्वासी।
जो जन प्रेम से हिरदे राखे, कटे करम की फाँसी॥
पाप कूप से मुक्ता पावे, साध बचन चित धारी।
एक नाम परतीत पछाने, मोह भरम करे छारी॥
ज्ञान विज्ञान की रसना गाये, निर्भय पद समाई।
एक आधार साहब का पाए, माया भरम चुकाई॥
साचा गीत गावे गोविंद का, पल पल निहों लखाई।
पूरन भाग कोई गुरमुख बूझे, अनन भगत सुखदाई॥
साची प्रीती साची करनी, सत रहनी को पाई।
नाम आधारी अमर पद पावे, आवागवन बिनसाई॥
अन्तर धारा शबद पहचानी, सत ठाकर सुखरासी।
अपने आप में मंगल पाए, सिमर नाम अबनासी॥
लोक परलोक की ममता नासी, नरक स्वर्ग भरम टारी।
सरब सरूप इक ब्रह्म पछाता, अखण्ड शबद निर्धारी॥

**ज्ञान की रसना नित नित खाके, जीव अमर पद पाई।**
**'मंगत' दुर्लभ दरसन हरजन का, जो प्रभ के चरन समाई॥ 696**

भरम त्याग सतनाम विचार, ये ही परमगत मीत।
प्रभ का नाम सब मैल उतारे, हिरदा करे पुनीत॥
श्रोता वक्ता शान्त समावें, सत रूप कथा अर्थाये।
भरमन त्याग आवे विश्वासा, भले संजोग प्रगटाये॥
सत परतीत प्रभ चरन की आवे, बुद्ध सुतंतर होई।
पाप पुन्न की सोझी पाके, चित निर्मल दिसा परोई॥
भरम सरूप सब जगत पछाता, शबद सार गत पाई।
अन्तरयामी प्रभ घट में सूझे, जो जल थल पूर समाई॥
नित सिमरूँ नित ध्यान कमाऊँ, अखण्ड शबद निर्वानी।
दुबधा त्याग मंगल चित आवे, घट सुन्न समाध पछानी॥
शबद घनघोर करे घट भीतर, भयो एक नाम भरवासी।
निश्चल ध्यान शबद रस खाया, काल करम गई फाँसी॥

अजर पुरष संग मेल भयो, पूरे भाग लखाई।
दीनदयाल का दर्शन करके, चित अघट शान्त वरताई॥
पूरन पुरख की सेव पछानी, सतगुर की सीख विचारी।
सरब जतन भयो जग में पूरा, पाए शबद रूप निरंकारी॥
सरजनहार का सिमरन करके, औगन सकल त्यागी।
शबद ध्यान में निश्चल होया, सत साजन वडभागी॥

**साची कीरत तिस जन पाई, अमर शबद को खाये।**
**'मंगत' निर्मल प्रीत से, पलक पलक जस गाये॥ 697**

पारब्रह्म सिमर तत्त अबगत, जुग जुग कथा अपारी।
अकथ लेख ना लिखने आवे, बिस्माद कौतक को धारी॥
सरब व्यापक सरब न्यारा, सत सरूप सुख धामी।
अपनी माया परगट करके, सब घट विचरे स्वामी॥
सतगुर मिलया पटा लखाया, अभय जागीरी पाई।
पूरन पुरख की सोभा सूझी, मन तन शांत समाई॥
नित नित महमा प्रभ की पाई, दुबधा दुर्मत नासी॥
अन्तरगत सतनाम पछाता, शबद कला परगासी॥
अमरत भोजन हरजन खावे, तीन काल तृप्ताई।
कोट विगन से भई खुलासी, सतरूप की महमा गाई॥
आवन जावन भरम विनासा, एक नाम चित धारी।
सिमर सिमर के साचा स्वामी, उतरे भवनिध पारी॥
साचा सोहेला गाओ साजन, पल पल औध विहाए।
इस सागर संसार में, कोई इस्थिर रहन ना पाये॥
करो स्वागत प्रभ के चरने, ये जतन सुखरासी।
अजर अमर घर शबद पहचानो, बंधन कटे चौरासी॥
जनम मरन का रोग अत भारी, जीव परम दु:ख पाई।
प्रभ का नाम सिमर सुखरासी, जो पल में खेद मिटाई॥

**निश्चल ध्यान प्रभ नाम कमाओ, द्वन्द विकार विनासे।**
**'मंगत' अपरम अपार पुरखोत्तम, घट अन्तर भयो परगासे॥ 698**

शबद कला घट में परगासी, गुरमुख जीवन पाया।
एक नाम आधार पछाता, दुर्मत रोग मिटाया॥
नित नित मंगल घर में होई, शबद सार चित ध्याई।
वस्त अनूप शबद रस खाके, मनुवा गयो तृप्ताई॥
भरम ग़ुबार माया का नासा, सत शबद में लीन समाई।
अंतरमुख हो नित रस खावे, चंचल विरत ठहराई॥
आलख शबद सरब परकाशी, तीन भवन बिसरामी।
गुरमुख साजन सोझी होई, विरत भई निष्कामी॥
काल करम का बन्धन नास्यो, शबद ध्यान चित धारी।
गगन कुंड में कर अशनानी, घट अबगत लेख विचारी॥
घट में भौर गुँजार करे नित, बहुरंग बानी बोले।
संशा त्याग जो भेद पछाने, तिस जीवन भयो अडोले॥
निमख निमख में कीरत गावे, आलख शबद अबनाश।
सकल व्याध से हरजन छूटे, घट ब्रह्म जोत परगास॥
पारावार नहीं गत कोई पावे, शबद भेद आपारी।
रंचक कीरत जिस जन जानी, सब मन के ताप निवारी॥
अमरत शबद पुरख अबनाश, घट घट रह्या समाई।
परम विवेकी गुरमुख विरला, शबद भेद अर्थाई॥

**शबद पछाने सब बन्धन नासे, जीव परमगत पाये।**
**'मंगत' दुर्लभ तिसकी कीरत, जो प्रभ के चरन समाये॥ 699**

पूरन पुरख सो ही गुनवंता, जो हर की भगत विचारे।
खिमा दया चित अन्तर राखे, जग साचा करे ब्यौहारे॥
सतगुर सीख इक नाम ध्यावे, चित पूरन विश्वास।
एक आधार राखे मन अन्तर, सत मारग करे निवास॥
कर्ता हर्ता पुरखोतम सिमरे, सब भावी साहब पछानी।
ज्यों ज्यों राखे त्यों हो रहिये, ऐसी सेव कमानी॥
विच हज़ूरी आप मिटावे, पल पल कीरत गाई।
प्रभ करनी पर धीरज राखे, ऐसी भगत कमाई॥

सबमें प्रभ का दर्शन कीजे, देह अभिमान निवारी।
सरब जीवों की सेव कमावे, निष्काम भाओ चित धारी॥
दीनदयाल की पूजा कीजे, अंतरगत चित सेवे।
रोम रोम में उस्तत करके, सार धरम की लेवे॥
अखण्ड प्रीत इक नाम ध्याई, दूजा भरम त्यागी।
आलख पुरष शबद घट परसे, सो हरजन अनुरागी॥
एक बिरह प्रभ चरन की अंतर, मोह माया सब नासी।
रैन दिवस सत सेव कमावे, सब पाप से होये ख़ुलासी॥
निर्मल ध्यान प्रभ चरन समाया, अगम शबद अर्थाई।
सत सरूप की कीरत गाके, अमरलोक को जाई॥
**साची भगती साची जुगती, सत साधन सार पहचानी।**
**'मंगत' शबद रतन को पाया, जीव भयो निर्वानी॥ 700**

प्रभ अपने की सेव कमाओ, जग जीवन लाभ विचारी।
नाम प्रभू का सब बन्धन काटे, जीव पाये छुटकारी॥
नाम बिना सब मिथ्याकारा, मन का रचा पसारा।
जनम जनम दु:ख पावे भारी, धार माया अन्धकारा॥
तृप्त के कारन जतन नित कीजे, सम्पत बहु बिध धारी।
बिना विचार नहीं धीरज आवे, नित बन्धन दु:खकारी॥
अत दुस्तर ये जग की रचना, वार पार नहीं पाई।
अनेक जतन राखे दिन राती, चित रंचक शान्त नहीं आई॥
साचा मारग सत धरम पछानो, जो शांत अमरपद मीता।
नित नित साची प्रीत कमाओ, सब जीवन होए पुनीता॥
बिना धरम नहीं छूटन पाये, भव मारग अत भारी।
झूट सयानफ़ नित दु:खदाई, नित बन्धन विचारी॥
माया मोह घना परगासे, अनमत नित तपताये।
सकल सयानफ़ भई अकारथ, अन्त प्यासा जाये॥
अनक पाप मन अन्तर थापी, धन भूमी बहू धारी।
बिना भगत नर भयो अंजाना, सब जतन कियो दु:खकारी॥

बहु परिवार बहु मित्तर बनाये, भयो अंत कोई ना साथी।
देह त्याग के हंसा जाये, संग चलयो ना कोई नाती॥
**साचा प्रभ रूप पछानो, जो आद अंत संग रहाई।**
**'मंगत' तिसकी कीरत गाओ, जो पल पल होए सहाई॥ 701**

परम विवेकी गुरमुख गुनिया, जो प्रभ की सेव कमाये।
परम सखा प्रभ रूप पछाना, निमख निमख जस गाये॥
दृढ़ विश्वास चरन चित धारी, दूजा भाओ मिटाई।
सत सरूप अजर अबनाशी, चित पल पल सेव कमाई॥
मन अपने की दुबधा त्यागी, सतनाम आधार पछानी।
सत सिखया सतगुर की बूझी, पाई अमीरस खानी॥
तृपत भयो संसार में आके, प्रभ भगत पदारथ पाई।
सरब जिआँ का सरजनहारा, एको प्रभ आगाही॥
सब कुछ बनत बनावे स्वामी, सबसे रहे अलेपा।
जो सिमरे पद पुरख निरंजन, नहीं पावे भरम वखेपा॥
दीनदयाल का सिमरन कीजो, सब ज्ञान ध्यान की सार।
चौसठ घड़ी सिमर नारायन, जग साची कार विचार॥
नाम जपे सब बंधन नासे, घट की सोझी पाए।
मिथ्या भरम जीव का छूटे, सतरूप में लीन समाये॥
प्रभ चरन आधार पछाता, सत सिखया चित धारी।
अपने स्वामी की सेव कमाई, सब पाप से पाई निस्तारी॥
सत कर जाना सत कर माना, सत कर नित ध्याया।
सत विश्वास अंतर में राखा, त्रैगुन खेद मिटाया॥
**निर्मल सुरती सत रूप समाई, करम वासना नासी।**
**'मंगत' जीवन मुकत पद परसा, अचल अछेद अबनासी॥702**

## आपामत हरन विवेक

**आपामत अंधकार अत, त्रैगुन माया जाल।**
**'मंगत' तिससे छूटिये, जब सतगुर मिले दयाल॥ 703**

आपामत मूल अज्ञाना। निसदिन भरमे जीव अनजाना॥
सत सरूप शोभा विसराई। दुर्मत भरम में आवे जाई॥

धर अभिमान जतन नित कीजे। मोह माया का जाल नहीं छीजे॥
करम भोग इच्छया अत धारी। नरक स्वर्ग दु:ख सुख विचारी॥
आपामत ये संकट का मूल। भरमे जीव सूक्षम अस्थूल॥
आपामत दुबधा जो त्यागे। गवन विनास सत मारग लागे॥
साची सिखया ये ही सुखदाई। तजो आपामत परम दु:खदाई॥
शास्तर सिमरत अनेक विचारे। गरब धार नहीं उतरे पारे॥
परचण्ड सरूप माया दु:खकारी। अनमत जीव मत आपा धारी॥
अल्पज्ञ भाओ नित गरासी। कामना करम मन माहीं उपासी॥
छिन हरखे छिन शोक समाई। बिना विवेक नहीं दुबधा जाई॥
देह अभिमान जीव जो धारी। आपामत ये करो विचारी॥
देह के भोग में नित लपटाई। बिनसे देही परम दु:ख पाई॥
काम क्रोध अगन में तापे। आपामत रूप सन्तापे॥
बहुरंग जतन जीव नित धारी। दुर्मत विगन नहीं मिटे दु:खकारी॥
पाप पुन्न में नित समाई। आपामत धर आवे जाई॥
बिख सरूप माया परगास। सभी जन्त भये भय निवास॥
बिन तत्त ज्ञान तृपत नहीं पाई। चारखानी में नित भरमाई॥
दुर्मत रोग नहीं आपामत जाये। गुनी ज्ञानी बहु लेख लिखाये॥
मिथ्या रूप को सत कर जानी। असत माया का भयो अभिमानी॥
धर अभिमान नित प्यासा जाए। आपामत ये रोग अधिकाए॥
तीरथ बरत नियम बहुधारी। अधिक तपस्या में जीवन काढ़ी॥
बिना विवेक नहीं भरमन जाई। करम चक्कर में फेर फराई॥
मिल सतगुर सत सीख विचार। आपामत जाये भरम बिकार॥

**सत सरूप का सिमरना, सत सरूप विश्वाश।**
**'मंगत' ऐसी धारना, करे आपामत का नाश॥ 704**

आतम ज्ञान में मनसा धार। मिथ्या देह का जाये अन्धकार॥
सच्चदानन्द चेतन परगासी। आतम खोज पुरख अबनासी॥
आतम ज्ञान सब मैल को धोवे। गुरमुख विरले प्रापत होवे॥
शबद सरूप पुरख निरधार। सतनाम सिमर जग सार॥

आतम मूल जब ही पछाता। आपामत सब बंधन काटा॥
अंतरयामी घट घट समाया। आतम तत्त खोज निरमाया॥
रवि परकाश ज्यों अंधकार विनासे। आतम ज्ञान करे इयों मोह तम नासे॥
तपन बुझावे ज्यों मेघ की धार। आनन्द उपजावे त्यों आतम विचार॥
कोट नदियाँ ज्यूँ सागर समाएँ। आतम विवेक से इयों भरम मिट जाएँ॥
सरब व्यापक सरब अलेपा। वाँग आकाश तत्त आतम अलेखा॥
सबके आद मद्ध अन्त समाई। सरब शकत आतम वरताई॥
नित आनन्द सरूप अनादी। जो करे विचार सब मिटे उपाधी॥
आतम ज्ञान आतम ध्याना। आतम खोज पद निर्वाना॥
आतम विश्वास आतम की पूजा। आतम तीरथ परस सुख सूझा॥
आतम कीरत कथा विचारी। सत निध्यास आतम का धारी॥
देह मिथ्या सत आतम जानी। आतम प्रेम में मन ग़लतानी॥
आतम बिरह जगत से उदासी। आतम पूजे तब आपामत नासी॥
देवों का देव आतम पहचान। साखी पुरष आलख निरवान॥
आतम आधार सब जगत को देखे। सरब शकत आतम को पेखे॥
सतगुर पूरा जो आतमदरसी। तिसकी सेव तत्त आतम परसी॥
आतम योग आतम विवेका। आतम सिमरन है सार अलेखा॥
आतम पछाने देह मध नासे। आनंद सरूप में पाए निवासे॥
आतम पछाने मन धीर समाई। आवागवन सब भरम मिट जाई॥
आतम ध्यान सुख अपरम आपार। परम विवेकी कोई खोजे सार॥

**आपामत विकार में, सब ही जीव भरमायें।**
**'मंगत' आतम ज्ञान बिन, पलक ना धीरज पायें॥ 705**

अजर पुरख आतम विचारी। आपामत तब भरम निवारी॥
तीन काल देह मिथ्या देखी। आतम ज्ञान अमीरस पेखी॥
सरजनहार देह का ध्याई। तत्त आतम की प्रीत कमाई॥
बन्ध माया का मूल चुकाया। नाद सरूप आतम घर पाया॥
मानुष जनम की एह वडयाई। आतम ज्ञान मिले प्रभताई॥
आतम ज्ञान से मुक्ता होई। आवागवन की भरमन खोई॥

आतम सरूप की अत वडयाई। जगत का ठाकर पूर समाई॥
पूरन पुरष घाट नहीं पाये। जो जो सिमरे सब ताप मिटाये॥
आतम ज्ञान नित मन में धार। आपामत सब मिटे ग़ुबार॥
अंतरगत सो ठाकर बिसरामी। तिसका सिमरन परम सुखधामी॥
मन की दुबधा सब ही जाये। आतम सरूप का निश्चय पाए॥
आतम ज्ञान से भये पीर अवतारी। सिद्ध रिखीशर तत्त आतम विचारी॥
ज्ञान ध्यान और योग विवेक। सरब मारग आतम तत्त एक॥
ज्यों ज्यों आतम शोभा ध्याई। मिटे ग़ुबार चानन घर पाई॥
जो जनमे और मरन को पाये। माया खेल जानो दु:खदाये॥
सदा अजन्मा अंतर बिसरामी। आतम खोज तत्त शबद अनामी॥
नित ही नित निकट जो रहे समाई। नित परगट जो पुरख रहाई॥
अखण्ड शबद आतम निर्धारी। मिल सतगुर हो तिसका पुजारी॥
अंतर बाहर नित चरन ध्याई। पलक ना विसरे तत्त शबद अगाही॥
अमरत रूप अंतर परगासी। अमर भये जिन कियो उपासी॥
सो ठाकर सो सरब जग ईशा। सर्व आधार जप मिटें कलेशा॥
नित आतम की प्रीत कमाई। कर्ता हर्ता पुरख सुखदाई॥
दृढ़ विश्वास सत रूप विचारी। त्रैगुन माया की मिटे ख़वारी॥
नित ही जो तत्त आतम ध्याये। माया भरम सब लीन समाये॥

**आवागवन सब भ्रम मिटे, चित पाये आतम विश्वास।**
**'मंगत' होये निर्भय तब, जब लखे शबद परगास॥ 706**

सरब देव सरब तिस पूजा। ब्रह्मज्ञान शबद घर सूझा॥
ज्ञान ध्यान अनुभव परकासा। सत सरूप में लयो निवासा॥
उतपत परलय की सोझी पाई। आतम ज्ञान घर परगट ध्याई॥
साखी पुरष अजर अबनाशी। सिमर सिमर सब दुर्मत नासी॥
सरब में एक जोत दरसाई। राना रंक में सम वरताई॥
सरब काल पूरन सो देखा। सत तत्त आतम रूप अलेखा॥
दुस्तर जाल माया का नासी। दृढ़ निश्चय तत्त रूप उपासी॥
वेद ग्रन्थ महमा बहु गाई। सो तृप्ताये जिस परगट ध्याई॥

मन निर्मल बुद्ध चेतन होई। संशा त्याग इक ध्यान लखोई॥
निज सरूप में लीन समाई। आनंद सरूप आतम दरसाई॥
सत कीरत सत रसना जानी। आलख शबद घर पूजे ज्ञानी॥
द्वन्द विकार सब रोग मिटाई। दृढ़ निश्चय प्रभ चरन समाई॥
अपना बंधन आप निवारी। सत सरूप घट प्रीत विचारी॥
इन्द्री विकार से उपरस होई। अबनाशी तत्त सत शबद परोई॥
सतगुर दीख्या सतनाम विचारी। अबगत रूप घर परगट धारी॥
सिमर सिमर मन नेहचल होई। अबगत नाम पल पल लखोई॥
नाम ध्यान मन दुर्मत त्यागी। सत परतीत कोई जपे बैरागी॥
अनक पाप पल में भसमाई। सत सरूप कीरत जो पाई॥
दृढ़ विश्वास जो मन में राखी। अबगत शबद की गाये सो साखी॥
मान त्याग ग़रीबी पाए। सरब जीवों की सेव कमाये॥
सब कुछ हुआ प्रभ आज्ञा विचारी। आपामत तब मिटे ख़वारी॥
जीवन में जो सीस त्यागी। अमर शबद तिस अंतर जागी॥
मारग शान्त पल पल ध्याई। सत तत्त आतम का निश्चय पाई॥
अमरत नाम मन पाये आधार। दुस्तर माया से उतरे पार॥

**एक नाम मन तन रसे, दूजी आस विसराये।**
**'मंगत' ऐसी रहनी जो रहे, तब आपामत दुःख जाये॥ 707**

ज्ञान ध्यान की सार है, सतपुरख अलेख।
नित ही तिसके चरन की, राखो मन में टेक॥
मानुष देह का धरम ये, मन में आवे राम।
तजे आठ पहर का भटकना, जीव पाए बिसराम॥
सुत दारा धन जोबन, और बड़ा इक़बाल।
समाँ पाए छाड चले, सकली सम्पत माल॥
जिनाँ हर जस गाया, साचे मन प्यार।
दुर्लभ ते जन जगत में, अन्त भये निस्तार॥
दिवस रैन नर जात है, औध घटे नित नीत।
इक दिन देखें नैन से, जब गिरे ये बालू की भीत॥

इक दिन साजन चलना, ये छाड बाग़ीचा संसार।
आगे धाम की ख़बर कर, जाँ निस्चे जायें पधार॥
आदी सत अंत भी सत, एको सो प्रभ जान।
रूढ़ा शबद अगम का, परदे माहीं पछान॥
शबद सार जिस गाई, मिल सतगुर विख्यान।
सो ही नर निर्मल हुआ, पाए शबद की तान॥

**हिल मिल अंतर खेलयो, साचा शबद आगाध।**
**'मंगत' एको ध्यान में, लागी प्रेम समाध॥ 708**

सिमरन साचे नाम का, पूरन निर्मल योग।
अंतर का पट तब खुले, जब सतगुर होये संजोग॥
फिरे चौरासी धाम में, बहुत दुःखिया ये जंत।
करम की फाँसी तब गई, जब सिमरा नाम भगवन्त॥
उट्ठत बैठत सिमर लो, साचा नाम अगाध।
सिमरन ही के ज्ञान से, मिट गए सकल उपाध॥
मनुवाँ कठन कराल था, सहजे पाई जीत।
एको नाम की सिमरनी, धारी अंतर नीत॥
इस सागर संसार में, जो आया दुःख पाये।
बिना शबद परतीत के, नित निरआसा जाये॥
सत रूप भगवान का, एको ही नित जान।
बाकी झूठ पसार है, माया गुन निधान॥
सो ही निर्मल होया, सो ही भये परसन्न।
एको साचे नाम का, जिसने पाया धन्न॥
बारम्बार विचारया, अन्त सखा ना कोये।
ताँ सो समाँ विचार के, नित नाम की मनी परोये॥

**पूरन सिमरन नाम से, पूरन मनुवाँ होए।**
**'मंगत' पूरन गुर मिले, तब सतनाम परोए॥ 709**

जतन करत से रतन मिले, भव दुख होवे नास।
काल करम संशय जाये, निश्चल बुद्ध परगास॥

मन बानी दमना करे, पीवे शबद अमोल।
सहज भाए मन वश भया, मिटा करम दा ख़ोल॥
ग्रन्थ कतेब नर बहु पढ़े, मिटा नहीं मन दा वेग।
ज्यों आये त्यों चले, आस निरासे खेद॥
उठ कर जनम सुधार नर, सुन संतन दा बोल।
कूड़ माया सत आतमा, कर हिरदे विच तोल॥
सम्पत माया पाय के, नित रोये अनजान।
अमर पुरष विसराय के, भरमे वाँग स्वान॥
दुर्लभ देह मानुष दी, मिले आतम ज्ञान परगास।
ताँ सो सिमरो सतपद, जो करे भरम का नास॥

**जीतो मन अपने को, सिमरो साचा नाम।**
**'मंगत' खेल कठिन है, कोई सूरा परसे धाम॥ 710**

सूरे सब ही बने, इस धरम खेत में आये।
पर गुरमुख उभरे विरला, जो कौडी मोल विकाये॥
मान मध और मसख़री, सब को गई है खाये।
दीन ग़रीबी बन्दगी, कोई जन विरला पाये॥
वस्तू तो सब घर माहीं, नित रही परकास।
बिन भेदी ना पाइये, निर्मल तत्त अबनास॥
जाँ कूड़ कपट वापार है, ताँ कैसे पाइये भेद।
जब शरधा होये अधिक मन, प्रभ आप हरे आये खेद॥
छाड विगन पाखण्ड को, लख लो साचा लेख।
मानुष देह दुर्लभ है, हरनाम को लीजो पेख॥
विषे भोग की अगनी में, जले चराचर भूत।
क्या गुनी क्या मुनी, क्या राओ क्या भूप॥
बिना सत विचार के, मन नहीं आवे धीर।
सम्पत पाये ब्रह्मलोक की, तो भी मन दिलगीर॥
रंग तमाशा जगत का, छिन में और का और।
सकले भरम तरंग हैं, मन ने बाँधी डोर॥

माया चक्कर को देख के, सुखदेव का मन भरमाया।
और जीव की गत क्या, जो नित भरम लिपटाया॥
छूटन का उपाय सुन, मारग सहज सुखाल।
तन मन साखी एक प्रभ, नित लीजो चित भाल॥
तिसकी शकत बिन मुरदार हैं, क्या बली बलधार।
सरजनहार सो सरज रहे, चराचर संसार॥
अन्तर तेरे वसदा, नित करे परकास।
करन करावनहार है, अबगत तत्त अबनास॥
सकले करम प्राकिरत के, प्रभ आज्ञा में त्याग।
आपामत नित खीन कर, इक नाम में रख अुनराग॥
खुले ग्रँथी भरम की, घट में उमगे नाद।
डोलन से निश्चल भया, घर पाया बिस्माद॥
छिन छिन सिमरो नाम को, आलख पुरख आपार।
सब कुछ तिसका जान के, नित आज्ञा विचार॥
मिटे अगन संसार की, मन आवे संतोख।
वस्तू पाए अगोचरी, अबगत पुरख अनूप॥

**मिल कर संगत गाइयो, परम तत्त निर्वान।**
**'मंगत' हिरदय खोल के, कर लीजो पहचान॥ 711**

सतनाम नित खोजिये, पाइये निर्भय वाट।
करम सन्देसा सब मिटे, घर पायें शबद का घाट॥
द्वन्द भाओ दु:ख जाये घनेरा, समरस कीजें पान।
घर में घर का भेद पछानें, आलख शबद निर्बान॥
मन की दुबधा दूर होये, प्रभ रूप पायें परसाद।
निमख निमख में अन्तर जागे, त्याग कलपना व्याध॥
धन्न साजन जिन कार कमाई, अन्त चले जग जीत।
मानुष जनम का लाभ पहचाना, सतनाम मिली परतीत॥

**सत मारग में जाग्रत पाई, जग संसा मनों त्यागा।**
**'मंगत' अमरत पान किया, मिल साध संगत रंग लागा॥ 712**

करतम बुद्धी भरमन नासी, अकरतम आतम बोधे।
निमख निमख तत्त रूप समावे, नित नाम पदारथ सोधे॥
इन्द्री करम से होए अतीत, अन्तर शबद पहचानी।
दु:ख सुख द्वन्द से रहे अलेपा, तत्तवेता सो ज्ञानी॥
अन्तर सुरत शबद समावे, निरदेह पद को बूझे।
नाम रूप सब खेद विनासे, घट अमरत बानी सूझे।
अकथ अगह अलोक अनामी, परम परातन देवा।
परमानन्द तत्त जोत अखण्डत, निर्भय धाम लखेवा॥
वासना जाल से भयो निर्बन्धन, निर्वान गती को पाई।
प्रेम पुंज में मन मगन समाया, सरबे एक दरसाई॥
सत तत्त अगम अगोचर, आलख शबद गुनातीत।
अन्तर बाहिर सरब समाया, अनादी पुरष पुनीत॥
नित ही ध्यान रमें जन सूरा, गुर का बचन कमावे।
भ्रम असगाह तृष्ना दु:ख खानी से, सहज गुनी तर जावे॥
निर्मल मारग में निहचल होवे, मानुष जनम सुधारे।
तज अभिमान दीनता बूझे, नित गुरमुख करे ब्यौहारे॥
आपा पर का दोष त्यागे, सरब एको साखी जाने।
सहज सुभाओ सिमरे सतनाओं, अत प्रभता तिस पहचाने॥

**पूरन तृपती मंगल को पावे, जो नाम ध्यान समाई।**
**'मंगत' इस्थिर धाम को परसे, बौहड़ गवन ना पाई॥ 713**

सोना मनों विसार के, मारग धरम में जाग।
साहब दा फ़रमान सुन, ये लिख लेखा वडभाग॥
घर फूँका जिन अपना, तिन संग करे परीत।
आसा राखे जीवन की, तिन बुद्धी विपरीत॥
जैसा मित्तर खोजिये, ऐसा निहों निभाइये।
मारग प्रेम का कठिन है, सिर दीजे रसना पाइये॥

**कथनी से कछु ना सरे, तन मन दीजो वार।**
**'मंगत' जीवन जगत में, केवल दिन है चार ॥ 714**

भवसागर जल दुस्तर आपारा। बिन प्रयत्न ना पाए छुटकारा॥
अधिक प्रेम केवल हर नाओं। सिमर सिमर के पावे ठाओं॥
तन मन मिथ्या कर जब जानी। भयो बैराग भई दुःख हानी॥
काम क्रोध अगन सब जाए। साचे नाम की प्रीती पाए॥
उट्ठत बैठत सतनाम को आहारी। स्वास सुरत का भयो वापारी॥
मनुवाँ इकागर बुद्ध इस्थिरे। करम भरम के मिटे बखेड़े॥
नित चाहो इक दर्शन देवा। गुर परसाद पाये ये सेवा॥
आसा तृष्ना भरम जलाई। केवल माने रब रज़ाई॥
तब उरध कँवल परगासा होई। **'मंगत'** शोभा परसे जन कोई॥715
सत वस्तू का भया वापारी। सत सरूप निरंतर धारी॥
बाँधी पवन केवल हरनाम। अन्तर बाहर निश्चल बिसराम॥
प्रान अपान की जुगती भोग। गुर परताप मिटे सब रोग॥
जड़ काया से भये अतीत। उपजी चेतन तत्त परतीत॥
अनहद गरज पवन के सन्ध। नाभ कँवल का खोले बन्ध॥
उलटा नाद चढ़े आकास। छेदे चक्कर भये उदास॥
धुर कपाली उपजे तान। **'मंगत'** साधू सो कुरबान॥716
नौ दरवाज़े सहज बँधाये। पूरन गुर की सेव कमाये॥
धीरे धीरे मन निर्मल होई। दसवें घाट में सुरत परोई॥
आलख पुरख का देखे चमकार। दमके दामन दसवें द्वार॥
सो जोगी गुनातीत। दसवें घाट लागी प्रीत॥
जाप अजपा होए दिन रात। अखण्ड नाद मन माहीं समात॥
पूरन मिल मन पूरा होई। आवागवन की दुबधा खोई॥
कर सतसंग सतगुर की सेव। अबनाशी पुरख पाए निज देव॥
सहज धुन आतम परगास। पाए गुरमुख शबद निवास॥
अंतर का पट खोलया, लीना साचा नाम।
अगन मिटी संसार की, जीव पाए बिसराम॥
नित ही हर को सिमरयो, नित ही कर साधू सेव।
**'मंगत'** बंधन से छूटे, सहज मिले गुरुदेव॥717
नाम सिमर जग जीवन सार। साध-जनाँ ने करी पुकार॥

नाम सिमरन शान्त परगासे। नाम का सिमरन भव बन्धन नासे॥
उट्ठत बैठत जप अंतरयामी। विगन निवारे पावें सुखथामी॥
बिन सिमरे मन अधिक डोलाए। मिथ्या भोग में नित तिरखाए॥
शास्तर वेद करें पुकार। सत सरूप सिमर निरंकार॥
तन मन धन का सो ही स्वामी। सरब आधार सो पारगरामी॥
जो सिमरे सो ही सुख भाखे। अखण्ड अबनाशी तत्त को लाखे॥
मानुष देही सुकृत जान। जो चित आवे रूप भगवान॥
करम का संशय अधिक विकार। दुस्तर माया नहीं पारावार॥
साचा नाम जिस हिरदे ध्याया। अकरम रूप परमातम पाया॥
डोलन से मन निश्चल होई। अन्तर शबद की सूझ लखोई॥
प्रभ का सिमरन बड़ा परताप। आनन्द को देवे हरे सन्ताप॥
जिस जन अन्तर सार पछानी। अगोचर पुरष पाया निर्वानी॥
सुरत नाद में भई लवलीन। सरब ब्रह्मण्ड में एको चीन॥
जीवन मुक्त महा सुख भाखे। मिल सतगुर हरनाम जो चाखे॥
नाम की महमा अपरम आपार। जो जो सिमरे पावे छुटकार॥
अमरत नाद नाम निर्वान। गुरमुख बूझे पाए कल्यान॥
हर का नाम विचारयो मीता। साध-जनाँ की निर्मल रीता॥
विखे वासना सब जीव जलाए। हर की सेव से सरब दुःख जाये॥
चार पदारथ जे को लोड़े। साचे नाओं में मनुआँ जोड़े॥
मिटे तृष्ना चिंता सारी। आलख पुरख के भये पुजारी॥
गुर उपदेश जुगत कर साधे। मोह माया से मनुआँ काढे॥
आतम तत्त में बुद्धी परवेशे। मिट गये भरम घाल गुर उपदेशे॥
अन्तर आई बाहर जाई। पवन पुरख खेड रचाई॥
बारह आये सोलह जाये। स्वास सुरत इकत्तर मिलाये॥
नौ दर बाँधे दसवाँ घाले। पारब्रह्म निरन्तर भाले॥
बाँधे पवन सोध कुंड बठाई। पच्छम देश की सोझी पाई॥
पच्छम से फिर चढ़े सुमेर। पूरब दिशा के लागे फेर॥
गरजे अनहद उरध कपाली। सुरत समाए विच तिरनाली॥

दीनदयाल तब नज़री आया। गुर परसाद हरी सब माया॥
इरध उरध में पवना थामे। परसे पारब्रह्म अखण्ड अनामे॥
सुर नासिका जाने भेद। निराकार मिले गुरदेव॥
उलट पलट पवन को देवे। गुर के शबद में नितप्रति जीवे॥
मोह माया अँधेरा जाये। पारब्रह्म संग जाये समाये॥
निर्मल धारा एह योग की बानी। **'मंगत'** कोउ बूझे ब्रह्मज्ञानी॥**718**
स्वास सुरत सतनाम विचारे। जनम जनम मल सकल निवारे॥
उरध कँवल परगासत होई। नाभ कँवल जब सुरत समोई॥
प्रान अपान जुगत से मेले। गुर परसाद आतम तत्त खेले॥
उलटी धरती आकास समाई। शबद गुरु चित रह्या समाई॥
मीठी धुन विच गगन में बोले। निहचल मनुँवा अमरत तोले॥
नित नित शबद में सुरती धाये। गुर परसाद अमरपद पाये॥
उट्ठत बैठत सतनाम विचारे। अनन भगत चित माईं संचारे॥
प्रभ की आज्ञा नित नित सोधे। चेतन पुरख निरंतर बोधे॥
शरधावान गुरु भगत विवेकी। अन्तर की गत सो जन लेखी॥
मन जाए विच आनंद समाया। द्वैत मिटे इक सार लखाया॥
कही ना जाये मुख से ज्ञाना। ब्रह्म आनंद अखण्ड निर्वाना॥
सहज सुभाओ गुरु आन मिलाया। अगम निगम का भेद लखाया॥

**पाया भेद मिटा अन्धकारा, पीवे अमरत नीरा।**
**'मंगत' आस निरासा होये, तब परसे पद धीरा॥719**

## अथ भक्ति-मार्ग

पारब्रह्म परमेश्वर ध्याइये। पूरन मनोरथ मंगल पाइये॥
बल बुद्धी अत तेज परकास। सत सरूप चित लयो उपास॥
संकट नाश सत सम्पत पाई। दिवस रैन चित चरन ध्याई॥
एक ओट एको भरवास। सिमर सिमर सत तत्त अबनास॥
प्रभ अपने की उस्तत विचार। जग आवन की साधन सार॥
अखण्ड परकास नित आनंद रूप। सरब आधार अत शकत अनूप॥
सिमरन कीरत करते की गाओ। विजय परापत सुख सम्पत पाओ॥
लाभ यथारथ मन माहीं विचार। पल पल ध्याओ प्रभ सरजनहार॥

सरब का साखी सो प्रभ देवा। सत सुकृत कीजो नित सेवा॥
साचा उद्दम साची ये कार। सत सरूप सिमरो निरंकार॥
मानुष जनम होवे सुखरास। जो चित आवे साहब अरदास॥
करो परनाम सत चरन आपार। सतगुर सीख मन माहीं विचार॥
सो ही तेरी बनत बनावे। सो ही बहुरंग खेल दिखावे॥
सो ही सबका पालनहारा। भज परमेश्वर नित सुखसारा॥
सो ही सबको आनन्द दिखलाई। बिपत निवारे शान्त वरताई॥
अपने ठाकर की नित कर सेवा। परम समरथ देवन का देवा॥
दीनदयाल नित रहे किरपाल। गुरमुख सिमर के होये निहाल॥
रे मन मेरे नित सेव विचार। निमख निमख लयो चरन आधार॥
सरजनहार सो अत दातारी। करो डण्डौत सत रूप मुरारी॥

**सत सरूप नारायन को, कर बंदना बारम्बार।**
**'मंगत' अपरम सुख मिले, नित शरधा चित धार॥720**

तू साचा साहब सरब आधार। नित नित करूँ तोहे नमस्कार॥
अपरम अपार तेरी वडयाई। तूँ समरथ पुरख आगाही॥
अपने जन की विने सुन देवा। पल पल माँगूँ तुध चरन की सेवा॥
खल बुद्धी विचार से हीना। दुर्मत विकार में नित लपटीना॥
कारन कर्ता तूँ सतगुर मेरा। करूँ अरदास काटो भव फेरा॥
भव दुस्तर है अती दुःख खानी। अनमत भरमे नहीं सार पछानी॥
केवल प्रीत तेरे चरन स्वामी। संकट हरो प्रभ पारगरामी॥
मूढ़ मन नित उठ भरमाये। पलक पलक बहुरंग विटाए॥
चिन्ता मोह अत धरे ग़ुबार। तुध बिन कोई ना राखनहार॥
करो बख़शीश करुनाकर देवा। निर्मल चित रमे तेरी सेवा॥
कहाँ कित जाऊँ करूँ पुकार। तू ही ठाकर सरब सुखसार॥
महमा तेरी नहीं वरनी जाये। कोट वरख जो सेव कमाये॥
अपने भाने तूँ होयें दयाल। काटें भरम माया दुःख जाल॥
भाँतक भाँत सयानफ़ धारी। मिटे ना तृष्ना दुःख जाल अपारी॥
दिवस रैन कई वरख विताये। भोगे भोग अधिक दुःखदाये॥

मिटी ना तृष्ना अत दुःखकारी। चले निमाना अन्त की बारी॥
राजा राना साधू दरवेश। तृष्ना लागा अत घना कलेश॥
जाँ से पूछूँ दुःख जाल दिखाए। सरब सुख केवल तू केशोराये॥
सब कुछ छाड तुध सरनी आया। बख़शनहार तूँ बख़श प्रभराया॥

**आवन जावन सब जगत पसारा, तू साचा इक करतार।**
**'मंगत' कीजे बेनती, प्रभ दीजो चरन आधार॥ 721**

माँगूँ नाम रतन सुखदाई। दीनदयाल नित हो सहाई॥
मूढ़मती की सुनो अरदास। सत सरूप में दियो निवास॥
तूँ करूनाकर मेरा स्वामी। नित सरनागत पुरख अनामी॥
कैसे करूँ तेरी वडयाई। जल थल भीतर सम वरताई॥
तेरी कुदरत आपार मुरारी। सर्ब जियाँ को सरजनहारी॥
अपना खेल आप पसारे। तूँ ठाकर नित जाऊँ बलिहारे॥
हस्ती कीट में पूर समाई। सर्वज्ञ शकत आपार आगाही॥
नित परनाम करूँ तुद चरना। दीनदयाल तेरी नित सरना॥
अनमत कूकर की रखया कीजो। साचा सिमरन प्रभ अपना दीजो॥
पलक पलक तेरी महमा गाऊँ। अधिक प्रीत से नाम ध्याऊँ॥
तुमरी शकत की शोभा चित आये। तन मन अंदर तेरी प्रीत समाये॥
ऐसी किरपा करो प्रभ मेरे। आवागवन का बिनसत फेरे॥
ऐसी महमा दीजो प्रभ देवा। निमख ना विसरे तेरे चरन की सेवा॥
ऐसी दया करो नित दयाल। मन तृपते इक नाम सम्भाल॥
ऐसी किरपा कर पार मुरारी। मन मूढ़ा सत सेव विचारी॥
ऐसी गिनती प्रभ मोहे गिनाओ। कथ कथूँ तेरा नाम अगाहो॥
पूरन पुरख नित सरन तुम्हारी। अती भयंकर चित औगनहारी॥
अपनी दात से नित करो निहाल। रोम रोम में रमो गोपाल॥
सूझ बूझ नहीं आवे चीत। तूँ करतार परम जग मीत॥

**अन्धमत को राखें प्रभू, देके चरन आधार।**
**'मंगत' माँगे रसना, तेरे चरन कँवल आपार॥ 722**

कह बिध सिमराँ तेरा नाम स्वामी। औगनहार मन घट बिसरामी॥

नाना भाँत तिसको समझाऊँ। नित ही भरमे मूढ़ निहथाओं॥
माया चक्कर को सत कर मानी। सरजनहार नहीं सिमरे अभिमानी॥
अपने रंग बहु धारे चतुराई। मूढ़पने की करे प्रभताई॥
अपनी करनी का फल नित पावे। झूट भरम में आवे जावे॥
जान बूझ होए पशू समाना। सत सरूप ठाकर विसराना॥
सत संगत में धरे नहीं प्रीती। मूरख होके करे बदनीती॥
पाप कूप नित मन में धारी। अपने जीवन की करी ख़वारी॥
काम क्रोध अगन नित तापे। जन्मे मरे विच भरम संतापे॥
अती मलीन सुभाओ को धारी। सूझे नहीं सत धरम अपारी॥
भरम में कई जनम विताये। बिन हरि भगत नहीं छूटन पाये॥
दुर्लभ करम मानुष देह धारी। सत ठाकर की लयो सेव विचारी॥
सतपुरषों का मारग जाप। सतनाम हिरदे में थाप॥
रे मन ऐसी करनी धार। जो ये बिनसे गवन विकार॥
राग द्वेष अगन का ताओ। प्रभ सिमरन से होए अभाओ॥
अपना सरजनहार जप देव। दुर्लभ जग में ऐसी सेव॥
अपना ठाकर हिरदे में चेत। काल करम दुःख जाये विखेप॥
अपना स्वामी नित लयो चितार। मानुष देह होवे बलिहार॥
पुरख समरथ जिसकी सब बन्त। हिरदे ध्याओ पूरन भगवन्त॥

**परमेश्वर को सिमरिये, बार बार चित माईं।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, बौहड़ गरभ ना पाईं॥723**

तूँ ही तू सरब सुखरासी। नित आनन्द पुरख अबनाशी॥
तेरी सरन सब ताप निवारे। दुःख परहरे सुख थाओं विचारे॥
तेरी सरन में शान्त परगासे। अगम सरूप मिले निरवासे॥
तेरी सरन बुद्ध उज्जल कीजे। भाओ भगत रस नाम लखीजे॥
तेरी सरन सत सम्पत देवे। अजर अमर सतरूप को सेवे॥
तेरी सरन अत देवे परताप। इच्छया भरम का नासे संताप॥
तेरी सरन तीन लोक परवानी। संतोख परापत अमरत खानी॥
तेरी सरन जन्म मरन निवारे। सत सरूप में जाये पधारे॥

तेरी सरन से अतुल बल पाये। चक्रवरती उठ सीस निवाये॥
तेरी सरन देवे बेपरवाही। निहकरम सरूप का लेख लखाई॥
तेरी सरन जग जीवन लाभ। आनंद सरूप में जाये समाव॥
तेरी सरन से मन तृपताये। भोग सोग सब रोग वँजाए॥
तेरी सरन में पाये नेहचल धाम। निज सरूप में मिले बिसराम॥
तेरी सरन से अंतरगत पाये। घट घट अंतर तेरा रूप दिखाये॥
तेरी सरन से मोह अगन विनासी। केवल प्रेम सतरूप अबनासी॥
तेरी सरन सब भय को हरे। सत परतीत जो सरनी पड़े॥
तेरी सरन अत ठाँड वरताए। दु:ख सुख परे परमपद पाए॥
तेरी सरन तुध रूप मिलाए। जाँ से आया ताँ जाये समाए॥
तेरी सरन वडभागी पाये। जाँ को सतगुर सन्त मिलाये॥

**परम धरम संसार में, जो प्रभ सरनागति पाये।**
**'मंगत' मिटे सब दूषना, निर्भय धाम समाये॥724**

पूरन भाग प्रभ सरन पहचानी। आवागवन गई काल निशानी॥
केवल प्रीत प्रभ चरन विचारी। परम आनन्द मिला निर्धारी॥
ज्ञान ध्यान की सार ध्याई। एक परमेश्वर के चरन समाई॥
योग तप सत साधन जानी। सरब आधार प्रभ एक पहचानी॥
धरम करम सब पूरन भयो। सत परतीत प्रभ सरनी गयो॥
उठ मन मूरख नित चितार। सत ठाकर की सरन पधार॥
सरब जतन पूरन फल देवें। नित सरनागत प्रभ चरन को सेवें॥
जिसने सकली खेल रचाई। तिस ठाकर की हो सरनाई॥
जिसने देह पिण्ड दियो प्राना। भज परमेश्वर परम सुखथाना॥
मात गरभ में जो रखवारी। सिमर दयाल परम सुखकारी॥
बालपने कुच दूध पीवावे। नित रखयक को क्यों विसरावे॥
हाड नाड़ी का मन्दर उसारी। तूँ करतार नित जाऊँ बलिहारी॥
अचरज रचना तूँ साहब रचनाई। देह देवल की किसे सार नहीं पाई॥
प्रान का पंखा कैसे झुलाया। पानी बिन्ध में कैसे रूप दिखाया॥
हाड से कैसे दन्त उपजाये। जीब्भा रसना कैसे लख पाए॥

इस मन्दर की रचना बिस्माद। कारन कर्ता तूँ आलख अनाद॥
मूरख मन तेरी सरन विसारी। भरम माहीं जूनी बहु धारी॥
निर्मल बुद्धी प्रभ कर्ता विचार। जिसने साजा ये देह आकार॥
पूरन सतगुर की सीख पहचान। सिमर परमेश्वर सुखसार निधान॥

**जिसने सब रचना रची, सिमर सो ही तत्त रूप।**
**'मंगत' नित रखया करे, प्रभ दीनदयाल अनूप॥725**

एक प्रभू की राखो टेक। ज्ञान ध्यान का सार विवेक॥
तिसकी सेव सब बंधन काटे। साचा नाम जो गुरमुख जापे॥
तिसकी सेव केवल जग सार। पततपावन नित करो विचार॥
तिसकी महमा कौन बखाने। अपनी गत मित आपे जाने॥
दीन भाओ प्रभ सरन विचार। मानुष जनम की लख सत सार॥
मन अपने का भरम त्याग। एक परमेश्वर की चरनी लाग॥
देह का करता हरता जोई। पल पल सिमरो सत ठाकर सोई॥
प्रभ की चरनी जिस कियो निवास। निरभय पाया पद अबनास॥
अपना जीवन करो सुधार। भज परमेश्वर बारम्बार॥
सो ही तेरा मूल ठिकाना। सो ही तेरा धाम कल्याना॥
सो ही तेरे घट रह्या व्याप। अन्तरयामी धारे वड परताप॥
सो ही तेरी सब हिकमत देखे। पाप पुन्न की गत को लेखे॥
सो ही पल पल करे निहाल। भाओ भगत से सिमर दयाल॥
त्रैगुन माया बहुरंग दिखलाई। करता सिमर परम सुख पाई॥
अपनी ओट खोजो आधार। कारन कर्ता भज नाम मुरार॥
निर्मल सोझी नित करो विचार। कह बिध रचया ये देह मंजार॥
देह अभिमान में ना भुलाई। अपने स्वामी की लयो सेव कमाई॥
बारम्बार उस्तत चित राख। गुरमुख ज्ञान को अंतर चाख॥
आज्ञा मान परम सुखसार। गुनी ज्ञानी नित करें पुकार॥

**करता हरता जान के, नित तिस हुकम विचार।**
**'मंगत' पावें परमगत, बिनसे गवन विकार॥726**

निश्चल धाम केवल प्रभ आप। जो सिमरे पावे परताप॥

कर किरपा प्रभ अन्तरयामी। मिटे विकार मिले बिसरामी॥
अपना ज्ञान सरूप लखाओ। इस मन का सब खेद मिटाओ॥
अपने धाम का दीजो विचार। पूरन पुरख तूँ सरजनहार॥
अपनी माया का भेद उठाओ। परतक्ख होके सत रूप दिखाओ॥
सचखण्ड में पाऊँ नित वास। गिन गिन राखूँ चरन में स्वास॥
अंतरमुख प्रभ दरस दिखाओ। करम जंजाल का होवे अभाओ॥
तेरी कीरत तन मन समाये। इत उत तेरी सोझी आये॥
सर्वज्ञ शकत का पाऊँ निधान। समता ज्ञान मिले आनन्द खान॥
करो ये दात प्रभ दीनदयाल। सिमरन तेरा चित करे निहाल॥
आस भरोसा केवल प्रभ तोरा। नित ही राखें प्रभ पार हज़ूरा॥
जीवत जीऊँ तेरे रूप के संग। अन्तर रेख मिटे दुर्मत रंग॥
पूरन किरपाल हो पार स्वामी। अपनी महमा दीजो सुखधामी॥
नित ध्याऊँ प्रभ तेरा नाम। दृढ़ निश्चय से पाऊँ बिसराम॥
तूँ परमेश्वर शकती भंडार। अपने जन का करो उद्धार॥
ना बुद्धी ना ज्ञान विवेक। दीन भाओ से राखी टेक॥
कोट पतत प्रभ किये उद्धार। सरनागत पर होवें दातार॥
बंध ख़ुलासी कीजो प्रभ देव। अबगत रूप की पाऊँ सेव॥
तेरे सिमरन का रहे आधार। करो बख़शीश प्रभ सरजनहार॥

**अनेक जनम का भरमता, प्रभ आयो तेरे द्वार।**
**'मंगत' की बिपता हरो, तूँ पूरन किरपाधार॥727**

आलख आपार तेरा अस्थाना। विरले गुरमुख करी पहचाना॥
जिस पर होवें तूँ किरपाल। सो जन पाए सत रूप दयाल॥
गुनी मुनी जुग जुग ध्याएँ। तेरी महमा का भेद नहीं पायें॥
सरब में पसरियो सरब से न्यार। अचरज लीला धारें करतार॥
मन मूरख को दीजो विश्वास। तेरे सिमरन की रहे चित प्यास॥
संसा भरम जाये अन्धकार। साची भगत का मिले विचार॥
प्रेम प्रीत नित चरन रहाये। पलक ना विसरे सतनाम सुखदाये॥
सब जग बिख की धार पहचानी। परमानन्द तूँ इक निर्वानी॥

चंचल मन नहीं पाये विश्वास। आवे जावे विच भरम की फाँस॥
होयें दयाल तब संकट जाये। अंतर में अंतरगत पाए॥
साचा साहब किस दर को जाऊँ। बिना तेरे कोई ना मेरा थाओं॥
निहथावाँ को देवें आधार। करूँ बंदना बारम्बार॥
तेरी महमा किस मुख से गाऊँ। तेरा ध्यान किस जुगत कमाऊँ॥
तेरी किरपा प्रभ करे निहाल। अपने भाने होवें किरपाल॥
त्याग वैराग नहीं रंचक विचार। सूझ बूझ नहीं चार आचार॥
माँगनवाला नहीं मुखड़ा मोर। अपनी किरपा कर पुरख हज़ूर॥
आद जुगादी तूँ पतत उद्धारी। माँगूँ नाम रतन सुखकारी॥
तुमसे बड़ा नहीं देखन आये। खोजत खोजत बहु जनम गँवाये॥
अबकी बार प्रभ करो निहाल। दीजो नाम प्रभ दीनदयाल॥

**अबगत रसना नाम की, मन तन जाये समाये।**
**'मंगत' की अरदास है, प्रभ जी होओ सहाये॥728**

नित गाऊँ प्रभ तेरा नाम। नित ध्याऊँ तेरा अबगत धाम॥
नित माँगूँ तेरी भगत अपार। अनन प्रीत रहे चरन प्यार॥
नित माँगूँ तेरी अपार वडयाई। सिमर सिमर तेरे चरन समाई॥
नित माँगूँ तेरा सत परसंग। नित बिचरूँ तेरे प्रेम के रंग॥
नित माँगूँ ग़रीबी भेख। भाओ भगत का पाऊँ लेख॥
नित माँगूँ सब जग की सेवा। होवो दयाल देवन के देवा॥
नित माँगूँ तेरा निर्मल देस। सत परतीत करूँ परवेश॥
नित माँगूँ सत ज्ञान वैराग। निर्मल चरन का मिले अनुराग॥
नित माँगूँ मन निर्मल रंग। इक चित ध्यान रमूँ तेरे संग॥
नित माँगूँ परमारथ सार। स्वारथ बुद्ध जाये हंकार॥
नित माँगूँ सत शरधा देव। निमख निमख में परसूँ सेव॥
नित माँगूँ मैं पर का हेत। वैर विकार का नहीं पाऊँ लेप॥
नित माँगूँ समता तत्त ज्ञान। सरब जीयाँ में करूँ तेरी पहचान॥
नित माँगूँ पुरषारथ एक। पलक पलक कर लिखूँ सत लेख॥
नित माँगूँ सत साधू संग। दिवस रैन तेरा सुनूँ परसंग॥

नित माँगूँ सत जुगत आपार। सतगुर मेल से होवे उद्धार॥
नित माँगूँ निषकाम प्रीत। निरमल ज्ञान के गाऊँ गीत॥
नित माँगूँ तेरा दरशन आपार। अबगत जोत शबद निरंकार॥
नित माँगूँ सत सेवा लेख। मान गुमान का मिटे भुलेख॥

**मैं नित माँगनहार हूँ, तूँ नित हो दातार।**
**'मंगत' माँगे भिखया, सत शरधा चरन आपार॥729**

तूँ ही बीज सरब परगास। अखण्ड शबद तू सचखण्ड वास॥
अपनी लीला आप बिस्तारी। आप गुपत अन्तर निर्धारी॥
सरब अतीत अगोचर स्वामी। सरब माया आधार बिसरामी॥
अपना आप देखे परताप। सत सरूप तूँ सरब व्याप॥
सरब जीवों का करे उद्धार। पारब्रह्म तूँ परम सुखसार॥
तेरा खेल ना लखया जाई। गुपत प्रगट तूँ आप समाई॥
दाने बीने गुनी गहीर। कोटाँ कोट धारें तदबीर॥
रंचक तेरा नहीं पायो भेद। कथ कथ थाकें चारे वेद॥
अतुल परमान महमा अपार। साखी पुरष तूँ सरजनहार॥
कथा अकथ नहीं पावें सार। तूँ ठाकर नित जाऊँ बलिहार॥
मुनी ज्ञानी तपी तप धार। अद्भुत महमा का करें विचार॥
सरब निरन्तर तू आप समाया। सदा अलेप नहीं व्यापे माया॥
तू ही जगदीश सरब का साखी। चारखानी को अन्तरगत राखी॥
पाँच तत्त तीन गुन पसारा। बहुरंग धारा ये संसारा॥
मिथ्या रचना सत आप स्वामी। खेले खेल प्रभ अन्तरयामी॥
सिद्ध रिखीशर देवत नित गायें। परम पुरख का भेद नहीं पायें॥
सबसे निकट बिराजे आप। सब रचना की कीनी थाप॥
अन्धमत जीव सतरूप विसारे। माया देख अत भरम को धारे॥
छाया प्रीत तृष्ना अत धारी। काल करम दुःख जाल विचारी॥

**माया चक्कर को देख के, अंधमत जीव भरमाये।**
**'मंगत' बिन प्रभ सिमरने, छूट कभू नहीं पाये॥730**

सच्चिदानन्द प्रभ रूप तुम्हार। सिमर सिमर नित जाऊँ बलिहार॥

मन के सकले दोख निवारें। भाओ भगत जो सरन पधारें॥
तुम सरनागत मन उज्जल होई। साची कीरत तेरी चरन परोई॥
तुध बिन मन में घोर अंधकार। काम क्रोध चित अगन अपार॥
आसा तृष्ना अत वेग को धारी। तोहे विसार संकट भये भारी॥
दीनदयाल रखया नित कीजो। सत विवेक प्रभ अपना दीजो॥
तन मन की सब जलन निवार। साखी पुरष तूँ सत करतार॥
छिन छिन अपने चरन संग मेल। नाम प्रीत में करूँ कुलेल॥
तेरे चरनों में नित समाऊँ। अन्तर बाहर तेरा दर्शन पाऊँ॥
चार कुण्ट में तोहे विचारूँ। तृन तृन में तेरा रूप चितारूँ॥
तन मन मगन हो जाए तेरी सेव। हरो विकार आदी प्रभ देव॥
जल थल पावक अम्बर वाई। तेरा परताप एको दरसाई॥
हरख भये मन का जाये ग़ुबार। केवल प्रेम सतनाम आधार॥
अनक तरंग भरम मन जाये। एको प्रीत तेरे चरन समाये॥
हंग विकार जड़ माया नासे। समता ज्ञान में करूँ निवासे॥
सिमरन तेरा पल पल चित आये। जब तू विसरें तब काल दिखाये॥
जनम मरन दुःख से पाऊँ छूट। अनन प्रीत से ध्याऊँ तेरा रूप॥
कर किरपा प्रभ अंतरयामी। परम समरथ तूँ सरब स्वामी॥
करूँ अरदास मन चित लाये। दीनदयाल नित हो सहाये॥

**करूँ बंदना नित चरन को, तूँ पूरन प्रभ अबनास।**
**'मंगत' तेरी प्रीत में, तन मन विचरें स्वास॥731**

साचा साहब सरब सुखदाई। भाओ भगत से लयो ध्याई॥
उट्ठत बैठत मन माईं विचार। आज्ञा प्रभ की हिरदे धार॥
करम क्लेश ममता दुःख जाये। सतनाम चित लयो कमाये॥
भरम त्याग भज नाम मुरार। भव दुस्तर से उतरें पार॥
परम किरपाल आनन्द दातारी। सिमरो नाम चित चरन मुरारी॥
सत साधू का सुन उपदेश। कारन करता सिमर जगदीश॥
बिन सिमरे नहीं शान्त चित होई। जतन अनेक जो भरम परोई॥
प्रभ का नाम सब संकट हरे। सिमर सिमर हरजन निसतरे॥

साचे साहब की करो अरदास। काल करम की मिटे प्यास॥
नित नित चरनी करो डण्डौत। पल पल सिमर प्रभ रूप अनूप॥
नमो नमो प्रभ पारगरामी। पतत पावन तूँ सरब स्वामी॥
नमो नमो प्रभ अखण्ड परगास। जल थल माईं तू पूर निवास॥
नमो नमो प्रभ अन्तरयामी। घट घट व्यापे सतरूप अगामी॥
नमो नमो नित पारब्रह्म देव। मिल सतगुर पाओ सत सेव॥
नमो नमो प्रभ अबगत अनाद। अगम अगोचर तूँ अत बिस्माद॥
नमो नमो अन्तर प्रभ एक। सत परतीत राखो मन टेक॥
नमो नमो तत्त रूप अगाध। चेतन परगास जप मिटे व्याध॥
नमो नमो सतनाम गोबिन्द। सरब व्यापे सो बख़शिन्द॥
नमो नमो सत पद नारायन। गुर के चरन का हो परायन॥

**नमो नमो प्रभ रूप को, जो पल में करे निहाल।**
**'मंगत' संकट सब मिटे, जब सतगुर होये दयाल॥ 732**

साची कीरत प्रभ चरन कमाओ। अन्तरगत सत रूप ध्याओ॥
परमानन्द मुकन्द सुखरासी। अंतर सुरत जप नाम अबनासी॥
साची खोज करो मन मेरे। सिमर प्रभ नाम परम सुखसीरे॥
रूप रेख नहीं चिन्ह आकारा। सच्चदानन्द तत्त रूप आपारा॥
भाओ भगत घट सिमर स्वामी। मिटे विकार जप अन्तरयामी॥
पूरन पुरख के चरन समाओ। निश्चल चित सतनाम कमाओ॥
अगम निगम का मारग खोजो। सतगुर पूरे की सेवा सूझो॥
गुर के बचन पाओ परतीत। मिले दयाल साहब सुखरीत॥
इक चित ध्यान शबद विचार। भवसिन्धू से उतरें पार॥
अखण्ड शबद प्रेम की खानी। सतगुर सेव सिमर निर्वानी॥
आपा पर ममता दु:ख नासी। खेम कुशल जप प्रभ अबनासी॥
निकट रहे सो दीनदयाल। निर्मल मारग ज्ञान का भाल॥
देह देवल में करो विचार। साखी पुरष शबद निरधार॥
शबद विचार परम गत पाये। करम त्याग निहकरम समाये॥
नेहकरम सरूप अखण्ड अबनासी। सिमरन करे तब मिटे चौरासी॥

अबगत पुरख पुरातन सो ही। निर्मल प्रीत चित चरन परोई॥
भरम त्याग अंतरगत सूझ। साचा ठाकर घट घट में बूझ॥
सत विश्वास से सिमरो देव। दुर्लभ देह हरिचरन में सेव॥
भली वडयाई साहब की मीत। सिमर सिमर राखो परतीत॥

**अंतरगत में सिमरिये, सो पूरन रूप भगवंत।**
**'मंगत' पलक ध्यान से, सब ताप भये भसमंत॥733**

सरब सिद्धी का सो दातार। साचा नाम सिमर सुखसार॥
परम प्रीत प्रभ नाम चितार। मानुष देह नहीं बारम्बार॥
साचा ठाकर सब ताप निवारी। भज परमेश्वर नित किरपाधारी॥
पूरन पुरख तीन काल सहाई। साची प्रीत से लयो ध्याई॥
औगन तेरे सब नाश करीजे। सत परतीत चित जो सिमरन लीजे॥
भरम अगन से उठके जाग। सत ठाकर की चरनी लाग॥
मोह माया की निंद्रा त्याग। सत सरूप सिमर वडभाग॥
असत माया ये इस्थिर नाहीं। तिसकी प्रीत दुःख अधिक लखाईं॥
राजे राने जायें निरास। झूट भरम नहीं मिटे प्यास॥
सुख को खोजें सकले जन्त। बिना ज्ञान नहीं मिटे तिरखन्त॥
साचा ज्ञान सत रूप विचार। साचे सुख की पावें सार॥
प्रभ अबनासी अंतर में पूज। परमानन्द की मिले तब सूझ॥
स्वारथ बुद्धी त्याग ग़ुबार। पर-उपकारी जीवन धार॥
अन्तर नाम बाहर सत सेव। तब हरखें अबनाशी देव॥
सब जीवों की प्रीत विचार। सबका साखी भज करतार॥
सकली बनत साहब की जान। ऊँच नीच का त्याग गुमान॥
सब कुछ तिसका सुन फ़रमान। पल पल साचा हुकम पहचान॥
दुरमत रोग का भ्रम जाये। साची भगत प्रभ मेल मिलाये॥
जिस पल साहब रूप पहचानी। आवागवन गई दुःख खानी॥

**भव मारग में आय के, सतनाम विचार।**
**'मंगत' पलक ना विसरे, साखी रूप निरंकार॥734**

जीवत मिरतक मारग पहचानी। सत सरूप पायो निर्वानी॥

अबगत शबद बिन रूप आकारा। परगट भयो सत रूप आपारा॥
हाट पटन के घाट समाई। सतनाम सिमर सुख पाई॥
मनुआँ थकत गई जग आसा। सत सरूप में पायो विश्वासा॥
मंगलकारी प्रभ चरन ध्याया। त्रैगुन जाल का भरम चुकाया॥
अमरत धुन नाद घर बोले। गुह्य ध्यान में भयो अडोले॥
मनसा रहित घर सुरत समाई। पूरन पुरख की शोभा पाई॥
सकल विकार से भयो अतीत। सतगुर बचन में पाई परतीत॥
अगम का मारग अत दुस्तर घाटी। भाओ भगत से लयो पंध काटी॥
दीनदयाल के सन्मुख आये। कर दर्शन सब ताप मिटाये॥
मारग प्रेम कठिन कराल। मर जीवे तब घाले घाल॥
पूरन प्रीती प्रभ भगत विचारी। परसयो धाम सतरूप मुरारी॥
औगन अत ही मन माहीं समाये। प्रभ की बिरह से भसम हो जाये॥
शून्यंग शून्यंग शून समाई। सतनाम घर उस्तत पाई॥
निरमान भाओ ग़रीबी वेस। सत ठाकर का पायो देस॥
गुनी गुनी वहाँ गये समाये। औगुनहार रहे पछताये॥
आस निरास का मारग सूझे। साची कीरत तब प्रभ की बूझे॥
माया कठिन जाल बिसतारी। गुरमुख उतरे सतनाम विचारी॥
हरजन मिलके नित गायो गीत। दुर्लभ शोभा प्रभ नाम पुनीत॥

**मारग मुक्त पहचान कर, सतगुर सीख विचार।**
**'मंगत' बिना विचार के, नहीं मिटे गवन संसार॥735**

सतगुर सिखया मन माहीं विचार। जग दुस्तर से उतरें पार॥
प्रभ के चरन राख विश्वास। करम जाल की बिनसे फाँस॥
नित आनन्द प्रभ रूप आपार। सत कर पूजे पावे जयकार॥
रे मन मूढ़ा क्यों बाद बदावे। बिन सिमरन नहीं सार कोई पावे॥
साचा सिमरन नित लयो कमाये। आज्ञा मान परम सुख पाये॥
जो जो सिमरे प्रभ अलख निरवानी। तीन लोक में भयो परवानी॥
प्रभ की भगत गुरमुख की रास। सिमर सिमर प्रभ चरन निवास॥
एक चरन चित आई परतीत। भव जल को तब लीना जीत॥
भरम त्याग सतनाम रस खाई। अंतरगत प्रभ शोभा गाई॥

भयो निर्धार जग बंधन त्याग। सत सरूप का पायो अनुराग॥
मन मगन भयो सतनाम के संग। गये विकार दुर्मत दुःख रंग॥
आनन्द पहचाना सत शबद आपार। पलक पलक में सुरती धार॥
ठाकर साचा घर लयो मनाये। बौहड़ गवन चक्कर नहीं पाये॥
जग आवन की सार लखाई। आनन्दसरूप में गयो समाई॥
वडभागी ये मारग खोजे। कारन करता प्रभ अन्तर बूझे॥
सतपुरख की राखे टेक। पल पल गावे तिसका लेख॥
करम विकार से मुक्ता होई। शबद समाध में सुरत समोई॥
आठ पहर मन भयो निहाल। सिमर सिमर प्रभ दीनदयाल॥
उस्तत कर तूँ एक करतार। आज्ञा मान परम सुखसार॥

**एक परमेश्वर ध्याये लो, दूजी तज मन आस।**
**'मंगत' सब कुछ देत है, रख पूरन विश्वास॥736**

जिस जन घर में सोझी पाई। आनन्द सरूप का भेद लखाई॥
नाम विचार चित उपरस होई। शबद ध्यान में सुरत समोई॥
करम चक्कर से भई ख़ुलासी। दीनदयाल मिला अबनाशी॥
गाओ गीत प्रभ अन्तरयामी। नित रखयक सो सरब स्वामी॥
प्रभ को सिमर दूजा मत त्याग। आनन्द सरूप का मिले सुहाग॥
मोह माया में क्यों भरमाई। सिमर नाम परम सुखदाई॥
वस्तु कोई नहीं देवे धीर। बिन हरि भजन सदा दिलगीर॥
जो देखा इस जग में मीत। नाम विसार पाई दुःखरीत॥
अगन तृष्ना अत वेग को धारी। राजे राने सब ताप विचारी॥
दुर्मत रोग नहीं आसा जाये। अन्त की बारी सभी पछताये॥
भोगे भोग ना तृपते काई। परचण्ड अगन तृष्ना अधिकाई॥
माल मुलक अत सम्पत धारी। तो भी मन नहीं शान्त विचारी॥
अद्भुत रोग में जीव हैराने। मारग ज्ञान कोई गुनी पहचाने॥
झूट जगत में सतनाम विचारे। सिमर सिमर तब शान्त पधारे॥
अमरत नाम ज्यों चित समाए। मिले विवेक प्रभ दर्शन पाए॥
भरम ग़ुबार संशय सब नास। सतनाम बानी परगास॥

करम चक्कर से ऊँचा होई। निहकरम शबद प्रभ हिये परोई॥
अबगत पुरख पुरखोत्तम पाई। भाओ भगत से ताप मिटाई॥
ठाँड भई घर अपने आया। दुर्मत जाल माया बिनसाया॥

**सत शबद पहचानया, काल जाल भयो नास।**
**'मंगत' आनन्द पाया, सतरूप मिला अबनास॥737**

अबनाशी तत्त का करो विचार। बिनसे झूट माया विकार॥
जो देखे सो काल सरूप। पल पल विटावे अपना रूप॥
जो कल थिया सो आज ना होई। झूट पसार क्यों हिये परोई॥
जो संग साथी अपने कर धारे। अन्त की बारी सब त्याग विचारे॥
अपनी देह का करो विचार। एक पलक में होवे छार॥
अपनी देह जो साथ ना होई। और मित्तर कौन जगत लखोई॥
बाल जवानी बहु रूप विटाये। जरा परापत भसमत पाये॥
साचा रूप तूँ कर विचार। जग आवन की सार चितार॥
मिथ्या मोह में मत भरमाई। वस्त कोई नहीं सुखदाई॥
छिन आवे छिन करे वँजोग। राग द्वेष का लागे रोग॥
सत सरूप को नित ही खोज। तब जीवन की पावें मौज॥
हाड माँस का जो शरीर। छिन में नासे सुन गुनी गहीर॥
तिसकी आस अती दुःखदाई। देह विनास परम दुःख पाई॥
मिल सतगुर सत रूप विचार। पावें तृपत इस भरम विकार॥
सतगुर बचन तन मन में धारी। सत रूप की कथा विचारी॥
अबगत पुरख घट घट परगास। सरब आधार सो तत्त अबनास॥
शबद सरूप तत्त ज्ञान अगाध। सत सरूप सो ही आराध॥
अन्तर जुगत पहचानो सार। सतनाम पावें निरधार॥
अबनाशी पुरख सदा निरदोख। तिसे पहचाने पावे जन मोख॥

**सत सरूप पहचान के, तन मन भयो निहाल।**
**'मंगत' सतगुर सीख से, दुबधा मिटे कराल॥738**

शबद सरूप ठाकर पहचानी। मुकत भयो ये जीव अभिमानी॥
सत कीरत नित हिये परोई। तब ये मनुवाँ निर्मल होई॥

अन्तर बाहर इक नाम ध्याई। घट अपने में सोझी पाई॥
करता पुरख शबद अनामी। कियो विचार मिली बिसरामी॥
आतम तत्त शबद गत सार। निमख निमख मन करो विचार॥
मन की मैल शबद मिल धोई। उज्जल मनुवाँ सत रूप लखोई॥
एको आस प्रभ नाम कमाई। जनम जनम की दुर्मत जाई॥
मिल सतसंग सत कथा विचारी। पाप करम गये परम दुःखकारी॥
सच सुभाओ प्रभ चरन परतीत। भवजल दुस्तर को लीना जीत॥
आतम तत्त जोत परगास। सिमर सिमर के भयो दुःख नास॥
काल जाल से भई ख़ुलासी। पद परसा केवल अबनाशी॥
पूरन रूप की सेव कमाई। तब ये मनुवाँ पूरन हो जाई॥
दुर्मत भरम का रोग विनासे। सतनाम घर शबद परगासे॥
साचे शबद की कथा विचार। मिथ्या भरम से होये छुटकार॥
सत विचार मन लीन समाई। सत शबद की अत वडयाई॥
एक शबद जिस कथा विचारी। तृष्ना रोग से भयो निस्तारी॥
साचा गीत गाओ मन माईं। सतनाम सिमर सुख थाईं॥
बारम्बार ये कथा विचार। साची प्रीत प्रभ चरन चितार॥
सो ही तेरा है साचा धाम। सिमर सिमर के लीजो बिसराम॥

**शबद कथा घट ध्याइये, बिनसे भरम विकार।**
**'मंगत' भगती ज्ञान से, उतरे भवनिध पार॥739**

विगन दोख से रहे नित न्यारा। सत सरूप अखण्ड आपारा॥
करता करमफल इच्छया ना धारी। शुद्ध सरूप तत्त ज्ञान विचारी॥
सत सरूप जब अनुभव होई। छाया दुर्मत कलह सब खोई॥
परमानन्द तत्त नाद घर पाया। करम विकार सब खेद मिटाया॥
क्या करूँ तिसकी वडयाई। परम शान्त सो रूप आगाही॥
जनम मरन का नहीं संसा धारे। सरब अतीत बसे निरधारे॥
सो परमेश्वर नित धरो ध्यान। बंधी छूट पायें कल्यान॥
इन्द्री विकार से तृप्त ना होई। जुगजुग जो बहुरंग भोग भगोई॥
तृषना अगन अत परचण्ड होवे। अंधमत जीव परम दुःख जोवे॥

वारपार कुछ सूझ ना आवे। करम चक्कर धर बहु जूनी भरमावे॥
कभी ऊँच कभी नीच गत धारे। त्रैगुन खेद से ना होवे छुटकारे॥
बारम्बार माया भरमाये। आस आस में आवे जाये॥
करम जाल दुस्तर आपार। बिना ज्ञान नहीं होये निस्तार॥
अपना जीवन नित करो सुधार। साखी पुरष सिमर सुखसार॥
करम विकार सहज होये नास। दृढ़ निश्चे प्रभ सिमरें अबनास॥
भरम त्याग पावें गत पूरी। आनन्द सरूप घट मिले हज़ूरी॥
अपने पाप से छूटन चाहें। दीनदयाल सिमर मन माएँ॥
पाँच तत्त परमाद बहु भारी। आतम ज्ञान से मिले छुटकारी॥
साखी पुरष नित आनन्द खानी। बंधन नासे करे जो पहचानी॥

**माया भरम से छूटिये, तब पाइये पद निर्वान।**
**'मंगत' घालन सार है, नित चित नाम बखान॥ 740**

नाम सिमर नित मन के माईं। भरम विकार मिटे परछाईं॥
अन्तरगत नित सेव पहचान। आतम रूप शबद निर्वान॥
मन को ठाक शबद चित राख। मिले आनन्द परम तत्त साख॥
मन अपने की करो निगरानी। सिमर दयाल परम सुख खानी॥
इन्द्री विकार से मन को रोके। नाम ध्यान से संसा चूके॥
पल पल सिमर नाम करतार। दुबधा हरे करे निस्तार॥
छिनभंगुर ये देह मंजार। साखी पुरष सिमर तत्त सार॥
देह की ममता नरक सरूप। जीव जले नित भरम कूप॥
देह की ममता गवन निशानी। भरमे अन्धमत जीव अज्ञानी॥
देह की ममता जड़ता अत भारी। बाँधा प्राकिरत नित पाए ख़वारी॥
देह की ममता गहरा संताप। मिथ्या भरम को नित ही जाप॥
देह की ममता मोह अगन बढ़ावे। पाप करम में नित गरसावे॥
देह की ममता विकार का मूल। भरमे जीव सूक्षम अस्थूल॥
बिना विवेक ना छूटन पाये। अत अज्ञान में जीव भरमाये॥
भगती ज्ञान का साधन सार। ममता देह का मिटे ग़ुबार॥
अनक जतन जो करें ज्ञानी। ममता देह तब मिटे भ्रम खानी॥

बिन साधन नित ही गरसावे। करम चक्कर में नित भरमावे॥
आतम ज्ञान का पायें निध्यास। मिल सतगुर होवे परगास॥

**आतम तत्त पहचान से, करम जाल भये नास।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, निर्भय पद अबनास॥741**

सत परकाश आतम तत्त ज्ञान। निर्मल जुगती से करो पहचान॥
माया ताप सब मिटे ग़ुबार। आतम तत्त जो करें विचार॥
सत सरूप पूरन का पूर। सरब का ठाकर आप हज़ूर॥
राजा रंक को सरजनहारा। सिमर दयाल सत रूप आपारा॥
सहज भाये नित सेव पहचान। सिमर गोपाल सुख सार निधान॥
एको टेक साहब की राख। सतपुरषों की सुन ये साख॥
मन के भाये ना चलिये मीत। मन डोलन सब दुःख रीत॥
दृढ़ निश्चय से नाम चितार। माया औगन जाये दुःख सार॥
परम आनन्द की नित कर खोज। सतनाम ठाकर चित बूझ॥
सत सरूप का हो विश्वासी। गुर के बचन होए बंध ख़ुलासी॥
नित सतसंगत में करो विचार। साखी पुरष की महमा आपार॥
आपा त्याग नाम तत्त जाप। अन्तरगत में सुरती थाप॥
पाँच विकार से मुक्ता होये। प्रभ आज्ञा मन माईं परोये॥
साची जुगती भज नाम गोबिन्द। बौहड़ ना धारें माया का पिंड॥
सकले करम प्रभ आज्ञा में त्याग। अनन प्रीत सिमर वडभाग॥
खिमा ग़रीबी मन लयो निवास। त्रैगुन माया की टूटे फाँस॥
सत सरूप होवे परगास। निर्मल सुरती नित करे बिलास॥
पूरन करमी गत पूरन पाये। दीनदयाल के चरन समाये॥
भरम अगन से ठाँड चित पाई। भाओ भगत से महमा प्रभ गाई॥

**सतनाम तत्त जानयाँ, जो व्यापे सब ही रंग।**
**'मंगत' सिखया साध से, भरम जाल भयो भंग॥742**

तूँ साचा साहब नित राखनहार। करूँ बंदना प्रभ बारमबार॥
अपनी किरपा नित करो स्वामी। भगती दान दीजो पारगरामी॥
नित ही गावाँ परम गुन तेरे। तुध सरनी पाऊँ सुख घनेरे॥

चंचल मन को दीजो विश्वास। मोह माया की हरो प्यास॥
तू पुरखोत्तम नित ही दातार। दीजो दान ग़रीबी सार॥
एक नाम की प्रीत चित आये। महमा तेरी मन माहीं समाये॥
हरो विकार मन औगनकारी। तूँ परमेश्वर सरब दातारी॥
अखण्ड अनादी प्रभ रूप तुम्हार। सरब स्वामी तूँ पुरख मुरार॥
अपनी महमा आप प्रभ जानी। दूजा कोई ना कर सके बखानी॥
अतुल शकत अत ही परकास। सरब जीवों में करें निवास॥
सब में पसरें तू एक ही रंग। हस्ती कीटी आद भुजंग॥
तेरा खेल अबगत आपार। सरब सरूप तेरा निरंकार॥
साची प्रीत दीजो मोहे देव। पलक ना विसरे तेरी सत सेव॥
पूरन पुरख तू घाट ना पायें। अपने जन की आधार लखायें॥
तुध भरवास केवल चित रहाये। दूजा भरम माया दुःख जाये॥
तेरा सिमरन करूँ इक रंग। भरम विकार होवे चित भंग॥
साची सेव मन आये समाये। कर किरपा प्रभ केशवराये॥
धूड़ लखाऊँ तेरे जन चरना। दीजो दान ग़रीबी सरना॥
करूँ अरदास प्रभ तेरे द्वार। साची भगत दीजो सत सार॥

**खिमा ग़रीबी बन्दगी, जो चित आये समाये।**
**'मंगत' माया जाल से, तब जन निस्तर पाये॥743**

खिमा ग़रीबी जब मन में आये। सत ठाकर की शोभा तब पाये॥
नित बलिहारी साध के चरना। जिस दिखलायो ज्ञान का निरना॥
मिरतक देह से मुक्ता पाई। आतम तत्त घट जोत लखाई॥
जनम मरन दुःख जाल बिनासा। अजर अमर पद लयो निवासा॥
त्रैगुन भरम अंधकार मिटाई। सतनाम महमा घर पाई॥
काम क्रोध की अगन निवारी। सत सील घर शबद विचारी॥
मान गुमान अज्ञान त्यागा। सत सरूप में अंधमत जागा॥
बाहर की सब दुबधा छोड़ी। अन्तरगत चरनी चित्त जोड़ी॥
काल त्याग के शबद पहचाना। आदी पुरख ज्ञान निर्वाना॥
नौ द्वार से अन्तर हूआ। दसवें धाये के जीवत मूआ॥

करम कराल सब संकट नासा। अद्भुत बानी में कियो निवासा॥
देह त्याग निरदेह गत धारी। अखण्ड सरूप का भयो पुजारी॥
संसार त्याग सतनाम समाई। अन्तर में अन्तर सुख पाई॥
ग्रहन त्याग मनसा सब नासी। सर्वज्ञ रूप पायो अबनासी॥
घर में घर की शोभा पाई। सतगुर मिले तब सार लखाई॥
परमानन्द पुरखोतम स्वामी। परगट भयो घट माईं अनामी॥
उस्तत कछू ना मुझसे होई। अत अस्चर्ज प्रभ रूप लखोई॥
दीन भाओ नित करूँ डण्डौत। सरजनहार तेरी इक ओट॥
अपनी दया नित करो दयाल। अन्धमत जन को करो निहाल॥

**कोटाँ कोट उस्तत करें, देव मुनी सिद्ध पीर।**
**'मंगत' मूढ़ अनजान है, प्रभ हरो मेरी तक़सीर॥ 744**

मन तन अंतर ठाँड उपजाई। साचे नाम की अधिक प्रभताई॥
बारम्बार हम करें पुकार। उठके सिमर तूँ सरजनहार॥
सकल पदारथ मन पूरन होये। साचा नाम जब हिरदे परोये॥
सहज सहज मन अपना राखो। सतनाम रस अन्तर चाखो॥
मन पवन ये सदा अजीत। जतन से राखो कोई पुनीत॥
एक नाम का नित आचार। एक नाम का नित आधार॥
उट्ठत बैठत सिमरो नाम। विरत त्याग मन होए निष्काम॥
तब अंतरमुख हो किया विचार। आलख शबद परसा निर्धार॥
शबद सुरत इक तार मिलाई। अगम जोत तब दर्शन पाई॥
गुर का शिष महाबल सूरा। परमारथ तत्त लखे हज़ूरा॥
नित ही प्रेम इक नाम के संग। परगट होवे शबद निहसंग॥
जिसके मन नहीं परतीत। जो राखे ना जतन समीप॥
जिसको मरने का भय ना होई। अपनी ग़फ़लत जो सूझे ना कोई॥
सो मनमुख नित आवे जाये। माया भरम में संकट नित पाये॥
धर विश्वास इक नाम चितार। साखी पुरख पावें दीदार॥
सार जुगत ज्ञान का मूल। एक पलक ना पायो भूल॥
मान मध और मसखरी, सब को गई है खाए।

दीन ग़रीबी बंदगी, कोई जन विरला पाए॥

**बिख माया का जाल है, कोई गुरमुख पावे छूट।**
**'मंगत' रसना नाम की, पल पल लेवे लूट॥745**

सतगुर पूरा भेंटिये, पाईये सत उपदेश।
करम भरम संसा मिटे, परसे आनन्द हमेश॥
सतपुरष निरंजना, घट घट रह्या व्याप।
बिन सतगुर की भेंट से, मिले ना तिस परताप॥
मोह माया की जेवड़ी, फँस जीव दुःख पाये।
अनेक जून भरमत फिरे, यम नित देत सज़ाये॥
अरब खरब संचित करे, घनेरा भयो परवार।
बिन सतसंग ना उद्धरे, अद्भुत माया पसार॥
कूड़ी लालस लाग के, करे अधिक मन पाप।
काम क्रोध की अगन में, पाए बड़ा संताप॥
क्या राजा क्या राना, क्या रंक दरवेश।
ज्ञान बिना सब भरमते, धार माया परवेश॥
कूड़ा दम्ब फैलाय कर, भोग विषे चित लाये।
औरों को उपदेश दे, नाम गुरु कहलाये॥
ना जप तप और संजमा, खिमा ग़रीबी ना आए।
पखवाद में विचरते, ज्ञानी नाम धराये॥
अगम पंथ की साधन नहीं, नहीं साचो है अहसास।
तोते वाँग पुकारते, संतन के इतिहास॥
मान मध और ईरखा, भोग विषे चित लेप।
देह करें कुलीन नित, गंध सुगंध नित लेप॥
गादी ऊपर बैठ के, नाम धरें घण्डियार।
भोग सोग में लीन रहें, बल छल करें अपार॥
ना सत मारग सूझ कुछ, ना मन में विश्वास।
पखवाद विख्यानते, कलजुग के गुरनाथ॥

नाना पंथ चलाँवदे, कर कूड़े उपदेश।
झीवर वाँग फसाँवदे, मोहनी धर के भेस॥
कौन छुटे इस ताप से, अनमत जीव ग़ुबार।
सुन सिखया गुर दम्भ की, पायो नरक द्वार॥
गुर कामी गुर क्रोधी, गुर माया चित धार।
ऐसे गुर की सेव से, कभू ना होए निस्तार॥
सत बुद्धी धर बावरे, कर सतगुर पहचान।
जाँ के चरन के परसते, मिटे चौरासी खान॥
जप तप संजम साधना, मोह माया से उदास।
पर उपकारी विरत जाँ, शबद आलख चित वास॥
तन मन की शोभा तजे, रहे आतम में परबीन।
बानी निरपख बोलदे, एह सतगुर लच्छन चीन॥
सब जीवों में एक दृष्ट, प्रेम समता ज्ञान।
वरन कुल नहीं मानदे, केवल सत ध्यान॥

जाग रे मनुवाँ सच कीजो कार। दुर्लभ देह का करो उद्धार॥
काची काया देख हरखाया। एक पलक विच ख़ाक समाया॥
साक सैन ना नाती कोये। बिन हरि भगत ना छूटन पाये॥
कंचन काया देख के भूला। अन्तकाल सहवे जम सूला॥
लोक कुटम्ब सब तजी जागीरी। निकले प्रान तब भई दिलगीरी॥
आवन जान मुक़ाम ना जाता। अती दुःख में जीव घबराता॥
कर सतसंग सुनो सच नाओं। जप तप करे परम सुख पाओं॥
त्याग वैराग दो शस्तर धारे। सत मारग विच जाये पधारे॥
खिमा दया का तिलक चढ़ाये। सत बंदगी घट भीतर पाये॥

**निर्मल कहनी निर्मल रहनी, निर्मल कीजे खोज।**
**'मंगत' सोई निर्मला, लखे ज्ञान तत्त बोध॥ 746**

मिल सतसंग करो विचार। किस बिध होए जीव निस्तार॥
जतन अनेक करे दिन राती। छूटे नाहीं भरम की टाटी॥
कूड़ कपट विच चित धाये। समझत नाहीं बहुत समझाये॥

खोटी बुद्धी विख्यन लपटानी। कैसे मिटे ये आवन जानी॥
एही संसा इस जीव को भारा। मिथ्या जग को करे सत विचारा॥
पूरन भाग से होये गुर मेला। सार असार दा खुले झमेला॥
झूट काया सत आतम देवा। बिनसे भरम सतगुर की सेवा॥
तत्त ज्ञान बुद्धी परगासे। पारब्रह्म संग करे बिलासे॥
कलपत मिटे अकल्पत होई। गुर परसाद भरम सब खोई॥
नित ही शबद अन्तर में धारे। उलटी पवन घट माईं संचारे॥
जतन जतन मन पवन को जीते। भयो परकास सब भरम को मेटे॥
निर्मल मनुवाँ नित नाम आहारी। काल करम की फाँसा टारी॥

**अजर अमर प्रभ संग कियो मेला, मन तन भयो इस्थीर।**
**'मंगत' जीवन जीवया, गुर शबद लगायो तीर॥ 747**

ज्ञान बिना नित जीव तिरखाये। भरम अगन माहीं नित दुःख पाये॥
सुख कारन बहु सम्पत धारे। दुर्लभ माया और कुटम्ब परवारे॥
मिथ्या लालच लागा आये। अन्तकाल मन बहु पछताये॥
दुर्लभ समाँ विचारयो मीता। सतगुर शबद परम सुखरीता॥
अनेक विगन से मनुवाँ राखे। हर का नाम निरन्तर चाखे॥
खेम कुशल मन बसी ग़रीबी। अमरत पीवे कोई ऊँच नसीबी॥
वैर विरोध विकार को हरया। गुर का शबद निरन्तर धरया॥
अजर अमर तत्त सोझी होई। जतन जतन कर हिये परोई॥
आद अन्त माया दा खेला। नित उठ कर गुर शबद से मेला॥
रोग सोग सब संशे दूरे। लट पट जोत रही भरपूरे॥
अगम पन्थ दा पायो भेदा। पाप पुन्न सब करम को छेदा॥
नित अकर्ता विरत निष्कामी। परसा अनहद पारगरामी॥
गुपत वस्त सो परगट होई। तब ही मन की गमना खोई॥
मन तन अन्दर आयो धीरा। अपने जीवन का मिटा अन्धेरा॥
अत परकाश पुरख निरगामी। पततपावन आए मिला स्वामी॥
गुर शबद में जीवत मरया। तब इस जीव का कारज सरया॥
बिनसे भरम रसना पाई पूरी। गुर परताप से पाई मज़दूरी॥

काचे तन का मान त्यागी। बिरह विवेकी सच्चा बैरागी॥
नित नित मन शबद में थामे। अनहद गरजे अखण्ड अनामे॥
पूरन सेवा पूरन किरया। सुरत गम्भीर शबद रस भरया॥
आस तृष्ना अगन निवारी। नाम सिमरन दी शोभा भारी॥
जिस मन साचो नाओं ध्याया। पूरन करम अमरपद पाया॥
जप तप योग का सुनो सार। स्वास सुरत सत शबद विचार॥
और बंधन से मनुवाँ ठाके। गुर का शबद ले अंतर राखे॥
छिन छिन शबद कमावे ज्ञानी। अद्भुत कौतक लखे सो ध्यानी॥
नेचल मनुवाँ विरत त्यागी। अखण्ड शबद घट बेला जागी॥
सो ही रूप सत आप निरंजन। सिमर सिमर नित सो भवभंजन॥
डोलन से मन एका होई। अमरत नाम ले हिये परोई॥
एह परशाद संतन से चाखा। अद्वैत पुरख घट भीतर लाखा॥
साधन सेवा पूरी होई। गुर का शबद जब हिये परोई॥
धरम करम में सो नर पूरा। जिस घट खोजयो आप हज़ूरा॥
संशे शोक भरम दु:ख जाये। निर्मल बुद्धी सतनाम कमाये॥
ज्ञान ध्यान मन मगन सरीरा। हर का नाम सब मेटे पीड़ा॥
शान्त शान्त मन अमरत पीवे। पारब्रह्म रस पी पी जीवे॥
दुर्मत मिटे एक घर जाई। अखण्ड नाद मन रिह्यो समाई॥

**एही योग और तप है, एही साधना ज्ञान।**
**'मंगत' साचे नाम को, नितप्रति हिये विखान॥748**

तीसरा अंग : समता स्थिति योग
समाप्त हुआ

सत् आज्ञा निरंकार
ब्रह्म सत्यम् सर्वाधार

समता अपार शक्ति

ब्रह्म सत्यम् सर्वाधार

ओ३म् ब्रह्म सत्यम् निरंकार अजन्मा अद्वैत पुरखा
सर्व व्यापक कल्याण मूरत परमेश्वराय नमस्तं

# चौथा अंग

# चिरंजीव गोष्ट

## पहला विवेक - अध्यात्म बोध

सतसरूप अगम आपारा। जिससे उपजा ये संसारा॥
मिल सतगुर ये सार लखाई। निज घर बासा सहजे पाई॥
करम भरम का मिट गयो बकारा। परगट भयो सत शबद आपारा॥
जनम जनम की तृखा सब नासी। निर आधार कला स्वयम् परगासी॥
कही ना जाए महमा आपारी। पूरे सतगुर सों बलिहारी॥
कल्पत मिटे मन पाए बिसरामा। परस लिया निज निर्मल धामा॥
जनम जनम ये जीव भरमावे। बिन सतसंग ना पार कोई पावे॥
बिन सतरूप परतीती राखे। कभूँ ना अभयपद निर्मल चाखे॥
राजा राना रंक दरवेशा। सकल को लागा अधिक कलेशा॥
बड़े बड़े बुद्धीमान लखाए। पर इच्छया चक्कर में सब भरमाए॥
कोई गुरमुख आया वडभागी। खोजे आतम तत्त अनुरागी॥
अपने मन की मैल को धोए। छिन छिन में सत मारग जोए॥
नित पुरषारथ ये मन राखे। सतसरूप की रसना चाखे॥
अपने जीवन का करे उद्धार। गुरमुख भाखे बड़ी जगकार॥
अमरत धुन्न ब्रह्म निराली। गरजे भीतर उर्ध कपाली॥
सहज सहज मन बास करीजे। रसना प्रभ की घट घट सीजे॥
प्रेम की खानी शबद विचार। अमरत पीवे मिटे बिकार॥
इस जग में नर और ना उपाए। जाँ से मन का संशा जाए॥
गुनियाँ मुनियाँ किया बखाना। सतसरूप खोज निर्वाना॥
तब ही इस मन धीरज आए। होए तृपत निज घर में जाए॥
परम उद्दम कर तूँ बैरागी। बिन हरि सिमरन दुःख चित लागी॥
छाड पाखण्ड मन हो निरभेखी। सत की खोज में लाओ नीती॥

सत ही आहार ब्यौहार बखानो। सत खोजत सतरूप पछानो॥

**सरब सम्पदा में सम्पत, केवल है सतनाम।**
**'मंगत' परसे जो गुनी, मिटे जनम दा जाम॥ 749**

मन को सोधे सो गुनकारी। मन को सोधे सो अधिक विचारी॥
मन को राखे शबद की धारा। निर्मल भए मिटे अन्धकारा॥
जप तप संजम किरया सारी। मन को जीते का ये फल भारी॥
जब लग देह संग करे समाजा। तब लग पाए ना सच अनुरागा॥
ग्रन्थ कुतेब अनेक इतिहासा। पर मन का मिटे नहीं बिलासा॥
भोगे भोग रोये दिन राती। सम भूत के विरती राखी॥
सुन्दर काया संग ख़ाक मिलाई। डूबे गुनी मन खेड खडाई॥
मन को थामे सों बड़ा बैरागी। मन को जीते सो ही अनुरागी॥
मन को जीते सो तत्त परगासी। निज घर जाए मिले अबनासी॥
प्रभ मिलने का मारग एही। मन को ठाके शबद सनेही॥
छिन छिन प्रभ की आज्ञा माने। करन करावनहार पछाने॥
आपा मेटे सत शबद कमावे। गुर किरपा से परमपद पावे॥
एही जतन जग में बड़ भारा। आवे शान्त मन मिटे विकारा॥
सतगुर भेंटन का एही भाग। छीजे मनुवाँ उठे अनुराग॥
मिथ्या जगत में सतरूप को पेखे। सेव बन्दगी आवे लेखे॥
सब जीवों से हेता राखे। परहित चित नित रसना चाखे॥
छिन छिन मन की जुगती जोवे। प्रेम प्रीत ले साबुन धोवे॥
जीवत मरे सतगुर परसादी। आपे कर्ता आद आनादी॥
मिथ्या कल्पत सहज मिट गई। जब मन बाँधे शबद सनेही॥
अन्तरगत चित करे बिसरामा। परस लयो निज निर्मल धामा॥
विष्नू विरंच और आद महेशा। एह मन देवे सबको कलेशा॥
मन को जीत चित लयो बैरागा। अज अबनाशी पुरष घट जागा॥
कठन कमाई जग में मीता। जे मन परसे निर्मल रीता॥
नित हो सुतन्तर मन देखो दाओ। शबद खड़ग से कीजो घाओ॥

छिन छिन तिसका सीस उतारो। अगम शबद में विरत पधारो॥
मिरतक मनुवाँ करे पुकार। धन्न साजन तू सरजनहार॥
छिन छिन सिमरे अपना स्वामी। सो ही पुरख सत पन्थ का गामी॥
अगम निगम में बासा कीजे। ब्रह्म नाद घट रसना पीजे॥
नित डोलन का मिटा बकारा। नेहचल भयो मिल शबद की धारा॥
ऐसी जुगती जिस मन जागी। धन्न जीवन सो पुरख वडभागी॥
निर्मल करनी निर्मल घर बासा। अद्भुत जोत घट लख परकासा॥
मानुष देह की एह शोभा भाई। जो सतपद की सम्पत पाई॥
जनम मरन से भए निराला। ब्रह्मनाद घट माहीं रखवाला॥
पूरे सतगुर मिल सिखया दीनी। अजर दीप में शोभा लीनी॥
गुनियाँ मुनियाँ का ये अहसासा। नित सरूप का खोज परकासा॥

**जतन करो निसदिन, सत मारग को धार।**
**'मंगत' सिमरे नाम बिन, कभूँ ना हो छुटकार॥ 750**

सकल कलह को हरनेहारा। केवल शबद अगम आपारा॥
सुन तिस शबद की महमाँ भारी। जो गावे तिस सौं बलिहारी॥
बिस्माद रूप ये शबद विचारो। अन्तर माहीं नित कर संचारो॥
शबद खोज ब्रह्मा तत्तवादी। अकल्पत मन चित लगी समाधी॥
शबद खोज शिव योग कमाए। सकल जगत में आनन्द उपजाए॥
पीर वली कुतब और ग़ौसा। केवल शबद देवे सबको तोसा॥
शबद अनादि पुरख अनूपा। जाने कोई जोगिन्दर भूपा॥
सब घट वसया पर बूझे ना कोए। सतगुर दीखया से परगट होए॥
जनम मरन दुःख सहज निवारे। शबद कला अन्तर चित धारे॥
चार वेद गाएँ शबद अगाध। अगम अगोचर सतपुरष आनाद॥
योगी जंगम अवधूत बैरागी। शबद लखे तब भये त्यागी॥
गुरु आचारज आद वड ज्ञानी। केवल शबद मिल शोभा पानी॥
सुन्न कपाली तिस शबद का थाना। रग रग भीतर परकाश बखाना॥
उलट सुरती घट सोधन कीजे। अगम शबद की सिमरत लीजे॥

अच्छर अद्वैत आगम आनादी। शून्यंगकार अखण्ड समाधी॥
घट में रहे पर नित निरदोखा। बिस्माद पुरष जुगाद अनोखा॥
जिस देखा तिस बन्धन नासे। शबद अनहद घट माहीं परगासे॥
जनम जनम की इच्छया नासी। केवल शबद संग सुरत बिलासी॥
नाभ पवन घर आसन लीना। बिचरत शबद को अनुभव कीना॥
बाँधी सुरती पवन की धारा। आसन जाये पाताल सुधारा॥
उलट पलट पवन को दीजे। निरबिख नागन सीधी कीजे॥
खुली सुखमना गगन को धावे। सहज सरूप सत शबद लखावे॥
सतनाम नित पवन सम्भाले। जाप अजपा में मनुवाँ गाले॥
शबद चढ़े उठ गगन में बोले। अच्छर अद्वैत की रसना तोले॥
सत जुगत मन शबद कमाए। इच्छया भरम सकल मिट जाए॥
बोले पवन गगन के तीर। बूझनहार सो कामिल फ़क़ीर॥
जाँ से उपजा तिस घर कियो मेला। पूरे सतगुर बतायो खेला॥
नित ही नर तत्त को बूझो। जनम कदारथ पद निर्मल सूझो॥
चौधाँ भवन में और रस नाईं। जाँ से मनुआँ तृपत हो जाईं॥
केवल शबद अगम अबनासी। खोज खोज सब मिटी तिरासी॥
पूरन भाग कोई गुरमुख आए। आलख शबद की सेव कमाए॥
आप भये मुक्त औराँ निस्तारे। तिस पुरख से जाऊँ बलिहारे॥
अमरत शबद मन माहीं समाया। गुर परशाद हरी सब माया॥
इन्द्रीजीत मन भये निष्कामी। अगम शबद का हूआ गामी॥
नित ही शबद में सुरती राखे। काल को मूँड अकाल घर भाखे॥
सीप स्वाती ज्यों अधिक प्यासा। तैसे शबद संग करो बिलासा॥
मन अपने की दुबधा टारो। साचे शबद का लेख विचारो॥
शबद की खोज अति दुर्लभ काज। शबद आधार ये सकल समाज॥
सकले भरम क्लेश विनास। साचा शबद घट करे परगास॥
निर्मल जुगत कमावे योग। आलख शबद का होवे संजोग॥
नित ही मन परम तत्त लागे। ब्रह्म शबद घट अन्तर जागे॥
तिस शबद की महमाँ आपार। सरब कला का आप आधार॥

जो सिमरे सो सरब जीत। सरजनहार दीनी परतीत॥
ऐसा समरथ पुरष आगाहे। स्वांस स्वांस नित रहो ध्याये॥
उत्तम कीरत शोभा आपार। नित ही सिमरो आलख निरंकार॥
गुनी ज्ञानी दानव देव। सब ही लागे तिसकी सेव॥
सकल मनोरथ देवनहार। रिद्ध सिद्ध का सो दातार॥
सदा निरंतर करे बिसराम। नित ध्याओ दुखभंजन राम॥

**सकल पदारथ आ मिले, एक शबद के प्यार।**
**'मंगत' मन पूरन भयो, जीत लयो संसार॥ 751**

तिस बिन और ना कोई उपाए। जाँ से जनम संदेशा जाये॥
नित ही माया में खप खप मरे। साचे शबद बिन ना निस्तरे॥
शबद का भेदी सो सतगुर पूरा। कलपना द्वैत मिटावे झूरा॥
नित आनन्द मन मगन समाया। साचे शबद के पार को पाया॥
माया छूटी मन भयो निर्वाना। आलख शबद तत्त कियो पछाना॥
एह है सार और आनन्दा। केवल शबद घट करो परचंडा॥
इच्छया द्वैत का मरघट नासे। शून्यंगकार शबद परगासे॥
ऊँच नीच रंक और राओ। बिना शबद ना पावे थाओं॥
जती सती त्याग बैरागी। शबद बिना पाखण्ड के वादी॥
जिस घट साचा शबद सो बोले। निर आधार सो रसना तोले॥
कही ना जाए वारापार। तिस शबद का अजब पसार॥
नित आनन्द मंगल को देवे। जनम जनम के दुःख हर लेवे॥
परम आनन्द घट आये समाये। मिल सतगुर सत शबद कमाए॥
तिस की महमाँ अत ही बन आई। अजर पुरष घट रह्या समाई॥
नित निरालम सो गुन अतीता। अच्छर अबगत पाए पुरख पुनीता॥
देव मुनी तिसका जस गावें। गुरु आचारज मन माहीं ध्यावें॥
सरब कला आदी समराथा। पूरन पुरष नाथन के नाथा॥
उठ रे मन सच रूप विचारो। तिस बिन पावें कभूँ ना पारो॥
अपने जनम का करो सनमाना। सत शबद खोज तत्त निर्वाना॥

जम की त्रास सकल मिट जाए। तत्त परकाश घर जाए समाए॥
ये अहसास रख ये विश्वासा। साचा शबद पियो स्वाँस स्वासा॥
गुरमुख जुगती योग कमाओ। सतगुर सेव अमरपद पाओ॥

**पूरन को पूरा मिले, पूरा बूझे बोल।**
**'मंगत' परसे नाम को, जाँ का मोल ना तोल॥ 752**

## दूसरा विवेक - सतमार्ग की पहचान

जब से जीव इस लोक में आया। अधिक प्यासा विच अनवरचित माया॥
बाल जोबन और जरा बिताए। संशे माहीं सब औसर जाए॥
अनेक जुगत को साधन धारे। बिन सत मारग निहफल विचारे॥
जप तप संजम यज्ञ और दाना। सार बिना सब मिथ्या जाना॥
तीरथ नहावे ब्रत बहु राखे। बिना ज्ञान अन्धमत भाखे॥
पच पच मरे सार नहीं सूझे। जनम अमोल अकारथ लूझे॥
पन्थापन्थी बाद बधावे। मिथ्या कल्पत सार ना पावे॥
साध सन्त पाखण्डी पाए। सत मारग गम कौन लखाए॥
धरम सरूप सब भया अलोपा। अन्धकार व्यापक त्रैलोका॥
जहाँ जहाँ देखा गरब गुबारा। सार बिना डूबा संसारा॥
उठ रे गुनिया कर विचार। सत मारग से पावें पार॥
सो है गुरमुख सो वेद आचारी। **'मंगत'** जिस घट सत जुगत विचारी॥**753**
परम पुरष जिस मारग से पाये। सत मारग सो नाम कहलाये॥
ना प्रभ धरनी ना प्रभ आकाश। ना प्रभ पावक नीर बिलास॥
वो तो बसे इस काया माहीं। सत जुगत बिन पावे नाहीं॥
निराकार निरालम बोले। अगम निगम की रसना तोले॥
रोम रोम करे परकाशा। दृष्ट ना आवे पुरख निरबासा॥
आवे जावे ये जीव भरमाए। बिन परतीत कुछ सार ना पाए॥
काया सरोवर तत्त प्रान परगासे। तिसको खोज सत मारग भासे॥
काया खोजे मन नेहचल होये। अमरत सार पीवे जन सोए॥
काया खोजे सो संत ज्ञानी। आतम रसना घट माहीं पछानी॥
काया खोजे सो वेद का वादी। अटल पन्थ में लगी समाधी॥

काया खोजे सो सतगुर पूरा। सकल निवारे करम की खूरा॥
अजर अमर पुरष परकाशा। इस काया में करे बिलासा॥
छोड़ काया मूरख कहाँ धाए। काशी काबे ना साहब पाए॥
मिल सतगुर सत सेव कमाओ। **'मंगत'** दुर्लभ जीवन पाओ॥**754**
नौ द्वारे परगट दिखलाए। दसवें सोध कोई गुरमुख पाए॥
दसवें द्वार पुरष अमर बिराजे। सहज धुन वहाँ अनहद बाजे॥
सतगुर मिले तब गमता पाई। खोल किवाड़ जोत दिखलाई॥
गुरमुख जुगती सुनयो मीता। सत मारग से होए पुनीता॥
जनम जनम की दूषना हरे। तत्त परगास सुरती में चढ़े॥
मिथ्या कल्पना अन्धकार विनासे। सतसरूप में लीना बासे॥
डोलन धावन मन का जाए। गुरमुख जुगती योग कमाए॥
गुपत वस्तु घर परगट होई। अच्छर पुरष संग सुरत बगोई॥
जाँ को खोजे धरन आकासे। सो मिलया घट अन्तर बासे॥
जाँ को खोजत कई जनम विताए। गुर परताप सो सहज मिलाए॥
वस्तु कहीं कहीं उठ धाए। बिन भेदी के पार ना पाए॥
मज़हब मज़ाहब सोधे बहु बार। बिन सतगुर नहीं पावे पार॥
पूरा सतगुर जब मेल मिलाया। तब सतधाम का मारग पाया॥
सुरती बाँधी तृष्ना के वेग। घट ना सोधे मिटे ना खेद॥
चंचल मनुवाँ जीव दुःखाए। अगनी तृष्ना कीजे घाए॥
कही ना जाए मन की त्रासा। कह बिध पावे निज घर बासा॥
सहज भाय गुर जुगत लखाई। बाँधे मनुवाँ अमरपुर जाई॥
आवे जावे पवन की धारा। काची काया करे संचारा॥
नौ द्वारे को नित परकासे। सब के माहीं ये पवन बिलासे॥
तिस पवन संग मेल मिलाए। तब अन्तर की शोभा पाए॥
अन्तर जाये नाभ के थाईं। वहाँ से पलट बाहर को आईं॥
उलट पलट का करे ब्यौहार। अचरच लीला लखी करतार॥
आवागवन में सुरती राखे। सतगुर दया अमरफल चाखे॥
उरध कँवल भया परगास। **'मंगत'** मिटया गरभ निवास॥**755**

सतसरूप की सूझ मन होई। उल्टी आकास में जाए समोई॥
नित ही जापे सतनाम मीर। आनन्द गावे पवन के तीर॥
अमरत उमडे उल्ट जोत परगासे। गुरमुख जुगती योग बिलासे॥
गुनी ज्ञानी नबी रसूल। घट को खोजे मिटे सब भूल॥
जनम जनम की प्यास बुझावे। सत मारग की खोज को पावे॥
प्रान उपान सुरती बन्ध राखे। अजरपुरष की रसना चाखे॥
नाभ कँवल घर बोले पवना। गुर परशाद मिटावे गवना॥
खुली सुखमना जीव घर जाए। सुन्न नाद में जाए समाए॥
चार वेद और सिद्ध मुनी आद। साधे नाम सब मिटे व्याध॥
उठ ज्ञानी चतर बुद्धधारी। इस काया की सोध विचारी॥
हाड मास का धारा कार। जिसमें बोले आप निरंकार॥
सतगुर सेव मन बिखया त्याग। सहजे उठे आतम रस जाग॥
मानुष जनम का भया पूर करम। निहचल भया पाए निर्मल धरम॥
लख चौरासी जीव जो आए। केवल भोग में जनम गँवाए॥
मानुष तन चतुर बुद्ध धार। परसे ठाकर मिटे बकार॥
मिथ्या कल्पना सकल वंजाए। सतसरूप मिल शोभा पाए॥
दुर्लभ देह का ये ब्यौहार। **'मंगत'** पावे ज्ञान तत्त सार॥**756**
सबसे ऊँचा ये विचार। खोजे काया मिटे अन्धकार॥
सबसे उत्तम करी पछान। मिथ्या काया में पेख भगवान॥
तिससे परे नहीं और विचार। अपने माहीं आप को मार॥
ज्ञान ध्यान तब शोभा पाये। जब ये जीव सतरूप समाए॥
कही ना जाए महमा आपार। जिस घट परगट आप निरंकार॥
रोम रोम में ठाँड उपजाई। परमानन्द घट रह्यो समाई॥
जनम मरन का भय सब नास। निर्भय पुरष संग कियो बिलास॥
ये ही कथना कथ मन माईं। सत मारग में जीव ठहराईं॥
ऋषि मुनी गुनी अवतारा। काया खोज भए निस्तारा॥
उत्तम दीप ये काया जान। नित परगासे आप सुजान॥
कारन कर्ता आपे सोई। तिसे पछान परमगत होई॥

सबसे उत्तम ये शोभा मीत। **'मंगत'** खोजे मारग पुनीत॥**757**
द्वैत कलपना सकली नासे। अद्भुत कौतक घट भयो परगासे॥
करम करे बन्धन नहीं व्यापे। अमरत जीवन कोई गुरमुख जापे॥
जीवन जीये इच्छया नहीं रोग। अजर पुरष का भयो संजोग॥
त्याग बैराग की जानी सार। सतसरूप घट माहीं विचार॥
मन ममता त्यागी चित उपकारी। पूरन पुरख जाऊँ बलिहारी॥
सत मारग में रहे लवलीना। नित निरंतर अमरत चीना॥
दु:ख रोग मिटे संताप। अपने माहीं रमया आप॥
दुर्मत मिटे सतगुर के भेख। मारग बूझे पावे सच लेख॥
एह निधान सुनयो गुनी सार। बिन सत मारग जीव गँवार॥
नित उद्दम ये रसना जाप। सतसरूप में रह्यो नित व्याप॥
सकल करम से मन होए पूर। घर में बोले अनहद तूर॥
अचरज कथा अचरज है लेख। **'मंगत'** परसे सतगुर के भेख॥**758**
वेद पढ़े का ये फल मीता। परसे राम अखण्ड बुद्ध चीता॥
बिसरे घड़ी ना सो अबनाशी। अखण्ड तत्त्व नित्यम परगासी॥
अपने भरम का करे उपाए। सतसरूप खोजे चित लाए॥
बिन घट चीने ना पाए बिसरामा। बिन घट चीने ना परसे सतधामा॥
घट को खोजे सो ईश्वर वादी। आलख लखे अखण्ड समाधी॥
भाग होए कोई गुरमुख जागे। घट को खोज हरचरनी लागे॥
अपने उद्दम से भए उद्धार। घट को खोजे बारम्बार॥
भूल ना पड़यो बाहिर ना धायो। सतसरूप घट माहीं समायो॥
गुनी ज्ञानी नित करें पुकार। घट घट रमया सो सरजनहार॥

**खोज खोज अमरत मिला, परसा पुरष पुनीत।**
**'मंगत' रमया राम में, रख पूरन परतीत॥ 759**

काल करम नहीं इच्छया दोख। नित निरालम रूप अनूप॥
नित ही नित सम रह्यो समाए। दृष्टा दृष्ट भरम नहीं काए॥
नित आनन्द अखण्ड अनूप। सब घट रमें सोई सतरूप॥

आवागवन नहीं लागे भरमा। अजर पुरष का निर्मल धरमा॥
रोग शोक सब गुन के माहीं। गुनातीत सो रमें गुसाईं॥
द्वैत भरम दृष्ट ना आए। सत सरूप जां रह्या समाए॥
सकल विकार जो मन से परसे। सतसरूप में कछू ना दरसे॥
लाभ और हान ऊँच और नीचा। मूरत सुकृत वहाँ भरम नहीं सींचा॥
दु:ख और सुख नहीं द्वन्द परकाशे। गुरु वा सिख वहाँ नहीं अरदासे॥
वेद ग्रन्थ नहीं तौरेत अंजीला। नहीं कुरान जहाँ साहब अलबेला॥
इलम अलूम वहाँ ना भाखा। शून्यंगकार सो तत्त परगासा॥
देव दानव और पंडत ज्ञानी। वहाँ नहीं दरसे काल निशानी॥
आदी अन्त दा भरम ना काई। सतसरूप जाँ रह्या समाई॥
अच्छर अबगत आद पुरातन। आद अनील वोह सरब सनातन॥
महमा वरनी ना तिसकी जाए। जैसा था सो आप समाए॥
सब में रमया आनन्द परगासी। सरब अतीत सो पुरख निर्वासी॥
रनक मात्तर जिस पायो भेदा। **'मंगत'** तिसकासब दु:ख छेदा॥**760**
ज्यों ज्यों बुद्ध तिस रूप ध्यायो। त्यों ही अधिक मंगल चित आयो॥
सकले नाम तिस पुरख ने धारे। वेद ग्रन्थ जो करें पुकारे॥
पीर पैग़म्बर और सिद्ध अवतारा। सभी सेवें सो पुरख आपारा॥
जती सती अबधूत विवेकी। निर्मल सुरत सो जपें अलेखी॥
जप जप पाए नहीं पारावारा। आलख पुरख का अजब पसारा॥
नित अजन्मा और अबनाशी। चारखानी को नित परगासी॥
राजा राना रंक दरवेशा। विषन विरंच सहँसमुख शेषा॥
त्रैगुन परगट एह रचा चुनारा। अद्भुत कियो माया बिस्तारा॥
सब में परगट पर नज़र नहीं आवे। सब का कारन बीज आप समावे॥
ज्यों ज्यों करम का जाल फरावे। त्यों त्यों जीव आवे जावे॥
दु:ख ना नासे ना शान्त भाखे। कोट जनम बकार को चाखे॥
जैसी इच्छया राखे मन माहीं। तैसे मारग को गवन समाईं॥
नित ही कलह कलेश चित धारे। छूटत नाहीं बहु जतन कर हारे॥
पंडत ज्ञानी देव मुनीशा। सब ही बाँधे इस करम कलेशा॥
बिन सतरूप की सुध विचारे। भरमत फिरे जीव खानी चारे॥
भाग वडाई मन आए विचारा। सत की खोज चित लागी कारा॥

सतगुर मिलया सार विवेकी। रिह्या व्याप जाँ विरत अलेखी॥
द्वन्द विकार जिस आप चुकाए। केवल आनन्द घट मंगल गाए॥
मिथ्या छाड सत करी पछाना। तिस की सेव करे कल्याना॥
ऐसे सतगुर सत मारग वादी। सत सरूप में लगी समाधी॥
चित निरविरती मन उपरस भाखी। सतसरूप की रसना चाखी॥
राग द्वेष नहीं मन में आवे। निज सरूप में रिह्या समावे॥
तिसकी सेव से माया छेदी। **'मंगत'** सोए सतमारग भेदी॥**761**
तिसके बचन में तन मन वारे। सत उद्दम सत रूप विचारे॥
हरे परमाद तिस सुफल विचार। सतसरूप की भाखे सार॥
अपनी दुर्मत सकल वंजावे। सतपुरष का बचन चित लावे॥
रैन दिवस पुरषारथ कर पूरा। गुर परसादी ताँ परगट हज़ूरा॥
वस्त अगोचर घट माहीं दिखलाई। कही ना जाए तिसकी वडयाई॥
मन का भरमना सकलो नासा। सतसरूप घट भयो परगासा॥
सिद्धां मुनियाँ का खोजा मूल। अमरत जीवन पाया अनुकूल॥
भय भरम सब दूर वँजाए। केवल रूप संग प्रीत कमाए॥
दुर्लभ जनम पाये काज सँवारा। सतसरूप का लखा पसारा॥
नित आनन्द मंगल की खान। सत सरूप घर करी पछान॥
बाहर मुख की भरमना नासे। रमया अन्तरगत परगासे॥
नित ही जतन परयतन चितधारे। **'मंगत'** मिल सतगुर सतरूप विचारे॥**762**
एह ही कारज है जग में भारा। छूटे दुर्मत मल मोह विकारा॥
इच्छया करम सब पूरन होए। सतसरूप आनन्द घट जोए॥
ज्ञान विचार सब भया परवान। सतसरूप की करे पछान॥
जत सत त्याग पायो पूरन रीती। सतसरूप में भई परतीती॥
सुन्न समाध नाद अखण्ड। सतसरूप जोती परचण्ड॥
सतधाम जाये कियो बिसरामा। पूरन चित विरत भई निष्कामा॥
सरब निधान इक सार पछानी। छूटे गवन भयो निर्वानी॥
सत सुकृत गुर बचन कमावे। परम पदारथ सो ही जन पावे॥
वेद ग्रन्थ जस गाएँ आपारा। आगम आपार आलख निर्धारा॥
द्वन्द उपाधी नहीं कोई बिकार। नित निरंजन सो ही निरंकार॥

गुन करम नहीं पावक नीरा। पवन अम्बर वहाँ नहीं सुमीरा॥
सकल निरालम सो पुरख अनूपा। **'मंगत'** जाने कोई गुरमुख भूपा॥**763**
जीवत मरे तब सार लखावे। गुर परसादी फिर गरभ ना आवे॥
कठन कराल मारग उध्यान। शूरा परसे रख शबद ध्यान॥
एह ही विचार शुभ गुनी विचारो। अपना जीवन सुफल कर डारो॥
कारन कर्ता सब का मूल। तिससे उपजा सूक्षम अस्थूल॥
निज घर जाये निज रूप पछानो। गुरमती एह अमरत भानो॥
सबसे ऊँचा ये ही विचार। सतसरूप में विरती धार॥
आवन जावन संशा मिट जाई। अपनी आप देखो प्रभताई॥
अपने रूप की करे पछान। सो ही जोगी गुनी निधान॥
एक दो का भरम मिटावे। सरबगत तत्त सार लखावे॥
ज्ञान ध्यान भये परवानी। लखयो रूप अमरत की खानी॥
अपने आप मन मगन समाए। ज्यों सागर में बूँद मिलाए॥
अहं विकार मोह तम नाश। सत सरूप का भयो परकाश॥
खोज खोज ये निर्मल ज्ञाना। परसो नाम ये परम निधाना॥
सतसरूप जब घट परगासे। गुरमुख जोगी सब भरम विनासे॥
जिस घट शोभा ये परगट होई। अचरज लीला धारे जन सोई॥
नित अकरम विरत निर्वानी। सुन्न समाध लख अनहद बानी॥
इन्द्री भोग सब इच्छया नास। अखण्ड अमरत चित भया परगास॥
तन मन की ममता सब जाए। केवल रूप संग रिह्या समाए॥
जात वरन ना पंथ को राखे। निराकार की रसना चाखे॥
गुरगादी ना भावे चीत। होए निमाना बिचरे नित नीत॥
सबसे नीचा आप विचार। कला लखी तिसने निरंकार॥
अनन भगती में चित भरपूर। रग रग उपजा अनहद तूर॥
प्रेम मस में भया दीवाना। अपने आप में नित ग़लताना॥
जीव जन्त की सेव कमाए। सब से हेत रखे अधिकाए॥
आपा पर नहीं वैरी मीत। ऊँच नीच से एक परीत॥
जड़ जंगम में दरसे पूर। **'मंगत'** ज्ञानी तत्त परसे हज़ूर॥**764**

गिनी ना जाई अधिक वडयाई। सतसरूप मिल शोभा पाई॥
ग्रन्थ कतेब तत्त सार परकासे। अनहद मंगल सब भरम भय नासे॥
जिस जानी सो सबका ज्ञाता। गुनातीत सो पुरख बिधाता॥
जिसको खोजे शिव योग समाधी। गावे विरंच वेद का वादी॥
शेष सय्या पर विषन ध्यावे। अनहद मंगल गत लखी ना जावे॥
मुनी सनकादिक और सुखदेवा। कीजे पलपल जिसकी सेवा॥
सो ही सतसरूप तुम्हारा। नित परकाश अपरम आपारा॥
खोज करो नित चतुर बुद्ध ज्ञानी। तत्त परकाश अगम निर्वानी॥
तिसको पाए मन बाँछा पूरे। **'मंगत'** मिटे सब करम वसूरे॥**765**
बारमबार महमा नर गाओ। सत कला निरंतर पाओ॥
छाड पाखण्ड सत मारग खोजो। साध जनाँ का निरनय बूझो॥
बिन सत खोजे नहीं पावें पारा। बिन सत बूझे नहीं मिटे अन्धकारा॥
ज्ञान ध्यान सब निहफल जाए। जब लग सत की सार नहीं पाए॥
त्याग बैराग सब कठिन जंजाला। मुख को बाँधे मन रखे दयाला॥
जैन जंगम का मारग चाले। बिन सतरूप बिरथा देह गाले॥
सत पुरष संग प्रीत कमाओ। निमख निमख हर रसना पाओ॥
शरधावान शुद्ध आचारी। सतसरूप का सो अधिकारी॥
गृहस्ती विरक्ती जो कोई होवे। प्रेम भाओ से प्रीतम जोवे॥
बिना प्रेम ना मन बस होई। परसे ठाकर गुरमुख जन कोई॥
भये अतीत नहीं विकार विनासे। मिथ्या जनम को काल गरासे॥
जतन करे पर सार नहीं सूझे। अगनी तापे नहीं तत्त को बूझे॥
कठिन कराल मन साधन कीजे। बिन सतगुर नहीं अमरत सीजे॥
जाये हिमाचल समाध लगाए। सतसरूप का भेद ना पाऐ॥
ज्ञान बिना सब बिरथा बूझे। ज्ञान पाऐ सरूप तब सूझे॥
बिन सतगुर ना होए ज्ञाना। पढ़ पढ़ थाके ग्रन्थ बिध नाना॥
तीरथ नहाए संजम बहु कीजे। आशा कलेश कभूँ ना छीजे॥
अनेक मतों में बुद्ध भरमावे। बहु इतिहास बीच संगत गावे॥
ज्ञान ध्यान का करे उपदेशा। मन अपने का नहीं मिटा संदेशा॥

उल्टा होए आसन धरे कपाली। तो भी मिटे ना मन बिकराली॥
जतन जतन कर देह सुखावे। तो भी मन की मैल ना जावे॥
बस्ती त्याग जंगल कियो बासा। इच्छया भरम घट करे निवासा॥
अद्भुत माया में नित भरमाए। **'मंगत'** गुरमुख कोउ बिरला तर जाए॥**766**
सहज भाए सुन साचा उपदेश। दृढ़ चित राखे मिटे कलेश॥
सतपुरष की संगत कीजो। साचा नाम निरंतर पीजो॥
उट्ठत बैठत सच नाम कमाओ। कारन कर्ता से प्रीत लगाओ॥
गुर परसाद भ्रम ग्रन्थी टूटे। उपजे नाद अमरत कुम्भ फूटे॥
मनुवाँ निहचल सुरत इकागर। सत सरूप मन भयो उजागर॥
पर-उपकार नित सेव कमाओ। गरब त्याग खिमा चित लाओ॥
सब में ठाकर सिमरो एका। सत सरूप का सुनो विवेका॥
ज्यों ज्यों नाम में प्रीत कमावे। अघट नाद घट परगट पावे॥
उल्टा नाद बोले तिरनाली। दामन दमके उरध कपाली॥
ऊपर चढ़े शिखर को जाए। केवल नाद संग प्रीत कमाए॥
मान मध ना गुरमुख पेखे। परनारी ना सुपने देखे॥
इन्द्री जीता मन निष्कामी। **'मंगत'** परसे सो पारगरामी॥**767**
भेख भेखांतर सब मन के तोड़े। केवल सुरती सतरूप में जोड़े॥
सकले करम प्रभ आज्ञा में त्यागे। गुर परसाद तब सोता जागे॥
अनन प्रेम सतनाम ध्यावे। करम भरम का संशा जावे॥
सुरत इकागर शबद में धारे। उल्टे गाम में जाये पधारे॥
अपनी कल्पत सब भरम को खोवे। लोक लोकान्तर का भरम ना जोवे॥
अनाम पुरख अलोक निवासी। अगम सरूप कला परगासी॥
सहज भाए पद परसे पूरा। सुफल जनम आए जग में सूरा॥
पूरन होई मन की किरया। सत सरूप निहचल चित धरया॥
नित आनन्द मन मगन समाया। दुर्लभ जीवन सो जन जग आया॥
पख भेख सब दूर निवारे। सम सरूप चित माहीं चितारे॥
अनहद नाद अखण्ड धुनकार। मंगल उपजा नहीं पारावार॥
का से कहूँ तिसकी वडयाई। आपे ठाकर सब लेख लखाई॥

अन्तरयामी संग कियो बासा। पलक पलक में करूँ बिलासा॥
उठ रे गुरमुख ये दिशा विचार। जनम कदारथ आनन्द पधार॥
नित सिमरो नित कीरत गाओ। नित ध्यान चित माहीं ध्याओ॥
ज्ञान ध्यान की सिमरत पूर। घट में बोले अनहद तूर॥
महापुरष की कथा आपार। कोट जियाँ का किया उद्धार॥
सत मारग में परतीत दिखाए। सत की शोभा नित मुख सों गाए॥
नित ही सत तत्त परसे गामी। सतसरूप मिले अन्तरयामी॥
उट्ठत बैठत ये दृढ़ विश्वासा। अनहद मंगल घट कियो परगासा॥
हाड नाड़ी पिंजर सब बोले। अबगत पुरष की रसना तोले॥
अपने आप में बुद्ध मतवाली। सतसरूप की अजब रवाली॥

**सब साजन मिल गाइयो, सतसरूप आपार।**
**'मंगत' दुर्लभ जनम ये, निर्मल भाखो कार॥ 768**

जीव उद्धारे संकट नासे। सतसरूप मन माहीं उपासे॥
सकल विगन हरे मंगल कीजे। नित सरूप की रसना लीजे॥
परम विवेकी कोई गुरमुख आए। सत सरूप की सेव कमाए॥
इस माया का नहीं पारावारा। मोहे जीव सब देख पसारा॥
नित लोभी बिखयन को खाए। नित ही तृखा मन रहे समाए॥
अनंक जतन कर शान्त ना आवे। छिन छिन माहीं मिथ्या कलपावे॥
देव किन्नर गुनी मुनी और भूपा। मोहे माया धर परचंड सरूपा॥
इस मारग में निज एक उपाये। सतसरूप का सिमरन गाये॥
सिमर सिमर मन किलबिख नासो। अजरपुरष घट माहीं परगासो॥
निर्मल मनुवाँ विरत का त्यागी। सहजे सिमरन सतरूप में लागी॥
कलह कलेश सब मन से काढे। सत की खड़ग भरम को बाढे॥
एह ही कारज जग में भारा। मिल सतगुर निज रूप सँवारा॥
भाग वधाई उस जन को होवे। जो हरि सिमरन की माल परोवे॥
आप तरे औराँ निस्तारे। खेम कुशल आनन्द पधारे॥
अखण्ड सरूप परतख कर देखे। मानुष जनम तब आवे लेखे॥

एक सरूप का सकल पसारा। इत उत देखे सब दृष्ट बकारा॥
ज्ञान परकाश बुद्ध निहचल होई। भरम त्याग निज रूप लखोई॥
परमानन्द घट में नित पीवे। ब्रह्म-कला में कोई गुरमुख जीवे॥
नित ही नित सतमारग सोधे। आप त्याग निज आप में बोधे॥
अखण्ड नाद पद निर्वानी। **'मंगत'** उपजी प्रेम की खानी॥**769**
सहज भाए हरि सिमरन लीजो। धर विश्वास अमीरस पीजो॥
दुर्लभ करम को भाखो मीत। सतपुरष की रख परतीत॥
स्वाँस स्वाँस हरि नाम चितारो। दृढ़ निश्चय से तत्त विचारो॥
प्रभ की आज्ञा छिन छिन समाओ। कलप कल्पना सकल मिटाओ॥
विरत त्याग मन होए निष्कामी। सतसरूप मिले पारगरामी॥
नित ही नित ये सेव कमाओ। अन्तरगत मन आनन्द उपजाओ॥
छिन छिन औसर जाए नित मीता। सुकृत कारज सुन ये पुनीता॥
आस अन्देसे जीव आवे जाये। भगत बिना नहीं ठौर को पाये॥
हरि की भगत सब बन्धन काटे। नित आनन्द अमरत रस चाखे॥
वेद कतेब नित करें बखाना। उठ कर सिमरो प्रभ रूप सुजाना॥
हीरा जनम ना पावें मीता। नित ही सिमरो सतरूप पुनीता॥
सरजनहार पतत उद्धारे। प्रेम भगत नित जाऊँ बलिहारे॥
मन आनन्द बुद्ध भई उदासी। अजरपुरष आए मिला अबनाशी॥
ज्ञान ध्यान में सिमरत पूर। साध जनाँ की बाँछो धूड़॥
खिमा ग़रीबी फल माँगूँ एका। दीनदयाल तूँ पुरख अलेखा॥
कह बिध उस्तत करूँ प्रभ तेरी। अन्ध ग़ुबार बुद्धी पाप में घेरी॥
करूनाकर प्रभ होवो दयाला। काढो बिख चित करो रवाला॥
नित समाध मन रहे समाई। बिन तोरे नाम ना सूझत काई॥
अधिक प्यास तेरे प्रेम की मीता। नित रखयक तूँ पुरख पुनीता॥

**बार बार बेनती करूँ, सुन तूँ सरजनहार।**
**'मंगत' माँगे नाम रस, सत चरनी बलिहार॥ 770**

जो देखा सो बिनसनहारा। अचरज माया कूड़ पसारा॥

भगतवत्सल तूँ अन्तरयामी। सतसरूप सतधाम का गामी॥
मन तन अन्दर दीजो विश्वासा। एक रहे तेरे नाम की आशा॥
इस मन की सब त्रास मिटायो। सत चरनी लाये प्रीत दिखायो॥
तुम बिन दूजा ना कोई समराथा। शेष महेश गनेश के नाथा॥
पीर पैग़म्बर तुमरा जस गावें। भगत कीरत से आनन्द मनावें॥
जती सती बुद्ध आद विचारी। अखण्ड रूप के भये पुजारी॥
धन्न करनी धन्न तिन दी कार। जिन पायो तुध रूप आपार॥
कलह कलंक सकल भए दूरे। आनन्द मंगल घट माहीं भरपूरे॥
प्रभ की भगत सब बिगन निवारे। केते पतत पल माहीं निस्तारे॥
सुर नर नारी और पण्डत ज्ञानी। तुमरी शोभा मुख करें बखानी॥
धन्न भाग वोह जन जग आया। प्रेम प्रीत जस तोरा गाया॥
चार पदारथ तिस चरने वारे। तुमरी भगत जिस घट संचारे॥
गुनियों मुनियों नित सुनो पुकार। सिमरो नाम जग करनी सार॥
मोह ममता सब हरो विकारा। प्रेम भगत सतनाम प्यारा॥
सब कुछ तिसकी आज्ञा में देखो। सरब परकाशी अबनाशी पेखो॥
जड़ माया को चेतनहारा। अचरज जिसका रचा पसारा॥
तिसकी आज्ञा मन में रीझाये। दीन बन्दगी सतरूप समाये॥
बन्धन टूटे मन होए परकासा। **'मंगत'** परसे सतरूप बिलासा॥**771**
सरब निधान मन कियो पछाना। निज सतरूप की सेव कमाना॥
मन तन से नित उस्तत कीजे। भाओ प्रीत से रसना लीजे॥
छल कपट मन हरे विकारा। सतसरूप में जीव पधारा॥
कही ना जाये तिसकी वडयाई। अपनी शोभा आपे जन गाई॥
उठ कर गाओ सो प्रभ अबनासी। भगत कीरत से कटे जम फाँसी॥
नित निर्मल सो सारंगबानी। गुर का पूत कोई करे पछानी॥
जिस मन अपने की दुबधा काटी। सत निरन्तर दुर्मत फाटी॥
कामना करम बिकार त्यागे। तब सतरूप में सुरता जागे॥
उस घड़ी तों जाऊँ बलिहारी। जिस पलक प्रभ सिमरत धारी॥
जनम जनम के सब पाप विनासे। अटल पुरष घट माहीं परगासे॥

सन्तो गाओ ये गुरमुख बानी। अधिक शोभा मन भीतर जानी॥
नित निरालम पुरख अबनाशी। सरब निधान सरब सुखरासी॥
पलक ना बिसरो सो पुरख अनूपा। अचरज लीला नित विचर सरूपा॥
खंड मण्डल पुरियाँ और भवना। नरक स्वर्ग केवल मन गवना॥
लोकालोक अस्चरज पसारा। सरब का बीज सो पुरख निरंकारा॥
सब में व्यापक और सदा अलेपा। बिस्माद गती घट अन्तर पेखा॥
जो जो सिमरे सो मुकत पद पाए। **'मंगत'** ताँके नित चरन समाए॥**772**
अगम पन्थ अगोचर धामा। बिन विश्वास नहीं पावे निज नामा॥
सो परखे ये सार घनेरी। धरे विश्वास गुर बचने केरी॥
बिन विश्वास नहीं पाये धाम। आवे जावे चौरासी जाम॥
बिन विश्वास नर मुगध अंजान। धरे विश्वास होवे कल्यान॥
सब ज्ञान की सुनो तत्त सार। सत विश्वास मन राखे धार॥
बिन विश्वास जीव अंध्यारा। जमकाल देवे डण्ड भारा॥
ज्ञान ध्यान की ये शोभा भाई। आवे विश्वास प्रभ कीरत माईं॥
जाँ के मन दृढ़ विश्वास। तिनको व्यापे नहीं दु:ख सन्ताप॥
महापुरष सो जग में जानो। निहचल विश्वास निज रूप पछानो॥
मिथ्या जाल भरम का तोड़े। रख विश्वास सत मारग फोड़े॥
सतसरूप को परसे सोए। दृढ़ विश्वास आतम तत्त जोए॥
मिथ्या कल्पत सों रहे उदास। सत स्वरूप में पाये विश्वास॥

शरधा सेवा उद्दम धर, आपामत त्याग।
खिमा ग़रीबी समता, सत मारग में बुद्ध जाग॥
सतसिमरन सतसाधना, सतसरूप विचार।
जाँ का दृढ़ विश्वास है, सो परसे ये तत्त सार॥

अनेक गुन विश्वास में पाये। अखण्ड सरूप घर जाये समाये॥
प्रभ से माँगो केवल विश्वास। जिसको परस होवे मन रास॥
ज्यों ज्यों प्रभ का जापे ज्ञान। त्यों त्यों परसे प्रेम की खान॥
समाँ विचारो उठ सिमरो सतधाम। **'मंगत'** पावे कोई गुरमुख बिसराम॥**773**

मानी ओर मसख़रा, अती लोभी छलबाज।
रहनी अन्तर और है, बाहरों और समाज॥
जो चाहे कल्यान को, भूल ना बैठो तिन पास।
तिनका ना गुर पीर है, ना तिन को विश्वास॥

अपनी हिकमत में चलें, बहू गरब चित धार।
सत असत सूझे नहीं, अत बुद्धी अंध्यार॥
अगन सरीखा तापता, जीव तिन्हाँ दा मीत।
परनारी परधन हरें, परनिन्दा से प्रीत॥
रोते आये जग में, रोते जम घर बास।
अनेक जनम भरमत फिरें, मिटे ना गरभ निवास॥
सोही मनमुख आखिये, सोही रूप चंडाल।
जाँ के मन विश्वास नहीं, ना सतमारग भाल॥
करम विलक्खन सो करें, सबको देवें कलेश।
दुर्जन भाओ चित रक्खें, देवे डन्ड नरेश॥
अपनी करनी भोगते, परम दुःखी दिन रात।
सत मारग नहीं सूझदा, मन वैरी कमज़ात॥
तीर सरीखा लागती, सिखया सत गुनवान।
अन्धमती मतवाल रहें, चित में छल परवान॥
भयकारी है रूप तिनका, भय देवें दिन रात।
छल कपट के धरम को, साधें निश्चे साथ॥
सत धरम को काटते, रक्खें गुनी से वैर।
धृग आये संसार में, दुर्जन धर चित क़हर॥
बंधन में ही सो आये, अन्त को बाँधे जाएँ।
जमराज दे शासना, नरक निवास को पाएँ॥

**छाडो करम क्रूर को, ये तो दुःख की खान।**
**'मंगत' सत तत्त बूझिये, मानुष देह निधान॥774**

भगत बिना मन अशुद्ध आचारी। बिख बोवे बिख का ब्यौहारी॥
अपने जीवन का घातक होवे। वार पार कुछ सार ना जोवे॥
नित रोवे अति दुःख की खानी। करनी भोगे नीच गत पानी॥
अपनी करनी आपे भरमाये। कौन छुड़ाये ये पन्थ आगाहे॥
उठकर जीवन का करो सुधार। मानुष जनम नहीं बारम्बार॥
नित सतरूप से हेता राखो। मिल सतसंगत नित रसना चाखो॥

साध जनाँ की कहनी मानो। भये कल्यान सत रूप पछानो॥
प्रभ अपने से सेवा मांगो। नाम दान रसना उठ लागो॥
घट घट प्रभ रिह्या भरपूरे। आज्ञा मानों नहीं परमपद दूरे॥
तन मन दीजो प्रभ आगे मीता। जापे नाम सतपुरख पुनीता॥
अनन भगत चित माईं समावे। सत परकाश तब अन्तर पावे॥
दुर्मत पड़दा अन्तर से फोड़े। बिच रज़ाई चित रसना जोड़े॥
विरत त्याग मन इकागर होई। आगम नाद की सोझी पाई॥
सुनो भगत ज्ञान तत्त सारा। सिमर सिमर सतरूप मुरारा॥
सो पतवन्ता सतरूप पुनीता। जिस सिमरा प्रभ निर्मल चीता॥
अपने जनम का किया सुधार। जतन जतन से गई बिख सार॥
जिस अमरत को सनकादिक गाये। सो आनन्द घट परगट पाये॥
बल बल जाऊँ सद हूँ बलिहारी। **'मंगत'** सिमरे जो नाम मुरारी॥**775**
प्रभ के सिमरन की शोभा भारी। राजा राना सब भये भिखारी॥
महापुरष की कीरत आपार। स्वाँस स्वाँस सिमरे निरंकार॥
अपने मन का संशय तोड़े। अखण्ड नाद संग विरती जोड़े॥
सार भगत ये सुनो सुजान। मन में परसे एके भगवान॥
बिन हरि रूप ना दूजा भाये। अनन भगत कर सेव कमाये॥
इत उत करम सब आज्ञा तिस माने। मिटे कलेश निर्मल सुख भाने॥
होये परकाश निज नाद घर बोले। अच्छर पुरष नित रसना तोले॥
निराकार का रूप लखाया। सत मारग का सोधन पाया॥
सांख योग तत्त समता पाये। मारग एक दो रूप दिखाये॥
नित ही नित शबद चित राखे। अमरत बरसे सतरूप बिलासे॥
जप तप संजम पुन्य और दाना। भगत प्रेम से भये परवाना॥
मन मतवाला सुन शबद धुनकार। लखा ना जाई कछु वारापार॥
सरब का ठाकर घट माहीं परकाशो। हर की भगत करे सकल दुख नाशो॥
सब सिमरत में सिमरत भरपूर। केवल नाम ले परस हज़ूर॥
खिमा दया की टेक लगाई। अगम पंथ जाये शोभा पाई॥
करम भरम की तृष्ना नासे। अधिक चमकार घट माहीं परकासे॥

सुनो सुनो ये रमज़ आपार। परस लयो पद सरजनहार॥

**सो ही मूल सो ही सार, सो ही सबका आद।**
**'मंगत' जिस घट सूझया, तिसका गुन बिस्माद॥ 776**

नाम रूप और गुन करमा। सकल माया का पसरयो धरमा॥
नाना रूप जग बनत बनाई। लखी ना जाये तेरी प्रभताई॥
छाड बिकार जिस सिमरा सचनाम। डोलन तजे पाये निहचल धाम॥
पखवाद तज सार को बूझो। तत्त निरंजन अन्तर सूझो॥
मिल सतगुर तत्त जुगत कमाओ। अपने भरम को आप मिटाओ॥
कर पुरषारथ नित एह मीता। शरधा भगत लयो रूप पुनीता॥
खिमा दया घट सिमरत आये। तज अभिमान परमसुख पाये॥
सब जीवों की कीजे सेवा। ऊँच नीच का काटे भेवा॥
समदृष्ट तत्त को बूझे। गुर परसाद घट अमरत सूझे॥
नित ही नित ये जतन चित राखो। परम प्रीत सत मारग भाखो॥
सेव बन्दगी मन सिमर मुरार। सतपुरषों ने करी पुकार॥
जाँ से बिछड़ा ताँ जाये समाओ। पूरन करम से निर्मल गत पाओ॥
परम आनन्द घट परस घनेरो। लागत बौहड़ ना गवन का फेरो॥
मुकतसरूप प्रभ आप मिलाए। मिटे विकार आनन्द घर पाए॥
करो वडयाई रे मन मेरे। प्रभ की भगत में सुख घनेरे॥
आठ पहर ये रसना पीओ। प्रभ के नाम में जीवन जीओ॥

**घना आनन्द परकाशया, मिटा करम बिकार।**
**'मंगत' साचे नाम की, मन में चढ़ी ख़ुमार॥ 777**

दुर्लभ जीवन गुरमुख ज्ञानी। सतसरूप की शोभा जानी॥
नित ही नित प्रभु माहीं समाये। दुर्मत माया मैल हटाये॥
तन मन अपना प्रभ चरनी जोड़े। अगम सरूप में आपा छोड़े॥
नित निहकरम मन रहा समाये। प्रभ की महमा वरनी ना जाये॥
सकल कल्पना विरत भयो नासा। अखण्ड नाद घट भयो परकासा॥

परमधाम सरूप सो जाता। मिल सतगुर घट करी पछाता॥
नित अमरत रस पीवे जीया। अघट शान्त घट माहीं वरतीया॥
सुपन समान जग रचना पेखे। सतसरूप घटघट परगट देखे॥
इन्द्री जीता मन नाम बैरागी। सहज भाओ कला घट जागी॥
सोलह कला सम्पूरन साजा। घट में उपजयो अनहद बाजा॥
बोले पवना अधिक आपारी। उनमुन मन्दर में भई उजियारी॥
निरत करे नित मन विवेकी। अबगत कौतक की रसना पेखी॥
ना जिभ्या से होए बखाना। परम सुख पाये पद निर्वाना॥
सकल जगत का मूल लखाया। नित आनन्द घर परगट पाया॥
आलख आनाद अनहद नाद। 'मंगत' शोभा वड बिसमाद॥**778**
सुन्न समाधी मन विचरत रही। अगम निगम की लखता लेई॥
वाह वाह भाग कोई गुरमुख आया। सतसरूप में मेल मिलाया॥
बिन सत खोजे सब जीव हैराने। छिन भंगुर जग सत कर माने॥
वारापार कछु पाए ना भेदा। जनम जनम विच माया छेदा॥
अनेक जतन कर शान्त ना आवे। बिन गुर किरपा नर कैसे पावे॥
पूरन जनम का फल उपजाया। सत सरूप सिमरन चित आया॥
मानुष देह कदारथ होई। सत सील आए चित समोई॥
विचितर लीला सब घट परगासी। गुरमुख परसे धर विरत उदासी॥
असत शरीर की ममता छोड़े। सत सिमरन में विरता जोड़े॥
अधिक प्रेम घट माहीं विचारे। पलपल में प्रभ नाम उचारे॥
सुखमन खुली करे गगन पुकार। गुरमुख पावे शबद टकसार॥
जप तप संजम सब पूरन होई। उनमुन मन्दर में सुरत पिरोई॥
अचरज धाम अनुपम बानी। कोट मद्धे कोई सन्त पछानी॥
भेख भेखान्तर सब वहाँ नासे। उदे अस्त नहीं भरम परकाशे॥
द्वन्द विकार वहाँ सब मिट जाई। निराकार का भेद लखाई॥
जड़ चेतन का निरनय पाया। सतसरूप सिमरन चित आया॥
अपने आप में गुरमुख जागे। **'मंगत'** रहो तिस चरनी लागे॥**779**
उनमुन रहे नाद को चीने। कलप कल्पना सकली छीने॥

आकार दृष्ट सब भई विनाश। निराकार बानी परकाश॥
तब ही जग का ठाकर पाया। निराकार का भेद लखाया॥
जब लग वोह देश नहीं भाखा। तब लग जीव माया रस लागा॥
मढ़ी मसान की पूजा कीजे। मन्दर मस्जिद में सजदा दीजे॥
गिरजा जाए नाद पुकारे। काशी काबे में राम चितारे॥
भरम भरम में खप खप मरे। बिन गुर ज्ञान कैसे तरे॥
अंग भभूत सर जटा को राखे। अनेक जतन कर धूनी तापे॥
बहुत भेख मन में नित धारे। बिन तत्त ज्ञान नहीं पावे पारे॥
क़ाज़ी पंडत पोप ज्ञानी। कूड़ कपट नित करें बखानी॥
अन्तर माहीं धरें माया बकारा। वहदत परस्ती का करें पुकारा॥
झूटे झूटे सब लड़ लड़ मरें। बिन तत्त ज्ञान कैसे निस्तरें॥
कठन जंजाल में जीव सब घेरे। कूड़ कपट की तसबीह फेरे॥
बाहरों सजदा मन कुफ़र बखानी। करें गुनाह मिल नफ़स शैतानी॥
मुख से कलमा अन्तर ख़ुदबादी। जमपुर बाँधे जायें वोह काज़ी॥
पंडत भूले तत्त सार विसारे। **'मंगत'** तिनसे बचे सो गुनी आपारे॥**780**
पाखण्ड करे साधू दरवेशा। पेट के कारन करे बहु भेखा॥
छल छिदर अन्तरगत धारी। बाहरों भेख अतीत विचारी॥
कूड़ोकूड़ कलयुग वरताए। देख देख मन बहु पछताए॥
कोई विरला सतसरूप अनुरागी। नाम की प्रीत जिस घट अन्तरजागी॥
नित उदास मन अपना राखे। बिन हरि सिमरन नहीं दूजा भाखे॥
तन मन त्याग करे विच सेवा। फिरे निमाना पावे सच भेवा॥
सबसे नीचा मन राखे ज्ञानी। होए निर्मान हरि शोभा जानी॥
देह अभिमान भयो जब नासा। सतसरूप तब होए परकासा॥
बिमल शबद रग रग में बोले। अमरत वरखे पिये विरत अडोले॥
पूरन जतन से फल एह पाए। सतसरूप का जस नित गाए॥
काल अकाल का भेद लखाया। काल त्याग अकाल चित भाया॥
करम भरम का मूल उखाड़ा। सतसरूप में चित को गाढ़ा॥
दृढ़ निश्चे तब जग में होई। सतसरूप मिल ममता खोई॥

सकल पाखण्ड का खण्डन कीना। सतनाम का मण्डन लीना॥
बिरह विवेक की मालाधारी। **'मंगत'** पावे कोई गुरमुख पुजारी॥**781**
उनमुन बासे पाखण्ड को नासे। सतसरूप संग विरत बिलासे॥
मन तन परे लखयो सतधामा। अगम सरूप पुरख अनामा॥
वेद कुतेब नित करें वडयाई। जो बूझे सो नर गत पाई॥
नित नित सिमरो पुरख अबनाशी। अन्तकाल नहीं काल गरासी॥
सतसरूप जो अन्त विचारे। परकिरत त्याग सतधाम पधारे॥
दुर्लभ आवे कोई गुरमुख ज्ञानी। जीवन माहीं सत सिमरन ठानी॥
पाखण्ड द्वन्द सब परहरे। सतसरूप की रसना चढ़े॥
जीवन माहीं जीवन को पाया। अजरपुरष का भेद लखाया॥
सकल भरम का चक्कर विनाशा। केवल नाम घट माहीं परकाशा॥
हाड नाड़ी का देह पसारा। बीच अचम्भा लख तत्त निरंकारा॥
काया सरजे सो अन्तरयामी। खेल खिलावे बहु भाँत स्वामी॥
ऊँच नीच का देखे ब्यौहारा। सतसरूप का अधिक पसारा॥
उठ रे गुनियाँ नित तत्त विचारो। सत असत का निरना धारो॥
असत अंधकार जड़ बुद्ध त्याग। सत परकाश प्रभ सिमरन लाग॥
एह उपाय मन तृप्ती भाखे। अमरत पिये शान्त पद चाखे॥
काल परहरे सब दोख निवारे। इन्द्री-अतीत कोई पुरख अपारे॥
तिसके दर्शन सब कलह विनासे। **'मंगत'** हो रहो तिन चरन के दासे॥**782**
चेतन पुरख का दीप ये जानो। तिसमें रमे पुरख निर्वानो॥
नौ द्वार परगट दिखलाये। तिनके भोग में सब जीव भरमाये॥
मिथ्या वस्तू सत कर माने। भोग भोग कर गवन पछाने॥
वारपार कछू ना सूझे। शान्त ना पावे तृखा ना बूझे॥
नित ही नित कलेश अधिकाये। जेती सम्पत एता दुःख पाये॥
अन्त पछताए चतर बुद्ध ज्ञानी। त्याग चले जब सकल बिख खानी॥
परम पुरख कोई सन्त विवेकी। सतसरूप की रसना लेखी॥
आप तृपत रहे घट माहीं। तिसमें कलह व्यापे नाहीं॥
नित ही सतसंग करे ब्यौहारा। दुर्लभ आया सो गुरमुख प्यारा॥

तिसके बचन से बन्धन छूटे। सतसरूप मिल गवना टूटे॥
कमल नाभ उरध परकासा। प्रान उपान संग कियो बिलासा॥
सतनाम संग प्रान को जोए। इक दृष्ट बाहर अन्तर होए॥
खुले कपाट दसवाँ दर भाखे। अबनाशी पुरष की रसना चाखे॥
नित ही नित ये सोधन कीजे। अकथ कथा में सुरता सीजे॥
गुरमुख ज्ञान होवे परकासू। तृखा मिटे तृपत घर बासू॥
अधिक वडयाई तिस जन ने जानी। जिस सत मारग में सिमरत ठानी॥
गुनी ज्ञानी सोही नबी रसूला। अबगत नाद जिस घट में फूला॥
उपरस जीव पद निर्मल पाये। **'मंगत'** बिमल शबद मिल सेव कमाये॥**783**
वस्तू अगोचर अन्तर में पाई। सत सरूप की देखी प्रभताई॥
नित ही मंगल उनमुन बरखे। अबगत जोत निरन्तर नरखे॥
होए परकाश मन मगन समाये। निज घर बसे नहीं आवे जाये॥
उनमुन घाटी पन्थ अनूपा। जाने कोई जोगिन्दर भूपा॥
सकल कला होए तिसके हाथे। उनमुन माहीं जो सुरता राखे॥
नाद अखण्डत परम धुनकार। अपने आप में देखे उज्जयार॥
पूरन जुगती पूरन पाये धाम। खावे पीवे केवल सतनाम॥
उनमुन पुरख का अजब पसारा। गुनी ज्ञानी नहीं पावें पारा॥
असंख नाम सो पुरखा धारी। निसदिन गावें गुनी गुनकारी॥
अपने आप में रहे अलेपा। नित परबीन सो पुरख अलेखा॥
अपने आप में सो बलवाना। निराधार पुरख निर्वाना॥
अपने तेज में तेज परकासे। सकल जगत की सिमरत राखे॥
अपने आप में नित समाये। परम तत्त अगम अथाहे॥
लखी ना जाये लीला आपारी। उनमुन दरसे जोत निरंकारी॥
धन्न भाग उस जन के मीता। जिस जानी एह निर्मल रीता॥
मिटे गवन उनमुन बिसरामी। परस्यो साचा पार स्वामी॥
आती जाती पवन को बाँधे। साचा नाम निरन्तर साँधे॥
स्वास सुरत का कीजे मेला। **'मंगत'** सोधे पावे तत्त खेला॥**784**
नौ दर बाँधे पवन चित जोड़े। गुर प्रसाद दर दसवाँ फोड़े॥

धरती पलटे नीर परकासे। पीवे नीर सब मिटे प्यासे॥
उलटा नीर ले गगन चढ़ाई। उनमुन मन्दर की शोभा पाई॥
अघट नाद सुन्न मन्दर बोले। अच्छर अबगत की रसना तोले॥
जुगती बूझे योग कमाये। साचे सतगुर के लागे पाये॥
सतसरूप में निश्चय धारे। तिमर नाशे होवे उजयारे॥
प्रन अपने को सम कर राखे। सतनाम की रसना चाखे॥
करूँ पुकार सुनिये मुनी ज्ञानी। अजरपुरष दी अजब कहानी॥
उलटे मारग में सो दिखलाया। उलटे नियम सो आनन्द घर पाया॥
जीवत मरे ताँ सब कुछ पेखे। धरम करम आवे सब लेखे॥
पुरख अनन्त परसयो घट माहीं। सकली माया तिसकी परछाईं॥
नित कर यतन सतरूप विचार। साचे सतगुर करें पुकार॥
वहाँ में गये जीव सुख भाखे। अबगत जोत घट माहीं परकाशे॥
जनम जनम का अँधेरा जाए। पूरे सतगुर के लागे पाए॥
धन्न सतगुर सत मारग वादी। सतसरूप पाये हरी उपाधी॥
आनन्दसरूप नित चित राखे। काल करम नहीं अन्तर भाखे॥
बल बल जाऊँ सद हूँ बलिहार। **'मंगत'** जो जग में पावे ये सार॥**785**
गुनी ज्ञानी सो ही जानो। अन्तर की जो सार पछानो॥
सतधाम का खोजनहारा। सत को साधे सत करे ब्यौहारा॥
सतपुरख से सिखया लेवे। सकल बिकार में चित नहीं देवे॥
अबनाशी धाम अधिक परकाश। पावे कोई गुर का दास॥
देह विकार में चित नहीं राखे। आतम तत्त की प्रभता चाखे॥
सर्वज्ञ ठाकर देखे पूरा। सरब जीवों की बाँछे धूड़ा॥
आपा मान सकला बिख हरे। तब सतज्ञान में सुरता चढ़े॥
आठ पहर ये सार चित्त पीये। सिमरन ज्ञान में जीवन जीये॥
अखण्ड विरत चित नाम आहारी। ताको मिले सो साच मुरारी॥
मन अपने की डोलन त्यागे। सतसरूप में दृढ़ अनुरागे॥
सो ही ज्ञानी परम तत्तवेता। जिसने धारी ये निर्मल रीता॥
नित ही नित संजम हरनाम। उट्ठत बैठत ये ही बिसराम॥

सरब जीयाँ का दाता सो ही। समदृष्ट तत्त परसे जो ही॥
अधम जीव का करे उद्धार। प्रेमपुञ्ज की दृष्ट उघाड़॥
मन तन पूरन विच सतनाम। आठों पहर विरत निष्काम॥
महाज्ञानी सो पूरे का पूरा। **'मंगत'** हो रहयो तिस चरन की धूड़ा॥**786**
सार लक्षन सुनो मुनी ज्ञानी। सतगुर मिले मिटे भरम की खानी॥
साचा नाओं स्वास स्वास चितारे। पूरे गुर से जुगत विचारे॥
अल्प आहारी ब्यौहार पवित्तरा। सत करम की धारी मात्रा॥
सब जीवों का होये अधिकारी। पर-दुःख हरे सुख आप बिसारी॥
झूट काया का मान गँवावे। हरि जस कीरत नित चित में भावे॥
मज़हब मज़ाहब के बाद को छोड़े। सार तत्त्व में विरती जोड़े॥
केवल नाम का कीजे आहार। दुर्लभ गुनी सो पावे सार॥
अपने जीवन में उद्दम ये धारे। अपनी कल्पना मिल गुरबचन निवारे॥
मान वडयाई नहीं पूजा भेंटे। सेवा भाओ घट माहीं पेखे॥
छिनभंगुर तन का मिटे विकार। तत्त ज्ञान जब परखे सार॥
वेद कतेब नित करें पुकार। सतसरूप मिल भयो उद्धार॥
मिथ्या माया तिमर भ्रम जाये। केवल साचे शबद की कीरत मन गाये॥
भये मतवाला इक नाम रस धारी। सो ही जाने जग माहीं पुजारी॥
तिसकी पूजा पूरन होये। तिसके चरन मुनी देव नित धोये॥
महमा तिसकी वरनी ना जाये। **'मंगत'** मिल सत रूप दुर्मत को खाये॥**787**
पूरन भाग कोटाँ में एक। जिस चित अन्तर शबद की टेक॥
दीनदयाल सो पूरन का पूर। जिस घट बूझा अनहद तूर॥
नित निर्मल बुद्ध अमरत चीने। समरथ शबद मिल भरम सब छीने॥
सदा अकरम करम फल त्यागे। अबगत नाद में सिमरत जागे॥
अपने आप देखे वडयाई। अपने आप पावे प्रभताई॥
अपना दर्शन आप नर कीजे। द्वैत भरम नहीं दृष्टी सीजे॥
पूरन मिल मन पूरा होई। अबगत पुरख परगट सब लोई॥
मानुष जनम का पायो सारा। मिल सतगुर सतनाम विचारा॥
अपने किये का आप फल पाया। पारगरामी घट देखन आया॥
गिनी ना जाये शोभा आपारी। जिस घट परगट आप मुरारी॥

नित ही नित मन मगन समाया। मिल सतरूप हरी सब माया॥
पीरां वलियाँ क़ुतबाँ ग़ौसाँ। सबसे परे सो पुरख अनोखाँ॥
सरब काल तिस माहीं समाना। अपने जीवन का भयो कल्याना॥

**सच बानी ये बूझयो, आद अन्त सच सार।**
**'मंगत' जापे प्रेम से, केवल शबद आपार॥ 788**

## तीसरा विवेक - सत साधु की महमाँ

सत साधू की महमा आपार। गुनी ज्ञानी कथ थाके नित सार॥
वेद ग्रन्थ नित उस्तत कीजे। अनन्त भाओ परमान लखीजे॥
साध की महमा हरि रूप समानी। साध की महमा विचरे चारे खानी॥
साध रूप से कला सत भासे। साध के बचन नही काल गरासे॥
साध के बचन मन धीरज आये। पारब्रह्म से मेल मिलाये॥
साध की महमा तत्त सार परगासे। साध की सिखया सब बन्धन नासे॥
साध की सेवा जुग जुग भरपूर। साधू आये प्रभ आप हज़ूर॥
साध का गुन अपरम आपारा। गावें ग्रन्थ कुतेब आचारा॥
साध की सिखया से जीव सरजीवे। बिख को त्याग नित अमरत को पीवे॥
सकल जीयाँ का संकट नासे। प्रेम सरूप तत्त परकासे॥
सकल जीयाँ को साध आधार। साध का हुकम माने संसार॥
साध की नीती सब ग्रन्थ कुतेब। सत असत का खोलें भेद॥
साध का हुकम जो उलंघन कीजे। दोहे जहान में संकट सीजे॥
अन्धमत नहीं जाने प्रभताई। साध की सिखया सब माहीं वरताई॥
वेद कुतेब अंजील क़ुराना। सब ही रसना करी संत बखाना॥
पाखण्ड भरम का खंडन कीजे। सतसरूप अस्थापत लीजे॥
तन मन सतमारग में त्यागे। सतसरूप में नित प्रत जागे॥
इत उत माया की रचना पेखे। सार सरूप परगट कर देखे॥
मिथ्या भरम बकार को छोड़े। **'मंगत'** साधू सतधाम को फोड़े॥**789**
साध की सिखया ऊँच गुन परगासे। ऊँच गती को जीव करे बासे॥
सचसरूप में साध परबीना। सच ही आहार ब्यौहार नित चीना॥
सच ही माला सच खिनता धारी। सच ही जुगता मन माहीं विचारी॥

सत पुरषारथ छिन छिन कीजे। सत ही परगट सब माहीं लीजे॥
सतसरूप का सब को उपदेशे। मोह माया तम हरे भुलेखे॥
सब जीयों को अधिकार सिखाये। शुद्ध जीवन का राह दिखलाये॥
मन बिकार हरे नित ज्ञानी। नाना मारग परगट दिखलानी॥
गुपत रूप प्रभ परगट कीजे। मन अपने की दुर्मत दीजे॥
नित आनन्द घर माहीं परगासे। साधू रमया सत संग्राम बिलासे॥
विचित्तर लीला साध ने धारी। खेम कुशल की सार विचारी॥
सत जीवन में जनम गँवाये। अन्तकाल सत रूप समाये॥
क्या बखानूँ साध वडयाई। साध की महमा प्रभ माहीं समाई॥
साध की सेवा उत्तम गत देवे। होवे रंक छतर सिर लेवे॥
साध की सेवा त्रैलोक वडयाई। साध की सेवा प्रभ कला दिखलाई॥
साध की सेवा से मोह तम नासे। सतसरूप कला परगासे॥
साध की सेव मान तेज बढ़ावे। साध की सेवा ऊँच धाम समावे॥
साध की सेवा सब बाज़ी जीते। साध की सेव चित प्रभ परतीते॥
साध को सेवे गुरु पीर अवतारा। साध को सेवे राजा रंक आचारा॥
साध की सेव चौधाँ भवन परगासे। **'मंगत'** साध रूप आप अबनाशे॥**790**
साध पर संकट जब ही आये। सकल देश की काया पलटाये॥
साध पर बिपत जब आन व्यापे। दुर्भिख परगट सब जीव संतापे॥
साध के संकट काँपे चौधाँ भवन। देश उपद्रव सत्तता सब गवन॥
वैर बदी सब जीयाँ घट आये। छतर नरेश का भंग कराये॥
सब कीरती नाश हो जावे। जब संकट साधू पर आवे॥
भूल ना करिये सन्तन सँग वैर। सन्त बिरोधी नहीं वरते ख़ैर॥
चौधाँ भवन में पावे अपमान। सन्त बिरोधी अन्ध बुद्ध अंजान॥
कभूँ ना पाये मन में धीर। आठ पहर रहे दिलगीर॥
कपट को धार नहीं मारग बूझे। सन्त बिरोधी नरक दर सूझे॥
सुकृत सीख सुन लयो मीता। साध की सेव घर मंगल लीता॥
जनम जनम की मैल गँवाई। साध की सिखया से परम गती पाई॥
साध सरूप आपे प्रभ आप। साध का नहीं कथा जाये परताप॥
मठ समाज नहीं साध दा होई। भेख भेखान्तर ना तिस मन कोई॥

कोटाँ मद्धे जन कोई साध। जिन हरया माया परमाद॥
सत सरूप में अचल चित हूआ। आलख पुरख मिल मिटावे भ्रम दूआ॥
अगम अपार घर कथा विचारी। सचखण्ड़ का सो भया पुजारी॥
सत आसन जत खिनता ओढ़े। प्रेम प्रीत की जुगता जोड़े॥
ध्यान भभूत मन अंग रमाई। निरभेख भाओ की रसना गाई॥
बिरह विवेक मन अन्तरधारी। **'मंगत'** ऐसे साध तौं बलिहारी॥**791**
नित आनन्द मन माहीं परकासे। दुर्मत त्याग सच भेख निवासे॥
विचार की कण्ठी गल में धारी। प्रेम पुंज अनुराग विचारी॥
सब माया का भक्खन कीना। उलट पवन घर आसन लीना॥
अन्तर की गत छिन छिन विचारे। गुनातीत सो पुरख बलिहारे॥
इन्द्री-जीत मन नाम परकासे। इस्थिर बुद्ध सत शबद निवासे॥
ब्रह्म कन्दरा में आसन धारे। कोट भान परकाश विचारे॥
नित निरालम समरूप समाये। साध की महमा कैसे वरनी जाये॥
काम क्रोध बिख अगन निवारे। शील सन्तोख का खण्डा धारे॥
मिथ्या माया भरम उड़ाये। सतसरूप का निरनय पाये॥
भूख प्यास निन्द्रा सब जीते। उलट पवन का आहार करीजे॥
सकल जीयाँ को करे उद्धार। हरें कलेश दुबधा सब टार॥
परमानन्द मन माहीं परकाशे। साधू परसे नित तत्त अबनाशे॥
इच्छया त्याग काल परहरया। अगम सरूप अन्तर चित धरया॥
अपनी शोभा में आप समाये। किस मुख से गत साधू की पाये॥
सतपुरष जब साधू आया। सकल जीयाँ का त्रास मिटाया॥
भरम भय का खण्डन कीना। सतसरूप का निश्चय दीना॥
उन्नति मारग सबको दिखलाये। दुबधा काट सत प्रेम वरताये॥
पन्था पन्थी सब बन्धन काटे। आलख रूप केवल चित जापे॥
सकल जीयाँ का भया उद्धार। **'मंगत'** साध सरूप जब आया अवतार॥**792**
बिपत निवारे शान्त परगासे। निर्मल बोध सतनाम बिलासे॥
संकट हरे मिटे सब पीड़ा। साध का रूप अधिक गुन कीरा॥
मोह माया भरम करे नास। सतसरूप का करे परगास॥

जड़ बुद्धि को साधू परगासे। तत्त ज्ञान की समता भासे॥
सकल विकार बिख मल हरया। सत साध की जब सरनी पड़या॥
नित ही नित ये उद्दम धारो। साध की सिखया में प्रीत विचारो॥
कोट ब्रह्मण्ड परकासे जोई। शोभा परगट सो साधू घर होई॥
दीन दुनी दोनों का पीर। सतनाम घर रमा फ़क़ीर॥
पर-उपकारी नित जीवन धार। परदु:ख हरे ये कीजे कार॥
कपट त्याग रहे निरमान। सत साधू की कर पहचान॥
पखवाद ना मन में धारे। केवल उस्तत सत रूप उचारे॥
जप तप संजम में मन राखे नीत। द्वन्द विकार सब हरे पलीत॥
सूक्षम सुरती सत नाद को भाखे। अखण्ड सरूप रस अमरत चाखे॥
त्रैगुन माया से भया अतीत। शबद कमावे सो साधू पुनीत॥
सब विद्या का भया परकास। अमरत खानी घर माहीं निवास॥
मन वैरी जो दु:ख देवे। परम साध के चरन को सेवे॥
सकल माया का ठाकर होई। सार प्रभता लखे साधू कोई॥
मन अपने को जो कीजे रास। सोही साधू लखे तत्त परगास॥
प्रेम पुंज की मात्रा धारी। **'मंगत'** गुरमुख साधू से बलिहारी॥**793**
मन को थामे बिख माया से मीत। ज्ञान की जुगत तिस भई परतीत॥
सार आसार का बूझे मूल। सतसरूप को पलक ना भूल॥
उनमुन बासी सो साधू आपार। बूझे शबद अखण्ड धुनकार॥
बिख को त्याग अमरत घर चीना। अमरपुरष का दरशन कीना॥
जिस वस्तू को सोधे सब जीया। सो वस्तू घर साधू प्रगटीया॥
आप आनन्द आनन्द घर बास। भरमत जीव की मिटी तरास॥
धन्न साधू जो ये लक्खन धारी। केवल नाम मन माहीं विचारी॥
साचे नाम की दृढ़ राखे परतीत। आपा त्यागे सोई इन्द्रीजीत॥
पवन को बाँधे सतनाम के साथ। तिमर जाये घट परसे नाथ॥
अपने जीवन का करे उद्धार। तिस साधू तो जाऊँ बलिहार॥
नित ही नित सत तत्त को खोजे। निर्मल बुद्ध आतम तत्त बोधे॥
शूनियँगकार सत रूप आनाद। तिसको पूजे सो पूरा साध॥

निर्मल जुगत मन अन्तर राखे। निर्भयधाम की रसना चाखे॥
रहत इकान्त सत तत्त विचारी। आसा त्याग मन ममता करे छारी॥
काल करम का भय निवारे। तत्तज्ञान घर सोध विचारे॥
अपने आप में रहे गम्भीर। ज्यों तरंग जाये मिलया नीर॥
अपने भरम का किया विनास। सतसरूप देखा अबनास॥
शबद अगोचर की माल परोये। उनमुन घाटी में जाकर सोये॥
प्रान उपान का नाका बाँधे। गुर का शबद घट अन्तर साँधे॥
भरम ग़ुबार सकला मिट जाये। **'मंगत'** साधू सो कहलाये॥**794**
जतन जतन कर बिख माया त्यागे। सतसरूप में गुरमुख जागे॥
आनन्द परसे आनन्द वरताये। साधू की शोभा वरनी ना जाये॥
सार ज्ञान तत्त बूझे मूल। शबद समाये बिनसे सब भूल॥
उलट सुरती पिन्ड को खोजे। परम आनन्द घट अन्तर सूझे॥
उलटे मारग शिखर घर बास। चेतन पुरष संग कियो बिलास॥
नौ द्वार से सुरता बाँधे। केवल नाम में जुगती गाँडे॥
उरध कँवल भयो परगास। धन्न जोगी सत जुगत निवास॥
पूरन सेव पूरन भयो कार। सतसरूप परसे तत्त सार॥
नित ही नित शबद कमाये। पाखण्ड त्याग निर्भय घर जाये॥
परकिरती दोख ना मन में लागे। ज्ञान ध्यान फल पाये वडभागे॥
गुर की जुगत तन मन विचारे। सत कला घट परगट धारे॥
पूरन नीती पूरन तत्त वादी। सतसरूप मिल हरी उपाधी॥
नित उपरस सतरूप आहारी। सो साधू कुल जगत निस्तारी॥
आप समावे सचखण्ड बानी। निर्मल रसना घट माहीं बखानी॥
केवल प्रेम आतम तत्त सार। जुगती जोवे सतनाम आहार॥
दृढ़ निश्चे मन बुद्ध को आये। हरे बकार सतरूप समाये॥
धन्न आया जग में सो प्रानी। अखण्ड पुरष की शोभा जानी॥
सोही साधू सोही अवतार। सकल जीयाँ का करे निस्तार॥
सच वरताये कूड़ मल हरे। **'मंगत'** ऐसे साध की चरनी नित पड़े॥**795**
कपटी साधू करे धरम को भंग। अन्ध ग़ुबार ना कीजो संग॥

कपटी साध मिले जाये विश्वास। भरम प्रगटे होये धरम का नाश॥
सत को त्यागे पाखण्ड दिखलाये। मड़ी मसान की पूज कराये॥
तन्तर जादू का देवे उपदेश। काम क्रोध बिख धरे कलेश॥
खिमा ग़रीबी नहीं चित बीच आये। धरे अभिमान सरसों तली जमाये॥
वली औलिया जाने अपने आप। पलक पलक में वरतावे सन्ताप॥
जम का रूप सो साधू जानयो। भूत प्रेत का मन्तर चित ठानयो॥
डायन चुड़ेल बीर बैताल। बैठ मसान घाले तन घाल॥
अती लोभी कामी आपार। परधन लूटे हरे पर-नार॥
बाहरों भेख धरे अतीत। कपट बिकार अधिक धरे नीत॥
पाखण्ड करे नहीं शानत आवे। आप भरमे कई लोक भरमावे॥
चोर ठग कई शिष बनाये। लोक लूटन का राह बतलाये॥
धृग साधू करें भेख का नास। सकल जीवों को देवें त्रास॥
पेख पेख कर खोजो सन्त। जाँ के मेल से मिटे भरम अनन्त॥
कपटी साधू की जो सेवा कीजे। देश का शत्रू सो नर सीजे॥
कपटी साधू का करे जो संग। धर्म नीती करे सकली भंग॥
सात कुलाँ को नरक दिखावे। कपटी साधू के पास जो जावे॥
देश उद्धार सत मारग त्यागे। कपटी साधू के जो चरनी लागे॥
लोक लज्या मिटे सदाचार। मूरख साधू का जो सुने विचार॥
कपटी साधू से उत्तम शिला जान। **'मंगत'** जाँपर बैठ सिमरे भगवान॥**796**
कपटी साधू से भला वैरी का साथ। रहे सुतन्तर नहीं पावे घात॥
कपटी साधू से भला दरिन्दे का मेल। एक पलक में जाये देह का खेल॥
कपटी साधू संग उपजे भरम बिकार। भरमें जीव अनेक जून बारम्बार॥
समे ना खोयो ना त्यागयो द्रब मीत। कपटी साध की सेव मन करे पलीत॥
साधू कपटी के लच्छन सुनो चतुर सुजान। तत्त को छोड़ पूजे मड़ी मसान॥
काया का भेख बहुता बिस्तारे। कभी नगन रहे कभी वस्तर धारे॥
कभी भभूत अंग रमायें। कभी कफ़नी को गल पायें॥
अपने मन में मध बहु राखे। खान पान की इच्छया बहु भाखे॥
लोभी अधिक अधिक बकारी। संग ना कीजो सुनो सीख हमारी॥

तिसके संग मन होए बिकार। घर बाहर से देवे उजाड़॥
भंग तम्बाकू गाँजा चंडू पीवे। नशे भोग की सिमरत में जीवे॥
माँस मदिरा का करे नित आहार। नित ही सूझे कपट विकार॥
जिन के लक्षन ये नर देखो। तिसकी संगत ना भूल के पेखो॥
मूरख गुरु ना पार लँघावे। आप डूबा और शिष डुबावे॥
चौपट जुआ और ताश खिलाड़ी। सिनेमा थेटर का जो देखनहारी॥
जीब्भा रसना जो बहु चित राखे। कपटी साधू के सुन ये लक्खन भाखे॥
तिसकी सेव दुरगुन को देवे। **'मंगत'** ऐसा साध जो सेवे॥**797**
साध का जीवन कठन कठार। अपने आपको दीजे मार॥
खिमावान विरत बैरागी। सतसरूप चित रसना जागी॥
श्रद्धा भगत मन राखे निर्मान। अपने आप की कीजे नित हान॥
एक परमेश्वर की राखे टेक। सिमरे नाम छिन छिन धर लेख॥
सतसरूप का मन में वैराग। अपने जीवन की आसा नित त्याग॥
इन्द्री भोग चित से त्यागे। श्रद्धा नाम की अन्तर माहीं जागे॥
सब जीयाँ से करे प्यार। सबसे नीचा मन को धार॥
सत संगत में सेव कमाये। सत सिखया में नित मन रीझाये॥
पाखण्ड विरत से नित धरे बिरोध। भेख के भरम का करे निरोध॥
मन तन प्रीत से कीजे सेवा। सिमरे नाम परम सुख देवा॥
अनन्त सरूप का मंगल गाये। सुन ये लच्छन सत साधू कोई पाये॥
पाप विरत सब खण्डन कीजे। पर-दुःख हरे सुख अपना दीजे॥
जीया जन्त की सेव कमावे। सो साधू सिद्ध गती को पावे॥
पलक पलक मन पाप को खोवे। गुरमती सतनाम को जोवे॥
होये निमाना प्रभ आसा राखे। सिमरत कीरत प्रीत हर भाखे॥
नाम प्रीत में तन मन सुखाये। अबगत परगास सो साधू पाये॥
तिसकी सिखया और रहनी आपार। तिसके उपदेश तरे संसार॥
पेख पेख कर पूजयो साध। एक देवें सुख एक देवें उपाध॥

**सत साधू के मेल से, भय भरम सब जाये।**
**'मंगत' तिसकी सेव से, कोट कोट सुख पाये॥ 798**

उत्तम करम ये जग में भारा। नित सतसंग में जीव पधारा॥
जड़ बुद्धी से सुतन्तर होई। सतसंगत में धरे दिल जोई॥
करम बिकार बिख भरम निवारे। नित सतसंग में जीव पधारे॥
यज्ञ तप योग करम बिध नाना। तुल सतसंग ना करो पछाना॥
चौधाँ लोक में पग पग तप धारे। एक पलक सतसंग कोट जीव उद्धारे॥
गुनियाँ मुनियाँ करी वडयाई। सहज उपाये सत मारग पाई॥
बिन सतसंग मन इकत्तर ना होवे। जनम जनम की ना जड़ता खोवे॥
वेद ग्रन्थ पढ़े बिध नाना। बिन सतसंग नहीं पाये सार निधाना॥
खल बुद्धी अन्धमत जो होवे। नित सतसंग में प्रीती जोवे॥
बिना जतन के सब भरम उठ जाये। महाँ गुनी सो पुरख कहलाये॥
जैसी संगत ऐसा मन भासे। मूरख संगत जड़ता परकासे॥
करम धरम ना पावे रास। मूरख सेती जो करे बिलास॥
परम आचार जग में एह मीता। जीव पधारे सतसंग में नीता॥
सतपुरषों के सुने इतिहास। सतसरूप में पावे विश्वास॥
सत करम मन रुची उपजाये। नित सतसंग में गुनी जो जाये॥
बिना पढ़े होए बुद्धवाना। बिना साधे सिद्ध सार पछाना॥
अपने पाप की करे पछान। नित सतसंग में रक्खे ध्यान॥
अधिक कलेश बिपता सिर आये। **'मंगत'** सतसंग पाये सकल मिट जाये॥**799**
अनेक विगन जाये सतसंग पधारे। जनम जनम की मल जड़ता टारे॥
निस दिन पल घड़ी सतसंग रमावे। पाप पुन्न की तब सोझी पावे॥
अपनी उन्नती का उठे मन चाओ। सुगम भाये सत मारग पाओ॥
रिद्ध सिद्ध देवे बढ़े परताप। सतसंग में जो चित ले थाप॥
सत को छोड़ कुसत संग करे। अनँक बिघन सिर बिपता पड़े॥
चोरी ठगी मन आये विकार। करम विलक्खन की विरती चित धार॥
जूआ चौपट छल कपट विकार। मूरख संग से डूबे मंझधार॥
गृहस्ती विरक्ती जो कोई होवे। साची संगत मिल सब दुःख खोवे॥
संगत रूप ये मन विचार। संगत से ही पावे मन आधार॥
संगत से ही ऊँच नीच गत पावे। सत कुसत मन करम कमावे॥

दुर्लभ भाग जो सतसंग पाये। अनेक विघन सम धूल उड़ जाये॥
करयो उद्दम ये सत विचार। सतसंगत से मन पावे उपकार॥
देश उपद्रव अनेक विघन विनासे। सतसंग जहाँ नित परकासे॥
राजा रंक सब ही सुख पाये। अपनी विघन के सब करें उपाये॥
कूड़ कपट बिकारी का नाश। सत्संग का जाँ होवे परकाश॥
सबसे उत्तम नीती और ज्ञान। सत्संग परसे होवे परधान॥
होवे सुतन्तर चतुर बुद्ध पाये। शुद्ध ब्यौहार की सोझी आये॥
हक़ हलाल की करे पछान। कोट फल एक सतसंग में जान॥
भगती ज्ञान ध्यान विवेक। सबसे उत्तम सतसंगत एक॥
नित ही नित सतसंग पधार। **'मंगत'** मिटे सब मन अन्धकार॥**800**
पखवाद नहीं छल अछेद। मान मध ना बिखया खेद॥
केवल सतसरूप का होवे परकाश। सोही संगत साची चित भास॥
जो जाये सो पाये विवेक। सत मारग का लाखे लेख॥
बिरह वैराग प्रेम परगासे। सो ही संगत सच रूप निवासे॥
अन्धकार सब मन का जाये। जब सतसंग की महमा पाये॥
मिथ्या जग की रसना त्यागे। अबनाशी पुरष की सेवा लागे॥
सत असत का पाये विचार। अनेक जीवों का होये उद्धार॥
तत्त ज्ञान जाँ होये बखान। साची संगत सो ही परधान॥
सतपुरषों का इतिहास परगासे। संगत साची सो ही नर भासे॥
लोभ विकार मोह ममता जाये। सत सरूप में प्रीती आये॥
अपने मरने का निरनय भाखे। संगत साची में रसना चाखे॥
मन बिकार सहजे मिट जाई। साची संगत की वड प्रभताई॥
ऊँच करम मन उपजे भाओ। नित ही उद्दम सत सेव कमाओ॥
मानुष जनम की सार को पावे। नित सतसंग में जीव जो जावे॥
ग्राम ग्राम में सतसंग प्रभाओ। करे कल्यान मंगल चित आओ॥
सब गुनियों को ये करूँ बखान। मिल सतसंग सतरूप पहचान॥
मान वडयाई और कीरत उपजावे। सत समाज जाँ रहे समावे॥
औगुन गुन दोनों पहचाने। दुर्लभ मारग सतसंग से जाने॥

अधिक वडयाई अधिक परताप। **'मंगत'** सत समाज से मिटे संताप॥**801**
अपने जीवन का सुने उपाये। ऊँच गती को सो नर जाये॥
सतसरूप की आवे परतीत। नित सतसंग में राखे चीत॥
राज तेज का चक्कर चलावे। संगत बल से बहु सुख पावे॥
सो ही देश उन्नती कीजे। इकत्तर होए सतसार को बूझे॥
वैर विरोध का मिटे संताप। मिल सतसंग सतनाम अलाप॥
एक घड़ी निसदिन नीयम राखे। सभे जीव मिल प्रेम रस चाखे॥
वैर विकार सकल मिट जाये। सत गती को निश्चे सो पाये॥
ऊँच नीच की होवे कल्यान। रोगी सोगी की होवे पहचान॥
दुःखी दलिद्री का होवे उपाये। सत समाज जाँ रही समाये॥
मानुष जनम का नियम धर्म सूझे। जनम मरन के अर्थ को बूझे॥
सतगुन का होवे परगास। सत समाज जाँ करे बिलास॥
मूढ़ मत ग़ुबार सब जाये। मानुष जीवन की सोझी पाये॥
सो ही देश अत कान्ती धारे। जाँ में नियम सत समाज अपारे॥
परस्पर सब में आवे प्रेम। सत सील परसे चित खेम॥
परहित बुद्ध होवे परगास। अधम जीव का होवे दुःख नास॥
धनी दलिद्री इक थाम समाये। प्रभ की प्रभता तब मन में आये॥
सब के अन्दर सत उद्दम परगासे। सत संगत सतरूप निवासे॥

**संगत राजा संगत परजा, संगत करे न्याये।**
**'मंगत' संगत सत से, सब जग शान्त समाये॥ 802**

परमारथ का तत्त ये सार। सत संगत भ्रम करे निस्तार॥
सबसे ऊँची गत परवान। साची संगत देवे कल्यान॥
एक पलक सतसंग फल आपार। मुनी वशिष्ट यूँ करें पुकार॥
गुरु पीर अचारज होये। मिल सतसंग तिमर सब खोये॥
सतसरूप की जानी सार। लोक लोकान्तर का होवे निस्तार॥
प्रभ का नियम एह ही परधान। साची संगत करे कल्यान॥
जो कोई माँगे अपना परताप। सतपुरषों संग ले चित थाप॥

नित ही नित आज्ञा मन माने। मिटे अन्धकार सतरूप पछाने॥
सतपुरषों की जो सिखया लेवे। साची संगत मिल बहु फल देवे॥
सकल बिकार मन नाश करीजे। सतपुरष की चरनी चित दीजे॥
सेवा टहल मन तन से कमावे। सत सिखया से परमपद पावे॥
अधिक वडयाई इस लोक में जान। मिल सतसंग भयो परवान॥
निर्मल बुद्धी चित शान्त आये। जप तप संजम की रसना भाये॥
मानुष देह देव करम कमावे। सत सिखया से देव रूप हो जावे॥
नित ही नित मन उद्दम धारो। साची संगत में प्रीत विचारो॥
ऊँच गती की रसना चाखो। निर्मल ज्ञान तत्त अन्तर भाखो॥
करम चँडाल त्यागो नित नीत। पाओ साची संगत सतपुरष संगप्रीत॥
सुफल करम ये जग में जान। पलक विचरे होये देव समान॥
अपने जीवन का होए उद्धार। सकल देश में उपजे उपकार॥
महमाँ सतसंग आलख आपारी। **'मंगत'** जो परसे ताँसों बलिहारी॥**803**
एक पलक संगत सच कीना। अजामिल के पाप सब छीना॥
उत्तम गुन को जाये पधारा। गज गनका का भयो निस्तारा॥
साधू की संगत सब में परवाना। सतसरूप का खुले निधाना॥
तत्त नीती होवे परगास। साची संगत करे निरवास॥
साध संग बिख ममता को हरया। पारगरामी तत्त नज़री पड़या॥
साध की संगत अगम दिखावे। निर्मल शोभा घट माहीं प्रगटावे॥
दुर्जन सुर्जन सब भये पुनीता। साध की संगत परम सुख लीता॥
साध की संगत सत संगत जान। निरदोख ज्ञान जाँ होये बखान॥
परम आनन्द घट करे निवास। साध की संगत करे काल का नास॥
वड उपमा मन होये गम्भीर। साध की संगत से मिटे तक़सीर॥
नित ही नित राखे चित चाओ। संगत साध सतरूप दिखाओ॥
निस दिन कीजो संगत गुनी मीत। पख पख कीजो रख साची प्रीत॥
मास मास तो निश्चे जाओ। एक छिन संगत मिल पाप मिटाओ॥
सो ही दुर्जन सो ही औगुनहारा। साधू की संगत नहीं निश्चे धारा॥
गरब गुमान में जीवन सब खोए। जनम गँवाए अन्त को रोए॥

सकल सम्पदा ना कोई सुख देवे। बिन साध की संगत नित ही दुःख सेवे॥
परमानन्द अखण्ड परगास। साध की संगत में करे निवास॥
द्रभ गँवाओ समे को त्यागो। केवल संगत साधू में लागो॥
सार वस्तु ये ही परवान। सगंत साध मिलावे भगवान॥

**मिथ्या त्यागो, अबनाशी आवे नित चीत।**
**'मंगत' संगत साध से, होये जनम पुनीत॥ 804**

सरब कला समरथ भगवान। निश्चे आवे होवे कल्यान॥
सतसरूप चित सिमरन आये। संगत साध मारग दिखलाये॥
आनन्द मंगल जीव को होवे। परमार्थ अर्थ चित अन्तर जोवे॥
सरब निधान आतम परकास। केवल संगत बीच साध निवास॥
भय भरम सकला मिट जाई। सत सिखया जो अन्तर लाई॥
बिख की बाड़ी ये संसार। जतन बिना नहीं पावे पार॥
रोता आये रोता जाये। राजे राने सब भरमाये॥
त्रैगुन माया अचरज बिस्तार। डूबे बड़े गुनी गुनकार॥
मानुष जनम का लेख विचार। परस लेवें तूँ सरजनहार॥
सच ब्यौहार मन आये समाये। प्रभ की कीरत नित चित में गाये॥
सार वस्तू परगट मन होई। खिमा ग़रीबी की रसना जोई॥
मरन जीवन का पायो भेद। साचा अर्थ सुनया सत वेद॥
सकल प्रभताई पाई साध के संग। निर्मल करमी को लागा निर्मल रंग॥
जैसी संगत ये मन जावे। तिस प्रभाओ सो रूप हो जावे॥
भ्रष्टकारी का छिन संग कीजे। भ्रष्ट मन होवे सब तप हरीजे॥
भूल ना करयो दुष्ट का संग। मन तन होवे सकल बेरंग॥
नित ही नित तत्त बूझो मूल। साची संगत पत देवे अनुकूल॥

**इस सागर संसार में, सुनयो एक उपाये।**
**'मंगत' जैसा संग करे, ऐसी गत को पाये॥ 805**

## चौथा विवेक - सतपुरषों की समानता

सब सिद्धन की सार सुन, सब गुनियाँ दा ज्ञान।
सतसरूप प्रभ एक ही, सब में भया परवान॥
जैसे जिसने प्रीत करी, पायो सरजनहार।

बन्धन से मुक्ता भये, जग के भये आधार॥
समाँ देश विचार के, नीती करें बखान।
भेद भाओ कछु नहीं, केवल सार निधान॥
होये मसीह जापता, प्रभ पिता रूप सम प्यार।
अनन भगत घट उपजी, दरसा रूप आपार॥
जान जिसम निरना किया, जिसम से भया अतीत।
जान तत्त पछान के, सदा रहे रमनीक॥
राग द्वेष संशा गया, करम विकार विनास।
सतसरूप से मेला भया, जीव भया निरवास॥
ऐसे जापे नाम को, गुनी मौहम्मद नीत।
मित्तर सम प्रभु जान के, राखे दृढ़ परतीत॥
बीच रज़ाई त्यागया, सकलो करम बकार।
दीन आजज़ी में रमा, नफ़स दा किया शिकार॥
बीच रियाज़त नित रहे, साहब पर विश्वास।
अधिक प्रेम परगट हुआ, आये मिला अबनाश॥
परम त्यागी बुद्ध भया, सो तत्त जापे निर्वान।
काल करम संशय गया, बुद्ध निश्चल परवान॥
दु:ख सुख प्राकिरत के, व्यापे नाहीं कोए।
सारकला परगट भई, करम बन्ध सब खोए॥
सब से परे आनन्द रूप, जाना इक परकास।
तिसमें ही विरती लगी, पाया मोख निवास॥
सार तत्त सत जान के, नित रहे परबीन।
ऐसे रूप भगवान का, गुनी बुद्ध लियो चीन॥
परमारथ को सोधता, रिखबदेव इस भाँत।
मन करम और वासना, सकले द्वन्द भरान्त॥
तिससे परे एक वस्त है, नित ही शून्यंगकार।
सकल से न्यारा सो रहे, अखण्ड तत्त निरंकार॥
तिसमें बुद्धी जब गई, तब पावे बिसराम।

जैनमत परगट कियो, दे साचा पैग़ाम॥
ज़रोदश्त विचारया, अगनी रूप भगवान।
काल करम को भस्म करे, बुद्धी दे कल्यान॥
तिसमें ही नित मगन रहे, आशा विघन निवार।
केवल अगनी ब्रह्म को, नित राखे मन धार॥
अगन पुजावे जगत में, कियो ये विचार।
मत पारसी परगट किया, दे के ज्ञान आधार॥
सब ऋषियन की सार सुन, अध्यातम विचार।
वस्तू एक ही पूजते, नाना जुगत मन धार॥

**सब की सार को सुन के, दृढ़ कीजे विश्वास।**
**'मंगत' विचरे नाम में, कटे करम की फाँस॥806**

सार आतमा माया अतीत। आदी पुरष नित रमा पुनीत॥
अपने तेज में सो तेजाधारी। अपने बल में सो रहे बलकारी॥
आनन्दसरूप जुग जुग आद। धारे माया सकल विखाद॥
सबके भीतर सबसे अलेप। ऐसा पुरख अबगत अलेख॥
तिसको परस तृष्ना होवे नास। परमगत परगट निर्भय वास॥
सत असत सबका निरनय होए। बादमुबाद में जनम मत खोए॥
इस देही में अमरत खान। मिल सतगुर नित करो पछान॥
त्रैकाल देह नाश सरूप। तिसका साखी सो अमरत कूप॥
बिना पछाने मन आये ना धीर। इच्छया में डूबे राजे राने मीर॥
बिना तत्त ज्ञान नहीं बन्धन छूटे। मोह भरम ना कालगत टूटे॥
नित ही तृखा नित ही निरास। नित ही भय माईं करे निवास॥
पाये सम्पत चौधाँ भवन। बिना ज्ञान नहीं मिटे मन गवन॥
इच्छया माहीं नित आवे जाये। ऊँच नीच जूनी भरमाये॥
भरम का जाल ना होवे नास। जब लग नहीं घट तत्त परगास॥
पखवाद सब तजयो मीत। सब सिद्धन की एक परतीत॥
झूट काया सच निरंकार। झूटे भरम सब माया बकार॥

ज्ञान ध्यान सुन सच विवेक। तजो विकार सिमरो प्रभ एक॥
मन तन आवे शान्ती पूर। अबगत पुरख घट बोले तूर॥
बिना उपास और बन्दगी मीत। कभूँ ना होवे ये निर्मल चीत॥
बिना उपकार नहीं आवे अनुराग। बिन सतसंग नहीं मिले बैराग॥
एक विश्वास सब गुन की खान। 'मंगत' दृढ़ विश्वासी को मिले भगवान॥**807**
सत करम का उद्दम धार। ज्ञानी गुनी करें पुकार॥
पाप मती को त्यागो नित नीत। दीन बन्दगी धर मन परतीत॥
सरब के दुःख को हरो नित आप। पावें सुख अधिक परताप॥
पर हक़ में ना चित डोलाओ। अपनी करनी पर धीरज पाओ॥
मन गंवार का बाँधो वेग। सत विचार की धारो तेग़॥
नित ही नित ये करो विचार। मिरतक देह नहीं इस्थिर सार॥
चार दिनां का ये मेला मीत। अन्त को परसे धूड़ पुनीत॥
तुच्छ जीवन का त्यागो मान। सदाचार में रहो परवान॥
करम विलक्खन नहीं चित में राख। सतपुरषों की बानी भाख॥
काया दीप का खोजो ज्ञान। वस्त अनूप तिसमें परधान॥
तिसको पाये मन शंका नास। सकल जीव की मिटे त्रास॥
अद्भुत परकास घर परगट पाये। जाँ की उस्तत मुख वरनी ना जाये॥
जो जाने सो ही अवतार। अनेक जीयाँ का करे उद्धार॥
इच्छया त्याग मन भया निष्काम। मध त्याग बुद्ध लियो बिसराम॥
सदा अचिन्त रूप में बास। भय भरम का कीना नास॥
एक दृष्टी मन आये समाये। दुःख द्वन्द पर प्रभता पाये॥
सब बकार से मन भया अतीत। तत्त परकाश से भयो निर्मल चीत॥
अधिक वडयाई करें सन्त बखान। पावे विरला पुरख सुजान॥
अपनी मैल धोवे आप। एक नाम में सुरती थाप॥
डोलन तजे पावे बिसराम। बिनसे सकल पन्ध मुक़ाम॥
अपने रूप में आप समाये। **'मंगत'** सत गत गुनी कोऊ पाये॥**808**
बाद त्याग सत मारग खोज। दुर्लभ जनम की पाओ मौज॥
मज़हब की फाँस जब दृढ़ कर धारी। सार तत्त नहीं मिले मुरारी॥

अनेक भरम में जीव भरमाये। पढ़ पढ़ पुस्तक नहीं सार को पाये॥
पंडत ज्ञानी क़ाज़ी पोप। सब ही बांधे इन्द्री रस जोंक॥
ना आप पछाने ना औराँ दिखलाये। अन्ध ग़ुबार में आवे जाये॥
सकल जगत को करें हैरान। पढ़ पढ़ थाके नहीं सार पहचान॥
कोई गुरमुख आया तत्त धारी। सतसरूप की सोध विचारी॥
झूटी काया का तजे विकार। सत गती निरना चित धार॥
अपने आप में आप निवारे। परचण्ड रूप में सुरती धारे॥
सकल विकार बिखया होवे नास। उलट बुद्धी घट चीने परगास॥
काया दीप अमरत की खान। तिसको जाने सो गुनी निधान॥
नौ द्वारे को बन्द कराये। अन्तर पवन की सोध कमाये॥
उरध कमल भया परगास। सतसरूप परसा अबनास॥
अपने मन में पाई जीत। अपने करम की आई परतीत॥
घट में देख मन आया विश्वास। तृखा मिटे तृपत घर बास॥
तत्त निरंजन संग भयो मेल। इस काया में अचरज खेल॥
मिल सतगुरु सत मारग सोध। भरम बिकार का करो निरोध॥
अपने जीवन की काटो फाँस। निर्मल तत्त्व में लयो निवास॥
नित ही नित ये जुगत नर बूझ। **'मंगत'** प्रभ अपने को अन्तर सूझ॥**809**
जिस पाया सो अपने घर माहीं। गुनी ज्ञानी देवें दुहाईं॥
बाहर की भरमना तजयो गुनवन्त। तेरे घट में रमया आप भगवन्त॥
तिसकी शक्ती से ये काया सरजीत। जग में साचा प्रभ एको मीत॥
तिसके आधार चले सकला खेल। सत को खोज कर सतसंग मेल॥
अबनाशी वस्त अधिक परकास। नित निरालम करे निवास॥
सकले दु:ख जीव के हरना। सकल स्वामी सो कारन करना॥
दीनदयाल अनाथों का नाथ। तिस बिन दूजा नहीं जग में साथ॥
नित ही नित सिमरो तत्त मूल। व्याप रह्या प्रभ सूक्षम अस्थूल॥
तिस परकाश से सब जग परगासे। तिस आधार सब करें बिलासे॥
तिस बिन सत ना वस्तू कोये। सबको सत्तता तिससे होये॥
ऊँच वडयाई नहीं पारावार। पलक ना भूलो सो सरजनहार॥

साध-जनाँ ने कियो बखान। मिथ्या सकल बिना भगवान॥
सकल कलेश का बन्धन काट। सिमर नाम पायें निर्मल वाट॥
ऊँच गती जीव होए परवान। सचखण्ड का लखे निशान॥
ज्ञान ध्यान में रहे मख़मूर। आगम नाद घट परसे तूर॥
नित मतवाला एक साचे नाम। अखण्ड विरत बुद्ध बिसराम॥
जप तप नियम सब पूरन होये। आलख पुरख घट घट दरसोये॥
तिस पुरख की अजब वडयाई। निमख निमख कर वेद में गाई॥
पूरन भाग सो गुनी जग आया। सतसरूप का निरनय जिस पाया॥

**पूरन गती पूरन मती, अती तेज परकास।**
**'मंगत' सिमरे नाम जो, मन मुक्ती करे बिलास॥ 810**

## पाँचवाँ विवेक - सतनियम जीव उद्धारक

जीव उद्धारक करम ये, निश्चय करो स्वीकार।
जीवन को इस्थिर करें, मिटें सकल विकार॥
प्रभात सन्ध्या काल दो, दृढ़ नीयम ये राख।
दो घड़ी हरि सिमरन कीजो, प्रेम प्रीत के साथ॥
शुद्ध करे ब्यौहार को, नफ़ा लयो समान।
थोड़ी लयो ब्याज नित, धन ना पावे हान॥
लक्ष्मी करे निवास वहाँ, जाँ साचा ब्यौहार।
मेहनत थोड़ी फल पायो बहुता, ऐसा सुनो विचार॥
खेती और चाकरी में, पर-हक़ करे पछान।
शुद्ध कमाई जानिये, जो ऐसा निश्चय मान॥
निसदिन देवे अन्न जो, दुःखी दीन अनाथ।
अघट लक्ष्मी परगट होवे, कभूँ ना छोड़े साथ॥
यथाशक्त सेवा करे, साधू गुरु आचार।
मन बाँछत फल पाये, सो हरा होये परिवार॥
भूल कर ना बेचिये, इक कन्या दूजे भूम।
तिनकी सेवा करन से, अधिक फल मालूम॥

निसदिन राखो प्रेम, सत-संगत के माहीं।
अधिक होये ब्यौहार जो, तो पख पख को नित जाईं॥
जीवन की उन्नति करे, मन में दे विशवास।
सत करम की सुध मिले, सब कारज पावे रास॥
आहार करे नित शुद्ध, बासी अन्न ना खाए।
बुद्धी होवे सुतन्तर, रोग व्याध सब जाए॥
नफ़ा समान खर्च करे, बच्चत कीजे नित।
लक्ष्मी की आदर करे, फ़ज़ूल ना त्यागे मित॥
पहनावा सादा करे, जो होवे देश की चाल।
सबसे प्रीती उपजे, तन मन होये निहाल॥
थोड़ा समय निकाल कर, वृद्ध का कीजे संग।
अनेक गुन तिनसे मिलें, सुन साचो परसंग॥
बहुता रूप जो नित करे, सो बद-आचारी जान।
धन जोबन को नष्ट करे, जीव पाये नित हान॥
बूढ़ा बाला जो होये, सबसे रक्खे प्यार।
दुर्जन बचन ना चित धरे, सुख पावे आपार॥
चोरी जूआ कपट छल, चौपट ताश शतरंज।
सिनेमा थेटर ज़ामनी, नित देवे जीव को रंज॥
भंग तम्बाकू मदरा, चण्डू गाँजा जोए।
चरस अफयून रिश्वत तजे, सो ही शूरा होए॥
झूट गवाही और अमानत, जहर सरीखा जान।
मूरख मित्तर बेवा नारी, देवे गुनी को हान॥
बिना कारन और बिना समय, जो दूजे घर जाये।
मिटे लज्या जावे कीरत, दाग़ देही को लाये॥
औगन को नित देत हैं, घर को करें उजाड़।
बुद्धीमान सो आखिये, जो इनका तजे प्यार॥
सच बोले पर-दु:ख हरे, नित साचा करे ब्यौहार।
गुनी पुरष का संग करे, ना बैठे कभूँ बेकार॥

सत करम में धन को अरपे, निश्चय रख भरपूर।
फल बान्छे ना तिसका, सहजे मिले हज़ूर॥
सत लेख सत करम ये, जो गुनी चित्त धार।
अधिक होए तिस कान्ती, शोभा करे संसार॥
परम आनन्द तिसको मिले, जो निर्मल करे विचार।
नित ही पावे जीत को, कभूँ ना होये हार॥
**सत उपदेश सुन गुनी, पावे जीव कल्यान।**
**'मंगत' ये तत्त सार है, मारग मुकत निधान॥811**
अधिक सेवा और प्रेम से, उपजा ये तत्त सार।
सुफल करे तुम जीव को, शरधा पाओ आपार॥
सत उपदेश धारन करो, सत की करो परीत।
सतगुर पर विशवास धर, नित ही पाओ जीत॥
जीव पाये कल्यान को, नित मारग साचा खोज।
पुरषारथ में नित रहो, लखो जनम की मौज॥
सत पुरष की सीख में, धारो निरमल चीत।
जीवत में आनन्द रहे, अन्त चलो जग जीत॥
ये है मारग ज्ञान का, करे सरूप परकाश।
नित ही साधो प्रेम से, निरभय पाओ बास॥
प्रेम प्रीत से जो पढ़े, और सुने मन लाये।
सार अर्थ को बूझिये, सकले भरम जलाये॥
सत मारग की सुध मिले, सत सरूप विशवाश।
सत करम चित्त में रमे, नित आतम परकाश॥
बन्धन से मुक्ता भये, सतनाम चित धार।
पाप करम को छेद के, पावे शबद आधार॥
तृखा मिटे संसार की, ले जीव बिसराम।
सत लेख धारन करे, निश्चे पावे धाम॥
नित ही नित विचारयो, साचा ये सन्देश।
लागे मैल ना भरम की, विनसे सकल कलेश॥

निर्मल उद्दम जगत में, जीव को देवे धीर।
साधन सेवा सुफल हो, अन्त को लागे तीर॥
गवन मिटे संसार की, जीव पाये सत ठौर।
अनहद मंगल में रमे, प्रेम प्रीत चित जोड़॥
दुरलभ आना तिसका, इस जगत में होए।
सतसरूप नारायन को, जो लेवे चित्त परोए॥
**बार बार तत्त बूझिये, बार बार चित्त धार।**
**'मंगत' परसे ब्रह्म को, पाये नाम तत्त सार॥812**
आज्ञा पुरख आगाध से, जो सुना ज्ञान निरधार।
साधो प्रेम परीत से, भवजल उतरो पार॥
शरधा सेवा पूरन हो, अधिक प्रेम चित पाओ।
आशीर्वाद तुमको होवे, जनम सुफल कर जाओ॥
ये तत्त गुरमुख योग है, सकल ज्ञान की सार।
जो सुनया अति प्रेम से, सनमुख बैठ आधार॥
नित ही नित विचारयो, रख पूरा विशवास।
परमगती को पाओगे, सुन गुरमुख सत जिज्ञास॥
खिमा ग़रीबी में रमो, रख सच नाम की ओट।
धरम करम पूरन होवे, पाओ ना जम की चोट॥
एक शबद ही सार है, और सकल आसार।
सिमरो सतगुर जुगत से, जग में लयो जयकार॥
सुफल जनम तुमरा होए, मन तन होए परकास।
सत सुकृत प्रभ आ मिले, निरभय कीजो बास॥
**इस साचे विख्यान को, पढ़े सुने चित लाये।**
**'मंगत' ले निज सार को, जीव परम पद पाये॥813**

## छटा विवेक - पवित्र जीवन

जब घट माहीं उपजया, हंग बुद्ध विकार।
तब ही नर कल्पत किये, अनंक पाप संसार॥

'मैं' 'मैं' करता जग मुआ, 'मैं' ना चाली साथ।
बल जोबन जब हारया, तब साजन भयो अनाथ॥
**'मैं' गंवाए साधजन, मुकत पदारथ पाए।**
**'मंगत' एह बिध साधन करे, जनम ना जूए जाए॥814**
मन में सत्तता राख के, चाले हंस की चाल।
याँ धारन मन सुख भये, दुबधा मिटे कराल॥
सत ही परम तप है, नर सत ही खोजन जाये।
बिन सेवा सतपुरख की, तत्त्व कभूँ नहीं पाये॥
सत को खोजन जावते, सुर नर मुन और देव।
सत के मारग चालयाँ, मिटे तन की खेद॥
सत सत सब कहत हैं, सत का अर्थ है दूर।
कूड़े नहीं मन उलझिये, जे तन होवे चूर॥
**सत्तो सत निबेड़ा, बिरला जन कोऊ धाये।**
**बाझ सत परतीत के, 'मंगत' ठौर ना पाये॥815**

## सील

मन सीतल तन सीतल, सीतल परसे नैन।
वैर विरोध दोनों तजे, ताँ मत आवे चैन॥
सीतल सब स्यों बोलिये, क्या रंक क्या राज।
जाँ परसे सुख उपजिया, मिटे दूई दिल दाग़॥
सीतल हुआ तो क्या हुआ, जे मन भरा ग़रूर।
अपने मतलब कारने, खिन खिन पड़े हज़ूर॥
सीतल ताँ पर आखिये, जाँ नहीं दोख द्वन्द।
आठ पहर ताड़ी लगे, अखण्ड जोत परचण्ड॥
सीतल मत नहीं त्यागिये, जो क्रोध बुझावे आग।
आठ पहर समता रहे, प्रेम हरी रस लाग॥
**जप तप का फल एह नरा, जे सीतल आवे मत।**
**'मंगत' सीतल बोलना, परम गुनों का तप॥816**

## संतोख

और जगत भूखा मरे, लाख करोड़ी मीत।
तिस जन के मन भूख ना, सन्तोख आया जिस चीत॥

अंग कटावे भसम हो, धीर ना त्यागे जाए।
याँ सन्तोख के त्यागने, चित औगन अधिक समाये॥
सन्तोख मुक़ाम नर दूर है, बैठा ऊपर हज़ूर।
मन तन इन्दरे बस करे, चढ़े शान्त खजूर॥
याँ खजूरी जब चढ़ा, पाया हर सों मेल।
आसा माहीं निरासा होवे, ये कठन जगत में खेल॥
**सन्तोख जाँ कर आया, लाया ऋद्ध सिद्ध साथ।**
**'मंगत' परसन कठिन है, परसत पाईये सत नाथ॥817**

## दया

दया जुगत इक धार है, अमरत मारग जान।
अपना सुख सौंपे सभी, तब होवे दयावान॥
मान बड़ाई कारने, अंध लम्बाये हाथ।
याँ सों हर रीझे नहीं, कर कोट यतन मर जात॥
दया ताँ पर आखिये, वारे सकल शरीर।
पर-उपकार के कारने, लागत ना मन पीड़॥
दया धरम अस्तर से, भव मारग ले जीत।
अपनी सम्पत सौंपकर, पावे वस्त पुनीत॥
इस गुन के नर ग्रहन तईं, औगुन कभूँ ना पाए।
मन तन होए निर्मल, शत्रू सीस निवाए॥
**दया धरम सन्तोख मत, वस्त परम गुनवान।**
**'मंगत' सीतल बोलना, मिटे भरम तन मान॥818**
करम करम सब कहत हैं, करमभेद नहीं पाए।
करम काट साखी हुआ, तब करम तत्त्व अर्थाए॥
करम करम स्यों भोग है, करम से बंध ख़ुलास।
दया उपकार और धीरता, हर संगत पाप विनास॥
करम रोग जब लग लगा, तब लग पाए ना चैन।
करम गाँठी तब खुले, जब ध्यावे सुख धैन॥
'मैं' 'मैं' अन्तर काट कर, साचो नाम कमाए।
सहजें करम जलाकर, तन भस्मी ज्ञान रमाए॥

अन्तर बाहर उज्जला, करम अन्धेरा नाश।
नाम रूप को भसम कर, स्वयं कला परकाश॥
जतन जतन से करम गया, पाया अकरम धाम।
सत चित्त आनन्द प्रभ, मिल सहज किया परनाम॥
करम के काटन कारने, हवन तपस्या यग।
बाझ गुरु समरथ के, करम न टूटे तग॥
करम भरम तब गया, जब आठ पहर रंग लाये।
कल्पत कभुँ ना व्यापई, सतनाम जपत सुख पाये॥
एक करम बन्धन करे, इक निहबंधन होए।
आशा कर्मी बन्धन पड़े, निष्कर्मी बन्ध ना कोए॥
सकल करम का करता, जानो एक भगवान।
आप अकर्ता हो रहो, यही सार है ज्ञान॥
करम करे पर आस ना, बन्धन सकल कटाए।
जो कीया सो छिन थीया, बौहड़ ना मूड़ी पाए॥
जब लग मन में मान है, तब करम जलावे जीव।
मान त्याग मन भया सुतन्तर, पायो आतमदेव॥
**करम की फाँस तब जाये, जब हर का गुन गाए।**
**पल छिन बिसरत ना हरी, 'मंगत' लागत पाए॥819**
सकल ज्ञान इक सार है, सो सार तू जान।
तर्क ख़ुदी अन्तर करे, पेखे रस भगवान॥
कायर सूरा दो चले, रण भूमी के माँह।
कायर मुड़ पीछे हुआ, सूरा लड़े मैदाँ॥
लड़ना अपने आप तईं, और लड़न क्या होए।
जाँ लड़ने आपत गई, हरी समागम पाए॥
वेद पढ़ा तो क्या हुआ, जब आपत मन में मान।
मान गया बन्धन गया, टूटा करम निशान॥
बीज बीज कर काटना, काट काट फिर बोए।
बल छल बहुता नर करे, गुर बिन बन्ध ना खोए॥

**सब बन्धन में बन्ध है, करम सेती सरबन्ध।**
**'मंगत' हर रस पाइये, त्यागियो दु:ख द्वन्द॥820**

भरम गया निर्मल हुआ, घट भयो भान उजियार।
बौहड़ ना बन्धन तिस पड़े, अचरज पाई सार॥
करम देह रथवा है, मन बुद्ध लीया साथ।
मारे कभूँ ना मरे, केता बल होए हाथ॥
सहज सहज हरि नाम जप, त्यागो मन की आन।
करम निशाना तोड़ के, शबद हर रस मान॥
करम गया बन्धन गया, भयो साधन की धूड़।
लोहे से कंचन हुआ, घट परगट पाए हज़ूर॥
सहज सहज एको हुआ, मिटया अन्तर का भाओ।
एक कथा मेरे मन बसी, टूटा दिल का दाओ॥
अन्तर बाहर एक हो, सम रस पीवे जोए।
जीवत में ऐसे मरे, फिर ना मरना होए॥
सत वस्त संसार में, केवल हर को जान।
बाझ भजे हरि नाम के, जम ना टूटे तान॥
जब लग मन में करम है, तब लग राग द्वेष।
जिस जन करम को काटया, तिस जन को आदेस॥
**करम भरम दोनों गये, चित चिन्ता होए चूर।**
**'मंगत' बोले एह बिध, इक नाम जपो हज़ूर॥821**

विद्या तो बहुती पढ़ी, पर सूझी ना कुछ सार।
विद्या को कोऊ दोख ना, पढ़नहार गँवार॥
मन परकाशन कारने, पढ़ पढ़ हूआ बौर।
पर अन्धकार बढ़ता गया, सूझा नहीं कोऊ ठौर॥
पढ़ पढ़ मन अन्धा हुआ, चले भान्त बहु चाल।
चाल मेटन के कारने, पढ़न पठावन जाल॥
पढ़ा तो नर क्या पढ़ा, पायो नहीं कुछ मूल।
पढ़ पाठन से क्या होये, जो मन फँसे भूल॥

पढ़न कारने जाँवदा, सीलवन्त गुनवान।
जिस पढ़ने ममता गई, सो पढ़ना परवान॥
पढ़ना अक्षर एक का, और सकल है जाल।
जाँ पढ़ने दुरमत गई, परगट भये दयाल॥
पढ़ना तो परवान है, मानुख जाँ की ज़ात।
पढ़ने ते उजला होए, बिनसे मन कमज़ात॥
बादमुबाद निवारया, तिस पण्डत आदेस।
बौहते जन निस्तर भए, तिस जन के उपदेश॥
जिस मन बाँधी दुरमती, तिस क्या जानी सार।
पढ़ पढ़ वक़्त गँवाया, भरमे अन्ध ग़ुबार॥
पढ़ना तो बहुता पढ़े, क़ाज़ी कुतब क़ुरान।
फिर जब गुढ़ना आया, तब उल्टी खिची कमान॥
पढ़ने से ना रीझता, ख़लक़ का परवरदिगार।
जिस मन तिसको मानया, तिस जन हो छुटकार॥
सत असत को खोजते, पण्डत पढ़े पुरान।
पर सत का निरना ना हुआ, बिन सतगुर विख्यान॥
जिस पढ़ने मन पढ़ जाए, शान्त सुख को पाए।
मनन भाओ व्यापे नहीं, ख़ुद मत सीस कटाए॥
एक वक़्त के पढ़न से, मन नहीं आवे रास।
आठ पहर सत्तता पढ़े, तब होवे परकास॥
सकल जगत बाँधा फिरे, मोह माया के जाल।
क्या पण्डत क्या काज़ी, पढ़ पढ़ भया जंजाल॥
सकल जगत को सार है, पढ़ना अक्षर एक।
जिस पढ़ने से खेवट मिले, ज्ञान गुन विवेक॥
धन दौलत के कारने, पढ़ना तो नहीं मीत।
पढ़ना तब सुफला होवे, जब उजलत भई नीत॥
**मैं तो कुछ सीखा नहीं, पर विद्या की पाई सार।**
**'मंगत' पढ़ना सुगम है, पर गुढ़ना औखी कार॥822**

सो पढ़ना सुख देत है, मन बानी पढ़ ले।
कथनी करनी छाड के, मन भीतर रस ले॥
जिसका मन पण्डत हुआ, टूटा हंग विकार।
समता रस पीवे सोई, लखे कला करतार॥
जो जो वस्तू नर पढ़े, तिस ही का गुन ले।
लोभे चितवे दाम को, पण्डत मान धरे॥
भय भ्रान्त बहु बढ़े, जाँ चितवन है दाम।
साचा भगतजन निश्चल होवे, पूँजी जाँ हरनाम॥
दाम काम सब छाडने, दो दिन के ये मीत।
आद अन्त साखी होए, सो प्रभ आप पुनीत॥
**धरम के साधन कारने, कारज पढ़न का होए।**
**'मंगत' साधन यूँ करे, हिरदे हरी परोए॥823**
वैर बदी तिस निकट ना, जिस ध्याया रछपाल।
स्वास स्वास सिमरन किया, छाड कूड़ जंजाल॥
केवल पढ़ने ना मिला, वेद ग्रन्थ का मूल।
पढ़ सुन जिस मन मानया, परखी गत अनुकूल॥
भोले भाले जगत में, जिन पाया हरनाम।
वेद खड़ा तिस द्वार पर, जाँ बसे निष्काम॥
वेद पढ़न का सार ये, घट घट जान निरंकार।
इस बिध विरती जिस पाई, तिस साधन गुनकार॥
पढ़ने तो दोनों गये, वशिष्ट हरनाकश राये।
एक तो ब्रह्मवेत्ता बने, इक नख स्यों पेट फड़ाये॥
बुद्ध अनुकूल है पढ़ना, जेई बुद्ध तेया जाप।
निर्मल बुद्ध विरले भई, गया दुर्मत का ताप॥
असंख वरख पढ़ता रहे, धारे मन में मान।
अमरत को नित बिख करे, उलटी बुद्ध ये जान॥
वेद कतेब का मूल है, अक्षर एक ओंकार।
शिव सनकादिक ध्याँवदे, उतरस मन मध छार॥

वक़्त जात है बावरे, रस्ता है बहु दूर।
अटपट औखत घाट हैं, चढ़ कर होएं मनूर॥
जेता पढ़ना नर पढ़े, एता मन दुःख पाए।
अनक सिद्धान्त माँह भरमत फिरे, ठौर हाथ ना आए॥
**पढ़ना एको नाम का, और पढ़न दे त्याग।**
**'मंगत' निश्चल चित होवे, प्रेम हरी रस लाग॥824**

ऐसा जन कोई हो मस्ताना.....
मूल द्वार की कुंजी खोले, राखे ग़ैब निशाना।
सुरत निरत दोये पंख हिलाए, उडे हंस अंजाना॥
प्रेम प्रीत चोग नूँ चुगिया, ना अपना भया बेगाना।
मुरशद मेहर सीख को पाया, लखया निगम ठिकाना॥
छिन छिन वाट तक्काँ मैं तिसदी, जिस दे नाल याराना।
लोक लाज को मार कर, पाया अजब घराना॥
**छोड़ दुरंगी भया निशंगी, छिन छिन सार कमाना।**
**'मंगत' बोले संत कोऊ बूझे, पंथ अगम दिव्य ज्ञाना॥825**

ऐसा ज्ञानी, विचरे जग माँह।
राग द्वेष तृष्ना नहीं कोए, हिरस ख़ुदी नहीं ताँह॥
आप मेट भयो निर्द्वन्दी, दिव अच्छर जिन पाया।
छर अछर इच्छया को त्यागा, सतगुर शरनी आया॥
भूत भविषत की आशा त्यागी, जोग जुगत को पाए।
ईड़ा पिंगला सम कर पीवे, अगम कला अर्थाए॥
आवत जावत भरम को त्यागे, चाढ़े सुरत लगाम।
आसन दृढ़ अन्तर कियो, पायो अगम पंथ दा प्याम॥
आसा मनसा सकल त्यागी, चित में रहे उदास।
आठ पहर तृप्ते नहीं मनुवाँ, इक साचे नाम प्यास॥
**गूढ़े नैन नीर बहावे, सुद्ध बुद्ध भई दीवानी।**
**'मंगत' त्रैगुन मेट भयो जन निर्मल, घट सुनी अनहद बानी॥826**

❖चौथा अंग चिरंजीव गोष्ठ सहित पवित्र जीवन समाप्त हुआ❖

समता अपार शक्ति

ब्रह्म सत्यम् सर्वाधार

ओ३म् ब्रह्म सत्यम् निरंकार अजन्मा अद्वैत पुरखा
सर्व व्यापक कल्याण मूरत परमेश्वराय नमस्तं

# पाँचवाँ अंग

# निखेतर पर्बत गोष्ठ

## पहली किरन - भक्ति तत्त प्रकाश

**आद पुरख को बन्दन करूँ, नित नित करूँ आदेस।**
**आनन्द मंगल परगट होवे, बिनसें सकल कलेश॥**

सरब मूल सरब आधारा। बिस्माद ये रचया जगत पसारा॥
प्रथमें मनसा सहज उत्पानी। तीन गुन धार रची चारखानी॥
नाम रूप गुन करम आकारा। भांत भांत का चुना चुनारा॥
सरब के मध रह्यो आप अलेपा। तत्त निरंजन अखंड अलेखा॥
विगन रहित नित रह्या समाई। लखी न जाई तिस की प्रभताई॥
सब कुछ अपनी शकत में धारे। अन्तरगत बसे आप निरधारे॥
जनम मरन वहाँ द्वन्द नहीं काला। नित आनन्द पुरख उजाला॥
सरब का ज्ञाता आप समाई। सरब आधार कला सुखदाई॥
नित परगास अखंड अनादी। जुगा जुगन्तर रहे बिस्मादी॥
अद्भुत माया परगट कीनी। भाँत भाँत रचना रच दीनी॥
वस्तु एक बहुरंग दिखाये। बिस्माद चक्कर में बहुगुनी भरमाये॥
अजर अमर जुगजुग भरपूरा। सकल में परगट नित आप हज़ूरा॥
मिल सतगुर खोजो तत्त ज्ञाना। खेम कुशल पुरख निर्वाना॥
जनम जनम की तपन भई दूरे। मिल सतगुर बिनसें सकल वसूरे॥
नित ही नित ये कथा विचारो। प्रेम पुंज तत्त रूप लखारो॥
दुर्लभ जीवन लख अनाम अनूपा। विगन विनासे पाये अखंड सरूपा॥
अपने मूल की लयो पहचानी। देख माया क्यों भरमें ज्ञानी॥
अमरत नाम अमीरस चाखो। साध-जनाँ का निरना भाखो॥

बिन प्रभ नाम सब मिथ्याकारा। जनमे मरे चौरासी धारा॥
पूरे सतगुर सुन उपदेशा। साचो नाम सत जुगत लयो भेखा॥
अपनी कलह कलेश निवारो। खिमा ग़रीबी अन्तर धारो॥
तजो पाखण्ड सत मारग पेखो। अमरत खानी घट अन्तर देखो॥
नित नित अपनी दुर्मत टारो। सतनाम घट माहीं विचारो॥
यही सार सुनयो गुनी मीता। भगत ज्ञान तत्त निर्मल रीता॥
इस मारग में ये ही सार लखायो। मिल सतसंग सतरूप ध्यायो॥

**सिमरो साचे नाम को, लो सतगुर की ओट।**
**'मंगत' पावें परमगत, बिनसे मन की खोट॥ 827**

साचे नाम की महमा आपार। गावें वेद ग्रन्थ गुरु आचार॥
विषन वरंच जपें महेशा। नारद शारद शुरती शेषा॥
मुनी सनकादिक और सुखदेव ध्याये। दत्तात्रे सतनाम कमाये॥
पीर पैग़म्बर नबी और ग़ौस। सिमरें नाम अबगत अनोख॥
एक नाम चार वेद विस्तारे। कुरान अंजील तुरेत पुकारे॥
सिद्ध तपीशर जती योग आचारी। सरब निरंतर इक नाम निरंकारी॥
सकल जगत का मूल सतनाम। सरब निरंतर करे बिसराम॥
एक नाम भगताँ भरवासा। जपें नाम होये विगन विनासा॥
परम खोज संसार में ये ही। मिल सतगुर होवो नाम सनेही॥
तीन ताप पाँच दोख बिकारो। रंचक नाम करे सब छारो॥
आद व्याध घना कलेशा। सिमरो नाम जाये भरम संदेशा॥
सकल भरमत मन की नासे। सतनाम संग विरत विलासे॥
अन्धकार सकल भ्रम जाये। सेव बन्दगी नाम कमाये॥
अपने मन में नित रीझावे। एक नाम घर उस्तत पावे॥
नित नित हर की सोभा गाओ। परमधाम तत्त रूप ध्याओ॥
जुगत मुकत एके सच नाओं। जो जो सिमरे ताँ बल जाऊँ॥
परम आनन्द घट कला परगासी। अद्भुत बानी सतनाम विलासी॥
डोलन त्याग मन निहचल होई। साची जुगत ले सच नाम परोई॥

नाभ कंवल से ब्रह्मा बोले। एक नाम की रसना तोले॥
नाम ध्यान शिव रमे समाधी। औखद नाम हरे सब व्याधी॥
सो परमेश्वर आनन्द सरूपा। पल पल सिमरो गुनी मुनि भूपा॥
सरब सार इक नाम हज़ूरा। बाद बधे सो जन मूढ़ा॥
जिस जिस सिमरा सो मुकंद अबनाशी। काल करम सब भयो दुःख नासी॥
जनम जनम की मैल उतारे। नाम की रसना घट माहीं विचारे॥
सो ही त्यागी महा बल सूरा। एक नाम जिस जपा हज़ूरा॥
मन की तृखा सकल विनासी। आनन्दरूप कला परगासी॥
जीवत मरे सतगुर की रीता। आलख नाम तब होए परतीता॥
रोम रोम शबद गुंजारे। जो जो सिमरे उतरे पारे॥

**अखंड नाद धुन परगट होई, मनसा भई लवलीन।**
**'मंगत' दुर्मत भरम विनासा, अपने आप लयो चीन॥ 828**

परम नाद सत रूप पहचाने। अगम निगम की रसना जाने॥
नाद सरूप अगम अबनाशी। चिदाकाश सत्ता परकाशी॥
नाद पहचाने गुन तत्त ज्ञान। नाद को पूजे चतुर सुजान॥
नाद की सेवा करे महेशर। नाद ध्याये रिखी रिखीशर॥
अपरम अपार ये नाद अचम्बा। सकल कला बीच पसरयो थम्बा॥
नित परकाश शून्यंगकारा। सरब-अतीत नाद विचारा॥
इत उत वाँ कोई ना भेदा। नाद ध्यावें सिमरत वेदा॥
नाद को खोजे चतुर बुद्ध ज्ञानी। नाद पहचाने मिटे गवन निशानी॥
नाद की सेवा परम सुखरासी। नाद संजुगता तत्त विलासी॥
सकल जीयाँ को नाद आधारा। सकल नाद का रचा पसारा॥
पाँच तत्त गुन तीन प्रगटावे। काल करम का चक्कर चलावे॥
भाँत भाँत थापी ये रचना। सरब भीतर आप अलपना॥
सरब आधार एक नाद अनादी। अगम अगोचर बसे बिस्मादी॥
शुरती शारद एक नाद ध्याये। सिद्ध बुद्ध नाथ तिसका जस गाये॥
पुरख अगोचर नित निराला। सिमरो सिमरो मिटे जम बिकराला॥

नित ही नित ये सिफ़त विचारो। पारब्रह्म मन माहीं चितारो॥
नाद को पूजें सकले पन्थ। उस्तत करें बहु भाँति ग्रन्थ॥
नाद को पूजें जोगी जंगम आद। नाद की महमा जुग जुग बिस्माद॥
नाद को सेवे सन्यास बैरागी। और सेवें उदास अनुरागी॥
जैन बुद्ध आद नाद ध्याए। अपरम आपार कला सुखदाए॥
कर पुरषारथ नित बुद्धवन्ता। सिमरो नाद पुरख भगवन्ता॥
आलख अपार अगोचर बानी। अनहद धुन्न परगट घर जानी॥
पूरे सतगुर मेल मिलाए। गुपत नाद घर परगट पाए॥
रिद्ध सिद्ध सकल नाद विस्तारे। चारखानी को सम कर धारे॥

**खोजो साचे नाद को, जुग जुग कथा आपार।**
**'मंगत' भेदी नाद का, तिस गुर तौं बलिहार॥ 829**

चार अवस्था पाँचों मुद्रा। नाद को खोजे गुनी जोगिन्द्रा॥
इच्छया करम बिख ममता नासी। अगम शबद कला परगासी॥
अष्टाँग योग कर नाद चितारे। हठ योग कर नाद पुकारे॥
सहज भगत सिमरन सतनामा। सकल जुगत कर पूजें धामा॥
जाप अजपा योग निरवानी। अनंक भाँत पूजें नाद ज्ञानी॥
धूनी तापें जल शयन निहारे। उलट कपाली आसन धारे॥
बरत नियम संजम बिध नाना। सकल जतन इक नाद ध्याना॥
संध्या तरपन नमाज़ गुज़ारे। नाद के ताईं जतन बहु धारे॥
यज्ञ दान और साधन सेवा। नाद परतीत का सकलो भेवा॥
कोट मद्धे कोई पुरख अनुरागी। सत नाद में जाँ की सिमरत जागी॥
पूरन सतगुरु मिले नाद आचारी। तब सत नाद की कथा विचारी॥
मन पवन की मथना कीनी। सहज जुगत नाद घर चीनी॥
नित नित नाम बलोवत रतना। श्रद्धा प्रेम दृढ़ राखे जतना॥
पवन सरूप की जुगती बूझी। नित नित मनसा अन्तर लूझी॥
अलप आहार सूक्षम निंद्रा। एकरस पिये गुरमुख जोगिन्द्रा॥
आसा त्याग भावी प्रभ मानी। दीन बन्दगी सेव पहचानी॥

ईड़ा पिंगला सुखमन नाड़ी। समकर सोधे पवन अपारी॥
इरध उरध सुरती बन्ध राखे। परगट नाद अन्तर रस चाखे॥
छिन छिन मन की मैल को धोवे। सहज जुगत बुद्ध नाद को जोवे॥
बोले नाद गगन के तीर। मान सरोवर तट पीवे छीर॥
बिन मध पिये भयो मतवारा। परसे शबद आलख आपारा॥
सुन्न शिखर घर सुरत समाई। साच नाद की गमता पाई॥
पूरन भाग कोई गुरमुख आया। आलख नाद के भेद को पाया॥
पाया भेद भयो उजियारा। साहब दरसया एक ओंकारा॥

**पूरन पुरख मिलाया, भई गवन चित नास।**
**'मंगत' अन्तरगत माहीं, अबगत भयो परगास॥ 830**

साचे नाम की लागी प्रीत। सिमर सिमर लयो भवजल जीत॥
अकथ कथा सुरती लवलीना। अंतरगत में हर रस चीना॥
गुपत रूप परगट दिखलाया। गुर परसादी जीवन पाया॥
मन की दूषन छिन में त्यागे। अमरत नाम में विरती जागे॥
धाराकार मंडप एह साजा। अबगत नाद निरंतर बाजा॥
तिसका रूप रेख नहीं वरना। सकल स्वामी सो कारन करना॥
नित आनन्द अखण्ड अछेदा। मिल सतगुर पाओ तिसका भेदा॥
आद अन्त ना तिसका कोई। जरा मरन सो आवे नाहीं॥
सकल सृष्ट में समकर परगासा। ऊँच नीच नहीं विगन विगासा॥
जल थल महिय्यल पूरन पूर। अनहद नाद बाजन्त तूर॥
कोट पिंड ब्रह्मण्ड को साजे। कोट वरंच को पल माहीं निवाजे॥
कोट विषन महेशर ध्याए। वार पार तिसका ना पाए॥
अपार शक्त अगोचर गामी। नित नित सिमरो पारगरामी॥
जो जन सिमरे मन कलह विनासे। आनन्दसरूप घट माहीं परगासे॥
छिनभंगुर ये भोग विकारा। तृप्त भयो हर नाम विचारा॥
छिन छिन मन का डोलन जाए। सतसरूप में निहचल समाए॥
आसा तृष्ना जाये गुबारा। अखंड नाद घट माहीं विचारा॥

जुग जुग शोभा भई भरपूर। आलख नाम जो सिमरे हज़ूर॥
अनंक ताप से मन भयो मुक्ता। एक नाम जप प्रेम संजुगता॥
नाम बिना बुद्ध नित भरमावे। मिथ्या भोग में नित तिरखावे॥
जतन करे नहीं जाए जीव प्यासा। अन्तकाल लयो जम घर वासा॥
कूड़ भरवास में नित भरमावे। नाम परतीत बिन आवे जावे॥
आस अँदेसा माहीं जनम गंवाये। अद्भुत माया का पार नहीं पाये॥
बिनसनहार जग से करी प्रीती। अन्तकाल सब भई कुरीती॥

**सकली सम्पत छाड के, चले निमाना अन्त।**
**'मंगत' भरमत ना मिटे, बिन सिमरे भगवंत॥ 831**

अमरत हर का नाम विचारो। वेद ग्रन्थ गुनी करें पुकारो॥
नाम सिमर अन्त को पाएँ छूट। बिनस जाए सब काल की लूट॥
सोभा नाम की अपरम आपार। मुकत पदारथ इक नाम विचार॥
सब जग नित भय माहीं रमीना। निर्भय होये जब नाम प्रभ चीना॥
कोट विगन मन ताप निवारे। सहज जुगत हर नाम उचारे॥
स्वास स्वास हर जस जो गाए। निर्भय नाद में जाए समाए॥
अखंड चित अचिंत घर वासा। विमल नाद में लयो निवासा॥
नित ही नित हम करें पुकार। चेत चेत लो सरजनहार॥
परम आनन्द अमरत वरखावे। नाम साहब जो अंतर गावे॥
कामना त्याग मन भयो निष्कामी। अखंड सरूप आये मिला स्वामी॥
नित नित राखो ये ही जतना। सिमरो नाम अमीरस रतना॥
ऊँच नीच सभी गत पावें। प्रेम प्रीत हर नाम ध्यावें॥
सकला मन का संसय जाए। दृढ़ विश्वास जब नाम में पाए॥
सत कीरत हर कथा विचार। मानुष देह का भए उद्धार॥
राजा राना भेख भिखारी। बिन हरि भगत नहीं उतरे पारी॥
सिद्धाँ मुनियाँ ये कियो बखाना। सिमरो ठाकर अखंड निर्वाना॥
बंधी छूटे मुकत घर वासे। अखंड सरूप में लयो निवासे॥
पूर मुशक़्क़त अमरत फल पायो। नाम निरंजन मन चित गायो॥

सकली अविद्या जीव की नासी। विचित्तर लीला घट माहीं परगासी॥
चार पदारथ का मूल पछानो। अमरत औखद हरनाम सो जानो॥
उट्ठत बैठत मन जुगती जोड़ो। काल करम का संशय तोड़ो॥
तिसकी भावी मन तन परोए। द्वन्द विनासे निज रूप समोए॥
सकल मनोरथ होए मन के पूर। प्रेम प्रीत जप नाम हज़ूर॥
अबनाशी नाम अत प्रीत से ध्याई। काल कलपना सब तपन मिटाई॥

**सिमरें साचे नाम को, बिनस जाएँ सब ताप।**
**'मंगत' महमा नाम की, करें वेद ग्रन्थ नित जाप॥ 832**

साचा नाम परम सुखदाई। छूटे बन्धन निज घर पाई॥
सिमरे नाम परसे अबनाशी। आवागवन गई करम की फाँसी॥
नित रखयक सो दीनदयाला। पतितपावन सिरी गोपाला॥
मन में राखे दृढ़ विश्वासा। सत सरूप केवल मन बासा॥
साचा जीवन पावें निज नाद। सकल आधार पुरख बिस्माद॥
गरब गुबार सब भरम विनासे। दीन बन्दगी कर नाम अरदासे॥
नित ही मारग खोज निरवान। आनन्द सरूप परसें भगवान॥
मिथ्या कल्पत जीव नित धारी। तत्त खोजे तब मिटे ख़वारी॥
तीन गुन माया का अजब बिस्तार। भाँत भाँत रचना को धार॥
करम इच्छया में जीव बँधाया। जतन करे नहीं धीरज आया॥
कूड़ देही संग मोह बँधाएँ। पाप पुन्न को धरें चित माएँ॥
करम फल इच्छया नित भरमावे। एक पलक नहीं शान्त को पावे॥
अनंक जून जनमे मरे। बिन तत्त ज्ञान कैसे निस्तरे॥
मानुष देह चतुर बुद्ध धारी। सिमरो साचा नाम मुरारी॥
चार वेद की सार विचार। सिमरन साचा नाम करतार॥
वेद पढ़े नहीं रसना हर जानी। डूबे पंडत थोथे ज्ञानी॥
मन की तृष्ना को नित तृप्तावे। भोगे भोग रोग देही आवे॥
इन्द्री रसना में नित भरमाया। छिनभंगुर संग हेत लगाया॥
राग द्वेष में नित मन काढ़े। करम का बाँधा बहु जून पधारे॥

करम की फाँसी कठन कुठार। चारखानी भरमे गँवार॥
सत सरूप की खोजन खोज। मानुष जनम की तब पावें मौज॥
एको नाम नित ही मन ध्याओ। अखंड जाप अन्तरगत पाओ॥
विसरे करम परकाशे सतनाम। निहचल मनुवाँ घर करे बिसराम॥
उपजे प्रेम हर की करे अरदास। अन्तर बाहर समदृष्ट विलास॥

**अकथ कथा अन्तर कथे, मुख नैन करे बन्ध।**
**'मंगत' हिरदे सिमरनी, करे जोत परचंड॥ 833**

नाम तत्त हिरदे जब आया। अबगत प्रेम साहब का पाया॥
मन ये नटवा नित अधीर। गुरमुख बाँधे संग प्रेम ज़ंजीर॥
साचा प्रेम मन को छेदे। दुर्मत भरम को पल में बेधे॥
मरन काल से जीवन दिखलावे। निर्मल प्रेम जब हर का आवे॥
ज्ञान ध्यान तब पूरन होए। अघट प्रेम चित आए बसोए॥
मिथ्या देह से उपरस होया। एको नाम मन सिमरन जोया॥
गुर परताप गयो देह अभिमान। साचे प्रेम की करी पछान॥
छिन छिन नाम में जीया राखे। मीन नीर को ज्यों चित भाखे॥
स्वाती सीप का ज्यों प्यार। गुरमुख सिमरे एह बिध करतार॥
चन्द चकोर ज्यों अधिक परीत। एह बिध सिमरो मन नाम पुनीत॥
जयों दलिद्री सिमरे नित दाम। ज्यों वैश्या सेवे मन काम॥
जैसे भूखा पदारथ लोचे। हर का भगत हर नाम संकोचे॥
चात्रक ज्यों वरखा जल प्यासा। हर का भगत करे हर नाम की आसा॥
स्वास स्वास में करे चितार। आलख नाम निरंजन निरंकार॥
मर जीवे सतनाम भरवास। चरंजीव पद परसे अबनास॥
खल बुद्धी मिटा अंधकार। अपरम पुरष दर्शन बलिहार॥
सो घड़ी सुकृत नर होई। साचो नाम जब हिये परोई॥
किस मुख से करूँ नाम वडयाई। नाम की क़ीमत कोऊ हरजन पाई॥
हर का भगत नित नाम में जीवे। आसा त्याग परमपद लीवे॥
बल बल जाऊँ तिसके चरने। आलख नाम जो हिरदे सिमरने॥

दरशन भेंट करो नित नीत। आवे विश्वास होवे निर्मल चीत॥
पूरन भाग कोई गुरमुख जागे। आठ पहर हरिचरन लिव लागे॥
आप भए मुक्ता सत शबद पहचानी। अनेक जीवों की ओट बखानी॥
पूरन धरम जप एको साचा नाम। आवागवन विनास हो जीव पाए बिसराम॥

**पूरन पुरख उपदेशया, दीनो साचा नाम।**
**'मंगत' जपे परीत से, निर्मल परसयो धाम॥ 834**

अजर अमर पुरष समराथा। सरब आधार अनाथन के नाथा॥
सकल जगत का जीवन सोई। नित नित रे मन हिये परोई॥
हाड मास का पिंजर उसारा। बोध ज्ञान विवेक विचारा॥
सरब मद्ध रह्यो आप बिसरामी। घट घट बूझे सो अन्तरयामी॥
करो प्रेम रे मन मेरे। हर की भगत में सुख घनेरे॥
इच्छया ग़ुबार अधिक दु:खदाई। नाना रंग एक पलक वटाई॥
बिना प्रभ सिमरे नहीं धीरा। सब ही भरमे गुनी गहीरा॥
आस आस में आवे जावे। करे जतन नहीं सार को पावे॥
सतपुरष का संग विचारो। तिनके बचन में तन मन वारो॥
रख विश्वास पूरन चित माईं। सतसरूप की खोज लगाईं॥
मन अपने की करो सुथराई। अबगत नाम जपो चित लाई॥
भरम विनास होए पद परगासा। परम आनन्द चित करे बिलासा॥
क्या गृहस्ती क्या विरक्ता। नाम जपे होवे जन मुक्ता॥
प्रभ बिना दूजा मिथ्याकारा। आवे जावे नश्वर संसारा॥
साचा उद्दम राख चित धारी। हर की कीरत लयो चित विचारी॥
पलक पलक प्रभ नाम ध्यायो। जम का दर्शन नहीं सुपने आयो॥
अंतरमुख में सुरती गाढ़ो। सार नाम की कला विचारो॥
चंचल मनुवाँ पाए बिसरामा। भयो परगास अन्तर सतनामा॥
पूरन पुरष देख हरखावे। भय त्याग निर्भयपद पावे॥
अमरत नाद घट माहीं परगासे। गुरमुख छिन छिन करे अरदासे॥
सकल सामग्री तिसकी पेखे। एक रूप सब घट में देखे॥

आपा सकली आपदा नासी। दीन भाओ सत तत्त परगासी॥
अनन प्रेम चित नाम विचारे। परगट रूप करे दीदारे॥
निर्मल जुगत मन रह्या समाई। सतगुर मेल परमगत पाई॥

**अजर पुरख परगासया, इस काची देह के माईं।**
**'मंगत' मन परसन्न भया, गई भरम परछाईं॥ 835**

पारब्रह्म को नित मन माहीं चितारो। मानुष देह का सुन साच वापारो॥
परम सम्पत तीन काल सुखरासी। जपो निरंतर अभयपद अबनासी॥
जिस वस्तू को महेश्वर ध्याये। और गुनी ज्ञानी नित गुन गाए॥
अपरम पुरख सो घट रह्या समाई। तिसका सिमरन सब गवन मिटाई॥
चार वेद जिसकी कथा विचारे। पीर पैग़म्बर नबी रसूल चितारे॥
सिद्ध तपीशर और योगी नाथ। तिस पुरख की नित करें अरदास॥
साचा धन जो मुकत फल देवे। रे मन मूढ़ा क्यों नाही सेवे॥
छिनभंगुर जीवन जग पाया। धन जोबन क्यों देख भरमाया॥
एक पलक में सब भसमत होये। पाए पसार अन्धमत रोए॥
कूड़ी घालन अन्त को छोड़े। जीवत में जो जीयाँ रक्त निचोड़े॥
अन्तकाल कोई देवे ना धीरा। भयो निमाना छाड चले शरीरा॥
सत तत्त खोज प्रभ अबनाशी। संत वेद जो कथा परगासी॥
बिन प्रभ सिमरे नहीं पावे बाट। भरमत फिरे चौरासी घाट॥
बिन प्रभ सिमरे मन सोग विचारी। नित नित रोए अन्ध अन्धियारी॥
बिन प्रभ सिमरे मन अन्ध विश्वासी। संशे धार काल की फाँसी॥
बिन प्रभ सिमरे जन पशु समाना। भोग रोग में औध विहाना॥
मेघ बिना ज्यों दुर्भिख व्यापे। भगत बिना इयों जीव संतापे॥
धर अभिमान नित जाये प्यासा। नीवत थाहीं नीर निवासा॥
कपट छल चित धरा घनेर। जन्मे मरे चौरासी फेर॥
आसा तृष्ना में बहु दुःख पाए। चले निरासा अन्त को पछताए॥
राजे राने मीर ग़ुलाम। चलो चली का देवे काल पैग़ाम॥
महल अटारी राज सिंघासन। निकले प्रान कियो भूम निवासन॥

अन्धमत त्याग सतनाम विचार। मानुष जन्म की सुन सुकृत कार॥
तृपत समावें प्रभ नाम गुन गाए। मिल सतसंग लयो सार कमाए॥

**बिनसनहारे जगत में, उठ के लाभ विचार।**
**'मंगत' सेवा साध की, और दुर्लभ नाम प्यार॥ 836**

जब से जीव गरभ में आया। मरनकाल तक रहे भरमाया॥
सुख की इच्छया मन में राखी। जतन करे बहुरँग भाँती॥
बाल जोबन जरा विताई। रंचक सुख की सार नहीं पाई॥
बिपत बिपत में जनम गँवाए। अगन तृष्ना नित जलाए॥
लाख करोड़ी सम्पत धारी। सो धनी घट अगन आपारी॥
मिटे ना तृष्ना शान्त ना भाखे। भरम बीच नहीं सत सुख चाखे॥
दुःखी दलिद्री नित दुःख माईं। चिन्ता अधिक मन लागत ताईं॥
राजा बैठ सिंघासन दुःख पावे। अधिक तृष्ना जीया जलावे॥
पंडत वेद पुराना गाई। तो भी मन में शान्त ना आई॥
बहु परिवार परापत होए। तीन काल सुख मिले ना कोए॥
जितनी सम्पत एता दुःख पावे। काल का बाँधा बहु जून भरमावे॥
अजब लीला काल रचाई। चार खानी में त्रास मचाई॥
भय में जन्में भय में जीवे। बड़ी सयानफ़ नहीं भय हरीवे॥
जाँ से पूछें सुख की मीता। दुःख बखाने गुनी गुनीता॥
अधिक कलेश में विचरे संसार। जल जल पड़े वाँग अंगार॥
तीन ताप की अगनी लागी। नित ही तपे जीव मन्धभागी॥
काम क्रोध का कठना जाल। मोहे चौरासी जन्त बेहाल॥
जल जल पड़े भोग की अगनी। ठगयो जगत हर माया ठगनी॥
घना कलेश व्यापे दिन राती। झूठ परतीत करे जीवन घाती॥
दुस्तर जाल ये पसरा पासार। बिना विचार नहीं उतरे पार॥
सतगुर मिले तत्त ज्ञान विवेकी। तिसकी संगत में सार सुख देखी॥
झूट माया का मोह मिटावे। सतसरूप का निश्चय लावे॥
सत विचार करे भरम का नास। मोह माया की मिटे प्यास॥

एक परमेश्वर की परसे ओट। गरब ग़ुबार हरे सब खोट॥

**मन की मैल उतारिये, नित सोधे तत्त ज्ञान।**
**'मंगत' चूके भव का संसय, जीव पाए कल्यान॥ 837**

हर की भगत सुख सार निधाना। भगत भाए पावें कल्याना॥
नित आनन्द अजर अबनासी। तीन काल सो आनन्द सुखरासी॥
जो तिस ध्याए शान्त को पावे। तिसकी सेवा अखंड सुख दिखलावे॥
साची भगत हिये परोए। खेम कुशल ताँ परगट होए॥
तपन सकल होई जीव की नासा। सच नाम जब मन कियो निवासा॥
मानुष जनम की सुन भलीकार। निश्चे आवे एक निरंकार॥
झूट रचना देख मन को ठाके। भाओ भगत हर कीरत चाखे॥
सतसरूप नित चित ध्यावे। अनंक भाँत मन को समझावे॥
झूट देही का मोह त्यागे। परम शान्त परसे वडभागे॥
पर सुख नित ही कार करीजे। सेव टहल से हर दर सीजे॥
खिमा ग़रीबी मन माहीं विचारे। कारन कर्ता जपे रूप अपारे॥
तिसकी आज्ञा मन तन कमाए। आप त्याग परमसुख पाए॥
एक नाम की रसना मन लागे। आसा त्याग परम तत्त जागे॥
जीवन रूप सुख परसा स्वामी। अगम अगोचर आलख अगामी॥
परम तत्त जोत घट परगट होई। अपरम सुख लखे जन कोई॥
सकली वासना से भयो जन मुक्ता। निर्भय नाद निरंतर जुगता॥
मनमुखता सकली बिनसानी। आनन्द सरूप की सुनी कहानी॥
अनहद नाद प्रेम का सागर। गुर परताप घट भयो उजागर॥
छिन छिन तिसमें मनसा लागी। हरे विकार मन दुर्मत भागी॥
वस्त अनूप पर निश्चय आया। भय त्याग अमरपद पाया॥
मन में अधिक भई खुशहाली। एक नाम संग प्रीत सँभाली॥
प्रेम भगत प्रभ की चित आई। तीन लोक की मिली प्रभताई॥
सत संतोख का चोला धारी। शरधा प्रेम मिल नाम उचारी॥
साध-जनाँ की सुन सत बानी। अखंड सुखनाम की करी पहचानी॥

**मन की मनसा पूरन भई, सत तत्त कियो पछान।**
**'मंगत' किरपा साध से, जीव भया निर्वान॥ 838**

मुकत पदारथ महासुख मीता। होवे परापत सतगुर की रीता॥
मनमुखता मन की निवारे। गुरमुख जीवन चोला धारे॥
आस अंदेसा विखाद निवारे। प्रभ की आज्ञा नित नित विचारे॥
अपनी हिकमत दलील त्यागे। एक नाम में नित जीवे वडभागे॥
सकले करम प्रभ इच्छया में छोड़े। गुरमुख जुगती सतनाम चित जोड़े॥
स्वास स्वास प्रभ नाम कमावे। मन की भरमत सकल हरावे॥
छिन छिन मन की दुबधा त्यागे। एक नाम में धरे दृढ़ अनुरागे॥
प्रान उलट उपान को पीवे। उपान उलट प्रान में लीवे॥
करे अश्वमेध दिन और राती। ब्रह्ममुख आहूती मन माहीं समाती॥
आदी यज्ञ नाद निर्वाना। उर्ध कँवल घट करी पहचाना॥
नाभ कँवल में पवन नित गरजे। मुकन्दसरूप परगट सरजे॥
विरत रहित मन इकागर होई। सूक्ष्म धुन्न सँग सुरत परोई॥
जाप अजपा घट अन्तर चीना। अद्भुत शबद में भयो लवलीना॥
शबद सुरत का एका कीजे। गुर परसाद मुकतरस पीजे॥
तत्त अनूप सरब अतीता। भयो परगास अखण्ड सुखरीता॥
नित नित सुरती शबद बिरोले। अमरत नाम मन अन्तर तोले॥
मुकतसरूप परसे निज धामा। आठ पहर चित भयो निष्कामा॥
काया शुद्ध शबद अबनाशी। सूक्षम धुन्न घट माहीं परगासी॥
तीन भवन में नाद उठ बोले। धन्न योगी तत्त जुगत को तोले॥
अखंड सुरत शबद रस पीवे। काल त्याग परम सुख लीवे॥
सहँस हज़ार दल कँवल परगासा। अखंड नाद संग सुरत बिलासा॥
करम रहत मन भयो परिपूरा। बिमल शबद पाए रूप हज़ूरा॥
शिव कहे सुन गौराँ विचार। अमरकथा घट नाद आपार॥
बन्धन रहित मन भयो सुखरासी। केवल शबद संग करे बिलासी॥

**जाँ से उतपत होया, ताईं भया लवलीन।**
**'मंगत' मारग मुकत का, कोई गुरमुख लेवे चीन॥ 839**

गुपत सरूप सो सब में व्यापे। परगट होवे सतगुर परतापे॥
छीर माहीं ज्यों घिरत समाई। बिना मिथन के हाथ ना आई॥
फूल माहीं ज्यों सुगन्धी बासा। मेंहदी में ज्यों रंग निवासा॥
काठ माहीं ज्यों अगन रहाई। एह बिध ठाकर घट रह्यो समाई॥
सतपुरषारथ सत जुगती बूझे। सत साधन ले सो घर सूझे॥
मारग भेदी सतगुर मिलावे। सरब सार की जुगत लखावे॥
दृढ़ अनुराग सत मारग सोधे। मुकत सरूप तब ठाकर बोधे॥
मज़हब मज़ाहब का बाद निवारे। सार भगत मन माहीं चितारे॥
सरब जीयाँ में इक ठाकर पेखे। ऊँच नीच नहीं पड़े भुलेखे॥
साची करनी ऊँच गत देवे। कथ कथ मरे नहीं सार को लेवे॥
अपने मन की कल्पना निवारे। साचा मारग मिल गुर विचारे॥
लोभ मोह मन तजे अहंकारा। सत संतोख निर्मान मन धारा॥
अपने मरन की दिसा विचारे। कौन वस्तू होवे अंत सुखारे॥
एक विश्वास गुर बचने राखे। साचा उद्दम नित चित भाखे॥
सकली बिपता चित की खोवे। एक नाम प्रभ अन्तर जोवे॥
पर उपकार नित साधन कीजे। पर दुःख हरना कार करीजे॥
सरब जीयाँ पर मेहर चित राखे। क़हर त्याग साहब दर लाखे॥
सब से राखे अधिक प्यार। तजे बखीली पावे सुख सार॥
दीन बन्दगी नित चित परोए। धार ग़रीबी दर साहब खलोए॥
होए निमाना आस जग त्याग। तिसको लागा रंग साचा वडभाग॥
उट्ठत बैठत एह विरध कमाए। धार भरोसा इक नाम ख़ुदाए॥
ख़ालक राज़क़ सब जीयाँ सँभाले। तिसे विसार मूरख देह गाले॥
मानुष देही की सुन सच कार। सिमरो साचा नाम करतार॥
लख आफ़ताब महताब चमकाए। सच बन्दगी कियो मेल ख़ुदाए॥

**काचे इस वजूद में, देखें लावजूद।**
**'मंगत' हक़ परतीत रख, सब दर साहब मौजूद॥ 840**

ज्ञान समान नहीं अमरत फल मीता। तपत बुझावे मन करे पुनीता॥

मन की सकल मैल को धोवे। भय भरम दुबधा को खोवे॥
निहथावाँ मन को थाऊँ तत्त ज्ञान। सतगुर मिले तब करी पछान॥
आतम तत्त का जो ही विचार। सो ही ज्ञान जग जीवन सार॥
नित नित आतम उन्नती करे। सार ज्ञान ले जन निस्तरे॥
ज्ञान मूल रूप भगवन्ता। चार वेद है ज्ञान की संथा॥
ज्ञान ही जीवन साध का होई। निर्भय सुरत नित नित परोई॥
ज्ञान आधार सब संसार जीवे। ज्ञान सरूप नित गुरमुख पीवे॥
ज्ञान सोहीं जो मन तृखा विनासे। सार सरूप में लयो निवासे॥
ज्ञान समान ना भोजन कोए। जाँ को खाए जीया तृपत समोए॥
ज्ञान समान नहीं तेज बलकार। सकल जगत करे जय जयकार॥
ज्ञान समान नहीं नर परकाश। मलिन भाओ जो मन का करे नास॥
ज्ञान समान नहीं वस्तर कोए। आपार लज्जा जो मन माहीं परोए॥
अपरम भूखन ज्ञान का जान। जो जन पहने होए रूप भगवान॥
परम शस्तर ये ज्ञान पछान। काम क्रोध करे शत्रू की हान॥
तत्त ज्ञान ये अखण्ड खज़ाना। चरन को चूमे राजा राना॥
आनन्द जीवन ज्ञान से होए। सकल त्रास जीव की खोए॥
मानुष देह अत तेज को धारे। जो तत्त ज्ञान अन्तर संचारे॥
तीन लोक में उपमा पावे। रंचक ज्ञान जो हिरदे आवे॥
पाप पुन्न से होये ख़ुलासी। सार ज्ञान जब घट परगासी॥
तीरथ बरत यज्ञ दान की किरया। सब से ऊँच ज्ञान पसरया॥
ज्ञान के कारन सब साधन जुगती। मिले ज्ञान तब पावे मुक्ती॥
सकले करम को भसमत करे। परगट ज्ञान से जीव निस्तरे॥
ज्ञान को बूझे मुनी मुनीशा। ज्ञान पाए परसे जगदीशा॥

**ज्ञान सरूप खोजन करो, मिल सतगुर उपदेश।**
**'मंगत' आतम रस रसे, मिट जाएँ सकल कलेश॥ 841**

द्वन्द विकार जो जीव अन्धकारा। परसे ज्ञान होवे छुटकारा॥
मिथ्या वासना जो नित तपावे। ज्ञान परस के शान्त समावे॥

जनम मरन और जम जुरमाना। ज्ञान परापत होए तब दुःख हाना॥
मोर तोर की जो फाँसी गलडारी। मिले ज्ञान तब पाए छुटकारी॥
मन के मनोरथ और बहु भाँत तरंगा। सकल विनासे पाए ज्ञान के संगा॥
शोक मोह लोभ और हान। ज्ञान के भोग से पाए कल्यान॥
राग द्वेष जो मन का सुभाओ। ज्ञान परीखत से सब मिट जाओ॥
चंचल बिरती जो मन नित धारे। होवे निरोध मिल ज्ञान अपारे॥
सर्वज्ञ रूप एक दिखावे। ऐसे गम्भीर जीवन को पावे॥
आद अन्त जिसका ना होई। अनाद सुख मिल सुरत भगोई॥
शस्तर काटे ना अगन जलावे। ना पवन सुखावे ना जल भीजावे॥
न गरभ को धारे ना मरन अंदेसा। पेख ज्ञान सो निर्मल ईशा॥
ऊँच नीच जो भेद नहीं राखे। राओ रंक इक दृष्ट कर भाखे॥
सरब आधार पर रहे अलेपा। खोज ज्ञान नर होएँ पुनीता॥
शत्रु मित्तर जिसका ना कोई। ना काहू संग आवे ना निहसंग होई॥
सब रसों को जो रस देवे। नित उपरस आप अभेवे॥
सकले करम जाँ से परगट होए। रहे निहकरम आप बसोए॥
तीन गुन माया का जो आधार। अपने आप बसे निरधार॥
सकल जीयाँ की जो अन्तरगत जाने। जिसका भेद नहीं कोई पछाने॥
सकली बानी जाँ से परगासे। निर्वान रूप में आप निवासे॥
जिसके आनंद से सब आनंद भोगे। भोग रहत आप बसे अरोगे॥
काल की किरया जिस आधार चलाई। आप अकाल बसे सुखदाई॥
सब कुछ जिससे जीवन पावे। आप अलेप जो नित रहावे॥
मिल सतगुर पाओ तत्त विचार। सो ही ज्ञान सब जगत आधार॥

**ज्ञान की महमा आपार है, कथ कथ थाके वेद।**
**'मंगत' रंचक सार से, मिट गये जीव के खेद॥ 842**

करम की फाँसी में जीव भरमावे। एक पलक की शान्त नहीं आवे॥
करनी करनी आस में, अमोलक जनम गँवाये।
भरम सँदेसा ना मिटे, लाखाँ करे उपाय॥
फल की इच्छया राख मन, करम करे दिन रात।
निसदिन बन्धन चौगुना, कह बिध छूटन पात॥

करम सकाम नित, जीव दुःखदाई।
आसा फल की राख के, आठ पहर भरमाई॥
एक घड़ी ना धीरज, दुर्जन मन को आए।
कलप कलपना माहीं, औध काल सब जाए॥
वस्त परापत होए, तो भी अधिक प्यास।
जब ही होवे वियोग नर, तब ही अधिक तरास॥
ग्रहन त्याग की जुगत में, नित जीया ग़लतान।
ऊँच नीच करनी करे, फिरे चौरासी खान॥

पाप पुन्न ये करम सरूप। तिसमें विचरें चराचर भूत॥
जैसी करनी ऐसा फल पावे। साच न्याये एह प्रभ वरतावे॥
करनी का बाँधा ऊँच नीच गति पावे। नरक स्वर्ग का रूप दिखलावे॥
चौधाँ भवन के सकले जन्त। बाँधे करम नित ही भरमन्त॥
इच्छया करम ये रोग आपार। अस्थावर जंगम नित भरमें सार॥
आसुर देव क्या मानुष जूनी। पशू पिशाच जड़ आद भगूनी॥
करम की वासना में सभी भरमाये। करनी बाँधा नित आवे जाये॥
अद्भुत चक्कर माया बिस्तारा। बिन तत्त ज्ञान नहीं होए निस्तारा॥
इच्छया भरम में सब ही दुःख पावें। भाँत भाँत का नाच नचावें॥
ये ही संसा रूप संसार। रचना रची साचे करतार॥
गुरमुख मनमुख मारग दोई। विरला गुनी तत्त सार परोई॥
मनमुख भरमना जड़ता त्यागे। गुरमुख जीवन में हरजन लागे॥
कारन कर्ता जो मूल स्वामी। रखे विश्वास मिल गुर अन्तरयामी॥
आवन जावन सब रचना को देखे। इस्थिर रूप ठाकर को पेखे॥
आद अन्त सब जगत का होई। छिनभंगुर सब रचना लखोई॥
कूड़ चक्कर देख मन लेवे उदासी। उपरस होवे कटे करम की फाँसी॥
गुर उपदेश मिल हर भगत कमावे। निहकरम सरूप घट अन्तर पावे॥

**अखण्ड आनन्द अडोल प्रभ, काल करम से न्यार।**
**'मंगत' पावे छूट तब, जब प्रभ भगत विचार॥ 843**

हँग बुद्ध मूल जड़ता खोवे। साचा ठाकर नित हिरदे जोवे॥
दीन ग़रीबी मन माहीं विचारे। सब कुछ प्रभता इक साहब लखारे॥
अखंड विश्वास रखे इक अबनाशी। साचा नाम जप होवे ख़ुलासी॥
एक नाम में मनसा नित राखे। उट्ठत बैठत हर कीरत भाखे॥

नित नित कर्ता रूप प्रभ सेवे। गुर की संगत मिल परमगत देवे॥
करम फल प्रभ आज्ञा में छोड़े। आसा त्याग करम तग तोड़े॥
सब कुछ होना प्रभ आज्ञा में देखे। सुख दुःख रूप को सम कर पेखे॥
मन अपने की भरमत करे दूरे। साधजनाँ की हो चरनी धूड़े॥
मन की इच्छया पर लात चलावे। हुकम रुबानी नित नित मनावे॥
सकल विखाद मन का छीजे। निहकर्म रूप आतम रस पीजे॥
गुर परताप उरध कँवल परगासा। मुकतसरूप में लयो निवासा॥
सकल भावना प्रेम अगन जलाये। पाये विश्वास हर चरन समाये॥
जड़ परकिरती की भरमना नास्यो। सतसरूप आतम परगास्यो॥
नित नित मन की खाल उतारे। मर के जीवे करे साच ब्यौहारे॥
एक अँदेसा रखे इक ओट। जापे नाम बिनसे सब खोट॥
जतन जतन कर सोधे तत्त सार। छूटे भरमन मिले मुकत आपार॥
परमधाम रूप सो अन्तरयामी। तिसे पछाने होवे मुकत का गामी॥
सो ही पंडत गुनी गहीरा। एक प्रीत जपे नाम प्रभ हीरा॥
इच्छया विनासे भरम की खानी। अबगत जोत लखे निरवानी॥
चिन्ता जाये मन होवे निहसँगी। एक प्रीत हरचरन मन रंगी॥
सत परतीत से बन्धन नासे। निराधार कला परगासे॥
मानुष जन्म का लाभ ये पाए। साची सिमरत प्रभ की चित आए॥
आसा तृष्ना भव दुस्तर आपार। घाले नाम उद्धरे जन पार॥
धन्न वंजारा जो ये वनज कमावे। साची रास हर भगत चितावे॥

**छिनभंगुर संसार में आए, सभी जीव दुःख पात।**
**'मंगत' तब परसन्न हो, जब औखद नाम कमात॥ 844**

प्रभ की महमा जो जन गाए। ताँ के निकट काल नहीं आए॥
जीवन लाभ ये ही घनेरा। दुःख भंजन प्रभ हिरदे बसेरा॥
सकली ख़ुदिया जीव की जाए। आनन्दघन रूप जो मन में गाए॥
उस्तत कही ना वरनी आवे। सरब आधार आप समावे॥
द्वैत भरम ज्यों नलनी सूआ। सरब एक नहीं होवे दूआ॥

अन्तरगत जब लेख लखाया। एक सरूप का निरनय पाया॥
सब कुछ तिसमें विचरत रह्या। ज्यों जल तरंग में भेद ना थीया॥
रवी किरन में ज्यों भेद ना कोए। सकल सृष्ट में इक साजन सोए॥
बीज से ज्यों बरिच्छ अंगूरे। पात डाल फल रह्यो भरपूरे॥
भेद भाओ नहीं कछू इक मीता। एक बीज सरब रमीता॥
जल में कुम्भ एक नहीं दोए। सरब सृष्ट इक शकत समोए॥
पारब्रह्म से जीव प्रगटाया। जीव दृश्य ये सकली माया॥
सार को बूझ मन लीन समाये। निज सरूप की रसना गाए॥
इन्द्री विखे में जीव भरमाया। नाना भाँत रस में लिपटाया॥
शबद स्पर्श रूप रस गन्धा। नित ही जीव तिस माहीं फन्दा॥
भोग भोग नहीं धीरज आए। छिन छिन में बहुरंग विटाए॥
बाहर के पट जो नर बाँधे। अन्तर पट खोल शबद रस साँधे॥
ऊँची दृष्ट उलट कर धारे। अजर पुरष का करे दीदारे॥
कर दीदार मन निहचल समावे। एक मूल में सब दरसावे॥
जनम जनम का संशय चूके। उदर प्याला उलट रस लूटे॥
आसा परखे मनसा परखे। ब्रह्म अगन अन्तर में नरखे॥
बूँद बूँद रस चोवे भारी। पीवे गुरमुख सत जुगत आचारी॥
गगन प्याला में दीपक परगासे। बिन बाती बिन तेल उलहासे॥

**उलट सुरती अन्तर करे, लखे शबद की साट।**
**'मंगत' मन इस्थिर भयो, कर दर्शन जोत ललाट॥ 845**

निरगुन सरगुन करो विचारा। पावे भेद नर उतरे पारा॥
एक शकत दो रूप दिखावे। सकल माया का चक्कर चलावे॥
निरगुन से सरगुन परकाशे। निरगुन आधार सरगुन बिलासे॥
सरगुन देह में करे निरगुन पछान। पूजयो निरगुन भेद सरगुन जान॥
निरगुन आद सरगुन विस्तारे। रच परपंच बहु खेल खिलारे॥
निरगुन सरगुन दृष्टी का भेदा। निरगुन बूझे जाए सरगुन छेदा॥
निरगुन जीवन सरगुन काया। दोनों मेल से ये चक्कर चलाया॥

निरगुन पछाने पाये सरगुन सार। मिथ्या कलपना जाए अन्धकार॥
निरगुन सरगुन दोऊ मिलाई। तत्त स्वरूप की तब सिमरत पाईं॥
जब लग द्वैत भेद चित रह्या। तब तक पाए ना पुरख कन्हैया॥
निरगुन सरगुन दोनों पनहारी। एक पिवावे एक पीवनहारी॥
अबगत रूप से दो कला परगासे। एक कारन एक कारज हो वासे॥
नहीं निरगुन नहीं सरगुन का भेदा। जाँ बसे अगोचर पुरष अछेदा॥
बादमुबाद छाड मुनि ज्ञानी। आद पुरष की नित खोज पछानी॥
निरगुन सरगुन दोहू मिलाई। तब तत्त ज्ञान की रसना पाई॥
पुरख अनादी नित अलेपा। द्वैत दृष्ट वहाँ नहीं विखेपा॥
सहज ध्यान जब मन समाए। विचित्तर लीला सब एक दिखाए॥
मूल खोज छाड विखादा। बिना पछाने सब परमादा॥
एक ठाकर की उस्तत पाओ। निरगुन सरगुन भेद लखाओ॥
पढ़ के वेद पंडत मत मूआ। अन्तर कपट राखे नित दूआ॥
मुख की कथनी से सरे ना काजा। कथ कथ मरे बहु भाँत समाजा॥
मन बचन करम जो जन निध्यासे। सकल वेद की सार तब भासे॥
जीवन जीवे सत धरम बसावे। सर्वज्ञ रूप की सेव कमावे॥
कीटी कुंचर आद सुमेरा। सब में देख इक बालम केरा॥

**अन्तर बाहर दरसियो, परम पुरष निर्वान।**
**'मंगत' सकले भेद की, सो ही सार निधान॥ 846**

मन्दर मस्जिद गिरजे जावे। पूजे देवल सार नहीं पावे॥
मढ़ी मसान गोर को पूजे। साचा धरम कभू नहीं सूझे॥
काशी काबे जाये यरोशलम। दर्शन पावे ना असली सनम॥
नाना पंथ मज़हब को वाचे। पाखंड पूजे ना होवे साचे॥
ग्रन्थ वेद अंजील क़ुराना। पढ़ पढ़ थाके गुनी बिध नाना॥
यज्ञ ख़रायत बहु करे आचारा। बिनसे ना इस मन का अन्धकारा॥
अन्दर अपने धरे बखीली। मिले ना कभूँ पुरख अनीली॥
बादमुबाद में सब जीव भरमाए। फाँसी मज़हब की धारी अधिकाए॥

मन्दर साचा एह देह पछानो। जाँ में परकाशे अबनाशी भानो॥
इस मन्दर की जो खोजन खोजे। होवे मसीह तत्त अन्तर बूझे॥
मुरशिद साचा नित मिल गुनियाँ। सबक पढ़ावे पुरख निरगुनियाँ॥
इस पिंजर की नित खबर कर मीता। क्यों मन्दिर मस्जिद में भरमे अनीता॥
जाँ में वस्तु रही परकासे। ताँही परस होवें सुख वासे॥
सकला पाखंड तज पुरख बैरागी। एक साहब की चित लयो अनुरागी॥
पढ़ो हदीस इक अक्खर अलहामी। छोड़ो सिफ़त और सकल कलामी॥
पण्डत क़ाज़ी सुनो पोप ज्ञानी। सत को खोजो तजो सिफ़त शैतानी॥
सत परगास जो घर रह्या समाई। तिसको खोजे सो गुनी अधिकाई॥
बाहर की सब दुबधा छोड़े। एक नाम चित चरनी जोड़े॥
ख़ुदी कदूरत को अन्तर से काढे। दीन आजज़ी को मन में साधे॥
नित नित दरगे शुक्र गुज़ारो। मालिक पावें तब परवरदिगारो॥
करे दीदार गई नफ़स शैतानी। सब में देखा इक नूर रूबानी॥
क्या मसीह क्या मोहम्मद आदी। क्या गौतम क्या राम अगाधी॥
क्या पीर क्या वली और ग़ौस। क्या तपीशर क्या ऋखीशर क्या साधू अनूप॥
सबको मंगल इस देह में होया। उलट विचार नाम प्रभ जोया॥

**पांच भूत की ये कला बनाई, बीच आप कियो परकाश।**
**'मंगत' खोजे देह दीप जो, पावे प्रभ अबनाश॥847**

सो ही सतगुर सो ही नबी रसूल। देह को खोजे तत्त ज्ञान अनुकूल॥
चौदाँ लोक इस देह में पसरियो। आद पुरख करे सरब सरजियो॥
गुरमुख खोजे अगम की रसना। निर्मल ठाकर मिले अलपना॥
एह मन निहचल घर में होया। मिल परकाश भरम सब खोया॥
आलख नाम गुरदेव लखाए। प्रेम प्रीत से सेव कमाए॥
ब्रह्म रूपनी ये पवन की धारा। नित नित तिसका करे संभारा॥
मन पवन इक डोरी राखे। अद्भुत परगास अन्तर भाखे॥
शबद रूप परमेश्वर पाए। हरजन नित तिस चरन समाए॥
सुन्न देश से शबद वोह आया। बन्ध ख़ुलासी जीव कराया॥

ये मन पीवे शबद आनादी। उनमुन लागी सहज समाधी॥
आवे ना जावे इक रंग समावे। परम जोत अन्तर दरसावे॥
शबद की खोजन करे कल्याना। नित आनन्द सो शबद निरवाना॥
शबद की रसना जो जन पाए। तिस के चरन नित रह्यो समाए॥
सब जग में इक शबद समाया। चराचर भूत शबद की माया॥
शबद इल्हाम बानी आकाश। नित रमे आप अन्तर निर्वास॥
तीन अवस्था भरम की खानी। चौथे बूझे सो शबद ज्ञानी॥
अचिन्त पुरष अनहद तूर। परसे ज्ञान होए भरम काफूर॥
सदा अकारन और निरकाया। सरब के भीतर सो रहे समाया॥
सो ही जोत सो ही नाद सरूपा। आलख शबद लखे जोगिन्दर भूपा॥
शबद की रसना नित घर समाई। पूरन भाग कोई जुगत लखाई॥
आचार ब्यौहार करे संग जुगती। शबद कमावे अखण्ड रस मुकती॥
मन अपने को पवन संग जोड़े। आलख नाम की सार निचोड़े॥
अखंड तपस्या मिटे हंकार। साचे शबद का सुने गुंजार॥
भंवर गुफ़ा में शबद किलकारे। सहज ध्यान में होवे जन पारे॥

**आद जुगादी साच है, नित नित रमे सो साच।**
**'मंगत' खोजे घट माहीं, मिले शबद निर्वाच॥848**

ऐसे सतगुर तों क़ुरबाने। जाँ से मिले शबद निर्वाने॥
हाट बाट में खोजन कीना। ज्ञानी गुरु ना दृष्टी चीना॥
क्या सन्यासी क्या योग बैरागी। अनंक जमात साध अनुरागी॥
केवल देह के भेख में रीझे। सार सरूप ना कोऊ जन सीजे॥
कूड़ कूड़ कलयुग वरताया। साध सन्त नेह धर्म दिखाया॥
कथनी ज्ञान बहु करे बखान। अन्तर व्यापे लोभ स्वान॥
तीरथ विचरे माँग के खाना। कलजुगी सन्त ने मारग जाना॥
कई नाँगे कई वस्तर धारी। कई वाचक कई मौन विचारी॥
कई धूनी तापें जल शयन निहारें। कई कथा अद्वैत ब्रह्म पुकारें॥
नाचें कूदें घंटा शंख बजावें। बिना ज्ञान अन्धमत दुःख पावें॥

साधजनाँ की ऐसी खोटी रहनी। गुनी गृहस्थी की क्या मुख कहनी॥
सब ही धरम सरूप विसराये। क्या ब्रह्मन क्या क्षत्री युधराये॥
वैश शूद्र सच नियम त्यागे। लागी अगन जलें सब मन्दभागे॥
हलाहोल सब जग में वरताया। अधिक संकट में जग भरमाया॥
सकली रहनी भई जीव की नासा। कथनी धार लेवें जम घर बासा॥
जां में देखाँ बिस्माद दिखाए। अन्तर और बाहरों और वरताए॥
कपट फ़रेब सब जीयाँ में आया। तेज बल सभी योग बिनसाया॥
कथनी करें सन्धया तर्पन बिध नाना। रंचक रहनी नहीं चित समाना॥
भयो पाखंड जग में अधिकाई। सत धरम की निष्टा बिनसाई॥
छल में फिरें हो गुर उपदेशें। छल में सिखया सिख परवेशें॥
खाना लाना भोग विकारा। गुरु शिष डूबे विखे की धारा॥
सुनी सुनाई बहु बात बतावें। मुख से रूप ब्रह्म दिखलावें॥
अन्तर कपट भाओ चित धारी। जमराज नित करे ख़वारी॥
अल्प आयु देह रोग बहु आये। अनंक भय में जीया भरमाए॥

**सतसरूप का निश्चे विनासिया, भयो अधर्म परचार।**
**'मंगत' पूजा माया की, करे सकल संसार॥849**

सतसरूप का निश्चय सब टूटा। बाद मुबाद का कुम्भ घर फूटा॥
गरब ग़ुमान वैर वरताया। प्रेम का जीवन नहीं दृष्टी आया॥
मन्दर मस्जिद करें गिरजे पुकार। खोटी वासना खोटा वापार॥
सिनेमा थेटर बहुरंग तमाशे। गादी गुरु वाँ करें निवासे॥
जीभा की रसना अधिक चित लागी। अनयुक्त पदारथ खाए अपराधी॥
बुद्ध मलीन भयो नास विचारा। चार दिसा में व्यापे अन्धकारा॥
भयो तपीशर करे बनखंड वासा। अन्तर धारी विखे भोग की आसा॥
तत्त ज्ञान परमारथ धाम। सभी विसारें नित दुःख बिसराम॥
ऐसे घोर अन्धकार में मीता। कैसे परसूँ तत्त निर्मल अजीता॥
भागवान कोटाँ में गुनिया। हर की कथा प्रेम चित्त सुनिया॥
सतसरूप में निश्चय धारी। आलख पुरख का भयो पुजारी॥
मन की सकल दूषना धोवे। अखण्ड जाप सतनाम परोवे॥

रहनी रहे चित बसे गम्भीरा। एक ठाकर में लयो बसेरा॥
आठ पहर ग़रीबी धारी। सत संतोख सील विचारी॥
दासाभाव जो मन राखी। अनँक जतन सिमरे प्रभ साखी॥
मर के जीवे इक ज्ञान की रसना। अंतर बसे पेखे जग सुपना॥
दीनदयाल की नित कीरत गावे। घना आनन्द अन्तर वरतावे॥
तन मन धन तीनों को त्यागे। सत मारग में कोई गुरमुख जागे॥
बसे एकान्त सत जुगत विचारे। सो सतगुर साचा तिस चरनी बलिहारे॥
सूरज तेज ज्यों जग में परगासे। बचन गुरु घट जीयाँ निवासे॥
आप तरे औराँ निस्तारे। साची जुगत का करे परचारे॥
पाखँड खंडे सत को परगासे। जुग जुग गुर की करो अरदासे॥
अन्धकार में चानन दिखलाये। पाप उखाड़ पुन्न को वरताए॥
गरब जलावे खिमा पिलावे। मोह मिटावे त्याग दिखलावे॥

**साचा गुर हर रूप है, सकल जीयाँ आधार।**
**'मंगत' पड़यो चरन तिस, कर डण्डवत बारमबार॥850**

साचा सतगुर मेल मिलाए। सत मारग की सोझी पाए॥
मोह अगन जीव की नासी। गुर के बचन सत जुगत बिलासी॥
धरम करम का मारग जाना। पाप पुन्न की करी पहचाना॥
बन्धन मुक्त का सुना उपदेशा। मारग मुक्त में जीव परवेशा॥
ज़ोर ज़ुलम गई पाई क़ुरबानी। साचे मारग की ओट पछानी॥
मरन का समाँ मन माहीं विचारा। जीवन काल का सुना सत ब्यौहारा॥
नेम धरम मन आयो विश्वासा। साची भगत में लयो निवासा॥
गुपत रूप परगट दिखलावे। गुर के चरन नित बलबल जावे॥
तेज परगास भई बुद्ध बलवाना। ज्ञान धरम में नित चित परवाना॥
निर्मल दिसा पाई अबनाशी। गुर के बचन सुख सम्पत भासी॥
भूत प्रेत देव की पूजा। सतगुर मिले सब संकट सूझा॥
अपरम आपार पुरख अबनासी। तिसकी भगत सतगुर परगासी॥
जनम जनम तपन भयो नासा। मिल सतगुर लयो मारग साचा॥
प्रेत बुद्ध से देव बुद्ध भई। रसना राम घर परगट लई॥

नाम निरंजन में पायो विश्वासा। गरब त्याग भयो जग का दासा॥
चरंजीव जीवन गुर दीना। एक सरूप में निश्चय लीना॥
भय भरम में जीव दहकाए। सतगुर मिले तब संकट जाए॥
संसा जाए मन लेवे ठिकाना। अगम देस का सुने परमाना॥
झूटा जीवन मन का सब नासे। साचा जीवन चित कला परगासे॥
औखद नाम गुर दीनी मीता। प्रेम से खाए जम गढ़ जीता॥
निर्मल ध्यान मन रह्या समाई। वडी देखी गुर की प्रभताई॥
तीन लोक में मित्तर इक साचा। सकल सखा संग है मेल जग काचा॥
गुर की रहनी धीर वरतावे। खोटा जीवना सहजे विनसावे॥
परम आधार उपकारी जीवना। साचा मारग सतगुर परीवना॥

**सकल सम्पत जगत की, अन्त जाए नर छूट।**
**'मंगत' संगत गुर साच की, मिलावे हर का रूप॥851**

पीर पैग़म्बर क़ुतब और ग़ौस। मिल के मुरशद गया मन का दोख॥
बिना मुरशद जीवन हराम। बदी धार के करे बदकलाम॥
पाक मुरशद मिल पाक दिल होवे। पाक मुरीदी जो चित जोवे॥
ग़ैब निदा इलहाम दिखावे। कलमा बेख़ुदी का मुरशद समझावे॥
ऐब गुनाहों से पाए रूह निजात। मिलके मुरशद पाई अजब सिफ़ात॥
राह हक़ीक़त विच मुरीदी सीखा। जग का जीना लागे फीका॥
सिफ़त शैतान नफ़स कमज़ात। मिल के मुरशद कीना तिन घात॥
दीन आजज़ी पाए मिटे तक़सीर। सच बन्दगी आए बसे शरीर॥
मर के जीवे फिर पाए ना मरना। हुकम रूबानी का सुना सच निरना॥
लख आफ़ताब घर में दिखलाए। मिल के मुरशद रब पाक ध्याये॥
आठ पहर दिल बसे रज़ाई। बदी बख़ील गई रूह क़ज़ाई॥
होश हवास की करी संभाल। मालिक सच्चा दिल कियो रवाल॥
तर्क ख़ुदी का सजदा कीना। हक़ शराब शौक़ से पीना॥
राह हक़ीक़त में बसे दिन राती। विरध कमावे पल पल हक़ ज़ाती॥
नूरो नूर दिल में मिलाया। अम्बरी ज़ात का राह लखाया॥

किस मुख कराँ मुरशाद वडयाई। मुरशाद कदम चूमे ख़लक ख़ुदाई॥
हिरस खुदी गुस्सा दिल जाए। विच रियाज़त नफ़स जलाए॥
इश्क इलाही में रहे मतवाला। दम दम पीवे बेख़ुदी प्याला॥
रग रग अन्दर तार लखाई। रोशन ज़मीरी मुरशाद दिखलाई॥
दोज़ख़ जन्नत की हिरस छोड़ी। एक रूबानी ज़ात चित जोड़ी॥
जिसका सब कुछ दियो दिखलाई। तिसके क़दम में गयो समाई॥
सिफ़त सुनी इक रब हक़ानी। चौधाँ त़बक इक ज़ात नूरानी॥
मेहर मौहब्बत तसबीह हथ लीनी। प्रीत का सजदा पलपल में चीनी॥
देह मसजिद की गई तारीकी। मिल के मुरशाद पाई रमज़ हक़ीक़ी॥

**दीन बन्दगी दिल में बसी, सुनी मुरशाद पाक कलाम।**
**'मंगत' नबी और ग़ौस सब, करें मुरशाद क़दम सलाम॥ 852**

सरब जगत के जाननहार। अन्तर में जो रहे नित न्यार॥
करम करे अन्तर निहकरमी। सो गुर साचा भयो वडधरमी॥
सत कला में रहे परबीना। अमरत रूप प्रभ दर्शन कीना॥
ज्ञान विज्ञान में नित सँजुगता। निर्मान भाओ का मन अन्तर भुगता॥
सादा जीवन मुख प्रेम परगासे। जप तप संजम में करे निवासे॥
उँच नीच को देवे उपदेस। तिस गुर को नित आदेस॥
सकल जीयाँ का वैर मिटावे। प्रेम की गंगा सब माहीं बहावे॥
एक सरूप का देवे सबको विश्वासा। संशे भरम का करे नित नासा॥
सत संतोख खिमा को खोजे। अगन तृष्ना मन की बूझे॥
एक नाम में रहे लवलीना। अन्तरगत सत ठाकुर चीना॥
सकल भरम की करे नित हाना। प्रेम भगत इक नाम रीजाना॥
उट्ठत बैठत सच निश्चय धारी। सो गुर साचा नित हूँ बलिहारी॥
बारमबार करे निर्मल विचारा। एक ओट एको आधारा॥
पाखंड त्यागे इक नाम संभाले। सरब जीयाँ देखे दीनदयाले॥
अन्तरगत सत शबद ध्यावे। भाओ प्रेम अखण्ड रस पावे॥
तजे शरीर इक ओट चित राखी। साचा नाम छिन छिन प्रभ चाखी॥

तीन अवस्था बिख करम का जाल। चौथे परसे सो गुरु दयाल॥
मारग चौथे सत शबद की धारा। दुर्मत त्याग नित करो विचारा॥
सुरत शबद इक धार लखाए। सकल भरमत मन की जाए॥
अखण्ड नाद गगन में बोले। उपरस ध्यान नाम प्रभ तोले॥
पाँच पचीस एक मिल होई। अखण्ड चित एक नाम परोई॥
आसा तजे मन होए निरासा। साचे शबद में करे बिलासा॥
सुरत निरत की चौसर खेले। आलख परगास में विरत मन मेले॥
ध्यान ध्याता भयो इक रूपा। जो जन परसे सो गुरु अनूपा॥

**गमता राखे ज्ञान की, अन्तर शबद कमाये।**
**'मंगत' भरमन जब मिटे, सतगुर तब कहलाये॥ 853**

शबद भेद जब मन में पाया। दुर्मत जाल सभी बिनसाया॥
शबद खोज से मन निर्मल होए। साचे जीवन में रह्यो बसोए॥
शबद में धरती शबद में आकासा। शबद में पवन पानी बिलासा॥
शबद में पावक करे परगास। पंज भूत विच शबद निवास॥
चार खानी में शबद रमाया। अन्तर बाहर सो शबद समाया॥
शबद में विरंच विषन महेशा। शबद में गौरी और गनेशा॥
शबद में सिद्ध पीर अवतारा। शबद में ज्ञानी गुनी आचारा॥
शबद मूल सकल का होई। सकली रचना तिस माहीं समोई॥
शबद में योग ज्ञान ध्यान। शबद में आचार विचार बखान॥
शबद में सकल रचना उत्पाई। शबद पुरख सब घट रिह्या समाई॥
शबद शबद में भेद बहु भारा। एक करे बन्धन एक करे निस्तारा॥
मन मनसा से जो शबद परगासे। बन्धन रूप सो नित भासे॥
मन से बानी बानी से विचार। इच्छया करम भोग विकार॥
असत शबद मन में करे विखादा। नाम रूप गुन करम परमादा॥
मिथ्या शबद की चिन्तन नित करे। बाँधा भरम नित जन्मे मरे॥
गरब गुमान चंचल चतुराई। मनसा शबद की सकल प्रभताई॥
जतन करे मन बानी नहीं त्यागे। बानी बाँधा फिरे अभागे॥

करम की इच्छया तीन गुन जंजाला। मिथ्या शबद रूप जम काला॥
मिथ्या शबद मन ममता जानो। मूल माया का सरूप पहचानो॥
करम का भुगता बने दिन राती। दुःख सुख इच्छया अन्तर में थापी॥
असत शबद अधिक कलेशा। बिना सत शबद नहीं जाए संदेशा॥
मन का जीवन बानी ये जानो। संकल्प विकल्प में नित दुःख ठानो॥
बानी त्यागे मन निर्मल होई। भयो इकागर विरत चंचल खोई॥
कलह कलेश तब छीजे मीता। असत बानी मन त्याग करीता॥
कारन माया तब बीज जल जाए। सकल विकार पर प्रभता पाए॥

**सत शबद पहचानया, सुन अमरत सतगुर बोल।**
**'मंगत' मन बानी को जीत के, लयो शबद सत तोल॥ 854**

साचा शबद गुपत अनूपा। परगट करे कोई गुरमुख भूपा॥
मन बानी के परले पार। साचा शबद वहाँ करे पुकार॥
सरब का ठाकर मूल है सोई। चेतन पुरष अखेद अखोई॥
सरब का ज्ञाता सो अन्तरयामी। सरब में व्यापे सो पारगरामी॥
सकल जीयाँ में सम कर बिराजा। सत शबद सरब जग साजा॥
अपरम आपार नित परिपूरा। तिसे पछाने मिटे जम झूरा॥
शबद अनादी अद्वैत अखण्डा। सरब माहीं तिसका परचंडा॥
जनम मरन में सो शबद नहीं आए। जैसा था तैसा दरसाए॥
तिस शबद की जो करे परीख्या। बिनसे भरम मिल सतगुर की दीखया॥
हिल मिल खेलो शबद के संगा। ब्रह्म सरूप सो शबद सरभंगा॥
अन्तर रेख मन की मिट जाए। एक भया एको दिखलाए॥
सत शबद है निज रूप। सो ही शबद ब्रह्मसरूप॥
छिन छिन शबद कमाए जोई। महा तपीशर जग में होई॥
शबद पीवे तृखा मन जाए। परमानन्द मन माहीं समाए॥
शबद की खोज राज को त्यागे। शबद की खोज गुनी भये बैरागे॥
शबद की खोज बहुरंग तप धारी। भयो अतीत गृह नार विसारी॥
शबद की खोज में जीवन काढ़े। मिले शबद सुख अपरमपारे॥

शबद पछाने होए दुःख सुख नासा। निर्भय होए आनंद घर बासा॥
जनम मरन का भय सब नास्यो। सत शबद अन्तर परगास्यो॥
शबद पछाने नित्यानित जीवे। काल त्याग शबद रस पीवे॥
करम जंजाल जाए सब भरमा। परगट करे शबद निहकरमा॥
अन्धकार सब मन का जाए। शबद निरंजन जो दीप जगाए॥
आसा तृष्ना गयो सकल विकारा। आनन्द सरूप इक शबद चितारा॥
बिख अमरत भयो एक समाना। अगोचर शबद परसा निर्वाना॥

**आपा पर दोनों मिटे, रह्यो ना वैरी मीत।**
**'मंगत' मन में परसयो, अबगत शबद पुनीत॥ 855**

ऐसा शबद रूप कल्याना। सतगुर साध मिल करे पहछाना॥
इस देही में एह बिध समाए। काठ में अगनी ज्यों ना दरसाए॥
दूध माहीं ज्यों घृत समाया। ऐसे बसे घट शबद निर्माया॥
ले सतगुर जुगती देह मिथना कीजे। आलख शबद परगट कर सीजे॥
निर्मल जुगती जो नित चितारे। सो वंजारा सत करे ब्यौहारे॥
पलक पलक पन्थ पिया खोजे। हरे विकार शबद सत बोधे॥
पाँच दोख तीन ताप निवारे। सत शबद जो मन माहीं चितारे॥
अनन भगत मन खेद वंजाए। दृढ़ विश्वास रख परम तत्त पाए॥
सो सन्यासी सुन्न करे ठिकाना। लखयो भेद शबद निर्वाना॥
सो ही बैरागी बैराग में पूरा। गुपत शबद घट भयो ज़हूरा॥
सो ही उदासी उदास कमावे। निहसंग शबद के भेद को पावे॥
सो ही जोगी सत जुगत विचारी। आलख शबद घट परगट धारी॥
सो बिहंगम सो ही अबधूता। नित ही खोजे सत शबद सरूपा॥
सो सिख साचा गुर सिखया धारी। शबद अगोचर की कथा विचारी॥
सो ही पंडत वेद तत्त बूझे। जो समदृष्ट शबद तत्त सूझे॥
सो ही मौनी मन मगन समाया। शबद आनाद रतन चित आया॥
सो ही ज्ञानी तत्त का वेता। एको ओट शबद चित लेता॥
सो ही दाता सरब दातारी। साची सम्पत जो शबद विचारी॥

सो ही सूरा मुकतगढ़ जीते। जो घट माहीं शबद परीखे॥
सो तेजस्वी तेज बलधारी। शबद ब्रह्म जो तेज विचारी॥
सो ही सूरा नाम पूरन रनजीत। मन में राखे एक शबद परीत॥
सो ही अवतार पैग़म्बर जान। अबनाशी शबद जिस करी पछान॥
पूरन पूरा अपरम बलधारी। मन बचन करम जो शबद विचारी॥
सकल जीयाँ में पावे वडयाई। गुर के शबद में जो प्रीत लगाई॥

**शबद अनहद पहचानयों, जो अन्तर करे पुकार।**
**'मंगत' सो निज रूप है, सब में पूरन सार॥ 856**

साधू तो सब ही भले, अपनी अपनी थाईं।
जो सत शबद के पारखू, सो ही संत कहलाईं॥

आध व्याध सब मन की नासी। निर्मल शबद घट सुरत निवासी॥
धंदा धावन मन जाए बिकारा। घड़िए शबद अन्तर टकसारा॥
सत विश्वास श्रद्धा धारी। अधिक प्रीत गुर बचन विचारी॥
मन के भरम का करे उपाये। सत मारग में प्रेम बढ़ाये॥
पाप पुन्न की करे पहचाना। मन को ठाके करे करम सुजाना॥
साचा त्याग जभी चित आवे। सतगुर परताप शबद रस पावे॥
नित नित सोधे शबद अगामी। जोग का जुगता परसे सो स्वामी॥
जप तप संजम पर-उपकारा। धारे करम होवे सचयारा॥
एको नाम मन माहीं कमावे। परम परकाश शबद रस पावे॥
अन्तर बाहर पवन की धारा। बारह सोलह सम कर विचारा॥
बाहर जाए हकार सो कहिए। भीतर आए साकार सो लहिए॥
हकार साकार का मेल मिलाए। अद्भुत शबद का परगट पाए॥
पवन आरम्भे ले नाम का खण्डा। अकथ कथा कथ जोत परचण्डा॥
साचा शबद मन माहीं परोवे। कोट जनम की मैल को धोवे॥
दृढ़ अभ्यास नाम कमाए। शबद का निरना सो गुरमुख पाए॥
बैठ इकान्त प्रभ भगत कमावे। करे अभ्यास गृहस्ती तर जावे॥
गृहस्ती विरक्ती दोनों हैराने। जब तक सार शबद नहीं जाने॥
शबद ही पार लँघावनहारा। जो जन सोधे उतरे पारा॥

शबद ध्याए भयो जनक निरदेही। शबद विचार राम त्याग चित लेई॥
शबद ख़ुमारी में कृष्न मतवाला। निष्काम विरत में नित रवाला॥
शबद ध्यान शिव समाध अखण्डी। शबद में विचरे साध सन्यासी डण्डी॥
परगट शबद करे विगन का नासा। जरा मरन मिटे काल की त्रासा॥
शबद परगासे सो अनुभव ज्ञाता। अकथ कथे खुले ज्ञान कपाटा॥

**सरब ज्ञान का मूल है, सरब जगत आधार।**
**'मंगत' परसे शबद जो, पावे जग का पार॥ 857**

वस्त अमोल जगत में भारी। मिल सतसंग लयो शबद विचारी॥
अपरम मानक ये शबद आनंदा। कोट रवि सम जोत परचंडा॥
लाख उपाये करे दिन राती। बिना शबद मन तृखा समाती॥
शबद नीर जब घट माहीं पीना। मूल पछान तब इस्थिर थीना॥
ग्रन्थ वेद गुनी करें विचारा। घाल शबद उतरें नर पारा॥
मानुष जनम का एह ही फल मीता। शबद ज्ञान नित रमे रमीता॥
शबद पहचाने सो देवन का देवा। अबनाशी पुरष की करे नित सेवा॥
कठिन जंजाल माया बिस्तारा। शबद पहचाने उतरे जन पारा॥
पूरन योग रिद्ध सिद्ध दाता। एक शबद मन जपे अजापा॥
साध के चरनी नित डण्डवत कीजो। सेव टहल नित मन में सीजो॥
साध के बचन मन तन धारो। शबद अगोचर मिले निर्धारो॥
मन की व्याध जब अन्तर रहाई। युग युग भरमे नहीं मिले शबद सुखदाई॥
खिमा ग़रीबी जो मरन विचारी। श्रद्धा सेवा भाओ भगत आचारी॥
सतपुरषन के सुने इतिहासा। गुरू के बचन रखे अधिक विश्वासा॥
पर दुःख हरना कार कमाए। अपने सुख पर लात चलाए॥
सकल जीयाँ पर कीजे दाया। नित नित तिनके चरन समाया॥
गरब तजे होवे धूड़ समान। अबनाशी शबद कियो तिस पछान॥
सेव बन्दगी प्रेम आचारा। दया ग़रीबी का करे ब्यौहारा॥
समदृष्ट का सबक़ विचारे। महागुनी सो उतरे पारे॥
एक सरूप में नित जीवन जीवे। एक आधार मन अन्तर लेवे॥

कर्ता हर्ता ठाकर पहचाने। तिसकी आज्ञा छिन छिन चित माने॥
भरम विनासे सतरूप समाए। जाँ से आया ताहीं मेल मिलाए॥
दुर्मत भरम का खण्डन कीजे। सत शबद अमीरस पीजे॥
मुकत महासुख गुर शबद विचारे। सो सत साधू नित हूँ बलिहारे॥

**बार बार विचारया, सब जग बिख की खान।**
**'मंगत' शबद कमावना, जग जीवन सार निधान॥ 858**

एक नाम की रखे परीत। परसे शबद परम सुखरीत॥
ज्यों ज्यों मन सतनाम कमाए। मिटे अन्धकार सत शबद लखाए॥
अच्छर जपे निरअच्छर होई। आनन्दसरूप में सुरत भगोई॥
नाभ कँवल है अचरज थाना। जाँ में वसया श्री भगवाना॥
सतगुर जुगत मिल नाम कमाए। उरध कँवल परगासत पाए॥
खुले सुखमनी जीव तृखा विनासे। परगट शबद तब अन्तर भासे॥
छिन छिन तिस में सुरत परोए। मनसा लीन मन निर्मल होए॥
अखण्ड सुरत जब नाम प्रभ चीने। काल करम की व्याध तब छीने॥
गरजे पवन खुले कपाट। परसे शबद उनमुन के घाट॥
उनमुन घाटी अजब समाजा। निराकार वहाँ रह्यो बराजा॥
जाप अजपा सुरत इकागर। ब्रह्मसरूप परसे उजागर॥
एक धुन्न सुरत परोई। तब ये काया निर्मल होई॥
जीवन मरन का निरनय पाया। उनमुन पुरष अकाल ध्याया॥
आपा तजे पछाने आप। एको शबद उनमुन व्याप॥
धन्न योगी जो जुगत विचारे। अनहद परसे पुरख आपारे॥
नित नित शबद में करे कुलेले। इच्छयाचारी सदा अडोले॥
निर्मल दिसा गुरदेव दिखलाई। अद्भुत बानी अन्तर पाई॥
गरजे मेघ बजे खड़ताल। दमके दामन अजब रवाल॥
उमढे जोत बाजे घट तूर। गुरमुख जीवे जप नाम हज़ूर॥
ग़ैब की बानी घट करी पछान। अबगत चानन देखा भगवान॥
अपने मन में रीज रिजाया। गूँगे गुड़ ज्यों नहीं सार जिताया॥

जिस जाना सो तृपत को भाखे। जुग जुग जीवे हर रस चाखे॥
विषे विकार से मन भयो अतीता। सत शबद घर दर्शन लीता॥
दरस परस से अत भयो निहाल। जप जप जीवे इक नाम किरपाल॥

**अबगत शबद पहचानया, जम काल की मिटी तरास।**
**'मंगत' आठ पहर रीजत रह्यो, मन एके शबद निवास॥ 859**

शबद को पीवे भयो गुरमुख मतवाला। अद्भुत दर्शन जोत उजयाला॥
अमरत कुआँ गगन में फूटा। गुह्य ध्यान में अमीरस लूटा॥
देव दानव करें अरदासा। अजरपुरष मिल अखण्ड सुख भासा॥
जुग जुग खोजें जिसको गुनी ज्ञानी। सो शोभा गुर पल दिखलानी॥
लोमस ध्याए मारकण्डे मन ध्यान। जुग जुग पूजे भसुण्ड निर्वान॥
मुनी सनकादिक नारद चिताए। तिस शबद की महमा वरनी ना जाये॥
चतुर्मुख ब्रह्मा नित उस्तत कीजे। नेती नेती परमान लखीजे॥
शेष सहँसमुख करे नित जाप। लखा ना जाई प्रभ का परताप॥
कपल कनाद करे गौतम ध्यान। अष्टावक्र करे जनक पछान॥
मुनी व्यास सुखदेव ध्याये। जुग जुग सिमरें पर पार नहीं पाये॥
अनमत मूढ़ा क्या करे बखान। ऊँच से ऊँची शोभा भगवान॥
दीनभाओ निवाओ सीस। पलक ना विसरो सो जगदीश॥
चार जुगाँ में भगती बहुरंग। कलजुग में सुन नाम परसंग॥
नाम जपे जाए काल से छूट। अनन भगत रस अमरत लूट॥
दुर्लभ भाग जन जग में आया। मिल सतगुर सतनाम ध्याया॥
एक पलक निहचल चित ध्याए। बन्धन छूटे परम गत पाए॥
अठसठ तीरथ करे अशनाना। बिन हरी सिमरन ना होए कल्याना॥
जुग जुग ज्ञानी प्रभ कीरत गाए। अपरम पुरख का पार नहीं पाए॥
साची प्रीत जिस एक पलक ध्याया। भगत वत्सल सो साहब हरखाया॥
उठके नित नित करो विचार। पततपावन सिमरो करतार॥
बादमुबाद ना पड़ो भुलेखे। करो भगत तब जीवन लेखे॥
साध-जनाँ ने एह कियो बखाना। बिन हरी भगत ना पाए कल्याना॥

हर की भगत जग जीवन सार। नित नित हरजन चरनी बलिहार॥
मन परसन्न दुबधा से छूटे। निर्मल भगत महारस लूटे॥

**सतसरूप सिमरन करो, पाओ निर्मल धाम।**
**'मंगत' भगती सार है, परस पाये बिसराम॥ 860**

साची भगत करे निसतार। जुग जुग हरजन करें पुकार॥
दुर्मत भाओ से गरभ में आया। हर की भगत से छूटन पाया॥
भाग वडयाई तिस जन को होवे। हर की भगत जो अन्तर जोवे॥
सदक़े जाऊँ मैं तिसके चरने। अखण्ड भगत में जो नित विचरने॥
भगत की बाँधी राम बँधाया। भगत की कहनी तीन लोक तराया॥
भगत के जीवन में जीवे संसार। हर के चरन लागे प्यार॥
विखम माया को छेदनहारा। परम शान्त को लखावनहारा॥
खिमा ग़रीबी सिमरत परगासे। साची भगत की करो अरदासे॥
देवों में शिरोमनी जान। सो कुलवन्ता सो नित परवान॥
ऊँची कुल की शोभा ना कोए। नीच भगत ऊँच गती बसोए॥
भगत सरूप जानो भगवान। नित आनन्द प्रेम की खान॥
कोटाँ में हर भगत मन पाए। साचा वनज तीन काल कमाए॥
हूँ बलिहारी नित मैं बलिहार। भगत भाए तरिये संसार॥
जिस कुल में नहीं हर को दास। सो कुल जानो भूत तमाश॥
जिस देश में नहीं हर भगत बिराजे। सो देश जानो प्रेत समाजे॥
हर का भगत जगत परगासे। साची जुगत सच करनी निवासे॥
पूरन पुरख की सोभा दरसावे। मुकत सरूप का आनन्द दिखलावे॥
देह माहीं प्रेम प्रगटावे। जड़ता माहीं सुतन्तर लखावे॥
गरब माईं निरमान तत्त भासे। अज्ञान माईं करे ज्ञान निवासे॥
उज्जल नीती सब जीवों की होई। भगत के संग से दुर्मत खोई॥
प्रेम प्याला हरनाम का पीवे। ब्रह्म शूल में नित्यानित जीवे॥
निरआधार हर भगत समाया। निरविखाद जीवन को पाया॥
धन्य समाँ ओह देश विचारो। करे कुलेल हर भगत प्यारो॥

अपने आप में पाई परसन्ता। सिमर सिमर सतनाम भगवन्ता॥

**संकट रूप ये जगत है, तीन काल संताप।**
**'मंगत' भगती परसाद से, एह मन मगन समात॥ 861**

साची भगत आराध मन मेरे। हर के चरन में सुख घनेरे॥
जगत की आस तज हर ओट सँभाल। सरजनहार सो नित रछपाल॥
परम आनन्द नित परगासा। सिमर सिमर तू सो अबनाशा॥
कूड़ जीवन संसार में पाया। अंतकाल नर राख समाया॥
महल अटारी दरभ ख़ज़ाना। सब को छाड के चले अन्त निमाना॥
पुत्तर धीयाँ नाती परवार। चले ना कोऊ संग मरती बार॥
बाती तेल जयों जोती परगासे। तेल निखुटा जोती विनासे॥
छीजे प्रान काया कुमलाए। भयो निमाना जाए भस्म समाए॥
सोना रूपा बहु संचित कीना। भयो बिगाना जब काल ग्रस लीना॥
रे मन खोल तूँ अपने नैन। इस जग में कौन सखा कौन सैन॥
नदी नाओ ज्यों जीव पधारे। छिन में अपने अपने पंध सिधारे॥
चार दिनाँ जग जीवन मेला। अद्भुत रचया प्रभ ने खेला॥
उठ रे मन होश सँभाल। बिन हरि सिमरन कूड़ जंजाल॥
झूटे लालच क्यों लिपटाया। सतसरूप को क्यों विसराया॥
जम काल लेवे देह गिरासे। छाड जगत चले अन्त उदासे॥
कहाँ से नर आया कहाँ तू जाये। विच मुसाफ़त क्यों भरमाये॥
एह जग रचना साहब फुलवाड़ी। देख ना भूलयो सुन बचन गुनकारी॥
क्या गुनी क्या ज्ञानी बल सूरा। काल करे सबका सिर चूरा॥
सत सागर का घूँट करे, पर्वत तली उठाए।
एक पलक की आन में, काल गयो तिन खाए॥
नाचन कूदन छाड मन मूढ़े। भगत पछान मिटें करम करूरे॥
अनंक पाप करें दिन राती। अपने आप का बनें क्यों घाती॥
निद्रा त्याग उठ जागन जाग। साचा लेखा नित लिख वडभाग॥
साचा प्रीतम दियो विसार। छिन छिन जलें अगन अंगयार॥
धन जोबन का करें ग़ुमान। एक पलक में उडें धूड़ समान॥

**मूरख मन विचार कर, नित आनन्द सरूप।**
**'मंगत' बिन हरि भगत के, सब जग बिख का रूप॥ 862**

बिख बीजे नर बिख ही खाए। बिख की आस में जनम गँवाए॥
अमरत नाम बिन रोए दिन राती। एक पलक नहीं चित शान्त समाती॥
कूड़ झंजट में नित गरसीना। काल का बाँधा नित भरमीना॥
अनँक बिकार चित माहीं चितारे। खावे बिख पावे दुःख अपारे॥
जितनी सम्पत उतना दुःख भारी। नित ही दुःख में फिरे परवारी॥
बड़े बड़े धन माल के वाली। अन्त चले नर ले हथ ख़ाली॥
अपना सब कुछ नित बनावे। होवे बिगाना जब जम गरसावे॥
कौडी कौडी जोड़े धनवादी। छाड खज़ाना चले अपराधी॥
दुष्ट करम कमाए दिन राती। बिना भगत मन पाप ही थापी॥
विषे भोग भोगे मनमाने। मरन विसार भयो ग़लताने॥
कूड़ देही का बहु साँग बनाए। निकले प्रान छिन राख समाए॥
तुच्छ जीवन का क्यों करें गुमाना। रहन ना पावे कोऊ राजा राना॥
कहाँ दुर्योधन छतर सिर धारी। सोलह जोजन जाँ की झलक झलकारी॥
कहाँ शिशपाल भीम बलवान। कहाँ अर्जुन कहाँ तिसके बान॥
कहाँ रावन जिस काल बँधायो। कहाँ राम जिस अवतार कहलायो॥
कहाँ धनंतर कहाँ अश्वनी कुमारा। कहाँ कँस कहाँ जरासिंध दुलारा॥
कहाँ भीषम कहाँ द्रोन आचारी। कहाँ करन अती बलकारी॥
कहाँ बिक्रम सिकन्दर दारा। कहाँ मुग़ल कहाँ ग़ौर बलधारा॥
कहाँ ज्ञानी ज्ञान तत्तवादी। कहाँ योगी जो लाएँ योग समाधी॥
जो आए सो गए समाए। चक्कर काल का अगम अथाए॥
समय पाए विरंच विनासे। समय पाए शिव को काल गरासे॥
समय पाए विष्नू देह त्यागे। छूट सके ना कोई काल के आगे॥
धरती जाए जाए पवन और नीरा। जाए अम्बर पावक खीरा॥
समां आए सब लीन समाए। साचा रूप रह्यो राम अगाये॥

**सब जग काल सरूप है, छिन छिन रूप वटाए।**
**'मंगत' साचा सो प्रभ मेरा, जो वाध घाट नहीं पाए॥ 863**

सब जग तृखा में आवे जाए। हर का भगत चले तृप्ताए॥
बिना हर भगत मन संकट लागा। जल जल पड़े जीव मन्दभागा॥
साध-जनाँ ने कियो बखाना। बिन हरी भगत जीया दुःख समाना॥
अजर अमर अबनाशी भगवन्ता। तिस की भगत देवे प्रसन्ता॥
लख चौरासी जून भरमावे। चक्कर काल में आवे जावे॥
मानुष देह मुकत की नौका। भगत करे जाए भरम का धोखा॥
दुर्लभ जीवन का करो उपाये। रुच रुच कर हर भगत कमाए॥
पलक पलक कर औध गँवाई। गया काल फिर हाथ ना आई॥
जो करना सो अब कर मीता। यही सुफल घड़ी अती पुनीता॥
साचा मारग खोज तत्त ज्ञान। सेव बन्दगी भगत भगवान॥
सब से प्रीती मुख बोल सुहाना। कर सतसंग हरो गरब गुमाना॥
बादमुबाद सब मन का त्यागो। हर की भगत में नित उठ जागो॥
खाट् लयो अबनाशी धाम। अन्तकाल ले जीव बिसराम॥
साची करनी कर मन मेरे। भाओ भगत रच अन्तर केरे॥
भगत करो बिनसे सन्तापा। भरम जाए मन मगन समाता॥
भगती कारन मानुष देह पाई। बिन हरी सिमरन बेअर्थ गँवाई॥
सो दीनदयाल परम सुख खानी। जो जो सेवे होवे सुख दानी॥
प्रेम पाए पूजो प्रभ देवा। निमख निमख कर प्रीत से सेवा॥
सरजनहार ठाकर सुखरासी। जो जो सिमरे मिट जाए चौरासी॥
भरमन गई मुकत घर पाया। प्रेम प्रीत से नाम ध्याया॥
नित नित मन में कर आदेसा। भगत करो मिट जाएँ कलेशा॥
साध वेद करें नित दोहाई। सिमरो नाम परम सुखदाई॥
हीरा जनम सत लेखे लायो। सत परतीत गुर चरन समायो॥
सतगुर कहनी मन माहीं विचार। दुर्लभ जनम में खाटो सार॥

**हर का नाम चितारयो, सुन संतन का लेख।**
**'मंगत' नाम तत्त सार है, बाकी कूड़ भुलेख॥ 864**

भवजल दुस्तर नहीं पारावार। सिमरो नाम उतरें नर पार॥
सत सिखया मन माहीं पहचान। औगुन जाए पाएँ सुख निधान॥
तीन गुन माया का तान तनाया। लख चौरासी में जीव भरमाया॥
क्या राजा क्या रंक दरवेशा। सब को माया नित देत कलेशा॥
इच्छया ममता गरब ग़ुबारा। हरजन छूटे करे नाम विचारा॥
साचे नाम की आपार वडयाई। कोट विगन इक पल में जाई॥
उठ परभाती कर अशनाना। प्रेम प्रीत कर नाम ध्याना॥
नित ही नित मन नीयम धारो। भगत परताप उतरें नर पारो॥
गुर गादी सब भरम विकारा। इच्छया भोग में जलें गँवारा॥
मान वड़ाई मन में नित वरताए। छाड ग़रीबी परम दुःख पाए॥
पहन पोशाकी पग अकड़ अकड़ कर धारे। तिस के सर जम मुगदर मारे॥
अन्दर बिकार बाहरों सुथराई। आप डूबा सब शिष डुबाई॥
एकता त्याग बाद में जावे। अपनी देह की पूजा करावे॥
काल का बाँधा मन धरे अंधकारा। सो गुर कूड़ा सहवे डण्ड भारा॥
कूड़ फ़रेब में सब जीया ग़लताने। साची भगत कोई विरला जाने॥
जो मन अपने की करे सुथराई। आशा बीज ले अगन ज्ञान जलाई॥
छिन छिन में मान मध त्यागे। भाओ भगत में नित उठ जागे॥
साचे नाम में रहे ग़लताना। शबद अगोचर तिस करी पहचाना॥
शबद में सुरती तीन काल परोवे। फोड़ ब्रह्मण्ड जाए हरचरन में सोवे॥
छिन छिन शबद अगोचर ध्याए। शबद के जीवन में जीवन पाए॥
शबद अनहद अन्तर सूझे टंकोर। साचा भगत बूझे घर शोर॥
देह विकार पर पावे जीत। निरदेह शबद संग लगी प्रीत॥
शबद सरूप सतगुर मिलाए। रुच रुच तिस के चरन समाए॥
काम क्रोध गयो बिख अहंकारा। साची भगत से उतरें पारा॥

**भगती ताँ पर आखिए, जाँ नहीं द्वैत विकार।**
**'मंगत' भगती परताप से, परसे तत्त निरंकार॥ 865**

हर का नाम नित मिथना कीजो। शबद सरूप माखन नित खीजो॥
रंचक सुरत संग शबद मिलाए। भई सुहागन सुख अपरम पाए॥
आद अनील जुग जुग बिस्मादी। साचा सिमरन मन हरे व्याधी॥
नित नित देवे सो दातार। जुग जुग लेवे हर भगत प्यार॥
हर में हरजन में भेद ना कोए। एक लीला प्रेम हर का भगत समोए॥
गुरमुख विरला कोटाँ में कोऊ एक। सच परतीत लखे शबद मन टेक॥
अन्तर दृष्टी मन प्रेम ख़ुमारी। अदभुत शबद की मन रसना धारी॥
करम विकार सब तृखा वंजाई। एक शबद में गयो लीन समाई॥
जब बोले तब शबद की रसना। प्रेम बैराग घट अन्तर बसना॥
मुख उदासी घनी समाए। अन्तरगत हर शबद ध्याए॥
करम फल इच्छया से भयो विरक्ता। सम सरूप अन्तर में भुगता॥
दु:ख सुख दोनो इक चित तोले। लाभ हान में विरत अडोले॥
वैरी मित्तर दोनो संग प्यार। कंचन माटी का करे इक बपार॥
गुना अतीत शबद तत्तवेता। परम ज्ञानी हर भगत रस लेता॥
कहन माहीं सब बने ज्ञानी। तत्त परगास कोई विरला जानी॥
साचा भगत जब नैन दरसावे। दर्शन भेंट से सब तृखा मिट जावे॥
अमरत बचन जब बोले बोल। पलटे काया जाए पाप का ख़ोल॥
अमरत दृष्टी हर भगत की जान। खल बुद्ध जीया करे बुद्धवान॥
तिस की सेवा अमरत फल देवे। परम प्रीत हर भगत जो सेवे॥
भाग वडयाई तिस जन की जान। एक पलक सेवे जो भगत भगवान॥
खिमावान विरत बैरागी। एक नाम रसना मन लागी॥
करम अभिमान शंका चित नासा। भगत ज्ञान प्रेम परगासा॥
सकल पदारथ सहज नर पाए। दुर्लभ भाग हर भगत चित आए॥
सकल पदारथ मन को दु:खदाई। हर की भगत नित सुख वरताई॥

**धन्न जननी जिस जाया, हर का भगत सुजान।**
**'मंगत' तिस के दरस से, तर गये तीन जहान॥ 866**

दुर्लभ वापार हर भगत विचारी। छिन छिन प्रीती इक नाम निहारी॥
अपना आप अन्तर गँवावे। सच परतीत हर भगत चित आवे॥

निर्मल कहनी निर्मल विचार। निर्मल जतन अन्तर माहीं धार॥
निर्मल वाट हर शबद पहचाने। निर्मल ज्ञान में नित ग़लताने॥
प्रभ की आज्ञा में नित रीझावे। अपनी हिकमत सकल जलावे॥
'मैं' 'मेरी' काटे जम फाँसी। भगत परसाद मन भयो उदासी॥
सरब अतीत पुरख ध्याया। अन्तर माहीं निज सार को पाया॥
मन बच करम सिमरे सच नाओं। अबगत ध्यान पावे निर्मल थाओं॥
झूट देही संग उपरस होवे। दीनदयाल की प्रीत में सोवे॥
झूट जगत से मन ले बैराग। साची भगत सो परसे वडभाग॥
जो दरसे सो नाश दिखलाए। सच सरूप पर निश्चय पाए॥
नाम की रसना अन्तर परगासे। साची भगत में करे बिलासे॥
परउपकारी नित दातार। एक शबद ध्यावे निरंकार॥
आसा मनसा सब खेद जलाई। अबगत जोत में हर भगत समाई॥
जाँ से आया परसे सो ही धामा। अखण्ड प्रीत विरत निष्कामा॥
दीनदयाल मन में नित ध्याये। तिस बिन दूजा नहीं चित में भाये॥
घड़ी घड़ी पल पल करे विचार। आलख लेखा लखे तत्त सार॥
अद्भुत शबद में भयो मस्तान। साची धुन्न में भयो ग़लतान॥
दुबधा द्वैत मन खेद निवारी। सो गुर साचा सत भगत विचारी॥
एक पलक ना विसरन पाए। अभय पदारथ सतनाम चित गाए॥
सच परतीती गयो अन्तर पाट। दरसयो पुरष दर दसवें घाट॥
सच खण्ड में परसे सचयार। अद्भुत दर्शन भयो उजयार॥
प्रेम की माला मन माहीं परोवे। जीवन त्याग नित प्रेम में रोवे॥
साची प्रीत में जीवन विताए। वडी क़ुरबानी हर भगत दिखलाए॥

**ज्ञान ध्यान बल तेज में, ऊँचा भगत विचार।**
**'मंगत' सकली सम्पता, हरजन प्रीत आधार॥ 867**

हर के नाम की औखद खाए। जनम जनम का रोग सब जाए॥
सतगुर वैद मिले परम विवेकी। किरपा दृष्टकर किया रोग परीखी॥
औखद खाए नाम दिन राती। श्रद्धा सेवा संग अनुपान लखाती॥

गरब गुमान से परहेज़ रखवाया। दुर्मत रोग सहजे विनसाया॥
धन्न सतगुर सतनाम आचारी। साच वक्खर का आया वापारी॥
पल पल माहीं नाम वापारे। बड़ी सयानफ़ सतगुर चित धारे॥
अमर पदारथ नित संचत कीना। अमर भोग में नित मन लपटीना॥
अमर ठिकाने में जाए समाया। अमरपुरष संग मेल मिलाया॥
अजर अमर इक नाम अनूपा। तिसे पछाने गुरमुख गुर रूपा॥
मन की व्याध दूषन टारी। सतनाम वनज का भया वापारी॥
छिन छिन नाम की प्रीत पछानी। गुरमुख जीवन सोभा जानी॥
एक उपाये सतगुर दिखलाया। सिमरन नाम सब खेद वंजाया॥
साध सन्त के चरने बलिहारी। साचे नाम की जाँ खुली पटारी॥
तृपत भयो नाम रस खाए। चंचल गई मन रूप समाए॥
कठन कठोर विखयों को हरया। साची प्रीत जप नाम निस्तरया॥
लोक परलोक का भय भव नासा। साची कीरत इक नाम बिलासा॥
आवागवन मन सँसा टूटा। सतगुर सेव नाम प्रभ लूटा॥
अन्तर बाहर जो रह्या समाई। सब जग जीवे जिसकी प्रभताई॥
उपजे बिस्तारे फुले फल पावे। सरब माहीं सो रिह्या समावे॥
सच्चदानन्द सो पार मुरारी। सिमर सिमर नित किरपा धारी॥
पलक ना खोयो बिन नाम की रसना। बिनसनहार सब जगत कल्पना॥
दीनदयाल नाम प्रभ साध। किलविख नासे हरे अपराध॥
नाम सिमरे तब जीवन जीवे। बिन हरी भगत संकट नित लीवे॥
औखद नाम घाल नित गुनिया। सुपन समान सकल ये दुनिया॥

**माया का अन्धकार घना, छिन छिन जीया भरमावे।**
**'मंगत' नाम आराधिए, जो घट में जोत जगावे॥ 868**

सत विसार भरम में आया। ग्रस लीना अनविर्चत माया॥
जनम अनेक विच भरम बिताए। संसा धार के आवे जाए॥
दुर्लभ काया मानुष की पाई। सतसरूप की लखी वडयाई॥
भरम त्याग साधू सरन आया। तत्त निरंजन के भेद को पाया॥
प्रेम सरूप सुना सत ज्ञाना। भयो विश्वास जप नाम सुजाना॥

सत विश्वास जभी चित आया। नाम परतीत हरी दुर्जन माया॥
सरब का ठाकर जो रह्या समाई। साध की संगत मिल दर्शन पाई॥
भाग होए सत साधू पाया। साचे नाम का सार लखाया॥
सिमर नाम मन निर्भय हूआ। एकध्यान में बिनसे चित दूआ॥
जप जप साचा नाम मुरारी। सतगुर साध इयों करें पुकारी॥
ध्रुव प्रहलाद सनकादिक गाए। नामदेव रविदास ध्याए॥
सिमरें नानक और कबीरा। परस नाम चित पायो धीरा॥
सब संतन ने कियो बखाना। सिमरो नाम होवे कल्याना॥
झूट विकार जगत की रचना। सिमरो नाम जग जीवन सुपना॥
एक घड़ी दुर्लभ नर जान। रोग व्याध नहीं उपजे दु:ख खान॥
सिमरो नाम खट जीवन लाभ। परम आनन्द परसो सुख भाव॥
विजे भई जम काल को जीता। आलख नाम सिमरो सुखरीता॥
अचरज सम्पत नाम प्रभ जानी। जिसको पाए मन धीर समानी॥
चिन्ता ग़म भय गयो बिकारा। एक नाम में निश्चय धारा॥
काची गागरिया इक दिन फूटे। तुच्छ जीवन भया दु:ख सरूपे॥
औध जाए ज्यों नदी का नीरा। बिना भगत परसे जम पीड़ा॥
वार पार जग का ना कोए। सिमर नाम भरम चित खोए॥
एक टेक राखो मन मेरे। बिन हरि भगत हैं सकल बखेड़े॥
बारम्बार सुन सतगुर विचार। सिमरें नाम उतरें भव पार॥
नाम जहाज़ सतगुर चलायो। सकल जीयाँ को पार लँघायो॥

**जग दुस्तर आपार है, डूबे गुनी गहीर।**
**'मंगत' सिमरे प्रभ एक जो, बिनसे गवन तकसीर॥ 869**

साची कथा हर नाम विचार। वेद ग्रन्थ करें उस्तत आपार॥
करूनाकर सो पार स्वामी। जो जन सिमरे लेवे बिसरामी॥
अगम अथाह अकथ अतोल। अपरम आपार पुरख अडोल॥
जिस सिमरा मन संका नास्यो। आलख सरूप तिस घट परगास्यो॥
अनंक भाँत दुर्मत चित नासी। एक नाम चित करे अरदासी॥

भेख भखन्तर सब मन का जाए। साचा नाम जब प्रीत से गाए॥
भयो निरालम नाम प्रभ ध्याये। प्रेम प्रीत निज रूप समाए॥
सब रचना में एक दरसाया। सतगुर मिले तत्त अमरत पाया॥
बारम्बार मन को समझाई। बिन हर सिमरे नित दुःख पाई॥
साचा महरम सोई साचा स्वामी। अपरम आपार पुरख निष्कामी॥
नित ही नित करो अरदास। साची भगत हर चरन निवास॥
अपरम अपार नाम वडयाई। अन्तरगत जाने जानाई॥
नाम बीज सकलो बिस्तारा। जगत का तरवर जो देखें बहुभारा॥
अमोलक नाम जिस घट परगट ध्यायो। सकल जगत का निरनय पायो॥
सार पहचान मिटे भ्रम खेदा। नाम की उस्तत करें गुनी वेदा॥
अखण्ड प्रीत प्रभ नाम चितार। दुर्लभ जीवन पावें जयकार॥
अन्तर नाम बाहर सतनामा। सम कर पूजे निज निर्मल धामा॥
भरमन जाए मन शून्य समाए। सुन्न समाध रतन प्रभ पाए॥
चौथी सुन्न परसे जो ज्ञानी। अखण्ड जोत दरसे निर्वानी॥
अखण्ड जाप नित सुरत परोई। मिटे विकार देह निर्मल होई॥
परमानन्द प्रभ नाद सरूपा। परगट भयो घट माहीं अनूपा॥
घर में घर की करी पछान। बोले नाद बहुरंगी तान॥
पाँच सहेली मिल के मंगल गायो। साचा कन्त मन माहीं मनायो॥
अगम देस में कियो बछौना। मिलयो ठाकर अखेद अखौना॥

**सत परतीत नाम परगासयो, घर में बोले तूर।**
**'मंगत' पीवे प्रेम रस, निज घर मन मख़मूर॥ 870**

साची जुगत जो नाम प्रभ गाए। तिसके निकट काल नहीं आए॥
दुःख रोग सन्ताप निवारे। पतत पावन जो जपे मुरारे॥
भूत प्रेत देव की तरासा। सिमर नाम सकल दुःख नासा॥
सकल कल्पना तज धीरज पाए। सत विश्वास जब नाम में आए॥
दुर्जन से मन मित्तर हो जाई। साचा मारग नित दिखलाई॥
निर्मल करनी जम संकट नासे। छिन छिन प्रीत जो नाम बिलासे॥

चिन्ता फ़िकर से मन पावे छूट। एक नाम अन्तर रस लूट॥
एक नाम का जिस जन आधार। परम पुरख सो गिनयो संसार॥
भूत विरत जो मन का भाओ। जापे नाम होये सकल अभाओ॥
ज्ञान विज्ञान सुख सहज समाए। सत सरूप में निश्चय पाए॥
काम, क्रोध, मध, लोभ, विकारा। वैर वदी जो रचे अन्धकारा॥
नाम परतीत सब विघन को नासे। अबनाशी पुरष संग करे निवासे॥
बिख देही से अमरत रस पाया। साध सरन प्रभ नाम ध्याया॥
भोग विकार जो संसा भारी। लोकालोक में होवे ख़वारी॥
सच नियम हर नाम चित आया। निर्मल प्रीत सरब खेद मिटाया॥
सत सील संतोख चित आई। सत विश्वास मन उपकार समाई॥
निष्काम विरत अमीसुख सार। सिमरे नाम पावे गुन आपार॥
संसा रूपी ये सकल संसार। भगत भाए उतरे जन पार॥
क्या देव क्या दानव मीता। क्या गुनी मुख ज्ञान पुनीता॥
लोकालोक जन्त आपार। साची भगत से पावें निस्तार॥
भगती माँगे शिव योग आचारी। भगती बखाने चतुर्मुख गुनकारी॥
भगती प्रेम विष्नू लवलीना। अखण्ड सरूप रस अमरत चीना॥
भगती माँगे सूफ़ी दरवेशा। साची भगत सब हरे कलेशा॥
भगती माहीं गुरु पीर आचारी। भगती पदारथ सब जग निस्तारी॥

**भगती पदारथ माँगयो, सतगुर के दरबार।**
**'मंगत' भगती प्रेम से, जाए विघन संसार॥ 871**

रखो पुरषारथ नित मन माहीं। साची जुगत से नाम ध्याईं॥
घर में अगनी लागी बहु भारी। जतन करे तब मिटे दुःख आपारी॥
झूट भरम लीला संसार। देख के भरमें गुनी गुनकार॥
छिनभंगुर जग जीवन पाया। आस अन्देस में आवे जाया॥
क्या राजा क्या राना रंक। सब को लागा भरम कलंक॥
लाख करोड़ी सम्पत धारी। रंचक धीर नहीं मन विचारी॥
झूट जीवन को सत कर माना। पाप भोग में रहे ग़लताना॥

जतन कूड़ में मन तन गाले। भयो निरास जब गरसे जमकाले॥
सब जीयाँ घर भरम का भूत। तिससे छूटे कोई गुरमुख सरूप॥
उदे अस्त तक राज को पाया। सकल जीयाँ पर हुकम चलाया॥
तेज परताप पाई अधिक वडयाई। पर मन का संशय ना गयो दु:खदाई॥
झूट भुलाया झूट वरताए। राजे राने बाँधे जम दर जाए॥
लाख वरख भोगे बहु भोग। मिले ना शान्त ना होए अरोग॥
चंचल मनुआँ नित आवे जाए। कूड़ भरवास में नित भरमाए॥
इस संकट से सुन मुकत उपाये। सच परतीत जग ठाकर ध्याए॥
मुनी सनकादिक सुखदेव आचारी। हरी उपाध हर भगत विचारी॥
जो देहधारी इस जग में आया। वांग भूत सो नाच नचाया॥
पूरन भाग कोई गुरमुख जग आए। देख परपंच मन में पछताए॥
सत की खोजन में नित लागे। सत के ताईं झूट राज को त्यागे॥
जप तप संजम बहू कीजे। मिल सतगुर सतनाम लखीजे॥
साची भगती में तन मन सुखाए। अबगत सरूप तब घट माहीं दिखलाए॥
आनन्द को पाए जतन भयो पूरा। परसयो मारग सतरूप हज़ूरा॥
उलटी सुरती पिण्ड दर खोजा। अबनाशी पुरख अन्तर में सूझा॥
सकल भरमन मन की नासी। भगती पाये भयो आनन्द घर बासी॥

**जीवन सब सुफला भयो, सत मारग करी पछान।**
**'मंगत' सिमरा नाम प्रभ, जो नित मंगल खान॥ 872**

रे मन मेरे करो वडयाई। साचे ठाकर के रह्यो चरन समाई॥
तिस बिन दूजा ना मित्तर सुखरासी। तिसकी सेव करे तपन विनासी॥
सो ही मात पिता परम किरपालू। नित नित रखयक सो ही दयालू॥
तिसकी सेव से सुख घनेरे। सिमर सिमर नित हरे बखेड़े॥
प्रभ की उस्तत पाप करे नासा। बल बुद्धी देवे तेज परगासा॥
अठसठ तीरथ करें असनानी। साचे नाम की सोभा नहीं जानी॥
जतन करे नहीं जावे कुटलाई। छल कपट में रह्यो समाई॥
साध संगत मिल धूड़ हो चरना। सिमर सिमर सो प्रभ कारन करना॥
राख ग़रीबी मन माहीं मीता। होवे परसन्न पुरख जगदीशा॥

नित नित मन में प्रीत लखाओ। साचा ठाकर अन्तर पतियाओ॥
सकल जगत की धूड़ मन बाँछो। सेव बन्दगी अन्तर राँछो॥
दुबधा नासे मन होए कल्याना। जुग जुग आदी सिमरा भगवाना॥
कोट पाप मन में वरताए। नाम गुनी ले मैल उतराए॥
गुरमुख खोजा तत्त निर्वाना। एको देखा ना रह्यो बिगाना॥
उट्ठत बैठत मन कर अरदास। नित नित हर के चरन समास॥
आपा आप विच प्रेम जलाई। सोभा राम की घर में दिखलाई॥
आवे जावे ना मन ये मेरा। लागी प्रीत हर चरनी केरा॥
भयो दीवाना इक नाम की रसना। मिटा विखाद कियो अमरत भखना॥
हरजन के चरन प्रीत कमाई। हर की भगत मन आन समाई॥
नित आनन्द पुरख अनामी। छिन छिन ध्यावाँ सो पारगरामी॥
पलक ना विसरे दुःख भंजन देवा। मीन नीर ज्यों एक प्रेम लखेवा॥
माँगाँ नाम सुन वड सुलताने। नित ही नित दर्शन कुरबाने॥
तुम दाता सरब दातारी। अनमत आया दर तोर भिखारी॥
अपने चरन की रज दियो स्वामी। माँगे दास दर खड़ा निहथामी॥

**माँगूँ प्रीती चरन की, तूँ दात कर दातार।**
**'मंगत' भिखया माँगता, तेरे अनखुट भरे भण्डार॥ 873**

सारा जगत विसारया, इक दर तोरे आस।
माँगूँ रसना नाम की, हरयो मेरी प्यास॥

तूँ ही सरब का ठाकर नाथा। सरब शकत तूँ ही समराथा॥
ऊँचे पार तूँ ही बिसरामी। जल थल महिय्यल का तूँ गामी॥
सरब जीयाँ पर तेरी दातार। भूल भूलयाँ तूँ बख़शनहार॥
हरयो पाप दीजो नाम तत्त लखना। भगत मिले ज्यों प्रहलाद की रसना॥
ना विद्या ना तप बल कोए। ना करनी ना मन से कुछ होए॥
अनमत कूकर दर जान भिखारी। होओ दयाल नित पारमुरारी॥
चन्द चकोर ज्यों प्रीत अधिकाई। अनन प्रेम मन रह्यो समाई॥
नित भगत हर चरनी गावाँ। अबगत दर्शन घट अन्तर पावाँ॥
भई खुशहाली जब तुठा प्रभ मेरा। एक पलक में मिटा पाप घनेरा॥

बन्ध ख़ुलासी जम भय चूका। मिला प्रीतम गई मन भूखा॥
तृपत भयो मृगतृष्ना नासी। एक भगत लियो चरन निवासी॥
मन में गावाँ सो पुरख दयाला। बिनसे ताप जिया भया निहाला॥
मन मन अन्दर भई खुशहाली। गुरपरताप मिटी करम की जाली॥
अद्भुत दर्शन घट जोत परगासी। मान सरोवर तट लयो निवासी॥
नीर छीर का निरनय पायो। भाओ भगत हर चरन समायो॥
जिसको सिमरे देव मुनी ज्ञानी। चार वेद जाँ की कथा बखानी॥
गुर परसाद सो सोभा घट पाई। दीनदयाल के रह्यो चरन समाई॥
पल पल ध्यावाँ नहीं विसराँ पल एका। एक प्रीत चित रमी विशेखा॥
माला प्रेम की एक सुरत फिरोये। मोती नाम प्रान लड़ी परोए॥
काक कुबुद्धि जड़ता सब नासी। हंसा भयो चुगे मोती अबनाशी॥
सतगुर दीनदयाल मिलाए। पारस परस अभयपद पाए॥
जुग जुग महमाँ जिसकी भरपूरे। सो प्रभ देखा घट माहीं हज़ूरे॥
दया दृष्टि दयाल ने कीनी। अमर भयो निज नाम तत्त चीनी॥

**दीनदयाल दया करी, दीनी भगत आपार।**
**'मंगत' लागा चरन में, तन मन भयो बलिहार॥ 874**

अमरत नाम केवल प्रभ तोरा। गुरमुख पीवे जाये काल निहोरा॥
जुग जुग महमाँ रही अधिकाई। जो जन सिमरे ले भाग वडयाई॥
नाम रूप ये जगत बिस्तारा। सकल कला में रमिया आप आपारा॥
बाज़ी झूट बाज़ीगर साचा। आप अलेप निरविघन समाता॥
काल का झोंका नहीं करे परवेसे। आवागवन नहीं वहाँ भरम संदेसे॥
आद अनील अनहद बानी। अगम अगोचर तोरी कथा सरानी॥
जिस जन अन्दर तेरी भगत समाई। तीन लोक तिसके बचन तराई॥
महाँपुरष सो ही बलवाना। सेव बन्दगी तुम भगत पछाना॥
जुग जुग लीला प्रभ अचरज धारी। एक से अनेक कियो आप विचारी॥
सरब जगत आप में धारा। अन्तर माहीं रहे सब सों न्यारा॥
अपनी माया से बहुरंग दिखाये। अपनी आप नित देखे प्रभताए॥

पारावार किसे नहीं पाया। जुग जुग माहीं जस तुमरा गाया॥
हूँ बलिहारी जाऊँ बलिहार। जो जन जीवे तुम दरस आधार॥
आलख लेखा तेरा प्रभ मेरे। जिसे लखावें तिस भाग वडेरे॥
तिसके चरनों की धूड़ लखाऊँ। जो प्रेम प्रीत से सिमरे तेरा नाऊँ॥
सकल जगत की मिट गई त्रासा। तुमरी भगत मन माहीं निवासा॥
ब्रह्मा विषन महेशर ध्याए। इन्द्र रवि चन्दर प्रीत कमाए॥
धरती अम्बर पावक पवना। तुमरी प्रीत में करें नित गवना॥
मुनी ज्ञानी तपस्या धारी। भये अतीत तुम लेख लखारी॥
पीर पैग़म्बर नबी रसूल। गावें तुझको बखशावें भूल॥
सबके ऊपर तेरी शक्त समाए। गरब प्रहारी तेरो नाम ध्याये॥
जिस जन तेरी ओट पछानी। जै जैकार भयो तीन जहानी॥
खल बुद्धी तेरी क्या करे वडयाई। अपने प्रताप माईं रह्यो आप समाई॥
दीन ग़रीबी दर तोरे भावे। भाओ भगत से सब ताप मिटावे॥

**मन तन अन्दर रीझियो, सच प्रीती करतार।**
**'मंगत' लेखा चुक जाए, मन जीवे दरस आधार॥ 875**

मन की मैल ना जब लग जाए। तब लग ठाकुर ना दरसाए॥
मन को साधन सिद्धता पूरी। मन को धोवन कठन मज़दूरी॥
मन को बाँधन कारज बहु भारा। मन को जीतन जग जीवन सारा॥
सकली दुर्मत मन माईं परोई। जनम मरन का कारज निज सोई॥
पूरन विद्या का पण्डत सोए। मन की सार लखे घट जोए॥
सो ही वैद पूरन का पूरा। मन की व्याधी मिटावे झूरा॥
सकल प्रस्तिश में पूरन तप सोई। मन में आये शान्त समोई॥
मन ही देव दानव बल सूरा। चार खानी मन रूप ज़हूरा॥
मन में पीर पैग़म्बर अवतारा। मन में ज्ञान विज्ञान आचारा॥
मन में योग बैराग सन्यासा। मन में धारें भेख उदासा॥
मन में गृहस्थी कुटुम्ब परवारी। मन में दाता भयो दातारी॥
मन में साकत निन्दक होए। मन में ज्ञानी गुन ज्ञान परोए॥
मन में कायर रन देख के भागे। मन में सूरा रन देख के जागे॥

मन में सतगुर करें उपदेश। मन में सिखया सिख करें परवेश॥
मन में राजा राज विचारी। नाना भांत की सम्पत धारी॥
मन में वापारी करे वापार। चार कुण्ट में भरमें अंध्यार॥
मन में भरोसा नाती सुत दारा। मन में सँचे द्रभ बहु भारा॥
मन में ज़ोर ज़ुलम कमावे। मन में ख़िमा ग़रीबी ध्यावे॥
मन में लेना देना विचार। इत उत मन की सकली कार॥
मन में विशे भोग का भुगता। मन में भयो रूप विरक्ता॥
मन में ज्ञानी ज्ञान विचारे। मन में मूरख पाखण्ड लखारे॥
मन में जीवन की आसा राखे। मन में काल की त्रास को भाखे॥
मन में जन्मे मन में मरे। मन में नाना रूप को धरे॥
मन में दुःखिया मन में सुख ध्याए। सकली भरमन मन रूप दिखाए॥

**सब जग मन का खेल है, कर अन्तर माईं विचार।**
**'मंगत' जब मन निश्चल हुआ, आपे रूप करतार॥ 876**

अनँक जतन करे गुनी ज्ञानी। ठौर नहीं पावे ये मन अज्ञानी॥
जप तप योग साधन किरया। मन को बाँधन की सब वितरया॥
कठन कठार वेग नित धारे। एक पलक में कई कोस पधारे॥
अतिअत चंचल रूप भयाना। जतन किए से पावे कल्याना॥
शान्त के कारन करे नित जतना। मिटे ना संशा आस कलपना॥
क्या राजा क्या ऊँच गुनवादी। मन की व्याधि सब धरे उपाधी॥
तृप्ती कारन बहु सम्पत धारी। मिले ना तृप्ती मन अधिक बिकारी॥
कूड़ी रचना छिन छिन विचारे। अगन तृष्ना में नित जले अंगारे॥
लाख उपाए करे दिन राती। मिले ना धीरज इस मन मधमाती॥
तीरथ फिरे बसे बीबान। भांत भांत करे पुन्न दान॥
वेद ग्रन्थ इतिहास विचारे। नेम धरम बहु भांत लखारे॥
कठन तपस्या धरे बानपरस्ती। मिले ना ठौर बिन सतगुर जुगती॥
अनँक तरंग ये मन नित धारे। वाँग भूत बहु खेल खिलारे॥
छिन धीर छिन भये अधीरा। अजब लीला मन धरे बेपीरा॥

जनम काल से मिरतक तक मीता। सकले जतन मन की सुखरीता॥
एह मन वैरी जम रूप पछानो। नित ही जीया तिस संग दु:ख ठानो॥
करो उपाए राख चित जतन। मन को बाँधे पावे प्रभ रतन॥
मारग ज्ञान से मन परतीते। मन बाँधे सो नर जग जीते॥
मन को जीते पाए सुख आपारा। जिसको कथें वेद आचारा॥
मन का डोलन काल की फाँसी। आवे जावे भरमे चौरासी॥
पूरन ज्ञानी सो ही तत्त बोधे। मन अपने को नित अन्तर सोधे॥
मन में घाले जो साची घाल। सो ही परसे पद दीनदयाल॥
मन अपने की जो दुबधा टारे। सो गुर साचा सब जग निस्तारे॥
मन की भरमन सरब दु:ख खानी। निहचल मनुआँ पाए अखण्ड सुख ज्ञानी॥

**संकट रूप मन कल्पना, सब जग भई तरास।**
**'मंगत' उभरे गुरमुख, जिस मन ज्ञान निवास॥ 877**

जो जन हर की कथा विचारे। मन को धोवे मिल ज्ञान अपारे॥
मुक्त सरूप तत्त परसे अबनासी। भय भरम मन सब संकट नासी॥
सो ही ज्ञानी सो ही देवन देवा। मन को बाँधे रखे हर चरनी सेवा॥
प्रभ का सिमरन जग सार उपाए। जाँ से ये मन शान्त समाए॥
सतनाम तत्त रूप अमोला। जो जन सिमरे पाए सुख अडोला॥
वेद ग्रन्थाँ में सार लखाई। मन को जीतन बड़ी प्रभताई॥
सो ही गोरख सो ही गोबिन्द सरूपा। जो मन बाँधे सो आप हर रूपा॥
सकल जतन का सुनो सार न्याये। सो गुर पूरा जो मन ठौर लगाए॥
ज्ञान ध्यान में नित संजुगता। हर को सिमरे तब भए मन मुक्ता॥
नित मलीन नित औगुन धारी। साची प्रीत से भयो निर्मल विचारी॥
मिल सतगुर पढ़ सबक न्यारा। जिससे जाई सब मन अन्धकारा॥
आठों पहर धरी बद-नीती। बिन गुर भेंट ना जाए पलीती॥
ताँ का दरस नहीं नैन निहारो। जिसका मन नहीं गुर प्रीत विचारो॥
सतगुर मिले गुरमुख तत्त सूझे। दुर्जन मन की अगन तब बूझे॥
सत सरूप गुरु परगट कर दिखलाए। तब ये मनुआँ सुख धाम समाए॥

एक परमेश्वर संग प्रेम उपजाया। तब यह मनुआँ ठौर में आया॥
हर के नाम में भयो विश्वासा। सकली भरमन मन की दुःख नासा॥
एक नाम की प्रीत जब पाई। तब इस मन की तृखा बिनसाई॥
अबनाशी पुरष घट अन्तर देखा। तब इस मन का मिट गया लेखा॥
साची भगत प्रभ की चितारे। जीते मनुआँ उतरे भव पारे॥
मूल ज्ञान सिद्धान्त सार। हर की भगत से होवे जैकार॥
नित नित साची जुगत कमाओ। चंचल मनुआँ पर लात चलाओ॥
मिथ्या आसा भरम त्याग। आज्ञा बूझ प्रभ चरनी लाग॥
करम बन्ध जाए संकट काल। निमख निमख जप दीनदयाल॥

**सिमरो साचे नाम को, मन ममता होवे नाश।**
**'मंगत' पावे परमगत, परसे तत्त अबनाश॥ 878**

सत विश्वास रखो मुनी ज्ञानी। सत मारग की करो पहचानी॥
झूट कपट छल में जीव डहकाए। करनी मलीन तीन काल दुःखदाए॥
सत खोज मन ले बिसराम। सिमरे प्रेम से पुरख सतनाम॥
मिथ्या नाम रूप विखादा। संकल्प विकल्प में अनमत लागा॥
सतनाम जब जुगत विचारी। होए एकागर सत धरम लखारी॥
पाप पुन्न पर पावे जीत। अकर्म सरूप संग लगी परीत॥
छिन छिन में जो उठ उठ धाए। नाना रचना छिन माहीं रचाए॥
अधिक कलेश जीव नित पाए। बिना सतज्ञान नित तिरखाए॥
साचा पुरख रूप निर्वानी। तिसको खोजे मिटे भरम की खानी॥
निर्मल बानी प्रभ की जब पीवे। अमरत खाए भयो तृपतीवे॥
सो वस्तू जो मन को देवे ठिकाना। सो ही सतसरूप भगवाना॥
कोई गुरमुख ज्ञानी कार कमाए। अपने मन की तृखा वँजाए॥
काम क्रोध अगन वड भारी। जल जल पवे जीव अंध्यारी॥
सार ना सूझे नित आवे जावे। आठ पहर दुःख शोक को पावे॥
छिन में ठाँडा छिन में तपताए। छिन में रोये छिन में हँसाए॥
दुर्मत रोग लगा वड भारी। नाम कमावे उतरे विस सारी॥

साचा मारग हर भगत पहचाना। नित नित परसो होवे कल्याना॥
झूट देही का मान मध त्याग। सतसरूप में उठ के जाग॥
एक नाम की मन राखो ओट। अनन प्रीत कर नाम रस घोट॥
ख़िमा ग़रीबी का बस्तर धार। तब ये मन होवे सचयार॥
सतसरूप संग पाए प्रीती। हरे विकार तजे भरम पलीती॥
बुद्ध अपनी को करे परगास। सच्चे नाम की रक्खे प्यास॥
नित नित अन्तर नाम प्रभ गाए। कारन कर्ता सो रूप ध्याये॥
अजरपुरष संग प्रीती लगाई। तब इस मन की भरमन जाई॥

**सत सरूप खोजन करे, मिल सतगुर उपदेश।**
**'मंगत' ये मन पावे शान्ती, बिनसें सकल कलेश॥ 879**

सब जग बिख ममता को भोगे। जनम मरन लागा दीरघ रोगे॥
कोट मद्धे कोई विवेक विचारी। साची भगत ले उतरे पारी॥
भवजल दुस्तर नहीं पारावार। तिसमें डूबे गुनी गुनकार॥
हँस हँसकर औध वंजायें। मरती बार को रोते जायें॥
पुरियाँ मण्डल देश खंड अनूपा। सब परपंच मन का सरूपा॥
सकल घालन सहज लेवे घाल। मन की घालन जग कठन कराल॥
कोई शूर होवे बलिदाना। रन जीते मुकत मैदाना॥
मोह ममता गढ़ कठन को तोड़े। दृढ़ विश्वास मन माहीं निचोड़े॥
काम क्रोध करे रन घाता। सील संतोख मन माहीं समाता॥
वैराग त्याग का शस्तर धारे। प्रेम की तोप भरम बुर्ज उडारे॥
अकथ कथा का आहार करीजे। भूक प्यास शत्रु रन छीजे॥
दीनता रस अमरत खाए। विज्ञान सरूप ले गढ़ वासा पाए॥
शबद सिंहासन पर आसन धारे। सम दर्शन का सिर छतर झुलारे॥
ज्ञान विज्ञान लश्कर संग लाए। दृढ़ पुरषारथ की परेट सिखाए॥
भई दोहाई जब नाम की गढ़ माईं। सकल शत्रु पर प्रभता तब पाईं॥
अखण्ड राज सुराज कमावे। मन को बाँधे निज धाम समावे॥
सूर बलवन्ता सब का सिरताजा। मन को जीते ले ज्ञान समाजा॥

पुरन पुरख संग मेल मिलाए। साचा जीवन तब मन में पाए॥
उट्ठत बैठत करे निगरानी। शबद ख़ज़ाना जो करी पहचानी॥
सत परतीत माया भ्रम तोड़ा। एक चित हरि चरन में जोड़ा॥
दुर्गन्ध मिट गई विखयों की रसना। साचा शबद सुगन्ध चित बसना॥
प्रेम पुँज तत्त नाम को जापा। सिमर सिमर गयो सब सन्तापा॥
बड़ी कमाई हर भगत ने कीनी। मार माया अमरपद चीनी॥
गुरमुख विरला ये कथा विचारे। दुर्जन मन पर जीत लखारे॥

**मन को छेदन जो करे, सो जन हर का रूप।**
**'मंगत' लाग रह्यो तिस चरनी, बिनस जाएँ भ्रम कूप॥880**

ग़फ़लत त्याग उठ समाँ विचार। दुर्लभ देह की सुन साची कार॥
खाना पीना और भोग विकारा। कारज पशू समान विचारा॥
मानुष देह की सुन सार वडयाई। परमारथ जो रसना चित आई॥
परमारथ को नित सोधत सोधे। तब ये मनुआँ परम गत बोधे॥
साच प्रीती सत्संग निवास। सत पुरषन के सुने इतिहास॥
सत करनी में मन आवे चाओ। बाँधे मनुआँ तत्त ज्ञान समाओ॥
छिन छिन जीवन समाँ विचारे। सत करनी में प्रीती धारे॥
सत सील संतोख चित राखे। खिमा दया मन अन्तर भाखे॥
सेव बन्दगी कार कमाए। पर-उपकारी मन जीवन पाए॥
तन मन धन से कीजो सेवा। भरम मिटे पावे प्रभ देवा॥
अगन सरीखा इस जग का ताओ। जीया जन्त सभी तपताओ॥
मिल सतगुर जिस सत कथा विचारी। सत परतीत ये अगन निवारी॥
मध ममता मन हरे बकारा। पूरे गुर का सुन बोल आपारा॥
चार दिनाँ का देखे जग जीना। साची भगत से करे पाप छीना॥
रुच रुच करके सेव कमाए। पर-दुःख हरना जतन मन माए॥
एक नाम मन माहीं परोये। जनम जनम के मैल को धोये॥
ज्यों ज्यों मैल इस मन की जावे। त्यों त्यों चानन प्रभ का दिखलावे॥
प्रभ की कला जब होई परतीत। तब ये मनुआँ भया ज्ञान संगीत॥

आठ पहर सत करनी सोचे। भाओ भगत मन अन्तर लोचे॥
सच करनी में मन उठ उठ धाए। बढ़े परताप सब कलह बिनसाए॥
भागवान सो पुरख विवेकी। साची भगत मन अन्तर लेखी॥
सच करनी से मन तृपताया। पूरन पुरख अबनाशी घर पाया॥
नित निमाना हो विचरे जग माईं। सकल जगत में सुख वरताईं॥
मान मोह संकट अत जाई। निर्मल प्रेम हर भगत कमाई॥

**सत सील संतोख, और परसे परउपकार।**
**'मंगत' एह धरम पहचान के, मन के हरे विकार॥881**

जिस जन धरम में आई परतीत। तिसका मन वरते सुखरीत॥
सो कुलवन्ता सो ही बुद्धिमाना। सच परतीत जिस धरम पहचाना॥
सकल विखाद की होई तब हानी। सत धरम में मुक्त पहचानी॥
एक आधार प्रभ चरनी पाया। आज्ञा तिस की रहे समाया॥
तन मन धन सब तिसकी दात। साचे ठाकर का सब ही परताप॥
एक बून्द से जिस कियो आकारा। बल बुद्धी मन तेज विचारा॥
जिसकी शकत में लीला धारें। तिसके चरनी नित नित पधारें॥
जो कुछ हूआ सो तिसकी वडयाई। आद अन्त मद्ध रिह्या समाई॥
तिसके चानन से जग परगासे। सिमरो ठाकर मन भूत विनासे॥
साचे ठाकर की जब पाई वडयाई। तब ये मनुआँ सुख रूप समाई॥
सतगुर मन्दरोई इक मन्तर दीना। तिसके तेज से मन दु:ख छीना॥
एह मन निहचल भया वाँग सुमेर। कस के बाँध संग प्रेम ज़ंजीर॥
सार कला परमेश्वर जग जानी। आठ पहर तिस सेव पहचानी॥
ज्यों ज्यों मन में आई सत प्रीती। प्याला प्रेम पी मन हरी पलीती॥
बादमुबाद निन्दा बिकार। हर की भगत से भयो बिख छार॥
अमरत नाम मन चुगे दिन राती। सकल विकार से भई ख़ुलासी॥
पूरन करनी भव का पन्ध चूका। सर्वज्ञ सरूप पाए अपार अनूपा॥
प्रभ का दर्शन तीन काल दरसावे। जो ये मन सत ठौर में आवे॥
पवन रहित ज्यों दीपक परगासे। विरत रहित मन रूप समासे॥

परसे रूप आनन्द आपारा। नित नित कथे प्रेम करतारा॥
भया मस्ताना सच नाम के रंग। पलक पलक सुने शबद परसंग॥
मन करे क्रीड़ा हर चरन समावे। भयो कदारथ प्रभ भगत लखावे॥
वाँग सागर मन भयो गम्भीर। अन्तरगत लागा प्रेम का तीर॥
घायल हुआ प्रभ चरन के संग। अमरत पीया नित भया निषंग॥

**प्रीती साचे नाम की, मन का हरे विकार।**
**'मंगत' हरजन नित जपे, उतरे भवनिध पार॥882**

निर्मल प्रेम जब हर चरन चित आया। निश्चल भयो हरी दुर्जन माया॥
नित नित प्रीती धरो प्रभ चरने। बिन हरि सिमरन नहीं पावें सुख निरने॥
एह मन झूट देख भरमाया। छिन छिन भरम में आवे जाया॥
जब सतसंग सत मारग सूझा। गयो बिकार हर प्रेम तत्त बूझा॥
एक मनसा सतनाम विचारे। उट्ठत बैठत एक सुरत निहारे॥
नाम बिना धृग जीवन विचार। बिख को भोगे होवे नित छार॥
एह संसार चक्कर राहट की घड़िया। एक जावे खाली इक आवे भरया॥
जन्मे मरे मर जनम में आवे। ये लीला ये मन वरतावे॥
आवन जावन देख हरजन भयो उदास। खोजा साचे नाम को मन की मिटी प्यास॥
परम धाम मुकन्द अबनाशी। तिसको खोजे होवे निरवासी॥
इच्छया चक्कर तब भरम विनासे। एक प्रीत रह्यो हर चरन निवासे॥
सोही थाओं सो ही मूल पहचान। साचा ठाकर जग जीवन जान॥
अन्तर वसया बाहर परगासे। सरब जीयाँ में करे बिलासे॥
तिसके परगास सब रचना देखे। तिसे विसार मत पड़ो भुलेखे॥
हाड मास का देवल साजा। तिसमें बसे आप ग़रीब निवाजा॥
जो जन तिसकी कीरत गावे। मुकत सरूप अभयपद पावे॥
जिस सुख को बाँछे मन मूढ़ा। सो सुख परसे होवे चरनी धूड़ा॥
बिमल ज्ञान सारंगबानी। गुरमुख खोजे सत तत्त निर्वानी॥
नित नित मन को आंकुस मारे। साचे मारग में प्रीत विचारे॥
मरन काल से प्रथमे मर जीवे। अमरकथा सो गुरमुख पीवे॥

अमरत खाये मन होये निहाल। सब जगत में देखा एको रछपाल॥
गई पलीती करी हक़ पहचानी। एक नूर की विरध लखानी॥
सत को खोजे सतरूप समाए। आनन्द रूप ये मन हो जाए॥
जाँ से बिछड़ा ताँही मेल मिलाया। पूरन आशा सब भरम मिटाया॥
निमख निमख में नाम रस पीवे। एक प्रीत में जीवन जीवे॥

**आशा दीरघ रोग है, जो मन को नित भरमाए।**
**'मंगत' ज्ञान परतीत से, मन निश्चल रह्यो समाए॥883**

इस जग में ये जुगत विचारी। भगत पाए मन होवे निस्तारी॥
साची भगत प्रेम रस खाए। मन का डोलन सब बिनसाए॥
विषे भोग मन अगन बढ़ावें। ज्यों पावक घृत मिल कई गुना बल पावें॥
जल जल मरे भोग की अगनी। मृग तृष्ना माया मोह लियो ठगनी॥
छिनभंगुर ये इन्द्री भोग। हरख शोक केवल मन संजोग॥
थिर वस्तु संग जब प्रीत विचारी। तब ये मनुआँ निहचल विरत धारी॥
सत पदारथ इक रूप अनूपा। तिसको परसे कोई गुरमुख भूपा॥
चेतन कला जो देह को परगासे। आतम तत्त सो रूप अबनासे॥
तिसको खोजे मन होए निर्वानी। शान्त सरूप घर कला पहचानी॥
घर में नीर नीर में कँवल बराजे। सतगुर मिले परसे सत साजे॥
सतगुर जुगती कँवल परगासे। अमरपुरष घर देख बिलासे॥
इन्द्री भोग से मन उपरस होवे। अन्तरगत हर के चरन चित जोवे॥
शबद सरूप अमरत खानी। मिल सतगुर घर करी पहचानी॥
नित आनन्द रूप अलेपा। तिसे पछाने जाए भरम विखेपा॥
उनमुन घाटी में नाद जब बोले। प्रेम परगास मन भया अडोले॥
आप विसारे देखे हर रूप। सो गुरमुख हरे काल का कूप॥
आठ पहर रस अमरत पीवे। तब ये मन दुःख रहित लखीवे॥
अद्भुत परगास घर में देखे। जनम जनम के सब मिटे भुलेखे॥
सो ही ज्ञानी सो ही पंडत तत्तवादी। अन्तरगत में इक शबद प्रभ साधी॥
महाँ ज्ञान येही जान विचार। आतम पूजे होवे निस्तार॥

अनंक संशे ये जीव नित धारे। ज्ञान अगन से होए सब छारे॥
गवन मिटे मन एक समाए। नीर का कुम्भ ज्यों नीर मिलाए॥
मन वस होया तब ही गुनी मीता। अजर पुरष का जब दर्शन लीता॥
दरस परस से मन होया निहाल। भरमन मिट गई रूप जम काल॥

**जितनी मन की भरमना, ये ही काल सरूप।**
**'मंगत' मन निश्चल भया, हरया काल का कूप॥884**

परकिरत का बाँधा नित भटकाए। करम का संशय नित भरमाए॥
पाँच पच्चीस का पसरयो पसारा। तिस में जीव नित संकट धारा॥
अपने अपने सब रस के स्वादी। उठ उठ धावें बहुरंग अपराधी॥
शत्रु एक सो भी दुःखदाई। एते शत्रु पाए कहाँ सुख वरताई॥
संकट अद्भुत में जीव भरमाया। भोग भोगे पर नित तिरखाया॥
अगन तृष्ना अधिक अधिकाई। जितनी सम्पत जो घर में पाई॥
इन्द्री भोग में जीव जड़ हूआ। तृप्त ना पावे चित पच पच मूआ॥
देहधारी जो जीव जग आया। सब ही भरम की अगन जलाया॥
क्या देव क्या दानव बलवाना। सब ही मोहे माया भगवाना॥
छूट ना सकें ना परसें सुखरासी। करम के बाँधे नित फिरें चौरासी॥
'हौंमैं' ममता नहीं जाए बिकारा। जल जल पवे सकल संसारा॥
जो देखा सो ही तृखावन्त। गुनी ज्ञानी क्या राजा रंक॥
जो वस्तु करम संग संजुगती। छिनभंगुर सो जान सतमती॥
छिन भंगुर संग हेत लगाया। जब ओह बिनसे तब पछताया॥
आस तृष्ना इक रमे बिकारा। ऐसे क्लेश में विचरे संसारा॥
बन्धी ना छूटे ना मुकत दर भाखे। संशे धार बहु रूप को लाखे॥
गुन अभिमानी जीव भया बौरा। काल करम का लागा वड झौरा॥
पंडत वेद का भया अभमानी। तपस्वी तप की करे वडानी॥
सूरा अपनी लखे चतुराई। बल तेज की बहु करे वडयाई॥
दाता दान का मान मन राखे। धनवादी धन मध चाखे॥
जो जो गुन जिस जीव में आए। करे अभिमान ना छूटन पाए॥

सत मारग इक सन्ताँ दिखलाया। बन्धन गई मुकत घर पाया॥
सरब निरंतर आनन्दकन्द स्वामी। निराकार निहकरम बिसरामी॥
इच्छया दोख नहीं द्वन्द बकारा। तिसको परसे पावे छुटकारा॥

**सतगुर साध मिलाया, लियो निरनय तत्त ज्ञान।**
**'मंगत' शबद अगम का, कियो हिरदे माहीं पछान॥885**

शबद पछाने जीव बन्ध नासे। निष्काम करम सतरूप बिलासे॥
शबद पछाने मन प्रभता पाए। शम दम कीजे मन सहज सुभाए॥
शबद पछाने जीया उपरस होवे। भरम चक्कर सहज में खोवे॥
शबद पछाने मन होवे सन्यासी। आस त्याग नित रमे निरवासी॥
शबद पछाने तत्त त्याग लखावे। करम फल इच्छया ममता सब जावे॥
शबद पछाने मिरतक भय नासे। अजरसरूप मिले अबनासे॥
शबद पछाने करम बन्ध छूटे। निराधार तत्त उपरस रस लूटे॥
शबद पछाने जाए देह अभिमान। छिनभंगुर नित करी पछान॥
शबद पछाने जाए दुर्मत रोग। सर्वज्ञ ठाकर संग भयो संजोग॥
शबद सरूप की अतुल वडयाई। भाँत भाँत उस्तत वेद में गाई॥
ब्रह्मसरूप शबद निर्वानी। तिसको खोजे जाए भरम की खानी॥
मानुष देही होवे परवान। साची कला परसे भगवान॥
निर्मल रूप नित गुना अतीत। तिस के चरन जाए लगे परीत॥
सतगुर साचा किस मुख सलाहिए। गुपत भेद परगट घर पाईये॥
दया निधान पर-उपकारी। सतगुर मिलया सब संकट टारी॥
परमपुरष का मारग दिखलाए। साची करनी में धीर बँधाए॥
सत असत का निरना कर दीना। सतसरूप नित दृढ़ कर चीना॥
सकल विखाद परकिरत का नाशा। चेतन पुरष मिलया अबनाशा॥
पूरन मिल के मन पूरन होया। पूरन करनी मन माहीं परोया॥
शबद अबनाशी घट करी परीख्या। पूरे सतगुर से पाई ये दीखया॥
एक पलक मन शबद रस पीवे। परमशान्त सरूप लखीवे॥
साचा शबद घट अन्तर जाने। मारग मुक्त तब ये मन पहचाने॥

मुकत सरूप प्रभ आप बिस्मादी। निसदिन लोचे मन तजे उपाधी॥
साचा ठाकर जिस मन नहीं रिझाया। भरम का बाँधा तीन काल भरमाया॥

**करम भरम सब छूट गये, पाया शबद परसाद।**
**'मंगत' छिन छिन चेतया, हरया मन परमाद॥886**

## दूसरी किरन - अन्तरगत सार शबद

ऐसी जुगत पछाने जोई। सो नर जीवनमुक्ता होई॥
अगम निगम देस अनूपा। विचरे शबद वहाँ आलख सरूपा॥
नहीं सूर नहीं चन्द्र वहाँ बिलासे। बिन बाती तेल दीपक परगासे॥
शिव तेल संतोख की बाती। दीपक जले अखण्ड दिन राती॥
पाँच आरती मंगल कीना। अद्भुत दर्शन जोत का लीना॥
उरधगती पच्छम को जावे। पच्छम से फिर पूरब आवे॥
मानसरोवर चीने घाट। अद्भुत दर्शन दीनानाथ॥
धरती पलट आकास चढ़ाए। जीव जन्त सब ही डराए॥
सूखे सरवर उमढे नीर। हंस आन के बैठे तीर॥
उपजा पेड़ बिन मूल पात और डारा। बिना बंसत फूले फलवाड़ा॥
बिना फूल के फल वाँ को आए। एह विचित्र कथा कोई गुरमुख अर्थाए॥
रवी शशी का कीजे इक मेला। अचरज कौतक देख अलबेला॥
निरगुन आवे सरगुन जाये। दोनों मेल परम सुख पाए॥
निरगुन खाए सरगुन की रचना। सरगुन मरे धार कलपना॥
अगम देस से नारी आई। निरगुन सरगुन का पान कराई॥
दोनो खाए फिर चली आकासे। उलटा मारग पावे गुर दासे॥
बेमुख बिना सरीर वोह नारी। संत-जनाँ ने तिसकी जुगत विचारी॥
बिना मुख बोले कथा आपार। बिना नैन देखे संसार॥
बिन चरन के पन्ध पधारे। सर्वज्ञ हो सर्वज्ञ संचारे॥
सबके अन्तर सो रही समाए। पर तिसका कोई भेद ना पाए॥
बिना सरीर धारे पिंड और ब्रह्मण्ड। बिना कारन होवे परचंड॥
सतगुर जुगती मन ग्रह नासा। रोम रोम में देखा परगासा॥
बिना भोजन के नित तृपताया। बिना मुख के जब जग को खाया॥

ये अगोचर ज्ञान कोई गुरमुख पाई। निर आधार तत्त रूप समाई॥

**उलटा मारग ज्ञान का, सन्तो करो विचार।**
**'मंगत' देख के हंसया, जब कीटी खा गई पहाड़॥887**

सो अबधूता सरब सिरताजा। बिना शरीर सुने नित बाजा॥
इकादस द्वादस का बन्धी कीना। चौदस परगास चन्दर घर लीना॥
द्वादस आये खोड़स जाये। समकर खेले खेल अगाहे॥
उत्तर दक्खन सुरती बन्ध राखे। पच्छम देश में अमीरस चाखे॥
पवन मधानी दधि मथे आपारा। रोल बरोल माखन काढ डारा॥
बिन जिभ्या बिन दन्ताँ के खाए। बड़वा अगन गई नीर समाए॥
उधर दीप मद्ध आसन धारी। उलटी धरती कथा विचारी॥
धरती फोड़ी हंसा उपजाया। नीर छीर का निरनय पाया॥
नीर को त्यागे छीर को खाए। गुर का पूत कथा अर्थाए॥
बिना रबाब के बजे पखावज। बहरा सुने तत्त भेद लखावज॥
उल्टी गंगा जमना उल्टाए। उल्टी सुरसती ब्रह्म घाट में आए॥
सूरज चन्दर दोनों को बाँधे। महाबली गढ़ अन्तर साँधे॥
पाँच पच्चीसी कीजे आहारा। तीनों मार धरनी पर डारा॥
बिख को खाए अमरत प्रगटाए। विरला गुरमुख उलट भेद को पाए॥
बिना शरीर इक पुरख को पेखे। बिना नैन के सब कुछ देखे॥
बिना आहार के नित बलधारी। बिना बोले सब कथा विचारी॥
विखमी संधी भ्रमगढ़ तोड़ा। एक दृष्ट चलायो घोड़ा॥
मन तरंग पर करे असवारी। सतगुर पूजे सब काज सँवारी॥
चौरासी सिद्ध नौ नाथ ध्याये। कथा अवधूत कोई विरला पाये॥
इरध गृह चन्द उरध ग्रह सूर। गुरमुख जुगती उपजे घट तूर॥
बिन जननी के पूत इक जाया। रलमिल सन्ताँ मंगल गाया॥
समाँ काल नहीं रुत पख मासा। रास ग्रह नहीं नखत्तर बिलासा॥
बिना शरीर वोह बालक देखा। संत-जनाँ ने लिखया तिस लेखा॥
घर में बालक नाच नचाए। निरत लखे अमरपद पाए॥

**अद्भुत लीला घट रची, खेडन बालक आए।**
**'मंगत' कहे समझाए के, कोई विरला अर्थ लगाए॥888**

अगम देस का सुन परवाना। हंसा बूझे होए निर्वाना॥
शिंघ शिकारी रमे बीबाने। शिंघ को मार रन जीते घमसाने॥
जब शिंघ को शिकारी मारे। फूल पड़े फुलवाड़ी अपारे॥
अगन लागी दरया में भारी। सरब जीव भए भयकारी॥
अगन बुझावे अमरत वरखावे। उलट भेद को विरला अर्थावे॥
अमरत चोवे बूँद बूँद घर मीता। उल्ट कुआँ घट करी परीखया॥
जने बिना जननी पूत खिलावे। सार अमरत की पान करावे॥
गुपत बाहिर भयो परगासा। देख के बालक करें देव अरदासा॥
नीर बलोड़े जग तिरखावे। बिना दूध के नहीं माखन पावे॥
सतगुर मिले छीर घट पेखा। साची जुगत करे मिथन विशेखा॥
माखन काढ सन्ताँ ने खायो। छाछ तीन लोक वरतायो॥
अमरत बेली घर बेलाई। पात डार बिन रही समाई॥
तीन भवन में बेली फुलवावे। अधिक सुगन्ध बिन नासका के आवे॥
जो सूँघे सो ही मर जाए। मिरतक हो के कथा लखाए॥
अबगत कथा मुर्दा वोह बोले। मरने का सुख बहु भेद से खोले॥
अटपट औखद घाट परेरे। जीवत मूआ वहाँ करे बसेरे॥
ऐसी रचना जो रचनावे। ताँ को देख काल भय पावे॥
मिरतक जीया सार जो बखाने। तीन लोक में सो सुख उपजाने॥
जड़ मूल बिन बेली तत्त बूझे। करे ठिकाने तिस ऊपर सुख सूझे॥
राग रागनियाँ बजावे रबाब। अकथ कथा कथे अन्तर हिसाब॥
मात पिता बिन देखे आपको जाया। बिना भोजन के नित भोग कराया॥
बिन शत्रु के संग्राम को मारे। बिन शस्तर के शूर बल धारे॥
अचरज रूप शत्रू करे रन घाता। जाँ को रक्त पिंड नहीं मासा॥
जुग जुग बेली फूले भरपूरे। भेद को बूझे सब मिटें वसूरे॥

**आलख बेला परगट होई, बिन मुख करे पुकार।**
**'मंगत' कहे सो सिद्ध है, जो ये बाँछे सार॥889**

तीन भवन में भौर गुंजारी। जो जन लखे सो उतरे पारी॥
तीन गुन रहत भयो निहकामा। अन्तर गरजे शबद सतनामा॥
ब्रह्मा विषन महेश पुजारी। करें आरती अखण्ड अपारी॥
इन तीनों का एको उपदेशा। भूल के ना मन लयो भुलेखा॥
तीनों जागे सत भेद को पाए। अकथ कथा नित ही कथियाए॥
भरमन जाए मिटे अंधकारा। एह घर आवे होवे सचयारा॥
बिना नैन के मोती परोवे। बिना हाथ के सौ माल फरोवे॥
बिना मुख के करे नित जापा। बिनसे कलह बड़े परतापा॥
बिना कँवल भयो भौर मस्ताना। अबगत कौतुक लखयो निर्वाना॥
दामन दमके मेघ घर बोले। हाट पटन के घाट को खोले॥
निरगुन सरगुन पर करे असवारी। खुले भेद सब संकट टारी॥
आलख जोत निरंजन धाम। सतगुर परसे मन रख निष्काम॥
बिन जीब्भा के अखण्ड रस भोगे। अमरत खाए भयो अरोगे॥
नाहीं सृष्टी नाहीं सरजनहारा। पूरन सन्त जाँ करे पुकारा॥
पवन पावक नहीं धरती मेला। जाँ में लखया पुरख अलबेला॥
बिना सीस के हंसा वाँ देखे। नीर छीर को नित करें परीखे॥
मानसरोवर घाट के वासी। नाम परतीत चित चरन निवासी॥
माया पाखण्ड तब उठ भागी। निरदेह पुरष की रसना जब चित लागी॥
पवन तुंरग पर नित रहे असवारा। चन्द सूरज को फाड़ के डारा॥
करे अश्वमेध होवे कल्याना। ब्रह्ममुख आहूती घट करी पहचाना॥
ज्ञेयी ज्ञाता किवाड़ को खोले। सार प्रान के तत्त को तोले॥
निरदेह पुरख आतम तत्त बूझे। जनम जनम का संकट भूझे॥
बिना सीस ओह करे अरदास। दरसे पुरष प्रान निर्वास॥
जुगत जतन पायो पूरन रीती। गुपत भेद तब कियो परीखी॥

**अमरत कथा बखानी, ज्ञान ध्यान तत्त सार।**
**'मंगत' परसे जो गुनी, सो सतगुर बलिहार॥890**

ऐसी जुगत पछाने जोई। साच जोगिन्दर कहलावे सोई॥
मूल द्वार में बन्ध लगाना। आसन सहज जुगत से लाना॥
उलट अपान प्रान में लेवे। सतगुर मेल जुगत सत सेवे॥
परम जतन नित्यानित राखे। उल्ट बुद्धी घर अमरत चाखे॥
छिन छिन पवन का सोधन कीजे। विखमी सिन्ध खुले अमीरस पीजे॥
भौरा लुगध्या शबद के माहीं। उरध कँवल परगास लखाईं॥
अष्टदल कँवल को छीना। उलट पलट पवन को दीना॥
सुरत इकागर पाताल समाई। उलट पवन घर गरजत रहाई॥
सूक्षम सुर धुन नाद गुंजारे। उदर दीप में खेल अपारे॥
आसा मनसा से भयो विरक्ता। सतगुर जुगती जोग संजुगता॥
दृढ़ विश्वास पवन को सोधा। खटचकरन से भया निरोधा॥
उलट नाद तरबैनी बोले। चौथी सुन्न कोई गुरमुख खोले॥
धन्न योगी जिस योग लखाया। झुनतकार अनहद घर पाया॥
छिन छिन नाद बोले तिरनाली। दमके दामन अजब रवाली॥
गरजे मेघ ब्रह्मण्ड को फोड़े। सतसरूप चित चरनी जोड़े॥
आलख रूप का लेख लखाया। निराकार का दर्शन पाया॥
पंच शबद धुनकार बजावे। धन्न योगी जो जुगत लखावे॥
ईड़ा पिंगला मथ कर लीजे। सुखमना माहीं पवन भरीजे॥
उल्टे नेत्तर धरे ध्यान। धन्न योगी जुगता परवान॥
पवन का मिथना खोले किवाड़ा। उल्टी नागन शबद विचारा॥
स्वास सुरत इक तार परोई। शबद कला तब परगट होई॥
शून्यंगकार नाद निर्वाना। बन्धी छूटे सुन मुकत निधाना॥
परगट शबद भरम जलाए। छाया माया सब कलह वँजाए॥
रोम रोम में रारंगकारा। उठ जोगी घर सुन पुकारा॥

**शबद खोज ब्रह्मा थके, सुर नर मुनी और देव।**
**'मंगत' शबद पछाने सोई, ले सच जुगती गुरदेव॥ 891**

पूरन पुरख सोई गुर मेरा। जो इस पद का करे नबेड़ा॥

पेड़ इक बिन मूल के ठाड़ा। बिना बसन्त फूल फल धारा॥
तीन डार में पेड़ वोह फूटा। शाखां पत्तर फल फूल अनूपा॥
मद्ध के डार फल बहु भाँत लगाए। गिन गिन थके ना गिन्ती आए॥
अजब तरंग उपजे नीरा। देखत ही चढ़ गई समेरा॥
फिरे फरावे होवे लवलीना। उल्ट भेद कोई गुरमुख चीना॥
शून्यंगकार गगन में बोले। होए गूंगा अमरत रस तोले॥
नैनहीन होए देखे परगासा। पिंगल पुरख चढ़ गयो आकासा॥
रवी शशी दोहे बगल दबाई। सत सागर इक घूँट कराई॥
कागज़ तुल धरनी कियो, तिल परमान समेरा।
चार उंगल कियो आकासा, गुरमुख खेल खलेरा॥
पलक पलक परकरमा करे। कोट ब्रह्मण्ड की सोझी पड़े॥
सूखे सागर उठे हलोल। बिन चन्द चकवा करे कलोल॥
सतगुर मिले आप को खाया। अन्तरगत में हंसा उपजाया॥
नीर छीर का करे निबेड़ा। अगम देस में करे वोह डेरा॥
दुर्मत बिख नागन का जाए। सार भेद जब लेख लखाए॥
प्रथमे मरे फिर उठ के जीवे। बिन जिभ्या रस पान करीवे॥
पिण्ड ब्रह्मण्ड का तोल तुलावे। बिना तराज़ू लेख लखावे॥
चार दिसा का बन्धी कीना। अद्भुत दर्शन घर में लीना॥
उल्टा बरिच्छ अँगूरी आया। निराकार का फल उपजाया॥
उरध गृह माली करे निगरानी। जतन जतन फल खावत ज्ञानी॥
उठ के हंसा आकास पुकारे। तिस का शबद ब्रह्मण्ड को फाड़े॥
नाद बिन्द लखे जोग सन्यासा। परगट पुरख करे वहाँ बिलासा॥
कारन कर्ता तिसका ना कोए। भेद को बूझे भरम जग खोए॥
गोरख दत्त मच्छन्दर आद। कथ कथ थाके कथा योग बिस्माद॥

**उल्टा भेद पहचान के, शिव चित भया उदास।**
**'मंगत' मारग उलट में, होए भरम दुःख नास॥ 892**

संतन के घर मंगल होया। भाग वडयाई इक रूप लखोया॥
ना जननी ने उसको जाया। बिना देही एक बालक आया॥

रूप वरन तिसका अत न्यारा। लिख लिख थाके गुनी वेद आपारा॥
रूप माहीं वोह अरूप समावे। अगन माहीं नित शान्त रहावे॥
पाताल में चरन सीस आकासा। नित ही रम्मयो बिन रक्त और मासा॥
बिना मुख के वोह बानी उच्चारे। गुपत परगट भेद विचारे॥
जाँ जाँ देखूँ सो रह्या समाई। अधिक पसारा अधिक प्रभताई॥
बिना साँस के वोह नित जीवे। सबको खावे आप चिरंजीवे॥
नित परगट नित परापत रह्या। अजब क्रीड़ा तिस बालक ने कीया॥
जाँ जाँ परसूं सो ही पसारे। बिना नैन के तीन लोक निहारे॥
सरब का ज्ञाता वोह बालक हूआ। तिसे पछाने जो जीवत मूआ॥
नौ द्वार का गढ़ एह साजा। अनँक भाँत विच रचा समाजा॥
एक राजा पंच दूत को धारे। नार पचीसी संग करे ब्योहारे॥
छाया भरम का करे नित लेखा। लिख लिख धरे नित पड़े भुलेखा॥
चार कुण्ट में तिसकी प्रभताई। त्रास त्रास भई जगत दोहाई॥
सब कुछ भोगे रहे नित भूखा। दृष्ट अदृष्ट रसे रस सूखा॥
बिना संघासन और छत्र के मीता। अधिक बलकार भूप वोह देखा॥
ना कोई मार सके ना मरने आवे। अनंक जतन गुनी मुनी लखावे॥
सकल जीयाँ पर तिसका जाल पसारा। भेद पाखण्ड का नित हुकम चलारा॥
तिसको मारन बहु शूर उठ धाए। शस्तर मारे पर घात ना पाए॥
लड़ लड़ थके शूर बलवाना। बाल बीका ना रंचक होई तिस हाना॥
थरहर कम्पे मुनी देव ज्ञानी। किस भाँत होए दुष्ट भूप की हानी॥
उपजा शूर अधिक बलकारी। बिरह वैराग जप तप शस्तरधारी॥
सो ही बालक नाम शूर धरायो। मारे संग्राम सो भूप भगायो॥

**बालक भेद पछाने सोई, जो सतगुर खोजे आपार।**
**'मंगत' जीते भ्रम भूप को, होवे जय-जयकार॥ 893**

ऐसी जुगत करो विचार। छूटे बन्धन मिले सुख सार॥
सतगुर मिले भेद लखाया। अभय जागीरी का निरनय पाया॥
गढ़ देही की खोजन पाई। अजर पुरष की कथा लखाई॥

धर विश्वास शूर उठ धाया। मुकत मैदान में डेरा लगाया॥
सील संतोख का बान चलावे। काम क्रोध पर घात लगावे॥
ज्ञान का बान मारे बलधारी। ममता माई का सीस उतारी॥
बिरह विवेक का बकतर धारी। पावे ना घात नित होवे जयकारी॥
जप तप संजम जुगत विचारे। भोग विषे लश्कर को मारे॥
मार संग्राम सुराज को पाया। अखण्ड सरूप जीवन को ध्याया॥
मन पवन की धार पहचाने। मारे शत्रु करे अमरत पाने॥
छिन छिन घायल होवे गुनिया। मर के जीवे जीते भ्रम दुनिया॥
पवन मित्तर पवन सहेली। पवन तोले ले जुगत विषेली॥
पवन पछाने प्रन को राखे। पवन को खाए अभयपद चाखे॥
पवन संजुगता सो रनजीत। जीते भरम इस काची भीत॥
अन्तर बाहर पवन समाजा। पवन पछाने जोगिन्दर राजा॥
अजीत पवन को जीते जोई। भयो अजीत सब भ्रमता खोई॥
चार वेद की संथा बूझे। अन्तरयुक्त पवन तत्त सूझे॥
अद्भुत परगास पवन से पेखे। अजब सरूप घट अन्तर देखे॥
पवन विशाल लखे जो भेदा। सार पाए तब सिमरत वेदा॥
मुकत मैदान गढ़ पवन विचारे। होवे अजीत सब शत्रुन को मारे॥
ब्रह्म सरूपनी ये पवन विचार। ज्ञान ध्यान का पूरन भण्डार॥
पवन सहारे देह सरजीवे। जुगत पछाने नहीं काल दरसीवे॥
सो ही ज्ञानी गुनी अवतारा। विचरत पवन का करे विचारा॥
पवन सँभाले ले गुर की ओट। मारे शत्रु धर चोट पर चोट॥

**अमरत कथा बखान करी, जो खोजे पावे जीत।**
**'मंगत' ये तत्त सार है, पद निर्वान पुनीत॥ 894**

ऐसा ज्ञान विचारे जोई। जीवन मुकत कहावे सोई॥
सत विचार करे गुर की संगत। हरे भरम होवें संशे खण्डत॥
सत असत का निरनय पावे। सत को खोज तिरखा मिटावे॥
बिन रसना के अमीरस खाये। साचा नाम मन माईं ध्याये॥

मन पवन की जुगता बूझे। मिथना करे ज्ञान तत्त सूझे॥
आतम महल के खुले किवाड़ा। तन मन प्रान करें विचारा॥
तन से सूक्षम इन्द्री विकारा। इन्द्री परे मन का बिसतारा॥
मन के परे बुद्ध ठहराई। बुद्ध के परे रतन सुखदाई॥
जब लग बुद्धी विखयों की भुगता। जनमे मरे ना परसे मुकता॥
अनुभव ज्ञान जब योग लखाया। गुरमुख मनुआँ जाए पवन समाया॥
मन पवन भयो इक रूपा। परगट अनुभव शबद सरूपा॥
प्रान तत्त में सुरती राखे। मिल सतगुर सत जुगत को लाखे॥
होवे निहचल मनुआँ तजे चतुराई। तीन लोक की सम्पत घर पाई॥
शबद पछाने सुन्न लावे ताली। सुन्न समाध हरे करम की जाली॥
उल्टी पवन का आहार करीजे। भूक प्यास निद्रा सब छीजे॥
तीन गुन माया पर पावे जीत। पंजकोश से होवे अतीत॥
सुक्षम कारन जाए माया बिकारा। अस्थूल भरम का मिटे गुबारा॥
शबद सार जीवन को पाए। सतगुर मारग इयों दिखलाए॥
गुर का पूत लखे ये भेदा। अन्तर पवन कँवल को छेदा॥
मन पवन कठन कठार। तिसको जीते पाए शबद आपार॥
जो कर पवन की जुगत नहीं जानी। पच पच मरे क्यों अज्ञानी॥
मिल पूरन गुर को तत्त लखाओ। अजर पुरष का दर्शन घर पाओ॥
पवन सुरत का एका कीजो। सार ज्ञान भेद को लीजो॥
मुकत महाँसुख परसे सार। साची जुगत करे निस्तार॥

**स्वास सुरत एका भया, मनसा भई लवलीन।**
**'मंगत' शबद परगासया, कोट भान छबी चीन॥ 895**

सो सन्यासी सन्यास पहचानी। सुन्न कन्दरा में करे ठिकानी॥
सकल परकिरत पर पावे त्याग। निहकर्म सरूप आतम संग लाग॥
मूल भगती करे नाम आहारा। सरब अतीत घट रूप विचारा॥
शुद्ध विवेक की भसम रमाई। खिमा ग़रीबी का चोला गल पाई॥
सत विश्वास का आसन धारे। गुपत सरूप की जुगत विचारे॥

जत का लंगोट मन को दीना। विखे त्याग का भोजन कीना॥
सत पुरषारथ की मात्रा धारी। अबधूत सरूप घर कथा विचारी॥
प्रेम की रसना कण्ठी गल धारी। बैराग का कासा हथ लयो अपारी॥
तृष्ना तामस दोहू त्यागे। सो सन्यासी सन्यास में जागे॥
काम क्रोध बिखया को त्यागे। सत सील सिमरत में जागे॥
सरब जगत को भरम रूप पछाने। सतसरूप एको प्रभ जाने॥
छिन छिन मान का सीस उतारे। अकल्पत विरत सतसरूप चितारे॥
संग त्याग मन निहसंग होई। अमरपुरष संग सुरत परोई॥
उलटी सुरत खोले गगन का ताला। जुग जुग जीवे सो सन्यासी बाला॥
नौ द्वार में सुरती को ठाका। चंचल मन का बाँधा नाका॥
सत परतीत गुर जुगत विचारी। सो सन्यासी तिस चरने बलिहारी॥
लज्यापत की जटा सिर राखे। पर-उपकार भोजन नित चाखे॥
खेम कुशल परसे तत्त ज्ञाना। सो सन्यासी गुरु करे जग कल्याना॥
देह के भेख से मन विरक्ता। आतम ज्ञान को नित नित भुगता॥
करम काल की धूनी जलायो। अखण्ड ध्यान तत्त रूप लखायो॥
पवन खड़ाऊँ पर करे असवारी। सत अनुराग सिर सेली धारी॥
शम दम का हथ खण्डा लीना। सतगुर मेल सन्यास पद चीना॥
जीवन मिरतक जीवन को पाया। तत्त सन्यास का भेद लखाया॥
ग्रहन त्याग से मन निर्वान। अमर सन्यास भेद को जान॥
अन्तरमुख रहे समाई। सतपद ज्ञान जोत दरसाई॥

**आसा मनसा जब मिटी, मन ब्रह्म तत्त में भयो लीन।**
**'मंगत' कहे समझाए के, सो ही पद सन्यास सत चीन॥ 896**

सो बैरागी बैराग में पूरा। हरखमान का जिस कियो सिर चूरा॥
निर्मान भाओ चित करे निवासा। कर्म फल की तजे नित मन से आसा॥
प्रभ की आज्ञा छिन छिन चितारे। सुख दुःख सम कर विचारे॥
कूड़ देही संग करे त्याग। अबगत नाम में रहे चित लाग॥
बिरह विवेक की जुगत विचारी। सत अनुराग अन्तर चित धारी॥

काम क्रोध बिख ममता त्याग। सत बैरागी सो लेवे बैराग॥
मोह माया से रहे विरक्ता। सतनाम अन्तर संजुगता॥
मरनकाल छिन छिन विचारे। उपरस जीवन मन अन्तर धारे॥
झूट भोग इन्द्री विकारा। तिन को तजे करे वैराग विचारा॥
अगन तपे कभी शीत निहारे। कभी तृप्त होवे कभी भूख विचारे॥
मन की कलपना करे निरोध। साचा हुकम हिरदे में सोध॥
दीन ग़रीबी आसन पर बैठे। सील संतोख अन्तर चित गाँठे॥
झूट जीवन की आसा त्याग। सो बैरागी परसे रूप बैराग॥
ज्ञान ध्यान की अगनी तापे। खेम कुशल पद निर्मल चाखे॥
आतम तत्त में एकता धारी। मिटे विकार इस देह दुःखकारी॥
छिन छिन नाम प्रभ का चितारे। रस रसना का मूल उखाड़े॥
साचे नाम में दृढ़ रखे परतीत। सो बैरागी ले ज्ञान पुनीत॥
छिनभंगुर मन रचना त्यागे। सतसरूप में रह्यो लिव लागे॥
इन्द्री विकार से होवे विरक्ता। सो बैरागी तत्त ज्ञान संजुगता॥
अमरत जीवन बैरागी भाखे। अमरपुरष की रसना चाखे॥
अन्तर के पट जुगत से खोले। शबद को पीवे मन भया अडोले॥
सब सिद्धों की सार सुन मीता। आतम ज्ञान तत्त लखे पुनीता॥
सकलो जतन तब पूरन फल देवे। साची प्रीत प्रभ चरन को सेवे॥
क्या सन्यासी क्या जोग बैरागी। बिना ज्ञान जीव परम दुःख झागी॥

**आतम तत्त की खोज में, सभी मारग उठ धाए।**
**'मंगत' परसे तत्त ज्ञान जो, सार साधन की पाए॥ 897**

सब गुनियों की सार सुन मीता। सब ग्रन्थों का सुन विचार पुनीता॥
सब पन्थों की सुन कार ग़ुज़ारी। सब सिद्धों का लियो लेख विचारी॥
मानुष जीवन की सुन सार प्रभताई। हुकम सुन गुरु ज्ञान आगाही॥
पच पच मरना विखाद को छोड़ो। साची कथा सत पुरखन की नचोड़ो॥
ज्ञान ध्यान बंदगी सेवा। सब का लेख सुन गुनी मत देवा॥
जगत झूट भरम विकार। आदी अन्ती नित दुःख सार॥

जगत प्रीती तीन काल दुःखदाई। आसा तृष्ना विच नफ़स जलाई॥
आना जाना खेल जग मेला। दुःख में आए दुःख करे कुलेला॥
बिनसनहार चराचर भूत। क्या राना क्या रंक और भूप॥
झूट रचना में नित जीव प्यासा। निस दिन रोए धर काल की फाँसा॥
क्या धनी क्या दलिद्री और भिखारी। आसा अगनी सबकी करे ख़वारी॥
देखन में ये बाग़ सुहाना। जिस जिस भोगा सो अन्त पछताना॥
अजब परपंच रचना प्रभ धारी। सब की कथा यही सार लखारी॥
जिन जुगती से रूह पाए निजात। सो ही मारग सच करी पछात॥
पीर पैग़म्बर नबी अवतारा। साधू सिद्ध गुरु आचारा॥
सबने एक कथा बखानी। तिसको साधे होए जीव निर्वानी॥
नाना ग्रन्थ तिस कथा को परगासे। मूल सार तत्त सुनो निरवासे॥
सतसरूप इक ज़ात कमाल। सब जीवों पर होए दयाल॥
सबके अन्तर सो इलहाम पुकारे। साचा कलमा सुन मुरशद अपारे॥
अबनाशी रूप समरस समाए। जन्मे मरे नहीं आवे जाए॥
सो ही ठाकर ख़ालक पाक़। तिसको पछाने मरे हिरस कमज़ात॥
गरब ग़रूर देह रखे शैताना। करम कुकरम में नित ग़लताना॥
साचा मुरशद जब सबक़ पढ़ाए। विच मुरीदी चित गुरबत आए॥
नाम साबुन ले दिल की मैल को धोवे। विच रियाज़त दूई ग़फ़लत खोवे॥

**साची कथा विचार करी, सुन पूरे गुर का बचन आपार।**
**'मंगत' मन में आया चांदना, मिटया द्वैत ग़ुबार॥ 898**

नाना पीर गुरु जग आए। साचा सबक इलहाम पढ़ाए॥
आप तरे औराँ निस्तारा। अगन बुझाए ठाँड वरतारा॥
ज़ात रूब्बानी पावें इस भाँती। तजें विखाद बाद मधमाती॥
शुद्ध विश्वास शुद्ध विचार चित आए। साचा प्रेम उपकार कमाए॥
सब जीवों पर रहे किरपाल। तब दर सूझे दीनदयाल॥
सत करनी सत बचन मुख बोले। सच ब्यौहार सत जुगत से तोले॥
हिरख बाद नफ़रत को त्यागे। सब में देखे रूप अनुरागे॥

अपने पाप की करे निगरानी। पर का दोख नहीं हिरदे आनी॥
तन मन को अरपे विच सच सेवा। खिमा ग़रीबी का सबक़ पढ़ेवा॥
एक नाम गुर करी बख़शीश। पल पल सिमरे सो सरूप जगदीश॥
मरन काल से पहले मर जाए। आबेहयात सो पान कराए॥
फिर ना मरे ना संकट आवे। साची प्रीत जो मन माहीं कमावे॥
पर दुःख हरना कार कमाए। सादा रहनी मन तन वरताए॥
मज़हब मज़ाहब का छोड़े अभमान। साचा मज़हब इक साहब पहचान॥
खुदी गवाएं होए जग की धूड़ी। विरध कमाए रख सिदक सबूरी॥
हंगता ममता बिख माया को खाए। साचा नाम छिन छिन माहीं कमाए॥
गरब त्याग मन होवे निर्माना। सत परगास परसा भगवाना॥
अन्धकार मिटा गई मन दिलगीरी। मुरशद मिल के मिली रोशनज़मीरी॥
अचरज रूप रग रग में बोले। गुरमुख विरला कोई जुगत से तोले॥
जिसने खोजा तिसने पाया। सरब का ठाकर मन माहीं मनाया॥
ग़फ़लत त्याग उठ लेख विचार। सिमरो ठाकर जग सरजनहार॥
सबको जीवन सो ही देवे। राज़िक ख़ालिक सो आप लखेवे॥
एको साचा सो तीन जहानी। बाकी ग़फ़लत नफ़स शैतानी॥
साचा महरम उठ मन ध्याओ। दुर्लभ देह का लेखा पाओ॥

**कथनी से कुछ ना बने, ख्वाहे कथ कथ थकें जुग चार।**
**'मंगत' करनी सार है, जो करे सो उतरे पार॥ 899**

मनमुख भरम जो जीव में आया। तीन काल रहे तपे तपाया॥
परहक़ खाना जो मन में ठानी। पर दुःख देना जो कपट चित आनी॥
अन्तर और बाहरों और दिखावे। शोभा कीरत जो बहु मन भावे॥
काम क्रोध जो अगन आपारा। हिरस ख़ुदी का जो रचा चुनारा॥
झूट देही संग जो प्रीत अधिकाई। झूट भोग में जो नित ललचाई॥
अपने सुख की जो बाँछा चित राखी। ज़ोर ज़ुलम पर दुःख चित भाखी॥
अधिक सम्पत अधिक परवारा। मोह मगन होये फिरे जीव अंधकारा॥
तीन ताप जो नित नित जलाए। आसा तृष्ना वेग अथाये।

जीवन आसा मरन भय जो लीया। पर निन्दया पर हान राखे जो नीया॥
मज़हबी बादमुबाद जो राखे। साच झूट एक चित जो भाखे॥
अपनी अकल तन का जो करे गुमाना। परधन परनारी पर जो नित लुभाना॥
अधिक कलेश ये सब जीयाँ में आया। राजा राना दरवेश भरमाया॥
दुर्मत विकार माया दुःखकारी। जल जल पड़ें गुनी गुनकारी॥
सदा अशान्त मन माहीं समाए। रंचक सुख नहीं ना धीरज आए॥
चारखानी जो संसार का खेला। भरमें जीव जग देख झुमेला॥
जिस साधन से ये मिटे विकारा। सो ही ज्ञान इलहाम करतारा॥
सब गुनीयाँ ने उपाय दिखलाया। जीव खेद का औखद वरताया॥
सुगड़े सुगड़े नित मोती चुगाने। मूरख बाद बदी लपटाने॥
जब लग मन की ना करें सुथराई। तब लग मिले ना शान्त आगाही॥
सब जीवों में मानुष परधाना। जो इस मन की करे कल्याना॥
साच विचार जभी चित आया। एको लेखा सब घर में पाया॥
सब की सार यही गती लखाए। हरो विकार तुच्छ जीवन जो पाये॥
अपने जीवन का सार जताना। सब का फ़रमूद* इक धार लखाना॥
ऊँच नीच नहीं द्वैत कोई भासे। साची कथा सच प्रेम बिलासे॥

**साचा सुख पहचानया, जो मन का हरे सब खेद।**
**'मंगत' कथा सत ज्ञान की, बाँछें गुनी और वेद॥ 900**

कपट त्याग सत मारग खोजो। सत पुरषों का निरनय बूझो॥
ये तन होवे ख़ाक की ढेरी। छाड सयानफ़ घनी घनेरी॥
जग का ठाकर जो पुरख आपारा। सबके अन्दर विचरत त्रैकाला॥
नित आनन्द नित परगासा। तिसको खोजो मन तजो बिलासा॥
एक विश्वास सतरूप का पाओ। एक बन्दगी तिसकी चित लाओ॥
छिन छिन तिसकी प्रभता जापो। तिसकी भावी मन अन्तर थापो॥
प्रभ का सेवक साध दरवेशा। तिसकी सिखया का लखो नित लेखा॥
मनमानी सब हिकमत त्यागो। सच परमेश्वर के चरनी लागो॥
काची देह का जो परकाशन हारा। जिसके होए देखें सब जगत पसारा॥

सकली सम्पत मान तेज वडयाई। जिसकी दात सब जीवों में आई॥
भाँत भाँत जो रिज़क खिलावे। दु:ख माहीं जो सुख वरतावे॥
सूरज एक रुत भई अनेक। कर्ता सिमरो जिसका सब भेख॥
अपने मरन का समाँ विचारो। काल गुरु को हिरदे धारो॥
तुच्छ जीवन सत कर वितायो। साचा लेख हर भगत कमायो॥
पूरनपुरष सोभा आपारी। मिल सतगुर हो तिसका पुजारी॥
कपट त्याग जो प्रभ सरनी आए। परम आनन्द गुनी सो पाए॥
सो ही पैग़म्बर नबी बुद्धवान। साची बन्दगी करी कादर पहचान॥
झूट जग को झूट कर देखा। सतसरूप का करे नित लेखा॥
जो तन अन्त ख़ाक हो जाए। पर उपकार में तिसको वरताए॥
एक अरदास साहब की कीजे। दीन बन्दगी तब मारग सीजे॥
अन्तर शकत जो अजर अबनास। सहज जुगत से होई परगास॥
निमख निमख तिसका जस गाए। चंचल मन का खेद वँजाए॥
दु:ख सुख माईं रहे दृढ़ विश्वासा। एक साहब की राखी चित आशा॥
तिस बिन दूजा ना चित में भाए। तिस बिन सब कुछ देखे फ़नाए॥

**सतसरूप को खोज कर, दृढ़ कीजे विश्वास।**
**'मंगत' ये ही बन्दगी, करे पाप का नाश॥ 901**

जब एक विश्वास साहब पर आया। तब ही जीव सब खेद मिटाया॥
सरब का ठाकर एक प्रभ देखा। द्वैत ग़ुबार गया भरम भुलेखा॥
अपने अन्दर शोभा तिस गाए। मन के मन्दर में जोत जगाए॥
आद अन्त सो रह्या समाई। जुग जुग तिसकी पूरन वडयाई॥
ना जन्मे ना काल तिस खाए। सत करतार जल थल समाए॥
तिसकी महमा गावे दिन राती। तिसका नाम अपरम धन लाखी॥
जाँ जाँ देखे साहब वडयाई। परम आनन्द सो गुरमुख पाई॥
करम सन्देसा जो कठन जंजाला। जिसका रूप भयो जम काला॥
साची भगत से सब मार मुकाया। खेम कुशल मन ठाकर ध्याया॥
अधिक प्रीती तिस चरने केरी। उस्तत करे मिटे करम की फेरी॥
मन का शूल सभी वँजाया। सत परतीत हरि चरन ध्याया॥

अन्दर बाहर मन एक रस लेवे। भाओ भगत सच प्रेम को सेवे॥
मन की रचना जो विषे विकारा। नाम की खड़ग से पावे जयकारा॥
जब सत ठाकर हिरदे दरसायो। लाभ जीवन का तब ही पायो॥
अपने साहब को नित नित पुकारे। जो जो पूजे उतरे भव पारे॥
हिकमत त्याग मन विचरे निष्कामी। आज्ञा प्रभ की परम सुखधामी॥
मान गुमान निकट नहीं पेखो। खिमा ग़रीबी नित्यानित लेखो॥
तन मन अरपे विच सब जग दी सेवा। मन में राखे नहीं कपट का भेवा॥
दु:खियां का दु:ख नित ही निवारे। प्रेम प्रीत चित सेव विचारे॥
तीन काल मन की मैल को धोवे। तुच्छ जीवन पर अन्तर में रोवे॥
सकली सम्पत जाने प्रभ दात। तिसका हुकम पछाने दिन रात॥
सत सील परसे संतोखा। मारग पावे तब मुकत अनोखा॥
एक नाम सच नित नित गाए। सत जुगती जो सतगुर बतलाए॥
भरम जाए सब संकट नासा। अबनाशी पुरष का भयो घट परगासा॥

**एक साहब की बन्दगी, मन तन लीजो धार।**
**'मंगत' ये ही सत शान्ती, सब गुनियाँ करी पुकार॥ 902**

अचरज लीला घर में धारी। परगट होए आप मुरारी॥
उदर दीप में खुले मनी भंडारा। अधिक तेज अधिक चमकारा॥
जिस पेखा सो उपरस हूआ। जिस जाना सो जीवत मूआ॥
अपरम आपार नाद किलकारे। कोट रवी सम तेज लखारे॥
गगन कुण्ड में अमरत कूआँ। अपरम शबद लख निरत अखूआँ॥
बाज बजन्तर बाजा बाजे। सतगुर मिले सरे सब काजे॥
प्रेम मस धुन बाजे तूरा। अधिक चमकार लखे कोई सूरा॥
भयो मतवाला शबद रस खाए। हाट पटन में रयो समाए॥
बस्ती जंगल भयो एका। अबगत शबद का लखयो लेखा॥
विरत शून मन निर्मल हूआ। अखण्ड नाद में जीवत मूआ॥
करो अरदास परम सुखदाए। निज घर ठाकर लयो मनाए॥
जनम जनम की तपन होई नासा। उदर दीप देखा परगासा॥
दीनदयाल परम आनन्दा। उदय दीप जोत परचण्डा॥
मुश्क फुटी घर अन्तर माईं। रग रग अन्दर धूम मचाईं॥

भई दीवानी सुनी धुनकार। पूरन भाग भयो कारज सार॥
उठ रे पण्डत कर बखान। काज़ी बूझ तूँ अन्तर निधान॥
अजब रँगीला नाद नित बोले। हाट पटन को कोई गुरमुख खोले॥
शबद सार शबद सुख थाना। ऊँचे शिखर में करे ठिकाना॥
अधिक चमकार जोत निर्वानी। गुरमुख पूजे आलख वडयानी॥
काज़ी भूला पंडत भुलाए। घर की शोभा नहीं चित में पाए॥
कोई गुरमुख आया उल्ट का भेदी। ब्रह्मज्ञान नाद रस छेदी॥
अपने आप में गयो समाए। लखया लेख ना किसे आगाहे॥
पंछी का मारग कौन दिखलावे। निर्वान भेद को कोई गुरमुख पावे॥
अजर दीप परगट घट हूआ। जो देखे सो तृप्त समूआ॥

**अकथ कथा घट में होवे, उमडे शबद हलोल।**
**'मंगत' भेदी तत ज्ञान का, परसे मन अडोल॥ 903**

हर का भगत भया मतवाला। जिसके अन्दर भया उजियाला॥
मूल द्वार में सुरती को गाढ़ा। अन्तर पवन का लखा पसारा॥
सतनाम को छिन छिन ध्याया। परम परगास घट अन्तर पाया॥
उलट सुरती चढ़ी आकासा। बिमल शबद संग कियो बिलासा॥
तीन भवन शबद अखण्डा। अद्भुत परगास जोत परचण्डा॥
गुरमुख देखे अपरम आपारा। मन तन का सब मिटा ग़ुबारा॥
अजब मस्तान रहे मतवारा। घूँघट नाद घर करी विचारा॥
जिसको खोजे बहु जतन कर धारी। जिसको पूजे बहु रंग पुजारी॥
जिसके ताईं करे नित तपस्या। दुख सुख में नित रहे उपरस्या॥
सो परमानन्द परम सुख खानी। अनहद नाद घर करी पछानी॥
त्रिकुटी आसन सुरत अडोले। जाप अजपा हिरदे में तोले॥
एक सुरत निज नाद समाई। ब्रह्म जोत घर में दरसाई॥
अजब कथा घर मंगल हूआ। उठ सुनो जोगिन्दर मिटे भ्रम दूआ॥
नाद निरत सुरत करे एका। पूरन भाग जाँ विरत विवेका॥
कड़के नाद अधिक आपारी। कम्पे काया मन शान्त विचारी॥

उलट कँवल भयो परगासा। पूरन भाग तत्त योग निवासा॥
खल बुद्धी जड़ता सब नासी। परम कला आतम परगासी॥
दुःख नाठे मन भया गम्भीरा। साची जुगत परसे तत्त छीरा॥
नित मतवाला मन गगन निवासी। पंजम सुर धुन नाद परगासी॥
बादल गरजे बहु रंग की ताना। हर का भगत भया मस्ताना॥
ग़ैब ख़ज़ाना मानक इक पाया। नाद निरंजन मेल मिलाया॥
पूरन मनुआँ रह्या पूर समाए। पूरन भगती मन तन कमाए॥
करम जंजाल तृष्ना बिख नासा। अद्भुत कौतक देख निरवासा॥
ज्ञान ध्यान भयो सुफल विचारा। ऊँची दृष्ट घर शबद विचारा॥

**अमृत पीवे अमृत वरखाए, हर का भगत सुजान।**
**'मंगत' परसे निज रूप को, तिस में रहे ग़लतान॥ 904**

नाम प्रभ का परम सुखदाई। सिमर सिमर सब कलह वँजाई॥
दुस्तर रचना अधिक ग़ुबारा। आवे जावे जीव अंधयारा॥
बिन तत्त ज्ञान नहीं भरमन जाए। कोट विचार करें उपाए॥
करम की इच्छया जम का रूपा। सभी बन्धावें रंक और भूपा॥
तृखा ना जाए ना मन सुख भासे। आस आस में लयो काल गरासे॥
गुरमुख सिखया सुन बिमल विचारा। जल थल पेख एक करतारा॥
साचा ठाकर जो जगत परगासी। भगत कमाओ होवो सुख वासी॥
सकल पदारथ मन अगन उपजाए। सिमरे नाम सब ताप वँजाए॥
ऐसा नाम साहब का अपारा। जो जो सिमरे पाए निस्तारा॥
वेद कतेब ग्रन्थन की सार। गुनियाँ मुनियाँ का यही विचार॥
सतनाम परमेश्वर नित ध्याओ। खेम कुशल आनन्द घर पाओ॥
सिमरन योग सिमरन ज्ञान। सिमरन करे होवे कल्यान॥
झूट सिमरनी मन की वँजाए। साचा सिमरन साहब का पाए॥
ज्यों ज्यों सिमरे होवे तिस रूपा। अपरम अपार घर लखे सरूपा॥
करूँ पुकार सुनयो गुनी मीता। बिन हरि भगत सरब दुःख रीता॥
बादमुबाद छोड़ मुनी ज्ञानी। एक नाम घर करो पछानी॥
छिन छिन गाओ छिन छिन ध्याओ। प्रेम प्रीत अमरपद पाओ॥

मोल तोल लागे ना कोए। नाम प्रभ का लियो चित परोए॥
परमज्ञान ये ही तत्त सार। सत परमेश्वर का मन करो विचार॥
सच परतीत विचारो मन नाओं। डोलन जाए परसे सत ठाओं॥
तुच्छ जीवन जगत में जानो। सार नाम साहब पहचानो॥
उट्ठत बैठत हरि कीरत गाओ। प्रेम परगास आनन्द घर पाओ॥
एक परमेश्वर सरब आधार। सिमर सिमर तिस बारम्बार॥
जिस सिमरा सत प्रीत लगाए। तिसके चरन तौं नित हूँ बल जाए॥

**सिमरन पूरा ज्ञान है, सिमरन पूरन विवेक।**
**'मंगत' एह बिध सिमरिए, विसरे घड़ी नहीं एक॥ 905**

प्रभ का सिमरन जग जीवन सार। प्रभ का सिमरन मुकत द्वार॥
प्रभ का सिमरन सब बंधन नासे। प्रभ का सिमरन आनन्द परगासे॥
प्रभ का सिमरन करे कल्याना। केवल सिमरन सार निधाना॥
आद जुगादी रह्या आप समाई। सकल जगत है तिसकी वडयाई॥
ज्यों ज्यों देखे अपना रंग। नाना भाँत खेल परसंग॥
पारावार तिस का ना कोए। सरब माहीं रह्या आप समोए॥
सब कुछ रह्या आपे आप। जल थल पुरियाँ रह्या व्याप॥
अपरम शक्त आपार समाई। अपनी आप देखे वडयाई॥
दूजा हूआ ना दृष्टी आवे। ज्ञान दृष्ट से एको दरसावे॥
नित नित तिस की भगत कमाओ। सुफल जीवन तब जग में पाओ॥
किस मुख गावाँ तिसका परताप। अखण्ड सरूप रह्या आप व्याप॥
जिस जन ने प्रभ ओट विचारी। परम आनन्द तिस मन वरतारी॥
बारम्बार ये ही विचारा। मिथ्या जगत सत करतारा॥
सत को खोजे सत माहीं समाए। सत परतीत गरभ नहीं आए॥
सत विचार जिस मन विचारा। दुस्तर भव से उतरे पारा॥
सत सरूप खोजो नित गुनियों। सुफल विचार परतीत से सुनियों॥
बारम्बार ना मानुष तन पाए। दुर्लभ जीवन लयो लाभ खटाए॥
घाल साचे नाम को मीता। छिन छिन औध जाए पुनीता॥

जगत ठाठ सब भरम का खेल। सिमरो नाम कर सत संगत मेल॥
फिर ना ऐसा समाँ नर आए। छिन छिन औसर रही वँजाए॥
बहती नदिया उठ धोयो हाथ। काल गरसीवे तब होएँ अनाथ॥
एको नाम मूल निधाना। मिल सतगुर कर मन पहचाना॥
जग की सम्पत छिन आवे जाए। तिस में मूढ़ा क्यों भरमाए॥
साची सम्पत प्रभ नाम विचार। बन्धी छूटे पाएँ मुकत द्वार॥

**अमोलक प्रभ का नाम है, सिमरो गुनी गहीर।**
**'मंगत' नाम आराधना, परम आनन्द सुख सीर॥ 906**

## तीसरी किरन - वैराग-अंग

प्रभ का सिमरन सार है, संताँ करी पुकार।
एक घड़ी ना विसरे, सो आनन्द भण्डार॥
छाया बादल की ज्यों, ऐसे जग का खेल।
दुर्लभ नाम कमायो, कर साचे गुर संग मेल॥
एह जग भरम ग़ुबार है, केवल मन तरंग।
सिमरो साचे नाम को, सब मनसा होवे भंग॥
लख चौरासी जन्त में, मानुष देह परवान।
सिमरन साचे नाम का, इसमें मिले निधान॥
पलक पलक औधी गई, ज्यों नदी का नीर।
बिन सिमरे हरि नाम के, आठ पहर दिलगीर॥
साचे सुख को खोजते, बीत गये वरख हज़ार।
मिली ना पलक की शान्ती, जो भोगे भोग आपार॥
खाली हथ्थीं आया, अंत जाये खाली हाथ।
जो सम्पत सो छाडनी, रंचक चले ना साथ॥
जैसे नीर तुरंग का, छिन में रूप वटाये।
ऐसे जीवन जगत में, जान लियो गुनी राये॥
नदी किनारे तरवर, कब लग बाँधे धीर।
एक लहर की धार से, जाये बिखर शरीर॥

**काठ अगनी में पड़ा, पल पल होये अंगार।**
**'मंगत' जीवन जगत का, एह बिध कियो विचार॥ 907**

जगत रूपी ये खेत है, काल रूपी किसान।
एक छिन में मेट दे, सूखा हरा निशान॥
आवन जावन पवन का, ज्यों बहता नदी का नीर।
ऐसे रचना जगत की, जान लयो मतधीर॥
पल पल जात विहाये, ज्यों रैन दिन पख मास।
आस अंदेसा ना गया, बीत गये सब सास॥
सम्बल फूल का रंग ज्यों, सब का चित हरखाये।
ऐसे रचना जगत की, देखत में सुखदाये॥
मूल बिना ज्यों रुख, केला करे बिस्तार।
ये ही लीला जगत की, राखे ना कुछ सार॥
ये जग मन की भरमना, जैसा मन तया रूप।
जैसी धारे कामना, देखे सो ही सरूप॥
कूड़ी बाज़ी देख के, बड़े गुनी भरमाये।
बाज़ीगर जिस देखया, तिस का चित ठहराये॥
काल का बाँधा आया, अन्त को पेखे काल।
बंदीखाना जगत ये, झूट माया जंजाल॥
झूट जगत में आये के, धरे झूट भरवास।
काल बेलनी बेलया, जैसे रूई कपास॥
विषे भोग संसार के, ज्यों विष बासक नाग।
एक पलक के मेल से, लयो नरक निवास॥

**आसा रूपी अगन ये, छिन छिन करे अंगार।**
**'मंगत' मन पछताया, जब जलन देखी संसार॥ 908**

ना लेना ना देना, ना सुख मूल बियाज।
झूटी लागी कलपना, देवे कलेजे दाग़॥
सुखिया कोई ना देखया, जो आया इस संसार।
जो देखा सो दुःखिया, नित दुःख का करे विचार॥

क्या धनी क्या दलिद्री, क्या भूप राज राजान।
जो देह धारी आया, सो परसे दुःख की खान॥
छाया सेती प्रीत नर, कब लग देवे साथ।
उलट दिसा गयो चाँदना, भया वंजोग अनाथ॥
राख अमानत बावरा, ले अपना हक़ जमाए।
छूटन की तदबीर ना, पावे घनी सज़ाए॥
अपना तो कुछ ना थिया, पर मन में लेवे बनाए।
फेर बिगाना हो गया, जब जम कियो न्याये॥
बंदीखाना जगत ये, बाँध्यो हिरस ज़ंजीर।
चार कुंट उठ धाया, सूझत ना तदबीर॥
मरने का भय राख के, करे हिकमत आपार।
वोह भी काल से ना बचे, जिनकी फ़ौज जरार॥
रोगी सोगी सूरमें, सबको कीजे घात।
जो जन आया जगत में, होये काल का भात॥
वैद धनन्तर मर गया, और लुकमान हकीम।
हाजी ग़ाज़ी ना बचे, खा गया काल ग़नीम॥
**ये संसार सराये, जीव मुसाफिर नीत।**
**'मंगत' खोज सत शान्ती, औध जात है बीत॥ 909**
पत्ता गिरे बरिच्छ से, घट से विगसे नीर।
ऐसे समाँ को पाये के, जीव ये तजे शरीर॥
नाओ जैसे नीर में, नित नित डाँवाँडोल।
ऐसे भरम गुबार में, जीव धरे चित ख़ोल॥
जैसे रुत बसन्त की, सब बृच्छों पर आए।
डाली डाली झड़ पड़े, जब अजल खिजाँ उठ खाए॥
ऐसे जोबन जीव को, एक पलक में आए।
तिसको देख ना भूलयो, ये रंग नहीं रहना पाए॥
हाड मास का पिंजरा, प्रान भरा विच तेल।
एक पलक की आन में, करे भसम संग मेल॥

छिन छिन औसर जात है, जैसे बहता नीर।
समाँ गया ना आएगा, करो विचार मतधीर॥
जो आया तिस जावना, ये खरा खराना खेल।
रहना किसे नहीं पावना, जो जुग चारे मेल॥
धरती गई नीर में, नीर को पावक खाये।
पवन गरासे पावक, आकास में पवन समाये॥
तत्वों में सब तत मिले, रूप रंग मिट जाए।
ये ही कला सरीर की, छिन छिन रूप वटाये॥
**बालापन को जोबन खाये, गई जरा जोबन को खा।**
**काल जरा को खा गया, 'मंगत' जीव पछता॥** 910
काल करीड़ा नित करे, उठके गुनी विचार।
सूरबीर बलवान हो, सबका करे शिकार॥
भयकारी ये काल है, चराचर भूत कम्पाए।
तिसकी गरजत देख के, आसन विरंच डोलाये॥
पीर पैग़म्बर औलिया, सिद्ध तपी अवतार।
काल संदेसा सबको, लागा बड़ा आपार॥
ऐसे दुःख संताप में, क्यों सोया मूढ़ गँवार।
काल चौसर नित खेलता, पल पल पासा डार॥
काचे कुम्भ में नीर ज्यों, कब लग रहत समाये।
ओह फूटा ओह बह गया, सरब खेल मिट जाये॥
काल रूपी बृच्छ पर, आये बसेरा लीन।
छिन छिन पल वोह खा रहा, उठ मूढ़े तत्त को चीन॥
धन जोबन के मध में, मत होवो ग़लतान।
काल शिकारी ताकता, मारे खिच के बान॥
ना किसी की बनी रही, ना बनेगी मीत।
जो बनी सो बिगड़ी, मत राखो परतीत॥
ज्ञानी गुनी चतुर बुद्ध, एह तत्त करो विचार।
कहाँ से आया कहाँ जावना, कहाँ में पाये पसार॥

**रंचक मात्तर सुख नहीं, इस कूड़ जगत भरवास।**
**'मंगत' रचना स्वपन की, खेले काल तमाश॥ 911**

काया रूपी आयरन, काल रूपी लुहार।
प्रान का हथौड़ा नित चले, गुनियों करो विचार॥
पूंजी जाँकी स्वास है, छिन छिन जात विहाये।
कूड़ा वनज कमाये के, गाँठी मूल गंवाये॥
छिन आवे छिन जात है, ज्यों अंजली का नीर।
जीवन जग दिन चार है, कोट करें तदबीर॥
एह तन बिख की खान है, हीरा मनी गोपाल।
तन दीजे तब पाइए, नदरी नदर निहाल॥
बालू की ये भीत है, धूएँ का अम्बार।
छीजन में ना पलक लगे, कित गुन करें विचार॥
महल अटारी कोट गढ़, हिकमत हुकम कमाल।
खाली रहे सिंघासन, नहीं आये नज़र भूपाल॥
खोटा जीवन छाड कर, मारग खरा पहचान।
जाँ से मिले सुख शान्ती, मिट जाए झूट गुमान॥
जावन जावना सब कहें, पर पंध ना ठौर की जाँच।
कूड़े इस भरवास में, पायो किसे ना साँच॥
काँच वापारी जगत सब, करे मानक दा गुमान।
जब नज़र सराफ़ी में चढ़ा, तब लज्जित भयो अनजान॥

**बिख बीजे निसदिन गुनी, माँगे अमरत सार।**
**'मंगत' सो ही पाइये, जो घालें करें विचार॥ 912**

माटी का कलबूत ये, अंत माटी समात।
सरजनहार ना जानया, क्या बने पछतात॥
काया रूप है हाँडिया, विषे भोग का भात।
आठ पहर जलती रहे, अगन तृष्ना साथ॥
जैसे खाल लुहार की, फूँके बिना प्रान।
करनी बिन मानुष जो, विचरे पशू समान॥

हीरा नाम विसारया, काँच के सम्पे ढेर।
अंतकाल ये अन्धमती, फिरे चौरासी फेर॥
आसा जीवन की करे, देखे काल सरूप।
अमरत इच्छया मन करे, बीजे बिख का कूप॥
चार दिनां दा जीवना, उठ के मूढ़ विचार।
राज सिंघासन छाड के, करें भूमी पाये पसार॥
नील मनी ढलाइयो, कंचन गढ़ औसार।
खाली हथ्थीं चल गये, जिनके घने अम्बार॥
पोशाक पहने पीताम्बरी, अंग सुगन्ध लगाए।
काल शिकारी मारया, तब भसवी गयो समाये॥
सिर पर छतर सुहावना, चमके चूनी आपार।
सो सिर ख़ाकू संग मिले, उठके दृष्ट निहार॥

**पानी का ये बुदबुदा, छिन में बिनसे जात।**
**'मंगत' बिन हरि सिमरने, सब ही कूड़ लखात॥ 913**

वडे वडे भूमि के मालिक, और जिनके वड परिवार।
चले निथावें जगत से, ख़ाली हाथ पसार॥
रोता आया जगत में, अन्धमत जीव अनजान।
अन्त को रोता जात है, ना कोई पूछ पछान॥
पर-हक को नित खावना, ज़ोर ज़ुलम कमाये।
राजे राने जगत के, बाँधे जमपुर जाये॥
झूट देही के भोग में, क्यों गुनियाँ ललचाये।
ना थिरता इस भोग की, ना देह थिरी रहाये॥
देह रूपी बीबान है, करम का तिस में झाड़।
फल की आसा राख के, मोह्या जीव गँवार॥
जतन करें बहु भाँत के, तो भी शान्त ना होये।
जो घालें भूमी कोट गढ़, विजे की मनी परोये॥
कूड़े इस संग्राम में, सबने पाई घात।
काल दग़ा दे मारसी, कोई ना छूटन पात॥

जब लग सच परतीत नहीं, मन नहीं परसे ठौर।
घालन सभी दुःख सार है, फिरें चौरासी घोर॥
चार दिनाँ दा जीवना, अंत मिलें विच छार।
लाख करोड़ी सम्पत तजे, और राज दरबार॥
**सुपना जैसे रात का, ऐसे जग दा खेल।**
**'मंगत' घाले नाम जो, पाये परम सुख मेल॥ 914**
साची भगत प्रभ की कीजे, सकल कलह दुःख नास।
मन मन परसे शान्ती, परम धाम करे वास॥
साचा नाम प्रभ सिमरिये, मन तन होवे साच।
परम परतीत परगट होवे, बिनस जाये मन नाच॥
ज्ञान ध्यान विवेक में, परम शरोमनी नाम।
जो जन सिमरे प्रीत से, पावे घर बिसराम॥
सकल पदारथ जगत के, छिन आवें छिन जायें।
इस्थिर प्रभ का नाम है, गुनी वेद बतलायें॥
हीरा मनी ये नाम है, परम आनन्द सरूप।
ज्ञानी जुग जुग गाँवदे, अखण्ड अमीरस कूप॥
सम्पत चौधाँ लोक की, कीनी जो नित घाल।
नाम बिना ये मनुआँ, तीन काल कंगाल॥
एक कनी जो नाम की, ले हिरदे विश्वास।
पाप कूप भसमत करे, तन मन हो परगास॥
नाम जिनाँ चितारया, सो भूखन जग के जान।
ताँकी कीरत सुन के, लाखाँ होये कल्यान॥
गुरमुख जाने नाम, पीवे दिन और रात।
मनमुख को क्या रसना, जो विषे बिख को खात॥
**साचा नाम पहचान के, मन में लयो छुपाये।**
**'मंगत' ये धन सार है, बिना गाहक ना दियो विकाये॥ 915**
तन मन धन अर्पन करो, साचे गुर दरबार।
सच नाम तब पाइये, जिसका मोल आपार॥

अगनी लागी जगत को, आसा मनसा मीत।
सतनाम जल सींचिया, तब उपजे ठाँड पुनीत॥
कूड़ माया के वनज में, भरमे कुल संसार।
सच नाम कमावना, किसे गुनी दी कार॥
झूट भरवासा राख के, अन्त को चला निरास।
नाम भरोसा जिन कियो, तिनकी मिटी प्यास॥
सुत दारा और माल धन, घर घर देखा मीत।
कथा साचे नाम की, कोई वाचे परम पुनीत॥
बन्ध छुड़ावनहार है, साचा नाम करतार।
जो जन सिमरे प्रेम से, तिस चरनी बलिहार॥
अबगत रूप ये नाम है, गुपत रहे तीन काल।
परगट कर तब जानया, जब सतगुर मिले दयाल॥
नाम की रत्ती एक जो, पाप के घने अम्बार।
भाओ प्रीत सिमरन किया, सब बिख हूआ छार॥
आवागवन के चक्कर में, नित मनुआँ भरमाए।
सत जुगती जपे नाम जो, काल करम बिनसाए॥

**वेद कुतेब बहु पठना करे, और नेम धरम बहु भान्त।**
**'मंगत' बिन हरि सिमरने, नहीं छूटे जीव भरान्त॥ 916**

कोट रवी परकाश करें, और चन्दा कोट हज़ार।
बिना नाम परतीत के, नहीं जाए मन अन्धकार॥
सम्पत चौधाँ लोक की, जो पद को चूमे मीत।
एको साहब के नाम बिन, तीन काल दुःखरीत॥
लख चौरासी जीव को, चुन चुन खाये काल।
तिनके निकट न आ सके, जो सिमरे नाम दयाल॥
राजा राना होए के, बहु रंग भोगे भोग।
बिना नाम रस चाखने, भयो सभी दुःख रोग॥
बार बार पुकारया, सुनो गुनी मुनी भूप।
नाम रतन जग सार है, परम आनन्द सरूप॥

नाम अमोलक साहब दा, करो हिरदे माईं पछान।
नित पावें सत शान्ती, सुन सतगुर का विख्यान॥
मन का वेग सब नास होए, मनसा भये लवलीन।
साचा नाम पहचान के, काल जाल भयो छीन॥
नाम सार को पींवदे, जुग जुग हरजन मीत।
भरमन सकली छाड के, घालें दृढ़ परतीत॥
नाम रस जब रसयो, परसा उपरस धाम।
कँवल निरालम ज्यों नीर में, ऐसे चित निष्काम॥
**भव जल दुस्तर आपार है, सूझ बूझ नहीं पात।**
**'मंगत' सो निस्तर भए, जो लखे नाम की वाट॥ 917**
तन रूपी ये खेत है, नाम मेघ की धार।
मुकत फल परगट भयो, सुन साचे गुर विचार॥
नाम की महमाँ जान के, हरजन भए निरधार।
छिन छिन सिमरें प्रीत से, उतरें भवनिध पार॥
औगुनकारी मन ये, नित औगुन में जाए।
आड़ा बाँधे नाम का, तब ये दूत ठहराए॥
अगन सरीखा तापता, धारे भरम ग़ुबार।
साचा नाम जब गुर दिया, तब भागे सकल विकार॥
ज्ञान ध्यान बहुता करे, पर डोले अन्तर नीत।
सच नाम साधन करे, ले जम दरवाज़ा जीत॥
कथा एको नाम की, पद पद गावें वेद।
ग्रन्थ कतेब पुकारदे, अपरम आपार अछेद॥
जब लग नाम न चीनियो, ये मन भूत का रूप।
मानुष से भयो देवता, जब घाला सत सरूप॥
स्वास स्वास सिमरन करो, एक नाम निरधार।
जीब्भा होंट ना मुख चले, हिरदे माहीं विचार॥
तन की कूण्डी कर लयो, मन सोटा ले हाथ।
घोटो औखद नाम की, पियो प्रेम के साथ॥

**हर रस हरजन पान करे, बैठ स्वास की धार।**
**'मंगत' पावे मुकत फल, सुन साचा विचार॥ 918**

नाम रस जब चाखयो, भागे पंज ग़नीम।
राज पाया देह दीप का, साधी कठिन मुहीम॥
हर का नाम विचारना, किसे सूरे दी कार।
मरने से जो ना डरे, तब पावे तत्त सार॥
संकटमोचन नाम है, मंगलकारी रूप।
गुरमुख जपे प्रीत से, परसे सत सरूप॥
विगन दोख व्यापे नहीं, ना भूत प्रेत की त्रास।
जो सिमरे सतनाम को, लेवे अभयपद बास॥
और जगत सब कलपना, मिथ्या जीव को रोग।
राम नाम तत्त सार है, नित पाओ संजोग॥
मुख सुहावा तिस का, अमरत काढे बोल।
जो परसे सतनाम को, ताँ के चरन बलोल॥
जीवन रूप एक नाम है, बाकी मिरतक सार।
उठ सिमरो भाओ प्रीत से, पाओ नित जयकार॥
खिमा ग़रीबी बन्दगी, साधन सत उपकार।
राम नाम जब जानया, तब पाये परम गुन सार॥
मिरतक से जीवन भया, निर्भय परसा धाम।
गवन विनासी जीव की, निज रूप लयो बिसराम॥

**जीवन का है लाभ ये, मानुष देह की सार।**
**'मंगत' पल पल सिमर लो, अबगत नाम मुरार॥ 919**

पाप पुन्न व्यापे नहीं, जो नाम की मनी परोए।
आठ पहर एक रूप में, निर्मल सुरत समोए॥
पीर पैग़म्बर औलिया, सब का ये ही विचार।
सिमरो साचे नाम को, अन्त पायें छुटकार॥
कपट विकार त्याग के, सतगुर दर पहचान।
पावें परम आनन्द तत्त, साचा नाम निधान॥

जो सिमरे प्रभ नाम को, मन बच करम लगाए।
पूर मनोरथ तिन का, मौज जनम की पाए॥
उट्ठत बैठत ध्याये लो, अखण्ड रूप अबनास।
पावें सत परतीत को, मिट जाई जनम प्यास॥
अनेक जनम भरमत फिरे, काल चक्कर को धार।
दुर्लभ देह मानुष में, जप लो सरजनहार॥
छिन छिन औसर जात है, ना कर पलक भरवास।
काल सिर पर गाजता, लेख लखे नित स्वास॥
जो दम आया ना पाएँगा, फिर औध के बीच।
दम दम नाम चितार लो, प्रेम भगत जल सींच॥
आसा जग की त्याग कर, रख आसा करतार।
दीरघ पावें शान्ती, अखण्ड आनन्द भण्डार॥

**रोगी सोगी नीच बहु, परस गये सतधाम।**
**'मंगत' जपो प्रीत से, एक चित निष्काम॥920**

साधन सब पूरन भई, मन आई परतीत।
सिमरा साचे नाम को, राख के निर्मल चीत॥
साचे रंग में रंगया, फिर ना भए कुरंग।
छिन छिन घाले नाम जो, सुने सार परसंग॥
दुर्जन भाओ विनासया, मनवा भयो सत मीत।
एक नाम रसना रसी, पायो दिसा पुनीत॥
नाम का कोड़ा हथ लयो, मन पर भयो असवार।
मारा बान प्रेम का, भयो शत्रु सब मुर्दार॥
जो मन अति बिकराल था, बाँधन कठन अपार।
नाम सेली से बाँधया, ले जुगती गुर दातार॥
भय भरम संसा गया, खिमा का पीया नीर।
दर्शन पाया गोपाल का, पाई जीत जम बीर॥
आध व्याध दूषन गई, तीन ताप गये छूट।
निस दिन रसना नाम की, घट अन्तर लीनी लूट॥

चौसर खेल ज्ञान की, नाम की चोट लगाये।
काल जाल सब हार गये, जीत गुनी घर पाये॥
आलख लेखा लिखया, सतनाम निरवान।
जो खाये इस सार को, जुग जुग होए परवान॥

**कहता हूँ कह जात हूँ, उठ साजन होश सँभाल।**
**'मंगत' नाम प्रभ सिमरिये, बन्दी छूट दुःख जाल॥921**

पूरन सन्त मिलाया, नाम पाया तत्त सार।
रोम रोम परगट हुआ, आलख शबद आपार॥
छिन छिन एक नाम में, सुरत रहे मतवाल।
शबद बोले गगन में, जीतयो जम बिकराल॥
नौ दर परगट बाहरमुखी, दसवाँ अन्तर सार।
सतगुर साजन जब मिला, तब खोला दसवाँ द्वार॥
बोले पवन गगन में, गरजे कोट भान उजयार।
गुपत नाम परगट हुआ, सतगुर दिखलाई कार॥
अजब मस्तान भौर गुंजारे, सुन्न शिखर के तीर।
सिद्ध मुन नाथ महा तत्त ज्ञानी, परसें घट में छीर॥
ब्रह्मा विषन महेश्वर, जती सती बुद्ध नाथ।
आलख शबद की महमा गावें, सिमरें प्रेम के साथ॥
सतगुर पूरे की महमा, किस मुख करूँ बखान।
बिछड़ा प्रभ मिलाया, हरी भरम बिख खान॥

**बार बार साधन करो, सुनो साचे गुर उपदेश।**
**'मंगत' नाम तत्त सिमरना, मुकत धाम संदेश॥922**

गुपतनाम परगट होवे, जब पूरन सन्त मिलाए।
**'मंगत'** तब सुख सम्पदा, तीन लोक की पाए ॥**923**
पाँच दोख तीन ताप से, जीव पाए कल्यान ।
**'मंगत'** ऐसा नाम प्रभ, पल पल हिये बखान ॥**924**
पूरन साधू जब मिले, तब पाइए निरनय तत्त ज्ञान।
**'मंगत'** महमा साध करें, कृष्न धनंजे ताईं बखान॥**925**

धन्न साधू धन्न तिसकी संगत, धन्न तिसका उपकार।
**'मंगत'** धूड़ी चरन की, करे कोट पाप को छार॥926
सो वडभागी जीव है, जो सेवे साचा साध।
**'मंगत'** दृष्टी दयाल से, छीन भए अपराध॥927
ब्रह्मा विषन महेश्वर, सब ही सन्त सरूप।
**'मंगत'** गुरमुख साधू आया, धर नारायन का रूप॥928
तन मन धन अर्पन करो, जब पूरन सन्त मिलाए।
**'मंगत'** तिनकी भेंट से, जनम जनम भ्रम जाए॥929
जिस पाया प्रभ रूप को, सो सन्तन के परसाद।
**'मंगत'** साधू आया, सकले हरन विखाद॥930
अगम देस दिखलाया, शबद लखाई सार।
**'मंगत'** ऐसे साध के, नित चरनी बलिहार॥931
मुख से कथनी बहु करें, नाम धरावें सन्त।
**'मंगत'** सुनी सुनाई पर, बन बैठे महन्त॥932
साध सो ही पहचानिए, जिसका मन निरवास।
**'मंगत'** केवल नाम में, विचरें जाँ के स्वास॥933
पारब्रह्म परगट कियो, नित नित धरे ध्यान।
**'मंगत'** दृष्टी एक जिस, सो साधू परवान॥934
तन मन को साधन किया, राख शबद अनुराग।
**'मंगत'** मन निहचल भया, सो साधू वडभाग॥935
कथनी करनी त्याग के, रहनी रहे सो साध।
**'मंगत'** तिनके दरस से, दूर होवें अपराध॥936
काम क्रोध दोनों तजे, और मान अपमान।
**'मंगत'** ऐसा साध मिले, तब पाइये कल्यान॥937
सतनाम का सिमरना, और सत साधू का संग।
**'मंगत'** इनमें जो रमे, पाए ज्ञान परसंग॥938
सहजे ही सो तर गये, जिन के मन विश्वास।
**'मंगत'** प्रीती नाम की, घट अन्तर कियो परगास ॥939

सतसरूप पहचानया, जिसका नहीं पारावार।
**'मंगत'** तिसमें रम रहा, ज्यों जल में जल संचार॥940
नाम साहब का गाए लो, निमख निमख पल सार।
**'मंगत'** वनज अनूप है, मन तन करे उजयार॥941
नाम सार और ज्ञान है, नाम सरब आधार।
**'मंगत'** छिन छिन सिमर लो, चलो जीत संसार॥942
साचा नाम पहचानया, खुला अन्तर का पाट।
**'मंगत'** देखा आप को, लखी शबद की साट॥943
नाम की रसना वहाँ रसी, जाँ उपजा बिरह का वेग।
**'मंगत'** पीवे शबद को, धार ज्ञान की तेग॥944
उल्टा सन्ध पहचानया, जाँ उपजा नाम का सार।
**'मंगत'** मीठी धुन उठे, जाँ का नहीं पारावार॥945
रोम रोम जब रम गया, तिस पाई नाम की सार।
**'मंगत'** मन निहचल हुआ, पायो दरस मुरार॥946
नौ द्वारे को मूंदया, मन पर भयो असवार।
**'मंगत'** तोड़े मान गढ़, तब नाम दीप उजियार॥947
नाम साहब का सिमरते, गुनी मुनी चण्डाल।
**'मंगत'** आपा जो खाए, पाए नाम विसाल॥948
कथनी से नर ना बने, कथनी करे सो मूढ़।
**'मंगत'** तत्त विचारना, सो गुनी जग सूर॥949
जब सतनाम परगासया, तृष्ना मिटा तरंग।
**'मंगत'** अपने आपे में, लागा आप को रंग॥950
नाम रूप संसार है, छरे छरावे मीत।
**'मंगत'** अजर नाम जो गुर दिया, सो तीन काल सुखरीत॥951
सदा अजन्मा नित निरालम, सदा रूप अकाल।
**'मंगत'** सो सतनाम है, नित ही दीनदयाल॥952
ना ऊँचा ना नीच है, ना वैरी ना मीत।
हस्ती तृन में सम रमा, सो साचा नाम पुनीत॥

पीर पैग़म्बर औलिया, गावें गुनी मुनी अवतार।
**'मंगत'** सिमरे पलक जो, पाए ना मरन की सार॥953
सब जग आवत जात है, नाना रूप वटाए।
**'मंगत'** साचा नाम जो, जुग जुग एक समाए॥954
सरब के पहले वोह था, अन्त रहे सो एक।
**'मंगत'** साचा नाम सो, नित तू रख तिस टेक॥955
जीब्भा से जो नर जपे, सो तो नाम ना होए।
**'मंगत'** साचा नाम सो, जो हिरदे माहीं परोए॥956
माला तसबीह फेरते, भुल्ले क़ाज़ी पण्डत अनेक।
**'मंगत'** साचे नाम को, जपे गुनी कोई एक॥957
जब लग मन में प्रेम नहीं, तब लग प्रन ना कोए।
**'मंगत'** बिना प्रन के, जो सिमरे दु:ख होए॥958
साचा जानया साहब को, झूट जाना संसार।
**'मंगत'** सच्ची प्रीत वहाँ, सत सिमरन करतार॥959
जब लग जीवन आस है, तब लग पाएँ ना सार।
**'मंगत'** जीवन में मरे, तब पाये नाम इसरार॥960
सब जग झूट पसार है, आद अन्त नित झूट।
**'मंगत'** साचा साहब है, विच हिरदे नाम रस लूट॥961

पाँचवां अंग निखेत्र पर्वत गोष्ठ समाप्त हुआ

सत आज्ञा निरंकार

समता अपार शक्ति

ब्रह्म सत्यम सर्वाधार

**ओ३म ब्रह्म सत्यम् निरंकार अजन्मा अद्वैत पुरखा**
**सर्व व्यापक कल्यान मूरत परमेश्वराय नमस्तं**

# छठा अंग

## समता सार योग

## पहला भाग-निर्वान सिद्धि

### पहला अध्याय-नाद विवेक

सतगुर प्रसाद-अमृत

**समता अखण्ड शान्ती, कुल विगन दोख से न्यार।**
**'मंगत' रूप नारायन का, तत्त समता विचार॥962**

सत सरूप की कथा विचार। सत सरूप की कीरत धार॥
सत सरूप की करो अरदास। सत सरूप मन माहीं उपास॥
सत सरूप ये निर्मल बोध। सत सरूप को हिरदे सोध॥
सत सरूप मारग कल्यान। सत सरूप का धरो ध्यान॥
सत सरूप का लेख अगाध। सत सरूप से मिटे उपाध॥
सत सरूप का पाओ विश्वास। बौहढ़ ना धारें गरभ की फाँस॥

सत सरूप पल पल निध्यास। मोह माया की मिटे तिरास॥
सत सरूप की खोज अपार। सत सरूप जग जीवन सार॥
सत सरूप मन करे परसन्न। सत सरूप यथारथ धन्न॥
सत सरूप का अगोचर पंथ। सत सरूप को गावें ग्रंथ॥
सत सरूप की करो पहचान। सत सरूप केवल कल्यान॥
सत सरूप तत्त अकथ अपार। सिद्ध तपीशर नित करें विचार॥
सत सरूप की महमा बिसमाद। सरब व्यापक पुरख अनाद॥
सत सरूप केवल जगधरता। लाख चौरासी जन्त का कर्ता॥
सत सरूप सरब का मूल। सम परकाश सूक्षम अस्थूल॥
सत सरूप घट घट व्याप। परगट होवे गुर के परताप॥
सत सरूप नित आनन्द खान। आद जुगादी बसे निर्वान॥
सत सरूप पूरन नित आप। पल पल तिसको मन में जाप॥
सत सरूप सब बिपता हरी। पूरन पुरख जिस सोझी पड़ी॥

**सत सरूप के ध्यान से, जाये दुर्मत भरम।**
**'मंगत' पूरन भाग से, पाइये निर्मल धरम॥963**

सत सरूप पुरख बिसमाद। सदा अजन्मा अद्वैत अनाद॥
नाद रूप हो सम परगासा। दानव देव करें अरदासा॥
नाद रूप की कथा आगाध। नाद विवेकी विरला साध॥
नाद ज्ञान नाद का ध्यान। अन्तर बाहर नाद पछान॥
नित परगट नित निकट समाया। आलख अपार पुरख निर्माया॥
आनन्द सरूप करम से न्यारा। नाद पुरख का अजब पसारा॥
नाद ही ठाकर नाद ही देवा। बिषन विरंच करें नित सेवा॥
नाद नारायन नाद गोबिन्दा। अद्भुत रूप सब घट परचण्डा॥
नाद आनन्द प्रेम की खानी। गुरमुख विरले करी पछानी॥
नाद पुरख का भेद अगाध। अगम निगम गत लखे कोई साध॥
रूप रेख नहीं वरन आकारा। सरब गत स्वामी नित निर्धारा॥
सो ही मूल सोही सत धामा। नाद सरूप सिमर सतनामा॥
आद जुगादी पसरे इक रंग। नाद पुरख का अकथ परसंग॥

नाद की कीरत शोभा गाओ। नित अरदास मन माहीं लखाओ॥
पुरख अनादी सर्वज्ञ समाया। सिमर सिमर सब ताप मिटाया॥
नाद का सिमरन नाद का ध्यान। नाद समाधी रूप कल्यान॥
नाद का भेद जो अरथाई। अन्तर जुगत सेव कमाई॥
सतगुर सो ही परम तत्तवेता। नाद पुरख का लखे जो लेखा॥
सकल जगत का नाद ही बिन्ध। इक रंग व्यापे सरब के पिण्ड॥

**सरब समाना पुरख निर्वाना, नाद सरूप बिसमाद।**
**'मंगत' सिद्ध बुद्ध ध्याँवदे, महमा अगम अगाध॥964**

नाद सरूप आप परमेश्वर। नाद सरूप सरब जगदीश्वर॥
नाद सरूप सरब परकाशी। नाद सरूप केवल अबनाशी॥
अगिनत नाम से नाद ध्याये। मुनी मुनिन्दर तपी तपराये॥
आद नाद अन्त भी नाद। अनन्त सरूप नाद बिसमाद॥
सो परिपूरन सो परमानन्द। नाद सरूप केवल अखण्ड॥
परकिरत दोख से रहे न्यार। नित अजन्मा पुरख निर्धार॥
घट घट पसरे आप शोभाये। जुगाजुगन्तर खेल खिलाये॥
नाद ही धरम का निर्मल रूप। नाद ज्ञाता सो सरब का भूप॥
सरब जीआँ का ठाकर सो ही। नाद सरूप सरब प्रगटोई॥
करो विचार गुनी मुनी मीता। नाद सरूप की कथा पुनीता॥
मन निर्मल बुद्ध इस्थिर होए। रंचक नाद का लेख लखोए॥
जनम जनम की सकल तिरासा। सिमर नाद सब बन्धन नासा॥
अगन तृश्ना शान्त होई। दृढ़ निश्चय घट नाद परोई॥
भाँतक भाँत मन का भरमाना। निहचल होवे पाये नाद ध्याना॥
जनम मरन का भय जो पायो। नाद ध्यान से निर्भय समायो॥
परम भगत साधन की सार। जो चित आवे नाद विचार॥
नाद ज्ञाता मुकत सरूप। अन्तरगत जपे नाद अनूप॥
करो कहानी अकथ की मीता। करम जाल से होयें पुनीता॥
सार वेद और सिमरत ये ही। अबगत नाद का होवें सनेही॥

**पूरन पुरख पूरन गत पावे, अखण्ड नाद को ध्याये।**
**'मंगत' मारग मुकत का, मिल सतगुर भेद लखाये॥ 965**

अदृष्ट सरूप नाद का मीत। परगट पावे ले गुर परतीत॥
सरब जीयाँ का ठाकर सोही। सदा आनन्द निरविगन समोई॥
रंचक कथा नहीं वरनी जाई। नाद सरूप परम शक्ताई॥
सरब निकट त्रैकाल परगासी। दृढ़ निश्चे नित करो उपासी॥
चार वेद ब्रह्मा कथ थाके। खट शास्तर सिद्धन ने वाचे॥
कुरान अंजील तौरेत बखानी। बिस्माद कथा ये नाद कहानी॥
अन्त ना पारावार कोई पाए। जेती बुद्ध एता अरथाए॥
सिमरन योग सो ही प्रभ देवा। पूरन भाग से पाई जिन सेवा॥
देह मन्दर में नित परगासी। अखण्ड नाद पुरख अबनासी॥
अपने आप का करो विचार। पावें नाद पुरख निरंकार॥
सरब ज्ञाता सो अन्तरयामी। सरब आधार सो पारगरामी॥
सब की बनत बनावनहारा। नाद सरूप आप करतारा॥
परम यतन राखो मन माहीं। पलक पलक इक नाद ध्याईं॥
उट्ठत बैठत करो विचार। नाद सरूप जप सरजनहार॥
परम भगत तिसकी मन पाओ। नाद सरूप सिमर सुखराओ॥
परमज्ञान नित ये विचार। नाद सरूप मिले सुखसार॥
परम आनन्दघन नाद सरूप। परगट ध्यावे जोगिन्दर भूप॥
अखिल निरंजन जोत निर्वानी। नाद सरूप की कथो कहानी॥
अबनाशी पुरख सकल का स्वामी। सिमर सत नाद पुरख अनामी॥

**साची भगती निर्मल ज्ञान, सत नाद पुरख को ध्याओ।**
**'मंगत' साधन सार ये, भव दुस्तर तर जाओ॥ 966**

नाद ध्यान से मन ग़लताना। नाद ध्यान से होए निरवाना॥
क्यों नर भरमें रूप विसराई। मिल सत्संग लयो सार कमाई॥
जिस अमरत को बाहर खोजें। शान्त सरूप घट अन्तर सूझें॥
जो शक्ती बाहर दिखलाई। तिसका मूल घट रह्यो समाई॥
अचरज जगत जो खेल तमाशा। तिसका स्वामी घट करे परगासा॥
देवी देव बाहर जो पूजें। सरब का देव घट अन्तर सूझें॥

परम शकत अत ही परगासे। नाद सरूप घट घट निवासे॥
सरब आधार ठाकर सुखदाई। नाद सरूप का लेख आगाई॥
पतत पावन सो ही दीनदयाला। नित रखयक सो नित किरपाला॥
परम पिता सो ही पुरख बिधाता। नाद सरूप में हो रँगराता॥
उस्तत कीजो करो डण्डौत। नाद पुरख की राखो ओट॥
सदा अकाल जाल से न्यारा। नमो नमो सत रूप अपारा॥
सदा अलेप आप में पूरा। नमस्कार नित चरन हज़ूरा॥
दीनदयाल सब ताप निवारी। सत परतीत जो चरन पधारी॥
मानुष काया सुकृत होई। सत कीरत इक नाद परोई॥
खिमा दया चित आये विश्वासा। नाद सरूप जब घट परगासा॥
पाप पुन्न से मुक्ता होई। निर्वान रूप जब नाद परोई॥
मन की अगन सकल भई नासा। सत परतीत सत शबद बिलासा॥
अत चंचल मन धीर समाया। अनहद नाद रतन घर पाया॥

**तृखा मिटी संसार की, परम शान्त घर पाई।**
**'मंगत' अबगत नाद को, कोई विरला गुनी ध्याई॥967**

आलख नाद सरूप बिशम्भर। पवन पावक धारे नीर और अम्बर॥
धरत परकाश कर खेल रचाई। पंज भूत की कला बनाई॥
सरब के भीतर आप परगासी। चेतन पुरख परम सुखरासी॥
सरब जीयाँ को करे प्रतिपाला। अजर पुरख जप सिरी गोपाला॥
अपनी महमा आपे बिस्तारी। अपना कौतक आपे धारी॥
अपनी लीला आप ही देखे। त्रैगुन माया का चक्कर परीखे॥
जाननहार सो ही इक देवा। पल पल कीजो रे मन सेवा॥
माया देख ना भरमें भूल। भज करतार जगत का मूल॥
नाद विचार सकल भ्रम नासे। दृढ़ निश्चय परसे सुखरासे॥
भरम विकार चक्कर संसार। नाद ध्याये उतरे पार॥
खोज खोज के जानी सार। अबगत नाद सरब आधार॥
अपनी शकत आप बिस्तारी। पूरन पुरख चरन बलिहारी॥
तेज पुंज अत जोत अपारा। नाद सरूप आलख निरंकारा॥

सत सोझी मारग की पाओ। परम पुरख के चरन ध्याओ॥
मन के दोख नहीं उतरें मीता। बिन सत ज्ञान नहीं होयें पुनीता॥
इक परमेश्वर निस्चे धार। अन्तर बाहर करो विचार॥
माया झूट सत केवल नाद। भाओ भगत से नित आराध॥
नाम रूप गुन करम संसार। खप खप मरे जीव अंध्यार॥
सत कीरत इक नाद ध्याई। भरमन त्याग सतरूप समाई॥

**साधन सार है जगत में, अबगत नाद विवेक।**
**'मंगत' सत परतीत से, गुरमुख राखे टेक॥968**

उज्जल मनुआँ मनसा पूरी। दृढ़ निश्चय पाये रूप हज़ूरी॥
भरम ग़ुबार सकल चित नासे। अबगत शबद जो गुनी उपासे॥
मन अपने की दुबधा जाये। भाओ भगत सतनाम कमाये॥
निज ठाकर की नित करो अरदास। दीनदयाल करे दुःख नास॥
निज ठाकर में निश्चय धार। मानुष जनम की केवल सार॥
निज ठाकर को हिरदे पूज। सरब जीयाँ में तिसको सूझ॥
निज ठाकर का कथो विवेक। आद जुगादी सो ही सत एक॥
निज ठाकर सरब दातारी। तिस दाते दर होवें भिखारी॥
निज ठाकर नित किरपासिन्ध। मोह माया की काटे फन्द॥
निज ठाकर का धरे ध्यान। पद परसें अखण्ड निर्वान॥
एक बिरह नित मन में राख। सत ठाकर की रसना चाख॥
हिरदे अन्तर नित परगासी। रोम रोम में करे बिलासी॥
आप अजन्मा नित सम सरूप। सदा सलाह्यो प्रभ अबगत अनूप॥
सब कुछ शक्ती तिस की जान। जल थल में सो ही परवान॥
अपने मन की दुर्मत टार। सत ठाकर की कीरत धार॥
औगुन त्याग निश्चय सत पाई। अपार पुरख की कथें ज्ञाई॥
मन की मैल ना सहजें जाई। परम यतन लयो नाद ध्याई॥
साखी पुरख जब परगट पावें। डोलन त्याग तिस चरन समावें॥
सत पुरषारथ ये ही जग सार। सरजनहार मन माहीं चितार॥

**पूरन पुरख परमेश्वर, नाद रूप अखण्ड।**
**'मंगत' एको शकत सो, नित विचरे पिण्ड ब्रह्मण्ड॥969**

प्रभ अपने की कीरत गाई। नाद पुरख की सोझी पाई॥
मन की तपन सब लीन समाई। परम पुरख घर परगट ध्याई॥
मोह माया अज्ञान अन्धकारा। नाद ध्यान से पायो छुटकारा॥
सब ही मिथ्या सत एको देखा। छिन छिन चरनी कीना लेखा॥
मिटा गुबार चानन घर पाया। ब्रह्म नाद घट परगट ध्याया॥
प्रेम की खानी में मन ग़लताना। इच्छया भरम बिनसे दुःख नाना॥
महमा प्रभ की किसे सुनाऊँ। सिमर सिमर परसूँ सुख थाऊँ॥
आवागवन का बन्धन छूटे। साची प्रीत जो नाम रस लूटे॥
हो सुतन्तर रे गुनी मीता। भज करतार मुकत की रीता॥
सरब त्याग इक निस्चय धार। एक नाम मन माहीं विचार॥
पल छिन केवल जग का मेला। भज गोबिन्द जो सत सुहेला॥
औगुन नासे इस मन दुःखकारी। सत परतीत कथा नाद विचारी॥
अन्तर बाहर उस्तत गाओ। पल पल तिसका नाम कमाओ॥
करम जाल से होए न्यारा। दीनदयाल मिल संकट टारा॥
अपरम शकत परापत पाई। छिन छिन सिमर सतधाम समाई॥
काल करम विखाद विनासे। निर्मल प्रीत जो चरन उपासे॥
अनंक मनोरथ तृष्ना भरम जाए। सत रहनी इक नाद में पाये॥
जानत जाने अगम का भेद। नाद ध्यावें सिमरत वेद॥
अन्तरगत की कथा विचार। घर में परगट आप निरंकार॥

**सुख थाओं को खोजया, निज घट अन्तर मीत।**
**'मंगत' भई परापती, अखण्ड शान्त सुखरीत॥970**

साचा सुख केवल प्रभ रूप। करो विचार गुनी मुनी भूप॥
तीन काल जो अछेद अखण्ड। पूरन शकत नित परमानन्द॥
सदा परापत पूरन किरपाल। नित परकाश जप होवें निहाल॥

नित ही नित कर मन में सेव। साखी पुरष निरंजन देव॥
निर्मल थाओं सो ही जीव ठिकाना। जीवत में पद परस निर्वाना॥
अपना तन मन करो खुशहाल। अबनाशी पुरष जप दीनदयाल॥
करम चक्कर का मारग नासे। सतसरूप जप पुरख अबनासे॥
माया चक्कर को पल पल विचार। कोई ना वस्तु अन्त सुख सार॥
हरख शोक नित जीया जलावे। माया भरम में नित भरमावे॥
सुख प्रापत जो हरखत होई। विनास समय दुःख रूप लखोई॥
देह इस्थिर नर कभूँ ना रहाई। कोट जतन दिन रैन कमाई॥
कौन वस्त होवे सुखदाई। करो विचार गुनी गुनराई॥
भरम के भूले मत भरमाओ। काल बली नित खेलत दाओ॥
जीवत में कुछ करो कमाई। अन्तकाल जो होत सहाई॥
कूड़ झंजट जो संचत कीना। माल मुलक परिवार लखीना॥
देह विनास सभी गए छूट। भरम चक्कर में जम दीनी कूट॥
सुफल विचार करो दिन रात। अबनाशी पुरष की सेव कमात॥
जग में कोई ना इस्थिर रहाई। मूढ़पने में औध गंवाई॥
साचा मारग सुख सार चितार। दृढ़ निस्चे भज सरजनहार॥

**माया भरम असगाह है, डूबे गुनी गहीर।**
**'मंगत' तिस से उद्धरे, जो नाम जपें सुखसीर॥971**

अज अबनाशी निर्मल देवा। मूढ़ मनाँ कर नित ही सेवा॥
परम सखा सो ही नित सहाई। करो परीत गुनी गुनराई॥
अन्त की बारी कछु संग ना जाई। सत ठाकर होवे नित सहाई॥
सतपुरषों की कहनी चित धार। अपना जीवन आप सुधार॥
जिस साजन ने देह मन्दर साजा। नित ही सिमरो सो ग़रीब निवाजा॥
सरनागत हो तिस की मीत। सत सिखया धारो नित चीत॥
देवी देव जपें प्रभ एक। सिद्ध तपीशर राखें टेक॥
गुनी ज्ञानी नित करें पुकार। मूरख मन निश्चय सत धार॥
पिता पितामह इस्थिर ना रहाई। इक दिन चलना ऐसे जग भाई॥

साचा ठौर भज पुरख अबनाश। जो घट तेरे में करे परकाश॥
महमा तिस की अपरम अपारी। पूरन भाग जिस चित विचारी॥
सो ही मुक़ाम जीव का धाम। बिपत त्याग लेवे बिसराम॥
भरम त्याग नित खोज विवेक। सतसरूप केवल प्रभ एक॥
हाड मास का पिन्जर नासे। छार समान हो भूम बिलासे॥
किस वस्तु संग तू निहों लगाया। सरजनहार नहीं पलक ध्याया॥
छिन छिन घड़ी औसर नर जाई। बिना विचार ओड़क दुःख पाई॥
शान्त सरूप सरब गत पूरा। नाद सरूप भज पुरख हज़ूरा॥
जीवन रूप सोही प्रभ एक। माया भरम का मिथ्या लेख॥
नित ही जीव ये कष्ट विचार। सतसरूप जो नाही चित धार॥

**माया बन्धन अधिक है, पलक ना छूटन पाए।**
**'मंगत' प्रभ की भगत से, हरजन लीन समाये॥972**

जग का आवन ये ही सार। जो चित परसे सत नाद आपार॥
जग आवन की सोभा ये भारी। जो चित आवे सतनाद निर्धारी॥
जग आवन तिस सुफल करीना। दृढ़ निश्चे सतरूप को चीना॥
तिस जन बाज़ी लीनी जीत। प्रभ के चरन जिस पाई परतीत॥
तिस जन विगन से मुक्ता पाई। अन्तरगत जो भए प्रभ सरनाई॥
तिस जन को नहीं संकट व्यापे। पलक पलक जो नाम प्रभ जापे॥
तिस जन पाई अधिक प्रभताई। सत विश्वास जो भए प्रभ सरनाई॥
माया दुस्तर से निस्तर हुआ। प्रभ के चरन में जो जीवत मूआ॥
सरब जगत की जानी सार। जिस चित आयो नाम निरधार॥
पूरन बुद्धी सब विरत निवारी। अचल ध्यान सतनाम विचारी॥
अपने जीवन में जीवन पाया। अबनाशी पुरष घट माहीं ध्याया॥
संशे सूल से जीवन छूटा। भाओ भगत सतनाम रस लूटा॥
आवन जावन सब चक्कर विनासी। दृढ़ निश्चय प्रभ चरन निवासी॥
सुफल जनम कीरत सत पाई। एक परमेश्वर के चरन समाई॥
मानुष जनम भए आनन्द खानी। निर्मल प्रीत हरि भगत पछानी॥

सत निश्चय राखो नित गुनियाँ। स्वपन समान चक्कर ये दुनिया॥
जो आज थिया सो कल ना पाई। काल चक्कर की सकल प्रभताई॥
छिन छिन और की और है रचना। सतसरूप केवल अलपना॥
नित ही ताँ सों सेव कमाओ। सत परतीत निर्भयपद पाओ॥

**प्रभ चरन विश्वास भयो, विगन दोख सब नास।**
**'मंगत' निश्चल ध्यान में, पायो शबद परकास॥ 973**

मन का भरम सकल संसारा। ज्यों ज्यों कलपे करे विचारा॥
मन का भरम जरा और मरना। करम फल इच्छया में नित विचरना॥
आवागवन सब मन की नीती। आवे जावे करे पलीती॥
तृष्ना वेग सब मन की कारी। अनँक मनोरथ का भए पुजारी॥
मान अपमान सब द्वन्द विकारा। दुर्जन मन का सकल पसारा॥
जो इस मन की किरया देखे। मिले बैराग पाये ज्ञान विशेखे॥
जो इस मन की बिपता सोचे। मारग मुकत की किरया लोचे॥
अनँक मनोरथ पल पल धारी। अगन भोग में होवे अँगारी॥
छिन में रोवे छिन में हरखाये। भोगे भोग धीर नहीं पाये॥
जनम अनेक ऐसे भरमाई। दुर्लभ चोला मानुष पाई॥
दुर्मत रोग का करो उपाये। दुर्लभ देह में लयो सार कमाये॥
सत सुकृत ये कथा विचार। सतसरूप खोज निरधार॥
सतपुरषों की सिखया धार। पाप कूप से पावें छुटकार॥
पलक पलक का लेख लिखाओ। अपने स्वामी की सेव कमाओ॥
तिसके चरन की राखो प्रीती। सतपुरषों की खोजो नीती॥
बादमुबाद में नहीं जनम गुज़ारो। सत सिखया को हिरदे में धारो॥
पूरन पुरष केवल प्रभ आप। निमख निमख कर तिसका जाप॥
दुर्जन मन पर हो असवार। बाज़ी जीत लेवें संसार॥
प्रभ की आज्ञा में निश्चय राख। सत ठाकर की कीरत चाख॥

**जनम कदारथ तिसका भयो, जिस पाई प्रभ रास।**
**'मंगत' अन्तर ध्यान में, पायो शबद परकास॥ 974**

डोलन से सो निस्चल भया। साची प्रीत जिस नाद जपीया॥
विरत रहत मन भया इकागर। साखी पुरष घट भयो उजागर॥
दिवस रैन ये कार कमाई। राम चरन की कीरत गाई॥
तन मन धरया तिसके चरने। जरा मरन के पाए निरने॥
जड़ बुद्धी अन्धकार निवारी। सत कीरत केवल प्रभ धारी॥
नेम धरम की सार पछानी। उतपत परले का लेख लखानी॥
सकल जीयाँ घट एक दिखाया। पूरन पुरष केवल प्रभ राया॥
सुकृत सीख पाई मन माहीं। साधजनाँ की प्रीत लखाईं॥
औगन धोये पल पल इस चीता। निर्मल ज्ञान घट अन्तर पेखा॥
गाओ साजन मेरे साहब की रसना। बिनसे रोग जीव होये अलपना॥
गाओ साजन साहब वडयाई। तृष्ना रोग से मुक्ता पाई॥
गाओ साजन सार निधान। प्रभ की भगत जुग जुग परवान॥
मन की अगनी सकल भई दूर। जो चित आवे सतनाम हज़ूर॥
प्रीतम प्यारा सब संकट टारी। नेहचल चित नित चरन पधारी॥
प्रीतम प्यारा नित देवे खुशहाली। परसें नाम रतन सुख साली॥
प्रीतम प्यारे की प्रीत कमाओ। दुर्मत रोग का होवे अभाओ॥
प्रीतम प्यारा नित किरपा धारी। सो वड दाता नित ही वरतारी॥
साची दात नित प्रभ ने कीनी। खेम कुशल सत रसना चीनी॥
सील सुभाओ सब तपन विनासी। साधन सेव प्रभ चरन निवासी॥

**जीवत में जीवत भया, सत कीरत प्रभ पाए।**
**'मंगत' निर्मल प्रीत से, हर के नित गुन गाए॥975**

जीवत में जीवन को पाया। अजरपुरष का लेख लखाया॥
मन की भरमन जतन से गई। सत परतीत भयो शबद सनेही॥
वस्त अगोचर घर में पाई। सिमर सिमर सब कलह मिटाई॥
ज्ञान विज्ञान पायो संजोगा। काल करम का नास्यो रोगा॥
मन अपने विच भई खुशहाली। अखण्ड शबद घर पाया किरपाली॥
सत सोहेला प्रभ का गाया। पूर मनोरथ मंगल पाया॥

सब साजन ये रसना चाखो। नाम सिमर अभयपद लाखो॥
ऊँच ज्ञाई प्रभ नाम विचार। ऊँच सोभा पावें सुखसार॥
ऊँच विवेक साहब का एक। निर्मल होवे इस मन का भेख॥
ऊँच प्रभता तिस जन ने पाई। जो नर भयो प्रभ की सरनाई॥
जीवन पाया परम सुखरासी। काल करम की फाँसा काटी॥
उठ साजन ये लेख विचार। मन अपने में भज करतार॥
ना ये समाँ ना कीरत रहाई। ना इस्थिर रहे ये प्रभताई॥
सुख में सुख की करो संभाल। बिनसे दुःख माया जंजाल॥
पूरन साध की सेव कमाओ। निर्मल सोभा प्रभ की पाओ॥
जीवन में ये जतना राखो। सतपुरषों की बानी भाखो॥
नाम रसायन रसना घाल। घर में परसें दीनदयाल॥
औगनकारी अँधला जीया। नाम सिमर के निर्मल थीया॥
अत ही दात संतन ने कीनी। मूढ़मती दुबधा सब छीनी॥

**सतपुरषों के मेल से, सत की कीरत पाई।**
**'मंगत' दृढ़ विश्वास से, भयो हरजन की सरनाई॥976**

सतपुरषों संग मेला होई। सत की कीरत हिये परोई॥
चरंजीव पद अन्तर पाया। दृढ़ निश्चे मन लीन समाया॥
अगोचर पुरष परगट घर ध्याई। सत शोभा संतन से पाई॥
मन अपने में उद्दम धार। सतपुरषों की सेव विचार॥
जनम मरन का निरना पायें। साखी रूप की कीरत गायें॥
निर्मल ज्ञान पाए सत नीती। सत साधू संग जो धरे प्रीती॥
कायरपना इस मन का जाई। होवे सुतन्तर ले प्रभताई॥
सत पुरषारथ हिरदे जागे। सत साधू की सेव जो लागे॥
मलिन भाओ सब मन का नासी। अबगत ज्ञान अंतर परगासी॥
दुर्लभ जीवन तिसका होई। एह बिध रहनी जिस जन परोई॥
मुकन्दसरूप मिले अबनाशी। सत साधू के जो चरन निवासी॥
सुकृत सीख सुनो मन मेरे। साध सरन मिटे पाप घनेरे॥
औगन नास खिमा चित पाई। सत साधू जब मेल मिलाई॥

मिरतक छोड़ जीवन को पाया। साध वैद की सरनी आया॥
दु:ख सुख से मन भया न्यारा। साध की सिखया से उतरे पारा॥
प्रभ की महमाँ साधू परगासे। निर्मल प्रीत प्रभ चरन उपासे॥
सत साधू की वडी वडयाई। परगट रूप घर नाद ध्याई॥
साध मिले सुख जीवन पाया। इक निश्चय प्रभ चरन समाया॥
थकत भयो मन औगनकारी। सत कीरत प्रभ चरन विचारी॥

**सत सरूप प्रभ गाया, निर्मल पाई सीख।**
**'मंगत' भव से उतरे, मिल सत संतन की दीख॥977**

उठ रे मनुआँ सेव कमाओ। सत साधू के दरशन पाओ॥
सत सिखया हिरदे में धारो। भवसिन्धू से उतरें पारो॥
करम जाल वैतरनी धारा। साध सीख से उतरें पारा॥
उट्ठत बैठत निश्चय ये राख। साची सिखया सन्तन की चाख॥
नाम निधान पावें सुखरासी। इस्थिर धाम में पायें निवासी॥
सत परमेश्वर की चरनी भेंटे। सिखया साध के लेख को लेखे॥
शान्त सुभाओ मन निर्मल थीना। साध की सिखया से दुबधा छीना॥
पाप कुपथ से मिली ख़ुलासी। दृढ़ निश्चय प्रभ चरन उपासी॥
मूरख मन तूँ क्यों भरमाया। पूरन मंगल सन्तन ने पाया॥
नित ही तिनके चरन पधार। उतरे मन की मलिन आपार॥
साची सीख जिस जन परोई। निर्मल शोभा तिसकी जग होई॥
निश्चल चित तूँ खोज निधान। सतसरूप केवल निरवान॥
घट घट खोज पावें अबनाशी। सतगुर साध ये लेख लिखासी॥
दुर्मत रोग लागा अत भारी। सतगुर वैद पाये किरपा धारी॥
नाम की औखद पान करीना। तिनकी किरपा से दुबधा छीना॥
रे मन मेरे नित हो सरनाई। साध सरन मिले अत प्रभताई॥
अगम निगम का भेद लखावें। निर्मल कीरत प्रभ की समझावें॥
जग संसे का मोह चुकाई। सत साध की जब सिखया पाई॥
नित बलिहारी जाऊँ बलहार। साध सरूप सब बन्धन टार॥

**सत सिखया जिसने पाई, मिल सत साधू के संग।**
**'मंगत' सो निर्मल भया, चित चढ़े प्रेम का रंग॥978**

दुबधा धारी ये मन दुःखदाई। दुबधा नासे प्रभ कीरत गाई॥
भाओ प्रीती पाई करतार। पल पल सिमरें सत सरजनहार॥
साजन सिमरे मन मंगल पाई। बिन भगवन्त नित आवे जाई॥
तूँ ठाकर सरब समराथा। अतुल शकत नाथन के नाथा॥
तूँ परमेश्वर सरब परकासी। कीरत गाऊँ सब बन्धन नासी॥
तूँ ही तूँ दाता सुख सार। माँगूँ निर्मल शबद विचार॥
तूँ कर्ता मेरा रखवारी। नित ही नित जाऊँ बलिहारी॥
अत प्रभता तेरी प्रभ जानी। तीन लोक में तूँ परवानी॥
अत परकाश तेरा परकाशी। रवी चन्दर नित चरन बिलासी॥
अत आनन्द तेरा सतरूप। बिषन विरंच धरें ध्यान सरूप॥
तूँ किरपाल जब किरपा कीनी। मूढ़मती की दुबधा छीनी॥
माँगूँ नित ये ही सार। साची कीरत दीजो करतार॥
मंगल होये मन शान्त समाई। घट घट देखूँ तेरी प्रभताई॥
पूरन सेव कराँ दिन राती। निश्चल ध्यान धरूँ परभाती॥
परगट चरन की सेव कमाऊँ। दीनदयाल दीजो सत थाओं॥
एह मन चंचल अत ही घनेरा। पूरन किरपा से हरो बखेड़ा॥
साची प्रीत से सरनी आया। लज्या राखें तूँ पूरन प्रभराया॥
इस मन को दीजो विश्वासा। साची प्रीत करे चरनी वासा॥
बारम्बार माँगूँ ये भीख। किरपासिन्ध दीजो ये दीख॥

**प्रभ के चरन पुकारयो, सो वड है दातार।**
**'मंगत' माँगे नाम रस, प्रभ पूरन किरपा धार॥979**

एक साहब का रख विश्वासा। पूरन होवे जग में आसा॥
साची कीरत नित नित भाख। पार पुरख की रसना चाख॥
परले पार सो आप समाई। ऊँच से ऊँची साहब वडयाई॥
नित ही तिस की सेव कमाओ। दुर्मत जाल से मुक्ता पाओ॥

प्रभ जी दाता परम दातारी। दीन दुःखी का संकट टारी॥
सदा दयाल सदा किरपाल। जो जो सिमरे होये निहाल॥
नित परकाशे पिंड आकार। साखी पुरष सो सरजनहार॥
नित प्रतिपाल करे सब जीयाँ। पूरन पुरष ठाकर सुख थीयाँ॥
नित ही तिस की करो अरदास। मोह भरम काटे जम फाँस॥
नित ही तिस की टहल कमाओ। पलपल आज्ञा मन माहीं ध्याओ॥
सो करतार सरब परकाशी। पूरन चित नित चरन उपासी॥
अन्तर आप बाहर भी सोई। सर्वज्ञ रूप सरब समोई॥
जल थल पवन पावक आकासा। सब को कीजे साहब परकासा॥
सब कुछ करके रहे न्यारा। सत ठाकर का अजब पसारा॥
गुनी मुनी तपीजन हारे। तेरी महमा का पायो ना पारे॥
वाह वाह खेल ये अजब रचाई। आपे ठाकर आपे वरताई॥
तेरी तुझको होवे डण्डौत। पूरन पुरख तेरी नित ओट॥
साची प्रीत दीजो सत सेव। पूरन पुरख तूँ देवन देव॥
सब परताप अपना दिखलाओ। विछड़े जन को चरन मिलाओ॥

**पूरन किरपा धार तू, साहब दीन दयाल।**
**'मंगत' की बिपता हरो, पल में करो निहाल॥980**

तूँ ठाकर सरब सुखरासी। नाद सरूप तूँ ही अबनासी॥
घट घट व्यापक अन्तरयामी। पूरन पूर तूँ ही बिसरामी॥
जगत है खेत तू रूप किसाना। लख चौरासी सब जन्त उपजाना॥
आप रखया करे प्रतिपाल। सरब स्वामी तूँ आप दयाल॥
अद्भुत जंतर माया का धारी। जाननहार तूँ ही दातारी॥
माँगूँ नाम चरन की सेवा। होवो दयाल देवन के देवा॥
तूँ अबनाशी चराचर पूर। समरथ पुरष तूँ आप हज़ूर॥
अनमत जीव की देखें किरया। बखश देवें जो सरनी पड़या॥
तेरी महमा तूँ जाने आप। अपरम अपार तेरा परताप॥
तूँ सत ठाकर किरपाधारी। मूरख जन का संकट टारी॥

पूरन पुरख परमेश्वर मेरे। नित सरनागत हूँ चरनी तेरे॥
परम वडयाई अपनी प्रभ दीजो। भाओ भगत से मन को सीजो॥
तेरी ओट तेरा आधार। तूँ ही तूँ सरब दातार॥
अन्तर सिमरूँ बाहर ध्याऊँ। पूरन प्रीत जस तेरा गाऊँ॥
अन्धकार विनास चानन घर कीजो। मूढ़मती को रसना सत दीजो॥
अनखुट भण्डार का तूँ भण्डारी। दीजो दान ग़रीबी सारी॥
निमख निमख तेरी कीरत गावाँ। तन मन वार तेरे चरन ध्यावाँ॥
तूँ किरपासिन्ध होवें किरपाल। परगट होके करें निहाल॥
ठाकर साचा नित तोहे पुकारूँ। जल थल अन्दर तोहे इक निहारूँ॥

**एको प्रीति चरन की, जिस जन अन्तर ध्याई।**
**'मंगत' सो निस्तर भये, नाद पुरख घर पाई॥981**

नाद सरूप अगम अबनासी। सेव करे तब मिटे चौरासी॥
करम जंजाल ये अती बखेड़ा। नाद ध्यान हरे सब पीड़ा॥
निहकरम सरूप सो परमानन्द। नित परकाश तत्त नाद अखण्ड॥
पूरन भाग सत कथा लखाई। अन्तरगत जानी प्रभताई॥
मन अन्तर मन आन समाया। सतसरूप नाद प्रभ ध्याया॥
साची भगती कीरत सच पाई। अन्तरगत भयो प्रभ सरनाई॥
कपट विकार दूषना नासी। सत परतीत जो चरन निवासी॥
सत पुरषारथ मन में पायो। अगम पुरख से प्रीत कमायो॥
उठ साजन वोह देस विचार। जाँ में वसया आप निरंकार॥
उठ साजन वोह लेख लखाओ। जिस बिध पावें प्रभ सुखराओ॥
उठ साजन ये जीवन विचार। पल पल साचा नाम चितार॥
बन्ध ख़ुलासी अपनी कीजो। सत की ओट घट अन्तर लीजो॥
पाँच दोख की मैल उतारो। त्रैगुन जाल की ममता टारो॥
अपना आप भरम त्याग। आप सरूप में उठ के जाग॥
नित आनन्द सो रूप आपार। घट घट अन्तर करे पुकार॥
सतगुर सिखया में जीवन काढ़। नाद सरूप अन्तर विचार॥

सो परमेश्वर सब बिपत निवारी। पूरन चित से हो तिसका पुजारी॥
स्वामी साचा मन तन रमाओ। भाओ भगत कीरत को पाओ॥
बिना परमेश्वर नहीं दूजे सेव। दृढ़ निस्चे जप देवन देव॥

**एक साहब को सिमरिये, एक पाइये विश्वास।**
**'मंगत' दूजी प्रीत में, फिर फिर गवन निवास॥ 982**

काल जाल का होवे अभाओ। सत सुकृत हरि चरन समाओ॥
अपने ठाकर को अन्तर जान। नित निरंतर करो ध्यान॥
रोम रोम में सो निवासी। जड़ काया को नित परकाशी॥
पतितपावन सो निर्मल देवा। सत परतीत से कीजो सेवा॥
क्यों मूढ़मती तूँ भयो ग़लताना। निज ठाकर को नहीं हिरदे जाना॥
क्यों मूढ़मती को नहीं त्यागा। जम का मुदगर मूँड पर लागा॥
क्यों नर अपना नहीं किया विचार। किस कारन आया संसार॥
सतपद खोज अजर अबनाशी। पूरन पुरख चित लयो उपासी॥
मारग कठिन ये संसारा। भरमें जीव सहवे दुःख भारा॥
इस सागर में किसे तृप्त ना पाई। आस आस में आवे जाई॥
दाने बीने गुनी ज्ञानी। नित भरमायें दाते दानी॥
इस मन का नहीं शंका जाई। राम रमत बिन नित दुःख पाई॥
भरमत भरमत जग में आया। मानुष चोला जीवन पाया॥
अन्त दिसा का लेख विसारी। कूड़ कुटुम्ब में गयो भूल अन्धकारी॥
किसी की बनत नहीं इस्थिर रहाई। इक दिन पिंजर छार समाई॥
क्यों नर कूड़ भरम में सोया। सो ही काट जो अपना बोया॥
सत मारग सतरूप विचार। मानुष जनम की लख सत सार॥
अमरत नाम साहब का गाओ। सत ठाकर की प्रीत कमाओ॥
पल पल चरनी करो दण्डौत। आज्ञा मान पावें वस्त अनूप॥

**कारन कर्ता सो समराथा, परम शकत निर्वान।**
**'मंगत' निर्मल प्रीत से, पल पल करो ध्यान॥ 983**

सो ही तेरा थाँ सुखरासी। जाँ को परस मिटे भरम चौरासी॥
इन्द्री भोग में जीव लिपटाया। भोग भोग नहीं धीरज आया॥
छिनकारक ये भोग रहाई। तिन की प्रीत में नित दुःख पाई॥
इन्द्री भोग ये दुर्गम संसार। बाँधा जीव नित होवे ख़वार॥
वार पार ना सोझी आवे। भोगे भोग नहीं पल तृपतावे॥
आसा तृष्ना अत परचण्ड होई। जरा परापत पर शान्त ना पाई॥
ऐसे जनम अनेक विताये। मूढ़ मनाँ तूँ क्यों भरमाये॥
समाँ गया अब उठ के जाग। नाम रसायन रसना लाग॥
अगन विनासे चित ठाण्डा होई। मिल सतगुर सतनाम परोई॥
नाम ही जीवन मन में धार। साचे नाम का करो वापार॥
नेहचल चित रसना को चाख। बारम्बार मन नाम में राख॥
छिन छिन मन अपने को ठाक। सतनाम नारायन चाख॥
निर्मल उद्दम ये मन धार। सत ठाकर की सेव विचार॥
ऐसी जुगती जिस बन आई। नेहचल चित इक नाम ध्याई॥
बन्धन छूटे घर शबद पछानी। मारग मुकत का भेद लखानी॥
धन्न वँजारा जिस खाटी ये सार। अपने जीवन का कियो सुधार॥
लाख जीवों की त्रास मिटाई। कंचन काया जप नाम सुखदाई॥
इच्छया चिन्ता मोह अन्धकार। नाम जपे तब मिटे ग़ुबार॥
मूढ़मती करतूत त्याग। सत मती धरो अनुराग॥

**दीन ग़रीबी रसना, दृढ़ निस्चे चित धार।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, दुर्मत मिटे गुबार॥984**

परम पुरख घट अन्तर समाई। मिल सतगुर सत सेव कमाई॥
जिस प्रभ ने रचया संसार। बिन्ध से कीना पिण्ड आकार॥
जिसकी शकत सब चक्कर चलावे। लाख चौरासी जन्त सुख पावे॥
जिसकी आज्ञा में रवी चन्द्र परगासा। देवी देव करें अरदासा॥
कारन रूप जो सरब का मीत। तिसको ध्याइये धर निर्मल चीत॥
सब ही ताप तपन को नासे। दीनदयाल की करो अरदासे॥

दृढ़ निस्चे से चरन चितार। रंचक पायें ना दुःख की सार॥
परम आनन्द नित सुख वरतारी। तिसकी आज्ञा मन माहीं विचारी॥
गरब ग़रूर देही का त्याग। प्रभ के चरन में धर अनुराग॥
सरब जगत का सोही स्वामी। खेले खेल नित अन्तरयामी॥
नित ही तेरी रखया करे। मोह माया के ताप को हरे॥
पततपावन सो पारगरामी। भज करतार परम सुखगामी॥
मूरख मन दूजे निहों लाया। राम विसार परम दुःख पाया॥
झूट माया संग प्रीत कमाई। अन्तकाल सब बिपत लखाई॥
मान मध में क्यों भरमाया। अन्तकाल चले पछताया॥
राजा राना होवे अमीर। गुनी ज्ञानी सब तजें शरीर॥
दुःख सरूप जगत सब होई। छाड सरीर जब जीव चलोई॥
अधिक संकट का करो उपाये। राम रमत परम सुख पाये॥
राम नाम करो विचार। साची प्रीत हिरदे में धार॥

**अपने ठाकर संग निहों लगाओ, दुर्लभ कारज जान।**
**'मंगत' संकट सब मिटे, जप पतितपावन भगवान॥985**

शास्तर सिमरत करें पुकार। सत करतार जपो सुखसार॥
मन अपने में नाम कमाओ। चित से पूज परमसुख पाओ॥
दूजी किरया ध्यान त्यागो। निर्मल कीरत नाम में जागो॥
नाम पदारथ शान्त दिखाई। जो जो सिमरे परमसुख पाई॥
नाम विसार सो मूढ़ अंजाना। गरब धार अन्त पछताना॥
झूट पिंजर में भयो मतवारा। पूरन पुरख नहीं चित विचारा॥
भरम की खानी में फिर फिर आवे। नाम विसार ठौर नहीं पावे॥
सुन कुलवन्ता ये बचन सुखरासी। प्रभ की भगत काटे जम फाँसी॥
सत निश्चय प्रभ चरन में राखयो। दीन दुःखी की सेवा लाखयो॥
वैर त्याग मन प्रेम लखाई। सत ठाकर तब भये सहाई॥
सरब को जीवन सोई देवे। जो जो जपे परमसुख लेवे॥
सब कुछ खेल तू तिसका जान। ऊँच नीच में सोई पछान॥
सब जीवों से हेत विचार। साचा हुकम जान करतार॥

अपनी ममता हिकमत त्याग। सत समता में पावें जाग॥
सकल करम तिस चरनी छोड़। आज्ञा मान होवे दुःख दूर॥
परमेश्वर की उस्तत पायें। दुर्मत त्याग निज रूप समायें॥
करो कमाई रे गुनवन्ता। राम भगत देवे परसन्ता॥
माया दुरगम सागर जान। लख चौरासी परसें दुःख खान॥
सत वस्तू नहीं हिरदे जानी। माया भरम में डूबे प्रानी॥

**सत सरूप नारायन बिन, जीव परम दुःख पाये।**
**'मंगत' माया भरम में, फिर फिर जूनी आये॥986**

ना सत सिमरे ना सत पछानी। झूट माया में गररसे सब प्रानी॥
झूट जतन में जीव ये लागा। माया चक्कर में फिरे अभागा॥
संशय शोक ना मन से जाई। घाले सकल झूट प्रभताई॥
देह विनास रोवे अंजान। अब रोवत क्या बने नादान॥
जीवत में नहीं सतपद ध्याया। मूढ़मती धर अब पछताया॥
सब की दशा ये ही नर होई। राजे राने चले अन्त को रोई॥
कोई सुगढ़ सयाना घाले सत घाल। जीवत में नित जपे दयाल॥
भरम की टाटी जीवन में तोड़े। नाम रसायन रसना चित जोड़े॥
सत परमेश्वर की सेव कमाए। निज मरने का करे उपाये॥
झूट भोग से उपरस होई। नाम की रसना हिये परोई॥
पल पल अपना ठाकर ध्याई। आज्ञा मान परम सुख पाई॥
सकली सम्पत प्रभ चरन त्यागी। अनजान भाओ में गुरमुख जागी॥
मोह माया सब ताप निवारी। सत ठाकर भये किरपाधारी॥
अन्तर शबद परापत पाई। हरजन पल पल लेख लखाई॥
मन तन अरपे तिसके चरने। नित आनन्द के पाये निरने॥
तन मन ठाण्डा सत शबद ध्याई। तृष्ना अगन सब तृखा मिटाई॥
पूरन भाग ये कीरत जानी। प्रभ अपने की सरन पछानी॥
झूट त्याग प्रभ सेती निहों लागा। गुर परसाद गुरमुख जन जागा॥
अमरत पीवे प्रभ चरन समाये। पूरन भाग कोई गुनी जग आये॥

**माया चक्कर को छेद के, हरपद परसे जोये।**
**'मंगत' भयो निहाल सो, नित नाम की मनी परोए॥987**

सत सिमरन जिस जन ने पाया। मोह माया का ताप मिटाया॥
एक नाम की लागी प्रीत। हरजन चले सकल जग जीत॥
तृष्ना अगन से भई ख़ुलास। प्रेम सरूप पायो अबनाश॥
सत सन्तन की धूड़ लखाई। निज घर ठाकर प्रापत पाई॥
पूरन पुरख प्रभ भये दयाल। भरम करम काटा जम काल॥
भाग वडाई पाई जन पूरी। प्रभ के द्वार की मिली मज़दूरी॥
सत सेव सतनाम कमाई। निर्मल निहों हर चरन का पाई॥
मूरख मन को सुकृत कीना। दुबधा काट प्रेम रस दीना॥
वड दाते ने कीनी दात। निज घर आया ये मन कमज़ात॥
सत प्रीती चित रही समाये। नित नित दात करे प्रभराये॥
पूरन जुगती से औगन धोई। पल पल निर्मल नाम परोई॥
सत मारग सन्तन दिखलाया। आनन्द सरूप साहब घर पाया॥
नित ही कीरत साहब की पाई। लोक लाज ममता बिनसाई॥
अपने मन का बनयो साखी। पद नारायन अन्तर चाखी॥
मन लागा सतनाम में आये। करम वासना रोग मिटाए॥
पूरन प्रभ जी भये किरपाल। अनमत कूकर कियो निहाल॥
सत थाओं की सोझी पाई। सतसरूप की कीरत गाई॥
भयो ग़लतान निज रूप के संग। निर्मल प्रेम का चढ़यो रंग॥
नाम निधान पाई जग सार। पूरन पुरख चरन बलिहार॥

**एको प्रीती प्रभ चरन की, दृढ़ निश्चय से पाई।**
**'मंगत' मिली सत शान्ती, दुर्मत रोग मिटाई॥988**

माया चक्कर अत ही बिस्माद। जुगत पहचाने कोई गुरमुख साध॥
अपनी कल्पना आप बिस्तारी। अनमत जीव की भई ख़वारी॥
सुकृत घड़ी सतसंग समाया। सतसरूप का निरनय पाया॥

आतम तत्त का पायो विश्वास। मोह ममता की काटी फाँस॥
नित नित आतम का कीना निध्यास। मिथ्या भरम चित जड़ता नास॥
करम चक्कर से भयो निस्तार। परगट पायो सत पुरख निर्धार॥
करम बन्धन से पलक नहीं छूटे। आवागवन नहीं संसा चूके॥
अनँक सयानफ़ करे अंजाना। करम फाँस नहीं मिटे अज्ञाना॥
सतसरूप जब हिरदे गाई। करम मैल सकल उतराई॥
अपना जतन करे निसतारी। सतगुर पूरे जब किरपा धारी॥
करम जंजाल अधिक भयाना। बिन भगवन्त नहीं मिले कल्याना॥
देवी देव ना कोई छुड़ावे। अपनी करनी फेर फरावे॥
क्यों मूरख मन तू सत विसराया। शान्त सरूप नहीं ठाकर ध्याया॥
कर्ता पुरख हिरदे में जाप। तिस बिन और कछू नहीं थाप॥
बिन परमेश्वर नहीं दूजे ध्याओ। पलक पलक तिसका जस गाओ॥
एक परमेश्वर ही राखनहारा। सरब जीयाँ को देवे निस्तारा॥
एक परमेश्वर सब मनसा पूरे। तिसे ध्याओ पल पल मूढ़े॥
एक परमेश्वर की ओट विचार। दूजा भाओ नहीं हिरदे धार॥
एक परमेश्वर की करो अरदास। सतगुर साधू की सीख निवास॥

**एक परमेश्वर आधार हो, दूजा भाओ त्याग।**
**'मंगत' मिले परमगत, मिल साध संगत रंग लाग॥989**

सतसरूप परापत पाई। पूरन सतगुर मिले सुखदाई॥
तिसकी सेव से भयो विश्वाशा। पूरन पुरख पायो अबनाशा॥
माया जाल का भेद लखाई। सत ठाकर की सेव कमाई॥
नित ही तिन की आज्ञा चित मानी। करम कठोर की भई तब हानी॥
जीवत में निज काज सँवारा। सतसरूप जपा करतारा॥
पूरन भाग हर चरनी चित लागा। कोट जनम का सोता जागा॥
दुर्मत रोग का कियो उपाये। सतपद आतम निज रूप दिखाये॥
माया छाया सब लीन समाई। सतपुरख घर सोझी पाई॥
ऊँचे धाम जाये वास करीना। झिलमिल दर्शन जोत का लीना॥
करम विकार कामना नासी। राम चरन चित भयो भरवासी॥

भरम की आँधी मिटी गुबारी। सत ठाकर का भयो पुजारी॥
सब जीयाँ संग साँझ बनाई। सब के हेत की साखी गाई॥
दु:खियों का दु:ख नित निवारी। अपना सुख दीना वरतारी॥
प्रेम भाए भये चरनी धूड़। भये दयाल प्रभ आप हजूर॥
अगन विनास खिमा चित आई। मोह विनास सतनाम को गाई॥
पूरन मुशक़्क़त मन पूरन भयो। भए परापत निरंजन देओ॥
प्रभ के चरन की रहे प्यास। सिमर सिमर भए दु:ख नास॥
निर्मल कीरत ये जग में पाई। सतगुर दया सब ताप मिटाई॥
नीर तरंग ज्यों नीर समाया। एह बिध राम रमत सुख पाया॥

**प्रभ सेती मेला भयो, मोह अगन सब नास।**
**'मंगत' बिपता सब हरी, सतगुर सीख परगास॥990**

सतगुर सिखया सब बन्धन काटे। नाम निरंजन हिरदे में राटे॥
भरमन त्याग मन एक समाया। एको सिमर परम सुख पाया॥
पूरन दाता सतगुर जग आये। राम रतन की सार चखाये॥
बन्धन काट जन कियो निहाल। पूरन करमी प्रभ पायो दयाल॥
एको सिमरत एको ध्यान। अन्तर बाहर एक पछान॥
एको नाम अन्तरगत पाया। प्रभ के चरन में लीन समाया॥
प्रभ को सिमर प्रभ रूप समाई। दुर्मत भेद ना रह्या काई॥
हरजन हर के चरन ध्याये। दुबधा त्याग मंगल को पाये॥
जिस ठाकर को भिन्न कर ध्याया। सो ठाकर निज रूप दिखाया॥
उज्ज्ल बुद्धी भयो परगासा। सत सरूप में लियो निवासा॥
एक दो का भरम मिटाई। पूरन पूर प्रभ एक दिखाई॥
बन्धन नास पाया सत रूप। आलख नाद बिसमाद सरूप॥
कथी कहानी ये अचरज मीता। अकथ कथा घर दर्शन लीता॥
सुरत निरत दोहू इक घर आये। अनहद नाद मंगल को पाये॥
भई सुहागन ठाकर घर पाया। दुर्मत रोग माया बिनसाया॥
चढ़ी आकास माया गढ़ तोड़ा। सत सरूप चित चरनी जोड़ा॥

अखण्ड परकाश जोत निर्वानी। अनहद नाद रमत सुख पानी॥
पूरन विवेकी मारग ये जाता। ताप त्याग निज रूप पछाता॥
अजरपुरष सँग मेल मिलाई। गुर परशाद परमगत पाई॥

**पारब्रह्म घट पायो, त्रैगुन ताप विनास।**
**'मंगत' सतगुर सेव से, पद परसा अबनास॥991**

जतन किये से रतन पछाना। पूरन पुरख ठाकर निर्वाना॥
घट घट व्यापक सदा अलेपा। सत सरूप का कथो विवेका॥
अगम अपार अत ही बिसमाद। सरूप पछाने कोई गुरमुख साध॥
इस मन की दुबधा तब नासे। सत परतीत प्रभ चरन उपासे॥
प्रभ सिमरन बिन नहीं पाये कल्याना। जुग जुग भरमे ये जीव अंजाना॥
सकल निधान ये ही जग सार। प्रभ का सिमरन करे निस्तार॥
समाँ अमोलक न पलक गँवायो। पूरन प्रभ की सेव कमायो॥
तिस बिन तेरा नहीं कोई ठिकाना। कियो विचार जुगती बिध नाना॥
जो सरजीवे ये काची भीत। नित ही तिसको राखो चीत॥
जिसने धारा ये सकल पसार। तिस के चरनी पाओ आधार॥
गुनी मुनी जग आये सयाने। हर की भगत चित सार पछाने॥
ऐसा जीवन तूँ मन धार। मानुष जनम नहीं बारम्बार॥
सुकृत कीरत लयो जग कमाये। सत परतीत लयो चरन ध्याये॥
सरब जीयाँ की सेवा धार। सब में देख एको करतार॥
तेरा भरम तभी नर नासे। जो चित राखें प्रभ भरवासे॥
तन मन धन तीनों को त्याग। सत ठाकर की सेवा लाग॥
तिस की दात तिस आगे भेंट। पूरन पुरख सब हरे विखेप॥
कामना त्याग चित धर निष्कामी। पूरन पुरख पायें अन्तरयामी॥
ये ही लाभ जीवन का भारी। सत ठाकर की जो सरन विचारी॥

**पारब्रह्म की सरन में, जो जन आये मीत।**
**'मंगत' सो निस्तर भये, भवजल गहरी भीत॥992**

अबगत पुरख घट परगट ध्याइये। नित आनन्द मंगल घर पाइये॥
देवन देव तेरी अरदास। नित तेरे चरन में करूँ निवास॥
नित ही प्रीत तेरी मन रहाये। तन मन तज तेरी सेव कमाये॥
खेम कुशल तूँ नित सुखदाता। नमो नमो नित पुरख विधाता॥
सकली किरया सोंपी तुद चरना। नित ध्याया तेरा रूप अवरना॥
खोजत खोज मैं कहाँ तोहे पाऊँ। हिरदे कवँल में तोरा लेख लखाऊँ॥
मानक तूँ विच कीच समाया। सतगुर सराफ़ी परगट दिखलाया॥
परगट देख मन भया आनन्दा। मन का मिट गया धावन धन्दा॥
आज्ञा तेरी में तन मन वारूँ। खेम कुशल तेरे चरन पधारूँ॥
बलिहारी मैं डण्डवत कीना। कोट भान प्रभ दर्शन लीना॥
नमो नमो प्रभ अन्तरयामी। सरब ज्ञाता तूँ बिसरामी॥
माया का बन्धन अती घनेरा। प्रभ जी काटो मेरा भव फेरा॥
तुद बिन मेरा नहीं कोई सहाई। राख लें तूँ पार पराई॥
तुद सिमरन पद ऊँच समाया। जरा मरन जाँ काल नहीं पाया॥
जम कण्टक का भय सब नास्यो। अनन प्रेम तेरा मन परगास्यो॥
मन बानी तोरे चरन समाई। तीन ताप की तपन बुझाई॥
आद अन्त इक तोहे पछाना। अगम अगाध पुरख निर्वाना॥
नहीं था धरत आकास नीरा। पावक पवन वहाँ नहीं झुलेरा॥
जाँ तूँ वसया ना दूजा कोई। केवल रूप तेरा अबगत होई॥

**परगट पुरख घर ध्याये के, करम रोग भये नास।**
**'मंगत' नित आनन्द में, नित मन करे बिलास ॥993**

अपरम अपार पुरख पुरखोतम। अबगत नाद जोत अनूपम॥
कामन सयानी जिस कन्त मनाया। आप त्याग के प्रभ घर पाया॥
सुकृत कारज तिस अपना सँवारा। पूरन सुहाग जीवन में धारा॥
अब कुछ दूजा नहीं चित भाये। परम समरथ सत कन्त मिलाये॥
तीखन बाट जाँ साहब बराजा। सीस दिये बिन सरे नहीं काजा॥
जीवत में जो सीस त्यागी। कामन सो ही परम वडभागी॥

मिल सत ठाकर सब गवन टारी। आनन्दसरूप मन मगन विचारी॥
नित ही खोज साहब की बाट। दुःख रोग सब संशे जात॥
पूरन दयाल जब ठाकर भये। परगट रूप घर दर्शन लये॥
दरस पाये मन भयो निहाल। स्वाती सीप ज्यों मेल सुख भाल॥
घर विच सतगुर परगट पाया। शबद सरूप पल पल ध्याया॥
कीरत गाओ निर्मल तिस चरना। अखण्ड नाद सरब विचरना॥
अपरम शोभा मोहे सतगुर दीनी। राम रमत सब दुबधा छीनी॥
अचरज मानक नज़री आया। मोल तोल नहीं तिसका पाया॥
गगन कपाली में डेरा कीना। अनहद नाद रतन को चीना॥
सुरत इकागर नाम ध्याई। साचा प्रेम पल पल मनाई॥
शबद ध्यान में भई मतवाली। मिला सुहाग परम सुखसाली॥
एह बिध रसना नित नित गाओ। तीन भवन गति अबगत पाओ॥
गुपत भेद परगट तब पाई। उनमुन मन्दर में सुरत ठहराई॥

**मारग प्रेम का कठिन है, सीस दिये तब पाइये।**
**'मंगत' निर्मल देस वोह, जाँ अबगत पुरख मनाइये॥994**

ऊँचे शिखर शबद का थाना। मारग प्रेम किसे गुनी पछाना॥
सुन्न महासुन्न परले पार। आलख पुरख वहाँ करे पुकार॥
सुरत संगड़ी अन्तर कीनी। सत ठाकर की शोभा लीनी॥
बजे मरदंग रबाब नफ़ीरी। अगोचर पुरख की पाई जागीरी॥
सुन सुन मनुआँ नित कुमलाये। करम त्याग निहकरम गत पाये॥
सुन्न शिखर में बाजे तूरा। अधिक चमकार परसे कोई सूरा॥
पूरन पूर शबद घर पाई। अब कुछ संसा नहीं जग में रहाई॥
अबनाशी पुरष परमेश्वर पाया। अखण्ड नाद मन माहीं ध्याया॥
तिस शबद की कीरत गाओ। विगन विनास निर्भय पद पाओ॥
शबद की रचना शबद का ज्ञान। अन्तर बाहर शबद ध्यान॥
त्रिकुटी मन्दर खुला किवाड़ा। आलख शबद का लखा पसारा॥
चमके दामन अत ही गहरी। गरजे मेघ बजे नित भेरी॥
गुर परसाद ये मन मानया। सतपुरष निरंजन जानया॥

घन घन बाजे अनहद तूरा। गफ़लत त्याग भयो जन सूरा॥
पाँच दूत की गर्दन तोड़ी। परम प्रीत चित चरनी जोड़ी॥
शबद में जीवन शबद में मरना। आलख शबद का पायो निरना॥
शबद में सुरती रुच रुच धाये। पूरन भाग निज घर समाये॥
पाप पुन्न दोनों से मुक्ता। हरजन शबद सार संजुगता॥
मंगलाचार भया घर आये। परगट पुरख सब खेद मिटाये॥

**शबद कमावे जौहरी, मोह ममता करे त्याग।**
**'मंगत' निज घर जा बसे, जाँ करम दोष नहीं लाग॥995**

उठ परभाती करो विचार। आतम तत्त का निरनय धार॥
कूड़ देही के मोह लिपटाया। आतम खोज परम सुखराया॥
उतपत परले देह का धरमा। आतम सरूप सदा आजन्मा॥
राग द्वेष अत देही विकार। सदा निरदोख आतम तत्त धार॥
देह मिथ्या सत आतम पेख। सतगुर मिल कथा सत लेख॥
देह विकार पर पाओ जीत। आतम तत्त में धरो परीत॥
करम जाल ये देह का सागर। निहकरम सरूप घट करो उजागर॥
काम क्रोध अत घने विकार। आतम खोज उतरें भव पार॥
तृष्ना आसा घने तरंग। आतम खोज पद नित निहसंग॥
अधिक ग़ुबार ये देह की ममता। आतम विचार पावें तत्त समता॥
मिथ्या देह से उपरस होई। आतम ध्यान पावे जन सोई॥
सदा अकर्ता सदा निष्कामी। पूरन पूर सो साचा स्वामी॥
झूट देही में अन्ध भरमाया। आतम तत्त का नहीं निरना पाया॥
देह की प्रीत अत तृष्ना बढ़ावे। काम क्रोध की अगन जलावे॥
देह की प्रीत अत भय चित देवे। जनम मरन का संकट सेवे॥
देह की प्रीत मित्र शत्रु विचारे। लाभ हान में होत अँगारे॥
देह की प्रीत ये नरक सरूप। तृष्ना वैतरनी देवे नित कूप॥
देह की प्रीत दुःख सुख निरनाये। सुख के ताईं बहु जतन कमाये॥
सब ही आशा अकारथ गई। छार समाये जब मिथ्या देही॥

**आसा देह की धार के, चराचर जीव भरमाये।**
**'मंगत' निर्देह आतमा, कोई विरला सेव कमाये॥ 996**

आतम तत्त अजर अबनाशी। घट घट व्यापक नित परगासी॥
नित ही आतम खोज विचार। नित ही आतम निरनय धार॥
देह से भिन्न आतम को जान। मिल सतगुर सुन तत्व ज्ञान॥
आवे जावे देह का धरमा। आतम तत्त सदा निहकरमा॥
उलट सुरत घर आतम पेख। जनम मरन का मिटे भुलेख॥
नित निरवैर सदा निरदोख। त्रैगुन रहित पुरख तत्त मोख॥
सदा आदृष्ट नहीं दृष्टी आवे। सतगुर मिले तब सार कमावे॥
देह सरजीवे तिस परकाश। आप न्यारा पुरख अबनाश॥
काल करम नहीं दोख विचारी। आतम तत्त सदा निरधारी॥
सदा अकर्ता सदा निहसंग। आतम खोज पुरख आनन्द॥
देह के अन्दर सदा बिराजे। देह विकार नहीं तिसको लागे॥
अत निर्मल अत ज्ञान सरूप। खोज करो नित तत्त्व अनूप॥
छिनकारक ये देह का संग। सतसरूप रहे नित अंग संग॥
देह विकार से जो छूटन पाये। मिल सतगुर तत्त आतम ध्याये॥
ज्यों ज्यों मन आतम को पूजे। मिटे विकार तृष्ना सब बूझे॥
कर्ता भाओ करम का नासी। निहकरम सरूप जपें अबनाशी॥
भये निहकरम आतम तत्त पाये। पाप पुन्न का खेद मिटाये॥
जीवत में नर निर्देह होई। साची भगत पछाने सोई॥
आतम पूजे आतम ध्यान। आतम धुन्न में रहे ग़लतान॥

**देह मिथ्या सत आतमा, निर्मल सुनो विवेक।**
**'मंगत' आतम खोजना, मन की हरे विखेप॥ 997**

आतम तत्त नित नित परगासी। शून्यंगकार शबद अबनासी॥
घट तेरे में रह्या समाई। खोज करो तिसकी प्रभताई॥
बालू की भीत ये देह विचार। एक पलक में होवे छार॥

अजरपुरख अबनाशी पेख। मिल सतगुर सुन ज्ञान विशेख॥
देह की ममता अत तृखा बढ़ावे। मोह लोभ में जीव गरसावे॥
देह विनास जीव बहु पछताया। मूढ़मती धर सार नहीं ध्याया॥
करम सन्देसा नहीं मिटने पाये। रंग रंग जूनी जीव भरमाये॥
मानुष देही में करो विचार। साखी पुरख आतम सुखसार॥
ना आवे ना जावे मीत। सदा परापत वस्त सुखरीत॥
किसी वस्तु की इच्छया नहीं धारे। तीन काल सो बसे निरधारे॥
अपने आप में आपे पूर। साखी पुरख आतम हज़ूर॥
नित ही निरनय आतम का धार। भव दुस्तर से उतरें पार॥
आतम तत्त रूप कल्यान। आतम तत्त पुरख निर्वान॥
आतम तत्त जीवन का रूप। सरब परकाशी आलख अनूप॥
नित खोजो नित धरो ध्यान। आतम पूजा मोक्ष निधान॥
आतम तत्त पछाने जोई। सतगुर पूरन जानो सो ही॥
आतम रूप में जो रहे समाये। परम सिद्ध सो गुनी कहलाये॥
आतम भोग जिस जन ने कीना। तृप्त भया तृष्ना गढ़ चीना॥
आतम तत्त बिरह जिस पाई। पूरन भगती सार कमाई॥

**देह की ममता त्याग के, खोजो आतम ज्ञान।**
**'मंगत' मनसा लीन भई, घर पायो पुरख सुजान॥ 998**

आतम तत्त की पूजा सार। आतम ध्यान साचा विचार॥
आतम विश्वासी पाये सत लेख। मोह माया का तजे भुलेख॥
निर्मल जुगत करो विचार। आतम ध्यान परम सुखसार॥
आकार वस्त जो नज़री आवे। ताँ में मनुआँ नहीं तृपतावे॥
छिनकारक प्रीत लगावे। फीका हो के आवे जावे॥
चौधाँ लोक पसरे पासार। मन नहीं परचे पलक की सार॥
नाम रूप बहुरंग बिस्तारी। राग द्वेष की लगी अँगारी॥
तृपत भये ना जुग जुग भरमाये। बिन तत्त ज्ञान नहीं शान्त समाये॥
राजा राना मुनि मुनिन्दर। बिना ज्ञान भरमें जोगिन्दर॥

जिस जन आतम भेद लखाया। तृपत भये तज दुर्मत माया॥
अपना निर्मल रूप विचार। पावें परम शान्त सुख सार॥
अपना साखी भूत पछान। जड़ काया में क्यों ग़लतान॥
अपना आदी तत्त विचार। जाँ से आया इस संसार॥
अपना सरजनहार नित चेत। जनम जनम की मिटे विखेप॥
ज्ञान सरूप भज अबगत नाद। आतम रूप सो ही बिसमाद॥
तिस के परे नहीं कोई विचार। आतम परसे तत्त निरधार॥
साची भगती साचा योग। आतम तत्त का भये संजोग॥
साची विद्या साचा विचार। आवे विश्वास आतम निर्धार॥
पूरन बुद्धी पूरन परगासे। निर्मल ध्यान सत शबद उपासे॥

**आनन्द खानी आतमा, अन्तर रिह्या व्याप।**
**'मंगत' जिस घट सोधया, तिस पाया परताप॥999**

अमरत अन्तर बाहर बिख खाई। मोह वस हो के आवे जाई॥
कह कारन तूँ जीवन जीवे। सार असार का निरनय लीवे॥
कहाँ से आया कहाँ समाई। कौन मारग कौन लेख लखाई॥
देह पिण्ड तेरा किसने साजा। खोज करो जो तुद माहीं बिराजा॥
बोलनहार का करो विचार। दुर्मत माया का मिटे अन्धकार॥
साखी पुरख का लेख लखाओ। भरम गुबार का होवे अभाओ॥
निर्मल तत्त नित करो विचार। बन्धी छूट पावें सुख सार॥
देह के सुख में क्यों गरसाया। देह विनास सुख कहाँ समाया॥
देह की ममता क्यों नर धारी। छार समावे अन्त की बारी॥
अकड़ अकड़ पग भूमी धारें। मल मूत्तर की नहीं खान विचारें॥
जैसा आया तैसा जायें। संग सखा तेरा कोई जग नायें॥
अपनी देही तेरी ना होई। और मित्र संग कौन चलोई॥
अन्धमत त्याग खोज विवेक। सरजनहार का नित लख लेख॥
अन्त की बारी नर पछताना। छाड जायें जब बाग़ सुहाना॥
साचा पुरख जीवत में पेख। सतपुरषों का सुन ये लेख॥

आतम शकत खोज विचार। परसें नाद परमसुख सार॥
सो ही तेरा जीवावनहारा। साखी पुरष सो ही भरतारा॥
नित ही तिस में निश्चय राख। साधजनाँ की रसना चाख॥
झूट देही का मोह त्याग। आतम खोज पुरख वडभाग॥

**देह की ममता ना मिटे, जो जुग चारे भोग।**
**'मंगत' मिथ्या भरम में, लागे दीरघ रोग॥1000**

कूड़ भरम में क्यों नर फूला। काल झूलावे सब को झूला॥
झूट देही ले जग में आया। सत आतम का भेद नहीं पाया॥
झूट देही सो झूट हो गई। मूढ़मती बिरथा दुःख सेही॥
झूट देही संग जो करी परीती। अन्त की बार भई दुःख रीती॥
किस वस्तू का मान तू राखें। सरजनहार जो नहीं चित भाखें॥
हाड मास नाड़ी का पिंजर। पाँच तत्त का धारा मन्दर॥
किस वस्तू का मान तू राखें। मिथ्या भोग में दुःख को भाखें॥
समाँ पाये देह नष्ट हो जाये। तेरी हिकमत चले कुछ नाये॥
रोता आया जाये पछताये। राजे राने गुनी गुनराये॥
अपना जीवन करो विचार। झूठी देह रहे दिन चार॥
सत तत्त आतम खोज आनन्द। काल करम से छूटे जिन्द॥
मन की तृखा सकल विनासी। जो चित ध्यावें शबद अबनाशी॥
अमोलक समाँ नहीं पलक गँवाओ। आतम खोज परमसुख पाओ॥
मान गुमान जो इच्छया धारी। अन्तकाल होवे देह छारी॥
कोई वस्तू इस्थिर नाईं। किस वस्तू का मान लखाईं॥
धन परिवार ना इस्थिर रहाई। सुन्दर देह छिन राख समाई॥
तृष्ना रोग नहीं मिटने पाये। एह बिध कोट जनम भुगताये॥
बिना ज्ञान ना शान्त पायें। पूरो पूर नित आवें जायें॥
सतसरूप जिस सही पछाता। गवन त्याग शबद रँगराता॥

**सत शबद जिस जानया, पल पल प्रीत कमाये।**
**'मंगत' सो निस्तर भये, भरम जाल असगाहे॥1001**

पल पल साचा भेद विचार। आतम खोज परमसुख सार॥
मन की दुर्मत सहज निवार। तत्त्व ज्ञान हिरदे में धार॥
साखी पुरख अन्तर में पेख। दृढ़ निश्चय लख साचा लेख॥
सतसरूप सत तिसका नाम। सिमर सिमर पावें बिसराम॥
मोह माया का शंका जाई। आतम परगट जो अन्तर ध्याई॥
बारम्बार करूँ पुकार। आतम खोज जग जीवन सार॥
देह मन्दर इस्थिर ना रहाई। कोट जुगत जो मन कमाई॥
जो बनी सो बिगड़ी जाये। झूटा निहों परम दुःखदाये॥
दुःख में आवें दुःख में जायें। पूरो पूर नित दुःख समायें॥
साचा सुख सो ही जन पाई। आतम तत्त जो हिरदे गाई॥
सो ही ज्ञानी परम गुनवन्ता। आतम खोज पाई परसन्ता॥
संशय त्याग भया निहसंगी। निर्मल ध्यान में प्रेम रंग रंगी॥
सत की खोज सत ही विचार। सत ही भोग सत ही आधार॥
सत ध्यान में नित ग़लतान। पूरन करमी कोई संत सुजान॥
उट्ठत बैठत सत ध्याये। पल पल जीवन सत का पाये॥
देह ममता दुबधा भई नास। सत तत्त आतम भयो परगास॥
अखण्ड नाद घर माहीं गुँजारी। उपरस मनुआँ सुख सार लखारी॥
नित ही शबद में विरत अडोल। काल करम का नास्यो ख़ोल॥
परमानन्द घट आतम परगासे। सतगुर मेल पायो सुखरासे॥

**आतम परगट ध्याया, दुबधा भई सब छीन।**
**'मंगत' सुन्न समाध में, काल जाल भयो लीन॥ 1002**

सार विसार बाहर उठ धावे। करम संदेश में आवे जावे॥
करम इच्छया में नित गरसाया। चार कुन्ट में उठ उठ धाया॥
करम भोग ना पूरन होई। सदा अशान्त ये जीव समोई॥
ऊँच नीच जूनी को धारे। करम डण्ड टरत ना टारे॥
सरब जीवों की ये गत जान। अद्भुत माया में नित ग़लतान॥
गुरमुख साजन जुगत पछानी। अबनाश पुरूष की सेव कमानी॥

सत को ध्याया ले सत परतीत। निर्मल चित से गाया गीत॥
ममता देह से उपरस हुआ। सतसरूप में जीवत मूआ॥
खल बुद्धी हंकार निवारा। आतम तत्त पल पल चितारा॥
सुरत अडोल नाम रस खाई। निमख निमख सत प्रीत कमाई॥
माया ग़ुबार से पाई ख़ुलासी। सतसरूप परचा अबनासी॥
तपन मिटी चित्त ठाँडा होई। सत ठाकर को हिये परोई॥
जीवत में सत काज करीना। अन्तकाल निर्भयपद चीना॥
जग आवन तिस सुफल पछाता। सतसरूप आतम रंग राता॥
करमजाल तब लीन समाई। एक सुरत सतनाम कमाई॥
मन अपने में सत सार पहचानी। अगम अगोचर पुरख निर्वानी॥
बाहरमुख की दुबधा त्यागी। अन्तरमुख प्रभ चरन लिव लागी॥
सत थाओं सत शबद पहचानी। गुरमुख ज्ञान पायो तत्त ज्ञानी॥
नित परसन्न निज रूप को पाये। अपरम महमा नहीं वरनी जाये॥
संशय शोक मध मान चुकाया। अन्तरगत नित नाम ध्याया॥

**बाहर की दुबधा गई, अन्तरगत लिव लाई।**
**'मंगत' परगट पाया, आतम तत्त सुखदाई॥1003**

दुर्मत रोग का करो उपाये। जीवत में लयो सार कमाये॥
असत वस्तु कहाँ तृपत दिखाई। मिथ्या मोह माया प्रगटाई॥
सत की खोज करो गुनवन्ता। सत परतीत देवे परसन्ता॥
सत तत्त आतम करो विचार। दृढ़ निश्चय चित अन्तर धार॥
पिण्ड ब्रह्मण्ड का सो परकाश। आलख पुरख निर्मल सुखरास॥
तिस की प्रीत में जीवन त्याग। आलख लेखा लख वडभाग॥
अन्तर तेरे नित करे पुकार। इक चित होके सेव विचार॥
तिसकी आज्ञा मन में नित चेत। करमजाल का मिटे विखेप॥
दिवस रैन पलक नहीं टाल। सतसरूप भज दीनदयाल॥
इन्द्री भोग मिथ्या विकार। जल जल पड़े जीव अंध्यार॥
रंचक तृपत ना पावे जीया। जुग जुग भोग में अन्ध गरसीया॥

वासना अगनी नित परचण्ड होवे। जनम अमोल भरम में खोवे॥
सत सिखया हिरदे में धार। सतगुर पूरे इयों करें पुकार॥
एक नाम से रखो परीत। गुरमुख की सुन साची रीत॥
नाम ध्याए सब औगन नास। घट घट परसे शबद अबनास॥
औगनकारी मन दुःख पाये। नाम विसार के आवे जाये॥
सतसंगत सत साध मिलाई। नाम रतन की कीमत पाई॥
हिरदे अन्तर सतनाम समाया। करमजाल माया बिनसाया॥

**निर्मल चित हो सिमरिये, सतसरूप प्रभ एक।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, जो दृढ़ कर राखे टेक॥ 1004**

निर्मल चित नित करो विचार। साचा नाम प्रभ अन्तर धार॥
उट्ठत बैठत निश्चय इक राख। बिमल शबद की रसना चाख॥
सारंगबानी सतनाम विचार। दुर्मत रोग से होये निस्तार॥
एको सत सरब के रंग। सत के देखो सरब परसंग॥
सत का हेत केवल चित धार। अन्तर बाहर सत विचार॥
सत आधार राखो नित जीया। जल थल अन्दर सत रमीया॥
सत पहचान गुर सीख विचार। सत ध्याये उतरे भव पार॥
सत शबद केवल सुखरास। पूरन भाग जो करे उपास॥
अपने घट में सत को ध्याये। सत परकाश अन्तर में पाये॥
झूट माया से भई ख़ुलासी। सत परतीत सतधाम निवासी॥
निर्मल ध्यान शबद लख पाया। सत ठाकर का मेल मिलाया॥
साची सिमरत इक नाम कहानी। साध-जनाँ ने करी पहचानी॥
मन मेरे सत कथा विचार। सत ठाकर को हिये पुकार॥
ये ही जीवन आनन्द की खान। अबनाशी पुरष आवे चित ध्यान॥
तिसकी सेव में जनम गुज़ार। तिसकी आज्ञा मन में धार॥
सुफल कीरत नाम चित गाए। तृखा विनास शान्त चित पाए॥
नाम रतन जग साची रास। पूरन चित नित करो उपास॥
परगट शबद घट पारब्रह्म। निर्मल करमी पायो सत धरम॥

दीनदयाल की शोभा पूर। जल थल पूरन आप हजूर॥

**औगन सब ही मिट गये, जो चित नाम समाये।**
**'मंगत' अन्तर ध्यान में, सार शबद लख पाये॥1005**

एक ध्याया सत ठाकर पूरा। भय भरम गयो काल करूरा॥
अन्तर चित आया विश्वासा। सतसरूप आतम परगासा॥
मोह शोक सब वासना नासी। खेम कुशल घर पायो अबनासी॥
इक चित प्रीत सतनाम ध्याया। पूरन करम हरजन जग पाया॥
काम क्रोध सब अगन निवारी। निर्मल ध्यान अन्तरगत धारी॥
दृढ़ निश्चय चित अन्तर पायो। गुर की सिखया का लेख लखायो॥
सम कर विरती अन्तर धारी। आलख शबद का खेल विचारी॥
धरती उलट आकास समाई। सतनाम प्रभता घर पाई॥
अबगत नाद घर में किलकारी। सुरत अडोल सत कथा विचारी॥
सत स्वामी घर परगट भयो। गुर की सीख फल पूरन दयो॥
साचे साहब ने सब ताप निवारे। जनम जनम के बन्धन टारे॥
दीनदयाल भये किरपाल। दरस दिखा के कियो निहाल॥
तेरी महमा तूँ आपे जानी। अपनी शकत का तूँ आपे मानी॥
राख लें प्रभ सच दरबार। पततपावन तूँ किरपाधार॥
सकल कलेश हरो इस जीया। बन्ध छुड़ावनहार तूँ थीया॥
तेरी ओट केवल इक जानी। बख़शनहार तूँ दोहे जहानी॥
अपनी दात करो प्रभ मेरे। इस मन के सब हरो बखेड़े॥
तेरी आस तेरा भरवास। तुद को सिमरूँ गिन गिन सास॥
तेरा रूप मन तन समाये। इच्छया भरम की प्यास बुझाये॥

**बख़शनहार प्रभ बख़्श दें, तू किरपानिद्ध करतार।**
**'मंगत' की सब बेनती, तेरे दरस आधार॥1006**

तूँ ही दाता सरब रखवारी। जगत खेल ये रची फुलवाड़ी॥
आपे सब की बनत बनावें। आपे सकला खेल खिलावें॥

गिना ना जाये तेरी महमा का अक्षर। सरब भरपूर तूँ सरब का ठाकर॥
अनमत जीया तुद दर आया। राख लें साहब सुखराया॥
भगती दान माँगूँ नित नीत। सुकृत कीजो ये मूढ़ा चीत॥
तुध बिन दूजा नहीं चित आवे। अनन प्रीत मन माहीं समावे॥
पलक पलक जस तेरा गाऊँ। केवल चरन आधार लखाऊँ॥
आठ पहर सिमरूँ इक रंग। अधिक प्रेम पाऊँ सुख संग॥
कर किरपा पूरन प्रभ देवा। मूढ़मती करे निर्मल सेवा॥
दीन ग़रीबी मन रहे समाई। सरब जीवों में तूँ इक दरसाई॥
ये ही भीख दीजो प्रभ पूरे। छिन छिन रहे चित चरन हज़ूरे॥
निर्मल नाम का गाऊँ गीत। सत ठाकर दीजो परतीत॥
तेरा खेल तूँ ही नित खेलें। बिछड़े जन को प्रभ आपे मेलें॥
पूरन शकत दीजो इस चीत। निस दिन गावे तेरा प्रभ गीत॥
तूँ ही तू जग जीवन देखा। उतपत परलय सब तेरा लेखा॥
मन की भरमन करो प्रभ दूर। निस दिन गाऊँ तेरा नाम हज़ूर॥
नाम तेरे की रहे चित भूख। मोह विकार हरो सब दूख॥
तेरी महमा मन तन समाये। रोम रोम तेरा जस गाये॥
तेरा रूप बसे चित माहीं। कर किरपा तूँ पार गोसाईं॥

**सरब शक्त दातार तूँ, दाता दीनदयाल।**
**'मंगत' माँगे नाम रस, प्रभ जी हो किरपाल॥1007**

तूँ ठाकर मैं तुमरा जीया। नित नित तेरे चरन रमीया॥
भाओ भगत मोहे दीजो स्वामी। हरो विकार प्रभ अन्तरयामी॥
तूँ भयो दाता हम भयो भिखारी। माँगूँ भीख सत सेव निर्धारी॥
तुच्छ बुद्धी को निर्मल कीजो। अपरम ज्ञान प्रभ अपना दीजो॥
सेव सेव चित करूँ निहाल। इक भरोसा रहे चित चरन दयाल॥
नित नित मागूँ पदारथ नाम। अन्तरगत नित पाऊँ बिसराम॥
भया दीवाना तेरे प्रेम के रंग। दीनदयाल रहो अंग संग॥
ना कोई थाओं ना रास है कोई। निहथावाँ तेरे दर खलोई॥
बख़्श देवें तूँ सतगुर मेरे। जनम जनम के घने बखेड़े॥

किस को कहूँ करूँ पुकार। तुद बिन मेरा नहीं कोई रखवार॥
साची टेक माँगाँ नित हजूर। तूँ समरथ ठाकर भरपूर॥
मन की हिकमत सकल विनासे। दीन ग़रीबी तेरे चरन उपासे॥
आज्ञा तेरी मन तन समाये। बख़शनहार तू ही प्रभराये॥
मेहर करो प्रभ कीजो दाया। चरन कँवल रहे हिरदे समाया॥
मिथ्याकार सब वासना जाये। रुच रुच जीया तेरे चरन समाये॥
बन्धन काट जन करो निहाल। पततपावन तू नित किरपाल॥
लाख चौरासी जन्त प्रगटाये। सरब प्रतिपाल बिशम्भर राये॥
करें अरदास देव मुनीशा। अपरम कौतक तेरा जगदीशा॥
अपनी चरनी मेल मिलाओ। टूटा निहों प्रभ तोड़ निभाओ॥

**तेरे चरन प्रीती मन रसे, मिट जायें संशे सूल।**
**'मंगत' सुरती मगन होये, इक पलक ना पावे भूल॥1008**

एक पलक तेरी कीरत जो गाये। रुच रुच तिस के चरन समाये॥
वडी वडयाई तेरी प्रभ एक। अबनाशी पुरुष तूँ अपार अलेख॥
जाँ तूँ वसया ना दूजा रहाई। केवल रूप तू आप समाई॥
अनंक जतन कर मूढ़ मन ध्याये। होवें किरपाल तब भेद जन पाये॥
सकली सम्पत का तू ही स्वामी। सरब दयाल तूँ पार बिसरामी॥
मूढ़पना इस जन का निवारो। सील संतोख घट माहीं संचारो॥
देवन देव ये करूँ अरदास। जनम जनम की हरो प्यास॥
जुगत मुकत नहीं जानूँ भेद। तुम किरपा से मिटें सब छेद॥
पूरन पुरख तू ही सुखराया। नित बलिहार जिस चरन ध्याया॥
संकट नास सम्पत सत दीजो। आलख आपार भेद लखीजो॥
शुद्ध सरूप जो नित परगासी। सत परतीत करूँ चरन उपासी॥
उट्ठत बैठत निश्चय धारी। अबगत मूरत तेरे चरन बलिहारी॥
प्रभ जी कीजो ऐसी दात। निज घर बसे ये मन कमज़ात॥
प्रभ जी कीजो ऐसी दाया। निमख निमख चित रहे चरन समाया॥
प्रभ जी कीजो किरपा ऐसी। सचखण्ड बसे ये जीव परदेसी॥

प्रभ जी शोभा सार लखाओ। मूढ़मती को ठौर लगाओ॥
आज्ञा तेरी नहीं पलक भुलाऊँ। दुःख सुख समकर सेव कमाऊँ॥
समता बुद्धी घट परगासे। दीनदयाल करूँ अरदासे॥
पार ज्ञाई तेरी चित आवे। निमख निमख जस तेरा गावे॥

**दया करी प्रभ आन के, घट घट सूझ लखाई।**
**'मंगत' अंतरगत माहीं, ये मन लीन समाई॥1009**

नाद सरूप जब परगट भयो। जनम जनम के संशे गयो॥
एक चरन की प्रीत कमाई। दुर्मत रोग भरम सब जाई॥
अनहद नाद करे कुलेल। हिल मिल सुरती कीजे खेल॥
नाद पुरख की सोझी पाई। संशे शोक सब लीन समाई॥
जिस को पूजें मुनी मुनीशा। शिव सनकादिक और गनेशा॥
शेष संहसमुख नित जस गाई। आरूढ़ ध्यान नित विषन कमाई॥
चत्तर वेद ब्रह्मा नित वाचे। अकथ कथा जप होवे साचे॥
अपरम अपार नाद पुरखोतम। शुद्ध सरूप जोती अनूपम॥
जै जैक़ार भये तीन जहानी। अनहद नाद जो परगट ध्यानी॥
उस्तत कीजो करो अरदास। नाद सरूप अजर अबनास॥
अनन्त नाम से महमा गाई। नाद पुरख की आपार ज्ञाई॥
रल मिल संगत कथो कहानी। नाद पुरख जोत निरवानी॥
जिस घट अन्दर नाद परगासा। शाहों का शाह सो पुरख निर्वासा॥
जिस जन नाद की सेव कमाई। भव दुस्तर से निस्तर पाई॥
जिस जन जानी साची सार। तिसके चरन जाऊँ बलिहार॥
नाद बिरह में राज त्यागी। भभूत रमा के भये बैरागी॥
नाद ध्यान शिव भये ग़लताना। सुन्न समाध परसी सुख खाना॥
नाद विवेक सकले ग्रन्थ। नाद ध्यावें सकले पंथ॥
नाद अजन्मा अजर अबनासी। पूरन रूप सरब परकासी॥

**आलख पुरख पहचानया, ब्रह्म नाद घट माहीं।**
**'मंगत' ये ही परमगत, बौहड़ गरभ नहीं पाईं॥1010**

ना वोह आवे ना जावे मीत। नाद पुरख की कथा पुनीत॥
सब कुछ तिस से वोह सबसे न्यारा। बिसमाद कथा तत्त नाद विचारा॥
सुकृत सीख मन माहीं विचार। पूरन रूप परस निरंकार॥
शाहों का शाह सो ही सत देव। पलपल कीजो चित से सेव॥
ऊँच सोभा साचा दरबार। प्रभ की सेव करे निस्तार॥
निर्मल होवे चित निर्मल ध्याये। पूरन परसे पूरन गत पाये॥
जीवत जीवे जपे नाद अनादी। अखण्ड ध्यान शबद बिसमादी॥
तृपत भये जन पूरन ध्याया। सरब काल चित पूर समाया॥
नाशवान से मुकता पाई। अबनाशी पुरष नाद घर ध्याई॥
सब साजन नित कीरत गाओ। सत ठाकर के चरन समाओ॥
रोम रोम में सो ही रमीना। मिल सतगुर भेद सत लीना॥
नौ द्वार का मन्दर देह साजा। आप परकाशे घट आप बिराजा॥
जाँ पर किरपा साध की भई। पूरन पुरख की सोझी लई॥
अन्तर गुफा में डेरा कीना। नाद पुरख का खेल लखीना॥
दसवें द्वार का खोला ताला। नाद पुरख बसे सिरी गोपाला॥
बिन बाती तेल दीपक परगासे। अखण्ड परगास जोत अबनासे॥
अनंक भाँत नाद घनघोर। सुकृत जीवन जिस सूझा ठौर॥
रूप रेख बिन देव दिखाया। अजर परकाश घर नज़री आया॥
सत साधू की सेव कमाई। नाद सरूप की महमा घर पाई॥

**पूरन तिनके भाग भये, जिन घट सूझा नाद।**
**'मंगत' निर्मल ध्यान में, मिट गयो सब परमाद॥1011**

आदी देव की कीरत पाई। पूरन पुरख भये आप सहाई॥
दिव्य दृष्टी अन्तर में पाई। घर विच ठाकर साचा ध्याई॥
ऊँचे शिखर धरूँ ध्याना। पायो शबद अखण्ड निर्वाना॥
उदे अस्त वहाँ ना दिखाई। तत्त परकाश जोत लखाई॥
पीर पैग़म्बर वहाँ नहीं अवतारा। दृष्टी आवे वहाँ नहीं आकारा॥
मन बानी वहाँ देह ना जाई। चेतन बुद्ध तत्त रूप लखाई॥

पाँच तत्त गुन तीन नहीं मेला। जिस घर बसे साहब अलबेला॥
दृष्टा दृष्ट का भेद ना काई। तत्त निर्वान नित पूर समाई॥
वेद कुतेब वहाँ नहीं कुराना। मज़हब मज़ाहब नहीं बाद बधाना॥
पंडत काज़ी नहीं आलम कोए। जिस घर साहब आप बसोए॥
परमधाम ना दृष्टी जाई। जिस घर सूझे सो ही गत पाई॥
ना जिभ्या ना मुख बखानी। ना परमान कोऊ दरसानी॥
रूप रेख नहीं चिन्ह आकारा। बिस्माद सरूप तिस नाद पसारा॥
अन्तरगत जिस सार लखाई। तिसके चरन की धूड़ रमाई॥
सो परमेश्वर सो पुरख अकाल। सम परकाश सो दीनदयाल॥
तिस तुल कछु ना जग में होई। अतुल परमान ठाकर सत सोई॥
घट घट वसया सो पुरख अनादी। चेतन परकाश शबद बिसमादी॥
सतगुर सेव जन सोझी पाई। पूरन पुरख के चरन समाई॥
नित बन्दूँ तिस पुरख के चरना। नाद ध्यान में जो विचरना॥

**पूरन साजन गत पाई, पूरन सीख लखाई।**
**'मंगत' अन्तरगत माहीं, अखण्ड नाद को ध्याई॥ 1012**

## दूसरा अध्याय-नाद उपासना

**मन निर्मल तन निर्मल, निर्मल पाइये विचार।**
**'मंगत' नाद उपासना, करे भरम सब छार॥ 1013**

साची भगती हिरदे धार। जो चित परसें नाद आधार॥
कुठल मन ये अत अज्ञानी। कूड़ जँजट में अती अभिमानी॥
सत परगास रूप ये देवा। मूरख मन नहीं परचे सेवा॥
असत माया में नित ग़लताना। अनुभव पाये नहीं पद निर्वाना॥
अनँक जतन कर जो भी समझाई। मूरख मन नहीं सार लखाई॥
अनँक संशे अनँक तुरँगा। अन्ध विश्वास में रहे दुःख संगा॥
सत मारग में पद नहीं चाले। कह विध परसे पद दीनदयाले॥
अपनी अनमत नित करे ख़वारी। माया चक्कर में नित फँसारी॥
छूट ना पावे ये मूरख जीया। पलक नहीं सिमरे सतनाम घन्हैया॥
तीरथ नहावे नियम बहु धारी। देवी देव की पूजा विचारी॥

अनँक संशे में नित भरमाई। बिना भगत नहीं सतपद पाई॥
अत ही कठोर रहे दिन राती। पाप करम की नीयत थापी॥
अन्तर और बाहरों और बनावे। कपट धार नहीं हरपद पावे॥
विद्या विचार नीती बहु साधे। कथनी ज्ञान नित धरे उपाधे॥
रंचक मन को ना समझाई। पाप कूप में आवे जाई॥
सुगड़ सयाना नाम धरायो। अनँक प्रकार की जग कीरत पायो॥
मन का संशय ना निरविर्त होई। भरम को धार नित गवन फरोई॥
सत ठाकर का नहीं भेद पछानी। मूढ़मती में डूबे जग प्रानी॥
आवे जावे ये चंचल मनुआँ। जल जल पड़े ये चाम का तनुआँ॥

**बिन हर भगती जीवड़ा, तीन काल दुःख पाये।**
**'मंगत' मोह माया विकार में, पलक पलक फँसाये॥ 1014**

अनँक भाँत की किरया साधी। दुष्ट वासना नहीं मिटे उपाधी॥
सतसंग अनेक सुने विख्याना। रंचक मन नहीं सार पछाना॥
कथनी माहीं चतर बुद्ध धारी। रहनी रंचक नहीं हिये विचारी॥
छल कपट संग प्रीत लखाई। डूब गयो विच अपनी चतुराई॥
अनँक प्रकार सेवा चित धारी। मान मध नित करे ख़वारी॥
कामना धार बहु जतन करीना। मोह वस होके नित गरब फरीना॥
मन्तर अनेक किये निध्यायन। अनँक देवत का करें अवाहन॥
मन्ध पूजा में जनम गँवाई। आतम विचार बिन कभूँ शान्त ना आई॥
सकल जतन अकारथ होये। बिन गुर सिखया नहीं सार कोई पाए॥
झूट बैराग का भेख विचारी। तज गृह नार जन भयो भिखारी॥
अनँक स्वाँग देही के बनाये। सीस जटा तन राख रमाये॥
मदरा माँस चरस को पीवे। दुर्मत बुद्धी कष्ट बहु देवे॥
अनँक जमायत संतन की धाया। परमानन्द का लेख नहीं पाया॥
मूढ़मती नहीं रंचक नासी। छल को धार नित फिरे चौरासी॥
विद्या विचार बहु पाठ करीने। अनेक सप्ताह में गुनी फरीने॥
अखण्ड बानी का साधन धारें। पेट के कारन सब जतन विचारें॥

मन में शान्त रंचक नहीं आई। भयो दीवाना बहु पाठ पठाई॥
सत सरूप का निरनय नहीं पायो। झूट परकिरत का मोह नहीं मिटायो॥
नहीं चित रसे सतनाम प्रभताई। कपट को धार नित संकट पाई॥

**चतुर चतुराई में डूब गये, मन नहीं पायो धीर।**
**'मंगत' बिना प्रेम के, भरमें गुनी गहीर॥1015**

पाखण्ड धार करे नित ध्याना। कथनी योग कथे बिध नाना॥
इन्द्री भोग में नित भरमाई। साध गुरु बाहरों नाम धराई॥
छल को धार धन संचित करी। पाप करम नहीं दुर्मत टरी॥
झूट ध्यान झूट बखाना। जो नहीं हिरदे वैराग समाना॥
तुच्छ जीवन में नहीं कियो विचारा। कपट धार छलयो संसारा॥
मूढ़पना नहीं जीव का नासी। पाखण्ड धार नहीं कटे चौरासी॥
और जीवों को बहु समझाई। घनी सयानफ़ नित दिखलाई॥
मन अपने पर चली नहीं कारी। पशू समान औध गुज़ारी॥
बहुरंग नीती मन माहीं विचारे। राज सुराज का लेख लखारे॥
अन्दर बुद्धी ममता लिपटानी। समता सुराज नहीं पाये अज्ञानी॥
अनेक विचार सरब दु:खदाई। जो चित पर का हेत नहीं आई॥
ऊँच पन्थों का बनया मानी। सार ज्ञान नहीं हिये पछानी॥
पंथ भेद में पाप कमाई। बाद मुबाद में जनम गँवाई॥
निर्मल जुगती नहीं नाम ध्यायो। पाखण्ड धार सब जनम गँवायो॥
रोज़ा नमाज़ नित देवे ज़कात। हज्ज करे काबे को जात॥
आयत हदीस पढ़े हुक्म रुबानी। नफ़स शैतान नित कुफ़र बिखानी॥
इन्द्री भोग में रहे अन्ध गरासा। नफ़स शैतान देवे अधक तरासा॥
हक़ रज़ाई नहीं हिरदे पाई। पल पल रूह करे क़ज़ाई॥
दोज़ख़ जन्नत की हिरस विचारी। धार ख़ुदी नित पाये ख़वारी॥

**मानी ऊँचे पंथ का, रहनी रंचक नहीं पाए।**
**'मंगत' प्रभ दरगाह माहीं, पावे घनी सज़ाए॥1016**

मन की ममता करे ख़वारी। सत कीरत नहीं हिरदे धारी॥
जतन अनेक अकारथ जाई। जो ये मन नहीं सार ध्याई॥
पाखण्ड त्याग उठ सार विचार। अपना संकट आप निवार॥
सत असत का निरनय पेख। सत मारग का लिख नित लेख॥
मोह ममता दुर्मत सब त्याग। सत कीरत प्रभ चरनी लाग॥
पाखण्ड कीये ना प्रभ हरखाई। जतन अकारथ सकल दुःखदाई॥
साचा जतन मन माहीं विचार। सतसरूप मन निश्चय धार॥
देह मिथ्या सत आतम राम। आतम खोज मिले बिसराम॥
देह के भोग अत दुःखदाई। मूरख जीया बहु पछताई॥
करम चक्कर ये संकट भारा। इच्छया चक्कर अधिक गुबारा॥
जीवत में नर करो उपाये। भरम अंधकार जिस बिध बिनसाये॥
साची कीरत जप सरजनहार। पल पल तिसकी महमा विचार॥
झूट माया से पावें छूट। साचे नाम की रसना चित लूट॥
साची भगती मारग नित खोज। सतपद आतम की पावें मौज॥
साची भगती देवे कल्यान। अबनाशी पुरष मिले भगवान॥
दृढ़ निश्चय मन अन्तर राख। सत ठाकर की कीरत चाख॥
देवन देव सो ही भगवन्त। पल पल तिसका नाम जपन्त॥
औगन जाई पावें सुख थाओं। विगन विनास परसें सत नाओं॥
जग आवन ये सार पछान। साची बन्दगी जो पावें भगवान॥

**मन मूढ़ा समझाइये, पलक पलक कर मीत।**
**'मंगत' बिन भगवन्त के, सब जग झूटी प्रीत॥1017**

प्रभ की भगती मूल आनन्द। तपन बुझावे देवे चित ठण्ड॥
साची भगती कर गुनी विचार। सुकृत करम केवल संसार॥
सब साधन तब पूरन पाई। प्रभ की भगत जो हिरदे आई॥
निर्मल चित हर नाम उपासी। ज्ञान परापत कटे चौरासी॥
मानुष जीवन का कारज सार। परमानन्द चित आवे विचार॥
अगन माहीं सब जीव जलन्ते। मारग भगती देवे परसन्ते॥

ऐसा मारग नित करो विचार। हीरा जनम नहीं बारम्बार॥
सत विचार करो दिन रात। सत की ओट में रहो समात॥
बन्ध ख़ुलास तू जन पायें। नाम साहब का हिरदे गायें॥
साचा नाम नित करे निहाल। गुरमुख साजन विरले चित भाल॥
नाम पदारथ औखद है मूल। नाश करे सब संशे शूल॥
पूरन चित घर साहब दिखलाई। नाम ध्यान से परमगत पाई॥
सूझ बूझ आई संसार। गायो प्रीत से नाम करतार॥
साची भगती प्रभ चरन की पाई। सुकृत सीख सतगुर दिखलाई॥
सिमर सिमर मन भयो निहाल। घट में पायो प्रभ दीनदयाल॥
ऐसा निहों हर चरनी राख। सतपुरषों की सुन ये साख॥
अबनाशी पुरष संग निहों विचार। आवागवन जो हरे विकार॥
सो ही ठाकर सो ही देवा। निर्मल चित से कर नित सेवा॥
मन अपने को अन्तर में राख। साची भगती कीरत प्रभ चाख॥

**अधक सयाना होये के, भज लो नाम गोबिन्द।**
**'मंगत' दूजा विसरे, बौहड़ ना धारें पिंड॥1018**

अपरम अपार साहब का नाओं। सिमर सिमर पावें सुख थाओं॥
सो दीनदयाल सब बन्धन काटी। अन्तरगत जिस रसना चाखी॥
पूरन पुरख सो ही सुखदाई। मिल सतगुर नित सेव कमाई॥
सतगुर मिले पाई सत सार। साची प्रीत सतनाम विचार॥
सत मारग सतगुर दिखलाई। घर विच ठाकर का दर्शन पाई॥
पूरन किरपा गुर चरनी मेला। मूरख जन का सब मिटा झुमेला॥
सब मिथ्या सत ठाकर जाना। साची सीख का मिला निधाना॥
साची जुगती सतगुर दिखलाई। साधन सार परमगत पाई॥
नियम संजम की जानी सार। सत विश्वास पाया निरंकार॥
पूरन पुरख अबनाशी जोई। सतगुर दीना घट भेद लखोई॥
बाहर की सब भरमन नासी। घट दिखलायो प्रभ अज अबनासी॥
सुकृत सीख निश्चय से धारी। पायो ठाकर सरब दातारी॥
उठ के मनुआँ तू सेव विचार। गुर की सीख में तन मन वार॥
सत मारग की पाई सोझ। ज्ञान विज्ञान की पाई बोध॥

पूरन पुरख गुरु होए दयाल। बन्धी काट जन कियो निहाल॥
भाओ भगत मन आये समाई। दुबधा दुर्मत सब खेद मिटाई॥
मनुआँ ठाका नाम के संग। निर्मल ध्यान पाया इक रंग॥
साखी पुरख पर निश्चय पाया। सिमर सिमर सब ताप मिटाया॥
अन्तरजुगत भेद पछाता। राम जपत भयो रंगराता॥

**पूरन जुगती धार के, सिमरा नाम गोपाल।**
**'मंगत' दुबधा सब मिटी, तन मन भया निहाल॥1019**

सत जुगती जो नाम ध्याये। ताप तपन सकली बिनसाये॥
अन्तर रमया रहे अलोप। परगट पाइये मिले जुगत अनूप॥
दूध माहीं ज्यों घृत समाया। मैहन्दी में ज्यों रंग छुपाया॥
फूल माहीं ज्यों गंध समाई। एह बिध राम रमा तुध माहीं॥
अपने घट की जिस सार पछानी। पायो ठाकर अखण्ड निर्वानी॥
मूढ़मनाँ क्यों बाहर धावे। सो ठाकर तुध माहीं समावे॥
अपने आप की खोज विचार। सतगुर सिखया अन्तर धार॥
सो अबनाशी सो परमानन्द। सदा अजन्मा सो नित अखण्ड॥
सो अन्तरयामी सरब गियाता। मिल सतगुर जप पुरख बिधाता॥
सत मारग खोजो कल्यान। सतगुर साध मिल पाओ निधान॥
देह देवल में रह्या समाई। विरला गुरमुख परगट ध्याई॥
जिस घट अन्तर कियो विचार। तिस पायो प्रभ सरजनहार॥
मनमुखता तूँ मन की त्याग। योग जुगत परसो वडभाग॥
बन्ध ख़ुलासी तब ही होई। परतख ठाकर जब घट दरसोई॥
ताँ सों नित मुशक़्क़त घाल। जो परसें प्रभ दीनदयाल॥
परचण्ड माया नित दुःखकारी। सिमर दयाल पावें सुखसारी॥
मोह अगन में जीव जलन्ता। भज भगवन्त पावें परसन्ता॥
इस जीव का और नहीं थाओं। एक बिरह प्रभ चरन समाऊँ॥
दुर्मत नासी सत काज सँवारा। गोबिन्द पायो तत्त रूप आपारा॥

**औगुन सकले दूर भये, निर्गुन ठाकर ध्याये।**
**'मंगत' सतगुर मेल से, योग जुगत रंग लाये॥ 1020**

पूरन भाग सत साधू पाया। सतनाम का भेद लखाया॥
देह अन्तर की जानी जुगत। परस लिया पद जीवन मुकत॥
आतम विश्वास कीरत घर पाई। सत सिमरन का भेद लखाई॥
उट्ठत बैठत सुरती रस पीवे। नाम साहब में जीवन जीवे॥
गया ग़ुबार भया परगासा। घट में पायो प्रभ अबनासा॥
पाँच पचीस परकिरती भेद। सरब न्यारा ठाकर अछेद॥
काल करम परे बिसरामी। शबद सरूप पुरख अनामी॥
एह बिध निश्चय मन अन्तर पाया। सत सरूप पल पल ध्याया॥
ना ओह जन्मे ना मरना पाई। सदा परापत परम शक्ताई॥
नित परकाश पुरख सुखरासी। पायो विश्वास चित चरन अबनाशी॥
पल पल अन्तर सुरती राखे। नाम रसायन रसना चाखे॥
मन को थामे पवन के संग। नाम जपे तब भये निशंग॥
अन्तर बाहर भेद पछानी। मन संकोचे सो ही ज्ञानी॥
चित की दुर्मत सहज से धोई। निर्मल ध्यान इक नाम परोई॥
पवन की धारा अन्तर जारी। सिमर सिमर सतनाम निरंकारी॥
अन्तर आई बाहर जावे। साचे नाम की जुगत कमावे॥
उलट पलट पवन को देखे। साचा नाम निरन्तर पेखे॥
सूक्षम निन्द्रा अल्प आहार। साचे नाम संग कियो प्यार॥
पवन को पीवे सतगुर की जुगती। शबद परापत पावे जन मुक्ती॥

**निर्मल जुगती योग की, जिस जन करी विचार।**
**'मंगत' परगट पाया, घट साखी शबद अपार॥ 1021**

ज्यों ज्यों साचा नाम कमावे। कलप कलपना रोग मिटावे॥
विरत त्याग मन भया इकागर। पूरन पुरख घट भयो उजागर॥
बोले पवन दसवें द्वार। सिमरे नाम उतरे भव पार॥
ज्यों ज्यों शबद को गुरमुख पीवे। काल त्याग जुगाजुग जीवे॥
शबद पुरख परचे निर्वानी। करम जाल की होवे हानी॥

प्रभ अपने को प्रन से ध्याई। अन्तरगत नित प्रीत कमाई॥
महमा प्रभ की अधिक विचारी। साचे नाम की चित चढ़ी ख़ुमारी॥
उट्ठत बैठत कियो ब्यौहारा। घट घट सिमरूँ सरजनहारा॥
प्रान उपान देही का ताला। सतगुर मिले तब कियो उजाला॥
सूरज चन्दर रूप को धारी। पवन पछान होवे सुखकारी॥
पांच तत का सकल तमाशा। सकल जगत का मूल स्वाँसा॥
मिल सतगुर जिस जुगत पछानी। पवन कमाये सो ही ब्रह्मज्ञानी॥
जनम जनम की मलन विनासी। प्रान पुरख संग कियो बिलासी॥
पवन सखा संग साक सुहेला। पवन ने रचया सकला मेला॥
दृढ़ विश्वास ये जुगत पछान। सतगुर पूरे करें बखान॥
अन्तर नाम बाहर जप नाम। सम कर राख पावें बिसराम॥
परम परकाश पवन की धार। गुरमुख परचे होये सचयार॥
इरध उरध पवन को थामे। सतगुर जुगत जपे सतनामे॥
बिना मूल के फुली फुलवाड़ी। लीन समावे जो करे रखवारी॥

**अन्तरगत जिस चीनया, सत निरंजन देव।**
**'मंगत' सो ही सिद्ध भया, पूरे गुर की सेव॥1022**

सुरती बाँध पवन में धार। साचे नाम का करो वापार॥
पवन को पीवे नाम परगासे। जुगती योग सतनाम बिलासे॥
भरम ग्रन्थी अन्तर से टूटी। जुगत योग जो नाम रस लूटी॥
बारम्बार मन नाम कमाई। पवन धार संग करे टकराई॥
विरती त्याग मनसा भई लीन। शबद समाध अन्तर में चीन॥
उरध कँवल भया परगास। पीवे पवन होवे निरवास॥
स्वाती सीप निहों ज्यों धारी। चातक वरखा नीर ज्यों प्रीत विचारी॥
चन्द चकोर ज्यों प्रेम लवलीना। एह बिध साजन सतनाम जपीना॥
एक पलक ना विसरन पाये। चौसठ घड़ी मन माहीं ध्याये॥
चंचल विरती मन की नासे। सतनाम जो गुनी उपासे॥
कर्ता हर्ता ठाकर जानी। आज्ञा पल पल तिसकी पछानी॥

मन अपने को नेहचल कीजे। सतनाम पवन संग पीजे॥
पाप कुपथ से मन को राखे। सतकरम की रसना चाखे॥
स्वारथ त्याग होवे उपकारी। अन्तरगत सतनाम विचारी॥
सब जीवों की सेव कमाये। पूरन प्रीत हर चरनी पाये॥
मान मध का हरे ग़ुबार। कौडी मूल बिके संसार॥
दीन ग़रीबी चित आसन धारी। साचा नाम पल पल पुकारी॥
दुर्मत गई भया परगासा। अखण्ड नाद में लयो निवासा॥
पूरन भाग अबनाशी घर पाया। साध की सेव सब ताप मिटाया॥

**अन्तर सिमरे नाम को, बाहर सेवा धार।**
**'मंगत' दुबधा सब मिटे, घर पावे सचियार॥ 1023**

जो चित राखें मान गुमाना। साची भगत ना करें पछाना॥
जो चित राखें बाद मुबादा। पायें ना भगती ज्ञान अगाधा॥
जो चित राखें ना इक विश्वासा। मिले ना ज्ञान भगती अबनासा॥
जो चित धारें वैर विरोध। कभू ना पायें तत्त भगती सोध॥
जो चित नाहीं गुरु चरन परीत। साची भगती नहीं मिले सुखरीत॥
जो चित अन्तर छल कपट विचारी। मिले ना ज्ञान परम सुखकारी॥
मिथ्या विकार जो चित से त्यागे। सत साधू की सेवा लागे॥
प्रन अपने को नेहचल कीजे। मारग भगती ज्ञान का लीजे॥
सील संतोख मन माहीं राखे। शबद परापत भगती फल चाखे॥
आहार ब्यौहार जुगत का कीजे। साची संगत सार लखीजे॥
पल पल मन में निश्चय राखे। लोक लाज नहीं हिरदे भाखे॥
कपट त्यागे होये निरद्वन्दी। साचे ठाकर संग सुरता बन्धी॥
इक चित होके जपे नारायन। तन मन अपना करे परायन॥
करमजाल इच्छया सब नासी। खेम कुशल घट पायो अबनासी॥
सत सेवा में सुरत परोई। पर का दुःख हिरदे से खोई॥
खिमावान चित धरे उद्धारी। साचे ठाकर का हुक्म विचारी॥
दुःख सुख तोले एके नीती। निर्मल नाम संग रक्खे प्रीती॥

परम सखा सो ही रखवारी। अधिक प्रीत तिस चरने धारी॥
दुर्मत भरम जीव का नासी। नाद सरूप घर परसे अबनासी॥

**नाम नीर से धोइये, मन के सकल विकार।**
**'मंगत' निर्मल होये के, दरस पाइये करतार॥1024**

साचे नाम की प्रीत कमाई। दुर्लभ जीवन जग में पाई॥
सत सेवा हिरदे पहचानी। अन्तर नाम जपत निरवानी॥
स्वास सुरत नित नाम ध्याई। अबगत शबद परापत पाई॥
करम वासना मन से त्यागी। आज्ञा प्रभ में मनुआँ लागी॥
छिन छिन पाप कूप को त्यागे। आज्ञा बूझ प्रभ चरनी लागे॥
दृढ़ निश्चय मन में नित धारी। सतनाम जपे सुखकारी॥
मूढ़ जिया तेरा कोई ना साथी। भज करतार सरब का साखी॥
झूट माया में मत ललचायें। अन्त छाड होवें बेथायें॥
पूरन पुरख परमेश्वर चेत। जनम मरन की मिटे विखेप॥
प्रान पुरख का करो विचार। आवत जावत में सुरता धार॥
अंजन माहीं निरंजन पेख। एह बिध जुगती योग की लेख॥
अष्ट कँवल दल अमरत भरया। पवन मथे तब कारज सरया॥
इन्द्री त्याग मनुआँ रस खाई। भयो इकागर गुर सरनाई॥
अखण्ड जाप जपे दिन राती। अरूढ़ ध्यान करे परभाती॥
पल ना विसरे प्रान की धारा। एक नाम जपे बारम्बारा॥
ऐसी रहनी अन्तर धार। परगट पावें शबद आपार॥
सदा जीवावनहार सो स्वामी। तिस की प्रीत परम सुखधामी॥
अन्तरगत नित नाम सम्भाल। पवन पुरख संग जपो दयाल॥
गुपत जाप जापे जन जोई। काल त्याग अकाल समोई॥

**मन बाँधे सतनाम संग, नाम पवन में धाए।**
**'मंगत' दृढ़ विश्वास से, गुरमुख जुगत कमाए॥1025**

अन्तर नाम मनुआँ जब जापे। बन्धन त्याग अधिक संतापे॥
देह विकार से उपरस होवे। साची प्रीती जो नाम परोवे॥

प्रन अपने को निश्चल राखे। सतपुरषों की रसना चाखे॥
अठसठ तीरथ अन्तर नहाई। निर्मल जुगत जो नाम कमाई॥
भरमन त्याग अन्तरमुख आओ। परम आनंद ठाकर घर पाओ॥
करम जाल में क्यों गरसाया। सतनाम सिमर परम सुखराया॥
वेद कुतेब सकल का मूल। साचा नाम पलक ना भूल॥
संकट हरे देवे जयकार। अन्धकार विनासे करे उजियार॥
अज्ञान हरे तत्त ज्ञान परगासे। अनुभव बानी घट करे बिलासे॥
जग संशे की सार लखाई। सतनाम घट परगट ध्याई॥
अबगत नाम ना पलक विसार। मन को बाँध इक नाम की धार॥
मनमुख मनुआँ करे ख़वारी। अधिक पाप इक पलक विचारी॥
सिमरो नाम राखो मन हाथ। साची करनी का लेख लखात॥
ताप तपन सब संकट नासी। दृढ़ निश्चय जो नाम उपासी॥
आध व्याध कभूँ नहीं पाये। निर्मल प्रीत जो नाम कमाये॥
नाम रसे जब अन्तर मीत। परगट शबद पाये परतीत॥
मन रसे पवन के संग। पवन में जापे नाम परसंग॥
विरती रहत मन इकत्तर होई। साचा ध्यान घट नाद परोई॥
निर्मल करनी पावे जन कोए। गवन त्याग निज धाम बसोए॥

**नाम साहब का गाइये, मन की मिटे उपाध।**
**'मंगत' साधन सार है, घर परगट रूप अगाध॥1026**

मन की धारन जो शुद्ध नाईं। नेहचल ध्यान ना मिले सुखथाईं॥
पल पल मन की धारन शुद्ध कीजे। साचा नाम निरन्तर पीजे॥
दुर्मत त्याग भये नाम आधारी। साची भगती तिस सार विचारी॥
मन मूरख नित उठ उठ धाई। नाम जपत में प्रीत ना पाई॥
अनंक विचार से निर्मल कीजो। सत ठाकर की रसना पीजो॥
देह विनास अन्तर से देखो। सतरूप आतम को पेखो॥
एह बिध मनुआँ पावे धीर। सिमरे नाम परम सुखसीर॥
सतनाम जब रसना चित पाई। तब ये मनुआँ लीन समाई॥

उट्ठत बैठत कर नाम प्यार। जो मन का सब मिटे ग़ुबार॥
धीरे धीरे पवन को पीवे। शुद्ध ध्यान में नाम जपीवे॥
अपनी ग़फ़लत पर आपे बोधे। साचा नाम हिरदे में सोधे॥
मन विकारी के दाओ विचारे। नाम का आँकुस नित सिर पर मारे॥
साची बिरह प्रभ चरनी राखे। अन्तर बाहर नाम रस चाखे॥
अनहद नाद घर परगट पाई। चंचल मन की मिटी चतुराई॥
नाद पुरख की रसना पीवे। भय त्याग निर्भय हो जीवे॥
पूरन पुरख कोई करे कमाई। सतनाम कीरत घर पाई॥
साची भगती प्रभ मेल मिलाया। जनम जनम का सब ताप मिटाया॥
घालो साची गुरमुख कार। इक दिन चलना छोड़ संसार॥
जीवत में जीवन को खोज। सत ठाकर को हिरदे बूझ॥

**अन्दर सब के वस रह्या, परमानन्द सरूप।**
**'मंगत' भई परापती, जब इच्छया गयो भ्रम कूप॥1027**

सच ठाकर की सेवा धार। भव दुस्तर से उतरें पार॥
दीनदयाल सो ही सुखरासी। शुद्ध चित हो के करो उपासी॥
सब वस्तू में विगन समाये। जनम मरन के फेर में आये॥
सब वस्तू इच्छया में ग्रासी। मिले ना धीर इस जन अंध भरवासी॥
पूरन सिखया का लेख विचार। विगन रहत केवल निरंकार॥
सरब गुनों में पूरन ओही। तिस की सेव सब बिपता खोई॥
मूरख मन तूँ कर विचार। अपने ठाकर के चरन पधार॥
माया की फाँसी में क्यों ग़लताना। सकल विनास सुन मूढ़ अनजाना॥
मिले ना शान्त इस अन्धले जीया। भरम ग़ुबार में नित लपटीया॥
भरम त्याग उठ सार विचार। नाम सिमर उतरें भव पार॥
भोग विकार में धीर ना पावें। कूड़ भरवास में आवें जावें॥
मिथ्या भुगता मिथ्या भोग। अनमत जीव को लागा रोग॥
कोट जनम इस बिपत में त्यागे। मानुष जनम पायो वड भागे॥
सुकृत जनम की सार विचार। बन्धन काट मुकत को धार॥

क्यों बिपता में जनम गँवायें। अपना कीया निस्चे पायें॥
क्यों बिपता में नर ग़लताना। अन्त की बारी तूँ पछताना॥
तामस त्याग सुतन्तर हो। पल पल साचा नाम परो॥
सो ही घड़ी सुकृत जग पाई। दृढ़ निश्चय जो नाम ध्याई॥
बार बार सुनो सत लेख। साचा नाम निरंतर पेख॥

**धन जोबन ना थिर रहे, पलक विनासे मीत।**
**'मंगत' नाम सम्भालिये, यहां चला चली की रीत॥1028**

कोटाँ कोट नित उतपत पायें। कोटाँ कोट परलय को जायें॥
पवन पानी धरती और आकासा। रवी चन्दर का चक्कर बिलासा॥
दानव देव सिद्ध अवतार। आवें जावें नहीं थिरता धार॥
झूट देही बहुरंग वटाई। बाल जोबन जरा को पाई॥
जीवत में बहुरंग नर देखे। आवत जायें सकल सन्देसे॥
इस मन को नहीं धीरज होई। सुपन समान सब चक्कर लखोई॥
सदा अशान्त रहे अपने आप। नित ही तापे विच तीनों ताप॥
नहीं पलक खुशहाली इस जीव को आवे। माया जाल में नित तड़पावे॥
देह धारी जो जग में आया। दुर्मत रोग ने सबको खाया॥
सकल सयानफ़ अकारथ रहाई। अन्त की बारी जब प्यासा जाई॥
गुरमुख साजन जग तृपत पछानी। करनेहार परमेश्वर जानी॥
नित ही तिस संग प्रीत लगाई। झूट भरम का मोह चुकाई॥
साची भगती प्रभ संग निहों पाया। उट्ठत बैठत चित चरन ध्याया॥
सकल विकार गये चित रोग। गुरमुख पाये जग भले संजोग॥
पूरन पुरख की सेव कमाई। आवागवन से भई रिहाई॥
निष्काम विरत का पायो ख़ज़ाना। सत शरधा इक नाम भगवाना॥
निस दिन सेवा सतपुरख की लीजे। अबनाशी धन को नित संचत कीजे॥
सुगढ़ वापारी जग आया मीत। अन्तकाल चला भव जल जीत॥
पूरन प्रीत पूरन प्रभ पाई। पूरन हो के जग से जाई॥

**धन्न साजन जग आया, जिस पाई शबद की टेक।**
**'मंगत' मिथ्या जगत में, लख लीना साचा लेख॥1029**

जग संसे में जीव पधारा। नाम सिमर के उतरा पारा॥
आदी काल से रीत चली आई। हर की भगत सब ताप मिटाई॥
भगत कमाये शिव योग आचारी। भगत में विचरे सनकादिक गुनकारी॥
भगत परसाद नारद ने चाखा। अनन्त गुनी मुनि लिख गये शाखा॥
ब्रह्मसरूप केवल सत सार। जो जन परसे उतरे पार॥
जुगा जुगन्तर चक्कर चलाई। सत को सूझे खेद मिट जाई॥
उठ के खोज तूँ पद निर्वाना। गुनी मुनी नित करें बखाना॥
परिपूरन प्रभ अन्तरयामी। अन्तर बाहर करे बिसरामी॥
शुद्ध चेता सत सिखया धार। मृग तृष्ना नासे अन्धकार॥
सदा स्वागत करो मन मेरे। साध चरन की धूड़ लखेरे॥
भजें गोबिन्द पावें सुख सार। वेद कुतेब नित करें पुकार॥
दृढ़ निश्चय राखो गुनी मीता। साध की सेव चित करे पुनीता॥
खल बुद्धि सब बिपता हरी। सत साधू की सरनी पड़ी॥
निर्मल बोल संतन समझाया। सिमर गोबिन्द परमसुख पाया॥
रे मन मेरे करो विचार। सत ठाकर सिमर सुख सार॥
अधिक बिपता जो सिर आई। प्रभ की सेव सब ताप मिटाई॥
नमो नमो नित प्रभ के चरना। सो परमेश्वर सरब की धरना॥
एक साहब की बाँछा राख। पल पल सिमर तूँ साची साख॥
बुद्ध परगासी हंकार निवारी। खेम कुशल प्रभ चरन पधारी॥

**अनन प्रीती राख मन, प्रभ के चरनी माईं।**
**'मंगत' सो दातार है, देवे परम सुख थाईं॥1030**

सकल मनोरथ मन के पूरे। जनम जनम के मिटे वसूरे॥
परम रतन सतनाम लखाया। नाम अमोलक सन्तन से पाया॥
तृपत तृपत मन अन्तर भयो। परमधाम में वास करेयो॥
साधजनाँ की सिद्धता जानी। योग जुगत सतनाम पछानी॥

पल पल कीरत अन्तर पाई। प्रभ के चरन में लीन समाई॥
जै जैकार मन सुकृत होई। निर्मल प्रीत प्रभ चरनी परोई॥
परतक्ख ठाकर अन्तर पायो। दीन दुनी पर विजय लखायो॥
डण्डवत करूँ नित बारम्बारा। तूँ ठाकर नित राखनहारा॥
करूँ परनाम पद पंकज देवा। पूरन कीनी जन की सेवा॥
कियो निहाल दरस दिखलायो। दुर्मत भरम अन्धकार मिटायो॥
तूँ आनन्द खानी मैं बिपत समाया। होवें दयाल तब खेद मिटाया॥
बारम्बार करूँ नित बन्दना। पूरन पुरख काटो प्रभ फन्दना॥
मोह माया में नित गरसाया। तूँ पार पुरख का भेद नहीं पाया॥
दया करो सत भेद लखाओ। अनमत जीव को ठौर लगाओ॥
परिपूरन तूँ ही भगवन्ता। साची भगती दीजो सुखवन्ता॥
खेम कुशल तेरा नाम पुकारूँ। निर्मल प्रीती चित चरन निहारूँ॥
सुरत का थाल प्रेम की जोती। चुन चुन राखाँ नाम के मोती॥
प्रभ जी मेरे चित करो बसेरा। परम पुरख तूँ पार गहीरा॥
सतपुरखों की सीख लखाऊँ। रुच रुच तेरी कीरत गाऊँ॥

**अनन्त शकत भगवन्त तूँ, नित चरनी करूँ दण्डोत।**
**'मंगत' माँगे दीनता, चित राखूँ निश्चल ओट॥ 1031**

निमख निमख कीजो परनाम। अपरम आपार तूँ ही बिसराम॥
चत्तरवेद ब्रह्मा नित ध्याई। नेती नेती परमान दिखाई॥
जिस पर तूँ प्रभ भये किरपाल। लीन भयो सब दुर्मत जाल॥
मारकण्डे भसुण्ड विचारी। जुग जुग लेख लखे आपारी॥
पार भेद तेरा नहीं पावें। अनँक भाँत परमान दिखावें॥
मूढ़मती को सुकृत कीना। निर्मल सेवा चरन की दीना॥
प्रभ जी जुग जुग होएँ दयाल। सरन पड़े को करें निहाल॥
पूरन किरपाधारी देव। नित बाँछूँ प्रभ साची सेव॥
औगन हरो खिमा परगासो। चरन कँवल में कीजूँ वासो॥
अन्तरयामी सुकृत मूरत। जल थल भीतर तेरी सूरत॥

प्रभता तेरी नहीं वरनी जाई। करूँ दण्डवत् पाऊँ सरनाई॥
सदा किरपाल होवें जगदीशा। दात करें तूँ सरब के ईशा॥
पद पद तेरी उस्तत गाऊँ। तृन तृन में तेरा दर्शन पाऊँ॥
दूजा भाओ नहीं चित दरसाई। जल थल पूर तेरी जोत लखाई॥
पूरन पुरख परमेश्वर मेरे। तुमरी सेव देवे सुख घनेरे॥
लख लख पाऊँ तेरी प्रभताई। सिमर सिमर तेरे चरन समाई॥
प्रेम की रसना मन रहे भरपूर। दीनदयाल तूँ आप हज़ूर॥
ना कुछ गुन ना जान जानाई। सरब ज्ञाता तेरी सरनाई॥
अपनी प्रभता कीजो बख़शीश। आनन्द सरूप तूँ पार जगदीश॥

**सेवूँ नित ही चरन को, निहचल करूँ ध्यान।**
**'मंगत' शबद अगम का, अन्तर करूँ पछान॥ 1032**

अन्तरगत जब नाम कमाई। सील संतोख परापत पाई॥
साची बिरह प्रभ चरनी मेला। अद्भुत कौतक नाद अलबेला॥
सुकृत सीख संतन की पाई। सतसरूप घर भेंटे आई॥
अनहद घनघोर गगन का सागर। परमानन्द परकाश उजागर॥
मन चित बुद्ध इकत्तर होये। पूरन पुरख के चरन समोये॥
मंगल भया सब बिपत निवारी। अखण्ड सरूप रसा निर्धारी॥
गंग जमन सरस्वती घाट। उनमुन खोजी निर्मल बाट॥
बिना सीस वहाँ कियो पधारा। झिलमिल झिलमिल जोत चमकारा॥
ताँ में प्रीती जब चित पाई। पूर मनोरथ मंगल गाई॥
सत सुहाग किसे कामन पाया। साचा सुहेला प्रभ का गाया॥
नित मतवाली शबद के ध्यान। अन्तरगत नित कीना पान॥
पल पल आज्ञा तिस की मनाई। पततपावन प्रभ भये सहाई॥
दुबधा दूर मन भया निहाल। अनहद गरजे गगन कपाल॥
सत परतीत आरती कीनी। नाद निरत छबी अति चीनी॥
गुरमुख मनुआँ प्रीत कमाई। मर जीवन पदवी को पाई॥
नमो नमो सत ठाकर मेरे। तुम सरनागत सुख घनेरे॥

अन्तर रमया सरब तूँ स्वामी। तेरा भेद ना मिले अनामी॥
बिन पद परसे अगम का थाओं। बिना नैन देखे रूप अगाऊँ॥
अपरमपार कथा बिस्मादी। कोट मध्धे कोई विरला साधी॥

**जीवत की आसा तजें, परसें अगमपुर देश।**
**'मंगत' तीखन बाट है, निर्मल सुनो संदेश॥1033**

नाम की रसना जिस चित पाई। सो परसे प्रभ रूप ज्ञाई॥
उट्ठत नाम बैठत सत नाऊँ। अन्तर बाहिर नाम ध्याऊँ॥
दृढ़ निश्चय चित चरनी पाया। शबद सार तब अन्तर ध्याया॥
खुले कपाट अगमपुर जाई। अजर पुरष का दर्शन पाई॥
घुंगट नाद बैजन्तर बाजे। कम्पे काया प्रभ आप निवाजे॥
झिलमिल जोत परगट होई। आवागवन की दुबधा खोई॥
अगम देस का सुन परवाना। अजर पुरष परसें निर्वाना॥
जगत प्रीती मन से त्यागो। सतगुर पूरे की सेवा लागो॥
सत सिखया की रसना चाखो। नाम निरंजन कीरत भाखो॥
करम वासना वखेपत छोड़ो। निर्मल प्रीत चित चरनी जोड़ो॥
सुरती बाँध पवन घर राखो। निर्मल नाम की रसना चाखो॥
प्रेम कुठाली में मनुआँ गालो। आगम का मारग एह बिध घालो॥
सोवत जागत इक नाम निहारो। तब पूरन पुरख के चरन पधारो॥
पिंगल मनुआँ नित निरत कमाई। साचे ठाकर की रसना पाई॥
गुरमुख हो के मारग विचार। तब उतरे भव सिन्धू पार॥
निर्मल खोज करो नित नीत। सत साधू संग करो परीत॥
मन की क्रीड़ा करो निरोध। प्रभ अपने को हिरदे सोध॥
नाम सिमर जग सार को पायो। बौहड़ ना भरम चक्कर में आयो॥
सत परकाश जोत निर्वानी। नित नित सेव करो मुनि ज्ञानी॥

**एह बिध भगती धारिये, रहे अन्तर नहीं रेख।**
**'मंगत' तत्त पछानया, जल थल पूरन एक॥1034**

प्रभ दाते की दात पछान। सत सिखया संतन की मान॥
दीनदयाल सो ताप निवारी। तिसके दर का हो पुजारी॥
दुर्मत रोग ना सहजें जाई। जो चित प्रीत नहीं हर की पाई॥
सदा अशान्त मन बिकराल। प्रभ की भगत चित करे निहाल॥
जो नहीं सतसरूप पछाता। माया भरम में नित भरमाता॥
जो नहीं सत सेवा चित धारी। स्वारथ में नित होये अंगारी॥
जो नहीं मरन का कियो विचार। पाप कूप ना होवे छार॥
जो नहीं सतसंग धरी परीत। मनुआँ दुष्ट रहे बदनीत॥
जो नहीं गुर की सिखया मानी। अन्ध विश्वास में भरमें प्रानी॥
जो नहीं आतम तत्त विचार। देह के भोग में होवे छार॥
जो नहीं मन के औगन जानी। कैसे परसे पद निरवानी॥
जो नहीं प्रभ से प्रीत लगाई। जनम मरन नहीं बिपता जाई॥
जो नहीं अन्तर किया विचार। कह कारन आया संसार॥
पशु समान सब औसर गई। अन्त की बारी देह हो गई खेई॥
जो नहीं सत कीरत विचार। मान मध में फिरे गँवार॥
अनंक प्रकार पाप करे भोग। काम क्रोध लागा वड रोग॥
प्रभ दाते की सरन विचार। जो मन के सब औगन निवार॥
परम प्रीती राखो नित गुनिया। अगन समान भोग ये दुनिया॥
परमानन्द सब दोख निवारी। निर्मल चित जो चरन पधारी॥

**प्रभ की कथा विचारिये, हरिये मन के रोग।**
**'मंगत' मानुष जनम ये, वडभाग से भयो संजोग॥1035**

पलक पलक प्रभ चरन चितार। मोह माया की उतरे खार॥
कारन कर्ता सो ही जगदीशा। सिमरन कीजो सब मिटे कलेशा॥
पूरन दाता सो दातारी। सरनागत की तपन निवारी॥
जो तूँ अपना जीवन सुख चाहें। सत ठाकर की सरनी जाएँ॥
जाँ पर संकट आयो मीत। करे उद्धार प्रभ परम सुखरीत॥
अपने जन की रखया करे। दुःख रोग सन्ताप सब हरे॥

ध्रुव प्रहलाद की बिपता हरी। अनंक जीयाँ के संकट टरी॥
सत प्रीती जिस प्रभ नाम ध्याया। खेम कुशल आनन्द घर पाया॥
जगत पदारथ सब दुःखदाई। देखन में जो सुख रूप दिखाई॥
मन नहीं तृप्ते भोगे बहु भोग। तृष्ना लागा अधिक चित रोग॥
सत परमेश्वर की जिस ओट विचारी। सो जन हरे बखेपत सारी॥
प्रभ दाता प्रभ सरब समरथ। प्रभ की प्रीत सब हरे कुपथ॥
निर्मल शोभा अन्तर विचार। सत दाते का हो भिखार॥
निर्मल जीवन जग में पाएँ। जनम जनम के ताप मिटाएँ॥
साची सिखया संतन फ़रमाई। सतनाम सिमर परम सुखदाई॥
निर्मल मनुआँ तब ही नर होए। दृढ़ विश्वास प्रभ नाम परोए॥
शान्त पावे तब औगुनकारी। जो चित आवे सत सेव आपारी॥
महमा गाओ रसना नित पीयो। प्रभ के नाम में नित ही जीयो॥
सो ही दयाल सब औगन हरी। निर्मल चित जो सरनी पड़ी॥

**प्रभ दाता दातार है, तू नित हो भीखार।**
**'मंगत' भिखया नाम की, जीव का करे उद्धार॥1036**

पूरन पुरख साहब दातारी। पाँच भूत जिस कला संचारी॥
माटी के पिंजर को अत बल दीना। परम समरथ सो साहब सुखथीना॥
बिन्द से कियो जिस पिण्ड आकारा। अनंक प्रकार जिस रचा पसारा॥
जल की बूँद में रूप दिखाई। नैन की रचना अजब बनाई॥
अपरम अपार देह मन्दर साजा। सरब के भीतर आप बिराजा॥
प्रभ की रचना प्रभ आपे साखी। मूढ़मती ममता क्यों राखी॥
कौन वस्त तुमसे बन आई। पर की वस्त क्यों मान धराई॥
पर की वस्त जो अपनी कर मानी। कियो उपद्रव अत अभिमानी॥
मिले सज़ा ना छूटन पाएँ। पाप घनेरा जो ये कमाएँ॥
पर की वस्त का भयो तूँ मानी। जुग जुग भरमे नहीं शाँत पछानी॥
पाप क्रूर अधिक ये मीता। पर की वस्त पर राखें चीता॥
पाप करे नहीं छूटन पाये। जनम जनम की फाँस फँसाये॥
साची कीरत तूँ कर विचार। पर की वस्त त्याग विकार॥

अपनी ममता कर चित से त्याग। पावें छूट जो संकट लाग॥
चार पदारथ नौ निद्ध पाएँ। पर की वस्त जो चित ना लाएँ॥
देह पिंजर का जो स्वामी। तिसकी आज्ञा में कर बिसरामी॥
देह पिंजर सौंपो तिस चरना। ममता त्याग सुन मुकत का निरना॥
प्रभ की वस्त प्रभ आगे धरी। तब इस जीव की बिपता टरी॥
मूल कलंक ममता मोह नास्यो। आनन्द सरूप घट शबद परगास्यो॥

**निर्मल भगती सार ये, निर्मल ये ही विवेक।**
**'मंगत' तन मन त्याग के, राखें प्रभ की टेक॥ 1037**

साचे साहब की सरन पछान। पाप करम से पायें कल्यान॥
कारन कर्ता हिरदे में जाप। नाम अमोलक में सुरती थाप॥
आज्ञा तिसकी मन माहीं विचार। पाप कुपथ से मिले छुटकार॥
प्रभ की वस्तु प्रभ आगे राख। आज्ञा मान पावें सुख साख॥
क्यों भरमें नर कूड़ भरवासे। बन ना आवे तुझ से कुछ रासे॥
जिस की दात सकल तू पाई। तिसकी सेव चित लयो कमाई॥
बख़शनहार आपे बख़शीशे। भरम ग़ुबार सब जीव संदेसे॥
दृढ़ निश्चय चित चरनी राख। सरजनहार की महमाँ चाख॥
परीपूरन सो आपे देव। निर्मल चित से कीजो सेव॥
पूरन दाता सब थाँ परगासी। तृन तृन माहीं सो आप निवासी॥
नित ध्याओ तिस साहब चरना। सो वडदाता सब औगन हरना॥
जगत फुलवाड़ी अजब रचाई। देख देख सब मोहित हो जाई॥
अपरम आपार तेरा परताप। निहचल चित करूँ नित जाप॥
पूरन किरपा ठाकर नित कीजो। दान ग़रीबी रसना चित दीजो॥
सम सरूप ज्यों वरतारी। एह बिध सेव करूँ निरधारी॥
शक्तीमान तू ही पुरखोतम। ज्ञान सरूप शबद अनूपम॥
त्रैगुन जाल अधिक बिस्तार। नहीं चित आवे प्रभ प्रीत तुम्हार॥
करम की फाँसी में जीव बँधाया। एक पलक नहीं सिमरन चित पाया॥
ग्रहन त्याग में नित रहे समाई। तुम बिन साहब कौन बिपत मिटाई॥

**पूरन दीजो दीखया, पूरन पाऊँ सेव।**
**'मंगत' कीजे बेनती, तूँ साहब सत देव॥ 1038**

निर्मल उद्दम मेरे चित समाये। करूँ परनाम तेरी चरनी मायें॥
निर्मल उद्दम दीजो सत सेवा। पर का हेत रसे मन भेवा॥
निर्मल उद्दम सत सिमरन पाऊँ। पलक पलक तेरा जस गाऊँ॥
निर्मल उद्दम पाऊँ पर-दुःख हरना। सरब जीयाँ की रहूँ मैं सरना॥
निर्मल उद्दम सत कथूँ विवेक। सत सरूप तेरा सत लेख॥
निर्मल उद्दम पाऊँ सत ब्यौहार। हिरदे सिमरूँ तेरा नाम अपार॥
निर्मल उद्दम ये ही चित माँगे। सत संगत सत सेवा लागे॥
निर्मल उद्दम सत मारग धाऊँ। ज्ञान विज्ञान से नित तृप्ताऊँ॥
निर्मल उद्दम मन भरम त्यागूँ। सत सरूप तेरे में जागूँ॥
निर्मल उद्दम सत सुनूँ परसंग। साची प्रीत चढ़े चित रंग॥
निर्मल उद्दम मन तन समाये। कायर जीवन निकट नहीं आये॥
भला विचार चित बुद्ध विचारी। उद्दम दीजो प्रभ किरपाधारी॥
बन्ध छुड़ावें देवें सत सेव। निर्मल उद्दम करो दात प्रभ देव॥
तन मन मेरा नित सत कमाई। अन्तर बाहर सत कीरत पाई॥
सत आधार जीवन को धारी। उद्दम दीजो सत पार मुरारी॥
तेरी आज्ञा मैं पल पल ध्याऊँ। सकले करम तुध भेंट कराऊँ॥
आपा त्याग चित ग़ुरबत पाये। उद्दम दीजो पूरन प्रभराए॥
निर्मल नाम की रसना चाखूँ। अबगत शबद को हिरदे लाखूँ॥
हंग विकार बुद्धी का जाये। ऐसा उद्दम दीजो सुखदाये॥

**सत पुरषारथ धार के, जीतूँ भरम संग्राम।**
**'मंगत' कीजे बेनती, घर परसूँ निर्मल धाम॥ 1039**

मन बाँछे प्रभ कीरत तेरी। दात करो ये वस्त घनेरी॥
तेरी ओट रहे तेरा आधार। महमाँ तेरी चित आवे विचार॥
नाम तेरे की नित भूख रहाये। दरस तेरे में चित ललचाये॥

ध्यान तेरे में रहूँ लवलीन। सत कीरत करूँ अन्तर चीन॥
जब उचराँ तब तेरा नाओं। सत परसंग तेरा चित लाओं॥
तेरी महमाँ का सुनूँ विवेक। जल थल परसूँ तेरी शोभा एक॥
सब जीवों में तोहे पछानूँ। सेव करूँ हिरदे सुख मानूँ॥
सकली किरया देखूँ तेरे आधार। चराचर में सत तूँ भरतार॥
जुग जुग जाये पलक के रंग। आरूढ़ ध्यान माँगूँ सतसंग॥
मोह माया पर विजे लखाऊँ। घट घट तेरा दर्शन पाऊँ॥
मन सलाहे तेरी वडयाई। दात करो प्रभ पार ज्ञाई॥
अकथ कथा चित रहे समाई। सुरत निरत तेरी प्रीत कमाई॥
बाहरमुखता भरम विनासे। अन्तरमुख हो करूँ बिलासे॥
अनखुट ज्ञान अनुभव विचारूँ। निर्मल प्रीत शोभा चित धारूँ॥
जीवत में संग वास कराऊँ। अन्त समे तुध रूप समाऊँ॥
ऐसी दात करो दातार। माँगनहार खड़ा दरबार॥
पूरन सेवा सब ने पाई। तुध दरबार जो माँगन आई॥
अब की बारी तोड़ निभाओ। करूँ अरदास सुनो प्रभराओ॥
दया करो प्रभ अत किरपालू। साची भगती तेरे चरन दयालू॥

**माँगूँ भगती दीखया, तुध दर भया भिखारी।**
**'मंगत' तेरी दात से, नित जाऊँ बलिहारी॥ 1040**

साची सेव जिस प्रभ की पाई। तीन लोक में मिले प्रभताई॥
अपनी भरमन आप निवारी। साची सेव जिस प्रभ की विचारी॥
सत आधार जगत में पाई। निर्मल कीरत प्रभ की जो गाई॥
माया चक्कर में सब ही हैराने। पंडत क़ाज़ी भये दीवाने॥
खाये खाये मन भूख ना जाई। पीये पीये नित प्यासा रहाई॥
जीवत जीवत ओड़क मरना। अद्भुत माया का कीजो निरना॥
रंग रंग ओढ़े बस्तर जीया। ओड़क नांगा उठ चलीया॥
गन्ध चन्दन नित लेप कराई। झूट देही की नहीं दुर्गन्ध जाई॥
भोगत भोग में आप भुगताई। तृषना खड़ी द्वार रहाई॥

मान को राखे बहु बिध जीया। ओड़क धूड़ समान हो गिया॥
महल अटारी गढ़ कियो औसारा। अन्त की बारी कियो भूम पसारा॥
झूटे मोह से उठ के जाग। साचा मारग हर चरनी लाग॥
कपट विकार नित बिपता देवें। मूढ़मना क्यों प्रीत से सेवें॥
पाप करम में करें चतराई। अपने आप को आप बँधाई॥
ठगी ठगोली चित से त्याग। नित दुःख पावें मूढ़ अभाग॥
साचे साहब की प्रीत विचार। औगन नासें भरम विकार॥
सोये सोये सब जनम गँवायें। सब कुछ छाड खाली नर जायें॥
एह परमान लखो दिन रात। इक दिन चलना नाँगे पात॥
जीवत में कुछ करो कमाई। आगे मारग में करे सहाई॥

**साची सेवा हिरदे धारो, सतसंग करो प्यार।**
**'मंगत' धन अमोल ये, खाट चलो जग सार॥ 1041**

आवत जो ही सो निश्चे जाये। कुदरत खेल ये अजब खिलाये॥
इक आवे इक जावत जाई। मूढ़मना परतीत नहीं पाई॥
इक त्यागे सम्पत सारी। दूजे आके ममता धारी॥
इक चले उठ अन्त को रोये। दूजा रंग रंग पाप कमोये॥
इक चले अकेला अन्त की बारी। दूजा मान करे परवारी॥
इक मुशक़्क़त कर चले हैं खाली। दूजे धारी साँझ भयाली॥
मूरख मन उठ कर विचार। दुनिया दुस्तर गहरी धार॥
सत साधू की सरन पछान। जाँसे पायें सुख सार निधान॥
सत साधू की सिखया धार। निश्चय पावें चरन करतार॥
सत साधू की कीरत पेख। परसें परम आनन्द सुख लेख॥
पूरन पुरख का राह दिखलाई। सत साधू की जो हो सरनाई॥
साध सरन सब तपन विनासे। साध सरन पावें अबनासे॥
साध सरन सत सोझी होवे। साची प्रीत प्रभ चरन की लोवे॥
बारम्बार सुन सत उपदेशा। साध की सिखया काटे कलेशा॥
स्वारथ अगन माया दुःख नासी। परमारथ तत्त मिले सुखरासी॥

साचे नाम की कीरत पाई। सत साधू जब मेल मिलाई॥
साध की संगत पाप को हरे। पल में सकली बिपता टरे॥
साध बचन सब ताप मिटाये। सत ठाकर का निश्चय पाये॥
साध की सेव पाये कल्याना। शबद सरूप मिले निर्वाना॥

**माया जाल भरम से, सत साधु करें उद्धार।**
**'मंगत' तिन की सरन में, पल पल लेख विचार॥ 1042**

भरम त्याग संगत सत पेख। रूप निरंजन घट में देख॥
खोटी संगत पाप को देवे। अत ही संकट जीव ये सेवे॥
मिल सतसंग सत रूप विचार। मानुष जनम की खोज लो सार॥
सत ध्यान करो दिन रात। सत में निश्चय दृढ़ कर राख॥
तेरा जनम कदारथ होई। जो चित साची प्रीत परोई॥
सत की सेवा सत की पूजा। सत सरूप की पाओ सूझा॥
क्यों गरबाया जोबन तन पाये। एक पलक में राख़ हो जाये॥
महल सुहाने देख ना भूलो। जगत अचम्भा देख ना फूलो॥
इस्थिर वस्त कोई जग नाईं। कूड़ में आवें कूड़ समाईं॥
गुरमुख मारग कर विचार। सतपुरषों ने करी पुकार॥
सत नारायन आनन्द सरूप। तिसको पछानो जायें भ्रम कूप॥
निर्मल जतन खोज सुखरासी। साची सेव पाओ अबनासी॥
कर्ता पुरख सदा वडदाता। सिमर लीजो प्रभ पुरख बिधाता॥
सकल विगन से मुक्ता पावें। साची सेव प्रभ चरन ध्यावें॥
मुकन्द सरूप अजर अबनासी। कीरत गाओ मिटे चौरासी॥
पतत पावन सो दीनदयाला। तीन काल तेरा रखवाला॥
पल पल रिज़क़ पहुँचाये स्वामी। भज बिशम्भर अन्तरयामी॥
भोग विकार से सुरता ठाक। साची भगत कीरत चित भाख॥
अपने साहब का हुकम पछान। सुफल जनम का मिले निधान॥

**एको सत परमात्मा, नित ही सेव विचार।**
**'मंगत' बिन प्रभ भगत के, चित औगन करे आपार॥ 1043**

जीवत में सतनाम कमाई। परम भगत प्रभ चरन समाई॥
निश्चल बुद्धी सत कियो विचार। शबद सरूप पायो करतार॥
अन्तर शबद परापत पाई। साची भगत की सार लखाई॥
नित नित ध्यान शबद में राखो। सारंग बानी की रसना चाखो॥
चारे कुण्ट उठ उठ धायो। शबद बिना नहीं मन तृपतायो॥
अठसठ तीरथ फेर फराई। मन की मैल दुर्मत नहीं जाई॥
शबद सरूप जब अन्तर जानी। सकल विकार की होई हानी॥
नित ही शबद में जीवन काढ़ी। पार पुरख के चरन पधारी॥
शबद ध्यान मन धीर समाया। मारग गुपत संतन दिखलाया॥
आनन्द सरूप सत शबद विचार। साची कीरत हिरदे में धार॥
नित परापत अत बलवन्ता। पिण्ड ब्रह्मण्ड सब माहीं रमन्ता॥
सब घट शबद करे गुंजार। साध की सीख से पावे निस्तार॥
भँवर गुफा में शबद पुकारी। साचे गुरमुख कथा विचारी॥
साचा नाम जब हिये परोई। साखी शबद की सोझी होई॥
पूरन पुरख सरब का ईशा। अनहद नाद रमत सुखरीशा॥
निर्मल प्रीती राखो चरना। साची भगत का पावें निरना॥
मन अपने को अन्तर राख। निर्मल प्रीत शबद की चाख॥
सत ठाकर चित करे निहाल। विरले गुरमुख कीना भाल॥
सबके अन्दर प्रभ करे पुकार। कोट मद्धे कोई परसे सार॥

**निर्मल प्रीती नाम की, शबद मिलावा दे।**
**'मंगत' सो ही सुगड़ा, जो नाम साहब का ले॥ 1044**

मिल सतसंग सतनाम विचार। जग जीवन की सुकृत कार॥
पवन को बाँध नाम के संग। निर्मल शबद सुनो परसंग॥
मन को राख प्रान के माहीं। अन्तर बाहर सतनाम लखाईं॥
सत सील हिरदे में राख। निर्भय नाम की रसना चाख॥
शबद की महमा हिरदे में गाओ। शबद पुरख संग हेत लखाओ॥
आलख शबद ब्रह्म निर्वान। अपने अन्तर करो ध्यान॥

सब कुछ तिसकी आज्ञा जान। जल थल सो ही है परवान॥
गरब त्याग बिख ममता मीत। साचे शबद का गाओ गीत॥
शबद की सोझी सब ताप को हरे। देह विकार की ममता टरे॥
मिथ्या मध सब देह का जाई। साचा शबद प्रभ रतन कमाई॥
मेरी मतिया तूँ कर विचार। साचे शबद का लेख नित धार॥
तिस जन ने पायो पार ठिकाना। जिस ध्याया सत शबद विज्ञाना॥
साची भगती प्रभ नाम कमाओ। आज्ञा तिस की मन तन वरताओ॥
जीवन में मिरतक हो जाओ। साची रसना शबद घर पाओ॥
राखनहारा सो किरपाधारी। निर्मल चित से हो पुजारी॥
संशे में नर ना भरमाओ। सत शबद का लेख लखाओ॥
चेतन पुरष शबद आनाद। सरब रुमाना रूप बिस्माद॥
चतर चतराई सब मन की जाये। अबगत पुरष शबद जो ध्याये॥
पूरन ब्रह्म परमेश्वर जाप। मोह माया का हरे सन्ताप॥

**सतपुरषों की सीख से, नाम रतन रस चाख।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, पायें शबद पुरख की साख॥ 1045**

शबद सरूप जिस कथा विचारी। जीवन मुकत निर्भय पद धारी॥
अन्तर जुगत मनुआँ नित राखी। प्रान उपान को सम कर चाखी॥
इरध उरध में सुरता जोड़ी। परगट शबद तत्त सार निचोड़ी॥
बिना फूल फल बृख को आया। आलख शबद घर माहीं ध्याया॥
गगन की खेती नित संचारी। निर्वान सरूप फुली फुलवाड़ी॥
ताँ में सुरती रहे समाए। काल करम सब भरम चुकाए॥
बिमल नाद घनघोर करीना। गुरमुख जीवन जग में लीना॥
रहे अकान्त शबद को पीये। निज सरूप में जीवन जीये॥
सहज सुन्न का घाट पछाता। अनहद नाद रमत सुख पाता॥
निर्मल ध्यान वहाँ सुरत परोई। तब ये काया निर्मल होई॥
अमरत नीर में कियो अश्नाना। अमर भयो जन मुकत समाना॥
घर में साचा कंत मिलाई। शबद पुरख के चरन समाई॥

अगम पंथ में नित परबीना। बानी अगोचर नित नित चीना॥
अभेद रूप ठाकर घर पाया। सिमर सिमर के मंगल गाया॥
स्वपन समान रचना जग भई। सत परकाश जोत घर लई॥
घर आओ निज अपने मीत। परमानन्द घट बसे पुनीत॥
झिलमिलकारी सुरत उठ धाई। भरम बुरज को सहज उड़ाई॥
चढ़ी आकास पाया परगासा। जनम मरन का बन्धन नासा॥
सुकृत कीरत विरले जन पाई। घर विच साचा कंत मिलाई॥

**राम रतन को पाये के, मन तन भयो परसन्न।**
**'मंगत' अन्तरगत माहीं, प्रभ पारस पायो धन॥ 1046**

पारस परस निर्भयपद पाया। राम रतन सन्तन दिखलाया॥
जंगल बेले फिरूँ बियाबाना। भाँतक भाँत सुने विख्याना॥
रंग रंग के पुन्न दान करीने। जतन अनेक चित अन्तर कीने॥
बिन सत साधू के मेल मिलाये। राम रतन नहीं हिरदे आये॥
पूरब जनम का करम सत जागा। सत साधू पायो वडभागा॥
निर्मल जुगती सतनाम दखाई। ताँ को परस रतन प्रभ पाई॥
मन मनोरथ पूरन होए। शबद पुरख में लीन समोए॥
अन्तर शबद करे परगास। ज्ञान दृष्ट से कीजे वास॥
सुरत अडोल जब अन्तर आई। पूरन पुरख शबद अर्थाई॥
खट चक्रन का मारग छेदा। ऊँची दृष्ट मन को बेधा॥
पवन का झाड़ू घट अन्तर दीना। शुद्ध सरूप शबद तब चीना॥
भाँतक भाँत घर खेल विचारी। आपे खेले पुरख मुरारी॥
खुली बंकनी शबद पछाना। अनहद नाद पुरख निर्वाना॥
सहज योग जुगत घर पाई। आलख शबद पाया सुखदाई॥
धन्न साधू जिस मारग दिखलाया। पूरन पुरख ठाकर घर पाया॥
अबगत नाद बजावे तूरा। गुरमुख परचे विरला सूरा॥
ईड़ा पिंगला सुखमन धार। त्रिकुटी मन्दर खोल किवाड़॥
परगट शबद नित ही परगासे। सतगुर मेल करो अरदासे॥

सो ही स्वामी सकल जग धर्ता। आलख नाद सरब का कर्ता॥

**अपने अन्तर जानया, जग का सरजनहार।**
**'मंगत' तिसकी प्रीत में, पल पल लेख विचार॥ 1047**

प्रभ माया का खेल लखाया। भरमन छूट जीव तृपताया॥
बीज माहीं ज्यों बृच्छ परगासे। शाख पत्र फल फूल बिलासे॥
ओड़क बृच्छ बीज समाई। लेख विचार करो गुनीराई॥
जल से ज्यों तुरंग उपजाई। तुरंग विनासे जल रूप समाई॥
ऐसा लेख लखो सत सार। ब्रह्म सरूप सकल संसार॥
सहज भाए मनसा प्रगटाई। तीन गुनों का चक्कर चलाई॥
करम अभमानी जीव गरसाया। तीन गुनों में नित भरमाया॥
मन बुद्धी पसरे आकासा। पवन पावक करे नीर बिलासा॥
धरती धार रचना रचनाई। सरब निरन्तर आप समाई॥
अपना कौतक आपे देखे। सरब न्यारा रहे अलेखे॥
समा रुत काल नहीं पख मासा। जिस पल रचयो ये जगत तमाशा॥
सिद्ध तपीशर लिख लिख हारे। शेष महेश नहीं पावें पारे॥
वाह वाह खेल साहब रचाई। अपना लेख आपे लख पाई॥
जिस जन साचा शबद पहचाना। तिस ही पायो सार ठिकाना॥
अन्तर मूल अन्तर बिस्तारे। अपरम अपार खेल खिलारे॥
अन्तरमुख जिस सोझी पाई। मूल पछान के लीन समाई॥
सुकृत बचन ज्ञान की सार। अन्तर खोज जग सरजनहार॥
मत भूलो ये जग देख फुलवाड़ी। साचे साहब का खेल है जारी॥
साचे साहब की चित प्रीत कमायो। जगत पसार का निरनय पायो॥

**एक साहब को सिमरिये, जो आदी अन्ती मूल।**
**'मंगत' एको पसरया, क्या सूक्षम अस्थूल॥ 1048**

चार खानी ये जगत की रचना। एक साहब सब माहीं विचरना॥
खोज ज्ञान पावें तत्त सार। सत सरूप पूरन भरतार॥

अन्तरगत जानत जब भेदा। सकल स्वामी पायो अछेदा॥
अपनी माया का किया पसार। त्रैगुन धार रचा संसार॥
अंडज पिंडज स्वेदज धारी। औधज रचना रची अपारी॥
वारापार ना कथने में आई। किस बिध साहब बनत बनाई॥
आपे रचे आप नित न्यार। आलख पुरख का अजब पसार॥
सकल जीयाँ का आप स्वामी। नित रखयक प्रभ पारगरामी॥
सकल आधार प्रभ आप समाया। पूरन पूर शकत सुखदाया॥
सकल जीयाँ के घट परगासे। पूरन पुरख आप अबनाशे॥
सब की गत मित आप पछाने। अन्तरयामी पुरख निर्वाने॥
सब का आदी अन्त का मूल। ऊँच नीच सूक्षम अस्थूल॥
सार जुगत जब भेद लखाया। केवल रूप प्रभ एक दिखाया॥
तिस साहब की ओट विचार। अनँक विगन से उतरें पार॥
सो दीनदयाल नित रखया करी। सत परतीत जो सरनी पड़ी॥
आपार ये रचना जगत अचम्बा। खेले खेल प्रभ आप अखण्डा॥
भली परतीत सत सेव कमाओ। अखण्ड सरूप में लीन समाओ॥
करम का जाल दुस्तर अत भारी। मृगतृष्ना ये जीव लिपटारी॥
मिथ्या में सत करी परतीत। भव दुस्तर ये गहरी भीत॥

**बिन सतगुर साजन सन्त के, कौन बतावे भेद।**
**'मंगत' मिथ्या भरम ये, नित चित कीजे छेद॥ 1049**

पूरन रूप साहब सुखरासी। जो जो सिमरे कटे भरम चौरासी॥
दृष्टी भेद भरम संसार। मोहित भये सब जीव अंध्यार॥
अंजन ज्ञान से मलन विनासे। सतगुर मिलें कटे भ्रम फाँसे॥
नित सरनागत हो प्रभ देवा। बिनस जाये सब मन का भेवा॥
प्रभ सरनागत सब बन्ध कटावे। परम आनन्द प्रभ मेल मिलावे॥
नित ही खोज मारग सुखरासी। सत शरधा से करो निवासी॥
पूरन तेरी मनसा होवे। पूरन पुरख के चरन समोवे॥
सतगुर साजन भेद बतलाया। राम रम्मत परम सुख पाया॥

साखी पुरष सरब परकासी। निर्मल चित से करो उपासी॥
अन्तर में नित पूजा कीजो। पूरन प्रभ के दर्शन लीजो।
संतोख का थाल प्रेम की जोती। सुरत अडोल चुन मानक मोती॥
भाओ भगत की निरत कमाई। सत ठाकर के चरन समाई॥
अन्तर खोज अन्तरगत पाई। अन्तर में ही मिली प्रभताई॥
अन्तर ठाकर अन्तर पूजा। सतगुर मेल परम पद सूझा॥
अन्तर मनुआँ नाम सम्भाले। नज़री आया दीनदयाले॥
उत्तर से पच्छम को धाया। पच्छम से पूरब गत पाया॥
नौ दर बन्द दसवाँ परगासा। पूरन पुरख पाया अबनासा॥
गंग जमन सरस्वती का एका। राज प्रयाग का लख तूँ लेखा॥
अबगत शबद आलख बिसमाद। अन्तर ध्यान पद परस आगाध॥

**निर्मल सुरती धार के, खोज गगन की बाट।**
**'मंगत' दीनदयाल प्रभ, दरसयो दसवें घाट॥ 1050**

मारग गुपत सतगुर दिखलाया। घर विच घर का दर्शन पाया॥
शबद घनघोर बजन्तर बाजे। सत सुलतान ठाकर बिराजे॥
सुरती खैंच अन्तरगत धारी। पायो ठाकर पार मुरारी॥
पाँच शबद मिल परगट भयो तूरा। रमज़ पछाने गुरमुख सूरा॥
कहन नहीं आवे कथा ना जाई। आलख पुरख भेद आगाही॥
जाप अजप्पा नित ही जापे। सदा अरोग नहीं काल व्यापे॥
अन्तर माहीं भया लवलीना। साचा मारग सतगुर दीना॥
नित नित सुरती खेले खेल। प्रभ चरनी संग कीजे मेल॥
साचे सेवक सेवा जानी। पारस परस पाया निरवानी॥
साचे सेवक कथा विचारी। सतगुर सीख अन्तर में धारी॥
पूरन प्रीती प्रभ चरन ध्याया। साचे सेवक अमरत फल पाया॥
प्रभ की सेवा ने बन्धन काटे। निज सरूप भया रँगराते॥
ऐसी करनी निर्मल सार। अन्तर में सतनाम विचार॥
पूरन पुरख की करो अरदास। मोह माया की काटे फाँस॥

साचा साहब तूँ सुखरासी। तुम किरपा से मिटे चौरासी॥
नित सरनागत पूरन देवा। नित ही माँगाँ निर्मल सेवा॥
अपने भाने करो उद्धार। बिपत हरो इस अन्ध ग़ुबार॥
तेरी किरपा माँगूँ नित नीत। दात करो साची परतीत॥
अनजान अत मुगध है मूढ़ा। तुम सरनागत हूँ पुरख हज़ूरा॥

**साची प्रीती चरन की, मन तन नित समाये।**
**'मंगत' की ये बेनती, दात करो प्रभराये॥ 1051**

नमो नमो नित निर्मल चरना। तूँ परमेश्वर कारन करना॥
नमो नमो तेरे पूरन रूप। दीनदयाल काटो भ्रम कूप॥
अबगत महमाँ तेरी प्रभ देवा। दीनदयाल माँगूँ सत सेवा॥
तुम दर छोड़ ना थाओं कोई। निहथाँवाँ जुग जुग फरोई॥
भरम की फाँसी काटो देवा। मूढ़मती ये माँगे सेवा॥
नित ही तेरे चरन समाऊँ। नित ही तेरी कीरत गाऊँ॥
नित ही तेरा रहे आधार। सुख दुःख में तेरा करूँ विचार॥
आज्ञा तेरी पल पल मनाऊँ। आप त्याग के तेरे चरन समाऊँ॥
पूरन दात करो प्रभ दयाल। मूढ़मती को करो निहाल॥
जग दुस्तर है ताप घनेरा। नित घबराए जीया ये मेरा॥
तेरी नज़र इक करे निहाल। लख लख पाया लेख दयाल॥
तूँ ठाकर मेरा सत स्वामी। नित ध्याऊँ तेरा नाम अनामी॥
तूँ पुरखोतम मूरत बलिहारी। चरन कँवल चित रहे निर्धारी॥
साकत जीया नित भरमाई। बिन सरनागत ठौर नहीं पाई॥
साकत जीया नित तपतावे। बिन तेरी भगत नहीं ताप मिटावे॥
साकत जीया फिर फिर आये। तेरा सिमरन भाग से पाये॥
साकत जीया नित बन्धन पाई। कित गुन धार जेती चतराई॥
साकत जीया खोज सत ठिकाना। सत सरूप सिमर निर्वाना॥
साचे नाम की प्रीती राख। साची सिखया सार ये चाख॥

**देह जोबन का मान हरो, प्रभ सिमर लीजो हरि राये।**
**'मंगत' तिसकी भगत से, सब जीव की बिपता जाये॥ 1052**

पूरन पुरख तूँ ही अबनासी। पल पल मन में करूँ उपासी॥
अपनी दात करो दातार। ये मन सिमरे तेरा नाम अपार॥
तूँ ही तूँ सब ताप मिटावें। सत भगवन्त सतनाम लखावें॥
जग जीवन में सार लखाऊँ। सुकृत काज जपूँ तेरा नाऊँ॥
अखण्ड प्रीती चरन चित ध्यान। महमाँ तेरी नित करूँ बखान॥
नित बलिहार जाऊँ तेरे रंग। नित नित रमूँ तेरे प्रभ संग॥
तूँ परमेश्वर किरपाधारी। मनमुख जीव की हरो ख़वारी॥
बन्धन काट माया का जाल। परम शकत पाऊँ नाम कमाल॥
तेरी बन्दना मन चित में आये। दात करो प्रभ केशवराये॥
साकत जन की कर खबरगुज़ारी। डूबा जाये विच भरम अन्धकारी॥
हरो विकार इस मूरख जीया। पततपावन तूँ पुरख कन्हैया॥
तन मन अरपूँ तेरे सत चरना। दीनदयाल हूँ तेरी सरना॥
मूढ़मती के बन्धन काट। तुध दर माहीं कछू नहीं घाट॥
अनन प्रीती दीजो सत सेवा। पल पल सिमरूँ नाम सुखदेवा॥
आप त्याग तेरी कीरत गाऊँ। सरब माहीं तेरी जोत लखाऊँ॥
आप त्याग जपूँ सतनाम। साची सेव पाऊँ निषकाम॥
आप त्याग करूँ अरदास। दीनदयाल काटो भ्रम फाँस॥
आपामत दुर्मत ये जाये। निमख निमख तेरे चरन समाये॥
पूरन किरपा औगन सब हरो। सुकृत नाम हिरदे में धरो॥

**नाम दीपक परगासयो, प्रभ जी अन्तर माहीं।**
**'मंगत' दुर्मत त्याग के, नित तेरे चरन समाईं॥ 1053**

आदी देव तूँ ही समराथा। पूरन पुरख नाथन के नाथा॥
नित करूँ अरदास स्वामी। बिपत हरो प्रभ पारगरामी॥
निश्चल कीजो ये चंचल जीया। पूरन पुरख तूँ सरब रमीया॥
तेरी कीरत पल पल धारूँ। नित भिखारी प्रभ तोहे पुकारूँ॥

दर कूकर की रज दीजो स्वामी। भगत वत्सल तूँ पारगरामी॥
अनेक जीयाँ के संकट टारे। बिपत माहीं केते निस्तारे॥
मूढ़-जनाँ को सुकरत कीना। साची सेव चरन की दीना॥
तेरी दात का नहीं शुमार। पूरन होये जो आये द्वार॥
अनमत तेरी सरनी आया। राख लें प्रभ पूरन राया॥
तेरे दर की रजनी अपारी। औगन भरया मैं नित भिखारी॥
प्रभ जी होवो नित दयाल। औगनहार को करो निहाल॥
सत विश्वास पाऊँ प्रभ देवा। अटल ध्यान करूँ नित सेवा॥
तेरे प्रेम में मगन समाऊँ। दुस्तर जाल ना चित लख पाऊँ॥
तेरे चरन की रहे परीती। मन ना बाँछे करम पलीती॥
तेरे प्रेम की चढ़े खुमारी। भूक प्यास सब दोख निवारी॥
तेरे प्रेम में जाये दिन रैना। निर्मल प्रीत पाऊँ चित चैना॥
सकली कलपना मन की नासे। अधिक प्रेम तेरा परगासे॥
खावन पीवन सकल ब्यौहार। चरन कँवल चित रहे विचार॥
मीन नीर ज्यों प्रीत कमाई। एह बिध मन तेरे चरन समाई॥

**अनन भगती प्रभ चरन की, मन तन माईं समाये।**
**'मंगत' दुबधा सब मिटे, जन पूरन रूप हो जाये॥ 1054**

मिथ्या देह का मान त्याग। इस्थिर रहे नहीं ये रंग राग॥
जीवत में केते रंग वटाये। बाल जवानी जरा सिर आये॥
किस भरवास में तूँ ग़लताना। पल पल काल का बजे निशाना॥
इक दिन चलना जग से मीत। छाड़ गुमान परम दुःखरीत॥
साचे शबद का करो विचार। जो नित देह को सरजनहार॥
माटी देख ना मूढ़े भूलो। छिन जीवन पर कभू नहीं फूलो॥
कहाँ ज्ञानी गुनी तत्तवादी। समाँ पाये गये छाड आबादी॥
अपना जीवन हिरदे खोज। साचे शबद की पाओ सूझ॥
परमानन्द सो पार मुरारी। सरन पड़े को पल निस्तारी॥
बन्धन रूप माया का त्याग। सत सरूप में उठ के जाग॥

देह भरवासा देवे पछताप। जब ये देही राख़ समात॥
देह भरवासा औगन की खान। मिथ्या भोग में रहे ग़लतान।
देह भरवासा जीया तपतावे। ताप तीनों की अगन तपावे॥
देह भरवासा अत अन्धकार। बान्धा जीव मुगध गँवार॥
देह भरवासा भय काल दिखाई। कम्पे जीया भरम लिपटाई॥
देह भरवासा अत संकट देवे। मूढ़ा जीव परम दुःख लेवे॥
देह भरवासा औगन परगासे। इन्द्री भोग में नित निवासे॥
देह भरवासा मध मान उपजाये। अत कुपथ करे दुःख पाये॥

**देह भरवासा राख के, जीव आवागवन भरमाये।**
**'मंगत' जतन अनेक करे, तो भी धीर नहीं पाये॥ 1055**

मिथ्या देह को सत कर मानी। डूब गये सकले जग प्रानी॥
खोल नैन खोज विवेक। मिथ्या देह का कीजो लेख॥
अधिक ग़ुबार की देही खान। काम क्रोध विच बसें सवान॥
इच्छया मोह अन्धकार परगासे। लज्या भय कीरत नित भाखे॥
उपजे बढ़े पसरे पासार। सुकड़े नाशे ये देही विकार॥
पल में और की और हो जाये। मूरख जीव बिरथा दुःख पाये॥
ना देह थिर इक पलक रहाई। तिसके मोह में परम दुःख पाई॥
लोक कटुम्ब सकल परिवारा। सकल परपंच ये देह पसारा॥
देह आधार जगत को देखा। रंग रंग कौतक माया का पेखा॥
देह विनासे कछु दृष्ट नहीं आई। करो विचार गुनी गुनराई॥
देह ही संसा रूप संसार। मिथ्या भरम जीव अंध्यार॥
द्वन्द विकार देही की फाँस। भरमें जीव नित काल गरास॥
काल सरूप ये देही जान। अनमत जीव को करे हैरान॥
अनन्त विकार का देही सागर। मूढ़ा जीव नित करे उजागर॥
मिथ्या देह सत आतम देवा। विरले गुरमुख पाई सेवा॥
आतम तत्त का कीजो विचारा। दुस्तर देह से शान्त पधारा॥
दृढ़ निश्चय आतम में पाई। लीन भई सब भरम की काई॥

सत सरूप केवल परकास। करे पछान मिटे भ्रम फाँस॥
मन के औगन तब ही जायें। झूट देही का जब मोह मिटायें॥

**देह दुर्मत विकार में, नित जीव फँसाई।**
**'मंगत' तिसकी वासना, जनम मरन दिखलाई॥ 1056**

साखी पुरष जब देह का जानी। काल करम तब पाई हानी॥
साखी पुरख संग प्रीत लगाई। साची भगत अमरत फल पाई॥
देह की ममता तपन अत भारी। पल पल जीव को करे अंगारी॥
साखी पुरष जब भेद लखाया। तपन विनासी आनन्द घर पाया॥
देह की ममता अत भय दिखाई। जनम मरन अत संकट पाई॥
साखी पुरष अबनाशी ध्यायो। भय त्याग निर्भय समायो॥
देह की ममता अत गरब परगासे। साखी पूजे पाये प्रेम घर वासे॥
देह की ममता अत आस बन्धाई। अनँक मनोरथ में जीया भरमाई॥
साखी पुरष जब सत कर जाना। पूर मनोरथ भयो निरवाना॥
देह की ममता सुख दुःख दिखलाई। लाभ हान में नित भरमाई॥
करम फल इच्छया सयानफ़ धारी। काम क्रोध की धरी ग़ुबारी॥
साखी पुरष सत रूप पछाता। द्वन्द त्याग निरद्वन्द समाता॥
देह की ममता विकार परगासे। साखी पूजे समता चित भासे॥
देह की ममता नरक स्वर्ग दिखलाये। दुःख सुख भोग नित तिरखाये॥
देह की ममता आपा पर भेद। ग्रहन त्याग का धारा छेद॥
साखी पुरष तत्त आतम ध्याया। दुर्मत त्याग एको दरसाया॥
देह विकार ये गवन निशानी। मिथ्या भोग में जीया लिपटानी॥
परचण्ड माया ये भरम आपार। मोहित भये गुनी गुनकार॥
साखी पुरष तत्त परसे जोई। दुबधा दुर्मत माया भ्रम खोई॥

**साखी रूप पहचान कर, मिथ्या देह मोह त्याग।**
**'मंगत' मिटे सब वासना, पायें शबद अनुराग॥ 1057**

साखी पुरख तत्त शबद विचार। पूरन पसरे सकल पासार॥

सदा आनन्द द्वन्द से न्यारा। सर्वज्ञ रूप पद निरधारा॥
सो ही स्वामी सकल जग धारी। ज्ञान सरूप प्रभ पारमुरारी॥
ऐसे शबद की नित कथा विचार। मिथ्या देह का मोह मिटे विकार॥
शबद आनादी देह पिण्ड से न्यारा। निराकार सर्वज्ञ रूप निर्धारा॥
नित ही अन्तरगत विचार। साची सीख अन्तर में धार॥
सतगुर खोज शबद तत्त वेता। तिसकी सेव सब हरे विखेपा॥
निर्मल जुगत मन माहीं कमाओ। दुर्मत जाल का होवे अभाओ॥
शबद ध्यान शबद विचार। शबद कमावे उतरे भव पार॥
शबद अगोचर पुरख निर्वान। मिल सतगुर कर अन्तर पहचान॥
घट घट अन्तर करे गुंजार। साखी पुरख शबद निर्धार॥
मन को ठाक अन्तर में राख। पूरन गुर की सिखया नित चाख॥
साचा नाम पल पल चेत। मन की बिनसे सकल विखेप॥
निहचल चित पवन को सोध। निर्मल नाम अन्तरगत बोध॥
शबद परकाश अन्तरगत होई। दुबधा दुर्मत सब मन की खोई॥
देह विकार पर पाओ जीत। साखी पुरख की करो परीत॥
निर्मल बुद्धी पछान विवेक। मिथ्या त्याग लख साचा लेख॥
आनन्दसरूप घट शबद विचार। ममता देह मिटे अन्धकार॥
आनन्दसरूप शबद इक जान। दुर्मत जाल विखेप पछान॥

**शबद सरूप नारायन, नित ध्याये हिरदे माईं।**
**'मंगत' मिटे सब कल्पना, जीव पावे सुख थाईं॥ 1058**

साचे शबद का करो नबेड़ा। बिनस जाये सब भरम बखेड़ा।
कहाँ से आया कहाँ लीन समाई। करो विचार गुनी गुनराई॥
ना वोह आया ना जावे मीत। परिपूरन सो शबद पुनीत॥
सबसे आदी पुरातन सोई। शबद पछान सब जाल समोई॥
शबद ये बानी आदी परकाश। जल थल माहीं करे निवास॥
सचखण्ड देश शबद का थाना। गुरमुख विरले भेद पछाना॥
शबद अनामी शबद अकाल। शबद पछाने होये निहाल॥

शबद ज्ञान शबद विज्ञान। शबद सरूप केवल निर्वान॥
अनमोल शबद नहीं पारावार। पुरियाँ मंडल में करे पसार॥
अबगत शबद अछेद अखण्ड। पसरे शबद सकल ब्रह्मण्ड॥
ऐसे शबद का कथो विवेक। जरा मरन का मिटे भुलेख॥
करम भरम काल से न्यारा। इच्छया ममता नहीं भरम ग़ुबारा॥
शुद्ध सरूप अखण्ड परगास। साचा शबद चित माहीं उपास॥
उपजे बिनसे तत्वों का खेल। अनँक रूप का पावें मेल॥
तत्व अतीत सो शबद रहाई। नित परकाश परम सुखदाई॥
त्रैगुन माया में फिरे जग जन्तर। नाना रंग भेख भेखन्तर॥
गुना अतीत सो शबद समाई। करे पछान सब ताप मिटाई॥
परीपूरन पद निरवाच। शबद पछान पावें गत साच॥
आलख शबद नहीं कथनी आवे। सूझ पड़े तब ताप सब जावे॥

**मन को अन्तर राखिये, खाइये शबद तत्त सार।**
**'मंगत' नित आनन्द सो, हरे तृखा संसार॥ 1059**

शबद को सिमरे शेष महेशा। शबद को ध्यावें गौरी गनेशा॥
सिद्ध बुद्ध आद तपीशर ध्यायें। आलख शबद में लीन समायें॥
शबद ही ठाकर सरब सहाई। खोज करो गुरु सीख लखाई॥
शबद में पवन नीर बैसन्तर। धरन आकाश शबद सब अन्तर॥
सर्वज्ञ पूरन पार स्वामी। शबद ध्याओ नित अन्तरयामी॥
देह की ममता पल पल भरमाई। शबद की सेव सब ताप मिटाई॥
जाप करो नित धरो ध्याना। कथो विवेक आलख निर्वाना॥
सत सोझी शबद की पाओ। दुस्तर जाल से मुकत समाओ॥
शबद अजन्मा ठाकर सुखरासी। सिमर सिमर शबद तत्त अबनाशी॥
अपरम आपार शबद पसारा। नित नित कर तूँ निमस्कारा॥
सरब की जाने आप निर्वानी। नमो नमो तत्त शबद सुखदानी॥
अबगत अगोचर आप परातन। सरब का आदी रूप सनातन॥
खोज करो मिल संगत सेवा। शबद कमाओ देवन देवा॥
कलह विनासे पायें परतापा। आलख शबद का करें नित जापा॥

मन निश्चल आवे घर मीता। साखी शबद जपो पुनीता॥
सत कीरत मन अन्तर गाओ। दुःख द्वन्द का होवे अभाओ॥
सत सम्पत जीवन सार। सत शबद का करो विचार॥
पढ़न पठावन सकला त्याग। एक नाम की रसना लाग॥
सतगुर सिखया अन्तर खोज। शबद पुरख की परसें मौज॥

**संकटमोचन शबद है, नित आनन्द की खान।**
**'मंगत' शबद कमाइये, जग जीवन सार पछान॥ 1060**

अखण्ड शबद पद परले पार। निर्मल प्रीत से करो विचार॥
सो ही जग का सार ठिकाना। शबद पुरख ठाकर निर्वाना॥
शबद ध्यान करो दिन रात। विगन त्यागे ये मन कमज़ात॥
जीवन में तत्त सार विचार। अबगत शबद रूप निरंकार॥
साची भगती मन में पाओ। करो उपास प्रभ परम सुखदाओ॥
साची अरदास तिस चरनी कीजो। मिटे विखेप पद निर्मल लीजो॥
साची जुगत मन माहीं कमाओ। शबद पछान परमगत पाओ॥
साची विद्या खोज नाम निधान। अनुभव परकाशे जोत निरवान॥
साची साधन हिरदे साध। साचा शबद जप पुरख आगाध॥
साचा वनज ये नित कमाओ। मन माहीं सत शबद ध्याओ॥
शबद पछाने सो शाहों का शाहे। निज रूप परापत बेपरवाहे॥
साची भगती करो भगवन्त। तृपत होवें सब मिटे तिरखन्त॥
साची भगती में जीवन काढ़। करमजाल को चित से बाढ़॥
साची भगती परमगत देवे। मिले भगवन्त चरन चित सेवे॥
साची भगती रतन अमोल। जरा मरन मिटे भ्रम ख़ोल॥
उट्ठत बैठत प्रभ भगत विचार। मानुष जनम की खाट सत सार॥
पूरन भाग तिस ही जन पाये। प्रभ की भगत जो सार कमाये॥
तुच्छ जीवन को सुफल कर मीत। शान्त सरूप गाओ प्रभ गीत॥
दृढ़ निश्चय कर शबद की खोज। जीवन मुकत पद पावें सोझ

**रसना शबद की खाये के, मनुआँ थकत समाये।**
**'मंगत' साधन शबद का, साची भगत सुखदाये॥ 1061**

नर्मल चित प्रभ चरन उपास। द्वन्द ग़ुबार की मिटे प्यास॥
साखी पुरष सदा सरजीवे। भगत पछान परमसुख देवे॥
आलख शबद का लेख विचार। दृढ़ निश्चे से सिमर तत्त सार॥
सत शबद अन्तर परगासी। खोज करो सो ही तत्त अबनासी॥
देह ममता का भरम त्यागो। साखी पुरष के चरनी लागो॥
ठाकर साचा सदा दयालू। बन्धन काटे सो किरपालू॥
दुस्तर जाल परकिरत पसारा। शबद विचार करे निसतारा॥
संशे भरम नहीं मन का जाई। जब लग सार शबद नहीं ध्याई॥
वेद कुतेब वाचे बहु गुनिया। शबद भेद नहीं अन्तर सुनया॥
संशे अनेक में आवे जाये। कथ कथ मरे नहीं सार को पाये॥
निर्वान सरूप शबद इक चेत। दुर्मत त्याग पावें सत लेख॥
नित परकाश सब घट रमीना। खोज शबद होवे दुबधा छीना॥
जनम जनम मन दुबधा ठानी। शान्त भयो घर शबद पछानी॥
झूट पिंजर से मुक्ता होई। आलख शबद जो लेख परोई॥
बारम्बार करो आदेसा। साखी पुरख पार जगदीशा॥
नित आराध साचा नाओं। गुर परसाद पावें सत थाओं॥
सत दरबार साहब पहचान। मूढ़मती क्यों करें गुमान॥
जो कीजें सो दुःख की कारी। आवें जावें शबद विसारी॥
साचा शबद मिल सतगुर चेत। अगन तृष्ना मिटे विखेप॥

**क्यों भरमाया अन्धमती, जो शबद भेद नहीं पाये।**
**'मंगत' कथनी कथ मुए, विच संशे जनम गँवाये ॥ 1062**

अपने मन की भूल चुकाओ। साचे शबद की कीरत गाओ॥
करो उपास मन चित लाये। भगत परापत गवन मिटाये॥
दुर्मत जाल ये अधिक ग़ुबारा। फिरे चौरासी जीव अंध्यारा॥
सार शबद मिल साधू गाई। मानुष जनम की सार लखाई॥

साचा नइयम्म संजम योग। आलख शबद का करो संजोग॥
साची बिरह शबद की राख। मुकत पदारथ अन्तर चाख॥
छाड कुटलाई हर भगत विचार। गया वक़्त नहीं पावें सार॥
प्रभ पूरे की सरनी आओ। पूरन भेद जनम का पाओ॥
नित ही मन में जतन ये राख। सतपुरषों की ये साची साख॥
शबद को खोजो जीवन के माईं। अन्तकाल तिस रूप समाईं॥
प्रीतम साचा नित करे कल्यान। निर्मल चित से करो ध्यान॥
मन अपने को नित समझाओ। साचा नाम निरन्तर गाओ॥
पद को खोज पलक की सार। इक छिन होवे देही ये छार॥
पूरन देव के चरनी धाओ। संकट नास परमपद पाओ॥
अधिक अन्धकार इस मन के गवना। छिन छिन भरमें चंचल सम पवना॥
दृढ़ कर राखो ये दूत अभमानी। तब घट पावें शबद नशानी॥
जगत विसार प्रभ से निहों राख। शबद परापत पायें सुख साख॥
उठ रे गुनिया मुशक़्क़त घाल। मारग खोज प्रभ दीनदयाल॥
धाम परापत मुश्क़्क़त पूरी। गुरमुख घाले धर सिदक़ सबूरी॥

**शबद के देश में चालिये, जाँ काल नहीं करे परवेश।**
**'मंगत' उस थाँ जो बसे, सुखिये रहन हमेश॥ 1063**

संसा त्याग प्रभ भगत विचार। पावें शान्त परम सुख सार॥
प्रभ की भगत मुकत पद देवे। गुरमुख विरला जुगत से सेवे॥
पाँच दोख की दूषन टारी। शान्त सरूप हर भगत विचारी॥
त्रैगुन जाल सकल बिख नासा। साची भगत पाया परगासा॥
जुगत सार सतनाम विचार। अन्तर बाहर प्रभ करो चितार॥
बन्धन नास होवें सुखरासी। सम्पत पावें शबद अबनासी॥
साचे शबद का भेद विचार। बिनस गया सब द्वैत ग़ुबार॥
दुर्मत जाल का अधिक पसारा। नाम जपे तब होये निस्तारा॥
अरब खरब धन प्रापत पाया। बिना भगत मन नित तिरखाया॥
सहँस वरख जो जीवन पाई। बिना भगत बेअर्थ गँवाई॥

विद्या असंख करी निध्यास। बिना भगत नित काल गरास॥
जतन अनेक घाली नित घाल। बिना भगत नहीं मिले दयाल॥
साची भगती का लेख लख पाओ। दुर्मत जाल से मुकत समाओ॥
साखी पुरष सो सरजनहारा। तिस की सेव करे निसतारा॥
छिन छिन साची सेवा धार। सत साहब की महमा विचार॥
मिटे भरम पायें सुख लेख। अपना भला हिरदे में देख॥
मन के दाओ ना जीया लिपटायें। साची भगत प्रभ चरन कमायें॥
ये ही रास जीवन का मूल। प्रभ की भगत पलक ना भूल॥
भरम त्याग शान्त घर पाई। निर्मल भगत जिस गुनी कमाई॥

**भगती धन को खाटिये, मिल सतगुर सीख निधान।**
**'मंगत' विजे परापती, जीव पायो कल्यान॥ 1064**

धन अमोल जगत में ये ही। हर की भगत जो प्रापत भेई॥
पूरन भाग करम पायो पूरा। साची भगती पाई चरन हज़ूरा॥
भयो लवलीन पायो प्रभ मेला। दुर्मत रोग का नास्यो खेला॥
तृखा विनासी चित शान्त समाई। साची साखी प्रभ की चित गाई॥
मूढ़मती सुकरत हूआ। साचे शबद में जीवत मूआ॥
मन अपने में करी कहानी। अकथ कथा अन्तर पहचानी॥
भेद मिटा सब दुर्मत जाल। दृष्टी आयो प्रभ दीनदयाल॥
साचा सोहला प्रभ का गाया। सुफल विचार जीवन में पाया॥
मन अपने को आई परतीत। भगत पछान लयो जग जीत॥
मन में मन भया परसन्न। प्रभ की भगत का पायो धन॥
इक चित होके करी अरदास। हरख भये साहब अबनास॥
परगट अपना रूप दिखाई। अत सुन्दर छवी वरनी नहीं जाई॥
मैं मन्धभाग ग़रीब अनजाना। आप दयाल भये भगवाना॥
मन मेरे की काटी पीड़। जनम जनम की हरी तक़सीर॥
दीनदयाल कीनी अत दात। साची भगती मन माहीं समात॥
जुग़ जुग माँगूँ प्रभ भिखया सार। नाम तेरे का रहे चित आधार॥

आपे आप तूँ करी बख़शीश। सुफल कियो ये मूढ़ा कीट॥
साची सिमरत प्रभ चरन की पाई। जनम कदारथ सब ताप मिटाई॥
सिमर सिमर मन लीन समाया। आवागवन का खेद मिटाया॥

**पततपावन दयाल प्रभ, आपे भये सहाई।**
**'मंगत' की बिपता हरी, चित भगती लेख लखाई॥ 1065**

## तीसरा अध्याय
## निष्काम कर्म साधन

**करम रोग है अत घना, त्रैगुन माया विकार।**
**'मंगत' पाइये छूट तब, जब निष्काम करम विचार॥ 1066**

करम बन्धन में जीव बन्धाई। एक पलक नहीं धीर जो पाई॥
ग्रहन त्याग की किरया में लागा। राग द्वेष में जले मन्धभागा॥
जुगाजुगन्तर ये बिपता धारी। उपजे बिनसे नहीं मिटे ख़वारी॥
करम वासना नहीं मन से जाई। अनँक मनोरथ में भरमाई॥
ये जंजाल माया दु:खकारी। अनमत जीव नित भरम लिपटारी॥
अनँक सयानफ़ करे चतुराई। करम वासना बढ़ती जाई॥
लाख चौरासी के सकले जीया। करम चक्कर में नित भरमीया॥
एक करम की बान्छा धारी। फल चाखा बौहड़ तृखा विचारी॥
एक को भोगे दूजा बाँछे। इच्छया करम नित अन्तर राँछे॥
अती भयंकर दु:ख में धाई। बिना ज्ञान नहीं धीरज पाई॥
मोह वस होके कामना धारी। करम फल आसा गवन विचारी॥
अधिक लाचार भये सब जीया। मिथ्या चक्कर नहीं शान्त रमीया॥
सत साधू की सेव विचार। नौका ज्ञान मिले सुखकार॥
करम सकाम बन्धन नित देवे। मूढ़मती धर जीव नित सेवे॥
करम सकाम रूप जमकाला। परगट करे तृष्ना जंजाला॥
करम सकाम मनमुखता मूल। पल पल सहवे जीव ये सूल॥
करम सकाम ये रूप शैतान। माया ग़फ़लत में करे ग़लतान॥
करम सकाम जीव भरमावे। तृन तृन माहीं उठ उठ धावे॥
करम सकाम नित देवे अशान्त। धार मनोरथ मिथ्या भरमान्त॥

**करम सकाम बन्धन जग माहीं, नित नित जीव बन्धाए।**
**'मंगत' मिटे ना वासना, नित जनम मरन दुःख पाये॥ 1067**

करम सकाम परम अन्धकार। मूढ़ जीव नित भरमे सार॥
मलन अधिक मन आये समाई। करम सकाम जो हिरदे ध्याई॥
फल इच्छया धर करम करीजे। राग द्वेष में मनुआँ छीजे॥
समता बुद्ध नहीं हिरदे पाई। जो इस जीव के ताप मिटाई॥
करम सकाम मन चक्कर चढ़ाये। तृश्ना वेग में उठ उठ धाये॥
करम सकाम ये नरक सरूप। अनमत जीव धरे भ्रम कूप॥
करम सकाम परलोक भरमाई। तृष्ना भोग नहीं मिटने पाई॥
करम सकाम ये रूप है माया। त्रैगुन वस होये जीव भरमाया॥
करम सकाम सब रचना धारी। लोक परलोक की गवन विचारी॥
करम सकाम अत तृखा बढ़ावे। करम फल भोग से शान्त नहीं पावे॥
करम सकाम ये पशू करतूत। धार ख़ुदी सहवे जमकूप॥
करम सकाम अगन अत भारी। जीव जले नित दोख विचारी॥
करम सकाम करे बल बुद्धी नास। मोह वस होये मन पाप निवास॥
करम सकाम सब कीरत डुबावे। स्वारथ धार नित प्यासा जावे॥
करम सकाम भय नित देवे। अपनी करनी का फल नित सेवे॥
करम सकाम विश्वास विनासे। पल पल में बहु धरे भरवासे॥
करम सकाम बन्धन अधिकाई। अपनी करनी नित गवन फराई॥
करम सकाम जग कीरत विनासे। पाप कुपथ में पल पल वासे॥
करम सकाम करे दूजे हान। निज सुख में होवे ग़लतान॥

**करम सकाम खेद अधिकाई, जीव करे बहु पाप।**
**'मंगत' धार के लालसा, नित सहवे संताप॥ 1068**

मूढ़मती सो ही जन जान। करम सकाम जो धरे ध्यान॥
करम सकाम नित बाद बधावे। छल कपट में नित रहावे॥
करम सकाम करे नित ख़वारी। निज सुख की जो मनसा धारी॥

करम सकाम सब शक्त विनासे। धार ख़ुदी भय माहीं निवासे॥
करम सकाम वैतरनी आपार। चराचर जीव डूबा संसार॥
करम सकाम धरम को नासे। निज सुख में बहु पाप बिलासे॥
करम सकाम अत मान बढ़ावे। मनमुख होके नित आवे जावे॥
करम सकाम लोभ अगन बढ़ाई। रहे प्यासा जो सम्पत अत पाई॥
करम सकाम अज्ञान सरूप। अपनी करनी देवे बहु कूप॥
करम सकाम मूल जग बन्धन। मोह माया का पड़े अत फन्दन॥
धरम धारना सब नष्ट हो जाई। करम सकाम जो हिरदे ध्याई॥
मनमुख मूरख प्रभ रूप विसारी। धार चतुराई नित गवन विचारी॥
मनमुख जीव पाये सदा ख़वारी। अपना पाप आपे बन्धारी॥
ज्ञान ध्यान नहीं पाये विवेक। जो चित धारे स्वारथ लेख॥
माया की रचना में तृपत रहाई। अन्तकाल रोता उठ जाई॥
अपनी करनी तब संकट देवे। जीवत में जो अत पाप लखीवे॥
माया जाल दुस्तर अत भारी। बिना ज्ञान नहीं मिटे ख़वारी॥
छूटन ताईं करे बहु जतना। फिर फिर भरमें धार कलपना॥
अत संताप में जीव ये घेरा। करम सकाम देवे गवन का फेरा॥

**मूढ़मती इस जीव को, नाना पाप कराये।**
**'मंगत' स्वारथ धार के, फिर फिर जूनी आये॥ 1069**

अबगत माया खेल खिलाये। भव बन्धन में फेर फराये॥
मानुष जनम पायो सुखरासी। अपने आप की करो ख़ुलासी॥
नित सत्संग सत कथा विचार। अपने जनम का करो सुधार॥
साची कीरत का लेख लखाओ। सतपुरषों की सीख समाओ॥
अपनी ममता दुर्मत को त्याग। साध-जनाँ की चरनी लाग॥
बन्धन माया का मिटे संताप। सत सिखया चित माईं कमात॥
क्यों भयो बौरा देख जगत तमाशा। पलक घड़ी का नर सकल बिलासा॥
इस्थिर रूप अबनाश विचार। जिसका सिमरन देवे सुख सार॥
करम वासना में क्यों लिपटाया। ये धूआँ अम्बार भरम अधिकाया॥

आद जुगादी सतरूप भगवन्ता। भगत कमाओ पावें परसन्ता॥
अगन सकाम तब ही नर नासे। जब हरी चरन प्रीत बिलासे॥
करम चक्कर कर मन से त्याग। साचे नाम की कीरत लाग॥
करम का खेल नित मिथ्याकारा। मूल बिना सब रचा पसारा॥
छाड़ ग़ुबार पाओ सतसंग। अगन विनासे पायें चित ठंड॥
संशे अनेक जीव के जाई। दृढ़ विश्वास प्रभ चरन ध्याई॥
प्रभ की भगत स्वारथ नासे। मुकत सरूप परमारथ वासे॥
ये ही विचार करो दिन रात। अबनाशी प्रभ के चरन समात॥
करम जंजाल नहीं पारावार। अनमत जीव नित होवे ख़वार॥
पाप पुन्न करे बहु भाँती। इच्छया धार नहीं मिटे भरान्ती॥

**पाप पुन्न जो भी करे, फल भोगे निश्चे मीत।**
**'मंगत' छूट ना पाइये, ये करम चक्कर की रीत॥1070**

इच्छया धार करम जो कीजे। तिसका फल निश्चे नर लीजे॥
पाप करम संकट को देवे। पुन्न करम सुख भोग लखीवे॥
सुख पाये फिर पाप कमाई। फिर फिर बिपता जीव ये पाई॥
सुख दुःख द्वन्द का करे नित भोग। वासना करम ये देवे संजोग॥
ज्ञान बिना नहीं सत शान्त पाई। दुःख सुख करम चक्कर भरमाई॥
साचे सुख का उठ लेख विचार। इच्छया करम जावे दुःख सार॥
सतगुर सीख मन माहीं चितार। निश्चे सिमर सत सरजनहार॥
सो परमेश्वर आनन्द सरूप। करम जाल नहीं व्यापे कूप॥
सो परमेश्वर समरूप व्याप। जनम मरन नहीं पावे सन्ताप॥
सो परमेश्वर विज्ञान परकाश। अपने आप में करे बिलास॥
सो परमेश्वर घट घट व्याप। सर्वज्ञ रूप को हिरदे जाप॥
सकल विखाद जीव का जाई। जो मन आवे प्रभ सरनाई॥
सब संकट से होये निहाल। नित ध्याये सतनाम रछपाल॥
राग द्वेष जाये भ्रम फाँसी। जो नित सिमरे तत्त रूप अबनासी॥
करम जाल से खोज ख़ुलासी। करम जाल ये जम की फाँसी॥
परमारथ धरम हिरदे विचार। करम जाल से मिले निस्तार॥

दृढ़ निश्चय प्रभ चरनी राख। आज्ञा बूझ परमसुख साख॥
करम मल नास बुद्ध निर्मल होई। निष्काम भाओ की सत गती परोई॥
द्वन्द त्याग प्रभु प्रेम चित पाई। साची भगती से सब खेद मटाई॥

**अपने भरम के जाल को, शस्तर ज्ञान से काट।**
**'मंगत' पावें सत शान्ती, निर्भय पुरख की वाट॥1071**

अपनी ममता मन की त्याग। सत ठाकर की चरनी लाग॥
एक भरोसा पाओ आधार। निर्मल नाम नित करो चितार॥
बारम्बार मन मूरख ठाक। साचा नाम अन्तरगत चाख॥
उट्ठत बैठत प्रभ नाम विचार। स्वारथ बुद्ध मिटे अन्धकार॥
अपने मन का संशय तोड़। सतगुर सेव चरन चित जोड़॥
जनम मरन की काटो फाँस। नाम ध्यान पाओ सुख रास॥
किस करनी में मूरख लागा। करम रोग नित ग्रसे अभागा॥
सत अस्थान खोज अबनाशी। करम चक्कर से पायें ख़ुलासी॥
अपने जीवन का खेल विचार। अपनी तृपती का मारग धार॥
करम तृश्ना अत भरम बढ़ावे। भोग सोग में नित फँसावे॥
निहकरम सरूप खोज तत्त ज्ञान। पद अबनाशी नित निरवान॥
सो ही तेरा है निर्मल धाम। मोह वस होके भयो करम ग़ुलाम॥
साचा नाओं मन अन्तर राख। पद निर्वान की परसें साख॥
अपना आप आपत को त्याग। सम्मत ज्ञान प्रभ चरनी लाग॥
हिरदे नाम जपो सुखरासी। निश्चय पावें तब होये ख़ुलासी॥
दृढ़ नीयम ये हिरदे धार। साखी पुरष सिमर करतार॥
सकले करम तिस चरनी छोड़। हंग विकार अपने को तोड़॥
भरम विनासे घर चानन पाई। पाप पुन्न गयो लीन समाई॥
निहकरम सरूप पद परसा अबनाशी। निश्चल होया सब मिटी चौरासी॥

**पूरन रूप भगवन्त को, जिस चित अन्तर गाया।**
**'मंगत' सो निस्तर भया, सब करम मूल बिनसाया॥1072**

प्रभ को सिमरें पावें सत धामा। मारग परसें करम निष्कामा॥

प्रभ को सिमरें दृढ़ निश्चय पाये। आज्ञा प्रभ में सत लेख लखाये॥
अपनी ममता को पल पल काट। साचा नाम निरन्तर राट॥
वासना भोग सब जीव की जाये। आतम रसना परम सुख पाये॥
जो हूआ प्रभ आज्ञा विचार। राग द्वेष दुर्मत को टार॥
अनन प्रीती चित नाम चितार। निश्चल बुद्ध पावें सुखसार॥
अन्तरगत में मनुआँ नित राख। साचे नाम की रसना चाख॥
करम फल इच्छया प्रभ चरनी छोड़। तब इस मन की बिनसे दौड़॥
करमफल त्याग जो जग बन्धन रूप। निष्काम करम तत्त खोज अनूप॥
दुर्मत बुद्धी निर्मल होई। निष्काम करम जब हिये परोई॥
अपनी ममता दुर्मत को त्याग। प्रभ आज्ञा में उठ के जाग॥
करम चक्कर तिसका फ़रमान। आज्ञा बूझ पावें निर्वान॥
मारग मुकती भगती का ये ही। निष्काम करम का होवें सनेही॥
मन से करम प्रभ चरन में त्याग। साचा नाम सिमर वडभाग॥
आपा त्याग होवें निरमान। तब ही पावें घट शबद ध्यान॥
मारग मुकत ये सार लखाओ। मिल सतगुर सतनाम कमाओ॥
करम सन्देसा प्रभ चरनी धार। आप मिटा के लख निर्मल सार॥
प्रभ की आज्ञा पाई सार निधान। समता बुद्धी परसी कल्यान॥
निर्मल जुगती ये परम विवेक। प्रभ के चरन की राखो टेक॥

**दुर्मत भरम त्याग के, प्रभ चरनी हो सरनाई।**
**'मंगत' आज्ञा मान तूँ, ये मारग मुकत लखाई॥1073**

करम फल इच्छया नहीं हिरदे राख। प्रभ की आज्ञा पल पल चाख॥
दुःख द्वन्द जाये सब भरमा। निष्काम करम ये निर्मल धरमा॥
औगन सकले जीव के जाई। प्रभ आज्ञा जो मन में ध्याई॥
प्रभ आज्ञा में रख निश्चल चीत। परम शान्त मिले पुनीत॥
दुर्मत जाल ये इच्छया करम। तिस से छूटे जो परसे सत धरम॥
मानुष जनम में ये खोज विवेक। प्रभ साचे की राखो टेक॥
साचा शाह सो साचा स्वामी। निश्चल चित जप पारगरामी॥

औगन नासे मन पूरन होई। प्रभ आज्ञा जिस चित परोई॥
करम फल इच्छया नित भरमाई। चंचल कीजे मन चतुराई॥
एक पलक में बहुरंग बनाये। नाम विसार परम दुःख पाये॥
साचे नाम का निहों परोयो। तिस की आज्ञा चित में जोयो॥
अपना आप करें भ्रम त्याग। शबद सरूप परसें वडभाग॥
निष्काम करम गत हिरदे साध। दूर करे सब मन अपराध॥
भरमन त्याग अन्तरमुख आई। साचे नाम में लीन समाई॥
प्रभ आज्ञा नहीं पलक विसार। जो हूआ सो सुख कर धार॥
राग द्वेष जावे सब फाँस। समता बुद्ध होवे परगास॥
एह बिध साचा नाम कमायो। अन्तर में अन्तरगत पायो॥
सकल देही के करम हैं जोई। प्रभ के चरन में त्याग करोई॥
सुख दुःख नासे भरम का मूल। निश्चल चित होवे जप नाम अमोल॥

**ममता देह की नाश होवे, साधे करम निषकाम।**
**'मंगत' माया चक्कर से, तब पावे बिसराम॥1074**

निष्काम करम ये ज्ञान अगाई। समता मिले परम सुखदाई॥
निष्काम करम ये निर्मल धरम। जीव को कीजे नित निष्करम॥
निष्काम करम ये प्रेम का सागर। सरब में देखे प्रभ रूप उजागर॥
निष्काम करम मनोरथ सब नासे। प्रभ आज्ञा में करे निवासे॥
निष्काम करम बुद्ध निश्चल करे। करमफल इच्छया से निस्तरे॥
निष्काम करम ये सार विवेक। गुरमुख साजन राखे टेक॥
निष्काम करम सब बन्धन काटे। निर्भय धाम की रसना चाखे॥
निष्काम करम मन हरे तरंगा। विरत रहत होवे निहसंगा॥
निष्काम करम चित धीरज देवे। अत परताप साहब का सेवे॥
निष्काम करम मन करे इकागर। घट विच परसे ब्रह्म रूप उजागर॥
निष्काम करम सब खेद निवारी। त्रैगुन जाल से पाये निस्तारी॥
निष्काम करम बैकुण्ठ सरूप। नरक स्वर्ग वहाँ नहीं बिख कूप॥
निष्काम करम करे जीव उद्धार। स्वारथ बुद्ध हरे अन्धकार॥
निष्काम करम करे चित परसन्न। अबनाशी पुरष पायो प्रभ धन्न॥

निष्काम करम मारग तत्त मोख। गुरमुख खोजे हरे चित शोक॥
निष्काम करम ज्ञान विज्ञान परगासे। निश्चय पावे तत्त रूप अबनासे॥
निष्काम करम सब मैल को धोई। खिमा परापत दुबधा सब खोई॥
निष्काम करम करे चित उद्धार। सरब जीयाँ संग रखे प्यार॥
निष्काम करम करे जीव निहसंगी। अन्तरगत शबद चित रंगी॥

**निष्काम करम जिन धारया, दृढ़ निश्चे से मीत।**
**'मंगत' द्वन्द विकार से, तिन जन पाई जीत॥ 1075**

घट घट व्यापे सो अबनाशी। इच्छया करम से नहीं हिरदे भासी॥
निष्काम करम जब जुगती पाई। इच्छया रहत मन लीन समाई॥
सरब नारायन देखन पाया। निष्काम करम जब भेद लखाया॥
आदी अन्ती मद्ध परगासी। हरजन आज्ञा माहीं निवासी॥
परविरती का मारग ये ही। करम करे चित आस ना लेई॥
निर्वास करम चित लेप ना करे। करम करे नहीं खेद चित धरे॥
मारग सुकृत करो विचार। आज्ञा बूझ परम सुखसार॥
करम का कर्ता भाओ त्याग। निष्काम करम में उठ के जाग॥
प्रभ की आज्ञा में करम निवार। दृढ़ निश्चय चित चरन चितार॥
राग द्वेष मनसा जब नासी। निष्काम करम परसे सुखरासी॥
मन की किरया सकल निवार। आज्ञा प्रभ की हिरदे धार॥
साचा नाम तिसका नित जाप। दुर्मत रोग का मिटे संताप॥
जो कीजें प्रभ हेत निवारें। साखी पुरष पर निश्चय धारें॥
आप गंवावें प्रभ चरन के माईं। निष्काम करम परसें सुख थाईं॥
दु:ख सुख द्वन्द लाभ और हाना। मित्र शत्रु नहीं भेद पछाना॥
कारन कर्ता प्रभ एक दिखाई। पल पल आज्ञा मन माहीं कमाई॥
कामना रहत बुद्ध निर्मल होई। अबनाशी शबद में सुरत परोई॥
वासना करम मैल चित त्यागी। निष्काम करम कोई पाये बैरागी॥
अपना साखी पुरष पछानी। तन मन तिसकी दात लखानी॥

**सत सरूप परमात्मा, केवल इक चित ध्याये।**
**'मंगत' तिसकी आज्ञा में, नित करम भेंट कराये॥1076**

निष्काम करम ज्यों मारग साधी। कामना वेग की मिटी उपाधी॥
प्रभ चरनी पाया विश्वासा। नित नित राखी तिस की आसा॥
सरजनहार सो सत पछानी। तिसकी सेव चित सुनी कहानी॥
सब संसार से फीका होई। प्रभ आधार लयो जीवन परोई॥
मन की मैल पल पल कर धोई। द्वन्द विकार जो करम प्रगटोई॥
साचे नाम की सत कीरत गाई। पल पल तिस की शोभा ध्याई॥
ठाकर साचा सच कर माना। चित से ध्याया तिस फ़रमाना॥
दुर्मत अगन भरम सब नासी। निष्काम करम में लयो निवासी॥
प्रभ ताईं सब करम करीजे। अपना दोख सकल मटीजे॥
प्रेम ख़ुमारी में भयो लवलीना। सत ठाकर सब में इक चीना॥
आप गँवाया प्रभ के हेत। प्रभ जी पाया रूप अलेप॥
जो कुछ कीना तिस रज़ाई। तिसकी प्रीत में आप गँवाई॥
मारग प्रेम का भेद पछाता। निष्काम करम में रहे रंगराता॥
भूक प्यास सब दोख निवारी। इन्द्री विकार की दूषना टारी॥
निरद्वन्द पद समता घर पाया। गवन विनास मन लीन समाया॥
छिन छिन नाम का भयो आहारी। प्रभ के रूप में रहे मतवारी॥
सकल करम की वासना नासी। निष्काम करम परसा सुखरासी॥
सकली सम्पत प्रभ की जानी। तिस की आज्ञा में नित वरतानी॥
अपनी ममता दुर्मत त्यागी। निष्काम करम परसे वडभागी॥

**सकल करम की वासना, प्रभ चरनी करे त्याग।**
**'मंगत' आज्ञा मान के, पाये परम सुख बैराग॥1077**

करम फल इच्छया में जीव गरासा। फल के भोग में करे निवासा॥
एक पलक नहीं शान्त पाये। जुग जुग जो चित भोग कमाये॥
सत ठाकर जब हिरदे जाता। भाओ भगत से हुकम पछाता॥
मान त्याग दीनता पाई। निष्काम करम तब भेद लखाई॥

अपना जीवन तुच्छ कर मानी। सत ठाकर की प्रभता जानी॥
परम शकत चित परीत से ध्याई। सब कुछ हुआ प्रभ जान रज़ाई॥
आपामत दुर्मत सब हरी। जनम जनम की बिपता टरी॥
प्रभ का सरूप घट परगट पाई। दृढ़ निश्चय तब जीव को आई॥
मन माना तब निज घर आया। सत ठाकर का मंगल गाया॥
करम फल बन्धन ममता नासी। निष्काम करम शान्त परगासी॥
मारग सही मुकत पछानी। पर-उपकार शोभा चित जानी॥
चित की अगन ज्ञान से नासी। निश्चय पायो इक अबनासी॥
मिथ्या देह से भयो उदास। निर्मल प्रीत प्रभ चरन उपास॥
सरजनहार सब बनत बनाई। महमा जान सब तृखा मिटाई॥
अपनी सकली सयानफ़ छोड़ी। पद पंकज में सुरता जोड़ी॥
होवनहार सब दात पछानी। दीन ग़रीबी हिरदे जानी॥
कौडी तुल नित आप विकाई। सब से नीच आप कहलाई॥
प्रभ की आज्ञा में तन मन वारी। निष्काम करम ये मारग सुखकारी॥
द्वन्द विकार सब जाल विनासे। दृढ़ निश्चय जो करे उपासे॥

**मारग ये कल्यान का, सतगुर दियो दिखलाई।**
**'मंगत' प्रभ के चरन में, तन मन भेंट कराई॥1078**

प्रभ आधार जीवन जब पाई। निर्मल शान्त जीव को आई॥
इक परमेश्वर सत भयो परतीत। निश्चय पाया परम पुनीत॥
रखयक साचा सो सत कर माना। परम शकत सो पुरख सुजाना॥
अपनी हिकमत बिपत निवारी। प्रभ आज्ञा परसी सुखकारी॥
अपनी हिकमत जलन विनासी। करम जाल की जो गहरी फाँसी॥
ममता मूल सयानफ़ ये ही। आज्ञा बूझ शान्त पद लेयी॥
त्रैगुन भुगता जीव अन्धकारी। भोगे भोग नित पाये ख़वारी॥
वार पार कछु नज़र ना आई। करम जाल जो घट पसराई॥
सतगुर मेल मारग सत जाता। सत ठाकर को हिये पछाता॥
तिस की आज्ञा में सब कुछ त्यागी। पायो भेख शान्त अनुरागी॥

सिमर सिमर मन दुर्मत नासी। दिव्य दृष्ट अन्तर परगासी॥
सत ठाकर घर नज़री आया। निष्काम करम मारग को पाया॥
वडी वडयाई जग में मीत। जो चित आवे प्रभ एक पुनीत॥
वडी वडयाई जीवन में जान। मन सिमरे जो नाम भगवान॥
परमानन्द सदा निरदोख। जो करे पछान पावे तत्त मोख॥
पूरन पुरख की चरनी भेंट। तन मन की सब मिटे विखेप॥
कूड़ विकार में क्यों भरमाई। मन के मनोरथ नहीं पूरन पाई॥
सत पुरषारथ खोज सत करम। निष्काम करम गत निर्मल धरम॥
ठाकर साचा चित अन्तर राख। सकल जगत में प्रभ एको भाख॥

**दुर्मत दृष्टी नाश होये, पद परसे निर्वान।**
**'मंगत' सरब गत माहीं, एको साहब पछान॥1079**

पाप पुन्न ये गुन का खेल। बान्धा जीव नित करे कुलेल॥
पाप वासना संकट दिखलाई। पुन्न वासना सुख रूप लखाई॥
सुख दुःख दोनों द्वन्द विकार। शान्त ना पावे ये जीव अन्धकार॥
सुख विनासे दुःख प्रगटाये। दुःख विनासे सुख रूप दिखाये॥
परस्पर नित रूप विटाये। दुःख सुख भोग में जीव फँसाये॥
जनम अनेक ये चक्कर फराई। ज्ञान परापत सब ताप मिटाई॥
देह का सुख देह संग विनासे। देह का दुःख देह संग से भासे॥
देह त्याग जब जीव चलोई। दुःख सुख वासना में लीन समोई॥
बौहड़ गरभ दूजा जब धारी। मूल वासना दुःख सुख उपजारी॥
त्रैगुन माया का खेल अगाध। करम फल इच्छया ये मूल उपाध॥
कोट जनम भोगे अत भोग। अन्धमत जीव को लागा रोग॥
निष्काम करम मारग पछान। दुःख सुख से तब होये कल्यान॥
प्रभ की आज्ञा में जीवन ढाल। निष्काम करम मारग को घाल॥
प्रभ की आज्ञा में तन मन वारी। अगन तृश्ना सब मिटी ख़वारी॥
निर्वास सरूप ठाकर घर पाया। सुख दुःख परे तब भेद लखाया॥
परमानन्द परमेश्वर पाई। तृष्ना त्याग चित शान्त समाई॥

अबनाशी सुख पाया प्रभ देव। पल पल कीनी चित से सेव॥
अत ही दाता सब ताप निवारी। निर्मल चित जो चरन पधारी॥
पूरन किरपा जब प्रभ की भई। निष्काम बुद्ध तब निर्मल लई॥

**प्रभ आधार भयो जीव जब, छिन छिन नाम कमाये।**
**'मंगत' दुर्मत त्याग के, सत पद लीन समाये॥1080**

दुर्मत रोग का करो उपाये। काल करम संसा सब जाये॥
मूढ़मती तज करो विचार। नित आनन्द खोज पद सार॥
साचा ठाकर निश्चे चित राख। जो परकाशे ये देह विनास॥
मन तन इन्द्री सकल बिस्तार। सब का साखी जान करतार॥
आपामती भरमन कर त्याग। समता बुद्धी परसो वडभाग॥
प्रभ की वस्तु प्रभ चरनी राख। मारग ज्ञान सुकृत ये चाख॥
देही करम प्रभ आज्ञा में छोड़। कर्ता भाओ मन तजो ग़रूर॥
चंचल मनुआँ तब घर में आई। प्रभ की आज्ञा जब जीव मनाई॥
साचे स्वामी से करो परीत। मारग दुनिया ये दुःख की रीत॥
औगन तेरे सकल विनासें। निर्मल प्रीत जब नाम उपासें॥
स्वारथ बुद्धी तजो विकार। निष्काम करम मारग को धार॥
बन्ध ख़ुलासी पल में पायें। निर्मल चित जब नाम ध्यायें॥
सत मारग को नित नित घाल। पद परसें प्रभ दीनदयाल॥
ममता मन की अधिक अन्धकार। फिर फिर जीव ये जूनी धार॥
भरम माहीं जुग जुग भरमाई। निष्काम करम नहीं मारग सत ध्याई॥
बन्धन में तीन काल बन्धाया। करम रोग नहीं मिटने पाया॥
सत संगत सत साधू मिलाये। बन्ध मुकत का भेद लखाये॥
अपना आप मध मान त्यागा। सत परमेश्वर की चरनी लागा॥
सत सील सन्तोख चित पायो। दृढ़ निश्चे सतनाम ध्यायो॥

**साकत मन निर्मल भयो, सन्तन सीख सुहाई।**
**'मंगत' नौका मुकत की, निष्काम करम लिव लाई॥1081**

निष्काम करम सब बन्धन हरे। अनुभव परकाश ले जीव निस्तरे॥
करम का बन्धन नहीं सहजें जाई। कोट जतन जो करें चतुराई॥
अनंक तपस्या जो तप धारी। अनंक ज्ञान जो गुनी विचारी॥
अनँक नेम धरम जो ध्याई। जाप ताप बहुरंग कमाई॥
मिटे ना तृष्ना ये देह अभिमाना। करम चक्कर में नित फिराना॥
सत जुगती जिस मारग बूझा। भाओ भगत सन्तन दर सूझा॥
खिमा ग़रीबी ले नाम ध्याई। करम जाल तब खेद मिटाई॥
सत ठाकर की प्रीत विचारी। आज्ञा तिसकी हिरदे धारी॥
सकल पसार प्रभ की प्रभताई। साची सेवा हर की चित आई॥
अपना सुख परदु:ख में त्यागी। कामना रहत सेवे अनुरागी॥
शुद्ध चित होये निश्चय सत पाये। निष्काम करम मारग सत ध्याये॥
पलक पलक प्रभ नाम को चेते। सकल सामिग्री तिसकी लेखे॥
अपना आप प्रभ चरनी त्यागे। निष्काम करम पाये मारग वडभागे॥
साची भगती ये मारग जान। बुद्ध निर्मल से करो पहचान॥
केवल साचा इक जगदीशा। सिमर सिमर सतनाम सुखरीसा॥
सरब जीवों की सेव कमाओ। प्रभ आज्ञा ये लेख लखाओ॥
देह अभिमान जाये दु:ख मूल। राग द्वेष मिटें संशे शूल॥
अन्तर परकाश सत शबद परकासी। अन्धकार त्याग पाया अबनासी॥
दुस्तर माया से निस्तर पाई। निष्काम करम से प्रीत लगाई॥

**निष्काम करम को साधिये, परम जतन से मीत।**
**'मंगत' मारग मुकत का, ये सहज योग पुनीत॥1082**

योग जुगत मारग पहचान। निष्काम करम हिरदे में आन॥
दुष्ट ये मनुआँ नहीं धीरज पाई। अत ही वेग धर आवे जाई॥
आतम तत्त अत सूक्षम धारा। ताँ को परसे जब होये सचियारा॥
निष्काम करम सब मैल को धोई। अन्तरगत जो जुगत परोई॥
चंचल मनुआँ शान्त समाई। आतम तत्त में लीन हो जाई॥
करम फल त्याग भया निहकरमी। मारग मुकत पछाता वडधरमी॥

छिन छिन मन को सतनाम में गाले। मोख मारग की घालन घाले॥
मन को राखे प्रभ चरनी माहीं। पल पल सिमरे पार गुसाईं॥
घट अन्दर भया परगासा। निहकरम सरूप पाया अबनाशा॥
चेतन पुरख शबद आनादी। निर्मल प्रीत मन माहीं आराधी॥
कामना रोग की ख़बर करीनी। निष्काम करम हिरदे में चीनी॥
सुरती नाम जपे प्रभ एक। डोलन त्याग पाये सच लेख॥
मन को राखे जुगत परोई। तब ये काया निर्मल होई॥
शबद किलकार अन्तर पछानी। सत ठाकर पायो निर्वानी॥
निमख निमख कर मंगल गाई। शुद्ध चित होके लीन समाई॥
मारग गुपत सही पछाना। निष्काम करम जुगत निर्वाना॥
साची सेवा पर-की जानी। पर-का हेत हिरदे पहचानी॥
पर का दुःख नित करे निवारी। निष्काम करम साधे निर्धारी॥
अपना सुख नहीं हिरदे लाये। पर का दुःख संताप मिटाये॥

**दीन ग़रीबी धार के, करम करे निषकाम।**
**'मंगत' अन्तरगत माहीं, परसे निर्मल धाम॥1083**

कारन कर्ता सो परमेश्वर। गुरमुख साजन जप मन भीतर॥
प्रभ का नाम सब फाँस कटाई। मुकत सरूप शबद घर पाई॥
मोह माया ये अधिक ग़ुबारा। भज गोबिन्द पावें निस्तारा॥
सुकृत काज सत लेख पछान। साचा साहब जप पुरख निर्वान॥
मन का भरमन ताप निवारी। खेम कुशल जप नाम मुरारी॥
जिसका कीया सकल पसारा। तिसका सिमरन है जग सारा॥
नित नित सिमर परम सुखरासी। सतगुर सीख सब ताप विनासी॥
प्रभ अपने की सेव कमाओ। दुर्लभ कारज जगत में पाओ॥
स्वारथ मोह माया का त्याग। परमारथ में धर अनुराग॥
झूट देही में ना हो ग़लतान। सच स्वामी की कर पहचान॥
निर्मल निश्चय सुन सतगुर सीख। निष्काम करम से नित करो परीत॥
प्रभ की आज्ञा नहीं पलक चित भूल। जग में विचरें तिस भाने अनुकूल॥

मारग ये ही सुख सार निधान। गुरमुख बुद्धी कर पहचान॥
मनमुखता दीरघ संताप। करे चतुराई धारे नित पाप॥
करनी मलीन नित गवन फिराई। जन्मे मरे संकट नित पाई॥
गुरमुख खोज मारग निरवान। सत ठाकर का करो ध्यान॥
सकल करम तिस जान प्रभताई। आप मिटा के तिस चरन समाई॥
ये ही धारन धारो गुनी मीता। करम जाल नासे दुःख रीता॥
बारमबार सत ठाकर जाप। भाओ भगत से बिनसे सब ताप॥

**मन में एको आस धर, परम पुरख निर्वान।**
**'मंगत' दूजा विसरे, जो माया भरम निधान॥ 1084**

अबनाशी पुरष संग प्रीत जिस पाई। निष्काम करम तब भेद लखाई॥
ब्रह्मज्ञानी सत निश्चय पाई। प्रभ की आज्ञा मन माहीं कमाई॥
सूक्षम सुरती शबद रस पीये। प्रभ की आज्ञा में जीवन जीये॥
हिरख मान सब हरे विकारा। अन्तरगत सतनाम आधारा॥
नित ही मन को निश्चल करे। एक ध्यान प्रभ चरनी धरे॥
प्रेम पाये चित गदगद होई। मोह विकार दुर्मत सब खोई॥
सतपुरषों का जीवन सार। प्रभ के चरन राखें आधार॥
सकल जगत की सेव कमावें। सबके कष्ट निज हिरदे लावें॥
स्वारथ बुद्धी तजें हंकार। पर का हेत नित करें विचार॥
अपना जीवन पर ताईं पछाने। साचा हुकम साहब का माने॥
तन मन से सेवा में लागें। दुष्ट विकार तब मन के भागें॥
पूरन पुरख की इक चित ओट। पर-उपकार तत्त परसे अनूप॥
इच्छया चक्कर बन्धन सब नासी। निष्काम करम मिले जुगत सुखरासी॥
जब लग नहीं चित प्रभ आधार। निष्काम करम नहीं परसे सार॥
जब लग नहीं चित सत विश्वास। पाइये नहीं मारग सुखरास॥
निष्काम करम नहीं साधन धारा। कभू ना परसें शबद निर्धारा॥
अन्तरगत नहीं विरत निष्कामा। पाइये नहीं निर्भय निज धामा॥
झूट कपट को हिरदे धारी। बाहरों भेख बहुरंग वरतारी॥

माया फाँस नित गरभ फिराये। पाखंड धार बहु संकट पाये॥

**निष्काम करम की साधना, योग जुगत का मूल।**
**'मंगत' निर्मल जतन से, जाये जीव की भूल॥1085**

निष्काम करम जो हिरदे नाईं। छूट मिले ना कभूँ तिस ताईं॥
धार गरभ दु:ख पाये घनेरा। आवे जावे चौरासी फेरा॥
जिस जीवत में नहीं सार पछाता। अन्तकाल सो बहु पछताता॥
झूटी माला कंठी धारी। झूटा रूप धारे पुजारी॥
झूटा भेख त्याग का धारे। निष्काम करम जो नहीं विचारे॥
झूटा ध्यान करे दिन रात। स्वारथ बुद्धी धारी कमज़ात॥
मोह माया का नित भरमाई। भेख किये से शान्त ना पाई॥
ना कोई भेख छुड़ावन हारा। ना कोई मज़हब देवे निस्तारा॥
ना कोई देवत होये सहाई। निष्काम करम जो नहीं चित ध्याई॥
गुरु पीर नहीं कोई छुड़ाये। करम का बान्धा नित आवे जाये॥
ना कोई तीरथ करे सुधार। जो चित नहीं पर-उपकार॥
अपने पाप में आप गरसाये। आप ही छूटे सत करम कमाये॥
निस्चे से चित करो विचार। अपनी करनी देवे गत सार॥
सत पुरषारथ राखो चित माहीं। खाट चलो सतनाम सुख थाईं॥
छल कपट सब मन के त्याग। साची सीख सुनो वडभाग॥
निर्मल करम हिरदे में धार। पाप त्याग होवें सचियार॥
करम वासना जब निर्मल होई। शुद्ध विवेक पावे जन सोई॥
झूट माया का भेद विचारी। निश्चय पाया सतरूप निरंकारी॥
सतगुर साजन सत मत दीनी। एक नारायन चरन चित चीनी॥

**प्रभ चरनी निश्चय भयो, चित दीन ग़रीबी आये।**
**'मंगत' प्रभ के प्रेम से, मनुआँ शान्त समाये॥1086**

निर्मान भाओ में चित निवासी। प्रभ की कला तब अन्तर भासी॥
दु:खियों का दु:ख दिल में लाये। जतन करे सत करम कमाये॥

भव बन्धन ये गहरी भीत। पर की सेव से पावें जीत॥
मान त्याग दुर्मत बिख खान। सत सरूप हिरदे पहचान॥
सब जीवों में सुख वरतायें। आप त्याग परम पद पायें॥
मारग सहज मुकत का जान। हिरदे सिमर एक भगवान॥
प्रभ की आज्ञा में मनुआँ राख। सतपुरषों की ये निर्मल साख॥
धीरज धरम को नित परोई। परम पुरख तब घट प्रगटोई॥
झूट देही का मान गँवावें। सकल जीयाँ की धूड़ रुमावें॥
आपा रूप आपदा नासी। निर्भय धाम पायो अबनासी॥
सुकृत सिखया पल पल धार। जीवत मिरतक दिशा विचार॥
मन की भरमन सकल निवार। पलक ना विसरें नाम सुखसार॥
बन्धन करम मिटे जंजाला। घर में परसें पद दीनदयाला॥
कीचड़ फँसा मनुआँ अन्ध। मोह माया धारी दुर्गन्ध॥
मान मध में रहे मतवाल। भरमें भूल नहीं जपे दयाल॥
अन्तकाल उठ चले निरासा। बहु पछताये जग देख तमाशा॥
अब रोवत कुछ सरे ना काजा। कंटक काल आये सिर पर गाजा॥
जीवत में कुछ करनी धार। पर की सेव हिरदे विचार॥
पर की सेव मन निर्मल करे। गुरमुख साजन सोझी पड़े॥

**आलस निन्द्रा त्याग के, पर की सेव विचार।**
**'मंगत' देही चाम की, इक दिन होवे छार॥ 1087**

पर-सेवा जिस हिरदे ध्याई। राम रतन सो ही जन पाई॥
सब के संकट हरने हारा। इक परमेश्वर करो विचारा॥
जो तूँ साहब से मेला चाहें। साहब की करनी हिरदे ध्यायें॥
पर सेवा निज फ़रज़ पहचानी। ग़रज़ त्याग भरम की खानी॥
ज्यों ज्यों सेवे मन धीर समाये। सत परमेश्वर की प्रभता पाये॥
तुच्छ जीवन पर होये निरासा। पर की सेव में कीना बासा॥
महापुरष सो मुकत सरूप। पर की सेव घाले सुखरूप॥
औखद साचे नाम की खाये। पर की सेव हिरदे में लाये॥

दीन ग़रीबी में रहे लवलीन। सत ठाकर को हिरदे चीन॥
भरम त्याग मन लीन समाई। निष्काम विरत घर परगट पाई॥
प्रभ की चरनी पायो वासा। सतगुर सीख में लयो निवासा॥
औगनकारी मन निर्मल भयो। पर की सेव परमपद दयो॥
नित बलिहारी तिसके चरना। पर की सेव में जो विचरना॥
सुकृत सीख सन्तन ने दीनी। दुर्मत रोग की दुबधा छीनी॥
निर्मल सीख पल पल कमाई। निष्काम करम मारग को पाई॥
जगत बखेड़ा मारग था मीता। सतगुर सेव से पाई जीता॥
पर की सेव हिरदे में पाई। खिमा दया चित अन्तर आई॥
साचे नाम के नीर संग धोई। तब ये सुरता निर्मल होई॥
परम आनन्द प्रभ पूरन पायो। निष्काम करम में लीन समायो॥

**मारग दुर्लभ जगत में, पर-सेवा निष्काम।**
**'मंगत' तिसमें विचर के, निर्भय पायो धाम॥ 1088**

स्वारथ बुद्धी अधिक दुःखदाई। अनँक भरम में नित भरमाई॥
आलस निन्द्रा तमोगुन जापी। मान मद ईरखा थापी॥
अत बिकराल मोह संकट देवे। दुष्ट विकार को पल पल सेवे॥
सूझ बूझ कुछ नहीं आए। माया चक्कर में फेर फराए॥
करम जंजाल से मुकत नहीं पावे। अधिक सयानफ़ बिरथा जावे॥
मिल सतसंग जिस कथा विचारी। जनम मरन का ज्ञान लखारी॥
सत असत का भेद लखाई। जनम मरन का खेद सब जाई॥
सतपुरषों की कथा विचारी। साची सिमरत हिरदे धारी॥
स्वारथ मोह मिटा अन्धकारा। शान्त सरूप पाया उपकारा॥
मरन भय जब चित में पायो। साचे सुख के निकट तब आयो॥
साचा सुख इक आतम देवा। सरब परकाशी पुरख निर्भेवा॥
त्रैकाल सो सम समाई। दुःख द्वन्द से परे रहाई॥
तत्त निर्वान अनूपम जोती। घट घट व्यापक सदा अलोपी॥
तिसकी प्रीत जिस जन पाई। साचे सुख का भेद लखाई॥

मन मूढ़ा दुर्मत लिपटाना। कूड़ विकार में उठ उठ धाना॥
करम भोग में रुचि अत धारी। भोग की सम्पत रची बहु भारी॥
अनँक सयानफ़ भरम की धारी। आवे जावे खेद विचारी॥
बहु सम्पत पाये बनया मानी। अपने तुल ना कोऊ जग जानी॥
झूट फरेब में नित लिपटाया। तत्त विसार परम दुःख पाया॥

**सत भरवासा जो चित नाहीं, ना सत कीरत पाई।**
**'मंगत' संशे में गये, छाड सम्पत धरी धराई॥ 1089**

आपामती भरम भुलायो। सत मारग नहीं सोझी आयो॥
भोग की रचना नित चित विचारी। पायो सोग नित होएँ अँगारी॥
दुःख जानत फिर दुःख में धाए। अचरज खेल माया वरताये॥
नाशवान देखे जग रचना। अनमत जीव करे भोग की लखना॥
निस्चे जाने अन्त छोड़ के जाना। मूढ़मती तो भी लिपटाना॥
आवत निहसंग जायें अकेला। मोह बस होये बहु रचया मेला॥
अद्भुत माया खेल रचाई। ज्ञान बिना नहीं छूटन पाई॥
मानुष जनम में कीरत सत पेख। सतनाम की रसना लेख॥
पूरन पुरख की शोभा विचार। मन का बिनसे सकल ग़ुबार॥
अत शक्ती प्रभ सदा दातारी। तिस द्वार का हो तूँ भिखारी॥
मारग शान्त पावें सुखरासी। अन्तर दरस पायें अबनासी॥
मिथ्या धारा कार ये साजा। सत सरूप सब घट बिराजा॥
नाम रूप बहु भाँत घड़ीने। बहुरंग रचना जगत रचीने॥
वारापार ना अन्त में आवे। अद्भुत खेल माया खिलावे॥
खोजत खोजत भये दीवाने। चले निरास बड़े जग दाने॥
मन की भूल ना आस गँवाई। संशे धार के आवे जाई॥
ये परपंच सकल संसारा। दुर्मत माया का सकल विकारा॥
शान्त सरूप नारायन आप। सतगुर मेल करें तब जाप॥
सदा आनन्द द्वन्द से दूर। आलख नाद पुरख हज़ूर॥
प्रभ की महमा जिस हिरदे गाई। शान्त सरूप सो ही घर पाई॥

अत ही जलन जगत की मीता। हाहाकार करें सब चीता॥
सार बिना सब ही दुःख पायें। बिन सतसंग नित ही भरमायें॥
सतगुर साचा मेल मिलाई। जग संकट की मिटे दुहाई॥

**मारग ज्ञान पछानया, साची सीख लखाई।**
**'मंगत' पाई सत शान्ती, सब दुर्मत जाल मिटाई॥ 1090**

नित कीरत करते की गाई। तिसके चरन में नित समाई॥
साचा स्वामी सो प्रभ मेरा। दुःखभंजन सो रूप सुखसीरा॥
तिसके चरनी निहों लागा। सतगुर मेल पायो वडभागा॥
शबद नबेड़ा अन्तर कीना। दुर्मत जाल भरम कटीना॥
सुरती धारी शबद के माहीं। महमा गाई प्रभ पार गोसाईं॥
अगन विनासी मोह अंगारी। शान्त भई प्रभ चरन पधारी॥
सुकृत सीख सतगुर दीनी। बन्धन काट अमरपद चीनी॥
सतगुर चरनी नित बलिहार। डूबे जन का कियो निस्तार॥
नित ही कीरत प्रेम से गाई। मन में शोभा तिसकी ध्याई॥
विगन विनास भयो सुखरासी। शान्त सरूप पायो अबनासी॥
साची भगती हिये समाई। खिमा दया चित भेद लखाई॥
पर-उपकारी जीवन को धारी। तब मन मूढ़ की मिटी ख़वारी॥
सत परतीत साहब की पाई। तिस के चरन की प्रीत कमाई॥
नाम पदारथ पाई रास। गुर की सीख भयो दुःख नास॥
इच्छया ममता मोह चुकाई। निष्काम करम घर सोझी पाई॥
सत सरूप की बिरह पछानी। प्रेम चिंगारी घट लिपटानी॥
स्वपन समान जगत परतीती। सतपुरषों की पाई नीती॥
औगन दूर भयो सुखदाई। तीन लोक में शान्त दिखाई॥
अमरत बोल सतगुर सिखलाया। तब ये जीव निर्भय समाया॥

**मनमुख डूबे जगत में, धार भरम चतराई।**
**'मंगत' गुरमुख उद्धरे, राम रतन लिव लाई॥ 1091**

साचे नाम की कीरत गाओ। सिमर सिमर निर्भय समाओ॥
नाम पदारथ संचत कीजो। पूरन रास जगत में लीजो॥
नाम ध्यान की जुगत कमाओ। वनज अनूप निर्भय समाओ॥
साचे नाम का भोजन खाई। तब इस जीव की तृखा बिनसाई॥
अन्तर बाहर प्रभ नाम ध्याया। सुकरत सीख सिमर सुख पाया॥
सो परमेश्वर सब ताप निवारी। सिमरो नाम परम सुखकारी॥
प्रभ अपने की राखो ओट। साचे नाम की रसना घोट॥
प्रभ अपने का करो विचार। साचा नाम लख बारम्बार॥
प्रभ अपने की सेव कमाओ। पर-उपकार जुगत चित लाओ॥
प्रभ अपने का कथो ज्ञान। मन मगन पायें निहचल ध्यान॥
प्रभ अपने की कीरत भाल। नित रखयक प्रभ दीनदयाल॥
बेनती कीजो प्रभ के दरबार। पतत पावन पल करे उद्धार॥
प्रभ अपने से माँगो भीख। निर्मल ज्ञान अमोलक सीख॥
प्रभ अपने का सिमर परताप। सरब शकत को हिरदे जाप॥
सकल पदारथ का दातारी। तिस दाते दर होवें भिखारी॥
प्रभ के नाम का मंगल गायो। सुकृत धरम जगत में पायो॥
तृन तृन को सो रखया करी। सरन पड़े की दुबधा हरी॥
प्रभ अपने की करो अरदास। मोह भरम की काटे फाँस॥
प्रभ अपने का हो भरवासी। निर्मल चित नित चरन उपासी॥

**सागर ये संसार है, केवल धुआँ अम्बार।**
**'मंगत' भज गोबिन्द को, जो सत सरूप आपार॥ 1092**

सत की खोज करो गुनी मीता। मानुष जनम होये पुनीता॥
जग आवन का काज संवार। सत सरूप चित माहीं चितार॥
दृढ़ नीयम प्रभ सेव कमाओ। निश्चल चित से कीरत गाओ॥
आज्ञा प्रभ की मन तन मान। जग में आवन होये परवान॥
नाम सिमर ये सुकृत काजा। सरजनहार सरब को साजा॥
बारम्बार करो डण्डौत। दीनदयाल तेरी इक ओट॥

महमा अनन्त ना वरनी जाई। कथ कथ थाके गुनी गुनराई॥
दाता होके दात करीजे। भिखारी होय के भीख को लीजे॥
दाना बीना बहु सयानफ़ धारी। कित मूढ़ भयो नित करे ख़वारी॥
कहीं गृहस्ती कहीं विरक्ता। कहीं ज्ञान सरूप संजुगता॥
कहीं आवें कहीं जावें पूर। तूँ समरथ सरब हज़ूर॥
प्रभ जी मेरी आरज़ पूर। जनम जनम के कीजो दुःख दूर॥
औगन हरो शान्त वरताओ। मूढ़े जन्त का खेद मिटाओ॥
परम समरथ तूँ साहब दाता। सत सरूप इक तूँ ही पछाता॥
हरो कलेश मंगल घर दीजो। अबनाशी रूप घट अन्तर सीजो॥
अनन भगत दीजो मोहे स्वामी। तूँ दातार हो पारगरामी॥
नित तेरे चरनी रहे परीत। पल पल गाऊँ तेरी महमा पुनीत॥
सुकृत होवे जग आवन देवा। भाओ भगत पाऊँ सत सेवा॥
सेव सेव गत निर्मल धारूँ। अखण्ड जाप नित चित विचारूँ॥

**दीनदयाल की सरन में, पूर मनोरथ पाये।**
**'मंगत' मिटी सब कामना, चित नाम पदारथ खाये॥ 1093**

बारम्बार करो आदेसा। परम समरथ पुरख जगदीसा॥
नित ही तिसके चरन समाओ। नित ही प्रभ की कीरत गाओ॥
करें दुहाई गुनी जग आये। सत सरूप सिमर प्रभराये॥
पूरन निश्चय नित चरन पधार। आज्ञा मान परम सुख सार॥
देह विकार से होयें पुनीता। आतम राम पायें सुखरीता॥
सत सरूप आतम परगासी। घट घट में सो प्रभ अबनाशी॥
तिस की सेव सब बन्धन हरे। जनम जनम की बिपता टरे॥
आतम ध्यान आतम का ज्ञान। आतम परस पद निर्वान॥
निष्काम करम का फल ये सार। आतम तत्त मिले निरधार॥
निर्बन्ध रूप सो गुना अतीत। नित आनादी रहे पुनीत॥
सरब में पसरे एके रंग। आतम खोज पावें सुख संग॥
नित ही मन को अन्तर राख। निर्भय धाम की रसना चाख॥
अत किरपाल नित किरपा धारी। नाम निरंजन पाये सुखकारी॥

अन्तरगत ध्यान कमाइये। योग जुगत निर्भय पद पाइये॥
अनहद नाद आतम धुनकार। जो जन परसे उतरे पार॥
अनहद नाद में जो रंगराता। पूरन पुरख सब भेद पछाता॥
नाद ध्यान में भयो ग़लतान। घट अन्तर कियो अमरत पान॥
सच सुहाग शबद घर पाया। नाम रत्ते सब खेद मिटाया॥
बन्ध माया से छूटन पाई। नाद ध्यान में लीन समाई॥

**पूरन पुरख घट परगट भयो, तन मन भया निहाल।**
**'मंगत' जीवन सुफल भया, सब हरयो करम जंजाल॥ 1094**

नाद ध्यान सो ही जन पाये। तृष्ना विकार जो मैल हटाये॥
तृष्ना अगनी तिसकी नासी। इक चित ध्यायो पुरख अबनाशी॥
मान त्याग ग़रीबी पाई। निष्काम करम नित सार कमाई॥
करम फल ममता मन से त्यागी। समता रूप पायो अनुरागी॥
समता ज्ञान जब घट परगासा। नाद पुरख में पायो वासा॥
इक चित होके कीरत गाई। अखण्ड शान्त जीव ने पाई॥
पूरन पुरख चरन बलिहारी। मोह माया सब ताप निवारी॥
दुर्मत त्याग इक नाद ध्याये। पल पल साचे की कीरत गाये॥
सेव करे कीजे अमरत पाना। हरजन मारग मुकत पछाना॥
काल जाल सब ताप निवारी। एको नाद विवेक चित धारी॥
निहचल हूआ शबद रस खाये। अगम की बानी सब ताप मिटाये॥
निष्काम सरूप पाई जन रास। दृढ़ निश्चय इक नाम उपास॥
रुच रुच सुरती महमा गाई। कामन साचा कन्त मनाई॥
बिख माया की टाटी नासी। परगट रूप पायो अबनासी॥
गहर गम्भीर देवन के देवा। नाद सरूप की पाई सेवा॥
सरजनहार सो कर्ता जानी। आज्ञा तिसकी माथे मानी॥
सब कुछ दात तेरी दातार। ज्यों चलावें पाऊँ सुख सार॥
कूकर को तूँ धीर लखायें। पद पंकज की सेव दिखायें॥
किरपा करके कियो निहाल। आज्ञा मानी दीनदयाल॥

**सत ठाकर को ध्याये के, सुफल जनम जग पाई।**
**'मंगत' निर्मल प्रीत से, पल पल कीरत गाई॥1095**

सकल करम प्रभ अर्पन करे। त्रैगुन जाल से सो निसतरे॥
मारग ज्ञान ये ही सुखदाई। सकल करम प्रभ भेंट कराई॥
प्रभ चरनी में जो करम त्यागे। तिसको विगन दोष नहीं लागे॥
मन से करम त्यागे प्रभ चरना। सहज योग का बूझे निरना॥
प्रभ आज्ञा में तन मन वरताई। जो हूआ सो सुख कर पाई॥
द्वन्द विकार जाल विनासी। समता रूप घट जोत परगासी॥
निष्काम करम की ये गत सार। जो जन साधे उतरे भव पार॥
निर्मल चित से सार पछान। प्रभ की आज्ञा देवे मोक्ष निधान॥
हंग बुद्ध विकार मिट जाये। निष्काम करम जो जुगत कमाये॥
त्रैगुन ताप का बीज विनासी। निष्काम करम जो गुनी उपासी॥
निष्काम करम की महमा अपार। सहज मारग मुकत विचार॥
करम त्याग पाओ आतम आधार। मन तन अन्दर ये जुगत विचार॥
त्रैगुन मैल जाये हंकार। निष्काम करम जो साधे सार॥
मान ग़ुमान पर पावे जीत। निष्काम करम जो पाले प्रीत॥
उदार चित सो पुरख पराकरमी। मारग निर्मल साधे वड धरमी॥
सरब जीयाँ संग साँझ बनाई। साचा हुकम पल पल मनाई॥
द्वैत ग़ुबार तजे चतुराई। निष्काम करम खोजे प्रभताई॥
मारग मोक्ष करो पहचान। निष्काम करम है मुकत निधान॥
करम करे ते रहे निहकरमा। निष्काम करम ये निर्मल धरमा॥

**करम योग पहचान के, नाम जपे प्रभ एक।**
**'मंगत' सो निस्तर भये, जिन राखी एह बिध टेक॥1096**

प्रभ भावी जो हिरदे धारी। जनम मरन की मिटी ख़वारी॥
प्रभ भावी में सब कुछ देखे। ऊँच नीच के खेल को लेखे॥
सकल करम प्रभ भावी पहचानी। अद्भुत माया खेल खिलानी॥

आपामती दुर्मत तब नासी। प्रभ भावी जो चित उपासी॥
ग्रहन त्याग की मनसा नास। प्रभ भावी पर पायो विशवास॥
मारग मुकत ये सहज पछान। करम योग तत्त खोज निर्वान॥
सकल करम प्रभ आज्ञा में छोड़ी। राग द्वेष का भरम तग तोड़ी॥
मनबानी तब लीन समाई। नाद पुरख घर परगट पाई॥
निर्मल जुगती नित करो विचार। निष्काम करम है मुकत द्वार॥
जड़ काया ये निर्मल होई। निष्काम करम जो हिये परोई॥
जड़ काया से उपरस होये। निष्काम करम जो धरम परोये॥
सब जीवों की टहल कमाओ। मान त्याग निर्मान समाओ॥
करम त्याग निहकरमत पाई। आज्ञा बूझ जन मुकत समाई॥
जुगत बिना नहीं मारग परसे। जुगत बिना नहीं हर दर दरसे॥
जुगत बिना नहीं पार कोई पाई। जुगत बिना नहीं तत्त नाम लखाई॥
जुगत बिना नहीं होये परगास। जुगत बिना नहीं मिले अबनास॥
जुगत बिना नहीं भव बंधन नासे। काल चक्कर की मिटे नहीं फाँसे॥
जुगत बिना नहीं पाइये योग। नित नित धारे संशे सोग॥
जुगत बिना सब जतन अकारथ। पाइये जुगत तब खोज यथारथ॥

**सकल करम को त्यागिये, प्रभ चरनी नित नीत।**
**'मंगत' मिले निष्कामता, पाइये शबद पुनीत॥ 1097**

साची जुगती हिरदे धार। प्रभ का नाम नित चित चितार॥
ठाकर कर्ता साजन सोई। तिसका नाम नित चित परोई॥
मिटे विखाद निर्मल गत पावें। निर्मल प्रीत जो चरन ध्यावें॥
दीनदयाल की आज्ञा सेव। संकट मिटे होवें निरभेव॥
सुकृत मारग हिरदे धार। आज्ञा बूझ पावें सुख सार॥
शाहों का शाह सो वड परतापी। निश्चल चित से नित नित जापी॥
तूँ तूँ करके सेव कमाओ। अपना मान गुमान मिटाओ॥
प्रभ की दात जो सम्पत पाई। परसुख में तिसको वरताई॥
प्रभ की दात जो मिली जग आये। जीवत में तिसको वरताए॥
साचा हुकम एह बिध पहचानी। रवि परगासे ज्यों सरब सुखदानी॥

साचा हुकम इस बिध मनायो। पवन सुखदाई ज्यों सुख वरतायो॥
साचा हुकम तिस जन पहचानी। वाँग नीर जिस सेव लखानी॥
मन मूरख तूँ हो हुशियार। पर की सेव हिरदे विचार॥
समाँ अमोलक हाथ ना आई। वक़त गँवाये नर तूँ पछताई॥
जीवत में कुछ खाटो रास। अन्तकाल पावें सुख वास॥
प्रभ पूरे की सेव कमाओ। अन्तर बाहर तिसका जस गाओ॥
पशू करतूत तजो हंकार। मानुष जनम में करो नाम विचार॥
साखी साचे प्रभ की गाओ। करो अरदास मंगल को पाओ॥
दीनदयाल सो नित रखवारी। सरनागत हो पद पार मुरारी॥

**औगन सकले नास भये, जब आये प्रभ सरनाई।**
**'मंगत' मारग दुर्गम माया, सहज गुनी तर जाई॥ 1098**

बख़शनहार करे बख़शीश। दीजे निर्मल नाम की दीख॥
अन्तरगत की शोभा परगासे। शबद पुरख में करूँ निवासे॥
पल पल खेलूँ शबद के संगा। भरम त्याग पाऊँ सुख रंगा॥
ताप मिटे नित जाप कमाऊँ। डोलन त्याग निहचल घर पाऊँ॥
भरम त्याग सत जुगत कमाऊँ। अन्तर में अन्तरगत पाऊँ॥
शबद पुरख साहब अबनासी। सिमर सिमर के पाऊँ ख़ुलासी॥
ताप दोख से सोही न्यारा। सत सिमरन पाऊँ करतारा॥
घट घट रमया प्रभ आप सुभाये। सर्वज्ञ सिमरो चित शान्त समाये॥
अखल निरंजन जोत परगासी। घट अन्तर नित करी उपासी॥
तूँ ठाकर साचा तेरा खेल। निहमानियाँ को देवें मेल॥
तूँ भगवन्त शकत आगाही। अनहोयाँ को राज बिठाई॥
तूँ जगदीश सरब परकाशी। राओ रंक समरूप बिलासी॥
तूँ परमेश्वर अतुल परमानी। शेष महेश नित ध्यायें ज्ञानी॥
तूँ गोबिन्द सब जगत जीवावे। तेरी महमा नहीं कथनी जावे॥
अचरज खेल कीना बिस्तार। आद जुगादी तूँ सचयार॥
पूरन रूप तेरा प्रभ एक। गुनी ज्ञानी करते नित लेख॥
अगम अगोचर तूँ पार पुरातन। पुरख अनादी तूँ सरब सनातन॥

जुग जुग रचना बहुरंग बिस्तारी। तेरा रूप सम हो वरतारी॥
अचरज खेल खेलें प्रभराये। गुनी ज्ञानी कोई पायें ना थाये॥

**अबगत तेरे खेल का, पावें नहीं कोई पार।**
**'मंगत' सरब समाया, आप रहे भरतार॥ 1099**

मन की दुर्मत सहज त्यागो। सतपुरषों की चरनी लागो॥
सकल मनोरथ पूरन होई। सत सिखया जो नाम परोई॥
पूरन दाता ठाकर मेरा। करे उद्धार कटे भव फेरा॥
पूरन दाता प्रभ सुखरासी। चाम देही को जो परकासी॥
पूरन दाता प्रभ एको जान। सरब जीयाँ को जो दे कल्यान॥
पूरन दाते के चरन समाओ। जग आवन की सार लखाओ॥
प्रभ बिन दूजा जो चितारी। मूरख सो भरमे अन्धकारी॥
प्रभ बिन दूजे को जो सेवे। जनम जनम के संकट लेवे॥
प्रभ बिन दूजे की करे अरदास। फिर फिर आवे काल की फाँस॥
प्रभ बिन दूजे की कथा विचारे। बाद मुबाद में जनम गुज़ारे॥
प्रभ बिन दूजे होवे विशवासी। अन्ध भरवास नित देवे चौरासी॥
प्रभ बिन कीरत दूजे गाये। जन्मे मरे नित आवे जाये॥
सरब उपमा योग प्रभ देवा। मूढ़े मन तूँ कर नित सेवा॥
सरब का मानी सो ही प्रभ एक। निश्चल चित से रख मन टेक॥
सरब आधार सो ही परमेश्वर। मन में सिमरो सो सत जगदीश्वर॥
सरब प्रतिपालक राखनहारा। भज करतार परम सुखसारा॥
आद जुगादी प्रभ पूरन आप। रे मन मूढ़े कर तिसका जाप॥
ऊँची सिफ़त ऊँचा निशान। जल थल पूरन सो परवान॥
जिस सूझा तिस पाया ठौर। लीन भयो सत पद हज़ूर॥

**सच साहब की बन्दगी, तन मन साचा होये।**
**'मंगत' पूरन भाग से, कोई विरला गुनी परोये॥1100**

पूरन प्रभ की सेव कमाओ। भरम अगन से निस्तर पाओ॥

सुकृत मूरत नित बलिहारी। शान्त सरूप नित चरन चितारी॥
हिरदे अन्तर महमाँ धार। सत ठाकर पूरन दातार॥
मन का मान कभू नहीं पेख। सत ठाकर का नित लिख लेख॥
परमानन्द सरब उद्धारी। निर्मल चित से नित चरन पधारी॥
सरब जीयाँ का सो ही स्वामी। खेले खेल सरब बिसरामी॥
सरब जीयाँ की पूरन आस। मुकन्द सरूप तूँ ही अबनास॥
सब पन्थों का तूँ ही सिद्धान्त। सिद्ध ज्ञानी जपें बैठ इकान्त॥
सब ग्रन्थों का तूँ ही मूल। उस्तत अपार शकत अतोल॥
सब प्रभता तुझ से बन आई। जाँ किरपाल ताँ होयें सहाई॥
सदा अभेद अछेद रमीना। पूरन पुरख तूँ परम सुख थीना॥
रंचक कीरत तेरी जिस गाई। ताप विनास सो शान्त समाई॥
रंचक आज्ञा तेरी जिस मानी। बौहड़ ना पावे सो गरभ निशानी॥
रंचक सेवा तेरी जिस जाती। जग में भयो सो अतुल परतापी॥
बारम्बार तोहे निमस्कार। तूँ दाता सत सरजनहार॥
अमोल अतोल अछेद अखण्डा। सरब स्वामी तूँ परचंडा॥
नमो नमो नित कीरत पाऊँ। तेरा जस मन तन में गाऊँ॥
शान्त पावे ये मूरख जीया। नमो नमो प्रभ सरब रमिया॥
अपनी दात करो दातारी। पाऊँसकल जीयाँ रज चरन आपारी॥

**चरन की धूड़ी में रमूँ, नित नित करूँ अरदास।**
**'मंगत' पूरन दात से, भरम की काटो फाँस॥ 1101**

तूँ ठाकर सरब सुखरासी। दीनदयाल काटो भव फाँसी॥
नमों नमों तोरे चरन अपारी। पूरन पुरख तूँ किरपाधारी॥
सत सील संतोख मोहे दीजो। निर्मल कीरत प्रभ चरन की सीजो॥
सत संगत सत सेव विचारूँ। दीनदयाल तेरे चरन पधारूँ॥
आनन्दकन्द मूरत बसे चित माहीं। एक पलक चित विसरे नाहीं॥
स्वारथ बुद्ध हरो बिख सार। पर का हेत चित करूँ विचार॥
बाहरमुख की भरमन नासो। अन्तरगत चित माहीं परगासो॥

सेव सेव नित प्रीत बढ़ाऊँ। तन मन वार के तोहे मनाऊँ॥
सच थाओं तेरा निश्चे में आवे। साची कीरत तेरी चित पावे॥
तेरी आज्ञा चित प्रीत कमाए। निर्मल ज्ञान दीजो प्रभराए॥
अन्तर परगट देखूँ तोहे। तूँ परतख देवें सुख मोहे॥
हम तुम बीच भेद ना रहाई। नीर तरंग ज्यों नीर समाई॥
कीट रूप ज्यों भृंग पधारी। एह बिध प्रीत चरन चितारी॥
सब ही तेरा खेल मैं देखाँ। अत परताप तेरा मैं लेखाँ॥
करो बख़शीश देवन के देवा। अनन प्रीत पाऊँ चित सेवा॥
तूँ परम दयाल जुग जुग सहाई। अपने जन की पैज बढ़ाई॥
तुध सरनागत जो जन आई। मनबाँछत सो ही फल पाई॥
पूर मनोरथ विगन निवारी। तूँ ठाकर नित किरपाधारी॥
अपने जन की करी वडयाई। भरम निवार निज चरन मिलाई॥

**तुध तुल दाता ना कोये, जो मन की बिपत निवार।**
**'मंगत' तुम सरनागती, पाई परम सुख सार॥ 1102**

दीन अनाथ सरन तेरी आयो। दीनदयाल सुख सार लखायो॥
तेरे दर्शन की मैं अधिक प्यासी। हरो विखाद करूँ चरन निवासी॥
तेरी महमा का तूँ ही स्वामी। भगत वत्सल तूँ पारगरामी॥
रिखी रिखीशर नबी अवतार। कोटाँ कोट करें पुकार॥
साचा आप सच तेरा दरबार। तेरी दात तों जाऊँ बलिहार॥
सन्मुख होके प्रभ दरस दिखाओ। दुर्मत भेद भरम उड़ाओ॥
पतित पावन तूँ नाम धराई। अपने नाम की राख वडयाई॥
अनमत जीव पर होवो दयाल। पूरन पुरख तूँ सरब रछपाल॥
रंचक गुन अन्तर में नाहीं। क्योंकर रिझाऊँ तोहे पार गुसाईं॥
निहमानयां का मान तू राखें। सरन पड़े की बेनती भाखें॥
सच दरगाह ऊँची सरकार। करूँ अरदास तेरे दरबार॥
भरमत जीव की भरमन टारो। जनम मरन का ताप निवारो॥
अपने धाम में दीजो बिसरामी। भगत कमाऊँ निर्मल निष्कामी॥
पलक पलक में करूँ पुकार। प्रभ दाते तुम करो दातार॥

और कोई ना थाँ मुकामा। खोजत खोज फिरा निहथामा॥
पल पल करूँ प्रभ जी अरदास। सरनागत की हरो प्यास॥
साची कीरत दीजो सुखदाई। जुगजुग महमा रहे चित समाई॥
पूरन भाग मेरे हैं जागे। साचे साहब के चरनी लागे॥
करी अरदास चित प्रीत लगाए। विगन विनास घर मंगल पाए॥

**पूरन प्रभ का मेल भयो, मिट गये सब संताप।**
**'मंगत' रसना नाम की, पल पल कीनी जाप॥ 1103**

प्रभ दाते का भया भिखारी। पायो दान ग़रीबी सारी॥
साची सेवा हिरदे में सूझी। निर्मल पूजा साहब की बूझी॥
अन्तर नाम का कीना जाप। साची भगती पाया परताप॥
सकल पदारथ प्रभ चरनी त्यागे। पर-उपकार मारग में जागे॥
सकल करम प्रभ अर्पन कीने। त्याग सरूप मारग घट चीने॥
प्रभ अपने को अन्तर जाना। बाहरमुखता भरम भई हाना॥
औगन नास मन निर्मल होयो। साचा नाम चित सूत परोयो॥
साचे धाम में कीना निवास। काल करम की मिटी प्यास॥
पवन तुरंग पर करी असवारी। सतगुर सेव सब काज संवारी॥
गंग जमन में कियो अशनानी। राज प्रयाग की कथी कहानी॥
मानसरोवर के तीर समाई। त्रैगुन माया सब खेद मिटाई॥
अन्तर सुरती आकास बिलासी। आलख शबद पायो अबनासी॥
वेद कतेब की तजी कहानी। अनुभव परकाश जोत निर्वानी॥
तीरथ गवन का बन्धन नासा। आतम तीरथ घट में परगासा॥
ऊँच नीच सब भेद मिटाई। इक परमेश्वर सब में दिखलाई॥
सब की सेवा पूजा चित पाई। दीनदयाल सरब रमनाई॥
अपने रूप संग आप मिलायो। दुर्मत जाल का भेद मिटायो॥
ठाकर सेवक संग भयो मेला। पूरन भाग कोई खेले खेला॥
छिन छिन सुरती सतनाम परोई। पूरन भाग कोई सार लखोई॥

**शबद रूप परगट भयो, भेद भाओ सब नास।**
**'मंगत' एको पाया, जो जल थल करे निवास॥1104**

साची सेवा ने फल दिखलायो। साचा ठाकर घट अन्तर पायो॥
पूरन पूर स्वामी आप। जल थल अन्दर पूर व्याप॥
सतगुर सेव सोझी सत पाई। सत ठाकर संग प्रीत लगाई॥
निर्मल नाम गाया दिन राती। निश्चल ध्यान कियो परभाती॥
वैर त्याग चित प्रेम समायो। आलख शबद जब हिरदे गायो॥
छिन छिन मन की ममता धोई। साचा नाम प्रान लड़ी परोई॥
प्रण अपने को निश्चल कीना। भाओ भगत निर्भय पद लीना॥
ज्ञान ध्यान पाई सुखसार। घट घट पाया सरजनहार॥
अन्तर प्रीती इक चरन लखाई। दुर्मत जाल माया बिनसाई॥
सूक्ष्म सुरती निज नाम बिरोले। कल्पना त्याग घट भई अडोले॥
शबद धुनकार गगन गरजाई। सुरत अरूड़ समागम पाई॥
साचा कन्त शबद घर पाया। पूरन सेवा फल राम लखाया॥
गुरमुख जग में होये परवान। अन्तरगत लखे शबद ध्यान॥
शबद में सुरती पाया इक धीर। मलन विनासी पायो अमरत छीर॥
निर्भय धाम में कियो बिसरामा। जाँ शबद गुंजारे केवल सतनामा॥
पूर मुशक्कत तिसकी भई। जिस जन एह बिध सोझी लई॥
प्रभ चरनी पायो जन मेला। आवागवन का नास्यो खेला॥
तृपत भई सब तृखा विनासी। ठाकर पायो अज अबनासी॥
छिन छिन तिसमें लीन समाई। पूरन भाग कोई सत गत पाई॥

**नाम निरंजन रसयो, तन मन अन्दर मीत।**
**'मंगत' शबद परगासया, जो तीन काल सुखरीत॥1105**

सत ठाकर की चरनी मेला। योग जुगत का पाया खेला॥
साचा नाम सतगुर दिखलाया। सिमर सिमर के ठाकर घर पाया॥
भाओ भगत ले नाम कमाई। सत ठाकर के सन्मुख आई॥
प्रान पवन अस्थम्भत कीना। साचा नाम निरन्तर चीना॥
नाम पवन कीना इक ठौर। पकड़े धीरज ये मन कठोर॥

अन्तरगत सत शबद गुंजारी। निष्काम विरत पाई सुखकारी॥
छिन छिन साचे नाम को गावे। आज्ञा प्रभ की मन माहीं मनावे॥
गरब ग़रूर देही का त्यागे। सत ठाकर की सेवा लागे॥
सब कुछ देखे साहब रज़ाई। अपने आपको आप मिटाई॥
गुरमुख जीवन पद पायो पूरा। साची सेव पाई चरन हज़ूरा॥
सुरत अडोल अन्तरगत चीनी। अबनाशी पुरष घट शबद लखीनी॥
शबद में नित नित सुरत परोई। अगम देस में जाये बसोई॥
काल जाल सब मिटा विखादा। आपा पर नास्यो परमादा॥
जीवन रूप शबद परगासा। देवी देव करें अरदासा॥
हंस जनाँ मिल मंगल गाया। निर्देह रूप ठाकर दरसाया॥
पद निर्वान सत शबद पछाता। आलख लेख ठाकर सुखराता॥
पूरन पुरख शबद निर्वानी। जो जन परसे होये परवानी॥
काम क्रोध मध लोभ विकारा। शबद पछाने मिटे मोह अन्धकारा॥
सतगुर सेव सत ठाकर पाया। जनम जनम का ताप मिटाया॥

**जिन सुकृत जीवन पाया, प्रभचरनी मेल मिलाए।**
**'मंगत' गुरमुख विरले, दुर्लभ सो जग आए॥ 1106**

प्रभ के दर्शन का सुख आपार। जो परसे सो बाँछे सार॥
परम पदारथ प्रभ का नाओं। सिमर सिमर पावें सत थाओं॥
मन की तृष्ना पूरन होई। सत ठाकर जब मेल करोई॥
प्रभ का मेल परम सुखरास। काल करम की हरे जो प्यास॥
प्रभ का मेल जग पूरन रास। फिर ना पावें गरभ की फास॥
प्रभ का मेल चित घना आनन्द। समाध परापत सब नास्यो द्वन्द॥
प्रभ का मेल जग जीवन सार। गुरमुख विरले पाई ये कार॥
प्रभ का मेल नित जीवन देवे। भाग वधाई जो भेद को लेवे॥
उठ साजन सतनाम विचार। पूरन करम पावें संसार॥
साचा ठाकर अत निकट वसीना। तिसको त्याग दुर्मत को चीना॥
साचा ठाकर नित होत सहाई। तिसको त्याग दूजे को ध्याई॥

साचा ठाकर नित ही प्रतिपाल। तिसे विसार और को भाल॥
साचा ठाकर कल्यान सरूप। तिसे विसार बीजे बिख कूप॥
साची सीख नित करो विचार। नाम निरंजन जप बारम्बार॥
करो अरदास मंगल नित पाओ। शबद भेद अन्तर अर्थाओ॥
आलख शबद अपार अनामी। नित ध्याओ प्रभ पारगरामी॥
सरब शकत इक नाम समाई। सिमर सिमर पाओ प्रभताई॥
कलह कलेश मिटे सन्तापा। सत सरूप का करो नित जापा॥
पाप विखाद मन सकल निवारी। एक प्रीत सतनाम विचारी॥

**नाम साहब का सिमर के, कोटक भये उद्धार।**
**'मंगत' नित ही सिमरिये, पतित पावन करतार॥ 1107**

जो साहब की सरन पहचानी। वडी वडयाई पाये सो ज्ञानी॥
हरजन ने हर नाम पछाता। भरम त्याग भयो रँगराता॥
अनहद नाद रतन को पाया। नाम सिमर के निर्भय समाया॥
नाद अखण्डत सुरत समाई। काल कराल की मिटी दुहाई॥
जै जैकार घट अन्तर होई। साचा नाम रोम रोम परोई॥
धन्धूकार नाद घर बोले। गुरमुख सिमर के भया अडोले॥
सत सिमरन ठाकर का गाया। अनहद नाद का मंगल घर पाया॥
नाद विवेकी जो गुरमुख होई। पूरन ज्ञानी पछानों सो ही॥
नित ही साचा शबद कमाई। जल थल देखे तिसकी प्रभताई॥
मन के औगन सकल भये दूरे। अनहद नाद वाजन्त तूरे॥
सोवत जागत इक रंग समाया। सत ठाकर शबद घर पाया॥
तृष्ना दोख सकल भये नास। घर विच पाया शबद अबनास॥
शबद ध्यान शबद विचार। जल थल माहीं शबद भरतार॥
अगोचर शबद की जिस कथा विचारी। त्रैगुन जाल से भयो निस्तारी॥
तन मन अन्दर सतनाम समाया। दुर्मत रोग करम बिनसाया॥
नित मतवाल शबद रस खाये। भरमन त्याग निज रूप समाये॥
जीवन जग में तब सुफल पहचाना। आनन्द सरूप पाया शबद निर्वाना॥

मोह ममता जाल कठन कराल। शबद पछाने तब भयो निहाल॥
साचे शबद का गाओ गीत। बन्ध खुलासी करे शबद पुनीत॥

**अनहद शबद परगासया, त्रैगुन जाल भये लीन।**
**'मंगत' ऊँचा धाम है, कोट मद्धे कोई चीन॥ 1108**

त्रैगुन माया जाल आपार। भरमें जीव नित ही अंध्यार॥
करम का कर्ता जो आप को मानी। त्रैगुन ये भरम की खानी॥
कर्ता भाओ भरम का रूप। परचंड माया का सकल सरूप॥
कर्ता भाओ त्रैगुन प्रगटाई। भरमे जीव परम दुःख पाई॥
कर्ता भाओ कारन नहीं कोई। बिना कारन ये खेल रचोई॥
अनवर्चित माया अत ही बिस्माद। भरमे जीव धारे आपाध॥
जिस करम का भयो अभिमानी। तिसके भोग की इच्छया प्रगटानी॥
इच्छया से फिर जतन को धारे। भाँतक भाँत जुगत विचारे॥
फल प्रापत भोग करीजे। राग द्वेष अगन में छीजे॥
ऐसी खेल होवे दिन रात। एक पलक नहीं छूटन पात॥
कर्ता भाओ मूल संसारा। त्रैगुन माया का चुना चुनारा॥
नाना जतन करे दिन रात। कर्ता भाओ नहीं मन का जात॥
सतगुर साध इक जुगत लखाई। दीन बन्दगी मारग दिखलाई॥
निर्मल प्रीती जो मारग चाले। कर्ता भाओ मिटे जंजाले॥
साची प्रीती सत शबद लखाये। घट अन्तर में ध्यान लगाये॥
सकल करम माया जो धारी। प्रभ आज्ञा में नित वरतारी॥
अपना आप भुलाये अभिमान। आज्ञा प्रभ की चित गहरा ध्यान॥
कर्ता भाओ तब मन से जाई। निहकरम सरूप आतम रस खाई॥
निर्मल जुगती सतनाम विचार। कर्ता भाओ सब मिटे ग़ुबार॥

**करम का मानी होय के, इच्छया भोग गरसाये।**
**'मंगत' तिससे छूटिये, जो आज्ञा प्रभ की मनाये॥1109**

करम अभिमान अत बन्धन भारा। निष्काम करम देवे निस्तारा॥

सकल करम से होये निर्मानी। साची भगती प्रभ करी पछानी॥
करम की ममता जब जीव त्यागी। सत शबद परसे वडभागी॥
करम की ममता जब दूषना जाई। सतनाम घर उस्तत पाई॥
करम की ममता से पावे निस्तार। मोह माया से उतरे पार॥
करम की ममता अत दीरघ रोग। राग द्वेष का भयो संजोग॥
इच्छया चिन्ता भय मोह विकार। करम की ममता का सब बिस्तार॥
गुरमुख विरले भेद पछाता। निहकरम सरूप शबद रँगराता॥
कूड़ा जाल अत कठन आपार। अनमत जीव भरमे पल सार॥
परम जतन जो हिरदे धारी। साचे नाम की चित कथा विचारी॥
तन मन अपना जीवन में त्यागी। करम की ममता दुर्मत तब भागी॥
निर्मान सरूप जग जीवन पाई। सत शबद की साखी घर गाई॥
निर्मल शबद सत सारंग बानी। अन्तरगत तत्त करी पछानी॥
शबद में सुरती इक रंग कीजे। करम की ममता दुर्मत तब छीजे॥
सकल करम प्रभ चरन निवारी। कर्ता भाओ आपत को टारी॥
निहकरम सरूप घट जोत परगासी। निर्मल धाम पायो अबनासी॥
शबद पछान चित भयो निहाल। छूट पाई ममता करम जाल॥
निर्मल कथा सत रूप विचार। करम की ममता होवे सब छार॥
निहकरम सरूप ब्रह्म अखंड आनाद। करे पछान तब मिटे व्याध॥

**निहकरम सरूप सत शबद को, जिस घट अन्तर जानया।**
**'मंगत' ममता त्याग के, सत समता सुख पहचानया॥ 1110**

समता बुद्धी जब परगासी। ममता करम दोख सब नासी॥
करम फल भोग की आस निवारी। प्रभ आज्ञा चित माहीं चितारी॥
प्रभ आज्ञा में जीवन जीये। उपरस जीवन शबद रस पीये॥
मारग सहज करो विचार। ममता करम की होवे छार॥
लोक परलोक का नासे गवना। शबद पछाने सब घट रमना॥
करम की ममता जब मन से नासी। आलख जोत शबद परगासी॥
अपने रूप संग मेल मिलाई। जाँ से उतपत ताँ लीन समाई॥

दुर्मत जाल माया का हरयो। सत सरूप की सरनी पड़यो॥
करम की ममता मूल परमाद। निष्काम करम सब हरी व्याध॥
अपना कर्ता भाओ निवारी। प्रभ आज्ञा में नित वरतारी॥
करम फल भोग इच्छया सब नासी। जनम मरन कटी जम फाँसी॥
निहकरम सरूप ठाकर घर पाया। सिमर सिमर के सब भरम चुकाया॥
एह बिध रहनी जिस जन पाई। करम जाल से पाई रिहाई॥
उट्ठत बैठत सत शबद ध्याए। कारन करते संग प्रीत लगाए॥
कर्ता भाओ अभिमान निवारी। करनेहार ठाकर चित धारी॥
सकल करम सौंपे तिस आगे। दीन ग़रीबी में उठ के जागे॥
शरधा सेवा भाओ भगत विचारी। अनन प्रीती इक नाम चितारी॥
शबद पछान घट अन्तर करी। ममता जाल से सहज निस्तरी॥
कल्यान सरूप शबद नित ध्याई। दुर्मत त्याग सम्मत चित पाई॥

**दुर्मत मन की काटिये, भाओ भगत रस खाइये।**
**'मंगत' समता शान्ती, परम जतन से पाइये॥ 1111**

करम विखाद करम परमादा। करम चक्कर ये अत बिस्मादा॥
करम ही बन्धन अधिक कलेशा। जरा मरन का करम संदेशा॥
करम ही काल का रूप दिखाई। करम ही देवे सज़ा अधिकाई॥
अद्भुत जाल करम बिस्तारी। अनमत जीव नहीं पलक छुटकारी॥
गुन अनुकूल करम ज्यों करे। सुख दुःख भोग की बिपता पड़े॥
राग द्वेष में नित भरमाये। बान्धा करम नित आवे जाये॥
मारग ज्ञान खोज सुखरीता। करम जाल से होयें पुनीता॥
आतम तत्त नित करम से न्यारा। अज अबनाशी सरब बिस्तारा॥
घट घट व्यापे रहे अलेपा। शुद्ध सरूप त्रैकाल अलेखा॥
तिसकी प्रीत मन माहीं कमाओ। करम जाल से निस्तर पाओ॥
करम जाल ये जीव अज्ञाना। मिथ्या विकार में नित भरमाना॥
कर्ता भोगता आप भयो मानी। इच्छया चक्कर नित फेर फिरानी॥
साचा नाम सब बिपत निवारे। सतगुर सीख से जो करे विचारे॥
नित ही आतम तत्त को खोजे। सतगुर पूरे की सिखया सूझे॥

शबद सरूप नारायन आप। तिसका सिमरन हरे सन्ताप॥
इच्छया भेद सकल दुःख नासे। आतम जोत जब घट परगासे॥
घट घट रमिया पर रहे अलोप। परगट पावे गुरमुख गुनी भूप॥
अन्तरगत जब परगट भयो। काल जाल सब भरमन गयो॥
सो परमेश्वर सब बिपत निवारी। सत परतीत जो चरन पधारी॥
मन अन्धकार सकल भयो नासा। अनहद बानी नाद परगासा॥

**सत शबद परगट भयो, मनसा भई लवलीन।**
**'मंगत' टूटी करम जेवड़ी, जीव परम पद चीन॥ 1112**

परम पदारथ ठाकर घर पाया। सत सन्तोख चित आये समाया॥
निर्भय हूआ ये जीव अज्ञानी। शबद ध्याया पुरख निर्वानी॥
अगम अगोचर शबद सुखरासी। परगट ध्याये तब मिटे चौरासी॥
साचे शबद में नित सुरता राख। सतपुरषों की सुन निर्मल साख॥
अपने अन्तर वस्त सम्भाल। बौहड़ ना व्यापी काल कराल॥
अपने अन्तर खोज निधान। सरजनहार नित करो पछान॥
अपने अन्तर मन को नित राख। निर्भय धाम की रसना चाख॥
अपने अन्तर गुर सिखया सोध। पाप कुपथ का होवे निरोध॥
अपने अन्तर जप साचा नाम। शबद पहचानें पावें सत धाम॥
अपने अन्तर तीरथ विचार। काशी काबा की घट लख सार॥
अपने अन्तर मन देख तरंग। साचे नाम में रँगो नित रंग॥
अपने अन्तर जग ठाकर देख। सतगुर पूरे का सुन ये लेख॥
बाहरमुख है अती ग़ुबार। नित भरमे ये जीव अंध्यार॥
बाहरमुख अत जाल बिसतारी। मोहत होवे ये जीव अन्धकारी॥
बाहरमुख सब मिथ्या सार। देख देख नहीं धीरज धार॥
बाहरमुख सब अगन का सागर। तीन ताप को करे उजागर॥
बाहरमुख है काल तमाश। नित नित जीव को करे गरास॥
बाहरमुख की भरमन छोड़। अन्तरमुख खोज सत ठौर॥
अज अबनाशी घट माहीं समाया। अन्तर खोज शबद निर्माया॥

**साखी पुरष पहचान कर, जो देह सरजनहार।**
**'मंगत' सो ही धाम है, नित आनन्द भंडार॥1113**

बाहरमुख से अन्तरमुख आया। सतगुर साध मारग दिखलाया॥
लोकालोक पसरे पासार। अन्तर की गत लखी आपार॥
आकास पाताल सागर अनेक। अन्तर का है आपार विवेक॥
गंगा जमना सुरस्ती प्राग। अन्तर देखा है अचरज राग॥
पाँच तत्त अन्तर परगास। छिन छिन नित करें बिलास॥
मेर सुमेर अन्तर समाये। अन्तर की गत लखी नहीं जाये॥
रवी चन्दर और रास नखत्तर। करें कुलेल काया के भीतर॥
ब्रह्मा बिषन रुद्र गनेश। इन्दर जम अगनी परवेश॥
देवी देव अनगिनत समाये। सिद्ध बुद्ध केते नहीं लेख में आये॥
अपरम अपार देह मन्दर साजा। सरब स्वामी घट माहीं बिराजा॥
नाद सरूप सरब का देव। सिद्ध बुद्ध नाथ करें नित सेव॥
चार दिसा और चौदाँ लोक। बिस्माद रचना अन्तर अलोप॥
जिस जन अन्तर सोझी पाई। सरब ब्रह्मण्ड अन्तर दिखलाई॥
साखी पुरष सरब परकाशी। अन्तर माहीं नित करे बिलासी॥
भरम त्याग सतनाम विचार। अन्तर पावें सत लेख अपार॥
मन मूरख नहीं अन्तर सूझे। अपना भरम बाहर में लूझे॥
दिवस रैन पख मास गँवाये। बाहरमुख नहीं शान्त पाये॥
अन्तरमुख सत ठाकर चेत। जनम मरन की मिटे विखेप॥
सो दीनदयाल नित करे पुकार। सतगुर मेल पावे सत सार॥

**काया अन्तर खोज कर, परम पुरष निर्वान।**
**'मंगत' शबद पहचानया, निश्चल करके ध्यान॥1114**

निर्भय शबद अगमपुर वासी। अन्तर सूझ सतधाम सुखरासी॥
सरब लोक के परले पार। साखी पुरष वहाँ करे पुकार॥
सुन्न गुफ़ा में नाद गुंजारी। सत सरूप सो ही निर्धारी॥

आनाद सरूप पुरख निर्वाना। जीव के बन्धन करे कल्याना॥
सचखण्ड देस से बानी आई। संशे मेट के जीव छुड़ाई॥
कोटाँ कोट भये जन्त उद्धार। सिमर के शबद पुरख निर्धार॥
जिस जन अन्तर भेद पछाता। आनन्द सरूप में भयो रंगराता॥
सकल भेद की सोझी पाई। देह मन्दर की लखी प्रभताई॥
असुर भाओ बिख ममता नासी। देव समता जोत परगासी॥
नित ही तिस में मगन रहाई। हर जन पाई अधिक प्रभताई॥
तृपत भयो मन शबद रस खाये। शबद की महमा नहीं वरनी जाये॥
प्रान पवन में करे हलोल। धुर आकास सुन सार कलोल॥
आसन धरती सुरती आकासे। अनहद नाद घट में परगासे॥
सिद्ध बुद्ध नौ नाथ ध्याये। पीर पैग़म्बर तिसका जस गाये॥
आकाश बानी घट नाद परगासा। हरजन लीना प्रभ चरनी वासा॥
मुक्त भयो हर रसना खाये। शबद आगाध घर परगट पाये॥
सतगुर पूरे के चरन बलिहारी। देह मन्दर का जिस क़ुफ़ल उघाड़ी॥
खोल क़ुफ़ल अन्तरगत आया। आपार पुरख का निरनय पाया॥
उरध कँवल जोती परगास। बजे बजन्तर नाद निरवास॥

**सिद्धाँ पुरखाँ खोजया, अज अबनाशी देव।**
**'मंगत' भई परापती, मिल पूरे गुर की सेव॥ 1115**

अबनाशी पुरख घट अन्तर पाया। सत साधू निरनय दिखलाया॥
जनम जनम बाहर भरमाई। करम जाल में आवे जाई॥
उपजे बिनसे देही का धरमा। अबनाशी पुरष सदा निहकरमा॥
देह की ममता ने गवन फिराया। लाख चौरासी जूनी भरमाया॥
सत की खोज में भया दीवाना। ढूँडत फिरया जंगल बीयाबाना॥
तीरथ कन्दरा पर्वत धाई। उठ उठ मनुआँ आकासे जाई॥
ना बिपता नासी ना कारज सरया। काल करम का ना जाल सिर टरया॥
चला निरासा अन्त की बारी। जनम अनेक ये पाई ख़वारी॥
पूरन भाग से सत साधू पाया। अजर पुरख का धाम लखाया॥

जिस को खोजत बाहर जाई। सो ठाकर घर रह्या समाई॥
निर्मल जुगती सतनाम कमाया। खिमा ग़रीबी का चोला पाया॥
संतोख आसन पर आये बिराजा। प्रेम नीर मज्जन देह साजा॥
सत की जुगती आहार करीना। बैठ इकान्त निर्भय पद चीना॥
निष्काम करम देह बस्तर धारी। पर-उपकार का भयो ब्यौहारी॥
सत विश्वास का तिलक चढ़ाई। अनुभव परकाश ज्ञान अर्थाई॥
खुले कपाट घर चानन पाया। सतगुर दया निज धाम समाया॥
ना आवे ना जावे जीया। इस्थिर धाम में जाये रमीया॥
ब्रह्मा बिषन रूद्र सनकादिक। नारद शारद रिखी मुनि साधक॥
पीर पैग़म्बर वहाँ गये समाये। साचा पुरख आपार आगाहे॥

**सब देवों का देव जो, सरब शक्ति भण्डार।**
**'मंगत' पाया नाद को, जो सरब करे उजियार॥ 1116**

## चौथा अध्याय

## शूनकर्म साधन

**नाद सरूप परगासया, जब घट अन्तर मीत।**
**'मंगत' सुरती लीन भई, पाई शून करमगत चीत॥ 1117**

करम वासना जब मन की नासी। निहकरम सरूप घट शबद परगासी॥
हंग विकार देही का त्यागी। शून करम बुद्ध निर्मल जागी॥
करम का कर्ता भाओ होवे नासी। अकरम रूप में कियो निवासी॥
इच्छया मोह सब मिटे ग़ुबारा। शून करम तब निश्चय विचारा॥
आतम तत्त जब परगट पाया। काल करम सब खेद मिटाया॥
एक दो जाँ भरम ना राखी। ब्रह्मकार नाद रस चाखी॥
प्राकिरत दोख नहीं मन चलाये। शून करम बुद्ध निर्मल पाये॥
अपने आपको जब ब्रह्म पछाता। ब्रह्म सरूप में नित रंगराता॥
देह अभिमान दूषना नासी। शून करम निश्चय परगासी॥
अपने आप जब अकर्ता मानी। करम रहत विरती निर्वानी॥
पाप पुन्न दोहे लीन समाई। निहकरम गती सो सत कहलाई॥

सर्वज्ञ रूप जो आप पछानी। आपा पर का दोष मिटानी॥
देह विकार हंगता नासी। शून करम जोती परगासी॥
अपना आप जब भिन्न कर जाता। देह इन्द्री मन परे पछाता॥
देह इन्द्री मन हंगता त्यागी। शून करमगत लखे बैरागी॥
आतम तत्त में इक रस होयो। देह विकार नहीं हिरदे जोयो॥
कर्ता करम से होए न्यारा। शून करमगत निर्मल धारा॥
सब कुछ देखे जब अपना आप। ऊँच नीच नहीं हिरदे जाप॥
दु:ख सुख देह से परे समाई। निश्चल बुद्ध शून करम ध्याई॥

**शून करम गत ना मिले, जब लग देह अभिमान।**
**'मंगत' करम की आस में, फिरे चौरासी खान॥ 1118**

आसा करम की जब सकल विनासी। शून करम समता परगासी॥
देह से न्यारा निज रूप पछाता। शबद सरूप अखण्ड निरवासा॥
देश काल नहीं धरे विखेप। शून करम का लखे तब लेख॥
राग द्वेष जब हिये समाई। हिरख मान जो मन चलाई॥
करम का कर्ता भाओ जो राखी। शून करम गत कभू ना चाखी॥
झूट पाखण्ड में जीवन त्यागे। देह अभिमान धरें दु:ख रागे॥
पद सन्यास नहीं भेद पछाता। भेख रम्मत कर नित दु:ख पाता॥
निष्काम करम नहीं साधन पाया। चेतन तत्त नहीं परगट ध्याया॥
करम फल इच्छया जो ना होई विनासा। शून करमगत नहीं मिले सन्यासा॥
झूट भेख में जीवन काढ़ी। देह मध नहीं मिटे ख़वारी॥
आतम तत्त नहीं अन्तर जाता। शून करमगत नहीं पाये निरवासा॥
अनँक जतन अन्तर जो भी कीजें। देह की ममता में नित छीजें॥
करम अभिमान नहीं जाये अन्धकारा। तृष्ना भोग चित में संचारा॥
हंग ब्रह्म मुख से जो कमाई। अन्तर दुर्मत राख दोहाई॥
सो पाखण्डी नित आवें जायें। शून करम गत भेद नहीं पायें॥
देह का भेख धरा सन्यास। अन्तर धारी बिख की बास॥
आतम चिन्तन नहीं चित लायो। बहुरंग देह का भेख बनायो॥

बस्तर त्याग देह छार रमाई। मन की तृष्ना ना भसम कराई॥
झूट पाखण्ड में जीवन सब जाये। शून करम सन्यास नहीं पाये॥

**बिन तत्त आतम सोधने, करम मैल नहीं जाये।**
**'मंगत' देह अभिमान में, सब भेखी भरमाये॥ 1119**

मारग ज्ञान जिस सही पछाता। निर्भेख सरूप आतम रंगराता॥
मिथ्या देह से मन उपरस हूआ। आलख शबद में जीवत मूआ॥
सकल करम से चित भया न्यारा। द्वन्द विकार नहीं परसे बिख सारा॥
निरद्वन्द निर्मान समाई। शून करम गत सो गुनी पाई॥
सो सन्यासी सो बैरागा। निर्मल भेख उदास में जागा॥
साची जुगती योग कमाई। शबद परापत शून समाई॥
बसे बीयाबानी संसार त्याग। मारग ज्ञान नहीं अन्तर अनुराग॥
बहु बिध देह का भेख बनाई। धूनी तापें जल सेज लखाई॥
तप भयंकर में देही गाले। मिटे ना तृष्ना करम जंजाले॥
झूट भेख में औध गँवाई। शबद भेद नहीं अन्तर पाई॥
करम रोग से नहीं मिले ख़ुलासी। इच्छया रोग धारी चित फाँसी॥
बादमुबाद में जनम गँवायो। ब्रह्म सरूप नहीं अन्तर पायो॥
संशे अनेक में जनम गँवाई। शून करमगत लेख नहीं पाई॥
निर्मल निश्चय जिस जन ने पाया। सत तत्त आतम का भेद लखाया॥
निष्काम करम से मन मल धोई। साचा नाम प्रभ हिये परोई॥
अनहद नाद अन्तर किलकारी। शून करम तब भेद विचारी॥
देह त्याग आतम संग मेला। रुच रुच कीजे तिस माईं कुलेला॥
दुर्मत विकार अन्धकार विनासी। ब्रह्म सरूप शून करम निवासी॥
अपने आप को ब्रह्म कहलाई। देह अभिमान सब खेद मिटाई॥

**शबद रूप पहचानया, तिसमें भयो लवलीन।**
**'मंगत' निर्देह पद पाय के, शून करम गत चीन॥1120**

आपा भाओ जब देह का नासे। ब्रह्मसरूप में करे निवासे॥

इन्द्री दोख नहीं मन भरमाई। निश्चल ध्यान सत शबद लखाई॥
दु:ख सुख परे कियो बिसरामा। निर्वान सरूप पायो सत धामा॥
करम वासना सब संकट नासी। रुच रुच खाये शबद अबनाशी॥
मिथ्याकार अन्धकार विनासा। शून करम गत पाये सन्यासा॥
देह का भेख ना कोई राखी। निर्भेख रूप की गावे साखी॥
आपा पर ना दोख विचारी। सब का हेत हिरदे में धारी॥
काम क्रोध देह मध त्यागी। पल पल सिमरे सत शबद अनुरागी॥
रहे उदास चित अन्तर जोई। साचा नाम इक साहब परोई॥
शबद सरूप पाया निर्वाना। शून करम गत पाई कल्याना॥
राग द्वेष नहीं हिरदे रहाई। सम्मत बुद्धी घर में प्रगटाई॥
ग्रहन त्याग सब खेद निवारी। गुनातीत सत शबद विचारी॥
नित नित सुरती शबद में राखी। साचे नाम की रसना चाखी॥
हिरख मान सब गयो विकारा। शून करम गत लखी निर्धारा॥
देह मद त्याग तत्त आतम जाता। आतम माहीं रहे रंगराता॥
आतम जोत सरब दरसाई। देह के भोग नहीं जिया भरमाई॥
निश्चल ध्यान पाई समता योग। दुर्मत भरम विनासे रोग॥
सतगुर किरपा सब बन्धन नासा। शून करम में लीना वासा॥
ना कुछ किया ना करने योग। निहकरम सरूप का भयो संजोग॥

**सो तत्त दरसी, ब्रह्म ज्ञान लखाई।**
**'मंगत' जिस घट अन्तर, शबद सार लख पाई॥ 1121**

नाद सरूप जिस अन्तर पाया। देह विकार सब रोग मिटाया॥
अबनाशी पुरष संग करी परीती। साध जनाँ की जानी नीती॥
कारन कर्ता सरब का मूल। सरब न्यारा शबद अतोल॥
सुन्न कन्दरा में आसन धारी। अनहद नाद लेख लखारी॥
नाद निरत में लीन समाई। काम क्रोध ममता बिनसाई॥
द्वैत दृष्ट विकार निवारी। ब्रह्मकार सुरत घट धारी॥
बहुरंग नाद खेल विचारी। काल करम की उतरी छारी॥

अन्तर खोज अन्तर समाया। तत्त निरंजन भेद लखाया॥
आपा पर गई दुबधा सारी। अन्तरगत नित सुरता धारी॥
अपने आप में भयो लवलीन। ब्रह्म सरूप आप को चीन॥
करम जाल तब दुर्मत काटी। सत सरूप परसा जब साखी॥
बिखे विखाद औगन सब दूरे। निरमल सुरती शबद में पूरे॥
पूरन रूप मिल पूरन होई। शून करम गत भेद लखोई॥
अनहद नाद रम्मत सुख पाया। निहकरम सरूप घट भेद लखाया॥
मन इन्द्री बुद्ध भई लवलीना। साखी शबद जब हिये परखीना॥
एक आधार साहब का पाई। देह की ममता रोग मिटाई॥
चेतन संग मिल चेतन होया। जड़ बुद्धी का भरम सब खोया॥
शून्यंगकार नाद निर्वानी। जो जन परसे गत शून करम पछानी॥
अपने आपको नित भिन्न कर जाता। सत तत्त रूप में रहे रँगराता॥

**नित मतवाल शबद के माहीं, करम फाँस दीनी टार।**
**'मंगत' निर्मल धाम सो, शून करम गत सार॥ 1122**

मिथ्या जग से जो उपरस होई। राम चरन चित प्रीत लखोई॥
सकली सम्पत प्रभ दात पछानी। नित वरताये पर-दुःख करे हानी॥
देह का साखी निश्चे जाता। तिस की आज्ञा में रहे रँगराता॥
सुख दुःख दोनों सम कर जापी। निश्चय नाम इक अन्तर थापी॥
अपना आप कछु जानत नाहीं। सत सरूप देखे सब थाईं॥
अन्तर जुगत योग कमावे। साखी पुरख के चरन ध्यावे॥
रस रसे इक प्रभ के रंग। अन्तरगत सुने शबद परसंग॥
अखण्ड नाद परकाश पछानी। पल पल तिसकी सेव कमानी॥
तन मन धन त्रै अर्पन करी। साखी पुरष के चरनी पड़ी॥
सकल करम तिस भावी जानी। रखे सन्तोष ज्यों वरतानी॥
सम्मत बुद्धी जब परगट पाई। शून करम समाध रस खाई॥
हिलमिल खेले शबद के संग। मोह माया से रहे निषंग॥
अपना जीवन रूप पछानी। पल पल कथे तिसकी कहानी॥
देह की ममता दुर्मत जाई। ब्रह्म सरूप हो सुरत समाई॥

काल करम से भिन्न हो जाई। शुद्ध सरूप में लीन समाई॥
सदा अकर्ता नित निषकामी। होये परापत निज रूप आगामी॥
ना ओह मरे ना संकट पाई। जल थल अन्दर पूर समाई॥
आतम मिल आतम गत पाई। शून करम तब भेद लखाई॥

**मन की दुर्मत त्याग के, आतम खोजे जोए।**
**'मंगत' मिले निष्कामता, भय भरम सरब खोए॥ 1123**

इन्द्री भोग में मन भरमाई। आतम रसना कैसे पाई॥
बिना विवेक नहीं मारग पाये। कथ कथ मरे बहु जनम गँवाये॥
भगती मारग सहज सुखरासी। गुरमुख घाले परसे अबनाशी॥
करम करे निहकरमत जानी। आलख लेखा तिस कियो पछानी॥
वासना करम की जो अन्तर रहाई। मिले ना त्याग परम सुखदाई॥
मारग साचा गुरमुख विचार। देह की ममता सब होवे छार॥
प्रभ की आज्ञा में करम त्याग। प्रभ के चरनी नित उठ लाग॥
नित नित कीरत प्रभ की गाओ। प्रभ अनुराग मन माहीं लखाओ॥
देह का सरजनहार पछानो। देह को नास रूप कर जानो॥
ऐसी विरती जिस जन पाई। मिले बैराग परम सुखदाई॥
मन को साचे नाम संग राखा। पल पल सिमर अमीरस चाखा॥
भयो इकागर अन्तर माहीं। इन्द्री दोख सब लीन समाईं॥
उपरस मनुआँ भयो नाम आहारी। पल पल साची जुगत विचारी॥
जो हूआ प्रभ हुकम पछानी। वासना करम जाल भई हानी॥
सहज योग ये सार लखाई। ममता देह सब ताप मिटाई॥
अन्तरगत शबद परगासी। नाद सरूप पुरख अबनासी॥
जब मनुआँ प्रभ चरन ध्याई। साखी पुरष के दर्शन पाई॥
तृष्ना रोग सब भयो विनासा। शून करम गत पाई सुखरासा॥
अनहद नाद रम्मत सुख पाई। सुन्न समाध सत ठाकर ध्याई॥

**अबगत रूप नारायन का, सब ही मिटावे ताप।**
**'मंगत' साधन सार है, एक नाम का जाप॥ 1124**

देह को मिथ्या जो अन्तर से जानी। साखी भूत आतम पहचानी॥
मिथ्या त्याग सत रूप कमाई। आतम तत्त में नित लीन समाई॥
मान मध देह का नहीं चाखी। पल पल सिमरे आतम साखी॥
देह मध त्याग निज आतम जाता। आठों पहर तिसमें रँगराता॥
निहकरम सरूप में लीन समाई। देह विकार में नहीं चित चलाई॥
सदा अकर्ता घट रूप पछानी। गुना अतीत सो ब्रह्म ज्ञानी॥
काल सरूप देही को त्यागा। अकाल रूप आतम में जागा॥
नित नित पेखे आप अकाल। देह ममता का नासे जाल॥
सकल करम देही के जानी। निहकरम रूप आतम पहचानी॥
आतम तत्त में नित लीन समाई। देह करम सब तृखा बिनसाई॥
सदा सन्तुष्ट अपने आप। अपना कीजे आपे जाप॥
सब कुछ देखे अपना खेल। सरब न्यारा हो करे नित मेल॥
वाँग आकाश पसरे सब माहीं। देश काल का खेद ना पाईं॥
निर्मल रूप ब्रह्म माहीं समाया। दुरमत भेद सब जाल मिटाया॥
अपना आप जाना सब रंग। अन्तर में रहे नित निहसंग॥
करम करे कर्ता नहीं होवे। राग द्वेष सब दुबधा खोवे॥
प्रेम का सागर पाये वासना त्यागी। शून करमगत पाये अनुरागी॥
अपना आप सरब बिस्तारी। चेतन जोत शबद निरंकारी॥
परम धाम रूप विज्ञान। गुरमुख विरले करी पछान॥

**कोटाँ मद्धे जन कोए, जो शून करम गत पाये।**
**'मंगत' तिसकी कीरती, तीन लोक सुखदाये॥ 1125**

निज रूप का भेद विसारी। देह भोग में जीवन काढ़ी॥
अपना साचा रूप पछान। सकल दोष की होवे हान॥
देह का साखी तेरा रूप। खोजो तत्त्व ज्ञान अनूप॥
तुम परकाश देही परकाशे। मिथ्या मोह में क्यों गरासे॥
भरम त्याग उठ ज्ञान विचार। सतगुर साध की सुनो पुकार॥
देह मुक़ाम तेरा रथ मीत। तूँ रथवाही सदा पुनीत॥

अपनी शकत आप सम्भाल। रथ का टूटे सब जंजाल॥
क्यों भरम माया लिपटाया। सत सरूप अपना विसराया॥
निज सरूप का करो विचार। दुर्मत रोग जाये दुःख सार॥
झूट देही संग आपा पाई। देह के भोग में आवे जाई॥
साखी अपना रूप पछान। करम जाल तृष्ना होवे हान॥
देह के मध में क्यो मधमाता। साखी रूप नहीं कियो पछाता॥
बिनसनहार देही का जाल। तिसका मोह रूप जम काल॥
ममता त्याग कर आतम खोज। निर्वान सरूप की पावें सूझ॥
सदा आनन्द करम से न्यारा। साखी पुरष सरब भरतारा॥
सोही तेरा निर्मल रूप। मिल सतगुर पावें गत अनूप॥
देह अन्तर सो रह्या समाई। तिस की शकत सब में वरताई॥
जड़ देही को करे सरजीत। सो ही तेरा रूप पुनीत॥
अपने रूप की करो सँभाल। दुर्मत काट देही का जाल॥

**आतम तत्त पहचान से, सुरत भई लवलीन।**
**'मंगत' देह विकार से, भिन्न कर आतम चीन॥ 1126**

आतम तत्त जिस खोज विचारी। शान्त सरूप पावे सुखकारी॥
सदा अजनमा दोष से न्यारा। आतम तत्त की खोज आपारा॥
देह में पसरे रहे देह से भिन्न। विस्माद सरूप आतम निरचिन्न॥
तिसके परकाश देही परकाशे। देह विकार से परे निवासे॥
सकल करम को शक्ती देवे। अकर्म रूप नित आप बसेवे॥
सरब परकाश रहे अलेप। पूरन रूप नहीं धरे विखेप॥
आदी था अन्ती रहाई। पुरख आनादी की अपार वडयाई॥
घट घट पसरे एके रंग। सम दृष्ट रूप निहसंग॥
मोह माया नहीं भरम विकार। शुद्ध सरूप आप निरंकार॥
जन्में मरे देही का धरम। सदा अजन्मा बसे निहकरम॥
छेद भेद से रहे न्यारा। अखल निरंजन जोत निर्धारा॥
वाँग आकास पसरे सब ठौर। रंचक वस्तु का लेप नहीं जोड़॥
सरब न्यारा रहे त्रैकाल। अबनाशी पुरष सत शबद अकाल॥

तत्त सरूप जिस अन्तर पाया। विगन दोख सब भरम मिटाया॥
निर्मल रूप नित करो विचार। दुर्मत जाल जाये दु:ख सार॥
सत सरूप को नर विसराई। देह भरम में आवे जाई॥
देह का भोग शान्त ना होई। जुग जुग जीव नित फेर फरोई॥
साखी पुरष का करो विचार। मृग तृष्ना जाये अन्धकार॥
सत तत्त में निश्चय नित राख। सत सरूप की कीरत भाख॥

**देह की ममता त्याग के, जीवन रूप विचार।**
**'मंगत' सो सत शान्ती, सब में पूरन सार॥ 1127**

जीवन रूप को क्यों विसराया। झूटे मध में नित लिपटाया॥
देह के भरम में अनमत भूला। सत सरूप विसरे सुख मूला॥
दु:ख का जाल देही पछान। जनमे मरे पावे नित हान॥
अनंक जोड़ देही धराई। इक दिन सकले बिखरत जाई॥
अनंक परमानू देही आकार। छिन में नासे होवे छार॥
साखी पुरष घट माहीं पछान। जीवन शकत जो सरब निधान॥
देह के भोग देही संग नासे। भरमें जीया धर अन्ध भरवासे॥
साखी रूप का करो विचार। तीन काल जो आनन्द भंडार॥
परीपूरन सदा निरदोख। साखी पुरष रूप है मोख॥
आतम तत्त निज रूप विसराया। दुर्मत जाल में जीव गरसाया॥
जब आतम तत्त की करी पछान। दुर्मत जाल की होई हान॥
ताँ सों गुनी करो विचार। आतम खोज परम सुख सार॥
देह का भरम सहजें ना जाई। छिन छिन में जो अंग कटाई॥
अनंक तपस्या जो चित धारी। देह का मोह नहीं मिटे अन्धकारी॥
ज्ञान ध्यान करे विचारा। देह का मोह नहीं उतरे विकारा॥
चार कुंट में उठ उठ धाई। देह की ममता नहीं चित से जाई॥
गुनी ज्ञानी सब भये लाचार। देह की फाँसी अपरम अपार॥
काम क्रोध मोह लोभ विकारा। दुर्मत रोग का सब अन्धकारा॥
जतन करे तो भी जन हारे। देह भरम से नहीं उतरे पारे॥

**ममता देह अज्ञान अत, सकल जीव भरमाये।**
**'मंगत' विरले गुरमुख, ये दीरघ रोग मिटाये॥1128**

जतन जतन कर गुनी मुनि हारे। देह भरम नहीं उतरे दुःख सारे॥
छिन छिन में जीया भरमाई। देह ममता अत रोग दुःखदाई॥
अनंक सयानफ़ मन में धारी। ममता देह नहीं होवे छारी॥
ज्ञान ध्यान बहु सुने इतहासा। मोह का जाल नित करे गरासा॥
गृहस्ती विरक्ती सब भये दीवाने। मिथ्या देह संग भये ग़लताने॥
कोट मद्धे कोई जन आया। सत सरूप जिस भेद लखाया॥
परम जतन से मल दुर्मत हरया। साध जनाँ की सरनी पड़या॥
साची सीख मन तन मनाई। साचा जीवन सत शबद लखाई॥
काम क्रोध अधिक बिकराल। नित गरासें देह के जाल॥
राग द्वेष अत घना कलेश। अनमत जीव रहे दुःखी हमेश॥
इन्द्री विकार पल पल भरमाई। एक पलक नहीं धीरज आई॥
अत संकट में आवें जायें। देह के जाल में नित भरमायें॥
मिथ्या देह नित भय दिखाई। गुनी ज्ञानी नित बिपत लखाई॥
निर्भय रूप सत आतम खोज। सकल जाल की पावें सूझ॥
जीवन रूप जब शबद पछाता। लीन भयो सब दुःख संतापा॥
सत सरूप की खोज विचार। उतरें भव मारग से पार॥
निहकरम सरूप सो परमानन्द। तीन काल सो रहे अखण्ड॥
अपने अन्तर करो पछान। बिनसे रोग पावें कल्यान॥
साखी रूप मन माहीं चितार। करम जाल सब होवे छार॥

**साखी रूप पहचान कर, जाये दुर्मत का रोग।**
**'मंगत' ये सत साधन, कोई गुरमुख पाये संजोग॥1129**

साची साधन हिरदे साध। साखी पुरष को अन्तर आराध॥
सदा जीवावे जो देही चाम। सिमर सिमर पावें सुखधाम॥
देह की प्रीत दिन चार विचार। इक दिन त्याग चलें अन्धकार॥
मिथ्या वस्त का मोह दुःखदाई। होवे वंजोग परम दुःख पाई॥

निर्मल कथा करो गुनी विचार। सत सरूप चित खोज सुखसार॥
झूट वस्त झूट भरमाई। मोहवस हो के आवे जाई॥
साखी रूप जप सरजनहार। मोह भरम उतरे बिख सार॥
जीवनहारी शकत जीवावे। पाँच भूत का खेल खिलावे॥
तिस की शकत में सब सुख पेख। जिस आधार चले ये लेख॥
भरमे भूला क्यों भटकाये। सत विसार दूजा चित लाये॥
घनी सयानफ़ अकारथ जाई। मिथ्या संग जो प्रीत लगाई॥
झूट हरख का करें गुमाना। पावें शोक का अन्त निधाना॥
साची सीख सुनो सुखकार। साखी पुरष का करो विचार॥
जिस की शकत सब में वरताई। रंग रंग के नित भोग भुगाई॥
परमानन्द जप आतम देव। निर्मल पावें जग में सेव॥
देह का कर्ता ठाकर जान। हिरदे सिमर परम निधान॥
बारम्बार करो विचार। दुर्मत रोग जाये दुःख सार॥
दृढ़ निश्चय अन्तर चित राख। नाम निरंजन रसना चाख॥
भरमत नास पावें सत सार। सतगुर सीख करे निस्तार॥

**करम जाल सब नाश होये, जीव पाये निज धाम।**
**'मंगत' सार कमाइये, अन्त पाइये बिसराम॥ 1130**

साची सार जगत में जान। जो चित आवे नाम निधान॥
मिथ्या नाम रूप को धारी। अनमत जीव नित भोग विचारी॥
जुग जुग भोगे पाये नहीं सार। मिथ्या नाम रूप अन्धकार॥
सतगुर साजन जब मेल मिलाये। साचे नाम का भेद दिखाये॥
पायो भेद निश्चय इक हूआ। साचे नाम में जीवत मूआ॥
छिन छिन नाम की कीरत गाई। तृष्ना करम सब लीन समाई॥
प्रभ की आज्ञा चित पाई परतीत। साचे ठाकर का गायो गीत॥
छिन छिन साखी पुरष ध्याई। देह ममता की मैल उतराई॥
निश्चल चित जब अन्तर ध्याया। साखी शबद घर परगट पाया॥
सरजनहार अन्तरगत जानी। तिस की आज्ञा मन तन से मानी॥

दीनदयाल की पाई ओट। बिख ममता की नासी खोट॥
खरा सरूप इक साहब सालाहिया। सिमर सिमर के निर्भय पद पाया॥
प्रभ की आज्ञा में मरजीवा होई। सकली माया की भरमन खोई॥
निर्वास सरूप में कियो बिसरामा। अन्तर चित गायो सतनामा॥
बन्धन नास कल्यान समाई। साखी पुरष चित अन्तर गाई॥
दुर्मत भेद सब जाल मिटाया। पूरन पुरख नज़री घर आया॥
प्रभ दाते ने कियो निहाल। बिछड़े जीव पर होये किरपाल॥
अपने रूप संग लयो मिलाई। देह ममता सब ताप मिटाई॥
एके एक भया सब एक। शून करम पाया निर्मल लेख॥

**सर्वज्ञ रूप परापती, अल्पज्ञ दोख विनास।**
**'मंगत' भयो निहाल चित, करम की काटी फाँस॥ 1131**

करम अन्धकार है अती आपारा। मिथ्या देह का अत अन्धकारा॥
मन बुद्ध इन्द्री नित करम करीजे। अनमत जीव भरम में छीजे॥
अपने अपने करम समाई। भिन्न कर चाले अधिक दुःखदाई॥
अनमत जीव भरम भटकाई। उठ उठ धाए ठौर नहीं पाई॥
एक एक की रसना चाखे। तृपत ना होवे धर कूड़ भरवासे॥
सत शबद घर ठाकर ध्याई। दुर्मत जाल सब लीन समाई॥
निहकरम सरूप सदा निष्कामी। करो परापत पार स्वामी॥
शबद पुरख जिस अन्तर जाता। मोह त्याग प्रेम रँगराता॥
साचे शबद की करो सम्भाल। बन्धी छूट करम जंजाल॥
निरमल जुगती करो अन्तर ध्यान। साचे नाम को हिये पछान॥
अबनाशी सिमर मन भये निहाल। करम रोग काटा जंजाल॥
मुकत मैदान में डेरा कीना। शान्त सरूप शबद घर चीना॥
रुच रुच शबद में मेल मिलाई। करम शून परमगत पाई॥
शबद पुरख आपे निर्वाना। आतम जोत सरब परवाना॥
साचा शबद जिस चित में ध्याया। करम शून अभय पद पाया॥
शबद परापत पाई निर्मल शान्त। दुःख द्वन्द सब मिटे भरान्त॥

एक आधार पाया रूप मुरारी। शून करमगत अन्तर धारी॥
बुद्ध निर्मल निहकरम समाई। शबदे रम्मत परम सुख पाई॥
इच्छया चिन्ता सब ताप निवारी। इस्थिर धाम में जाये पधारी॥

**शबद में सुरती लीन भई, मिट गये संशे शोक।**
**'मंगत' शान्त परापती, पाई विजय त्रैलोक॥ 1132**

अखण्ड शबद जिस अन्तर ध्याया। शून करम पद निर्मल पाया॥
सुरत गई सत शबद समाये। करम दोख सब रोग मिटाये॥
देह से न्यारा सत शबद पछानी। जीवन मुकत की कथी कहानी॥
सुरती नित सत ठाकर ध्याई। करम रोग की मलन मिटाई॥
मैं कर्ता अभिमान त्यागा। आज्ञा प्रभ की में चित लागा॥
छिन छिन आज्ञा प्रभ की ध्याई। करम फल रोग का ताप मिटाई॥
करम फल से जब पाई छुटकारी। शून करम पद पायो निर्धारी॥
बिना जतन नहीं सार कोई पाई। बिना साधन नहीं साध कहलाई॥
बिना ज्ञान नहीं साधन कोई। अनंक जतन में जीव फिरोई॥
सतगुर मेल बिना ज्ञान नहीं पाई। जुगा जुगन्तर नर भरमाई॥
बिन विश्वास नहीं सतगुर पाये। बन कन्दरा बहु खोज सराये॥
बिना विचार विश्वास ना पाई। अनमत धार के आवे जाई॥
बिन सतसंग नहीं मिले विचारा। पढ़ पढ़ थाके बहु ग्रंथ कथारा॥
प्रेम बिना नहीं सतसंग पाये। मूढ़मती कुसंग भरमाये॥
पूरन भाग जो प्रेम चित पाई। सरब गुनों की सार लखाई॥
मन अपने में करो विचार। साचा नाम जपो करतार॥
नाम सिमर सब बन्धन नासे। निष्काम भाओ अन्तर परगासे॥
जोती जोत शबद संग मेला। सतगुर सीख पाई जुगत सुखेला॥
साची जुगती प्रभ नाम कमाया। शून करम सत धाम लखाया॥

**साचा नाम अन्तर कियो, अज अबनाशी देव।**
**'मंगत' नित नित सिमर के, पाई साची सेव॥ 1133**

सत संगत सत सुनो विचारा। सत ठाकर सिमरो सुखकारा॥
सिमर सिमर नित प्रेम रस खाओ। दुबधा त्याग निर्भय पद पाओ॥
अज अबनाशी की कीजो सेव। तपन विनासे ठाकर सुख देव॥
बारमबार करो डण्डोत। साखी पुरष तत्त निर्मल जोत॥
प्रेम पुष्प से पूजा कीजो। निर्भय धाम की रसना लीजो॥
शूरा हो के लड़ो मैदान। मारो शत्रू पाँच घमसान॥
खिमा दया की तोप चलाओ। गरब ग़रूर का बुरज उड़ाओ॥
जप का बकतर तप का खण्डा। जीत चलो संग्राम ये ब्रह्मण्डा॥
अन्तर जुगत निशान बठाई। सब शत्रू पर घात चलाई॥
बैठ अकान्त करे विचार। समदृष्ट पाये शबद आपार॥
विजे पाई निर्भय जन होया। सच खण्ड में जाए बसोया॥
निर्वान छतर सिर भूप धराई। तीन लोक दर्शन को आई॥
धन जननी जिस शूरा जाया। त्रैगुन जाल संग्राम मिटाया॥
निज सरूप की पाई जागीरी। इच्छया मोह गई दिलगीरी॥
तृपत भया सुराज घर पाई। गुरमुख सूरे अत शकत दिखाई॥
पूरन होके किया बिसराम। सरब शत्रू छाड चले मुक़ाम॥
आनन्द सरूप मन मगन समाया। धन्न शूरे मोह रोग मिटाया॥
अबनाशी पुरष संग मेल मिलाई। तीन ताप की तृखा बिनसाई॥
गुरमुख साजन घाली घाल। शून करमगत आनन्द भाल॥

**विजय भई संसार से, जब सत की साखी गाई।**
**'मंगत' जीवन सफल भयो, जब आयो प्रभ सरनाई॥ 1134**

प्रभ अपने की सरन विचार। दुर्मत रोग जाये बिख सार॥
दीनदयाल सदा सुखदेव। मूढ़ मनाँ कर तिसकी सेव॥
एक नाम की साखी गाओ। हो मतवाला सत कीरत पाओ॥
नाम बिना नहीं मन ठहराये। नाम बिना नहीं दुर्मत जाये॥
नाम बिना नहीं पाइये योग। नाम बिना नहीं होये अरोग॥
नाम बिना नहीं होये परगास। राग द्वेष मिटे नहीं फास॥

नाम बिना मन एक ना होई। गुरमुख विरले सार परोई॥
नाम बिना नहीं अनुभव परकाशे। अज्ञान अन्धकार नहीं होवत नासे॥
नाम बिना नहीं पाइये विश्वास। नाम बिना नहीं निश्चल स्वास॥
नाम बिना नहीं पावें धीर। जुग जुग धारें करम तक़सीर॥
जुगत बिना नहीं पाइये नाम। जुगत कमाए होए निष्काम॥
सतगुर मेल जुगत नित पाये। साचा नाम निरन्तर गाये॥
सिमर सिमर घट पायो निवास। साचे नाम का भयो परगास॥
अनहद नाद अन्तर परगासी। गवन विनास सतधाम निवासी॥
करम धरम पूरा चित पाया। साचा नाम अन्तर चित ध्याया॥
सहज भाए मन निर्मल होई। नाम सिमर के दुबधा खोई॥
ज्ञान विज्ञान पाया परगास। अन्तरगत सत शबद निवास॥
छिन छिन सुरती सतधाम समाये। अजर पुरष की सेव कमाये॥
सकल कठनाई होई चित दूर। घर में बाजे अनहद तूर॥

**सुन्न समाध अमीरस खानी, ताँ में सुरत समाई।**
**'मंगत' नित आनन्द में, दूजा भाओ विसराई॥ 1135**

साचा शबद जिस हिरदे ध्याया। तीन ताप गई दुर्गम माया॥
शबद खोज सब बिपत निवारी। शबद पुरख आनन्द भंडारी॥
शबद ध्याये पाये पद शून करम। शबद पछाने पाये निर्मल धरम॥
शबद पुरख साखी निरंकार। जप जप रे मन बारमबार॥
देह विकार से मिले ख़ुलासी। जो चित जपे शबद अबनाशी॥
देह मध का रोग विनासे। जो नर सेवे सत शबद सुखरासे॥
देह का मोह होवे तब नास। जब घट पाइये शबद परगास॥
देह की आसा से मुकता पाये। सत परतीत जो शबद ध्याये॥
काल रूप से पाये कल्याना। जो जन कथे सत शबद निधाना॥
सकल चक्कर माया का नासी। खोज करें जो शबद अबनाशी॥
पूरन रूप सो सरब समाई। तिस को सिमर नित सुख वरताई॥
दुःख जंजाल से सो जन छूटे। पुरख नारायन अन्तर रस लूटे॥
दिव्य परकाश शबद निर्वान। निश्चल हो के करें ध्यान॥

नौ द्वार से सुरती ठाकें। बान्ध पवन नाम रस चाखें॥
इरध उरध करें निगरानी। सिमरें नाम अखण्ड निरवानी॥
पवन गुंजार गगन में करी। दसवें द्वार की सोझी पड़ी॥
झिलमिल जोती का चमकार। नज़री आया पुरख निर्धार॥
ताँ में सुरती लीन समाई। करम त्याग शबद रस खाई॥
वारापार नहीं पायें भेद। अगम शबद कथ थाके वेद॥

**अन्तरगत में सोधया, आलख शबद पुनीत।**
**'मंगत' तिस के ध्यान से, काल करम लयो जीत॥ 1136**

सत शबद जिस घट परगासा। पूरन पुरख पूरन पाई आसा॥
ब्रह्म ज्ञानी सो ही तत्तवेता। सो समदरसी पुरख निरभेखा॥
साचा शबद पाया निर्वान। निश्चल हूआ करके ध्यान॥
सुरत समाई एके रंग। करम जाल भयो सब भंग॥
अन्तर बाहर कीरत सत गाई। सत शबद में ध्यान लगाई॥
मिथ्या रोग गयो सन्ताप। सत ठाकर का कीना जाप॥
मन को राखे पवन आधार। पीवे साचा नाम करतार॥
पल पल निर्मल जुगत कमाये। नेहचल हो के आवे जाये॥
सुन्न सरूप हो अन्तर में जाई। सुन्न हो के बाहर आई॥
अन्तर बाहर दो सम कर राखी। आलख शबद की परसे साखी॥
सुन्न गुफ़ा में करे ध्यान। अनहद गरजे सहज की तान॥
मूल बिना बरिच्छ परगासे। फूल बिना फल करें बिलासे॥
ताँ में सुरती खेल खिलाई। करम रोग सब दोख मिटाई॥
ठाकर साचा शबद घर पाया। सहज समाध सतनाम कमाया॥
मूल द्वार में पवन को बांधा। साचा नाम निरन्तर सांधा॥
विरत त्याग मन भयो इकागर। साखी शबद घट भयो उजागर॥
सहज सहज ताँ ध्यान लगाई। दुर्मत रोग मैल उतराई॥
सिमर सिमर सत शबद सुखरासी। भव बन्धन की काटी फाँसी॥
निर्भय धाम में जाये समाया। शून करम का सब भेद लखाया॥

**शबद सुरत एका भई, सच खण्ड कीना वास।**
**'मंगत' दुबधा सब मिटी, काल करम की प्यास॥1137**

अन्तर चित्त जिस सिमरन पाया। मारग मुकत तिस भेद लखाया॥
भेख किये ना मुकती होई। पाखंड माहीं जनम सब खोई॥
साचा नाम मन माहीं समाये। सकल देही का ताप बिनसाये॥
साचा नाम होवे परगास। ग्रहन त्याग की बिनसे फास॥
प्रभ की आज्ञा घट अन्तर जानी। करम फल इच्छया की होवे हानी॥
निर्मल नाम नित करो विचार। सकल रोग से पावें छुटकार॥
छोड़ सयानफ़ इक नाम को चेत। सत ठाकर का लख सत लेख॥
बारम्बार करो परनामा। सत सरूप शबद सुखधामा॥
पूरन धरम की पावें सार। जो चित राखे नाम आधार॥
पूरन ज्ञान पावें परकाश। दृढ़ निश्चय जो नाम उपास॥
सब साधन का मूल है नाम। गुरमुख जपे पावे बिसराम॥
नाम जपे सो ही सन्यासी। शबद पछाने करे अन्तर बासी॥
नाम जपे सो ही बैरागी। आलख शबद पाये अनुरागी॥
सब मतों का सार है नाम। जो सिमरे पावे बिसराम॥
मन का निर्मल चेता राख। नाम रसायन रसना चाख॥
साचे नाम को पलक ना भूल। बिनस जायें सब संशे सूल॥
साचा नाम जपो चित माईं। दृढ़ विश्वास सिमर सुख थाईं॥
झूट विकार जाये दुर्मत रोग। साचा नाम चित पाओ संजोग॥
बारम्बार करूँ पुकार। निर्मल नाम जपो सुखसार॥

**नाम सिमर के पाया, ब्रह्म ज्ञान आगाध।**
**'मंगत' तिसमें विचर के, नित चित रहे समाध॥1138**

शून्यंगकार शबद निर्वानी। खोज करो तिस को मुनि ज्ञानी॥
ना वोह आवे ना वोह जाई। जल थल ठाकर पूर समाई॥
निर्मल प्रीती राखो चरना। बन्ध मुकत का पाओ निरना॥
परमानन्द सो आप समाई। सेव करो सब ताप मिट जाई॥

साचा ठाकर साचा देव। सत परमेश्वर शबद सुख सेव॥
शबद स्वामी सरब बिराजा। इत उत सरब शबद का काजा॥
साचे शबद की जिस प्रीत कमाई। शून करम तत्त निर्मल ध्याई॥
मारग ये परबोध पछान। साखी पुरष जप शबद निर्वान॥
अपना सरूप सत करो विचार। कल्पना कलप होवे सब छार॥
घट अन्तर कर साची सेव। पल पल सार सिमर सत देव॥
करम बन्धन सब ताप निवारी। मुकत सरूप सत शबद विचारी॥
अबगत नाद बजे नित तूरा। करे पछान होवे जन पूरा॥
नाद निरत में सुरत समाई। करम शून तब भेद अर्थाई॥
करम त्याग निहकरम ना होई। जब तक इच्छया चक्कर फिरोई॥
इच्छया भरम जो मूल चुकाई। करम शून तब भेद लखाई॥
करम फल मोह जब तक गरासी। मिटे ना तृष्ना काल की फाँसी॥
प्रभ आज्ञा में नहीं करम फल त्यागे। नहीं मिले बैराग पुरख अनुरागे॥
बिना बैराग सत निश्चय ना पाई। मोह माया में फिर फिर आई॥
मिल साध संगत सत सार पहचानी। भरमन त्याग मन नाम बखानी॥

**प्रभ चरनी विश्वास भयो, चित उपजे सत अनुराग।**
**'मंगत' उपरस होया, पाया परम सुख वैराग॥ 1139**

एक साहब की बिरह चित पाई। सकल विकार से शान्त समाई॥
अन्तर बाहर साहब सत जानी। दृढ़ निश्चय से सेव पहचानी॥
निर्मल नाम सतगुर की दीखया। अन्तर बाहर नित करी परीख्या॥
औगन नास मन इक रंग होई। सत ठाकर की सेव लखोई॥
इच्छया चिन्ता मध मान गँवाया। एक साहब पर निश्चय पाया॥
झूट देही के हरे विकार। निश्चे पायो नाम आधार॥
नित नित पीवे नाम की रसना। सुपन समान देखे जग रचना॥
संकल्प विकल्प मन मनसा नासी। एक ध्यान सतनाम उपासी॥
छिन छिन राखे मन नाम आधार। साचा साहब परम सुखकार॥
काल भय सकल चित नासी। नित आनन्द शान्त परगासी॥

शबद कला घर परगट पाई। निर्मल ध्यान मन तन समाई॥
सत शबद को घट अन्तर पूजे। अनन प्रीत सेवा चित सूझे॥
कारन कर्ता कर जपे नित देवा। निश्चल ध्यान होवे निरभेवा॥
साखी पुरष सत सरजनहार। तन मन देखे तिसका पासार॥
अपना आप ममता करे नास। साचे शबद में लेवे निवास॥
त्रैगुन माया सब भरम विनासी। शबद सरूप जोत परगासी॥
नित ही नित मन करे करीड़ा। नाम जपे मिटे भरम की पीड़ा॥
साचा ठाकर अत ही सलाहिये। सिमर सिमर के परमसुख पाइये॥
प्रभ का नाम अत आनन्द देवे। होये तृपत नहीं गवन को लेवे॥
ऐसा निर्मल नाम नित ध्याओ। करम जाल से तृपत समाओ॥
माया बन्धन तब होवे खुलास। निर्भय नाम पावें परगास॥

**साचे नाम को सिमरिये, मन चित प्रीत लगाये।**
**'मंगत' संकट सब मिटे, बौहड़ गरभ नहीं पाये॥ 1140**

साचा स्वामी नित करो विचार। सकल गुन निधान सुख सार॥
प्रभ का सिमरन बुद्धी परगासे। ज्ञान विज्ञान में करे निवासे॥
दृढ़ चित एको आसा राख। सतगुर मिल सुन निर्मल साख॥
अपना आप गरब को त्याग। सत ठाकर की सेवा लाग॥
निष्काम भगत चित नाम बखान। आज्ञा प्रभ की हिरदे मान॥
मोह जंजाल माया का जाई। शान्त सरूप मिले प्रभताई॥
जिस सुख को खोजें मुनि देवा। शिव सनकादिक कीजें सेवा॥
सो सुख प्रभ का नाम पहचान। निश्चल चित नित करो ध्यान॥
राग द्वेष अगन सब जाई। सत सरूप में तृपत समाई॥
सकल शकत है प्रभ के हाथ। मान त्याग हर रसना चाख॥
सब कुछ महमा साहब की जान। जल थल पूरन सो भगवान॥
सरब जीयाँ संग राखें प्रीत। पर उपकार करे शुद्ध नीत॥
अपनी चित की इच्छया त्याग। साचा नाम सिमरो वडभाग॥
तत्त परकाश जोत दरसाई। करम बन्धन सब लीन समाई॥

मनसा पूरन चित नाम परोई। निश्चल बुद्धी सत धाम बसोई॥
प्रभ के चरनी सीस निवायो। सत कर मान ठाकर सुखरायो॥
सकल तपन करे तेरी दूर। गुन निधान साहब भरपूर॥
एक निश्चय चित चरन समाई। दुर्मत रोग माया का जाई॥
आलख शबद घट अन्तर जानी। नित नित पूजे प्रभ निर्वानी॥

**साची भगती घाल के, पायो शबद आगाध।**
**'मंगत' सिमरन पाया, एक नाम बिसमाद॥ 1141**

सत सिमरन जब प्रभ का पाया। निर्भय धाम में जाये समाया॥
अपने आप पाई परतीत। भयो परसन्न जप नाम पुनीत॥
सत ठाकर का भय चित्त पायो। सरब शकत का आधार लखायो॥
भय से भाओ भगत को पाई। उपजी बिरह सतनाम समाई॥
नाम सिमर के तत्त रूप लखाया। अज अजन्मा पुरख निरमाया॥
निर्मल प्रीत नित चरन समाई। प्रभ दाते की साखी गाई॥
तूँ स्वामी सत सरजनहार। करो वन्दना बारम्बार॥
अपने चरन की दीजो सेवा। तूँ पारगरामी पुरख सुख देवा॥
मन की दुबधा दुर्मत जाये। साची प्रीती तेरे नाम समाये॥
बारम्बार करूँ अरदास। प्रभ जी काटो भरम की फास॥
तूँ दीनदयाल सरब का स्वामी। दीजो प्रीत सतनाम अनामी॥
मन मेरे का मोह चुकायो। अपने चरनी वास करायो॥
भवसिन्धू से करो उद्धार। नित नित चरनी करूँ पुकार॥
तूँ दाता नित सुख वरताई। साची शान्त दीजो प्रभताई॥
इक चित ध्यान करूँ दिन रात। आवागवन जाये मन कमज़ात॥
तेरी आज्ञा में तन मन रहाये। आप त्याग तेरे नाम समाये॥
पूरन पुरख करो बख़शीश। साची शरधा चरन की ईश॥
नित भिखारी तेरे दर आया। तृपत करो प्रभ पूरन राया॥
नाम ध्यान पाऊँ साची सेवा। होओ दयाल देवन के देवा॥

**नित ही नित सिमरन करूँ, साचा नाम अखण्ड।**
**'मंगत' निर्मल प्रीत से, मन की मिटे द्वन्द॥1142**

दीनदयाल कीनी बख़शीश। पाया नाम अमोल जगदीश॥
सिमर सिमर मन दुबधा टारी। सत ठाकर के चरन पधारी॥
मिथ्या देह से उपरस होई। साचा नाम चित माहीं परोई॥
मोह अन्धकार सकल दुःख नासा। अनहद नाद पुरख परगासा॥
मनुआँ लागा शबद के संग। भूल गये सब दुर्मत रंग॥
तूँ तूँ करके चरन समाई। प्रभ दाते की अत वडयाई॥
हंगता मूल गया परमाद। पाया शबद पुरख आनाद॥
पल पल तिस की आज्ञा मानी। करनेहार साहब पहचानी॥
आदी अन्ती सत समाई। सत ठाकर की कीरत पाई॥
मिथ्या भरम गया दुःख मूल। साचा शबद पाया अतोल॥
शबद में सुरती निर्मल राखी। निर्भय धाम की रसना चाखी॥
सत शबद जब घट परगासी। दुर्मत माया भई विनासी॥
सत सरूप मिल शोभा पाई। आवागवन सब ताप मिटाई॥
पार पुरख घर नज़री आया। रल मिल सन्ताँ मंगल गाया॥
मिथ्या छोड़ अबनासी ध्याया। भय भरम सब मूल चुकाया॥
सत ठाकर के रूप समाई। हंग विकार गया दुःखदाई॥
देह से निर्देह पद को पाया। काल त्याग के अकाल ध्याया॥
परमानन्द मिल मनसा भई पूरी। निहकरम सरूप गत लखी हज़ूरी॥
जिस जन पाया सत शबद आनादी। करम शून भय मिटी व्याधी॥

**शबद में जीवन पाया, दूर भयो परमाद।**
**'मंगत' मिटी सब वासना, पाया नाम परशाद॥1143**

शबद बिना नहीं बन्धन नासे। कोट जनम नित काल गरासे॥
शबद बिना बहु जतना धारी। दुर्मत रोग नित करे ख़वारी॥
शबद बिना मन धीर ना पाये। करम फाँस धर आवे जाये॥
शबद बिना नहीं अर्थ कछु पाई। आस सन्देस में आवे जाई॥
शबद बिना मन मुगध गँवार। नित भरमें विच खानी चार॥

शबद बिना नहीं निश्चय पाई। अन्ध भरवास में आवे जाई॥
शबद बिना नहीं अन्तर परकास। मनमुख जीव नित भरम निवास॥
शबद बिना बिरथा देह काढ़े। अती तपस्या जो जीवन धारे॥
शबद बिना नहीं जाये दुर्मत रोग। पाइये शबद सतगुर संजोग॥
अन्तरगत नहीं शबद पछाता। कूड़ भेख में रहे रँगराता॥
अन्तर अगन विकार की जारी। बाहरों भेख अतीत कथारी॥
अन्तर दुर्मत देह अभिमाना। मुख से कथे तत्त ब्रह्म ज्ञाना॥
देह मध धार निज ब्रह्म कहलाई। सो पाखंडी नरक दर जाई॥
कथनी से कुछ ना सरे काजा। जो चित नहीं पाये शबद समाजा॥
साचे शबद की कीरत भाल। बिनस जाये दुर्मत जंजाल॥
ममता धार जो ज्ञान कथाई। अहं ब्रह्म-अस्मी जो वाक अर्थाई॥
भरम में भूला ठौर ना पाये। अन्तरगत नित ताप तपाये॥
पेट के कारन पाखंड वरताई। दुर्मत रोग भरम नहीं जाई॥
अनमत मूढ़े नित आवें जायें। दुर्मत धार जो ब्रह्म कहलायें॥

**अन्तर दुर्मत वासना, मुख से कथे ज्ञान।**
**'मंगत' सो जन जगत में, जानो रूप स्वान॥ 1144**

करम वासना जो नहीं नासी। कभूँ ना पाये ब्रह्म परकासी॥
तृष्ना अगन जो अन्तर जारी। ब्रह्म सरूप नहीं मेल विचारी॥
मिथ्या देह जो सत कर जानी। ब्रह्म निर्वान नहीं परसे अज्ञानी॥
अन्तर दुर्मत रोग व्यापा। वेदान्त कथे नहीं मिटे सन्तापा॥
मन की वासना मन में रही। बहु विचार शान्त ना देई॥
अन्तर जीया हंग विकारी। मुख से रूप ब्रह्म उचारी॥
कथनी ज्ञान नहीं पार कोई पाये। दुष्ट भरम में आवे जाये॥
अन्तर ममता विषे विकारा। मुख से रूप निहकरम विचारा॥
राग द्वेष चित अगन रहाई। ब्रह्म शान्त नहीं हिरदे आई॥
साधन छोड़ कथनी बहु धारी। तोते वाँग बहु ज्ञान कथारी॥
आनन्द सरूप नहीं हिरदे आई। द्वन्द जाल में नित भरमाई॥

अन्तर मन दुर्मत को धारी। मुख से कथे अद्वैत कथारी॥
अन्तर जीव संशे भरमाई। मुख से एक ब्रह्म दिखलाई॥
पाखण्ड धार नहीं पाये शान्त। भरमे जीया धर अधिक भरान्त॥
समता बुद्धी नहीं पाये परगास। बिख ममता नहीं होवे नास॥
कपटी ज्ञानी बान्धे जायें। कथनी धार जो सिद्ध कहलायें॥
मन अपने का नहीं शंका नास्यो। जनम मरन भय माहीं गरास्यो॥
देह अभिमान नहीं गयो परमाद। काम क्रोध चित धरी उपाध॥
पलक पलक बुद्धी भरमाये। कथनी ज्ञान सब अकारथ जाये॥

**मन का संशय ना मिटे, जो नित वाचें कोट ग्रन्थ।**
**'मंगत' बिन भेदी नहीं पाइये, आलख शबद का पंथ॥ 1145**

जो चित में धरें राग द्वेषा। कथनी ज्ञान नहीं हरे संदेशा॥
लाभ हान अन्तर लिपटाई। छिन छिन जीया अन्ध भरमाई॥
अद्वैतवाद नहीं मुकता दे। कोट जनम धर संकट ले॥
कथनी छोड़ कुछ करनी धार। अपने आप का करो सुधार॥
ब्रह्म सरूप नहीं परगट जाता। घट अन्तर नहीं भेद पछाता॥
मुख से कथनी धीर ना देई। भरम धार संकट बहु सेई॥
जब तक नहीं चित भूल चुकाई। ममता रोग नहीं जीव का जाई॥
जब लग अन्तर हँग विकार। देह ममता में होये अंगार॥
जब लग अन्तर मनोरथ धारी। अनेक वासना करी ख़वारी॥
जब लग अन्तर करम फल द्वन्द। हिरख मान धारे दुर्गन्ध॥
जब लग अन्तर मनुआँ नहीं आई। बाहरमुख की भरमन नहीं जाई॥
काम क्रोध नहीं मिटे विकारा। छल कपट धारे दु:ख भारा॥
जब लग अन्तर धारी चतुराई। प्रेम की रसना नहीं हिरदे आई॥
जब लग आपा पर पहचानी। कनक कामनी मोह लिपटानी॥
तब लग सब ही बादमुबादा। मुख से कथे जो ज्ञान आगाधा॥
अत अन्धकार दुर्मत का जाल। मिले नहीं शान्त गरसे जमकाल॥
भय में जनमे भय में जाई। बिन सत साधन सार नहीं पाई॥

मोह माया अन्तर परवान। मिले नहीं शान्त ब्रह्म निर्वान॥
आसा तृष्ना अगन घट जारी। कथनी ज्ञान नहीं देवे छुटकारी॥

**दुर्मत भरम को धार जो, आप को ब्रह्म कहलाये।**
**'मंगत' सो ही मनमुखी, पावें घनी सज़ाये॥ 1146**

कथनी धार औराँ भरमाई। बहु भाँत दिखावे अपनी चतुराई॥
अनंक परमान दे करे विचारा। मन अपने का नहीं संकट टारा॥
बादमुबाद में जनम गँवाई। मन की ममता मन में रहाई॥
कथनी ज्ञान ब्यौहार बनाई। पेट के कारन बहुरंग दिखलाई॥
आप छल माईं औराँ छल देवे। भाँतक भाँत की रसना सेवे॥
सो साधू हैं रूप भुजंग। कथनी ज़हर लगावें डंग॥
साचा मारग धरम भुलाई। बादमुबाद नित ही वरताई॥
कूड़ कपट संकट को धारी। तिस जन की होये भली ख़वारी॥
अन्तर विख अगन परमादी। मुख से बने अद्वैत का वादी॥
झूटे ज्ञानी नीच गत पायें। कोट जनम संकट भुगतायें॥
पच पच मरें धीर नहीं पावें। कथनी साधू नरक को जावें॥
कपटी साधू प्रभ का चोर। पाखण्ड वरताए करे करम कठोर॥
मुख से और मन और रहाई। भेख धार दुनिया भरमाई॥
कथ कथ सकली औध गँवाई। ब्रह्म आनन्द नहीं अन्तर पाई॥
मनमुख मूढ़े नित आवें जायें। पाखण्ड धार बहुता दुःख पायें॥
कोट जतन अकारथ जाई। मन की ममता नित भरमाई॥
साचा भेद शबद विचार। परसें ब्रह्म रूप निर्धार॥
ब्रह्म इस्थिती पावें निर्वान। अद्वैत वादी तब होवे परधान॥
ज्यों कथनी राज तेज नहीं देवे। झूट कलपना मूढ़ा सेवे॥
एह बिध गत परमारथ जान। कथनी देवे नहीं कल्यान॥
मन का दुर्मत जाल करे नास। तब घट परसे ब्रह्म परकाश॥
निहचल बुद्धी धरे ध्यान। हंग ब्रह्म तब भेद पछान॥
देह इन्द्री से भया अतीत। वासना त्याग के भयो पुनीत॥

दुर्मत भरम संसा मिटाई। अपने रूप संग मेल मिलाई॥
सो ज्ञानी तत्त का वेता। ब्रह्म परकाश अन्तर में पेखा॥

**शबद रूप परकासया, जो घट अन्तर मीत।**
**'मंगत' मनसा लीन भई, पायो ब्रह्म पुनीत॥ 1147**

देह की ममता जाल विनासी। अन्तरगत पायो अबनासी॥
ब्रह्म परकाश शबद निर्वानी। अन्तर परगट करे ज्ञानी॥
तिसमें सुरती निश्चल गाढ़ी। तीन ताप का दोख निवारी॥
करम वासना मैल को धोई। साचे शबद में सुरत परोई॥
मान त्याग होये निरमाना। बाद त्याग जग सेव पछाना॥
अपने अन्तर सन्तुष्ट रहाई। निर्मल शबद की रसना खाई॥
कर्ता भाओ अभिमान निवारी। निहकरम सरूप में सुरता धारी॥
विगन त्याग नित धीर समाई। मन अपने का खेद मिटाई॥
अन्तर जुगत सतनाम का आहारी। प्रान की नौका में सुरता धारी॥
इन्द्री विकार दूषना धोई। निर्मल प्रीत प्रभ हिये परोई॥
अपना आप तजे परमाद। जड़ देही की हरे व्याध॥
ब्रह्म परकाश जोत परगासी। अनहद नाद शबद अबनासी॥
अन्तर सुरती चढ़े आकास। साचे शबद संग करे बिलास॥
मोह माया अन्धकार सब जाई। परतख ठाकर के दर्शन पाई॥
मिथ्या देह का मिटा गुमान। घर में पायो शबद निर्वान॥
निहकरम सरूप शबद अखण्ड। पल पल सुरती परसे आनन्द॥
शबद पछान सब तृखा विनासी। पूरन रूप पायो अबनासी॥
द्वन्द विकार गयो सन्ताप। ब्रह्मज्ञानी पायो ब्रह्म मिलाप॥
आपा पर सब दोख मिटाई। शून करम पद निर्मल ध्याई॥

**ब्रह्म सरूप पहचानया, जो घट अन्तर मीत।**
**'मंगत' दुर्मत जाल से, ये जीव भयो पुनीत॥1148**

बारम्बार कर तत्त विचार। अपने आप का करो सुधार॥

पाखण्ड धार क्यों भरमायें। और जीवों में खेद वरतायें॥
शान्त सरूप दिसा विचार। जो कथनी देवे सुख सार॥
दुर्मत रोग का करो उपाये। रोग विनास सब ताप मिट जाये॥
दुर्मत रोग भेद आपार। बिछड़ा जीव भया गँवार॥
दुर्मत रोग अत गहरी भीत। अनमत जीव को करे पलीत॥
दुर्मत रोग अत कठना जाल। अनमत जीव नित ही दुःख भाल॥
दुर्मत रोग भरम भेद लखाई। दुर्मत नासे ब्रह्म रूप हो जाई॥
दुर्मत धार जो ब्रह्म कहलाई। सो ही मूरख जानो अधिकाई॥
कथनी का नहीं मारग मीत। दुर्मत रोग अत भरम की भीत॥
अनंक जतन जो भी नर धारी। दुर्मत मैल नहीं उतरे पारी॥
मारग अनेक में जीया भरमाई। अनंक भेख देही वरताई॥
कठन तपस्या बियाबान निवासी। अनंक साधन धारे भरवासी॥
तो भी दुर्मत मैल ना जाई। अबगत माया साहब दिखलाई॥
नाना भाँत करे पुन्न दान। जप तप संजम मारग पहचान॥
अनेक इतहास विद्या विचारी। तो भी दुर्मत नहीं मिटे ख़वारी॥
तीरथ परसे बहु धार मनोरथ। ममता धार सब जाये अकारथ॥
मारग भगती सहज पछान। दुर्मत रोग मिटे अभिमान॥
मान हरे होए प्रेम परगास। ब्रह्म सरूप में तब लयो निवास॥

**साची भगती खोज तूँ, छोड़ कथनी विकार।**
**'मंगत' कथनी से ना मिटे, माया अत अन्धकार॥ 1149**

साची करनी हिरदे धार। साचा नाम सिमर करतार॥
ज्ञान विज्ञान की सार पछान। साचा नाम एक भगवान॥
एक नाम संग करो परीत। दुर्मत रोग सब जाये पलीत॥
सत्गुर साचा मिल सीख विचार। अन्तरगत सिमर सुखसार॥
मन का सिमरन रूप पछान। जैसी सिमरे होये ग़लतान॥
माया सिमरे माया में भरमाई। सिमरे राम तब राम समाई॥
ताँ सों मारग करो विचार। माया छोड़ सिमर करतार॥

झूट सिमरनी चित से त्याग। साचा सिमरन नाम में लाग॥
एक अनुराग साहब का राख। अबनाशी पुरष की रसना चाख॥
देह का कारन कर्ता जोये। सदा ध्याओ ठाकर सोये॥
देह का जो नित पालनहारा। भज बिशम्भर परम सुख सारा॥
देह को जो दे मान वडयाई। तिस ठाकर की हो सरनाई।
देह को जो सरजीवत करी। सदा ध्याओ साचा हरी॥
बारम्बार करो परनाम। साचा ठाकर परम सुखधाम॥
नित ही निर्मल कीरत भाख। उठ परभाती नाम को चाख॥
जग आवन का करो विचार। कह कारन आया संसार॥
साचा वनज सत धरम कमायो। सत वक्खर की रास को पायो॥
ये ही लाभ जग आवन पायें। जो चित साची सेव कमायें॥
सत ठाकर संग करें परीत। अन्त चलें नर भवजल जीत॥

**एक साहब की प्रीत कर, दूजा भाओ त्याग।**
**'मंगत' भरमन छाड़ के, हर कीरत में लाग॥ 1150**

साचा साहब सब बिपत निवारी। तिस दाते दर हो भिखारी।
अत ही महमा अपरम आपार। साचा ठाकर हिरदे विचार॥
पल में नाना खेल खिलाई। प्रभ दाते की सुन प्रभताई॥
बिन्द से कीना पिण्ड आकार। नाना रंग रचा संसार॥
बाज़ी धार आप रहे अलोप। खेले बाज़ी अधिक अनूप॥
रात दिवस की चौसर धारी। खेले खेल साहब खिलाड़ी॥
सिद्ध मुनी जुग जुग कर ध्यायें। तिस दाते का पार ना पायें॥
ऊँची सिफ़त ऊँचा मुक़ाम। प्रभ दाते का ऊँचा धाम॥
सब जीयाँ की बनत बनाई। सब की गत मित आपे पाई॥
आपे दाना गुनी आपार। अतुल शकत वडी सरकार॥
सागर जल अथाह रचाई। नदियाँ नीर असगाह बहाई॥
नीर पर थल को परगासा। वाह वाह खेल खेलें अबनासा॥
बिन हिकमत के खेल बनाई। कोई तदबीर लेख नहीं पाई॥
गुनी ज्ञानी बड़े सयाने। चक्कर देख के भये हैराने॥

तेरी करनी तू जाने आप। साचा साहब तेरा परताप॥
अनहोनी को परगट करें। शकत अथाह ठाकर तू धरें॥
सब ही जन्त इक सूत परोई। तू अपरम आपार अलेप रहोई॥
तेरी महमा तू जाने आप। साहब मेरे तेरा अत परताप॥
ना कुछ जाना न जानन योग। एको साहब तू उस्तत योग॥

**अपनी महमाँ धार के, अचरज खेल रचाई।**
**'मंगत' आपे आप तूँ, नित तेरी सरनाई॥ 1151**

सकल जगत का तू ही मानी। साचा ठाकर अतुल परमानी॥
अपनी महमाँ नित वरताई। भाँतक भाँत खेल रचाई॥
ओड़क एको सच तूँ आप। साहब साचे तेरा परताप॥
निर्मल कीरत अपनी प्रभ दीजो। मूढ़े जीव को चरनी लीजो॥
मिथ्या मोह अन्धकार विनासो। अपनी कीरत अन्तर परगासो॥
साची प्रीती तेरे चरन रहाई। दात करो प्रभ सार सुखदाई॥
तूँ ठाकर नित मेरा स्वामी। तुध आधार करूँ बिसरामी॥
सरब शकत तेरी वरताई। अनाशक्त मैं मूढ़ आगाही॥
नित ही तेरी सरनी आया। राख लीजो पूरन प्रभराया॥
साची भगती चित चरन समाये। साची कीरत तेरी चित आये॥
साचा नाम तेरा नित गाऊँ। साचा ध्यान तेरा नित पाऊँ॥
साची महमा तेरी आये विचार। उस्तत कीजूँ प्रभ बारम्बार॥
साचा परकाश तेरा परगासे। मोह अन्धकार का कीजो नासे॥
अपनी प्रभता आपे दिखलाओ। मूढ़े जीव का भरम चुकाओ॥
नौका ज्ञान करो बख़शीश। तूँ ठाकर सरब का ईश॥
निर्मल बुद्धी दीजो विज्ञान। परसूँ तेरा नाम सुजान॥
तूँ ही प्रभ सब ताप निवारी। नित ही नित तेरे चरन बलिहारी॥
साकत जीव की सुनो अरदास। मोह भरम की काटो फास॥
तूँ दाता मैं माँगनहार। साची भगती करो दात दातार॥

**नमों नमों नित चरन को, धर के अपना सीस।**
**'मंगत' माँगे नाम रस, दात करो जगदीश॥1152**

साचे नाम की रसना गाऊँ। साचा नाम चित माहीं ध्याऊँ॥
साची प्रीती नित करूँ चितार। साची महमा नित करूँ विचार॥
साचा देखूं तुझ को प्रभ एक। निर्मल चित से राखूँ टेक॥
माया भरम जाल दुःख जाये। तेरी कीरत चित माहीं समाये॥
पूरन शक्त तू आपार निधान। जल थल तूँ ही एको परवान॥
निमख निमख दीजो सत परतीत। अन्तरगत गाऊँ नित गीत॥
बारम्बार धरूँ भरवास। तूँ अबनाशी तेरी चित आस॥
माया संकट हरो सब ताप। तूँ दीनदयाल सरब व्याप॥
मोह माया की फाँसी काटो देव। निर्मल प्रीत दीजो सत सेव॥
अन्तर मन में नाम कमाऊँ। सिमर सिमर के नित तृपताऊँ॥
आदी अन्ती मद्ध एक तूँ आप। पूरन पूर तेरा परताप॥
निर्मल नाम पाऊँ प्रभ देव। चित में बाँछूँ तेरी सेव॥
घना रोग सब मन का जाये। तेरा सिमरन चित माहीं समाये॥
सरब त्याग पाऊँ तेरा आधार। निमख निमख करूँ निमस्कार॥
मन की कठन बिपता सब जाये। सहज सील नाम तेरा गाये॥
अन्तर बाहिर चारे कुण्ट। पूरन देखूँ तोहे भगवन्त॥
द्वैत भरम जाये अन्धकार। शुद्ध सरूप पाऊँ सुखसार॥
सिमर सिमर मन करूँ निहाल। अनन प्रीती पाऊँ दीनदयाल॥
बेनती मेरी सुन ठाकर मेरे। करो बख़शीश हरो पाप घनेरे॥

**पाप कूप भसमत करो, दीजो साचा नाम।**
**'मंगत' तूँ समरथ हैं, सरब शकत सुख धाम॥1153**

पूर मनोरथ मनुआँ तृपताई। सत ठाकर की पाई सरनाई॥
नित सरनागत जीव रहाई। तपन विनास परम सुख पाई॥
नित ही आस साहब की राखी। मिटे विकार पाई सत साखी॥
नित ही ओट जिस राम पछानी। आवागमन नासी दुःख खानी॥
पूरन पुरख की जो चरनी आये। मन बाँछत सो ही फल पाये॥

नित ही जीया तूँ सरन पछान। पतित पावन दाता भगवान॥
नित ही जीया तूँ नाम रस चाख। साचा ठाकर लेवे अन्त को राख॥
जीवत में सत कार कमाओ। साची भगती प्रभचरन ध्याओ॥
जीवत में धारो सत सेवा। पारगरामी हरखे प्रभ देवा॥
जीवत में परहित पछान। दुर्मत दृष्ट जाये बिख खान॥
जीवत में नित कीजो पुन्न दान। अन्त को पावें तूँ कल्यान॥
जीवत में हरि नाम को जाप। जनम मरन जाये सन्ताप॥
जीवत में सत कथा विचार। साचा ठाकर सिमर सुख सार॥
जीवत में मारग सत भाल। जाँ को परसत होवें निहाल॥
जीवत में प्रभ भगती पाओ। अन्त मुकत धाम को जाओ॥
जीवत में सुन सत परसंग। अन्तकाल पावें सुख संग॥
जीवत में सब वैर मिटाओ। सरब जीयाँ संग प्रेम कमाओ॥
चार दिनाँ जग जीवन खेल। सत ठाकर से कीजो मेल॥
प्रभ का मेल परम सुख रास। बौहड़ ना धारें गरभ की फास॥

**सत करनी नर कीजिये, जब लग प्रान की दौड़।**
**'मंगत' जीवत घालिये, अन्त पायें सत ठौर॥ 1154**

सत ठाकर की सेव कमाओ। जिस की दात सरब कुछ पाओ॥
देह का कोट जो सरजनहार। तिस के चरन जाओ बलिहार॥
अतुल वडयाई दीनी जिस दाते। अन्तर चित सिमरो सुखराते॥
ज्ञान इन्द्री किस भाँत बनाई। करम इन्द्री क्या खेल रचाई॥
मन बुद्धी अन्तर परगासी। खेले खेल साहब अबनासी॥
सरब को जीवन देवे आप। सरब न्यारा रहे व्याप॥
प्रभ की दात अनमत भुलाई। अपनी कर के भोग भोगाई॥
भोगे भोग रोग को पाये। पर की वस्त पाप अधिकाये॥
मूढ़े जीया करो विचार। अपनी वस्त खोज सुखसार॥
पर की वस्त का राखें मान। इक दिन पावें गुनी जन हान॥
पर की वस्त संग मोह जो राखी। सहवे डण्ड नित दुःख को चाखी॥

निर्मल बुद्धी करो विचार। पर की वस्त नहीं हिरदे धार॥
पर की वस्त ओड़क बेगानी। झूट भरोसा देवे हानी॥
सुकृत ज्ञान करो विचार। पर की वस्त मिटे दुःख सार॥
तन मन धन तेरा कुछ नाहीं। हिरदे खोज सुख सार लखाईं॥
किस वस्तू का भया तूँ मानी। सब की बनत साहब पहचानी॥
सो बनावे सो गरावे। तेरी करनी पेश ना जावे॥
अपनी वस्तु जो जिस बिध लखाये। मूढ़ा जीव क्यों पछताये॥
पर वस्तु का हेत दुःखदाई। पलक पलक जन भय समाई॥

**पर वस्तु के हेत से, उपजे बहुरंग पाप।**
**'मंगत' ये अज्ञान ही, देवे अत सन्ताप॥ 1155**

प्रभ की दात प्रभ चरनी सौंप। झूट मोह की त्यागो चौंप॥
जिसकी वस्त तिस हुकम पछान। पावें आनन्द सार निधान॥
सकल पाप का मूल है ये ही। प्रभ की वस्त अपनी कर लेई॥
तिस का हुकम दियो विसार। अपनी हिकमत चलाई कार॥
बहुरंग हिकमत करे दिन रात। जाये अकारथ रोये अनाथ॥
जिसकी वस्त ओड़क सो ही पाये। खरा न्याय सुनो गुनी राये॥
प्रभ की वस्त प्रभ करी सम्भाल। अनमत जीव संकट चित भाल॥
मूढ़ जीया तूँ क्यों भरमाया। पर की वस्त संग हेत जो पाया॥
ओड़क तो नर होवे न्याये। दुर्मत भरम की मिले सज़ाये॥
अधिक पाप नहीं पारावार। पर की वस्त जो अपनी कर धार॥
मूरख जीव ये पाप कमाये। पल पल पावे घनी सज़ाये॥
ग़फ़लत त्याग सुनो सत विचार। पाप करम उतरे मल छार॥
तन मन दात जो प्रभ की भई। प्रभ के चरने भेंट नित करी॥
आज्ञा तिस की हिये पछान। अपनी हिकमत त्याग दुःख की खान॥
ज्यों भावे त्यों खेल खिलाई। तिस की दात ज्यों वरताई॥
गरब ग़रूर त्याग दुःख फाँस। साचा ठाकर जप परम सुखरास॥
पल में कुछ ना कुछ कर धारी। आज्ञा मान परम सुखकारी॥

बन्ध ख़ुलासी तेरी होवे। मूल पाप की मैल जो खोवे॥
प्रभ की भगत धारो चित चौंप॥ बन्धी छूट पायें धरम अनूप॥

**साचा धरम विचारये, ध्याइये सत प्रभ एक।**
**'मंगत' सकली दात तिस, रख दाते की टेक॥ 1156**

एह बिध करनी करो विचार। प्रभ की चरनी नित पधार॥
परमानन्द सो अत दातारी। सरब शकत तिस की वरतारी॥
धरत आकाश पवन और पानी। धार बैसन्तर खेड खडानी॥
रवी चन्दर जोती परगास। तारा मंडल धारे आकास॥
दिवस रैन का चक्कर चलाई। मास पख रुत अनेक रचाई॥
चारखानी जन्तू प्रगटाये। अनगिनत सरूप अलेख समाये॥
बिस्माद रूप जगत बिस्तार। मोहे पीर नबी अवतार॥
सरब के भीतर तू करें निवास। अद्भुत रचया ये जगत तमाश॥
अँस से अँस जीव बढ़ाये। अनगिनत रूप में देखन आये॥
अत अचम्भा ये जगत पसार। लेख ना आवे ये लेख आपार॥
देख के लीला मोहित जन भयो। साचा धाम सतनाम विसरायो॥
रंग रंग खेल देखे संसार। सूझे नहीं कुछ वारापार॥
मोहित होके करें कुलेल। रंग रंग जीयाँ संग पावे मेल॥
ओड़क सब ही नाश हो जायें। मूरख जन मन में पछतायें॥
सकले सुख दुःख रूप दिखाई। छाड चले जब बनत बनाई॥
सुकृत सीख गुरमुख पहचानी। जगत फुलवाड़ी की सार लखानी॥
शान्त पाई मन शान्त समायो। जगत का संशय मूल मिटायो॥
कारीगर ठाकर पहचाना। जिसने सकला खेल रचाना॥
सब कुछ देखा तिस के माईं। द्वैत भरम नासी परछाईं॥

**माया की छाया गई, सत ठाकर करी पहचान।**
**'मंगत' महमाँ राम की, कुल लोकाँ लोक जहान॥1157**

प्रभ की लीला जाने प्रभ आप। मूढ़ जीया क्यों करें सन्ताप॥

बनावनहार की कौन लखे वडयाई। सब कुछ देख तूँ बनी बनाई॥
पूरन पुरख प्रभता अत धारी। अपनी महमाँ आपे बिस्तारी॥
अपने कौतक की जाने आप ही सार। जल थल आपे आप भरतार॥
प्रभ की माया ये लीला धारी। प्रभ विसार भये मोहित अंध्यारी॥
मूल विसार बरिच्छ को देखे। पात डार फल फूल विशेखे॥
रंग रंग बनत देख भरमाई। मूल पछाने तब मूल माहीं दिखाई॥
ऐसे खेल चक्कर संसार। प्रभ की शकत में कियो बिस्तार॥
प्रभ पछान भरम सब जाई। सरब जगत तिस में रमनाई॥
दृष्टी भेद भरम सब नासी। देखें केवल इक अबनाशी॥
एक को देख होवें परसन्न। दुर्मत रोग जाये विगन्न॥
रे मन तूँ सुन सार विचार। सरब शकत एको करतार॥
बारम्बार तूँ तिस को चेत। निमख निमख कर तिसका लेख॥
अपने अन्तर कर पहचान। साखी कर्ता सकल जहान॥
सकला खेल तिस हुकम विचार। आपामत त्याग अन्धकार॥
निर्मल प्रीती अन्तर कर सेव। साची सीख घाल गुरदेव॥
परगट देखें जब अन्तर मीत। मूल पछान से जाये भ्रम भीत॥
एको एक सरब रंग मानी। आदी अन्ती एक पछानी॥
एको सिमरो करो विचार। मोह भरम जाये अन्धकार॥

**सत ठाकर पहचान कर, सब कुछ तिस में देख।**
**'मंगत' निर्मल खोज से, जाये भरम का लेख॥ 1158**

जो तूँ अपना भरम निवारें। सत ठाकर को अन्तर धारें॥
जो तूँ माँगें बन्ध ख़ुलासी। निश्चे करें इक अबनाशी॥
जो तूँ जनम मरन भय त्यागें। सत साधू की सेवा लागें॥
अपने अन्तर जो चाहें परगास। निर्मल नाम करें अभ्यास॥
सकल जगत की जीत जो चाहें। मन अपने को प्रभ चरनी लायें॥
गुन निधान सरब सुख खानी। साचा ठाकर भज निर्वानी॥
अन्तर में सदा आराध। जनम मरन की जाए उपाध॥

अन्तर तिसकी सोभा गाओ। दुर्मत जाल का होवे अभाओ॥
अपने अन्तर की गत पहचान। सरब का ठाकर तूँ अन्तर जान॥
भरम मूल सन्ताप विनास। साचा नाम चित लयो निवास॥
एक नाम का हो आधारी। ताप तपन होवे सब छारी॥
एक नाम अन्तर में घाल। पद परसें तूँ दीनदयाल॥
अन्तर में सब खेल पहचान। साचे ठाकर की सुन अन्तर तान॥
सुन्न महासुन्न लोका लोक। सच खण्ड अन्तर रह्या अलोप॥
एक नाम चित अन्तर धार। अन्तर का सब मिटे ग़ुबार॥
अपने रूप की करे पहचान। शबद सरूप नित कल्यान॥
शबद परापत सब भरम बिनसाई। भयो परकाश अन्तर लख पाई॥
पूरन रूप शबद निर्वान। निश्चल चित पाया ध्यान॥
द्वैत भरम छाया सब नासी। घर में पायो अखण्ड अबनासी॥

**गिनती गिने नहीं आ सके, जगत की अचरज बन्त।**
**'मंगत' मूल पछानिये, एक रूप भगवन्त॥ 1159**

निर्मल चित प्रभ सेव विचार। जगत मोह बिनसे अन्धकार॥
सरब जगत में देखें एक। सिमरें नाम पावें सत लेख॥
मन की कल्पना सकल संसार। द्वैत दृष्ट भरम अन्धकार॥
मन की कल्पना जो करी त्याग। पाया शबद एक अनुराग॥
मन में जनम मरन का भेद। मन में इच्छया करम का छेद॥
मन में आपा पर दिखलाई। ग्रहन त्याग मन की चतुराई॥
पाप पुन्न मन का विचार। दुःख सुख मन का ब्यौहार॥
मोह ममता गरब ग़रूर। मन धारे ये अधिक सरूर॥
भरम की फाँस मन ममता जान। सकल चक्कर तिसका पहचान॥
मन का भरमन ही संसार। ज्यों ज्यों भरमे देखे रंग आपार॥
मन मातर ये सृष्ट समाई। मन निर्मल तब राम दिखाई॥
अपने मन का करो सुधार। जिसमें व्यापे अधिक ग़ुबार॥
अपने मन को राखो हाथ। कस कर बान्धो प्रेम के साथ॥
छिन में मूढ़ा डोलन पाई। तिस को बान्ध अधिक चतुराई॥

जिस का मन अन्तरगत आया। साचा नाम साहब का गाया॥
सिमर साहब सब ताप मिटाई। तब ये मनुआँ शान्त समाई॥
प्रभ के चरनी भये लवलीना। एको ठाकर सच कर चीना॥
अपनी दुर्मत आप छुटाई। आलख परकाश शबद घर पाई॥
मूल पछान सब तृखा विनासी। जल थल नज़र आया अबनाशी॥

**मन की दुर्मत जब मिटी, सकल ताप भये लीन।**
**'मंगत' एको पाया, जो सरब शकत परबीन॥ 1160**

जाननहार साहब को ध्याई। सकल भेद जानत जानाई॥
पायो भेद मिटा सब छेदा। नाम निरंजन अन्तर बेधा॥
सुरत समाई नाम के संग। घर में पायो निर्मल रंग॥
सच्चे रंग चोला रंगाई। जुग जुग गूढ़ा हो दरसाई॥
सच्ची प्रीती पाई इक रंग। निर्मल मनुआँ भयो निषंग॥
भरमन त्याग अन्तर घर आया। साचे नाम की सार को खाया॥
सार खाये मनुआँ तृपताई। अन्तरगत अन्तर लिवलाई॥
प्रान पवन का साखी होई। अन्तर बाहर नाम परोई॥
एक धीर मन माहीं समाया। सत ठाकर का मंगल गाया॥
विजे भई घर शबद पछाता। प्रेम सरूप में भयो रँगराता॥
कारन कर्ता घर में दरसाई। तिस की सेव पल पल कमाई॥
सब कुछ देखा तिसका भाना। साचा ठाकर सरब समाना॥
सकल करमफल मन से त्यागी। आज्ञा मान चरन लिव लागी॥
साचा सिमरन साचा ध्यान। साची कीरत करी बखान॥
संसा रूप गया संसार। पाया एको सरजनहार॥
रे मन मेरे करो कमाई। सतनाम लयो कीरत गाई॥
रुच रुच चरनी धरो प्यार। सरजनहार पुरख दातार॥
तन मन अन्दर तिसका परताप। निर्मल जुगती कर नित जाप॥
साचा स्वामी सच कर पूज। सत विश्वास अन्तर में सूझ॥

**नित साहब परकाश करी, ये देही का कोट।**
**'मंगत' निर्मल ध्यान से, पावें अबगत जोत॥1161**

शबद सरूप जोती परगास। पार पुरख पाया अबनास॥
नित ही चरनी प्रीत कमाओ। रंचक महमाँ नहीं बन आओ॥
अन्तर में अन्तर करूँ सेव। आद पुरख निरंजन देव॥
अपने आप आपे बलवन्त। पूरन शकत आप भगवन्त॥
उदे अस्त नहीं विकार। अखण्ड दीपक भयो उजियार॥
देख उजाला मन भये निहाल। आनन्द सरूप शबद घर भाल॥
सकल करम की इच्छया गई। साखी शबद की सोझी भई॥
छिन छिन शबद में धरूँ ध्यान। पतित जीव पावे कल्यान॥
शबद सरूप अगम अगाध। भेद पछाने मिटे व्याध॥
साचे शबद में भयो लवलीन। करम वासना भई सब छीन॥
कर्ता भाओ सब मन का नास। अन्तर पाया शबद परगास॥
चंचल गई मन सुन्न समाया। अनहद नाद मानक घर पाया॥
गगन कपाली झलके हीरा। कड़के नाद परम सुखसीरा॥
मधुर मुधर धुन नाद गुंजारी। गुरमुख विरले सूझ विचारी॥
अपनी सूझ अपने घर पाई। दुर्मत रोग गई परछाई॥
नित आनन्द मंगल घर होई। शबद सरूप निज सुरत परोई॥
सकल ब्यौहार शबद के संग। सदा समाऊँ एके रंग॥
करम वासना मिटे अन्धकार। शून करम पाया सुख सार॥
शान्ती होई मन शबद समाया। जाँ से उतपत वहाँ मेल मिलाया॥

**अन्तरगत मेला भयो, सत शबद संग मीत।**
**'मंगत' पाई परमगत, निर्भय गाया गीत॥1162**

निर्भय नाम साहब का मीता। सदा ध्याओ निश्चल चीता॥
सकल ताप को हरने हारा। साचा नाम सिमर सुखकारा॥
नाम सिमर पावें सुख साचा। जल थल ठाकर पूर बिराजा॥
जग जीवन में एको सार। सत ठाकर जप बारम्बार॥

करम मैल प्रभ नाम से जाई। जो धोवे सो गुनी अधिकाई॥
सुरती बाँध नाम के संग। मारग मुकत सुनो परसंग॥
ईड़ा पिंगला सुखमन नाड़ी। बहती पवन करो विचारी॥
अन्तर बाहर की गत जान। विचरत पवन करो पहचान॥
नाम को जाप पवन को बेध। नाम ध्यान हरे सब छेद॥
अन्तर बाहर जुगत कमाओ। बारह सोलह सम कर गाओ॥
सोलह चन्दर बारह सूर। सिमर नाम पावें हज़ूर॥
सम कर पवन नाम कमाई। मनमुख मनुआँ अन्तर आई॥
पवन बिन्ध भया परगासा। शबद अखण्ड में लयो निवासा॥
आलख शबद आकाश उठ धाया। सुन्न कन्दरा में डेरा लाया॥
गुरमुख सुरती चढ़ी आकास। प्रभ के चरनी लयो निवास॥
अनहद नाद बाजे घट तूरा। होई चमकार सत चरन हज़ूरा॥
खिमा दया सील चित आई। सत ठाकर घर परगट ध्याई॥
एक दृष्टी सुन्न ध्यान लगाया। जगत का ठाकर नज़री आया॥
दरस पायो मन भयो निहाल। काल करम काटा जम जाल॥

**अन्धकार विनासया, दिव्य भयो परकाश।**
**'मंगत' काया कोठरी में, पायो दरस अबनाश॥ 1163**

अबनाशी का दर्शन पाई। तब ये मन गयो लीन समाई॥
मन लीन भयो सुख भया आपार। रंचक दुःख की रही नहीं सार॥
द्वन्द त्याग निरद्वन्द समाई। करम त्याग निहकरमत पाई॥
काल त्याग निर्भय समाया। साखी पुरष का लेख लखाया॥
चंचल त्याग पाया संतोख। बन्धन नास पाया तत्त मोख॥
वैर त्याग खिमा चित पाई। सरब जीयाँ संग साँझ बनाई॥
मोह त्याग पायो बैरागा। घर में परसयो शबद अनुरागा॥
उदे अस्त का भरम मिटाई। दिव्य परकाश अखण्ड लखाई॥
जनम मरन का चक्कर त्यागा। निश्चल ध्यान साहब में जागा॥
भूख प्यास गये देह विकारा। शबद खाये मन तृपत विचारा॥

वासना त्याग भया निर्वास। सर्वज्ञ रूप पाया अबनास॥
पाप पुन्न करमगत टारी। साचे शबद की चढ़ी ख़ुमारी॥
देह की दुर्मत ममता नासी। समता शान्त शबद परगासी॥
औगन गुन दोनों भये नास। निरगुन माहीं लयो निवास॥
ताप गयो मन ठाँड समाई। शबद पुरख घर भेंटे आई॥
एक ही एक सकल दरसाई। सब ही देखी एक प्रभताई॥
एक की चरनी आया विश्वासा। निर्भय धाम में लयो निवासा॥
करम का पन्ध सकल भयो पूरा। धुर मुक़ाम पायो हज़ूरा॥
निर्मल ध्यान सत शबद समाई। शून करम शान्त गत पाई॥

**पूरन प्रभ के मेल से, सकल विगन भये नास।**
**'मंगत' इस्थित पाई, घट भयो शबद परगास॥ 1164**

शबद पुरख अन्तर परगासा। निश्चल ध्यान सतनाम बिलासा॥
औगन नास बुद्ध निर्मल होई। एक प्रेम चित चरन परोई॥
दुर्मत मिटी सम्मत घर जानी। असुर भाओ भये चित के हानी॥
खिमा दया चित कियो परवेसा। जत सत पायो सार सुखरीसा॥
त्याग वैराग पूरन चित पायो। एको नाम मन माहीं समायो॥
ऊँचे शिखर में बजे दमामा। विरत रहत भयो निष्कामा॥
सिमरें ब्रह्मा बिषन महेश। आद पुरख को करें आदेस॥
चेतन शबद रूप निर्वानी। अकथ कथा की कथो कहानी॥
प्रेम की धारा साहब सरूप। आनन्द परापत पायो शबद अनूप॥
सिमर सिमर सुखदाई देवा। मिटे अन्धकार पायें सत सेवा॥
बैठ अकान्त नाम कमाओ। साखी शबद संग प्रीत लगाओ॥
सकल करम प्रभ अर्पन कीजो। वाँग कँवल शुद्ध जीवन लीजो॥
नीर माहीं ज्यों रहे अलेप। शबद ध्यावें मिटे विखेप॥
एक प्रीती चरन चितार। केवल नाम साहब पुकार॥
रसना रस जाये सब भोग। अखण्ड रस शबद का पावें संजोग॥
बिना भोग पावें परसन्ता। जो सिमरें सतनाम भगवन्ता॥

जाप जपो सब ताप विनासे। अखण्ड शबद अन्तर परगासे॥
अचरज मौज पावें घर माहीं। अखण्ड शान्त में लीन समाईं॥
मारग सहज मुकत का घाल। अबगत नाद निरन्तर भाल॥

**नाद सरूप की सेव से, करम बीज भयो नास।**
**'मंगत' निर्मल ध्यान से, चित शून करम परगास॥ 1165**

साखी शबद निरंतर ध्याया। आनंद मंगल मन में पाया॥
ज्ञान विज्ञान की बुद्ध परगासी। निश्चय पाया चित चरन अबनासी॥
भरमन नास घर चानन पाई। शान्त सरूप पाई अत वडयाई॥
निर्मल प्रीत पाई हर चरनां। मारग मुकत का पायो निरनां॥
चित बुद्ध लीन भये घर माहीं। साखी पुरख सिमर सुख पाईं॥
अद्वैत बुद्ध निश्चल परगास। एक ध्यान शबद निरवास॥
देह ममता तब मूल विनासा। ब्रह्म सरूप में लीना वासा॥
आनन्द खानी शबद की धारा। निर्मल चित से करी विचारा॥
करम धरम सब पूरन पाई। एक शबद में लीन समाई॥
ना कुछ कीया ना करने योग। शून करमगत भई संजोग॥
सुरत मतवाली नित गगन रहाई। रुच रुच रसना शबद की खाई॥
पारावार नहीं भेद पछानी। अचपच शबद जोत निर्वानी॥
अधिक प्रेम में भई लवलीन। ब्रह्म सरूप कियो आप को चीन॥
द्वैत दृष्ट सब मिटा विकार। केवल रूप ब्रह्म निर्धार॥
इच्छया शोक नहीं भय दिखाई। निर्भय शबद प्रेमरस खाई॥
भयो दिवाना निज रूप समाये। शून करम का धाम लखाये॥
अपरम आपार शान्त परगासी। शून्यंगकार शबद बिलासी॥
जो जन परसे निर्मल धामा। शून करम में करे बिसरामा॥
ना वोह आवे ना कित जाई। अनहद नाद में लीन समाई॥

**कहन कथन वोह दिसा नहीं आवे, जाँ शून गती परगासी।**
**'मंगत' अखण्ड शबद में, द्वैत भरम दुःख नासी॥ 1166**

अपना आप भयो उजियार। अपने आप में कियो पसार॥
द्वैत दृष्ट भरम सब नासी। शून करम शोभा परगासी॥
पूरन हो के पूरन गत पाई। करम का संशय रह्यो कछु नाहीं॥
ज्ञान सरोवर में नित मतवाला। अखण्ड शबद परसे उजियाला॥
चानन पाये मन भयो सुखरासी। करम विकार दूषना नासी॥
निहकरम सरूप शबद निर्वानी। तिस को परच सुख सार लखानी॥
प्रभ अपने संग लीन समाई। शून करम शान्त घर पाई॥
परम धाम वोह दिसा अनूप। काल चक्कर नहीं व्यापे कूप॥
जो जन ऐसे धाम समाये। बौहड़ चक्कर संसार नहीं आये॥
अपने जीवन में पाई सुखरास। अन्तकाल लयो निर्भय बास॥
अपने जीवन में पाई कल्यान। निहकरम सरूप जोत निर्वान॥
साचे धरम की घाली घाल। जीवत में जन भयो निहाल॥
साचा ज्ञान घट जीवत परगासा। अन्तकाल प्रभ चरन निवासा॥
जग आवन तिस सार पछाता। अबगत नाद रम्मत सुख जाता॥
तृपत भयो तृपत समायो। बौहड़ चक्कर नहीं गरभ का पायो॥
प्रभ के रूप में लीन समाई। सकल ताप अज्ञान बिनसाई॥
साची भगती पूरन फल दीया। सत सरूप में रम्मत रमीया॥
अगोचर पन्थ पाया निर्वानी। जिसकी शोभा नहीं होये बखानी॥
अबनाशी पुरष सरब गत पूरा। लीन भयो सत चरन हज़ूरा॥

**साखी पुरष मिलाया, दुबधा दुर्मत नास।**
**'मंगत' सिखया साध की, दीना निर्भय वास॥ 1167**

सत साधू की सेवा पाई। निर्भय धाम की रसना गाई॥
साध चरन जाऊँ बलिहार। जिन से पाया नाम आधार॥
सकल दोख मन सहज निवारी। साध की सीख सब बन्ध कटारी॥
जीवन में जीवन को पाया। सत साधू मारग दिखलाया॥
प्रभ अपने के चरन समाई। साध की सीख आनन्द वरताई॥
साचा मित्तर साचा रछपाल। साचा सन्त करे निहाल॥

नित नित सीख सन्त की पाऊँ। चरन की धूड़ सीस रमाऊँ॥
बन्धन से जन कियो निहाल। सहज सुभाए होये दयाल॥
अगम निगम का भेद दिखाया। बन्ध मुकत का मारग समझाया॥
भय भरम सब दुबधा काटी। साध सरन अमरत रस चाखी॥
साची सीख दे रखया कीनी। जनम जनम की दुबधा छीनी॥
प्रभ के चरन निश्चय दिखलाई। साची कीरत सतनाम लखाई॥
अपरम महमाँ नहीं पारावार। पूरन सन्त जग करे उद्धार॥
आप तरे माया की खानी। और जीयाँ की आस बन्धानी॥
धन्न साधू जिस सार लखाई। साचे धाम में गयो समाई॥
पतित जीवों का होये उद्धार। साचे साध की सीख विचार॥
आनन्द मंगल तिस घर पाई। साची सेव जिस साध लखाई॥
पूर मनोरथ दुबधा नासे। साध सरन सुख अपरम वासे॥
नित बलिहारी जाऊँ बलिहार। साध की सीख देवे निस्तार॥

**पूरन सतगुर मेल से, पाइये आगम का भेद।**
**'मंगत' विजय परापती, दूर भये चित छेद॥ 1168**

## पाँचवाँ अध्याय

## नाद ध्यान

**सुरती निहचल मनुआँ निर्मल, नाद का पायो ध्यान।**
**'मंगत' मिटी सब भरमना, जीव भयो ग़लतान॥ 1169**

अबगत नाद का करो ध्यान। निर्मल जोत दरसे निर्वान॥
अबगत नाद जगत का ठाकर। सकल जगत को करे उजागर॥
अत परकाश सर्वज्ञ पूरा। नाद ध्यान धरो गुनी सूरा॥
नाद ध्यान है मोख सरूप। नाद ध्यान है ज्ञान अनूप॥
नाद ध्यान है आपार ज्ञाई। जो जन परसे तिस तौं बल जाई॥
तपत जीव आये ठाँड समाया। नाद ध्यान मंगल जब पाया॥
डोलन नास घट इस्थित पाई। नाद ध्यान घर कीरत गाई॥
शून्यंग शून्यंग शून समाया। अनहद नाद रतन जब ध्याया॥
पूरन भाग तिस गुरमुख पाये। प्रभ के चरन में निश्चल समाये॥

नाद ध्यान अमीरस राता। नाद विवेकी नित मधमाता॥
नाद ध्यान पद जीवन मुकत। गुरमुख विरले पाई संजुगत॥
पूरन भाग संजोग जब पाई। नाद ध्यान मिले सुखदाई॥
साची पूजा साचा ज्ञान। जो चित आवे नाद ध्यान॥
रंचक ध्यान जिस जन ने पाया। बन्धन नास मुकत घर आया॥
सकल भरम का होये विनास। नाद ध्यान मिले सुखरास॥
पूरन भगती पूरन योग। नाद ध्यान जब भयो संजोग॥
ब्रह्मज्ञानी सो ही तत्तवेता। जो नाद ध्यान रम्मत सुख लेता॥
पूरन पुरख सो ही परतापी। नाद ध्यान करे दिन राती॥
सकल जगत का मानी सो ही। इक चित ध्यान जिस नाद परोई॥

**विखे वासना दूर भई, पद परसा निर्वान।**
**'मंगत' अन्तरगत माहीं, पाया नाद ध्यान॥ 1170**

दुर्मत जाल जब लीन समाई। नाद ध्यान परमपद पाई॥
जगत भरम जब मिटे ग़ुबार। तब घट पाइये नाद विचार॥
संकल्प विकल्प जब मन के नासी। नाद ध्यान में जब कियो निवासी॥
करम वासना मिटे द्वन्द। नाद ध्यान पाइये अखण्ड॥
महाँ बलकारी सो गुनवन्ता। नाद ध्यान जिस पाई समता॥
ममता त्याग पायो नाम आधार। अनहद नाद घट कियो विचार॥
नाद पुरख पार जगदीश्वर। जोगी जती जपें तपीश्वर॥
नाद ध्यान सब दोख निवारी। सुरत इकागर सतनाम विचारी॥
विरत रहत मन पिंगल होई। नाद ध्यान सो गुनी परोई॥
मन बानी जब लीन समाई। नाद ध्यान अन्तरगत पाई॥
बुद्ध निश्चल इक नाम को खाई। पल पल कीरत प्रभ की गाई॥
निहकरम दिसा अन्तर पहचानी। नाद ध्यान पाया निर्वानी॥
सो योगी है योग का जुगता। नाद ध्यान में जो रहे रमता॥
सो तपीशर परम तप धारी। नाद ध्यान जिस लेख विचारी॥
सो ज्ञानी अद्वैत का वादी। नाद ध्यान जिस पाई समाधी॥

सो ही पण्डत विद्या गत जानी। अनुभव परकाश जो नाद पछानी॥
तप जप योग पूरा तब पाया। नाद ध्यान जब हिरदे आया॥
दृष्ट आकार जब लीन समाई। नाद ध्यान रम्मत सुखदाई॥
भरम ग़ुबार गई जब चतुराई। निश्चल चित घर नाद लखाई॥

**निहकरम गती की गत लखी, मनुआँ लीन समाए।**
**'मंगत' दुबधा त्याग के, घर आलख नाद ध्याये॥ 1171**

सो जोगी है अपरम आपार। नाद ध्यान पाई गत सार॥
सो जोगी सब जग परवान। जिस घट पायो नाद ध्यान॥
सो जोगी सब जुगत पछानी। नाद ध्यान जिस अन्तर जानी॥
सो जोगी शकत भरपूर। जो नाद ध्यान में रहे मख़मूर॥
पूरन प्रभ की किरपा जब होई। नाद ध्यान की दिसा लखोई॥
पूरन भाग तिस गुरमुख जागे। नाद ध्यान में जो उठ लागे॥
इक चित होके जो नाम पुकारी। नाद ध्यान सो पाये सुखकारी॥
बन्धन मुकत का निरना तब पायो। नाद ध्यान जब हिरदे आयो॥
काल अकाल की तब गती पछानी। नाद ध्यान पायो निर्वानी॥
द्वन्द विकार से होई ख़ुलासी। नाद ध्यान पायो अबनासी॥
भय भरम सब ताप निवारी। नाद ध्यान जिस चढ़ी ख़ुमारी॥
आपामत दुर्मत जब त्यागी। नाद ध्यान सो पाये वडभागी॥
धरम करम जन पूरा पायो। नाद ध्यान अन्तर चित आयो॥
गवन विनास मन लीन समाई। नाद ध्यान का लेख आगाही॥
अगम मारग अगोचर बानी। नाद ध्यान जिस करी पछानी॥
सो समदरसी तत्त्व ज्ञाता। नाद ध्यान रम्मत सुख पाता॥
सरब त्यागी सो महा तपीशर। नाद ध्यान जिस पाया घट भीतर॥
परम ज्ञानी सो सरब ज्ञाता। नाद ध्यान जिस भेद पछाता॥
सब माया का जन्तर जानी। त्रैगन जाल का भेद पछानी॥

**आलख पुरख के ध्यान से, पायो अखण्ड परगास।**
**'मंगत' अन्तरगत माहीं, हरजन लीना बास॥ 1172**

नाद ध्याता सो बल सूरा। काम क्रोध दल कीजे चूरा॥
हिरख मान सब ताप मिटाई। नाद ध्यान शोभा जब पाई॥
अपने आप में भयो परसन्न। नाद ध्यान पायो जब धन॥
तिस जोगी की महमाँ आपार। कीरत मिले अधिक संसार॥
सब माया से पाई जीत। नाद ध्यान गत लखी पुनीत॥
सकल जगत का बिन्द पछानी। आलख आपार की लखे कहानी॥
भय भरम सब खेद मिटायो। नाद ध्यान जिस अन्तर पायो॥
सरब गुन पूरा सो इच्छया चारी। अन्तरगत में सतनाम विचारी॥
ज्ञान विज्ञान का भोजन कीना। नाद ध्यान पायो परबीना॥
ऊँच श्रेणी मारग बहु ऊँचा। निर्मल नाम जप होवे सूचा॥
मन को बाँधे जो गुनवन्ता। नाद ध्यान पाई परसन्ता॥
जत सत पूरन तिस जन ने पाया। करम रोग का ताप मिटाया॥
अपने आप में भयो लवलीन। बिमल नाद जो हिरदे चीन॥
नाद सरूप केवल आनन्द। नाद सरूप निर्वान अखण्ड॥
नाद सरूप सरब का स्वामी। पूरन भाग जो ले बिसरामी॥
सरब माया का भेद पछानी। तत्त्व ज्ञाता सो महा ज्ञानी॥
परमानन्द मन मगन समाई। नाद ध्यान रसना जिस पाई॥
तृष्ना वेग सब भरम चुकाया। पूर मनोरथ सतनाम कमाया॥
सत शरधा जब पाये विवेकी। अनहद नाद ध्यान को लेखी॥

**अत निर्मल जब बुद्ध भई, सकल कल्पना त्याग।**
**'मंगत' पाया नाद को, जो गत अत बिसमाद॥ 1173**

नाद की रसना जिस जन खाई। जीवत में सो तृपत समाई॥
परम मंगल तिस जन ने पाया। नाद ध्यान ठाकर सत ध्याया॥
दोख विगन तिस निकट ना आवे। नाद ध्यान में जो समावे॥
पाप पुन्न दोहे लीन समाये। करम फल इच्छया ताप मिटाये॥
देह की ममता सकल विनासी। जब नाद ध्यान पायो अबनासी॥
निर्वान गती की गत सो जानी। उपरस धाम का लेख पछानी॥

निर्बन्ध जीवन आनन्द घर पाई। नाद ध्यान शोभा जब गाई॥
पूरन प्रभ के चरन समाई। साची शोभा मन तन ध्याई॥
अपना आप दुर्मत भ्रम हरया। नाद ध्यान से जन निस्तरया॥
लोक परलोक की दुबधा नासी। जनम मरन की काटी फाँसी॥
कर्ता भाओ मिटे अभिमाना। तब नाद ध्यान रम्मत सुखपाना॥
सत परमेश्वर का होए विश्वासी। अपने भरम की काटी जिस फाँसी॥
निर्मल नाम पल पल ध्यायो। पूरन भाग तब नाद लखायो॥
अत बैरागी जिस का चीत। सकल जगत की तोड़े प्रीत॥
सरजनहार जिस प्रीत से गाया। नाद ध्यान तिस गुरमुख पाया॥
जीवत में जो भयो उदास। चला चली देख जगत तमाश॥
आतम तत्त जब अन्तर ध्याई। तब नाद ध्यान मिले वडयाई॥
जीवत में जो मरन पछानी। आसा त्याग परम दुःख खानी॥
एक नाम जिस पल पल गायो। नाद ध्यान तिस ही जन पायो॥

**कथनी का ये देस नहीं, ना करनी का मुक़ाम।**
**'मंगत' रहनी सार है, जो पाए नाद का धाम॥ 1174**

ज्ञान ध्यान की ये ही सार। आलख नाद का मिले विचार॥
सदा अजन्मा सदा निरकाया। दृष्टी भेद से परे रहाया॥
अपने आप में रहे भरपूर। नाद ध्यान रम्मत कोई सूर॥
साची कीरत तिस जन ने पाई। मन अपने में रसना प्रभ गाई॥
कर्ता हर्ता ठाकर पहचानी। पल पल तिस की शोभा जानी॥
दुर्मत नास समता घर पाई। नाद ध्यान तब लेख लखाई॥
गुनी मुनी जपी तपी हारे। अनंक तपीशर तप को धारे॥
ज्ञान कथें अद्वैत के वादी। नाना भेख जतन को साधी॥
तीरथ गवना नित नित करी। बसे बीयाबान त्याग अत धरी॥
मन का संशय नहीं दुर्मत नासी। नाद ध्यान नहीं मिले अबनासी॥
रंग रंग पूजा मन में धारी। अनेक देवत का भया पुजारी॥
जाप ताप बहु भाँत से करी। संध्या तर्पन जतन बहु धरी॥

देह की ममता धारी भरम फाँस। नाद ध्यान नहीं मिले सुखरास॥
बहु बिध देह की करे सुथराई। निर्मल नीर में नित नहाई॥
माला हाथ तिलक ललाट। विद्या वेद निध्यास कमात॥
अनंक सिद्धान्त मन में नित धारी। चतुर भाओ बहु लेख विचारी॥
मन की विरती अत चंचल होई। नाद ध्यान नहीं लेख लखोई॥
नित योगी उठ योग कमावे। प्रानायाम की जुगत लखावे॥
धोती नेती किरया बहु धारी। रेचक पूरक कुम्भक विचारी॥

**करम वासना ना मिटी, जित बिध किये उपाये।**
**'मंगत' दुर्मत भरम में, नहीं नाद भेद अर्थाये॥ 1175**

ऊँच कमाई तिस जन जानी। अन्तरगत जिस सार पछानी॥
मिथ्या भरम माया का त्यागा। सत सरूप सिमरन चित लागा॥
कर्ता भाओ अभिमान निवारी। प्रभ आज्ञा में जीवन धारी॥
छिन छिन तिस की प्रीत कमाई। सब जग देखी तिस वडयाई॥
केवल सत प्रभ आप स्वामी। सरब ज्ञाता अन्तरयामी॥
भाओ भगत चित पाई उदासी। काल करम की काटी फाँसी॥
निश्चल चित इक नाम में पाई। दिवस रैन नित करे कमाई॥
अन्तर बाहर प्रभ मंगल गाई। सब कुछ दात तिसकी दिखलाई॥
तिस की वस्त तिस चरने त्यागी। मोह त्याग के भयो अनुरागी॥
सरजनहार की बिरह समाई। पल पल साची कीरत गाई॥
बैठ इकान्त साधन धारी। साचे नाम की जुगत विचारी॥
दुर्मत त्याग सतनाम समाया। सतगुर मेल सत लेख लखाया॥
दृढ़ निश्चय प्रभ चरनी धारी। तब अबगत नाद की कथा विचारी॥
सिमर सिमर मन पाई ख़ुलासी। नाद पुरख पायो अबनासी॥
इक चित प्रीत चरन में धारी। निमख निमख तिस सार विचारी॥
औगन नास मंगल घर पाई। सतनाम की कथा अर्थाई॥
सकल संकट मन के नासी। भाओ भगत हरी चरन निवासी॥
शरधा प्रेम चित अधिक समाई। सत करतार की साखी गाई॥

निर्मान भाओ का चोला धारी। सब जीवों संग हेत विचारी॥

**अनंक जतन चित में धरी, तब नाम अमीरस खाये।**
**'मंगत' नाद पछानया, जो जल थल पूर समाये॥ 1176**

अबगत नाद का करो ध्यान। बन्धी छूट पावें कल्यान॥
सरजनहार सो ही सुखरासी। निर्मल प्रीत चरन उपासी॥
सत विश्वास चरन चित धारी। सतगुर मेल सतनाम विचारी॥
सरब जीयाँ संग जिस प्रीत कमाई। सब जग में देख पूर समाई॥
परम शकत आनन्द की खानी। भज परमेश्वर परम सुखदानी॥
प्रभ साचे की कीरत गाओ। अन्तर में नित नाम कमाओ॥
खिमा ग़रीबी अन्तर चित धारो। निमख निमख सतनाम विचारो॥
भरमन नास होवे परगासा। अनहद नाद घट करी बिलासा॥
सुकृत जीवन तिस ने पाया। अनहद मंगल जिस ने गाया॥
अत वडयाई तिस जन जानी। नाद पुरख की कथे जो कहानी॥
परम प्रेम रसना तिस खाई। अनहद नाद रतन जिस ध्याई॥
सत मारग का सो ही ज्ञाता। साची भगत सोही रँगराता॥
परम त्याग तिस ही जन पाया। अनहद मंगल जिस लेख लखाया॥
ऊँची शोभा प्रभ का नाओं। ऊँचा देस प्रभ का थाओं॥
ऊँची कीरत प्रभ की एक। आलख लेखा प्रभ नाद अलेख॥
परम ज्ञानी गुपत गत बूझे। प्रभ अपने को अन्तर सूझे॥
अत चतराई तिस नर पाई। मन को ठाक इक नाम कमाई॥
पूरन पुरख प्रभ अन्तर ज्ञाता। गुरमुख साजन भेद पछाता॥
पाया भेद मिटा अन्धकारा। घर में पाया पुरख निरंकारा॥

**सकल भेद की सार है, अभेद रूप भगवन्त।**
**'मंगत' नित ही सिमरिये, सब दोख होवें भसमन्त॥1177**

साचा सतगुर भए सहाई। अन्तरगत तब भेद लखाई॥
पूरन गुर तों जाऊँ बलिहारी। प्रभ की शोभा जिस लखारी॥

पूरन गुर की चरनी भेंटे। आलख पुरख के लेख को लेखे॥
पूरन गुर की सिखया पाई। सत ठाकर मन माहीं मनाई॥
पूरन गुर जब भये किरपाल। तब दर सूझा दीनदयाल॥
पूरन गुर की रहनी देखी। मोह त्याग चित भया विवेकी॥
पूरन गुर साखी प्रभ गाई। अबगत नाद का भेद लखाई॥
पूरन गुर जग जीवन दीना। नाद ध्यान अमीरस चीन्हा॥
सो गुनवन्ता सतमत धारी। पूरे गुर की जिस सीख विचारी॥
अनहद राता चित शून्न समाई। सो गुर पूरा सब लेख लखाई॥
पारब्रह्म जिस घट परगासा। अन्तरगत में करे निवासा॥
विखे दोख से रहे न्यारा। सतपद पूज पावे निस्तारा॥
निष्काम सरूप जिस विरता धारी। सो गुर साचा सब बिपत निवारी॥
पूरन सिखया हरजन पाई। साचे नाम की साखी गाई॥
गुर के चरन पाई परतीत। पाया विश्वास प्रभ चरन पुनीत॥
स्वारथ त्याग परमारथ लागा। सतगुर दया पतित जन जागा॥
अपने पाप की करी रखवारी। साची सीख अन्तरगत धारी॥
सत ठाकर की महमाँ गाई। साचा नाम तिस का नित ध्याई॥
बन्धन नास निर्भय पद पाया। परगट ठाकर घट माहीं ध्याया॥

**सतगुर की सत सीख से, हरजन पायें उद्धार।**
**'मंगत' गुर के चरन को, कर डण्डवत बारम्बार॥ 1178**

दृढ़ निश्चय प्रभ नाम कमाया। काल जाल सब भरम मिटाया॥
सतगुर सीख पाई सुखरास। निर्मल नाम चित कियो उपास॥
मन की क्रीड़ा सकल निवारी। इक चित होके जप नाम मुरारी॥
देह का सरजनहारा जोई। साची प्रीत तिस चरन परोई॥
नित करूँ आदेस पूरन प्रभ ईशा। मिटे कलेश भरम संदेशा॥
निर्भय धाम प्रभ एक पछाना। तिसका ध्यान करे कल्याना॥
सुकृत क्रिया तिस जन पाई। निर्भय नाम निरन्तर गाई॥
नाम ध्याए मन भया निहाल। अनहद नाद रतन लयो भाल॥

सकल मुशक़्क़त पूरी पाई। जो चित हर का नाम कमाई॥
हर का नाम बिपत सब नासी। खेम कुशल अन्तर परगासी॥
सकल विखाद जाये अन्धकार। जो चित आवे नाम निरंकार॥
नित साजन सतनाम कमाओ। निर्भय धाम शबद घर पाओ॥
खोज करो नित पूरन नीती। साधजनाँ संग करो परीती॥
मोह जंजाल गरब होये नासा। निर्भय नाद में पायें निवासा॥
आवन जावन संकट अत भारी। नित जन्में नित मरन विचारी॥
नित सम्पे नित करे त्याग। अत संकट में जीव मंदभाग॥
भज गोबिन्द पावें सुखरासी। शबद परापत निर्भय निवासी॥
अपनी भरमन चित से त्याग। साचा नाम जपो वडभाग॥
नाम ध्यान जीवन जग सार। गुरमुख साजन करी विचार॥

**साचे नाम को सिमरिये, सतगुर सीख को पाए।**
**'मंगत' मिले अमोल फल, शबद रतन सुखदाये॥ 1179**

जो सुख साचा माँगें जीया। अन्तरगत जप नाम कन्हैया॥
आनन्द दाता सो किरपालू। पल पल ध्याओ दीनदयालू॥
मन की मिथ्या रसना त्याग। साचे नाम में उठ के जाग॥
अनहोई को क्यों विचारें। कलप कलप के नित दुःख धारें॥
जो होनी सो निस्चे पायें। जतन अकारथ जो मन भरमायें॥
प्रभ की आज्ञा मन माहीं विचार। साचा नाम अन्तर में धार॥
जो तिस भावी सो ही परवान। करे वखेप जन मूढ़ अनजान॥
प्रभ की भावी तू हिरदे चेत। मारग मुकत लख साचा लेख॥
अपनी हिकमत भरम त्याग। प्रभ के नाम में अन्तर लाग॥
मन में साचा नाम कमाओ। प्रभ भावी मन तन मनाओ॥
प्रभ सरनागत पावें सुखसार। दीनदयाल प्रभ नित दातार॥
संकट नास आवे विश्वासा। साची भगती प्रभ चरन निवासा॥
द्वैत भरम तब जीव का जाई। अनहद नाद सीख तब पाई॥
पूरन पुरख की पावें दात। मान करे सो नर कमज़ात॥

जिस की दात करो तिस सेव। खरा नियाँ सुन गुरुदेव॥
प्रभ दाते की सेवा धारी। निर्मल चित से भयो पुजारी॥
विगन नास घर मंगल होई। परम आनन्द मन लीन बसोई॥
दुर्मत त्याग घर अन्तर आया। अजर पुरष अबनाशी पाया॥
रुच रुच सारंग कीना पान। हरजन पायो नाद ध्यान॥

**आस भरोसा एक भयो, प्रभ चरन पाया विश्वास।**
**'मंगत' नाम ध्यान से, काटी मोह की फास॥ 1180**

एक नाम चित चरन ध्याया। अगम निगम का भेद लखाया॥
परले पार ठाकर का थाना। गुरमुख साजन कियो पछाना॥
अन्तर में अन्तर को जानी। अन्तर पूजे प्रभ नाम निर्वानी॥
नित नित तिस की प्रीत कमाओ। शोभा कीरत चित में गाओ॥
प्रभ दाता तब भयो दयाल। सरनागत को कियो निहाल॥
प्रभ सरनाई सुख बहु पाया। रंचक कथनी में नहीं आया॥
जिस पाया तिस भाग वडयाई। बिछड़ा जीव मिला घर आई॥
प्रभ चरनी जब मेल मिलाया। नाद ध्यान रम्मत सुख पाया॥
अकथ कथा का लेख लखाई। जाप अजपा अन्तर पाई॥
सतगुर साजन मेल मिलाये। सत मारग का भेद लखाये॥
पाया भेद तृपत मन होई। प्रभ का नाम पल पल परोई॥
साची कीरत नाम की पाई। सकल मनोरथ पूर समाई॥
विगन त्याग मन भयो निहाल। अनहद नाद प्रभ मिले दयाल॥
जिस जन अबगत नाद पछाता। दुर्मत त्याग भये रँगराता॥
अमरत भोजन तिसने कीना। सारंग बानी शबद को पीना॥
भूख प्यास से भयो छुटकारा। सत नाद घर तृपत विचारा॥
अचरज कथा लेख घर पाई। बिस्माद कौतक घर में दिखलाई॥
सरब परकाशी सरब न्यारा। पाया ठाकर सरब भरतारा॥
पूरन पूर सो नज़री आया। नाद ध्यान तब गुरमुख पाया॥

**ऊँच ज्ञाई नाद की, पारावार ना कोए।**
**'मंगत' जिस जन सोझी पड़ी, तिसके चरन नित धोए॥1181**

निर्मल नाम कीरत जिस गाई। गुपत भेद सोही अर्थाई॥
अन्तर की गत करी विचार। मारग सूझा पार मुरार॥
प्रान अपान पवन को जाता। एक नाम तिस में रँगराता॥
मुख होंट जीभा नहीं चाले। अखण्ड जाप अन्तर में घाले॥
धीर धीर से पवन को पीवे। नाम सिमर के नित जन जीवे॥
दिन दिन गुनी करें अभ्यास। बिनसे भरम पावे परगास॥
आहार ब्यौहार करे शुद्ध नीती। परहक खाये नहीं धरे पलीती॥
तमोगुन आहार नित करे त्याग। बुद्ध निर्मल पाये नाम अनुराग॥
अन्तर ऊँची पवन को खैंचे। ऊँची से फिर नीचा हो बैठे॥
नीचे से ऊँचा हो आई। लख तू लेखा अगम आगाही॥
मूल द्वार में सुरता गाड़ी। आवत जावत भेद लखारी॥
मन के संशे शोक विनास। मूल द्वार में कीजे वास॥
भयो इकागर नाम रस खाई। पवन पुरख का लेख लखाई॥
ज्यों ज्यों अन्तर राखे मनुआँ। शान्त आगाध परसे तनुआँ॥
अनेक विकार विगन सब नासी। साचा नाम जो गुनी उपासी॥
दृढ़ निश्चय जिस जुगत कमाई। मन पवन इक ठौर लगाई॥
नाभ कँवल से अमरत झरया। सुखमन नाली में सो भरया॥
सो अमरत उठ चढ़े आकास। गुरमुख विरले कियो बिलास॥
चढ़े आकास करे टंकोर। नाद ध्यान पावे जन सूर॥

**अन्तर जुगत कमाया, प्रभ का नाम अगाध।**
**'मंगत' कंवल परगासया, नाद पाया बिसमाद॥1182**

अन्तर जुगत जब नाम कमाई। तीन भवन की सोझी पाई॥
सुखमन नाड़ी करे हलोल। अनहद नाद की सुनी कलोल॥
शबद गुंजार करे अत भारी। तिरवैनी अत लेख विचारी॥
चंचल मनुआँ सहजें घर आया। नाद पुरख को परगट ध्याया॥
कर्ता पुरख भयो परगासा। हरजन कीनी चरन अरदासा॥

शबद नीर से दुर्मत धोई। पल पल सुरती नाम परोई॥
ज्यों ज्यों हंग विकार विनासी। निश्चल होवे मन सुखरासी॥
निश्चल मनुआँ सत ठौर पहचानी। अबगत नाद की कथे कहानी॥
नाद को खावे नाद को पीवे। नाद पुरख में जीवन जीवे॥
सुन्न कपाली आसन धारी। बिमल शबद का लेख विचारी॥
रोम रोम मे ठाँड उपजाई। तपन विनास शान्त घर पाई॥
भरम अन्धकार जीव का नासी। चौदस चन्दर कला परगासी॥
दरस पाये मन भयो निहाल। बन्धन नासे गुर भये दयाल॥
मारग अगम का अन्तर जाता। आलख पुरख का लेख पछाता॥
कल्पना नास मन शून समाई। नाद ध्यान परम सुख पाई॥
अचरज कथा अन्तरगत जानी। अलेख अभेद अन्तर पहचानी॥
अजर पुरष घर अन्तर पाई। सरब न्यारा नित वरताई॥
नित परकाश परम कल्यान। पाया ठाकर सहज ध्यान॥
बिख ममता भ्रम मूल चुकाया। अनहद नाद परमपद पाया॥

**साचे नाम की कीरती, मन तन आई समाये।**
**'मंगत' भयो निहाल तब, जब शबद भेद अर्थाये॥ 1183**

तीन भवन में सुरत समाई। सत ठाकर घर भेंटे आई॥
तीन भवन है सार मुकामा। अबगत नाद जाँ करे बिसरामा॥
सुरत पवन जब एका होई। तीन भवन तब लेख लखोई॥
अखण्ड नाद बिमल परगासी। अबगत जोत चानन घर भासी॥
परगट नाद करे घनघोर। तृपत भयो जन गुरमुख सूर॥
प्रभ के चरनी करी अरदास। प्रभ के नाम में लीना वास॥
जीवन पाया प्रभ नाम आधार। निर्मल कीरत घट करी विचार॥
पल पल प्रभता प्रभ की गाई। तब सुरता सत धाम ठहराई॥
पलक विगन ना व्यापे जीया। तीखन घाट में जाये बसीया॥
अधिक चतुराई सतनाम लखाया। सिमर सिमर निर्भय समाया॥
त्रैगुन जाल भरम भयो नासा। तीन भवन सत नाद परगासा॥

निष्काम करम बुद्ध परगट भई। तीन भवन जब सोझी लई॥
स्वारथ त्याग परमारथ जाता। तीन भवन जिस लेख पछाता॥
तृष्ना त्याग भयो निरवास। तीन भवन जिस कियो निवास॥
मोह त्याग वैराग समाई। तीन भवन जो सुरत ठहराई॥
बन्धन नास मुकत घर आया। आलख नाद का भेद लखाया॥
देह की किरया वहाँ ना जाई। निर्मल सुरती लेख लखाई॥
करम त्याग निहकरमत सूझी। तीन भवन शोभा जिस बूझी॥
परमानन्द प्रभ करे निवास। गुरमुख साजन पाई ये रास॥

**बाहर की भरमन त्याग के, अन्तरगत लख लेख।**
**'मंगत' अन्तर रम रह्या, आद पुरख निरभेख॥ 1184**

निरभेख सरूप शबद निर्वानी। तीन भवन गत करो पहचानी॥
शून्यंग नाद करे किलकार। उमड़े जोत होवे उजयार॥
प्रान पवन को सम कर पीये। साचा नाम सिमर के जीये॥
अष्टकँवल दल रसना भारी। चढ़ी आकास भया मतवारी॥
जो जन पीये शबद की सार। सो ही जन जग में भरतार॥
निर्मल चित तिस जन ने पायो। साचा भेद जिस शबद लखायो॥
अत महमाँ शबद की मीता। शबद पछाने होये सुखरीता॥
अन्तर जुगत जो शबद कमाये। वाँग कँवल अलेप रहाये॥
करम द्वन्द ना व्यापे काला। अन्तर शबद देखे उजियाला॥
नित नित चरनी प्रीत कमाई। प्रभ दाते की भये सरनाई॥
साची दात करी प्रभ आप। मारग परसा औघट घाट॥
जतन अधिक गुरमुख घट धारी। निर्मल चित प्रभ चरन चितारी॥
सब कुछ प्रभ का हुआ पछानी। वरत रह्या प्रभ तीन जहानी॥
साखी पुरष सो सरब हज़ूर। साचा नाम सिमर गुनी सूर॥
मिथ्या जाल माया का नासी। परगट नाद पायो अबनासी॥
रुच रुच ताँ में सुरत लगाई। चंचल सुरत घर आन समाई॥
अपना स्वामी चित प्रीत से ध्याया। साध की सिखया घर मंगल पाया॥

विजे भई माया गढ़ जीता। शुद्ध सरूप पाया नाद सुख रीता॥
प्रभ के चरनी लीन समाई। नाद ध्यान अबगत गत पाई॥

**साचा शबद पहचान के, पाया पद निर्वान।**
**'मंगत' दूजा विसरया, सूझा एक ध्यान॥ 1185**

परम पुरख जब घट परगासी। निश्चल चित करे चरन उपासी॥
प्रभ बिन दूजा चित नहीं भाये। प्रभ बिन दूजा देख फ़नाये॥
प्रभ बिन सब करम जंजाला। जन्मे मरे परसे जम काला॥
प्रभ बिन सरब जगत बेठौर। आवे जावे चौरासी घोर॥
प्रभ बिन सब अन्धकार समाई। तृष्ना अगन नित ताप तपाई॥
प्रभ बिन दूजा मिथ्याकारा। सरजनहार एको भरतारा॥
अपरम शोभा प्रभ की घर पाई। साचा ठाकर भये सहाई॥
कीरत गा के मन भया निहाल। अजर धाम की रसना भाल॥
जग जीवन से फीका होई। साचा नाम घट माहीं परोई॥
आपा त्याग रहे नाम आधार। आज्ञा प्रभ की करी विचार॥
सत परकाश जोत परकाशी। तीन भवन खेले अबनाशी॥
गुरमुख साजन निरत कमाई। परगट ठाकर घर दरसाई॥
छिन छिन चरन में सुरता जोड़ी। साचे नाम की पीये कटोरी॥
नाम की रसना से मन तृपताया। भरमन त्याग प्रभ चरन समाया॥
सतगुर साध की सुनी कहानी। घर में परचा मन अभमानी॥
मान मध की मैल गँवाई। अपरम शोभा प्रभ की पाई॥
करम दोख की तृखा निवारी। सहज सील हर चरन पधारी॥
परगट शबद जब अन्तर ध्याई। मोह ममता दुःख जाल मिटाई॥
काल त्याग घर अपने आया। नाद पुरख अकाल ध्याया॥

**बाहरमुख को त्याग के, अन्तरमुख जो आए।**
**'मंगत' सो ही सुगड़े, घर शबद सार लख पाये॥1186**

शबद सार जिस जन ने जानी। सो ही गुरमुख तत्त्व ज्ञानी॥

मनमुख त्याग गुरमुख गत पाई। दुर्मत त्याग सतनाम कमाई॥
मिथ्या छोड़ सत शबद में लागा। सो ही जन जग में वडभागा॥
और को छोड़ निज मन समझाई। एक जपे दूजा विसराई॥
विकार त्याग निर्मान समाया। राम रतन घट अन्तर पाया॥
द्वैत भरम मल ममता धोई। गुरमुख ज्ञान सत समता परोई॥
मैं कर्ता हंकार त्यागा। प्रभ आज्ञा में उठ के जागा॥
मान त्याग ग़रीबी पाई। भाओ भगत धर सेव कमाई॥
सकाम त्याग निष्कामत जानी। पर दुःख हरना कार पछानी॥
हिरदे जाप सतनाम कमाई। परम पुरख की पाई वडयाई॥
मिरतक छोड़ जीवन में लागा। जनम जनम का सोता जागा॥
आपामत दुर्मत को त्यागी। सतगुर सीख सुनी अनुरागी॥
परम प्रीत प्रभ मंगल गाई। अत शोभा घट माहीं मनाई॥
नित अरदास करी प्रभ स्वामी। निश्चल चित पाया बिसरामी॥
खुले कपाट शबद घर पाया। गरजे पवन परम सुखराया॥
गंग जमन सरस्वती मेला। आलख पुरख रमे अलबेला॥
अन्धकार नास जोती परगासा। आलख पुरख शबद निरवासा॥
सत कीरत पूरन तब पाई। एह बिध रहनी जब चित आई॥
अन्तर सुरत निरन्तर जोत। परस परस सत शबद अनूप॥

**प्रभ की कीरत गाए के, मन निज घर जाये समाए।**
**'मंगत' भव से उतरे, बौहड़ गवन नहीं पाए॥ 1187**

आवागवन तिस जन का नासी। इक चित प्रीत जपे अबनाशी॥
माया भरम कुपथ को त्यागी। सतनाम कीरत चित लागी॥
सत साधू की संगत पाई। गुपत भेद ज्ञान अर्थाई॥
नित नित निर्मल ज्ञान विचारी। आतम तत्त का भयो पुजारी॥
चंचल चतराई मन की नासी। निर्मल चित जब नाम उपासी॥
नाम अमोल सतगुर दिखलाया। सिमर सिमर के निर्भय पद पाया॥
जनम मरन अत कठन जंजाला। चित्त नहीं आये प्रभ दीनदयाला॥

मिथ्या मोह माया अधिकाई। पलक जीव ना छूटन पाई॥
अधिक जंजाल तृष्ना बिस्तारी। उठ उठ धाये ये मन अन्धकारी॥
करम भोग में नित फँसाई। जुग जुग भोगे तृपत नहीं पाई॥
पूरन आसा ताईं करे नित जतना। चले निरासा छाड जग सुपना॥
कठन मुहीम माया बिस्तारी। बिना जुगत नहीं उतरे पारी॥
सतगुर साजन मिले किरपालू। मारग मुकत करें दात दयालू॥
सत निश्चय गुर सीख लखाई। तब कुछ सोझी जग में पाई॥
मिथ्या जगत भ्रम नज़री आया। सरजनहार पर निश्चय पाया॥
घट में अपना साजन जानी। तीन लोक में जो परवानी॥
खिमा ग़रीबी मारग पाया। मुकत सरूप भगती रस खाया॥
अबनाशी पुरष घट परगट ध्याई। मूरख जीव को शान्त तब आई॥
पाई शान्त भया निषकाम। शबद पछाना निर्मल धाम॥

**दुर्मत रोग आपार है, सहज मिले नहीं छूट।**
**'मंगत' पद तब परसिये, जब दृढ़ निश्चय मिले अनूप॥** 1188

सत विश्वास जो गुनी पाये। मारग मुकत में सो ही समाये॥
मिथ्याकार ये जग की रचना। भरम विकार वाँग है सुपना॥
जग संसे में मिले नहीं धीर। ओड़क जायें सब दिलगीर॥
भरम भूल में जनम गँवाई। मृग तृष्ना नहीं बिपता जाई॥
चित की भरमन ये ही विकारा। नलनी सूआ ज्यों भरमे सारा॥
अनंक जतन कर जीव ये चाले। मिटे नहीं बिपता करम कराले॥
आस आस में औसर जाई। चले निरास शान्त नहीं पाई॥
भरम फाँस में शान्त देखे। अन्ध बुद्ध धार के भयो भुलेखे॥
एह बिध कोट जनम भुगताये। करम जाल नहीं रोग चित जाये॥
गुरमुख जीवन जब भेद पछाता। शान्त सरूप शबद घर जाता॥
अबनाशी शबद पर निश्चय आया। इक चित होके मंगल गाया॥
मिथ्या भरम विकार को त्यागा। हरजन साचे नाम में जागा॥
नाम ध्यान की करी कमाई। जग आवन की सार लखाई॥
नाम निरंजन अमीरस खानी। अनहद नाद शान्त निर्वानी॥

दृढ़ विश्वास सत सेव लखाई। शबद सरूप देह अन्तर ध्याई॥
मिटी कलपना भया निर्द्वन्द। घर में साखी जोत परचण्ड॥
पूरन भाग उस जीव ने पाया। जिस जीवत में सत शबद लखाया॥
ऐसा शबद अमोल अतोल। परगट होवे जाये भरम का ख़ोल॥
धन्न पुरष जिस परगट पाया। नाद सरूप पूरन प्रभ राया॥

**निर्मल चित विचार से, निश्चय निर्मल होये।**
**'मंगत' सत विश्वास से, गुर की सीख परोए॥ 1189**

अधिक जंजाल माया विख खानी। भरम रहे सकले जग प्रानी॥
साकत बुद्धी नित भरमाई। कड़ी फाँस मोह की लिपटाई॥
आवन जावन देखे संसार। मूरख तो भी पाए पसार॥
रंग अनेक अपने वटाये। तो भी जीव भरम भरमाये॥
इक जावे दूजा नर आवे। जगत सराये नहीं ठहरन पावे॥
जगत भरवास अधिक दुःखदाई। दुःख में विचरें धीर नहीं पाई॥
करो विचार गुनी सत मीत। जग जीवन ये झूटी प्रीत॥
साचा नाम गुर सीख विचार। पावें शान्त शबद निर्धार॥
मिथ्या छोड़ अबनाशी चेत। जनम जनम की मिटे दुःख रीत॥
सत परतीत पाओ दिन रात। उठ के चलना गुनी परभात॥
जीवत में सत करो कमाई। जिस बिध जीव शान्त लख पाई॥
अबनाशी पुरष परमेश्वर कर जाप। दीन दयाल हरे सन्ताप॥
साची भगती मारग को बूझ। योग जुगत सतनाम को सूझ॥
मनमुखता त्यागो दुःख खानी। दीनदयाल की सरन पछानी॥
कारन कर्ता स्वामी जप नीत। आज्ञा बूझ नर होवें पुनीत॥
देवन देव सो ही पादशाह। दृढ़ निश्चे से पाओ पनाह॥
प्रभ सरनाई सब दोख विनासे। परगट पावें शबद सुख रासे॥
सम्पत साची लीजो नित घाल। सत मुशक्कत नाम की भाल॥
बन्धन छूट सतनाम समाई। सुफल भयो कीरत सत पाई॥

**साची भगती घाल मन, दुर्लभ ये ही रास।**
**'मंगत' पल पल जात है, काट भरम की फाँस॥ 1190**

माया भरम अधिक ये फाँसी। आवे जावे जीव चौरासी॥
करम का संशय पल नहीं जाये। कोट जनम जन कियो उपाये॥
भरम गुबार में नित भरमाई। झूट माया अत फेर फराई॥
अपनी भरमन करो त्याग। मानुष जनम का लख लेख वडभाग॥
सुकृत जनम जग में पाई। मारग मुकत लखो सुखदाई॥
काल का बन्धन अत दुःखदाई। जनमे मरे फिर जनम में आई॥
उपजे बिनसे ये काल का जन्तर। त्रैगुन माया धरे रूप भयंकर॥
पाँच तत्त का खेल रचाई। भाँतक भाँत करम प्रगटाई॥
भोग की अगनी अत ही परचण्ड होवे। भरम का बांधा जीव ये रोवे॥
वारापार थाओं नहीं पाये। आस निरासा जग से जाये॥
मोह की निन्द्रा उठ गुनी त्याग। जीवत में सत मारग लाग॥
परम सनेही सुन सतगुर की सीख। साचा शबद अबनाशी घर पेख॥
एक शबद का होओ पुजारी। एक शबद का पाओ आधारी॥
एक शबद की रसना घट पीयो। शबद सरूप में जीवन जीयो॥
शबद परकाश अत परकाशी। जो पूजे कटे करम की फाँसी॥
शबद पछान चित होये निहाल। साची शान्त हिरदे लई भाल॥
मोह अन्धकार अन्तर से नासा। बिमल शबद घट भयो परगासा॥
तन मन वार सत सेव कमाई। भव बन्धन सब ताप चुकाई॥
जोती जोत भया परगास। नाद ध्यान पाई सत रास॥

**दुर्लभ जग में सो आये, जिन पाई साची रास।**
**'मंगत' भरमन त्याग के, पायो शबद अबनाश॥ 1191**

जग आवन की खोजो सार। साची रास करो विचार॥
मोह माया सब घना कलेश। भरम का संशा नहीं मिटे सन्देश॥
सुख कारन बहु घाले घाल। धन भूमी माल इकबाल॥
सुत दारा नाती परिवार। लोक सखा संग कियो विचार॥
महल अटारी कोट औसार। मान मध धारें आपार॥

सरब जीयाँ से बनें तूँ मानी। अपनी शोभा कीरत बहु जानी॥
सुख कारन बहु स्वाँग बनाई। ओड़क देही छार समाई॥
मूरख मनाँ तू क्यों भरमाया। साक संग किसका जग आया॥
अपने करम का भोगें सब भोग। दुःख सुख का जो होवे संजोग॥
ना कोई किसी को सुख दुःख देवे। अपनी करनी सब लेख लखावे॥
करम भोग से जन्मे मरें। करम भोग से जूनी पड़े॥
करम भोग ऊँच नीच फरावे। मान अपमान का चक्कर चलावे॥
करम भोग ये रूप संसार। बांधा जीव नित होवे ख़वार॥
सुख भोगे दुःख रूप समाए। दुख से बौहड़ सुख प्रगटाए॥
दुःख सुख भोग करम जंजाल। पलक ना छूटे जीव दुःख भाल॥
छिन हरखे छिन शोक विचारी। सुख दुःख भोग करे अंगारी॥
बार बार इच्छया भरमावे। साची शान्त नहीं मनमुख पावे॥
एह बिध अनेक जनम को धारी। दुःख सुख भोगे जीव अँध्यारी॥
साचा सुख नहीं सार पहचानी। हाहाकार करें जग प्रानी॥

**करम भोग को भोग के, जीव रहे अशान्त।**
**'मंगत' दुःख सुख द्वन्द में, सदा रहे भरमान्त॥ 1192**

साचा सुख प्रभ नाम विचार। साखी पुरष जो है संसार॥
निर्मल चित से करो उपास। पूरन प्रभ के चरन अरदास॥
भव बन्धन जाये दुःख मूल। दुर्मत रोग जाये सब शूल॥
आनन्द सरूप पावें सत रास। मोह माया की मिटे प्यास॥
असत त्याग सत रूप समावें। दुःख रोग सन्ताप मिटावें॥
निमख निमख पावें सत सेव। जनम जनम का नासे भेव॥
करम फाँस को पल पल काट। मन में साचे नाम को राट॥
करम फल इच्छया तजो विकार। आज्ञा बूझ प्रभ दातार॥
जिस साजन ने बनत बनाई। तिस के चरन रहो लिव लाई॥
सो उपकारी सदा दयाल। मूढ़मती को करे निहाल॥
अनेक पतित सत धाम समाई। सरनागत की तपन बुझाई॥

रे मन प्रभ की सरन पछान। करम जंजाल जाये बिख खान॥
शुद्ध सरूप सदा निर्दोख। नाम सिमर पावें पद मोख॥
निश्चल चित हर चरनी राख। सतपुरषों की कीरत भाख॥
प्रन अपने को दृढ़ कर धारी। नाम निरंजन जप सुखकारी॥
साचे नाम में रह्यो समाई। करम रोग ममता सब जाई॥
अन्तरगत हो सेवा धार। प्रभ दाते की सुन पुकार॥
पल पल तेरी रखया करी। भाओ भगत से सरन पड़ी॥
परगट होवे जब अन्तर मीत। निर्भय धाम का गायो गीत॥

**साची सेवा पाये के, मन तन साचा होये।**
**'मंगत' निर्मल प्रीत से, सत शबद की तार परोये॥ 1193**

साचा शबद जब परगट पाई। करम वासना शून समाई॥
निहकरम सरूप अनादी देवा। सत ठाकर की पाई सेवा॥
उरध कँवल भयो परगासा। अखण्ड शबद ब्रह्म निरवासा॥
नित ही सुरती चरन परोई। अकथ कथा इक नाम जपोई॥
त्रिकुटी मन्दर खुले किवाड़। अनहद गरजे शबद गुंजार॥
सुरती उलट घर अपने आई। ताप त्याग सत शान्त समाई॥
छिन छिन सुरती शबद में लागी। भयो मतवाला गुनी वडभागी॥
करते की कीरत प्रेम से गाई। परतख पायो सत शबद आगाई॥
गुरमुख सुरती घट भेद पछाता। अनहद नाद रम्मत सुख जाता॥
दृढ़ निश्चय जब शबद में धारी। ऊँचे शिखर में जाये पधारी॥
अटल जोत पाई निर्वानी। अनहदनाद पायो अमरत खानी॥
भरम चक्कर संसार विनासा। अबनाशी नाद कियो परगासा॥
साचे रूप संग मेल मिलाई। मिथ्या भरम गई दुर्मत काई॥
पूरन भाग सत साजन पाया। दुर्मत त्याग मंगल चित गाया॥
कोट मद्धे कोई जन आई। साचे नाद की सेव कमाई॥
मिथ्या छोड़ अबनाशी ध्याया। सतगुर सीख परमपद पाया॥
अपने आप में भई ग़लतान। साची रसना करी चित पान॥

द्वैत दृष्ट वासना नासी। नाम रूप की काटी फांसी॥
अबगत शबद में लीन समाई। पूरन भाग जो ये गत पाई॥

**आनन्द पाया संसार में, नास्यो दुःख द्वन्द।**
**'मंगत' अन्तर गाया, सत शबद जोत अखण्ड॥ 1194**

दुर्मत जाल अत कठन कराल। सत सरूप नहीं मिले सुखाल॥
करम की ममता घना चित रोग। बिना जतन नहीं होवे वंजोग॥
अनंक जतन जो भी नर धारे। दुस्तर जाल कठन उतरस पारे॥
अधिक भयानक धारयो कलेशा। निश्चे नहीं आवे रूप जगदीशा॥
एक पलक नहीं धीरज पावे। करम की ममता चक्कर फरावे॥
करम फल भोग की आसा धारी। अनंक मनोरथ नित विचारी॥
संसा रूप ये ही संसार। दुर्गम घाटी नहीं पारावार॥
सत सन्देश सुनो गुनी मीता। पावें निर्मल शान्त सुखरीता॥
दृढ़ पुरषारथ हिरदे राखो। करम वासना मन से काटो॥
भरम ज़ंजीर तोड़ो दिन रात। एक नाम साहब अन्तर राट॥
बारम्बार मन को समझाई। सत ठाकर के चरन समाई॥
सरजनहार की रख चरनी चेता। दुर्मत जाल की मिटे विखेपा॥
मन अपने को पवन संग जोड़ो। आवागमन का संशय तोड़ो॥
उलट पलट पवन को कीजो। साचा नाम निरन्तर पीजो॥
अधिक बिरह राखो प्रभ चरने। सरजनहार की रहो नित सरने॥
दासा भाओ ग़रीबी राख। मान त्याग निर्भय पद चाख॥
अनंक विगन तेरे नर जायें। निर्मान भाओ की साखी जो गायें॥
रूच रूच चरनी राखें प्रीत। अन्तरगत गावें नित गीत॥
अपने मन की करे सुथराई। सत परतीत प्रभ शोभा गाई॥

**मोह ममता को त्याग के, प्रभ चरनी चित राख।**
**'मंगत' मिले तब शान्ती, जब नाम अमीरस चाख॥ 1195**

मन का भरमन होये विनासा। प्रभ के चरन में करें निवासा॥

अन्तरगत सत कीरत गायें। उट्ठत बैठत नाम ध्यायें॥
स्वारथ बुद्ध नासे अन्धकार। पद परसें तब निर्मल सार॥
सो परमेश्वर पतत उद्धारी। पल पल तिसकी सरन विचारी॥
बिन प्रभ दूजे नहीं कभूँ सलाह्यो। प्रभ की शकत सब में वरतायो॥
सरब शकत का सो दातारी। निर्मल चित नित सेव विचारी॥
देह पिण्ड का सो ही स्वामी। नित रखयक प्रभ पारगरामी॥
रे मन मूढ़े सरन विचार। बिन प्रभ सेव सकल दुःख सार॥
जम जुरमाना कभू नहीं नासे। आवागवन नहीं टूटे फाँसे॥
ग्रहन त्याग नहीं दूषना जाई। राग द्वेष अगन तपताई॥
भरम ग़ुबार अत घना कलेश। मिले ना छूट माया सन्देश॥
जो तूँ अन्तरगती विचारें। मन की भरमन का लेख लखारें॥
सत परमेश्वर पर निश्चय पायें। साची कीरत तिस की गायें॥
मन माने सतनाम ज्ञाई। सकल ताप भ्रमजाल मिटाई॥
जीवत में करें मरन विचारी। आसा अगन की करें तू छारी॥
आनन्द सरूप शबद रस मीता। तिस पान करें तब होयें पुनीता॥
जुगा जुग साखी ये चली आई। प्रभ की पूजा ताप बुझाई॥
सब गुनियों ने कियो बखान। प्रभ का सिमरन दे कल्यान॥
सकल सिद्धान्त की इक सार। मिथ्या जगत सत करतार॥

**प्रभ करते की प्रीत में, तन मन करो त्याग।**
**'मंगत' पावें सत शान्ती, नित साध चरन चित लाग॥ 1196**

मारग मुकत की सार पछान। निश्चय राख चरन भगवान॥
सो जगदीश सब ताप निवारी। नित ही तिसकी लयो सेव विचारी॥
ताप तपन सकले दुःख नासे। शान्त सरूप अन्तर परगासे॥
चंचल मनुआँ लीन समाई। साखी पुरष की कीरत गाई॥
करनेहार को निश्चे मानी। आज्ञा बूझ सेव पहचानी॥
सकल दात का सो दातारी। भज गोबिन्द परम सुखकारी॥
तूँ करतार परम समराथा। देवों का देव तू नाथन नाथा॥

सब रंग तेरा है परताप। पल पल प्रभ जी कीजूँ जाप॥
अगन रूप संसार की किरया। काल चक्कर सब माहीं पसरया॥
कित उपजे कित नाश हो जाई। आस में आवे नित दुःख पाई॥
भरम जंजाल नहीं चित से जाई। एक त्याग दूजे को पाई॥
बौहड़ बौहड़ जूनी को धारी। काल चक्कर नित करे खवारी॥
आसा जीवन देखे मरना। अद्भुत खेल काल पसरना॥
जो उपजे सो निस्चे नासे। अनमत जीव धरे भरवासे॥
नाशवान से हेत लगाई। घना कलेश अन्तर में पाई॥
जल जल पड़े ये मूरख जीया। काल भरम नित फेर फरीया॥
संशय शोक दुर्मत चित थापी। हंग विकार अन्तर में जापी॥
कूड़ झंजट में अन्ध फँसाया। तीन काल रहे तपे तपाया॥
बिना भगत नहीं मारग सूझे। आवन जावन भरम नित बूझे॥

**बंधीखाना जगत ये, काल चक्कर फिराये।**
**'मंगत' बिन प्रभ सिमरने, सभी गुनी भरमाए॥ 1197**

पारावार कुछ नज़र ना आई। प्रभ दाते जो खेल बनाई॥
बिन्द से पिण्ड की उतपत कीनी। मोह बस होए जीव दुःख छीनी॥
दुर्मत रोग में देह को धरया। जीवत में ये रोग पसरया॥
भाँत भाँत की औखद खाई। दुर्मत रोग नहीं शान्त पाई॥
अत ही अत रोग बढ़ गयो। काल पुरख ने जीव गरसयो॥
जनम मरन नहीं मिटे तरासा। दुर्मत रोग का जो तमाशा॥
दुर्मत बान्धा नित भरमाई। दुर्मत में नित आवे जाई॥
दुर्मत में सुख दुःख को धारी। एक पलक नहीं शान्त विचारी॥
दुर्मत में सकला बिस्तार। दुर्मत रूप सकल संसार॥
सतगुर मेल तब भेद पछाता। अबनाशी पुरष घट अन्तर जाता॥
परीपूरन निरदोख समाई। सकल खेद से परे रहाई॥
नित परकाश आप परिपूरा। दुर्मत भरम नहीं धरे हज़ूरा॥
शान्त सरूप जुग जुग समाई। अत निर्मल साहब वडयाई॥
जिस जानी ये निर्मल सार। दुर्मत रोग से पाये निस्तार॥

सर्वज्ञ देखे एको देवा। मन से कीजे तिस की सेवा॥
अपना सरजनहार पछानी। आज्ञा तिस की हिरदे मानी॥
भाओ भगत सतनाम कमाई। सत सील सन्तोख समाई॥
अगन विनासे शान्त परगासी। शबद सरूप मिले अबनासी॥
नित ही रमयो प्रभ चरनी माईं। दुर्मत रोग फिर निकट ना पाईं॥

**पाई ख़ुलासी भरम से, ज्ञान भयो परगास।**
**'मंगत' नज़री आया, आद पुरख अबनास॥ 1198**

जग संशे का करो विचार। लेख ना आवे ये अन्धकार॥
सतगुर की सत सीख पछान। हिरदे आवे एक भगवान॥
बन्धन नास सब बिपता हरी। किरपा सिन्ध की नित सरनी पड़ी॥
बारम्बार मन को समझाई। नाम रतन लयो अन्तर गाई॥
अती भयंकर दुर्मत विस्तार। प्रभ की भगत देवे निसतार॥
साची भगती का मारग खोज। तृपत समावें पावें सत सूझ॥
करूँ दुहाई पल पल सार। साचा नाम सिमर सुख सार॥
नाम बिना नहीं भरमन जाई। त्रास त्रास नित जीव लखाई॥
अती अत संकट जगत का खेला। मिथ्या भरम का सकल झमेला॥
जतन अनेक चित माहीं कमाई। सकल अकारथ प्यासा जाई॥
अती अन्धकार में जीव गरसाया। वारापार नहीं भेद लखाया॥
आदी अन्त नहीं मिले ठिकाना। अनमत जीव नित ही भरमाना॥
जिस वस्तु संग हेत लगाई। छिनभंगुर सो ही मिट जाई॥
नित वंजोग नित ही दुःख पाये। मूरख मन नहीं सार लखाये॥
अपना सरजनहार विसारी। मोह वस होए के पाई ख़वारी॥
भरम की निंद्रा से अब नर जाग। सत ठाकर की चरनी लाग॥
सो दीनदयाल सरब सुखराओ। भरम त्याग सत सेव कमाओ॥
पाप करम इच्छया को त्याग। सत करम सत सेवा लाग॥
पावें सूझ होये भरम विनास। अन्तर पावें शबद परगास॥

**छाड ये बिपता जगत की, सिमर लीजो प्रभ राये।**
**'मंगत' प्रभ की भगत से, जीव दुस्तर तर जाये॥ 1199**

प्रभ का रूप है सार ठिकाना। सकल जगत वहाँ जाये समाना॥
प्रभ का रूप सरब का बिन्द। नित परकाशे कोटी पिण्ड॥
प्रभ का रूप सरब आधारी अनहोई को करे विस्तारी॥
प्रभ का रूप सरब गत देवे। शुद्ध सरूप त्रैकाल बसेवे॥
प्रभ का रूप है अपरम आपार। आदी अन्त नहीं आवे शुमार॥
प्रभ का रूप सरब परबीन। अखण्ड शान्त हिरदे में चीन॥
अपरम महमाँ अतुल परताप। पार पुरख को हिरदे जाप॥
जनम जनम का जाई संदेशा। प्रभ की भगत सब हरे कलेशा॥
बन्धन नासे मुकत को देवे। प्रभ की भगत जो हिरदे सेवे॥
अज्ञान सरूप जाये दुर्मत रोग। निर्मल कीरत प्रभ नाम संजोग॥
निश्चय राखो ये ही सुखदाई। साची प्रीत लयो चरन ध्याई॥
प्रभ जी हरयो मेरा सन्ताप। अत संकट नास्यो सब पाप॥
अपने रूप की दयो वडयाई। साची कीरत तेरी चित समाई॥
निमख निमख मैं करूँ पुकार। तूँ सत साजन नित बलिहार॥
तेरे चरन की राखी ओट। लाज रखो हरयो बिख खोट॥
भरम ग़ुबार से जीव छुड़ायो। अपने चरन की सेव लखायो॥
नित सेवूँ नित बन्दूँ चरना। तूँ समरथ प्रभ कारन करना॥
तेरी दात पावाँ सुखदाई। अन्तर में गुन ये मन गाई॥
मन की मलन दोख सब नाशी। खेम कुशल पाऊँ अबनाशी॥

**अतुल शकत भंडार तूँ, अतुल तेरा फ़रमान।**
**'मंगत' प्रभ को पाया, साखी तीन जहान॥ 1200**

मन मेरे की दुबधा काट। दीनदयाल पुरख सुखदात॥
ज्ञान ध्यान कछू नहीं पाया। जप तप योग नहीं हिरदे आया॥
दान पुन्न ना तीरथ नहाई। ना विद्या ना कीरत गाई॥
ना कोई जतन यथारथ कीना। ना कुछ सूझ बूझ को लीना॥
जाप ताप नहीं किरया जानी। तुध परताप नहीं कियो पछानी॥

ना सत सिखया हिरदे पाई। ना रसना तेरी पल गाई॥
ना प्रीत ना सेवा जानी। काल करम नहीं कियो पछानी॥
अपना जनम मरन नहीं जाता। अर्थ यथारथ नहीं पछाता॥
दीन ग़रीबी नहीं हिरदे आई। मान गुमान में औसर जाई॥
एक पलक नहीं कियो विचारा। कौन मेरा सत सरजनहारा॥
कह कारन इस जग में आया। अन्तकाल किस थाँ समाया॥
पशु समान सब औध गँवाई। अब होवत क्या मन पछताई॥
रंचक गुन नहीं हिरदे पायो। सत ठाकर कैसे हरखायो॥
दीनदयाल आपे किरपाल। अनमत कूकर को करे निहाल॥
अपनी किरपा करे किरपालू। अपनी दात प्रभ करे दयालू॥
तब कुछ जीवन काज हो जाई। प्रभ दाते की जाऊँ सरनाई॥
अपरम अपार तूँ सरब स्वामी। राख लें जन अन्ध निहथामी॥
भाओ भगत अपनी चित दीजो। मेहर करो रसना सत सीजो॥
अनन भगत माँगूँ सुखरीत। दात करो प्रभ परम पुनीत॥

**सत ठाकर के चरन को, नमों नमों चित माहीं।**
**'मंगत' करे उद्धार प्रभ, पूरन पार गुसाईं॥ 1201**

जो चित सेवा निर्मल पाई। दु:खी जीव को शान्त आई॥
सत भगती प्रभ चरन पछानी। छिन छिन सेव हिरदे में जानी॥
ताप मिटे मन निज घर आई। सत ठाकर की पाई सरनाई॥
दीनदयाल जब किरपा करी। सत मारग की सूझत पड़ी॥
बिपत त्याग मनुआँ घर आया। साचे नाम का भेद लखाया॥
नाम सिमर के अतुल सुख पाई। किरपासिन्ध की अत वडयाई॥
जुग जुग ठाकर रखया करी। सरनागत जो जीव नित पड़ी॥
रे मन मेरे सत ओट सम्भाल। दुर्मत रोग मिटे जंजाल॥
एक साहब की कीरत गाओ। एक साहब की रसना ध्याओ॥
एक साहब का हो विश्वासी। एक साहब की करो उपासी॥
एक साहब को बन्दना कीजो। एक साहब आधार नित लीजो॥

पत्तित पावन सो पारगरामी। संकटमोचन सरब स्वामी॥
अत परकाश आप परगासी। नाम सिमर तूँ अज अबनासी॥
मंगलकारी तिस की सेव। आदेस करो प्रभ देवन देव॥
सत ठाकर सदा रखवारी। सरनागत पर किरपाधारी॥
तिस दाते के चरन पधार। उतरें भव दुसतर से पार॥
तूँ परमेश्वर अनखुट भंडारी। हरो विकार प्रभ पार मुरारी॥
तेरे चरन प्रीती मन तन समाये। उट्ठत बैठत महमाँ चित आये॥
नित ही नेहों राखूँ तेरे चरना। तूँ दयाल बिपत सब हरना॥

**बिपत निवारनहार तूँ, सरब दयालू देव।**
**'मंगत' निर्मल प्रीत से, पाऊँ चरन की सेव॥ 1202**

एक चरन का रहे भरोसा। दात करो साहब अबनासा॥
मीन नीर ज्यों हेत अधिकाई। चन्द चकोर ज्यों प्रीत कमाई॥
भौरा ज्यों सुगन्ध लपटाया। ज्यों दीपक देख पतंग जराया॥
एह बिध भगत कमाऊँ तेरी। दात करो ये दात घनेरी॥
अनंक जीवों की बिपता टारी। जुग जुग ठाकर किरपाधारी॥
साँझ बनाओ नेहों तोड़ निभाओ। पूरन पुरख सत दात लखाओ॥
तेरे चरनी जाऊँ बलिहारी। होवें किरपाल तूँ पुरख मुरारी॥
सागर ज्यों तुरंग समाई। एह बिध तुध में चित लिपटाई॥
मोर तोर जाये अन्धकारा। सरब जगत पाऊँ तेरा पसारा॥
तेरी आज्ञा में निश्चल रहाऊँ। तेरी दात सदा सुख पाऊँ॥
प्रभ जी अन्ध को करो निहाल। बन्धन छूटे दुर्मत जाल॥
सरब निधान सरब सुखरासी। आद अन्त में तूँ ही निवासी॥
तेरी तुझ को करूँ डण्डोत। दीनदयाल तेरी इक ओट॥
तेरी महमाँ का तूँ ही ज्ञाता। अपरम आपार पुरख बिधाता॥
तेरा प्रभ जी अजब पसारा। लिखत नहीं आवे लेख अपारा॥
निर्मल नाम की माँगूँ भीख। सिमर सिमर पाऊँ सुख लेख॥
तपत विनासी घर शान्त पाई। कीरत साची तेरी चित गाई॥

आलख आपार तेरा सब खेल। विछड़े जीव को पल लेवें मेल॥
दीनदयाल तूँ अत किरपाल। तेरी दात करे निहाल॥

**भय भरम शंका मिटे, चित पावे विश्वास।**
**'मंगत' प्रभ की सरन में, निर्भय लीना वास॥ 1203**

मन अपने का संशय छोड़। नाम निरंजन चित में जोड़॥
बारम्बार कहूँ समझाई। बिन हरी भगत छूटन नहीं पाई॥
बारम्बार करें गुनी पुकार। भज भगवन्त परम सुखसार॥
सतगुर साचे ये लेख लखाई। साचा नाम सब खेद मिटाई॥
वेद ग्रन्थ सुने इतहासा। सकली महमाँ प्रभ की परगासा॥
सतपुरषों की नीती जानी। एको ओट साहब लख पानी॥
हिरदे अन्दर कियो विचार। सत मेरा है सरजनहार॥
जिस ने सकला खेल रचाया। राग रंग जगत बनत बनाया॥
सो वडदाता सरब सुखरासी। तिस का नाम कटे भरम फाँसी॥
सत साजन की रसना बूझी। सरब सार भगत प्रभ सूझी॥
दुर्मत त्याग प्रभ सरन पछान। पततपावन देवे कल्यान॥
और भरोसा राख ना कोई। प्रभ दरबार की सेव लखोई॥
साध संगत प्रभ का दरबार। प्रभ की कीरत करें विचार॥
रूच रूच संगत सेव कमाई। तब ही लाभ जीवन का पाई॥
समरथ पुरष सरब अतीत। साध संगत में गाया गीत॥
साध चरन जाऊँ बलिहार। निश्चय दीना प्रभ दातार॥
प्रभ चरनी आया विशवासा। साध संगत से पाई रासा॥
निर्भय धाम में जाये समाया। साध संगत ये सार लखाया॥
नित बलिहारी साध की धूड़ी। प्रभ दरबार की मिली मज़दूरी॥

**सेव सेव मन तृखा निवारी, मनुआँ भयो अचिन्त।**
**'मंगत' साचे नाम को, पल पल लियो जपन्त॥ 1204**

सो परमेश्वर किरपा धारी। साची सेव सत नाम लखारी॥

भरम त्याग पाई निर्मल बुद्ध। साचे नाम की पाई सुध॥
अमरत नाम सब ताप निवारी। निश्चल चित घट माहीं चितारी॥
एक नाम की साखी गाई। एक नाम की रसना पाई॥
एक नाम का पाया आधार। हरजन जीत लियो संसार॥
एक नाम सरब का मूल। पल पल में तिसको ना भूल॥
दुर्मत त्याग नाम चित धार। भव बन्धन से उतरें पार॥
जरा मरन से मिले ख़ुलासी। एक नाम का हो भरवासी॥
नाम ध्यान चित शान्त लखाई। अन्तरगत में सोभा पाई॥
निर्मल चित प्रभ नाम चितारी। प्रान पवन में दृढ़ कर धारी॥
आवत जावत पवन पछानी। साचे नाम की कथी कहानी॥
साचा नाम हिरदे से गाई। हिरदे में ही रहे समाई॥
जीब्भा मौन नैन मुंधाये। अन्तर हो के नाम कमाये॥
बैठ इकान्त ध्यान धरीजे। साचे नाम की रसना पीजे॥
चिन्ता आसा जाये ग़ुबार। हर के नाम का करे ब्यौहार॥
प्रभ का नाम जीवन नित देवे। निर्मल चित से गुरमुख सेवे॥
निहचल आसन सुरत अडोल। साचे नाम को अन्तर तोल॥
साचा प्रेम परगट जब पाई। तब ये मनुआँ लीन समाई॥
उट्ठत बैठत चेता धारी। निश्चल चित सतनाम विचारी॥

**मन की विरती लीन भई, नाम रतन को खाये।**
**'मंगत' नित आनन्द में, हरजन मगन समाये॥ 1205**

मनुआँ दुष्ट आया घर माहीं। सुकृत सीख देवे सुख थाईं॥
नाम अमीरस पान करीना। आदी अन्ती एको चीना॥
छाड सयानफ़ नाम विचारी। प्रभ आधार जीवन को धारी॥
मन की सकली भूल चुकाई। साचे नाम की कीरत पाई॥
नाम सिमर मन भयो इक रंग। पार पुरख का पायो परसंग॥
अज अबनाशी देव पुनीता। अन्तरगत में लेख लखीता॥
सरब सुख अन्तर में पाया। निश्चल चित जो नाम ध्याया॥

सरब आधार परमेश्वर जाता। जल थल माहीं एक समाता॥
अन्तर जुगत भया परगास। पाया नाद पुरख अबनास॥
आदी मूल सो ही जग देखा। साचा ठाकर सरब समीपा॥
बारम्बार करी परनाम। घर में पाया निर्मल धाम॥
सकल मुशक्कत पूरी भई। नाम सिमर गत अचरज लई॥
कहन कथन नहीं आई सार। जो घट अन्तर किया विचार॥
जो जुग चारे लेख लखाऊँ। तो भी पारावार नहीं पाऊँ॥
अत परकाश आपे परकासी। घट घट खेले सो अबनासी॥
सरब जीयाँ का आप स्वामी। सरब व्यापक अन्तरयामी॥
सुकृत कीना भये दयाल। अनमत को प्रभ कियो निहाल॥
तेरी कीरत का अतुल परमान। गुनी मुनी नित करें बखान॥
जिस जन पर प्रभ किरपा करी। तिस जन अन्तर सोझी पड़ी॥

**अन्तर की गत जिस लखी, नाम रसना पाई।**
**'मंगत' व्याधी भरम की, सकली लीन समाई॥ 1206**

भरम गयो पायो परगासा। प्रभ चरनी लयो निवासा॥
चंचल मनुआँ धीर समाया। नाम निरंजन अन्तर गाया॥
सरब जीयाँ संग प्रीती पाई। सब का हेत अन्तर लखाई॥
पर उपकार पाया सत काजा। दीनदयाल पायो सरब निवाजा॥
नित सरनागत साहब जानी। निर्मल ओट तिस की पहचानी॥
अपना आप त्यागा रंग। साचे नाम का सुना परसंग॥
पलक ना विसरे सो पार स्वामी। आनन्द सरूप सरब बिसरामी॥
निश्चल चित जब नाम ध्याई। अचरज खेल अन्तर में पाई॥
अनहद नाद परगट घर होई। सत ठाकर ने दुबधा खोई॥
सो ही स्वामी सो ही देवा। पल पल कीनी तिसकी सेवा॥
अखण्ड प्रेम चित माहीं समायो। एक पलक नहीं विसरन पायो॥
प्रभ दाते ने सुनी पुकार। हरयो सकल दुर्मत विकार॥
अबनाशी पुरष घट माहीं परगासा। नेहचल चित से करी अरदासा॥
सब ही खेल तिसका पहचानी। आज्ञा तिसकी चित से मानी॥

सरब निवाज़ी तूँ ही देवा। संकट नासे तुमरी सेवा॥
तुमरी सेव पाई वडभाग। पूरे गुर की चरनी लाग॥
खेम कुशल घर माहीं समाया। अन्तर में साहब दरसाया॥
कूप कलपना सकली नासी। ध्यान पायो केवल अवनाशी॥
मिथ्याकार संसार दिखाई। सत कीरत जब प्रभ की पाई॥

**सत परमेश्वर ध्याये के, निर्मल भयो चीत।**
**'मंगत' बिन भगवन्त के, सब जग भरम की भीत॥ 1207**

भरम गयो पाया उजयारा। साखी सरजनहार चितारा॥
साचा नाम तिसका नित ध्याई। चेत चेत परम सुख पाई॥
चित में नाम नाम चित माहीं। नेहचल मनुआँ आवे थाहीं॥
सुकृत सीख सतगुर समझाई। भरम त्याग सोभा सत पाई॥
अन्धकार विनास पायो परगासा। अजर पुरख सरब सुखरासा॥
नाम रतन की महमाँ आपार। जो सिमरे सो उतरे पार॥
सरब जगत भरमें भुलाई। जो नहीं साचा नाम ध्याई॥
सरब जगत अगन में तापे। काम क्रोध धारे सन्तापे॥
सरब जगत निहथाँवाँ जाई। नाम सिमर सत थाओं समाई॥
सरब जगत भरमे अन्धकार। मिथ्या मोह में करें विकार॥
सरब जगत निरासा जाये। नाम जपे तब तृपत समाये॥
सरब जगत अत ही दुःख पाई। मिथ्या मोह में रहे गरसाई॥
सरब जगत भय काल का पायो। निर्भय होये जब नाम ध्यायो॥
अपरम आपार नाम वडयाई। गुरमुख साजन लेख लखाई॥
भरम त्याग उठ नाम चितार। खाट लीजो जग जीवन सार॥
समाँ जात फिर हाथ ना आई। सिमरो नाम परम सुखदाई॥
जीवन में सतनाम सम्भाल। बन्धी छूटें माया जाल॥
जीवन में ये ही सार घनेरी। नाम जपो फिर पाओ नहीं फेरी॥
सकल कमाई का फल पायो। जो चित साचे नाम समायो॥

**कोई वस्तु नहीं संसार में, जो चित देवे धीर।**
**'मंगत' नाम गोबिन्द का, हरे सकल तकसीर॥ 1208**

साचे नाम को हिरदे जाप। मानुष जनम की कीरत खाट॥
दुर्लभ काज ये ही संवार। जग आवन की साची सार॥
अमरत नाम सिमर गोबिन्द। दुर्मत जाल से छूटे जिन्द॥
भरम गुबार को हरनेहारा। नाम जपो केवल सुखसारा॥
सकल जगत का जीवन जोई। गोबिन्द रूप पछानो सो ही॥
सरजनहार स्वामी चेत। दुष्ट मन की हरो विखेप॥
बारम्बार करूँ पुकार। साचे नाम को हिरदे धार॥
साचा नाम हिरदे परगासे। दुर्मत जाल की काटे फाँसे॥
तन मन सुकृत भये निहाल। जब चित आवे दीनदयाल॥
सकली किरया प्रभ चरनी सौंप। नाम निरंजन की पाओ चौंप॥
सो ही देव सो ही दातार। बारम्बार करो निमस्कार॥
अनमत जीव को देवे ठिकाना। साचा साहब पार सुजाना॥
सकल विकार नाम प्रभ नासे। साखी पुरष अन्तर परगासे॥
निश्चल ध्यान अन्तर समाई। नाम जपत सत सार लखाई॥
अनहद नाद करे घनघोर। परगट भये आप हज़ूर॥
पतत जीव की त्रास मिटाई। परगट होके भये सहाई॥
सुरत समाई शबद के ध्यान। गुरमुख खेली खेल चोगान॥
करम त्याग शबद को पीवे। बौहड़ काल की फाँस नहीं लीवे॥
अबगत शबद परापत पाई। ताँ में सुरत लीन समाई॥

**दुर्लभ आया जगत में, जीव सो ही गुनवन्त।**
**'मंगत' सिमरन पाया, जिस एक नाम भगवन्त॥ 1209**

नाम बिना नहीं शान्त पायें। जो जुग चारे भोग कमायें॥
चलें निरास ओड़क की बारी। करम विकार बिपता सिर भारी॥
अपनी करनी फेर फराई। ज्यों ज्यों कीजे त्यों दुःख पाई॥
मारग शान्त सो सुखरास। साचे नाम की करो उपास॥

नाम साहब का संकट नासी। निश्चल चित जो करे उपासी॥
नाम साहब का अतुल परमान। जो इस मन को दे कल्यान॥
बारम्बार करो डण्डोत। प्रभ दाते की राखो ओट॥
मन में साची कीरत भाल। साचा हुकम सुन दीनदयाल॥
साची सेव मन तन में धार। निष्काम प्रीती करो विचार॥
कारन कर्ता ठाकर जोई। सरब शकत तिस माहीं परोई॥
मान त्याग कर चरनी सेव। हरखत होवें पूरन गुरूदेव॥
परगट हो के दरस दिखाई। अधिक छबी वरनी नहीं जाई॥
कोट भान सम जोती परगासा। अनहद नाद खेले अबनासा॥
बजे बजन्तर उपजे तान। घट में देख साहब निर्वान॥
बन्धीखाना जगत अन्धकार। नाम जपत नर उतरें पार॥
अपनी अन्त की रास सम्भाल। साचा नाम सिमर गोपाल॥
अपना खोज तूँ सार ठिकाना। सिमरो शबद अखण्ड निर्वाना॥
अपना जीवन खोज निधान। कौन निवाजे देह मचान॥
अपना भला बुरा विचार। साचा नाम सिमर सुखसार॥

**बन्ध खुलासी खोज तूँ, मारग मुकत पछान।**
**'मंगत' नाम ध्याइये, जो देवे कल्यान॥ 1210**

पूरन पुरख सरब जगदीश्वर। गावें नित नित मुनी मुनीश्वर॥
अन्तर तेरे करे परगास। आद पुरख पूरन अबनास॥
निरविगन निरदोख समाई। प्रभ दाते की अत वडयाई॥
अपने अन्तर कीरत गाओ। पल पल तिस की सेव कमाओ॥
सकले ताप भसम हो जाई। परगट पावें शबद आगाई॥
ऐसा शबद अमोल जग आया। सकल जीव का ताप मिटाया॥
ताप तपन का हरने हारा। साखी शबद करो विचारा॥
नाद सरूप तत्त गत जान। साखी शबद सो ही परवान॥
अन्तर रमया नहीं दृष्टी आवे। सतगुर मेल तब भेद लखावे॥
जरा मरन नहीं काल सन्तापा। निश्चल ध्यान पाओ सत जापा॥

उसतत योग्य साहब वडयाई। जो इस मन की तपन बुझाई॥
उस्तत योग्य साहब का रूप। सदा अखण्ड जो बसे अनूप॥
उस्तत योग्य साहब का खेला। अचरज रचया ये जगत का मेला॥
बारम्बार चित चरन चितार। बन्ध खुलासी करे करतार॥
बिपत निवारी सत धाम लखाई। प्रभ दाते की अतुल वडयाई॥
मिथ्या देह की कैद छुड़ाई। साखी पुरख तेरी अत वडयाई॥
ज्ञान ध्यान पायो विचारा। अन्तर में सतपुरख लखारा॥
परम विवेक बुद्धी परगासा। पायो विश्वास साहब अबनासा॥
निमख निमख में शोभा गाई। दुर्मत त्याग सत रूप समाई॥

**अबनाशी की सेव से, नाशवान दुःख दूर।**
**'मंगत' जुगत विचार के, नित सिमरो प्रभ हज़ूर॥ 1211**

अबनाशी की सेवा पाई। मिथ्या देह का मोह बिनसाई॥
बारम्बार कियो विचारा। देह मिथ्या सत सरजनहारा॥
सत को छोड़ झूट गरसाया। मिथ्या देह में नित भरमाया॥
देह के भोग अगन अत भारी। रहे अशान्त जीव अन्धकारी॥
देह विनास जीव दुःख बहु पाई। देह ममता की बहु फेर फराई॥
सत तत्त खोज जीवन सुख रास। आतम जोत पुरख निरवास॥
अबनाशी की सेव कमाओ। अबनाशी की कीरत गाओ॥
अबनाशी का धरो ध्यान। अबनाशी पूज पावें कल्यान॥
अबनाशी तत्व की कथा विचार। जो चित का नासे अन्धकार॥
अबनाशी की ओट सम्भाल। अबनाशी घट अन्तर भाल॥
अबनाशी की जुगत पछान। मारग मुकत मिले निधान॥
अबनाशी का खोज परताप। नाम रूप जाये सन्ताप॥
अबनाशी संग मन को बेध। दुर्मत रोग होवे चित छेद॥
सरब आधार अबनाशी देख। परम पुरख का लख तूँ लेख॥
झूट देही में क्यों भरमाई। एक पलक में छार समाई॥
औगन देवे देह की ममता। जनम मरन में नित भरमन्ता॥

देह के भोग हैं काल सरूप। आतम बिसरे पावें दुःख कूप॥
निर्मल ज्ञान हिरदे में धार। अवनाशी पुरष का करो विचार॥
देह अन्दर निर्देह समाई। अवनाशी खोज परम सुखदाई॥

**सत की कीरत नित करो, सत को करो परनाम।**
**'मंगत' सत सरूप ही, जीव का निर्मल धाम॥ 1212**

जब लग झूट भरम भरमाई। अबनाशी तत्त ना लखने पाई॥
जब लग देह को सत कर मानी। आवे जावे चारे खानी॥
जब लग देह का नहीं अन्त पछाना। मिले नहीं पार पुरख निर्वाना॥
साची सीख करो विचार। अबनाशी खोज पूरन जग सार॥
जिसकी शकत से शक्तीमाना। जिसके बल से तूँ बलवाना॥
जिसके परकाश से तूँ परकाशें। मूढ़ जीया क्यों नाहीं उपासें॥
जिस आधार सब खेल लखावें। सकल जगत की रसना पावें॥
सो परमेश्वर जप पार मुरारी। शकत अपार नित किरपाधारी॥
पूरन चित से करो अरदास। मिथ्या भरम की काटे फाँस॥
शबद सरूप पुरख अबनाशी। सेव करो सब बन्धन नासी॥
शबद सरूप सरब गत स्वामी। घट घट व्यापा अन्तरयामी॥
नित ही अन्तर नाम चितार। चित का नासे सकल विकार॥
नाम ध्यान जभी रँगराते। अबनाशी शबद पायो परगासे॥
काया शुद्ध शबद अबनाशी। सेव सेव भई बन्ध खुलासी॥
अबगत शबद की महमाँ आपार। लिख तूँ साचा लेख गुनकार॥
मध मान में क्यों गरासा। कूड़ भरम का लयो भरवासा॥
भरमन छाड समाँ विचार। अबनाशी शबद का निरना धार॥
मन बानी की गम जाँ नाहीं। शबद अबनाशी व्यापे उस थाईं॥
मन को जब अत निर्मल कीया। अबनाशी शबद का भेद तब लीया॥

**साची जुगती खोज तूँ, जो मन को धीरज दे।**
**'मंगत' गुर की सेव से, सार जुगत को ले॥ 1213**

निर्मल जुगती करी विचार। घर में पाया सरजनहार॥
देही कोट अजब ये साजा। साचा साहब घट माहीं बिराजा॥
सत जुगती से पाया भेद। जनम मरन का नास्यो छेद॥
अबनाशी पुरख चेतन परगास। घट घट अन्दर करे बिलास॥
निर्मल नाम जब चित समाई। तब शोभा जन घर में पाई॥
नौ द्वार देह मन्दर धारी। भरमे जीव तिनमें अन्धकारी॥
करम चक्कर में जीव भरमाई। नौ द्वार में करम लखाई॥
दसवाँ द्वार गुपत समाया। निहकरम सरूप बसे प्रभराया॥
सतगुर मेल खोलें दसवाँ ताला। आप बराजे सिरी गोपाला॥
बजे बजन्तर अत ही भारी। प्रभ दरगाह की शोभा अपारी॥
सिंद्धा मुनियाँ मंगल गाया। अच पच रहे भेद नहीं पाया॥
कह बिध रचना साहब कीनी। लिख लिख थाके नहीं लेख लखीनी॥
आपे सरजे आपे जाने। साहब दाता सरब रंग माने॥
गुरमुख साजन सेव कमाई। अन्तरमुख हो सोझी पाई॥
परमानन्द नाद निर्वानी। अनहद नाद प्रेम की खानी॥
पवन अश्व पर करे असवारी। तप का खण्डा शस्तर धारी॥
सत सील का तीर चलाई। घट के शत्रू सकल मिटाई॥
विजे पाई गढ़ ऊपर धाया। जाँ बराजे हरी हर राया॥
अखण्ड नाद जोती निर्वान। दरस पाए परसी कल्यान॥

**सुध बुद्ध सकली लीन भई, अबनाशी घर दरसायो।**
**'मंगत' वो ही देस है, कोई गुरमुख जाये समायो॥ 1214**

सत शबद जब घट परगासा। निश्चल ध्यान पाया सुख वासा॥
परीपूरन प्रभ घट में देखा। सिमर सिमर के हरी विखेपा॥
जुग जुग पूरन आप समाई। घर विच देखी अजब प्रभताई॥
जिस जन अन्तर सार पछानी। भरम त्याग पाई सुख खानी॥
विजे पाई सब शत्रु नाठे। आलख पुरख पायो रंगराते॥
सुगढ़ सयाने करी कमाई। घर विच घर का दर्शन पाई॥

इन्द्री ज्ञान अन्तरमुख होई। अबगत शबद की सार लखोई॥
भाओ भगत चित चरनी वासा। अखण्ड शबद में लयो निवासा॥
उनमुन घाटी लीन समाई। अकथ कथा का लेख लखाई॥
नित सुतन्तर दिसा पहचानी। त्रैगुन जाल मिटी दुःख खानी॥
करम का कर्ता भाओ विनासा। निहकरम सरूप पाया परगासा॥
परमानन्द सकल का स्वामी। घट अन्तर पाया बिसरामी॥
सिमर सिमर मन होये निहाल। मिटे तृष्ना रूप जम काल॥
पूरन साहब सरब गत देखा। तिस का सिमरन हरे विखेपा॥
दीनदयाल के चरन समाये। आपा पर का भेद मिटाये॥
प्रभ सेती जिन मेल मिलाया। दुर्मत भेद भाओ बिनसाया॥
अन्तर जुगत नित नाम विचारी। साचे नाम की चढ़ी ख़ुमारी॥
अबनाशी संग पायो मेला। मिथ्या भरम का नास्यो खेला॥
निर्मल संग निर्मल भयो चीत। द्वैत भरम सब गई पलीत॥

**साची भगती पाये के, लख लीना साचा लेख।**
**'मंगत' निर्भय गत मिली, जाँ नहीं भरम और भेख॥ 1215**

सत शबद की लागी चोट। मन के नासे सकले खोट॥
कायरता त्याग पाई चतराई। मिथ्या छोड़ सतनाम कमाई॥
भय त्याग निर्भय समाया। साचा नाम साहब का गाया॥
परम पुरष अबनाशी देव। अन्तरगत पाई सत सेव॥
मीठी धुन शबद गुंजारी। तीन भवन लख कथा अपारी॥
पिंगल मनुआँ करे अरदास। निर्मल बुद्धी लेवे निवास॥
सुपन समान जग रचना होई। सत परकाश घर शबद परोई॥
झुनत झुनत घर बाजे तूरा। गुरमुख परसे जग में सूरा॥
ऊँचे शिखर मेघ किलकारी। बिन मध पान भयो मतवारी॥
त्रैगुन त्याग काल की खानी। अनहद नाद घर सार पछानी॥
बिमल शबद नित्यम परगासी। परम पुरख आप सरब निवासी॥
सरब माया का चक्कर चलाई। रंग रंग देखे अपनी प्रभताई॥
अन्तरगत से रहे न्यारा। प्रभ दाते तेरा अजब पसारा॥

निहों लागा तेरे चरनी आये। अब कुछ जग में संशय नाहे॥
दरस परस से भयो निहाल। अजब लीला तेरी साहब दयाल॥
सरब व्यापी रहें अलोप। सरब आधारी पुरख अनूप॥
तुध चानन से चानन होई। अन्धकार विनास तेरी सार लखोई॥
पूरन पूर तूँ प्रभ दाने। महमाँ तेरी आपार ठिकाने॥
मन की सकली तपन भई दूर। घर में बाजे अनहद तूर॥

**तन मन बोल भयो सब साचा, जब घट देखे परगास।**
**'मंगत' निर्भय धाम में, पल पल करे निवास॥ 1216**

प्रभ के रूप सँग मेल मिलाई। दुर्मत जाल माया बिनसाई॥
सुरती गई शबद के घाट। आलख पुरख की परसी वाट॥
रसना रस सब करी त्याग। शबद की रसना में मन लाग॥
आपा पर की तृखा निवारी। सर्वज्ञ रूप की कथा विचारी॥
आकाश पाताल की भरमन त्यागी। स्वास सुरत एके रंग लागी॥
इन्द्री विकार से भयो न्यारा। घर में पायो शबद आपारा॥
पूज पूज के निर्मल होई। मनमुखता सकली जन खोई॥
सरब स्वामी घर परगट पाया। वासना त्याग निर्वास समाया॥
नाम रूप मिथ्या गयो भरमा। अखण्ड नाम पायो सत धरमा॥
अमरत धार शबद भई जारी। पी पी के मन भयो मतवारी॥
द्वैत भावना सकली नास। सम सरूप जोत परगास॥
जाँ देखाँ सो ही दिखाई। रोम रोम में तार लखाई॥
बजे मृदंग नफ़ीरी राग। गुरमुख साचे पायो सोहाग॥
भेदी मिलया भेद लखाया। तत्त्व निरंजन अन्तर पाया॥
बिन भेदी जन भयो दीवाना। प्रभ को खोजे मढ़ी मसाना॥
बिन भेदी बिरथा डहकाये। पार पुरख का लेख नहीं पाये॥
वस्त कहीं कहीं उठ धावे। बिन भेदी नहीं सोझी पावे॥
सतगुर भेदी मिले किरपाधारी। अन्तर में सत रूप विचारी॥
रूप पछान के दुर्मत हरी। अपने पाप की सोझी पड़ी॥

**अपना आप पछानया, जो सत निर्मल रूप।**
**'मंगत' एको पाया, गयो दुर्मत बिख कूप॥ 1217**

साखी पुरष आतम तत्त सूझा। सकल विकार का निरनय बूझा॥
पाँच तत गुन तीन का खेला। माया भरम ने रचया मेला॥
तत्त्व विकार करम प्रगटाये। करम का भुगता आप बन जाये॥
कर्ता भाओ अभिमान को धारी। सुतन्तर रूप की होवे ख़वारी॥
जुग जुग भोग करम गरसाई। कर्ता भाओ में दुःख सुख पाई।॥
परचण्ड माया नहीं मिटे विकारा। अपना रूप निज दियो विसारा॥
छाया पीछे उठ के लागा। मूढ़मती ये जीव अभागा॥
दर्पन में ज्यों प्रतिबिम्ब लखाई। अपना भिन्न सरूप दिखलाई॥
दर्पन नास नहीं दूजा भासे। एह बिध रचया जगत तमाशे॥
कर्ता भाव दर्पन को धारी। रंग रंग देखे खेल आपारी॥
अपनी कलपना भिन्न कर देखे। तृष्ना करम भोग परीखे॥
कर्ता भाओ दर्पन भयो नासा। बन्धी छूट गई भ्रम आसा॥
केवल रूप रह्या अबनाशी। चक्कर मिटा सब करम की फाँसी॥
उठके गुनियाँ भरम को छोड़। साखी रूप अन्तर चित जोड़॥
कर्ता भाओ छोड़ अभिमान। आज्ञा बूझ परम निधान॥
करम वखेपत करो विनास। शुद्ध सरूप परसें अबनास॥
अचरज बनत ये जगत का खेल। बिना मूल उपजी भ्रम बेल॥
फली फूली बहु भाँत कर मीत। मूल पछाता तब पाई नहीं दीख॥
एह बिध रचना करो विचार। साखी बूझ मिटे अन्धकार॥

**साखी पुरष पहचान से, दुर्मत छाया नास।**
**'मंगत' अपने आप में, केवल आप परगास॥ 1218**

दूजा थीया नहीं होवे कोई। अपनी भरमन जगत लखोई॥
अपनी भरमन दुःख सुख देवे। अपनी भरमन भोग भोगावे॥
अपने आपका आपे वैरी। बांधा दुर्मत मेरी तेरी॥

अपनी करनी देवे सज़ाये। पुन्न पाप जो लयो कमाये॥
अपनी कल्पना आपे बिस्तारी। कुटुम्ब कबीला भयो परवारी॥
अपनी कल्पना ऊँच नीच फिरावे। जैसी करे ऐसी गत पावे॥
अद्भुत जन्तर माया धारी। बांधे जन्त फिरें संसारी॥
लोकालोक में नित भरमावें। साखी रूप का भेद नहीं पावें॥
सतगुर मेला जिस जन पाया। अपना भरम आपे चुकाया॥
भरम त्याग शान्त परगासी। अपने घट में लियो निवासी॥
शुद्ध सरूप अबनाशी जाता। नास्यो भरम माया सन्तापा॥
नीर तुरंग ज्यों नीर समाई। एह बिध जोती जोत मिलाई॥
करम वासना सुरती धारी। भोगे करम पावे ख़वारी॥
करम त्याग सत शबद पछानी। बन्धन काट भई निर्वानी॥
दुर्मत भेद राई ना रिह्या। शबद पछान शबद रमीया॥
अन्तर बाहर शबद परगासा। रूच रूच सुरती करे बिलासा॥
भरम विकार द्वैत दृष्ट नासी। अद्वैत सरूप जोती परगासी॥
पूरन मिल के पूरन गत पाई। आवागवन का भेद मिटाई॥
आद जुगादी सत शबद समाया। रम्मत शबद अखण्ड सुख पाया॥

**नाद सरूप पहचानया, जिसका सकल पासार।**
**'मंगत' निर्मल ध्यान से, दुर्मत मिटा ग़ुबार॥ 1219**

## छटा अध्याय
## निर्वान स्थिति

**सुरत समाई शबद में, तीन ताप भये दूर।**
**'मंगत' मन निर्वान भयो, घर बाजे अनहद तूर॥ 1220**

गुरमुख खोजो पद निर्वाना। अन्धमत जीव पाये कल्याना॥
निर्वान सरूप केवल ब्रह्म नाद। सरब समाया पुरख बिसमाद॥
सकल विकार जब शून समाई। निर्वान गती तब लेख लखाई॥
जीवन मुकत आनन्द की खानी। खोज निर्वान पद परम ज्ञानी॥
सब से ऊँच निर्वान शरेनी। मन बानी नहीं भेद कथीनी॥
केवल रूप आप आनाद। पद निर्वान है अत बिसमाद॥

परम पुरख कोई विरला पाये । सुन्न समाध शबद सुखदाये ॥
प्राकिरत दोख सब भये लवलीन । इच्छयाचारी शबद परबीन ॥
पवन आहारी योग में रमता । पद निर्वान की खोजे समता ॥
जिस घर अबगत नाद परगासा । निर्वान गती में कीयो बासा ॥
केवल नाद में विरत समाई । दूजा भाओ शून लखाई ॥
अपना आप देखे बिस्तार । अधिक प्रेम में रहे मतवार ॥
खिमावान अत चित बैरागी । पद निर्वान सो परसे वडभागी ॥
अपने आप का कीजे जाप । जल थल देखे अपना परताप ॥
द्वैत भरम मोह निकट ना आई । पद निर्वान सो पार पराई ॥
नित ही नाद में रहे लवलीना । कोट भान परकास घट चीना ॥
मन बुद्ध तिसमें भये इक रंग । सत सरूप पाये शबद निहसंग ॥
रंचक मन नहीं दोख विचारी । पद निर्वान सो आनन्द भंडारी ॥
एक पलक नहीं नाद विसराई । हिल मिल एको रूप हो जाई ॥

**शबद सुरत एको भई, सकल कामना नास।**
**'मंगत' पद निर्वान सो, परसे गुर का दास॥ 1221**

सतगुर सीख जिस अन्तर जानी । निर्मल प्रीत चित सतसेव कमानी ॥
अपने मन को पल पल धोई । शबद ध्यान में सुरत परोई ॥
देह अभिमान संकट सब नासी । निहकरम सरूप जोत परगासी ॥
गगन गुफ़ा में आसन धारी । अनहद बाजे नाद सुखारी ॥
मोह माया अन्धकार विनासी । सतगुर सीख सत धाम निवासी ॥
देह से भिन्न कर सत तत्त सूझा । एको पछान से आनन्द घर बूझा ॥
खेले खेल सुरत मतवाली । गगन गुफ़ा में सेज बिछाली ॥
पल पल साचा कन्त मनाई । सत सोहाग निर्वान पद पाई ॥
संकल्प विकल्प मन शून समाये । सुन्न समाध अमीरस खाये ॥
पारब्रह्म घट नज़री आया । भाओ भगत से मंगल गाया ॥
निर्मल शान्त शोभा अत भारी । सुन्न समाध में सुरत मतवारी ॥
नित नित कड़के नाद घनेरा । आनन्द मनाये हरे दुःख पीड़ा ॥
संशे शोक सब ताप मिटाई । सतगुर सेव निर्वान गत पाई ॥

चेतन पुरष शबद आनादी । परगट पायो घट बिसमादी ॥
करी अरदास मन लीन समाई । निर्भय धाम परापत पाई ॥
जाप अखण्ड सुरत नित जापी । पद निर्वान की रसना चाखी ॥
मुकत भयो घर आन समाया । दुर्मत त्याग निज रूप लखाया ॥
भाओ भगत से भयो जन पूरा । शबद पछान करे कोई सूरा ॥
घट विच साची वस्त समाई । गुर की सीख तत्त मेल मिलाई ॥

**बन्धन रूप संसार से, मनसा भई लवलीन।**
**मंगत शब्द रस पाया, पद निर्वान कियो चीन॥ 1222**

साची मुकत को सो जन पाये । प्रभ के चरन की जो प्रीत कमाये ॥
साखी पुरख अत शकत अपारी । दृढ़ निश्चे से भयो पुजारी ॥
छिन छिन कीरत करते की गाई । समता ज्ञान से तृपत समाई ॥
परकिरत करम से होये न्यारा । घर विच झलके अबगत तारा ॥
घर की शोभा जब लेख लखाई । चंचल मनुआँ लीन समाई ॥
भाओ प्रीती की रसना चाखी । चंचल मनुआँ नाम में राखी ॥
नाम पदारथ मन तृपताये । सिमर सिमर के शबद रस पाये ॥
नाम ध्यान से भयो घनघोरा । ऊँच कपाली बज रह्या तूरा ॥
सुरत सोहाग घर में पाया । आलख पुरख का दरस दिखाया ॥
कहन वरन कुछ बन ना आई । लीन भई सकली चतराई ॥
अन्धकार माहीं दीपक परगासा । बिपत माहीं आनन्द सुख भासा ॥
भरम माहीं शुद्ध सार लखाई । आलख नाद परापत पाई ॥
आवन जावन लीन समाया । गुरमुख मनुआँ रतन प्रभ पाया ॥
साखी गाई कीरत पाई । राग छतीसों मंगल गाई ॥
सुरत निरत पाई इक रंग । नाद निर्वान का सुना परसंग ॥
सुनो सहेली देस अनूप । जाँ बराजे प्रभ सरब का भूप ॥
अठसठ तीरथ घट में नहाई । अनहद धुन में लीन समाई ॥
मारग अगम का गुर दिखलाया । बन्धन काट के मुकत समाया ॥

आप पछान करी घर आये । पूरन पुरख परगट दरसाये ॥

**शबद उमगे घट माहीं, पाँच दोख दुःख नास ।**
**'मंगत' पद निर्वान सो, गुरमुख कीजे वास ॥ 1223**

उल्टा मारग गुर दिखलाया । उल्टे लेख को नित लखाया ॥
उल्टी गंगा जमना जानी । उल्ट प्राग में कियो अशनानी ॥
उल्टा देस पाया अनूप । जाँ बराजे सरब जग भूप ॥
उल्टी पूजा गुर दिखलाई । दूजा त्याग निज रूप ध्याई ॥
उल्टी सिखया मन तन जानी । जाप अजपा लेख लखानी ॥
उल्टा देस पाया सुखरासी । जाँ में वस रह्या आप अबनाशी ॥
गुर की सीख जिस सत कर मानी । भरमन छोड़ कर राम पछानी ॥
गुपत रूप को परगट पाई । सतगुर सीख जिस अन्तर गाई ॥
नित बलिहारी जाऊँ गुर चरना । सतपद खोज पाया सत निरना ॥
तत्त निर्वान का भेद पछाता । करम बन्धन का लेख लखाता ॥
सकली सार का भेद लखाई । सत ठाकर के चरन समाई ॥
बिपत गई घर मंगल पाया । गुर की सीख से मन तृपताया ॥
अन्धकार में चानन कीना । भय त्याग निर्भय पद चीना ॥
सूक्षम अस्थूल की सब गत जानी । कारन महाँकारन का भेद पछानी ॥
द्वैत जाल की दुबधा नासी । सतगुर सीख जो मन में उपासी ॥
अपने आप की सोझी पाई । दूजा भाओ रह्या ना काई ॥
सुकृत सीख सुनी मन लाये । राम रतन को घर में पाये ॥
भाग वडाई भयो चरनी मेला । साचा ठाकर मिले अलबेला ॥
गगन गुफ़ा में दीपक परगासा । गुर का सिख वहाँ करे निवासा ॥

**मारग अगम का कठन है, मर जीवा हो पाये ।**
**'मंगत' दृढ़ विश्वास से, जो गुर की सेव कमाये ॥ 1224**

गगन मंडल में शबद किलकारी । जो जन परसे तिस भाग अपारी ॥
साचा ठाकर घर परगासा । निर्मल प्रेम से करो बिलासा ॥

पाँच सहेली इक घर आई । परम पुरष की सेव कमाई ॥
अगम कोट पुरख निर्वान । काल जाल वहाँ नहीं निशान ॥
अपने आप में नित भरपूरा । करे परापत गुरमुख सूरा ॥
क्या कथूँ क्या करूँ बखाना । आलख लेख नहीं लखत पछाना ॥
सुरत अलबेली मगन समाई । सकल जगत की त्रास मिटाई ॥
सत जतन ने फल दिखलाया । सत ठाकर को घर में पाया ॥
नित गाओ मंगल मेरी मतिया । घर विच लख आलख गतिया ॥
अब कुछ संशा शोक ना रहाई । नैनों देखा प्रभ आप सुखदाई ॥
मन माना प्रभ दरस मनाये । रुच रुच तिसकी कीरत गाये ॥
परम शान्ती घर में पाई । निज सरूप की रसना खाई ॥
तप जप योग पायो फल पूरा । ज्ञान विवेक से मिला हज़ूरा ॥
अब कछु कहन सुनन ना रहाई । पूरन भयो प्रभ मेल मिलाई ॥
आनन्द आनन्द मन ने पाया । तृपत भया सब दोख मिटाया ॥
पूरन भाग से ये गत पाई । जीवन मुकत दिसा लखाई ॥
छिन छिन चौसर गुरमुख खेली । प्रेम रंग में सुरत अलबेली ॥
तृष्ना त्याग नित शून समाई । नरद पक्की सो गुनी घर आई ॥
पूरन सतगुर जुगत बताई । पद निर्वान पायो सुखदाई ॥

**आनन्द खानी शबद है, परगट पाये जन कोए।**
**'मंगत' जिस घर सूझिया, परम पुरख जन सोए॥ 1225**

दीनदयाल घर नज़री आया । मारग अगम सतगुर दिखलाया ॥
चार दिसा से सुरत उगाड़ी । अन्तर घाट पवन पछाड़ी ॥
सुरत निरत इक रंग मिलाई । साचे नाम की रसना खाई ॥
इरध उरध पाई ज्ञान की नौका । करे रखवारी प्रभ मिले झरोका ॥
सुरत अरूढ़ पवन को पीवे । जाप अजपा जप के जीवे ॥
अष्टदल कँवल भयो परगासा । गुरमुख साजन लयो घर बासा ॥
वाँग सिपाही लड़े मैदाना । एक एक की कीनी हाना ॥
विजे भई सत धाम समाये । पद निर्वान जोत लख पाये ॥

प्रेम सागर में कियो अशनाना । निर्मल भया हंस निर्वाना ॥
मारग गुपत गुर दिखलाई । बिन पद चाले धाम पहुँचाई ॥
बिन मुख के नित अकथ कथाये । नैन बिना सब दर्शन पाये ॥
बिना सरीर पुरख घर देखा । गुरमुख साजन कीना लेखा ॥
सदा परापत घाट ना पाई । तिस पुरख की अत वडयाई ॥
नित परगास जोत निर्वानी । घटघट अन्तर करी पछानी ॥
सत सरूप पुरख घर पाये । निर्मल प्रीत चरन चित ध्याये ॥
दुबधा नास शान्त परगासी । अबगत नाद पायो अबनाशी ॥
भरमन त्याग घट ध्यान लगाया । तीन भवन घर दर्शन पाया ॥
प्रीतम प्रेम में लटपट होई । उदे दीप परगास लखोई ॥
नहीं बस्ती नहीं जंगल बीयाबान । जाँ में वसिया प्रभ निर्वान ॥

**सत सरूप जाँ रम रह्या, द्वैत भरम नहीं कोए।**
**'मंगत' पद निर्वान सो, जल थल पूर बसोए॥ 1226**

नहीं धरती वहाँ नहीं आकासा । पवन पावक नहीं नीर बिलासा ॥
दानव देव नहीं सिद्ध अवतारा । वेद ग्रन्थ नहीं ज्ञान विचारा ॥
ध्याता ध्यान कछु ना पाई । अखण्ड निर्वान जाँ शबद समाई ॥
रवी चन्दर वहाँ नहीं परगासा । आकार दृष्ट वहां नहीं निवासा ॥
जनम मरन का लेख नहीं पायो । जोत निर्वान जाँ रही समायो ॥
ब्रह्मा बिषन वहाँ नहीं महेशा । गौरी गनपत वहां नहीं शेषा ॥
कथनेहार ना साखी कोई । अपरम अपार अभेद लखोई ॥
नहीं था ठाकर सेवक मीता । नहीं था गुरू और सिख पुनीता ॥
एक दो का वहाँ नहीं भरमा । केवल शबद व्यापे निहकरमा ॥
ना कोई बनत बनावन हारा । ना कोई बनी होई देख विचारा ॥
पूरन पूर तत्त गत पाया । पद निर्वान का भेद लखाया ॥
बिना नैन वहाँ करे ध्यान । बिन रसना के करे रसपान ॥
सुपन समान सब जगत दिखाई । रंचक रसना जो घर पाई ॥
आपा पर नहीं शत्रु मीता । हान लाभ नहीं कोई विखेपा ॥
ना चिन्ता ना ममता होई । ना कोई घटे बढ़े ना कोई ॥

नहीं था बन्ध मुकत का भेदा । कर्ता करम नहीं काल का छेदा ॥
शुद्ध सरूप सुतन्तर समाया । अनहद नाद अभेद अगाया ॥
ना पहले ना पीछे कोई । ऊँच नीच वहाँ दृष्ट न होई ॥
ना धनी ना दलिद्री देखा । मानी मान वहाँ नहीं भुलेखा ॥

**एक दो का भरम नहीं, पूरन पूर समाये।**
**'मंगत' शबद पछानया, पद निर्वान अगाहे॥ 1227**

ना कुछ कथा ना बानी बखाने । ना एक थीया ना दूजा माने ॥
नहीं वहाँ मूढ़ ना तत्त्व ज्ञाना । नहीं वहाँ चतर नहीं बुद्धीमाना ॥
नहीं वहाँ राजे रंक का भेदा । निर्वान सरूप जाँ बसे अछेदा ॥
पाप पुन्न वहाँ देख ना पाई । उदे अस्त नहीं लेख लखाई ॥
ग्रहन त्याग नहीं राग द्वेषा । जाग्रत सुपन नहीं वहां भुलेखा ॥
बिना आकार जोती दिखाई । जल थल अन्दर पूर समाई ॥
महमाँ कथी ना रंचक जाई । तत्त निर्वान गत पार पराई ॥
जिस जाना सो जाने आप । अगम पुरख का अत परताप ॥
तीरथ नियम वहाँ नहीं दाना । केवल शून ब्रह्म समाना ॥
जनम मरन वहाँ नहीं भयकाला । पुरख निर्वान जाँ बसे दयाला ॥
लोकाँलोक वहाँ कोई ना थीया । बानी रहत पुरख रमनीया ॥
पूरन पूर जोत निर्वानी । गुरमुख विरले करी पछानी ॥
भय भरम नहीं मोह अन्धकारा । नित परकाश जोत उजियारा ॥
ना कोई कथे ना सुननेहारा । अटल जोत का अजब पसारा ॥
सतगुर मेल जोत परगट पाई । दरस पाये मन लीन समाई ॥
रहे इकान्त नाम को पीये । नित सरूप में जीवन जीये ॥
अपना आप देखे बिस्तारा । अपना रूप सकल संसारा ॥
आधार त्याग निराधार समाई । ब्रह्मज्ञानी परमगत पाई ॥
सूझ बूझ कछू ना आवे । ना कोई देव ना पूजा पावे ॥

**अपना आप पछानया, जो जल थल रहे भरपूर ।**
**'मंगत' पद निर्वान ये, परसे गुरमुख सूर ॥ 1228**

द्वन्द विकार की होवे हानी । पद परसे जो नर निर्वानी ॥
बिना सरूप के करे ध्याना । घर में परसे पुरष प्राना ॥
जग को देखे काल की किरया । साखी रूप अन्तर पसरया ॥
गुह्य ध्यान जब अन्तर पाई । अपना आप दरस दिखलाई ॥
अपने आप की जानी सार । जल थल पाया पूरन भरतार ॥
प्रेम मगन मन नित रहाई । दुर्मत भेद जाल बिनसाई ॥
शून करम मनसा सब नासी । अखण्ड शबद जोत परगासी ॥
उलट सुरत घर अपने आई । निज ठाकर का दर्शन पाई ॥
दरस पाये के भई निहाल । बन्धी नास मुकत घर भाल ॥
शबद की रसना पल पल खाई । शबद की कीरत नित नित गाई ॥
शबद में खेले नित सत सूरा । काम क्रोध करे दल चूरा ॥
देव सम्पदा बुद्ध परगासी । अजर पुरख पायो अबनाशी ॥
रुच रुच शबद में प्रीत लगाई । उल्टे मारग सुरत ठहराई ॥
धरती पलट आकासे जाई । रुच रुच प्रभ का दर्शन पाई ॥
दुबधा नास मंगल को पाया । गुर किरपा सत भेद लखाया ॥
जनम मरन की फाँसी काटी । अबगत शबद की रसना चाखी ॥
शबद में जीवन नित ही जीवे । शबद पुरख को पल पल पीवे ॥
अगम देस में रहे समाई । आलख शबद का लेख लखाई ॥
रूप वरन बिन पायो देवा । सुकृत मन नित कीजे सेवा ॥

**सत शबद की सेव से, मन तन भयो निहाल।**
**'मंगत' अपने घर माहीं, पद परसा दीनदयाल॥ 1229**

शबद पुरख की कथा आगाही । सतगुर मेल से भेद लखाई ॥
देह अन्तर नित रह्या परगासी । शबद पुरख आलख अबनासी ॥
रूप वरन नहीं चिन्ह आकारा । शबद सरूप का अजब पसारा ॥
सरब व्यापक रहे अलेपा । ब्रह्म सरूप शबद अलेखा ॥
देह अन्दर नित रहे समाई । करम रहत नित ही वरताई ॥
अपरम आपार कथा आपारी । आलख शबद का लेख विचारी ॥

सत जुगती जो साधन कीजे । निष्काम भाओ से ध्यान धरीजे ॥
दुर्मत जाल भरम बिख नासी । परगट पायें शबद अबनासी ॥
बाहर की नित भरमन छोड़ी । सत ठाकर चित अन्तर जोड़ी ॥
इरध उरध माहीं नाम पुकारी । पल पल आज्ञा तिसकी विचारी ॥
कर्ता भुगता आप स्वामी । सिमर सिमर के भयो निष्कामी ॥
निष्काम विरत जब अन्तर पाई । परम शबद की सोझी आई ॥
द्वन्द त्याग निर्द्वन्द समाई । जाप अजपा सतनाम कमाई ॥
नित नित जापे पुरख जगदीशा । परगट पावें शबद सुखरीशा ॥
अन्तर जुगत ध्यान लगाई । शबद निर्वान का भेद लखाई ॥
आकार दृष्ट की भरमन नासी । निराकार दृष्टि अन्तर परगासी ॥
अखण्ड नाद जोती निर्वानी । अन्तर घाट में करी पहचानी ॥
बुद्ध निर्मल मन पिंगल होई । शबद पछान के लीन समोई ॥
तीन ताप बिख ममता नासी । खेम कुशल समता परगासी ॥

**सतगुर सीख पहचान के, अन्तर जुगत कमाये।**
**'मंगत' भरमन त्याग के, निज घर आन समाये॥** 1230

अन्तर नाम जुगत से ध्याये । मोह ममता का जाल मिटाये ॥
एक बिरह प्रभ चरन समाई । सत विश्वास का भेद लखाई ॥
पूरन पुरख चेतन सुखरासी । नाम सिमर तत्त सार अबनासी ॥
प्रभ अपने की करी अरदास । काल कराल की मिटे त्रास ॥
औगन अधिक जीया नित धारी । नाम जपत सब मिटे ख़वारी ॥
नित अन्धकार में मनुआँ डोले । पाप विरत में नित नित खोले ॥
भरम गुबार में दुःख बहु पाई । राग द्वेष में नित तपताई ॥
सुकृत सीख सतनाम बिचारी । निश्चल चित नित सेवा धारी ॥
ताप बिनास घर ठान्ड समाई । साचा नाम साहब का गाई ॥
नाम ध्यान में नित समाया । शबद अगोचर अन्तर पाया ॥
छिन छिन मन को अन्तर राखी । दीनदयाल की गावे साखी ॥
मोह विकार गयो अन्धकारा । सत शबद पाया निरंकारा ॥

नित ही शबद की कीरत गाई । नित ही तिसके चरन समाई ॥
अन्तरमुख की सूझ पहचानी । पारब्रह्म घट में दरसानी ॥
पूरन पुरख आनन्द सरूपा । परगट पायो शबद अनूपा ॥
सुरती खेले शबद के संग । दुर्मत जाल भयो सब भंग ॥
कलह कलेश सब भरमन नासी । साचा शबद पायो अबनासी ॥
पूरन सेवा सतनाम कमाई । उट्ठत बैठत सत निश्चय पाई ॥
प्रेम खुमारी में मन ग़लताना । निर्मल नाम पायो निर्वाना ॥

**अन्तरगत समाया, नित नाम पदारथ खाये।**
**'मंगत' निश्चल ध्यान में, नाद पुरख दरसाये॥** 1231

काया कोठी अजब है साजा । जिसमें साहब आप बराजा ॥
चौधां लोक की रचना रचाई । सकल ब्रह्मण्ड तिसमें लख पाई ॥
साखी पुरष भये परगासी । शबद सरूप जोत अबनासी ॥
जिस काया की खोजन कीनी । मौज जनम की तिस ने लीनी ॥
साखी शबद की सेव कमाई । माया जाल सकल भसमाई ॥
शबद ही भोजन पल पल खाई । शबद का नीर पान कराई ॥
शबद का आस भरोसा धारी । साचे शबद का होवे पुजारी ॥
मन चित प्रीत से शबद कमाई । साखी पुरख घर माहीं लखाई ॥
नित नित पूजे प्रेम को पाये । रुच रुच प्रभ के चरन समाये ॥
विगन विनास जन भयो निहाल । शबद पछान पुरख अकाल ॥
देह अन्दर निर्देह समाई । सार जुगत की अन्तर पाई ॥
शान्त का सागर शबद अपारा । मज्जन करे पावे निसतारा ॥
सतगुर चरन में नित लिपटाई । शबद कथा घर भेद लखाई ॥
जिस जन शबद की सोझी पाई । तीन ताप तिसके बिनसाई ॥
स्वामी के संग रहे लवलीना । कोट भान सम छबी को चीना ॥
भव दुस्तर से पार हो जाई । आलख शबद जो लेख लखाई ॥
जल थल पवन पावक आकासा । एक शबद सब माहीं निवासा ॥
चेतन पुरष अपार अनामी । पद निर्वान अबगत अगामी ॥

जो परसे तत्त रूप समाये । दुर्मत जाल गवन नहीं पाये ॥

**सत शबद को सिमरिये, मन चित प्रीत लगाये।**
**'मंगत' मारग मुकत ये, कोई गुरमुख सार लखाये॥ 1232**

अमर पुरष की कथा अपार । गिनती लेखा नहीं शुमार ॥
अमर देस में पुरख समाया । अमर सरूप सो प्रभराया ॥
ना वोह जन्मे ना पाये मरना । आलख शबद अमर विचरना ॥
शबद पछाने सो गुनवन्ता । शबद पछाने सो बलवन्ता ॥
अमरत घट में कीजे पाना । नाद सरूप जिस भेद पछाना ॥
पाये भेद दुर्मत को हरया । जल थल पूरन नज़री पड़या ॥
मिटी तृष्ना मन लीन समाया । नित आनन्द मंगल को पाया ॥
सत मारग की सोझी पाई । अमर पुरष की कथा लखाई ॥
पाँच तत्त देही का मन्दर । नित परकाश करे अति सुन्दर ॥
इस देही की सार जो पाई । सत ठाकर मिले सुखदाई ॥
देह अन्दर सो सदा बराजे । पूरन पुरख सो सरब नवाजे ॥
सतगुर सीख जिस मन तन पाई । आलख शबद का भेद अर्थाई ॥
नित नित सिमरे पुरख अनामी । चरन कँवल में लेवे बिसरामी ॥
दुबधा दूर मंगल को पाई । सत ठाकर के भये सरनाई ॥
इच्छया भरम गयो मिथ्याकारा । साखी शबद करतार विचारा ॥
भाओ भगत से कीरत गाई । अमर पुरष की सेव कमाई ॥
अकथ कथा को लख लेख पाया । नाम निरंजन पल पल ध्याया ॥
दुर्मत नास बिरह परगासी । परगट पायो शबद अबनाशी ॥
आवन जावन दुबधा काटी । अन्तर में अन्तर रस चाखी ॥

**मन अपना पूरन भयो, सार शबद रस खाई।**
**'मंगत' गुरमुख विरले, एह बिध सोझी पाई॥ 1233**

भरम त्याग मारग सत सूझा । सत सरूप ठाकर घर बूझा ॥
जिसको खोजें जुग जुग ज्ञानी । जपी तपी और दाते दानी ॥

ज्ञानी पंडत कथ कथ हारे । सो परमेश्वर घट कियो विचारे ॥
सब को जीवन देवे जोई । आसा भरोसा जो सब का होई ॥
सरब जगत का जो मूल ठिकाना । पद परसा अखण्ड निर्वाना ॥
ध्याये ध्याये मन निर्मल होई । अबगत लेखा घर माहीं परोई ॥
आवन जावन दुबधा नासी । साचा नाम अन्तर बिलासी ॥
प्रेम प्रीत से पूजा कीनी । सत ठाकर के चरन लवलीनी ॥
मोह ममता ग़ुबार मिटाई । नाम सिमर के परम गत पाई ॥
सत शबद की साखी बूझी । मारग मुकत सार को सूझी ॥
निहकरम सरूप शबद निर्वानी । गुरमुख साजन करी पछानी ॥
सो परमेश्वर परमानन्दा । नाद सरूप जोत परचण्डा ॥
सतगुर सीख जोत परगट पाई । अपने आप में गयो समाई ॥
धन्दूकार घर वाजत भेरी । सुरत समाये पाये सार घनेरी ॥
पूरन भाग प्रभ परगट पाया । साची कीरत नित चरन ध्याया ॥
उगड़े भाग साजन घर आये । रुच रुच तिसकी प्रीत कमाये ॥
अगन विनास ठान्ड वरताई । जनम मरन की त्रास मिटाई ॥
पूरन पुरख परमेश्वर पाया । भरम त्याग जन मुकत समाया ॥
साची कीरत जिस करते की गाई । परम शोभा तिस घर में पाई ॥

**परमानन्द पहचानया, अबगत शबद आनाद।**
**'मंगत' तिसके ध्यान से, सब दूर हुआ परमाद॥ 1234**

मन का विकार सकल तब नासा । सत सरूप पायो परगासा ॥
दुर्मत त्याग मारग सत पाया । सत शबद अन्तर रस खाया ॥
तृपत भयो मन हर रस खाई । साचे धाम में जाये समाई ॥
जनम मरन गई भरम की फाँसी । घर में पाया पुरख अबनासी ॥
सेव सेव कर भयो निहाल । घर परगट पाया दीनदयाल ॥
अत शोभा ठाकर की पाई । एक चित होके प्रीत कमाई ॥
तिस बिन दूजा नहीं चित भाये । पूर मनोरथ शान्त समाये ॥
मंगलकारी प्रभ का नाओं । सिमर सिमर के नित सुख पाऊँ ॥

दूजा आस भरोसा नासी । सत परतीत प्रभ चरन उपासी ॥
खेम कुशल सो पुरख सुखदाई । शबद विचार परमगत पाई ॥
भरम फाँस सब मन की नासी । नित आनन्द जोती परगासी ॥
अपने आप की शोभा पहचानी । पाया भेद मारग निर्वानी ॥
सिमरत कीरत साची पाई । जो साजन घर आन समाई ॥
अत महमाँ नहीं पारावार । सत ठाकर के चरन पधार ॥
जनम जनम की तृखा विनासे । शबद ज्ञान जो घट परगासे ॥
नित नित शबद में धरो ध्यान । मारग मुकत लखें निर्वान ॥
गुरमुख साजन धाम समाये । मनमुख भरम में आवे जाये ॥
सुकृत कार जगत में ये ही । साखी शबद चित अन्तर लेई ॥
नौ निद्ध पाई घर में मीता । दुर्जन मन को भई परतीता ॥

**निर्वान शबद परगासया, जब देह अन्तर मीत।**
**'मंगत' मन गँवार को, तब होई परतीत॥ 1235**

अबगत शबद पार मुरारी । जो बूझे सो तृपत विचारी ॥
दुष्ट ये मनुआँ तब घर आई । साची कीरत जब शबद की ध्याई ॥
शबद की रसना अधिक अपारी । चंचल मनुआँ भयो मतवारी ॥
डोलन त्याग निश्चल घर हूआ । शबद ध्याये तजे भ्रम दूआ ॥
एक चरन की प्रीत ध्याये । एक की महमाँ पल पल गाये ॥
एक नाम का करे ध्यान । अटल जोत पुरख निर्वान ॥
अन्तरगत जब सूझ विचारी । सकली भरमन गई दुःख सारी ॥
निज आनन्द पाया परगासा । भाओ भगत से करी अरदासा ॥
मन चित लाये सेव कमाई । सच दाते की आरती गाई ॥
अपना रूप आप पछाता । सार जुगत सत मारग जाता ॥
अनन प्रीती नाम कमाई । दुर्मत रोग निकट नहीं आई ॥
प्रभ भावी में तन मन दीना । आलख अछेद निरंजन चीना ॥
करी पछान भरम भयो नासा । पद निर्वान शबद परगासा ॥
वासना त्याग आनन्द घर पाई । शबद सुरत जब एक समाई ॥

पूरन पुरख कोई जुगत कमाये । पल पल साचा नाम ध्याये ॥
जीवन में जीवन विचारी । एक नाम जपे निर्धारी ॥
मूरख मन को नित समझाई । प्रभ अपने के चरन समाई ॥
जाँ से बिछड़ा ताँ मेल मिलाये । गत निर्वान लखे गुनीराये ॥
साचा प्रीतम साचा स्वामी । नित नित सिमरो पारगरामी ॥

**ठाकर को नित सिमरिये, बन्ध खुलासी होये।**
**'मंगत' शबद पछान से, भेद भरम सब खोये॥** 1236

अचल अछेद अपार अनामी । घट घट व्यापे अन्तरयामी ॥
मुकन्द सरूप परम सुखरासी । भज दीनदयाल शबद अबनाशी ॥
रे मन मूढ़े कहाँ उठ धायें । अपने घर की सूझ नहीं पायें ॥
करम जाल दुर्मत लिपटाई । जनम मरन नित आवे जाई ॥
सत पद खोज अखण्ड निर्वानी । सहज जुगत से करो पछानी ॥
भेद भाओ सब मिटे ग़ुबारा । घर में परसें सरजनहारा ॥
सत साजन जो अन्तर ध्याई । इस मन की सब दुबधा जाई ॥
अन्धकार विनास होवे परगासा । इक चित ध्यान करें अरदासा ॥
प्रभ के चरन में रहे लवलीना । काल करम दुर्मत होये छीना ॥
बन्धन नास घर मुकत समाई । पततपावन भज नाम सुखदाई ॥
एक नाम सिमरन जब पाई । उट्ठत बैठत कीरत गाई ॥
अन्तर बाहर सम कर सेवे । सत ठाकर के चित चरनी देवे ॥
भेद पाखण्ड ममता नासी । अखण्ड निर्वान शबद परगासी ॥
सत साजन की सेव कमाओ । पल पल महमाँ तिसकी गाओ ॥
भावी मान परम सुख होई । आवागमन का संसा खोई ॥
अत परकाश चानन घर पाई । शबद अखण्ड चित ध्यान लगाई ॥
भरम भूल सब मन की नासी । घर में पायो प्रभ अबनासी ॥
उस्तत करूँ नित चरन पधारूँ । तन मन अपना तिस पर वारूँ ॥
एक पलक नहीं विसरन पाऊँ । अन्तरगत नित ध्यान लगाऊँ ॥

**पूरन पुरख की प्रीत में, मन तन भये ग़लतान।**
**'मंगत' अन्तर सूझिया, सत पुरष नाद निर्वान॥ 1237**

सत पुरष संग प्रीत कमाई। पद निर्वान की लखी ज्ञाई॥
तीन ताप में नित तपताया। सत विचार से शान्त समाया॥
नाम रतन पाई सत दीखया। अन्तर बाहर करी परीखया॥
सरजनहार पुरख घर जाता। आठ पहर भयो रंग राता॥
दुबधा नास भरम की खानी। साचा शबद पाया निर्वानी॥
उठ गुनवन्ता करो विचार। मानुष चोला नहीं बारम्बार॥
नित चित साची प्रीत कमाओ। नाम सिमर के अभयपद पाओ॥
नाम रतन अपरम सुखदाई। तीन ताप की तपन बुझाई॥
पाँच दोख विकार विनासी। साचा नाम अन्तर परगासी॥
नाद सरूप घर परगट पाई। गत निर्वान लखी प्रभताई॥
गुरमुख साजन जाये समाये। सत परमेश्वर सिमर सुखदाये॥
अगन सरूप ये जग की किरया। नित आनन्द अन्तर पसरया॥
शबद खोज पावें सत सार। अन्तर में अन्तरगत धार॥
सुरती बाँध पवन में राखो। साचे नाम की रसना चाखो॥
निर्भय धाम परापत पाई। निर्वान शबद जाँ रह्या समाई॥
सतगुर सीख से भयो निहाल। प्रभ पाया घर में रछपाल॥
सेव सेव पल नाही विसारूँ। दीनदयाल के चरन पधारूँ॥
दु:ख रोग ममता सब जाई। सत कीरत हरी चरन समाई॥
महमाँ नाम हिरदे परगासी। परगट होये प्रभ आप अबनासी॥

**अबनाशी पुरष पहचानया, आद निरंजन देव।**
**'मंगत' पूरन प्रेम से, पाई चरन की सेव॥ 1238**

अबनाशी की प्रीत कमाओ। लाभ जीवन का जग में पाओ॥
सरजनहार पुरख सुखदेवा। रे मन मेरे करो नित नित सेवा॥
तिसको छोड़ दूजे चित लाई। काल चक्कर में आवे जाई॥
साची सीख ये ही परवान। हिरदे सिमर नाम भगवान॥

पाप करम से कभूँ ना छूटें। अन्तकाल बहु जम सिर कूटें॥
चला निरासा अन्त की बारी। बिना भगत नहीं मिटे ख़वारी॥
समाँ अमोलक करो विचार। नाम निरंजन जप सुखसार॥
पाप हरे सब दोख निवारी। सत ठाकर की सरन विचारी॥
बिन प्रभ तेरा थाओं ना कोई। निहथावाँ नित फेर फरोई॥
साचा नाम थाओं सत भाल। सिर पर गूँजे काल कराल॥
अमरत नाम गाओ नित नीत। मोह विकार से होवें पुनीत॥
शुद्ध सरूप घर परगट पायें। देव मुनी जिस को नित गायें॥
भरम अन्धकार गई जम फाँसी। इक चित सिमर लयो अबनासी॥
बन्ध खुलासी सो ही जन पाये। जो एह बिध राम रतन को ध्याये॥
राम रम्मत सुख अपरम पाया। जिसका भेद वर्नन नहीं आया॥
काम क्रोध अगन से छूटे। नाम रसायन रसना लूटे॥
काल कराल का बन्धन नासे। निर्वान सरूप सिमर अबनाशे॥
भाओ भगत सत कीरत भाल। साची घालन एह बिध घाल॥
सरब जीयाँ संग हेत विचारी। बैर त्याग सत सुख वरतारी॥

**प्रेम रस जिन चाखिया, ताप तपन होये दूर।**
**'मंगत' निश्चल ध्यान में, सिमरें नाम हज़ूर॥ 1239**

क्रोध अगन नित जिया जलावे। शबद ध्याये तब शान्त समावे॥
अबगत शबद निरंजन देव। पल पल साची सेव को लेव॥
जीवन में दुबधा को त्याग। सतनाम कीरत को लाग॥
अपना भला करो विचार। माया संकट मिटे आपार॥
सरजरहार चित लियो ध्याई। गुनी मुनी नित करें दोहाई॥
बिन प्रभ नाम मुकत ना पायें। बहुरंग जूनी नित भरमायें॥
तीन ताप की अगन नहीं जाई। भोगे भोग परम दुःख पाई॥
सत सरूप चित शान्त विचार। साचा नाम निरन्तर धार॥
साची सीख ये ही सुखरासी। पल पल सिमरें नाम अबनाशी॥
मारग मुकती ये ही पछान। निस्चल होये जप भगवान॥

दूजी मनसा मन की काट। अन्तर लख शबद की साट॥
प्रीतम प्रीत में जनम गँवाओ। सत ठाकर के चरन समाओ॥
परहित पर की सेवा धार। पद निर्वान लखें गत सार॥
नाम जपें मन मुकत समाई। दूजा भेद भरम दुःख जाई॥
सुकृत सीख हिरदे पहचान। निश्चे सिमर एक भगवान॥
अन्धकार विनास पावें परगासा। अनहद नाद रम्मत सुख भासा॥
सो परमेश्वर करे निहाल। जप भगवन्त दीनदयाल॥
अपरम ध्यान शबद घर पाई। निर्वान गती तब भेद लखाई॥
पायो भेद मिटे गुबारा। सत सरूप हरिचरन पधारा॥

**सत सरूप नारायन में, रमो रमो नित नीत।**
**'मंगत' झूट संसार में, साची पालो प्रीत॥** 1240

साचा सिमरन मन में कीजो। दुर्लभ भाग जगत में लीजो॥
सत सिमरन मन करे उद्धार। सकल भरम से देवे निस्तार॥
साचा नाम करे पुनीत। प्रेम से गाओ गुनी नित चीत॥
अपनी खोजो सार भलाई। त्याग करो नर बेपरवाही॥
साचा नाम निरन्तर चेत। पावें अबगत शान्त अलेख॥
मोह माया अन्धकार घनेरा। छिन छिन करे ये मन तकसीरा॥
पाप करम नित ही भरमाये। भरम की फाँस संकट अत पाये॥
साचा नाम जो कीरत गाई। औगन नाश शान्त समाई॥
मारग ये ही मुकत पछान। भज लो हिरदे सत भगवान॥
साचा वनज करो दिन रात। नाम कमाओ पाओ सुख साथ॥
बन्धन नास मुकत रस खायें। साचा नाम अपार ध्यायें॥
शास्तर सिमरत नित पुकारी। नाम प्रभू का अपरम अपारी॥
पूरन भाग जो सोझी पाये। पद निर्वान की साखी गाये॥
नाम सिमर के पायें ठिकाना। करम फाँस जाये काल निशाना॥
निर्भय धाम परम पद सार। अखण्ड सरूप अन्तर विचार॥
सो ही धाम सो ही सत रास। सरब है मिथ्या प्रभ केवल अबनास॥

मिथ्या छोड़ अबनाशी को चेत। शबद पछान सब हरे वखेप॥
परम प्रीती प्रभ चरनी राख। नाम ध्यान अमीरस चाख॥
परमानन्द धारे अत वडयाई। निमख निमख लीजो जस गाई॥

**माया भरम को त्याग के, सत शबद नित चेत।**
**'मंगत' शबद पहचान कर, जो सब से रहे अलेप॥ 1241**

अपने घर का करो विचार। बोलनहार की लख सत सार॥
बोलनहार कहाँ से आया। कहाँ रमत कहाँ जाये समाया॥
करो विचार गुनी मुनि मीत। बोलनहार की पालो प्रीत॥
अबनाशी पुरख आपे पुकारी। आपे खेल सकल विसतारी॥
आपे कर्ता भुगता आप। आपे नित अलेप व्याप॥
अन्तर की खोजो सत सार। ठाकर घर में करे पुकार॥
इक चित हो के सेव कमाओ। सत ठाकर की शोभा पाओ॥
काया कोट अमरपुर देश। सत सरूप बसे नरेश॥
जगत का कर्ता धर्ता आपे। शबद पछानो जो सरब व्यापे॥
सतपुरषों की सिखया धार। मन में खोजो शबद विचार॥
शबद आनादी पार परातन। सिमर सिमर तूँ शक्त सनातन॥
बन्धी छूट मुकत को पायें। सत शबद जो भेद लखायें॥
शबद परगट सब ताप निवारी। गुरमुख चरन जाऊँ बलिहारी॥
सरब अतीत सरब का स्वामी। साचा शबद जप पारगरामी॥
सबमें तिसकी कला पछान। आदी शकत पुरख निर्वान॥
दुर्मत रोग होवे चित नास। समता प्रेम पावें परगास॥
सत को पूज यथारथ सार। घट में परसो सत निरंकार॥
निर्मल प्रेम चित लीन समाई। पूरन भाग गुनी कोई पाई॥
सत ध्यान में रहे दिन रात। सत आधार जीवन समात॥

**मिथ्या भरम सब नास होये, जब सत शबद पहचानया।**
**'मंगत' अन्तर ध्यान से, सत मारग मुकत को जानया।। 1242**

मारग मुकत पछानो ये ही। जो चित पावे प्रभ चरन सनेही॥
सकल बिपत के हरने हारा। पतत पावन जप नित करतारा॥
प्रभ का सिमरन सार निधान। जो सिमरे सो पाये कल्यान॥
उट्ठत बैठत मन में चेत। राम नाम रसना को लेत॥
बिपत हरे प्रभ अन्तरयामी। सरब ज्ञाता सरब स्वामी॥
तिसके नाम में सिमरत राख। जीवन मुकत अभय पद चाख॥
परमानन्द मन माईं चितार। भव दुस्तर से उतरें पार॥
मारग सहज मुकत का जान। साची प्रीत चरन भगवान॥
साची प्रीत प्रभ की चित पाई। शोक मोह अगन मिटाई॥
कारन कर्ता जाना स्वामी। आज्ञा बूझ पाई बिसरामी॥
दीन ग़रीबी रसना धारी। दुर्मत रोग से भई छुटकारी॥
प्रेम पाये नित मंगल गाया। साचा नाम निरन्तर ध्याया॥
सिमर सिमर पाया उजयारा। सत सरूप घर परगट आपारा॥
छिन छिन में वहाँ सुरत समाई। धुर बानी धुर लेख लखाई॥
अगम की रसना घट परगासी। सच सोहाग मिला अबनासी॥
जतन किये रतन प्रभ पाया। बन्धी छूट मुकत पद पाया॥
द्वन्द विकार गया परमादा। जुगती योग इक नाम को साधा॥
भरम अगन सब चित की नासी। सत सरूप पायो अबनासी।
दीनदयाल की सेव कमाई। अखण्ड शान्त चित में पाई॥

**सरब जीयाँ दा ठाकर ध्याया, पलपल प्रीत लगाये।**
**'मंगत' मिटी तब कामना, जीव परम पद पाये॥ 1243**

आनन्द सरूप की रसना चाख। दुर्जन मन को घर में राख॥
परिपूरन सो पार मुरारी। जाप करो तब पाओ निस्तारी॥
प्रभ अपने की सेव कमाओ। पल पल कीरत चित मनाओ॥
सरब सरूप सरब बिसरामी। ठाकर सिमरो पारगरामी॥
दुर्मत रोग जाये परमाद। मन की नासे आध व्याध॥
शान्त सरूप पावें घर माहीं। नाम सिमर के पावें सुख थाईं॥

परमानन्द सो तत्त्व आपारी। तिस ठाकर का हो पुजारी॥
अन्तर माहीं सतनाम ध्याओ। परगट ठाकर के दर्शन पाओ॥
तीन भवन में धरो ध्यान। शबद गुंजारे करे कल्यान॥
पाप पुन्न की भई सब हानी। तीन भवन जिस सार पछानी॥
अनहद नाद सदा रंग राता। तीन भवन जिस भेद पछाता॥
जीवन मुकत सो ही जन भयो। तीन भवन सत शबद कमायो॥
चेतन पुरख करे परगास। अन्तरयामी पुरख अबनास॥
इक चित हो के करो ध्यान। घट में दरस पावें भगवान॥
प्रेम की खानी शबद गुंजारे। जो जो बूझे उतरे पारे॥
ऐसा शबद पाया प्रभ देवा। पलक न विसरे तिसकी सेवा॥
अपने आप सदा परिपूरा। अबनाशी पुरख आपार हज़ूरा॥
मन को ठाक प्रभ नाम सम्भाल। परगट शबद पावें टकसाल॥
नित ही घड़िये प्रेम के रंग। उज्जल बुद्धी होवे निहसंग॥

**बारम्बार जपो सुखरासी, सत शब्द प्रभ देवा।**
**'मंगत' पलक न विसरे, चित चरण कंवल की सेवा॥ 1244**

अन्तर शबद करे किलकारी। साचा ठाकर घर करे पुकारी॥
निर्वान सरूप पछाने सो ही। जो मन को राखे तार परोई॥
शबद की धारा अन्तर जारी। उलटे धाम जाये पधारी॥
बिना सरूप चिन्ह आकारा। सत ठाकर का देख चमकारा॥
अबगत नाद पुरख निर्वानी। बन्धी छूट की ये ही कहानी॥
शबद सरूप पहछाने जोई। तिस जन को फिर गवन ना होई॥
शबद सरूप में जो समाया। अन्तर बाहर एक लखाया॥
भाओ प्रेम घट परगासा। आद पुरख संग कियो बिलासा॥
रोम रोम में होवे हलोल। साचा शबद करे कलोल॥
ऊँचा थाओं अगमपुर वाट। गरजे शबद खुले कपाट॥
अद्भुत चानन घर में होई। ताँ में सुरता लई परोई॥
रंग रंग धुन उठे धुनकार। जाप जपे नर उतरे पार॥

भौरा भयो वहाँ मसतान। गूँज उठे जाँ शबद निर्वान॥
बस्ती जंगल एक लखाया। भयो दीवाना शबद रंग पाया॥
शबद में सुरती भई मतवाली। त्रैगुन नाश मिटी भ्रम जाली॥
बहु रंग ज्योती परगट पाई। नाद अखण्ड तब घर प्रगटाई॥
पिंगल मनुआँ करे अरदास। सत ठाकर के चरन निवास॥
पिण्ड को छोड़ ब्रह्मण्ड पर आया। साखी पुरष का दर्शन पाया॥
दीनदयाल की शोभा भारी। गुरमुख साजन घर विचारी॥

**सुरती अन्तर में रसी, शबद सुनी टंकोर।**
**'मंगत' निज घर आ बसे, बिनसी काल करम की दौड़॥ 1245**

अबगत पुरष की सेव कमाओ। निर्भय धाम में जाये समाओ॥
बाहरमुख मनुआँ नित दुःख पाई। जुगा जुगन्तर रहे भरमाई॥
तृष्ना भोग अगन लिपटाया। धीर ना पावे भरम भुलाया॥
अत से अत ही पाप कमावे। ज्ञान बिना नहीं धीरज पावे॥
सतगुर सीख जिस अन्तर विचारी। बाहरमुख की सब भरमन टारी॥
मन मुख मूढ़मती को त्यागा। गुरमुख सुमति में उठ के जागा॥
गुरमुख मनुआँ अन्तर आई। अपने घट में लेख लखाई॥
तजी चतराई नित थकत समाई। करम जाल से तृपत हो जाई॥
निहकरम सरूप शबद निर्वानी। करे किलकार सुनो परम ज्ञानी॥
इक चित हो के ध्यान कमाओ। लोक लाज सकली विसराओ॥
ईड़ा पिंगला सम कर राखो। सुखमन खोज आकास को भाखो॥
शबद गुंजार करे अत भारी। बजे मृदंग नफीर आपारी॥
मन निर्वानी शबद को पीवे। निज सरूप में जीवन जीवे॥
काल त्रास सकल मिट जाई। निहचल चित जो ध्यान कमाई॥
ज्ञान इन्द्री को अन्तर राखी। ऊँचे शिखर की खोजे घाटी।
प्रान उपान की माल परोई। जाप जपे बुद्ध निर्मल होई॥
दुर्मत त्याग चढ़ी सत धाम। आलख पुरख का मिला पयाम॥
शबद सुरत एको चित धारी। मगन भयो गये छूट संसारी॥

अपने रूप संग एका होई। सतगुर सेव सत सूझ लखोई॥

**अगम मारग को परसया, जीवत सीस उतार।**
**'मंगत' निर्भय होये तब, जब सुनी शबद गुंजार॥ 1246**

ऐसा लेख जो लख पाई। पद निर्वान भेद अर्थाई॥
पुरख अगोचर घर विच आया। रूप वरन नहीं आकार दिखाया॥
अपने आप में आप पसारी। करे कुलेल पुरख बनवारी॥
ऊँचे शिखर पर बेल बेलाई। फूल पात बहुरंग लगाई॥
ध्यान करें तब तृपत समायें। देख अचम्भा तूँ घर मायें॥
बिना सीस के चालें मीता। मारग अगम कठन परतीता॥
पुरख अगोचर घट में सूझें। तिस साहब का निरना बूझें॥
कहाँ से आया कहाँ रहे समाई। कौन देस की लिखत लखाई॥
कौन बचन वोह मुख से उचारी। खोज करो पद निर्मल सारी॥
पूरन पूर आप समाया। नहीं आवे नहीं वोह जाया॥
अपने आप कियो बिस्तार। बीज से दीना बरिच्छ उगाड़॥
देस अनाम अगोचर बानी। अनहद नाद पुरख निर्वानी॥
अपने रूप में आप समाई। अपनी कीरत आपे गाई॥
अपने देस का लेख लखाई। जो जन बूझे धाम पहुँचाई॥
अबगत कथा करो विचार। पद निर्वान कथो तत्त सार॥
पूरन पुरख चरन बलिहारी। जिस घर की सत सूझ विचारी॥
पाई सूझ मिटा अन्धकारा। अपने आप का लखा पसारा॥
सदा निरालम रहे पुनीता। सरब अतीत पुरख सुखरीता॥
आप पछान से भेद मिटाया। दुर्मत रोग विनासी छाया॥

**अन्तर शबद परगासया, द्वैत भरम सब नास।**
**'मंगत' पद निर्वान में, निश्चल लीना बास॥ 1247**

अन्तर की गत जो पछानी। पद परसे सो ही निर्वानी।
सत ठाकर की सेव कमाये। अन्तर में नित लेख लखाये।

सरजनहार सरब का दाता। घट घट अन्तर करो पछाता॥
सब में पसरे एक ही रंग। सरब न्यारा रहे निहसंग॥
साहब हज़ूर की सेव विचार। भव दुसतर से उतरें पार॥
मारग कठन जगत का खेल। बिन भगवन्त सब काल कुलेल॥
सुकृत सीख सुनो मत धीर। सत सरूप सिमर सुखसीर॥
बन्ध खुलासी सहजें पायें। जो चित प्रीत प्रभ नाम ध्यायें॥
कारन कर्ता सरब सुखदाता। दीनदयाल पुरख बिधाता॥
पल पल मन में सेव कमाओ। उस्तत कीजो मंगल गाओ॥
बाहरमुख की भरमन नासे। अन्तरमुख पावें घर वासे॥
आकास पाताल लेख लखावें। अन्तरमुख धीर समावें॥
साचे नाम की बाज़ी खेलें। टूटे मन को नित नित मेलें॥
आद निरंजन देव पुकारी। निश्चल चित सुन सार अपारी॥
धरती उलट आकास को जाई। नाम की रसना गुरमुख पाई॥
गगन संघासन करी सम्भाल। दुरमत रोग मिटा सब काल॥
बैठ संघासन तृपत समाई। सुने रबाब परम सुखदाई॥
अपना दर्शन देखे आप। गुरमुख पाया वड परताप॥
सकल जगत का भेद पछानी। अन्तरगत सत सार लखानी॥

**अन्तरगत की गत पाई, अबगत पुरख अलेख।**
**'मंगत' सतगुर सीख से, निर्मल पायो भेख॥ 1248**

चेतन चोला गुरमुख पाया। अगम देस में रमता आया॥
अधिक परताप पाई वडयाई। अगम देस का लेख लखाई॥
बिन धरनी के मन्दर उसारा। बिन तेल दीपक होये उजियारा॥
बिना बजाये बजन्तर बाजे। अनहद नाद मेगला गाजे॥
बिन मुख के सत कथा विचारी। अनुभव परगास ज्ञान आपारी॥
लख लख कथा मन मगन समाई। अगम पुरष में लीन हो जाई॥
नैन बिना इक माल परोई। हाथ बिना नित फेर फिरोई॥
अमरत कुम्भ अगम घर फूटा। अत परकाश जोती अनूपा॥

झिलमिलकार शबद की धारा। तृपत भयो ये मन गँवारा॥
सत थाओं में आये समाई। अब कुछ लेख ना लिखने रहाई॥
पूरन पूर पाया परवाना। हंस परापत भये निर्वाना॥
ऐसी गम में जाये समाया। जाँ नहीं दुर्मत भेद लखाया॥
अपने आप आपे परगास। आलख शबद अछेद अबनास॥
कौन जाने ये गत मित भारी। सो ही जाने जो जाये पधारी॥
जिस ने चाखा सो तृपताया। नाम अमीरस सार आगाया॥
पूरण भाग कोई गुरमुख खाई। राम रम्मत परम सुख पाई॥
भेद भरम द्वैत विनासी। शुद्ध सरूप कला परगासी॥
मन तन सकलो तृपत समाई। हरजन पाई वडी वडयाई॥
हरजन हर के रूप समाया। नीर तुरंग ज्यों नीर मिलाया॥

**शबद पुरख पहचान के, मनसा भई लवलीन।**
**'मंगत' दर्शन पाया, कोट भान छबि चीन॥ 1249**

सत ठाकर ने कियो निहाल। बन्धन काट हरयो दुःख जाल॥
अपनी किरपा आपे करी। मेल मिलायो जो सरनी पड़ी॥
साकत मूढ़ा नित भरमाई। सूझ बिना नित आवे जाई॥
झूट पसारा सत कर मानी। तिस में भरमे नित अभिमानी॥
अपनी दुबधा फेर फराई। बहुरंग जूनी में भरमाई॥
करम भोग विकार को धारी। तृपत नहीं होवे ये मन अन्धकारी॥
भरम माहीं सब जनम गँवाई। मूढ़मती दुःख दे अधिकाई॥
मारग मुक्त की सूझ ना कोई। कह बिध काल करम बन्ध खोई॥
पूरन भाग गुरू मेल मिलाये। मारग मुकत का लेख लखाये॥
देह का सरजनहार स्वामी। घट घट व्यापक अन्तरयामी॥
तिस की सेव पूजा दिखलाई। मूरख मन तब घर में आई॥
सत स्वामी का नाम चितारी। मोह माया की मैल उतारी॥
शुद्ध सरूप जब मन का होई। सरजनहार घट में प्रगटोई॥
शबद सरूप ठाकर घर पाया। सिमर सिमर के मन तृपताया॥

अबनाशी पुरष सरब गत पूर। अनहद नाद साहब हज़ूर॥
रुच रुच चरन की प्रीत कमाई। काम क्रोध का ताप मिटाई॥
सब कुछ दात साहब की जानी। साहब की करनी हिरदे मानी॥
अपना आप भरम चुकाया। घर में प्रभ का दर्शन पाया॥
दरस पाये मन भयो परसन्न। खाट लयो अबनाशी धन॥

**माया दुर्मत जाल से, सतगुर कियो निहाल।**
**'मंगत' घट दिखलाया, सत शबद रछपाल॥ 1250**

साचे शबद को मन में ध्याओ। दुर्मत जाल का होवे अभाओ॥
बन्धन नास मुकत को पावें। सत सरूप की कीरत गावें॥
जगत जंजाल संकट आपारी। पलक पलक में होये ख़वारी॥
सार बिना नहीं धीरज आवे। भरम चक्कर में नित भरमावे॥
साध संगत मिल खोज निधाना। निर्भय धाम शबद निर्वाना॥
भरम मूल सकल दुःख नासे। साचे शबद की करें उपासे॥
सत कर ध्यावें अन्तरयामी। मिटे विकार पावें बिसरामी॥
अपने घर में लेख लखायें। साचा धाम शबद सुख थायें॥
निर्भय होवे ये मूरख जीया। सत शबद जब चित रमीया॥
बारमबार करें परनामा। पुरख हज़ूर सरब सुख धामा॥
ताप मिटे मन आनन्द पाये। अपने धाम में जाये समाये॥
अगम मारग का भेद पहचानी। सतगुर दाते मिले वड दानी॥
तिन के चरन की धूड़ रमाई। तब मारग की सोझी पाई॥
साचा नाम प्रभ का चित गाया। सरब जीवों संग हेत लगाया॥
पाप कुपथ दुर्मत को धोई। पर उपकार चित सार परोई॥
साचा नाम तब मन में रसया। अन्तरगत में आके वसया॥
दृढ़ निश्चय चित चरन ध्याया। निर्भय नाम अमीरस खाया॥
खुली ग्रन्थी भरम भयो नासा। अबगत नाद घट कियो परगासा॥
नाद निरत में सुरत समाई। भरम त्याग निर्वान पद पाई॥

**दुर्मत दुबधा सब मिटी, प्रभ नाम भयो परगास।**
**'मंगत' मारग मुकत में, हरजन कीना बास॥ 1251**

साचा नाम जब अन्तर ध्याई। दुर्मत भरम जीव का जाई॥
नाम प्रभू का अमीरस सार। पल पल गुनियों करो विचार॥
मिथ्या नाम रूप आकारा। काल सरूप सकल संसारा॥
भाँतक भाँत रूप प्रगटाये। सरजनहार ये बनत बनाये॥
त्रैगुन माया का चक्कर चलाई। अद्भुत खेल जगत बनाई॥
कारीगर ये रचना धारी। अपरम आपार महमाँ बिसतारी॥
पिण्ड आकार मन्दर अत साजा। पूरन पुरख बीच आप बिराजा॥
सरब व्यापक रहे अलेपा। बिस्माद शकत पुरख अलेखा॥
प्रभ दाते ने खेल रचाया। अद्भुत शकत चराचर माया॥
भेद ना पारावार कोई पावे। कह बिध ठाकर जग सरजावे॥
अपनी किरपा जब करे किरपाल। तब सूझे दर दीनदयाल॥
सरब बिसतार कर रहे अलोप। सरब परकाश अत निर्मल जोत॥
सतगुर मेल जब सार लखाई। परगट पायो प्रभ पार ज्ञाई॥
भँवर गुफा शबद किलकारी। अनहद नाद पुरख निरंकारी॥
साचा नाम तिस का चित गाई। परम परकाश जोत दरसाई॥
सरब स्वामी सरब भरपूर। आपे आप शबद हज़ूर॥
दुर्मत भरम अन्धकार विनासा। चेतन पुरख पाया परगासा॥
एको एक सरब के माईं। दूजी गई भरम परछाईं॥
सत तत्त केवल परगास। निर्वान सरूप साहब अबनास॥

**मन की भरमन जब मिटी, संशय जग भयो नास।**
**'मंगत' एको पाया, शबद पुरख निर्वास॥ 1252**

साचे शबद की कीरत गाई। मन का संसय लीन समाई॥
सरब परकाशी पुरख निर्वाना। शबद पछान पावें कल्याना॥
क्यों अपनी मनमुखता धारी। अपने पाप की पायें ख़वारी॥
अपनी इच्छया आप बन्धाई। करम चक्कर में आवे जाई॥

भरम सन्देसा नहीं चित जाये। गरभ धार के आवे जाये॥
साचा मारग सुन सुखरासी। शबद पछान करो अबनासी॥
नित परकाश आनन्द सरूप। खोज करो जाये दुःख कूप॥
करम का जाल अती भयाना। शबद पछाने पाये कल्याना॥
ऐसा शबद अबगत आपारी। तिसका सिमरन जग सार विचारी॥
नित ही मन में सत सेव कमाओ। सत परमेश्वर की शोभा गाओ॥
मिटे अन्धकार भरम की फास। अपने आप में करें निवास॥
जाँ से उपजा ताँ लीन समायें। बौहड़ चक्कर संसार नहीं पायें॥
जनम मरन जाये दुःख भारी। साची कीरत शबद विचारी॥
अन्तरगत शबद को ध्याई। पल पल महमाँ तिसकी गाई॥
कारन कर्ता आप स्वामी। सिमर सिमर पाओ सुखथामी॥
परले पार करे निवासा। सत शबद ठाकर निर्वासा॥
निश्चल चित से करो ध्यान। परम प्रीत जप नाम सुजान॥
आज्ञा मन में प्रभ की धार। मन का जाये हंग विकार॥
अखण्ड परगास अन्तर परगासे। बौहड़ गरभ नहीं आवे बासे॥

**सरब जीयाँ आधार प्रभ, मन में सदा आराध।**
**'मंगत' प्रभ सरनागती, कोटक मिटे व्याध॥ 1253**

प्रभ अपने की सरन पछाने। जीवन मुकत करे अमरत पाने॥
दुर्गम माया अती ग़ुबारा। काल करम का रचा पसारा॥
करम भोग में जीव ग़लताना। भूल गयो सत पद निर्वाना॥
करमफल इच्छया में अत गरसाया। धार मनोरथ परम दुःख पाया॥
लेख कोई ना लिखने आवे। ना कोई दिसा थाँ दिखलावे॥
जिस से मन की मिटे गुबारी। करम वासना जो अत अन्धकारी॥
दाने बीने पीर दरवेशा। करें विचार इस अधिक सन्देशा॥
सदा अशान्त मनुआँ रहाई। ठौर बिना पल आवे जाई॥
मिले नहीं तृप्त करें अधिक विचारा। मोह भरम में सहवे दुःखभारा॥
सत परतीत प्रभ चरन की पाई। तब ये मनुआँ सत ठौर में आई॥

अपने पाप को जतन से धोई। दृढ़ विश्वास चित चरन परोई॥
मिटी सयानफ़ प्रभ आज्ञा मानी। सत शरधा हिरदे पहचानी॥
अन्तर प्रीत से नाम प्रभ गाई। मन को बाँध सत ठौर लगाई॥
सकल करम प्रभ चरनी त्यागे। उपजे बिरह शबद घर जागे॥
शबद में मनुआँ नित लगाये। परम शान्त तब अन्तर पाये॥
करनहार ठाकर प्रतिपाल। नित सरनागत हो सुखभाल॥
ताप हरे देवे सन्तोख। साचा नाम केवल तत्त मोख॥
पार पुरख तूँ सत सरजनहारा। बन्धन काटें इस जीव गँवारा॥
बारम्बार करे डण्डोत। सत ठाकर की राखे ओट॥

**मारग भगती धार के, नित नित नाम विचार।**
**'मंगत' मन निर्मल होवे, पावें शबद तत्त सार॥ 1254**

बिन भगती नहीं धीरज पावे। करम चक्कर में नित भरमावे॥
कर्ता भाओ नहीं मिटे अभिमाना। अनँक तपस्या करी पहचाना॥
जतन करे तो भी जन हारे। अचरज माया फाँस अपारे॥
दीन ग़रीबी जिस जन पाई। सत शरधा से भये सरनाई॥
सकल वासना चित की त्यागी। एक बिरह प्रभ चरन अनुरागी॥
नित नित नाम कमावे गुनिया। भरम सरूप देखे सब दुनिया॥
अधिक प्रेम प्रभ चरनी पाये। मन बच करम से महमाँ गाये॥
संशे अनेक तब मन के नासे। राम चरन लीना भरवासे॥
सत विश्वास से भगत कमाई। उज्जल मनुआँ तब शबद लखाई॥
अन्तर शबद पायो अबनाशी। तब इस मन की तृखा विनासी॥
परम प्रीत से ध्यान लगाई। मोह माया का भरम चुकाई॥
अपना जीवन करे प्रभ आधार। निमख निमख करे सेव अपार॥
मन में आवे जब सुथराई। शबद अखण्ड का भेद लखाई॥
अजर पुरष सरब परकाशी। अन्तरगत में करे बिलासी॥
देह मिथ्या का मान गँवाई। सरजनहार की सेव कमाई॥
दुःख सुख सम कर सेवा धारी। भरम विनास पाये शबद आपारी॥

छिन छिन शबद की महमाँ गाये। परगट पुरष देख तृपताये॥
शबद धार आकास गुँजारी। तब सुरती जग खेल विसारी॥
पूरन पुरष के चरन समाई। बौहड़ गवन संसार नहीं पाई॥

**साची भगती जब मिली, तन मन भयो निहाल।**
**'मंगत' प्रभ सरनागती, बिपत मिटी ततकाल॥ 1255**

रे मन साची भगत पहचान। मिटे विकार सकल बिख खान॥
प्रभ बिन तेरा नहीं कोई आधार। निश्चल चित से करो विचार॥
जिसने देह की साजी किरया। परम पुरष जो सरब पसरया॥
तिस की सेव सरन पहचान। पावें शान्त पद निर्वान॥
इच्छया विकार मिटे सन्ताप। साचे नाम को नित नित जाप॥
मिथ्या वस्त की प्रीत जो होई। आवागवन के चक्कर फरोई॥
सत सरूप की सेव विचार। बिनसे दुर्मत रोग अन्धकार॥
करम विकार देही का सागर। काम क्रोध करे नित उजागर॥
साखी पुरष आतम तत्त जान। करम रोग से मिले कल्यान॥
सत सरूप केवल चितार। मिथ्या देह का तोड़ हंकार॥
अपने आप की सूझ विचार। कौन तूँ कहाँ पाये पसार॥
विखम माया के भ्रम में आया। सत सरूप अपना विसराया॥
झूट करम में नित भरमाई। सत की सूझ नहीं चित आई॥
समाँ विचार करो सत खोज। भरम गुबार का त्यागो बोझ॥
नित नित आतम तत्त विचार। साखी पूज पावें सुखसार॥
सरब परकाशी एको देवा। पल पल मूढ़े कर तूँ सेवा॥
अन्तरगत सत नाम ध्याई। सत ठाकर की शोभा पाई॥
बिपत निवारी पूरन प्रभ देवा। साची प्रीत पाई सत सेवा॥
सरब आधार चेतन परगास। अन्तरगत में पाई सुख रास॥

**मोह भरम सकला गयो, जब पाई साची सेव।**
**'मंगत' परगट पाया, आद निरंजन देव॥ 1256**

पद पंकज की पाई सेवा। बिनस गयो सब मन का भेवा॥
सत ठाकर हिरदे परगासा। पाप कूप का पायो नासा॥
मान त्याग दीनता पाई। परहित पर-की सेव कमाई॥
देह के सुख से उपरस होई। आतम शान्त घट अन्तर जोई॥
बिमल शबद सत सारंग बानी। अन्तरगत में सोभा जानी॥
पार पुरख परमेश्वर राये। परगट हो के लेख लखाये॥
पाया लेख शबद निर्वाना। मनमुखता की भई कल्याना॥
पुरख निरंजन घर परगट पाया। मोर तोर का भरम चुकाया॥
अत वडयाई प्रभ कला दिखाई। एको सिमरे दूजा बिनसाई॥
ठांड भई मन निर्मल होया। प्रभ का हुकम हिरदे में जोया॥
सत सील सम्पत घर पाई। जप तप संजम भेद लखाई॥
आपे ठाकर भये किरपाल। सकल ज्ञान की रसना लई भाल॥
करम त्याग निहकरमत जानी। शुद्ध सरूप शबद पहचानी॥
अन्तर शबद निरन्तर ध्याई। साची जुगती योग कमाई॥
पाँच पचीस मिटे विकारा। चार चौधाँ का भयो अन्धकारा॥
आगे लेखा कीना जाये। एको था दूजा कछु नाहे॥
ऊँचे घाट दृष्ट समाई। अबगत कला घर में दरसाई॥
सोलह कला सम्पूरन देवा। पल-पल कीनी तिसकी सेवा॥
तृष्ना आसा भरम चुकाई। विरले गुरमुख सोझी पाई॥

**सुरत समाई शबद में, चढ़ी सुन्न के देस।**
**'मंगत' नज़री आया, आद पुरख जगदीस॥ 1257**

अन्तर शबद सत करी पछान। निर्मल मनुआँ पावे सत थान॥
भरमन त्याग सतनाम कमाई। अपने आप में लीन समाई॥
सत शबद सब ताप निवारी। सतगुर सेव हिरदे विचारी॥
अन्तर सुन्न में सुरत समाई। बिमल शबद संग रंग रंगाई॥
शबद में सुरती रुच रुच खेले। करम त्याग नित होवे अलबेले॥
पाप पुन्न की होई हानी। अन्तर सुन्न जब शबद पहचानी॥

तीन भवन तट नित समाई। आलख शबद की प्रीत कमाई॥
पिंगल मनुआँ निज घर आया। अपरम मानक घर में पाया॥
शबद धार अन्तर परगासी। सत सरूप पायो अबनासी॥
बहु रंग धुन नाद पुकारी। घंटा शंख पखावज भारी॥
एक सरूप घर नाद पछानी। अनहद तूर अमीरस खानी॥
पूरन भाग कोई ये गत पाये। काल त्याग निज रूप समाये॥
सत की पूजा सत सेवा धारी। सत ठाकर का भयो पुजारी॥
सत परतीत गवन नहीं पाई। पद निर्वान का लेख लखाई॥
अधिक जंजाल माया का नासे। खेम कुशल जोती परगासे॥
ताँ में नित नित सुरत परोई। भरम त्याग सतधाम समोई॥
गुरमुख साजन घर में आओ। सत सरूप का लेख लखाओ॥
जीवन मुकत अभयपद मीता। सत शबद नित जाप पुनीता॥
बन्धन नासें शान्त समायें। निर्मल चित से ध्यान कमायें॥

**देवन देव सत शबद को, मन में करो चितार।**
**'मंगत' प्रभ सरनागती, जीवन जग बलिहार॥ 1258**

सरब शकत का जो भंडारी। अत बलवन्त पुरख निर्धारी॥
घट अपने में सेव विचार। अपना संकट आप निवार॥
प्रभ बिन दूजी भरमन काटे। जनम मरन अत जो सन्तापे॥
साची कीरत भगत पछान। प्रभ दाते की सिफ़त बखान॥
शाहों का शाह सो ही सच देवा। मूढ़ मनाँ कर तिसकी सेवा॥
जनम अकारथ तिस ने पाया। जो नहीं सतपद शबद ध्याया॥
जनम अकारथ तिसका जाई। साची सीख जो नहीं कमाई॥
जनम अकारथ पशू समाना। जो चित प्रीत नहीं भगवाना॥
खल बुद्धी ममता को त्याग। साध संगत रसना में लाग॥
क्यों भरमावें जग देख पसारा। सकल चक्कर ये काल नज़ारा॥
नित नित साचा स्वामी सेव। जग आवन का निर्मल भेव॥
बन्धी नास घर मुकत समायें। रूप निरंजन अन्तर ध्यायें॥

अद्भुत जोत करे परगास । सत साजन वहाँ करो निवास ॥
सो ही साचा धाम है मीता । निश्चल होवे ये जीव पुनीता ॥
साखी पुरख की सेव कमायें । जतन यथारथ ये जग माहें ॥
अबनाशी प्रभ सिमरन योग । सिमर सिमर के भयो अरोग ॥
मोह माया का ताप घनेरा । राम जपत काटे भ्रम फेरा ॥
दरस परस से शान्त पायें । जो चित महमाँ नाम की गायें ॥
तिस तुल और नहीं कोई विचार । सत शबद हिरदे में धार ॥

**जनम जनम बिपता हरी, सत शबद को ध्याई।**
**'मंगत' पूरन सार ये, कोट मद्धे कोई पाई॥ 1259**

छाड़ भरम तूँ क्यों भरमाया । मारग मुकत नहीं हिरदे ध्याया ॥
पततपावन जप शबद अनामी । चारखानी में जो बिसरामी ॥
अपने घट में खोज विचार । पावें जग का भेद आपार ॥
अखण्ड अछेद पुरख निर्वानी । अनहद नाद प्रेम की खानी ॥
ताँ में अपनी सुरता धार । जग आवन की सुन यह कार ॥
अपना साचा खोज ठिकाना । जाँ में जाये अन्त समाना ॥
माया चक्कर में ना भरमायें । यहाँ तो इस्थिर रहना नाहें ॥
आवत जावत खेल रचाया । प्रभ दाते की अचरज माया ॥
छोड़ भरम तूँ सार सम्भाल । नित सरनागत हो दीनदयाल ॥
अन्तर गरजे सत ठाकर देवा । मूढ़ मना कर तिसकी सेवा ॥
किरपासिन्ध सत किरपाधारी । सकल विपत इस जीव निवारी ॥
चरन कँवल की सेव कमाओ । रुच रुच तिसका ध्यान लखाओ ॥
जग को देख ना पल भरमाई । मिथ्याकार ये काल दुहाई ॥
नित ही मन में मगन समाओ । काल त्याग अकाल गत पाओ ॥
शबद पुरख सो सरब स्वामी । सरब ज्ञाता अन्तरयामी ॥
पल पल तिसकी प्रीत विचार । जग आवन की साची कार ॥
माया देख क्यों भरमाया । नित रोवे जिस राम नहीं ध्याया ॥
बड़े बड़े सम्पत के वाली । रोवत चले अन्त को खाली ॥

अपनी निर्मल रास विचार । एक पलक होवे देह छार ॥

**सरजनहार ध्याइये, निमख निमख कर मीत।**
**'मंगत' साधन सार ये, हिरदा करे पुनीत॥ 1260**

अनन प्रीती से प्रभ ध्याओ । दुर्लभ सार जगत में पाओ ॥
प्रभ का सिमरन प्रभ की सेवा । सदा दयाल होयें देवन देवा ॥
नित ही नित तूँ सरन पछान । मिथ्या मोह में क्यों ग़लतान ॥
तेरा जग में कोई ना होई । अपने सुख में सभी फिरोई ॥
बारी बारी चलें अकेले । मूढ़ मनाँ तूँ आया मेले ॥
मेला देख ना प्रभ बिसराई । साध सीख सुनो चतराई ॥
सरजनहार ठाकर नित चेत । गरस सके ना मोह व़खेप ॥
अपना साहब जो दिया विसार । पलक व्यापे अत मोह विकार ॥
ताँ सो मन में धार चतराई । पलक ना विसरे ठाकर सुखदाई ॥
अती भयंकर बाज़ी जग मीता । त्रास त्रास में गुनी गुनीता ॥
शान्त सरूप पायें नहीं सार । नित आवें धर मोह अन्धकार ॥
कूड़ी सम्पत करें सम्भाल । अन्त चलें सब छाड जंजाल ॥
मूरख जीव नहीं तृप्ताई । अदभुत देखे जग रचनाई ॥
इक आवे इक जावन जाई । झूट धीरज यह मन बन्धाई ॥
अपने चलन की करो तैयारी । साची रास प्रभ नाम विचारी ॥
बारम्बार सिमर सुख देवा । पारगरामी की धारो सेवा ॥
प्रभ विसार माया लिपटाया । साखी छोड़ भरमे विच छाया ॥
नैन खोल के होश सम्भाल । साचा मारग धरम का भाल ॥
करनी निर्मल कीजो नित नीत । साध जनाँ की सुन सत सीख ॥

**जगत सराये में आया, तूँ मुसाफ़िर मीत।**
**'मंगत' निर्मल ध्यान से, साची पालो प्रीत॥ 1261**

कौन तेरा तूँ किसका होई । आज्ञा प्रभ में चक्कर चलोई ॥
आये अकेला जायें निहसंग । रचयो मेला झूट परसंग ॥

साची शक्ती खोज निधान । अन्त ना पावें दुःख नादान ॥
निश्चय चलना इक दिन मीत । सत ठाकर के गाओ गीत ॥
निश्चे त्यागें सब परिवार । महल अटारी घने अम्बार ॥
ओड़क देही छार समाई । मूरख जीव क्यों लिपटाई ॥
साचा नाम खोजो सुखरासी । जो जग में होई बन्ध खुलासी ॥
मूढ़मती तूँ मन की छोड़ । झूट सयानफ़ चित की तोड़ ॥
अपना अगला राह सँवार । अन्त की बारी होये सुखसार ॥
सरब मिथ्या जगत पसारा । त्रैगुन माया का चक्कर अपारा ॥
भरम में बांधा जीव भरमाई । कूड़ भरोसे परम दुःख पाई ॥
अनक सयानफ़ धारी नीत । कूड़ की पाली निर्मल प्रीत ॥
रोवत आयें रोवत जायें । कूड़ जगत में नहीं सुख पायें ॥
साची सीख सुनो बुद्धिमाना । बिन प्रभ सेव नहीं पायें ठिकाना ॥
और की छोड़ तूँ अपनी विचार । साची करनी हिरदे धार ॥
सतसरूप नारायन चेत । अन्तरगत लख तूँ सत लेख ॥
भरम .गुबार की आँधी जाई । इस्थित पावें जप नाम अगाई ॥
नाम रतन नित हिरदे जाप । संकट मिटे पावें परताप ॥
ऊँच ज्ञाई नाम भगवन्त । पल पल माहीं हिरदे जपन्त ॥

**झूट भरोसा त्याग कर, सत मारग को भाल।**
**'मंगत' पल पल सिमरलो, प्रभ साचा दीनदयाल॥** 1262

प्रभ की चरनी प्रीती राख । साध जनाँ की सुन सत साख ॥
कष्ट निवारनहार सो देवा । निर्मल चित से कर तूँ सेवा ॥
एक पलक में करें निहाल । पतित उद्धार साहब को भाल ॥
पूरन मनसा आसा पूरी । साचा नाम जप सार हज़ूरी ॥
प्रभ बिन दूजे की टेक नहीं राख । कारन कर्ता नाथन का नाथ ॥
अत ही महमाँ हिये विचार । अतुल शक्त प्रभ सरजनहार ॥
अत ही सेवा मन में धार । सदा दयाल के चरन चितार ॥
दीनदयाल दया नित धारी । संकट हरयो जो सरन पधारी ॥

मिथ्या कूप जगत जंजाला । रहे प्यासा जीव त्रैकाला ॥
वारापार नहीं नज़री आवे । तड़प तड़प के जनम गँवावे ॥
झूटे लालच में क्यों गरसाई । साचे साहब का भेद नहीं पाई ॥
सुकृत भाग जो नाम लखाया । साध सरन मिल बहु सुख पाया ॥
साखी पुरष जगत का कर्ता । आद नारायन सरब का धर्ता ॥
घट घट व्यापे करे निहाल । सरन पछाने छूटे ततकाल ॥
सो ही मूल सो ही सत धामा । भज गोबिन्द पावें बिसरामा ॥
भरम की ममता मन से त्याग । साचे नाम में उठ के जाग ॥
अत चतराई मन में धार । पलक न विसरें सरजनहार ॥
साची सेव सतनाम कमाई । मनसा लीन शान्त घर पाई ॥
निर्मल नाम परोयो जिन चीत । साजन चले हैं जग को जीत ॥

**सत भरवासा धार के, जिन सिमरियो दीनदयाल।**
**'मंगत' सो निस्तर भये, छूट मिली तत्काल॥** 1263

बन्धन रूप ये कुल सँसारा । त्रैगुन माया का जाल पसारा ॥
इच्छया करम की फाँसी डारी । नित भरमायें खानी चारी ॥
छाया प्रीत में नित भरमाया । साखी बिना नहीं धीरज पाया ॥
सतगुर मेल साखी प्रभ जाता । बन्ध खुलासी मुकत पछाता ॥
निर्बन्ध रूप शबद सुखदाई । जो सेव करे सब ताप मिटाई ॥
शबद ही जग का सरजनहारा । साखी रूप सकल बिस्तारा ॥
जिसने सत गत हिरदे जानी । सत परमेश्वर करी पछानी ॥
छाया छोड़ सत मूल पछाता । मिले आनन्द मिटे सन्तापा ॥
बन्धन नास मुकत घर पाई । जो जन साचा नाम ध्याई ॥
नाम रतन जग जीवन सार । जो सिमरे तिस तौं बलिहार ॥
साचा ठाकर अत बलकारी । तपन हरे जो सरन पधारी ॥
नित ही चरनी सीस निवाओ । पल पल नाम हिरदे में गाओ ॥
बन्ध खुलासी पावें सत ठौर । आवागमन की टूटे डोर ॥
नित ही नित ये निश्चय धार । साची भगत प्रभ चरन विचार ॥

शुद्ध सरूप त्रैकाल समाई । पूरन पुरख की अत प्रभताई ॥
जो चित ध्याये पाप विनासे । शुद्ध सरूप अन्तर परगासे ॥
द्वन्द विकार जाये अन्धकारा । होये परापत सरजनहारा ॥
नित नित चित से करूँ अरदासा । चरन कँवल में कीजो मन वासा ॥
अनन प्रीती भगत कमाऊँ । लाभ यथारथ जग में पाऊँ ॥

**करम जाल बिपता मिटे, जब मन में नाम कमाये।**
**'मंगत' महमाँ नाम की, नहीं रंचक वरनी जाये॥** 1264

साचे नाम को हिरदे धार । मारग मुकत करो विचार ॥
उटठत बैठत निश्चय राख । नाम निरंजन अन्तर चाख ॥
साची सेव सदा चित पाओ । प्रभ दाते की सरन समाओ ॥
इक चित हो के नाम विचार । हिरदे माहीं पल पल चितार ॥
प्रभ दाता सब संकट टारी । पाप करम की मैल उतारी ॥
प्रभ की भगत निर्मल चित कीजे । शुद्ध सरूप अन्तर में सीजे ॥
नित ही तिसकी करो वडयाई । लख साहब की बेपरवाही ॥
अनहोयाँ नूँ करें बलवन्त । छत्रपती को करें भसमन्त ॥
सकल जीयाँ की बनत बनाई । बसे अलेप पुरख सुखदाई ॥
अपनी शक्ती करी बिसतार । अतुल परमान रचा संसार ॥
रंचक महमाँ वरनी नहीं जाई । लख दाते की बेपरवाही ॥
जैसी भावी त्यों चलाये । अटल हुकम जानो प्रभराये ॥
मन में राखो नित परोये । दीनदयाल विगन सब खोये ॥
साची भगती कीरत जान । पूरन पुरख की सेव पछान ॥
नित नित मन में करो डंडोत । निर्मल चरन की राखो ओट ॥
दीनदयाल सदा दातारी । अपने जन की बिपत निवारी ॥
परगट होके आनन्द वरताई । पल पल साहब होत सहाई ॥
मन मेरे तूँ सरन विचार । साचा वनज ये ही संसार ॥
प्रभ के नाम में जीवन राख । साची कीरत हिरदे चाख ॥

**प्रभ सेती मन मानया, पाई तृपत सुख सार।**
**'मंगत' दुर्लभ आये सो, सत साजन संसार॥ 1265**

हरजन जग में दुर्लभ आया। झूट त्याग सतनाम ध्याया॥
बिपता छोड़ शबद में लागा। हरजन जग में अत वडभागा॥
दुर्मत त्याग पाई इक प्रीत। प्रभ दाते का गायो गीत॥
निमख निमख चित चरन समाई। अन्तरगत पावे प्रभताई॥
अबगत रूप निरंजन देवा। अन्तर परगट पावे सेवा॥
सेवत सेवत भरम दु:ख जाये। प्रभ के चरनी मेल मिलाये॥
पूरन भाग पायो सत खेला। प्रभ के चरनी पायो मेला॥
तृपत भयो गयो शान्त समाई। सत ठाकर की पाई प्रभताई॥
जल थल अन्तर तूँ भरपूरा। सरब स्वामी शबद हज़ूरा॥
महमाँ तेरी कथी नहीं जाई। अकथ कथा अलेख अगाई॥
पूरन रूप तेरा जगदीशा। सम परकाश सरब घट ईशा॥
रंचक घाट वाध ना पायें। जुग जुग ठाकर पूर समायें॥
सरब जगत तेरा चमकारा। तेरी महमाँ का सकल पसारा॥
आपे सरजे आप निवाजें। घट घट अन्दर आप बिराजें॥
अपना आप लखे परताप। अपने आप का कीजे जाप॥
अपने भरम को आप चुकाई। अपने आप का दर्शन पाई॥
सतगुर मिले पाई सत सार। पूरन पुरख केवल निरंकार॥
अनमत धार भरम भुलाई। सत विसार परम दु:ख पाई॥
सत शबद गुरू मेल मिलाये। छाया विनास भरम अधिकाये॥

**अन्तरगत में सूझया, अनन्त शकत भण्डार।**
**'मंगत' तिसका खेल है, सरब जगत बिस्तार॥ 1266**

अनन्त शकत परमेश्वर राये। रे मन पल पल लयो ध्याये॥
सत को छोड़ क्यों भरमें लागा। बनयो घाती मूढ़ मंधभागा॥
अपना जीवन रूप विचार। देह ममता का तजो विकार॥
अनँक जतन जो भी गुनी धारी। एक पलक देही छार विचारी॥

साचा नाम साहब का जाप । दुर्मत त्याग मूल सन्ताप ॥
सत सरूप अबनाशी चेत । जो सरब व्याप सदा अलेप ॥
अपने अन्तर करो विचार । रम रह्या प्रभ सरजनहार ॥
साची जुगती सेव कमाओ । परगट प्रभ के दर्शन पाओ ॥
आलख नाद घर माहीं पुकारी । तत्त गत जान गुनी गुनकारी ॥
नाद सरूप सरब का देव । सरब में पसरे पुरख सुख देव ॥
घट में तिसकी सुन किलकार । बन्धी छूट पायें सुखसार ॥
भँवरा अन्तर करे गुंजारी । तिरबैनी घाट खेल अपारी ॥
भरमन त्याग अन्तर में आओ । खेल अचम्भा घर में पाओ ॥
सरब में पसरे जो स्वामी । परगट देख तूँ अन्तरयामी ॥
सुरती बांध पवन की धार । अखण्ड जाप हिरदे विचार ॥
पाँच दोख तीन ताप विनासी । निर्मल बुद्ध सतनाम उपासी ॥
हंग विकार मिटे अन्धकारा । परगट देख तूँ सरजनहारा ॥
दसवें द्वार के खोल किवाड़ । गरजे शबद आलख आपार ॥
दामन दमके अत सुखरासी । घर में दर्शन पाओ अबनासी ॥

**निर्मल भगती मन रसी, तब निज घर कीना वास।**
**'मंगत' दूजा विसरया, घट पायो सत परगास॥ 1267**

निर्मल नाम की सेव कमाई । बन्धन नास मुकत घर पाई ॥
अखण्ड शबद निर्वान पछाता । अन्तरगत में भयो रँगराता ॥
सुरत मतवाली आकास समाई । परतख प्रभ के दर्शन पाई ॥
झुनत झुनत शबद गुंजारी । आलख पुरख जोती उजियारी ॥
अत परकाश शबद गम्भीरा । ताप विनास मिटे तक़सीरा ॥
राम चरन की आई परतीत । निर्भय पद का गायो गीत ॥
काल चक्कर का खेद विनासी । इच्छया करम की काटी फाँसी ॥
द्वन्द विकार सकल मल हरया । सत सरूप के चरनी पड़या ॥
बन्धन नाश मुक्त घर जाता । अगम भेद पायो परतापा ॥
मारग कठन तीखन अत भारी । जीवत मरे तब सार विचारी ॥

अपने ठाकर संग मेल मिलाई । दुबधा दूर मंगल घर पाई ॥
संशे शोक मिटे तुरंगा । निर्मल प्रीत शबद चित रँगा ॥
शबद में जीवन पायो आधार । गुरमुख जीत लिया संसार ॥
सत कमाई जग में कीनी । झूट त्याग साहब चित चीनी ॥
सिमर सिमर के मैल गँवाई । दुर्मत रोग की औखद खाई ॥
रोग विनास पाई सुखसार । अजर पुरख का पायो दीदार ॥
सुन्न मुकाम मुक्त की बाट । हरजन लीना हरपद खाट ॥
निर्मल प्रीती प्रभ चरन समाई । आपा पर का खेद मिटाई ॥
दुर्मत त्याग सम्मत में जागा । हरजन आयो जग में वडभागा ॥

**निर्मल प्रीत रसी मन आये, उपजा बिरह तुरंग।**
**'मंगत' ममता छाड मन, रँगयो साचे रंग॥ 1268**

पद निर्वान का भेद लखाया । शबद अगोचर घर में पाया ॥
शबद में सुरती इक रंग पाई । करम त्याग निर्वान लखाई ॥
बन्धन रूप गयो हंकारा । समता तत्त्व में जीवन धारा ॥
निर्भय रूप पायो अबनाशी । खेम कुशल अन्तर परगासी ॥
निहचल मनुआँ नहीं आवे जाई । पद निर्वान की पाई प्रभताई ॥
शून करम गत अन्तर धारी । दुबधा दूर अत शान्त विचारी ॥
मन अपने में मगन समाई । दूजा भाओ मिटे दुःखदाई ॥
एको एक सरब दरसाया । पद निर्वान का भेद लखाया ॥
चंचल चित घर लीन समाई । ममता त्याग समता घर पाई ॥
सम भाओ चित में परगासी । राग द्वेष की फाँसी काटी ॥
निर्वान भाव में इस्थित पाई । अन्तर शबद सुरत लिवलाई ॥
मिटे विखाद दूषना नासी । पद निर्वान जोत परगासी ॥
घट अन्तरगत शबद लखाई । नाद सरूप अगम अगाई ॥
गुरमुख पद परसा सुखरासी । नाद सरूप मन लयो उपासी ॥
अन्तरमुख नित लीन समाई । धुर मुकाम का लेख लखाई ॥
अमरत धारा शबद परगासी । पद निर्वान पायो सुखरासी ॥

धारा माहीं इक धीर समाया । अबगत लेख नहीं लखने पाया ॥
पूरन पुरख शबद निर्वानी । निज घर पूज मिटे भ्रम खानी ॥
अति अत महमाँ शबद अबनाशी । जो जन परसे निर्भय निवासी ॥

**अन्तर मन में रसया, साचा नाम अमोल।**
**'मंगत' मुकत समाया, सुन सन्तन का बोल॥ 1269**

पूरन भाग जन जग में आये । साचे शबद की महमाँ लियो गाये ॥
शबद अबनाशी शबद पुनीता । शबद निर्भय शबद सुखरीता ॥
शबद अनादी पुरख अनूप । सरब जगत है शबद सरूप ॥
साचे शबद में लीन समाई । पद निर्वान परसे सुखदाई ॥
अगम अगोचर शबद पहचाना । अबगत रूप शबद निर्वाना ॥
काल करम दुबधा से दूर । शबद सरूप साचा हज़ूर ॥
तिस शबद की सेवा धार । शबद ध्यान जप निर्मल सार ॥
अपने अन्तर करो पहचान । अनहद नाद जोत निर्वान ॥
नित परकाशे देह काची भीत । नित आनन्द रहे सदा अलेप ॥
अत अचरज शबद का रूप । रूप बिना सो बसे अनूप ॥
पारावार नहीं तिसका पाये । कोट तपीशर नित योग कमाये ॥
आपे आप में पूरन भगवन्त । शबद सरूप आपार अनन्त ॥
तिस शबद की जिस कथा विचारी । पद निर्वान पायो सुखकारी ॥
मारग मुकत का ये है मीता । हिरदे सिमरो शबद पुनीता ॥
साखी रूप सरब का आद । अपने आप पूरन बिसमाद ॥
रंचक लेख ना लिखने पाये । पूरन पूर आप समाये ॥
आपे परगट गुपत समाया । आपे खेल खेले प्रभराया ॥
तेरी महमाँ तूँ आप लखाई । हूँ बलिहार तेरी प्रभताई ॥
आपा पर अन्धकार विनासी । शुद्ध सरूप तूँ केवल अबनासी ॥

**नमों नमों सत रूप को, जो आप सरब भरपूर।**
**'मंगत' रंचक कीरती, नहीं वरनी जाये हज़ूर॥ 1270**

सातवाँ अध्याय

सत्पुरषों का आदर्श साधन

**सतपुरषों की सीख से, मन तन भये अरोग।**
**'मंगत' महमाँ नाद की, पाई सार संजोग॥ 1271**

सतपुरषों की कथा विचारो। पावें निर्मल ज्ञान सुखकारो॥
ये मन नित ही दुबधा धारी। साची सीख से उतरे पारी॥
एह मन नित ही भरमे भूला। सत सिखया से हरे जम सूला॥
इस मन का नहीं और उपाये। सतपुरषों का जीवन ध्याये॥
जैसी मन परतीत समाई। तिस अनुकूल जतन को धाई॥
सत परतीत जिस अन्तर धारी। सतपुरषों का आदर्श विचारी॥
उपजे चाओ सत मारग पाई। जतन करे सत सार लखाई॥
आदर्श सरूप ही मन का जान। आदर्श अनुकूल जतन करे अनजान॥
बिना आदर्श सदा रहे निरासा। केवल भरम में लीजे वासा॥
जैसी करनी जो भी धारे। तिसका आदर्श प्रथमे विचारे॥
दृढ़ विश्वास जभी चित पाई। सत पुरषारथ पाये प्रभताई॥
जतन करे तब सार लखाई। पूर मनोरथ मंगल को पाई॥
और आदर्श माया की फाँसी। जीव फरावे नित भरम चौरासी॥
सतपुरषों का आदर्श विचारी। आवे शान्त परम सुखसारी॥
सत साधन हिरदे परगासी। जतन करे तब खेद विनासी॥
ताँ सो ऐसा निश्चय धार। सतपुरषों का लेख विचार॥
सतपुरषों की करनी परवान। सतपुरषों की कहनी सुख जान॥
सतपुरषों की रहनी मूल। भरम चक्कर की काटे भूल॥
ताँ सों नित ही कथा विचार। सतपुरषों की कीरत धार॥

**सतपुरषों की कीरती, तन मन करे निहाल।**
**'मंगत' नित सतसंग से, सत मारग लीना भाल॥ 1272**

ये संसार अधिक भयाना। बिना जतन नहीं होवे कल्याना॥
प्रथम जतन ये साधन सार। सतपुरषों का लेख विचार॥

जिस विध जीवन जग वरताया । साची प्रीत प्रभ चरन ध्याया ॥
इस बिध मन में धारो चौंप । तिन आधार जीवन को सौंप ॥
कहनी तिन की अत सुख देवे । दृढ़ निश्चय से जो जन सेवे ॥
करनी तिन की सत मारग दिखलाये । दृढ़ विश्वास मिले सुखदाये ॥
रहनी तिन की धीरज सत देवे । निर्मल बुद्ध से गुनी जो सेवे ॥
ताँ सों निर्मल करो विचार । सतपुरषों की सिखया धार ॥
जीवन मुकत अभयपद वासी । साची बिरह प्रभ चरन उपासी ॥
पर हित परउपकार को धारी । परदुःख में निज सुख वरतारी ॥
जप तप संजम त्याग पछानी । मारग मुकत दृढ़ सेव कमानी ॥
निर्मल उद्दम निर्मल विश्वासा । निर्मल विवेक जीवन इतहासा ॥
निर्मल चितसे करो विचार । तिन अनुकूल जीवन को धार ॥
मन का आदर्श जो ऊँचा होई । निर्मल करम का जतन परोई ॥
मन का आदर्श जो अती गम्भीरा । सत धरम साधे सुखसीरा ॥
मन का आदर्श जो अती त्यागी । गृह को त्याग भया बैरागी ॥
मन का आदर्श जो अत धनवन्ता । अनंक ब्योहार की साधे सन्था ॥
मन का आदर्श जो होये भूपाल । अनंक जतन कर साधन भाल ॥
जैसा चित आदर्श समाई । तिस अनुकूल खेल खिलाई ॥

**मन का जो आदर्श हो, तिस बिध उद्दम धार।**
**'मंगत' चक्कर ये जगत का, सकल आदर्श आधार॥ 1273**

जैसा मन निश्चय को धारी । तिस अनुकूल करे ब्यौहारी ॥
जैसी संगत ऐसा विश्वास । जतन करे होवे सुखरास ॥
जैसा आदर्श मन माहीं समाई । तिस अनुकूल संगत में जाई ॥
जीवन मूल आदर्श पछान । जिससे पावे लाभ और हान ॥
मारग धरम अत तीखन धार । अनंक जतन से पावे सार ॥
सतपुरषों का जीवन जानी । मारग धरम का लेख पछानी ॥
जिस बिध जीवन गुनियों ने विताया । सुने परसंग तब भेद लखाया ॥
हर का रूप नज़री नहीं आवे । हरजन दर्शन से पतयावे ॥

प्रभ की महमाँ जिस घट परगासी । तिन का दर्शन परम सुखरासी ॥
प्रभ की आज्ञा में जनम विताई । मोह माया का लेप नहीं पाई ॥
सुकृत काज अत ही करीने । तिनकी कीरत सुखसार को चीने ॥
ताँ सों मन में नित करो विचार । तिन का जीवन हिरदे धार ॥
जिस देवत का तूँ पुजारी । गुन और करम नित करो विचारी ॥
तिन की सिखया तन मन में धारो । साची पूजा देवे सुख कारो ॥
जो नहीं गुन और करम पछाता । जो नहीं सिखया हिरदे रँगराता ॥
जो नहीं साधन सार चित पाई । जित बिध गुनियों ने करी कमाई ॥
मन मानी मन अन्तर राखी । झूट देवत की पूजा भाखी ॥
पाखण्ड माहीं जनम गँवाये । पेट के कारण बहु भेख बनाये ॥
भरम .गुबार में आवे जाये । झूटी पूजा गवन फिराये ॥

**मन की तजी नहीं दूषना, पूजे देवत अनेक।**
**'मंगत' धार पाखण्ड को, नहीं लखया सत लेख॥ 1274**

दुर्मती को गुनी त्याग । सत मती में उठ के जाग ॥
जग में करनी है परवान । जो जन करे सो पाये निधान ॥
सतपुरषों की पूजा सार । सत करनी आवे विचार ॥
सतपुरषों का जीवन जोई । गुन करम मन माहीं परोई ॥
उपजे साची करनी चाओ । मारग धरम तब लेख लखाओ ॥
मारग धरम में जो प्रीत कमाये । करनी करके देवत हो जाये ॥
ऐसा गुनियों करो विचार । करनी बांधा फिरे संसार ॥
करनी त्याग कथनी बहु धारी । झूट पूजा देवत की पसारी ॥
पाखण्ड धार जनम गँवाये । करनी अपनी देवे सज़ाये ॥
ना कोई देव छुड़ावनहारा । ना कोई तेरा होये सहारा ॥
अपनी करनी परतख दिखलाये । जो कुछ जीवत करम कमाये ॥
मूढ़मती तूँ मन की त्याग । साची करनी में उठ जाग ॥
सतपुरषों की साधन पेख । सतपुरषों की नीती देख ॥
तिन अनुकूल जीवन को धार । जग आवन पावें जयकार ॥

एह बिध निश्चय दृढ़ कर राख । अपनी करनी का नित फल चाख ॥
अपनी करनी फेर फिराये । ऊँच नीच चक्कर दिखाये ॥
करनी से देवत हो जाये । करनी से नर असुर कहलाये ॥
करनी से गुर पीर अवतारा । करनी बांधा कुल संसारा ॥
जैसी करनी जिस जग करी । तिस अनुकूल शोभा को धरी ॥

**माया चक्कर आपार है, करनी लेख विचार।**
**'मंगत' करनी मुकत दे, करनी बन्धन सार॥** 1275

मन साधन का सार उपाये । साची करनी चित में आये ॥
सतपुरषों की संगत सार । जो चित आवे सत विचार ॥
अनंक जतन से मन समझाई । सतपुरषों का जीवन ध्याई ॥
साचा यतन साची पाये कार । सतपुरषों का जो करे विचार ॥
साची नीती होवे परगास । हिरदे आवे सत विश्वास ॥
विश्वास पाये सत जतन को धारी । सो गुनिया होवे जयकारी ॥
सकल मनोरथ पूरन पाये । सतपुरषों की साधन ध्याये ॥
सतपुरषों की साधन जोई । साचा मारग धरम लखोई ॥
पाप कूप को भसमत करी । सत साधन जो हिरदे धरी ॥
सत विवेक सुनो गुनी मीता । साध की सीख करे पुनीता ॥
अनेक जतन जो भी चित धारी । जायें अकारथ बिना विचारी ॥
मिल सतसंग सत सुनो विचार । मारग पावें परम सुखसार ॥
सत संगत सत सूझ लखाई । झूट भरम की मैल गँवाई ॥
सत सरूप आवे विश्वास । साची संगत करे परगास ॥
साची पूजा प्रभ की पायें । साची संगत भेद लखायें ॥
मारग मिले सार कल्यान । साची संगत सत सार पछान ॥
भरम चक्कर माया की फाँसी । साधन करे तब होये ख़ुलासी ॥
अपनी करनी आपे निस्तारे । पर आधार नहीं पाये सुखसारे ॥
साचा गुर जब मेल मिलाई । साची करनी तब जन पाई ॥

**करनी बाँधा जीवड़ा चार खानी भरमाये।**
**'मंगत' बिन करनी करे, ना कोई भयो सहाये॥ 1276**

गुरु पीर नहीं नबी छुड़ावे। अपनी करनी की गत पावे॥
ना कोई देवी देव सहाये। अपनी करनी देवे सज़ाये॥
ताँ सों गुनियों करो विचार। साची करनी सत कर धार॥
पाखण्ड छोड़ सत मारग सोध। काल करम का मिटे बिरोध॥
अपनी करनी जो अत अन्धकारी। देव भरोसा नहीं दे छुटकारी॥
मूढ़मती क्यों धारी चीत। करनी से होवे निर्मल नीत॥
करनी रूप देव पहचान। ज्यों ज्यों करे पावें कल्यान॥
मारग जगत ये खेल पहचानी। अपनी करनी सब को बँधानी॥
करनी मलीन जो चित में धारी। अनंक देवत का भयो पुजारी॥
अनंक गुरु पीर मनाये। तीरथ अनेक उठ उठ नहाये॥
कथा परसंग सुने इतिहासा। साची करनी नहीं चित बासा॥
पाखण्ड माहीं जनम गँवाई। अपनी करनी फेर फराई॥
ना कोई बन्ध छुड़ावनहारा। अपनी करनी संकट दे भारा॥
मनमुखता तूँ मन से त्याग। सत विवेक सुनो वडभाग॥
त्रैगुन माया जाल पसारी। करम का बान्धा जीव अन्धकारी॥
जैसी करनी ऐसी गत पावे। अपनी करनी फल दिखलावे॥
मूल धरम ये ही विचार। साची करनी मिले सुख सार॥
साची सिखया गुर की ये ही। सत करनी का होवें सनेही॥
साची पूजा देवत की जान। जो चित परसे सत करनी निधान॥

**देवी देव की साधना, और गुरु पीर आधार।**
**'मंगत' सबका अर्थ यह, सत करनी हिये विचार॥ 1277**

गुरु पीर का सत आधार। जो चित आवे सत विचार॥
देवी देव की साधन सेव। जो चित आवे सत करम का भेव॥
वेद कतेब कथा इतहास। निर्मल करनी का मिले अभ्यास॥
जगत जंजाल अत ही अन्धकारा। मन मूरख नहीं सूझे सारा॥

अनेक जतन से नित समझाई । गुरु पीर की सीख लखाई ॥
सतपुरषों की कीरत वाची । जो कर मन निर्मल गतभाखी ॥
सरब जतन कर जो फिर भरमाई । गयो अकारथ नहीं सार कछु पाई ॥
भरम माहीं सब वक़त गँवायो । गुरु पीर बहुरंग मनायो ॥
निर्मल सीख नहीं हिरदे मानी । धार गुमान करें पाप अधिकानी ॥
करनी बाँधा संकट अत पावें । भये ना सहाई जो जतन लखावें ॥
जो तेरी करनी निर्मल होई । साची सिखया मन माहीं परोई ॥
सत उद्दम नित हिरदे धारी । भये सहायक गुरु पीर आचारी ॥
सीख के कारन सब थाओं विचारो । गुरु पीर और ज्ञान आपारो ॥
सीख के कारन देवत की पूजा । सीख मनावे तब शान्त पद सूझा ॥
जो कर सीख नहीं मन लखाई । पाखण्ड पूज के जनम गँवाई ॥
उठ गुनवन्ता लेख विचार । अपनी करनी देवे निस्तार ॥
अपनी करनी देवत बनाये । अपनी करनी राज तेज दिखलाये ॥
अपनी करनी देवे ऊँच नीच रंग । सकल जगत करनी परसंग ॥
सतपुरषों की सीख विचार । साची करनी मन तन में धार ॥

**करम चक्कर संसार में, जीव नित फेर फिराये।**
**'मंगत' जैसी करनी करे, ऐसी गत लख पाये॥** 1278

सतपुरषों ने सत साधन धारी । सत आधार जीवन को काढ़ी ॥
मारग धरम में तन मन वारी । सतपुरष सो आये बलिहारी ॥
सत की खोज में जनम गँवाई । झूट माया का भरम चुकाई ॥
पाखण्ड विकार को खण्डन करी । सत परतीत इक चित में धरी ॥
निर्मल नीती सतनाम विचारी । सत करम नित हिरदे धारी ॥
एह बिध जतन जीवन में पायो । सतपुरष तब नाम कहलायो ॥
साची करनी सत पद दीना । रूप निरंजन अन्तर चीना ॥
भय भरम सब दोख मिटाई । सत करनी ये सतपुरषों ने पाई ॥
आप तरे औराँ सुख दीया । मारग धरम में दृढ़ वरतीया ॥
पर की हेत से सेवा धारी । निष्काम करम के भये पुजारी ॥

सत सरूप अन्तर घट जानी। पल पल तिस की सेव पछानी॥
आज्ञा प्रभ की चित में धारी। सुख दु:ख दोनों सम कर विचारी॥
खिमावान और पर उपकारी। सतपुरषों ने सत करनी धारी॥
सत करनी ने निर्भय पद दीया। प्रभ के चरन में रम्मत रमीया॥
अपनी करनी से पाया उद्धार। तिन की सीख आदर्श संसार॥
निर्मल करनी का करो विचार। जिस से उद्धरे बहुजन पार॥
भय भरम सब जाये अन्धकारा। सत करनी जो करें विचारा॥
सकल देवत गुरु देवें वधाई। सत करनी जो दृढ़ कर पाई॥
आलस छोड़ जतन सत धार। खाट वक्खर सत धरम विचार॥

**सत पुरषारथ धार के, जग से पाओ जीत।**
**'मंगत' करनी कर चलो, जो तीन काल सुखरीत॥ 1279**

मन मानी नर अपनी त्याग। मारग धरम में उठके जाग॥
कोटाँ कोट जीव आये संसार। करनी का नित कियो ब्यौहार॥
जैसी करनी जो कर गये। तिस अनुकूल पत जग में लये॥
मूरख मन तूँ कर विचार। किस कारन आया संसार॥
शान्त सरूप का मारग खोज। बन्ध ख़ुलासी अपनी सूझ॥
नित ही जतन ये साचा धार। साची करनी पल पल विचार॥
करनी से तूँ सत पद पावें। करनी से फिर गरभ ना आवें॥
मारग करम करो विचार। बन्ध ख़ुलासी पावें सार॥
मन में साचा रख विश्वास। मोह भरम की काटो फाँस॥
सतपुरषों की सीख विचार। उतरें भव दुस्तर से पार॥
सतपुरषों ने ज्यों गत पाई। जिस बिध साचा धरम कमाई॥
एह बिध रहनी तूँ मन धार। परमगती पावें सुख सार॥
निर्मल करनी लेख लखाओ। स्वारथ बुद्ध अन्धकार मिटाओ॥
पर-उपकार अन्तर में धार। निष्काम भाओ से सेवा विचार॥
अपने मन को जतन से राख। साचा नाम निरंतर चाख॥
पर की सेव में जनम गँवाई। सतपुरषों की ये सीख सुखदाई॥

मन मानी अभिमान को छोड़। सत परमेश्वर के चरनी चित जोड़॥
परहित से पर का दुःख निवार। आज्ञा प्रभ की हिरदे धार॥
ऐसी करनी जिस लीनी धार। सतपुरषों की पाई पूजा सार॥

**सतपुरषों की पूजा, ये ही यथारथ जान।**
**'मंगत' तिनकी सीख से, पावें साचा नाम निधान॥ 1280**

सतपुरषों की पूजा ये ही। तिन की सीख जो मन लख लेई॥
सतपुरषों की सेवा सार। जो तिनकी करनी का आवे विचार॥
सतपुरषों का मारग जानी। धरम सरूप पाये परवानी॥
सतपुरषों की नीती सार। मारग धरम में तन मन वार॥
सतपुरषों का निर्मल ज्ञान। मान त्याग भाओ दीन पछान॥
सतपुरषों का यथारथ लेख। सरब जियाँ से कीजो हेत॥
सतपुरषों की करनी सार। पर का दुःख करें निवार॥
सतपुरषों का तप ये जान। सब में देखें एक भगवान॥
सतपुरषों का ये अनुराग। मिथ्या जग से पावें बैराग॥
सतपुरषों का साचा योग। मन की दुर्मत काटें रोग॥
अपने मन को साधन करी। सतपुरषों ने सिद्धता धरी॥
आतम तत्त खोजें नित नीत। सतपुरषों की ये जुगत पुनीत॥
अपरम महमाँ संतन ने धारी। सत मारग के आये ब्योपारी॥
तिन की सीख पाये सुख होई। दुर्मत मैल भरम की खोई॥
शान्त सरूप पाई गत पूरी। सतपुरषों की पाई गम्भीरी॥
सतपुरषों की सिखया गत देवे। सत परतीत गुनी जो सेवे॥
बिन करनी सब पूजा थोथी। देवी देव पूजें नित पोथी॥
मारग धरम हिरदे विचार। पल पल साची करनी धार॥
मन मूरख है अती गँवार। बिन करनी नहीं पाये निस्तार॥

**बन्धन रूप संसार से, सो जन भये कल्यान।**
**'मंगत' साची करनी, जिन चित करी पछान॥ 1281**

सत करम एह बिध विचार। निश्चय पावें धरम आपार॥
स्वारथ बुद्धी नरक का मूल। मोह वस हो के सहवे जम शूल॥
अनेक मनोरथ मन में धारी। मिटे नहीं तृष्ना अगन आपारी॥
सत करनी मारग सुखरासी। साधन करे तब मिटे चौरासी॥
निष्काम भाओ निर्मान को धारो। मिथ्या जग से उदास विचारो॥
सत सरूप निहचल घर ध्याओ। सतपुरषों की सत सीख लखाओ॥
स्वारथ त्याग उपकार पछानी। पर की सेव निष्काम लखानी॥
अनंक जतन से साधन कीजो। मानुष जनम सुफल कर लीजो॥
निष्काम करम इस बिध चित धारो। प्रभ भावी हिरदे विचारो॥
सब कुछ दात साहब की देखो। आज्ञा मान परम सुख पेखो॥
दृढ़ निश्चय जब एह बिध पाई। निष्काम बुद्धी मारग लखाई॥
अपने सुख से पाई तृप्ती। पर के सुख की खोजी नीती॥
खिमा ग़रीबी चित आन समाई। सतपुरषों की ये कथा लखाई॥
परहित जीवन अन्तर धारी। अपना सुख नित ही वरतारी॥
क्रोध अगन सब मन की नासी। धरम सरूप खिमा परगासी॥
ऐसी करनी जब लख पाई। सतपुरषों की तब कीरत गाई॥
भरम अगन दुर्मत को त्यागी। एक बिरह प्रभ नाम की जागी॥
दृढ़ निश्चय से भगत कमाई। मान मध मन का बिनसाई॥
अन्तरमुख सत शबद विचारी। सतपुरषों की ये सार आपारी॥

**सत को हिरदे जानया, पाई सत परतीत।**
**'मंगत' सो गुरमुख भये, सतपुरषों की पाई रीत॥1282**

जुगा जुगन्तर जगत पसारा। आवत जावत खेल आपारा॥
कोई आवें कोई नित जावें। अपरम आपार भेद नहीं पावें॥
नाना रंग जगत वटाई। माया खेल खेले आगाई॥
मारग मुकत का एको मीत। जुगा जुगन्तर जपें पुनीत॥
जो जो गुनी धरम विचारी। सतपुरष सो ही सुखकारी॥
कोटाँ सिद्ध तपीशर आये। कोट जती बुद्ध नाथ ध्याये॥

कोट देवत करें अरदास। सत सरूप सिमरें अबनास॥
सिमर सिमर के ताप निवारें। शान्त सरूप गती को धारें॥
तिन की करनी जीवन सार। मारग धरम मिले आधार॥
सत परमेश्वर पर आवे विश्वास। साचा करम मन माहीं उपास॥
मनमुखता सब भरमन जाई। एह बिध रहनी जिसने लख पाई॥
सतपुरषों का मारग ये ही। साधन सार मुकत पद लेई॥
निर्मल चित से हिरदे धार। सतपुरषों का ये ही वापार॥
समता भाओ सब में परगासें। समता माँही करें निवासें॥
ममता जाल माया का त्यागें। सत कीरत प्रभ चरनी लागें॥
समता भाओ मन में विचार। सतपुरषों का जो आधार॥
मारग धरम में जीवन काढ़। द्वैत ग़ुबार भरम को बाढ़॥
सरब जीयाँ से राखो प्रीती। सतपुरषों की सार ये नीती॥
उट्ठत बैठत प्रभ एक ध्याई। दूजा भाओ दुर्मत बिसराई॥

**तन मन धन को वारिये, पर उपकार के माहीं।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, सत साधन सीख लखाईं॥1283**

साचा ज्ञान खोजो सुखरास। सत करनी पर आवे विश्वास॥
करनी से भयो ब्रह्मा जगकर्ता। करनी से भयो विष्नू जग धर्ता॥
करनी से शिव करे संघारा। त्रैगुन रूप करनी बिस्तारा॥
करनी से पवन पानी आकासा। करनी से धरती भई परकासा॥
करनी से चले सब भरम खेल। अदभुत रचना जगत कुलेल॥
करनी से कायर राजगत पावे। करनी से मूरख तत्त ज्ञान लखावे॥
करनी रूप मूल है माया। जैसा करे ऐसा फल पाया॥
करनी त्याग जो देवत पूजे। गुन करम नहीं तिन का सूझे॥
भरम ग़ुबार में जनम गंवाई। बिन करनी कछू अर्थ ना पाई॥
जिस देवत की सेव विचारी। उसका गुन करम चित धारी॥
सत पुरषारथ से सत करम कमाई। सो पूजा देवे वडयाई॥
देवी देव गुरु आचारी। सिद्ध तपीशर गुनी गुनकारी॥

ज्ञानी पंडत जंगम जोगी। रिखी रिखीशर धरम संजोगी॥
सब का सार ये ही सिद्वान्त। निर्मल करनी देवे शान्त॥
ताँ सों अपना जीवन सुधार। साची सीख हिरदे में धार॥
सत पुरषारथ सब बन्धन नासे। निर्मल रीति से करो उपासे॥
अपना अन्धकार आप से जाई। पर भरवास नहीं शान्त दिखाई॥
एक साहब का निश्चय राख। साची सिखया सत धरम की चाख॥
अपने आप का करो निरोध। निर्मल ज्ञान हिरदे में सोध॥

**सत पुरषारथ धार के, अपनी दुर्मत त्याग।**
**'मंगत' साधन सार ये, सब गुनियों की जाग॥1284**

सो परमेश्वर किरपाधारी। साची सीख तत्त ज्ञान विचारी॥
मन की ममता अत दीरघ रोग। पाप पुन्न का भयो संजोग॥
जैसी करनी करे दिन रात। साखी हो के फल भोगात॥
पाप करनी दुःख रूप दिखाये। पुन्न करनी सुख रूप समाये॥
ऐसा लेख सकल संसार। करनी सब को भई आधार॥
दाता दाना गुनी गहीर। साधक सिद्ध वली और पीर॥
राजा राना मीर ग़ुलाम। सब के हाथ करनी पैग़ाम॥
जैसी करनी सो गत पाई। प्रभ साचे की अत वडयाई॥
मूढ़पना तूँ अपना त्याग। साची करनी में उठ लाग॥
साची करनी मुकत को देवे। निर्मल जुगती से जो जन सेवे॥
साची करनी प्रभ मेल मिलाये। दृढ़ विश्वास से जो सेव कमाये॥
साची करनी ऊँची गत देवे। पूर मनोरथ सत अर्थ को सेवे॥
साची करनी जग में रास। अन्तकाल पावें सुख वास॥
साची करनी चित तृपताये। जनम जनम की प्यास बुझाये॥
साची करनी सत पद देवे। रूप निरंजन अन्तर में सेवे॥
साची करनी देवे परताप। कोट जीव उठ सीस निवात॥
साची करनी दरगाह मंज़ूर। सत ठाकर आये मिलें हज़ूर॥
भरम त्याग नर पर भरवास। अपनी करनी काटे जम फास॥

सतपुरषों की कहनी सार। सत मारग में उद्दम धार॥

**माया भरम असगाह से, सो जन पावें छूट।**
**'मंगत' दृढ़ विश्वास से, जो नाम अमीरस लूट॥ 1285**

साचे नाम का करो प्यार। गुरमुख पल पल करें पुकार॥
नाम साहब का साची रास। नाम जपे तब मिटे प्यास॥
नाम अमोल हिरदे में राख। साची तृपत पावें सुख साख॥
बारम्बार सुन ये ही लेख। साचा नाम निरन्तर पेख॥
प्रभ की भगत करनी है साच। जो कमाये पाये पद निर्वाच॥
सब सिद्धों की ये ही सार। साची भगत प्रभ की विचार॥
आवन जावन होवे रहाई। साची भगत चित लयो कमाई॥
अगन सरूप जगत का खेत। सरब जीव धारें विखेप॥
झूट मोह में नित गरसाई। एक पलक नहीं शान्त पाई॥
मारग मोक्ष सुख सार निधान। सतपुरषों का सार बखान॥
तिस मारग में उठ के जाग। प्रभ दाते की चरनी लाग॥
नित ही साची सीख सम्भाल। पद निर्वान शबद को भाल॥
सो ही धाम परम आनन्द। नित परकाश जोत अखण्ड॥
बन्ध ख़ुलास सब ने पाई। साची जुगत जिस भगत कमाई॥
जितनी करनी इतना परताप। नित नित प्रभ का कीजो जाप॥
जीवन सार ये ही परवान। साची करनी सतनाम बखान॥
सब देवत की पूजा ये ही। इक परमेश्वर घट सिमरन लेई॥
बिन प्रभ दूजे धरे आधार। आवागवन फिरे बारम्बार॥
साचा नाम हिरदे में चेत। सतपुरषों का सार ये लेख॥

**एक साहब का सिमरना, सब सिद्धन फ़रमान।**
**'मंगत' बिन प्रभ भगत के, नहीं पाये कभूँ कल्यान॥ 1286**

सत धरम नहीं जानी सार। बादमुबाद में जनम गुज़ार॥
पाखण्ड धार नित दुःख पायें। भरम की अगन में नित जलायें॥

सत विसार छल को वरताई। झूटी पूजा की खेल रचाई॥
अनेक देवत की साधन करे। विश्वास हीन नित जन्मे मरे॥
सरूप विसार पाखण्ड वरताई। आतम छोड़ पाखान पूजाई॥
मूरख डूबा अनमत धारी। सत सरूप नहीं लेख विचारी॥
परकिरत रूप जो भी दिखलाई। पाँच तत्त का खेल खिलाई॥
परकिरत ही जन्मे परकिरत ही मरे। साखी पुरष समरूप नित विचरे॥
जिस के अन्तर सत साखी परगासा। सो ही देही सतपुरष बिलासा॥
सब वडयाई एको जगदीश। जो धारे सकल जन्त और कीट॥
तिस परमेश्वर की सेव पहचान। सरब के अन्तर आप परवान॥
सतपुरूषों की सीख विचार। साचे प्रभ संग मिले प्यार॥
साची भगती सत जुगत कमायें। प्रभ अपने को अन्तर ध्यायें॥
परकिरत दोख को नित हरें। सत पुरषों की सीख विचरें॥
छिन छिन मन में उद्दम राखें। नाम निरंजन अभयपद चाखें॥
जिसको सिमरें देव मुनीशा। पल पल सिमर घट माहीं ईशा॥
परम शकत अपार ज्ञाई। सतपुरषों ने कीरत गाई॥
साची सिखया खोज अनकूल। नाम निरंजन पलक ना भूल॥
बारम्बार गुनी करें दुहाई। सत सरूप ध्याओ सुखदाई॥

**सब गुनियों ने खोजया, सत शबद निर्वान।**
**'मंगत' ये तत्त सार है, परस पाइये कल्यान॥1287**

इस बिध मन में करो विचार। जिससे पावें ज्ञान आधार॥
सकल जगत माया का खेल। सत विचार से पावें प्रभ मेल॥
जब ये जीव जगत में आया। अज्ञान सरूप केवल धराया॥
ज्यों ज्यों जगत का खेल विचारी। मनुआँ डोले बहु रंग धारी॥
जैसी संगत सुना विचार। इस बिध जीवन दियो गुज़ार॥
ताँ सो मन संगत का रूप। जैसी संगत तैसा बिचरे अनूप॥
अनेक जनम ऐसे विताये। साची संगत प्रभ मेल मिलाये॥
सतपुरषों की नीती जानी। मन पाई सत शबद निशानी॥

साचा शबद अन्तर चित गाया। भरम विनास निज रूप समाया॥
पाया भेद सकल संसार। केवल खेल साहब दातार॥
प्रभ दाते की राखी टेक। मन के नासे संशे अनेक॥
साचा सिमरन पल पल गाया। भाओ भगत से सीस निवाया॥
तूँ दाता सरब दातारी। नित बरताओ सत धरम आपारी॥
साची सेव पाई उपकार। सतपुरषों का जीवन बलिहार॥
नित नित जाऊँ तिन से कुर्बान। जिन पाया प्रभ तेरा फ़रमान॥
तेरी आज्ञा सरब पसारा। आद पुरख परमेश्वर प्यारा॥
साची प्रीत चरन की दीजो। करो निहाल घट दर्शन सीजो॥
जिस बिध महमा महेश को दीनी। गौरी गनपत रसना चीनी॥
सिद्ध तपीशर ज्यों सेव कमायें। इस बिध प्रेम राखूँ तुध मायें॥

**साखी पुरष तू ही परमेश्वर, तन मन करो उद्धार।**
**'मंगत' माँगे रज चरन की, जो रते तेरे दरबार॥1288**

सत पुरषों की धूड़ रमाऊँ। जिस से कीरत तेरी पाऊँ॥
मुनी सनकादक धरें ध्याना। नारद शारद करें बखाना॥
कपल कनाद व्यास विचारी। सिद्ध रिखीशर सत लेख को धारी॥
मुनी वशिष्ठ भुसुंड ध्यायें। लोमस पल पल सेव कमायें॥
सत सरूप निरंजन आप। कोट मुनी नित करते जाप॥
सब पर किरपा तेरी देव। पूरन कीनी तिन की सेव॥
होये दयाल प्रभ दरस दिखायो। मोह भरम का ताप मिटायो॥
नित ही नित चरन बलिहारी। तेरी महमा अपरम आपारी॥
सब को सुकृत भेद लखाया। अबनाशी तत्त परगट दिखलाया॥
अपने जन को कीरत दीनी। साची सेव तेरी चित चीनी॥
जुग जुग महमा करें विचार। तेरी क़ुदरत नित बलिहार॥
रंचक भेद तेरा नहीं पाया। कह बिध साहब खेल रचाया॥
तूँ प्रभ दाता अधिक आपारी। इस कूकर को दे निस्तारी॥
चेतन पुरष अगम अनाद। तेरा खेल प्रभ अत बिसमाद॥

क्या गिनूँ तेरी वडवाई। कथ कथ थाके लेख अगाही॥
तेरी सिफ़त अधिक बखानी। जती तपी तत्तवेते ज्ञानी॥
तिन से महमा नहीं तेरी बन आई। अनमत कूकर क्या करे वडयाई॥
पूरन पुरख सरब का स्वामी। खेलें खेल तूँ अन्तरयामी॥
अपने आप में परिपूर समाई। जो जो पूजे सो गत पाई॥

**पूरन भाग तिस पुरख का, जिस शोभा प्रभ की गाई।**
**'मंगत' नित बलिहार जाऊँ, प्रभ तेरी अत वडयाई॥1289**

जैसी जिसने प्रीत कमाई। किरपा करके दीनी वडयाई॥
कोई गुरु कोई भयो आचारी। कोई पैग़म्बर कोई अवतारी॥
कोई सिद्ध नित मौन रहाई। कोई ज्ञानी तत्त भेद समझाई॥
कोई योग मारग को साधे। कोई भगती मन से आराधे॥
कोई मन में धरे विवेक। करें विचार एक अनेक॥
कोई जाये बीयाबान निवासी। करे तपस्या चरन उपासी॥
कोई चित से करे उपकार। सब में देखे रूप तुम्हार॥
कोई वेद ग्रन्थ विचारी। कीरत तेरी अन्तर धारी॥
कोई अन्तर नाम ध्याई। कोई बाहर साखी गाई॥
सबने जस तेरा प्रभ गाया। अपरम आपार परमेश्वर राया॥
सब जगत को तेरी ओट। राजे राने जपें नित भूप॥
बख़शनहार तू ही आपार। सरब जीयाँ का करें उद्धार॥
नित ही तेरी सरनी आया। कर किरपा पूरन प्रभ राया॥
महमाँ तेरी अपरम आपार। तेरी कीरत तों बलिहार॥
सब में रहे तूँ ही भरपूर। राखनहार साहब हजूर॥
सब ने कीरत तेरी गाई। सब ने करी तेरी वडयाई॥
अन्त ना पारावार तुम्हार। सत सरूप तूँ सरजनहार॥
अपनी किरपा करो किरपाल। साची भगती करूँ नित भाल॥
बाद मुबाद निकट नहीं आये। समता भाव की रसना खाये॥

**एक साहब को सिमरते, देवी देव अनन्त।**
**'मंगत' महमाँ गाइये, तिस आद पुरख भगवन्त॥1290**

सब ने कीरत प्रभ की गाई। मोह माया का ताप मिटाई॥
तिन का जीवन आदर्श विचार। मिले विश्वास साहब दातार॥
अनेक भाँत कर उस्तत गाई। वेद ग्रन्थ नित देवें गवाही॥
तिस साहब की सरन विचार। सरब जीयाँ जो सरजनहार॥
तजो पाखण्ड माया परमाद। साचे साहब की कीजो याद॥
अन्तर तेरे रह्या समाये। तेरी करनी नित लखाये॥
साहब विसार दूजे ध्याई। प्रभ की माया गवन फराई॥
जनम जनम नित आवें जायें। बिन प्रभ सेव छूट नहीं पायें॥
तेरा राखनहार स्वामी। घट घट व्यापक अन्तरयामी॥
तिस की महमा नहीं चित गाई। देवी देव अनेक मनाई॥
देवी देव सब का आधार। जो तेरा नित सरजनहार॥
मूढ़ मती तूँ मन की त्याग। सत ठाकर की सरनी लाग॥
कोटाँ कोट देवी और देव। सत ठाकर की करें नित सेव॥
सुकृत मारग धरम विचार। साचा साहब जप बारम्बार॥
बिन प्रभ सेव जायें निरासा। आवागवन नहीं मिटे तरासा॥
ताँ सों मन का भरम चुकाओ। सरजनहार परमेश्वर ध्याओ॥
जो जीवावे काची देही। अत परकाश माटी को देई॥
सो ही तेरा है रखवारी। अन्तरगत नित जपो मुरारी॥
सत् पुरषों की कथा विचार। पावें अवगत रूप करतार॥

**सब का सरजनहार जो, और सरब का ठौर।**
**'मंगत' आतम पूजिये, जो घट घट रमें हज़ूर॥1291**

सतसरूप में मिले विश्वासा। सतपुरुषों की सीख निवासा॥
अती भयंकर ताप से छूटे। साची सिखया की रसना जो लूटे॥
कहन सुनन से मन धीर समाया। सत ठाकर पर निश्चय पाया॥
सकल जगत का भेद पछाता। जनम मरन का जो सन्तापा॥

अती ग़ुबार माया जो धारी। साध सीख से भयो विचारी॥
गुप्त सरूप को परगट पाया। साध सीख मनुआँ तृपताया॥
जो तूँ मारग धरम का सूझें। सतपुरषों की कीरत बूझें॥
मन में धरें बिरह अधिकाई। तब मारग धरम की सार लखाई॥
माया चक्कर है अद्भुत भारी। चंचल मन की होवे ख़वारी॥
बिना विचार धीर ना पाई। पलक पलक अत ताप लखाई॥
राग द्वेष अधिक चित फासी। भोग विकार की अधिक तरासी॥
आसा तृष्ना अधिक ग़ुबारा। अनक मनोरथ रूप अंगारा॥
पारावार ना नज़री आवे। माया जाल संकट अधिकावे॥
सतपुरषों की सीख लखाई। सत सरूप का निरनय पाई॥
भरम ग़ुबार भयो चित नासी। साची सीख से शान्त निवासी॥
परम जतन हिरदे में पाया। मारग धरम का भेद लखाया॥
नित नित मनुआँ सार कमाई। भरम त्याग के धीरज पाई॥
साची भगती प्रभ की जानी। पल पल तिस की सेव पछानी॥
निर्मल प्रेम पायो विश्वासा। साची सीख से निर्भय निवासा॥

**बार बार चितारिये, सतपुरषों के लेख।**
**'मंगत' तिन की कीरती, देवे धरम का भेख॥1292**

जिस जन नहीं कछु कियो विचारा। पाप करम में नित वरतारा॥
ना सत करनी का भेद लखाया। ना जनम मरन का लेख लख पाया॥
ना सत धरम की सूझ विचारी। स्वारथ में नित पाये पसारी॥
ना सतपुरषों की सीख लखाई। मारग शान्त नहीं मिले आगाही॥
प्रभ चरनी नहीं आवे विश्वासा। पाप कुपथ में ले निवासा॥
पशू समान जनम विताई। सत ठाकर की नहीं पाई सरनाई॥
भरम में जन्मे भरम में मरे। भरम की फाँसी अधिक चित पड़े॥
आठ पहर रहे जीव प्यासा। पलक पलक पाये काल की त्रासा॥
सत बुद्धी नहीं अन्तर धारी। अपने आप की करी ख़वारी॥
मोह भरम में नित भरमाई। हीरा जनम अकारथ जाई॥

मन मानी नित अपनी धारी। अपने मनोरथ का लेख विचारी॥
अत लोभ मोह और बिकार समाया। दुष्ट करम पल पल कमाया॥
अत संकट में नित भरमाई। अपनी करनी देवे सज़ाई॥
इन्द्री भोग में अत गरासा। जीवन की धारी बहु आसा॥
लोक कुटम्ब के मोह फँसाया। साचा नाम नहीं हिरदे गाया॥
ओड़क जग से चले प्यासा। बारम्बार सहवे जम त्रासा॥
जग आवन का भेद नहीं जानी। मूढ़मती में रह्यो ग़लतानी॥
स्वारथ धार बहु पाप कमाई। पर निन्दया परहान लखाई॥
ओड़क काल ने फाँसी डाली। मूरख जीव चले उठ खाली॥

**पाप करम बहु बिध कियो, अत ही लोभ को धार।**
**'मंगत' सखा ना कोऊ भयो, अन्त चलन की बार॥1293**

मूरख अनमत नित भरमाई। बिना विचार नहीं सार को पाई॥
झूट माया के भरम भुलाया। सत ठाकर नहीं हिरदे ध्याया॥
सतपुरूषों की सार नहीं जानी। मूढ़मती में रह्यो ग़लतानी॥
सत धरम नहीं सोझी पाई। बहु रंग पाप की प्रीत कमाई॥
परहित पर उपकार नहीं जानी। स्वारथ से करे दूजे की हानी॥
भरम ग़ुबार अत बढ़ता जाई। तृष्ना अगन नित नित जलाई॥
जीवत में सब भये बेगाने। जरा अवस्था के जब आयो ठिकाने॥
सब कुटुम्बी देवें धृगकार। ना कोई सीख ना सुने विचार॥
अत ही त्रास इस जीव ने पाई। स्वारथ के सब गए अशनाई॥
ओड़क जग से चले निरासा। अत संकट में लयो बासा॥
मूढ़मती ने ये फल दिखलाया। रोवत आवे रोवत जाया॥
ताँ सों गुनिया करो विचार। मारग धरम लखो सुख सार॥
सतपुरषों की कहनी मान। सतपुरषों की करनी जान॥
मन में उद्दम धारो विशेख। सत रहनी का पावें लेख॥
इक परमेश्वर की ओट पछान। जो कारन कर्ता सकल जहान॥
सरजनहार तेरा सुख रासी। निर्मल चित से हो विश्वासी॥

सतपुरषों की सीख ये धार। मिथ्या जगत में खाटो सार॥
स्वारथ बुद्ध तजो अज्ञान। परमारथ तत्त खोज निर्वान॥
अपने मन का भरम मिटाओ। जग आवन का लाभ कमाओ॥

**मनमुखता को त्याग कर, गुरमुख मारग खोज।**
**'मंगत' मिथ्या जगत में, खाट जनम की मौज॥1294**

अगन सरूप ये जग का खेला। जल जल पड़े ये जीव दुखेला॥
वारापार ना भेद लखाई। माया भरम में खप खप जाई॥
बिना जतन नहीं मिले छुटकारी। राजे राने पावें ख़वारी॥
काल सरूप ये जग की रचना। छिन छिन नासे केवल ये सुपना॥
अपना साखी रूप विचार। मृग तृषना मिटे अन्धकार॥
सत ठाकर की प्रीत विचार। सतपुरषों की ये सिखया सार॥
जगत का खेल ये भरम फुलवाड़ी। सिमरो गोबिन्द उतरें भव पारी॥
ना कोई साक सुहेला नाती। अन्तकाल ना भयो कोई साथी॥
अत परिवार सम्पत धारी। महल कोट औसारे भारी॥
सब कुछ छाड चले निरासा। मूढ़मनाँ क्यों धरें भरवासा॥
अन्तरमुख हो कर विचार। खाली आया जावें खाली सार॥
रंचक साथ ना जाई मीत। जुगाजुगन्तर ये जग की रीत॥
दाने बीने बड़े सयाने। माया चक्कर में भये हैराने॥
जीवत में मरने को पाई। वाह वाह खेल ये जग रचाई॥
भोगे भोग नहीं तृप्ती पाये। सदा अधीर ये मनुआँ समाये॥
वस्त परापत हरखत पाई। भई वंजोग दुःख पाई अधिकाई॥
भाई मित्तर बहु संग बनाये। ओड़क चलया नाँगे पाये॥
माया मोह में जनम गँवाई। बाज़ी जूए में गयो ठगाई॥
ओड़क देही भूम समाये। मूरख जीया क्यों भरमाये॥

**सरब जतन संसार में, मन को करें अधीर।**
**'मंगत' प्रभ की भगत से, मिटे सकल तक़सीर॥1295**

अपने ताप का करो विचारा। जीवत में लयो काज सँवारा॥
मानुष चोला पायो सुख रासी। निर्भय धाम लखो सुखवासी॥
मूढ़मती में ना भरमाई। सतमती खोजो सुखदाई॥
सतपुरषों की सेव कमाओ। पल पल कीरत तिन की गाओ॥
सुनो विचार परम सुखरासी। पल पल चित में कर निध्यासी॥
निर्मल करम जो तिन की सीख। हिरदे राखो पाओ सुखरीत॥
बारम्बार करो विचार। सतपुरषों का जीवन सार॥
जित बिध पाई गुनियाँ छूट। मारग धरम जो लखा अनूप॥
इस बिध जीवन अपना धार। जतन करें उतरें भव पार॥
करनी तेरी तुझको ओट। पाप कुपथ्थ की त्यागो खोट॥
साची सीख हिरदे में धार। सुकृत मारग धरम विचार॥
आलस माहीं क्यों जनम गँवाई। छिन छिन छीजे ये देह दुःखदाई॥
परम जतन हिरदे में धार। नित आनन्द सिमर करतार॥
जिस मारग से जग में आया। उस मारग में रहो समाया॥
यहाँ तो इस्थिर रहना नाहीं। विच मुसाफ़त ना भरमाईं॥
साचा ठाकर प्रभ हिरदे चेत। मोह माया की मिटे वखेप॥
जीवन में खोजो सत सार। अन्त की बारी मिले छुटकार॥
मन में धारो सत विवेक। सरजनहार की राखो टेक॥
सिमर सिमर पावें सुख सार। सतपुरषों की सुन ये पुकार॥

**बिपत रूप संसार में, जीव परम दुःख पाये।**
**'मंगत' बिपता तब मिटे, जब सत की प्रीत कमाये॥ 1296**

सकल जगत का झूट पसारा। सत सरूप है सरजनहारा॥
झूट परीती होये दुःखदाई। अनमत जीव की प्यास नहीं जाई॥
सत परतीत परम सुख सार। मन के सकले दोख निवार॥
नित आनन्द परापत पाई। सत परतीत से निर्भय समाई॥
सतपुरषों के जो विचार। सत परतीत देवें सुख सार॥
मन में तिन की कीरत पेख। निर्मल चित से लख तू लेख॥

सत करनी सत रहनी पाये। साची सीख जो हिरदे लाये॥
संकट मिटे पावे परताप। साचे प्रभ का मिले सत जाप॥
अज अबनाशी पूरन देव। मन में धारो साची सेव॥
सकल धरम की सार पछान। हिरदे आवे इक भगवान॥
सतसरूप सो ही इक देखे। और जगत करे झूट परीखे॥
निर्मल जुगती नाम कमाये। साची सीख संतन की पाये॥
मन में धरे अधिक अनुराग। सत मारग में पावे जाग॥
कोट जनम की मलन विनासे। ज्ञान विज्ञान में करे निवासे॥
भरम ग़ुबार छीजे अत भारी। निर्मल चित से करे विचारी॥
भरम सरूप चक्कर संसार। बारम्बार करे विचार॥
सतपद खोज मिले सुखरासी। तब जीव पाये ये बन्ध ख़ुलासी॥
निर्मल जतन करे दिन रात। साची सीख हरे सन्ताप॥
इक परमेश्वर पर निश्चय पाई। मूढ़ जीव तब शान्त समाई॥

**भव सागर आपार है, बिन जतन ना पाइये छूट।**
**'मंगत' जतन कमाइये, जब सिखया मिले अनूप॥1297**

साची सीख जभी चित पाई। मारग मुकत का लेख लखाई॥
अभय पद निर्मल शबद निर्वाना। परस पाइये होवे कल्याना॥
मोह माया का ताप निवारी। प्रभ दाते की सरन विचारी॥
सतगुर पूरन मेल मिलाई। साची सिखया तिन से पाई॥
प्रभ चरनी आया विश्वासा। मोह भरम की काटी फाँसा॥
बैर बिकार गयो दुःख सार। प्रेम सरूप जप नाम मुरार॥
मन के औगन सकले धोई। पल पल साची प्रीत परोई॥
निर्मल चित पायो सतनाम। मूरख जीव लिया बिसराम॥
भरमन छोड़ सत ठौर लखाया। साचा ठाकर हिरदे ध्याया॥
जिसकी बनत सकल संसार। करूँ परनाम तिस बारम्बार॥
कारन करता तूँ ही स्वामी। सरब जीयाँ के घट बिसरामी॥
मोह माया का ताप निवार। सरन पड़े का करो उद्धार॥

किरपासिन्ध तूँ ही किरपालू। सरनागत का तूँ रखवालू॥
अपनी दात करो प्रभराया। साची सेव चित रहे समाया॥
पूरन पुरख तूँ ही जगदीश। सरब जीयाँ का तूँ ही ईश॥
राख लें जन सरनी आया। भगतवत्सल तूँ नाम धराया॥
अपनी महमा दियो सुख सार। तुध दरबार भरे भण्डार॥
रंचक दीजो प्रभ चरनी प्रीत। निर्मल चित से गाऊँ गीत॥
साची बिरह जब अन्तर आई। मारग मुकत का भेद लखाई॥

**निर्मल चित जब होया, जग से भया उदास।**
**'मंगत' अन्तर चित माहीं, प्रभ नाम की लागी प्यास॥1298**

निर्मल प्रीत पाई सत सेव। पूरन करमी मिले गुरुदेव॥
साचे गुर ने भेद समझाया। सत मारग अन्तर दिखलाया॥
प्रभ सिमरन की सार लखाई। मूरख जीव तब शान्त पाई॥
अधिक विश्वास पाया प्रभ चरनी। साध की सीख भयो निर्मल करमी॥
मन अन्तर इक नाम कमाई। सतगुर सीख में प्रीत लगाई॥
जग जीवन देखा दिन चार। चित में उपजा पर-उपकार॥
पर-उपकार साबन ले धोई। अत मलीन बुद्ध निर्मल होई॥
स्वारथ सुख मिटे अन्धकारा। परमारथ पद निर्मल धारा॥
तुच्छ जीवन पर भयो निरासा। प्रभ चरनी पाया विश्वासा॥
साचा सरजनहार पछानी। साची सेव हिरदे में जानी॥
मन में साची करे कमाई। साचा नाम सिमरे सुखदाई॥
सरब जीयाँ संग हेत कमाई। पर की सेव हिरदे में पाई॥
परदु:ख हरना कार पछानी। निमख निमख शोभा प्रभ गानी॥
कारन कर्ता तूँ परमेश्वर। सरब जीयाँ का तूँ रखीश्वर॥
बारम्बार करूँ परनाम। प्रभ दाते दीजो बिसराम॥
माया भरम संकट अत जाई। साची प्रीत चरन चित पाई॥
इक तूँ ही तूँ मन समाये। दूजा विसरे भरम अधिकाये॥
तेरे नाम की रहे प्यास। पूरन पुरख तूँ ही अबनास॥

साची कीरत बाँछू देव। पद पंकज की निर्मल सेव॥

**प्रेम भगत हिरदे आई, दूर भये सन्ताप।**
**'मंगत' निर्मल प्रीत से, नाम साहब का जाप॥1299**

निर्मल चित इक नाम समाई। साध की सीख मिली वडयाई॥
परम पुरष हिरदे में ध्याया। जनम जनम का ताप मिटाया॥
कारन कर्ता सो ही स्वामी। तिस के चरन लयो बिसरामी॥
पल पल सिमरूँ नाम सुखदाई। साची कीरत हिरदे में पाई॥
मान मध गयो भ्रम मूल। जीव के नासे सँशे शूल॥
परम पुरख आदी भगवन्त। तिस की टेक पाई परसन्त॥
सकली दात साहब की जानी। करनेहार को सत कर मानी॥
अन्तर बाहर नाम कमाई। सत कर पूजे साहब वडयाई॥
मन की विरती नेहचल होई। इस बिध जो चित नाम परोई॥
इच्छया करम दूषना नासी। निष्काम करम बुद्ध परगासी॥
भला विचार पाई भलाई। सब जीयाँ संग साँझ बनाई॥
एको सरजनहार दिखाया। सरब जीयाँ घट रहे समाया॥
साची सेवा सब की जानी। तन मन धन नित ही वरतानी॥
मान त्याग ग़रीबी पाई। प्रभ दाते की पाई वडयाई॥
अन्तर बाहर कीना नित जाप। जल थल देख साहब परताप॥
औगन नास बुद्ध निर्मल होई। निष्काम भाओ चित माहीं परोई॥
सब कुछ देखे साहब परताप। अपना आप मिटावे आप॥
एह बिध निश्चय जिस जन पाई। साची भगती चित आन समाई॥
निर्मल भगती कीरत सत जानी। करनेहार की दात पछानी॥

**साची बिरह प्रभ चरन की, मन तन आई समाये।**
**'मंगत' संतन सीख से, जीव अभय पद पाये॥1300**

अधिक बिरह चित अन्तर पाई। प्रभ दाते की भये सरनाई॥
राखनहार ग़रीब निवाज़। सकल जगत तेरा प्रभ साज़॥

अत वडयाई तेरी प्रभ देवा। अनमत मूढ़ को दीजो सेवा॥
मान मध हरयो ग़ुबारा। साची सेव दीजो सुखकारा॥
तूँ सचियार सरब का मानी। जल थल तूँ साहब परवानी॥
सरब जीयाँ में तूँ समाई। सब को देवें तूँ वडयाई॥
बख़शनहार तूँ ही दातार। तेरे चरनी करूँ निमस्कार॥
तूँ प्रभ दाता मेरा सुखरासी। अनमत जीव की काटो फाँसी॥
भरम भय का मूल चुकाओ। सत वडयाई कीरत चित पाओ॥
नित नित चरनी करूँ परनाम। तूँ परमेश्वर सरब का धाम॥
इस मन की सब भरमत जाये। अन्तरगत तेरी शोभा गाये॥
पूरन पुरख तूँ ही दातार। अनमत माँगे चरन आधार॥
मूरख जीव नहीं सार पछानी। झूट भरम में नित गरबानी॥
गरब ग़रूर हरयो सन्ताप। दीन ग़रीबी पाऊँ परताप॥
तूँ प्रभ दाता अपरम आपारी। पतत जीवों पर किरपा धारी॥
तेरी महमा का तूँ ही साखी। अनमत जीया सार ना भाखी॥
पूरन पुरख होवो दयाल। सरनागत को करो निहाल॥
नित नित बन्दूँ तेरे चरना। तूँ ठाकर हैं कारन करना॥
तेरी दात माँगूँ नित नीत। तेरे नाम का गाऊँ गीत॥

**प्रेम साहब का पाये के, बेनती करे आपार।**
**'मंगत' मन परसन्न भये, प्रभ दाते सुनी पुकार॥1301**

साचा प्रेम साहब का पाई। साची सेवा हिरदे ध्याई॥
पाप कूप का बन्धन नासा। अन्तर चित भयो परगासा॥
सत सील सन्तोख समाया। साची शरधा नाम चिताया॥
सकल जलन मन की भई नास। अन्तरगत प्रगटयो अबनास॥
मनुआँ नित ही चरन समाई। प्रभ दाते की करे वडयाई॥
दूजा भाओ मिथ्या कर जानी। साची शोभा करी पछानी॥
सत परमेश्वर अन्तर जाता। सतगुर दया भये रँगराता॥
अन्तर हो अन्तर सुख पाई। प्रभ दाते की साखी गाई॥

सरजनहार तूँ अपरम आपार। तेरे चरनी जाऊँ बलिहार॥
नित आनन्द मुकन्द सरूप। सरब व्यापक पुरख अनूप॥
तूँ दाते करी दातार। भव सिन्धू से कीना पार॥
नित ही नित तेरी रहे बख़शीश। चरन ध्याऊँ नित जगदीश॥
इक रंग हो के सेव कमाऊँ। सब में तेरी प्रीत लखाऊँ॥
तूँ दाता अपरम अपारी। डूबे जन को कियो निस्तारी॥
माया फाँस अधिक दुःखदाई। कोट जनम ये जीव भरमाई॥
साध की सीख पाई सुखसार। प्रभ दाते का पायो दरबार॥
अखण्ड सरूप सरब परकाशी। घर में साहब पाया अबनाशी॥
अमरत नाम अन्तर में जानी। इच्छया भरम गई बिख खानी॥
पूरन भाग सत मारग सूझा। सत परमेश्वर सत कर पूजा॥

**दीनबन्धु दातार प्रभ, पल पल होत सहाये।**
**'मंगत' नित सरनागती, सत कीरत चित गाये॥1302**

सत परमेश्वर परगट पाई। अन्तरगत शोभा प्रभ ध्याई॥
पूरन पुरख भये दयाल। बन्धी छूट मिली ततकाल॥
परमानन्द अखण्ड सरूप। घर में पाई वस्त अनूप॥
सूखी बेला भई हरयाई। साध की सीख परमगत पाई॥
अन्धकार विनास भयो परगासा। सत ठाकर के चरन निवासा॥
पूरन भाग पाये गुनवन्त। साची भगती पाई भगवन्त॥
अन्तरगत नित नाम कमाई। प्रभ की आज्ञा मन मनाई॥
सब कुछ हुआ तिसकी दात। गरब त्याग निर्भय समात॥
पल पल अन्तर प्रीत कमाई। परगट साहब घर सार लखाई॥
देह के अन्तर भया परगासा। सरजनहार करे बिलासा॥
अनहद नाद परगट घर पाई। साची भगत प्रभ चरन समाई॥
सकल मनोरथ पूरन होये। नाम सिमर के दुबधा खोये॥
चेतन परगास जोत निर्वानी। परगट पाई सुख सार निधानी॥
भय त्याग निर्भय समाई। सत शबद घर परगट ध्याई॥

पूरन पुरख घर मेल मिलाया। भरमन त्याग निर्भय समाया॥
छिन छिन कीरत शबद की गाई। रुच रुच सुरती ध्यान लगाई॥
शबद गुंजार करे अति भारी। अत परकाश जोत निरधारी॥
बुद्ध निर्मल सत रूप समाई। दुर्मत जाल माया बिनसाई॥
जनम जनम की भरमन नासी। निज घर वास पाया सुखरासी॥

**साची भगती पाये के, अन्तर भयो परगास।**
**'मंगत' नित आनन्द में, सुरती करे बिलास॥1303**

सत शबद हिरदे परगासा। सकल जगत की मिटी तरासा॥
सुपन समान भयो सब खेला। अन्तरगत पायो प्रभ मेला॥
शुद्ध सरूप सदा निर्वान। निश्चल करके कियो ध्यान॥
अत परकाश जोत परकाशी। सतगुर सीख मिटी चौरासी॥
देह की ममता लीन समाई। सत शबद समता घर पाई॥
अज अबनाशी पुरख आनादी। अन्तरगत पायो बिसमादी॥
अत लीला साहब ने धारी। अपना रूप कियो बिस्तारी॥
बिन प्रभ दूजा नहीं दृष्टी आया। कारन कर्ता आप समाया॥
अपना आप आपे भरपूर। जल थल मइय्यल आप हज़ूर॥
अन्तरगत सत सोझी पाई। पूरन पुरख की मिली वडयाई॥
नौ द्वार देही गढ़ साजा। अन्तर दीनदयाल बराजा॥
सत भगती जब हिरदे आई। परम परकाश मिले सुखदाई॥
प्रभ का सिमरन ताप निवारी। साची भगत की सार लखारी॥
अन्तर बाहर नाम ध्याई। मन तन त्यागे प्रभ सरनाई॥
आप गँवाये के साहब पछाना। लखया भेद अखण्ड निर्वाना॥
मन की मनसा शून समाई। शबद ध्यान जब रंग रँगाई॥
साहब के रत्ते सो गुनी सूरे। जनम जनम के हरे वसूरे॥
काल त्याग परम पद पाया। नाद सरूप परमेश्वर ध्याया॥
परीपूरन सरब समराथा। परगट ध्याया नाथन का नाथा॥

**माया दुस्तर जाल से, जीव पाई बिसराम।**
**'मंगत' मारग धरम ये, सतपुरषों का पैग़ाम॥1304**

अबनाशी शबद जब अन्तर ध्याई। द्वैत भरम की त्रास मिटाई॥
देह ममता विकार विनासी। सत तत्त आतम पायो अबनासी॥
नित नित सुरती धाम समाई। इक अबनासी की प्रीत कमाई॥
जग आवन पाई सुखसार। हरजन जीत चले संसार॥
ये ही करनी सार पछान। जो जन घाले जाऊँ क़ुरबान॥
भव का पन्ध पूरन तिस पाया। साचा धाम शबद लखाया॥
लख लख शबद पाया आनन्दा। काल जाल सब काटयो फन्दा॥
पूर मुशक़्क़त तिसकी होई। जाँ से आया ताँ लीन समोई॥
अगम देस में लीन समाई। सत ठाकर की शोभा पाई॥
दुर्मत भेद भरम सब नासा। अपना आप भयो परगासा॥
नित नित मंगल पायो पूरा। घर में बाजे अनहद तूरा॥
पूरन करनी फल दिखलाया। सरब का ठाकर परगट पाया।।
रुच रुच चरनी प्रीत कमाई। अपनी महमाँ आप लखाई॥
मारग अगम का भेद पछाता। सत सरूप में भयो रँगराता॥
करनी जग में ये ही सार। साचा वक्खर खाटया आपार॥
ना छीन सके ना होय विनास। जुग जुग पूरन पूर बिलास॥
गुरमुख विरले ये सार कमाई। दुबधा त्याग तृपत घर पाई॥
नित नित मनुआँ रहे लवलीन। सत ठाकर की शोभा चीन॥
पूरन पुरख पाया जगदीशा। करनी सार पाई सुखरीशा॥

**सतपुरष जग में आये, सत कमाई रास।**
**'मंगत' तिन की कीरती में, नित नित करूँ निवास॥ 1305**

हरजन साची करनी पाई। सत सरूप में लीन समाई॥
भरम की भीत सकल विनासी। साचा शबद पायो अबनासी॥
साची करनी रहनी सत पाई। सत शबद का मेल मिलाई॥
पूरन भाग सो ही वड धरमी। जो सत परमेश्वर की आयो सरनी॥

अन्ध ग़ुबार सकल मन नासी। सत परतीत जो नाम उपासी॥
मुकत सरूप साहब की पूजा। दुर्मत भेद मिटे सब दूजा॥
एको नाम निरन्तर ध्याई। सत सरूप की लख वडयाई॥
मोह माया की निन्द्रा त्याग। साचे करम में उठ के लाग॥
बन्ध ख़ुलासी पावें मीत। निर्मल चित से सुन ये सीख॥
सत सरूप आतम इक जान। और पसारा झूट पहचान॥
आतम खोज निर्मल करनी। सतगुर सीख सुनो वडधरमी॥
मन का शंका तब ही जाये। सत सरूप जब परगट ध्याये॥
आतम जोत सदा परगासी। घट घट अन्तर करे बिलासी॥
मनमुख मूढ़ा भेद नहीं जानी। कूड़ भरोसे रहे ग़लतानी॥
सत परतीत पाई सत सीख। आतम खोज पाई सुखरीत॥
मन की ममता होई विनास। सत तत्त आतम जोत परगास॥
पूरन पुरख मिल पूरा होई। बौहड़ नहीं करम चक्कर फिरोई॥
मारग ये ही कल्यान का मीत। इक परमेश्वर का गायो गीत॥
सार मुशक़्क़त ये ही परवान। घट में पाइये शबद ध्यान॥

**सकल जतन पूरा भयो, पूरन प्रभ को पाये।**
**'मंगत' मिटी सब वासना, सत शबद में लीन समाये॥ 1306**

मारग मुकत ये ही सत मीत। नाद सरूप पाइये सुख रीत॥
सकल जगत का आप स्वामी। जो जन पूजे ले बिसरामी॥
माया दुर्मत मैल विनासे। साचा नाम करे उपासे॥
नाम साहब का जीवन सार। जो सिमरे तिस तों बलिहार॥
अपना करम पूरन तिस पाया। जिस मन में साचा नाम ध्याया॥
अपनी करनी दे छुटकार। सिमरे नाम पाये जयकार॥
एह बिध साधन मन में राख। नाम नारायन अन्तर चाख॥
मारग ये ही अत सुखरीत। हिरदे ध्याओ प्रभ चरन पुनीत॥
ज्ञान ये ही सब भरम विनासे। एक साहब की करो अरदासे॥
धरम ये ही अनुकूल पछान। निश्चय आवे एक भगवान॥

मोह माया का ताप विनासी। सतगुर सीख जो नाम उपासी॥
नाम साहब का अपरम अपारी। भरमत जीव पाये निस्तारी॥
छिन छिन साचा नाम कमाओ। प्रभ की महमा पल पल गाओ॥
करनेहार सो ही किरपाल। तिस की करनी करे निहाल॥
अपनी ग़फ़लत मान त्याग। आज्ञा प्रभ की में उठ जाग॥
सब कुछ हुआ तिस का जान। मारग मुकत करो पहचान॥
सुख दुःख दोनों सम कर पेख। आज्ञा साहब की हिरदे लेख॥
बन्धन नास पावें परगासा। घर में परसें शबद अबनासा॥
शबद भेद जब अन्तर जानी। दुर्मत छाया लीन समानी॥

**साची करनी जगत में, सतपुरुषाँ करी पहचान।**
**'मंगत' बन्धी छूट कर, पद पाया निर्वान॥ 1307**

निर्मल करनी मन में धार। मानुष जनम नहीं बारम्बार॥
अपना मारग तृपत पछान। काल करम होवे दुःख हान॥
अपना निर्मल समाँ विचार। तुच्छ जीवन में खाटो सार॥
अपनी भरमन करो त्याग। सत सरूप सिमर वडभाग॥
मानुष देह का ये ही लाहे। निर्देह सरूप मिले प्रभ बेपरवाहे॥
परम शकत की करो नित सेव। जिस को पूजें देवी और देव॥
अत परकाश आनन्द सरूप। करो परापत शबद अनूप॥
सो बलवन्ता अत बल धारी। परम शकत जिस हिये विचारी॥
सो त्यागी त्याग पछानी। शुद्ध सरूप पाये निर्वानी॥
सो विवेकी परम परबीना। सत शबद जिस हिरदे चीना॥
सो सूरा अत ही बलकारी। काम क्रोध जिस ताप निवारी॥
सो ही ज्ञानी ब्रह्म तत्तवेता। अन्तर शबद में जो रमीता॥
गत मित जग की सो ही जाने। अन्तर शबद लखे निरवाने॥
तृष्ना अगन को सो ही निवारी। सत शबद जिस चढ़ी ख़ुमारी॥
द्वन्द विकार से सो पाये जीत। शबद सरूप जो जपे पुनीत॥
मन की भरमन तब ही नासे। जब सत शबद में लीना बासे॥

पूरन करम तिस जन ने पाया। पूरन पुरख जिस प्रभ ध्याया॥
सो वडदाता परउपकारी। शबद की महमा जिस अन्तर धारी॥
सकल मनोरथ पूरन पाये। साचा शबद जो परगट ध्याये॥

**जग में करनी सार है, पाइये शबद परतीत।**
**'मंगत' रसना खाये के, भव जल लीना जीत॥1308**

भरम भुलाया मूरख जीया। शबद विसार अत संकट लीया॥
शबद आनन्द अखण्ड सरूप। शबद ध्याये मिटे जम कूप॥
शबद है आद जुगादी देव। मूढ़ मनाँ कर तिस की सेव॥
शबद ही दुर्मत जाल मिटाये। सतगुर मेल परापत पाये॥
शबद ही जीवन आप पछान। सरब जगत का शबद निधान॥
शबद ही पसरे कुल संसार। चार खानी में शबद भरतार॥
शबद सरूप जो अन्तर जानी। सो ही पुरख है महा ज्ञानी॥
सतपुरष सो ही कहलाये। शबद का भेद जो अर्थाये॥
शबद ही रिद्धी सिद्धी दातार। सरब शकत शबद भण्डार॥
शबद ध्यान है योग का मूल। साचा शबद पलक नहीं भूल॥
शबद कमाइये साची कार। पाइये जीत सकल संसार॥
वेद ग्रन्थ जो महमाँ विचारी। एक शबद का लेख आपारी॥
जिस घट अन्दर शबद परगासा। सो ही सिद्ध निर्भय रस खाता॥
भय भरम सब काल की किरया। शबद सरूप निर्भय पसरया॥
ऐसे शबद की कथा विचार। जिसकी महमा का नहीं शुमार॥
शबद परगासे चौधाँ भवन। रवी चन्दर करें नित गवन॥
सकल जगत का जीवन जोई। साचा शबद पछानो सोई॥
अगम अगोचर अत बिसमाद। अनहद शबद पुरख आनाद॥
अपने घट में करो पछान। सत सरूप शबद निर्वान॥

**अपरम महमा शबद की, मुख से नहीं बरनी जाये।**
**'मंगत' शबद कमाये जो ही, सो सतपुरष कहलाये॥1309**

सतपुरषों का जीवन सार। साचा शबद नित करें विचार॥

मोह माया का पायें ना लेप। शबद ध्यावें रूप अद्वैत॥
तीन काल चित आनन्द पाये। अन्तर शबद अबनाशी ध्याये॥
मुकत सरूप अभयपद बासी। शबद ध्यान में नित निवासी॥
वचित्तर लीला जग में धारी। जिस घट अन्तर चढ़ी ख़ुमारी॥
शबद ध्यान सुन्न समाध। शबद का सिमरन हरे अपराध॥
शबद ही मूल सरब आधार। सतपुरषों का ये सत विचार॥
शबद ही खोज परम कल्याना। शबद सरूप केवल निर्वाना॥
शबद योग जिस अन्तर पाया। जीवनमुक्त वोह सन्त कहलाया॥
वेद ग्रन्थों का ये ही विचार। शबद की महमाँ अपरम आपार॥
शबद ध्यान में बैठे तपधारी। शबद ध्यान में फिरें इच्छयाचारी॥
शबद ध्यान में गुनी कीरत गायें। सरब सरूप एको लख पायें॥
पीर पैग़म्बर वली दरवेश। शबद ध्यान में रहें हमेश॥
सिद्ध रिखीशर गुरु अवतार। एको शबद का करें विचार॥
सब की रास सब का आधार। एको शबद ध्यावें बारम्बार॥
चतरमुख नित ही कीरत गाये। महमाँ शबद की लख लख पाये॥
घोर तपस्या नित शिव धारी। साचे शबद की प्रीत विचारी॥
शबद ध्यान में पाई परसन्ता। आनन्द सरूप में विष्नू रमन्ता॥
सिद्ध बुद्ध नाथ सब शबद आचारी। शबद सरूप आद निरंकारी॥

**गुनी मुनी और देवते, गायें सिद्ध अवतार।**
**'मंगत' महमा शबद की, सब ही करें विचार॥ 1310**

सब सिद्धन का साधन सार। एक शबद का करें विचार॥
शबद अबनासी सदा निर्लेप। जनम मरन नहीं धरे विखेप॥
तीन काल सम रूप समाई। हस्ती कीटी में सम वरताई॥
धरन आकास पावक और नीरा। पवन परकाश करे गम्भीरा॥
सब में शकत इक शबद समाई। चेतन पुरष आपार ज्ञाई॥
सो ही परमेश्वर सो ही सत देवा। भरम त्याग कर दुर्मत का भेवा॥
सतपुरषों का ये ही सार। सतपुरषों का ये ही विचार॥

भाओ भगत सत मारग खोज। साचा नाम निरन्तर बूझ॥
चौसठ घड़ी करो विचार। साचा शबद पुरख निर्धार॥
साची जुगती नाम कमाओ। अन्तर शबद घर परगट पाओ॥
सरब स्वामी का पायें परगासा। दुर्मत जाल भरम होई नासा॥
नित ही तिसके चरन समायें। नित ही तिसकी कीरत गायें॥
अपना आप मिटावें नीत। साचे शबद की पायें प्रीत॥
आपामत दुर्मत जब नासी। मन लीन भयो शबद अबनासी॥
केवल रूप रह्यो आप आगाई। दूजा भेद भरम सब जाई॥
दुर्मत त्याग निज रूप पछाता। अपने आप में भये रँगराता॥
अपना आप केवल दरसाया। मन की दुर्मत नासी छाया॥
एको एक सर्वज्ञ दिखाई। अन्तर में नित लीन समाई॥
परम धाम में पायो बिसरामा। सतपुरषों का ये ही धामा॥

**शबद धाम प्रापती, दुबधा दुर्मत छीन।**
**'मंगत' वोह सत देश है, कोट मद्धे कोई चीन॥1311**

शबद की पूजा शबद का योग। सतपुरषों का ये ही भोग॥
मनमुखता तूँ मन की त्याग। साचे शबद में उठ के लाग॥
सब का जीवन एको जान। बाद मुबाद त्याग बिख खान॥
अपने मन का संसय काट। शबद पुरख निरन्तर राट॥
सब की सीख सुनो परवान। एको शबद का करो ध्यान॥
नित परकाशे काची भीत। आलख शबद सरब अतीत॥
अतुल शकत नहीं पारावार। साचे शबद का करो विचार॥
कोटाँ पिण्ड ब्रह्मण्ड पसारे। अचरज लीला साहब विस्तारे॥
चार खानी में सम परकाशी। सत परकाश शबद अबनाशी॥
मेर सुमेर सागर को थापे। अनंत शकत अपनी को जापे॥
अनंक जतन कर थाके ज्ञानी। तेरी शोभा अतुल परमानी॥
तूँ ठाकर सरब हज़ूर। जल थल अन्दर तूँ भरपूर॥
शाह गदाई तेरा भेख। ऊँच नीच में तेरा लेख॥
हस्ती तृन में तूँ समाया। सम परकाश पुरख निरमाया॥

सरब जगत तेरा है भेख। एक से तूँ किये अनेक॥
अपनी लीला अचरज धारी। सरब जगत का आप खिलाड़ी॥
बहु रंग धार पसरें इक रंग। साहब साचे तेरा अत परसंग॥
ज्यों ज्यों जिस को सोझी होई। सिमर सिमर के तेरे रूप समोई॥
नित बलिहारी तिन के चरना। जिन साजन पाई तेरी सरना॥

**अत वडयाई शबद की, सिद्ध मुनी करें पुकार।**
**'मंगत' अन्तर रम रिह्या, सरब जगत भरतार॥1312**

सत ठाकर की सेव विसारी। मूढ़मती अन्तर में धारी॥
भरम धार संसे बहु राखी। सत विसार झूट को भाखी॥
देवी देव अनेक मनाये। बहु रंग की पूजा मन से कमाये॥
धार मनोरथ नित भरमाई। स्वारथ बुद्ध संकट बहु पाई॥
निमख निमख मन चाल बहुधारी। अनेक साधना चित विचारी॥
कोई यखनी पूजे बीर बैताल। कोई भूत प्रेत मसाने घाल॥
कोई जादू जन्तर की पूजा धारी। पेट की करें नित कारगुज़ारी॥
कोई पाखान ले देवत थापे। अपनी थापी को आपे जापे॥
कोई मन्तर बहु सुर से गाई। कोई बहु रंग ताल बजाई॥
कोई नीर रवि को देवे। कोई देवी की भेंट को सेवे॥
कोई भैरो कोई मंगल पूजे। कोई ग्रहों की दिशा को सूझे॥
कोई पित्री पूजा में मगन रहाई। कोई तीरथ अठसठ नीर नहाई॥
कोई भयो बीयाबान निवासी। मढ़ी मसान की करे उपासी॥
कोई भेख सन्यास को धारी। कोई नाँगा कोई वस्तर श्रृंगारी॥
कोई मुन्द्रां धार जोगी कहलावे। कोई भेख उदास में जाये समावे॥
कोई धूनी तापें जल शैन निहारें। कोई भसम रुमानी अंग विचारें॥
कोई जटा धार भया बैरागी। कोई दान पुन्न की धरे अनुरागी॥
सब ही जन जतन बहु धारें। सत शबद नहीं सार विचारें॥
दुर्मत रोग नहीं मन का जाई। भरम का बाँधा नित भरमाई॥

**सरब भेख को त्याग के, साचा शबद विचार।**
**'मंगत' प्रभ निर्भेख है, सरब में पूरन सार॥1313**

पाखण्ड धार सत नहीं सूझे। देह के भेख में नित ही लूझे॥
देह के भेख से नहीं बने आचारी। जो कर अन्तर नहीं सार विचारी॥
देह के भेख से नहीं होये बैरागी। जो कर अन्तर नहीं बिरह प्रभ जागी॥
देह के भेख में नहीं सन्यास। जो अन्तर नहीं शबद परकाश॥
देह के भेख नहीं योग को पाई। जो अन्तर नहीं शबद ज्ञाई॥
ज्ञानी गुरु होये अवतार। जोगी जंगम तपी तप धार॥
साधक सिद्ध सेवड़ा होये। उदास बैरागी भेख बसोये॥
नाना मत पंथ विचारी। बहु बिध ज्ञान विवेक को धारी॥
सब का साधन मूल है एक। साचे शबद का कथो विवेक॥
शबद भेद जो नहीं चित पाया। झूटे भेख में नित भरमाया॥
दीन दुनी दोनों गँवाई। साचा शबद जो नहीं अरथाई॥
कभूँ ना पाये मूल ठिकाना। भेख धार जुग जुग भरमाना॥
देह के भेख से सरे नहीं काजा। जो अन्तर नहीं शबद अनुरागा॥
मन की दुर्मत कभूँ ना जाये। बहु रंग धार भेख वटाये॥
अन्तर जुगत नहीं जानी सार। सत शबद पुरख निरंकार॥
झूटा संजम तप कमावे। इन्द्री भोग में नित भरमावे॥
देह अभिमान नहीं जाये विकार। जो रमावें नित ही छार॥
प्रेम भगत बिन सब दुःख पायें। धार भेख अन्तर भरमायें॥
साचा भेख दीनता जान। कोटाँ मद्धे कोई करे पछान॥

**मन की ममता ना मिटी, बहु रंग भेख बनाये।**
**'मंगत' दुर्मत जाल से, पलक ना छूटन पाये॥1314**

मन की ममता अत अन्धकार। भरमें जीव ये बारम्बार॥
सत सरूप दियो विसराई। ममता धार अधिक चतराई॥
काल फाँस नित भय देवे। मूढ़ मन नित भरम को सेवे॥
अत कठन ये दुर्मत जाल। भेख करे ना होये निहाल॥

जेता भेख एता दुःख पाये। गरब धार के आवे जाये॥
मन की मनसा नित भरमाई। भेख धार नहीं धीरज पाई॥
जित बिध देह का भेख बनाये। ममता जाल पसरे अधिकाये॥
भेख किये ना होये परगासा। इच्छया करम नहीं टूटे फाँसा॥
त्रैगुन माया जाल ना नासी। जो देही बहु कष्ट उपासी॥
आसा भरम नहीं जाये अन्धकार। पल पल कीजे मन विकार॥
मन में औगन बहु बिध धारी। देह का भेख कैसे निस्तारी॥
राग द्वेष अगन घर लागी। झूट तपस्या करे बैरागी॥
समता भाओ जो चित नहीं पाई। झूट भेख में जन्म गंवाई॥
करम का कर्ता भाओ नहीं नासा। झूट भेख अबधूत निवासा॥
मैं कर्ता माया को धारी। पद सन्यास नहीं मिले विचारी॥
करम अभिमान फेर फिरावे। तत्त निर्वान की गम नहीं पावे॥
तत्तज्ञान जो अन्तर नाहीं। मुंद्रा धार योग ना पाईं॥
करमफल इच्छया नहीं भरम त्यागा। निर्मल योग नहीं मिले अनुरागा॥
सार जुगती ये ही परवान। भेख धार ना मिले भगवान॥

**मन की साधन ना करी, देह के भेख बनाये।**
**'मंगत' माया चक्कर से, नहीं चित शान्त समाये॥ 1315**

कोई योगी कोई होये अबधूत। कोई गृहस्थी कोई विरक्त सरूप॥
कोई डण्डी होये कोई बान प्रस्ती। सकल भेख हैं भरम की दृष्टी॥
आद पुरख निरभेख समाई। निर्मल जुगत से मेल मिलाई॥
साची बिरह प्रभ चरनी पाये। सत कर माने प्रभ बेपरवाहे॥
सब कुछ आज्ञा प्रभ की देखे। दृढ़ निश्चय सत नाम परीखे॥
अन्तर बाहर नाम कमावे। मन को थामे अन्तर ले आवे॥
सकल करम मन से करे त्याग। प्रभ की आज्ञा पाये अनुराग॥
मन को राखे नाम परोई। रैन दिवस ये सार लखोई॥
इन्द्री भोग की दूषना टारी। मन पवन की जुगत विचारी॥
भोग त्याग पवन को पीवे। साचे नाम को जप जप जीवे॥

अन्तरगत होवे परगास। आलख शबद पाये निरवास॥
ताँ में मनुआँ भयो इकागर। पल पल करे सतनाम उजागर॥
भरम पलीती मन की जाये। सत शबद की सेव कमाये॥
सहज भाये जीवन विताई। मन में साचा भेख कमाई॥
विरत त्याग मन शबद आहारी। निर्वान सरूप की चढ़ी ख़ुमारी॥
शुद्ध सरूप जोत परगासी। अनहद नाद खेले अबनासी॥
तीन भवन में लीन समाई। सुन्न समाध परम रस खाई॥
कर्ता भाव मिटे अभिमाना। निहकरम सरूप पायो निर्वाना॥
इक रंग शबद में सुरती धारी। मुकत भेख तब लेख विचारी॥

**एको शबद आराधिये, दृढ़ निश्चय को धार।**
**'मंगत' साचा भेख ये, करे जीव निस्तार॥ 1316**

शबद की कीरत जिसने गाई। साचा भेख मुकत का पाई॥
अन्तर बुद्ध होवे परगास। अनुभव ज्ञान में करे निवास॥
साखी पुरष अन्तरगत पाई। तब इस मन की त्रास मिटाई॥
सत परकाश शबद निर्वानी। जो जन पूजे होये परवानी॥
साची प्रीत जिस जन ने पाई। साची जुगत से नाम कमाई॥
परहित जीवन अन्तर ध्याया। पर की सेव में नित समाया॥
तृन समान ना आप पछानी। निर्मान भाओ अन्तर चित आनी॥
सब कुछ देखे प्रभ परताप। निर्मल चित से कीजे जाप॥
कुल जाती और वरन का माना। सकल भेख का तजे गुमाना॥
धूड़ समान जीवन को पाई। आज्ञा प्रभ की पल पल मनाई॥
जो होनी सो होवत जाये। मन में निश्चय नाम का पाये॥
दिवस रैन ये करे कमाई। मर जीवत की दिसा लखाई॥
भूख प्यास निन्द्रा सब गई। अधिक प्रीत प्रभ चरन की भई॥
लोक लज्या सब ताप निवारी। एक साहब की सेव विचारी॥
सकल करम से उपरस होई। साचे नाम की लड़ी परोई॥
ममता मोह मिटा अन्धकार। घर में पायो शबद निरंकार॥

अबगत शबद अन्तर परगासी। निर्वान भेख में लयो निवासी॥
सो ही धाम सरब की सार। गुरमुख साजन पाये विचार॥
नित निरन्तर नाम कमाई। साची पूजा तब प्रभ की पाई॥

**करम वासना त्याग के, सिमरे नाम विवेक।**
**'मंगत' मन निर्मल भयो, पायो शबद का भेख॥1317**

साचा शबद सदा निर्भेख। निरद्वन्द पुरख नित अलेख॥
जिस जन साचा शबद कमाया। भेख त्याग निरभेख समाया॥
आतम जोत तत्त निर्वान। तिस का पायो सहज ध्यान॥
साचे शबद की सार नित खाई। दुर्मत त्याग निरभेख समाई॥
दुर्मत भेख अधिक आपार। बहु रंग देखें जो संसार॥
सच साहब का भेख ना कोई। शुद्ध सरूप निर्वान समोई॥
अत बिसमाद साहब का रूप। निराकार निरद्वन्द अनूप॥
सरब में पसरे एके रंग। पुरख निरालम का अचरज परसंग॥
भाओ भगत जो सेव कमाई। मान मद्ध का ताप मिटाई॥
सतगुर पूरे की आज्ञा मानी। साचा सिमरन प्रभ का जानी॥
दृढ़ पुरषारथ मन में धारी। साचा नाम जपे निरधारी॥
दुर्मत जाल होवे विनासा। सकल भेख से होए ख़ुलासा॥
देह अन्तर निरदेह समाई। सत शबद अन्तर चित ध्याई॥
शबद अगोचर पुरख निर्वानी। तिस को सिमरे सहज ध्यानी॥
बैठ इकान्त ध्यान लगाई। मन को बाँधे गत पवन लखाई॥
आवत जावत नेहचल होवे। साचा नाम अन्तर परोवे॥
सतगुर दया होवे परगास। अनहद नाद करे बिलास॥
सुन्न गुफ़ा में ध्यान लगाई। सत ठाकर का दर्शन पाई॥
दर्शन पाये भयो निहाल। दुर्मत नास माया जाल॥

**साचा भेख पछानया, एक शबद निर्वान।**
**'मंगत' अन्तरगत माहीं, पाया सहज ध्यान॥1318**

सहज ध्यान मन मगन समाया। सत शबद अन्तर घर पाया॥
देह विकार सकल बिख नासे। सत शबद में लयो निवासे॥
काम क्रोध गयो हंकारा। सत सरूप शबद विचारा॥
करम करत निहकरमत पाई। शबद सरूप अन्तर चित ध्याई॥
मन में ये मन मगन समाया। अखण्ड शबद अन्तर प्रगटाया॥
आसा तृषना मिटा परमाद। घर मे पायो शबद आनाद॥
रुच रुच सुरती शबद को पीवे। भय त्याग शबद में जीवे॥
दुर्मत रंग छाया सब नासी। स्वयं परकाश जोत परगासी॥
निर्मल प्रेम की रसना खाई। निर्मल धाम की सोझी पाई॥
निर्मल सीख सुन सत सार। सतपुरषों का कियो लेख विचार॥
अपनी भरमन आप गँवाई। सत ठाकर घर में दरसाई॥
साची पूजा साहिब की जानी। आप त्याग भयो परवानी॥
सत साधन पूरन फल दीया। सत सरूप में रमत रमीया॥
संशय शोक मिटा सब भरम। सतगुर सीख पाया सत धरम॥
अपने आप का कियो सुधार। साची भगत पाई निरंकार॥
नित आनन्द परापत होई। मन की दुबधा दुर्मत खोई॥
सत पुरषों की साखी गाई। सब की सार इक शबद ध्याई॥
भेद पाखण्ड सकल भयो नासा। सब में देखा प्रभ परगासा॥
पूरन रूप शबद निर्वानी। जल थल माहीं पूर समानी॥

**सत शबद घर चीनया, भेद भरम सब नास।**
**'मंगत' तत्त समाया, जो सरब करे परगास॥1319**

सत की खोज शान्त वरताई। लाभ यथारथ लयो कमाई॥
सतपुरषों की कहनी मानी। दुर्लभ सार शबद पहचानी॥
नित ही नित सतनाम कमाई। निमख निमख कर कीरत गाई॥
प्रभ दाते ने करी सम्भाल। दीना साचा नाम निहाल॥
भव बन्धन से निस्तर कीया। साचा करम धरम सत दीया॥
निर्मल चित पाई सत ओट। विजे परापत भई अनूप॥

पाँच शत्रु को मरदन कीना। निर्भय धाम निरन्तर चीना॥
सत परतीत शान्त घर पाई। पुरख अनादी मेल मिलाई॥
झूट विकार से निर्मल हूआ। साचे नाम में जीवत मूआ॥
मर जीवन अत जीवन पाया। निर्भय सुख का भेद लखाया॥
शबद अगोचर की कथा विचारी। निज घर माहीं सब लेख लखारी॥
सो परमेश्वर हिरदे ध्याया। जिस को ध्यावें गुनी मुनी राया॥
सो परमेश्वर अन्तरगत सूझा। सत परतीत पाई सत पूजा॥
करम त्याग का पाया भेद। इच्छया करम का नास्यो छेद॥
शुद्ध सरूप जोती निर्वान। अन्तरगत में पायो ध्यान॥
अमोल अतोल अगिनत अथाये। सत सरूप आपार पराये॥
अत निर्मल पद शबद अगामी। परगट पाये घर माहीं स्वामी॥
पूरन भाग कोई गुरमुख जागे। सत परमेश्वर की चरनी लागे॥
तपन विनास सत शान्त समाई। भरम त्याग निज धाम को पाई॥

**अन्तरगत में सिमरया, साचा नाम अगाध।**
**'मंगत' शबद परगासया, धारी प्रेम समाध॥ 1320**

अन्तरगत जो नाम विचारे। भव दुस्तर से उतरे पारे॥
सतपुरषों ने करी कमाई। मिथ्या जग में सार लखाई॥
साची सार शबद निर्वाना। अन्तर पूज भये परधाना॥
कोट जीवों को किया निहाल। सत परतीत दीनी सुखभाल॥
पाप करम से जीव छुड़ाये। सत कीरत प्रभ की दिखलाये॥
निष्काम सरूप का चोला धारी। निर्मान भाओ का लेख विचारी॥
सब जीवों से प्रेम कमाई। ताप हरे नित शान्त वरताई॥
आनन्द मूरत पुरष जग आये। आप तरे कई जन्त तराये॥
दु:खी जीवों का संकट हरया। सत परतीत जो सरनी पड़या॥
जीवन मुकत हो बिचरे जग माहीं। आनन्द कीरत नित ही वरताईं॥
अनंक तपन से ठान्ड वरताई। सत सरूप निश्चय दिखलाई॥
निर्भय रहनी पायो बिसराम। साचा शबद घर पाया धाम॥

भय भरम गँवाये शोक। सत ध्यान पाया निर्मल जोत॥
अन्तरमुख में लीन समायो। सत ठाकर परतख दिखलायो॥
पूरन करम पायो सतनाम। सिमर सिमर पाया निर्मल धाम॥
दुस्तर जग से विजे लखाई। निर्मल कीरत सतपुरषों ने पाई॥
नित ही तिन का जीवन विचार। पावें सत सरूप निर्धार॥
अनंक जतन मन अन्तर राख। अखण्ड शबद की रसना चाख॥
बिपत मिटे पावें सत धाम। गवन त्याग लेवें बिसराम॥

**जिस मारग साजन गये, नित उठ खोज विचार।**
**'मंगत' मारग शबद का, सत निरनय चित धार॥ 1321**

## आठवाँ अध्याय

## नाद साधन सार

**साधन सार विचार के, जतन करो दिन रात।**
**'मंगत' महमा नाद में, पल पल लीन समात॥ 1322**

साधन सार सुनो सुखरास। जिससे मिटे भरम की फाँस॥
प्रभ चरनी आवे परतीत। निर्भय धाम का गाइये गीत॥
जग आवन घालें सत घाल। मारग बूझें प्रभ दीनदयाल॥
काल करम का चक्कर विनासी। हिरदय सिमरें नाम अबनाशी॥
गवन विनासे निश्चय सत पाये। रूप बिधाता घट अन्तर ध्याये॥
मन की मैल को पल पल धोई। सुकृत कार जग माहीं लखोई॥
बन्धन रूप से मुकत समावें। भरमन नास तृपत घर पावें॥
जतन अनेक से छूटन पायें। अनेक भरम मन के बिनसाएँ॥
जीवत में तृपत समाई। मारग खोज शबद सुखदाई॥
तृष्ना अगन से ठाँड समावें। निज घर माईं प्रभ को पावें॥
अनंक उपाय से छूटन पायें। दृढ़ विश्वास हरि चरन समायें॥
सकल जतन का भेद पछाने। इत उत सब की गत मित जाने॥
झूट भरम से मिले ख़ुलासी। खोज ज्ञान शबद सुखरासी॥
भयंकर तपस्या का भाओ विनासे। सहज जुगत प्रभ चरन निवासे॥
स्वारथ बुद्ध नासे अन्धकारा। पर उपकार चित करें विचारा॥

नित सतसंग माहीं पधारें। जीवन सार का लेख विचारें॥
रल मिल साहब का गावें गीत। अन्तर दिशा पछाने पुनीत॥
मोह जाल भरम होये नासा। मारग खोज शबद सुखरासा॥
औगनकारी मन अँध्यारा। सत मारग में होये सचयारा॥

**मारग सहज पछान कर, दीन दुनी लेवें जीत।**
**'मंगत' अन्तर ध्यान में, प्रभ चरनी रहे प्रीत॥ 1323**

पूरन सतगुर की सिखया विचार। नित चरनी सत सेव को धार॥
गुर बिन मन भरमन नहीं छोड़े। गुर बिन करे बहु पाप करूरे॥
गुर बिन नहीं सत निश्चय पाई। गुर बिन नहीं सत भेद लखाई॥
गुर बिन जीव बन्धन के माहीं। मुकत रूप का भेद नहीं पाईं॥
गुर बिन मिटे नहीं मन ग़ुबारा। आवे जावे जूनी बहु धारा॥
गुर बिन सत शान्त ना पाई। कोट जतन कर लेख लखाई॥
गुर बिन नहीं अनुभव परकासे। गुर बिन नहीं सार कोई भासे॥
गुर बिन नहीं मन आवे ठौर। करम जाल नहीं बिनसे घोर॥
गुर बिन मनुआँ नित प्यासा। गुर बिन धारी भरम दुःख आसा॥
गुर बिन नहीं प्रभ परगट पाये। कोट विधी जो योग कमाये॥
गुर बिन जतन अकारथ जाई। खप खप मरे सार नहीं पाई॥
गुर बिन मन नित औगन धारी। पाप करम का भयो पूजारी॥
गुर बिन पावे नहीं कभूँ धीर। जन्मे मरे धारे तक़सीर॥
गुर बिन मनुआँ अन्ध भरवासी। बहु रंग पूजा करे उपासी॥
गुर बिन ज्ञान की सार ना पाये। पढ़ पढ़ थाके गुनी गुन राये॥
गुर बिन मिटे नहीं गवन का फेरा। काल करम चौरासी गेड़ा॥
गुर बिन मन नित छेद को धारी। अनँक संशे नित विचारी॥
माया अत घना ग़ुबार। बिन गुर पाये कभूँ नहीं पार॥
साचा गुर जब मेल मिलाई। सार शबद अन्तर लख पाई॥

**गुर बिन भेद ना पाइये, मारग अगम का मीत।**
**'मंगत' शबद पछानिये, सतगुर की परतीत॥ 1324**

शबद विवेकी गुरु मेल मिलाये। सत निश्चय इक नाम में आये॥
अपने जीवन का मिले विचार। पूरन गुर मिलें किरपा धार॥
सतगुर साचा सो ही पछान। जो अन्तरगत का पावे निधान॥
अनुभव परगास शबद को पीवे। नाम जपत के जीवत जीवे॥
आनन्द सरूप मूरत को धारी। अखण्ड शबद अन्तर विचारी॥
मिथ्या जग से रहे उदास। घट घट सिमरे एक अबनास॥
खिमावान अती सन्तोखी। निस दिन सिमरे शबद अलोकी॥
अगम निगम का भेद पछाने। तिस गुर भेंट जाऊँ क़ुरबाने॥
अबनाशी पुरष सँग प्रीत लगाई। छिन छिन रसना साची खाई॥
भोग विखे से उपरस होई। साचे नाम में मगन समोई॥
प्रभ आधार जीवन को पाई। मान त्याग निर्मान समाई॥
बाहरमुख की भरमन त्यागी। अन्तरमुख में सुरता लागी॥
सत शबद पावे सत सार। तिस गुर चरनी जाऊँ बलिहार॥
भय भरम नहीं चित को लेपा। काल करम नहीं धारे विखेपा॥
संशय शोक नहीं चित में कोई। साचा नाम इक भाओ परोई॥
सुरती अन्तर राखी धार। पल पल सिमरे नाम मुरार॥
कर्ता भाओ तजे अभिमान। दृढ़ निश्चय प्रभ सरन पछान॥
सब कुछ आज्ञा प्रभ की जानी। समता भाओ में धीर समानी॥
निश्चल बुद्ध इकागर विरता। धन्न गुर साचा शबद सँजुगता॥

**जिस घट में चानन भयो, संशे शोक विनास।**
**'मंगत' सतगुर सो मिलें, होवे भरम का नास॥ 1325**

एक शबद की कथा विचारी। अन्तर कीरत साची धारी॥
मन अपने का भरमन छोड़ी। सत परतीत शबद चित जोड़ी॥
पल पल आज्ञा प्रभ की मनाई। सच्चदानन्द को नित ध्याई॥
गरब त्याग ग़रीबी पाई। सरजनहार सरब दिखलाई॥
सरब जीयाँ की धूड़ रमावे। साची सेवा नित कमावे॥
अखण्ड जाप अन्तर चित जापी। प्रान पवन में सुरता थापी॥

इरध उरध का नाका जोड़ी। भरम ग़ुबार की दुर्मत को छोड़ी॥
नित ही नाम मंगल को पाई। तिस गुर भेंट परम सुखदाई॥
ब्रह्मज्ञानी तत्त का वेता। मोह माया का नहीं चित लेपा॥
आनन्द सरूप प्रभ नाम ध्याई। अन्तरगत नित रहे समाई॥
खोल कपाट गगन में चढ़या। सत ठाकर की सरनी पड़या॥
अनहद नाद की विजे बजाई। अबगत जोती घट दरसाई॥
नित मख़मूर प्रेम के रंग। प्रभ साचे का गाये परसंग॥
निर्मल चित दृढ़ विश्वासी। साखी शबद की करे उपासी॥
भेद पाखण्ड सकल चित त्यागी। एक शबद का भया अनुरागी॥
सुन्न गुफ़ा में डेरा कीना। सत सरूप साखी को चीना॥
जरा मरन का भय निवारी। अजर पुरष संग प्रीत विचारी॥
सुपन समान जग खेल दिखलाई। परगट साहब अन्तर दरसाई॥
अनन प्रीत चित चरन चितारी। तिस गुर चरन जाऊँ बलिहारी॥

**रहनी वाले गुर मिलें, पाइये नाद विचार।**
**'मंगत' बिपता सब मिटे, तिस गुर के उपकार॥1326**

ऐसे सतगुर मेल मिलाये। सत धरम निश्चय दिखलाये॥
पाप कुपथ से जीव छुड़ाया। एक शबद का राह दिखलाया॥
पार स्वामी जो प्रभ देवा। पाइये भेद सतगुर की सेवा॥
सतगुर सेव में जीवन धार। सतगुर चरन जाओ बलिहार॥
अधिक प्रीती गुर चरनी माहीं। सतगुर दरसे पार गुसाईं॥
सतगुर रूप साहब का जानी। सतगुर बचन हिरदे पहचानी॥
पल पल आज्ञा मन मनाई। सतगुर बचन में प्रीत लगाई॥
आठ पहर सतगुर को सेवे। तिन की सिखया पल पल लेवे॥
तन मन वार गुर सेव कमाये। पाप विनास शबद गत पाये॥
गुर के वचन में धारे विश्वासा। जग में राखे गुर की आसा॥
चौसठ घड़ी गुर होवे सहाई। एह बिध प्रीत चरन की जो पाई॥
निर्मल कहनी गुर का विचार। निर्मल रहनी गुर का आधार॥

परउपकार भोजन गुर खाई। तिस गुर भेंट पाई प्रभताई॥
जुगत मुकत सब सार लखावे। प्रभ दाते की प्रीत बढ़ावे॥
अन्तर जगुत की सार दिखाई। साचे नाम की सार समझाई॥
सकल भरम से जीव छुड़ाई। एक साहब की परतीत लखाई॥
मिथ्या जग में साजन गुर पाया। जिस ने जीव का ताप मिटाया॥
अखण्ड सरूप की सेव दिखाई। मारग भगती लेख लखाई॥
ऐसे गुर के चरने वारी। जिस कोट जनम की बिपत निवारी॥

**साची सिखया धार के, नित ही सार कमाओ।**
**'मंगत' ये सत साधना, परम गती घर पाओ॥ 1327**

भरम त्याग हो सत विश्वासी। इक परमेश्वर करो उपासी॥
जिसने सकली बनत बनाई। रँग रँग खेल जगत दिखलाई॥
तिस दाते की सेव पछान। साची भगती हिरदे आन॥
नित ही मन में सेवा धार। सतगुर सिखया करो विचार॥
गुर की रहनी मन में धार। रख विश्वास एको करतार॥
बिन प्रभ दूजे नहीं कीरत गाओ। सत स्वामी की सेव कमाओ॥
अपने घट में रमया देखो। सब कुछ बनत तिसकी लेखो॥
आज्ञा तिस की मन में धार। दुर्मत रोग का त्याग ग़ुबार॥
साची निहों सतनाम कमाओ। प्रभ दाते के चरन समाओ॥
एको ओट साहब आधार। प्रभ दाते का करो विचार॥
निमख निमख कर रसना गाओ। सतगुर सीख हिरदे में लाओ॥
अपनी मन की सयानफ़ छोड़। आज्ञा प्रभ की चरन चित जोड़॥
अन्तरगत नित नाम कमाई। सरजनहार की करो वडयाई॥
दृढ़ विश्वास चरन चित राख। साधन सार जुगत को चाख॥
निर्मल जतन धरो दिन राती। शबद कमाओ वड परतापी॥
निश्चय राख चरन के माहीं। दूजा भाओ नहीं हिरदे ध्याईं॥
सतगुर सीख करो विचार। साचा नाम जपो सुखसार॥
बन्धन नासे बिपत निवारी। प्रभ दाते का हो पुजारी॥

खेम कुशल सतनाम कमाई। सतगुर दात परमगत पाई॥

**एक भरोसा साहब का, दृढ़ निश्चय से राख।**
**'मंगत' दूजा ना सेविये, ये सतगुर निर्मल साख॥1328**

अत परताप साहब का देखो। सरब शकत तिस की लेखो॥
नाद सरूप अत बिसमाद। तिस का सिमरन हरे परमाद॥
जोती जोत होवे परगास। साची भगती में करें निवास॥
जिस साहब ये खेल दिखाई। जिस की शकत सरब वरताई॥
तीनों काल जो रहे साखी। नित सुखदाता अन्तर भाखी॥
भाओ भगत तिस की कमाओ। सतगुर सीख अन्तर चित ध्याओ॥
आनन्द सरूप जो नित निर्वाना। सम परकाश शबद कल्याना॥
ना वोह जन्मे ना मरना पाई। आनादी सरूप नित समाई॥
तत्त गत रूप अभय परिपूरा। नाद सरूप तूँ सिमर हज़ूरा॥
अपना सरजनहारा सो देव। पल पल मन में कीजो सेव॥
देवन देव सो नाथन नाथा। नाद सरूप अतुल समराथा॥
सब में शकत तिस की भरपूर। साचा नाम नित जाप हज़ूर॥
देवी देव नित सेव कमायें। इन्दर चन्दर रवि हुकम मनायें॥
आकास पाताल सरब माहीं बराजे। पूरन पुरख जप पार समाजे॥
तिस का पारावार नहीं पाई। तिस का लेख नहीं लखने आई॥
अगम अगोचर सरब स्वामी। सतगुर सीख भज अन्तरयामी॥
अपने बल में सो बलधारी। अतुल शकत प्रभ पार मुरारी॥
नित ही तिस की सेव कमाओ। दृढ़ विश्वास चरन चित लाओ॥
बिन प्रभ दूजे नहीं करो प्रीती। सतगुर साध की सुन ये नीती॥

**एक साहब को सिमरिये, मन चित प्रीत लगाये।**
**'मंगत' मिटे सब दूषना, जीव परम पद पाये॥1329**

एक भरोसा एको विश्वास। एको साहब की करो अरदास॥
एक ध्यान एको विचार। एक का निरनय अन्तर धार॥

एक ही देखो सरब के रंग। एक का ध्याओ नित परसंग॥
एक की पूजा एक का ध्यान। एक की कीरत करो बखान॥
एक की मन में धरो परतीत। एक ही सिमरो निर्मल चीत॥
एक ही देखो सरब बिस्तारी। जल थल अन्दर जोत आपारी॥
एक विचार सरब के माहीं। ज्ञानी त्यागी गुरु गोसाईं॥
एक का निश्चय राखे जोई। सत परतीत भरम सब खोई॥
एक का लेखा सकल हैं ग्रन्थ। एक विचारें सकले पन्थ॥
एक ध्यान में रहो रँगराता। नाद सरूप पुरख बिधाता॥
ना वोह बिछड़े ना मेल मिलाई। सरब में पूरन रह्या समाई॥
एक को ध्यायें सरब गत पायें। मुनी मुनिन्दर एक ध्यायें॥
एक का लेखा नित विचार। दुर्मत नासे भरम ग़ुबार॥
एक ध्यायें पवन और पानी। रास ग्रह नित एक बखानी॥
सरब जगत को एक आधार। साहब साचा सरब दातार॥
नित ही तिस की प्रीत कमाओ। एको सिमर परम सुखराओ॥
दूजा भाओ पाखण्ड त्याग। एक साहब की चरनी लाग॥
एक को सिमरें महेश गनेश। एक ध्यावें शारद शेष॥
एको साचा सरब परकाशी। नाद सरूप अजर अबनाशी॥

**एक साहिब की प्रीत कर, दूजा निहों त्याग।**
**'मंगत' ज्ञान यथारथ ये, रहो सदा लिव लाग॥ 1330**

एक आधार सकल संसार। एक का देख तूँ सकल पासार॥
सरब जीयाँ में एक समाई। साचा ज्ञान कथो सुखदाई॥
एक की सेव परम सुखदाई। एक की सेवा देवे वडयाई॥
पीर पैग़म्बर करें विचार। साध रिखीशर और अवतार॥
वेद ग्रन्थ फ़लसफ़े अनेक। सब ही करें एक का लेख॥
जिस जन अन्तर एक पछाता। एक का सिमरन हिरदे जाता॥
एक की पूजा अर्चा जानी। एक की कथा करी बखानी॥
संशे त्याग मुकत सो पाई। माया दुर्मत जाल मिटाई॥

एक ही देख अनेक के माहीं। चार खानी में एक लखाईं॥
आलख जोत शबद निर्वान। तृन तृन में सो ही परधान॥
तिस परम शकत की सेव कमाओ। सतगुर सीख सुनो सुखराओ॥
भेद भरम माया को त्यागो। एक की कीरत में उठ जागो॥
अत परताप जो नित धारी। एक जपो सो ही सुखकारी॥
एक ध्याये के बन्धन नासे। दूजा भाओ नहीं हिरदे भासे॥
जब लग दूजा चित में ध्याई। भरम का बाँधा आवे जाई॥
अतुल शकत एको उपास। देवी देव करें अरदास॥
सरब का ठाकर सरब आधारी। नाद सरूप सिमर सुखकारी॥
भव बन्धन से मुक्ता पायें। निर्मल चित जो एक ध्यायें॥
सत परमेश्वर की कर सेव। सरब व्यापक एको देव॥

**निश्चय एको राखिये, एक ध्याइये चीत।**
**'मंगत' भगती सार ये, अन्त चलें जग जीत॥ 1331**

प्रभ दाते को नित चितार। किरपा सिन्ध सो पार मुरार॥
संकट नास करें सब जीया। सुकृत नाम नित जाप जपीया॥
अत वडयाई अत परताप। एक साहब को हिरदे जाप॥
नाद सरूप अखण्ड अबनासी। नित ध्याओ मिटे चौरासी॥
नाद की महमा अपरम आपार। रंचक लेख नहीं आवे विचार॥
सतगुर मिले तब सार लखाई। एको सिमर के परमगत पाई॥
मूरख जीया भरम भरमाया। एक त्याग दूजे निहों लाया॥
धार मनोरथ उठ उठ धाई। बाँधा भरम आवे जाई॥
अन्ध विश्वास बुद्धी में धारी। अनेक देवत का भयो पुजारी॥
अपनी करनी देवे सज़ाये। करम चक्कर से कौन छुड़ाये॥
देवी देव पीर अवतारी। करम चक्कर में सभी वरतारी॥
करम की बन्धी होवे ख़ुलास। नाद सरूप जपें अबनास॥
सो परमेश्वर आनन्द की खानी। तिस की सेव करे भ्रम हानी॥
पल पल गुनियाँ करी पुकार। प्रभ की भगत देवे निस्तार॥

अपनी करनी फेर फिराये। छुड़ावनहार नहीं देव दिखाये॥
नहीं समरथ कोई जग माहीं। भरम चक्कर से छूट दिलाईं॥
साचा नाम जो गुर की दीख। तिसे पछाने मिटे भरम भुलेख॥
बारम्बार करें गुनी दोहाई। प्रभ की भगत सब ताप मिटाई॥
ताँ सों मन नित उठ के जाग। एक साहब की चरनी लाग॥

**मन का संशय ना मिटे, जो बहु बिध पूजे देव।**
**'मंगत' सिमरन नाम का, हरे भरम का खेद॥ 1332**

साचा नाम सिमर अबनाशी। जनम मरन सब मिटे चौरासी॥
नित ही नाम की प्रीत विचार। भव दुस्तर से उतरें पार॥
नित ही नाम में राखो चीत। जम विकराल पर पावें जीत॥
नाम जपत सब संशय जाये। अन्तर परगट साहब दिखलाये॥
मिथ्या नाम रूप का आहारी। दुर्मत बाँधा ये मन बिकारी॥
गुन करम में नित लिपटाई। राग द्वेष अगन तपताई॥
जल जल पड़े नहीं धीरज पाये। नाम रूप बहु रंग प्रगटाये॥
ये ही लीला रचे दिन राती। दुर्मत बाँधा मन मद्धमाती॥
एक पलक नहीं छूटन पाये। नाम रूप का भोग कमाये॥
अनंक सयानफ़ नित ही धारी। नाम रूप में पाये ख़वारी॥
ये ही रचना काल की फाँसी। दुर्मत बान्धा फिरे चौरासी॥
इच्छया करम की नित लिपटाई। नाम रूप की रसना खाई॥
सतगुर मेल मारग सत जाता। साचे नाम का भेद पछाता॥
मिथ्या नाम रूप को त्यागी। सतनाम जपे तब भये अनुरागी॥
काल करम की दूषना जाये। नाम रूप का भरम मिटाये॥
नित सतनाम जो हिये विचारी। भरम चक्कर से मुक्ता लखारी॥
तिससे भई अधिक वडयाई। साचे नाम की कथा आगाही॥
मिथ्या नाम रूप अन्धकारा। साचा नाम सब हरे विकारा॥
मिथ्या नाम रूप गवन फिरावे। सतनाम सिमर के परमगत पावे॥

**साचा मारग खोज तूँ, मिथ्या भरमन त्याग।**
**'मंगत' साचे नाम में, रहो सदा लिवलाग॥ 1333**

नाम बिना नहीं धीरज पाये। भरम चक्कर ये जाल अथाहे॥
नाम रूप की वासना नासी। जो चित माहीं सतनाम उपासी॥
सतनाम सिमर मन धीरज पाई। नाम रूप का भरम चुकाई॥
साची जुगत सतगुर की दीख्या। सतनाम सिमर के मुकत रस पेखया॥
नाम रूप की कल्पना जोई। भरम ग़ुबार को नित प्रगटोई॥
संशे शोक से शान्त नहीं आवे। भोग विकार से नहीं तृपतावे॥
कोट जनम जीया भरमाई। नाम रूप नहीं भरमन जाई॥
अनेक नाम रूप विचारी। तिन के भोग में नित लिपटारी॥
छिनकारक रचना रचनावे। और के और खेल बनावे॥
एह मन मूरख करे कारगुज़ारी। नाम रूप का जाल पसारी॥
अपने जाल में आप बन्धाई। भोगे भोग परम दुःख पाई॥
सतगुर साजन मिले पार ज्ञानी। साची जुगत सतनाम बखानी॥
सतनाम का सिमरन नित नित धार। नाम रूप का मिटे ग़ुबार॥
ज्यों ज्यों साचा नाम कमाई। दुर्जन मन को शान्त आई॥
नाम सिमर मन निर्मल होई। सकल करम की सार परोई॥
पाप पुन्न का निरनय धारी। बन्ध मुकत का लेख विचारी॥
पल पल मन की मैल को धोई। साचा नाम नित हिये परोई॥
नाम रसे जब अन्तर मीत। दुर्मत जाल गई भ्रम भीत॥
शुद्ध सरूप भया परगास। नाद पुरख अजर अबनास॥

**मिथ्या नाम रूप को, चित से करो त्याग।**
**'मंगत' साचे नाम में, नित नित उठ के जाग॥1334**

साचा नाम सब भरम चुकाई। अन्तरगत सत सार लखाई॥
भगती मूल योग की सार। साचा नाम जप बारम्बार॥
नाम ध्यान अमरत खानी। अनहद नाद अखण्ड धुनबानी॥
पूरन भाग जो नाम परोई। अबगत गत का लेख लखोई॥
मिथ्या कल्पत चित से त्याग। साचे नाम में उठ के जाग॥

साचा नाम सब **चित** हरे विकारा। करम चक्कर से देवे निस्तारा॥
निर्मल भगती चित समाई। नाम आधार जीवन जो पाई॥
अत वडयाई नाम की मीता। सतगुर सेव पाई ये सीखा॥
मन अपने की जो करे कल्यान। साचे नाम का धरे ध्यान॥
नाम बिना नहीं जुगती योग। नाम बिना नहीं मिटे भ्रम रोग॥
नाम बिना नहीं होये परगास। अन्तरगत शबद अबनास॥
पल पल साचा नाम कमाओ। मारग भगती ये सुख राओ॥
नाम का साबन मैल सब धोई। ताप रूप की कल्पत खोई॥
साचा नाम अकल्पत करी। गुर परशाद जिस सोझी पड़ी॥
अधिक जाल माया बिस्तारी। इत उत नहीं आवे सार विचारी॥
जनम अनेक भुलेखे जाई। भरम का बांधा नित भरमाई॥
जब सतनाम की कथा विचारी। सतगुर भये जब किरपाधारी॥
सकल ग़ुबार भयो चित नासा। शान्त सरूप शबद परगासा॥
ताँ में निज मन मगन समाई। बौहड़ चक्कर संसार नहीं पाई॥

**आवागवन संसा मिटे, सतनाम जपे जब सार।**
**'मंगत' अन्तरगत माईं, भयो अधिक उजियार॥ 1335**

दुर्जन मन का मिटे अन्धकारा। नाम जपे पाये निस्तारा॥
संशे अनेक से जीव छुड़ाई। सतनाम कथा जब हिरदे पाई॥
साखी पुरख शबद निर्वानी। नाम जपत से सार पछानी॥
चंचल मन को धीरज आया। साचा नाम जब हिरदे गाया॥
रोग सोग मिटे सन्तापा। सतनाम अन्तरगत जापा॥
बाहरमुख की गवन विनासी। साचा नाम जो गुनी उपासी॥
भरमन त्याग अन्तरमुख आया। साचा ठाकर घर में पाया॥
नित नित प्रीत चरन की धारी। तब इस मन की मिटी ख़ुवारी॥
जुगत मुकत सार पछान। एको नाम सिमर भगवान॥
नाम ध्यान नेहचल चित कीजे। बिमल शबद की रसना पीजे॥
भय भरम जाये अन्धकारा। साचा नाम करे निस्तारा॥

यज्ञ पुन्न किरया बहुधारी। अठसठ तीरथ का लेख विचारी॥
बिन प्रभ नाम नहीं छूटन पाई। करो विचार गुनी गुन राई॥
जग बन्धन अत जीव कलेशा। इच्छया करम नहीं मिटे सन्देशा॥
पाप पुन्न करनी बहु करे। ऊँच नीच जूनी में फिरे॥
त्रैगुन जाल नहीं मिटे हंकार। जुग जुग भरमे जीव अंध्यार॥
साचा नाम जब हिरदे ध्याई। सतगुर सीख मिली सुखदाई॥
भरम त्याग सत ठौर पछाता। सतनाम सिमर के भयो रँगराता॥
नेहचल चित इक नाम विचार। निर्मल जुगती अन्तर धार॥

**दृढ़ निश्चे से सिमरिये, साचा नाम भगवन्त।**
**'मंगत' साधन सार ये, सब भरम करे भसमन्त॥1336**

निर्मल कीरत जिसने गाई। साची शोभा प्रभ की ध्याई॥
साचा नाम हिरदे परगासी। तब इस जीव की होई ख़ुलासी॥
सतगुर सीख करो विचार। मन में राखो नाम आधार॥
बन्धन नास मुकत को देवे। निस्चल चित जो अन्तर सेवे॥
सतगुर दाते आये उपकारी। मारग मुकत का लेख लखारी॥
एक नाम की रसना खाई। एक नाम की प्रभता पाई॥
एक नाम का ध्यान पछाता। परगट पायो पुरख बिधाता॥
भरम करम की होई हानी। अन्तरगत जब शोभा जानी॥
ताप तपन अन्तर होई नासी। नाम ध्यान पाया अबनासी॥
बन्धन से नित मुकत समाई। पल पल साचा नाम ध्याई॥
अगोचर शबद की कथा बखानी। घट परगट भई जोत निर्वानी॥
जिस को खोजे जतन बहु धारी। रंग रंग पूजा करी विचारी॥
सो प्रभ मिले हैं सहज सुभाये। एक नाम की सार लखाये॥
ऐसा नाम नित करो विचार। सतगुर सीख जाऊँ बलिहार॥
बिपत हरे घर मंगल पाया। सरब स्वामी अन्तर ध्याया॥
कोट पाप पल में भसमत होई। नाम गती जो गुनी परोई॥
अपरम आपार है महमा मीत। प्रभ का नाम केवल सुखरीत॥

सहज सुभाये नित कर जाप। प्रभ दाते का वड परताप॥
नित सरनाई पाओ चरना। प्रभ समरथ सरब का करना॥

**इक चित प्रीती राख के, सिमरो नाम दयाल।**
**'मंगत' दुर्मत सब मिटे, जीवन होये निहाल॥1337**

साचे नाम की अत वडयाई। सतगुर मेल बिन भेद नहीं पाई॥
सकल जगत के जन्त पुकारें। साचे नाम का लेख विचारें॥
पर मन की बिपता नहीं होये नास। आवे जावे भरम धर फाँस॥
जब लग मन में रहे हंकार। नाम दीपक नहीं होये उजियार॥
जब लग इच्छया भोग विचारी। नाम की रसना नहीं मिले सुखकारी॥
जब लग मन विरती आधीना। साचा नाम नहीं भेद लखीना॥
जब लग मन मनोरथ धारी। नाम ध्यान नहीं मिले आपारी॥
जब लग बुद्धी नहीं विश्वास। तब लग होये ना नाम परगास॥
जब लग निश्चय नहीं गुर चरना। तब लग नहीं पाये नाम का निरना॥
जब लग शुद्ध आहार नहीं खाये। नाम ध्यान नहीं मनुआँ पाये॥
जब लग शुद्ध नहीं कर ब्योहारा। साचा नाम नहीं होये उजियारा॥
जब लग संगत खोटी होई। निर्मल नाम नहीं चित परोई॥
जब लग जग को सत कर जाता। साचा नाम नहीं होये परगासा॥
जब लग अपना नहीं मरन विचारा। निर्मल नाम नहीं मिले सुखकारा॥
पाप कूप में जब भरमाया। परनिन्दया परहान समाया॥
परनारी परधन को ध्याई। दुष्टपने में नहीं नाम गत पाई॥
कोट मद्धे कोऊ गुरमुख आया। साचा नाम जिस अन्तर ध्याया॥
सब मिथ्या सत एक पछाता। साचा नाम चित माहीं ध्याता॥
मन की भरमन तपन निवारी। सत शरधा इक नाम में धारी॥

**मन की मैल उतारिये, पाइये सत विचार।**
**'मंगत' दीपक नाम का, तब होए उज्जयार॥1338**

सत पुरषारथ हिरदे धारो। सतनाम का लेख विचारो॥

साचा शबद अखण्ड सुखरासी। सरब आधार सरब परकासी॥
साचा नाम है तिसका एक। गुरमुख साजन सुनो विवेक॥
सकल जगत तिसका पासारा। आद स्वामी रूप निरंकारा॥
ना वोह जन्मे ना मरना पाई। तीन काल निरदोख समाई॥
घट घट व्यापक लिप्त ना पाई। सत शबद का लेख आगाही॥
चराचर जीवों को परगासी। हस्ती कीट में करे निवासी॥
अस्थावर जंगम सबका आधारी। चेतन पुरष शबद सुखकारी॥
सब से निकट परापत रह्या। अन्तरगत नित रमत रमीया॥
अबगत पुरख पार मुरारी। सब में जोत तिसकी वरतारी॥
देह माटी को नित सरजीवे। सरब जीवों को नित गत देवे॥
सो प्रभ देवा नित प्रतिपाले। सरन पछान मिटे जम काले॥
नित आनन्द मुकन्द सरूप। अपने आप पसरे अनूप॥
अचरज कौतक जगत पसारा। सरब के अन्तर रहे बिस्तारा॥
परमानन्द सरब गत पूरा। साचा शबद जपो पुरख हज़ूरा॥
अन्तरगत में प्रीत कमाओ। अन्तर सोझी प्रभ की पाओ॥
नित सरजनहार सो पारगरामी। अन्तरगत जप साचा स्वामी॥
बंधन नास पावें सत सार। आज्ञा माने प्रभ दातार॥
काल कल्पना सब रोग विनासी। निश्चल चित सतनाम उपासी॥
प्रेम पुंज तत्त नाद पछानी। परम गुनी कोई शोभा जानी॥

**तन मन धन को त्यागिये, सतगुर चरनी मायें।**
**'मंगत' साचे नाम को, कोई विरले गुनी अर्थायें॥ 1339**

कठन कमाई जग में भारी। जो चित पावे नाम आधारी॥
मरन जीवन तिस भेद पछाता। साचे नाम में जो रँगराता॥
माया व्याधी सकल विनासी। निश्चल चित जो चरन उपासी॥
पूरन पुरख के चरन बलिहारी। जिस अबगत नाद की कथा विचारी॥
करनेहार स्वामी जाता। सब कुछ तिसकी दात पछाता॥
तन मन का सब मान गँवाया। सतनाम का सिमरन जब हिरदे पाया॥
अपना जाता जब स्वामी। घट घट व्यापक अन्तरयामी॥

तब आस भरोसा पूरन पाया। तन मन दे के साहब रीझाया॥
अत वडयाई पाई प्रभ एक। पल पल करके लखयो लेख॥
जनम मरन का ताप सब हरया। सतगुर पूरे की सरनी पड़या॥
निर्भय नाम का भेद लखाया। नाम जपत कर जीव तराया॥
अपरम महमाँ साहब की जानी। जल थल अन्दर सो परवानी॥
आज्ञा तिसकी पल पल विचारी। आपा भाओ दुर्मत को टारी॥
सब कुछ भेंट करो तिस चरने। प्रभ दाते की पाओ सरने॥
निर्मान भाओ सतनाम पछाता। सिमर सिमर के मिटे सन्तापा॥
पूर मुशक़्क़त तिसने पाई। रैन दिवस जो नाम ध्याई॥
साचे नाम में सुरता राखी। अन्तरगत निर्भय पद चाखी॥
भरम ग़ुबार मिटा अन्धकारा। साखी शबद सुना झुनकारा॥
अन्तर घाट सुरत लिवलाई। साचे नाम का लेख लखाई॥

**बिपत सकल गई जीव की, पाया शबद आधार।**
**'मंगत' पूरन जतन से, निर्भय पाई सार॥ 1340**

एह बिध साचा नाम कमाओ। भव दुस्तर से निस्तर पाओ॥
मिथ्या जग को हिरदे में देखो। सरब स्वामी एको पेखो॥
साचा नाम तिसका नित ध्याओ। अपरम शोभा तिसकी गाओ॥
सब कुछ हूआ तिसका जानो। आज्ञा बूझ परम सुख मानो॥
सो परमेश्वर सब घट समाई। सकल जगत तिसकी प्रभताई॥
बारम्बार करो निमस्कार। सतसरूप चरन बलिहार॥
नित ही मन में राखो सन्देश। साचा नाम सिमर सुखरीश॥
जग आवन की पावें सार। तृपत रूप करें नाम विचार॥
सकल ताप को हरनेहारा। शबद ध्याओ आलख आपारा॥
पल पल तिसकी उस्तत कीजो। निर्मल चित चरन में दीजो॥
आसा पूरन मनसा पूरी। साचा नाम पायो हज़ूरी॥
तीन ताप पाँच दोख विनासी। सत सरूप जोती परकासी॥
निर्मल ध्यान सुरत लगाई। अन्तरगत आनन्द अत पाई॥
काल करम की दूषना छूटी। साचे नाम की रसना लूटी॥

गुपत द्वार भया परगासा। साचा नाम पाया अबनासा॥
निर्मल कीरत चित चरन समाई। परम शान्त इस जीव को आई॥
देह विकार से जीव छुड़ाई। साचा धाम शबद घर जाई॥
मिथ्या मोह हरया अन्धकारा। सत सरूप घट करी विचारा॥
छिन छिन मनुआँ पाये परतीत। साचे नाम का गावे गीत॥

**नित बलिहारी जात हूँ, जो सिमरे नाम आपार।**
**'मंगत' दुर्मत त्याग के, लखे शबद की धार॥ 1341**

धार शबद की अन्तर जारी। साचे हरजन चढ़ी ख़ुमारी॥
रुच रुच सुरती शबद में खेले। नाम ध्यान पाया अलबेले॥
करम वासना सकली नासी। निहकरम सरूप जोती परगासी॥
तिस में मनसा निश्चल गाढ़ी। पायो ठाकर पार मुरारी॥
अपने आप को आपे खाई। साचे नाम की पाये प्रभताई॥
जीवन मुकत ये मारग सार। सिमरे नाम पावे छुटकार॥
नाम ध्यान में रहे हुशियार। हंग बुद्ध ममता करे निवार॥
सतगुर चरनी अधिक परीत। तब लीना भव जल को जीत॥
अदृष्ट पुरष घर दृष्टी आया। सतगुर दया सत सार लखाया॥
कारन कर्ता सो ही स्वामी। साचा नाम तिसका आगामी॥
अपने भाने करे उद्धार। पतत पावन आपे करतार॥
अपनी जुगत मुकत लखाई। अपना साचा रंग रँगाई॥
सतगुर चरन जाऊँ बलिहार। जिस दीना साचा ब्योहार॥
सत सरूप परमेश्वर जाता। साचा नाम तिसका सुखदाता॥
सतगुर दया प्रभ नाम ध्याया। नित आनन्द घर में पाया॥
अनहद नाद शबद गुँजारी। निर्मल ध्यान सुरत मतवारी॥
सरब परकाश तिसका दिखलाई। आज्ञा तिसकी मन माहीं ध्याई॥
अपना आप गँवाया सार। तब परसा सतनाम आपार॥
अन्तर शबद में लीन समाई। जीवत में देह आस मिटाई॥

**मारग धरम का कठन है, ज्यों खाँडे की धार।**
**'मंगत' जीवत में मरे, तब पाये सत सार॥ 1342**

जग जीवन जिस झूट पछाता। साचे नाम में सो रँगराता॥
परम परीती प्रभ में पाई। जग जीवन की आस मटाई॥
तुच्छ जीवन जग नज़री आया। आस त्याग प्रभ नाम ध्याया॥
ममता मोह मिटा विकारा। घर में भयो शबद उज्जयारा॥
सुन्न गुफ़ा में करे पुकारी। अबगत नाद पुरख निरधारी॥
अपने आप में आप परगासी। शबद रूप अजर अबनासी॥
निहों लागा तिस पुरख के चरना। साचे नाम का पाया निरना॥
जीवत में निरदेह पछाता। साखी शबद अमी सुखदाता॥
रुच रुच सुरती चरन समाई। साचे नाम की कीरत गाई॥
द्वन्द विकार सकल मल हरया। सत शबद अन्तर चित धरया॥
पी पी साचा नाम स्वामी। अमरलोक का भयो गामी॥
निर्मल कीरत जग में पाई। साचे नाम का भेद अर्थाई॥
जीवत में जो रसना खाये। बौहड़ काल की फाँस नहीं पाये॥
पूरन पुरख के धाम समाई। बौहड़ चक्कर संसार नहीं पाई॥
जग में आये सत काज सँवारा। अपने धाम में जाये पधारा॥
निर्मल नाम की साखी गाई। सतगुर सीख सब त्रास मिटाई॥
निज आनन्द शबद घर पाया। मन की नासी दुर्मत छाया॥
पूरन भाग गुरमुख ने पाये। एह बिध साखी नाम की गाये॥
ताप तपन सब मिटे विकार। अनहद नाद पाया निरंकार॥

**आसा तजी शरीर की, घट पाया शबद का भेद।**
**'मंगत' मारग कठन है, कोई गुरमुख हरे चित छेद॥ 1343**

निर्मल जतन जिस जन धारा। भव दुस्तर से पाई छुटकारा॥
नाम रसायन रसना चाखी। सतगुर साचे की सिखया भाखी॥
कठन मन के ताप को हरया। साचा शबद जप के निस्तरया॥
नित नित बन्दूँ गुर के चरना। अबनाशी शबद पायो सुख निरना॥
अपने अन्तर में भयो परगासा। सत ठाकर की करी अरदासा॥

अधिक प्रेम से रसना नाम की खाई। निर्भय पुरख की साखी गाई॥
अब कुछ करने योग ना रहाई। पूरन पुरख मिलया घर आई॥
मानुष जनम की सार पछानी। साचा शबद रम्मत सुख जानी॥
कुटल कलेश जीव के नासे। अजर पुरख घर भयो परगासे॥
अखण्ड नाद भँवरा गुंजारी। ऊँचे शिखर फुली फुलवाड़ी॥
अद्भुत चानन भयो परगासा। दमके दामन करे बिलासा॥
मन निर्वान शबद को खाई। साचे नाम की कीरत पाई॥
जाँ से उपजा लीन समाया। सतगुर दात प्रेम पद पाया॥
अपने रूप संग मेल मिलाई। चरनजीव पद अन्तर पाई॥
खेम कुशल पायो सार घनेरा। अन्तर चमके शबद गहीरा॥
बिमल नाद जोत निर्वानी। गुरमुख बूझी सारंग बानी॥
छिन छिन पान शबद का कीना। निज सरूप में भयो लवलीना॥
नाम ध्यान से अत सुख पाया। बिछड़ा ठाकर घर मिलाया॥
पूरन सुहाग पाया सुखदाई। रुच रुच साहब के चरन समाई॥

**अबगत नाम को सिमर के, निर्भय धाम समाये।**
**'मंगत' पूरन रूप में, दूजा भाओ विसराये॥1344**

नाम की साखी सोही जन गाये। जो करनी अत निर्मल पाये॥
मन बिकारी करे बिकार। साचा नाम नहीं करे विचार॥
झूट विखयों में उठ उठ धाई। एक पलक नहीं धीरज पाई॥
पाप करम करे अत बिकराल। नाम रसे नहीं दीनदयाल॥
अत चतराई कपट को धारी। अपनी आप करे ख़वारी॥
सरब जीयाँ संग वैर कमावे। स्वारथ में बहुता भरमावे॥
अपने सुख की घाले घाल। और जीवों की उतारे खाल॥
ना गुरु सीख हिरदे में पाई। कैसे साचा नाम ध्याई॥
परनिन्दया अन्तर चित धारी। पर का हान नित करे विचारी॥
छल कपट में अत परबीना। मान मध में अत गरसीना॥
काम क्रोध अगन अत धारी। जल जल होवे नित अंगारी॥

धार घमण्ड साहब बिसराई। अपनी देखे अत प्रभताई॥
अपने समान देखे ना कोई। धन भूमी बहु माल लखोई॥
सम्पत पाये करे गुमाना। कह बिध सिमरे नाम सुजाना॥
ना प्रभ से प्रीत ना काल भय राखी। इन्द्री भोग की रसना अत चाखी॥
छिन छिन सम्पे भोग विकार। मान करे पाये बहु परिवार॥
हाकम हुकम चलावे नीत। देह की शोभा माँगे चीत॥
लज्या ग़ैरत बहुता राखी। अपने तुल ना कोई भाखी॥
दुर्मत जाल में अत फँसाया। कैसे सिमरे हरी हर राया॥

**दुर्मत माया धार के, अत ही बनयो मानी।**
**'मंगत' कह बिध पाइये, सत शबद निर्वानी॥1345**

नित ही पाप करम को भाखी। रंग रंग भोग की रसना चाखी॥
आहार मलीन करे दिन रात। मदरा माँस खाये सुख पात॥
भंग तम्बाकू चरस को पीवे। चोरी जुआ छल कपट को सेवे॥
अनर्थ करे अत ही दिन रात। कह बिध सिमरे सच नाम कमज़ात॥
मन मानी नित अन्तर धारी। अत ही भोग चित करी विचारी॥
तृष्ना अगन में जल जल पड़ी। पाप करम में सुरता कढ़ी॥
अत ग़ुबार अन्तर में धारी। पाप पुन्न नहीं भेद विचारी॥
दुष्ट करम करे दिन राती। अपना जीवन कीना घाती॥
सदा अशान्त धीर नहीं पाये। पाप करम धर प्यासा जाये॥
ना सत पुरषों की संगत जानी। ना सत सिखया हिरदे मानी॥
मान मध ग़ुबार को धारी। अपनी आप करी ख़वारी॥
झूट भोग में अत ललचाई। वाँग स्वान के आवे जाई॥
भोगे भोग क्रोध परचँडे। सत बुद्धी को अन्तर खंडे॥
बुद्ध मलीन विचार त्यागी। मोह विकार अत चित लागी॥
अत स्वारथ में गरसाया। काल चक्कर की फाँस फँसाया॥
मोह मदरा पी भयो ग़लतान। जनम गँवायो पशु समान॥
ओड़क जग से चले निरासा। जम काल जब कियो गरासा॥

लोक कटुम्ब कोई संग न जाई। ना सम्पत संग जावत राई॥
रो रो चले छाड संसारा। पाप करम से पाये दुःख भारा॥

**करनी करे मलीन नित, अत गरब को धार।**
**'मंगत' माया चक्कर से, नहीं पावें छूट गँवार॥1346**

मानुष की तो देही धारी। करनी पशु समान विचारी॥
विषे भोग में जनम गँवाई। ओड़क जग से प्यासा जाई॥
देह का मध मान बहु राखी। ओड़क देही धूड़ को भाखी॥
अन्ध बुद्ध धार ना करें विचार। कूड़ सुख में फिरें गँवार॥
इन्द्री भोग के जो सुख माने। भये वंजोग दुःख पाये अनजाने॥
छिन आवे छिन में जो जाई। तिसका सुख मूरख मनाई॥
देह तो अपनी साथ नहीं दीना। और जीयाँ संग मोह लखीना॥
झूट देही के मोह फंसाया। पाप कुपथ्थ नित ही कमाया॥
झूट देही का करे गुमाना। सिर पर बाजे काल निशाना॥
मूरख होके सूझ नहीं पाई। झूटी धारी जग अशनाई॥
मोह भरम की अगन जलाई। राग द्वेष की फाँसी पाई॥
छिन रोये छिन में हरखाये। भूत समान खेल खिलाये॥
इक वस्तू की सम्पत कीजे। दूजे उसका त्याग लखीजे॥
कूड़ ब्योहार में रहे दिन राती। छल कपट में रहे मदमाती॥
नित ही जले भरम की अगनी। ठग लयो माया अत ठगनी॥
तृष्ना अगन पल पल जलाई। ओड़क जग से रोता जाई॥
सकली सम्पत होई बेगानी। निकले प्रान देही कुमलानी॥
सुख खोजत सब जनम गँवाई। ओड़क दुःख की भीत लखाई॥
मनमुख मूढ़े चले निरासे। अन्त की बारी जग से प्यासे॥

**सम्पत बहु संचत करी, पर चली राई नहीं साथ।**
**'मंगत' भरम गुबार में, ले चलया खाली हाथ॥1347**

अत संकट संसार का खेला। प्रभ माया का अचरज मेला॥

इक आवे इक जावे नीत। रूप सराये जग की रीत॥
इक जाये रोता इक मान लखाई। अन्धमत मूढ़ नहीं सार ध्याई॥
कहाँ से आया कहाँ अन्त को जाना। इस मारग का कौन ठिकाना॥
देह के मध में रहे ग़लतान। करनी साच नहीं करी पछान॥
झूट भरवासे धीर बन्धाया। ओड़क जग से निरासा जाया॥
अपनी देही नहीं साथ निभाई। कौन सखा होवे सुखदाई॥
जैसी करनी सो पाई रास। बहु पछताये कूड़े भरवास॥
अब कुछ बनत बने ना मीत। कियो विचार सब दुःख की रीत॥
जीवत में कुछ सार नहीं ध्याई। अब रोवत कछु हाथ ना आई॥
जो कुछ किया सो करो सम्भाल। आगे लेखा लेवे दलाल॥
सब पर खेल खेलेगा काल। नैनाँ खोल तूँ देख अहवाल॥
अपना जीवन करो विचार। ओड़क रास जो हो सुख सार॥
मानुष जीवन दुर्लभ मीत। साचा सुख तूँ खोज पुनीत॥
माया भरम में ना भरमाओ। सत पुरषों की सीख लखाओ॥
दुर्मत रोग लागा वड भारी। सतगुर वैद खोजो सुखकारी॥
दुर्मत रोग का उपाये दिखलाये। साची औखद पान कराये॥
रोग विनास बुद्ध निर्मल होवे। साचे सुख की तब सार परोवे॥
जनम मरन का भय विनासी। दुर्मत नास पायो अबनाशी॥

**साचा धाम विचारयो, जाँ जनम मरन नहीं लेश।**
**'मंगत' सुख आपार सो, कोई गुनी करे परवेश॥1348**

मन साधन का सुनो उपाये। साची करनी लयो कमाये॥
निर्मल आहार करो दिन राती। आहार भ्रष्ट त्यागो दुःख दाती॥
निर्मल आहार विचार सत देवे। देह अरोग सत धरम को सेवे॥
जीवन रखया ताईं आहार पछान। जैसा आहार करे पाये निधान॥
सत मारग को सो जन सोधे। जो आहार भ्रष्ट का करे निरोधे॥
भूक समान भोजन को कीजे। सत ठाकर की महमाँ लीजे॥
अनंक पदारथ जिस बनाये। तिस की प्रभता अन्तर गाये॥

तिस की दात सब कुछ जाने। साची सेवा अन्तर पहचाने॥
देव भोजन इस भाँत से खाई। देव बुद्धी तिससे प्रगटाई॥
पाप पुन्न का पायो विचार। निर्मल करनी लई अन्तर धार॥
प्रभ दाते की प्रभता जानी। निर्मान भाओ अन्तर पहचानी॥
वैर विनास प्रेम परगासी। तिस ठाकर की महमा भासी॥
सरब जीयाँ का जो रखवारी। तीन काल जो किरपाधारी॥
रंग रंग पदारथ परगट कीये। सब जीवों को नित वरतीये॥
सरब प्रतिपालक आप स्वामी। तिसकी शोभा परम सुखधामी॥
प्रभ दाते की दात पछान। मूरख मन का त्याग गुमान॥
सरजनहार सदा चित राख। पूरन पुरख की सुन ये साख॥
आनन्द दाता सब दोख निवारी। नित नित तिसके चरन पधारी॥
प्रेम भगत पाओ परसाद। दूर होवें सब मन अपराध॥

**निर्मल आहार नित कीजिये, निर्मल पाइये विचार।**
**'मंगत' महमा साहब की, तब चित करे चितार॥1349**

निर्मल बुद्धी सतनाम विचारे। प्रभ की प्रभता का भेद लखारे॥
नित ही नित करे निगरानी। पाप विकार की कीजे हानी॥
साची संगत में रखे परीत। सत विचार मिले सुखरीत॥
साची संगत से पाइये विश्वास। मोह भरम की टूटे फाँस॥
बिन सतसंग नहीं पाइये धीर। अनमत धार करे तक़सीर॥
बिन सतसंग नहीं मिले निधान। सत असत का भेद पछान॥
सतसंग मूल धरम का जान। दृढ़ निश्चय से कीजो पान॥
शुद्ध आहार पाओ संगत साची। ब्योहार शुद्ध करो दिन राती॥
तब मन शान्त पावे सुखसार। साचे प्रभ की सरन विचार॥
दिवस रैन पावे परतीत। साचे नाम का गावे गीत॥
निर्मल आहार निर्मल ब्योहार। निर्मल संगत नित करो विचार॥
सत धरम की आवे बुद्ध। साचे जतन की पावे सुद्ध॥
पाप करम से पाये ख़ुलासी। साचा करम मन माहीं उपासी॥
नित ही साधन ये ही धार। साधजनाँ का संग विचार॥

दुर्मत भरम अत ही भयाना। बिना जतन नहीं होये कल्याना॥
साचा जतन ये ही चित राख। साची करनी हिरदे चाख॥
करम अनुकूल मन उठ धाये। पाप पुन्न को नित कमाये॥
जिसने साचा करम पहचाना। मारग पायो तब कल्याना॥
मन की दुर्मत जतन से जाई। नित नित साचे रंग रँगाई॥

**सत करम की धारना, मनुआँ करे पुनीत।**
**'मंगत' निर्मल करम से, साहब आवे चीत॥1350**

दीन दुःखी की सेव विचार। मन का नासे गरब ग़ुबार॥
परउपकार धरम का मूल। जीव के काटे संशे सूल॥
स्वारथ बुद्ध ज्ञान को नासे। परउपकार जो अन्तर उपासे॥
बारम्बार करें विचार। निर्मल करम देवे निस्तार॥
साची सेवा देवे परसन्ता। कपट विकार की कीजे हन्ता॥
अत निर्मल साहब का रूप। निर्मल होके मिले अनूप॥
करम वासना अती अन्धकार। छिन छिन भरमें जीव अंध्यार॥
निर्मल करम जब लेख विचारी। तब मनुआँ सत शान्त वरतारी॥
साचा ज्ञान साचा विचार। निर्मल करम सरब की सार॥
बन्ध ख़ुलासी सो जन पाये। पर-की सेव जो हिये कमाये॥
तृष्ना अगन मिटे बिकराल। सेवा करत होये निहाल॥
सरब जीयाँ में आप स्वामी। तिनकी सेव परम सुखधामी॥
सत करम जब दृढ़ कर ध्याई। पाप करम की मिटी ज्ञाई॥
सत करम ज्यों ज्यों कीजे। मान मध देही का छीजे॥
सत सील खिमा चित आये। साचा प्रेम परगट घर पाये॥
अनेक गुन घर परगट पाई। सत करम जो सार लखाई॥
मन की दुर्मत होवे नास। सत करम जो करें उपास॥
नित नित मन में उद्दम धार। सरब जीयाँ की सेव विचार॥
साची सेवा देवे धीर। जनम जनम की जाए तक़सीर॥

**साची भगती तब मिले, जब आवे उपकार।**
**'मंगत' परसे दीनता, कूप मिटे हंकार॥ 1351**

सकल पाप का मूल अभिमाना। गुनी ज्ञानी नित भरमाना॥
अनंक जतन जो भी नर धारी। मन का मान नहीं जाये अन्धकारी॥
सहज मारग ये करो पछान। पर-की हेत परस्यो ध्यान॥
वैर विकार ममता सब नासे। पर-का हेत जो अन्तर भासे॥
मान मध जाये गुमाना। पर-की सेव जो करी पछाना॥
प्रभ का साचा हुकम पछान। पर-की सेवा हिरदे आन॥
सेवा करत मिले अबनासी। काल करम की काटी फाँसी॥
परम योग परम ज्ञान। पर-की सेव मिले निर्मान॥
सरब जीयाँ की धूड़ रमाई। दृढ़ निस्चे से सेव कमाई॥
मान त्याग होये निर्मानी। साची भगती सार पछानी॥
प्रेम सरूप भगती का जान। प्रेम पायें जब तजें गुमान॥
पर-की सेव जो हिरदे धारी। जाये गुमान भरम अन्धकारी॥
दीन दुःखी का भाओ विचारी। अपना सुख नित ही वरतारी॥
अधिक प्रेम राखे मन माईं। सब में देखे एको साईं॥
मिथ्याकार दरसे संसारा। सत सरूप केवल करतारा॥
मिले बैराग संशा सब जाये। साची सेवा सत धाम पहुँचाये॥
मन की बाँछा पूरन होई। जो चित्त पर-की सेव परोई॥
सो वडदाता परम ज्ञानी। एह बिध रसना जिसने जानी॥
दुर्मत मूल जाये हंकार। घर में पावे शबद विचार॥

**साची सेवा पाये के, मन के हरे विकार।**
**'मंगत' मारग धरम का, साचा ये उपकार॥1352**

सत मारग में जो रहे परबीना। राम रतन तिसने घर चीना॥
जग जीवन तुच्छ कर नित जानी। सत सरूप जो जपे निर्वानी॥
जीवन में सत काज करीजे। साचे नाम की रसना पीजे॥
साची सेवा मन तन धारे। दुःखियों का नित खेद निवारे॥
पर-उपकार में जीवन वरताई। तब इस मन को शान्त आई॥

अन्तर नाम जपे सुखरासी। निश्चय एक धरे अबनासी॥
साची भगती मन माहीं कमाये। मान त्याग ग़रीबी पाये॥
सरब जीयाँ संग हेत लखाये। दुर्मत रोग तब मन का जाये॥
निमख निमख मन की भरमन तोड़े। भाओ भगत चरनी चित जोड़े॥
खेम कुशल मन नाम ध्याई। सच साहब की करे वडयाई॥
निर्मल कीरत ये सुखरासी। नित नित नाम जपे अबनासी॥
कारन करता देव पछानी। तिसकी आज्ञा मन तन जानी॥
आसा मनसा का रोग विनासे। निर्मल चित से नाम उपासे॥
प्रेम प्याला पल पल पीये। अनहद नाद सिमर के जीये॥
पुरख आनादी सरब परकाशा। भाओ भगत चित चरन निवासा॥
सत परतीत गवन चित नासी। साचे साहब का भयो भरवासी॥
अत विकराल पाप करम त्यागे। साध जनाँ की सेवा लागे॥
मारग धरम पाया सुखदाई। जिससे जीव की तपन बुझाई॥
आनन्ददाता पायो परमेश्वर। सरब का रखयक सो जगदीश्वर॥

**प्रभ की भगत विचारिये, सकल दोख करे नास।**
**'मंगत' प्रभ सरनागती, निर्भय कीना वास॥ 1353**

एक साहब का नाम विचार। एक साहब का पाओ आधार॥
सकल संकट हरे प्रभ देवा। निर्मल चित से करे जो सेवा॥
काम क्रोध अगन अत भारी। जल जल होवे जीव अँगारी॥
रंग रंग करम कमाये दिन राती। पाप करम की नीयत थापी॥
करम करूर देवें सन्तापा। बिन प्रभ नाम नहीं पायें ख़ुलासा॥
मिल सतसंग सतनाम विचार। मानुष जनम की खाट ये सार॥
मानुष चोला सुन्दर पाया। बन्ध मुकत का लेख लखाया॥
निज मरने का लेख नहीं जाता। मूढ़मती में नित पछताता॥
उठ संकट से जाग सवेरा। जग में पाया दुर्लभ फेरा॥
साचा वक्खर सत वनज कमाओ। साची कीरत घर में पाओ॥
नहीं ये समाँ मिले चतराई। काल गुरु सिर ताक लगाई॥
जीवत में लयो रास सम्भाल। साचा नाम सिमर किरपाल॥
जिस साहब ने किरपा कीनी। सुन्दर देह मानुष की दीनी॥

भाँत भाँत की कला बनाई। देह का कोट किया सरजाई॥
मूढ़मती तूँ मन की त्याग। तिस ठाकर की चरनी लाग॥
और मारग ना कोई उपाये। जिस बिध मनुआँ शान्त समाये॥
लाख जतन कीजे दिन रात। तो भी धीर ना पावे कमज़ात॥
सतगुर मेल सिमर सतनाम। जीवत में पावें बिसराम॥
मारग ये ही परम सुखरासी। अनमत जीव की काटे फाँसी॥

**सत सुकृत प्रभ नाम जप, मिल साध संगत परतीत।**
**'मंगत' मानुष जनम की, सुन ये निर्मल रीत॥ 1354**

साध संगत मिल सेव कमाओ। प्रभ अपने की महमाँ गाओ॥
मिथ्या जग का करो विचार। पूरन गुर के चरन पधार॥
मारग धरम खोज सत नीती। मन अपने की तजो पलीती॥
निर्मल सिखया का करो निध्यास। पाप करम की काटो फाँस॥
दुर्लभ कारज करो पछान। साध सरन पाओ कल्यान॥
अपना जीवन नित सँवार। प्रभ दाते की सेव विचार॥
साची करनी कीजो कार। मुख से कथयो सत ब्योहार॥
प्रभ अन्तरयामी संग प्रीत लगाओ। नाम सिमर के अभय पद पाओ॥
पूरन पुरख साहब दयाल। सरन पड़े को करें निहाल॥
तपन विनास करे सब जीया। अन्तरगत जिस नाम जपीया॥
साची प्रीत हिरदे में पाई। साध संगत मिल सार कमाई॥
प्रभ अपने की प्रीत विचारी। सरजनहार को नित चितारी॥
भव बन्धन से उपरस होई। एक भरोसा प्रभ चरन परोई॥
निर्मल नाम जपूँ दिन राती। पाप करम की काटूँ फाँसी॥
मन तन अन्दर शान्त समाई। साध संगत मिल शोभा पाई॥
दीनदयाल पर निश्चय पाया। सत परतीत से नाम ध्याया॥
तुच्छ जीवन का मोह त्यागा। सत सरूप में उठ के जागा॥
भरमन नास मुकत रस खाया। नित आनन्द घर दर्शन पाया॥
तृपत भये पाई अभय जागीरी। साध संगत मिल पाई सार घनेरी॥

**मारग धरम पहछान के, जीव भया परसन्न।**
**'मंगत' काटी करमगत, सिमरा नाम रतन्न॥ 1355**

नाम साहब का हिरदे ध्याई। बैठ इकान्त सेव कमाई॥
निश्चल आसन सुरती धारी। साचे नाम की रसना विचारी॥
सरजनहार सकल का स्वामी। सरब व्यापक अन्तरयामी॥
सो परमेश्वर है सुखसीरा। नित नित सिमर हरे सब पीड़ा॥
निर्मल निश्चय प्रभ चरनी राख। सतगुर बचन की रसना चाख॥
परम परीती गुर के चरना। निस्चे से रहे गुर की सरना॥
पाप करम नित ही भागे। साचे नाम में उठके जागे॥
निर्मल नाम इस बिध कमाई। बौहड़ गवन संसार ना पाई॥
होंट मुख जिभ्या को बाँधे। साचा नाम हिरदे में साँधे॥
आवत जावत पवन को देखे। नाम सिमर के मिटे भुलेखे॥
मन पवन राखे इक चीत। दुर्मत त्याग होवे पुनीत॥
पल पल ऐसी जुगत कमाये। मन पवन इक थाँ लगाये॥
नाम सिमर मन बांधे नीत। प्रान की डोरी में राखे चीत॥
मन पवन इक रूप समाई। साचे नाम की कीमत पाई॥
भरमन त्याग निज घर आया। सत ठाकर का मारग पाया॥
नाम रतन से लागी प्रीत। पल पल साधे दिशा पुनीत॥
निर्मल बुद्धी नाम कमाई। प्रान पवन में लीन समाई॥
विरत त्याग मन निर्मल होया। जनम जनम का भरमन खोया॥
सुखमन खुली शबद घर जागा। साध सीख पाई वडभागा॥

**अन्तर शबद परगट भया, साची भगती पाये।**
**'मंगत' साध की सीख से, फिर गवन नहीं आये॥ 1356**

दुर्मत रोग की औखद खाई। साचे नाम की कीरत गाई॥
अन्तर सुरत निरन्तर धारी। जाप अजपा नित विचारी॥
अष्ट-कँवल दल भया परगासा। बिमल नाद वहाँ करे बिलासा॥

वासना त्याग भयो निरवासी। साचा शबद मन माहीं उपासी॥
मन पवन की जुगती तोले। विरत त्याग मन भया अडोले॥
विज्ञान सरूप पाया परसाद। साचा नाम निरन्तर साध॥
जनम जनम की मलन विनासी। सतगुर सीख सतनाम उपासी॥
तृष्ना त्याग भया निष्कामी। पायो दरबार साचा प्रभ स्वामी॥
नित नित उस्तत चित से गाऊँ। पल पल तिसका ध्यान कमाऊँ॥
अखण्ड सुरत नित जाप जपाये। नाम की रसना पल पल खाये॥
उलटा शबद आकास गुंजारी। मारग अगम का भेद लखारी॥
सुरती चढ़ी आकाश में आये। साचे शबद का धाम लखाये॥
निर्भय नाद अन्तर नित बोले। तीन भवन का ताला खोले॥
ताँ में सुरत करे निगरानी। झिलमिल जोत दरसे निर्वानी॥
दरस पाये मन तृपत समाई। दुर्मत रोग व्याध गँवाई॥
पूरन भाग सतगुर मिलाये। अगम निगम का भेद लखाये॥
पाया भेद आया विश्वासा। प्रभ की चरनी लयो निवासा॥
संकट धारी मूरख जीया। नाम सिमर के भया तृपतीया॥
नित नित सुरती नाम उचारी। आवत जावत पवन विचारी॥

**मन सिमरे सतनाम को, नाम पवन समाये।**
**'मंगत' साची साधना, बिन गुर भेद नहीं पाये॥ 1357**

सतगुर साचा मेल मिलाया। घर में साहब निर्मल पाया॥
अपरम महमा गुर की मीता। गुर की दात भयो सुखरीता॥
तपन विनास ठाँड वरताई। सतगुर सीख पाई वडयाई॥
मिथ्या जगत का भरम भुलाया। करम रोग में आवे जाया॥
साचे नाम की जुगत लखाई। नाम ध्यान सब रोग मिटाई॥
सतगुर वैद मिला सुखकारी। जिसने मन की तपन निवारी॥
प्रभ अपने की चरनी आया। सतगुर सीख मारग सत पाया॥
अन्तर नाम ध्यान में लागा। गुर परसाद सोता जन जागा॥
इरध उरध में सुरती धारी। तीन भवन में सुन झुनकारी॥

बिमल नाद घर परगट होई। पल पल तिसमें सुरत परोई॥
मधुर मधुर बानी नित बोले। अकथ कथा अन्तर चित तोले॥
तीन ताप से पुरख न्यारा। शबद पछाना प्रभ निरधारा॥
नित ही सुरती शबद समाई। करम रोग की मिटी दुहाई॥
अखण्ड नाद बोले तिरनाली। तपन विनास पाई खुशहाली॥
साची जुगती योग कमाई। मारग सच जो गुर दिखलाई॥
कठन तपस्या की भरमन छोड़ी। सहज जुगत चित नाम में जोड़ी॥
छिन छिन नाम कमावे जीया। तृष्ना भरम से भयो तृपतीया॥
जाप जपे सब ताप निवारी। सतगुर साचे भये किरपा धारी॥
भरम त्याग सतनाम चखाया। अन्तर सिमर परम सुख पाया॥

**अन्तर नाम ध्याया, मन चित प्रीत लगाये।**
**'मंगत' निज घर जा बसे, नहीं बौहड़ गवन को पाये॥ 1358**

नित ही साचा नाम ध्याओ। सुकृत सीख सुनो सुखराओ॥
नाम जपत सब बिपता काटे। संशे शोक मिटे सन्तापे॥
भाओ भगत रसना घर पाई। मान मध की मिटी दुहाई॥
सत ठाकर की सेव कमाई। झूट जगत की सार लखाई॥
भरम भुलाया मूरख जीया। नाम विसार संकट नित लीया॥
इच्छया करम अगन अत भारी। पल पल जीव ये पाये ख़वारी॥
जल जल पड़े भोग के संगा। शान्त त्याग भरम चित रंगा॥
तीन गुनों में नित नित भरमाई। भाँतक भाँत करम कमाई॥
करम फल इच्छया में गरसाया। द्वन्द विकार में नित भरमाया॥
राग द्वेष में लीन समाई। छिन ठाण्डा छिन ताप तपाई॥
निश्चल होवे नहीं रंचक इक मीता। नाम विसार परम दुःख लीता॥
सम्पत पाये नहीं भयो धीरा। सीख नहीं माने मन बे-पीरा॥
आठ पहर नित आवे जाये। एक पलक नहीं शान्त पाये॥
छिन धरती छिन जाये आकासे। छिन छिन करे अधिक बिलासे॥
वाँग भूत नित नाच नचाये। मूरख जीव सदा दुःख पाये॥

मन शत्रु संग साँझ बनाई। दिवस रैन रहे बिपत समाई॥
सदा अधीर शान्त नहीं पाये। जो तीन लोक सम्पत घर आये॥
राजे राने मुनी दरवेश। पीर वली नित पायें कलेश॥
त्रैगुन माया ये संकट आपार। मारग ज्ञान देवे निस्तार॥

**मन की भरमन ना मिटे, जो अत सम्पत घर पाये।**
**'मंगत' बिन हरि नाम के, नित तृखा अधिकाये॥ 1359**

दुर्जन मन नित करे ख़वारी। पाप करम में नित वरतारी॥
करम करूर करे दिन राती। अपना जीवन नित करे घाती॥
ना सत सूझ ना शान्त पाई। बिपत माईं सब जनम गँवाई॥
ओड़क जग से चले निरासा। दुर्जन मन की मिटे नहीं प्यासा॥
राज तेज पाई जागीरी। दरभ ख़ज़ाना वडी अमीरी॥
पट पटम्बर नित हण्डयाई। अंग सुगंध नित लेप कराई॥
अत मानी भयो सम्पत पाये। पाप करम चित अधिक कमाये॥
ओड़क जग से चलती बारी। हाहाकार करी पुकारी॥
अजब रचना ये जग की मीता। नाम बिना सब दुःख की रीता॥
रोवत आयें रोवत जायें। चलती बार नहीं धीरज पायें॥
झूट जग में जीव ये आया। विच मुसाफ़त अत घबराया॥
अपना धाम नहीं सार पछानी। नित निहथाँवाँ हो रोये प्रानी॥
झूट थाओं तो बहु सम्भाले। महल अटारी कोट बहु घाले॥
त्याग चले ओड़क की बारी। निहथाँवाँ जीव की होई ख़वारी॥
साचा थाओं नहीं सार पछाता। मान मध में रहे मधमाता॥
झूट भरम में औध गँवाई। ओड़क जग से रोता जाई॥
चार खानी के जेते जन्त। करम चक्कर में नित भरमन्त॥
मोह माया की फाँसी धारी। सदा अशान्त रहें अंध्यारी॥
सत मारग नहीं सोझी पाई। सतधाम नहीं सार लखाई॥
ना सतसंग से करी परीती। पाप कुपथ की धारी नीती॥

**माया भरम को धार के, दियो साचा थाओं विसार।**
**'मंगत' सत विचार बिन, दुःखिया जीव आपार॥ 1360**

भरम ग़ुबार अन्तर में धारा। अपने आप का कियो उजाड़ा॥
साचा मारग दियो विसराई। माया भरम में आवे जाई॥
जतन करे जो भी सुख ताईं। ओड़क दुःख के थाओं समाईं॥
साचा सुख उठ कर विचार। साध संगत मिल लेख लखार॥
इक परमेश्वर सरजनहारा। तिसकी टेक राखो अंध्यारा॥
बिपत सरूप ये जग का खेला। अनँक पाप का रचया मेला॥
त्रास त्रास सब जीयाँ मचाई। बिन प्रभ सेव शान्त नहीं पाई॥
संकट रूप ये दुर्मत छाया। भरमे भूला जीव भुलाया॥
जुग जुग भरमे शान्त नहीं पाई। आस आस में आवे जाई॥
सुकृत मारग सुन सुखरीता। साध संगत मिल होये पुनीता॥
सत सिखया हिरदे धारी। साचे प्रभ की प्रीत विचारी॥
सरजनहारा सत कर ध्याई। अतुल एको तिसकी प्रभताई॥
साचे प्रेम में मगन समाई। निर्मल चित से कीरत गाई॥
आपामत जाये अन्धकारा। तब ये जीव भया सचयारा॥
शान्त सरूप पाया प्रभ देवा। पल पल कीनी चित से सेवा॥
आनन्द भण्डार रूप मुरारी। तिसकी सेवा सब ताप निवारी॥
खेम कुशल सत सीख लखाई। प्रभ दाते की सेव कमाई॥
सेव सेव के परसन्न होई। आसा तृष्ना भरमत खोई॥
अधिक ग़ुबार गयो संसारा। पद पंकज में जीव पधारा॥

**प्रभ के सरनी आया, ताप तपन भये दूर।**
**'मंगत' मारग मुकत का, एको नाद हज़ूर॥ 1361**

साचा वक्खर पाई सत रास। साचा नाम सिमर अबनास॥
सतगुर साध मिलाये मीत। जग जीवन पाई निर्मल रीत।॥
मिथ्या भरम मूल चुकाया। सत सरूप में निश्चय पाया॥
साचा नाम प्रीत से गाई। मनमुख जीव शान्त तब पाई॥

साध संग से ये रस खाया। नाम निरंजन अभयपद पाया॥
नित नित धूड़ी सीस रमाऊँ। साध संगत मिल रसना खाऊँ॥
पाप करम से पाई छुटकारी। साचा नाम निरन्तर धारी॥
सकल विकार चित के नासे। सत विचार इक नाम उपासे॥
दृढ़ निश्चय से नाम परोई। सत सरूप घर सोझी होई॥
सत पहचान गया परमादा। साचा नाम निरन्तर साधा॥
पल पल प्रभ को सीस निवाई। मन तन अन्दर कीरत गाई॥
नाम सिमर के भयो निहाल। करम रोग काटा भ्रम काल॥
सतगुर पूरे किरपा धारी। तब इस जीव की मिटी ख़वारी॥
भरमन त्याग सतनाम लखाया। सतगुर सीख अभयपद पाया॥
नित ही साचा नाम परोई। निर्मल जतन की सार लखोई॥
पाप करम की अगन विनासी। निश्चय चरन पाया अबनाशी॥
ठाण्ड भई चित नाम कमाया। साध संगत मिल भेद लखाया॥
रूप सराये ये जग मीता। साचा करम करो सुखरीता॥
इक दिन निश्चे चलना होई। परम्परा से ये खेल चलोई॥

**जग जीवन दिन चार है, ओड़क छार समाये।**
**'मंगत' जीवत में सिमरिये, नाम साहब सुखदाये॥ 1362**

जीवत में कीजो सत काजा। नाम सिमर प्रभ ग़रीब निवाजा॥
प्रभ दाता नित रहे दयाल। बन्धी तोड़ चित करे निहाल॥
रे मन मूढ़े सरन पछान। करम रोग से पायें कल्यान॥
अत सन्ताप जगत की प्रीत। पावें वंजोग ये साची रीत॥
ताँ सों निर्मल सिखया धार। जीवत में सत कर ब्यौहार॥
साचा नाम साहब का ध्याओ। पतत पावन की सरन समाओ॥
पाप दोख सब बिपत निवारी। प्रभ दाता नित ही दातारी॥
साचा स्वामी निश्चय चित राख। भाओ भगत कीरत को भाख॥
सकल मनोरथ पूरन करी। सत परतीत जो सरनी पड़ी॥
आनन्द सरूप मंगल का दाता। नाम सिमर तूँ पुरख बिधाता॥

सरब शकत का मानी सो ही। तिस तुल जग में देखा ना कोई॥
बने बनावे सकली बन्त। कारीगर साचा आप भगवन्त॥
जिस ने साजी सारी किरया। जल थल अन्दर जो पसरया॥
तिस चरनी तूँ निहूँ राख। सुन सतगुर की ये निर्मल साख॥
तेरी सकली बिपत निवारी। दीनदयाल परम सुखकारी॥
साची प्रीती चरन चितार। अन्तर तेरी सुने पुकार॥
जो तूँ साची प्रीत कमाई। सत ठाकर बहु आनन्द वरताई॥
कामना रोग जीव का नासी। भाओ भगत अन्तर परगासी॥
ताप तपन सब जीव का जाई। निर्मल चित से जो भये सरनाई॥

**प्रभ की सरनागत हो, तेरी बिपत करे निवार।**
**'मंगत' दीनदयाल प्रभ, नित ही किरपा धार॥ 1363**

साचा साहब सदा दातारी। सरनागत की बिपत निवारी॥
कोट जीयाँ का कियो उद्धार। पततपावन आपे करतार॥
रे मन मूढ़ा पाओ सरनाई। प्रभ अपने की सेव कमाई॥
नाम ध्यान में रहो रँगराती। दृढ़ चित सिमरो उठ परभाती॥
निर्मल नीयम हिरदे धार। दिवस रैन प्रभ सरन विचार॥
अनंक ताप से जीया छूटे। साची भगत की रसना लूटे॥
खेम कुशल पायो सत नाओं। पल पल प्रभ के चरन मनाओं॥
निर्मल करम आया विश्वास। प्रभ दाते की करी उपास॥
दुःखी जीव की सुन पुकार। सतगुर आये जगत उद्धार॥
सत मारग की सूझ लखाई। साची रसना सार चखाई॥
भय त्याग निर्भय पद दीया। सत गुर सेव ये सार लखीया॥
नाम अमीरस खाई सार। भवसिन्धु से उतरा पार॥
काल त्याग विजे भई भारी। आनन्द सरूप पाया निर्धारी॥
निर्मल शबद की सोझी होई। तिसकी महमाँ सार लखोई॥
दुबधा नासी मंगल पाया। साचा नाम साहब का गाया॥
सत सील धीरज घर पाई। साचा नाम सिमर सुखदाई॥

सकल जगत की भरमन नासी। नाम आधार पाया अबनाशी॥
पूरन पुरख कोई सार कमाई। जीवत में सतनाम लखाई॥
मन बिकराल पावे सत ठौर। नित सरनागत हो चरन हज़ूर॥

**जग जीवन का लाभ है, सत मारग की सूझ।**
**'मंगत' सत विचार ये, सकले हरे बिरोध॥ 1364**

साचा शबद हिरदे विचार। गुरमुख साजन करें पुकार॥
शबद ही मूल सरब का थामा। जल थल अन्दर पूर बिसरामा॥
तिस शबद का जानो भेद। दुर्मत रोग का नासे खेद॥
शबद सरूप अजर अबनाशी। घट घट व्यापक सरब निवासी॥
पूरन पुरख सो ही देव। निश्चल चित से कीजो सेव॥
अदभुत रचना जगत पसारा। सत शबद ही सरजनहारा॥
अपनी माया की लीला धारी। सरब के भीतर आप खिलाड़ी॥
खेले खेल रहे नित न्यारा। शबद पुरख का भेद अपारा॥
नित ही मन में सेव कमाओ। शबद सिमर के नित तृपताओ॥
आनन्द सरूप नित परिपूरा। शबद पहचान करो घर सूरा॥
कठन मुहीम ये जग की रचना। शबद ध्याये मिटे कलपना॥
नाम रूप गुन करम आकारा। दुर्मत माया का रचा पसारा॥
सत शबद जब हिरदे ध्याई। तब इस जीव का रोग सब जाई॥
माया भरम ये अधिक कलेशा। भोगे भोग काल सन्देशा॥
छूट ना पावे अत अन्धकारी। माया जाल अधिक पसारी॥
सतगुर सीख शबद तत्त ध्याई। तब ये जीव सत शान्त समाई॥
निर्भय रूप नारायन देवा। सरब परकाश सरब सुख देवा॥
नित ही मन में कीरत भाल। प्रभ दाता नित होये दयाल॥
साची कीरत प्रभ की एक। साचा नाम निरंतर लेख॥

**मिथ्या भरम ये जगत है, सत सरूप करतार।**
**'मंगत' नित नित सिमरिये, नित चरनी बलिहार॥ 1365**

पूरन पुरख की सेव कमाओ। दुर्लभ कारज जगत में पाओ॥
मिथ्याकार जगत की रचना। भरम ग़ुबार केवल है सुपना॥
ना कोई संगी ना होये सुहेला। मोह भरम का रचया मेला॥
ख़ाली आवें ख़ाली जाना। प्रभ दाते का सुन फ़रमाना॥
मोह वस होये पसरे बहुरंग। मन में धारे अनंक तुरंग॥
अनंक सयानफ़ अन्तर धारी। अनंक सम्पत करी विचारी॥
देह विनास भई दु:ख खानी। अती अस्चर्ज की करो कहानी॥
सुख कारन बहु जतन धारी। महल मण्डप बहुरंग उसारी॥
देश दिशान्त विजे लखाई। जगत नरेश नाम धराई॥
तो भी मन की तृखा ना नासी। काल चक्कर की डाली फाँसी॥
साचा मारग मुकत पछान। निर्मल शबद का करो ध्यान॥
मिटे विकार सकल दु:ख सार। मन में राख शबद प्यार॥
अत निरमल शबद की धारा। महमा शबद की अपरम आपारा॥
शबद सरूप परमेश्वर ध्याओ। साची जुगत से दर्शन पाओ॥
निर्भय धाम परम परकाशी। जाप लीजो सतनाम अबनाशी॥
अबनाशी की सेव कमाओ। मिथ्या भरम का होवे अभाओ॥
नित ही प्रेम रँगो चित माईं। शबद सरूप मिले पार गुसाईं॥
पततपावन सो शबद दयाला। तीन काल सो ही रखवाला॥
नित ही तिसकी सरन पछान। साची कथा हिरदे बखान॥

**शबद सरूप को सिमरिये, जो अजर अमर अबनास।**
**'मंगत' साची प्रीत से, होये भरम का नास॥ 1366**

मिथ्या भरम सकल संसारा। अद्भुत माया रचा चुनारा॥
मिथ्या देही आकार पछान। मिथ्या देखो तीन जहान॥
मिथ्या राजा परजा मीत। मिथ्या गुनी ज्ञान गुनीत॥
मिथ्या पंडत मिथ्या क़ाज़ी। मिथ्या आलम मिथ्या हाजी॥
मिथ्या मोह माया अभिमाना। मिथ्या जनम मरन का ताना॥
मिथ्या दाता मिथ्या भिखारी। मिथ्या गुनी मुनी विचारी॥

मिथ्या चार खानी परबाहे। माया भरम में सब दरसाये॥
मिथ्या धरनी मिथ्या आकास। मिथ्या पावक पवन बिलास॥
मिथ्या नीर भरे जो सागर। लोकालोक मिथ्या सब बावर॥
मिथ्या खेल सकल बिस्तारी। साचा साहब एक खिलाड़ी॥
सरब चक्कर संसार दिखाई। सब ही मिथ्या भरम लखाई॥
साचा शबद एको तत्त जान। कारीगर जो तीन जहान॥
तिस साचे की करो अरदास। तिस साचे की करो उपास॥
तिस साचे की प्रीती राख। तिस दाते की गाओ साख॥
तिस साचे संग कीजो मेला। भूल ना पड़यो देख जग खेला॥
आद जुगादी सो ही साच। आलख शबद पुरख निरवाच॥
तिस शबद का भेद पछानी। मिथ्याकार सब लीन समानी॥
केवल सत सरूप रहाई। दूजा भरम ना दृष्टी आई॥
मोह त्याग सत शबद विचार। साध-जनाँ की सुनो पुकार॥

**सत ही मन में सिमरिये, सत की पाइये रास।**
**'मंगत' सत परतीत से, मिटी भरम की फास॥ 1367**

शबद सरूप केवल अबनाशी। पूरन पूर करे बिलासी॥
अबगत रूप गत लखी ना जाई। शबद पुरख की अतुल वडयाई॥
जुग जुग आपे सम परकासी। घाट वाध ना पाये निरवासी॥
निरविगन निरदोख समाई। सत शबद की महमा आगाही॥
आद जुगादी रहे इक रंग। गुनी ज्ञानी कथें परसंग॥
सरब व्यापक सरब अलेपा। शबद पुरख का अचरज लेखा॥
सरब जगत का आपे आधार। अपने आप रहे निर-आधार॥
इच्छया चक्कर भरम नहीं भासी। शुद्ध सरूप आप निरवासी॥
करम रोग नहीं व्यापे अज्ञान। आनन्द सरूप आप निर्वान॥
सकल जीयाँ को सो परकाशी। चराचर भूत के माहीं निवासी॥
निर-विखाद विगन से न्यारा। आनन्द सरूप शबद निरंकारा॥
शबद को पूजें गुनी ज्ञानी। शबद में रमते बड़े ध्यानी॥
शबद योग रसना को खाई। बैठ कैलाश शिव लेख लखाई॥

ऐसा शबद आद पुरातन। सरब न्यारा सरब सनातन॥
अगोचर पुरख की कथा विचार। महमा शबद की अपरम आपार॥
सरब महमाँ का सो ही मानी। अनन्त नाम से कथो कहानी॥
नित परिपूरन आप अखण्डा। तीन काल जोती परचण्डा॥
परम परकाश सो ही अबनाशी। निर्मल चित से करो उपासी॥
साचा धाम सो साच ठिकाना। साचा शबद सिमर निर्वाना॥

**साचा शबद पहचान तूँ, मिथ्याकार त्याग।**
**'मंगत' समाँ विचार के, भरम की नींद से जाग॥ 1368**

अरबाँ आवें अरबाँ जायें। अरबाँ बहुरंग खेल खिलायें॥
अरबाँ दाने गुनी गहीर। अरबाँ साध तपी फकीर॥
अरबाँ आलिम इलम के दानी। अरबाँ पंडत वक्ते ज्ञानी॥
अरबाँ सिद्ध जंगम आचार। अरबाँ देवी देव अवतार॥
अरबाँ दिवस रैन पख मास। अरबाँ वरख करें बिलास॥
अरबाँ रवी चन्दर परगासे। अरबाँ इन्दर राज बिलासे॥
अरबाँ विष्नू अरबाँ विरंच। अरबाँ महेशर कीने संच॥
अरबाँ रिखी रिखीशर आये। अरबाँ भगत ज्ञानी गुनी राये॥
अरबाँ गुरू करें उपदेश। अरबाँ मोह माया हरें सन्देश॥
अरबाँ ग्रन्थ अरबाँ पन्था। अपरम अपार पढ़ें नित सन्था॥
अरबाँ तारा मण्डल आकास। अरबाँ पवन पानी बिलास॥
अरबाँ गुनी लेख लखायें। आलख पुरख का भेद ना पायें॥
सच तूँ सच तेरा परगास। सरब व्यापी आप अबनास॥
अचरज खेल जगत बिस्तारा। अनन्त सरूप हो किया पसारा॥
तेरी महमा अगिनत अथाये। सत ठाकर तूँ बेपरवाहे॥
साचा नाम तेरा सुखसार। नित नित चरन जाऊँ बलिहार॥
तेरी महमाँ जो जन गाई। तेरे रूप में जाये समाई॥
सरब सरूप तू आपे आप। सरब जीयाँ में रिह्या व्याप॥
सम परकाश अखण्ड अनूप। आद जुगादी एक सरूप॥

**अचरज रचना जगत की, अलेख अभेद अपार।**
**'मंगत' गिनती ना आवे, जुग जुग करूँ शुमार॥1369**

अनन्त सरूप तू ही बिसमाद। सरब स्वामी पुरख आनाद॥
सकल जगत माया का खेल। मिथ्या भरम दृष्टि का मेल॥
केवल तूँ ही आपे आप। जल थल अन्दर तूँ व्याप॥
देवी देव का तूँ आधार। गुनी ज्ञानी तेरा पासार॥
धरमी करमी पाप के वादी। सब में विचरें पुरख अगाधी॥
दाते दाने गुनी सयाने। सब में विचरें तूँ भगवाने॥
तेरा सरब माहीं चमकारा। नाद सरूप तूँ अपरम आपारा॥
अपने आप आपे परगास। अजर अमर पुरख अबनास॥
घट घट व्यापक अन्तर ज्ञाता। पूरन पुरख तूँ ही बिधाता॥
अण्डज पिण्डज सेतज धारी। उद्भिज रचना बहु भाँत विस्तारी॥
बिस्माद सरूप तेरा परसंग। सब में विचरें तूँ इक रंग॥
अपने आप में पूरन आप। सरब व्यापक अत परताप॥
अत तेज आप ही धारी। अपने बल से आप बलकारी॥
अपनी महमाँ आप परगासी। नाद सरूप अखण्ड अबनाशी॥
अपरम ज्ञान अपरम ध्यान। अपरम जाप अपरम परमान॥
अपरम आपार नहीं पाइये भेद। गावें सिद्ध रिखीशर वेद॥
घट घट में तेरा पासारा। पूरन पुरख तूँ ही भरतारा॥
तेरा रंचक भेद ना जानी। कथ कथ थाके बड़े ज्ञानी॥
चेतन शकत ज्ञान सरूप। अखण्ड नाद तत्त्व अनूप॥

**अबगत रूप तूँ पसरया, अन्त नहीं पारावार।**
**'मंगत' नित बलिहार जाँ, तेरा देख पासार॥1370**

पूरन पुरख जाऊँ बलिहारी। किरपासिन्ध तूँ ही बनवारी॥
सरब जीयाँ का तूँ ही दाता। अनंत शकत तूँ ही समराथा॥
तेरी महमा अपरम आपार। तूँ ही सरब जीयाँ आधार॥

तूँ ही पसरें सरब के माईं। सरब न्यारा तूँ ही गुसाईं॥
देवी देव पूजें तुध एक। अबगत साहब तेरा है लेख॥
सरब जगत तेरा परताप। तेरी महमाँ हरे सन्ताप॥
तेरा सिमरन केवल मूल। तेरी शोभा पलक नहीं भूल॥
तूँ ही पूरन का पूर। नाद सरूप तूँ ही हज़ूर॥
तृन तृन तेरी शोभा गाये। तेरी महमाँ आपार अथाये॥
जुग जुग जोगी धरें ध्यान। जुग जुग ज्ञानी करें बखान॥
नहीं लखया जाई तेरा पासारा। अपरम आपार पुरख निर्धारा॥
भाओ भगत कर सेव कमाऊँ। पल पल तेरा नाम ध्याऊँ॥
माँगूँ दात ये ही दातार। पलक ना विसरें तूँ सरजनहार॥
नित ही कीरत तेरी चित गाये। अन्तर प्रीत दीजो प्रभ राये॥
शुद्ध सरूप करो परगास। भरम अन्धकार का होये विनास॥
माया भरम जाये दुःख सार। सिमरूँ नाम पाऊँ जयकार॥
तूँ दाता अनखुट भण्डारी। दीजो शोभा चरन आपारी॥
दूजा भाओ चित का विसराये। एको रूप तेरा दरसाये॥
नीर तरंग ज्यों मेल मिलाई। एह बिध पावाँ तेरी सरनाई॥

**पारब्रह्म परमेश्वर, घट घट जाननहार।**
**'मंगत' माँगे रसना, सत सरूप आपार॥ 1371**

तूँ परमेश्वर तूँ सरजनहारा। तूँ ही साखी पार मुरारा॥
तूँ ही किरपाल तूँ दयाल। तीन काल तूँ ही रछपाल॥
तूँ बिशम्भर पार स्वामी। घट घट का तूँ ही गामी॥
उस्तत आपार नहीं गिन्ती लेख। सरब जीयाँ में तेरा भेख॥
तेरी सरन तेरा विचार। पाऊँ निर्मल धरम आधार॥
तूँ दाता अत दातारी। पल पल तूँ ही किरपाधारी॥
सरब जीयाँ उद्धारनहारा। पततपावन तूँ ही करतारा॥
नित सरनागत पुरख जगदीशा। तूँ ही सरब जगत का ईशा॥
निमख निमख तेरा नाम पुकारूँ। जल थल माईं तोहे निहारूँ॥

अखण्ड प्रीती पाऊँ तेरे चरना। तूँ दीनदयाल हूँ तेरी सरना॥
औगन नास बुद्धी परगासो। परम समरथ पुरख निर्वासो॥
नित ही तेरा ध्यान कमाऊँ। अन्तर चित कीरत तेरी गाऊँ॥
सुन्न कपाट पाऊँ सत थाओं। परतख तेरा रूप मनाऊँ॥
झिलमिलकार जोत निर्वानी। अन्तर हो के करूँ पछानी॥
झुनत झुनत अनहद किलकार। घट अन्तर में करूँ विचार॥
तुध को सिमरूँ तुध माहीं समाऊँ। पूरन पूर तोहे लखाऊँ॥
अखण्ड नाद अत प्रेम सरूप। जुगाजुगन्तर बसे अनूप॥
साध सरन पाऊँ सुखसार। करूँ नमस्तं बारम्बार॥
तेरी दात मन तन समाये। दीन ग़रीबी दीजो प्रभ राये॥

**सरब स्वामी पार बिसरामी, अखण्ड सरूप बिसमाद।**
**'मंगत' कीजे बन्दना, तूँ सत सरूप सत नाद॥ 1372**

जग जीवन ये सार निधान। नाद सरूप सिमर निर्वान॥
जग जीवन ये सम्पत धार। नाद सरूप सिमर भरतार॥
परम ज्ञान कथो सत लेख। नाद सरूप सिमर नित एक॥
परम ध्यान में रहो दिन रात। नाद सरूप में मगन समात॥
साची भगती कीरत सत जान। अन्तरगत सत नाद पछान॥
साची जुगती योग कमाओ। आलख नाद घट माहीं ध्याओ॥
निर्मल तीरथ करो पछान। नाद सरूप सरब कल्यान॥
निर्मल प्रेम धारो नित चीत। नाद सरूप का गायो गीत॥
सत ठाकर को हिये पछान। नाद सरूप पुरख निर्वान॥
साची कथा कथो परसंग। नाद सरूप पुरख निहसंग॥
साची पूजा साची अरदास। नाद सरूप का पाओ विश्वास॥
निर्मल आरती घट अन्तर कीजो। नाद सरूप की रसना पीजो॥
पूरन पुरख सरब समायें। नाद सरूप देखो घट मायें॥
अत बिसमाद अतुल परमानी। नाद सरूप की कथो कहानी॥
ज्ञान विज्ञान खोज विचार। नाद सरूप जप बारम्बार॥
अखण्ड परीती राखो एक। नाद सरूप की राखो टेक॥

उस्तत कीजो मन चित माहीं। नाद सरूप प्रभ पार गोसाईं॥
नित नित सिमरो निर्मल चीत। नाद सरूप की लख परतीत॥
भय भरम सब बन्धन नासी। नाद सरूप सिमर अबनाशी॥

**एको नाद को सिमरिये, मन चित प्रीत लगाये।**
**'मंगत' भगती सार ये, सब जीव के ताप मिटाये॥1373**

पार स्वामी सतनाम घ्याओ। नाद सरूप की महमा गाओ॥
अखण्ड जाप जपो दिन रात। नाद सरूप का लख परताप॥
बन्ध ख़ुलासी जीव की होये। नाद ज्ञान जो हिये परोये॥
दुर्मत रोग नासे सब छाया। नाद सरूप सिमर प्रभराया॥
करम वासना भरमन जाई। नाद सरूप सिमर सुखदाई॥
भय भरम नहीं व्यापे काला। नाद सरूप सिमर उजयाला॥
जनम मरन का ताप विनासी। नाद सरूप जब घट परगासी॥
राग द्वेष चित जाये रोग। नाद सरूप का पाओ संजोग॥
करमफल इच्छया जाये ममता। नाद सरूप खोजो तत्त समता॥
मन की भरमन शान्त होये। नाद सरूप जो हिये परोये॥
दृढ़ विश्वास पावे सुखदाई। नाद सरूप का लेख लखाई॥
अनन्त नाम महमा है नाद। नाद सरूप आप बिस्माद॥
अनाम सरूप सरब से न्यार। नाद सरूप सिमर निरंकार॥
साची प्रीती से कर सेव। नाद सरूप देवन का देव॥
सब सम्पत का सो दातारी। नाद सरूप प्रभ किरपाधारी॥
सरब ज्ञान का सो ही आधार। नाद सरूप जपो निर्धार॥
अपरम महमाँ परोयो चीत। नाद सरूप की कथा पुनीत॥
संशय शोक रहे ना काई। जो घट पावे नाद प्रभताई॥
नित आनन्द परापत पाई। जो चित में सत नाद ध्याई॥

**आलख अपार अगोचर बानी, घट में करो पछान।**
**'मंगत' सतगुर सीख से, पाओ नाद ध्यान॥1374**

अन्तर ध्याओ प्रभ सुखरासी। नाद सरूप अजर अबनासी॥
दु:ख रोग नहीं व्यापे काला। नाद सरूप जो जपे दयाला॥
पाप कूप से पाये ख़ुलासी। नाद सरूप जपो अबनासी॥
संकटमोचन नित सुखदाता। नाद सरूप जप पार बिधाता॥
सत सम्पत जग लयो कमाये। सत ठाकर लयो नाद ध्याये॥
उट्ठत बैठत करो विचार। नाद पुरख की कथा आपार॥
सोवत जागत पल पल चेत। नाद सरूप आलख अलेप॥
निमख निमख में शोभा विचार। नाद सरूप की आज्ञा धार॥
जो होनी सो जान परमान। नाद सरूप का अटल फ़रमान॥
सो परमेश्वर सो सुखदाता। अनहद नाद पद पार ज्ञाता॥
ऊँच से ऊँची साहब वडयाई। नाद सरूप आलख अगाई॥
नित नित ध्याओ अपरम धामा। नाद सरूप सरब बिसरामा॥
माया बन्धन सहज होये दूर। नाद सरूप प्रभ जपो हज़ूर॥
सिमरो नाम कीरत सत भाल। नाद ध्यान चित करे निहाल॥
परम शकत सरब का साखी। नाद सरूप लयो रसना चाखी॥
अत बिसमाद अगोचर देव। नाद सरूप की कीजो सेव॥
भगती जुगती योग विचार। नाद ध्यान केवल है सार॥
बन्ध ख़ुलासी सो ही जन पाये। तीन भवन सत नाद ध्याये॥
जय जयकार पाई सुखरीत। नाद सिमर के लयो जग जीत॥

**अन्तरगत तत्त सूझया, चेतन भान परगास।**
**'मंगत' निर्मल ध्यान से, कटी भरम की फास॥1375**

अन्तर शबद भया परगासा। सत साजन कीजे अरदासा॥
सत ठाकर अन्तरगत पाया। पूर मनोरथ शान्त समाया॥
सरब स्वामी अन्तर देखा। नाद सरूप आलख अलेखा॥
अन्तर सुरत सुन्न समाई। बजे बजन्तर नाद आगाही॥
सिद्धाँ मुनियाँ मंगल गाया। सत ठाकर मन माहीं मनाया॥
कीरत सूझी अन्तर घाट। नाद सरूप की पाई साट॥

सरब जीयाँ आधार स्वामी। शबद सरूप अगोचर अगामी॥
अन्तर ध्यान करो गुनि मीत। नाद ध्याओ निर्मल चीत॥
उलट दृष्टी अन्तर पेख। तीन भवन में रचना देख॥
सत ठाकर घर परगट पाई। अन्तर सुन्न ध्यान लगाई॥
करम वासना सकली नासी। निर्भय नाद जोत परगासी॥
बाजी किंगरी घट निर्वान। निश्चल पाया नाद ध्यान॥
बिपत नास शबद घर ध्याई। सुन्न समाध अमीरस खाई॥
उदे अस्त का भेद मिटाया। नित परकाश नाद ध्याया॥
आप बोले अचरज बोल। आपे स्वामी आप अतोल॥
आपे कथे अकथ ज्ञान। नाद सरूप जोत निर्वान॥
आपे पसरे सरब के बीच। नाद सरूप पुरख सुख सींच॥
अन्तर सुरती मेल मिलाये। साचा ठाकर घर में पाये॥
गरजे नाद जोत परगासे। निहचल मनुआँ करे निवासे॥

**अन्तर सुरती खैंच के, सुन्न में धरे ध्यान।**
**'मंगत' परगट पाइये, अबगत नाद की तान॥ 1376**

नाद सरूप का कीजो जाप। बिनसे रोग पायें परताप॥
मन पवन इक सूत परोई। साचे नाम में रह्यो समोई॥
अखण्ड जाप जपो दिन रात। पाओ निर्मल शबद की वाट॥
उल्टी सुरती अन्तर धार। नाम सिमर साचा करतार॥
पल पल आज्ञा कर पहचान। कारन करता जप भगवान॥
गगन मण्डल में सुरती धार। अनहद नाद सुनो झुनकार॥
पंज शबद मिल उपजे तान। जो बूझे सो सन्त सुजान॥
धाराकार माया भ्रम टूटा। अमरत कूआँ घर में फूटा॥
सुरत निरत दोहू पनिहारी। नित नित खावें अमृत सारी॥
दामन दमके अन्तर घाट। परगट जोत देख ललाट॥
कोट रवी सम चानन देख। नाद सरूप का लख तूँ लेख॥
अपरम अपार होवे गुंजार। निर्मल सुरती अन्तर धार॥
करम वासना दूषना नासी। परगट पायो नाद अबनासी॥

संतन धूड़ी सीस रमाई। नाद सरूप अभय गत पाई॥
जग आवन भये सुफला कारा। नाद सरूप पाया निरंकारा॥
साची कीरत रसना सच पाई। जग धरता प्रभ लयो ध्याई॥
मन पवन बुद्ध निहचल होई। बिसमाद नाद घट लेख लखोई॥
सचखण्ड धाम में वास करीना। नाद सरूप आप को चीना॥
भेद भरम दुबधा भयो नासा। निज सरूप नाद परगासा॥

**आनन्द अन्तर परसया, आनन्द पाई सार।**
**'मंगत' दुर्मत मिट गई, सरब आनन्द बिस्तार॥ 1377**

## सन्देश

बानी ये अगम की , आलख पुरख का लेख।
जो साधे नित प्रेम से , पाये शबद का भेख॥
शबद अगोचर शबद अखण्डा , शबद जीवन की सार।
अन्तर बाहर सेव कमावे , गुरमुख पाये निस्तार॥
साचा ठाकर सरब स्वामी , आलख शबद पुनीत।
रल मिल संगत गाइये , नित सतपुरख का गीत॥
सकल मनोरथ पूरन पाये , प्रभ साखी चित गाई।
निर्मल मनुआँ काया कंचन , सत शबद कथा अर्थाई॥

**दुबधा दुर्मत सब मिटी , अन्तर चानन होये।**
**'मंगत' नित आनन्द में , तत्त नाद की मनी परोये॥1 3 7 8**

पहला भाग निर्वान सिद्धि समाप्त हुआ
मंगलवार १७ मघर समत १९९८ बिक्रमी
शुभ अस्थान शमशान भूमि थट्टा ज़िला कैमलपुर

समता अपार शक्ति

ब्रह्म सत्यम् सर्व आधार

## दूसरा भाग-विजयमंगल

विजय पाई सत शबद लखाया , ताप तपन सब नासे।
घट घट मंगल परगट पाया , प्रभ चरन कँवल अरदासे॥

अबगत पुरख नाद घर बोले , नित बजे बजन्तर भारी।
सुध बुद्ध सकल गई मन ममता , घर अगम जोत उजियारी॥
नित नित रसना गुरमुख पीवे , सतनाम की चढ़ी ख़ुमारी।
अन्तर माहीं अन्तरगत पावें , मिल अजर पुरष निर्धारी॥
सकल विकार से निर्मल हूआ , घर धार शबद की ध्याई।
आवागवन का संशय नास्यो , आयो प्रभ सरनाई॥
निर्मल कीरत गाई प्रभ की , चित शान्त परापत होई।
पल पल साचे नाम की महमा , प्रेम की तार परोई॥
अन्तर गुफा में चानन पाया , भरम अन्धकार विनासा।
चंचल मनुआँ लीन भयो , प्रभ चरनी कियो निवासा॥
साचा ठाकर घर में दिखलाया , होई मुशक़्क़त पूरी।
सतगुर सेव फल अमरत चाखा , पूरन पाई मज़दूरी॥
प्रेम की रसना अन्तर चित पाई , काल करम गई फाँसी।
पार पुरख परमेश्वर पाया , शबद रूप अबनासी॥
तन मन निर्मल पल में होया , घट अन्तर कियो अशनाना।
गंग जमन सरस्ती का मारग , राज परयाग पछाना॥
मान सरोवर हंस पधारे , नित नीर छीर निरनाई।
निस दिन चोग प्रेम का चुग के , सब तन की जलन मिटाई॥
निर्भय होके वास घर पाया , आवागवन दुःख नासी।
अनहद नाद पुरख निर्वानी , घट अन्तर भयो परगासी॥
सुन सत मीता ये रमज़ निराली , घर विच घर को पाया।
आलख आपार सरब का स्वामी , शबद पुरख दरसाया॥
शबद में सुरती लीन समाई , दुर्मत जाल विनासी।
उनमुन घाटी आन पधारे , दरस पायो अबनासी॥
बहुरंग निरत होवे घर भीतर , सुरती मगन समाई।
अनहद नाद पाया घर स्वामी , कोई विरला भेद लखाई॥
निर्भय देश को गुरमुख चाले , तन मन आस त्यागी।
एक बिरह प्रभ चरन की अन्तर , नाम जपे वडभागी॥

निमख निमख कर मारग काटे , प्रन राखे नित पूरा।
सतगुर चरन की सेव कमावे , पद परसे सो सूरा॥
अजर अमर शबद परगासे , घट घट शान्त समाई।
तृप्त भयो तब अनमत जीया , सतनाम कथा अर्थाई॥
परमारथ तत्त परगट पाया , सब स्वारथ दोख विनासे।
सरब सरूप शबद पहचाना , जो घट घट करे बिलासे॥
पाँच तत का खेद सब हरया , दुःख द्वन्द भये लीन।
अन्तर निश्चल ध्यान में , सार शबद नित चीन॥
**अमरत खा के अमरपद पाया , काल भय सब नासा।**
**'मंगत' कथा सत शबद लखाई , घट परसयो प्रभ अबनासा॥1379**
साचा नाम सिमर निरन्तर , पाप करम दुःख जाये।
नित नित आवे मन विश्वासा , प्रभ चरनी अधिकाये॥
गरब ग़ुबार जाये देह ममता , चित दीन ग़रीबी पाये।
सुकृत जीवन भयो जग माहीं , नित साची सेव कमाये॥
मन के औगन नित ही धोये , आपामती निवारी।
सत ठाकर की सेव कमाई , सत निरना चित धारी॥
मिथ्या भरम जीव का नासे , सत शरधा चित पाये।
निमख निमख सतनाम विचारे , दुस्तर जग तर जाये॥
साचा वनज वक्खर ये साचा , चित साची सेव पहचानी।
अमरत नाम साहब का गाया , मिटी भरम दुःख खानी॥
सरजनहार को अन्तर ध्याया , सत आज्ञा नित मानी।
मनमुख भरम ग़ुबार विनासा , नित प्रभ की सरन पहचानी॥
आवन जावन ये सब रचना , पल पल रूप विटाई।
साचा नाम इस्थिर पहचाना , जो तीन काल सम रहाई॥
इस सागर में जो नर आया , सो ही भरम भुलाई।
अचरज लीला देख जगत की , वार पार नहीं पाई॥
नित ही आसा तृष्ना लागी , झूट धार भरवासे।
रंग रंग भोग करे दिन राती , ओड़क जाये निरासे॥

राजे राने दाते दाने , सब भरम चक्कर फिरायें।
अनंक जतन कर सब ही हारे , पलक छूट नहीं पायें॥
उठ उठ धावें भरम के मायें , बहु बिध सम्पत धारी।
अन्तकाल सब त्याग चले , नहीं रंचक संग पधारी॥
देख देख के सूझ नहीं पावे , मूढ़मती भरमाए।
साची रास घाल नहीं कीनी , जो नित ही सुख दिखलाए॥
काम क्रोध की तीखन घाटी , कोई पार नहीं पाई।
गुनी मुनी जतन कर थाके , ये माया नित भरमाई॥
सत भरवासा प्रभ चरन का , जिस जन हिरदे पाया।
त्रैगुन माया खेद विनासा , नित शान्त सरूप समाया॥
झूट विखेपत त्याग करो , नित मारग शान्त पहचान।
बाज़ी कठन कराल जगत की , सब को करे हैरान॥
नित ही सत पुरषारथ राखो , शबद की सार कमाओ।
साध संगत मिल नाम को सिमरो , निर्मल दाओ लगाओ॥
एक परीती प्रभ की ध्याओ , दूजा भरम निवारो।
सत शरधा से मारग सोधो , पाओ शबद आधारो॥
खेम कुशल घर ठाकर पाओ , अन्धकार सब नासी।
नित आनन्द पार पुरखोत्तम , घट में भयो परगासी॥
निर्भय धाम परापत पाया , अखल निरंजन देवा।
निर्मल चित से शोभा गाई , सुकृत पाई सेवा॥
**साचा नाम अन्तर परगासा , जीव भयो कलयाना।**
**'मंगत' शान्त सरूप पछाता , अखण्ड शबद निर्वाना॥1380**
सत शबद अन्तर परगासा , खोज करो नित नीत।
चिन्ह वरन से रहे न्यारा , अबगत शबद पुनीत॥
सो ही देव सो ही सुखदाता , सो ही सरब आधार।
सरब जीयाँ में सम परगासा , अखण्ड जोत निरंकार॥
नित ही तिस को पूजिये , नित करिये अरदास।

सरब कला समरथ स्वामी, करे भरम दुःख नास॥
सबकी बनत बनावनहारा, अन्तरयामी देवा।
साध संगत मिल शोभा गाओ, सत कीरत सत सेवा॥
पूरन पुरख सो ही परमेश्वर, तीन काल सुखरासी।
सरब-व्यापक सरब न्यारा, नाद सरूप अबनासी॥
नित ही महमा तिस की गाओ, मन चित प्रीत लगाये।
सकल मनोरथ पूरन होवें, घट आनन्द मंगल पाये॥
माया दुस्तर अत ही भारी, सब जग भरम भुलाई।
सत सरूप जिन अन्तर ध्याया, तिन जन विजय लखाई॥
मनुआँ शान्त बुद्ध निर्मल होई, नाम अमीरस खाये।
दृढ़ निश्चय प्रभ शरन पहचानी, दुर्मत रोग मिटाये॥
जीवन रूप सो ही प्रभ देवा, सबको नित परगासी।
भाओ भगत नित सेव कमाओ, सब बन्धन होये ख़ुलासी॥
नाम ध्यान मन मगन समाये, कोट जनम दुःख नासे।
शबद सरूप प्रभ परगट पाया, आनन्द में लीना वासे॥
तृपत भयो ये जीव अंजाना, सार अर्थ घट पाई।
नाम रसायन रसना चाखी, निर्भय धाम समाई॥
बिमल शबद घट माहीं परगासे, सहज सुरत सुख जाता।
आदी पुरख नारायन पाया, मन तन भयो रँगराता॥
नित ही शबद गगन में बोले, अमीरस चोवे भारी।
सुरत निरत इक तार परोई, सब करम भरम गई ख़वारी॥
निश्चल बुद्ध शबद में होई, सब संशे लीन समाये।
साध की सेवा अमरपद दीया, परम पुरख प्रभ राये॥
ज्ञान ध्यान की रसना चाखी, मर जीवत धाम को पाया।
अखण्ड नाद सरब का ठाकर, घट घट में दरसाया॥
दुबधा दुर्मत दूर भई सब, मन पायो बिसरामा।
दीनदयाल शबद तत्त पाया, विरत भई निष्कामा॥
अपने धाम में जाये समाया, जाँ दुर्मत भेद ना काई।

नित आनन्द सरब गत पूरा , साखी शबद लखाई ॥
ग्रन्थ कतेब पुकार करें , नित महमा अपरम आपारी ।
सो परमेश्वर परगट पाया , अखण्ड नाद निर्धारी ॥
नित ही चरनी सीस निवाओ , चित साची सेव कमाओ ।
निर्भय धाम शबद रस पीयो , भव दुस्तर तर जाओ ॥
**करो कमाई निर्मल मीता , सत सरूप नित ध्याई ।**
**'मंगत' अचरज धाम समावें , जो कहन कथन नहीं जाई ॥1381**
साचे नाम की साखी गाओ , मन चित आवे धीर ।
भाओ भगत नित सेव कमाओ , हरे भरम तक़सीर ॥
दीनदयाल सदा किरपालू , नित ही सरन पहचान ।
जुगजुग महमा हरजन गावें , पार पुरख भगवान ॥
राख ओट दृढ़ विश्वासा , साखी सरजनहार ।
बिपत हरे मंगल को देवे , प्रभ दाता दातार ॥
जग जीवन का फल ये मीता , जो नाम रतन चित आवे ।
जनम मरन का मिटे बखेड़ा , जीव परमपद पावे ॥
साची संगत सेव विचारो , साचा नाम ध्याओ ।
परमारथ की रसना खा के , नित ही तृपत समाओ ॥
काल सरूप जगत की रचना , छिन छिन नाश को पाई ।
अबनाशी नाम सिमर भगवन्ता , जो सब ताप मिटाई ॥
पततपावन सो प्रभ देवा , संकट सकल निवारे ।
सत परतीत जो मन में राखे , नित ही सरन पधारे ॥
औगन दोख सब लीन समावें , जो निर्भय शबद ध्याई ।
कथा परातन ये है मीता , प्रभ सिमरन सब ताप मिटाई ॥
नित सरनागत हो तूँ गुनिया , राख पूरन भरवासा ।
दीनदयाल नित किरपाधारी , सब जीव की हरे तरासा ॥
अन्तर नाम प्रभ का नित गाओ , सत सेवा तन धारी ।
अनंक विगन से राख लेवे , प्रभ पूरन पार मुरारी ॥

अखण्ड ध्यान राखो नित चरना , मन की छोड़ चतुराई ।
साची भगत परापत होवे , सब जीव की तपन बुझाई ॥
अनमत जीव की भरमन नासे , इक नाम की कीरत गाये ।
निर्मल प्रीत मिले सुखरासी , प्रभ परगट घर दिखलाये ॥
अन्तर सुरत शबद को सिमरे , भेद भरम दुःख नासी ।
जल थल पूरन नज़री आवे , एक साहब अबनासी ॥
द्वैत भरम सब जीव का हरया , नाम महमा जब ध्याई ।
पूरन पुरख घर परगट होये , अखण्ड शान्त लखाई ॥
सुरती रुच रुच प्रीत कमावे , छाड जगत की लाजा ।
दीनदयाल की सेवा करके , हरयो काल विखादा ॥
शान्त समाया शबद लखाया , निर्भय नाम पछानी ।
अन्तर बाहर एक ध्याया , परम पुरख निर्वानी ॥
जाँ से आया ताँ लीन समाया , मारग सुकृत जाता ।
दिवस रैन सत प्रीत कमाई , आदी पुरख बिधाता ॥
नाम का भोजन अत तृप्ताई , तृष्ना दोख निवारी ।
नित नित खावे हरजन साचा , जिस निर्मल सीख विचारी ॥
एक आधार पाया चित अन्तर , साचा ठाकर जोई ।
पल पल तिसकी शोभा पाई , अबगत नाम परोई ॥
**नाम में जीवन हरजन पाया , नाम ही रास कमाई ।**
**'मंगत' दुर्लभ गुरमुख आये , जिन प्रभ की कीरत गाई ॥1382**
मानुष चोला दुर्लभ जग में , खोज मारग सुखरासी ।
बिना जतन नहीं कोई पावे , साचा नाम अबनासी ॥
जाँ देखाँ ताँ अजब तमाशा , झूट फुली फुलवाड़ी ।
देख देख के हँसी आवे , तेरी क़ुदरत न्यारी ॥
सरब के अन्तर आप समाया , निरविगन प्रभ देवा ।
मूरख जन्त सूझ नहीं पावें , भरम की कीजें सेवा ॥
प्रभ दरगाह में लेखा एको , करनी का निबेड़ा ।

जैसी करनी तैसी भरनी , मिटे नहीं जीव बखेड़ा॥
चतर बुद्ध तूँ नित ही धारें , पाप करम के ताईं ।
अन्त की बारी संकट पावें , होवे सखा कोई नाईं॥
निर्मल जीवन धारन कीजो , परहित पर-की सेवा ।
साचा नाम साहब का गाओ , मिटे भरम का भेवा॥
सतगुर सिखया अन्तर धारो , बन्ध ख़ुलासी होये ।
जनम मरन का संकट नासे , निर्भय धाम बसोये॥
करनी वाले दुर्लभ आये , जिन साची प्रीत कमाई ।
सरब जीयाँ की सेवा करके , प्रभ का हुकम मनाई॥
घना आनन्द परापत पाया , सबको सुख वरताई ।
दीनदयाल की आज्ञा मानी , मारग धरम लखाई॥
अपने सुख को नित वरताया , परदुःख सीस धराई ।
पूर मनोरथ तिनके होये , जिन इस बिध सार कमाई॥
पाप करम से मन को ठाको , सबका हेत पछान ।
सरब जीयाँ में एक समाया , पूरन प्रभ निर्वान॥
धारो जतन ये ही सुखदाई , मारग प्रेम लखाओ ।
सरब जीयाँ की सेवा करके , भव दुस्तर तर जाओ॥
करम की फाँसी अत गहरी मीता , जनम जनम भरमाई ।
बिना ज्ञान नहीं धीरज आवे , बहुरंग भोग भोगाई॥
साचा ज्ञान ये ही सुखरासी , प्रभ भावी चित लाओ ।
सरजनहार को सत कर पूजो , सब तिसकी दात लखाओ॥
**समाँ अमोलक जावे पल पल , अन्त की रास सम्भाल ।**
**'मंगत' जीवत धरम कमाओ , सब बन्धी छूटे जाल॥1383**
तूँ बेअन्त परमेश्वर मेरा , नित जाऊँ बलिहार ।
अचरज कौतक जगत का रचया , सत क़ादर करतार॥
क़ुदरत देखी तेरी क़ादर , जल थल तूँ भरपूर ।
देख देख तृपत चित भया , मनसा भई काफ़ूर॥

अन्तर सब के परगट स्वामी , नहीं रूप वरन आकारा ।
जाँ पर किरपा तेरी होवे , सो सिमरे सचियारा ॥
नदियाँ नीर चले असगाह , अत ही वेग को धारी ।
कोट वरख ये खेल खेलन्ता , तूँ साहब बनवारी ॥
घाट ना पावे महमा तेरी , सत ठाकर सुखदेवा ।
जल थल अन्तर पूर समाया , तूँ देवन का देवा ॥
तपन बुझावें शीतल करें , रूप धार उपकारी ।
एह बिध जीवन जग में पावें , ज्यों नदी नीर वरतारी ॥
अपना आप त्याग करें तूँ , पर सुख देवन ताईं ।
धूड़ रमावें जगत की , तब परसे सुख थाईं ॥
सेवक रूप हो बिचरें जग में , सबका हेत लखायें ।
तीरथ रूप तूँ ही जग आया , सब ही सेव कमायें ॥
पलक घड़ी का खेल है मीता , खोज जीवन सुखरासी ।
पर-उपकार मारग को सोधो , सब भरमन मिटे चौरासी ॥
सतगुर सेव साध की संगत , साचा नाम विचारो ।
तन मन धन तीनों को अरपो , पर-की सेवा धारो ॥
औगनकारी मनुआँ धोयो , निमख निमख पल सार ।
परमारथ परतीत में , तन मन दीजो वार ॥
मानुष जनम अमोलक जग में , नित खोजो कल्यान ।
अन्तकाल सब भये विछोड़ा , जब होवें धूड़ समान ॥
उट्ठत बैठत भज गोबिन्दा , सत शरधा चित लाये ।
निर्मल उद्दम ये जग माहीं , सन्त वेद बतलाये ॥
पर-उपकार तीरथ को परसो , प्रेम नीर से नहाई ।
जनम जनम की तपन विनासे , मारग गुर दिखलाई ॥
**साचा तीरथ पर-की सेवा , निष्काम भाओ चित धारी ।**
**'मंगत' जिस जन जुगत कमाई , तिस चरन बलिहारी ॥1384**
अमरत नाम खोज सुखरासी , मन तन शान्त समाई ।
सत ठाकर की कीरत गाओ , सत करनी ये अधिकाई ॥

निस दिन मारग धरम पहचानो , प्रभ चरन चित सेवा ।
पर-उपकार की रसना चाखो , हरखत भये सत देवा ॥
भय को हरे मंगल को देवे , जो सतगुर सीख विचारे ।
सत सरूप मिले विश्वासा , सतनाम की रसना धारे ॥
सत सेवा हिरदे में राखो , सतसंग में करो परीती ।
सत विचार जतन सत धारो , ये मारग मुकत की नीती ॥
मन की कल्पना सकल निवारो , प्रभ आज्ञा चित धार ।
आहार ब्योहार करो नित निर्मल , अन्तर नाम विचार ॥
जनम जनम के संसे जायें , प्रभ भगती सार लखाये ।
अनेक बिपत से जीवन छूटे , प्रभ चरनी मेल मिलाये ॥
दुर्मत भरम जाये अन्धकारा , सत शबद घट जानी ।
एक बिरह प्रभ चरन की पाई , काल करम भई हानी ॥
निर्मल चित पाया घट चानन , अज अबनाशी नाथा ।
अनहद नाद घर परगट ध्याया , पूरन लेख पछाता ॥
गुरमुख मारग ज्ञान पछाता , घट अन्तर लीन समाई ।
सुकृत जीवन जग में पाया , सिमर साहब प्रभताई ॥
मन तन अन्दर भई खुशहाली , ब्रह्म जोत परगास ।
अन्तर मनुआँ लीन समाया , मिटी भरम की प्यास ॥
मारग सहज शबद परगासा , नित सुरती प्रीत कमाये ।
अन्तर माहीं सतनाम विचारे , सकल विखाद मिटाये ॥
रैन दिवस इक प्रभ संग प्रीती , अन्तर ध्यान लगाई ।
जाप अजपा घट में जापे , सतगुर भये सरनाई ॥
त्रैगुन माया भरम विनासे , मनुआँ शान्त समाये ।
निर्भय नाद गगन में बोले , कोई गुरमुख लेख लखाये ॥
पाँच पचीस गावें मिल मंगल , अन्तर निरत कमाई ।
जग का सरजनहार पछाता , मिल साध संगत गत पाई ॥

**पूरन पुरख पाया अबनासी , घट अन्तर सार लखाई ।**
**'मंगत' दुर्लभ जन आया , जिस प्रभ की कीरत गाई ॥1385**

भव मारग अत कठन है , पकड़ो शबद की टेक ।
निस दिन पन्ध को काटिये , सुन सतगुर सार विवेक ॥
मन के औगन धोइये , प्रेम नीर के साथ ।
दुर्मत भरम आपार है , बाँधा जीव अनाथ ॥
सत सील के मारग चालो , नाम अमीरस पीयो ।
जीवत मिरतक दिसा विचारो , सार शबद में जीयो ॥
परले पार खड़ा पुरखोत्तम , निर्वान डोरी लई हाथे ।
नित नित करे पुकार निरन्तर , कोई गुरमुख भयो रँगराते ॥
अपने पिया दा मारग खोजो , त्याग द्वन्द बखेड़ा ।
जनम जनम का ताप विनासे , पावे शान्त सरीरा ॥
दीनदयाल परम किरपालू , सब जीव के संकट नासे ।
नित ही प्रभ की कीरत गाओ , मिल साध संगत सुख वासे ॥
प्रभ दाते की दात पछानो , मन तन सेव कमाओ ।
पल पल तिसकी आज्ञा ध्यायो , निर्भय धाम लखाओ ॥
मनुआँ राखो शबद के माहीं , घट में पवन को पीयो ।
उलट दृष्ट आकाश पहछानो , धार शबद लख लीयो ॥
धारा माहीं ध्यान लगाओ , सतखण्ड वासा पाओ ।
निर्मल प्रीत से नाम कमाओ , भव दुस्तर तर जाओ ॥
बन्धन काट करम दु:खदाई , प्रभ की प्रीत विचारो ।
उलटे मारग सुरती गाढ़ो , साचा शबद निहारो ॥
शबद में अपना तन मन वारो , तब पाओ बिसरामा ।
निर्भय धाम निरन्तर खोजो , अमर पुरष निष्कामा ॥
गरभ जून की फाँसी काटी , सत ठाकर घर ध्याई ।
मोह माया अन्धकार विनासा , जीव शान्त पद पाई ॥
मारग मुकत में जीवन पाया , अखण्ड शबद निर्वानी ।
ताँ में सुरती लीन समाई , चित अकथ कथा बखानी ॥
गुनी ज्ञानी साध तपीशर , खोज खोज कर हारे ।
माया दुस्तर नित भरमावे , बिन शबद ना उतरें पारे ॥

**साचा शबद पहचान निरंतर , जो सुन्न के घाट समाया ।**
**'मंगत' जिस जन सेव पछानी , बौहड़ गरभ नहीं पाया॥1386**

नाम सिमर सत सीख विचारो , मन के हरो विखाद ।
अनंक बिगन को हरनेहारा , प्रभ नाम अगम आगाध॥
मन की तृखा विनास होवे , निज घर में ले बिसराम ।
नाम की औखद जिस जन खाई , पाया निर्मल धाम॥
एक नाम की प्रीत विचारो , पाओ एक नाम भरवासा ।
एक नाम में जो मरजीवे , परसे पद अबनासा॥
नाम पदारथ अत सुखदाई , मन के रोग मिटाये ।
दीनदयाल घर परगट हो के , निर्भय शान्त लखाये॥
इस संसार में रास अधिक है , एक नाम भगवन्त ।
गुरमुख विरले पाई परापत , भरम किये भसमन्त॥
साचा ठाकर सेव करो नित , जो मन के ताप निवारी ।
प्रभ सिमरन बिन पायें नहीं थाओं , नित आवागवन विचारी॥
समाँ विचारो जीवन का मीता , नित खोज मारग कल्याना ।
मिल सत्संग सतनाम विचारो , निर्भय पद निर्वाना॥
अबनाशी की खोज करो नित , मिथ्या भरम को त्यागो ।
भाओ भगत प्रभ सेव कमाओ , सतगुर चरनी लागो॥
तेरा जीवन निर्मल होवे , अनन भगत रस खाई ।
बाहरमुख की भरमन नासे , निज घर आन समाई॥
अन्तरयामी सरब भरपूरा , सत शबद अबनाशी ।
अन्तरमुख हो सेव कमावे , तब जीवन बन्ध खुलासी॥
मन को अन्तर नेहचल कीजे , सतनाम की रसना खाये ।
निर्गुन सर्गुन दोनों बाँधे , तत्त शबद घर पाये॥
दो पर्बत में सुरती राखे , उलट पलट गत सोधे ।
तत्त निरंजन परगट पाये , निज मन को इयों बोधे॥
सुरती खेल खेले अचम्भा , मन पवन इक कीजे ।

जीवत मिरतक सार पछाने , भेद अगम का लीजे॥
पद निर्वान शबद को पीवे , काल करम होये नासा।
सुन्न समाध अमीरस खाये , देखे अजब तमाशा॥
साचा घर अन्तर में पाया , भ्रम दुर्मत लीन समाई।
अपने आप का दर्शन कीजे , नित सतगुर सीख लखाई॥
**पूरन भाग कोई जन जागे , सत नाम कथा अर्थाये।**
**'मंगत' अन्तर चानन होवे , सब भय भरम मिट जाये॥1387**
अबगत नाम ध्याओ मन माहीं , जग सुकृत काज सँवार।
क्यों भरमे जग देख तमाशा , सुन साध बचन सुखकार॥
निर्मल संगत मिल शोभा गाओ , प्रभ पारगरामी देवा।
अनन प्रीत पाओ चित चरनी , नित हरजन की करो सेवा॥
भगत पदारथ पावें सुखरासी , सब दुबधा लीन समाई।
अपने अन्तर नित अमरत खावें , जीव तृपत को पाई॥
जग संशय है अती भयाना , मिल साध संगत तत्त बूझो।
अपने आपकी दुबधा त्यागो , सत तत्त आतम सूझो॥
छिन भंगुर ये भोग पदारथ , मृग तृष्ना का जाल।
सत सरूप पहचान करो , तब छूट मिले तत्काल॥
करम सन्देसा जीव को लागा , त्रैगुन में भरमाई।
अपनी भरमन आपे देखे , नित आपे संकट पाई॥
दाने बीने गुनी सयाने , नित भरम चक्कर भरमाये।
देह की ममता नित गरासे , करम भोग लपटाये॥
साखी पुरष ना आवे चित में , नित भरम ग़ुबार लिपटारी।
हंग बुद्ध परमाद गरासे , रहे आठ पहर मतवारी॥
अपने जीवन का घातक बनयो , नहीं सतगुर लेख विचारा।
भव दुस्तर नहीं जाल विनासे , नित जनम मरन दुःख भारा॥
ये संसार सराये मीता , कोई आवे कोई जाई।
साची रास सिमर प्रभ नाओं , जो अन्त होवे सुखदाई॥

साध वेद पुकार करें नित , उठके लेख विचार ।
शबद सरूप सिमर पुरखोत्तम , भव बन्धन छूटे सार ॥
अपना जीवन करो सुखरासी , निर्भय धाम समाओ ।
नाम रसायन रसना नित चाखो , जग साची सेव कमाओ ॥
ऐसा समाँ ना पावें साजन , नित करनी साची चेत ।
एक पलक में धूड़ समावें , काल हरत देह खेत ॥
मिल सतसंग सत कथा विचारो , शबद पुरख अबनाशी ।
मन की दुर्मत सकल निवारो , सुन सीख परम सुखरासी ॥
अखण्ड शबद घट अन्तर सिमरो , नित चरनी करो डंडोत ।
सरब शकत का सो ही स्वामी , दृढ़ निश्चे राखो ओट ॥
गरब ग़ुबार जाये सब मन का , घट पावें अबगत परगासा ।
अखल निरंजन शबद तत्त परसें , जो जल थल करे निवासा ॥
निज सरूप परापत होवे , दुर्मत छाया नासे ।
सतगुर सीख बिपत से छूटे , पाये मुकत घर वासे ॥
साची खेल प्रभ भगत विचारी , नित ही चरन समाई ।
सत ठाकर की प्रभता देखी , सब रंग में वरताई ॥
नित ही मनुआँ मगन समाया , आलख पुरख के ध्यान ।
संशे शोक सकल दुःख नासे , पाया पद निर्वान ॥
**साची रास शबद घर पाई , गुरमुख लयो जग जीत ।**
**'मंगत' वनज ये सार है , नित गाइये प्रभ के गीत ॥** 1388
अखण्ड सरूप तूँ ही परमेश्वर , नित मेरा रखवारा ।
भाओ भगत कर सीस निवाऊँ , नित चरन कँवल आधारा ॥
परीपूरन तूँ सरब दयालू , नित हूँ तेरी सरनाई ।
पततपावन तूँ पार स्वामी , नहीं महमा वरनी जाई ॥
करो उद्धार ये अनमत जीया , नित तेरा भरवास ।
पल पल कीजूँ बन्दना , तूँ सरब काल सुखरास ॥
साध-जनाँ की सीख लखाई , इक राखी तेरी ओट ।

सरनागत की सुन बेनती, तूँ दीनदयाल अलोप॥
परगट होके दरस दिखाओ, मन की हरो प्यास।
निमख निमख उस्तत करूँ, तूँ ही प्रभ अबनास॥
सरब शकत तेरी प्रभ पाई, मैं हूँ बल से हीना।
अपनी किरपा कर राख लें, तूँ सरब स्वामी थीना॥
पाँच भूत का कोट औसारा, नित आप करें सरजीया।
तूँ ही ठाकर सदा दयालू, घट घट माहीं विचरीया॥
अन्तर की गत तूँ ही जानें, सरब शकत बिसरामी।
महमा तेरी कथी नहीं जाई, तूँ साहब अन्तरयामी॥
साची भगती दीजो प्रभ अपनी, नित ही चरन समाऊँ।
तेरी कीरत पलक ना विसरे, चित अन्तर नाम ध्याऊँ॥
तूँ साहब मैं सदा भिखारी, माँगूँ रंचक भीख।
दीजो मन में दीनता, नित सरब पाऊँ तेरी डीठ॥
तूँ क़ादर नित बख़्शनहारा, सब क़ुदरत प्रभ तेरी।
साची बन्दगी दीजो मोहे देवा, मिटे गवन की फेरी॥
कोट जीयाँ का संकट हरया, अपनी सरन लगाई।
माया भरम से जीव छुड़ाये, प्रभ अत तेरी वडयाई॥
आनन्द सरूप तेरा अस्थाना, महमाँ अपरम आपारी।
विगन दोख तिस निकट नहीं आवे, जो सत धाम पधारी॥
शबद सरूप तूँ ही अबनाशी, सब जग को धारनहारा।
पूरन भाग सो ही जन पावे, जो राखे चरन आधारा॥
सकल बिपत को छिन में नासे, परम आनन्द गत देवे।
जो सरनागत पाये पार स्वामी, नहीं बौहड़ गवन को लेवे॥
इस्थिर धाम तेरा परमेश्वर, गुनी मुनी नित ध्यायें।
जाँ पर किरपा करें स्वामी, सार शबद लख पायें॥
प्रभ अपने की महमाँ गाओ, चित अन्तर ध्यान विचारो।
सुकृत सीख पाओ सत साजन, भव जल उतरें पारो॥
मन अपने में राख भरोसा, एक साहब अबनाशी।

दूजा भरम माया बिख त्यागो , सब भरमन मिटे चौरासी॥
दीनदयाल सदा सुखदाता , सब जीव का खेद निवारी।
नित ही अन्तरयामी ध्याओ , ये सतगुर सीख आपारी॥
**बन्धन नास विजे घर पायें , प्रभ चरनी लीन समायें।**
**'मंगत' जिस जन सेव कमाई , बौहड़ गरभ नहीं पायें॥1389**
इस सागर संसार में , मारग साचा खोज।
बिना जतन ना पायेंगा , जग जीवन की मौज॥
वैसे तो सब जीवते , स्वारथ धरम के माहीं।
धार मनोरथ बहु बिध , पलक धीर ना पाईं॥
सम्पत बहु संचित करी , अधिक किये नित भोग।
मरना मूल विसार के , अधिक पाये चित रोग॥
शान्त परापत कारने , आया जीव संसार।
दुर्मत माया धार के , नित नित होये ख़वार॥
काल की नौबत बाजती , उठ मन मूरख जाग।
साचा वक्खर खाट लो , पर-सेवा अनुराग॥
अपना मनोरथ त्याग कर , पर-का हेत विचार।
सतगुर की ये सिखया , खाट रतन जग सार॥
मान गुमान त्याग कर , खिमा ग़रीबी धार।
जायें प्यासे अन्त को , जो बहु मानी संसार॥
साचा ठाकर सिमरियो , जिसकी सब जग रास।
आपा भाओ त्याग के , निर्भय लीजो वास॥
माया मोह विकार ये , नित संकट को देत।
बिन सिमरे भगवन्त के , नहीं मिटे भरम विखेप॥
आवत जावत खेल ये , मन में करो विचार।
सत मुशक़्क़त घालिये , जो अन्त देवे जैकार॥
पाप करम को त्यागिये , पाइये सत विश्वास।
मारग पर-उपकार में , रुच रुच करें निवास॥

मन ये अत कठोर है , सत जतन से बांधो नीत।
सत सरूप भगवन्त में , निर्मल राखो प्रीत॥
झूट पसारा देख सब , साचा नाम विचार।
जीवत की आसा तजें , जीत लेवें संसार॥
बाज़ी कठन कराल है , संभल के खेलो मीत।
बिन परतीत ना पा सकें , दुस्तर जग से जीत॥
संभल संभल के खेलो गुनिया , नित ही दाओ विचार।
शत्रु बड़े गम्भीर हैं , मोह मध लोभ हंकार॥
सत सील सन्तोख की , पल पल मारो बाड़।
रसना प्रेम की खाय के , नित रहो हुशियार॥
नित ही शत्रु मारिये , एक एक पर चोट।
मुकत मैदान को जीतिये , राख शबद की ओट॥
ममता बुरज उड़ाइये , सम्मत गोला मार।
खिमा ग़रीबी बन्दगी का , नित कीजो आहार॥
सुरंग लगाई ग़ैब में , शबद निशाना राख।
कंटक काल को मारया , सतगुर की सुन साख॥
**विजय पाई संग्राम से , सब शत्रु कीने छार।**
**'मंगत' सो सत सूरमा , निर्भय धाम पधार॥1390**

****

साधो अचरज जग का खेला॥ साधो०.....
पाँच तत्त गुन तीन पसारा। बहु भाँत नाम रूप आकारा॥
परचंड माया का सब बिस्तारा। सत रूप नित रमे अकेला॥
साधो अचरज जग का खेला॥ साधो०.....
आद अन्त नहीं सोझी आवे। विचित्तर लीला नित ही दिखलावे॥
अनमत जीया नित भरमावे। देख जगत की बेला॥
साधो अचरज जग का खेला॥ साधो०.....
संसे माहीं जनम गँवायें। करम भोग में नहीं तृपतायें॥
अन्त निरासे जग से जायें। नित फिरें चौरासी जेला॥

साधो अचरज जग का खेला॥ साधो०.....
मानुष जनम की अधिक वडयाई। सत सरूप जो सार लखाई॥
सतगुर सिखया पल पल ध्याई। प्रभ परगट पायो अलबेला॥
साधो अचरज जग का खेला॥ साधो०.....
साखी रूप निरंजन जाता। जल थल अन्दर पूर समाता॥
सम सरूप सरब समराथा। सब सुपन भयो जग मेला॥
साधो अचरज जग का खेला॥ साधो०.....
नाम ध्यान पाया भगवाना। अन्तर परगट शबद निर्वाना॥
अगम सरूप मिले कल्याना। सब दुर्मत मिटे दुखेला॥
साधो अचरज जग का खेला॥ साधो०.....
साचा मारग गुरमुख ध्याओ। साध संगत मिल रसना खाओ॥
हंग विकार भरम उड़ाओ। सत मारग ये सुखेला॥
साधो अचरज जग का खेला॥ साधो०.....
सत शबद जिस साखी गाई। अन्तर सुरती सुन्न ठहराई॥
जगमग जोत आतम दरसाई। सत नाद का गायो सुहेला॥
साधो अचरज जग का खेला॥ साधो०.....
मन की भरमन जगत की रचना। मिथ्या धारी नित कलपना॥
पारब्रह्म रहे सदा अलपना। नित खोज ज्ञान तत्त मूला॥
साधो अचरज जग का खेला॥ साधो०.....
ज्ञान बिना नहीं भरमन नासे। त्रैगुन माया नित गरासे॥
राजे राने फिरें प्यासे। नहीं चूके काल कुलेला॥
साधो अचरज जग का खेला॥ साधो०.....
आलस छोड़ समाँ विचार। भरम ना भूलो देख ग़ुबार॥
सत करनी को अन्तर धार। नित सिमरो नाम सुरेला॥
साधो अचरज जग का खेला॥ साधो०.....
एक पलक में देही विनासे। छूट जायें सब जग भरवासे॥
बिना भगत पायें नरक निवासे। ये सार विवेक निरोला॥
साधो अचरज जग का खेला॥ साधो०.....

मूढ़मती अपनी को त्यागो। सत ठाकर की चरनी लागो॥
निज सरूप में उठ के जागो। सत कीरत ये ही अमोला॥
साधो अचरज जग का खेला। साधो०.....
सत सरूप जिस गुरमुख जाना। निर्मल चित जग सेव पहचाना॥
अपने आप पाई कल्याना। **'मंगत'** पायो धाम अडोला॥
साधो अचरज जग का खेला। साधो०.....॥**1391**

******

नित मानुष जनम विचारो। नित.....
सुकृत जनम जगत में पाया। भाओ भगत सतनाम लखाया॥
सब पाप करम होये छारो। नित मानुष जनम विचारो॥
चतर बुद्धी से जीवन सोचो। पर-उपकार की रसना लोचो॥
मिट जायें भरम अन्धकारो। नित०.....
औगन भरया ये मन दुखदाई। साची सीख नहीं हिरदे ध्याई॥
चित धरे अधिक बकारो। नित०.....
आवागवन का संसय ना जाई। तीन ताप नित ही तपताई॥
बिन भगत ना पायें पारो। नित०.....
साचा जतन राखो मन माहीं। पारब्रह्म जप पार गोसाईं॥
ये साची सीख लखारो। चित०.....
भरम अन्धकार अधिक है मीता। बिन सिमरन ना होयें पुनीता॥
ये निरना निश्चे धारो। नित०.....
सरजनहार प्रभ पारगरामी। घट घट व्यापक अन्तरयामी॥
चित साची प्रीत विचारो। नित०.....
सरब जीयाँ की सेव कमाओ। प्रभ दाते को हिरदे ध्याओ
ये जीवन जग सुखकारो। नित०.....
पल पल औध जाये दिन रैना। सतपुरषों का सुन ये कहना॥
**'मंगत'** मिले चरन आधारो। नित०.....॥**1392**

*******

साधो मन सदा अन्धकारी। साधो०.....
सत छोड़ भरम लपटाया। काल चक्कर में नित भरमाया॥
नहीं सूझे वारापारी। साधो०.....

औगन अन्तर अधक लखाई। प्रभ की भगत नहीं हिरदे गाई॥
नित भरम में रहे मतवारी। साधो०.....
पाप करम करे दिन राती। अपने जीवन का होवे घाती॥
पाये संकट अधिक आपारी। साधो०.....
अनंक जतन से राखो मीता। निर्मल ज्ञान पाओ परतीता॥
भरम दुर्मत होवे छारी। साधो०.....
बिपत माहीं सब जनम गँवायें। जो नहीं हिरदे नाम ध्यायें॥
नहीं गवन से मिले छुटकारी। साधो०.....
प्रभ अपने की कीरत गाओ। अधिक शोभा तिसकी चित ध्याओ॥
मिले शबद आलख निर्धारी। साधो०.....
सत शबद परापत पायें। बिनसे दुर्मत भरम परछायें॥
नित उज्जल चेता धारी। साधो०.....
पारगरामी घर परगट होई। अन्तरगत नित नाम परोई॥
सुन सीख ये ही सुखकारी। साधो०.....
साचा शबद प्रभ सिमरन पाइये। सरब जगत तिस रूप लखाइये॥
मिटे करम दोख अत भारी। साधो०.....
प्रभ की भगत मुकत को देवे। सतगुर सीख जो हिरदे सेवे॥
**'मंगत'** मिले जनम मरन छुटकारी। साधो०.....॥**1393**

*******

प्रभ तेरी अपरम आपार वडयाई। प्रभ०.....
बंधन रूप ये सकल संसारा। नाम रूप गुन करम आकारा॥
त्रैगुन माया का रचा चुनारा। नहीं वारापार कोई पाई॥
प्रभ तेरी अपरम आपार वडयाई। प्रभ०.....
सब गुनियों ने सार बखानी। भाँतक भाँत भेद अर्थानी॥
सत सार इक नाम निर्वानी। नित हिरदे लयो ध्याई॥
प्रभ तेरी अपरम आपार वडयाई। प्रभ०.....
भव बन्धन से मुक्ता पावे। निर्मल प्रीत जो हर जस गावे॥
ताप विनाश शान्त समावे। जो नित प्रेम की रसना खाई॥
प्रभ तेरी अपरम आपार वडयाई। प्रभ०.....

नाम प्रभू का अमीरस मीता। अनमत जीव पाये परतीता॥
भव दुस्तर से पाई जीता। सतनाम रतन नित खाई॥
प्रभ तेरी अपरम आपार वडयाई। प्रभ०.....
निमख निमख चित चरनी राखो। पूरन गुर की सिखया भाखो॥
नाम पदारथ अन्तर चाखो। ये जतन अधिक सुखदाई॥
प्रभ तेरी अपरम आपार वडयाई। प्रभ०.....
नाम ध्यान से मन गत पावे। आलख शबद अन्तर ध्यावे॥
नित सुरती मानसरोवर नहावे। सब ताप तपन बिनसाई॥
प्रभ तेरी अपरम आपार वडयाई। प्रभ०.....
शबद अगोचर परगट पाया। सतनाम पदारथ जिसने खाया॥
मन अपने में नित तृपताया। सब तृष्ना दोख मिटाई॥
प्रभ तेरी अपरम आपार वडयाई। प्रभ०.....
शबद में सुरती नित समावे। प्रभ का हुकम मन माहीं मनावे॥
आपा पर-का दोख मिटावे। परम पुरख घर परगट पाई॥
प्रभ तेरी अपरम आपार वडयाई। प्रभ०.....
मन का भरमन सकल विनासा। सत ठाकर की पाई अरदासा॥
निज घर आये लीना बासा। सब दुर्मत भरम चुकाई॥
प्रभ तेरी अपरम आपार वडयाई। प्रभ०.....
सुरत निरत का एका कीना। नाम भेद तब अन्तर चीना॥
सत मारग घट शबद लखीना। नित रुच रुच प्रीत कमाई॥
प्रभ तेरी अपरम आपार वडयाई। प्रभ०.....
एको शोभा पाई जगदीशा। जल थल अन्दर पूरन ईशा॥
सब तृष्ना भरम का मिटे कलेशा। **'मंगत'** मर जीवन दिसा लखाई॥
प्रभ तेरी अपरम आपार वडयाई। प्रभ०.....॥**1394**

*******

तूँ परमेश्वर नित राखनहारा। तूँ.....
नित ही तेरी महमा गाऊँ। अन्तर बाहर तेरा रूप लखाऊँ।
सत का खाटूँ जगत ब्योहारा। तूँ.....
तुध बिन मेरा कोई ना थाऊँ। आदि अन्त तोहे दरसाऊँ।।

दृढ़ निश्चय पाऊँ विचारा। तूँ .....
अपनी दात करो प्रभ दाते। मन रहे सदा चरन रँगराते॥
सब दुर्मत मिटे गुबारा। तूँ .....
सत साजन की सीख लखाई। तेरी प्रभता केवल सुखदाई॥
नित चरनी पाऊँ आधारा। तूँ .....
कोट तपीशर नित तप को धारें। कोट जोगी नित जुगत विचारें॥
सत शबद पायें निर्धारा। तूँ .....
बारम्बार करूँ परनामा। अज अबनाशी तूँ निर्मल धामा॥
पाऊँ दीन भाओ सुखकारा। तूँ .....
मोह माया का ताप मिटाओ। पूरन रूप घट में दरसाओ॥
नित अनमत करे पुकारा। तूँ .....
उस्तत तेरी कथी नहीं जाई। नित मंधमती हूँ तेरी सरनाई॥
प्रभ जी कीजो मेरा उद्धारा। तूँ .....
तेरे चरनी नित नित समाऊँ। तेरी शोभा में मिट जाऊँ॥
रहे नहीं अन्तर रेख विचारा। तूँ .....
परम पुरष तेरी सरनाई। पद पंकज सिमरूँ सुखदाई॥
करूँ डण्डौत बारम्बारा। तूँ .....
नीर में जैसे नीर मिलाई। भृंग सरूप को कीट ज्यों पाई॥
**'मंगत'** इस बिध पाऊँ सुधारा। तूँ .....॥ **1395**

****

## द्वादस मासी विवेक

### चेत

चेत चतुर बुद्ध को धार के , जग जीवन करो विचार।
माया भरम आपार है , बिन जतन ना उतरें पार॥
आसंख जन्त नित आवते , असंख जायें नित मीत।
बिन सत करनी जीवड़ा , रहे आठ पहर भयभीत॥
जगत फुलवाड़ी देख के , सरजनहार विचार।
वाँग मुसाफिर आया , देखन को संसार॥

सकल चक्कर संसार का , पल पल रूप वटाये।
देख देख नहीं तृपत मिले , मनुआँ नित तिरखाये॥
गुन औगन विचार बिन , पावे दु:ख आपार।
देख चक्कर संसार का , जीया भरमे बारम्बार॥
साचा वक्खर खाट तूँ , जो अन्त होवे सुखरीत।
**'मंगत'** जीवन जगत में , पल छिन की सब प्रीत॥ **1396**

## बैसाख

बैसाख बहुरंग रचना देख के , बड़े गुनी भरमायें।
माया बहु संचत करी , अन्त प्यासे जायें॥
देह के सुख के कारने , जतन किये बहु मीत।
एक पलक में बिनस गई , ज्यों बालू की भीत॥
संग सखा ना कोई भया , जग से चला निरास।
कोट वरख जीवत रह्यो , मिटी ना मन की प्यास॥
माया असचर्ज साहब की , देखन में सुखदाई।
अन्तर में बिख रूप है , जीव परम दु:ख पाई॥
राजे राने गुनी सयाने , सब ही रोवत जायें।
**'मंगत'** बिन प्रभ भगत के , कभू ठौर नहीं पायें॥**1397**

## जेठ

जेठ जतन यथारथ धारो , मारग खोज कल्याना।
जग आवन की सार पछानो , सत शबद निर्वाना॥
अपना बन्धन आप निवारो , नित साची करनी धारो।
समाँ अमोलक छिन छिन जाये , मिल साध संगत लख सारो॥
सत सरूप पहचान करो , घट साची सेव कमाओ।
जग रचना दिन चार तमाशा , नित नाम पदारथ खाओ॥
मिल साध संगत सत अर्थ विचारो , प्रभ चरनी मिले विश्वासा।
अनंक बिगन से मनुआँ छूटे , ले निर्भय धाम निवासा॥
मानुष जनम कदारथ होवे , जो प्रभ सरनागत पावें।
**'मंगत'** लाभ जीवन का ये ही , गुनी मुनी बतलावें॥ **1398**

## आसाढ़

आसाढ़ असुर बुद्धी का त्याग करो , नित मारग देव पहचानो।
साची करनी करो दिन राती , सतगुर सीख बखानो॥

मनुआँ अती बिकराल है , सत जतन से राखो मीता।
पूरन सतगुर भेद बतावें , मारग मुकत पुनीता॥
अखण्ड सरूप शबद निर्वानी , जल थल पूर समाई।
अन्तर तेरे नित परकासे , आद पुरख सुखदाई॥
सरजनहार सो ही परमेश्वर , सरब शकत समराथा।
भाओ भगत राखो मन अन्तर , नित सिमरो सुखदाता॥
बन्धन नास पलक में होवें , जो साची प्रीत कमायें।
**'मंगत'** प्रभ का सिमरन करके , प्रभ के चरन समायें॥ **1399**

## सावन

सावन सत स्वामी सिमरो , निमख निमख चित लाये।
दृढ़ विश्वास राखो नित चरनी , सब जीव भरम दुःख जाये॥
सतगुर साजन की सीख पहचानो , नाम अमीरस खाओ।
करम भरम सब संकट नासे , घर आलख शबद लखाओ॥
आहार ब्योहार करो सुखदाई , मन के कपट निवारो।
दुर्मत भरम का करो उपाये , नित साध संगत पधारो॥
ताप तपन सब मन के नासे , घर शबद मिले अबनासा।
रुच रुच अन्तर ध्यान लगाओ , सतनाम सिमर सुखरासा॥
अन्तर नाम जपो परमेश्वर , नित पर-की सेव कमाओ।
**'मंगत'** तृष्ना रोग विनासे , नित ज्ञान की औखद खाओ॥ **1400**

## भादों

भादों भेद पछानो अपना , नित सतगुर सीख लखाओ।
निर्भय रूप सिमर निर्वानी , अखण्ड शान्त घर पाओ॥
देह का सरजनहार ध्याओ , सो ही साचा स्वामी।
तिसकी सेव सब बन्धन काटे , पाये निर्भय धाम बिसरामी॥
अजर अमर अगोचर स्वामी , घट घट रह्या समाई।
मिल सतसंग नित महमा गाओ , सत ठाकर पार पराई॥
अन्तर जुगत सिमर सत नाओं , तन मन शान्त निवासी।
प्रभ की भगत देवे परसन्ता , भरमन मिटे चौरासी॥
परगट रूप पावें घट अन्तर , सत शबद निर्वानी।
**'मंगत'** जिस जन सेव कमाई , सो मारग मुकत पछानी॥ **1401**

## असूज

असूज आस मिटे सब मन की , घर मिले शबद अबनाशी।
पल पल कीरत प्रभ की गाई , नित निर्भय धाम निवासी॥
आद अन्त मद्ध राखनहारा , सत ठाकर घर पायो।
भरमत मनुआँ घर में आया , नित प्रभ का मंगल गायो॥
वस्त अगोचर परगट पाई , सत ठाकर सुखरासी।
नित मनुआँ प्रभ चरन समाया , सब बिपत से पाई ख़ुलासी॥
जनम जनम अन्धकार विनासा , घर अबगत चानन होई।
सतगुर सीख निर्भय समाया , सतनाम की कथा परोई॥
मनुआँ अन्तर नाम ध्याई , सुरत भई मतवाली।
**'मंगत'** अचरज खेल घर पाया , सब मिटी भरम की जाली॥ **1402**

## कार्तिक

कार्तिक कीरत प्रभ की गाई , पाई अन्तर सुन्न समाधी।
काल करम का जाल विनासा , सत दुर्मत हरी उपाधी॥
मन पवन इक रूप समाया , सतनाम रतन नित खाई।
परगट शबद मिले अबनाशी , सत मारग गुर दिखलाई॥
छिन छिन सुरती नाम कमावे , करम मैल नित धोई।
आसा तृष्ना भरम विनासा , घर अचरज कथा परोई॥
रूप वरन बिन शकत लखाई , अखण्ड शबद निर्द्वन्दा।
नेहचल ध्यान मन मगन समाया , घर अगम जोत परचंडा॥
बाहरमुख की भरमन त्यागी , नित अन्तर सार लखाई।
**'मंगत'** मारग अगम पहचाना , जो कहन कथन नहीं आई॥ **1403**

## मघर

मघर मुकत रस हरजन पाया , सत शबद कथा घट जानी।
अन्तर सुरती लीन समाई , नित सुनी अनहद धुन बानी॥
शबद अगोचर परगट पाया , सुरत आकास समाई।
पाँच दोख तीन ताप निवारे , सत ठाकर सेव कमाई॥
नौ द्वार की तृष्ना नासी , सत शबद में जीवन पाया।
देह त्याग निरदेह तत्त सूझा , काल को मार गिराया॥
कोट मद्धे कोई भेद पछाने , जिस मन की दुबधा त्यागी।
एक नाम में जीवन जीवे , साचा सन्त अनुरागी॥

कहन कथन में चतुर बहु देखे , अन्तर सार नहीं जानी।
**'मंगत'** कथनी मध में डूबे , बड़े चतुर बुद्ध ज्ञानी॥ **1404**

## पोह

पोह पूरन जिन जुगत कमाई , सत शरधा को धारी।
सो जन जग से मुकत समाये , प्रभ नाम सिमर सुखकारी॥
अन्तर मन को नित ही राखें , प्रभ आज्ञा का लेख लखाई।
आपा त्याग भयो निर्मानी , घट शबद कथा अर्थाई॥
नेहचल बुद्धी शबद को पीवे , नित सुन्न शिखर बिसरामी।
करम फल इच्छया की ममता नासी , प्रभ पायो अन्तरयामी॥
पिण्ड ब्रह्मण्ड का भेद पछाना , नित आतम तीरथ नहाई।
सतगुर सेव परमपद पाया , जग जीवन सार लखाई॥
शबद सरूप अजर अबनाशी , जो सरब जीयाँ का स्वामी।
**'मंगत'** घर में परगट पाया , प्रभ दीनदयाल अनामी॥ **1405**

## माघ

माघ महारस शबद को चाखो , पाओ परम परसन्ता।
शबद सरूप प्रभ आप स्वामी , नित धारे रूप अनन्ता॥
सत शबद की कथा पछानो , समता सार को पीयो।
सर्वज्ञ रूप सरब आधारी , घट माहीं दरसीयो॥
परम पुरष की उस्तत कीजो , जग आवन काज सँवारो।
सरब जीयाँ का एको स्वामी , सब में प्रीत विचारो॥
अन्तर अपने सत नाद ध्याओ , जो सरब सरूप स्वामी।
अखंड नाद करे किलकारा , घर खेले खेल अनामी॥
सिद्ध तपीशर योगी ध्यायें , और तत्तवेते ज्ञानी।
**'मंगत'** सिमर स्वामी अपना , सत कारज जगत पछानी॥ **1406**

## फागन

फागन फुरना मन का नासे , सत तत्त लीन समाई।
बौहढ़ गरभ ना गुरमुख पावें , जिन प्रभ की भगत कमाई॥
सत पुरषारथ राखो गुनिया , जग चौसर अत भारी।
मान गुमानी बड़े परतापी , ओड़क गये सब हारी॥
अनंक जतन करे दिन राती , प्रभ की भगत विसराई।
अन्त को चलें निहथावें जग से , छाड झूट प्रभताई॥

संभल संभल के दाओ खेलो , सत मत बूझो पूरी।
ओड़क देही राख समावे , ज्यों फागन की होरी॥
जीवत में सतनाम ध्याओ , सब जग की सेव कमाओ।
**'मंगत'** पावें परम पदारथ , बौहड़ गवन नहीं आओ॥ **1407**

## आरती

तूँ पार ब्रह्म परमेश्वर , तीन काल रछपाल।
नित पाऊँ शरनागती , सत चरन कँवल दयाल॥
तूँ नित पतत उद्धार है , पूरन प्रभ जगदीश।
मोह माया संकट हरो , दीजो ज्ञान सन्देश॥
नित ही तेरे चरन की , मन में रहे परीत।
तूँ दाता दातार है , पुरखोत्तम सुखरीत॥
पवन पानी बैसन्तर , धरती और आकाश।
सब को सरजनहार तूँ , आद पुरख अबनाश॥
घट घट व्यापक तूँ परमेश्वर , सरब जीयाँ आधार।
अनमत कूकर को राख लें , किरपा निद्ध करतार॥
काल करम जाये दूषना , खल बुद्धी हरो अज्ञान।
सत शरधा पाऊँ चरन की , अखण्ड प्रेम चित ध्यान॥
दीनानाथ दयाल तूँ , पल पल होत सहाये।
कीरत साचे नाम की , मन तन आये समाये॥
अन्तर का सब खेद हरो , दीजो सत विशवाश।
सरनागत हूँ मंधमती , घट अन्तर करो परकाश॥
अन्तरगत सिमरन करूँ , निरन्तर धरूँ ध्यान।
घट घट में दर्शन करूँ , आद पुरख भगवान॥
तूँ साचा साहब सरब परकाशी , शबद रूप अखण्ड।
गुनी मुनी उस्तत करें , तन मन पायें आनन्द॥

होवें दयाल तूँ सत परमेश्वर , देवें धीर आपार।
निमख निमख सिमरन करूँ , चित चरन रहे आधार॥
काया अन्तर परतख होवें , नाद रूप बिसमाद।
पल पल कीजूँ आरती , तन मन तजूँ व्याध॥
जग आवन सुफला होवे , तेरी आज्ञा मन में ध्याऊँ।
अन्तरगत करूँ आरती , भव दुस्तर तर जाऊँ॥
अन्धमत मूढ़ा नित प्रती , तेरे चरनी करे पुकार।
**'मंगत'** माँगे दीनता , सत धरम सुख सार॥ **1408**

## समता मंगल

समता धरम हिरदे रसे , बिख ममता होवे नाश।
सत सरूप परमातमा , जल थल पाऊँ परकाश॥
सब जीवों से प्रेम हो , तन मन सेवा धार।
समता साधन पाये के , नित परसाँ जै जैकार॥
सत करम सत निश्चय , निर्मल पाऊँ विचार।
**'मंगत'** समता धार के , जीत चलो संसार॥ **1409**

छठा अंग ''समता सार योग'' समाप्त हुआ
सत आज्ञा निरंकार
ब्रह्म सत्यम सर्व आधार

समता अपार शक्ति

ब्रह्म सत्यम सर्वाधार

ओउम् ब्रह्म सत्यम् निरंकार अजन्मा अद्वैत पुरखा
सर्व व्यापक कल्यान मूरत परमेश्वराय नमस्तं

# सातवाँ अंग

## समता विज्ञान योग

### पहला रस - जीवन सार बोध

**गुह्य ज्ञान निरभय पद, जो जीवन सार लख पाये।**
**'मंगत' बिनसे ताप सब, तत्त रूप में लीन समाये॥ 1410**

काल सरूप सब जग की रचना। नाम रूप सब भरम कलपना॥
छिन में और की और दिखाये। तिस के मोह में जीया भरमाये॥
बिन सत सार नहीं धीरज पाई। जनम अनेक में नित भरमाई॥
सत सोझी बिन रहे निरासा। मिथ्या भोग चित अधिक प्यासा॥
नाना जुगत धरे दिन राती। मोह अंधकार नहीं नासे भ्रम टाटी॥
एक पलक नहीं शान्त समाई। बिस्माद ये रचना जगत लखाई॥
काल चक्कर का अचरज ये खेला। प्रभ की माया ने रचया मेला॥
काल से उतपत काल समाये। वचितर लीला का कोई पार नहीं पाये॥
भरमे पल पल जीव अज्ञानी। देख के रचना नित मोह लिपटानी॥
वासना करम जाल बिस्तारी। खप खप मरे नहीं ठौर विचारी॥
नाम रूप गुन करम संसारा। काल सरूप का सकल पसारा॥
त्रैगुन माया पसरी बहुरंग। सत सरूप नित सरब असंग॥
करम चक्कर का नहीं शुमार। अनगिनत सरूप चित धरे ग़ुबार॥
अनमत जीया नित करम फँसाया। नानाँ भोग में रहे भरमाया॥
अत कठन ये माया जाल। मिथ्या भरम रसना नित भाल॥
जतन अनेक धारे नित चीत। साची सार नहीं परसे मीत॥
आस आस में औध गँवाई। एक पलक नहीं धीर समाई॥
नित ही जन्मे नित ही मरे। काल चक्कर में नित नित कढ़े॥

भरम ना बिनसे ना सार कोई सूझे। अनर्थ कलेश में जीवन नित लूझे॥

**नित ही नित विचार करो, ये रचना जगत बिसमाद।**
**'मंगत' माया भरम में, अत धारे जीव विखाद॥ 1411**

निर्भय मारग करो विचार। भव दुस्तर से पावें पार॥
अपने मन की भरमन त्यागो। सत सरूप में नित उठ जागो॥
तीन ताप की तपन अत भारी। सरूप विचार से मिटे ख़वारी॥
आध व्याध उपाध विनासे। अखण्ड सरूप के चरन बिलासे॥
नित सरन पाओ प्रभ देवा। आनन्द प्रापत बिनसे भेवा॥
करम चक्कर में धीर ना पाई। जो जुग चारे भोग कमाई॥
जगत में वस्तू कोई ना मीता। जाँ को परस होवे परसन्न चीता॥
पूरन भाओ से निरनय कीया। तपन विनासे जप नाम सुख थीया॥
मन का वेग अधिक अपारा। कल्प विकल्प नित धारे ग़ुबारा॥
सकली रचना जो दिखलाई। मन भरमन की सब प्रभताई॥
अन्तर खोज ना मूढ़ा कीजे। बाहरमुख उठ सार लखीजे॥
अन्तर माया धरे अन्धकारा। भरमे देख बाहर उजियारा॥
अन्तर तृष्ना अगन है जारी। बाहर खोजे सत शांत अपारी॥
अन्तर नित मनुआँ डोलाए। बाहर बहुरंग ठौर बनाए॥
अन्तर दुबधा अनेक परगासी। बाहरमुख खोजे रूप अबनासी॥
जग का मूल नहीं अंतर पेखे। देखे बिस्तार बाहरमुख वशेखे॥
सत साजन नहीं अन्तर जाता। बहु संग साथ बाहर रमनाता॥
अमरत नाम नहीं अंतर पीया। इन्द्री भोग में बाहर लपटीया॥
बाहरमुखी ये काल तमाशा। तिसके मोह में रहे नित प्यासा॥

**बाहरमुख रचना माहीं, पल पल जीव भरमाए।**
**'मंगत' अन्तर सोझी बिना, कभूँ ठौर नहीं पाए॥ 1412**

अपने भरम का देखे बिस्तारा। भाँतक भाँत जो ही संसारा॥
अंतर भरम ना जब लग जाई। अनमत जीया शांत ना पाई॥

सत निरनय गुनी करो विचार। आवन जावन की परसें सार॥
हंग बुद्धी सहजे परगासी। त्रैगुन ममता धारी फाँसी॥
गुन के मोह में अधिक लपटाई। करम जाल रचना प्रगटाई॥
पाँच तत्त गुन तीन संजुगता। सकल जगत की ये है रचता॥
जीव अभमानी गुन का भयो। आवागवन संशा लख लयो॥
करम फल द्वन्द में नित गरासा। पाँच भूत धारी अत फाँसा॥
तत्त्व भोग में नित ललचाई। भाँतक भाँत रसना को खाई॥
छिनभंगर ये तत्त्व करीड़ा। तिसके मोह में पावे अत पीड़ा॥
तीन ताप में नित ही तपे। मिथ्या भरम में नित नित खपे॥
नाम रूप कल्पे घट माहीं। रहे प्यासा देख अपनी परछाईं॥
ना भ्रम छूटे ना सार लखावें। अपनी भरमन बहु जनम भरमावे॥
अदभुत रचना त्रैगुन बिस्तार। बाँधा जीव नित होये ख़वार॥
गुन से काल काल से कर्मा। सकली लीला धारे ये धर्मा॥
पल पल रचना रूप वटाए। काल करम में आवे जाए॥
सत ठौर नहीं सूझे अबनासी। माया भरम धारी अत फाँसी॥
अपनी इच्छया आप बन्धाई। करमफल भोग में दुःख सुख पाई॥
अत क्रीड़ा त्रैगुन जंजाल। बारमबार गरसे जम काल॥

**हंग विकार का चिन्तन, ये त्रैगन माया जाल।**
**'मंगत' भरमे जीवड़ा, धार के खेद नित काल॥ 1413**

काल के भय में नित बन्धाए। एक पलक नहीं शान्त पाए॥
छिनभंगुर सब क्रिया भेई। तिसके मोह में नित ताप तपेई॥
अत करड़ा ये जग का खेला। काल चक्कर का सकला मेला॥
उतपत परले का ये तमाशा। तिसका मोह देवे अत त्रासा॥
माया मोह में खेद बहु पाई। अनंक ताप में नित तपताई॥
सार सोझी बिन पाए ना धीर। जुगा जुगन्तर पावे अत पीड़॥
खोज करो नित अभयपद मीता। जाँ को परस पावें शान्त पुनीता॥
मंगलकारी तत्त रूप नारायन। भरम त्याग हो तिस चरन परायन॥

अखण्ड शान्त नित सम सरूप। तिसकी प्रीत हरे भ्रम कूप॥
अकाल सरूप सो देवन देव। होवें निहाल पावें जो सेव॥
नित परापत घट घट भरपूर। सरब का ठाकर परमानन्द हजूर॥
सत ठाकर का करो विचार। उतरे त्रैगुन माया विकार॥
काल करम का संशय नास। जो चित आवे प्रभ अबनास॥
तीन ताप की नासे पीड़ा। जो चित आवे प्रभ पार गहीरा॥
मारग करम सब पूर समाई। एको मूल प्रभ सरब दिखाई॥
सकली रचना में देखें एक। तब पावें तत्त ज्ञान अलेख॥
जतन करो दुर्लभ देह धार। अपना संकट आप निवार॥
सकल व्याधी से जीया छूटे। काल करम का भय सब चूके॥
प्रभ आधार जीवन चित पाई। निर्भय धाम की लखी प्रभताई॥

**जीवन भयो निहाल तब, जब सार जीवन की पाई।**
**'मंगत' अन्तरगत माहीं, तत्त चेतन शबद लखाई॥ 1414**

मूढ़मती तत्त निर्मल खोज। गुरमुख जीवन का निरनय बूझ॥
काल चक्कर सब जगत जंजाल। इच्छया करम मारग बिकराल॥
शान्त परापत कभूँ ना होई। मोह को धार नित भरम लखोई॥
साची सीख सन्तन की पेख। गुरमुख मारग का कर नित लेख॥
अपनी भरमन मूल त्याग। सत ठाकर की चरनी लाग॥
अती सयानफ़ धारें चतराई। मनमुखता ये भरम दुःखदाई॥
बारम्बार तत्त निर्मल चेत। मन अपने की तजो विखेप॥
हंग विकार तज मूल अज्ञान। दीन भाओ चित माहीं पछान॥
बिनसनहार सब खेल विचार। अबनाशी तत्त में प्रीती धार॥
सत पुरषारथ ये निर्मल योग। सत ठाकर संग करो संजोग॥
जाँ से परगट ताँ लीन समाई। काल करम जाए भरम असगाई॥
अपने अन्तर मन को नित राख। नाम पदारथ रसना चाख॥
बाहरमुख सब मिथ्याकार। अन्तर साचा शबद विचार॥
सब रचना प्रभ आज्ञा में पेख। अन्तरमुख होये लख नित निर्मल लेख॥

अरूप त्याग सरूप सम्भाल। साध - जनाँ की कीरत नित भाल॥
सकल जगत अरूप बखान। पल में और की और पछान॥
केवल सरूप प्रभ का इक पेख। पूरन पूर सरब गत लेख॥
एह बिध सोझी जिस जन पाई। सरूप पछान तजी भ्रम काई॥
गुरमुख जीवन पाई भलीकार। सत सरूप परसा निरंकार॥

**जीवन की ये सार है, जो जीवन रूप लखाई।**
**'मंगत' विरले हरजन, पाई निर्मल ये वडयाई॥ 1415**

जीवन रूप आलख आपार। घट घट व्यापक सरजनहार॥
सरब-व्यापक रहे अलेपा। जीवन सरूप का कथो विवेका॥
सब कुछ तिस आधार परगास। सदा निर्लेप तत्त रूप अबनास॥
तीन काल समरूप समाई। अन्तरयामी खेले खेल आगाही॥
सरब में पसरे इक सुभाए। चार खानी का चक्कर चलाए॥
अन्तरमुख जिस सोझी पाई। जीवन सरूप की लखी प्रभताई॥
निर्मल तत्त अभयपद मीता। जो सिमरे सो होये पुनीता॥
बन्धन नास जन मुकत लखाई। प्रभ दाते के चरन समाई॥
पूरन करमी ये गत बूझे। जीवन सरूप प्रभ अन्तर सूझे॥
अचरज कला नहीं पार कोई पाई। सरब सरूप रह्या आप समाई॥
तिस बिन मनुआँ नित डोलाए। करम चक्कर में नित भरमाए॥
एक पलक नहीं पावे धीरा। राग द्वेष की सहवे पीड़ा॥
अनर्थ कल्पना धारन कीजे। सरूप बिसार बहु संकट सीजे॥
भोगे-भोग नहीं तृप्ते कोई। अगन तृष्ना बढ़े अधिकाई॥
करम करत नहीं पल तृपतावे। दुरमत धार परम दुःख पावे॥
जीवन रूप नहीं सूझे देवा। अपनी भरमन बहु खेद लखेवा॥
जगत संग्राम अती भियाना। बिना सतसूझ नहीं मिले कल्याना॥
तत्त पहचान बिन घने कलेशा। जनम मरन नित रहे अन्देशा॥
अनंक जतन करे चित भय नहीं नासे। पलक पलक में काल गरासे॥

**अचरज लीला जगत की, नहीं पारावार कोई पाए।**
**'मंगत' सत सोझी बिना, नित मिथ्या भरम भुलाए॥ 1416**

हंग विकार में बुद्ध लपटानी। अत मनसा में नित भरमानी॥
अनंक तरंग तृषना में धावे। बहुरंग करम का चक्कर चलावे॥
नित भरमाये धर मिथ्याकारा। सरूप विसार पाए अत अंधकारा॥
एक पलक नहीं तृष्ना नासे। करम जाल का वेग परगासे॥
करम फल द्वन्द में नित रहे अधीर। ग्रहन त्याग धारे तक़सीर॥
अनंक जनम को धारन कीजे। करम चक्कर नहीं भरम मटीजे॥
करम संजोग भ्रम अगन बढ़ावे। काम क्रोध मोह लोभ प्रगटावे॥
भरम के वेग में धरे अहंकारा। भाँतक भाँत देखे संसारा॥
अनंक संशे में रहे परबीन। अनंक मनोरथ में रहे लवलीन॥
बाहिरमुख सम्पत बहु धारी। सरूप विसार नहीं मिटे ख़वारी॥
बहुरंग सम्पत का भोग कमाई। नानाँ भाँत रोग देही पाई॥
भरम चक्कर देवे अत पीड़ा। ज्ञान बिना नहीं परसे धीरा॥
अनंक भोग में रहे प्यासा। वासना अगन में करे निवासा॥
ज्यूँ ज्यूँ भोगे भोग अधिकाई। वासना अगन अत वेग को पाई॥
एक पलक नहीं तृप्त को भाखे। अनंक भाँत रसना को चाखे॥
इन्द्री भोग में नित रहे प्यासा। काल चक्कर का ये अचरज तमाशा॥
बाहिरमुखता देवे नित खेदा। अनमत जीव नहीं पावे भेदा॥
सकल पदारथ पल पल बिनसाई। तिनकी प्रीत ना शान्त दिखलाई॥
इच्छया से भोग भोग से रोगा। राग द्वेष का पाये संजोगा॥

**नाना भोग कमाये के, अत चंचल विरत को पाई।**
**'मंगत' मिले न शान्ती, तीन काल तपताई॥ 1417**

चंचल विरती अत कलह को देवे। मिथ्या भरम बहु भाँत लखीवे॥
अत संकट पावे नित नीत। सरूप विसार नित रहे विपरीत॥
अनंक वासना में रहे लवलीना। पाँच भूत की रसना नित चीना॥
सकाम विरत ये अत दुःखदाई। भरम जाल बहु रंग प्रगटाई॥
सकाम विरत ये नरक की खानी। बहुरंग भोग तृष्ना लिपटानी॥
अत चंचल होये करम कमाई। बारम्बार गवन को पाई॥
ये ही चक्कर भरम संसारा। सकाम बुद्धी नित धरे अंधकारा॥
सरूप ना सूझे सार ना पाई। नाम रूप बहु रंग लखाई॥

अपनी कलपना पलक नहीं नासे। मिले ना धीरज नित काल गरासे॥
अधिक भय में रहे दिन राती। भाँतक भाँत रचना को थापी॥
सरूप सूझ बिन भय नहीं जाई। जुगा जुगंतर जो जतन कमाई॥
बिस्माद माया का ये जग जंतर। उतपत परलय देखे चक्कर भयंकर॥
चारखानी के जीव भरमाई। मनसा धार बहु खेल रचाई॥
मन तृप्ती कारन करे नित जतना। भोगे भोग नित बढ़े कलपना॥
मन तृप्ती कारन धरे अत जतना। मिले न धीरज बिन पाये प्रभ रतना॥
खोज खोज के कई डूबे सयाने। माया भरम में नहीं सार पछाने॥
सार सूझ बिन सन्तोष नहीं पाई। वासना करम अत बढ़ती जाई॥
करम जाल को नित नित भोगे। राग द्वेष पाये दीरघ रोगे॥
परमानन्द नहीं परसे सुख धामा। आवागवन में नित करे बिसरामा॥

**वासना बाँधा जीवड़ा, नित करम जाल को धारी।**
**'मंगत' निर्भय ना होये, बिन सत रूप विचारी॥ 1418**

अनंक वासना में रहे गरासा। करम फल इच्छया की धरे प्यासा॥
सकाम बुद्धी नहीं परसे धीरा। करम जाल अत पाये क्रीड़ा॥
ज्यूँ ज्यूँ करम नवीन करीजे। वासना जाल त्यूँ अधिक लखीजे॥
ना वासना नासे ना करम द्वन्द जाई। माया चक्कर में नित रहे समाई॥
अपनी कलपना खेद अत दीना। बारम्बार करम लपटीना॥
बहु चतराई धारे जीया। बिना सत सूझ ना शान्त लखीया॥
बहु चतराई ये गवन निशानी। मलीन जतन देवे भ्रम खानी॥
भरम को धार अत चंचल होई। अती कलेश में नित समोई॥
सतपुरषों की सीख विचार। छूटे भरम माया अन्धकार॥
अपने जीवन का करो उपाये। सत सिखया नित खोज सुखदाये॥
साची शरधा मन माहीं धार। त्रैगुन माया का तजो विकार॥
अपनी भरमन आप त्यागो। सतपुरषों की सेवा लागो॥
अपनी चतराई आपे छेद। सत सरूप का तब पावें भेद॥
नित ही नित मन माहीं विचार। संकट रूप सकल संसार॥
निर्मल मारग खोज तत्त ज्ञान। काल करम से मिले कल्यान॥

एक प्रभ पर पावें विश्वास। जनम जनम की मिटे तिरास॥
प्रभू सरन जो हिये विचारी। भरम जाल सब मिटे ख़वारी॥
वासना जाल का होवे अभाओ। निर्मल प्रीत जो प्रभ की पाओ॥
सब संकट का एक उपाए। प्रभ चरनी लयो प्रीत कमाए॥

**माया भरम असगाह से, सो जन निस्तर पाए।**
**'मंगत' निर्मल प्रीत से, जो प्रभ का नाम ध्याए॥ 1419**

सकाम भाओ में बुद्धी भरमाई। स्वारथ अगन नित ही जलाई॥
परमारथ तत्त सार नहीं सूझे। सकाम भाओ वस होये भ्रम में जूझे॥
निर्मल विचार करो गुनी मीता। सकाम भाओ ये दुःख की रीता॥
प्रभ आधार नित जीवन धारो। तिसकी आज्ञा मन माहीं विचारो॥
अपनी भरमन गुर शबद से तोड़। पूरन प्रभ के चरन चित जोड़॥
साचा स्वामी सरब सुखदाता। पलक पलक रह्यो नाम रँगराता॥
एक प्रभू का चित में भाओ। दूजी वस्त ना राखें चाओ॥
माया भरम असगाह को त्याग। निर्मल प्रीत प्रभ चरनी लाग॥
माया भ्रम से कुछ हाथ ना आई। मिथ्या मोह नित जीया जलाई॥
ताँ सों साचा मारग खोज। प्रभ दाते की पाओ सोझ॥
कारन कर्ता जो सरब का स्वामी। सिमर दयाल पावें बिसरामी॥
गिनती गिने ना पावें छूट। एको नाम चित अन्तर लूट॥
बारम्बार चित माहीं पुकार। त्रैगुन जाल मिटे अन्धकार॥
कलपना त्याग इक नाम को चेत। मारग ज्ञान सब हरे विखेप॥
सब कुछ प्रभ का हिये पछान। अपने मन का त्याग गुमान॥
दीन भाओ चित अन्तर राख। मारग मुकत की रसना चाख॥
आपामती भरम तज नीत। प्रभ आधार पाओ परतीत॥
सतगुर साजन की सीख विचार। पूरन प्रभ को हिरदे धार॥
निर्मल विश्वास जब चित में पाई। त्रैगुन जाल सब लीन समाई॥

**पूरन प्रभ विश्वास से, जीव पाए सत ठौर।**
**'मंगत' मिटे सब वासना, काल करम की दौड़॥ 1420**

एको प्रभ जीवन तत्त जान। एको प्रभ आनन्द की खान॥
एको प्रभ सब हरे सन्ताप। निर्मल चित से करो नित जाप॥
प्रभ की कथा परमाद विनासे। निर्मल ज्ञान तत्त रूप परगासे॥
प्रभ का चिन्तन हरे सब पीड़ा। निर्भय धाम पाए पार गहीरा॥
प्रभ की पूजा मन सुख उपजावे। तीन ताप की तपन बुझावे॥
प्रभ का ध्यान है मूल ठिकाना। निर्मल प्रीत तिस चरन समाना॥
प्रभ की उस्तत सब विगन निवारी। त्रैगुन जाल से मिले निस्तारी॥
प्रभ की ओट केवल जग सार। पूरन करमी कोई करे विचार॥
प्रभ का सिमरन परमगत देवे। अभयपद निर्मल सतनाम लखीवे॥
प्रभ की शरधा पूरन तप योग। निर्मल करमी कोई पाए संजोग॥
प्रभ की भगत सब बन्धन नासी। अखण्ड कला तत्त जोत परगासी॥
प्रभ का ज्ञान अपरम धन मीत। मिटे तृष्ना सब भरम पलीत॥
प्रभ सरनी जो रह्या समाई। तिस जन मिले अधिक वडयाई॥
निर्भय होये तत्त नाम पछानी। एक प्रभू की नित कथे कहानी॥
अन्तर सूझे प्रभ पूरन देवा। मिटे अन्धकार पावे सत सेवा॥
सेव सेव के भयो निहाल। सरब शकत प्रभ मिले दयाल॥
अनन प्रीत धारी चित माहीं। त्रैगुन जाल मिटे परछाईं॥
भरमन नासे निहसंग पद पाई। अपरम अपार घर शोभा लखाई॥
सब संसार का निरनय पायो। एको शकत सरब वरतायो॥

**माया भरम त्याग के, इक साहब सरन पछानी।**
**'मंगत' अत शोभा मिली, नित निर्भय सुख समानी॥ 1421**

चंचल चतराई मन की त्याग। एक प्रभू की सरनी लाग॥
संकट नासे पावें सत शान्त। प्रभ की सरन सब हरे भरान्त॥
अपनी हिकमत दुःख जाल बिस्तारी। प्रभ की सरन देवे शान्त अपारी॥
तजो सयानफ़ सत ठाकर चेत। नित रखयक सो सरब समीप॥
तिसकी शक्ती सब में वरताई। तिसकी महमा सब में दरसाई॥
तिसकी जोत सरब परगासी। सिमर दयाल पुरख अबनासी॥

तेरे घट की जाननहारा। नित नित जो तेरा रखवारा॥
निर्मल प्रीत तिस चरनी लाग। जनम जनम का सोता जाग॥
सत विश्वास पाओ तत्त मूल। तीन ताप की बिनसे सूल॥
प्रेम प्रभू चित आए समाई। सकल दोष माया दुःख जाई॥
नित ही नित ठाकर सत सोध। भरम ग़ुबार सब मिटे बिरोध॥
माया चक्कर ये शान्त ना देई। बारम्बार गरभ को लेई॥
निर्मल समाँ सत सीख विचार। साचा ठौर प्रभ चरन पधार॥
ताप तपन सब होये नास। निर्मल प्रीत जो चरन उपास॥
साचा स्वामी किस भाँत सालाहिए। तिसकी शोभा सरब लख पाइये॥
सत साजन नित पूजा धार। प्रभ आधार हो पायें छुटकार॥
करम का संशय अत दीरघ जाल। गोबिन्द सिमरे तब होये निहाल॥
वासना अगन दुःख देवे अपारा। मिटे विखाद जब जपें करतारा॥
दुर्मत भरम ये जगत करीड़ा। प्रभ का सिमरन देवे सत धीरा॥

**दुबधा दुर्मत त्याग के, करता जापो नीत।**
**'मंगत' बिपता सब मिटे, जब निर्मल पावें प्रीत॥ 1422**

प्रभ की प्रीत सकल सुख सार। करे पछान कोई गुनकार॥
माया व्याधी सब भरमन नासे। निर्मल नाम जो गुनी बिलासे॥
अन्तर नाम कीजे नित जाप। भय भरम सब नासे ताप॥
उट्ठत बैठत इक नाम कमाई। निर्मल प्रीत प्रभ चरन समाई॥
आज्ञा प्रभ में जीवन नित धारी। वासना करम मिटे अन्धकारी॥
नित नित साजन प्रभ नाम चितार। अखण्ड शान्त पूरन भण्डार॥
काल चक्कर ये संशय जग पेख। पूरन रूप नारायन इक लेख॥
सतपुरषों की ये साची सीख। केवल सत प्रभ रूप अलेख॥
नाम रूप जग आवे जाए। पलक पलक बहु रूप वटाये॥
अज अबनाशी पूरन देव। निर्मल चित से पाओ सेव॥
प्रभ की सरन चूके सब ताप। निर्मल नाम जप अन्तर थाप॥
काल कलपना भरम होये नास। निर्मल नाम चित माहीं उपास॥
सो गुनवन्ता पूरन गुनधारी। दुबधा त्याग जिस जपा मुरारी॥

सो ही शूरा माया रन जीते। जिस निर्मल प्रीत प्रभ चरन पुनीते॥
साची ओट राखो मन माईं। सिमर दयाल सरब सुख थाईं॥
साचा जीवन नित करो विचार। एको टेक परस करतार॥
सत मारग ये ही गुप्त अलेख। अखण्ड प्रीत प्रभ चरनी पेख॥
माया मोह तज मूल अज्ञान। साचा स्वामी घट माहीं पछान॥
आसा पूरन पावें सत धीर। नाम जपत सब मिटे तक़सीर॥

**दीनदयाल की सरन में, सकल विनासे ताप।**
**'मंगत' निर्मल प्रीत से, नाम प्रभू चित जाप॥ 1423**

अनर्थ कल्पना जो अन्धमत धारी। नाम जपे सब मिटे ख़वारी॥
काल करम जो जाल फैलायो। नाम जपे तब लीन समायो॥
आसा तृष्ना अत उठे ग़ुबार। नाम की पूजा देवे छुटकार॥
आपा पर जो भरम लखाई। प्रभ सिमरन सब खेद मिटाई॥
आध व्याध उपाध दुःख खानी। प्रभ का सिमरन सुख सार कल्यानी॥
नित्यानित प्रभ केवल पूज। दुर्मत त्याग पाओ निर्मल सूझ॥
अखण्ड शान्त पद परले पार। निर्मल प्रीत चित माहीं चितार॥
करम जाल दुबधा सब जाई। निर्मल प्रीत प्रभ चरन लखाई॥
दीरघ रोग माया पासार। प्रभ का सिमरन सब हरे विकार॥
निर्भय हूआ प्रभ नाम कमाये। अपने आप में गयो समाये॥
नित साची प्रीत कमाओ गुनिया। स्वपन समान चक्कर ये दुनिया॥
साचा ठाकर नित ही नित चेत। मोह माया का तजो विखेप॥
अखण्ड सुखदाता सो पारगरामी। नित ध्याओ प्रभ अन्तरयामी॥
सरब परकास सो निर्मल देवा। मूढ़मती कर नित ही सेवा॥
तिस बिन तेरा नाही ठिकाना। मिथ्या भरम माया भरमाना॥
परम कल्यान देवे जगदीश। निर्भय होये सब मिटे संदेश॥
देह अभिमान ना नासे मीता। काल करम की जो देवे परतीता॥
साचा ठाकर जब चित ध्याई। देह अभिमान दुःख मूल वंजाई॥
तन मन त्याग प्रभ सरन पछानी। करम जाल की होवे हानी॥

**करम वासना जब मिटी, तब पायो पूरन देव।**
**'मंगत' सरब स्वामी आप है, नित प्रेम से कीजो सेव॥ 1424**

अपना मूल करो पहचान। झूट भरम में ना हो ग़लतान॥
अपना साचा ठौर विचार। जाँ से आया देखन संसार॥
अपना साचा स्वामी पेख। जिसने रचया ये जगत विशेख॥
अपना निर्मल आधार पछान। तीन काल जो करे सावधान॥
अपना निर्भय खोजो धाम। जाँ को परस पावें बिसराम॥
झूट देही में क्यों भरमाया। सरजनहार नहीं अन्तर ध्याया॥
झूट देही के भोग मन माने। कारन कर्ता नहीं कियो पछाने॥
झूट देही के बहु साथ बनाये। जीवन दाता नहीं एक पलक ध्याये॥
अपनी सयानफ़ बहु बिध बिस्तारी। आज्ञा प्रभ नहीं हिये विचारी॥
अपनी चतराई से सुख नित लोचे। प्रभ की प्रभता नहीं पलक चित सोचे॥
झूटा जीवन सत कर मानी। तिसमें करें दीरघ अभमानी॥
इन्द्री भोग में नित गरसाई। सरब का ठाकर नहीं एक ध्याई॥
जो कुछ कीया अनमत धारी। देवे कलेश भ्रम संकट आपारी॥
सतगुर साजन की सरन पछान। निर्मल लेख का पावें निधान॥
मनसा रोग का मिले उपाए। एको नाम संग प्रीत लखाए॥
सब विषयों से पाएँ वैराग। निर्भय धाम का मिले अनुराग॥
शोभा करते की नित गायें। सतगुर बचन मन माईं ध्यायें॥
मन को ठाकें सतनाम लखायें। भव दुस्तर से तब निस्तर पायें॥
प्रभ के रूप संग मेल मिलाई। तिस साजन शोभा अत पाई॥

**निर्मल तत्त विचार के, मनुआँ शान्त समाई।**
**'मंगत' शोभा प्रभ रूप की, पलक पलक लख पाई॥ 1425**

झूट जीवन का राग त्याग। एक साहब का पाओ अनुराग॥
क्यों भरमाया जग जीवन पाए। प्रभ की महमा नहीं पलक ध्याए॥
देह अभिमान में क्यों ग़लतान। पलक में होवे राख समान॥
जग सम्पति पाये क्यों गरबावे। एक पलक में छोड़ के जावे॥

धार चतराई नहीं मूल पछाता। झूठ भरम में नित भरमाता॥
साचा जीवन करो विचार। सतपुरषों की सुनो पुकार॥
देह का साखी कर्ता जोई। तिसकी शोभा चित माहीं परोई॥
आन त्याग पावें सत सेवा। हरखत होवें तब प्रभ देवा॥
तन मन धन जानो प्रभ दात। मिले सन्तोष अभयपद वाट॥
नित ही नित घट सेव विचार। ठाकर पूज परम सुख सार॥
घट तेरे में रह्या समाई। तिसकी शकत से जीवन पाई॥
चेतन देव सिमर सुख खानी। घट घट अन्तर सुन अनहद बानी॥
गुर का सिख कोई भेद लखाए। भरमन त्याग प्रभ चरन ध्याए॥
करम का मारग पूरन ना होई। आवागवन नित चक्कर फरोई॥
प्रभ अबनाशी जब कियो पछाना। करम चक्कर सब पूर समाना॥
आसा पूरन मनसा पूर। सरब नारायन मिले हज़ूर॥
काल करम की मिटी प्यास। गुर की सीख कीना परगास॥
अन्तर चित शोभा प्रभ पाई। रंचक वरनन में नहीं आई॥
आप जाने अपना परताप। पारगरामी को पल पल में जाप॥

**शोभा पूरन प्रभ की, नित ही गाओ मीत।**
**'मंगत' निर्मल गत मिले, मनुआँ होये पुनीत॥ 1426**

प्रभ सिमरन मन करे सुचेत। काल कलपना मिटे विखेप॥
प्रभ सिमरन मन करे उजियारा। नाम रूप हरे अन्धकारा॥
प्रभ का सिमरन जग सार पहचान। गुरमुख विरला कोई करे बखान॥
जिस अन्तर प्रभ एक ध्याया। त्रैगुन जाल हरी सब माया॥
भरम त्याग के निर्भय हूआ। एक नाम में जीवत मूआ॥
आसा त्याग होये निरवास। अन्तर चित सिमरे अबनास॥
डोलन त्याग के इस्थित पाई। मिथ्या छोड़ सतनाम कमाई॥
बाहिरमुख से अन्तरमुख आया। माया त्याग प्रभ एक ध्याया॥
प्रभ की सरन पाया सुख पूर। जल थल नज़री आये हज़ूर॥
मन तृपते बुद्ध नेहचल होई। देह अभिमान की भरमन खोई॥

चेतन संग चेतन हो जीया। एको प्रभ सरब सुख थीया॥
सुख की खानी एको जग देवा। पूरन भाग से पाई सत सेवा॥
गुर के बचन धरी परतीत। दुबधा त्याग प्रभ जपा पुनीत॥
सिमर सिमर के भयो आनन्द। गुर पूरे दीना नाम बख़शन्द॥
महमा प्रभ की गाओ नित मीत। त्यागो मन की झूट परतीत॥
एह मन भरम में आवे जाई। सत विसार के नित डोलाई॥
सत सरूप खोजो सत सार। अपना कारज आप सँवार॥
पूरन सिमर पूरन पद पाएँ। सतगुर पूरन ये भेद समझाएँ॥
जग जीवन की झूटी आसा। सिमर गोबिन्द पावें परगासा॥

**अन्तरगत चानन होये, मिथ्या मोह भ्रम नास।**
**'मंगत' निर्भय सुख मिले, पाये ज्ञान परगास॥ 1427**

निर्मल ज्ञान ये ही सुख सार। प्रभ के नाम का मिले विचार॥
निर्मल ज्ञान ये ही तत्त मूल। साची भगत मिले अतोल॥
नित ही नित चित अन्तर चेत। सत ठाकर जप परम पुनीत॥
भरम चक्कर से पावें शान्त। मन के नासें सकल भरान्त॥
एक प्रभू संग प्रीत लखाई। सकल दोष माया दुःख जाई॥
सरब शक्ति का सो ही भंडार। सरब सिद्धी का सो दातार॥
सरब का जीवन सो ही देव। मूढ़मना कर नित ही सेव॥
सरब ज्ञान का सो ही वक्ता। पूरन पुरख आपार आलखता॥
सरब शकत का सो ही दाता। आदी पुरख पार विधाता॥
सबकी गिनती सो ही जाने। उतपत परलय की सार पछाने॥
ज्ञान सरूप सो ही प्रभ देव। पूरन पूर आलख अभेव॥
नित ही घट में धरो ध्यान। आज्ञा तिसकी पल पल मान॥
अपना आप गँवावें ताप। निर्मल प्रीत पावें प्रभ जाप॥
प्रभ को जपत प्रभ रूप समाई। दुःख द्वन्द नासे भरम काई॥
तपन विनासे ठान्डा चित होई। निर्भय नाम की सार परोई॥
घट घट अन्तर एको चीना। आद नारायन सरब रमीना॥

साची सेव करो मन मेरे। प्रभ की सरन में सुख घनेरे॥
मिथ्याकार की प्रीत त्याग। निर्मल ज्ञान में उठ के जाग॥
सरब जीयाँ का सो ही स्वामी। नित ध्याओ प्रभ अन्तरयामी॥

**सरब परकाशी शकत जो, मन में सदा आराध।**
**'मंगत' दीनदयाल प्रभ, सब दूर करें अपराध॥ 1428**

प्रभ की सरन जो जन पाई। तीन ताप माया दुःख जाई॥
प्रभ आधार होये आप त्याग। केवल नाम संग प्रीती लाग॥
प्रभ की पूजा सेवा पेख। प्रभ की महमा का नित लिख लेख॥
सो ही पुरख वडयाई योग। भरम खेद नहीं पाए संजोग॥
अपने आप में पूर समाई। अपनी गत मित आपे पाई॥
आपे दाना सरब ज्ञात। अपना आप जाने परताप॥
करो डण्डौत पूरन प्रभ देव। साची भगत पाओ सत सेव॥
प्रभ के चरन करो अरदास। मोह माया की मिटे प्यास॥
प्रभ के नाम में रहो ग़लतान। काल करम ना कीजे हान॥
दृढ़ विश्वास प्रभ का चित पेख। निर्मल ज्ञान का लिख नित लेख॥
महमा कही कथी नहीं जाई। प्रभ दाते की अत वडयाई॥
जिस पाया सत रूप हज़ूर। तिसके चरन की होवें धूड़॥
दुबधा त्याग पावें परगास। एक प्रेम में करें निवास॥
साची भगती मन रीझावे। सत साजन विरला कोई पावे॥
भगत पाए मन भयो निहसंग। पारब्रह्म घट लागा रंग॥
उस्तत करो दिवस और रात। ध्यान करो नित बैठ परभात॥
रोम रोम परसें आनन्द। अडोल अचाहक पुरख अखण्ड॥
तत्त परकाश सब खेद निवारी। सतगुर पूरे भये किरपाधारी॥
साची जुगत मन किया निहाल। निर्मल प्रेम प्रभु पायो किरपाल॥

**कृपा निधान प्रभ सिमर के, मन तन शान्त समाई।**
**'मंगत' विरले हरजन, सत शोभा लख पाई॥ 1429**

साची शोभा प्रभ की पाई। दीनदयाल घट घट सहाई॥

तिसको त्याग दूजे उठ लागे। सो जन जग में बड़े अभागे॥
अमरत छोड़ नित बिख करे पाना। कह बिध होवे साजन कल्याना॥
जो कुछ कीना सो ही दुःखदाई। अन्धमत नित भरम लखाई॥
देह के मोह में अती गरासा। करम भोग पाई अधिक प्यासा॥
सरजनहार नहीं ध्यायो चीत। जो कीना सो ही विपरीत॥
समाँ अमोलक दियो गँवाई। वाँग जुवारी कछु हाथ ना आई॥
बहु पछताए ये देख जग मेला। अत बिस्माद प्रभ रचया खेला॥
सत साधू जब मेल मिलाए। अन्तर खोज सत सार लखाए॥
मिले विश्वास प्रभ चरन अमोल। परसे ज्ञान प्रभ चरन अतोल॥
साची सेवा प्रभ सिमरन से पाई। तन मन त्याग प्रभ एक ध्याई॥
अत उपकार सन्तन का भयो। अन्धला जीव सत सार लख लयो॥
सार पछान के तृपत समाई। सन्तन मेहर मिली वडयाई॥
भरम गढ़ देही मूल पछाना। आतम जोत घट परसी निर्वाना॥
पाया भेद दुबधा भई दूर। निर्मल नाम का चढ़े सरूर॥
वाह वाह कथा अचरज लख पाई। वस्त बिना इक वस्त लखाई॥
रूप बिना इक सार पछानी। सरब गत पूरा पुरख निर्वानी॥
मिले विचार मन निर्मल भयो। सिमर स्वामी नित जीवन जीयो॥
अबगत पुरख घट परगट पाई। सकली दुबधा शान्त समाई॥

**आतम तत्त परगट भयो, सरब गुनों की खान।**
**'मंगत' दुबधा सब मिटी, जीव भयो निर्वान॥ 1430**

सत तत्त खोज परम सुखरासी। नित आनन्द पुरख अबनासी॥
तिसकी सरन काल भय नासे। दुबधा दूर सत शान्त परगासे॥
पूरन पुरख की राखो ओट। बौहड़ ना पावें काल की चोट॥
सरब दयाल पूजो प्रभ एक। मनसा लीन पायें ज्ञान अलेख॥
नित ही मन राखो प्रभ माहीं। आद पुरख सरब सुख थाईं॥
अन्तर चित में करो अरदास। मोह माया की मिटे प्यास॥
आवन जावन से होत रिहाई। सत सम्पत प्रभ नाम ध्याई॥

करम वासना से जन होये मुकता। केवल शबद सत रूप संजुगता॥
पूरन रूप तत्त करी पछान। सरब में पसरे पुरख निर्वान॥
करम का जाल सकल जग थीना। चारखानी जो रूप लखीना॥
निहकरम सरूप केवल प्रभ आप। सचिदानन्द तत्त सरब व्याप॥
करम संजुगत हो नित भरमाई। द्वन्द भरम में नित डोलाई॥
इच्छया बन्धन नहीं नासे छेद। पलक पलक में परसे खेद॥
भरम का जीवन ये जग पहचान। राग द्वेष में पसरे अनजान॥
छिन हरखे छिन शोक समाई। करम वासना अत ही प्रगटाई॥
अपनी भरमन बहु चक्कर दिखलाए। भाँतक भाँत दु:ख सुख लखाये॥
मन का रोग प्रभ मेल से जाई। निहकरम गती जो भेद लखाई॥
निहकरम सरूप में दृढ़ता राखे। तब परम तत्त की रसना चाखे॥
निर्भय रूप नारायन एक। निहचल चित से राखो सत टेक॥

**परम तत्त पहचान से, करम वासना नास।**
**'मंगत' मिले सत शान्ती, अखण्ड शबद परगास॥ 1431**

दृढ़ निश्चय प्रभ चरन में पाई। आज्ञा तिसकी पल पल मनाई॥
जो कुछ हुआ तिस हुकम पछानी। आप त्याग शोभा नाम की जानी॥
ममता त्याग सिमरे सत नाओं। बन्धन नास पाये निहचल थाओं॥
निर्मल भगती का मारग ये ही। प्रभ आज्ञा में जीवन लेई॥
अपनी हिकमत सकल त्यागी। एक बिरह प्रभ चरन में लागी॥
सत अनुराग का पीवे नित नीरा। नाम कमावे कोई मतधीरा॥
मिथ्या जगत का मोह चुकाई। पूरन प्रभ संग प्रीत कमाई॥
प्रभ बिन दूजा नहीं भावे चीत। दीनदयाल के गावे नित गीत॥
दु:ख सुख प्रभ चरनी में सौंपे। ममता त्याग पावे ज्ञान अनूपे॥
अन्तरमुख मनुआँ तब आई। आज्ञा प्रभ में जब जीवन पाई॥
अन्तर में अन्तर नित सोधे। पाप कल्पना करे सकल निरोधे॥
परम पुरख का पावे परगास। दुबधा त्याग निर्भय निवास॥
पूरन करमी ये सोधे सार। प्रभ दाते की नित सिफ़त विचार॥
सकल व्याधी मन की त्यागे। एक नाम में रहे नित लागे॥

दूजी वस्त ना बान्छे चीत। सिमरे नाम परम पुनीत॥
ज्यों ज्यों नाम प्रभु का गाई। ममता दूर समता चित पाई॥
दुःख द्वन्द पर पावे जीत। गुर के बचन रखे परतीत॥
साखी पुरख शबद धुनकार। अन्तर गरजे दसवें द्वार॥
छाड के पिंड भयो निरास। पाया सत ठाकर अबनास॥

**जग संसा सब नास भयो, सतनाम पायो आधार।**
**'मंगत' अन्तरगत माहीं, प्रभ पाया किरपाधार॥ 1432**

पूरन प्रभ को अन्तर खोजे। जग संसे का निरनय बूझे॥
मन की वासना सकल त्यागे। आज्ञा प्रभ में रहे नित जागे॥
निष्काम बुद्धी जब परगट पाई। सत सरूप घर भेंटे आई॥
सकल करम प्रभ इच्छया में त्यागी। द्वन्द त्याग भयो अनुरागी॥
अन्तर बाहर इक नाम कमाई। प्रभ की प्रभता में तृपत समाई॥
प्रभ इच्छया में सब रचना देखी। मोह माया चित कभूँ ना लेखी॥
नाम ही खावे नाम ही पीवे। नाम सरूप में जीवन जीवे॥
एक नाम संग मनुआँ जोड़े। और जगत की प्रीती छोड़े॥
नाम की रसना ज्यों ज्यों खाए। तत्त परगास शबद घर पाए॥
मूल ठिकाना शबद पछानी। पल पल सिमरे तत्त्व ज्ञानी॥
अन्तर में रहे नित लवलीना। साखी रूप घर परगट चीना॥
सकल जगत का भेद पछाता। सत सरूप में भयो रँगराता॥
पूरन करनी फल पायो पूरा। मूल पछान से मिटे जम झूरा॥
तृपत भयो प्रभ नाम को खाई। अब कुछ संशय जग में नाहीं॥
पूरन पूर पुरख निर्वानी। अन्तर बाहर करी पछानी॥
तत्त गत रूप अजर अबनासी। सिमर सिमर गई भरम की फाँसी॥
नाम रूप इच्छया का फंदा। काल करम जो अत दुर्गन्धा॥
सकल ताप भये चित दूरे। परमानन्द पायो शबद हज़ूरे॥
साखी रूप घट परगट भयो। मोह माया का संशय गयो॥

**अजर सरूप पछानया, एक शबद निरधार।**
**'मंगत' तिसके प्रेम में, जीव भयो मस्तार॥ 1433**

सत सम्पत प्रभ नाम विचारी। निर्मल निश्चय अन्तरगत धारी॥
नेहचल ध्यान चित अन्तर पाई। सत सरूप की रसना खाई॥
निर्मल बानी शबद निर्वान। अनहद नाद प्रेम की खान॥
ताँ में सुरती ध्यान लगाई। तीन ताप की तपन मिटाई॥
आनन्द भयो सतनाम गत जानी। परम पदार्थ प्रभ रूप पछानी॥
अकारन जोत सरब परकाशी। ज्ञान सरूप सत शबद अबनाशी॥
गुरमुख मारग में भयो परबीन। साचे नाम की रसना नित चीन॥
मिथ्याकार से उपरस होई। इकागर चित इक नाम परोई॥
शबद धुन आकाश गुंजारी। तृष्ना त्याग मन भयो मतवारी॥
नित ही नित रसना को खाई। पूरन प्रभ की अधिक वडयाई॥
साचा गीत अन्तरमुख सूझा। पार पुरख की परसी पूजा॥
तृपत भयो सत वस्त लखाए। अतुल परमान शकत सुखदाए॥
सिमर सिमर देह मद को हरया। परगट पुरख घट में विचरया॥
जाने भेद मिटे सब खेदा। परमानन्द पद परस अछेदा॥
सिद्धाँ पुरषाँ जानी सार। अन्तर शबद कीना विचार॥
शबद में सुरती नेहचल कीनी। भरम छाया सकली भई छीनी॥
सत अनुराग पाया निर्वान। शबद पहचान से भई कल्यान॥
मारग अत कठन संसार। सन्तन सीख से पाया पार॥
नित ही जुगत कमावे योग। सत सरूप की रसना नित भोग॥

**अन्तर शबद पहचान के, मनुआँ शून समाई।**
**'मंगत' निज सरूप में, परम आनन्द को पाई॥ 1434**

इच्छया जाल है अधिक ग़ुबार। सत की सेव हरे अंधकार॥
जो जन परसे नाम गोबिन्द। मोह माया से छूटे जिन्द॥
चेतन पुरख संग केवल प्रीत। भव जल दुस्तर लीना जीत॥
साची साखी गाओ प्रभ नाम। डोलन त्याग पावें बिसराम॥

चिन्ता मोह भय भरम चुकाई। जो चित निर्मल नाम ध्याई॥
सत कर पूजो निर्मल देव। पूरन पावें जग में सेव॥
कर्ता हर्ता सरब का मूल। पसर रह्या सूक्षम अस्थूल॥
नित ही रसना अन्तर खाओ। नाम सिमर के परम पद पाओ॥
सकल रोग का दारू नाम। अन्तर चित लीजो बिसराम॥
निमख निमख आज्ञा प्रभ पेख। करम फल इच्छया जाये द्वेख॥
अपना आप त्याग भ्रम मूल। बौहड़ ना व्यापी काल का सूल॥
सतगुर पूरे का सुन उपदेश। नाम निरंजन में करो परवेश॥
एह जग मिथ्या भरम विकार। साखी पूज पावें सुख सार॥
साचा मित्तर तीन काल समीप। भाओ प्रेम से सिमर पुनीत॥
करम तृखा अत दीरघ रोग। वासना जाल का पाये संजोग॥
कलप कलप कर नित दुःख पाई। प्रभ सिमरन बिन ठौर ना काई॥
सत साजन सुनो सत सार। मिथ्या जगत सत करतार॥
नित ही कर्ता पुरख पहचान। सतगुर साजन का सुन विख्यान॥
साची शरधा भाओ भगत विचार। नाम सिमर के उतरें पार॥

**मारग ये संसार है, मन का सकल बिस्तार।**
**'मंगत' प्रभ की भगत से, हरजन पावे पार॥ 1435**

मन की क्रीड़ा अत दुःखदाई। तीन काल में जीव तपताई॥
अनर्थ कल्पना पल पल धारी। अती भयानक मन कारगुज़ारी॥
मोह माया में रहे परबीना। अनंक भोग रसना नित चीना॥
नित ही करम विलक्खन कीजे। अपनी भरमन बहुताप को दीजे॥
मनुआँ नित ही नित डोलाई। प्रभ की भगत से शांत समाई॥
मनुआँ नित ही नित तिरखावे। प्रभ सिमरन से तृपत समावे॥
मनुआँ नित अन्धकार विचारे। मिल सतसंग पावे उजयारे॥
मनुआँ नित ही पाप को खोजे। सत विश्वास से सत मारग सोधे॥
स्वारथ में रहे नित लागा। इच्छया करम में अत धरे अनुरागा॥
अत दुस्तर इस मन की लीला। कल्प विकल्प देखे अचरज मेला॥

भाँतक भाँत इच्छया प्रगटावे। एक पलक नहीं शांत समावे॥
अती करीड़ा करे दिन राती। शुभ अशुभ करम नित खाटी॥
ज्ञान बिना नहीं पावे ठौर। भरम की बाँधी अत अचरज दौड़॥
नाना भाँत जो रचना दिखलावे। तिसके मोह में नित भरमावे॥
मानुष जनम की सार विचार। दुस्तर मन का करो सुधार॥
सत परमेश्वर हिरदे जाप। आज्ञा तिसकी दृढ़ कर थाप॥
अपनी हिकमत सकल त्याग। प्रभ के नाम में रहो लिव लाग॥
अन्तर बाहर प्रभ दृढ़ कर पूजो। मिथ्या कल्पना नहीं मन में सूझो॥
एक विचार एक आधारा। सिमर गोबिन्द पावें निस्तारा॥

**मूढ़मती को धार के, क्यों माया मोह भरमाए।**
**'मंगत' रचना स्वपन की, नहीं जीव तृपत को पाए॥ 1436**

प्रकिरत का बांधा अत दु:ख पाए। अनंक वासना नित भरमाए॥
जाग्रत स्वपन सुखोपत भोगे। इच्छया करम लागा दीरघ रोगे॥
अनन्त सरूप रचना घट धारी। तिसके मोह में नित पाए ख़वारी॥
सत ठाकर नहीं करे पछानी। अपने भरम में नित ग़लतानी॥
काम क्रोध मद में रहे मतवाला। बन्धन सरूप मारग नित घाला॥
अत जंजाल तृषना बिस्तारी। तिसमें फँस के पाए ख़वारी॥
सकल विकार त्यागो नित मीता। एक प्रभू संग धरो परीता॥
सत सरूप केवल प्रभ एक। और कल्पना सब भरम भुलेख॥
आनन्द सरूप केवल प्रभ जान। और कलपना दु:ख की खान॥
साचा ठौर केवल जगदीशा। करम वासना सब भरम सन्देशा॥
निर्भय सुख एको प्रभ देव। तज अभिमान पाओ सत सेव॥
नित सिमरो प्रभ पारगरामी। नित पूजो प्रभ अन्तरयामी॥
दृढ़ विश्वास प्रभ नाम में राखो। ममता त्याग अमीरस चाखो॥
दृढ़ अनुराग पाओ सतनाम। सिमर सिमर लीजो बिसराम॥
निज सरूप की सार विचार। झूट देही का तज मान आपार॥
देह बिनसे निश्चे कर मीत। सरूप पछान जाये दुखरीत॥

घट घट व्यापक जो आनन्ददाता। साखी रूप पुरख बिधाता॥
तिसकी पूजा तिस सरन विचार। अपना स्वामी नहीं पलक विसार॥
दृढ़ निस्चे से सेव कमाओ। दुर्मत त्याग परम सुख पाओ॥

**नित रखयक नित ही आनन्द दाता, एको प्रभ पहचान।**
**'मंगत' तिसकी सेव से, जाये भरम बिख खान॥ 1437**

पूरन प्रभ को अन्तर पूज। निर्मल रसना पल पल सूझ॥
नित परकाशे काची देही। सत ठाकर सो परम सनेही॥
दीनदयाल की ओट विचार। मानुष जनम की लख सत सार॥
दुबधा त्याग प्रभ एक ध्याओ। इच्छया भरम का होवे अभाओ॥
प्रभ आज्ञा में जीवन राखो। मिटे विकार रसना सत भाखो॥
नित जीवावनहार जो स्वामी। सिमर सिमर लीजो बिसरामी॥
कर्ता हर्ता करके पूज। सरब प्रकाशी एक प्रभ सूझ॥
एक निहों रख एक आधार। निर्मल चित से करो विचार॥
साची भगती घालन घाल। भरम नासें प्रभ मिलें दयाल॥
नाशवान रचना जग पेख। अबनाशी सरूप तू लख नित लेख॥
सतगुर पूरे का बोल विचार। दुर्मत त्याग सिमर करतार॥
अत जंजाल ये परकिरत बिस्तारा। तिसके मोह में नहीं भजें करतारा॥
सत निश्चय प्रभ चरन में राखो। अखण्ड शान्त रसना घट भाखो॥
सकल करम को मन से त्याग। प्रभ आज्ञा में रहो नित लाग॥
मनुआँ उज्जल सत सार बखानी। नाम सिमर के परमगत जानी॥
ऐसी करे कमाई जोए। दुर्लभ जीवन तिसका होए॥
अपने मन की सब बिपत निवारी। सत ठाकर का भयो पुजारी॥
अन्तर गुफ़ा में डेरा कीना। नाम सिमर के नित तृपतीना॥
धन्दूकार ये जगत जंजाला। प्रभ की भगत चित करे निहाला॥

**अखण्ड शान्त प्रभ रूप है, जो परसे सुख पाए।**
**'मंगत' बिन हरिनाम के, तीन काल भरमाये॥ 1438**

जाग सवेरा प्रभ नाम सम्भाल। कूड़ कपट सब त्याग जंजाल॥

अपनी भरमन नित बन्धाई। आवागवन का फेर फिराई॥
इच्छया ममता भय मोह विकारा। भज करतार पावें निस्तारा॥
मान त्याग दीनता पेख। नाम निरंजन पल पल लेख॥
दीन भाओ ये मुकत द्वार। तिसको परस पावें छुटकार॥
दीन भाओ से सब दोष निवारी। नित आनन्द प्रभ मिले सुखारी॥
आपामती ये आपदा त्याग। निर्मल शान्त प्रभ नाम में जाग॥
देह की पूजा में ना भरमायो। आतम पूज परम सुख पायो॥
देह के भोग में ना ललचाई। ठाकर पूज सब दुबधा जाई॥
दु:ख सुख देही निस्चे पावे। आज्ञा बूझ सत शान्त समावे॥
करम जाल का देही सागर। आतम पूज होये ज्ञान उजागर॥
देह सुख कारन बहु जतन करीना। मनसा रोग को नहीं पल चीना॥
धर अभिमान करें अत कुटलाई। सत त्याग मिथ्या भरमाई॥
मन के दाओ में कभू नहीं चालो। सत मारग को पल पल भालो॥
मन की क्रीड़ा सब काल निशानी। सतनाम सिमर परम सुख खानी॥
साध जनाँ ने कियो उपकारा। आनन्द सरूप का दीनो विचारा॥
नित ही सन्त सरन में रहाई। प्रभ की शोभा पल पल गाई॥
टूटे बन्धन होवें निहाल। अबनाशी रूप घर मिले दयाल॥
दयानिधान पूरन प्रभ पेखो। तिस बिन दूजी सार नहीं लेखो॥

**उस्तत करो प्रभ एक की, जो निर्भय धाम लखाई।**
**'मंगत' दूजा नहीं सेविये, जो बार बार भरमाई॥ 1439**

अत वडयाई करो दिन रात। पूरन प्रभ के चरन समात॥
पूरन पूजा पूरन सेवा। पारगरामी सिमर प्रभ देवा॥
तेरा बन्धन होवे ख़ुलास। हिरदे माहीं प्रभ एक उपास॥
सतगुर सिखया पलक ना भूलो। भज गोबिन्द जगत का मूलो॥
तीन ताप तपन होई नास। एक नाम सिमर अबनास॥
अत संकट से जीया नित छूटे। नाम सम्भाल बौहड़ गरभ ना लौटे॥
गवन विनास पायें बिसरामा। भजो स्वामी अत निर्मल धामा॥

सरूप विसार क्यों दुःख पायें। मिथ्या मोह में नित गरसायें॥
भज दीनदयाल पुरख अनादी। दुबधा दूर सब मिटे व्याधी॥
कलह कलेश सकल भये दूरे। एक नाम नित जपत हज़ूरे॥
प्रभ दीनदयाल की सरन पछान। अभय सुख परसें पद निर्वान॥
सिमर सिमर के तृपत समाओ। प्रेम की रसना नित नित खाओ॥
भरम अंधकार से मनुआँ छूटे। परम प्रकाश प्रभ नाम रस लूटे॥
देवन देव सरब समराथा। भजो गोबिन्द नाथन के नाथा॥
तेरी बन्दना होवे पूर। अन्तरगत नित जाप हज़ूर॥
प्रभ बिन दूजा निहों त्याग। निर्मल नाम सिमर वडभाग॥
अनन परीत नाम प्रभ जाप। पलक पलक में सुरती थाप॥
एक पलक नहीं मन चलाई। सत सिमरन की ये सार वडयाई॥
व्याध त्याग मन निर्मल भयो। काल करम का संशय गयो॥

**निर्मल टेक प्रभ चरन की, जिस जन लीनी धार।**
**'मंगत' मिथ्या जगत में, तिसके भाग आपार॥ 1440**

अखण्ड वडयाई केवल प्रभ जान। पलक पलक सत सरन पछान॥
सब वस्तू नर होयें विनास। पलक पलक करे काल गरास॥
अबनाशी सरूप केवल इक सार। तीन काल सो रहे भरतार॥
सत सिमरन नित ही नित कीजो। काल कल्पना पलक नहीं सीजो॥
मिटे विकार पावें सत थाओं। निर्मल प्रीत सिमर सत नाओं॥
देह के मोह में कभूँ नहीं भूलो। देह के भोग में कभूँ नहीं फूलो॥
तन मन त्याग पाओ प्रभ विश्वास। निर्मल चित से नित करो उपास॥
कर्ता पुरख अभयगत धारी। जो जो सिमरे पाये छुटकारी॥
निर्भय धाम अनूपम जोती। सिमर दयाल सरब अलोपी॥
आद जुगाद सोही सत रह्या। नित सिमरो प्रभ परम सनेह्या॥
जग संसे में कछु सुख नाई। बारम्बार दुःख रूप लखाई॥
सतनाम केवल प्रभ एक। सिमर सिमर के राखो टेक॥
रचना अत बिसमाद ये धारी। तिसके मोह में प्रभ दियो विसारी॥
नित ही करें विलक्खन काजा। प्रभ सिमरन बिन झूट समाजा॥

धर अभिमान क्यों अन्धमत फूला। करम भोग में क्यों पल पल झूला।
ये रसना ना इस्थिर रही। राख समावे चाम की देही॥
निर्मल बुद्ध से समाँ विचार। साची करनी सिमर प्रभ सार॥
दुर्मत रोग का दारू खाओ। एको नाम परम सुखदाओ॥
रोग विनासे मन लीन समाई। दुबधा त्याग परम सुख पाई॥

**अत दुस्तर ये संसार है, नित अनमत जिया भरमाई।**
**'मंगत' बिन प्रभ भगत के, कभू ठौर नहीं पाई॥ 1441**

पूरन प्रभ की करो अरदास। जो मोह माया की हरे प्यास॥
करता हरता तूँ प्रभ मेरा। राख लयो जन चरनी केरा॥
तुध बिन और मारग ना सूझे। तृष्ना अगनी पल पल लूझे॥
राख लयें प्रभ देवन देवा। अनमत जीव का हरयो भ्रम भेवा॥
तुध बिन मेरा कोई ना रखवारा। निर्मल चित से कियो विचारा॥
नित सरनाई तेरे दर आया। तृपत करो प्रभ पूरन राया॥
नित बन्दूँ तुध चरन आपारी। राख लयो प्रभ किरपाधारी॥
और ना कोई मारग थीना। जाँ से होये ये मन तृपतीना॥
इक तेरी ओट पूरन प्रभ देव। अनमत जीव को दीजो सेव॥
नित कूकर हाँ तेरे द्वार। बारम्बार मैं करूँ पुकार॥
अपनी रसना प्रभ जी दीजो। मन कठोर सकल हर लीजो॥
इस मन की सब अगन निवारो। परम शांत दीजो निरधारो॥
अपने मारग में करो परबीना। पुरख समरथ तूँ ही इक थीना॥
अपने नाम की दीजो परतीत। तूँ दीनदयाल परम पुनीत॥
इस मन को प्रभ दीजो ठौर। कोई ना राखनहार हज़ूर॥
नित सरनी प्रभ तेरे द्वार। डूबे जन को दीजो आधार॥
मन के सकले कष्ट निवार। निर्मल प्रीत दीजो चरन आपार॥
निमख निमख में करूँ अरदास। नित सरनागत हूँ पुरख अबनास॥
नित किरपा कर पारगरामी। चंचल मन को दीजो बिसरामी॥

**आसा जग की त्याग के, इक सरन पाई प्रभ देव।**
**'मंगत' नित रखया करे, सब हरे काल का भेव॥ 1442**

प्रभ सरनी सब खेद विनासे। दीनदयाल की करो अरदासे॥
सरजनहार सदा रखवारी। करो डन्डौत मन बारम्बारी॥
जिसका दीया सब कुछ पाया। तिसकी सरन में रहो समाया॥
देवन देव शकत अथाहे। अनहोई को पल प्रगटाये॥
सब कुछ कारन कर्ता आप। रे मन पल पल तिसको जाप॥
बिपता हरे मंगल को देवे। निर्मल प्रीत जो नाम प्रभ सेवे॥
सन्मुख होय के करूँ पुकार। प्रभ जी राखो अपने दरबार॥
जनम जनम का भरमत जीया। तेरी सरन सुख सार लखीया॥
राख लयो प्रभ परम किरपालू। औगनहार को बख़श दयालू॥
मन का मान सकल हर लीजो। दीन भाओ सत सेवा दीजो॥
इच्छया ग़ुबार से दीजो ख़ुलासी। प्रेम पुँज करो परगासी॥
सकली मन की भरमन हरयो। दीनदयाल तुध सरनी पड़यो॥
आलख अपार तेरा नाओं। अगम अगोचर तेरा थाओं॥
अनाम अनादी सत तेरी किरया। रखया करो जन सरनी पड़या॥
मोह अगन चित की बुझाओ। अपना प्रेम प्रभु प्रगटाओ॥
तपत जीव को ठांड लखाओ। प्रभ जी अपना रूप दरसाओ॥
अनमत मूढ़ा कछु जाने ना सार। कह बिध कथूँ तेरी महमा आपार॥
अपने भाने बख़श प्रभ देवा। साची करनी दीजो सत सेवा॥
कर किरपा प्रभ पार मुरारी। डूबे जन को लयो उभारी॥

**आसा निर्मल चरन की, प्रभ जी हिये समाए।**
**'मंगत' तुमरे रूप बिन, नहीं दूजी सार लखाए॥ 1443**

अनन भगत दीजो सुखरासी। भव बन्धन की काटो फाँसी॥
इच्छया दोख सब मन के नासो। निर्मल रूप अपना परगासो॥
तन मन की सब सुध विसराये। परम प्रीत तेरी चित समाये॥
कर किरपा तूँ सरब दयाल। संकट धारी को करो निहाल॥

दु:ख सुख नहीं पलक जिया चेते। नित पछाने तेरी चरन परीते॥
जब लग देह किरया को धारी। इक उस्तत तेरी आवे विचारी॥
और ना माँगूँ रंचक सार। माँगूँ रसना इक नाम निर्धार॥
पार पुरातन तूँ ही स्वामी। सरब सनातन तूँ अन्तरयामी॥
देवन देव तूँ ही अकाला। सरब का रखयक तूँ ही दयाला॥
अत महमा तेरी प्रभ देव। मूढ़जन को दीजो सेव॥
नित नित करूँ तोहे निमस्कार। साची कीरत प्रभ दीजो सार॥
देह का कोट साहब परगासो। परगट करके रूप अबनासो॥
काम क्रोध मलन सब जाई। तेरी लीला मन रहे समाई॥
प्रेम पदारथ रसना दीजो। ताप तपन सकला हर लीजो॥
सरन आये को दीजो आधार। पूरन प्रभ तूँ किरपा धार॥
संकट हरयो प्रभ पारगरामी। घट घट तूँ ही इक स्वामी॥
अपनी लीला आपे बिस्तारी। खेलें खेल बहु भाँत मुरारी॥
तेरा अबगत रूप निर्भय धाम। सिमर सिमर नित पाऊँ बिसराम॥
सरब जगत तूँ ही परगासें। सम सरूप हो सरब निवासें॥
तेरी महमा तूँ जाने आप। सत साहब तेरा वड परताप॥

**अपनी गत मित आप पछाने, तूँ सरब कला समरथ।**
**'मंगत' माँगे नाम रस, प्रभ हरयो भरम कुपथ॥ 1444**

तूँ प्रभ दाता मेरा स्वामी। मैं मुगध अनजान नित अपरामी॥
अपनी सरनी राखो देव। पूरन दीजो निर्मल सेव॥
सिद्ध बुद्ध नाथ तेरा जस गावें। शास्तर सिमरत इक तोहे ध्यावें॥
अत ही महमा तेरी करतार। बारम्बार करूँ निमस्कार॥
जन अपने की रखया कीजो। निर्मल नाम की रसना दीजो॥
नित ही प्रभ जी करो उद्धार। पाप करम नासो अन्धकार॥
घट अन्तर प्रभ धीर लखाओ। अनन भगत दीजो सुखदाओ॥
निमख निमख तेरी कीरत गाऊँ। पलक पलक इक तोहे मनाऊँ॥
रोम रोम करूँ अरदास। बल बुद्धि दीजो अबनास॥

तन मन अरपूँ तेरे चरना। आस धरूँ तुध कारन करना॥
भाओ भगत सत प्रेम कमाऊँ। साचा ठौर दीजो सत नाऊँ॥
तेरी आज्ञा पलक नहीं भूले। तेरी रसना में मनुआँ नित झूले॥
तेरी प्रीत में सुध बिसरावे। इक ध्यान तेरा चित आवे॥
दूजी वस्त ना चित भाये। अनन प्रीत माँगूँ प्रभ राये॥
जग जीवन की सार पछानी। एक प्रभ बिन सरब दुःख खानी॥
नित भरमाये मूरख जीया। बख़शनहार तूँ ही इक थीया॥
औगन भरया तन मन मेरा। राख लें प्रभ चरनी केरा॥
दया निधान हो करो बख़शीश। साची भगती दीजो जगदीश॥
मूढ़ा जन्त प्रभ कीजो उद्धार। साची सेवा दीजो निर्धार॥

**निमख निमख प्रभ नाम ध्याऊँ, तज दुर्मत इच्छया फाँस।**
**'मंगत' प्रभ रखया करी, घट दीना प्रेम परगास॥ 1445**

निर्मल प्रेम प्रभू का पाई। तन मन सकला शान्त समाई॥
प्रेम पाये मन कीरत कीजे। दुबधा त्याग सत सार लखीजे॥
करम जाल से मिले ख़ुलासी। अन्तर चित परसे अबनासी॥
एको टेक धरे विश्वासा। पूरन पुरख का लखे परगासा॥
मन का ताओ सब हर लीना। निर्मल चित जिस नाम प्रभ चीना॥
ऊँच शोभा है प्रभ की एक। जो हरे तक़सीर भरम विखेप॥
अन्तर चित हो बन्दना कीजो। अन्तर चित हो रसना पीजो॥
अन्तर चित हो करो अरदास। प्रभ जी हरयो मोह की फाँस॥
साचा स्वामी तूँ राखनहारा। रखया करो प्रभ पार मुरारा॥
दीजो संतोष बुद्धि बल देवा। भरम माया का नासे भेवा॥
उज्जल कीरत तेरी चित आए। नित ही रहूँ तेरे चरन समाए॥
काल करम की मनसा नासे। निर्मल प्रेम से करूँ चरन निवासे॥
वारापार नहीं पाया जाई। अनन्त लीला तेरी पार पराई॥
जिसने खोजा तेरा नाम अनमोल। तिस जन पाया जग जीवन अडोल॥
शुद्ध सरूप गुना अतीत। परमानन्द परम पुनीत॥

घट घट व्यापे बहु रचना धारी। प्रभ दाते की महमा अपारी॥
नित सरनाई होओ जीया। राखनहार सरब सुखथीया॥
मनसा पूरन सब दुबधा दूर। प्रभ सरनी भयो पूरन पूर॥
जीवनदाता आनन्द गत धारी। सिमर सिमर के पाई छुटकारी॥

**करम बन्धन सब नास भयो, जब शोभा नाम विचारी।**
**'मंगत' प्रभ किरपा करी, घट दीना रूप लखारी॥ 1446**

पूरन प्रभ भयो किरपाल। डूबत जन को कियो निहाल॥
मोह माया का भरम चुकाया। अपनी महमा का भेद लखाया॥
घट घट विचरे रखया नित कीनी। साहब सरन सुखसार लखीनी॥
अनन भगत दीनी अनमोल। नाम प्रभू घट लीना तोल॥
निर्मल धीरज चित आन समाई। प्रभ के नाम की मिली वडयाई॥
सत साजन रसना नित पीयो। प्रभ के नाम में जीवन जीयो॥
सो समरथ पुरख निर्वानी। पल पल सिमरो प्रेम की खानी॥
अन्तर पूजा नितप्रति कीजो। घट घट प्रभ का दर्शन लीजो॥
देह आकार को जो परगासी। सो ही शबद सरूप अबनासी॥
जिस जाना सो तृपत समाए। साहब दाता बेपरवाहे॥
अकथ वडयाई साहब की जान। जो जो सिमरे पाये कल्यान॥
मारग मुकत का ये ही पेख। पूरन प्रभ की रसना लेख॥
अन्तर पाट करें सब दूर। परतक्ख होवें घट माहीं हज़ूर॥
जीवन शकत आनन्द की खानी। घट में खोज तू अनहद बानी॥
पूरन पूर तू सरब रमनाई। शबद की लीला अकथ आगाही॥
जिस को सूझा पाई सार। सत शबद मिला निरंकार॥
मिथ्या रसना तज नाम सम्भाले। सार शबद को सो जन घाले॥
अन्तर माईं करे निवास। परसे शबद आलख अबनास॥
जिस खोजा तिस परसा ठौर। तपन विनास पायो आनन्द सरूर॥

**महमा प्रभ की जान के, घट में लीन समाये।**
**'मंगत' शबद अखण्ड में, सब मन की तपन बुझाये॥ 1447**

परम पुरख अन्तर परगासे। भरमत जीव की मिटी तिरासे॥
ममता त्याग इक शबद विचारी। अन्तर पूजा निर्मल धारी॥
सुरत का थाल प्रेम की जोती। नाम पदारथ पाये अलोकी॥
छिन छिन अन्तर बन्दना कीजे। प्रभ के नाम में जीवन लीजे॥
इन्द्री विकार से उपरस होई। मन की दुबधा दुर्मत खोई॥
देह मध त्याग भया निर्धार। साचा शबद घट कीना विचार॥
नाम की रसना में मन ग़लताना। अखण्ड शबद करे अमरत पाना॥
भुख प्यास की दुबधा नासी। नाम सिमर के सत शान्त भासी॥
इक चित होके मंगल गाई। प्रभ सरूप में लीन समाई॥
पारब्रह्म शबद परगासी। काची देह में कला अत भासी॥
मिरतक से जीवन को जाना। आलख पुरख का पाया परवाना॥
साचे शबद संग मेल मिलाये। तन मन की सब तपन बुझाये॥
गुरमुख मारग सही पछाता। अन्तर शबद में भयो रंगराता॥
शबद अखण्ड अगोचर स्वामी। तिसको पूज पाई बिसरामी॥
साचा ठाकर जिस अन्तर जाना। सो ही जग में पुरख परधाना॥
कलपना त्याग अन्तरमुख जाई। साची शोभा शबद की पाई॥
अमरत घन गगन में बोले। अगम निगम की रसना तोले॥
निर्भय भयो जिस भेद पछाता। सत शबद पायो पुरख बिधाता॥
आद पुरख घट में परगासा। बिमल शबद में लयो निवासा॥

**अन्तरगत सोझी मिली, सत शबद पाया निर्वान।**
**'मंगत' पल पल सिमर के, सब जीवन भयो कल्यान॥ 1448**

अगोचर शबद की जिस कथा लखाई। तिस जन पाई अधिक वडयाई॥
अपने अन्तर जिस अमरत सूझा। बिख को त्याग पाई निर्मल पूजा॥
अमरत शबद अजर अबनासी। अनहद नाद सरब परगासी॥
चेतन पुरख बिमल धुनकार। जो बूझे तिस भाग आपार॥
तन मन की सब तृखा विनासी। अचल शबद घट पायो अबनासी॥
सुपन समान रचना सब भई। शबद समाध घर परगट लई॥

अचरज भेद नहीं पारावार। प्रभ दाते की लीला आपार॥
सब में व्यापक पर रहे निर्लेपा। अगोचर शक्त का कथो विवेका॥
परमानन्द जोत निर्वानी। घट में परगट अनहद बानी॥
रूप वरन नहीं चिन्न को धारी। सबमें पसरे पुरख मुरारी॥
अपने आप रहे परिपूरा। तिससे भयो सब जगत ज़हूरा॥
तीन गुना का जाल प्रगटाया। पाँच तत्त मिल खेल रचाया॥
अनंक जीव जन्तू प्रगटाये। लीला धारी प्रभ बेपरवाहे॥
अन्तर माई रहे सदा अलेपा। गुह्य ज्ञान ये अकथ अलेखा॥
जिसने अन्तर सतनाम कमाया। दुबधा त्याग प्रभ एक ध्याया॥
आस त्याग प्रभ हुकम पछानी। तिस जन पाया भेद निर्वानी॥
देह से भिन्न कर ठाकर देखा। अखण्ड शबद पुरख निर्भेखा॥
सब रचना वहाँ शून समाई। सत ठाकर जाँ परगट पाई॥
बिमल नाद पुरख निर्वानी। अकथ कथा कोई गुनी पछानी॥

**मन की विरती त्याग के, सुरती भई अडोल।**
**'मंगत' शबद घट सूझया, पार पुरख अतोल॥ 1449**

नित ही गुनी शबद विचार। तीन ताप से पायें निस्तार॥
अन्तर मनुआँ नाम में राख। सत शबद की रसना चाख॥
पल पल साचा नाम कमाओ। मन पवन इक ठौर लगाओ॥
अन्तर बाहर सम कर पीओ। नाम प्रभू में जीवन जीयो॥
आज्ञा मान करो अरदास। तन मन की सब त्यागो आस॥
सरजनहार के चरनी सौंप। नाम सिमरन की पाओ चौंप॥
अखण्ड विरती इक नाम कमाओ। करम दोष का होवे अभाओ॥
निहकरम होये के भयो इकागर। अन्तर भयो शबद उजागर॥
अबनाशी शबद की रसना चीनी। तब मोह माया की दुबधा छीनी॥
पूरन भाग कोई जुगत कमाये। अन्तरगत सतनाम लखाये॥
जग जीवन से पाये वैराग। प्रभ के चरन धरे अनुराग॥
सत कर पूजे साचा स्वामी। घट घट खेले अन्तरयामी॥
भोग विकार से उपरस होई। अन्तर सुरती नाम परोई॥

चंचल विरत गई दुःख खानी। घट में सुनी तब अनहद बानी॥
शबद सुरत का भयो एका। जुगत योग पायो भेद अलेखा॥
काल रूप सब मिटा जंजाला। अकाल शबद परसा त्रैकाला॥
महमा विचार के भयो परसन्न। निर्भय शान्त पायो सत धन्न॥
अगोचर पुरष में प्रीत लगाई। सिमर सिमर के मन लीन समाई॥
एको एक शबद परिपूरा। तिसे पछान भयो जन सूरा॥

**सत शबद पहचान के, सब मन के दोष निवारे।**
**'मंगत' कोई जन साजन सूरमा, जो निर्भय धाम पधारे॥ 1450**

बिमल शबद की रसना खाओ। सत करतार की साखी गाओ॥
साची भगत कमाओ नीत। दुर्लभ जनम की सुनो सत रीत॥
भगत भाये मन हरो विकारा। परस लयो पद सरजनहारा॥
साचा शबद घट घट परगासी। निर्मल चित से करो उपासी॥
सतगुर साजन की सीख लखाओ। प्रभ अपने को घट में पाओ॥
बाहरमुख की भरमन त्यागो। अन्तर जुगत शबद में लागो॥
सत ठाकर नित करे कल्याना। बन्धन नास पावें निर्वाना॥
अन्धला जगत भरम भुलाये। पूरन प्रभ नहीं घट ध्याये॥
मिथ्याकार में खोजे परसन्ता। माया भरम में रहे तिरखंता॥
सतनाम जो गुरमुख घाले। अन्तर चित सत रसना भाले॥
मिटे ग़ुबार चानन घर होई। परम परसन्ता तिस गुनी लखोई॥
जापो नाम मुकत की रीता। प्रभ का नाम है परम पुनीता॥
नाम की महमा अकथ अपार। ग्रन्थ वेद करें पुकार॥
जिस घट अन्तर नाम परगासा। निर्भय हुआ भयो जग दासा॥
साची महमा भगती तिस जानी। प्रभ सिमरन में प्रीत लखानी॥
एको आस एको आधार। परगट पाया घर शबद निरंकार॥
तिस शबद में भयो लवलीना। इन्द्री दोष भये सब छीना॥
निहकरम जोत प्रेम की खानी। अमरत शबद परसा निर्वानी॥
शबद में सुरती भई परबीन। काल करम की मनसा लीन॥

**सत शबद के ध्यान में, तन मन भयो ग़लतान।**
**'मंगत' अन्तरगत माईं, पायो पार पुरख निर्वान॥ 1451**

सार शबद जब अन्तर चीना। करम दोष भये चित छीना॥
करमफल द्वन्द आसक्ता नासी। सम सरूप शबद परगासी॥
तिस शबद की महमा गाए। नित ही तिसके रूप समाए॥
मानुष जनम सुफल तब भयो। घट में ठाकर परगट लयो॥
नौ निद्ध पाई प्रभ दरबारे। निर्मल इस्थित पाई शांत अपारे॥
नित ही तिसमें रहे रमनाई। साखी पूज परम पद पाई॥
भरम संशय सब गयो ग़ुबारा। अन्तर शबद कियो उजयारा॥
सकल जगत का शबद है मूल। प्रेम प्रीत से हिरदे तोल॥
बाँध के सुरती अन्तर राख। नाम रसायन रसना चाख॥
मिथ्या मोह माया का त्याग। सत ठाकर के चरनी लाग॥
पूरन पुरख घट माहीं समाई। जीवन दाता सोही सुखदाई॥
तिसकी प्रीत कमाओ नीत। प्रभ का सिमरन करे पुनीत॥
सुरत इकागर अन्तर भई। एक नाम संग अधिक सनेही॥
प्रेम प्रीत से करे अरदास। अन्तर परसे आलख परगास॥
नौ दर से नित रहे अतीत। करम त्याग के होये पुनीत॥
दर दसवें की जाने सार। गरजे शबद अखण्ड निर्धार॥
साची पूजा तिस जन पाई। साची तृपती की सार लखाई॥
आनन्द भयो आनन्द परगासी। अन्तर परगट भयो अबनासी॥
अबनाशी शबद नित करे गुंजार। जो बूझे तिस भाग अपार॥

**साखी पुरष पहचान के, नित रहो परबीन।**
**'मंगत' अन्तरगत माईं, कोट भान छबि चीन॥ 1452**

सतपुरख घट भयो परगासा। तपन विनास परम सुख भासा॥
अनहद नाद पुरख निर्वानी। अन्तरगत में कला पछानी॥
गुपत सरूप प्रभ परगट भयो। दुबधा दूर मंगल चित लयो॥

जनम जनम की तृखा विनासी। शबद पछान गई भ्रम फाँसी॥
निहथाँवाँ जीव सत थाओं समाया। सत शबद पुरख घर पाया॥
साचा गीत गाओ मन माईं। परगट भये प्रभ पार गुसाईं॥
भरमत मनुवाँ सुखसार पछानी। पाया अबगत पुरख निर्वानी॥
अचरज कला शबद निरधारी। देह मन्दर को करे उजयारी॥
जिसने अन्तर सार पछाती। सत ठाकर की लीला जाती॥
नाम आधार में तृपत समाई। शबद की रसना पल पल खाई॥
तन मन वार भयो निरधारी। सत शबद परसा निरंकारी॥
अन्तर ध्यान अन्तर पाई पूजा। एको देव सरब में सूझा॥
सबकी बनत बनावे सोही। सबके अन्तर रहे समोई॥
सबसे परे रहे निरलेप। पार पुरख का अचरज लेख॥
नित ही महमा मन में गाओ। एक शबद की सार लखाओ॥
तन मन की सब इच्छया त्यागो। नाम प्रभू में उठ के लागो॥
नाम सिमर के होयें निहाल। अन्तर परसें शबद अकाल॥
पूरन रूप सो ही सत सार। तिसे पछान पावें निस्तार॥
अबनाशी शबद सोधो घट माहीं। शबद पछान हरे भ्रम परछाईं॥

**अकाल शबद पहचान कर, जग जीवन लाभ कमाओ।**
**'मंगत' भगती रसना, खाये परम पद पाओ॥ 1453**

अकाल शबद अन्तर परगासा। काल रूप की मिटी तिरासा॥
ताँ में सुरती रहे लवलीन। करम इच्छया भई सब छीन॥
आवागवन का मारग नासा। साचा ठौर शबद घर भासा॥
बाहरमुख से उपरस हूआ। शबद पछान के त्यागे भ्रम दूआ॥
एको ठाकर सरब जगत परगासे। सब के अन्तर करे बिलासे॥
सत साजन जिस सोझी पाई। तिसके चरन तों नित बल जाई॥
तृप्त भया घर रसना खाये। जीवन में जीवन को पाये॥
दुर्लभ करनी तिसने जानी। सत शबद जिस कथा पछानी॥
सत ठाकर की सेवा सूझी। भरम अगनी अन्तर से बूझी॥

भयो सुतन्तर नाम कमाये। करम जाल सकल बिनसाये॥
निहकरम शबद में विरत समाई। सुन्न समाध अमीरस खाई॥
पूरन सिद्धी पाया सतनाम। प्रभ के चरन कीना बिसराम॥
इच्छया त्याग के भयो निरवास। अन्तर सिमरन पायो अबनास॥
प्रभ सिमरन से दुबधा भागी। अभय सुख सत शबद में लागी॥
तीन अवस्था से भया अतीत। चौथे शबद पाई परतीत॥
शबद में जीवन किया परवेस। दुर्मत जाल का मिटा संदेस॥
पूरन करमी पूरनगत पाई। पूरन प्रभ संग मेल मिलाई॥
जग का पन्ध पूरन सब भयो। सरब स्वामी घट दरसीयो॥
परमानन्द शबद निरंकार। ताँ को परस भयो निरधार॥

**अन्तरगत सोझी भई, पायो शबद अकाल।**
**'मंगत' इच्छया दोख से, तन मन भयो निहाल॥ 1454**

सरब जगत इच्छया का ताना। साखी शबद पुरख निर्वाना॥
शबद पछान इच्छया भ्रम जाई। सतगुर सीख सुनो सुखदाई॥
सर्वज्ञ शकत नित परिपूर। सिमर सरूप पुरख हज़ूर॥
घट अपने में खोजो सार। आलख शबद पुरख निरंकार॥
सबके अन्तर रह्या समाई। गुरमुख अन्तर परगट पाई॥
सोधो तत्त ज्ञान सुख खान। प्रभ दाते की करो पछान॥
अन्तर ध्यान सुरत ठहराओ। नाम प्रभू का पल पल ध्याओ॥
सकल करम की मनसा त्यागो। प्रभ की आज्ञा में नित उठ लागो॥
इच्छया दोष सब होये विनास। परसें घट में शबद निर्वास॥
शबद की सोझी जब अन्तर होई। निर्भय सुख सो गुनी परोई॥
इन्द्री भोग से भये विरक्ता। सार शबद अन्तर संजुगता॥
मन मनसा का करे त्याग। एक परीती नाम में लाग॥
नेहचल चित से नाम ध्याई। अखण्ड शबद परगट घर पाई॥
अन्तर सुरती धरे ध्यान। काल करम से होये निर्वान॥
बन्ध ख़ुलासी पावे सोही। सत शबद जिस पार परोई॥

नित ही शबद कमाओ मीत। भवजल दुस्तर से पाओ जीत॥
शबद की पूजा शबद का ध्यान। शबद का मेल सार कल्यान॥
शबद परापत इच्छया नासी। निर्भय सुख में ले निवासी॥
गुरमुख साजन भेद पछाता। शबद पछान भयो रंगराता॥

**अन्तर निर्मल ध्यान में, शबद पाई तत्त सार।**
**'मंगत' मिली सत शान्ती, तन मन भयो बलिहार॥ 1455**

साचा नाम अन्तर परगासा। अखण्ड शबद में लयो निवासा॥
रोम रोम में रसना भीनी। सत सरूप की शोभा चीनी॥
परम सिद्धि तत्त नाद अखण्डा। सरब परकाश पिण्ड ब्रह्मण्डा॥
अपरम तेज सरब बलधारी। अनहद नाद घट मिले मुरारी॥
प्रेम पुंज प्रभ नाम अनादी। सिमर सिमर सब हरी व्याधी॥
मन निर्मल तत्त रसना खाई। परम पुरख के चरन समाई॥
लोक लोकान्तर का पायो भेदा। अन्तरगत पद परस अछेदा॥
बिमल शबद सत सारंग बानी। नेहचल ध्यान कोई परसे ज्ञानी॥
पूरन सिमर के पूरन चित भयो। इच्छया भरम सकल दुःख गयो॥
गुर पूरे दिखलाई ये कार। निर्मल ज्ञान परम तत्त सार॥
नित ही गुर के चरन समाओ। नित ही गुर के दर्शन पाओ॥
गुर के बचन में तन मन वारी। गुर किरपा से सब मिटे ख़वारी॥
गुपत रूप परमेश्वर पायो। सतगुर सीख सब भय मिटायो॥
मान गँवाये दीनता पाई। आपा त्याग सत सेव कमाई॥
निर्मल जुगत इक नाम विचारी। मन की सकली ममता टारी॥
मोह त्याग पायो वैराग। नाम प्रभू में अत अनुराग॥
सत संजम सत ध्यान कमाई। गुर किरपा सत शबद लखाई॥
आनन्द सागर शबद की धारा। अन्तरगत कीना उजयारा॥
पूरन भाग जो सार पहचानी। सरबगत पूरा सो ब्रह्मज्ञानी॥

**आलख शबद जिस घट सूझया, पूरन ज्ञानी सोये।**
**'मंगत' भाओ दीन से, नित तिसके चरन समोये॥ 1456**

पूरन भाग तिस जन ने पाई। सतपुरषों की जो सरन लखाई॥
मूढ़मती सब मन की जाए। सत सिखया जो गुनी कमाए॥
मिथ्या भरमन सकल विनासे। सत साधू का जो बचन उपासे॥
अत अन्धकार जाए अभिमान। साध की सेव करे कल्यान॥
सत विश्वास जिस गुरमुख पाया। साध की सीख प्रभ मेल मिलाया॥
बन्धन से जन मुक्ता भयो। साध बचन अमरत फल दीयो॥
पूरन सन्त के चरन बलिहारी। त्रैगुन मेट जिस जपा मुरारी॥
अपनी भरमन सकल त्यागी। अखण्ड शबद घट अन्तर जागी॥
निर्मल प्रीत पल पल कमाई। उपरस जीवन सतनाम लखाई॥
अगम निगम का भेद पहचानी। तिस साधू संग परमगत जानी॥
निर्मल सीख मन तन परोई। करम जाल सब दुर्मत खोई॥
सब जीवों संग हेत विचारी। स्वारथ त्याग भयो उपकारी॥
मान मध की मैल गँवाई। दीन भाओ घट अन्तर पाई॥
प्रभ दाते संग केवल प्रीती। अन्तरगत रसना सत पीती॥
गुरमुख मारग भेद पछाना। सतगुर सीख से भयो कल्याना॥
अबनाशी पुरष तत्त नाद अनादी। अन्तर परगट भयो बिसमादी॥
सकली सेव ने फल दिखलायो। पारब्रह्म घट में दरसायो॥
निमख निमख कर पूजूँ देवा। गुर परसाद पाई सत सेवा॥
अजर पुरष जोत निरवानी। अन्तरगत में करी पहचानी॥

**पूरन गुर की सीख से, सतनाम की सार लखाई।**
**'मंगत' मन तन शान्ती, घट परगट पुरख ध्याई॥ 1457**

सतपुरषों की सीख विचारी। निर्मल शोभा अन्तर धारी॥
गुपत सरूप नारायन पाई। साची जुगत घट भेद लखाई॥
मारग उलट में नित परबीना। सत ठाकर अन्तर में चीना॥
आपा त्याग इक नाम ध्याई। निर्मल प्रीत घट अन्तर पाई॥
जीवन त्याग कियो मरन विचारा। मर जीवन हो तत्त भेद लखारा॥
कठन कमाई कोई गुरमुख घाले। काल करम तोड़े जंजाले॥

साची बन्दगी प्रभ की पाये। मोह त्याग सत प्रेम लखाये॥
सब जीवों की होवे धूड़ी। पद परसे तब पार हज़ूरी॥
मन की सकल उपाध चुकाये। निमख निमख प्रभ नाम ध्याये॥
उट्ठत बैठत निर्मल कार। पलक ना विसरे सत सरजनहार॥
प्रभ के नाम में भयो ग़लताना। द्वन्द खेद नासे अभिमाना॥
गुर किरपा से बन्धन टूटे। महा परसाद शबद रस लूटे॥
अपने मन में मगन समाई। अन्तर शोभा राम लखाई॥
पूरन भाग जो रहनी पाए। दुर्लभ दरशन तिसका जग माए॥
अन्तर चानन भयो अपार। मीठी धुन होये शबद गुँजार॥
ताँ में सुरता रहे समाई। पूरन भाग जो ये गत पाई॥
नाम परसाद रसना अधिकाई। मिटे विकार चित धीर लखाई॥
नित ध्याओ प्रभ अन्तरयामी। अन्तरगत पाओ बिसरामी॥
सत मारग में रहो परबीन। नाम निरंजन अन्तर में चीन॥

**अन्तरगत नित सोधिये, निर्मल नाम प्रभ एक।**
**'मंगत' दूजा त्याग के, चित पूरन राखो टेक॥ 1458**

पूरन प्रभ के चरन विश्वास। मोह माया की हरे प्यास॥
सरब जगत का सो ही स्वामी। खेले खेल बहु भाँत अनामी॥
जुगा जुगन्तर ये लीला धारी। नाम रूप बहु जन्त उपजारी॥
पाँच भूत का कियो बिस्तारा। सरब में विचरे पुरख आपारा॥
रंचक लेख ना लिखने पाई। करूँ डण्डौत प्रभ चरन प्रभताई॥
चार खानी की रची ये फुलवाड़ी। आपे रखयक पुरख मुरारी॥
जो जो जन नित हुकम मनाई। अपने भाने ले चरन लपटाई॥
आद जुगाद अचम्बा परगासी। आवागवन जग चक्कर बिलासी॥
अपरम अपार प्रभ तेरी माया। गिनती लेख नहीं जाये पाया॥
करूँ डण्डौत तेरे निर्मल चरना। तूँ साखी सब कारन करना॥
अत महमा तेरी भगवन्ता। सरब में पसरें धर रूप अनन्ता॥
सब कुछ धार रहे आप अलेपा। पूरन पुरख तेरा अचरज विवेका॥

निकट से निकट रहें भरपूर। पर लखया ना जाई तेरा रूप हज़ूर॥
जाँ देखाँ ताँ तू रमनाया। निर्दोख सरूप हो सरब समाया॥
त्रैगुन माया प्रेरक कीनी। अनंक भाँत रचना रच दीनी॥
तूँ समरथ पुरख निर्वानी। तुमरी महमाँ नित पार पुरानी॥
अनन्त कला को नित परगासी। निहकरम रूप विचरे अबनासी॥
परमानन्द तत्त रूप प्रभ तेरा। जो जो सिमरे पाये शान्त सरीरा॥
नित किरपाल नित रखया करी। सरब शकत में नित आप विचरी॥

**पूरन प्रभ सरब समाया, अत लीला को धारी।**
**'मंगत' विरले गुरमुख, प्रभ शोभा हिये विचारी॥ 1459**

सत ठाकर का अत परताप। प्रेम प्रीत से हिरदे जाप॥
जब भावी तब खेल रचाई। बिना कारन सब बनत बनाई॥
सब रचना से रहे अलेपा। अत महिमा तेरी पुरख अलेखा॥
अपनी शकत को आपे धारी। पूरन पूर सरब विस्तारी॥
जाँ पर किरपा अपनी कीनी। गुह्य ज्ञान तत्त भेद सो चीनी॥
त्रैगुन माया का रचा पसारा। मन बुद्धी पाँच भूत आकारा॥
रंग रंग के बहु रूप बनाये। अपनी माया की शकत दिखलाये॥
जिस जन भाओ दीन पछाता। परम प्रेम में भयो रंगराता॥
दुबधा त्याग तुध चरन समाई। पूरन पुरख तेरी अत वडयाई॥
नित गाँवाँ गुन अन्तरयामी। अन्धमत धार नहीं पाऊँ बिसरामी॥
चरन कँवल में नहीं सुरत ठहराई। बारम्बार माया भरमाई॥
कर किरपा प्रभ पूरन देवा। अपने जन की सुफल कर सेवा॥
पद पंकज में बन्दना करूँ। दात तेरी को नित हिरदे धरूँ।
नित ही नित चित करूँ पुकार। अपनी माया से दे निस्तार॥
प्रभ जी लीला तेरी नहीं वरनी जाये। रंचक भेद नहीं सार लखाये॥
नित उस्तत करूँ केवल जगदीशा। हरो विकार पूरन प्रभ ईशा॥
मन्धमती को उजला कीजो। ज्ञान दीपक घट माईं लखीजो॥
करम वासना मिटे अन्धकार। करूँ बन्दना प्रभ बारम्बार॥

तूँ परमेश्वर नित राखनहारा। तीन काल तूँ सुख वरतारा॥
**अपनी लीला धार के, खेलें खेल अगाध।**
**'मंगत' नित सरनागती, प्रभ दीजो प्रेम समाध॥ 1460**
तुम किरपा से सुख सार लखाई। आज्ञा बूझ सब तपन बुझाई॥
परम कृपाल हो किरपा नित कीजो। निर्मल धीरज प्रभ अन्तर दीजो॥
नित गाँवाँ गुन तेरे स्वामी। नित ध्यावाँ तेरा नाम अनामी॥
नित पूजूँ तेरा रूप आपार। करूँ बन्दना चित अनंक बार॥
तपत जीव की तपन बुझाओ। प्रेम की रसना सार लखाओ॥
माया भरम हरयो सत देवा। निर्मल चरन की दीजो सेवा॥
तुमरा खेल प्रभ अपरम अपारा। राख लें जन अपने दरबारा॥
और न कोई ठौर ठिकाना। कियो विचार विरत धर नाना॥
ओड़क तूँ ही तूँ इक भासा। पूरन पुरख अजर अबनासा॥
तपत जीव तेरी सरनी आया। कर किरपा प्रभ आनन्द गत राया॥
दुःखित जीव का दुःख निवारो। संकट मोचन प्रभ नाम तुम्हारो॥
गवन चक्कर से दीजो ख़ुलासी। साची भगत दीजो परम सुखरासी॥
तुम दाता दातार कहलाया। नाम प्रीत दीजो प्रभ राया॥
अथाह शकत कला अनन्त को धारी। कौन लखे तेरी लीला अपारी॥
किस भांत कोई तोहे रिझावे। किस मुख से तेरी उस्तत गावे॥
कौन हिये में तोहे परोई। अपरम अपार तूँ आप समोई॥
कर किरपा प्रभ पूरन राओ। अपने भाने जन मेल मिलाओ॥
अपनी उपमा आप लखीजो। साचा प्रेम प्रभ अन्तर दीजो॥
माँगनहार खड़ा दरबार। दात करो प्रभ किरपा धार॥
**दीनदयाल प्रभ दया करी, सत कीरत सार लखाई।**
**'मंगत' पूरन दात से, जन अपना मेल मिलाई॥ 1461**
माया चक्कर ये अधिक भयाना। तुम परताप नहीं होये पछाना॥
आपे किरपा करें स्वामी। अनमत जीव को देवें बिसरामी॥

ना बुद्धि ना कोई ज्ञान विशेखा। तप जप नहीं अधिक विवेका॥
दीन भाओ इक टेक पछानी। रखया कीजो इस मन्द अज्ञानी॥
साची भगती प्रेम चखाओ। अनन प्रीत की रसना लखाओ॥
निर्भय धाम में देयो निवासा। कर किरपा प्रभ अज अबनासा॥
मोह माया का ताप नित हरयो। निर्मल ज्ञान घट परगट करयो॥
चरन कँवल की प्रीती इक दीजो। दीनदयाल नित रखया कीजो॥
अत संकट में जीव नित घेरा। काल करम की पावे पीड़ा॥
अखण्ड शान्त साहब परगास। रसना प्रेम में करूँ निवास॥
तुम दाता हम भयो भिखारी। तू सरब ज्ञाता हम अनमत धारी॥
आनन्द का सागर तू प्रभ देवा। हरो कलेश दीजो सत सेवा॥
अबनाशी धाम की रसना दीजो। करम वासना सकल हर लीजो॥
ताप हरो प्रभ पूरन स्वामी। भरमत जीव को दीजो बिसरामी॥
अन्धमती मैं नित अनजाना। तुमरा भेद नहीं करूँ पछाना॥
याचक जीव की याचना पूर। तूँ समरथ पुरख हज़ूर॥
सँकट हरो शान्त वरताओ। भरम को नास प्रेम लखाओ॥
मोह ताप की अगन बुझाओ। शोभा नाम की प्रभ दिखलाओ॥
अनन भगत माँगूँ निर्वानी। दात करो प्रभ आनन्द सुख खानी॥

**सकल ताप को नासयो, इक रसना प्रेम लखाओ।**
**'मंगत' करे नित बेनती, जन अपना मेल मिलाओ॥ 1462**

जग जीवन सब काल तमाशा। तिसका मोह देवे अधिक तरासा॥
करम वासना अत भरमाई। भरमत भरमे ठौर नहीं पाई॥
जनम मरन के चक्कर फिरायो। रंचक धीर नहीं हिरदे आयो॥
किया विचार अत बारम्बार। प्रभ जी तुम ही राखनहार॥
परगट कीजो घट रूप अनादी। दूर कीजो प्रभ सकल उपाधी॥
मन मनसा का खेद मिटाओ। निर्मल शान्त अपनी वरताओ॥
छिन छिन मनुआँ जो डोलावे। भाँतक भाँत रसना को खावे॥
एक पलक नहीं पावे धीरा। रखया कीजो प्रभ पार गहीरा॥

अबगत शबद अन्तर परगासो। नित ही नित करूँ अरदासो॥
कोट जनाँ की बिपत निवारी। सरनागत को लयो उभारी॥
अब रखया कीजो पूरन देवा। ताप त्याग पाऊँ तेरी सेवा॥
तूँ दाना बीना गोहर गम्भीर। दात करो प्रभ हरो तक़सीर॥
अनंक उपाध में जीव भरमाई। अपनी भरमन बन्धन अधिकाई॥
मिथ्या भोग में नित रहे प्यासा। पल पल परसे काल की त्रासा॥
जतन किये बहु भाँत स्वामी। तुम सरनागत नहीं मिले बिसरामी॥
भरमत जीया तुध सरनी आया। अब की बार दयो धीर प्रभ राया॥
बल बुद्धि दीजो प्रभ देवा। निमख निमख करूँ निर्मल सेवा॥
और आस ना चित रहाए। जीवत में तेरे गुन नित गाए॥
आधार तेरे में नित रहाऊँ। आज्ञा तेरी में नित समाऊँ॥

**साची भगती प्रेम रस, घट अन्तर दीजो देव।**
**'मंगत' भरमन त्याग के, निमख निमख करूँ सेव॥ 1463**

अमरत नाम को हिये कमाऊँ। सिमर सिमर के नित तृपताऊँ॥
उस्तत तेरी करूँ दिन रात। पद पंकज में रहूँ समात॥
हरो विकार दीजो तत्त ज्ञान। सरब शकत तूँ ही भगवान॥
मन का डोलन प्रभ जी नासो। साची भगत हिरदे परगासो॥
प्रेम मध में रहूँ मतवाला। एक नाम जपूँ दीनदयाला॥
तन मन की सब पीड़ा जाये। सत सुकृत तेरी बंदना पाये॥
अन्तर चित करूँ अरदास। प्रभ जी हरयो मोह की प्यास॥
निर्मल शान्त दीजो सत नाऊँ। जपत जपत परम सुख पाऊँ॥
ताप तपन सब होये बिनास। निर्मल चरन में करूँ निवास॥
जीवन त्यागूँ तुमरे चरना। मर जीऊँ रहूँ तेरी सरना॥
तुध बिन दूजा ना चित भाये। अघट प्रेम दीजो प्रभराये॥
एक सुधी तेरे नाम की सूझे। बारम्बार तेरी कीरत बूझे॥
तन मन वार कराँ सत पूजा। तोहे पछान के विसराँ दूजा॥
कर किरपा प्रभ पारगरामी। अनखुट ज्ञान दीजो बिसरामी॥
महमा तेरी सब जगत लखाऊँ। तुम परताप परमगत पाऊँ॥

नाम रूप नासे चित रोग। सत चरन कँवल का पाऊँ संजोग॥
अखण्ड नाम जपूँ प्रभ तेरा। निर्मल करम का करूँ निबेड़ा॥
उस्तत तेरी में जाये दिन रैन। परच परच पावाँ सुख चैन॥
अदभुत ज्ञान पाऊँ परगास। अन्तरगत हो करूँ बिलास॥

**तुट्ठा दीनदयाल प्रभ, सब मन की तपन निवारी।**
**'मंगत' अन्तरमुख होय के, प्रभ शोभा अधिक विचारी॥ 1464**

तीन ताप की तपन विनासे। अन्तर चित जो कीजे वासे॥
पूरन प्रभ की सरन लखाई। दूजा भरम चित रहे ना काई॥
दात करे तब होये निहाल। किरपाधारी प्रभ किरपाल॥
देह देवल में दर्शन पाऊँ। पूरन प्रभ को नित ध्याऊँ॥
छाड के आसा पाऊँ तत्त ज्ञाना। प्रभ किरपा से ये मिले निधाना॥
सत ठाकर बिन दूजा सब भरमा। प्रभ की पूजा निर्मल धरमा॥
होवे दयाल पाऊँ तत्त भेद। मन ममता का नासे छेद॥
तेरी किरपा होवे प्रभ देव। तब मिटे विकार भरम और भेव॥
भव दुस्तर है अती भयाना। तुम किरपा से पाऊँ ठिकाना॥
अज्ञान अगन की अधिक है पीड़ा। पलक न आवे चैन सरीरा॥
दात करें तब होये निहाल। निर्मल रूप करूँ घट भाल॥
मोह अज्ञान जाये सब छाया। त्रैगुन जाल मिटे भ्रम माया॥
परगट होवें घट पार स्वामी। तपत जीव तब ले बिसरामी॥
अनंक भोग में जिया भरमाई। राग द्वेष की तपन तपाई॥
वासना वेग अधिक परगासी। मोह माया की धारे फाँसी॥
छूट ना पावे अन्धला जीया। तुम किरपा बिन नहीं सार लखीया॥
खोजत खोज नहीं कारज सरया। उलटी बिपता में नित विचरया॥
जग संसा है अधिक दुःख खानी। तिसका मोह देवे गवन निशानी॥
दात करे प्रभ पूरन देव। संशय नास मिले सत सेव॥

**भयो दाता दीनदयाल प्रभ, घट दात करी अपार।**
**'मंगत' की भरमन गई, नित नाम जपत सुखसार॥ 1465**

निर्मल नाम जो अन्तर गाई। प्रभ के रूप में जाये समाई॥
प्रभ किरपा से तत्त नाम पछानी। नाम जपत सत सार लखानी॥
दुर्मत भरम माया का नासे। निर्मल चित जो नाम उपासे॥
नाम प्रभू जिस पायो आधार। तिस जन पाई शान्त आपार॥
और जतन भ्रम धावन सब छोड़। एक नाम संग प्रीती जोड़॥
ममता मोह सकल मन त्यागो। नाम प्रभू में उठ के जागो॥
दिवस रैन जपो सत सार। भव दुस्तर से पावें पार॥
पलक पलक नित नाम कमाई। सत विश्वास नित हिये समाई॥
नाम रूप मिथ्या भ्रम जाये। साची भगत घट मेल मिलाये॥
दृढ़ निश्चय जब नाम में पायो। दुर्मत त्याग प्रभ एक ध्याओ॥
राग द्वेष होवे चित छीना। नाम की रसना जिस सार चखीना॥
गाओ मीता प्रभ अन्तरयामी। अन्तर ध्याओ प्रभ पारगरामी॥
साची सेवा चित धरो उपकारा। सत परताप परसें करतारा॥
भरमत मनुआँ अन्तर आई। सतपुरख की सोझी घर पाई॥
आनन्द मंगल का गायो गीत। नाम सिमर के भयो पुनीत॥
पूरन पुरख घट में परगासी। साची भगत भ्रम काटी फाँसी॥
प्रभ चरनी में पायो निवासा। बारम्बार करी अरदासा॥
भरमन त्याग पाया सत थाओं। इच्छया त्याग जपा सत नाओं॥
प्रभ दाते ने कियो निहाल। सत मारग की लीनी घाल॥

**पूरन प्रभ की दात से, घट अंतर पायो बिसराम।**
**'मंगत' निर्मल ध्यान में, पाई शोभा सतनाम॥ 1466**

साचा नाम अन्तर परगासा। भरम जाल द्वन्द दुःख नासा॥
सत स्वामी घर परगट भयो। ताप तपन सकली हर लयो॥
सरनागत को कियो निहाल। परगट करके रूप अकाल॥
नित ही सेव करो प्रभ चरना। कीरत गाओ तत्त सरब पसरना॥
सब कुछ आज्ञा प्रभ में सूझो। प्रेम पदारथ रसना पीजो॥
अपने अन्तर रहो समाई। पूरन प्रभ का लयो जस गाई॥

वडदाता प्रभ शांत वरताई। मोह माया का जाल मिटाई॥
परगट जोत अन्तर दरसावे। दरस परस से बहु सुख पावे॥
काल करीड़ा सकली नास। घट परगट जब भयो अबनास॥
आपे किरपा करी प्रभ दयाल। हरी तपन सब दुर्मत जाल॥
पूरन पुरख को नित सालाहिये। पूरन सेवा घट अन्तर पाइये॥
निर्मल प्रीत रसना सत सूझे। निर्मल नाम अन्तर में खोजे॥
प्रभ दाते की आज्ञा माने। जो हूआ सो सार पछाने॥
अपनी हिकमत भरम काल त्यागी। भयो निहाल सो जन वडभागी॥
अन्तर सुरती नाम कमाई। बाहरमुख से शोभा गाई॥
तन मन ठाँड पाया बिसराम। निर्मल नाम लखा सत धाम॥
पूरन पुरख की अत वडयाई। सरनागत को मेल मिलाई॥
सुनी अरदास हरयो सब ताप। वडदाते का कीना जाप॥
प्रभ की उस्तत देवे कल्यान। गुरमुख साजन कोई करे पछान॥

**उस्तत कीजो प्रभ एक की, जो जल थल पूर समाई।**
**'मंगत' दूजा भ्रम काल है, जो छिन छिन रूप वटाई॥ 1467**

सत सरूप को अंतर जाप। सत सिखया को मन में थाप॥
नित ही निर्मल ज्ञान विचार। प्रभ दाते के चरन पधार॥
खोज करो साची ये जुगत। नाम जपत के पाओ मुकत॥
नित परसो सत मारग मीत। सिमरो नाम नित परम पुनीत॥
सत अस्थान खोज अबनाशी। भय भरम की नासे फाँसी॥
बंधन नास पावें बिसराम। इच्छया त्याग होवें निषकाम॥
पूरन करनी सतगुर समझाई। प्रभ का नाम केवल सुखदाई॥
नाम ध्याओ सत संतन सीख। साची भगत पावें सत भीख॥
अन्तर कीरत करें पछान। भरम त्याग होवें निरवान॥
साचा ठाकर घट करे परगास। अनहद शबद पुरख निरवास॥
दुर्मत त्याग के हो अरूढ़। अन्तर परस तत्त शबद हज़ूर॥
सत शबद नित सार लखाई। जीवन ताप सकल बिनसाई॥
आनन्द भयो घर अपने आए। सिमर के नाम परम सुख पाए॥

पूरन भाग जो पाई ये कार। गुर के चरन नित जाऊँ बलिहार॥
साची पूँजी गुर ने दीनी। मोह माया की भरमन छीनी॥
गुपत परमेश्वर घर परगट दिखलाई। गुर किरपा से मिली वडयाई॥
इच्छया मोह करम जंजाल। नाम सिमर के भयो निहाल॥
कह बिध उपमाँ करूँ गुरदेव। सत ठाकर की दीनी सेव॥
ठाकर सेव पाई परसन्ता। एको परस रूप अनन्ता॥

**गुर सिखया मन सूझया, प्रभ सरनागत पाई।**
**'मंगत' दुबधा सब मिटी, जग जीवन सार लखाई॥ 1468**

गुर की सीख ने कियो निहाल। सरन पाई प्रभ दीनदयाल॥
भरमत जीव आया सत ठौर। गुर किरपा से मिले हज़ूर॥
साची सीख सुनी मन लाये। गुर समरथ का बचन आगाहे॥
प्रेम प्रीत से हुकम मनाई। गुर पूजा से राम मिलाई॥
अन्तर जुगत कमाया नाम। परगट पाया पुरख अनाम॥
तिसके चरन मिली परतीत। गुर किरपा से लीना जग जीत॥
पूरन प्रभ घट परगट भयो। अनहद नाद परम सुख दीयो॥
सहज सुरत नित पायो ध्यान। परगट जोत पाई निर्वान॥
अनन्त धुनी सत शबद गुंजार। गुर किरपा से पाई सार॥
आनन्द का सागर अन्तर पेखा। जग का ठाकर अन्तर देखा॥
मन की क्रीड़ा सकल विनास। प्रेम पुंज शबद परगास॥
नित ही घट में सुरत समाई। सार शबद की रसना खाई॥
निर्मल धाम पायो अबनास। गुर किरपा से काटी भ्रम फाँस॥
अन्तर जुगत भयो परबीना। नाम प्रभू का पल पल चीना॥
भरमन त्याग पायो उजियार। गुर दाते का वड उपकार॥
प्रेम की रसना इक नाम पछानी। अकथ कथा अन्तर में जानी॥
सुरत अडोल भयो निरधार। अन्तर शबद करे किलकार॥
निर्भय रसना शबद की खाई। आलख पुरख घर भेंटे आई॥
ताप विनास घर मंगल पायो। गुर परसाद सत सार लखायो॥

**अन्तर नाम अराधया, सतगुर सिखया धार।**
**'मंगत' गुर उपकार से, घर पायो दरस मुरार॥ 1469**

पारब्रह्म घट परगट पाई। निर्मल कीरत मन में ध्याई॥
आनन्द की खानी प्रभ का रूप। सिमर सिमर के हरे भ्रम कूप॥
काया अन्तर पुरख बिराजा। सरब जगत को जिसने साजा॥
अत वडयाई प्रभ की मीता। प्रभ का सिमरन करे निर्मल चीता॥
निर्मल चित से सत शोभा पेखो। जल थल अन्दर पूरन देखो॥
एको मूल सकल जग बेला। प्रभ दाते की सब ये लीला॥
गुरमुख होके करो पछान। तत्त गत रूप शकत निर्वान॥
चेतन रूप ज्ञान की खानी। अपने अन्तर करो पछानी॥
सहज धुन्न शबद गुँजारी। जो जो परसे उतरे पारी॥
अपरम महमा आलख वडयाई। सिमर गोपाल बौहड़ गवन नहीं पाई॥
मानुष जनम की सार कमाओ। प्रभ अपने की कीरत गाओ॥
दुबधा दूर घट होये परगास। सिमर सिमर तत्त रूप अबनास॥
अन्तर चित जिस साखी गाई। केवल प्रभ की प्रीत कमाई॥
हुकम पछान तजी भ्रम छाया। सिमर स्वामी परम सुख पाया॥
देवन देव सिमर जगदीशा। जन्तू जन्त सरब के ईशा॥
अत महमा को नित ही धारी। सिमर स्वामी पद पार मुरारी॥
और जगत को मन से त्यागो। निर्मल प्रेम से प्रभ चरनी लागो॥
अन्धकार विनास होये उजियारा। नाम सिमर के पायें निस्तारा॥
बन्धन नासे इक नाम कमाई। निर्भय शोभा प्रभ मेल मिलाई॥

**पूरन प्रभ के मेल से, ताप तपन होये नास।**
**'मंगत' इच्छया भरम तज, पद परसा अबनास॥ 1470**

नाम कमाओ मन में मीत। पूरन प्रभ के गाओ गीत॥
प्रभ की सरन में सुख घनेर। भरम चौरासी का बिनसे फेर॥
उस्तत कीजो नाम ध्याओ। सेवा सूझ परमपद पाओ॥
निर्भय पुरख निर्धार समाई। प्रभ दाते की करो वडयाई॥

मन की भरमन सकली नासो। प्रभ के चरन में करो निवासो॥
अन्तरमुख होये रसना पीजो। आलख शबद की सार लखीजो॥
देह अभिमान जाये भ्रम काल। घट में परसें पुरख दयाल॥
निर्मल सुरती धरो ध्यान। अंतर सूझ शबद की तान॥
आलख पुरख करे पुकार। गुर का सिख पावे सत सार॥
करो कमाई निर्मल मीत। भव दुस्तर से पाओ जीत॥
इन्द्री दोष तजो करम विकार। नाम सिमर प्रभ बारम्बार॥
ममता देह विनासे भरम। नाम सिमर पाये निर्मल करम॥
नाम में सुरती रुच रुच खेले। करम त्याग भई अलबेले॥
इच्छया त्याग के शून समाई। अनहद रतन प्रेम रस खाई॥
तत्त ज्ञान पछाता मूल। एको वरते सूक्षम अस्थूल॥
सत विश्वास पायो प्रभ रूप। निर्मल भगती पायो ज्ञान सरूप॥
रसना प्रेम से मन तृपताया। प्रभ का सिमरन एको चित आया॥
एक भरोसा आसा इक धारी। पूरन प्रभ से जाऊँ बलिहारी॥
प्रभ को सिमर के आप त्यागा। जनम जनम का सोता जागा॥

**भरमन सकली दूर भई, प्रभ रूप पाया सत धाम।**
**'मंगत' भगती परसाद से, जीव पायो बिसराम॥ 1471**

साची भगती प्रभ की पाओ। देह अभिमान का मूल चुकाओ॥
संशे अनंक होवें चित नास। एक नाम प्रभु में पावें विश्वास॥
प्रभ की भगती सब बन्धन नासे। प्रभ की भगती अन्तर परगासे॥
प्रभ की भगती देवे धीर। मन तन की नासे सब पीड़॥
प्रभ की भगती साधन सार। सकल भरम से दे छुटकार॥
प्रभ की भगती देवे परसन्ता। इच्छया रोग की कीजे हन्ता॥
प्रभ की भगती प्रभ माहीं मिलाये। पूरन भाग जो सार कमाए॥
उठ गुनवन्ता समाँ विचार। किस कारन आया संसार॥
जग संसा ना पूर समाई। अधिक अधिक होके दरसाई॥
जगत मूल प्रभ एक पछान। तिसको पूज पावें कल्यान॥

जगत प्रीती अत भरम करीड़ा। इच्छया मोह देवे नित पीड़ा॥
जुग जुग जीवे नहीं पावे धीर। भोगे भोग पाये रोग सरीर॥
सत परमेश्वर हिरदे चेत। निर्मल चित से राखो टेक॥
जग संशय भरम मूल विनास। एको परस पुरख अबनास॥
चरन सरन में दृढ़ता राख। गुर की सीख नाम रस चाख॥
परम प्रीत से रसना पीयो। प्रभ के रूप में जीवन लीयो॥
दुख द्वन्द जाये अन्धकार। सम सरूप पावें उजियार॥
अन्तर देह में करें निवास। आलख पुरख परसें अबनास॥
साची जुगत हरे सब शूल। सिमरे नाम जाये सब भूल॥

**निमख निमख अराधिये, एको नाम भगवन्त।**
**'मंगत' भरमन सब मिटे, घर परसें शकत अनन्त॥ 1472**

अनन्त शकत प्रभ एक पछान। सरब जगत तिस महमा जान॥
अपने आप पूरन का पूर। समरथ पुरष नित सिमर हज़ूर॥
सरब जगत है तिसकी माया। सरब के भीतर आप समाया॥
खेले खेल अन्तरगत धारी। प्रभ की शोभा अधिक आपारी॥
भाँतक भाँत खोज करें दाने। लिख लिख थाके कई सियाने॥
अनन्त सरूप नहीं पारावार। अपनी गिनती करे आप शुमार॥
जीवन रूप कला सब धारी। पिण्ड ब्रह्मण्ड की रची फुलवाड़ी॥
मोहित भयो अनमत जीया। देख के लीला भरम लपटीया॥
सार त्याग मोह भ्रम में लागा। कर्ता विसार पाये दुःख अभागा॥
इच्छया धार के बहु करम करीजे। भोग की अगनी में नित चित छीजे॥
पाँच भूत का सकल तमाशा। मोहित जीव नित करे बिलासा॥
अनंक भोग में जिया लपटाई। इच्छया करम बहु चक्कर फिराई॥
प्रभ की भगत बिन भरम नहीं नासे। माया विकार में नित करे निवासे॥
करम विलक्खण अधिक नित कीजे। जनम जनम दुःख सार लखीजे॥
निर्मल भगती प्रभ नाम विचार। मोह माया का मिटे ग़ुबार॥
निर्मल करम की आवे सूझ। निर्मल धरम जग जीवन बूझ॥

आसा बन्धन अधिक आपार। देवे गवन नित जीव दुःख धार॥
भरम क्लेश में तपे दिन रात। शुभ अशुभ नित करम कमात॥
करम का दण्ड पावे नित जीया। बिन प्रभ भगत नहीं शान्त लखीया॥

**तुच्छ जीवन विचार के, प्रभ की भगत कमाओ।**
**'मंगत' मिथ्या जगत में, सत लाभ जीवन का पाओ॥ 1473**

मानुष जनम की ये सतकार। जग जीवन का ये सार विचार॥
कर्ता पुरख प्रभ एको चेत। तिस आधार करम सब लेख॥
कर्ता भाओ त्याग अभिमान। निर्मल भगती करो पछान॥
अनन प्रीत से सेव कमाओ। प्रभ को सिमर के परम सुख पाओ॥
प्रभ का नाम हरे सब ताप। निर्मल चित से लीजे जो जाप॥
प्रभ का नाम बंधन सब तोड़े। सत परतीत जो चरन चित जोड़े॥
प्रभ का नाम जुगत है योग। सतगुर मिलके पाओ संजोग॥
अन्तर नाम ध्याओ नीत। निर्मल करम धारो नित चीत॥
पर-उपकार मारग को सोध। निर्मल ज्ञान को अन्तर बोध॥
सब जीवों में देख स्वामी। सेव करो पाओ बिसरामी॥
प्रेम प्रीत से परदुःख हरयो। सतपुरषों की सरनी पड़यो॥
मान त्याग होवे निर्मान। अन्तरगत तिस सार पछान॥
जीवत मर के सूझे सार। भव दुस्तर से उतरे पार॥
गोबिन्द कला अन्तर परगासी। काया दीप में करे निवासी॥
अचरज खेल अन्तरगत धारी। गुरमुख सूझे मारग निर्धारी॥
अंतर सूझ सब बन्धन नासे। सत पुरख अन्तर परगासे॥
करम दोष सकल भसमाई। अन्तर पूजा जिस प्रभ की पाई॥
सत ठाकर का नाम चितारी। बन्दना कीजे बारम्बारी॥
प्रभ आधार जीवन जब पाई। गुरमुख धाम की लखी वडयाई॥

**मनमुखता को त्याग के, मारग गुरमुख बूझ।**
**'मंगत' जीवन सार है, नाम प्रभू चित सूझ॥ 1474**

अनन्त शकत प्रभ नाम ध्याई। मोह माया का भरम निसाई॥
साखी कर्ता पूजो देव। सब कुछ बाँछो तिसकी सेव॥
साहब सिमर के हो निहाल। जग जीवन मारग सत भाल॥
दु:ख सुख इच्छया भरम द्वन्द। राग द्वेष करे परचण्ड॥
एक नाम धारो परतीत। निर्मल चित से गाओ गीत॥
द्वन्द विनास सम भाओ परगासे। मारग मुकत में करे निवासे॥
नित ही गुनियाँ साधन धार। नाम प्रभू जप बारम्बार॥
तिस की ओट है सार निधान। तिसका सिमरन दे कल्यान॥
तिस की पूजा तपन निवारे। गुर सिखया को जो अन्तर धारे॥
चेतो चेतो नाम निरधार। मानुष देह नहीं बारम्बार॥
जग आवन की सार कमाओ। प्रभ अपने को अंतर ध्याओ॥
निर्मल शांत पावें परगास। सकल व्याधी होवे विनास॥
हिरदे अन्तर रसना चाख। निर्भय नाम निरंजन भाख॥
आनन्द परापत संशे दूर। घर में बोले अनहद तूर॥
पूरन भाग जो सोझी पाई। सत ठाकर घर माहीं मनाई॥
परगट पुरख भेंटे देवन देवा। गुर परताप पाई सत सेवा॥
निर्मल जुगत संजम सत धारी। सुरत निरत की सार विचारी॥
निर्मल नाम कमाया योग। शबद परापत भयो अरोग॥
अन्तर शान्त हिरदे परगासी। अखण्ड शबद में सुरत निवासी॥

**अन्तर नाम ध्याया, सुरती धार अडोल।**
**'मंगत' शबद परगासया, सरब जगत का मूल॥ 1475**

एक शबद में भयो रँगराता। सरब जगत का मूल पछाता॥
अत महमा जब अन्तर जानी। लीन भई सकली मन बानी॥
निर्वान शबद पुरख आनन्दा। तिसको सिमर के गयो भ्रम फंदा॥
नित ही नित तिसकी सरन लखाई। निर्भय होये परम सुख पाई॥
दीनदयाल सरब सुखरासी। गुरमुख हो के सिमर अबनासी॥
प्रेम प्रीत से चरन ध्यायो। निर्मल नीयम अन्तर पाओ॥
जीवत किरया करो सुधार। प्रभ की सरन लखो सत सार॥

साचा मित्तर तीन काल रखवारा। जल थल अन्दर जो भरतारा॥
सरब शकत का जो है मानी। सिमर दयाल परम सुख खानी॥
प्रेम पुंज प्रभ रूप लखाई। अत शोभा अन्तर चित पाई॥
मिटे ग़ुबार चानन घर भयो। विरत अडोल संशय सब गयो॥
निर्मल जुगती योग पछानी। साची करनी हिरदे जानी॥
गुर किरपा से पाया उद्धार। मेल भयो सत सरजनहार॥
साची लखना नाम की कीनी। निमख निमख कर अंतर चीनी॥
मन पवन इक धार लखाई। निर्मल नाम सिमर सुख पाई॥
अबनाशी पुरष कियो परगासा। अंतर चित हो करूँ निवासा॥
काल दूषना तपन होई नास। पद परसा तत्त रूप अबनास॥
सहज ध्यान अन्तर भयो लीना। आलख शबद पद निर्मल चीना॥
इच्छया दोख से निर्मल हूआ। प्रेम प्रभू में जीवत मूआ॥

**मारग तत्त ज्ञान का, मर जीवत हो पाई।**
**'मंगत' दुबधा त्याग के, सत सरूप समाई॥ 1476**

सत सरूप साहब का पेखो। अन्तरगत में रसना लेखो॥
पी के रसना मिले उद्धार। दुर्मत त्याग पायें सत सार॥
अगोचर बानी पुरख अखण्डा। अबगत जोत घट में परचण्डा॥
इक चित होके करो ध्यान। निर्मल शांत परस निर्वान॥
तत्त पछान से दुबधा नासी। काल सरूप कड़ी जो फाँसी॥
अंतर होये सुनया बोल। आलख शबद रसना लई तोल॥
सत पहचान से पाया विश्वास। आसा त्याग के भयो निरवास॥
जीवत मिरतक सार विचारी। प्रभ की शोभा अंतर धारी॥
नाम ध्यान में भयो मख़मूर। सार शबद का चढ़ा सरूर॥
अंतर में अंतर सुख पाई। प्रभ दाते के चरन समाई॥
साचा गीत गाओ प्रभ का एक। निर्मल चित से राखो टेक॥
दृढ़ परतीत रहे चित माहीं। साची भगत पल विसरत नाईं॥
अखण्ड परीती दीजो देव। मन का नासे सकला भेव॥
नित ही तेरी करूँ उपास। चरन कँवल की करूँ अरदास॥

हिरदे सिमरूँ नाम अगाध। निस दिन विचरूँ विच प्रेम समाध॥
अखण्ड भगत परापत होये। जाँ देखाँ ताँ एको सोये॥
पूरन भाग कोई बूझे सार। प्रभ अपना चित करे चितार॥
जिसने सिमरा सो परसन्न। तिसका जीवन जग में धन्न॥
परम पुरख सो ही परधान। प्रभ को सिमर के भयो परवान॥

**प्रभ की रसना खाये के, सब दुबधा ताप मिटाई।**
**'मंगत' विरले परम पुरख, अत निर्मल शोभा पाई॥ 1477**

प्रभ का नाम जिस गुनी ध्यायो। तीन लोक का जस तिस पायो॥
प्रभ के नाम की अतुल वडयाई। शास्तर सिमरत वेद ध्याई॥
सिद्ध मुनी नित करें पुकारा। प्रभ का नाम जग जीवन सारा॥
दुर्लभ भाग जो नाम ध्याई। तिसके चरन तों नित बल जाई॥
सकल दोष से निर्मल हूआ। प्रभ के नाम में जो जीवत मूआ॥
अपनी आप करी सम्भाल। सिमर के नाम प्रभ दीनदयाल॥
ऐसा निर्मल नाम चितारो। भवसिंधू से उतरें पारो॥
गुर सिखया ये सीख लखाओ। नाम प्रभू का अन्तर ध्याओ॥
तन मन का अभिमान त्यागो। गुर किरपा से मारग लागो॥
सत मारग में होये परबीना। नाम अखण्ड अन्तरगत चीना॥
भाओ भगत से करी अरदास। परगट भयो घर पुरख अबनास॥
इच्छया नास धीरज को पाई। प्रभ के नाम की लखी प्रभताई॥
जनम जनम की तपन भई दूर। सिमर स्वामी आलख हज़ूर॥
भव बन्धन सब फंदा काटा। अन्तरगत में भयो रंगराता॥
द्वन्द त्याग भया निरदोख। निर्मल नाम पाया तत्त मोख॥
साजन सिमर स्वामी अपना। भरम ना भूलो देख जग सुपना॥
रचना राचनहारा जोई। तिसकी शोभा मन लयो परोई॥
करे उद्धार प्रभ पारगरामी। रखया कीजे नित अन्तरयामी॥
हो सरनाई पूरन प्रभ चरना। सकल स्वामी दोख सब हरना॥

**मन के दोख सब दूर भये, प्रभ नाम का गायो गीत।**
**'मंगत' अन्तरमुख हो परसया, आलख शबद पुनीत॥ 1478**

परमानन्द शबद अबनासी । अन्तर चित में करो उपासी ॥
विघन हरे शान्त को देवे । निर्मल प्रीत जो गुरमुख सेवे ॥
ताप तपन सब नासे पीड़ा । जो सिमरे नाम प्रभ पार गहीरा ॥
नित ही ध्याओ चित प्रीत लगाए । परम समरथ प्रभ सरब समाए ॥
प्रभ विसार क्यों नर डोलें । पाप करम में नित ही फूलें ॥
संकट अत परापत होई । जो चित नहीं प्रभ प्रीत लखोई ॥
मनसा रोग ना जाये मीत । भरमत मनुआँ नहीं पावे परतीत ॥
कोट वरख भोगे अत भोग । मिटे ना तृष्ना अत दीरघ रोग ॥
ताँ सों गुनियों करो विचार । जाप लियो प्रभ सरजनहार ॥
मानुष जनम सुफल हो जाई । जो चित शोभा प्रभ एक समाई ॥
नित सिमरो नित करो अरदास । दीनदयाल कटे भ्रम फाँस ॥
प्रभ अपना नित नित मनायो । दुःख रोग निकट नहीं आयो ॥
सब बिपता को पलक निवारी । निर्मल चित जो सरन पधारी ॥
अपना ठाकर कभूँ ना भूल । इच्छया रोग सब भरम का मूल ॥
नित ही नित मन माईं पुकार । घट की जाने सो सरजनहार ॥
प्रभ की सरन जिस गुनी विचारी । नित आनन्द में रहे मतवारी ॥
साध जनाँ की निर्मल सीख । जग ठाकर नित सिमर अलेख ॥
पूरन किरपानिध सो दयाल । सरन पड़े को पल करे निहाल ॥
अचरज सम्पत सुख की खान । साची भगत केवल भगवान ॥

**प्रभ की भगत कमाइये, छाड भरम का भेख।**
**'मंगत' सरब सुख दात है, साचा नाम अलेख॥ 1479**

अत उस्तत कीजो दिन रात । निहचल ध्यान धरो परभात ॥
सकल मनोरथ होवें पूर । समरथ पुरष नित जपें हज़ूर ॥
अनहोई को करे परगास । प्रभ की कला अधिक चित भास ॥
अन्तरयामी सब जग का कर्ता । असगाह शकत का सो नित धर्ता ॥
जिसने महमा पाई भगवन्त । निर्मल करनी सो पूरन सन्त ॥

दीन भाओ से सीस निवाओ। प्रभ आज्ञा में आप गँवाओ॥
नित ही रखया करे रछपाल। प्रभ करनी नहीं आवे चित भाल॥
निरास भाओ में आसा पूर। प्रभ का लेख प्रभ जाने हज़ूर॥
निर्मान हो के जो सरनी आया। सरब सुख तिस गुरमुख पाया॥
प्रभ जी अपनी दात करीजो। निर्मल कीरत मन में सीजो॥
सकल जियाँ की बाँछूँ धूड़। सब में देखूँ तोहे हज़ूर॥
तेरी प्रीत में रहूँ मस्तान। दात करो प्रभ निर्मल ज्ञान॥
औगनहार मैं अती गँवार। साची सेव माँगूँ दरबार॥
अन्तरगत मन दीजो धीर। निर्मल प्रेम नित रमे शरीर॥
बख़शनहार तूँ इक दयाल। मोह माया काटो बिख जाल॥
तेरी उस्तत गाऊँ किस भाँत। अन्तर धारे अधिक भरान्त॥
निर्मल विश्वास करो नित दात। अटल भगत चित रहे समात॥
तूँ ही तू इक चित समाये। अन्तर बाहर तेरा जस गाये॥
हरयो मोह भरम जँजाल। साची भगती लेवे चित भाल॥

**महमा तेरी चित रसे, दूजी विसरे आस।**
**'मंगत' निर्मल नाम को, पल पल करूँ उपास॥ 1480**

प्रभ विश्वास सब हरे विकारा। निर्मल भगत मिले जयकारा॥
भरम चक्कर से भयो उदास। निर्मल नाम करूँ उपास॥
देह देवल का पाऊँ विचार। साची जुगत लखूँ सत सार॥
नौ द्वारे का देही कोट। जीवन शकत घट पसरे जोत॥
बुद्ध सकाम बाहर भरमाई। देह देवल की सार नहीं पाई॥
सत संगत से निर्मल भयो। साची सार अन्तर लख लयो॥
गुरमुख मारग पाया योग। निर्मल नाम की रसना नित भोग॥
अन्तर बाहर सतनाम कमाई। मन पवन इक धार लखाई॥
उलट पवन घर सोधे नाम। दुबधा दूर पाया बिसराम॥
गुप्त सरूप प्रभ परगट भयो। अनहद नाद पुरख सुखदयो॥
विरत अडोल धर कीना जाप। सत शबद में सुरती थाप॥

अलप आहार करम निषकामा। जो जन धारे ले बिसरामा॥
तीन भवन में सुरता राखी। प्रान पवन की रसना चाखी॥
निर्मल ध्यान सुनी टंकोर। साची रसना पायो हज़ूर॥
बहुरंग नाद करे गुंजार। एक दृष्ट हो पाया उजियार॥
करम बन्धन आसक्ता नासी। निष्काम भाओ में विरत बिलासी॥
अन्तर सुरती चढ़े आकास। सत सरूप में ले निवास॥
शबद अखण्ड पाया निर्वान। मनुआँ लागा सहज ध्यान॥
काम क्रोध इच्छया मोह नास। अन्तरगत पाया प्रभ परगास॥

**साची जुगती धार के, सतनाम पाया परसाद।**
**'मंगत' मिली सत शान्ती, सब मन के मिटे विखाद॥ 1481**

अन्तरगत में नित समाओ। साची भगती की रसना पाओ॥
इरध उरध में सुरता राखो। नाम नारायन रसना चाखो॥
भरमन जाये होये परकास। अनहद शबद पुरख निरवास॥
कर्ता पुरख केवल जग सार। साचा शबद घट करो विचार॥
अन्तर सुरती नित ठहराओ। एक नाम की रसना खाओ॥
स्वास सुरत का एका कीजो। जनम जनम की भरमन छीजो॥
दुर्मत त्याग भयो इक रंग। पायो शबद पुरख निहसंग॥
निर्मल चित से ध्यान कमाई। कर्ता भाओ भरम चुकाई॥
निहकरम सरूप शबद निर्वान। अंतर पाया निर्मल ध्यान॥
ऊँचे शिखर होवे किलकार। गुरमुख सूझे ज्ञान निरधार॥
पिण्ड ब्रह्मण्ड का पायो भेद। अंतर परगट पुरष अछेद॥
अपने आप में भयो परसन्न। शबद परापत निर्मल धन्न॥
सरब सिद्धि का सोही दाता। सरब जगत का सो ही बिधाता॥
सब जीवों की सो कल्यान। अनहद शबद पुरख निर्वान॥
जो जो पूजे निर्मल देवा। मुकत परापत बिनसे भेवा॥
प्रभ के रूप में मेल मिलाई। प्रभ की शोभा अन्तर गाई॥
प्रभ के रूप में पाया आधार। जीवनमुक्त पद परसा सार॥

रोग सोग सब संशे नास। साचा शबद घट भयो परगास॥
निर्मल सुरती शबद ध्याई। साची कीरत प्रभ की पाई॥

**ताप तपन सब दूर भये, घट अन्तर भयो परगास।**
**'मंगत' परम प्रीत से, प्रभ चरनी कियो निवास॥ 1482**

जग आवन की पाई सार। कर्ता पुरख पाया निरंकार॥
जग में निर्मल घाली घाल। अन्तर ध्याया प्रभ दीनदयाल॥
साची पूजा जग करी पहचान। गुर के चरन जाऊँ क़ुरबान॥
निर्मल सीख सुनी गुरदेव। मारग ज्ञान पाया निर्भेव॥
साचा जतन कियो दिन रात। नाम प्रभू में विरत समात॥
दुर्मत नास पाया सत ठौर। अंतर परगट अनहद तूर॥
ताँ में सुरती नित परोई। तब ये देही निर्मल होई॥
सरब सिद्धी प्रभ एक पछाता। अंतरगत में भयो रंगराता॥
प्रेम की रसना खाई दिन रात। प्रभ के ध्यान में मगन समात॥
पूरन करम पाया पद पूर। अंतर परगट भये हज़ूर॥
सरब शत्रू देह होये विनास। आलख शबद में कियो निवास॥
पूरन भाग जो इस्थित पाई। प्रभ को सिमर निर्भय समाई॥
सब गुनियों से करूँ पुकार। प्रभ की भगत केवल जग सार॥
सब जीवों से प्रीत कमाओ। पर दुःख में निज सुख वरताओ॥
मिथ्या जग से रहो उदास। नाम प्रभू चित माहीं उपास॥
साची संगत पेखो नीत। सत साधू से रखो परीत॥
वैर त्याग परसो जग धूड़। परसन्न होवें तब पुरख हज़ूर॥
साची भगत तब पावें लेख। जग में विचरें धर रूप अलेख॥
सेवक भाओ धरें चित माहीं। तब परसें पद पार गुसाईं॥

**मान मद और ईरखा, जो चित से करे त्याग।**
**'मंगत' भाओ दीन में, प्रभ भगती रंग लाग॥ 1483**

साची भगती प्रभ की पाई। डूबत मनुआँ ठौर समाई॥

चंचल त्याग के निहचल हूआ। आज्ञा प्रभ में जीवत मूआ॥
करमफल इच्छया द्वन्द भाओ नासा। सम सरूप में लियो निवासा॥
करम करत निहकरमत पाई। प्रभ की भगत प्रभ रूप मिलाई॥
लाभ हान और ग्रहण त्याग। राग द्वेष अगन चित लाग॥
आपा पर और वैरी मीत। अनंक विकार धरी परतीत॥
शीत ऊषन देश काल विखादा। नित नित कलपे जीव परमादा॥
करमफल त्याग सुतन्तर भयो। प्रभ की भगत से ताप सब गयो॥
निहचल चित प्रभ नाम में धारी। तन मन धन का मान निवारी॥
आस त्याग निरास गत जानी। साची भगत प्रभ हिये पछानी॥
अत बन्धन ये इच्छया जाल। पलक ना छूटे नित गरसे जमकाल॥
राजा राना गुनी गुनवन्त। ज्ञानी पंडत और महन्त॥
धनी दलिद्री हिकमत वादी। गृहस्थी विरक्ती सब जतन बहु साधी॥
देहधारी जो जन जग आया। माया चक्कर ने बहु भरमाया॥
मिथ्या देह को सत कर माना। तिसके भोग में रहे ग़लताना॥
काम क्रोध मोह लोभ हंकारा। तृष्ना अगन नित करे अंगारा॥
उठ उठ धाये नहीं परसे चैना। करम भोग बहु भाँत लखीना॥
आसा तृष्ना में नित डोलाई। ग्रहन त्याग में नित समाई॥
करम भोग नहीं बन्धन टूटे। जनम मरन नहीं काल गत चूके॥

**अत माया मोह अन्धकार में, भरमे कुल संसार।**
**'मंगत' बिन प्रभ भगत के, नहीं तृप्ते जीव गँवार॥ 1484**

इच्छया भोग में रहे अशान्त। संजोग वंजोग का लखे भरान्त॥
बिन प्रभ नाम नहीं सूझे सार। भव दुस्तर नहीं पारावार॥
सरजनहार मन माहीं चेत। दृढ़ निस्चे से राखो टेक॥
सतगुर सीख अन्तर में सोध। मोह माया का करो निरोध॥
आज्ञा प्रभ में तन मन त्याग। ममता त्याग परस अनुराग॥
प्रभ अनुराग में जीवन धार। आपामत सब त्याग ग़ुबार॥
हंग विकार जाये काल सरूप। खेम कुशल पाये ज्ञान अनूप॥

देह आधार ममता भई नास। निर्मल नाम में कियो निवास॥
गुर उपकार चित पाई शान्त। निर्मल भगत मिली भगवन्त॥
प्रभ की भगत में भयो लवलीन। आलख शबद कियो अन्तर चीन॥
मारग करम से पाई छूट। नाम की रसना हरे सब कूप॥
निहकरम सरूप प्रभ पाया अकाल। तिसकी भगत चित कियो निहाल॥
सत शबद पाया सत थाओं। निर्मल जतन इक नाम ध्याऊँ॥
दूजी मनसा सब चित की नास। केवल प्रेम प्रभ चरन निवास॥
अन्तर सुन्न पाया अस्थान। निर्भय नाद की सुनी घर तान॥
ताँ में सुरती भई लवलीन। अत परकाश लियो घट चीन॥
अपने रूप संग मेल मिलाई। गुर परसाद से ये गत पाई॥
प्रभ की भगत में नित रीझाया। प्रभ को सिमर के नित तृपताया॥
प्रभ आधार पाई जग सार। अनन्त सरूप सरब भरतार॥

**दूजा भाओ विनासिया, सरब एक दरसाये।**
**'मंगत' महमा गाये के, नित नित चरन समाये॥ 1485**

अत दुस्तर ये संसार है, नित नित करो विचार।
सत संगत सतनाम में, नित निर्मल प्रीति धार॥
छिनभंगर सब रचना, जो भांत भांत दरसाये।
तिसके मोह में जीवड़ा, तीन काल भरमाये॥
निज आनन्द सत शबद है, बिन परसे नहीं ठौर।
काल करम की वासना, ये चक्कर चौरासी घोर॥
इन्द्री भोग के सुख में, नित जीया उठ धाए।
बहुरंग सम्पत पाये के, तो भी तृखा अधिकाए॥
देह विनासे भोग विनासे, सब रचना होये विनास।
अन्तरगत होये सोधिये, इक साहब रूप अबनास॥
सत स्वामी घट घट प्रगट, नित ही धरो ध्यान।
साचा सुख निर्भय पद, सो ही परम आनन्द की खान॥

मानुष जनम की कीरती , अत दुर्लभ ये ही विचार।
सत स्वामी की खोज में , तन मन दीजो वार॥
प्रभ आज्ञा में बिचरिये , होयें ताप सब दूर।
जीवन में जीवन मिले , नित आनन्द सरूर॥
मारग पर-उपकार का , जीवन करे सुचेत।
प्रभ चरन विश्वास हो , सब स्वारथ मिटे विखेप॥
अन्तर चित इक नाम में , निर्मल प्रेम लखाए।
गुपत सरूप नारायन , घर परगट सो दरसाए॥
पूरन आसा जीव की , पूरन परसे धाम।
सतसेवा सतनाम में , नित कीजे बिसराम॥
मानुष से भये देवता , नित निर्भय सुख समाई।
सत मारग को धार के , अत निर्मल शोभा पाई॥
जाग सवेरा साजना , खोज मारग तत्त ज्ञान।
पूरन सत विश्वास से , नित निर्मल नाम बखान॥
आदी शकत सरब परकाशी , तीन काल भरपूर।
तन मन धन सरब सुखदाता , सो ही सत हज़ूर॥
**हिरदे माँही सिमरिये , सकली आन त्याग।**
**'मंगत' भाओ दीन से , सत शबद मिले अनुराग॥1486**
हर सिमरन निर्मान सुभाओ , सत सेवा चित पेख।
आज्ञा प्रभ में विचरिये , सुन जीवन मुकत का लेख॥
अन्तर विरती सतनाम बिरोले , त्याग द्वन्द बिख खानी।
जाप अजपा नित ही जापे , आलख शबद घट जानी॥
नित निहकरम नित परापत , सो पारगरामी देवा।
सकल अन्धकार चित का नास्यो , जो पाई निर्मल सेवा॥
निर्भय धाम अगोचर बानी , घट घट भई परगासा।
चित में नित आनन्द परापत , कोई खोज पावे गुर दासा॥
**प्रेम मगन होये सुरती नित खेले , अन्तर तत्त्व पछानी।**
**'मंगत' दुबधा दुर्मत नासी , घर पायो शबद निर्वानी॥1487**

ऐसा मारग कोई सन्यास पछाने , सो जन मुकत समाई।
निर्द्वन्द भाओ का भगवा ओढ़े , नित अन्तर शबद लखाई॥
प्रेम का खप्पर खिमा खड़ाओं , नित जत सत आसन धारी।
शील सन्तोख का आहार करीजे , तब इच्छया भरम निवारी॥
नाम का नीर पीवे दिन राती , मन कर्ता भाओ त्यागी।
पाँच पच्चीस पर विजे लखावे , तब सूझे तत्त अनुरागी॥
नौ दर से सुरती को बाँधे , अन्तर सुन्न ठहराई।
गगन मण्डल में फेरी देवे , तब निहसंग जीवन पाई॥
नाम रूप सब रचना भूले , सर्वज्ञ तत्त पछानी।
अन्तर बाहर एको सूझे , आलख शबद निर्वानी॥
ज्ञान ध्यान की औषध खाये , मर जीवत दिशा लखाए।
देह मद त्याग के अन्तर बासे , तब जनम मरन दुःख जाये॥
सरब गती में एको पूजे , विज्ञान छतर सिर धारी।
काल कल्पना सकल त्यागे , नित निर्मल नाम विचारी॥
वैराग का तिलक मस्तक लेवे , सत सिमरन परचण्डे।
सत आधार पाये जन सूरा , सब भरम माया का खण्डे॥
निर्भय नगर में वास करीजे , नित सम रस कीजे पाना।
काम क्रोध का लश्कर मारे , तब राज पाए निर्वाना॥
इच्छया मोह सब दोष विनासे , घट शबद लखे परगासा।
आपा पर सब दुबधा नासी , तब पायो भेद सन्यासा॥
ब्रह्मा बिषन महेश्वर खोजें , तत्त आलख निरंजन देवा।
मुनी सनकादिक कपल ध्यावें , नित धारें निर्मल सेवा॥
दत्तात्रे अबधूत नित खोजे , निर्भय शबद अनादी।
मुनी वशिष्ट अंगरा नित पूजे , प्रभ पार पुरख बिसमादी॥
इच्छया त्याग भयो नाम परायन , जती सती बुद्ध नाथे।
त्रैगुन माया से निस्तर पाई , हर भगती में भये रंगराते॥
मारग कठन संसार का मीता , कोई गुरमुख विरला जागे।
मान अपमान नहीं अन्तर पेखे , चित निर्मल भगती लागे॥

**इच्छया करम सब बन्धन नाशे , नित अन्तर पाये बिसरामा।**
**'मंगत' सो सन्यास पछाने , जो तत्त परसे शबद अनामा॥ 1488**

## दूसरा रस-ज्ञान नेष्टा प्रबोध

**आतम तत्त अनुभव से, काल करम दुःख जाये।**
**'मंगत' नित आनन्द में, मन तन शांत समाये॥ 1489**

पारब्रह्म तत्त अभय अबनाशी। अकरम सरूप अलोक निवासी॥
नित परिपूरन आनन्द खानी। परम परकाश पुरख निर्वानी॥
अद्वैत अनादी सर्वज्ञ देवा। केवल ज्ञान सरूप लखेवा॥
तत्त गत जोत सरूप अनामी। अगम अगोचर पद पार स्वामी॥
जो जो बूझे सो गत पावे। बौहड़ चक्कर संसार नहीं आवे॥
अक्रह पुरष नित परमानन्द। परम धाम तत्त शबद अखण्ड॥
अन्तरगत जिस सोझी पाई। अपार पुरख की लखी वडयाई॥
सकल दोष चित शून समाये। परगट स्वामी जब घर दरसाये॥
अडोल निरवाच अतोल स्वामी। पूरन पूर सरब गत गामी॥
परगट पावे कोई गुरमुख दाना। आलख आपार तत्त नाद निर्वाना॥
ज्ञान नेष्टा अमरत फल खाये। निमख निमख अत शोभा ध्याये॥
अन्तरमुख रसना अत पीवे। नाम अमोल सिमर के जीवे॥
पांच तत्त का शूल विनासे। अकरम सरूप जोत परगासे॥
नित ही मन में मंगल गाई। केवल सरूप सिमर सुखदाई॥
भगती ज्ञान भरे भंडारा। अबगत पुरख सिमर निरधारा॥
सत संतन की सीख विचार। निर्मल निहुँ प्रभ हिरदे धार॥
बन्धन नास पावें बिसरामा। घट घट पूजें पुरख अनामा॥
सार वडयाई लख गुनवन्ता। नाम तत्त खोज पावें परसन्ता॥
अपरम सुख केवल तत्त ज्ञान। सम सरूप पुरख निर्वान॥

**निर्मल तत्त नित बोधिये, सुन सतगुर का लेख।**
**'मंगत' मिले अभय पद, घट घट पूरन देख॥ 1490**

अजर पुरष जब घट परगासा। तत्त्व ज्ञान पायो निर्वासा॥
अचल अछेद नित निहकरमा। शबद सरूप पुरख अजन्मा॥
मन बानी नित लीन समाई। अखय सरूप जब घर दरसाई॥
तत्त निरालम पद अन्तर पायो। मनसा रहत नित ध्यान कमायो॥
पाप पुन्न सब दूषना नासी। ज्ञान निष्टा अनुभव परगासी॥
सकल विकार से भिन्न कर जाना। अद्वैत अनादी तत्त भगवाना॥
सरब माहीं तिस जोत पछानी। सरब न्यारा तत्त सार लखानी॥
अत बिसमाद सरूप प्रभ देवा। पलक पलक करे गुरमुख सेवा॥
संशे माहीं कुल संसारा। नाम रूप गुन करम विस्तारा॥
तत्त पहचान से संसा नास्यो। अभय सरूप घट माहीं परगास्यो॥
रोम रोम में तत्त परगासी। अखल निरंजन जोत अबनासी॥
गुरमुख साजन ध्यान कमाये। सिमर स्वामी निर्भय पद पाये॥
अबगत रूप घट अनुभव होई। निहचल बुद्धी गत प्रेम लखोई॥
प्रेम मगन देह मोह विनासे। परम धाम में लीना वासे॥
सुकृत काज गुरमुख ने जाना। जीवत में प्रभ रूप पछाना॥
अमरत खानी पायो परसादा। अनन प्रीत प्रभ नाम आराधा॥
शुद्ध सरूप सरब गत पूरा। अनहद नाद रम्मत जन सूरा॥
किलविख दोख सकल भये दूरे। आलख शबद घर पायो हज़ूरे॥
बन्धन नास निरवास समाई। नाम आधार जीवन को पाई॥

**दृढ़ निश्चय प्रभ नाम का, देह मद करे विनास।**
**'मंगत' अन्तर ध्यान में, तब सत तत्त भयो परगास॥ 1491**

अमरत नाम सिमर भगवाना। निर्भय धाम पावे निर्वाना॥
घट अन्तर सो रह्या समाई। मूढ़ा जीव उठ बाहर धाई॥
मिथ्या भरमन में नित लागा। तत्त्व सरूप नहीं जपे अभागा॥
अनंक वासना जीया जलावे। भोगे भोग नहीं धीरज पावे॥
चारखानी भरमे भरमाई। गुरमुख साजन कोई भेद लखाई॥
अपने आप को जो नित बोधे। अपने अन्तरगत जो सोधे॥

अपने सरूप की लखना करे। देह विकार मल दुर्मत टरे॥
नित ही निर्मल तत्त विचारी। जीवन रूप शबद निरधारी॥
मनसा त्याग मन अन्तर राखी। पल पल सिमरे अपना साखी॥
भरमन दुतिया दूर करीजे। जनम मरन मारग तब छीजे॥
अपने आप का भेद पछाने। देह ममता नहीं चित में ठाने॥
आस त्याग नित रहे निरधारी। तिस साजन सब गवन विसारी॥
परम धाम अलौकिक जोती। परगट पायो तत्त्व अलोपी॥
गत मित सकली का निरना पायो। निर्भय शबद की कीरत गायो॥
धन्न साजन जिस मारग जाता। अपने आप का भेद पछाता॥
त्रैगुन दुबधा भरम मिटाई। ब्रह्म आनन्द में केवल रमनाई॥
एक ना दूजा सूझ में आवे। परम पुरख घट घट दरसावे॥
सकल दोख से निर्बन्ध हूआ। प्रभ के सरूप में जीवत मूआ॥
मर जीवन तत्त सार पछानी। मुकत भेद कथे सो ज्ञानी॥

**अबनाशी तत्त परगट भयो, जब देह अन्तर मीत।**
**'मंगत' मन तब मानया, नित सिमरे नाम पुनीत॥ 1492**

निर्मल नाम प्रभ हिये चितारी। तत्त्व ज्ञान पावें निरधारी॥
मन की विरती सब दोष त्यागी। अन्तर बाहर एक नाम रस लागी॥
काल कल्पना भय सब हरयो। निर्मल ध्यान चित माहीं विचरयो॥
आलख मूरत प्रभ धाम पहचानी। सर्वज्ञ शकत निरदोख समानी॥
रुच रुच तिसकी प्रीत कमाई। दुरमत भेद भरम दुःख जाई॥
सत तत्त सूझे सरब बिसरामी। गुरमुख ज्ञान पायो सुखधामी॥
अन्तर बाहर सत तत्त ध्याई। उट्ठत बैठत नित लिव लाई॥
आनन्द खानी तत्त शबद निर्वाना। गुर परताप पायो सहज ध्याना॥
तृखा विनास तृपत घर बासा। अनन प्रीत प्रभ चरन निवासा॥
अन्तर सुरत परम रस खाई। बिमल शबद तत्त ज्ञान लखाई॥
मिथ्या मोह माया का नासी। सत ठाकुर के चरन निवासी॥
एक पहचान से निहचल होई। भरम .गुबार गई चित दूई॥

एक की पूजा कीरत लोचे। एक ध्यान में मन संकोचे॥
एक आधार पाई चित थिरता। सरब स्वामी देखा इक कर्ता॥
एक की लीला चराचर खेला। सरब के भीतर करे कुलेला॥
सतगुर सेव इक दर सूझे। मारग मुकत सो ही जन बूझे॥
नित निरंतर एक ध्याई। तृष्ना रोग की औखद खाई॥
सिमर स्वामी चित निर्बन्ध होई। पर की सेव में प्रीत लखोई॥
भाओ भगत प्रभ चरन विश्वासा। सरब जियाँ चित प्रीत बिलासा॥

**अन्तर एको देखया, सो बाहिर रहे रमनाई।**
**'मंगत' पूरन देख के, मनुआँ प्रेम समाई॥ 1493**

अकरम जोत तत नाद पछानी। जीवनमुक्त पद पावे सो ज्ञानी॥
देह जंतर से भयो विरक्ता। तत्त्व सरूप में मन संजुगता॥
त्याग बैराग की पाई गत पूरी। साखी तत्त्व नित जपत हज़ूरी॥
इच्छया रहत मन नित तृपताया। अनन प्रीत सतनाम कमाया॥
बोलनहार की गत मित जानी। देह कोट की सार पछानी॥
उदर दीप में कर अशनानी। सुन्न गुफ़ा में सेव कमानी॥
आहार ब्यौहार शबद संग पाई। सुरत निरत इक तार लखाई॥
काम क्रोध कियो रन घाता। सर्वज्ञ रूप तत्त शबद पछाता॥
पाया भेद छाया भ्रम नासी। घट घट पूज एक अबनाशी॥
नाम सिमर नित रहे सावधाना। साखी सरूप जग सार पछाना॥
गुरमुख साजन घाले घाल। अन्तर चित नित जपे दयाल॥
जीवत मिरतक पद को पाई। आलख पुरख घर भेंटे आई॥
प्रभ संग वास सब दुबधा छीनी। सकल सृष्ट एको तत्त चीनी॥
महा तपीशर सो गुनवन्ता। तत्त्व पछान पाई परसन्ता॥
निर्भय शबद घट करी गुंजारा। सिमर सिमर पायो ज्ञान आपारा॥
आपा पर का दोख विनासी। केवल ब्रह्म पूरन परगासी॥
जिसने जाना ये भेद आगाही। महा मुनिन्दर सो कहलाई॥
संग त्याग असंग तत्त बूझे। दूजा त्याग निज आप को सूझे॥

उलटा मारग मुकत का धामा। कोट मद्धे कोई ले बिसरामा॥

**बाहर की भरमन तजी, मन अन्तर लीन समाई।**
**'मंगत' भेद पहचानया, सब में एक दिखाई॥ 1494**

सो अबधूत सचखण्ड वासी। आप पछान से मिटी चौरासी॥
देह इन्द्री मन से नित न्यारा। तत्त्व सरूप अदभुत विस्तारा॥
गुरमुख खोजे पावे निज धामा। वासना त्याग लेवे बिसरामा॥
सकल देही से भिन्न आप पछाना। तत्त गत रूप पाया निर्वाना॥
नित ही सुरती लीन समाई। अबगत रसना पल पल खाई॥
मिरतक देही में जीवन पाया। परमानन्द तत्त शबद लखाया॥
अनन प्रीती मन रसना पीवे। गुरमुख ज्ञान में जीवन जीवे॥
आसन ज्ञान ध्यान भभूता। शुद्ध विवेक कथे अबधूता॥
अगम निगम की रसना पीवे। आप पछान के नित नित जीवे॥
पाँच पच्चीस का दोख निवारी। ऊँचे शिखर तत्त शबद पुकारी॥
बिमल शबद में सुरत समाई। सो अबधूत परमगत पाई॥
अपने आप को नित नित बोधे। भाओ भगत रस निर्मल सोधे॥
खिमा दया सन्तोख का आहारा। चेतन पुरष का लखा पसारा॥
सरब व्यापक सरब अतीता। शबद पछान के भयो पुनीता॥
निर्मल रीत तिस गुरमुख जानी। अपने आप की सार पछानी॥
देह ममता मल रोग को हरया। सरव स्वामी सिमर निस्तरया॥
अदभुत घालन तिस जन घाली। शबद को पीवे भीतर तिरनाली॥
चार दिसा की सन्धी कीजे। नाम सिमर के जीवन लीजे॥
वाह परसन्ता तिस जन पाई। आप पछान गई दुर्मत काई॥

**अन्तर सुन्न समाया, लखी शबद की धार।**
**'मंगत' निर्मल ध्यान में, अदभुत भयो उजियार॥ 1495**

तिस साजन सन्यास पछाना। निहकरम सरूप पायो भगवाना॥
अन्तर सुरती पवन को पीवे। आस त्याग निरास हो जीवे॥

परमानन्द तत्त शबद नित खाई। पाँच दोख की जलन मिटाई॥
त्रैगुन खेद भरम भयो नासा। परम पुरख घट शबद परगासा॥
खैंच के सुरती अन्तर कीनी। नाम सिमरन की रसना लीनी॥
इन्द्री दोख से मन को ठाके। नित निरन्तर नाम रस चाखे॥
उपरस जीवन घनी उदासी। आलख शबद संग प्रीत बिलासी॥
खेम कुशल तत्त परगट पाई। अबगत जोत निरन्तर ध्याई॥
सच्चिदानन्द पुरख निर्वानी। परगट पूजे सो महा ज्ञानी॥
आपा त्याग निहसँशक होये। निर्मल नाम पल पल परोये॥
शुद्ध सरूप केवल रमनाई। तिसको पूजे सो साध कहलाई॥
देह इन्द्री की ममता नासी। पूरन तत्त परस अबनासी॥
नौ द्वार से मुकत समाई। आलख शबद घर दसवें पाई॥
अनन परीत शबद में राखी। परगट जोत की महमा लाखी॥
सुपन समान भई जग किरया। शुद्ध सरूप सरब पसरया॥
सर्वज्ञ पूज मन दोख निवारी। निहचल चित्त चढ़ी प्रेम ख़ुमारी॥
अन्तर में अन्तर सुख पाई। तृष्ना त्याग तत्त शबद लखाई॥
ब्रह्म शबद घट घट में चीना। परम पुरख सो ज्ञान परबीना॥
पूरन भाग कोई जग आया। परमानन्द तत्त भेद लखाया॥

**नित ही शबद समाध में, सुरती भई अडोल।**
**'मंगत' मिटी सब वासना, सुन सतगुर बचन अमोल॥ 1496**

सार जुगत जाने जो ज्ञानी। परम पुरख सो अन्तर पहचानी॥
सहज भाये मन रसना पीये। तिसकी आज्ञा में जीवन जीये॥
अमरत नाम घट भयो परगासा। तिसको सिमर गई जग आसा॥
परम पुरख सरब समराथा। सिमर सिमर सत लेख पछाता॥
विवेक की माला प्रेम की कफ़नी। बिरह आहार तत्त गत लखनी॥
निर्मल ध्यान सुन्न समाई। सो अबधूत ज्ञान गत पाई॥
निर्भय धाम अनुपम बानी। आलख पुरख घट करी पहचानी॥
प्रान की चौसर सुरत की गोटी। दृढ़ निश्चय लखे शबद अलोकी॥

दीन ग़रीबी की धूनी उजयारे। प्रन अपने को निहचल धारे॥
आकास पाताल की लखना करे। तिस गुरमुख सब सोझी पड़े॥
निमख निमख चितवे तत्त नाओं। करम त्याग परसे सत ठाओं॥
ऊँचे शिखर में शबद गुँजारी। सो गुरमुख तत्त सार विचारी॥
मन अपने को अन्तर राखे। अबनाशी तत्त की रसना चाखे॥
जत सत संजम राखे पूरा। अन्तरगत पाये शबद हज़ूरा॥
हंग विकार सब दूषना नासी। अपना आप तत्त जोत परगासी॥
काल त्याग अकाल गत बूझे। सो तत्तवेता तत्त नाम को सूझे॥
अन्तर ध्यान मन मगन रहाई। बिमल नाद संग प्रीत कमाई॥
चौधां लोक के पार समावे। अबगत नाद की रसना पावे॥
जनम मरन नहीं व्यापे भरमा। तिस गुरमुख पायो निर्मल धरमा॥

**अडोल अचाहक शबद तत्त बूझे, जनम मरन दुःख जाए।**
**'मंगत' निर्मल ज्ञान ये, कोई विरला सार गत पाए॥ 1497**

उठ गुनवन्ता कर विचार। काया नगर की खोजो सार॥
नौ द्वार का ये कोट उसारा। प्रान पुरख नित करे संचारा॥
पाँच तत्त पच्चीस परकिरता। सरब का साखी आपे प्रभ कर्ता॥
त्रैगुन माहीं ये चक्कर चलाई। अद्‌भुत रचना नहीं लेख में आई॥
गुरमुख साजन जिस देह गढ़ चीना। दुबधा त्याग शान्त पद लीना॥
इरध उरध पवन का धामा। सतगुर मेल जपे सतनामा॥
निर्मल नाम ज्यों ज्यों पीवे। तृष्ना त्याग अभय पद लीवे॥
करम का संशय लीन समाई। निहकरम जोत अन्तर प्रगटाई॥
आलख पुरख परकासे देह मन्दर। गुरमुख लखे छबी अति सुन्दर॥
कहन कथन कछु बन ना आई। सत ठाकर की अत प्रभताई॥
चंचल गई मन शून समाया। गुर परसाद हरी सब माया॥
तत्त पहचान के लीन समाई। उतपत परलय भरम चुकाई॥
सम सरूप अखण्ड निर्वानी। तिसे पछान गई भ्रम खानी॥
शोक मोह सब संशा नासी। मन निर्वान गती को चाखी॥

अपरम रसना अपरम जाप। आलख पुरख का अत परताप॥
जो बूझे ये निर्मल सार। सो ही ज्ञानी भव उतरे पार॥
निमख निमख सुरती सँभाले। शबद ध्यान में दुर्मत गाले॥
केवल संग केवल हो रहे। अगम निगम की रसना ले॥
प्रेम का सागर शबद पछानी। दुतिया दूर एको तत्त जानी॥

**साचे जतन को धार के, जो खोजे देह का कोट।**
**'मंगत' निहचल ध्यान में, पाये अखण्ड शबद तत्त जोत॥1498**

अबनाशी जोत घर परगट भई। तिस गुरमुख ने ज्ञान गत लई॥
ज्ञान में जीवे ज्ञान आधार। परगट ज्ञान से भयो निस्तार॥
ममता छाया सकल विनासी। निज स्वरूप सरब परगासी॥
रुच रुच प्रीती मनुआँ कीजे। निहचल ध्यान में करम मल छीजे॥
निहकरमत बुद्धी भई अडोल। पल पल सिमरे शबद अतोल॥
प्रेम की रसना अन्तर चित खाई। सिमर स्वामी सब ताप मिटाई॥
अन्तर बाहर एको रंग मानी। परगट गुपत एको पछानी॥
उतपत परलय इस्थित सार। सरब में पसरे एक निरंकार॥
रहत अकान्त तत्त शबद कमाई। गुरमुख साजन जग विजे लखाई॥
नित प्रीतम संग एका कीना। सरब आधार एको तिस चीना॥
आपामत विखाद त्यागी। सो ही गुरमुख परम वडभागी॥
निर्मल ध्यान तिस निर्मल विचार। निर्मल कहनी तिस निर्मल आधार॥
अन्तर बाहर निर्मल तत्त सोधे। परम परकाश शबद चित बोधे॥
दूजा त्याग एके रंग मानी। सो गुरमुख दाता परम ज्ञानी॥
अपने आप में जीवन पाया। अपने आप में रहे तृपताया॥
दुर्मत भरमन खेद सब हरया। नाम आधार में नित विचरया॥
अपनी सोझी आपे पाई। अपनी आप लखे वडयाई॥
पूरन परस मन पूरन होई। तिस साजन तत्त सार लखोई॥
नित मन माहीं इक नाम विचार। निर्भय धाम पावें गत सार॥

**जीवन में जीवन तत्त सोधे, सो ही पूरन साध।**
**'मंगत' तत्त ज्ञान से, सब मन की हरे उपाध॥ 1499**

कथनी ज्ञान ना मुकता दे। भरम धार के जनमे मरे॥
ज्ञान सो ही जो मन परबोधे। पलक पलक तत्त अन्तर सोधे॥
आपामती सब दुर्मत त्यागी। निर्मल साधन कोई पाए वडभागी॥
देह मल इच्छया घना है रोग। जनम मरन का देवे संजोग॥
सत साजन जुगत सत जानी। देह ममता की कीजे नित हानी॥
देह भरवासा मन से छोड़े। एक आधार नाम चित जोड़े॥
सकल करम प्रभ आज्ञा में देखे। लाभ हान को सम कर पेखे॥
राग द्वेष मन अगन निवारी। तिस साजन तत्त सार विचारी॥
गुपत सरूप घर परगट पाई। आलख शबद अत रसना खाई॥
शबद आधार जीवन जब जाना। तिस पुरख पायो पद निर्वाना॥
देह विकार से उपरस होवे। साचा शबद चित माहीं परोवे॥
खेम कुशल मन घर में बासे। एक प्रभू के चरन निवासे॥
अमरत नाम पीवे दिन राती। पलक ना विसरे अपना साखी॥
करमगती सब चक्कर मिटाई। निहकरम शान्त समाध लखाई॥
सो ही ज्ञानी जो ये गत बूझे। मन को सोध शबद तत्त सूझे॥
काल करम पर बिजे लखाई। सुन्न समाध अमीरस पाई॥
मन को सोधे प्रेम की रसना। तत्त विचार से तजे कल्पना॥
एक पलक मन नाम नहीं भूले। अबगत शबद में पल पल झूले॥
दुबधा त्याग भया अनुरागी। तत्त्व ज्ञानी सो परम वडभागी॥

**मन रीझे हरि नाम में, त्याग करम की आस।**
**'मंगत' ज्ञानी सो भया, जिस घट पायो ब्रह्म परगास॥ 1500**

एह बिध निरनय जो जन पाई। तत्त्व ज्ञान सो ही अर्थाई॥
करम वासना चित्त की नासे। प्रभ आज्ञा में नित करे बिलासे॥
निर्मल प्रीत राखे प्रभ चरना। सर्वज्ञ शकत सब कारन करना॥
जैसी भावी त्यों रीझावे। आपामती सब रोग वँजावे॥

खुले कपाट प्रभ घट दरसाई। अनन प्रीत से मंगल गाई॥
तिस बिन दूजा ना बांछा कीनी। सरव सरूप एको प्रभ चीनी॥
आसा बन्धन से मुकता होई। अबनाशी तत्त में लीन समोई॥
परम पदारथ नाम तत्त जापे। चंचल मनुआँ घट में थापे॥
अरूढ़ तपस्या में आपा त्यागे। गुरमुख साजन तत्त ज्ञान में जागे॥
नाम ध्यान रसना नित खाई। शान्त सरूप तत्त नाद ध्याई॥
परमानन्द मुकन्द तत्त सेवे। सिमर सिमर सत रसना लेवे॥
मधुर धुनी तत्त शबद किलकारी। आस त्याग निर्भय गत धारी॥
अबनाशी तत्त में नित रमनाई। सब कुछ देखे तिसकी प्रभताई॥
काल का भय भरम चित नासी। सहज ध्यान मन भयो निरवासी॥
अखण्ड अछेद स्वामी घर पूजे। द्वन्द त्याग मंगल चित सूझे॥
आनन्द आनन्द कीरत सत जानी। मारग प्रेम लखे सो ज्ञानी॥
तृपत भई तत्त रूप ध्याये। एको पूरन सब घट दरसाये॥
दिव्य दृष्ट से सत तत्त सूझा। एक पछान से नासयो दूजा॥
सम सरूप शबद घर जानी। रसना पीवे सो महा ज्ञानी॥

**बिमल नाद रस पान करी, त्याग इच्छया का दोख।**
**'मंगत' निर्मल ज्ञान ये, जो परसे पावे तत्त मोख॥ 1501**

साचा मारग प्रेम विचार। पावें तत्त्व ज्ञान निरधार॥
प्रेम बिना सब बादमुबाद। मूरख मन नहीं तजे विखाद॥
प्रेम बिना सब थोथा ज्ञान। मन नहीं तृप्ते बहु करे बखान॥
साची सिद्धी प्रेम तत्त खोज। निर्भय धाम की पावें मौज॥
देह अभिमान त्याग अन्धकार। साचे गुर के चरन पधार॥
साचा बचन चित अन्तर राख। सतपुरषों की कीरत चाख॥
दीन भाओ से सेव कमाओ। सत ठाकर की शोभा गाओ॥
तृष्ना अगन जाए अत रोग। निर्मल प्रेम का होवे संजोग॥
प्रेम परसाद से गवन विनासे। सरब जियाँ संग प्रीत बिलासे॥
अन्तर आतम नित चिंतन करी। जनम जनम मल दुर्मत टरी॥
पर-उपकार मन तन में धारी। निर्मल सेवा सत कार विचारी॥

ज्यों ज्यों पर की सेव कमाए। दुर्मत विकार परम दुःख जाए॥
सरब जियाँ संग साँझ बन आई। सो गुरमुख तत्त ज्ञान लखाई॥
मन इन्द्री को नित दमना करी। प्रेम भाओ इक नाम चित धरी॥
झूट विकार से उपरस होये। साची भगत सो गुनी परोये॥
प्रभ की भगत तत्त ज्ञान परगासे। हँग बुद्ध विकार सब नासे॥
सब कुछ करनी प्रभ भाने देखे। द्वन्द विकार नहीं चित लेपे॥
मनुआँ शुद्ध शबद तत्त निरखे। कल्पना त्याग तत्त आत्म परखे॥
आतम ध्यान कल्यान का सागर। सो ही ज्ञानी जो करे उजागर॥

**देह ममता को त्याग के, आतम पूजे जोये।**
**'मंगत' मिटे चित कामना, तब पूरन ज्ञानी होये॥ 1502**

नाम आधार जीवन जो पाई। गुरमुख ज्ञान लखे प्रभताई॥
अन्तर नाम मन माहीं परोई। सत शरधा से मनसा धोई॥
सत सरूप का दृढ़ विश्वासी। मन पवन सतनाम बिलासी॥
निमख निमख आधार प्रभ पावे। कलप कलपना सकल मिटावे॥
हुकम पछाने तिस समरथ स्वामी। कारन कर्ता तत्त अंतरयामी॥
मिथ्या देह से वैराग को पाई। काम क्रोध की अगन बुझाई॥
एक परीत राखे चित माहीं। पल पल सिमरे प्रभ पार गोसाईं॥
बारम्बार चित करे नमस्कारा। सत ठाकर तूँ सरजनहारा॥
मैं अनमत कूकर तुध सरनी आया। राख लेवें परजापत राया॥
तेरी ओट राखूँ भगवन्ता। सरब में पसरें तू रूप अनन्ता॥
सकले दोख प्रभ जी हरयो। सरनागत की रखया करयो॥
तूँ वडदाता मेरा स्वामी। सरब गत पूरा सरब बिसरामी॥
नित नित उस्तत गाऊँ देवा। बल बुद्धी माँगूँ सत सेवा॥
दीन अनाथ को राखें सरना। पूरन शकत तूँ कारन करना॥
निम्र भाओ से नाम प्रभु गाई। साध संगत रज सीस रमाई॥
कपट विनास खिमा चित्त आवे। भाओ भगत सत रसना पावे॥
साची बिरह जब चित परगासी। अन्तर परगट भये अबनासी॥

सत सुकृत तत्त नाद ध्याई। निर्मल प्रेम से चित विजे लखाई॥
पूरन प्रीती तत्त नाम को जापी। सुन्न समाध अत रसना चाखी॥

**नाम की रसना में मन लागा, भरम करम भये नास।**
**'मंगत' ज्ञानी सो आखिये, जिस घट पायो प्रभ परगास॥ 1503**

प्रभ का दर्शन जिसने पाया। सो ही ज्ञानी परम सुखराया॥
प्रभ का दर्शन जग जीवन सार। अनमत जीव के मिटे विकार॥
प्रभ का दर्शन पावे वडभागी। केवल प्रभ संग जिस प्रीती लागी॥
अपना आप प्रभ प्रीत में त्यागे। सो ही गुरमुख सतधाम में जागे॥
करम विकार त्रैगुन मल विनासा। सहज ध्यान में पायो अबनासा॥
पूरन मिल के पूरन चित हूआ। साध सीख से तजे भ्रम दूआ॥
लोक परलोक की इच्छया नासी। अलोक सरूप जोत घट भासी॥
तिसके ध्यान में जो रीझाया। परमहंस तत्त धाम लखाया॥
सरब त्याग इक नाम चित राखी। दीनदयाल की गावे नित साखी॥
अन्तर माहीं सत बानी उचारे। सो ज्ञानी सचखण्ड पधारे॥
मन में सिमरे मन में सूझे। अकथ कथा को मन में पूजे॥
सरब इन्द्री से भया अतीत। आलख शबद गत लखे पुनीत॥
पाँच पच्चीस पर विजे लखाई। सो तत्तवेता ब्रह्म गत पाई॥
परम सुख तिस गुरमुख पाया। काल भय जाँ नहीं दरसाया॥
सदा अडोल शबद रस पीये। तत्त सरूप में जीवन जीये॥
अपने पद का भेद पछानी। सत ठाकर की लीला जानी॥
नित परकाश में लीन समाई। परमानन्द घट घट दरसाई॥
ऐसी रहनी जिस गुरमुख जानी। पूरन त्यागी सो परम ज्ञानी॥
अपने आप में आप को चीना। गुरमुख ज्ञान सार रस पीना॥

**पूरन पुरख के ध्यान में, जिस जन इस्थित पाई।**
**'मंगत' पूरन गत लखी, मिल सतगुर सेव कमाई॥ 1504**

निर्भय धाम जिन जन जाना। निर्मल ज्ञान पायो निर्वाना॥

सकल माया पर विजे लखाई। निर्मल सुरती सुन्न ठहराई॥
शुद्ध सरूप शबद तत्त पीवे। सत आधार साहब का लेवे॥
अन्तर खोज अन्तर सुख पाया। जग का ठाकर अन्तर ध्याया॥
उनमुन मन्दर में रसना भरी। गुरमुख पीवे ना पल चित टरी॥
तत्त्व सरूप में मगन समाई। परम पदारथ नाम रस खाई॥
सरब जगत की सार पछानी। अबनाशी पुरष घट अन्तर जानी॥
मोह ममता छल दुर्मत नासा। अपने आप भयो परगासा॥
हिरख मान नहीं चित लेपा। आपा पर नहीं धरे विखेपा॥
मित्तर शत्रु संग एक परीती। निर्मल ज्ञान से भई परतीती॥
जनम मरन दुःख मूल चुकाया। अभयपद सिमर के मन तृपताया॥
जाननहारी वस्त को जाना। अब कुछ संशय नहीं चित पछाना॥
मिरतक त्याग जीवन में लागा। सो ही ज्ञानी अत वडभागा॥
अपने आप की सोझी पाई। अपने आप पर विजे लखाई॥
देह कोट का राज कमावे। सो ही ज्ञानी परम गत पावे॥
पाँच शत्रु का मर्दन कीना। शबद आधार में जीवन लीना॥
काल करम की फाँसा टारी। परमानन्द की सेव विचारी॥
ऊँचे शिखर कियो बिसरामा। पार पुरख पद पायो अनामा॥
तृपत भई मन लीन समाया। परम ज्ञानी तत्त भेद लखाया॥

**सत आधार में मन तन अरपे, नित सत सेव कमाये।**
**'मंगत' सो ही परम पुरख, जो शबद सार रस खाये॥ 1505**

परमानन्द जिस पान करीना। सो जोगी तत्त ज्ञान परबीना॥
अलप आहार ब्योहार सत धारी। आतम रसना नित सार विचारी॥
दृढ़ अभ्यास इक नाम कमावे। दुर्मत पाट माया बिनसावे॥
साची जुगती प्रभ नाम बरोले। कलपना त्याग भई विरत अडोले॥
बाँध सुरत घर अन्तर राखी। नाम का निरनय पल पल चाखी॥
दासा भाओ ग़रीबी धारी। सरब जियाँ चित सेव विचारी॥
करम अभिमान भरम मूल त्यागा। सो वडभागी तत्त रूप में जागा॥

एक आधार इक प्रीत कमाई। पलक पलक सतनाम ध्याई॥
मन पवन को दृढ़ कर राखे। उरध कँवल अत रसना चाखे॥
मूल द्वार शबद तत्त जागा। गुर परसाद जन मारग लागा॥
नित ही नित इक नाम को पीवे। अदभुत रसना शबद लखीवे॥
उलटा शबद आकाश गुँजारी। भरमन त्याग मन भयो मतवारी॥
अत सोझी तिस गुरमुख पाई। राम रमत की सार लखाई॥
माया मोह सब मिटे अन्धकारा। घर में परसे शबद निर्धारा॥
निर्मल चित से आज्ञा मानी। निज घर आया ये जीव अज्ञानी॥
सत को पूज के सतपद पाया। करम रोग विनासी छाया॥
बहुरंग शबद करे किलकारी। सिमर स्वामी पायो सुख आपारी॥
आस तृष्ना कछु चित ना रहाई। निर्मल प्रीत भयो प्रभ सरनाई॥
वड दाते संग मेल मिलाया। भरमन त्याग तृपत घर पाया॥

**पूरन प्रीती प्रभ चरन की, मन के दोष मिटाये।**
**'मंगत' पाई ज्ञान गत, चित पल पल नाम ध्याये॥ 1506**

अबगत नाम साहब का गाई। भरमत जीया ठौर समाई॥
मिथ्या नाम रूप को त्यागी। साचे नाम का भयो अनुरागी॥
अन्तर बाहर सम चित राखे। नाम रसायन रसना चाखे॥
पूरन पुरख की प्रभता चित मानी। बारम्बार सत सेव कमानी॥
दुर्गन्ध त्याग मन उज्जल हूआ। नाम प्रभू में जीवत मूआ॥
सो ही ज्ञानी पावे सार। ममता त्याग जपे निरंकार॥
सब जीयाँ संग सांझ बनावे। वैर त्याग के प्रेम वरतावे॥
एक ओट साहब की जानी। गुरमुख सूरा सो ही ज्ञानी॥
अपने रोग का करे उपाये। दुर्मत भरम को करे फ़नाये॥
शूरा होके रन को मारे। सब शत्रुओं का सीस उतारे॥
एक एक पर चोट लगावे। नाम आधार केवल चित पावे॥
सम्मत ज्ञान का गोला मारी। तृष्ना गढ़ की बुरज उडारी॥
अन्धकार विनास चानन घर पाई। गुरमुख सूरे विजे लखाई॥
सब माया का भक्खन कीना। शुद्ध सरूप घट अन्तर चीना॥

अपना आप पाया पद सार। दूजा त्याग भयो निर्धार॥
सर्वज्ञ शकत पाई जागीर। सो ही ज्ञानी परम फ़कीर॥
सरब गुन का मानी सोए। तिसका दरस भरम चित खोए॥
सार तत्त में करे बिसरामा। निर्मल नाम का पायो धामा॥
नित रसयो प्रभ रूप के संग। पूरन करमी को लागा ये रंग॥

**प्रेम प्रभू में रंगे मन अपना, त्याग इच्छया का रोग।**
**'मंगत' दुर्लभ साध सो पाइये, जिन नित निर्मल नाम संजोग॥ 1507**

प्रभ आधार जिस मनसा धारी। वासना व्याध चित गवन निवारी॥
मन बच करम से सेव कमाए। परम पदारथ जाने प्रभ राए॥
निमख निमख पद सार चितारे। सो गुरमुख पावे भव पारे॥
करम बन्धन नित जीव भरमाई। जनमे मरे शान्त नहीं पाई॥
निहकरम सरूप प्रभ चरन पछानी। जीवन मुक्त सो ही तत्त ज्ञानी॥
सकल करम का मान जो राखी। राग द्वेष की बिपता चाखी॥
एक पलक नहीं धीरज पाए। भोगे भोग नित तृखत रहाए॥
सत सरूप जब अनुभव होई। करम वासना दुबधा खोई॥
निहकरम शान्त पायो पद पारा। सो ही ज्ञानी गत लखे निर्धारा॥
अदभुत चक्कर माया बिस्तारी। त्रैगुन तान के मोहे संसारी॥
सत परमेश्वर जिस हिरदे जाना। गुना अतीत पायो पद निर्वाना॥
खेद त्याग मन निर्भय होई। अकथ कथा सतनाम परोई॥
उलट के सुरती अन्तर राखी। सत सरूप की रसना चाखी॥
द्वन्द त्याग के भयो निरमानी। तिस गुरमुख गत निर्मल जानी॥
परमानन्द तत्त शबद पछाता। आठ पहर रहे मन रंगराता॥
तिस बिन दूजा नाश पछानी। केवल प्रीत सतनाम चितानी॥
अपने आप को निर्मल कीना। नाम रतन खाये नित तृपतीना॥
कल्पना त्याग मन अकल्पत होई। निर्भय शबद चित माईं परोई॥
सकल विखाद से होवे जो न्यारा। सो ज्ञानी तत्त ज्ञान भण्डारा॥

**दुर्मत मिटे जब वासना, प्रेम प्रभू चित आए।**
**'मंगत' अखण्ड शबद में, पल पल ध्यान लखाए॥ 1508**

स्वारथ भरम में जो भरमाई। कभूँ ना लखे तत्त ज्ञान अगाही॥
जब लग देह को सत कर मानी। नहीं मिले विश्वास तत्त निर्वानी॥
जब लग करम का कर्ता होई। पूरन त्याग नहीं सार लखोई॥
जब लग चित विखयन भरमावे। परमानन्द नहीं हिरदे पावे॥
सकल दोख से निरविरत होई। नाम निरंजन परसे सोई॥
नाम आधार जब सब कुछ देखे। अपना आप नहीं भ्रम चित लेखे॥
खुले कपाट प्रभ दर्शन पाई। अन्तर चित अत रसना खाई॥
तृपत होए निर्भय पद पाया। तिस ज्ञानी तत्त भेद अर्थाया॥
निर्मल जुगत निर्मल विचार। निर्मल करनी जग जानी सार॥
अपने आप में भयो संतोखी। अन्तरगत जपे शबद अलोकी॥
अपना बन्धन आप निवारी। तत्त्व सरूप घट शबद विचारी॥
नियम संजम में दृढ़ता राखी। सदा आनन्द रस प्रेम का चाखी॥
भयंकर माया से विजे लखाई। पूरन पुरख के चरन समाई॥
जग आवन तिस सुफल करीना। निर्मल धाम शबद तत्त चीना॥
करम चक्कर सब दुबधा नासी। आवागवन की काटी फाँसी॥
आनन्द परापत तत्त बिसमादी। ज्ञान परकाश से मिटी उपाधी॥
जिस पाया सो ही जन जाने। अपने आप में भयो ग़लताने॥
सम सरूप रसना नित खाई। दुर्मत त्याग गत ज्ञान लखाई॥
तत्त परकाश में भयो लवलीना। सो ही ज्ञानी जिस ये पद चीना॥

**भरम माया का त्याग के, मिल चेतन अभय पद पाए।**
**'मंगत' निर्मल ज्ञान ये, कोई गुरमुख सार लखाए॥ 1509**

जग दुस्तर की सार विचार। कह बिध पसरे ये आकार॥
शुद्ध सरूप केवल आनन्द। तिसे ना व्यापे माया द्वन्द॥
गिनती लेखा नहीं लिखने आवे। कह बिध साहब ये खेल रचावे॥
कथ कथ थाके महाँ ज्ञानी। अचरज कौतक नहीं सार पहचानी॥

नेती नेती कर कियो बखाना। साहब शकत अतुल परमाना॥
अन्त ना पारावार लखाई। प्रभ दाते की अत वडयाई॥
अद्भुत रचना यह माया बिस्तार। अन्तर रूप केवल निरंकार॥
आपे सरजे सकली बन्त। एक सरूप पसरे अनन्त॥
निर्मल ओट जिस हिरदे धारी। सो ही गुरमुख तत्त सार विचारी॥
अन्तरमुख जब सोझी पाई। एको शकत केवल रमनाई॥
अन्तर बाहर तिसका बिस्तार। अपने आप में करे पसार॥
अनन्त शकत अभेद अछेद। बहु प्रकार जस गावें वेद॥
साचा हुकम जाने गुन सार। मोह माया का मिटे गुबार॥
तत्त गत रूप में लीन समाई। एको एक सरब दरसाई॥
उठ साजन सत मारग घाल। सत सरूप पद परसें दयाल॥
परगट रचना जो अत दिखलाई। भाँतक भाँत खेल खिलाई॥
कित जन्मे कित होये विनास। कित पसरे बहु रूप बिलास॥
सब का मूल सब की सार। साचा रूप एक निरंकार॥
नित ही मन में सेव कमाओ। एको एक सिमर प्रभ राओ॥

**अनन्त रचना ये जगत की, केवल मन तरंग।**
**'मंगत' एको रम रह्या, सत सरूप निहसंग॥ 1510**

अन्तरमुख जो भेद ना पाई। तत्त सरूप नहीं मिले आगाही॥
अन्तरमुख जो मन ना आवे। जुग जुग भरमें ठौर नहीं पावे॥
अन्तरमुख जिस खेल पहचाना। तिस साजन पाई सार निधाना॥
भरमन त्याग मन अन्तर राख। सतपुरषों की सुन ये साख॥
अन्तर रसना भरे भण्डार। ज्ञान विज्ञान सुख अपरम पार॥
अन्तर सूझ देवे बिसराम। परमानन्द का परसे धाम॥
अन्तर खोज जतन सुखदाई। पिण्ड ब्रह्मण्ड की सोझी पाई॥
अन्तर ज्ञानी सो महा तपीशर। तत्त पहचान करे घट भीतर॥
अन्तर बोध परम पद मीत। प्रभ की महमा आवे चीत॥
अनन्त सृष्ट अन्तर पासार। सरजनहार एक निरंकार॥

एक पहचान सब दूषना नासी। अखल निरंजन जोत परकासी॥
गुरमुख साजन अन्तर नित सोधे। नाम प्रभु का पल पल बोधे॥
मन अपने की त्यागे कुटलाई। परगट शोभा अत घर दरसाई॥
दीपक ज्ञान घट भयो परगास। निर्भय धाम में लीना बास॥
पूरन खेल करते का जानी। अत बिसमाद साहब निर्वानी॥
सब में व्यापक सबसे अलेप। अच पच रूप केवल सत एक॥
निर्मल कीरत एको प्रभ देवा। शेष महेश करें नित सेवा॥
जिस ध्याया प्रभ एक अनादी। मोह माया की हरी व्याधी॥
शुद्ध सरूप पायो परमानन्द। अकाल सरूप जोत अखण्ड॥

**आनन्द घन तिस पाया, जिस अन्तर नाम प्रभ गाई।**
**'मंगत' नित परकाश में, हरजन लीन समाई॥ 1511**

हर चरनी जिस लीना बासा। जनम मरन गई काल तरासा॥
सकल भूल चित भई विनास। एक साहब की पाई अरदास॥
निमख निमख कर सेव कमाई। दुस्तर मनुआँ अन्तरमुख आई॥
अन्तरमुख हो करे बिसराम। अमरत पीवे केवल सतनाम॥
निर्मल नाम की शोभा अत जानी। रंचक भेद नहीं होवे बखानी॥
अन्तर सूझ शबद तत्त पाई। पारगरामी घट घट रमनाई॥
तीन भवन में सुरता राखी। सार शबद की रसना चाखी॥
केवल सत पाई परतीत। सत लोक का गाया गीत॥
अपरम अपार शबद किलकार। जिसका लेख नहीं होवे शुमार॥
अनन्त शकत अतुल परमान। आलख लोक गत लखी निर्वान॥
काल कल्पना होई चित दूर। घर में पाया शबद सरूर॥
अकल्पत ध्यान शबद रस चीना। सुन्न महासुन्न के भेद को लीना॥
ध्याता ध्यान इक रंग समाई। दुतिया भेद नहीं लेख लखाई॥
केवल शबद उठे धुनकार। अनाम लोक गत लखी आपार॥
शून्यंग शून्यंग शून समाई। केवल तत्त गत एक लखाई॥
परमानन्द में नित भयो ग़लतान। सचखण्ड परस पाया निर्वान॥

ज्यों ज्यों सुरत शबद को पीये। शबद भेद बहु भाँत वरनीये॥
खण्ड लोक कँवल आदी परमान। सुरत की सकल अवस्था जान॥
केवल संग जब केवल होई। पद निर्वाच लखो गुनि सोही॥

**शबद की रसना सुरती ज्यों पीये, लखे भेद बहु भान्त।**
**'मंगत' पूरन पद सो ही, जाँ नहीं द्वैत भरान्त॥ 1512**

कथनी ज्ञान नहीं देवे परसन्ता। मोह को धार नित अंध भरमन्ता॥
शबद का मारग कठन आपार। मर जीवे तब परसे सार॥
अंधमत जीयाँ खेल बनाए। कथें परसंग बहु सुने सुनाए॥
शबद की बहु कथा विचारें। सतपुरषों की नहीं रहनी धारें॥
मिथ्या बाद में जनम गँवावें। सार शबद नहीं अन्तर पावें॥
आस त्याग निरास हो जीवे। अन्तर शबद सार सो लीवे॥
प्रभ के हुकम में आप गँवाई। सार शबद सो जन लख पाई॥
मन इन्द्री से होये अतीत। आलख शबद सो लखे पुनीत॥
करम वासना से भयो विरक्ता। निहकरम शबद की करे सो लखता॥
आकार दृष्ट जब लीन समाई। बिमल शबद की तब सोझी पाई॥
देह से भिन्न कर जब रूप पहचाना। लखयो शबद भेद निर्वाना॥
मन पवन का भयो जब एका। पारगरामी पायो शबद अलेखा॥
अन्तर में जो रहे समाई। मन की विरती नहीं डोलाई॥
करम का छेद चित करे नहीं लेपा। सो ही ज्ञानी करे शबद का लेखा॥
सुनी सुनाई मन मतिया त्याग। प्रेम के मारग में उठ लाग॥
साचे नाम में मनसा दृढ़ राख। सत सन्तोख सील चित चाख॥
खिमा ग़रीबी पर-सेव पहचान। तन मन का सब त्याग गुमान॥
निर्मल बुद्धी सतनाम में गाल। पलक पलक सत रसना भाल॥
वासना त्याग जब होवें निरवास। गुरमुख जुगत पायें शबद परगास॥

**एको नाम कमाइये, नित उट्ठत बैठत मीत।**
**'मंगत' आपा जब मिटे, तब पाइये ज्ञान पुनीत॥ 1513**

मन अपने को अन्तर राख। निर्मल नाम की रसना चाख॥
कर्ता हर्ता आद स्वामी। सिमर सिमर के पाओ बिसरामी॥
तिसकी ओट में जीवन धार। आज्ञा पल पल चित विचार॥
आपा भाओ भ्रम मूल त्याग। अनन प्रीत घट नाम में लाग॥
मन पवन इक नाम में राखी। अन्तर बाहर गावे निर्मल साखी॥
सुरत अडोल अन्तरमुख वासी। निमख निमख जपे नाम अबनाशी॥
नित अभ्यास कमावे जोई। सत सरूप तब घट प्रगटोई॥
सत अरदास सत पूजा धारे। सत ठाकर नहीं पलक विसारे॥
दृढ़ निश्चय से भगत कमाई। सत परकाश शबद घर पाई॥
सत शरधा से रसना खानी। खाये खाये के नित तृपतानी॥
अपने जीवन में जीवन पाया। घर विच स्वामी दरस दिखाया॥
ज्ञान ध्यान पूरन फल दीना। सरब का मूल निरन्तर चीना॥
इच्छया गई मन भयो निहाल। सतगुर पूरन भये किरपाल॥
अत अचरज घर दिसा लखाई। जिसका भेद नहीं वरनन जाई॥
देह माईं निरदेह पद सूझा। मिरतक में जीवन को बूझा॥
अलपगता में सर्वगता जानी। अकथ कथा घट लेख पहचानी॥
सत तत्त आतम जोत परगासी। गवन विनास भयो सचखण्ड वासी॥
आठ पहर रस अबगत पीना। सत ठाकर को सब घट चीना॥
पूरन मिल छाया भ्रम दूरे। एको एक सरब भरपूरे॥

**परम पदारथ घट सूझया, गयो दुर्मत छाया भरम।**
**'मंगत' पूरन साध सो, तिस पाया निर्मल धरम॥ 1514**

## आलख बानी

**आलख बानी घट परगट जानी, जीव अभय पद पाए।**
**'मंगत' कथा बिसमाद है, मिल साध संगत रस खाए॥ 1515**

आलख बानी तत्त करो विचार। बोलनहार पुरख निर्धार॥
कहाँ से आया कहाँ जाये समाई। करो विचार गुनी गुनराई॥
चेतन पुरष अगम अगाधी। भेद पहचानें सब मिटे व्याधी॥

काया नगरी की खोजो सार। आलख बानी तत्त मिले विचार॥
रूप वरन नहीं चिन्ह आकारा। बोलनहार पुरख आपारा॥
ना जननी ने तिसको जाया। बिना कारन सो आप समाया॥
अत बिसमाद लीला को धारी। आपे खेले खेल आपारी॥
गुरमुख साजन परसे सार। एको एक सरब भरतार॥
बिन मारग के सार लखाई। अपने आप पूरन रमनाई॥
तत्त गत रूप अखण्ड परकास। आलख बानी शबद निर्वास॥
अन्तर बाहर पसरे सोही। सरब जगत इक सूत परोई॥
मन इन्द्री की गमता नाहीं। अत सूक्षम पद पार गोसाईं॥
गुरमुख सूझे निहचल बुद्ध धारी। आलख बानी तत्त शबद निरंकारी॥
भेद पहचान सब कल्पत नासी। अखण्ड जोत शबद परगासी॥
पूरन निरनय चित अन्तर पायो। एको शकत सरब दरसायो॥
दुर्मत भेद नास्यो अंधकार। आलख बानी घट करी विचार॥
अमृत खानी पायो तत्त भेद। अबगत जोत अछल अछेद॥
निर्मल रसना से चित तृपताई। भय भरम सकलो दुःख जाई॥
अन्तर ध्यान सुरती लवलीन। आलख बानी की रसना चीन॥

**लोकालोक की भरमना, तब ही नासे मीत।**
**'मंगत' आलख शबद को, जब परसे अन्तर चीत॥ 1516**

सारंग बानी तत्त नाम विचार। अभय पद निर्मल पेख निर्धार॥
दुर्मत त्याग भरम का शूल। आलख बानी खोज तत्त मूल॥
आलख बानी सरब समाई। चेतन परकास परम सुखदाई॥
आलख बानी तत्त आनाद। अपने आप विचरे बिसमाद॥
आलख बानी अपरम ज्ञान। पूरन पूर सरब निधान॥
आलख बानी सम परकास। सरब जियाँ में करे बिलास॥
आलख बानी तत्त अचिन्त। एको पसरे रूप अनन्त॥
आलख बानी अगोचर ज्ञान। गुरमुख विरला करे पहचान॥
आलख बानी सरब शक्ताई। नाना पिण्ड ब्रह्मण्ड प्रगटाई॥

आलख बानी अखण्ड परगास। सिद्ध तपीशर करें अरदास॥
आलख बानी पद जीवन सार। चर अचर में करे पसार॥
आलख बानी अलौकिक धाम। त्रैगुन परे करे बिसराम॥
आलख बानी आनन्द की खान। काल करम नहीं भेद पहचान॥
आलख बानी गुरमुखता योग। पूरन करमी कोई पाए संजोग॥
आलख बानी पूरन तप ध्यान। गुर का पूत कोई करे पहचान॥
आलख बानी अनुभव परकास। ज्ञान विज्ञान भगती विलास॥
आलख बानी अछेद अभेद। अत महमाँ गावें सिमरत वेद॥
आलख बानी घट घट व्याप। परगट होवे गुर के परताप॥
आलख बानी पद केवल सार। जो जो बूझे पाए उद्धार॥

**आलख बानी जो अन्तर पूजे, सो ही सन्त सुजान।**
**'मंगत' नित सरूप में, तन मन भयो ग़लतान॥ 1517**

आलख बानी भेद अगाध। परमानन्द तत्त शान्त समाध॥
आलख बानी पूजो नित नीत। भव जल दुस्तर से पावें जीत॥
त्रैगुन माया जाल आपार। बानी पूज पावें निस्तार॥
आलख बानी का खोज विवेक। साध जनाँ का निर्मल लेख॥
बानी पूज ब्रह्मा गत पाई। बानी ध्यान शिव रहे रमनाई॥
बानी उस्तत विष्नू नित जापे। सकल जगत को बानी थापे॥
आलख बानी का नहीं शुमार। सरब में पसरे रूप निरंकार॥
आलख बानी जो अन्तर बूझे। पद निर्वान की रसना सूझे॥
सरब सिद्धों की सिद्धता सार। सरब गुनियाँ का ज्ञान विचार॥
सरब जगत का जो आधारी। आलख बानी तत्त रूप निर्धारी॥
आलख बानी सरबगत व्याप। गुरमुख साजन करे अन्तर जाप॥
परमानन्द परमेश्वर देव। आलख बानी की परसो सेव॥
देवन देव नाथन का नाथ। सरब शकत नित सरब समात॥
सरब आधार रहे आप अलेप। आलख बानी का सोध विवेक॥
गुरमुख पूजे निर्मल धर ध्यान। तीन लोक में होऐ परवान॥

दुबधा त्याग मंगल को पाई। गवन विनास नित लीन समाई॥
निर्मल ठौर पाया तत्त रूप। आलख बानी की कथा अनूप॥
तृपत भयो सत रसना खाये। सकल वखेपत मन की जाये॥
अन्तरगत में भयो परगास। आलख बानी में लियो निवास॥

**अन्तर सुरती लीन भई, तत्त बानी रसना खाई।**
**'मंगत' कथा अस्चरज ये, कोई विरला भेद लखाई॥ 1518**

आलख बानी की उस्तत आपार। गावें ग्रन्थ कुतेब आचार॥
आलख बानी का पावें सब जाप। अनन्त महमा से करें अलाप॥
अनगिनत नाम से करें वडयाई। आलख बानी का भेद आगाही॥
अन्तर चित जिस पायो भेद। बौहढ़ ना व्यापी माया खेद॥
अक्षर निरअक्षर सरब निधान। आलख बानी का नित करें बखान॥
अत महमा नहीं पारावार। आलख बानी सरब जन्त आधार॥
निर्मल चित से गाइये गीत। आलख बानी सरब सुखरीत॥
आलख बानी धारे सब नाम। अनन्त शकत अखण्ड बिसराम॥
अलख बानी अन्तर चित सोध। निर्मल नाम को पल पल बोध॥
आलख बानी का धरो ध्यान। काल करम से होये कल्यान॥
आलख बानी का घट लेख विचार। जनम मरन से पायें छुटकार॥
आलख बानी सरब घट व्यापी। परगट पाये कोई गुरमुख परतापी॥
जिस घट बानी परगट होई। परमानन्द लखे गुनी सोही॥
तत्त बानी को जो जन सेवे। महा परशाद शान्त पद लेवे॥
भरमत जीव का सार ठिकाना। आलख बानी रूप निर्वाना॥
साध संगत मिल जो रसना खाई। गवन विनास निर्भय पद पाई॥
नित ही साजन पद निर्मल खोज। आलख बानी को घट में पूज॥
आलख बानी जप मनसा पूरी। खेम कुशल तत्त रूप हज़ूरी॥
अत अंधकार दुर्मत का जाल। आलख बानी घट सिमर दयाल॥
साची करनी ये सत विचार। बानी खोज पावें निस्तार॥

**घट अन्तर पहचानयो, आद पुरख भगवान।**
**'मंगत' मधुर धुन नाद में, विरत भई निर्वान॥ 1519**

आलख बानी जब परगट भई। अन्तरगत सत सोझी लई॥
अपरम आपार पुरख निर्वाना। आलख बानी घट कियो पछाना॥
निराकार निरालम तत्त सार। परमानन्द शबद निरधार॥
आसा तृष्ना सकल भ्रम नासी। अदभुत जोत घट में परगासी॥
सत ठाकर सो ही विज्ञाना। अखण्ड सरूप शबद कल्याना॥
अपने आप में रहे भरपूरा। अपनी शकत में विचरे हज़ूरा॥
सरब ज्ञाता सरब अलेप। एको पसरे धर रूप अनेक॥
गुरमुख मारग ज्ञान लखाया। अचरज गत का निरनय पाया॥
आलख बानी तत्त भेद बिसमाद। जो जो बूझे पाये ज्ञान अगाध॥
निर्मल सुरती अन्तर धारी। एक नाम का भयो वापारी॥
उट्ठत बैठत निश्चय इक राखी। निर्मल नाम को पल पल चाखी॥
दुबधा दूर मन नेहचल होई। अबगत बानी घट सार परोई॥
भय त्याग निर्भय पद पेखे। अबगत रसना अन्तर लेखे॥
दूजा त्याग एक चित ध्याई। जतन जतन कर मन ठहराई॥
करम जाल से होए अतीत। आलख बानी तब घट परतीत॥
पार पुरष अनादी देवा। निर्मल चित से कीनी सेवा॥
आसा मनसा सब दोष जलाई। अखण्ड जाप जपे सुखदाई॥
जप जप नाम मन निर्मल होई। अबनाशी सिमर सब दुबधा खोई॥
देह मन्दर में भयो परगासा। आलख बानी घट करे बिलासा॥

**मिथ्या मन की कल्पना, पल पल जीव भरमाए।**
**'मंगत' सो ही निस्तरे, जो शबद सार को पाए॥ 1520**

अछल अछेद पुरख अनादी। सरब परकाश तत्त शबद आगाधी॥
जिस साजन सत जुगत पछानी। मन की दुबधा करे नित हानी॥
झूट देही का मोह त्यागे। सतनाम के मारग लागे॥
निर्मल चित से नाम कमाए। दुर्मत भेद भरम उड़ाए॥

अन्तरगत में वास करीजे। आलख बानी की रसना पीजे॥
उलटे मारग में नित लागे। भरमन त्याग सत रूप में जागे॥
कठन कमाई कोई गुरमुख घाले। बारम्बार जपे नाम दयाले॥
मोह त्याग के भयो बैरागी। सत सरूप का नित अनुरागी॥
देह विकार से भयो न्यारा। आलख बानी घट करी विचारा॥
सब सिद्धों ने सिद्धता पाई। गुरमुख मारग का भेद लखाई॥
बन्धन त्याग मुकत रस खायो। आलख बानी घट में प्रगटायो॥
जीवन रूप सो ही तत्त सार। निर्मल ज्ञान का सो ही भंडार॥
नित आनन्द की सो ही खानी। घर में पूज सत आलख बानी॥
अती उस्तत ठाकर की पाओ। निमख निमख कर सेव कमाओ॥
दूजा भरम कल्पना त्यागो। निर्मल नाम में पल पल लागो॥
बन्धन नास पावें सत धाम। आलख बानी सिमर सतनाम॥
जीवन शकत पुरख अतोल। अन्तर चित सुन निरमल बोल॥
अपने आप नित करे पुकार। जो बूझे सो उतरे पार॥
पारगरामी पुरख बिधाता। सिमर सिमर गयो काल संतापा॥

**सत ठाकर को पाया, जग जीवन जानी सार।**
**'मंगत' अन्तरगत माहीं, तत्त बानी कियो उजियार॥ 1521**

अन्तरगत में चानन भयो। आलख बानी परसा सत देव॥
अनन प्रीत से शोभा गाई। पार पुरख की अत वडयाई॥
नाम आधार में जीवन राखी। सत सरूप की परसे साखी॥
सो ही साजन तत्त का ज्ञाता। अन्तर माहीं जिस एक पछाता॥
भरमन त्याग चित भया अडोल। आलख बानी घर पाया बोल॥
तृपत भया ये अँधला जीया। भरम त्याग सत रूप लखीया॥
नित आनन्द घर बानी धुनकार। अबगत नाद करे किलकार॥
मन इकागर करे अमरत पान। सत ठाकर की सरन पछान॥
पूरन भगती पाया तत्त योग। बानी बूझ के भया अरोग॥
सतगुर साजन अत किरपा कीनी। सत मारग की रसना दीनी॥

रसना खाए मन भयो अचिन्त । आलख बानी नित जाप जपंत॥
परम परमेश्वर की कीरत पाई । सिमर नाम चित शान्त समाई॥
घट घट पायो तत्त निरंकार । तिसकी महमा नहीं होये विचार॥
जिस जाना तत्त शबद असंग । निहचल भयो करी दुर्मत भंग॥
अपने आप में आप समाई । आलख बानी का भेद लखाई॥
पिण्ड ब्रह्मण्ड का निरनय कीयो । सरब स्वामी एको थीयो॥
आदी अन्ती सो ही साच । आलख बानी पुरख निरवाच॥
झूट त्याग सत में जो लागा । भरमन त्याग अन्तरमुख जो जागा॥
तृषना त्याग भया निर्वान । आलख बानी तिस करी पछान॥

**मन को अन्तर राखया, अत रसना नाम की खाई।**
**'मंगत' सो ही परम पुरख, तत्त रूप में लीन समाई॥ 1522**

अन्तरयामी घट में पाया । अनन्त सरूप में एक ध्याया॥
सरब माया का सो परकाशी । आलख नाद पुरख अबनासी॥
घट घट व्यापे पूरन रूप । परगट पावे कोई गुरमुख भूप॥
मन अपने को जिस अन्तर राखा । करम त्याग सतनाम रस चाखा॥
इच्छया भोग से भया अतीत । निर्मल नाम का गावे नित गीत॥
निर्मल प्रेम पाया प्रभ एक । आलख बानी का लखया लेख॥
अन्तर सुरती नाम रस खाये । पल पल एको एक ध्याये॥
राग द्वेष की मनसा नासी । आलख बानी तत्त समता परगासी॥
जीवत में देह मोह त्यागा । साखी पुरष की चरनी लागा॥
अनन प्रीत से करी अरदास । आलख बानी में लियो निवास॥
बाहरमुख से अन्तर आया । माया त्याग प्रभ मंगल गाया॥
सरब जगत प्रभता तिस जानी । एको विचरे चारे खानी॥
अत परताप साहब पहचाना । आलख बानी पद पायो निरवाना॥
कल्पना त्याग भया अडोल । निर्मल नाम पाया अनमोल॥
प्रेम प्रीत से कीरत गाई । सब कुछ देखे तिसकी प्रभताई॥
दुर्मत रोग आपामत त्यागी । सत शरधा प्रभ नाम में लागी॥
एको एक पाया आधार । आलख बानी तत्त करी विचार॥

करम भोग सब चित से त्यागी । एक नाम का होए अनुरागी॥
भव बन्धन से पावे जीत । आलख बानी घट भई परतीत॥
निर्मल चित से रसना खावे । निर्भय धाम में जाए समावे॥

**अन्तर नाम चितारया, प्रेम प्रीत की डोर।**
**'मंगत' दुर्मत त्याग के, परसा निर्मल ठौर॥ 1523**

अबगत रसना सो जन खाई । एक नाम की जो करे कमाई॥
अन्तर बाहर सतनाम पछानी । इक चित पीवे तत्त सार ज्ञानी॥
मोह भरम माया का जाई । साखी जोत घट में प्रगटाई॥
अबगत दर्शन अबगत ज्ञान । अबगत पूजा करी पछान॥
बिना आकार के सत तत्त सूझा । निर्मल ज्ञान निरंतर बूझा॥
सहज ध्यान शबद निर्वान । घट घट अन्तर परसी तान॥
सुन्न गुफा में डेरा कीना । महा परसाद शबद को चीना॥
अनंक राग घट होयें अलाप । आलख बानी में सुरती थाप॥
रसना रस पाई निर्मल सार । बानी बूझ लई जयकार॥
मन अपने का भरम चुकाया । सत ठाकर को घर में पाया॥
महमा सूझ के पाया आनन्द । दुर्मत छाया गई द्वन्द॥
पूरन करनी में हरजन लागा । छाया त्याग सत रूप में जागा॥
अन्तर सुरती सत धाम समाई । आलख बानी तत्त सार लखाई॥
अतुल शकत प्रभ पायो अखण्ड । घट घट अन्तर जोत परचण्ड॥
पूरन शकत सरब भरपूरे । थल मंडल में एक हज़ूरे॥
सरब जीयाँ का आदी देव । गुरमुख साजन पावे सत सेव॥
भरम त्याग पावे परकासा । मिथ्या त्याग लखे अबनासा॥
दुर्मत त्याग सम्मत चित जानी । सो जन परसे घट आलख बानी॥
परम समरथ प्रभ अन्तरयामी । पूरन भाग कोई ले बिसरामी॥

**अनंत शकत प्रभ एक है, जो सरब जियाँ आधार।**
**'मंगत' गुरमुख विरले, घट जानी निर्मल सार॥ 1524**

एक प्रभू का भयो भरवासी । गुरमुख सो सत रूप बिलासी॥
अपने मन की दुर्मत त्यागी । प्रभ आज्ञा में उठ के जागी॥
सकली दात करते की जानी । सुख दुःख एके धार पहचानी॥
हंग बुद्ध परमाद विनासी । आलख बानी घट में परगासी॥
ऊँचे शिखर सुने टंकोर । काल करम का नासे शोर॥
देह त्याग के निहसंग होई । सत सरूप में सुरत परोई॥
प्रेम ख़ुमारी में मन मतवारा । आलख बानी तत्त सार विचारा॥
कहन कथन नहीं जाए लेख । पार पुरख का अचरज भेख॥
जो सूझे ये अंतर सार । आसा त्याग होवे निर्धार॥
नित सरूप सो परमानन्द । सिमर सिमर के जाए जम फन्द॥
मानुष जनम कदारथ होई । जो चित साची प्रीत लखोई॥
अन्तरगत में नाम तत्त ध्याई । सत ठाकर की भए सरनाई॥
सरब जगत प्रभता तिस जानी । अन्तर बाहर सो पहचानी॥
करम अभिमान जाये अत रोग । आलख बानी का तब होये संजोग॥
आसा पूरन मन कल्यान । पाया ठाकर सहज ध्यान॥
अन्तर में सत सेवा धारी । प्रभ दाते का भयो पुजारी॥
आपा त्याग भयो इक रंग । आलख बानी का सुने परसंग॥
ऊँचे धाम में वास करीजे । आलख बानी की रसना पीजे॥
बजे रबाब बहु रंग तान । गुरमुख साजन पद पायो निर्वान॥

**अन्तर धाम लखाया, अबगत जोत प्रभ देवा।**
**'मंगत' पूरन भाग से, सत सुकृत पाई सेवा॥ 1525**

साची सेवा जाने गुनी सोही । आलख बानी जो मन माहीं परोई॥
अन्तर ज्ञान में भयो लवलीना । दुर्मत त्याग एक को चीना॥
सर्वज्ञ शकत नित निरधार । आलख बानी तत्त करी विचार॥
निर्मल प्रेम पायो घट माईं । एको सूझे सरब के थाईं॥
मन देह इन्द्री लागी इक रंग । पार पुरख का नित सुने परसंग॥
नित सुतन्तर नाम तत्त जापे । सदा अडोल नहीं काल व्यापे॥

अन्तरयामी तत्त शबद अनाद । तिसकी महमा अत बिसमाद॥
सत साजन ये सार लखाओ । आलख बानी की सेव कमाओ॥
मानुष जनम का सुकृत काज । जो चित माहीं तत्त ज्ञान बराज॥
ज्ञान परापत सब भरमन नासी । निहकरम सरूप घट बानी परगासी॥
सो ही ठाकर पार पुरातन । चेतन पुरष सरब सनातन॥
बारम्बार करो परनाम । आलख बानी सिमर सतनाम॥
तपन विनास खिमा चित आवे । आलख बानी जो सार कमावे॥
साची भगती साचा तप जान । साचा योग ये ही परवान॥
मनसा त्याग चित नाम कमाई । अधिक शोभा करते की गाई॥
अपना आप त्यागा भ्रम मूल । अन्तरगत पाया निर्मल बोल॥
सहज सुन्न मन वास करीना । आलख बानी की सार को चीना॥
अकथ कथा जापे नित जाप । आलख बानी में लीन समात॥
गुरमुख साजन पाई जग जीत । अबनाशी धाम की लई परतीत॥

**अबनाशी तत्त पहचानया, गयो दुर्मत का भेद।**
**'मंगत' अन्तरगत माईं, पद पाया अछल अछेद॥ 1526**

आलख बानी जब घट परगासी । दुबधा त्याग पायो अबनासी॥
अबगत धारा अन्तर भई जारी । सुन्न मंडल में करे किलकारी॥
रूप बिना अरूप दिखाई । अपने आप केवल रमनाई॥
दूजा भेद वहाँ नहीं दरसाए । आलख बानी जाँ रही समाए॥
कोट मद्धे कोई जाने पन्ध । उल्टे मारग जोत परचण्ड॥
धरती छाड आकास समाई । सत ठाकर की लीला पाई॥
अबगत नाद करे गुँजार । अचरज कौतक नहीं शुमार॥
चंचल मनुआँ भयो लवलीन । सत सरूप की शोभा चीन॥
अखय पुरष परम बलधारी । कोट पिण्ड ब्रह्मण्ड औसारी॥
सब में विचरे रूप समान । अन्तरयामी पुरख भगवान॥
अपनी लीला धारी बहुरंग । अन्तरगत नित रहे असंग॥
घाट वाध ना तिसका होई । आलख बानी सम रूप समोई॥

सतगुर मेल पाई सतकार । बानी पूज लई जयकार ॥
बन्धन नास मन भयो निर्वान । आलख बानी तत्त करी पहचान ॥
सुरती लागी सहज सुभाए । एको सिमर परम सुख पाए ॥
मोह अंधकार ना व्यापे चीत । आलख बानी का गायो गीत ॥
अनहद गरजे मेघ समान । अन्तर पायो सतनाम ध्यान ॥
सकल करम की दुबधा नास । पाप पुन्न की काटी फाँस ॥
निर्भय होये तत्त सार को पीये । अबगत रूप में नित ही जीये ॥

**दुर्मत छाया त्याग के, सत् तत्त कियो विचार।**
**'मंगत' अन्तर पाया, प्रभ पूरन किरपाधार ॥ 1527**

सत विश्वास जिस गुरमुख जाना । आलख बानी तत्त भेद पहचाना ॥
बानी पूज मन भयो असंग । करम वासना भई सकली भंग ॥
दीनदयाल सरब गत देव । अन्तरगत पाई सत सेव ॥
मन पवन को करे पुनीत । एक नाम धारे परतीत ॥
जग मिथ्या से होये उदास । प्रभ दाते की करे अरदास ॥
सब लीला प्रभ की नित जानी । करनेहार को सत कर मानी ॥
तज अभिमान सत सेव कमाई । अन्तर नाम पल पल ध्याई ॥
दुबधा दूर मन भयो निहसंग । आलख बानी प्रभ पायो परसंग ॥
सत परसंग में सुरती राखी । महा आनन्द रसना को चाखी ॥
इच्छया भरम का जाल विनासा । सरब गत स्वामी की पाई अरदासा ॥
जनम मरन का पन्ध सब चूका । अडोल अचाहक पद पायो अलोका ॥
देव मुनीशर नित धरें ध्यान । पतितपावन तत्त शबद निर्वान ॥
जग जीवन में ये ही सार । रख भरवास इक चरन निरंकार ॥
अनंक जनम की तृखा तेरी जाए । निहचल चित जो सेव कमाए ॥
सो वडदाता अतुल परमानी । अन्तरगत जप आलख बानी ॥
भय भरम सब मन का नासी । अटल जोत शबद परकासी ॥
धन्न साजन जिस सार पहचानी । प्रभ को सिमर के भयो कल्यानी ॥
तृपत होए सतनाम रस खाई । गवन त्याग सत ठौर समाई ॥

सिमरो नाम केवल जग सार। साध जनाँ ने करी पुकार॥

**एक नाम के ध्यान से, सब मन की तृखा विनास।**
**'मंगत' अन्तरगत माहीं, आलख बानी जोत परगास॥ 1528**

सार बिना नित मिथ्या धावे। मोहवस होके परम दुःख पावे॥
करम करे नहीं चित तृप्ताई। तृष्ना अगन नित जीव जलाई॥
भोगे भोग अधिक मन माने। नित तृखत ये जीव डोलाने॥
जन्मे मरे नित आसा धारी। एक पलक नहीं धीर विचारी॥
राजे राने गुनी गहीर। सब ही बाँधे भरम ज़ंजीर॥
अपनी भरमन देखे बिस्तार। नाना कौतक ये संसार॥
अपनी तृष्ना संकट दिखलाई। ग्रहन त्याग में लीन समाई॥
करम द्वन्द नहीं मिटे ख़वारी। राग द्वेष में होये अंगारी॥
धरती सागर बहु रचना देखे। करम फाँस नित पड़े विशेखे॥
अदभुत जाल त्रैगुन बिस्तारा। लखने ना आवे ये खेल आपारा॥
अनन्त सरूप देखन में आए। भिन्न भिन्न गुन करम दिखलाए॥
अपनी अपनी सब करें करीड़ा। सार बिना नित पावें पीड़ा॥
अनंक मनोरथ धारें चित माहीं। अनंक जतन करें सुख ताईं॥
ओड़क जग से सब चलें निरास। वाह वाह खेल ये जगत तमाश॥
भरमे भूला साकत अनजाना। अनमत धार नहीं पावे कल्याना॥
कोट जनम इच्छया में धारी। आपामत नहीं मिटे ख़वारी॥
सतगुर साजन संग मेल भयो। सब दुबधा का भेद लखीयो॥
आवन जावन दुःख पेखा आपार। तिससे छूटन का सुना विचार॥
मिथ्या भरम जाना जग खेल। प्रभ दाते का सूझा मेल॥

**जग जीवन भरम विचार के, मन में भयो उदास।**
**'मंगत' अबगत रूप की, चित पाई सार उपास॥ 1529**

सत बन्दना साहब की पाई। आपा त्याग भयो सरनाई॥
दीन भाओ से सेव विचारी। करम अभिमान गयो दुःखकारी॥

सब ही भावी करते की जानी । आज्ञा तिसकी दृढ़ कर मानी॥
आसा त्याग भयो निषकाम । अन्तरगत पायो सतनाम॥
सतगुर साजन के चरन डण्डौत । पल पल लीनी प्रभ की ओट॥
शरधा प्रेम पायो अनुराग । अन्तर ध्यान में विरती लाग॥
सत सील संतोख का भेख । अबगत पुरख का लखया लेख॥
जप तप संजम नाम आधार । निर्मल प्रीत पाई करतार॥
देह मिथ्या सत आतम जाता । नाम सिमर के भयो रंगराता॥
खल बुद्धि अन्धकार विनास । सत सरूप का भयो भरवास॥
सकल करम की ममता त्यागी । देव समता में विरती जागी॥
अनन प्रीत इक नाम में धारी । अन्तरमुख तत्त सार विचारी॥
अज्ञान विनास चानन घर पायो । आलख बानी का लेख लखायो॥
निराकार सरब आधारी । पायो ठाकर पार मुरारी॥
करम जाल सब दूषना नास । निहकरम जोत घट भई परगास॥
सो ही थाँ जगत का मूल । नित ही पसरे सूक्षम अस्थूल॥
भरम विनास पाई गत सार । एको शकत सरब भरतार॥
सिमर स्वामी मन लीन समाया । तत्त पहचान के हरी सब छाया॥
जाँ से उतपत ताँ मेल मिलाई । आलख बानी घट जोत दरसाई॥

**मानुष जनम को धार के, सत मारग ज्ञान विचार।**
**'मंगत' बन्धन सब मिटे, घर पायें शबद निरंकार॥ 1530**

तीसरा रस-तिथि विवेक

## अमावस्या

**अमावस्या** अमीरस सार तत्त शबद विचारो । सत असत का निर्नय नित धारो॥
काल रात्री ये जगत की रचना । मिथ्या भरम सब मन की कल्पना॥
मंगलकारी तत्त ज्ञान नित पेख । मिल साध संगत पाओ सत लेख॥
मन के मनोरथ सब पूरन पाएँ । शून भाओ का जो भेद लखाएँ॥
मनसा रोग नित देवे हाना । चेतन पुरष जप पद निर्वाना॥
सिद्ध तपीशर सुर नर नित पूजें । विरंच महेश नित सार को सूझें॥
अमीरस सार सतनाम का ध्याना । अमीरस सार सत शबद निधाना॥
अमीरस सार सतगुर संग मेला । अमीरस सार सतसंग की लीला॥

अमीरस सार सत कथा परसंगा । अमीरस सार प्रभ प्रेम चित रंगा॥
अमीरस सार सत सेव आचारा । निष्काम करम तत्त ज्ञान आधारा॥
अमीरस सार तत्त आतम पूजा । अमीरस सार जो एक प्रभ सूझा॥
अमीरस सार तत्त बोध निहकरमा । सुन्न समाध केवल प्रभ चरना॥
अमीरस सार जतन सत धारी । नित नित रमे मारग उपकारी॥
अमीरस सार जाए दुर्मत रोग । समता ज्ञान का मिले संजोग॥
अमीरस सार सो ही जन पाए । किलविख भरम हंग भेद मिटाए॥

**मन की त्याग के कल्पना, प्रभ नाम अमीरस चाख।**
**'मंगत' भेद अमावस, तत्त ज्ञान में सुरती राख॥ 1531**

## एकम

इक चित प्रभ का नाम ध्याओ । एक आधार मन माहीं समाओ॥
एक विश्वास एक संग प्रीती । एक प्रभू संग राखो नीती॥
एक बचन मनसा इक धारो । सरब मूल एक शबद विचारो॥
एक ही साधन मन अन्तर राखो । एक बिरह प्रभ चरन की चाखो॥
एक ही नीयम संजम इक धार । हिरदे माहीं सत एक विचार॥
एक ही शकत तत्त अनादी । सरब में पसरे एक बिसमादी॥
एक ही अच्छर जप पूरन योग । एक की पूजा जग भले संजोग॥
एक ध्यान सत नाद स्वामी । एक की आज्ञा परम सुख धामी॥
एक विचार करते का भाख । एक की पूजा संतन की साख॥
एक ध्याए दूजा भरम नासी । एक को सिमरे सब तृखा विनासी॥
एक ही मूल पिण्ड ब्रह्मण्ड का कर्ता । साखी पुरष सरब एक पसरता॥
एक का निस्चय देवे सब सिद्धी । ज्ञान विवेक सब एक की निद्धी॥
एक ही सिमरे विषन महेशा । एक ही ध्याए नारद शेषा॥
एक ही उस्तत वेद ग्रन्था । एक ही सिमरे अनेके पंथा॥
एको एक स्वयम परकाश । नाद सरूप पुरख अबनास॥

**एक भरोसा एक की आसा, नित एक का कथो विवेक।**
**'मंगत' एकम भेद ये, नित हिरदे लख सत एक॥ 1532**

## द्वितीया

द्वैत बुद्धी भरम को त्याग । अधिक कलेश से उठ के जाग॥
सकल जगत ये द्वैत का ताना । मिथ्या कल्पत में जीव भरमाना॥
ऊँच नीच का सकल पसारा । द्वैत भरम सब का दृष्टारा॥
द्वैत रोग ये मूल कलेशा । आवागवन नित देवे संदेशा॥
द्वैत .गुबार अती अन्धकार । नित नित भरमे पाए नहीं सार॥
द्वैत भरम मनमुखता ये ही । अती विकार संग धरे सनेही॥
द्वैत भरम जग खेल आपारी । मिथ्या में सत भाओ विचारी॥
द्वैत भरम से तृष्ना भरमाई । अद्भुत रचना का नहीं लेख लखाई॥
पाँच भूत गुन तीन का मेला । द्वैत भरम का सब ही खेला॥
जनम मरन अत रोग को धारी । द्वैत भरम से नहीं मिटे अन्धकारी॥
द्वैत भरम ही ब्रह्म जीव का भेदा । जीव अल्पज्ञ नित धारे खेदा॥
द्वैत भरम ये अनवरचित माया । बिना कारन सब खेल रचाया॥
द्वैत भरम ये मारग उध्याना । त्रास त्रास नित जीव पहचाना॥
द्वैत भरम से तब मिले रिहाई । सत सरूप घर शबद ध्याई॥
द्वैत भरम ये परम दु:ख मीत । मोह माया सब झूट परीत॥

**द्वैत भरम को त्यागिए, सत तत्त शबद ध्याइये।**
**'मंगत' दुतिया भेद ये, मिल सतगुर जतन कमाइये॥ 1533**

## तृतीया

तीन ताप में जीव नित तापे । दुर्मत रोग मूल संतापे॥
सत विसार भरम में धाई । करम की फाँस में नित गरसाई॥
मल विखेप आवरन का छेदा । करमफल इच्छया देवे अत खेदा॥
भिन्न भिन्न नाम रूप को धारी । गुन करम का नित भोग विचारी॥
अत जंजाल माया बिस्तारी । सूझे कछु नहीं पारावारी॥
निज सरूप आत्म विसराया । त्रैगुन फाँस में नित भरमाया॥
ये ही जनम मरन का भेदा । दुर्मत भरम करे चित छेदा॥
गुनी ज्ञानी बहु शास्तर वादी । तीन ताप नहीं मिटे उपाधी॥
मूल विसार भरम को धारी । ग्रहन त्याग नित पाये ख़वारी॥
बिन तत्त ज्ञान नहीं मिटे अंधकारा । तीन ताप परम दु:ख धारा॥

उठ उठ धाएँ करें बहु जतना । करम भोग नहीं मिटे कल्पना॥
हंग विकार दुर्मत चित धारी । अल्पज्ञ भाओ नित देवे ख़वारी॥
भोगे भोग नित बहुरंग जीया । भय भरम में नित नित गरसीया॥
एक पलक ना आवे चित धीरा । तीन ताप देवें अत पीड़ा॥
सत मारग तत्त शबद विचार । बाँझ पूत जाये भरम अंधकार॥

**पारब्रह्म के ध्यान से, तीन ताप मिट जाई।**
**'मंगत' मारग ज्ञान से, जीव परमपद पाई॥ 1534**

## चतुर्थी

चार पदारथ नौ निध पाई । मारग ज्ञान तत्त शबद लखाई॥
धरम अर्थ सब कामना पूरी । मोक्ष सरूप पाए शबद हज़ूरी॥
नित आनन्द शबद की धारा । निर्गुन रूप सरब बिस्तारा॥
घट अपने में सोझी पाई । पारगरामी तत्त शबद ध्याई॥
पूरन आसा चित शांत विचारी । मिल सतसंग सत कथा को धारी॥
आलख पुरख शबद निर्वानी । गुरमुख सेव पाए कल्यानी॥
चार पदारथ पूरन घर पाई । सत ठाकर की भयो सरनाई॥
मन मनोरथ सब लीन समाये । साची सेव प्रभ चरन की पाये॥
दु:ख में आवें चराचर जीया । भरम चक्कर में नित ही भरमीया॥
अनंक भोग की वासना धारी । जनम मरन नहीं मिटे ख़वारी॥
मानुष जनम की अत वडयाई । जो चित साची प्रभ भगत कमाई॥
तीन अवस्था करम का भोगी । चौथी बूझे सत शबद संजोगी॥
चारखानी का अचरज परबाहे । कोट आवत नित कोट ही जाये॥
बिन तत्त ज्ञान सब ही भरमाएँ । ऊँच नीच जूनी को पाएँ॥
जनम सुफल सो गुरमुख पाए । चार पदारथ प्रभ भगत कमाए॥

**परमेश्वर के ध्यान से, सकल पदारथ पाए।**
**'मंगत' मिले निषकामता, सत शबद में लीन समाए॥ 1535**

## पंचमी

पाँच दोख में नित जीव गरसाया । अनंक भोग में नित नित लिपटाया॥
पाँच भूत का ये देह आकारा । मोहवस होके जन करे बकारा॥

अधिक सम्पत नित संचत करी। भोगे भोग अत रोग को धरी॥
अपनी करनी दुःख देवे भारी। पाँच दोख नित करें अंगारी॥
अनक करम का भोग चित मानी। रहे प्यासा बिन सार पहचानी॥
मिथ्या भरम कामना उपजावे। काम अगन से क्रोध प्रगटावे॥
क्रोध अगन से लोभ उपजाई। लोभ अगन से मोह भरम लखाई॥
मोहवस होये करे हंकारा। सरूप विसार नित गवन विचारा॥
परकिरत विकार ये अत दुःखदाई। व्रास व्रास सब जगत लखाई॥
कोई ना शाँत सरूप दिखावे। चारखानी को ये अगन जलावे॥
गुरमुख मारग ज्ञान विचारी। पाँच दोख तब मिटी अंगारी॥
जलन मिटी चित ठाँड समाया। सरब सरूप परमेश्वर ध्याया॥
बिन प्रभ सिमरन सब भय ग्रासी। काल करम धारी अत फाँसी॥
मानुष सो ही जगत में देवा। जो मन परचाये नित प्रभ की सेवा॥
सत स्वामी घर परगट पाई। पाँच दोख तब लीन समाई॥

**देह ममता को धार के, जीव जले दिन रात।**
**'मंगत' सत तत्त आतम पूजिए, जो हरे सकल संताप॥ 1536**

## खष्टी

खट दर्शन का भेद लखाई। ममता रोग जीव का जाई॥
सब का सिद्धांत सार ये जान। आतम तत्त केवल निर्वान॥
मनमुख भरम जिस भाँत से जाई। भिन्न भिन्न भाओ ज्ञान समझाई॥
ओड़क मूल तत्त सार दिखाया। सरब स्वामी भज गोबिन्द राया॥
परकिरत विचार बहुरंग समझाई। मिथ्याकार सब भरम दिखलाई॥
सत तत्त शबद की कथा बखानी। शुद्ध सरूप अखण्ड सुखदानी॥
कपल मुनी तत्त सांख विचारी। परकिरत पुरख का निरनय धारी॥
मुनी पातंजल गत योग बखानी। अष्ट अंग योग का भेद लखानी॥
मुनी गौतम नित धरे न्याये। बुद्ध की भरमन सब जगत लखाये॥
मुनी कनाद नित करे बखानी। परमाणू रूप सब जग दरसानी॥
मुनी व्यास वेदान्त विचारी। एको ब्रह्म सरब बिस्तारी॥
मुनी जैमनी सत करम समझाई। निष्काम करम गत शान्त दिखलाई॥
सबका परमान केवल ये सार। मिथ्या जगत सत रूप निंरकार॥

मिथ्या भरवास ममता को त्याग। सत सरूप आतम में जाग॥
सरूप परगट सब दोख मिटाई। केवल रूप में लीन समाई॥

**अखंड शबद निर्वान को, सब सिद्ध मुनी नित ध्याएँ।**
**'मंगत' महमाँ आपार है, लख लख पार नहीं पाएँ॥ 1537**

## सप्तमी

सात भूमका तत्त सार ज्ञान। निर्मल चित से करो नित ध्यान॥
मानुष जनम की पाओ सतकार। अपने आप का करो सुधार॥
औगन कारी मन नित भरमाया। मोह माया में नित गरसाया॥
सत मारग बिन छूट नहीं पाए। जनम अनेक माया भरमाए॥
मारग सुगम नित हिरदे धार। कल्यान सरूप जप बारम्बार॥
देह वासना अत दीरघ रोग। शबद ध्याए पद शान्त संजोग॥
निर्मल चित से रहनी सत पाए। भूमका ज्ञान का भेद लखाए॥
प्रथमे सत असत का निर्नय धारी। सत विचार नित नित विचारी॥
दूजे सत संगत सतगुर संग प्रीती। साचे शबद की कथे नित नीती॥
तीजे दृढ़ विश्वास प्रभ चरनी पाई। अन्तर चित नित ध्यान लगाई॥
चौथे आठ पहर ये जतना धारी। निमख निमख प्रभ चरन चितारी॥
पँचम मन अन्तरमुख राखे। सत शबद की कीरत भाखे॥
खष्टम सुरती गगन चढ़ाई। सत शबद की भूमका पाई॥
सप्तम सुरती शबद भई एका। सरब सरूप एको प्रभ देखा॥
दुर्मत भेद छाया सब नासी। अलेख शबद घट जोत परगासी॥

**सत मारग में जो गए, सो परस गए सत धाम।**
**'मंगत' भूमका ज्ञान में, कोई गुरमुख ले बिसराम॥ 1538**

## अष्टमी

अष्टांग योग का साधन धारी। अखण्ड शबद घर मिले मुरारी॥
सत नियम सत संजम घट सूझा। इन्द्री विकार मन दोख सब बूझा॥
आतम तत्त नित भिन्न कर ध्याई। सदा अजन्मा अद्वैत समाई॥
सादगी सत्य सेवा चित धारी। नित सतसंग सत कथा विचारी॥
सिमरन योग तत्त नाम पछानी। अन्तर बाहर सत कीरत जानी॥

भरम की गंठी दुर्मत सब त्यागी। सम्मत बुद्ध तत्त जपे अनुरागी॥
सूक्षम सुरती तत्त प्रान समाई। एक शबद पद निर्मल ध्याई॥
उलट सुरत अन्तर घर आई। समता योग तत्त शबद लखाई॥
अगोचर शबद अखण्ड बिसरामी। अन्तर देह में रमे स्वामी॥
नित ही नाम ध्यान रस खाई। अखण्ड शबद ब्रह्म जोत लखाई॥
अन्तर ध्यान मन मगन समाना। तत्त योग सतनाम ध्याना॥
नाम आधार नाम ही धामा। परगट शबद भयो सतनामा॥
नाम रूप सब खेद निवारी। अकल्पत रूप सतनाम विचारी॥
साची जुगती माया भ्रम नासा। गुरमुख जीवन सत शबद परगासा॥
शबद ध्यान में नित रमनाई। परम परसन्ता जीव घर पाई॥

**शबद परापत कारने, तत्त योग साधन सत मूल।**
**'मंगत' नित ही ध्याइये, सब मिट जाएँ संशे सूल॥ 1539**

## नौमी

नौ द्वार का देह मन्दर साजा। पारगरामी घट रहे बराजा॥
नौ द्वारे नौ ही रखवारी। सरजनहार तेरी महमा आपारी॥
अनमत जीव नित ही भरमाई। नौ दर भोग शान्त नहीं पाई॥
नौ खण्ड भूमी का सकल बिस्तारा। पिण्ड ब्रह्मण्ड का जो लेख लखारा॥
नौ दर से रसना नित भोगी। मूरख जीव भयो नित रोगी॥
एक पलक नहीं उपरस होवे। कोट वरख जो भोग भगोवे॥
मृग तृषना ये नौ दर खेला। मूरख जीव अत धार झमेला॥
सत शान्त नहीं हिरदे पाई। करम संजोग बहु रंग दिखलाई॥
छिनभंगर नौ दर की रसना। भोगे भोग नित बढ़े तृष्ना॥
ये ही माया का जन्तर भारी। सत शबद बिन नित दुःख धारी॥
नौ दर त्याग दसवें चित लाई। शबद पदारथ अखण्ड सुख पाई॥
चार खानी नौ दर में भूले। दसवें भेद कोई गुरमुख खोले॥
अचिन्त सरूप शबद अबनाशी। दसवें घाट जोत परकाशी॥
भरमन त्याग जो अन्तरमुख आई। दसवें घाट की सोझी पाई॥
निर्वान सरूप ब्रह्म परगासा। भरमत जीव वहाँ करे निवासा॥

**नौ द्वारे का रस भोगी, जीव शांत नहीं पाए।**
**'मंगत' सो जन मुक्ता भये, जो दसवें सार कमाए॥ 1540**

## दसमी

दसवें द्वार शबद परगासा। पूरन पुरख नित करे बिलासा॥
सो ही ठाकर सरब का देवा। गुरमुख साजन पाई सत सेवा॥
अनमत जीव बाहर उठ धाई। अनेक तीरथ तट फेर फिराई॥
अनक शास्तर सिमरत विचारे। अनक देवत की सेव लखारे॥
भरम में भूला नित फिरे अज्ञानी। बहुरंग देवी देव पुजानी॥
अपनी भरमन का जाए ना रोग। जनम मरन का पाए नित संजोग॥
काया मन्दर का जिस भेद लखाया। सत परमेश्वर तिस अन्तर पाया॥
सो ही देव सो ही अवतारा। देह विकार से जो भया न्यारा॥
नित ही अन्तर सत शबद ध्याई। अपने मन की हरे चतराई॥
सकल माया का भेद पछानी। अन्तर ज्ञान में रमे जो ज्ञानी॥
साचा ठाकर घट अन्तर भरपूर। अनमत मूढ़ा नहीं जपे हज़ूर॥
कामना रोग नहीं मन का जाई। अन्तर ध्यान जो शबद नहीं ध्याई॥
करम की फाँसी से नहीं मिले छुटकारी। दसवें घाट जो नहीं सार लखारी॥
सतगुर सीख अन्तरमुख आओ। प्रभ अपने का दर्शन पाओ॥
खेम कुशल घट सार घनेरी। बजे रबाब मरदंग और भेरी॥

**साचा शबद ध्याइये, जो जग सरजनहार।**
**'मंगत' अन्तर रम रह्या, नित नित ध्यान विचार॥ 1541**

## एकादस

आद पुरख शबद निरंकारा। रख विश्वास पावें जयकारा॥
सरब स्वामी पुरख बिधाता। निर्मल ध्यान रहो रंगराता॥
मन का एका करो दिन रात। सत सरूप सत सेव कमात॥
बुद्ध निर्मल तत्त शबद निवासी। निर्मल जोत पावें अबनासी॥
अंतर सुरती सतनाम समाई। साचा धाम परस सुख पाई॥
पूर मनोरथ रिद्ध सिद्ध सार। पायो ठाकर जग सरजनहार॥
गंग जमन पराग विचारी। अन्तर सुन्न सत लेख लखारी॥

बिमल नाद तत्त जोत परगासी। सरब का ठाकर पायो अबनासी॥
सरब देव और तीरथ जस गावें। महामुनी का पार नहीं पावें॥
अन्तर जोत जिस गुरमुख जानी। तीन लोक में सो ही परवानी॥
ताँ के चरन की रजनी रुमायें। देवी देव नित कीरत गाएँ॥
प्रभ दाते की कथा अलेख। जो जन विचरे तिस भाग विशेख॥
तत्त दरसी सो शांत का सागर। शबद पुरख जिस घट भयो उजागर॥
सत सरूप की महमा तिस पाई। नित नित अन्तर ध्यान लगाई॥
अत परकाश शबद निर्वानी। पूरन भाग जो करे पछानी॥

**एक चित प्रीती प्रभ चरन की, परम आनन्द की खान।**
**'मंगत' दुर्लभ जगत में, जिन साची सेव पहचान॥ 1542**

## द्वादस

दुबधा त्याग सत नाम चित धार। गुरमुख मारग ज्ञान विचार॥
अपने आप का तत्त लेख पहचान। कौन रूप सत तत्त कल्यान॥
क्यों भरमाया दुर्मत घाटी। अपने आप को करें नित घाती॥
सत मारग सत रूप विचार। परसें शांत परम सुख सार॥
अन्तर चित नाम जप सार। पावें शबद पुरख निरधार॥
तत्त निरंजन घट माईं समाई। मारग भेद लखो सुखदाई॥
अन्तर सुरती नित ही गाढ़। मूल द्वार का लेख विचार॥
प्रान उपान का एका करी। अन्तर मारग की सोझी पड़ी॥
शबद सरूप आलख आपार। पाईये भेद मिल गुर दातार॥
सुरती मूल द्वार समाई। मन पवन इक ठौर लगाई॥
उलट पवन अन्तरगत धारी। द्वादस कँवल का भेद विचारी॥
शबद परकाशे अन्तर के तीर। वास करे कोई गुनी गहीर॥
उलटा शबद आकाश उठ धाए। नित ही हरजन सेव कमाये॥
गरजे शबद भीतर त्रैभवना। सत परापत मिटे सब गवना॥
ठाकर साचा घर परगट पायो। रोम रोम में तत्त सार ध्यायो॥

**दुबधा दुर्मत त्याग के, सत मारग नाम आराध।**
**'मंगत' शबद पहचानया, नित परसी ज्ञान समाध॥ 1543**

## तिरौदस

त्रैकाल समता तत्त बूझ। द्वन्द विकार की हरो सब सूझ॥
मारग मुकत नित ही चित धार। करम विलक्खन से पाओ उद्धार॥
प्रभ आज्ञा में सत निश्चय राख। दीन ग़रीबी की नित रसना चाख॥
साची रास सतनाम प्रभ चेत। सिमर सिमर के हरो विखेप॥
त्रैकाल मन नाम संभाल। सत शरधा भज दीनदयाल॥
औगन हरे निर्मल बुद्ध देवे। भाओ भगत से जो जन सेवे॥
समता योग में रहो परबीन। दुःख द्वन्द नहीं हिरदे चीन॥
करम फल इच्छया त्याग दुःख मूल। करनहार प्रभ पलक नहीं भूल॥
अन्तर चित करो नित अरदास। मोह माया की मिटे प्यास॥
हरख शोक का तजो मान गुमान। मित्तर शत्रु धारो इक परमान॥
दुःख सुख चिन्ता भय और भरम। प्रभ की आज्ञा में त्यागो नित करम॥
मनमुखता अन्धकार विनास। सहज भाये सत शबद परगास॥
बिन रसना के मरजीवा होई। अत परगास सतनाम परोई॥
साची दरगाह भयो मन्ज़ूर। जप जप साचा नाम हज़ूर॥
भेद भरम सब खेद निवारी। प्रभ दाते के चरन पधारी॥

**मारग दुर्मत त्याग के, सम्मत तत्त विचार।**
**'मंगत' ये तत्त सार है, भरम करे सब छार॥ 1544**

## चौदस

चौधाँ लोक की पावें सुद्ध। ज्ञान विज्ञान की परसें बुद्ध॥
अन्तर चित सत शबद लखाएँ। सकल ज्ञान का भेद अर्थाएँ॥
चौदस चन्दर कला परगासी। अखण्ड शबद आतम सुखरासी॥
नित ही पूजो नित धरो ध्यान। प्रभ की सेव देवे कल्यान॥
चौधाँ लोक के परले पार। साखी पुरष रमे निरंकार॥
गुरमुख साजन अन्तरगत पाई। सत ठाकर की लखी प्रभताई॥
पिण्ड छोड़ ब्रह्मण्ड समाया। अजर पुरष का दर्शन पाया॥
भँवर गुफ़ा में डेरा कीना। तीन ताप का दोख हरीना॥
बिमल नाद संग सुरत समाई। परले पार पद लेख लखाई॥
अनाम लोक पुरख निरवाच। निर्मल रचना जो नित राच॥

सत सरूप सत तिसकी कार। सकल जगत तिसका चमकार॥
आप ही भयो अनेक सरूप। एको एक अन्तर एक रूप॥
सतगुर दया सोझी सत पाई। आद पुरख घट में दरसाई॥
लोकालोक की पाई गत सार। सत साखी तूँ सरजनहार॥
अपरम आपार तेरा सब भेख। गिनती गिनत ना आवे लेख॥

**काया दीप में रम रह्या, बहुरंग खेल खिलाए।**
**'मंगत' सार पहचानया, तब एको एक दिखाए॥ 1545**

## पूरनमाशी

पूरन प्रभ की सेव विचार। पूरन चित से जप तत्त सार॥
पूरन विश्वास करते का पाओ। पूरन को सेव निर्भय समाओ॥
पूरन ज्ञान पूरन तत्त सार। पूरन प्रीत प्रभ नाम चितार॥
पूरन शकत सरब समाई। पूरन भेद खोज सुखदाई॥
पूरन योग तप जप ध्यान। पूरन प्रभ की नित सरन पछान॥
पूरन दात करे नित नीत। प्रभ के चरन रख पूरन प्रीत॥
पूरन पसरे प्रभ एको जग माईं। जल थल पूरन पूर समाईं॥
अन्तर चित करो अरदास। पूरन करमी प्रभ चरन निवास॥
जग आवन पाई पूरन कार। पूरन सिमर भयो निसतार॥
पारब्रह्म सरब गत पूरा। घट घट पसरे शबद हज़ूरा॥
मिल साध संगत पूरन गत पाई। सरब निधान प्रभ एक दिखाई॥
अन्तर चित सत कीरत ध्याऊँ। परगट पुरख को सीस निवाऊँ॥
सत ठाकर तूँ पूर समाया। अनमत मूढ़ा तुध चरनी आया॥
राख लें देवा अपने दरबार। पूरन पुरख चरन बलिहार॥
सरब रंग तू ही सब तेरी माया। पूरन पूर तूँ अखण्ड प्रभ राया॥

**पूरन जती पूरन तपी, पूरन ज्ञान नित चित विचार।**
**'मंगत' सो ही परम पुरख, जिस पाई पूरन तत्त सार॥ 1546**

## सिमरन दीपक

आतम सरूप सिमर मन माहीं। दुबधा दूर मंगल को पाईं॥
जग जीवन की ये निर्मल सार। आतम तत्त का जो मिले विचार॥

महा बिकराल दुर्मत जाए रोग। निर्मल शान्त का पाए संजोग॥
वासना करम का नासे ताप। निहकरम सरूप आतम नित जाप॥
जीवन तत्त चेतन परगास। नित आनन्द सरूप अबनास॥
सत शरधा से हिये चितार। परमानन्द तत्त जोत निरंकार॥
घट घट व्यापक सरब भरपूरे। नित रखयक सत रूप हज़ूरे॥
निर्मल प्रीत से सदा ध्याओ। डोलन त्याग निहचल गत पाओ॥
कर्ता हर्ता सरब सुख दाता। अबगत रूप भज पुरख बिधाता॥
नित निहथाँवाँ मन आवे जाए। नाना भोग करम लिपटाए॥
आसा मनसा अत दीरघ ताप। अनर्थ कल्पना बहु भाँत चित थाप॥
एक पलक ना आवे धीर। करम वासना देवे अत पीड़॥
मोह माया में जले दिन रात। बिन तत्त ज्ञान ना मिटे संताप॥
उज्जल नीति ये निर्मल करम। आतम पूज जग जीवन धरम॥
सत साधू मिल सूझ विवेक। दुबधा त्याग सिमर प्रभ एक॥
नाम जपत सब कलह विनास। अखण्ड सरूप तत्त पाएँ परगास॥
निर्भय धाम परस सत ठौर। एक नाम नित जाप हज़ूर॥
प्रभ की आज्ञा मन माहीं विचार। जो वरतावे सो सुख कर धार॥
साची भगती अन्तर आराध। पल पल निर्मल नाम को साध॥
तन मन धन सरब का दाता। पूरन पुरख सरब घट जाता॥
नाम का सिमरन देवे चित धीर। काल करम की हरे तक़सीर॥
सरब आनन्द सरब का धाम। मिल सतगुर जप निर्मल नाम॥
नाम ध्यान सब गुन की खान। अन्तर परस तत्त शबद निर्वान॥
असत भरम जाए दूजा भाओ। एको एक सरब लख पाओ॥
एक नाम पाए जीवन आधार। **'मंगत'** जप जप बारम्बार॥**1547**
नाम सिमरन अत निर्मल धन। साची भगती सब मेटे विगन॥
गुरमुख मन में पाई जैकार। सिमर सिमर साचा करतार॥
अत ही महमा मन रही समाए। बिन प्रभ रूप सब काल दिखाये॥
आवे जावे ये करम का जाल। साचा नाम जप दीनदयाल॥
देह अभिमान त्याग दुःख मूल। साचा ठाकर पलक ना भूल॥

कर्ता भाओ त्याग अन्धकार। प्रभ की आज्ञा पल पल विचार॥
सकले दोष मन के होएँ नास। अन्तरगत पाएँ आतम परगास॥
साचा ठौर जग जीवन रूप। परस नारायन अत शकत अनूप॥
मन का भरमन जो अत संताप। नाम जपत सुख सहज समात॥
ऐसा नाम ध्याओ नित नीत। साध बचन राखो परतीत॥
भव मारग में केवल ये सार। साची भगत प्रभ हिये चितार॥
बिन सतनाम मन अधिक भ्रम थापे। तत्त विसार नित करमगत जापे॥
करम फल इच्छया में निश्चय नितधारी। भोग सोग में अत पाए ख़वारी॥
आस आस में जनमे मरे। काल चक्कर में रूप बहु धरे॥
ये ही रचना है सकल संसार। पाए ना धीर ये जीव गँवार॥
राजे राने गुनी गुनवन्त। चारखानी सब जीव भरमन्त॥
आतम सूझ केवल तत्त सार। अखण्ड अद्वैत पुरख निरधार॥
जाँ को परस पावें परसन्ता। एको देखें रूप अनन्ता॥
जलन मिटे मन पावे शान्त। आतम ज्ञान सब हरे भरान्त॥
निर्भय जीवन अन्तरमुख ध्यान। पायो ठाकर आनन्द की खान॥
साचे नाम का गायो गीत। मन में राख पूरन परतीत॥
आतम तीरथ में करो अशनान। अन्तर परसें तत्त शांत निर्वान॥
नाम आधार हो नाम परायन। नाम की महमा करें चित गायन॥
तृषना नाश होवें निर्वास। घट घट देखें प्रभ परकास॥
जानन योग केवल इक नाम। **'मंगत'** सिमर के ले बिसराम॥**1548**
सत साजन सत कार कमाओ। प्रभ अपने को पल पल ध्यायो॥
भरमन त्याग घट अन्तर समाई। तत्त गत रूप की लखे प्रभताई॥
वासना करम से भयो विरक्ता। ज्ञान विज्ञान सुख सहज संजुगता॥
विरत रहत मन निर्मल भयो। साची शोभा प्रभ की लख लयो॥
अचरज कथा नहीं पारावार। अकथ ज्ञान अलेख निर्धार॥
जिस जन घट की सोझी पाई। सरब का ठाकर घट माहीं दरसाई॥
भगती प्रेम से पायो विश्वासा। दुर्मत त्याग लयो इक नाम भरवासा॥
मन करम देही से उपरस होई। साचे नाम की कथा परोई॥

उट्ठत बैठत प्रन एको धारी। पलक ना विसरे सत रूप मुरारी॥
अनन भगत से मन रीझावे। साचा शबद चित माहीं कमावे॥
दूजा विसरे इक सोझी पावे। चंचल त्याग मन नाम समावे॥
प्रेम ख़ुमारी में रहे मतवारा। जप जप जीवे इक नाम दयाला॥
और आस ना मन में रहाई। निर्मल नाम इक सार कमाई॥
हंग विकार जाए भ्रम मूल। एको देखे सूक्षम अस्थूल॥
सत सील चित भाओ निष्कामा। शबद अखण्ड में ले बिसरामा॥
काम क्रोध चित भरमत टारी। निमख निमख प्रभ नाम चितारी॥
सत सिमरन में मन रहे समाई। कथा बिसमाद घर माहीं लखाई॥
ज्ञान विज्ञान तत्त भयो परगासा। निर्मल भगती में लियो निवासा॥
अन्तर चानन आतम सूझा। भाओ भगत से पाई पूजा॥
सब कुछ तिससे जानन पाया। सरब में पसरयो पूरन प्रभ राया॥
देह मण्डल की गती विचारी। अचरज महमा घर लखी मुरारी॥
सब में व्यापक पर रहे अलेपा। पार पुरख का अपरम लेखा॥
सकल आकार माया रचनाई। पाँच भूत का खेल दिखलाई॥
साचा स्वामी घट रहे न्यारा। जिस सूझे तिस भाग आपारा॥
तत्त गत सूझ मन भयो लवलीना। **'मंगत'** ठाकर सरब घट चीना॥**1549**
देह मन्दर में भयो उजियारा। निहचल बुद्धी लखे ज्ञान आपारा॥
आतम जोत शबद निर्वानी। काया कोट में करी पछानी॥
अन्तर सुरती आकास समाई। शबद पुरख की शोभा पाई॥
महमा गाए के भई निहाल। अपना आप पाए रूप अकाल॥
देह इन्द्री मन से अलेपा। शबद सरूप पाए पुरख अलेखा॥
केवल सुरती सतगती विचारे। चेतन परगास सरब उजियारे॥
तिस उजियारे में रहे लवलीना। काल करम का ताप होए छीना॥
जाप अजपा नित नित जापे। करम त्याग निहकरमत थापे॥
वासना त्याग अकल्पत होई। आतम ध्यान में सुरत समोई॥
काल जाल सकल दिखलायो। अपनी भरमन का लेख लखायो॥
भरमन त्याग सुतन्तर भयो। केवल आतम सरब दरसयो॥

एको देव सरब तिस पूजा। परम पुरष सरब गत सूझा॥
अकथ कथा मन माहीं कथाए। प्रभ की महमा नहीं वरनी जाए॥
अन्तर में अन्तर सुख पेखे। दीनदयाल की महमाँ लेखे॥
देह त्याग के भयो निर्धार। तिस जन लागे नहीं करम विकार॥
नित सुतन्तर नित अतीता। अपना आप नित जपे पुनीता॥
दूजा भाओ सब कल्पना टारी। शब्दे शबद मिल शोभा विचारी॥
अन्तर इक बाहिर इक देखे। एको एक सरब करे लेखे॥
वासना नास मन भयो निर्वाना। निहकरम सरूप पायो शबद ध्याना॥
अचरज लीला आपार समाई। रंचक महमा नहीं वरनी जाई॥
नित आनन्द सरब परकाशा। सिमर स्वामी अजर अबनाशा॥
नित नित कीरत तिस की सूझे। अनन्त शकत को पल पल पूजे॥
महा ज्ञानी सो तत्तवेता। आतम ज्ञान पायो अकथ अलेखा॥
तिस की गत तेई जन जाने। अपना आप सरब रंग माने॥
द्वैत भरम सब गयो गुबारा। **'मंगत'** पायो तत्त रूप आपारा॥**1550**
शबद तत्त में सुरत समाई। तृष्ना जाल रह्यो भरम ना काई॥
सहज सुभाए निज रूप गुन गावे। आपार महमा मन माहीं लखावे॥
अमरत पी के तृपत चित भयो। काल करम का संशय गयो॥
अकर्म सरूप जोत निर्वानी। निज सरूप पायो परम निधानी॥
नित अतीत नित निरवासा। अभयगत रूप नित परगासा॥
अपना आप तत्त भेद लखायो। आवागवन का चक्कर मिटायो॥
देह अन्तर शबद तत्त बोले। सुरत अडोल होए रसना तोले॥
योग आरूढ़ तत्त समता बूझे। करम का खेद पलक नहीं सूझे॥
नित निर्द्वन्द नित निर्धारा। निज सरूप पायो अपरम आपारा॥
एक ध्यान सुरत नित राखे। महा परशाद शबद रस चाखे॥
इन्द्री विकार नहीं चित को छेदे। अबगत शबद में सुरता बेधे॥
दूजा भाओ नहीं व्यापी काला। सरब व्यापक निज रूप घट भाला॥
नित नित ताँ में सुरत समाई। एको एक सरब दरसाई॥
तृष्ना भरम नहीं अंतर व्यापे। शबद आनन्द में सुरता थापे॥

सुन्न महासुन्न के परले पार। तत्त निर्वान घट कियो विचार॥
केवल प्रीत मन पाई परतीता। आलख शबद जप पुरख पुनीता॥
देह कोट से भिन्न कर जाता। साखी रूप तत्त शबद पछाता॥
नित अजन्मा नित निराकारा। तत्त सरूप पायो अपरम अपारा॥
बिस्माद कथा में मन ग़लताना। अन्तर पायो सहज ध्याना॥
त्रैगुन मनसा सकल निवारी। आलख शबद परस निर्धारी॥
मन इन्द्री से नित न्यारा। गुना अतीत तत्त शबद विचारा॥
तत्त विचार के निर्भय समाई। अपनी पूजा आपे पाई॥
अखण्ड अद्वैत नित असंगा। सरब सरूप शबद निर्द्वन्दा॥
ताँ में सुरती लीन समाई। दूजा भाओ माया विसराई॥
अचिन्त सरूप आतम घर पूजा। **'मंगत'** सरब सरूप नारायन सूझा॥ **1551**
द्वन्द करम नहीं चित को छेदे। शबद ध्यान हरे सब खेदे॥
हान लाभ सब दूषना टारी। वीतराग पायो पुरख मुरारी॥
सरब का साखी नित परगासा। सरब आधार पुरख निरवासा॥
सरब परकिरती का जीवन जोई। सरब ईश तत्त शबद लखोई॥
आनन्दखानी सम परकाशा। अनादी सरूप निज आतम भासा॥
अन्तर महमा अचरज पाई। कथ कथ लीला अगोचर ध्याई॥
सिमर सिमर तत्त रूप अखण्डा। आतम जोत सरब परचण्डा॥
सदा अतीत सदा निरदोखा। नित आनन्द तत्त शबद अनूपा॥
नित ध्याओ नित गुन गायो। सरब निधान निज रूप लखायो॥
आपामती गई भ्रम छाया। घर में केवल सत रूप लखाया॥
सरब आद सनातन जोई। अखण्ड शबद तत्त रूप लखोई॥
परे परेरे सो ही देखा। घट घट अन्तर सोही पेखा॥
सरब ज्ञाता सरब आधारी। निज सरूप पायो शबद आपारी॥
पल पल सुरती तिसमें खेले। निर्भय धाम में आपा मेले॥
आकार विरत से भयो अलेपा। निराकार का पायो विवेका॥
निरविखाद तत्त शबद अबनाशी। अनन्त सरूप सरब परकाशी॥
एह बिध रहनी जिस जन पाई। आलख आपार घर माहीं ध्याई॥

सुन्न कपाली नाद किलकारे। महमा आपार नहीं जाई विचारे॥
पद निरवाच शून्यंगकारा। सरब कल्यान तत्त शबद अपारा॥
चेतन परगास निज आतम देवा। सतगुर सेव पाया तत्त भेवा॥
नित अकल्पत नित शान्त समाई। शबद को पूज परमगत पाई॥
तृष्ना काल चक्कर भयो नासा। सर्बाजीत पायो प्रभ अबनासा॥
तत्त अद्वैत सरबगत पूरा। सरब के अन्तर रहे भरपूरा॥
अन्तर में पाई परसन्ता। परमानन्द इक चित जपन्ता॥
अती पुनीत तत्त शबद निज देवा। **'मंगत'** भाग से पाई ये सेवा॥**1552**
एको ठाकर सरब समाई। सरब जगत तिस की प्रभताई॥
ऐसी महमा करो विचार। भव दुस्तर से उतरें पार॥
अकथ अगैह अलोक अकाला। अजय अभय सरब मूल दयाला॥
सरब आधार सरब परकास। सरब सरूप तत्त आतम निर्वास॥
अनगिनत महमा नहीं पारावार। साखी पुरष सिमर निरंकार॥
तत्त गत अपना रूप पहछान। भरम माया सब त्याग गुमान॥
अपनी कल्पत आप निवार। अपना रूप खोज निर्धार॥
द्वन्द जाए सब करम का खेदा। एको परस तत्त शबद अभेदा॥
निर्मल जुगती अन्तर धार। जीवन तत्त करो विचार॥
पाँच तत देही का कोट। तिसमें पेख अत निर्मल जोत॥
सो ही रूप सरूप आपारा। तिसको सिमर पावें जैकारा॥
साचा सिमरन साचा ये ज्ञान। साची पूजा साचा ये ध्यान॥
ज्ञान विज्ञान से पूजो सत देवा। मिल सतगुर पाओ निर्मल सेवा॥
सिद्ध मुनी तपीशर ध्याएँ। देव अवतार नबी जस गाएँ॥
अन्तर सो बाहर भी सो ही। अन्तर दृष्ट हो भेद लखोई॥
भरम अगन होवे चित नास। अन्तरमुख सतनाम उपास॥
खुले कपाट चानन घर देखें। एको स्वामी सरब घट लेखें॥
सरब ज्ञान की सार लखाएँ। साचा साहब घर परगट ध्याएँ॥
सत पुरषारथ ये जीवन सार। साचा नाम जप बारम्बार॥
नाम जपत अगम कला परगासी। देह मन्दर में मिले अबनासी॥

सेव सेव पायो सुख पूर। अबगत शोभा सतनाम हज़ूर॥
साध चरन से जाऊँ बलिहार। जाँ से पाऊँ सतनाम विचार॥
हिरदे अन्दर प्रीत कमाऊँ। सरब जियाँ की सेव लखाऊँ॥
सरब स्वामी घट में दरसाए। पूरन भाग सत धाम समाए॥
जाँ से आए ताँ कियो बिसरामा। **'मंगत'** पद निर्वान लखा निज धामा॥**1553**
निर्भय धाम की रसना खाई। भरम वासना से मन तृपताई॥
भव मारग सब पूरन भयो। आलख पुरख शबद लख लयो॥
अन्तर ध्यान में सुन्न समाई। परमानन्द केवल दरसाई॥
सकल मनोरथ की एको सार। सकल यतन का निरनय आपार॥
मन सिमरे सतनाम हज़ूर। भरम माया होवे दुःख दूर॥
निर्मल प्रीत से नाम कमाओ। साची सीख जगत में पाओ॥
नाम बिना मन नित डोलावे। जेती घाले एता दुःख पावे॥
ओड़क चले जग से निरासा। करम भोग नहीं मिटे प्यासा॥
सतपुरूषों की सीख चित पेख। निर्भय रूप नारायन लेख॥
सकले संकट पल होएँ नास। साची प्रीत जपें अबनास॥
देही सुख त्याग ग़ुबार। पर-उपकारी जीवन धार॥
देह के सुख छिन नाश हो जाएँ। राजे राने अन्त पछताएँ॥
साचा सुख प्रभ रूप पहचान। पुरख अबनाशी तत्त निर्वान॥
अन्तर बाहर जो नित रखवारी। सिमर दयाल तत्त किरपाधारी॥
झूटी आसा करम का भोग। आवागवन का दे संजोग॥
साचा नाम अन्तर मन राख। तृपत समावें सुन निर्मल साख॥
मारग ज्ञान में उठ के जाग। पूरन प्रभ का पाओ अनुराग॥
मन निर्मल इक नाम से होए। गुरमुख साजन जो सार परोए॥
अमरत रसना केवल इक नाम। हरजन सिमर के ले बिसराम॥
साखी जोत होई परगास। अन्तरमुख में लयो निवास॥
जगत संग्राम से विजै लखाई। मूल पहचान के मूल समाई॥
गाओ कीरत प्रभ पारगरामी। मिले संतोख जप अन्तरयामी॥
सरब सिद्धान्त सरब की सार। केवल नाम प्रभ हीये चितार॥

साची सेवा नित सतसंग प्रीती। पल पल परसो तत्त ज्ञान की नीती॥

**मारग ज्ञान विचार के, नित सतनाम में रहो परबीन।**
**'मंगत' सिमरन दीपक उजाला करे, सब भरमन होए चित छीन॥1554**

## सार उपदेश

मान त्यागी जग को जीते, माया त्यागी देसा।
मोह त्यागी पाए बैरागा, तत्त रूप करे परवेसा॥
काम त्यागी प्रभ रसना पीवे, चित सहज समाध पछानी।
लोभ त्यागी पाए छतर संतोखा, सतनाम की सूझ बखानी॥
क्रोध त्यागी प्रेम को परसे, सबसे साँझ बनाई।
पर का कष्ट हरे दिन रैना, सत मारग धरम लखाई॥
पाँच विकार महा दु:खदाई, जले सकल संसारा।
परमारथ परतीत बिन, नहीं जीव पावे निस्तारा॥
जेते दोख जो ही जन त्यागे, सो एता सुगड़ सुजाना।
मारग उन्नति में सो लागा, जग जीवन सार पहचाना॥
सतगुर सीख में निश्चय राखे, सब मन के भरम निवारे।
झूट देही की ममता त्यागे, नित सरजनहार चितारे॥
पाँच विषे का मूल विनासे, जब आतम तीरथ नहाई।
दुर्मत त्याग सुख सहज समाए, परमगती सो पाई॥
**नित ही जीवन करो सुतन्तर, सत तत्त रूप पछानो।**
**'मंगत' अन्तर होए परगासा, पद परस शांत निर्वानो॥1555**

## आनन्द सार

**अकाल सरूप आलख बानी, आनन्द सार निर्वाना।**
**'मंगत' अन्तर सूझ लखाई, जीव भयो कल्याना॥1556**
ऐसी चादर दात करो, मैं ओढ़ूं नगन सरीर।
जनम जनम का मिटे संदेसा, काल चक्कर तक़सीर॥
जत का ताना सत का पेटा, मत धीर जुलाह्या बनावे।
प्रेम की नाली से बुनत करीजे, मन पवन की खैंच लगावे॥

बुने अती अत गाढ़ा कपड़ा, वैराग की ठोक लगाई।
नाम ब्यौपारी कपड़ा लेवे, नित बिरह का माप कराई॥
कहन कथन विच आवे नाहीं, जो कपड़ा चमक दिखाई।
तीन लोक मैं ढूँडत फिरी, कोई विरला मोल चुकाई॥
हरजन साजन कपड़ा लेवे, त्रैवेनी घाट में धोवे।
तीन ताप की मैल को हरे, नित सत जतन परोवे॥
सतगुर दरज़ी सीवे चादर, सुरत निरत दोहु पाट मिलाई।
विवेक की सुई ध्यान का धागा, तप योग धारे कठनाई॥
**निर्वान शबद की आखण्ड चादर, कोई गुरमुख साजन ओढ़े।**
**'मंगत' तिसके चरन कँवल में, नित नित प्रीती जोड़े॥ 1557**
प्रभ दाता सब कुछ कर रह्या, हरजन ना होयें अधीर।
जीव उद्धारन कारने, गुरमुख सहवें पीड़॥
जो होनी सो होत है, सरब प्रेरक आप।
भाग उदे तिनके भये, जिन जीवत सेव कमात॥
जैसी जो करनी करी, नित चित में रसना पाये।
सत करनी जग सार है, कोई गुनी पुरष उठ धाये॥
बनी बनाई ना रही, गढ़ लंका सा मीत।
चली कहावत जात है, ये भव मारग की रीत॥
स्वारथ और परमारथ, दो मारग परगट भये।
इक भोगे निज सुख को, इक पर को सुख नित दे॥
पर सुख को जिस सेवया, सो चले जगत को जीत।
निज सुख मोहित जो भये, सो रोवत चले हैं मीत॥
**सत पुरषों की कीरती, नित मारग साच विचार।**
**'मंगत' करनी सो करो, जो जीव का करे उद्धार॥ 1558**
शोभा मानुष देह की, जो निर्मल मिले विवेक।
अन्तर दृढ़ विश्वास से, पाइये प्रभ की टेक॥
सत सरूप परमातमा, जो निश्चे आवे मीत।
आनन्दसार विवेक ये, निर्मल कीजे चीत॥

बिना विवेक ना पा सके, दीन दुनी की सार।
केवल सत विवेक से, होए भरम दु:ख छार॥
और चतराई छाड के, नित मारग खोज विवेक।
निश्चे आवे एक प्रभ, सब मन की मिटे विखेप॥
**इस दुस्तर संसार से, सो जन उतरे पार।**
**'मंगत' मिल सतसंग में, जो निर्मल सुने विचार॥ 1559**
सत सेवा हिरदे धरो, बृच्छों की मत ले।
धार भाओ निष्काम को, फल छाया और को दे॥
नदी नीर ज्यों उजला करे, सब दुर्गन्ध ले बहाए।
ऐसे भाओ निष्काम से, तूँ पर की सेव कमाए॥
मन तन को निर्मल करे, जो पर की सेवा धारे।
भरम स्वारथ अगन से, सो जन उतरे पारे॥
सेवा को धारण करे, मन में आवे धीर।
निर्मल धारा प्रेम की, चित परसे अती गम्भीर॥
**तन मन धन अर्पन करे, पर-के हेत जो मीत।**
**'मंगत' मारग धरम में, सो पावे दृढ़ परतीत॥ 1560**
पधारो नित सतसंग में, निर्मल सुनो विचार।
दुर्गम माया चक्कर से, सहज में उतरें पार॥
यज्ञ दान तपस्या से, अधिक शरोमनी जान।
एक पलक सतसंग की, महमा अतुल पहचान॥
सत संगत सरजीवित करे, जीव पाये सत ठौर।
मारग निर्मल धरम ये, नित ही प्रीत चित जोड़॥
सत-संगत से सुख मिले, निर्भय परसे धाम।
साजन अधिक प्रीत से, नित पाओ बिसराम॥
**भरम रूप संसार में, सत-संगत नौका जान।**
**'मंगत' नित पधारिये, सुनिये निर्मल ज्ञान॥ 1561**
जग जीवन की खोज करो, ओड़क जंगल बास।
महल मंडप औसारे नित, धार कूड़ भरवास॥

निज सरूप की कथा विचारो, जो देह परकासे नीत।
निर्मल तत्त ज्ञान ये, हिरदा करे पुनीत॥
आतम तत्त पहचानिये, जो सर्वज्ञ सरूप समाई।
भाओ भगत से तिसकी पूजा, सब दुर्मत रोग मिटाई॥
आतम ज्ञान आतम तत्त पूजा, सब मन के रोग निवारी।
गुरमुख अन्तर सोझी पावे, तत्त शबद मिले निर्धारी॥

**बुद्धी मन देह इन्द्री परे, पछाने साखी आतम देवा।**
**'मंगत' ज्ञान यथारथ ये ही, जो परसें निर्मल सेवा॥ 1562**

निर्मल ध्यान शबद का पाओ, उनमुन घाट समाई।
अंतर सुरती दृढ़ कर राखो, देख साहब प्रभताई॥
इच्छया करम की भरमन त्यागो, सत शबद का लेख लखाओ।
साचा ठाकर अंतर देखो, दूजा भाओ विसराओ॥
सरब सरूप देखो नारायन, घट घट पूर समाई।
देह के अन्तर परगट पाओ, अबगत पुरख आगाही॥
ध्यान सो ही जो लीन समावे, प्रभ के चरनी माहीं।
जीव को बौहड़ करम ना व्यापे, जो मूल भरम परछाईं॥

**दृढ़ निश्चे प्रभ नाम ध्याओ, ऐसा ध्यान कमाओ।**
**'मंगत' एको एक दिखावे, सब दुर्मत होवे अभाओ॥ 1563**

ऐसा प्रेम पाओ प्रभ चरनी, नहीं एक निमख विसराई।
मीन नीर ज्यों अधिक परीती, नहीं पलक वंजोग धराई॥
अन्तर बाहर सो ही सूझे, सब अपना आप भुलाए।
निर्मल प्रेम पदारथ खा के, नहीं जीवन आस रहाये॥
प्रेम की रसना जिस जन चाखी, तिस जीवत सीस उतारा।
जिस जन जीवन आसा धारी, तिस प्रेम नहीं जानी सारा॥
मान मद और ईरखा, तिन से प्रेम है दूर।
खिमा ग़रीबी धीरता से, उपजे प्रेम सरूर॥

**जब लग देह की आस है, प्रेम नहीं परसें मीत।**
**'मंगत' आस निरासा होइये, तब गाइये प्रेम का गीत॥ 1564**

नाम प्रभू का हिरदे ध्याओ, सब पूर मनोरथ पायें।
साजन दुर्लभ ये कथा पुरातन, गुनी मुनी बतलायें॥
पूरन भाग पाये तिस साजन, जिस प्रभ सेती निहों लाया।
सहज सो गुरमुख निस्तर भया, त्याग ये विखमी माया॥
अनजाना हो के बिचरिये, प्रभ चरनी प्रीत लखाइये।
जग से होवे बन्ध ख़ुलासी, प्रभ परगट अन्तर ध्याइये॥
जीवन की तूँ आस धरी, नहीं मरना मूल विचारया।
माया भरम भुलेखे अन्दर, विच जुए जनम को हारया॥
**घनी सयानफ़ नित करी, पग फूँक फूँक धरन्त।**
**'मंगत' ओड़क सब पछताये, बिन सिमरे भगवन्त॥1565**
जग बेला फूली फुलवाड़ी, रंग रंग भौरे आये।
फिरी रुत ख़ज़ाँ की मीता, कोई नैन देखत नहीं पाये॥
ऐसा जीवन जगत का जानो, ज्यों नदी नाओ संजोग।
जिस बिध करनी जो करी, तिसका दु:ख सुख भोग॥
उठ जाग मुसाफर साँझ भई, नित अपने पन्ध को काट।
दिन वतीत तो हो रह्या, फिर सिर आई रात॥
सत साजन संग मेल करो, नित साची रास कमाओ।
दुर्लभ फेरा जग में पाया, नित लाभ जीवन का पाओ॥
**जिस साजन ने बनत बनाई, नित तिस हुकम पछानी।**
**'मंगत' सो ही सुघड़ सयाना, सार जीवन तिस जानी॥ 1566**
कथनी ज्ञान में भरमें बकवादी, नहीं मन धीर लखाई।
आप डूबे विच माया फेरी, औराँ राह दिखलाई॥
वेद पढ़े का ये फल मीता, मन दुर्मत भरम त्यागे।
अन्तर बाहर सम कर पूजे, चित निहचल भगती लागे॥
तीरथ नहाये का ये फल मीता, प्रभ चरन मिले विश्वासा।
पर-उपकार का साधन करके, कीजे बन्ध ख़ुलासा॥
सतसंग पधारे का ये फल जानो, जो चित ग़रीबी पाए।
सरब जीयाँ में एको दरसे, प्रेम से सेव कमाये॥

**सतगुर मिले का फल ये निर्मल, जो आतम तत्त पहचानी।**
**'मंगत' माया भरमन नासे, नित नाम की कथा बखानी॥ 1567**

मन अपने को धोवे जोई, सो सतगुर पूरा जानी।
करम वासना मलन त्यागी, घट अन्तर शबद पहचानी॥
त्याग वैराग का भोजन खाई, नित पर की सेव कमाये।
दीन ग़रीबी अन्तर रहवे, परम शांत चित पाये॥
कोट मद्धे कोई जन अनुरागी, जिस मन की तपन बुझाई।
अखण्ड ध्यान भया रँगराता, नित प्रेम की रसना खाई॥
जीवत में मिरतक को पाया, मिरतक से फिर जीया।
पूरन करमी साजन सोई, नित नाम सिमर तृपतीया॥

**साजन ऐसी करनी कर चलो, नित अपना आप निस्तारो।**
**'मंगत' जीवत भरमन नासे, पायें कोट जीव आधारो॥ 1568**

मन ये अत बिकराल है, सहज नहीं पकड़े धीर।
अनंक जतन कर राखिये, तो भी अन्ध दिलगीर॥
भव सागर की धार में, सब ही भरमत जाएँ।
कोई गुरमुख उभरें विरले, जो नाम प्रभू लिव लाएँ॥
मिथ्या नाम और रूप को, नित कलपे अन्धकारी।
एक पलक ना धीरज पावे, नित संकट को धारी॥
राजे राने गुनी जग केते, नित ही भरम भुलाये।
अत सम्पत परापत कीनी, तो भी चित तिरखाये॥

**दुर्मत रोग लागा वडभारी, सब जन त्रास लखायें।**
**'मंगत' नाम रतन जिन चाखा, सो जन शांत समायें॥ 1569**

मूरख जन नहीं निज मन समझावे, और जनाँ मत दे।
आप फिरे विच गवन चौरासी, प्रेम सार नहीं ले॥
प्रेम बिना नित भूक समाये, तृपत न पावे काई।
मोह माया की गहरी फाँसी, नित ही फेर फिराई॥
जीवत में सत सार कमाओ, छाड दोरंगी भेखा।
पलक पलक जो करम कमावें, नित साजन देवें लेखा॥

चार दिनाँ दा जीवन पाये, नित साचा ठौर विचारी।
इक दिन फूटे काची देही, चले छाड जगत पासारी॥
**तेरा कोई संगी ना साथी, नित साजन जायें अकेला।**
**'मंगत' उठ प्रभ नाम सिमर लो, ये झूट जगत का मेला॥ 1570**
कोट जीव नित आवें जावें, बिना भगत ना पावें ठौर।
तृष्ना अगन में नित ही जलें, नहीं सिमरें नाम हज़ूर॥
अपना भरम नित आप बन्धाई, अनमत जीव दुख पावे।
सत करतार ना हिरदे सिमरे, नित आवे नित जावे॥
साध-जनाँ की सीख नहीं लीनी, ना कुछ किया विचारा।
झूट वक्खर को संचत करके, उठ चलया वन्जारा॥
अपनी करनी भई दु:खदाई, अब रोवत क्या होई।
जो कुछ किया सो निस्चे भोगें, पावें कभूँ ना ढोई॥
**ऐसे सब ने उठके चलना, साजन नाँगे पाये।**
**'मंगत' नाम सिमर प्रभ दाता, जो तीन काल सहाये॥1571**
जग सुहाना देख के, बड़े गुनी जन भूले।
झूट देही की आसा धारी, नित मन मूरख फूले॥
छिन छिन तंदी स्वास की टूटे, नहीं जन भेद विचारे।
मिथ्या भोग की राख परीती, अपनी करे उजाड़े॥
अन्दर तो शत्रु घने, बाहर करे रखवारी।
कोट खज़ाने लश्कर धारे, नहीं अनमत सूझ विचारी॥
मीत बनाके घात लगावें, नहीं चले कोई चतराई।
ओड़क जब देखी उजाड़ी, तब बहुता पछताई॥
**कोई जन गुनियाँ बाजी खेले, सब शत्रु करे रन घाता।**
**'मंगत' निज सरूप समावे, जुग जुग रहे रँगराता॥1572**
पाँच ग़नीम बसें घट भीतर, और पच्चीस बटमारी।
छिन छिन त्रास पावे ये जीया, नहीं निर्भय धाम पधारी॥
अनंक जतन कर थाके दाने, नहीं विजे कोई जन पाई।
कोट जनम भरमें भुलेखे, नित संकट पाएँ अधिकाई॥

कोई जन सूरा रन को मारे, धार अधिक चतराई।
बिरह का बान प्रेम निशाना, नित राखे अत टकराई॥
छिन छिन घायल होवे हरजन, शबद चोट नित खाई।
नौ दर मूँद चढ़े गढ़ ऊपर, सत ठाकर मेल मिलाई॥
**विजे भई घर मंगल होया, सभी दूत भये नासा।**
**'मंगत' हरजन रन को जीता, घट पायो परम परगासा॥1573**
निर्मल नाम सिमर नित साजन, और घालन सब छाड।
एक निहों राखें प्रभ सेती, घर परसें शबद आनाद॥
नाम में सुरती पल पल राखो, सब मन के दोख निवारो।
प्रभ दाते की आज्ञा माहीं, तन मन जीवन धारो॥
ममता मूल माया का नासे, तत्त समता परगासी।
अन्तर में अन्तर रस पायो, पार पुरख अबनासी॥
गुरमुख साजन की धूड़ लखाओ, नित मन को ठौर लगाई।
सत सरूप सिमर अबनासी, ये सम्पत अत सुखदाई॥
**लोक परलोक में अत सुख पावे, जो नाम की रसना खाये।**
**'मंगत' निश्चल धार भरोसा, प्रभ चरनी लीन समाये॥ 1574**
अमरत नाम जिस जन ने चाखा, सो परम धाम समाई।
आवागवन जाँ काल नहीं करमा, नहीं दूजा भेद लखाई॥
नित सरूप भया परगासा, देह अन्तर चानन होई।
अन्तर अमरत वरखा होवे, पीवे साजन कोई॥
सुन्न मण्डल में शबद नित बोले, बिन मुख ज्ञान कथाये।
हरजन साजन कथा विचारी, नित निर्भय धाम समाये॥
अकाल सरूप सो ही सत ठाकर, जुग जुग पूर समाई।
भाओ भगत से परगट होवे, चित निर्मल ज्ञान लखाई॥
**सब में रमया पर रहे अलेपा, नहीं गत मित वरनी जाई।**
**'मंगत' जिसने रसना चाखी, सो पूरन भाग लखाई॥1575**
अचरज कथा घर भीतर जानी, अन्त नहीं पारावारा।
चार वेद नहीं गम बतलावें, ऐसा पुरख न्यारा॥

जिस रंग देखा तिस में पूरन, कुछ कहन कथन ना जाई।
अपनी शोभा आपे जाने, नहीं पाइये भेद आगाही॥
कित सृष्टी का आद होवे, कित परले खेल खिलाये।
कित ठाकर कित सेवक होवे, बहुरंग सेव कमाए॥
कित करे कित रहे न्यारा, कित पसरे बहु पासारा।
अनन्त सरूप में आपे विचरे, सत शबद निरंकारा॥
**गुरमुख विरले सोझी होई, निज आतम रूप पछाता।**
**'मंगत' पूरन पूर समाया, इक अखण्ड सुख दाता॥1576**
अन्तरगत नित सार विचारो, ये क्या जगत की लीला।
आदी अन्त नज़र ना आवे, ये फूली अचरज बेला॥
अंस से अंस जीव बढ़ें नित, अत मोह माया को धारी।
करो विचार गुनीजन दाने, किस ठौर को जीव पधारी॥
आवन जावन लेख विचारो, ये कह बिध खेल रचाई।
गिन गिन थके जगत की लीला, नहीं पारावार लख पाई॥
गुरमुख ज्ञानी भेद पछाना, तत्त मूल शबद इक जाता।
सरब में पसरे सो पारगरामी, सम सरूप बिधाता॥
**तिसकी लीला ये जग खेला, सब घट में सो बिसरामी।**
**'मंगत' अन्तर ध्यान कमाओ, नित सिमरो अन्तरयामी॥1577**
एक प्रभू का राख भरोसा, जो पावें बन्ध ख़ुलासी।
निज सरूप की कीरत सूझें, तब भरमन तजें चौरासी॥
मूल पछान के मूल समावें, सब छाया भरम विनासे।
एको एक पावें प्रभ देवा, जो जल थल पूर बिलासे॥
प्रभ की शकत में ही नित विचरें, पवन पावक आकासा।
धरती नीर सरब को थापे, प्रभ पार पुरख अबनासा॥
मन अपने में सेव कमाओ, सत साखी करके पूजो।
सरजनहार सो ही दातारी, अत महमा तिसकी सूझो॥
**करम संदेसा भरमन जाए, सत ठौर पावें बिसरामा।**
**'मंगत' करनी सुफल ये जग में, जो जीव पाए सत धामा॥1578**

ज्ञान ध्यान किया बहु विचारी, इक नाम की राखो प्रीती।
दिवस रैन सत सेव कमाओ, सुनो सार ये नीती॥
अन्तर स्वामी सबके रमया, परम आनन्द भण्डारी।
अन्तरमुख जब सोझी आवे, तब पाइये शान्त अपारी॥
मन गँवार बाहर उठ धावे, नहीं अन्तर में आई।
कह बिध मिटे ये भरम संदेसा, जो कथनी करी अधिकाई॥
सत निस्चय प्रभ भगत पछानो, सत कर ठाकर ध्याओ।
कर्ता हर्ता सरब आधारी, अत महमा चित लखाओ॥
**नित सरजीवे काची देही, जो पारगरामी देवा।**
**'मंगत' अन्तरगत में सिमरो, पाओ अनन भाओ चित सेवा॥1579**
साची प्रीत प्रभू की पाई, तब मनुआँ अन्तर आया।
तज के मान गुमान अपने को, प्रभ चरनी सीस निवाया॥
अन्तर ध्याया चित राख परीती, सत साहब दातारी।
दृढ़ कर आज्ञा पल पल मानी, ज्यों साहब वरतारी॥
अपनी ममता सकल गँवाई, प्रभ नाम पाए भरवासा।
निमख निमख में नाम ध्याए, चित चरन कँवल की आसा॥
एक नाम आधार पछाना, सब मन के संशे नासे।
परम प्रीत पाई सत सेवा, नित अन्तर करे अरदासे॥
**प्रभ के नाम में भया इकागर, छाड भरम की छाया।**
**'मंगत' अन्तर परगट पायो, आलख शबद निरमाया॥1580**
सत शबद अन्तर जब जाना, तब निर्भय धाम समाये।
जनम मरन का बन्धन नासे, सत ठाकर घर दरसाये॥
काल करम का मिटा संदेशा, चित अखण्ड रसना पाई।
नाम प्रभू में जीवन पाया, नित सतगुर सीख लखाई॥
दात करी गुर दाते अत ही, जीव को निर्भय कीना।
जनम जनम का काट बखेड़ा, सत निरनय शबद लखीना॥
परम पुरख घर परगट पाया, पूरन सीख लखाई।
तन मन धन तीनों को वारा, नित चरनी सेव कमाई॥

**बन्धन नास पाया सुख थाओं, नहीं बौहड़ जीव भरमावे।**
**'मंगत' गुर के बचन में जीवे, प्रभ परगट घर दरसावे॥1581**
पूरन भाग पाया भरवासा, इक साहब का मीता।
दुबधा नास पाई परसनता, सब जीव के मिटे विखेपा॥
सरब जगत का स्वामी जो ही, सो घर में परगट पाया।
सिमर सिमर के महमा प्रभ की, नित निर्भय धाम समाया॥
भरमत जीव ने पाया ठिकाना, सत शबद निर्वानी।
अन्तरगत में परगट पाई, परम आनन्द की खानी॥
अनहद नाद देव इक पूजा, तीन भवन के थाओं।
सुरत आरूढ़ भई मतवाली, सिमर सिमर सत नाओं॥
**पूरन वस्त परापत होई, नित आनन्द अबनासी।**
**'मंगत' निर्भय धाम लखाया, जाँ जरा मरन नहीं भासी॥1582**
प्रभ अबनासी अन्तर जाता, अनन भगत रस खाई।
पूरन पुरख की अचरज लीला, घट घट रही समाई॥
आपे कर्ता आपे भुगता, आपे सरब न्यारा।
प्रभ दाते की अपरम महमा, नहीं चित आवे विचारा॥
जिस भाओ से नाम कमाइये, सो दीनदयाल हरखाई।
अपने जन की रखया करे, नित देवे अत वडयाई॥
एक भरोसा दृढ़ कर पाया, दूजी आस त्यागी।
अन्तर बाहर सूझी प्रभ कीरत, चित प्रेम की रसना लागी॥
**किरपाल भये सो दीनदयालू, इक चरनी धीर लखाया।**
**'मंगत' सरब में पूरन स्वामी, नित सिमर सिमर सुख पाया॥1583**
अपरम सुख हरजन ने पाया, मन खेद सभी भये दूरे।
नित आनन्द में मगन समाया, घर पायो शबद हज़ूरे॥
प्रेम की साखी हरजन जानी, नित जीवत सीस उतारी।
अखण्ड प्रीत पाई प्रभ चरनी, सब दुर्मत भेद निवारी॥
प्रेम में जीना प्रेम में मरना, मन रसना नाम की खाई।
एको देव की पूजा सूझी, जो सरब ठौर रमनाई॥

नित ही चरन परीती माँगूँ, और आस ना कोई।
अमरत नाम तेरा प्रभ निर्मल, नित नित हिये परोई॥
**साची भीख माँगूँ प्रभ दाते, नित मन तन सेवा धारी।**
**'मंगत' नाम रत्ते जो गुरमुख, तिन चरन जाऊँ बलिहारी॥1584**
प्रेम बिना नहीं होवे सुतन्तर, नहीं नाम की रसना पाई।
पढ़ पढ़ थाके ग्रन्थ अनेका, नहीं मन सार लखाई॥
बिना वैराग नहीं मिले अनुरागा, ना सत सूझ पछानी।
कथनी मद में डूबे केते, नहीं सार शांत चित जानी॥
मनुआँ भरमें पल पल माहीं, अनंक मनोरथ धारी।
अनंक करम के जतन को राखे, दुःख सुख नित विचारी॥
अती भयंकर मन का दाओ, कोई गुरमुख भेद पछानी।
नित ही मन को राखे अंतर, सतनाम जपे सुख खानी॥
**नाम जपत से भरमन नासे, सूझे पद निर्वाना।**
**'मंगत' जीवन सार जग माहीं, इक नाम ध्यान भगवाना॥1585**
झूट मान गुमान त्यागो, क्यों धारी अत चतराई।
एक पलक में नास हो जावे, ज्यों नीर में कुम्ब समाई॥
आस भरोसा धीर ना देवे, बिन नाओं पछताई।
शास्तर सिमरत कथा बखानें, प्रभ सिमरन परम सुखदाई॥
रे मन छाड ये भरम बखेड़ा, नाम जपो सुखवन्ता।
आज काल का कया भरवासा, काल करे नित हंता॥
नित परकाशक नित ही रखयक, सो परम दयालू देवा।
मिल साध संगत पाओ निर्मल रसना, त्यागो भरम का भेवा॥
सत अरदास बखानो अन्तर, प्रभ किरपा करें अत भारी।
मन का डोलन धावन नासे, नित परसे प्रेम ख़ुमारी॥
**प्रेम प्रभू देवे परसन्ता, तृष्ना रोग विनासे।**
**'मंगत' छिन छिन नाम कमाओ, त्याग कूड़ भरवासे॥1586**
अनन प्रीत इक नाम ध्याइये, त्याग देही अभिमाना।
करम द्वन्द जाये सब भरमन, घर परसें शबद निर्वाना॥

नित निराकार नित अजन्मा, नित परापत देवा।
अन्तरमुख हो सूझ पछानी, प्रेम से कीनी सेवा॥
सुख दुःख दोनों की कल्पना नासी, मन भयो निर्धारा।
सत अनुराग से नाम ध्याया, घट परसयो प्रेम भण्डारा॥
सूक्षम सुरती उनमुन वासी, आकाश वानी रस पीवे।
देह संग त्याग के निहसंग होवे, तब परम शान्त पद लीवे॥
**चेतन जोत घट में परकाशे, सब दूर होवे अंधकारा।**
**'मंगत' मारग प्रेम का परसा, मर जीवत भेद लखारा॥1587**
साची शरधा पाए प्रभ सेती, जीवन भयो अनुरागी।
सुख दुःख तिसका हुकम पछाना, सत मारग सुरता लागी॥
सरब शकत का सो परकाशक, सरब जीयाँ आधारा।
पल पल बन्दूँ पार स्वामी, त्याग देही अहंकारा॥
दीन ग़रीबी रसना खाई, प्रभ नाम पायो सुख पूर।
जनम मरन का बन्धन टूटा, घर परगट भये हज़ूर॥
**साची भगती मन निर्मल कीना, मिल साध संगत गत पाई।**
**'मंगत' अन्देसा चित का नास्यो, प्रभ भेंटे घर में आई॥1588**
इच्छया ताप गया सब मन का, निरइच्छित जाना धामा।
पल पल अन्तर सोध लखाई, सत शबद पायो सतनामा॥
अबनाशी शबद घट अन्तर सूझे, सुरत निरत कीना एका।
करम त्याग निहकरम गत पाई, पद लखयो परम विवेका॥
निर्भय शान्ती मन को होई, अन्तर मगन समाया।
नाम रसायन रसना खा के, सब जीवन ताप गँवाया॥
**साध जनाँ के चरन बलिहारे, जिन जीवन सार दिखलायो।**
**'मंगत' अन्तर मारग लागा, अकाल पुरख घर पायो॥1589**
अती बखेड़ा जनम का मीता, मिल साध संगत पाई सारा।
आवन जावन सकल तमाशा, ये माया भरम ग़ुबारा॥
करम भोग ना देवे परसन्ता, मृग तृष्ना दुःख भारी।
प्रभ चरन कँवल की शोभा जानी, तब उतरे भवनिध पारी॥

सुकृत सीख मन तन समाई, सत करतार ध्याया।
पूरन करम अनमत का जागा, प्रभ भगती मारग पाया॥
एक पलक ना विसरे स्वामी, छिन छिन निहों कमाई।
डोलन त्याग मन नेहचल होवे, घर साचा साहब दरसाई॥
**दर्शन पाये मन भया आनन्दित, इच्छया रोग सब नासा।**
**'मंगत' अन्तर सत तत्त सूझा, आद पुरख अबनासा॥1590**
मान मोह जब देह का त्यागा, तब प्रेम की रसना पाई।
जीवन रूप पर निश्चय आया, नित निर्मल भगत कमाई॥
छिन छिन देही का संग त्यागे, नाम में दृढ़ता धारी।
उट्ठत बैठत प्रन राखे पूरा, जन अपना काज सँवारी॥
सत परतीत भई प्रभ नाओं, जग जीवन फीका लागा।
बैठ इकान्त प्रभ नाम चितारे, सो साजन वडभागा॥
ज्यों ज्यों मन उपरसता भाखे, नाम अमीरस खाई।
त्यों त्यों अन्तर वास करीजे, सब दुबधा भरम मिटाई॥
**अन्तरमुख हो सतनाम चितारे, नित आज्ञा साहब मनावे।**
**'मंगत' तृष्ना अगनी नासे, मन अबगत रूप समावे॥1591**
अत दुस्तर ये जीवन जग माहीं, उठ साजन करो विचारा।
झूट देही का क्या भरवासा, नित बाजत काल नकारा॥
सरजनहार चेत पद निर्मल, जिस सब बनत बनाई।
सकल भरमन मन की त्यागो, सत शरधा से सेव कमाई॥
अपनी दुबधा आप निवारो, गुर सिखया तत्त बूझो।
निर्भय रूप केवल नारायन, पल पल अन्तर पूजो॥
जीवन सार परम फल मीता, जो सत कीरत चित आवे।
जनम जनम के संशे नासें, जीवत तृपत को पावे॥
**अखण्ड जाप जपो नारायन, सत कारज जीवन पायो।**
**'मंगत' अन्तर होवे परकाशा, नित पूरन रूप समायो॥1592**
अन्तर परगट साहब जाना, सकल मनोरथ पूरे।
परम साध तपी जन सोई, जिस पाया रूप हज़ूरे॥

निर्मल सुरती अन्तर वासे, सुन्न मण्डल में ध्यान लगाई।
बहुरंग नाद सुने किलकारा, अत जीवन शान्त समाई॥
एक ना दूजा भरम दिखावे, सम रूप सरब परकाशी।
सरब को जीवन देवे सो दाता, आद पुरख अबनाशी॥
निर्मल ध्यान रहे दिन रैन, ये ही सार पछानी।
जप जप जीवे नाम साहब का, कोई विरला संत ज्ञानी॥
**दुर्लभ दर्शन तिन का जग में, जिन अन्तर प्रभ दरसायो।**
**'मंगत' निर्मल सिखया तिनकी, सब मन के दोष मिटायो॥1593**
जिस जन पूरन प्रभ को ध्याया, तिस पाई अधिक वडयाई।
जिस जन निर्मल शरधा सूझी, तिस पाई अत प्रभताई॥
प्रभ की भगत सब ताप निवारे, मनुआँ शीतल होई।
लिख लिख गये गुनी ज्ञान अथाये, बिन नाम ना पावे ढोई॥
जीवन काज सँवारा तिन ने, जग में पाई जयकारा।
साची भगती संचत कीनी, तिन पायो भाग आपारा॥
सत सुकृत पद परसा स्वामी, सकल दोष चित दूरे।
तन मन ठाँड भई नर पूरन, नित सिमरत नाम हज़ूरे॥
**जिस सुख को ये जीया लोचे, बहु बिध बिपत लखाई।**
**'मंगत' सो सुख प्रभ रूप अपारा, मिल सतगुर रसना खाई॥1594**
देह अभिमान अधिक संतापा, जीव जले दिन राती।
अनर्थक कल्पना पल पल थापे, नहीं पलक शांत को जापी॥
कूड़ भरोसे कूड़ विकारा, नित नित जीवन लोचे।
अगन समान तपे नित मनुआँ, नित काल करम गत सोचे॥
पूरन भाग प्रभु प्रेम चित आवे, तब नास होवें विकारा।
निर्भय रूप घट अन्तर सूझे, तब पावे जीव छुटकारा॥
बन्धन में आया बन्धन में जाए, देख जगत का मेला।
बन्धन नास होवे तब साजन, जब गाइये नाम सुहेला॥
**दया ग़रीबी जिन चित आई, तिन पाया सार ठिकाना।**
**'मंगत' सिमरन प्रभ पारगरामी, केवल अमरत कल्याना॥1595**

अन्तर सोझी होवे चित पूरन, तत्त ज्ञान से धीर समाई।
देह के अन्तर निरदेह पद सूझे, मिल साध सरन सुख पाई॥
प्रभ पूरन दाता होवे दयालू, तब पाइये सुख सारा।
निर्मल भगती घट माईं समाए, सब दोष होवें चित छारा॥
इच्छया चिन्ता मन ममता नासे, अन्तर सूझ लखावे।
परम तत्त अबगत अनादी, घट घट माहीं दरसावे॥
नित ही खोज करे गुनी सूरा, अपना आप सुधारे।
काल कल्पना मन की त्यागे, नित निर्मल नाम चितारे॥
**निर्मल सुरती सतनाम रस पीवे, त्याग द्वन्द विकारा।**
**'मंगत' तिस जन पाई परसन्ता, जप पूरन रूप निरंकारा॥1596**
जिस घट अन्तर सत तत्त सूझा, पायो मंगल घनेरा।
शोक मोह सब मन का नास्यो, नित नाम जपत सुख सीरा॥
अद्भुत कौतक घर विच होवे, अबनाशी पूर समाया।
देह में निरदेह तत्त परकाशा, सत मारग भेद लखाया॥
सरब व्यापक सरब न्यारा, ऐसा पूरन देवा।
निहचल चित हो प्रेम कमाया, काल का नास्यो भेवा॥
दृढ़ विश्वास भयो घट पूरन, मनुआँ सहज समाये।
प्रेम समाध अमीरस खानी, नित शबद में जीवन पाये॥
**नित नित अन्तर रसना चीनी, इक नाम चेत अबनाशी।**
**'मंगत' मनुआँ तृपत समाया, त्याग करम की फाँसी॥1597**
नित निहकरम स्वामी देखा, नित निराकार सरूपा।
नित परिपूरन सरब में पसरे, आदी शकत अनूपा॥
नित परापत गुन से न्यारा, ऐसा तत्त परकाशा।
जिसने अन्तर खोज लगाई, तिस सूझा पद निरवासा॥
नित आनन्द परापत होयो, चित कल्पना सकल निवारी।
एक ध्यान अंतर सुख पाया, छूट गये संसारी॥
साहब सेती मेला होया, नित सत अरदास बखानी।
मानुष जीवन सुफल तब भयो, जो अन्तर शोभा जानी॥

**सत परमेश्वर सत तिसकी आज्ञा, दृढ़ निश्चे चित धारी।**
**'मंगत' बन्धन नास होवें सब, तत्त भगती लेख विचारी॥1598**

करम रोग लागा अत भारी, जीव परम दुःख पाई।
आस आस में जनम विताए, नहीं रंचक शान्त लखाई॥
इन्द्री भोग में नित भरमावे, अत चंचल विरती धारी।
छिन भंगर ये भोग करीड़ा, नहीं जीव घट धीर विचारी॥
एह संग्राम जगत का मीता, जो आये सो जाए निरासा।
बिन सत सोझी ठौर नहीं पावे, नित धारे अधिक प्यासा॥
मिल सतसंग सत तत्त्व विचारो, निर्भय शबद निर्वानी।
पल पल मन में उस्तत सूझो, तब भगती सार पछानी॥
प्रभ की भगत देवे परसन्ता, तृष्ना रोग विनासे।
अन्तरगत में चानन होवे, अखल जोत परकाशे॥
निराकार निरालम देवा, जब घट परगट कर ध्याई।
पूरन जतन भयो तब जन का, प्रभ चरनी मेल मिलाई॥
वासना करम रोग अत भारी, प्रभ भगती से पाई ख़ुलासी।
पूरन रूप सिमर मन अन्तर, सब हरी काल दुःख फाँसी॥
नित ही ध्याओ प्रभ अंतरयामी, जो सकले काज सँवारी।
जनम जनम का दोष विनासे, जो साजन सरन पधारी॥
**प्रभ का सिमरन सार जग माहीं, नित अन्तर चित चितारो।**
**'मंगत' निर्भय धाम समावें, तत्त शबद पाएँ निर्धारो॥1599**

सत सरूप जाना परमेश्वर, और मिथ्याकारा।
सत भगती जानी गोबिन्द की, और झूट पसारा॥
सत जिज्ञासू सतनाम सम्भाले, गुर सिखया को धारी।
कलप विकलप मन के त्यागे, नित निर्मल सार विचारी॥
अन्तर नाम जपत अबनासी, दूजा भाओ त्यागे।
सहज सरूप शबद को परसे, चित साची भगती लागे॥
**नित निष्काम नित निषकिरया, सो पार पुरख निर्देही।**
**'मंगत' तब मन निस्तर होया, जब ऐसी रसना लेई॥1600**

मिरतक देही में जीवन पाया, अत परकाश अखण्डा।
पूरन पुरख जोत निर्वानी, तीन काल परचण्डा॥
सिमरन कीरत भाओ निर्मल जाना, सब करम वासना त्यागी।
एक सुरत हो मंगल गाया, सब मन की दुर्मत भागी॥
जीवन रूप पछाता स्वामी, त्यागा काल का भरमा।
निर्भय शांत परापत पाई, लखयो तत्त निष्कर्मा॥
**अनन प्रेम पायो प्रभ नाओं, नित नित सेव कमाई।**
**'मंगत' कथा अगोचर सूझी, आलख शबद आगाही॥1601**

जो सुख जीया नित नित माँगे। सो सुख प्रभ की भगत अनुरागे॥
जिस सुख में दिन रैन उठ धाये। सो सुख साध संगत में पाये॥
साची खोज साचा विचार। जग जीवन दाता प्रभु हिरदे धार॥
छिनकारी ये देही का करमा। उतपत परलय ये देह का धरमा॥
एक पलक में नाश को पाई। क्या मूढ़े धारे चतराई॥
उठ के नाम गोबिन्द का जाप। साध जनाँ की नीती थाप॥
अपने आप को करो सुधार। मानुष जनम नहीं बारमबार॥
सार कहावत जग चली आई। बिना प्रभ भगत ठौर नहीं पाई॥
ताँ सों मन में सार विचार। **'मंगत'** नाम प्रभ जप बारम्बार॥**1602**

जो जीवन जग भीतर जाना, सो पल में राख़ समाई।
मेरो मेरी बहु धरी, अन्त छाड सब जाई॥
संग सखा परिवार घनेरा, पर जीव अकेला जाये।
उठ साजन समाँ विचार के, नित साचा करो उपाये॥
**नाम का सिमरन साची सेवा, धार उद्दम ये सार।**
**'मंगत' जीवन निर्बन्ध होवे, ये निर्मल भाओ विचार॥1603**

आनन्दघन सो प्रभ देवा, जिस सूझा तिस भाग आपार।
तृष्ना जलन मिटी सब मन की, घर पाई आनन्द की सार॥
नित अचाहक नित अचिन्त, अखल जोत निर्वान।
निर्मल प्रीत में मनुआँ लागा, पाया सहज ध्यान॥
तन मन की सब दुबधा नासी, जो मुकन्द सरूप घर पाये।

नित अन्तर निर्मल ध्यान में, सब जीवन मगन समाये॥
जिस सुख को खोजें मुनि देवा, और पीर अवतार।
सो सुख पाया अन्तर माईं, आलख नाम जप सार॥
कथनी करनी सब गई, रहनी पाया देस।
अन्तर रूप पछानया, आद पुरख निरभेस॥
सकल विकार देही का नासे, मनुआँ भया निर्बन्ध।
घर विच ठाकर पाया, आलख जोत परचण्ड॥
**वाह वाह अमरत झर रह्या, गुरमुख पान करे।**
**'मंगत' कोई जन अपार विवेकी, जिस निर्मल सूझ पड़े॥1604**
मानुष जनम का निर्मल फल ये, जो प्रभ पावें सरनाई।
मानुष जनम की निर्मल कीरत, जो मिले धरम वडयाई॥
मानुष चोला सुकृत कीना, जिन मारग सत पछाना।
आप तरे त्रैविखमी माया, कई कोट किये कल्याना॥
नित ही नाम जपें निस बासर, सत सेवा चित धारी।
खिमावान सुशीलवन्त सो, साजन परम गुनकारी॥
**सरब जियाँ को नित सुख देवें, अपना सुख विसारी।**
**'मंगत' तिन परसाद से, मिटे जनम मरन दुःख भारी॥1605**
बलिहार जाऊँ तिन साजना, जिन्हाँ निर्मल कीरत पाई।
दीन दुःखी की सेवा करके, निज देह का मोह चुकाई॥
अपना आप धरम में त्यागा, अत उज्जल रसना जानी।
इस नाशवान संसार में, सो साजन परवानी॥
**उठ जाग मुसाफ़र रे मन मेरे, तू जीवन सार विचार।**
**'मंगत' पल पल खाट लो, नाम साहब दातार॥1606**
मन के मनोरथ नहीं पूर समावें, अनंक जतन जो धारे।
पल पल उठें अनेक तरंगा, जीवन खेद विचारे॥
भव दुस्तर ये अती है मीता, एक पलक ना धीर समाई।
इच्छया से करम करम से इच्छया, नित अपना आप बन्धाई॥
छूटन का तो मन में चाओ, पर बन्धन पाये घनेरा।

ये ही माया भरम असगाह है, नित पावे जीव अत पीड़ा॥
सतगुर साजन सत मत दीनी, जीवन सार लखाई।
कारन कर्ता जान के ठाकर, नित तिस हुकम मनाई॥
सकल मनोरथ त्याग के, प्रभ आज्ञा चित धारी।
ज्यों वरतावे सुख कर पूजे, ये छूटन राह सुखकारी॥
**ज्यों ज्यों प्रभ का हुकम मनावे, मनुआँ धीर समाए।**
**'मंगत' निर्मल भगती ये ही, मिल सतगुर भेद लखाये॥1607**
साखी कर्ता जाना परमेश्वर, नास्यो देह अभिमाना।
सत संतोष चित आन समायो, पायो नाम निधाना॥
जीवन रूप को पल पल ध्याया, जग निश्चे जाना दुःख रूप।
छिनभंगुर सब जगत करीड़ा, प्रभ जाना नित सत रूप॥
गुरमुख भाओ ये परगट पाया, तब सकल वासना नासी।
नाम परायन निर्बन्ध होया, घर अगम कला परकासी॥
**करम करीड़ा अन्तर त्यागी, निहकरम पायो सत धामा।**
**'मंगत' शबद अखण्ड परापत, जग जीवन रूप अनामा॥1608**
सकल करम प्रभ अर्पन कीने, निहकरम गती घट जानी।
इच्छया त्याग भया आनन्दित, प्रभ शोभा सार पछानी॥
अन्तर शबद भयो परकाशा, नहीं रूप वरन आकारा।
झिलमिल जोत दीपक घर सूझा, मिटया भरम ग़ुबारा॥
नित परिपूरन नित न्यारा, सरब कला समराथा।
सत ठाकर घट परगट देखा, जो नाथन का नाथा॥
अखण्ड परकाश को अन्तर सूझा, छिनभंगुर देह मोह त्यागा।
सतगुर दया साध की संगत, सत मारग में मन लागा॥
**ज्यों ज्यों अन्तर शोभा जानी, लीन भयो संसारा।**
**'मंगत' केवल रूप समायो, जाँ का नहीं पारावारा॥1609**
जिस जन साहब सत कर ध्याया, तिस अपना भरम चुकाई।
नित ही अपना आप पछाने, सब ममता दोष मिटाई॥
काल करम का मोह त्यागा, अकाल पुरख को पूजा।

नित आनन्द सरब परकाशी, सत ठाकर घर सूझा॥
निर्मल सुरती चढ़ी आकाशे, वहाँ कियो पूरन बिसरामा।
शबद अखण्ड जोत घर परसे, निर्भय तत्त सत नामा॥
सरब का जीवन सरब आधारी, सरब में पूर समाई।
अपना आप नित निर्धारा, सो ऐसा तत्त्व आगाही॥
**गुरमुख मन में पाई परसन्नता, जब आयो प्रभ सरनाई।**
**'मंगत' दुर्मत जाल विनासा, घट घट एक दिखाई॥1610**
सरन पाई इक पार स्वामी, भय भरम दुःख नासो।
जित कित देखाँ तिसकी लीला, एक सो ही परकाशो॥
पूरन जग का निरनय पायो, तब लीना घट बिसरामा।
त्याग द्वन्द पाया आनन्द को, सिमर एक सत नामा॥
नाम परायन सुरता भई, त्याग दुर्मत बखेड़ा।
तत्त गत रूप अंतर में पूजा, मिटा चौरासी फेरा॥
कुछ कहन ना जाई प्रभु की लीला, ये बिस्माद जगत फुलवाड़ी।
सब कुछ सो ही सब कुछ तिसमें, कोई गुनी जन भेद विचारी॥
**सिमर सिमर मन मगन समाया, सब संशे शोक होए दूरे।**
**'मंगत' घट में बजे बजन्तर, सत रूप सरब भरपूरे॥1611**
सत सरूप भयो परकाशा, निर्बन्ध जीवन पाई।
अन्तर में अन्तर सुख सूझा, इक नाम लखी वडयाई॥
सुरत निरत का एका कीना, धरी आठ पहर टकराई।
अन्तर में सतनाम परकाशा, आलख शबद आगाही॥
देह के अन्तर ठाकर सूझा, परम परकाश निर्वानी।
आठ पहर मन भई परसन्ता, सब दुबधा लीन समानी॥
**भाग पाये सत मारग सूझा, घट अवगत तत्त्व पछाना।**
**'मंगत' पूरन पद को परसा, जो सरब में पूर समाना॥1612**
हरजन निर्मल शान्त विचारी, सत रूप परापत पाया।
नित ही अन्तरगत में लागा, सार शबद को ध्याया॥
सुरत संकोच शबद में राखी, अपना आप भुलाई।

सर्वज्ञ रूप की पूजा सूझी, नित नाम पदारथ खाई॥
देह से भिन्न कर शबद पछाना, परम शांत घर पाई।
कर्ता करम काल भ्रम नासा, चित सुन्न समाध लखाई॥
आवे जावे ना मन दुःखदाई, नित अगम के घाट समाए।
त्रैगुन माया खेद विनासे, घट चेतन रूप ध्याये॥
**सकल दोख से निर्मल हुआ, अजर पुरष घट जाता।**
**'मंगत' अत अस्चरज पछाना, परम पुरख बिधाता॥1613**
नौ निध पाई घर में साजन, जो परगट रूप ध्याई।
सरब आधार नारायन देखा, महमा कथी नहीं जाई॥
ना वोह जनमे ना वोह मरे, ना वोह रूप वटाए।
जैसा का तैसा प्रभ पाया, नहीं रंचक भेद दिखाये॥
प्रेम नगर विच डेरा कीना, पाई शबद की पूजा।
ब्रह्म नाद परकाश पछाना, और देव नहीं सूझा॥
ब्रह्मा कथे विषन तत्त ध्याये, शिव नित योग विचारी।
आलख नाद परम तत्त निर्मल, सिमर सिमर सुख धारी॥
**सो प्रभ परगट घर में पाया, सरब ठौर तत्त जाना।**
**'मंगत' मन की दुर्मत नासी, सब एको ब्रह्म पछाना॥1614**
मारग कठन शबद का मीता, नित जीवत सीस त्यागी।
सीस दिये जगदीश को पाइये, सुन ज्ञान गुनी वडभागी॥
मन अपने को घायल कीजे, नित भोजन बिरह का खाई।
सरब सरूप नारायन देखे, सब माया भरम चुकाई॥
इन्द्री रसना में कभूँ ना डोले, निहकरम भेद पछानी।
सब कुछ हुआ प्रभ आज्ञा में देखे, द्वन्द खेद नहीं ठानी॥
निर्मोह राखे मन को अंतर, इक नाम पाये भरवासा।
अखण्ड वैराग में नित नित विचरे, प्रभ चरन करे अरदासा॥
**इच्छया ममता संकट को छेदे, नित प्रेम प्रभू रस खाई।**
**'मंगत' अंतरगत में चानन होवे, ब्रह्म जोत दरसाई॥1615**
अनेक जनम की भरमन धारी, नित जीव परम दुःख पाये।

मानुष जनम की शोभा निर्मल, जो प्रेम प्रभू चित आए॥
राखो टेक दृढ़ कर अन्तर, जग जीवन लाभ विचारो।
जैसी करनी करें दिन राती, साजन पायें आधारो॥
जीवत में जिन नाम कमाया, सो तृपत जग से चाले।
सत अस्थान पाया अबनाशी, नहीं वौहढ़ गवन को भाले॥
दुर्मत भरम माया का हरया, प्रभ चरनी प्रीत लखाई।
निमख निमख कर कीरत जानी, निर्भय धाम समाई॥
**मन अंतर से परसन्न हूआ, सत शबद की रसना खाये।**
**'मंगत' अचरज वस्त परापत होई, सब इच्छया लीन समाये॥1616**
नाम का सिमरन अन्तर पाया, सत ठाकर सरन पछानी।
अपनी दुबधा सकल निवारी, जग सार जीवन की जानी॥
सतगुर ने वड दात करी, चित भाओ ग़रीबी पाया।
नश्वर जग में सत सार कमाई, तत्त मारग शान्त लखाया॥
नित ही बन्दूँ गुर के चरना, नित निर्मल सीख विचारूँ।
भव मारग की गहरी खाई, इक ओट शबद की धारूँ॥
भरम कल्पना चित की नासे, नित पाऊँ चरन अरदासा।
पूरन प्रभ की सेव कमाऊँ, धार पूरन भरवासा॥
सरब जगत की सेवा माहीं, तन मन अपना वारूँ।
निश्चय राख परम पुरखोतम, सत मारग ज्ञान को धारूँ॥
मारग मुकत की रीती ये ही, नित ही जतन कमाओ।
जीवत में मिले परसन्ता, तत्त शबद समागम पाओ॥
**आलख शबद का भेद पछानें, भरम से होए छुटकारी।**
**'मंगत' तत्त गत रूप समावें, पद परसें अखण्ड निर्धारी॥1617**
सरब सृष्ट से भया न्यारा, जिस आतम तत्त पछानया।
मन बानी सब लीन समाई, अन्तर सुख अत जानया॥
वस्तु एक परापत पाई, जो पूरन पूर समावे।
अत महमा धारी जगदीश्वर, कुछ कहन कथन नहीं जावे॥
भयो दीवाना घर ठाकर पाया, नित तिस चरन ध्याई।

अन्तर सुन्न समाधि माहीं, अत रसना प्रेम की खाई॥
चढ़ी ख़ुमारी मन लीन समाया, घट निर्भय नाद गुँजारी।
आवागवन का मिटा सँदेसा, पद परसा अखण्ड निर्धारी॥
नाम रूप से मुक्ता हूआ, तत्त ज्ञान की रसना पाये।
आकार दृष्ट की भरमन नासी, सत शबद में लीन समाये॥
परम परकाश पाया तत्त निर्मल, जो तीन काल आनन्दा।
आसा तृष्ना भरम विनासा, अखण्ड जोती परचण्डा॥
तृपत भया ये भरमत जीया, सत धाम परापत पाई।
पूरन कथा पछानी घट में, अब संसा रह्या ना काई॥
त्रैगुन जाल सब लीन समाया, घट निर्गुन बानी सूझे।
निर आधार पार पुरखोत्तम, तत्त शबद पुरख नित पूजे॥
परम धाम परापत होया, नहीं बौहड़ गवन को पाई।
सरब जगत आधार स्वामी, घट घट में दरसाई॥
हरजन ने सुन्न घाट पछाना, जाँ अबगत शबद नित बोले।
काल कल्पना छाया नासी, नित सुरती भई अडोले॥
निहकरम सरूप गत अचरज जानी, अखण्ड धार अबनाशी।
द्वन्द कल्पना मिटा अँधेरा, तत्त रूप सरब परकाशी॥
समरस पान करे नित गुरमुख, चित सार सरूप पछानी।
गुनी ज्ञानी सिद्ध तपीशर, तत्त कीरत करें बखानी॥
**आनन्द सरूप पाया सत ठाकर, सब महमा जिस बिस्तारी।**
**'मंगत' केवल चरन प्रीती में, नित नित जाऊँ बलिहारी॥1618**
मारग प्रेम अत कठन है, जीवत तजें शरीर।
निस दिन भाओ प्रेम में, रंचक पायें ना पीड़॥
सतगुर तो अन्तर रमें, पल पल करें पुकार।
आज्ञाकारी होये के, तूँ घट का पाट उघाड़॥
ऊँच शिखर समाया, सतगुर शबद निर्वान।
काल करम को त्याग के, सुरती निज घर आन॥
बजे बजन्तर अत घना, होयें छतीसों राग।

दमके निस दिन दामनी, घर साचा परस सुहाग॥
काग़ज़ केरी नावरी, ये देह धाराकार।
ग़फ़लत मनो त्याग के, घर खेवट शबद विचार॥
बहुजन उतरे सहज ही, भव दुस्तर गहरी भीत।
निर्मल चित जिन ध्याया, साचा नाम पुनीत॥
भँवर गुफ़ा के मद्ध में, उमढ़े ज्ञान सरूर।
दीपक जले अगम का, कर दर्शन साच हज़ूर॥
छिन छिन करे कुलेल प्रभ, मधुर धुन सुन राग।
निर्मल सुरती राख के, पियो सार शबद अनुराग॥
जिन पान किया सो तृपत भये, काल भय कियो नास।
हंस सरूप को धार के, नित चुगें मोती अबनास॥
राम रम्मत सुख पाया, छिन छिन चरन ध्याये।
लोक लाज सब विसरी, प्रभ दाता मेल मिलाये॥
अत निर्मल गुर रूप है, त्रैगुन से नित न्यार।
उपमा कह बिध मैं करूँ, नित अनमत मूढ़ गँवार॥
आपे दाता भयो दातारी, सब जीव की तृखा निवारी।
परगट छबी दिखाके अपनी, मन्दभाग कीना निस्तारी॥
उस्तत करूँ अन्तर चित माहीं, सत प्रीती पूर समाये।
जल तरंग ज्यों भेद ना रहाई, एह बिध रंग रँगाये॥
सरब सरूप देखूँ इक सतगुर, सत आज्ञा नित लखाऊँ।
तन मन वार रमूं नित चरने, चित साची सेव कमाऊँ॥
**प्रभ दाता जी भये दयालू, घट परगट रूप दिखाई।**
**'मंगत' दीन ग़रीबी पाके, नित आयो तुध सरनाई॥1619**
परम तत्त्व निर्वान पछानो, जो नित आनन्द की खान।
काल करम जाये कल्पना, नित सुरती होये ग़लतान॥
अपना आप परम तत्त निर्मल, नहीं दोष परापत पाई।
अन्तर में अन्तरगत बोधे, सब दूजा भाओ मिटाई॥
शुद्ध सरूप नाद घर परसे, अबगत कथा आपारी।

आसा तृष्ना सब बन्धन चूके, तत्त जीवन भेद विचारी॥
जीवत में देह ममता त्यागे, तब परसे पद कल्याना।
अनन प्रीत घट नाम कमावे, तत्त मारग गुरमुख जाना॥
**अखण्ड प्रेम से पूजा कीनी, घट पार पुरख अबनाशी।**
**'मंगत' देह में निर्देह सूझा, ब्रह्म शबद निर्वासी॥1620**
नीर मज्जन से तन मल नासे, मन मल हरे संग पवना।
पवन को पीवे गुर शबद के संगा, तब परसे पद नहगवना॥
पवन को पीवे शबद जप जीवे, तब नासे भरम गुबारा।
अन्तर में अन्तर सुख पावे, घट देखे आलख आपारा॥
**मारग गुपत कोई गुरमुख बूझे, बिन रसना नाम कमाई।**
**'मंगत' दुबधा दुर्मत नासे, घर निर्भय धाम लखाई॥1621**
निरनय मुकत द्वार का, चित अन्तर लयो विचार।
मनसा वाचा करमना, जीत पावें संसार॥
आतम निरनय आतम निश्चय, आतम साधन विवेक।
आतम ज्ञानी सतपुरष के, नित पद मस्तक टेक॥
जनम जनम दुर्मत जाए, सतनाम मिले विश्वास।
सतगुर भेदी भेद बतावें, होए आतम परकाश॥
मन देह इन्द्री भोग से, मनुआँ उपरस होए।
निमख निमख सतनाम की, प्रेम से माल परोए॥
देह मिथ्या सत आतमा, नित निरनय करे विचार।
अन्तर दृष्टी धार के, सिमरे नाम करतार॥
करम बन्धन सब मिटे, सत शबद की सोझी पाए।
माया पिण्ड को त्याग के, सच खण्ड जाए समाये॥
अनहद बजे बजन्तर, होए मधुर धुनी राग।
खुले किवाड़ा गगन का, प्रभ दाता मिले सुहाग॥
अपने रूप संग जा मिले, त्याग के तृष्ना रोग।
मारग ये है मुकत का, मिल गुर पाइये संजोग॥
पंजम सुर नाद घट बोले, देह ममता होई विनास।

अन्तरगत चानन भया, अकथ कथा चित वास॥
पिण्ड ब्रह्मण्ड को त्याग के, परले पार समाई।
निज आनन्द परापती, नहीं दुर्मत भरम लखाई॥
**अगम पुरष प्रभ पाया, त्रैगुन जाल भयो लीन।**
**'मंगत' मुक्ती भेद ये, कोई गुरमुख लेवे चीन॥1622**

****

ज़िकर रब छाड के होवें मग़रूर नित, ग़ाफिल गोता खावेंगा ये समझ लीजिये।
दुनियाँ सराये फ़ानी रहना मुक़ाम नाहीं, राह ये सूफ़ियाँ तहक़ीक कीजिये॥
नफ़्स शैतान को सदा ग़ुलाम रख, बन्दगी खुदाये में सिदक कमाइये।
गन्दगी को छोड़ के जिन्दगी पहचानकर, तआसुब त्याग के मेहर वरताइये॥
ज़ात रुबानी नित कर तहक़ीक तूँ, कलमा बेखुदी की विरध पहचानिये।
राज़ी रज़ाये रब सिदक़ ले दम दम, बंदगी कमाए के साहब घर जानिये॥
साहब पहचान के ग़फ़लत दूर भई, ये दुनियाँ नूर ख़ुदाये जाना।
नफ़्स को मार के ग़ैब को देखया, पाए इलहाम ज़िकर रहमाना॥
सही तहक़ीक़ से पाया रफ़ीक़ को, दोज़ख़ व जन्नत का भरम टारा।
ज़ाते विसाल से भया खुशहाल सो, बन्दगी कमाये रंग एक धारा॥
फ़ना आग़ाज़ सब ग़फ़लत दिल की, नूर रुबानी सब थाईं पूरा।
नूर में नूर मिल इक रंग होया, पाए ये रमज़ कोई सालिक शूरा॥
**सिदक़ सबूरी ये पावे जागीरी नित, मुरशिद मेहर से पाक होवे।**
**'मंगत' ये ज़िन्दगी कमाल जग माहीं, साहब विसाल से दुःख खोवे॥1623**

****

मान निवारन कारने, जप यज्ञ पुन्न दान।
प्रभ इच्छया में सौंपिये, तब पाइये कल्यान॥
दीन भाओ जो चित नहीं, ना प्रभ हुकम विचार।
मान धार सेवा करी, नहीं बिनसे मन अन्धकार॥
सकल जतन अकारथ गयो, जीव प्यासा जाये।
मन की ममता ना मिटी, कोटक किये उपाये॥
गुरमुख मारग खोज कर, जो नित देवे कल्यान।
प्रभ आज्ञा में त्यागिये, करम फल अज्ञान॥
निष्काम भाओ चित में आये, सब दुबधा होये दूर।

प्रभ की महमा घट परगासे, परसे आनन्द सरूर॥
**घालन सब पूरी होवे, निहकरमत पावे धाम।**
**'मंगत' निर्मल करम से, जीव पाये बिसराम॥1624**
सत करम की धारना, जीवन करे निषंग।
अंतरगत होए चानना, सब भरम दोष होए भंग॥
करम द्वन्द को त्याग के, सुरती जपे सतनाम।
दुर्मत व्याधी सब मिटे, निज रूप में ले बिसराम॥
अनहुआ और जो हुआ, प्रभ आज्ञा में पेख।
बुद्धी होये सुतंतर, सत सिमरन परसे लेख॥
अन्तर आतम पूजिये, सहज सुरत जप नाम।
जनम जनम जाये भरमना, सत रूप में ले बिसराम॥
कथनी मुख की त्याग के, चित धरे अधिक निध्यास।
सो जन जग में सूरमा, परसे तत्त अबनास॥
तत्त अबनाशी परस के, सुरती भई अडोल।
मिटी करम की वासना, सुन पूरे गुर का बोल॥
**अन्तर शबद परगासया, मधुर धुनि उठे तान।**
**'मंगत' घर मंगल भयो, सुरत भई निर्वान॥1625**
कर्ता भाओ से वासना, वासना से संसार।
ये ही अज्ञान है जीव को, आवागवन दुःख सार॥
कर्ता भाओ त्याग के, साखी रूप पहचान।
तीन काल सम रूप है, केवल तत्त निर्वान॥
ये ही धारना धार के, बहुजन उतरे पार।
आपामती त्याग के, तत्त पाया निर्धार॥
कर्ता भाओ ये माया, अत दुस्तर दुःख धार।
निर्मल तत्त ज्ञान बिन, नहीं पाये जीव निस्तार॥
दृढ़ चेता तत्त रूप में, सब दुबधा करे विनाश।
परमानन्द निज रूप को, देखे सरब माहीं परकाश॥

**देह क्रीड़ा से निर्बन्ध भयो, निर्देह पायो देव।**
**'मंगत' मारग ज्ञान का, नित परस गयो भ्रम भेव॥1626**

****

खिमावान उदार चित, अत प्रभ विश्वासी होये।
पर का कष्ट निज कष्ट पछाने, नित साचा जतन परोए॥
रोग दारू दोहू पछाने, निर्मान भाओ चित धारी।
प्रभ आज्ञा में यत्न सत राखे, सो निर्मल वैद विचारी॥
शुद्ध भाओ से सेवा कीजे, अत दीरघ रोग विनासे।
नित उपमा पाए घनेरी, जब एह बिध जतन बिलासे॥
सब जीवों पर राखे दाया, निर्लोभ से औषध कीजे।
सकल रोग तत्काल विनासे, जो वैद एह जतन लखीजे॥
सत जतन से रोग को हरे, सूक्षम औषद पान कराये।
दृढ़ विश्वास राखे प्रभ चरनी, सो वैद विजे नित पाये॥
सत अनुभव से रोग पछाने, निष्काम सेवा नित कीजे।
ऐसा वैद पावे परतापा, तिस दर्शन रोग हरीजे॥
**पूरन प्रभ का दर्शन पछाने, सत भगती चित धारी।**
**'मंगत' शुद्ध आचार विचार जो राखे, सो वैद परम सुखकारी॥1627**

****

जाँ सरूप को अखय गत कहिये। ताँ की उस्तत एह बिध लहिये॥
कहे कोई जन परम तत्त ऐसा। जो जो बूझे सो होए वैसा॥
कहत सुनत कुछ अचरज बाता। सदा इस्थिर नहीं दोष को खाता॥
तन मद्धे सो रहे समाई। बिना सुभाओ नित रमनाई॥
तन की ममता मन को भरमावे। मन की अस्थिरता देह वँजावे॥
तन मन दोनों शबद में लीना। **'मंगत'** तब भेद तत्त्व ज्ञान का चीना॥**1628**

****

गुरमुख सुरत अन्तर को आवे, मनमुख सुरत बाहर भरमाई।
तत्त बोध जो सुरत है, सो तीन काल ठहराई॥
तत्त बोधे सब भरमन नासे, निज रूप में ले बिसरामा।
जैसा था तैसा पद परसे, **'मंगत'** तत्त सतनामा॥**1629**
कारन कर्ता सरब सुख दाता, सो परमेश्वर चेत।
मानुष जनम कदारथ होवे, सब मन की हरे विखेप॥
सत विश्वास परम फल देवे, जो गुरमुख बूझे रीत।

सरब जियाँ संग प्रेम कमावे, नित निर्मल राखे नीत॥
दीन भाओ मन में धरे, त्यागे मध अहंकार।
सकली दात जाने एक प्रभ की, सुख पावे आपार॥
**सत साजन की सीख सुन, नित मारग ज्ञान विचार।**
**'मंगत' जीवन होवे सुतन्तर, प्रभ नाम मिले आधार॥1630**
प्रभ आज्ञा में जीवन राखो, नहीं मान गुमान चित धारो।
दीनदयाल सरब दुःखभंजन, सतनाम जपो सुखकारो॥
एक भरोसा राखो चित चरनी, नित दीन भाओ रस खाई।
भरम कूप जाये सब मन का, घट निर्मल शान्त लखाई॥
मानुष जनम की सार प्रभता, नित खिमा ग़रीबी सूझे।
परम समरथ सत ठाकर देवा, चित भाओ भगत से पूजे॥
तिसकी पूजा देवे कल्याना, नित सतगुर सुनो संदेश।
बारम्बार जपो नारायन, सब मन के मिटे कलेश॥
**गुरमुख जीवन पद को परसो, ये दुर्लभ समाँ जग पाई।**
**'मंगत' सदा आराध प्रभ दाता, जो पल पल होत सहाई॥1631**
नाम प्रभू का सिमर के, सुरता भई अडोल।
काल कल्पना सब मिटी, घर पायो आनन्द कलोल॥
गुपत दीपक परगासया, सुनी शबद की तान।
मन में मन परसन्न भया, घर भेंटे पुरख सुजान॥
छिन छिन विरती रसना पीवे, त्याग भरम संताप।
साचे नाम की प्रीत में, नित सुरता लीनी थाप॥
**जाप जपत मन निर्मल भयो, अंतर खुलयो पाट।**
**'मंगत' नज़री आया, प्रभ पार पुरख निरवाट॥1632**
साची सिमरनी नाम की, जिस हिरदे लेई लटकाए।
भय भरम संसा तजे, घर जीवन रूप लखाये॥
आसा त्याग निरास हो जीवे, अगम निगम गत जाने।
सरब व्यापक सरब निराला, ऐसा तत्त्व पछाने॥
नित ही निर्मल प्रेम कमावे, सब जग की बाँछे धूड़ी।

आप गँवा के आप पछाने, करे कठन मज़दूरी॥
**अन्तर निर्मल प्रीत लखावे, सब दुबधा करे त्याग।**
**'मंगत' बूझे भेद जो, सो साजन वडभाग॥1633**
देह ममता को धार के, नहीं कुछ सार पछानी।
संसे में औधी गई, उठ चला निरासा प्रानी॥
देह के सुख के कारने, यतन किये बहु भाँत।
पलक में सब बिनस गई, नहीं चित पाई शान्त॥
अन्धमत भूला अत घना, नहीं सरजनहार विचारया।
माया मोह को धार के, विच जूए जनम को हारया॥
सुन सतपुरषों की सीख मन, अब तो हो सुचेत।
सरजनहार पहचान के, नित राखो तिस की टेक॥
ज्यों चलावे सुख कर माने, निमर भाओ चित धार।
पल पल कर तिसको बन्दना, जाये बंधन संसार॥
**सब कुछ हुआ तिस का जान, अपना त्याग गुमान।**
**'मंगत' भगती रंग रंगें, तब पावें कल्यान॥1634**
सत शरधा को पाए के, मन का तजा ग़ुबार।
नित ही साची प्रीत में, प्रभ दाता कियो विचार॥
अन्तरमुख हो गाया, पार पुरख निर्वान।
सिमर सिमर मन निर्भय हूआ, पाई शबद की तान॥
देह अन्तर तत्त सूझया, निर्देह आतम देव।
तब ये मन निर्मल भया, पाई अचरज सेव॥
**निर्भय सो ही शांती, निर्भय सो ही धाम।**
**'मंगत' गुरमुख विरले, पाए लयो बिसराम॥1635**
जग जीवन दाता चेत ले, होए माया मोह दुःख दूर।
सब कुछ तिसका पेखिये, सत शरधा का मिले सरूर॥
बनत बनावे सरब की, सरब को करे परकाश।
परीपूरन समरथ स्वामी, नित मन करे अरदास॥
नाना भाँत ये रचना जगत की, इक प्रभ की प्रभता जानी।
ऐसी महमा हिरदे आवे, तब भगती सार पछानी॥
ज्यों ज्यों प्रभ की भगत कमावे, तृष्ना रोग विनासे।
घट अन्तर में चानन होवे, प्रभ सरूप लखें परकाशे॥

**ऐसा आनन्दघन सो पार स्वामी, जिस जाना तिस सुख पाया।**
**'मंगत' पूरन भाग हैं तिनके, जिन एह बिध प्रेम कमाया॥1636**

मन निर्मल सत शांत परकाशे। मन निर्मल प्रभ जपे अबनाशे॥
मन निर्मल पावे रिद्ध सिद्ध योग। मन निर्मल पाये ज्ञान सँजोग॥
मन निर्मल ये सिद्धता पूरी। मन निर्मल ये सार हज़ूरी॥

**पूरन करमी सो बुद्धीमाना, जिस निर्मल जानी वाट।**
**'मंगत' प्रेम प्रीत से, एक नाम प्रभु चित खाट॥1637**

संसार की रचना में मन ना तृप्ते, कोट करे उपाये।
मान माया बहु संचित कीनी, तो भी धीरज नाए॥
अधिक भयो परिवार जग माईं, बहु बिध पाई वडयाई।
पर मन को ना संतोष परापत, नित निरासा रहाई॥
वाह वाह रचना ये जगत की मीता, कुछ कहन कथन नहीं जावे।
जाँ से पूछूँ सुख की साजन, सो ही दुःख दिखलावे॥

**जिस जन निर्मल कीरत पाई, एक नाम पूरन भगवन्ता।**
**'मंगत' तिस जन शान्त परापत, तत्त परस पुरख अनंता॥1638**

देह ममता का नाश होवे, प्रभ प्रभता चित आये।
मान गुमान जाए चित ईरखा, दया ग़रीबी पाये॥
नित ही प्रेम के रंग से, जो जीवन रँगे मीत।
सुफल होवे जग आवना, सुन साध जनाँ दी रीत॥
इस मन को नर धीरज नाहीं, जो अरब खरब धन पाये।
इस मन को संतोष ना होवे, जो चक्करवरत राज कमाए॥
एह मन तृपते कभूँ ना मीता, जो पावें अती परिवारा।
बिन प्रभ भगत और सेवा साधन, नहीं बिनसे मन गुबारा॥
अन्ध कूप ये भरम है दुनिया, सभी जीव दुःख पायें।
बिन सिमरे हरि नाम के, सब नित निरासे जाएँ॥
उठ जाग मुसाफ़र चेत तूँ, सत साजन करतार।
ये जीवन होवे सुफला, अन्त पायें जैकार॥

**जीवन में पद जीवन परसें, सतगुर बचन कमायें।**
**'मंगत' मिटे सब दूषना, नित मंगल को पायें॥1639**

बड़े बड़े धन माल के वाली, तीन काल तपतायें।
बड़े बड़े गुनि ज्ञान के वादी, पलक धीर नहीं पायें॥
वाह वाह रचना जगत की मीता, कोऊ जन शांत ना पाई।
खोजत खोजत मैं फिरा, सब संकट रूप दिखाई॥
पूछ पछान करी बहुतेरी, सब ही बिपत दिखलाए।
बिस्माद ये रचना प्रभ की माया, बिन ज्ञान ना धीरज आये॥
**राजा दुःखिया राना दुःखिया, और दुःखिया कुल संसार।**
**'मंगत' सुखिया सो भया, जिस शोभा पाई करतार॥1640**
तृष्ना तुल नहीं कष्ट है मीता, संतोष तुल धन नाईं।
दया बराबर नहीं अमीरी, तुल धरम नहीं सुख थाईं॥
सत के तुल नहीं तप है मीता, प्रेम तुल नहीं ध्याना।
तुल सतसंग नहीं और उपाये, जो देवे जीव कल्याना॥
**जीवन जग ये अत करड़ा, सभी जीव भरमायें।**
**'मंगत' जिन जन सार पछानी, सो जन शान्त समायें॥1641**
माटी का ये पुतला बनया, माटी माहीं समाये।
धनी दलिद्री राजा राना, सब एह मारग पाये॥
किसी की बनी रही ना मीता, एक पलक में नाश हो जाई।
मूरख सो ही जग में कहिये, जो निर्मल सार नहीं ध्याई॥
तृष्ना में आवें तृष्ना में जावें, देखो जग की रचना।
बिन प्रभ नाम आवे नहीं धीरज, देख भरम ये सुपना॥
**प्रभ सिमरन सतसंग परीती, नित धारे पर-उपकारा।**
**'मंगत' मारग धरम का सोधे, तब उतरे भवनिध पारा॥1642**

## गुरु सरूप लखना

शबद तत्त गुर मूरत पेख। महमा गुर की घट घट देख॥
इन्द्री संजम गुर का ब्यौहार। शुद्ध विवेक गुर का नित आहार॥
पर-उपकार गुर बस्तर ओढ़े। निर्वास गती अनुभव चित जोड़े॥

दु:ख सुख परे सतगुर विराजे। अकाल सरूप हो सरब निवाजे॥
ज्ञान ध्यान खिमा संतोखा। भगती प्रेम तत्त परस अनोखा॥
अन्तरगत गुर रहे लवलीना। नित परकाश उपरस रस चीना॥
अडोल अचाहक गुर की रहनी। सत परतीत है गुर की कहनी॥
द्वन्द त्याग करनी गुर धारी। दीन भाओ गुर चरन विचारी॥
आतम निश्चय गुर आरती पहचान। अकल्पत ध्यान चरन अमरत गुर जान॥
आपा त्याग गुर पूजा सोध। सरब हितकारी मंतर गुर बोध॥
पाँच पचीस से रहे अतीत। गुर का धाम खोज गुनी मीत॥
एह बिध गुर की जो लखना करे। सो शिष बौहड़ नहीं जन्मे मरे॥
दुर्मत त्याग पद परसे निर्वाना। गुर की महमा जिस करी पहचाना॥
ज्ञान गुरु का नित लखावे। सो साजन परमगत पावे॥

**अखण्ड अछेद गुर धाम है, परमानन्द की खान।**
**'मंगत' जो लखना करे, सो तीन लोक परवान॥ 1643**

## समता शान्ति

**मानुष तन को पाए के, सत मारग ज्ञान विचार।**
**'मंगत' समता शान्ति, तत्त खोज परम पद सार॥1644**

नाम निरंजन ध्याइये, जो हरे सकल दु:ख पाप।
बार बार चितारिये, अत साहब परताप॥
नित नित जीवन देत है, पारगरामी देव।
भाओ भगत से सिमरिये, निर्मल पाइये सेव॥
सो वडदाता सेविये, होयें मनोरथ पूर।
जुग जुग महमा आपार है, परम पुरख हज़ूर॥
आद जुगादी सत है, सरब करे परकाश।
सतगुर की वडदात से, दृढ़ राखो भरवास॥
घट घट अन्तर रम रह्या, पूरन सरबे ठौर।
अन्तर चित में सिमरिये, सो दीनदयाल हज़ूर॥
एक भरोसा राखिये, सत स्वामी दातार।

निमख निमख कर सेविये, प्रीत चरन बलिहार॥
मिथ्या जग भरवास में, नाम केवल तत्त मूल।
निर्मल चित से ध्याइये, मिट जायें संशे शूल॥
देवी देव ध्याँवदे, आद पुरख निर्वान।
रंचक कीरत जो मिले, तब पूरन भाग पहचान॥
जोगी जंगम जापदे, और तपी तप धार।
बैठ एकान्त पूजते, सत शबद निरंकार॥
**ज्ञानी ज्ञान विचारदे, अभय पद निर्मल रूप।**
**'मंगत' लेख आपार है, प्रभ महमा अत अनूप॥1645**
सरब का जीवन रूप है, रहत सरब के माईं।
आज्ञा मन में ध्याइये, प्रभ पार पुरख गोसाईं॥
जनम जनम जाये दूषना, जो पाइये प्रभ परताप।
केवल निर्मल शान्ति, एक साहब का जाप॥
परम पदारथ नाम है, तृपत करे चित आस।
परम पुरख संसार में, जो पाए चरन निवास॥
साची कीरत पाइये, जग जीवन दिन चार।
हिरदे नाम संभालिये, चित धरिये उपकार॥
कारन कर्ता सेविये, जो देह करे सरजीत।
सब कुछ तिस का जानिये, पाइये नाम पुनीत॥
एक भरोसा राखिये, हरिये दुर्मत खेद।
पूरन करमी जगत में, जिन पायो ये भेद॥
करम चक्कर संसार में, जीव परम दुःख पाये।
कीरत प्रभ के नाम की, सकल उपाध मिटाये॥
सिद्ध मुनी नित ध्याँवदे, पार पुरख अबनास।
आसा पूरन तब होवे, जब पाइये नाम उपास॥
महमा अपरम आपार है, एक नाम तत्त सार।
चरन कँवल की प्रीत में, तन मन दीजो वार॥
**कोट जीव उद्धार करे, जो सरनागत आये।**
**'मंगत' की दुबधा मिटी, प्रभ नाम जपत सुखदाये॥1646**

नाम का सिमरन पाइये, सतगुर सुनिये सीख।
पूर मुशक़्क़त जगत में, नाम मिले जो भीख॥
नित भिखारी हो रहो, सतगुर के दरबार।
नाम रतन जब पाइये, तब पूरन भाग विचार॥
निर्मल शोभा नाम की, सिमर सिमर सुख पाई।
सो जन पूरन करमी, जिन रसना ये खाई॥
नाम की रसना खाए के, मनुआँ शान्त समाए।
भरमन सकल त्याग के, सार शबद लिव लाए॥
शबद अगोचर पाए के, अन्तर घाट लखाई।
निज घर साजन आया, सतनाम पाई प्रभताई॥
जाप अखण्डत मन रसे, दुर्मत ताप मिटाये।
अन्तर पावे चाँदना, प्रभ चरनी लीन समाये॥
शबद धुन्न नित पान करी, दूर भये चित दोख।
करम सँदेसा सब मिटे, पद परसा तत्त मोख॥
अन्तर में साजन मिला, जग का सरजनहार।
निर्मल प्रीती चरन की, तन मन भये बलिहार॥
वस्तू अन्तर में मिली, पूरन पाया धाम।
लीन भई सब कामना, नित जपत सतनाम॥
**नाद पुरख परगट भयो, नित नित करे गुंजार।**
**'मंगत' सुन्न समाध में, परसी शान्त अपार॥1647**
साचा शबद पहचानया, अज अबनाशी देव।
संतन की रज चरन से, पूरन पाई सेव॥
परगट पाया घट माहीं, सत शबद बिस्माद।
आद अन्त भरमन गई, पाया रूप अनाद॥
कोट मुनी उस्तत करें, तूँ परम पुरख भगवन्त।
एको तूँ ही पसरया, प्रभ केवल रूप अनन्त॥
तेरी तुझ को बन्दना, नित करूँ जग देव।

सरब आधारी एक तूँ, माँगू निर्मल सेव॥
अन्तर सेव कमाऊँ, रूप रेख मिट जाये।
केवल रूप अखण्ड में, मनुआँ लीन समाये॥
आपा पर एको होये, पूरन उस्तत पाऊँ।
अन्तर बाहर कीरती, नित ही चरन समाऊँ॥
दुर्मत की छाया मिटे, सम रस कीजूँ पान।
महमा तेरी में रसूँ, पार पुरख भगवान॥
नाम पदारथ खाये के, मन अभय पद पाये।
परसे इस्थिर धाम को, नहीं बौहड़ गवन में आये॥
अखण्ड धुन्न सत शबद में, सुरत करे बिसराम।
मारग परस अगम का, पाए लिया निज धाम॥
**पूरन पुरख परापती, मन चित पूरन होये।**
**'मंगत' महमा नाम से, भय भरम चित खोये॥1648**
माया भरम आपार से, सो निस्तर भए गुनवन्त।
निर्मल प्रीती जिन पाई, एक नाम भगवन्त॥
सत कर ठाकर पूजिये, नित करिये आदेस।
दाता सरब निधान है, काटे सकल कलेश॥
हिरदे में नित सिमरिये, साखी रूप आपार।
मंगल को नित देत है, वड साहिब दातार॥
सत सरूप आपे भयो, केवल नित निर आधार।
मन तन पावे शान्ती, जो चित मिले विचार॥
अगन सरूपी कामना, हिरदा करे अंगार।
तिस जन पाई शान्ती, जिन सिमरा सरजनहार॥
खल बुद्धी को त्याग के, मारग सहज पछान।
कारन कर्ता सिमरिये, पार पुरख भगवान॥
नाम प्रभू का सिमर के, तन मन शीतल होये।
पूरन भाग उस जीव के, जो निर्मल सार परोये॥
पूरन किरपा प्रभ करी, अपनी सूझ लखाई।

मिथ्या देह के अन्तरे, अपना आप दिखाई॥
सत साजन को सेवया, पूरन पाई सार।
दुरजन से सुरजन भया, ये मन मुगध गँवार॥
**घट अन्तर मन रसया, नाम पदारथ खाये।**
**'मंगत' पूरन भाग से, प्रेम प्रभु चित आये॥1649**
प्रेम प्रभू का पाए के, तन मन भयो निहाल।
प्रीती निर्मल नाम की, दीनी दीनदयाल॥
एको एक पछानया, सरब जगत आधार।
नित ही निर्मल ध्यान में, सिमरूँ सरजनहार॥
पूर मनोरथ सब भये, मन आया सत ठौर।
पाया पद निर्वान को, हरी काल की दौड़॥
बिस्माद ये रचना जगत की, पारवार ना पाई।
सन्तन की सत सीख से, निरना सार लखाई॥
अबगत धार शबद निर्वानी, सम सरूप परगास।
सरब व्यापक सरब न्यारा, आलख पुरख अबनास॥
अन्तर सुरती सुन्न समाई, द्वैत कामना नासी।
अछल अछेद पुरख निर्वाना, अगम जोत परगासी॥
शबद गुंजार होवे घर माहीं, मनुआँ लीन समाई।
पूरन पूर केवल प्रभ एको, सरब ठौर दिखलाई॥
दुर्मत भेद छाया सब नासी, घर आनन्द परगट होई।
परम परकाश शबद अबनासी, घट अन्तर दरसोई॥
सुन्न समाध अभय पद सूझा, जीव भयो कल्याना।
सतगुर सेव परम पद पाया, सत ठाकर निरवाना॥
**नित ही नित चरन समाई, छाड जगत की आसा।**
**'मंगत' दुबधा सब मिटी, घट पायो परम परगासा॥1650**
ज़ात वरन कुल किरया नासी, समता भेद पछानी।
प्रभ दाते संग प्रीत कमाई, सार धरम की जानी॥
ऊँच नीच का भरम चुकायो, सब में ब्रह्म परगासा।

गुर परसादी जीवन पाया, भेद भरम सब नासा॥
अपने मन की दुबधा काटी, नाम पदारथ खाये।
छिन छिन प्रीत चरन की पाई, दुर्मत रोग मिटाये॥
एको आस भरोसा भयो, एको सरब दिखाई।
सरब जियाँ की सेवा सूझी, निरनय धरम लखाई॥
दिवस रैन जतन सत धारी, समपद भेद पछाना।
परमानन्द पाया घट माहीं, अखण्ड शबद विज्ञाना॥
मारग कठन साहब का मीता, जीवत सीस उतारें।
एक निहों राखे प्रभ सेती, दुर्मत भरम निवारें॥
पंथ भेद का बाद त्यागें, समता रसना खाएँ।
पूरन सिमर के पूरन होवें, सब मन के दोख मिटाएँ॥
जीव आया संसार में मीता, नहीं सतपद भेद पछाना।
मोहे लिया परमादी माया, विच दुबधा जनम गँवाना॥
हिरखमान की अगनी माहीं, पल पल होत अँगारी।
पंथभेद की दुबधा माहीं, नहीं तत्त कियो विचारी॥
**बड़े बड़े गुनीजन दाने, सब ही खेद को धारें।**
**'मंगत' मारग शान्त भुला के, नित जनम मरन पधारें॥1651**
देह अभिमान ये दुर्मत माया, पल पल जीव गरासी।
पंथ भेद और वरन के मध में, नहीं परसे बन्ध ख़ुलासी॥
साचा धरम ये ही नर जानो, जो सत निश्चय सिखलाई।
दुबधा दुर्मत जीव तजे ये, तत्त आतम भेद लखाई॥
आतम पूजा आतम कीरत, आतम ठाकर जानी।
आतम ज्ञान पाये निस बासुर, मारग मुकत पछानी॥
सत निरनय पावे घट अन्तर, आतम पूजे जोई।
आवागवन का संशय नासे, नित निर्मल धरम परोई॥
सत विचार का पान करे नित, प्रेम का भोजन खाई।
पर-उपकार का बस्तर धारे, चित नित धीर समाई॥
वैराग की सम्पत नित नित संचे, सतनाम पाये भरवासा।
खिमा ग़रीबी संग साक बनावे, तत्त खोजे अबनासा॥

तन मन धन का मान त्यागे, दृढ़ निश्चय तीरथ नहाई।
साध संगत की धूड़ी बाँछे, सब ताप तपन मिट जाई॥
सरब सरूप आतम इक देखे, घट अन्तर सार पछाने।
कारन कर्ता सत कर पूजे, तब सार धरम की जाने॥
मन की दुबधा तृषना नासे, सुख दुःख सम कर सेवे।
उट्ठत बैठत सोवत जागत, आधार प्रभू का लेवे॥
**अन्तर चित सतनाम कमावे, नित देह का मान त्यागे।**
**'मंगत' गुरमुख साजन सोई, जो निर्मल धरम में जागे॥1652**
मारग जो कल्यान दिखावे, जीव का भरमन नासे।
निश्चल रूप परापत होवे, नहीं करम चक्कर दुःख भासे॥
सो ही साचा धरम पछानो, सो ही साची नीती।
काल करम से पाए ख़ुलासी, जो जन रखे परीती॥
आतम ध्यान करो दिन राती, सो सरब स्वामी देवा।
पीर पैग़म्बर वली ध्यावें, अवतार करें नित सेवा॥
योगी नित उठ योग विचारें, ज्ञानी ज्ञान बखानें।
सरब सार आतम तत्त पूजें, वार पार नहीं जानें॥
ऐसा पुरख सरब सनातन, घट घट पूर समाई।
तिस की पूजा जिस जन जानी, सार धरम तिस पाई॥
दृढ़ निश्चय आतम तत्त पूजे, सो निर्देह धाम समाई।
अपने आप की सोझी पावे, नहीं बौहड़ गवन को पाई॥
एक ना दूजा भरम दिखाई, सत तत्त नित परगासी।
पूरन करमी सार पछाने, नित अन्तर करे बिलासी॥
देह मन्दर की सोझी पावे, घर परगट जोत दिखाये।
परमानन्द में लीन समावे, सार धरम तब पाये॥
अन्तर बाहर एक परीती, शबद अखण्ड किलकारी।
सत साजन सत भेद पछाता, बिन मध रहे मतवारी॥
**अपनी भरमन आप त्यागी, सत मारग ज्ञान लखाई।**
**'मंगत' सार धरम तब सूझे, जब ऐसी रहनी पाई॥1653**

एक नाम जीवन तत्त ध्याया, मारग मुकत पछाता।
नित नित कीरत अन्तर सूझी, हरजन भयो रंगराता॥
शबद का सोहेला अन्तर सुनया, सहज सुन्न की घाटी।
इक चित होके निरत कमाई, अचरज लखी घर वाटी॥
परम परकाश अधिक धुन्न होवे, मन लीना विसरामा।
मारग गुपत सतगुर दिखलाया, पद परसा सत नामा॥
सार जुगत में लीन समाया, मन पवन इक कीना।
गगन गुफ़ा में किंगरी बाजी, परम पुरष घर चीना॥
सुरती अन्तर गगन समाई, सुने शबद धुन्न राग।
जीवत मिरतक दिशा पहचानी, पाया पूरन भाग॥
घर अन्तर घर पाया स्वामी, अखण्ड शबद निर्वान।
करम संदेसा सब गया, पाया सहज ध्यान॥
तीन भवन में भँवर गुंजारी, गुरमुख सोझी पाई।
जनम मरन का ताना टूटा, आयो प्रभ सरनाई॥
काल भय का बन्धन नासा, उनमुन घाट लखाया।
बजे बजन्तर भयो परगासा, अजर पुरष घर पाया॥
मन भयो मतवाला घर में, सुध बुद्ध बिसराई।
पूरन भाग पाया सत नाओं, निज घर आन समाई॥
**अगमपुर देश अनूपम ज्योती, शबद मेघला गाजे।**
**'मंगत' गुरमुख साजन कोई, जो सचखण्ड माहीं बिराजे॥1654**
एह बिध नाम कमावे जोई, सो मुकत धाम समाई।
दृढ़ विश्वास पाए गुर कहनी, निज मन को ठौर लगाई॥
सहज सुभाओ सतनाम कमावे, मन पवन का एका कीजे।
निहचल सुरती अन्तर राखे, प्रभ चरनी जीवन दीजे॥
सब कुछ प्रभ की दात पछाने, अपनी ममता त्यागे।
पल पल नाम रतन को पीवे, बुद्ध समता घर जागे॥
अपने आप का छेदन कीजे, प्रभ आधार नित पाई।
जाप अजपा जपे दिन राती, मन दुर्मत रोग मिटाई॥

अन्तर गुपत नित नाम कमावे, सब जियाँ की सेवा धारी।
निष्काम भाओ से प्रीत कमावे, तब नासे भरम बकारी॥
दीन ग़रीबी अन्तर राखे, प्रभ दाता सत कर पूजे।
सब कुछ आज्ञा तिसकी देखे, मान देही तब छीजे॥
छिन छिन अन्तर ध्यान लगावे, नाम पवन में मेले।
पूरन भाग तत्त परगट पावे, अखण्ड शबद अलबेले॥
तीखन सुरती शबद को पीवे, सब देह का मोह त्यागी।
सरब आधार नारायन देखे, गुरमुख सो वडभागी॥
आहार ब्यौहार में संजम राखे, सतनाम में निश्चय धारी।
अन्तर बाहर रसना पीवे, सत शबद सुखकारी॥
**अखण्ड ध्यान रमे चित चरनी, घट होवे परगासा।**
**'मंगत' रूप ब्रह्म समावे, सब भेद भरम होए नासा॥1655**
साची करनी गुरमुख धारी, सत मारग भेद लखाई।
भरमन त्याग पाया विश्वासा, प्रभ नाम की प्रीत कमाई॥
सरजनहार देही का जाना, नित आज्ञा चित मानी।
आपा त्याग पाई सत सेवा, नित सतगुर सीख पहचानी॥
पाप करम से मन को ठाका, नित सत्संग प्रीत विचारी।
बारम्बार जतन ये राखा, प्रभ चरनी लेख लखारी॥
सत विश्वास पाया चित निर्मल, इक नाम की शोभा पाई।
निमख निमख कर स्वामी ध्याया, सत मारग ज्ञान लखाई॥
दृढ़ निश्चे प्रभ चरनी लागा, पाये भले संजोगा।
साचा शबद भयो परगासा, नास्यो दुर्मत रोगा॥
आवागवन का चक्कर विनासा, घट नाम पदारथ पाया।
सरब कला समरथ स्वामी, दृढ़ निश्चे से ध्याया॥
एक बिरह प्रभ चरनी पाई, दूजी विसरी आसा।
निर्भय रूप परापत पाया, आद पुरख अबनासा॥
देह के अन्तर शोभा जानी, परम पुरख भगवन्ता।
बिमल नाद को अन्तर पीवे, मन पाई परसन्ता॥

वस्त अगोचर नाम स्वामी, सब मन की जलन निवारे।
जनम जनम का ताप विनासे, सत धाम में जीव पधारे॥
**पूरन प्रभ से मेला होवे, सब ताप तपन मिट जाई।**
**'मंगत' जतन यथारथ पाया, जिन हिरदे नाम कमाई॥1656**
आनन्द सरूप शबद घर पाया, आद पुरख प्रभ देवा।
निर्मल प्रीत राखी चित चरनी, पूरन पाई सेवा॥
अबगत नाद घट में परगासा, सतनाम की सोझी पाई।
छिन छिन सुरती ध्यान कमावे, सब दुर्मत जलन मिटाई॥
रोग लागा अत दीरघ जीया, सतगुर वैद मिलाये।
अमरत नाम की औखद दीनी, नित सिमर परम सुख पाये॥
चित लागा प्रभ चरनी माहीं, मन भले शगुन विचारी।
अपने आप की दुबधा काटी, नित सतगुर चरन पधारी॥
मन मतवाला भयो घर माहीं, सतनाम की चढ़ी ख़ुमारी।
परम पुरख शबद घर पाया, सत ठाकर निर्धारी॥
सेव करूँ नित ध्यान धरूँ, नित ही हुकम मनाऊँ।
परम समरथ सिमर के दाता, नित तिस चरन समाऊँ॥
भाग उदे जिन काज संवारा, प्रभ चरनी प्रीत लखाई।
नित नित सिमर के स्वामी अपना, सब मन की तपन बुझाई॥
नित सिमरो वडभागियो, शबद पुरख प्रभ देव।
मिथ्या इस संसार में, पूरन ये ही सेव॥
नाम ध्याइये आनन्द घर पाइये, परम भगत ये सार।
जो रत्ते प्रभ नाम के, तिन चरनी बलिहार॥
**मारग दुस्तर जगत ये, प्रभ नाम की पाओ ओट।**
**'मंगत' तत्त पछान कर, नहीं पायें काल की चोट॥1657**
धृग जीवन संसार में, जिन सत का भेद नहीं पाया।
भरम भुलेखे जनम गँवाया, मूरख अन्त पछताया॥
झूट परीती जग संग कीनी, ओड़क चला निरास।
महल अटारी छाड संघासन, भूमी लीना बास॥

रंग रंग भूखन त्याग के, अन्त को राख़ समाया।
मूरख बिन विचार के, विच संशे जनम गँवाया॥
जीवन है छिन पल घड़ी, उठ साचा सुख विचार।
सन्तन की सत सीख सुन, प्रभ नाम को हिरदे धार॥
साचा ठाकर नित सालाहिये, नित करिये आदेश।
खेम कुशल घर परगट होवे, नासें सकल कलेश॥
परम पदारथ नाम प्रभ, छिन छिन अन्तर धार।
मानुष चोला जगत में, दुर्लभ पाई सार॥
भरम चक्कर संसार से, उठ के मारग लाग।
पूरन प्रभ के रूप में, निर्मल प्रीत से जाग॥
समाँ गया नहीं पाएँगा, नित खोज परमपद सार।
साचा शबद पहचानिये, जो नित आनन्द भण्डार॥
अन्तर चित कर ध्याइये, सकल वासना त्याग।
गुरमुख साजन विरले, पाया परम अनुराग॥
**नित ही प्रेम कमाइये, केवल प्रभ दातार।**
**'मंगत' घड़ी सो सुफल है, जिस पल नाम विचार॥1658**
सुफल भयो जग जीवन पाया, इक नाम मिले आधार।
निमख निमख कर प्रीत कमाई, प्रभ पूरन दातार॥
मिटी भरम की दूषना, शबद मिला सत ठौर।
आनन्दघन परगट भया, काल को किया ठगोर॥
अन्तर निज सरूप में, सुरती लीन समाये।
सर्वज्ञ रूप पहचानया, एक शबद सुखदाये॥
परम भगत प्रभ चरन की, सहज रसी मन माईं।
पाया सत आधार को, हरी भरम परछाईं॥
शबद धुन्न में नित रमे, द्वैत कामना त्याग।
पाया पद निर्वान को, पूरन परगट भाग॥
करम वासना त्याग के, निहकरम पाया शुद्ध रूप।
नित ही प्रेम समाध में, मिटे भरम दु:ख कूप॥

अन्तर चानन होया, सुन्न शिखर के तीर।
जो बूझे इस भेद को, सो जन गुनी गहीर॥
साचा ज्ञान परापती, नित साचे मारग धाये।
काल कलेश त्याग के, प्रभ चरनी लीन समाये॥
कठन मारग संसार से, सो गुरमुख उतरे पार।
आसा जीवन त्याग के, जिन ध्याया सरजनहार॥
**नित ही मन को राखया, जिन प्रभ के चरन परोये।**
**'मंगत' पद निर्वान को, परस गये जन सोये॥1659**
जग जीवन को खोजिये, जो मानुष देह की सार।
सत सेवा उपकार चित, नित ही तत्त विचार॥
सतगुर बचन चित राखिये, तजिये देह का मान।
अन्तर जुगत नित सिमरिये, पतत पावन भगवान॥
माया अधिक गुबार है, जीव परम दुःख पाये।
मिल संगत सतपुरष की, हर चरनी प्रीत कमाये॥
अंतर नाम आराधिये, नित सुरत गगन को घाल।
अच्छर शबद घट ध्याइये, सब दुबधा मिटे कराल॥
रोम रोम में रस भरे, सत शबद निर्वान।
चंचल मन निश्चल भया, सतगुर सीख पहचान॥
दुर्मत मिटी दोहागनी, पाँच चोर भये नास।
साखी शबद पहचानया, जो जल थल करे निवास॥
पीर पैग़म्बर सिमरते, सत सरूप भगवन्त।
नित ही हिरदे ध्याइये, तजिये पाप अगिनत॥
मन में नित विचारिये, अखण्ड शबद निरंकार।
सुरती पवन में राखिये, तब पाइये तत्त सार॥
भरम की गाँठी सब खुले, जीव परमपद पाये।
बिछड़ा जनम अनेक का, प्रभ चरनी लीन समाये॥
मारग अन्तर खोजियो, मानसरोवर तीर।
बजे बजन्तर प्रेम का, सुरती भई गम्भीर॥

सो ही निर्मल देस है, जाँ नहीं व्यापे काल।
सत तत्त निरनय पाइये, चित सतगुर बचन को भाल॥
**अन्तर मनुआँ राखिये, पाइये शबद तत्त सार।**
**'मंगत' रसना जो रसे, तिस चरनी बलिहार॥1660**
मानुष जनम सुफल होवे, जब प्रभ दाता चित आये।
प्रभ के सिमरन कारने, ये दुर्लभ जीवन पाये॥
लाख चौरासी जन्त सब, करम भोग के माहीं।
मानुष देह की ऊँच गत, जो मारग मुकत लखाईं॥
इस जामे को धार के, प्रभ संग मेला पायो।
सिद्ध पीर अवतार सब, मानुष देह धर आयो॥
करम करें चण्डाल के, गहरा धरें अभिमान।
छूट कभी ना नर मिले, बिन सत करम पहचान॥
करनी साची नित करो, रख सतगुर की टेक।
मन की मैल उतारयो, साधन ये सत एक॥
कपट विकार त्याग के, सत सील चित धार।
दुर्जन का संग त्याग के, सत संगत विचार॥
पर-निन्दया पर-हान को, मन से कीजो दूर।
परहित जीवन धरम में, मन कीजो मख़मूर॥
प्रेम के रंग में रंग लो, ये चोला चतर सुजान।
बार बार नहीं पाओगे, उठ मारग खरा पहचान॥
जीवन जग दिन चार है, ओड़क सब अंधकार।
इक दिन सम्पत छाड के, करें भूमी पाये पसार॥
माल धन परिवार सब, इक दिन जाये छूट।
चलें निमाना जगत से, जम देवे सिर कूट॥
**कूड़ भरोसा क्यों धरा, जप लो सरजनहार।**
**'मंगत' कहे विचार के, ये जीवन सुख सार॥1661**
साचा नाम सिमर सुखदाई, जो सकले ताप मिटाये।
मानुष से भयो देवता, जो राम चरन चित ध्याए॥

सब साधन से ऊँच है, साचा नाम विचार।
प्रेम प्रीत चित में बसे, पलक ना विसरे सार॥
ब्रह्मा बिषन महेश्वर, एक नाम चित गायें।
चार वेद उस्तत करें, नाम कथा अरथायें॥
जिस साचा प्रभ नहीं सिमरया, धर के झूट अभमान।
जाए प्यासा अन्त को, ले भरम बिख खान॥
सत सरूप विसराये के, जीव परम दुःख पाये।
आवे जावे जगत में, फिर फिर जून भुगताये॥
सदा अशान्त मन रहे, धार के बिख की बास।
कूड़ विकार ना नर मिटे, बिन सिमरे अबनास॥
छाड सयानफ़ बावरे, राम चरन चित लाओ।
सो ही सरजनहार है, पततपावन सुखराओ॥
नाम सिमर सुख उपजे, मन में धीरज आये।
गवन मिटे संसार की, जो सत सेव कमाये॥
उट्ठत बैठत सिमर लो, ना करो पलक भरवास।
पल पल औधी जात है, छीजत हैं नित स्वास॥
**घड़ी अमोलक सो गुनी, जो प्रेम भगत चित आए।**
**'मंगत' लाभ इस देह का, पल पल लयो कमाए॥1662**
सतगुर बचन हिरदे धरो, मारग पाओ कल्यान।
गुर सम दाता ना कोये, जो खोजें तीन जहान॥
डूबे जन को राखया, दे शबद आधार।
अन्तर में चानन किया, दूर हूआ अंधकार॥
बिछड़ा जनम अनेक का, प्रभ चरनी मेल मिलाये।
सतगुर की सुन सिखया, जीव अभय पद पाये॥
जलन मिटी सब जीव की, तन मन ठाँडा होए।
दीन ग़रीबी बन्दगी, सत मारग लयो परोये॥
नित आनन्द पाया परमेश्वर, सतगुर के परसाद।
गुर उस्तत हिरदे रसे, मन के मिटे विखाद॥

साचा मित्तर साचा स्वामी, तीन लोक में एक।
नित ही गुर के चरन की, राखो मन में टेक॥
भय भरम दुबधा हरे, चार पदारथ पाये।
सतगुर चरन परीत से, नित ही विजे लखाये॥
और जतन सब छाड के, गुर की सीख विचार।
भव जल गहरी भीत है, सहज में उतरें पार॥
गुर खेवट संसार का, पल में करे उद्धार।
बलिहारी सो जीव है, जो गुर के चरन पधार॥
**आध व्याध सकली मिटे, नित पाइये विश्वास।**
**'मंगत' सिखया सार ये, सब कारज पावें रास॥1663**
सतगुर की सत दीखया, पाया निश्चल धाम।
धारा शबद पहचान के, जीव लिया बिसराम॥
बिमल नाद घट सूझया, तत्त भगती पाई सार।
एक नाम आराधया, पूरे गुर उपकार॥
नाम आहारी जीवड़ा, उपरस परसे ठौर।
तृपत भया घर आए के, प्रेम भगत चित जोड़॥
पूरन दीनदयाल प्रभ, घट में सोझी पाई।
सतगुर के परताप से, जन बिछड़ा मेल मिलाई॥
गुरमुख मारग घालया, नाम रतन तत्त खाये।
दुबधा मिटी शरीर की, मन निर्भय धाम समाये॥
अन्धकार रूप अज्ञान से, सतगुर कीना पार।
अन्तर पाया चान्दना, अखण्ड शबद निर्धार॥
तृखा मिटी सब जीव की, नित आनन्द प्रभ पाये।
सिमर सिमर निर्भय भयो, नित ज्ञान पदारथ खाये॥
निश्चल घाट पहचानया, सत शबद निर्वास।
परमानन्द घट पायो, प्रभ चरनी लयो निवास॥
अपने रूप मिलाया, त्याग कल्पना द्वैत।
पूरन किरपा साध से, जीव भया निर्लेप॥

**अखण्ड शबद निर्वान में, नित नित लीन समाये।**
**'मंगत' सो निज धाम है, परम पुरख कोई पाये॥1664**

मारग निर्भय खोजिये, जो सकल व्याध निवारी।
एको निर्मल नाम में, नित सुरत रहे मतवारी॥
पूरन ठाकर सेविये, पाइये पूरन धाम।
सुफल जनम संसार में, जो मिले शबद बिसराम॥
शबद अबनाशी नित निरालम, अपने आप समाये।
घट घट व्यापक नित परकाशी, कोई गुरमुख सार लखाये॥
साचा शबद जिस जानया, तिस जन पूरे भाग।
त्याग के भरमन जगत की, निज घर पाई जाग॥
सुरती अन्तर में रसी, शबद सुनी धुनकार।
मिरतक से जीवन मिला, मिल सतगुर सीख विचार॥
अपने धाम समाया, दुर्मत छाया नास।
नित आनन्दघन शबद में, पल पल कियो निवास॥
निर्भय भयो घर आय के, सतनाम को कीना पान।
तत्त शबद परगासया, पार पुरख भगवान॥
अत बिस्माद महमाँ भई, घर पाया पुरख आगाध।
रसना झरे प्रेम की, सब मन की मिटी उपाध॥
काया मन्दर अन्तरे, अबगत चानन पाई।
दुर्लभ सो जन आया, जिस एह बिध रसना खाई॥

**अगम शबद परगट भयो, देह देवल में मीत।**
**'मंगत' तत्त पहचान के, भव जल पाई जीत॥1665**

प्रभ दाता सदा ध्याइये, जो सरब काल रखवारी।
पल में संकट नाश करे, अत किरपानिध दातारी॥
जिसका सब कुछ रचया, नित तिस की राखो टेक।
करूनाकर समरथ स्वामी, सबको जीवन देत॥
सकल पदारथ का दातारी, सो दाता दीनदयाल।
पलक पलक में सुख वरताये, सो साहब किरपाल॥

अंतरगत में सिमरिये, पूरन पुरख गोबिन्द।
एको सरब में पसरया, धारे पिण्ड ब्रह्मण्ड॥
पूरन कला को धार के, नित पूरन सरब समाई।
अत दाता प्रभ एक है, नहीं महमा वरनी जाई॥
रे मन मेरे रहो प्रभ सरनी, और कल्पना त्याग।
जिसने खेल रचाया, तिस चरनी नित लाग॥
प्रभ की भगत आनन्द की खानी, मन तन शांत समाई।
पूरन आसा भयो मन निर्मल, जिन सुकृत सेव कमाई॥
दिवस रैन प्रभ नाम ध्यायो, जो कर्ता आद जुगादी।
पूरन ओट राखो तिस चरनी, सब दुर्मत मिटे उपाधी॥
सतगुर सीख एक नाम को सिमरो, मन चित प्रीत लगाये।
अन्तर आनन्द परगट होवे, सब खेद जीव का जाये॥
**जीवन माहीं नित सिमरन कीजो, प्रभ पार स्वामी देवा।**
**'मंगत' मनसा पूरन होवे, जो परसें निर्मल सेवा॥1666**
एको दाता परमेश्वर मेरा, जो संकट सकल निवारी।
नित बलिहार जाऊँ तिन साजन, जिन निर्मल प्रीत विचारी॥
नाम रत्ते सो जन वडभागे, नित निर्भय धाम समायें।
तिन की कीरत दुर्लभ जग में, जो शोभा प्रभ की गायें॥
अगन सरूप ये जगत का मारग, प्रभ भगत ठाँड वरताई।
पूरन करमी साजन भये, जिन रसना प्रेम की खाई॥
निर्मल चित नित नाम में लागे, तृपत घर कीना वास।
सो गुरमुख नित प्रेम रंगराते, नहीं बौहड़ गवन पाएँ फाँस॥
सत मारग में राखी प्रीती, सत ठाकर सिमर अखण्ड।
जनम मरन का मिटे बखेड़ा, पद पाइये परमानन्द॥
गुनी मुनी नित लेख विचारें, प्रभ कीरत सार लखायें।
वडभागी सो रसना खायें, जो जीवत आस बुझायें॥
नित ही आज्ञा मन में राखें, अपना आप गँवावें।
नाम कीरत में मर के जीवें, तब निर्भय धाम समावें॥

दुर्मत रोग जाए अत संकट, जीव अभय पद वासी।
धन्न साजन जिन कार पछानी, प्रभ चरन में लयो निवासी॥
अपने जन को सुकृत कीना, नित पूरन रूप मिलाये।
परगट छबी करी घर भीतर, नित सिमर सिमर सुख पाये॥
**अबगत धाम परापत पायो, आद पुरख अबनाशी।**
**'मंगत' चरन कँवल में लागा, नित शोभा चित परगासी॥1667**
आपामती त्याग के, नित मारग ज्ञान विचार।
नित ही प्रभ के नाम की, निर्मल कीरत धार॥
जग रचना ये अचरज खेला, इस्थिर रहे ना कोई।
राजे राने गुनी सयाने, नित काल के चक्कर फिरोई॥
देह सुन्दर छिन राख भई, नहीं चली कोई तदबीर।
आस अंदेसा ना गया, नर रोवत जाए आख़ीर॥
होवें निमाने अन्त को, जिन सिर छतर झुलंत।
सब ही बाज़ी हार गये, बिन सिमरे भगवन्त॥
छाया सम प्रीती पाई, इस मिथ्या जग में आये।
संग सखा ना कोई भयो, जब झूला काल झुलाये॥
नौबत है दिन चार की, गुनीजन लयो बजाये।
इक दिन चलना होयगा, साजन नाँगे पाये॥
छाड़ कपट के भेख को, नारायन धर चीत।
निर्मल संगत में रमो, गायो प्रभ के गीत॥
साचा सरजनहार सो, नित आनन्द सरूप।
अंतर चित में ध्याइये, छाड कल्पना कूप॥
दीन दु:खी की सेव में, दृढ़ कर राखो चीत।
आज्ञा माने साहब की, भव जल पावें जीत॥
**हिरदे नाम बखानिये, सुनिये सतगुर बोल।**
**'मंगत' शबद समाइये, मिटे चौरासी ख़ोल॥1668**
दुस्तर रचना जगत की, कोई पारावार ना पाई।
अनक जतन कर गुनीजन हारे, नहीं निरनय सार लखाई॥

ओड़क तत्त विचारया, शान्त रूप भगवन्त।
घट घट बासी आनन्दमूरत, नित नित नाम जपन्त॥
नाम बिना ना थाहे कोई, ना कोई पावें ठौर।
मन की भरमन जगत ये, नित राखे अत दौड़॥
जेती मन में कल्पना, एता जग बिस्तार।
मूढ़ अर्थ ना पा सके, नित बाज़ी जूए हार॥
मन मनोरथ नित नये, तृष्ना उठें तरंग।
भरमे अनमत जीवड़ा, धर दुर्मत माया संग॥
क्रोध अगन परचण्ड होवे, जीव जले दिन रात।
माया मोह के भरम में, नित ही फिरे अनाथ॥
लाख करोड़ी संचत करी, मन नहीं आया धीर।
चार कुण्ट उठ धाँवदा, रहे आठ पहर दिलगीर॥
माया भरम अंधकार में, औध गई सब बीत।
रंचक मिली ना शान्ती, सब झूट भई परतीत॥
ना साजन की सीख सुनी, ना निज मन किया विचार।
जग सुपने में आए के, नहीं परसी सुख सार॥
**मिथ्या मान गुमान में, उठ चला निरासा अन्ध।**
**'मंगत' प्रभ के नाम बिन, नहीं चूके जम की फन्ध॥1669**
निर्भय कभूँ ना नर होये, बिन आतम राम पहचान।
देह ममता के मद्ध में, फिरे चौरासी खान॥
करम का बन्धन अत पाये, नित भोगे बहु भोग।
बिना तत्त विचार के, नित ग्रसयो दीरघ रोग॥
बिन संगत सतपुरष की, नहीं तत्त सार लखाई।
माया की भरमन माईं, सब जीवन दियो विताई॥
अन्त को रोवत क्या बने, नहीं जीवत करी सम्भाल।
ना प्रभ दाता सेवया, ना सत घाली घाल॥
आस संदेसा ले चला, अन्त को जीव अनजान।
दु:ख सुख करनी का पाए, बहुरंग जून पछान॥

ये रचना संसार की, उठके गुनी विचार।
परमारथ की प्रीत में, तन मन दीजो वार॥
सत मारग पहचान के, नित ही खेलो दाओ।
परसें आनन्द ठौर को, अखण्ड शबद सुखराओ॥
मानुष देह की कीरती, जो चित नाम समाये।
सत स्वामी की सेव में, पल पल घड़ी विहाये॥
अपने घट में सोधिये, सरब जगत का ईश।
नित ही निर्मल ध्यान में, पाइये नाम संदेश॥
**पूरन सेवा पाये के, हरजन भये निहाल।**
**'मंगत' मिली सत शान्ती, प्रभ पाया दीनदयाल॥1670**
परगट भयो स्वामी घर अपने, मधुर धुनी होए राग।
अन्तर सुरती प्रेम समाई, प्रभ दाता पाये सुहाग॥
छिन छिन निरख निरन्तर देखे, निर्भय शबद आनादी।
अन्तर में अन्तर सुख पाया, महमा अत बिस्मादी॥
अन्तर मारग सुरत समाई, नित नाम रतन को खाये।
अकथ कथा का भेद पछाने, घर परगट नाद ध्याये॥
काया मन्दर में शबद परगासे, मनसा भई लवलीन।
अटल ध्यान परगट तत्त पायो, नाम सार कियो चीन॥
विगन दोष सब मन के नासे, घट जोती परगास।
राग अनन्त होवें घर माईं, जीव अभय पद वास॥
सचखण्ड में जाये वास करीना, शबद पाई तत्त सार।
अमरत पान करे नित जीया, नित निर्मल नाम विचार॥
एक आधार अन्तर में सूझा, अखण्ड शबद निर्वानी।
परम प्रकाश तत्त सरब समाया, गुरमुख सार पहचानी॥
शुद्ध सरूप पायो अबनासी, काल करम दुःख नासे।
अन्तर ध्यान मन मगन समाया, नित नित चरन बिलासे॥
तन मन अर्पण कियो गुरचरनी, तब अन्तर सोझी पाई।
सतनाम में जीवन त्यागा, आयो प्रभ सरनाई॥

**बाजी कठन प्रेम की मीता, कोई जन जीत को पाई।**
**'मंगत' आसा जीवन त्यागी, जिन रसना नाम की खाई॥1671**

प्रेम प्रभू का जिसने पाया, सो जन तृपत समाई।
निमख निमख हरिचरन चितारे, अन्तर ध्यान लगाई॥
आसा मनसा सकल त्यागी, पद पायो निर्धारी।
एक ओट चरन की राखी, नित नाम जपे सुखकारी॥
सुरती अन्तर शबद समावे, देह ममता को त्यागी।
अपने आप की सोझी पावे, सो गुनी वडभागी॥
साचा ठाकर अन्तर पूजे, इक चित धरे ध्याना।
ज्ञान विज्ञान का भोजन खावे, सो जन भये कल्याना॥
अजर पुरष शबद घर पायो, सरब जगत का स्वामी।
पततपावन की प्रीत कमाई, जीव पायो बिसरामी॥
नौ किवाड़ से सुरती ठाकी, दसवें घाट ठहराई।
प्रान की माला फिरे निरन्तर, अखण्ड नाम नित ध्याई॥
परगट शबद होवे अबनाशी, जो सत सेव कमाये।
मन पवन का एका करके, सुन्न के धाम समाये॥
जप जप जीवे स्वामी अपना, त्याग भरम की खानी।
अन्तर बाहर नाम कमावे, नित एक आधार पहचानी॥
अनन भगत में पायो बिसरामा, आपा पर को त्यागी।
परम ज्ञानी सो ही जन सूरा, जो एह बिध रहनी लागी॥

**नित ही प्रेम अखण्ड कमावे, सब करम वासना नासी।**
**'मंगत' सो जन तत्त्व समायो, प्रभ नाम सिमर अबनासी॥1672**

नाम प्रभू का मन में सिमरो, मारग ज्ञान पछानो।
एक टेक राखो चित अन्तर, दृढ़ कर आज्ञा मानो॥
परम भगत परापत होवे, परगट स्वामी देखो।
जनम मरन का ताप विनासे, नित आनन्द रस पेखो॥
भरमत जीव का नहीं ठिकाना, नित आवे नित जाई।
बिना भगत प्रभ पार स्वामी, कभूँ ठौर नहीं पाई॥

कारन कर्ता सिमर बिशम्भर, सब मन के संकट नासे।
पूरन सेव करो दिन राती, प्रभ चरन कंवल अरदासे॥
होवे दयाल पूरन प्रभ देवा, सब जीव के बन्ध छुड़ाई।
अन्तरगत निज रूप मिलाये, अखण्ड शबद सुखदाई॥
अपने घर की सोझी पाई, सब दुर्मत चक्कर विनासी।
अनहद नाद पायो घट भीतर, पूरन प्रभ अबनासी॥
नित ही नाम रतन को पीवे, गुरमुख मारग सूझे।
अगन तृष्ना मन की नासे, निर्भय नाद को पूजे॥
अबगत पुरख परापत पाया, सरब कला समराथा।
अन्तरगत में सार लखाई, प्रभ पार पुरख बिधाता॥
नाम का सिमरन नाम की पूजा, नाम का ध्यान कमाया।
निर्भय नाम भयो परगासा, अनहद मंगल गाया॥
**उठ साजन सत देस विचारो, जाँ काल करम नहीं छेदा।**
**'मंगत' एको एक पछानें, सब दुर्मत का जाये भेदा॥1673**
दुर्मत भरम में जीव भुलाया, नाम रतन नहीं पीवे।
मोह माया का धर भरवासा, अत संकट नित लीवे॥
एक पलक की धीर नहीं आवे, अनंक जतन नित धारी।
अन्तरगत नहीं भेद पछाने, नित भरमे अन्धकारी॥
सो जन सुगढ़ सुजान पछानो, जिस घर की सोझी पाई।
समता ज्ञान की रसना खा के, अखण्ड विजे लखाई॥
सब शत्रु का भय त्यागा, निज रूप में साजन जागा।
सतगुर सेव परमपद पाया, मारग सुकृत लागा॥
इच्छया चिन्ता सकल निवारी, त्रैगुन ममता नासी।
निर्भय नाद पाया निर्वानी, आद पुरख अबनासी॥
छिन छिन मन की दुर्मत धोई, समता रसना खाई।
जीवत मिरतक दिसा पहचानी, नित प्रभ के रूप समाई॥
निर्भय शबद अखण्ड अबनासी, घट माहीं भयो परगासा।
निर्मल चित से सेव कमाई, करम बन्धन होये नासा॥

अन्तर सुन्न समाधी पाई, शबद भेद अर्थाई।
अखण्ड धार में लीन समाया, लखी नाम प्रभताई॥
निर आधार बानी घर होवे, कहन कथन कछु नाहीं।
देख के लीला मन मगन समाया, त्याग भरम परछाईं॥
**पद परसा नारायन का, जग पूरन काज सँवारे।**
**'मंगत' भयो मंगल घर माईं, नित जाऊँ चरन बलिहारे॥1674**
पूरन प्रभ की सेव कमाओ, नित वेद ग्रन्थ पुकारें।
नित सरनागत होवें स्वामी, बौहड़ गरभ नहीं धारें॥
सत सरूप अन्तर परगासा, नित पूरन पूर समाई।
सरब व्यापक सरब न्यारा, आद पुरख सुखदाई॥
सुरती अन्तर प्रेम कमावे, देह ममता को त्यागी।
करम त्याग निहकरमत जानी, सो पूरन बैरागी॥
अखण्ड ध्यान अन्तर चित रसया, अत चढ़ी प्रेम ख़ुमारी।
बिमल नाद की तान होवे घट, कोई विरला करे विचारी॥
मन देह से अत परे पछाना, अखण्ड शबद निर्वानी।
ताँ में जाँ की विरती लागी, सो ही सन्त ज्ञानी॥
बन्धन से मुक्ता भया, सच खण्ड में लीन समाई।
अनहद नाद रमत सुख पाया, सत मारग ज्ञान लखाई॥
तिस सुख को मुनि देव ध्यावें, सनकादिक नित पूजे।
परगट पायो सो अन्तरयामी, घट घट सो ही सूझे॥
निज सरूप घर परगट पाया, सहज ध्यान लगाई।
उट्ठत बैठत सोवत जागत, अन्तर निहूँ लखाई॥
परम परगास गगन में होवे, नित सुरती प्रेम कमाये।
सत ठाकर का दर्शन करके, सब मन की तपन बुझाये॥
अचरज कौतक घट अन्तर पाया, बिना रूप पुरख इक देखा।
सब जग लीला तिसकी जानी, सो घट घट बसे अलेपा॥
अखण्ड समाधी शबद पहचानी, प्रभ पायो निर्मल धामा।
ग्रहन त्याग गई चित दुर्मत, विरत भई निष्कामा॥

छिन छिन प्रभ की कीरत सूझे, दूजा भाओ विनासी।
सरब जगत में सो ही दरसे, पार पुरख अबनासी॥
अघट प्रेम मन मगन समायो, छाड द्वन्द परमादा।
सर्वज्ञ रूप पूरन दिखलाई, तत्त परसा अगम आगाधा॥
जोगी जती नित ध्यान कमावें, लीला लखी नहीं जाई।
अपना आप भयो परगासा, सब दुर्मत खेद मिटाई॥
अजर पुरष अबनाशी पायो, जो रोम रोम रमनाई।
अबगत महमा प्रभ की जानी, सो जल थल पूर समाई॥
**आसा पूरन पायो बिसरामा, सत ठाकर मेल मिलाये।**
**'मंगत' अन्तर भयो परगासा, नित नाम पदारथ खाये॥1675**
नाम का सिमरन जिस जन पाया, सो पूरन करमी मीत।
छाड के दुबधा सत मारग लागा, प्रभ चरनी पाई परतीत॥
खेम कुशल घट परगट होई, चित निर्मल सेवा धारी।
दीन ग़रीबी में वास करीना, नित मारग ज्ञान विचारी॥
जीवन में सत कथा बखानी, मन लीनी परसन्ता।
दृढ़ निश्चय गुर सीख पहछानी, प्रीत पाई भगवन्ता॥
सत कर जाना ठाकर पूरन, सब लीला तिस वरतारी।
दीनदयाल की सेवा सूझी, मन उतरे पाप अपारी॥
जग आवन की सार को जाना, प्रभ भगती लेख पछाता।
निर्मल नाम की कीरत गाई, मन प्रेम भयो रँगराता॥
अन्तर बाहर ओट पछानी, सत स्वामी के चरन ध्याई।
सो करतार सरब आधारी, घट शोभा अचरज पाई॥
मिल सत संगत महमा पाई, इक नाम की रसना खाये।
दीनदयाल घट परगट पायो, अत प्रेम से मंगल गाये॥
हरजन साजन विजे लखाई, सब मन के रोग निवारे।
भरमन त्याग तत्त अन्तर सूझा, सतनाम सिमर सुखकारे॥
निर्मल प्रीत पाई सत देवा, नित निर्मल ज्ञान विचारी।
प्रभ की आज्ञा दृढ़ कर मानी, सब मन की हरी बिकारी॥

द्वन्द कल्पना सकल त्यागी, प्रभ नाम आधार समाई।
अन्तरगत में भयो परगासा, शबद सार लख पाई॥
शबद निरालम पार पुरातन, सरब जगत का स्वामी।
देह के अन्तर सोझी होई, प्रभ भगत मिली निष्कामी॥
तन मन अर्पण कियो प्रभ चरने, मोह माया मद त्यागी।
जनम जनम का मिटा संदेसा, प्रभ चरन में सुरती जागी॥
मगन भयो प्रभ नाम ध्याये, घट आलख शबद पछानी।
निर्मल चित से सेव कमाई, पायो पद निर्वानी॥
परम परकाश शबद तत्त सूझा, सब देवन का देवा।
भाओ भगत सत कथा लखाई, पाई निर्मल सेवा॥
**अखण्ड प्रीत पाई प्रभ चरनी, निमख निमख तत्त ध्याई।**
**'मंगत' दुर्लभ तिनकी कीरत, जिन हर की भगत कमाई॥1676**
प्रभ भगती पायो अनुरागा, मन भले संजोग विचारी।
जग जीवन की लीला देखी, ओड़क छार पधारी॥
सत सरूप की प्रीती जागी, मिथ्या भरम को त्यागी।
साध संगत मिल महमा जानी, प्रभ भगत में मनुआँ लागी॥
कारन कर्ता तत्त अबनाशी, घट में सार लखाई।
अत ही प्रेम से नाम कमाया, सब दुर्मत रोग मिटाई॥
देह मन्दर की सोझी पाई, घट पूरन साहब जाना।
कर्ता हर्ता सरब स्वामी, निर्मल तत्त पछाना॥
रैन दिवस प्रभ चरनी लागा, अकथ कथा घट जानी।
अन्तर सुरती प्रान समाई, प्रभ नाम जपत निर्वानी॥
नौ द्वार से अन्तर आया, ये मन मूढ़ अज्ञानी।
सत ठाकर को घर में पाया, सब दुबधा लीन समानी॥
अन्तर शबद भया परगासा, मारग गुपत लखाया।
सरजनहार पाया घर माहीं, सब दुर्मत खेद मिटाया॥
पिण्ड ब्रह्मण्ड में सम परकाशे, सो अबनाशी देवा।
अन्तर चित नित लेख लखाया, निर्मल पाई सेवा॥

सरब जगत में सो बिसरामी, अखण्ड शबद निर्धारी।
नित नित नाम जपूँ प्रभ देवा, सब तृष्ना रोग निवारी॥
सब कुछ हुआ प्रभ से जाना, आपा भाओ त्यागा।
मारग सहज मुकत का पाया, प्रभ भगती में मन लागा॥
इच्छया करम का बन्धन नास्यो, घर शबद समागम पाई।
तत्त निरंजन नाद पछाना, भरम आवागवन बिनसाई॥
नाम पदारथ से जीवन पाया, अन्तर मारग जाता।
सुन्न अस्थान घर आसन कीना, हर चरनी भयो रंगराता॥
राग छतीसों घर अन्तर होवें, नित मेघ करे किलकारी।
दामन दमके भयो परगासा, सतनाम की कथा विचारी॥
देस अगम में वास करीना, सब काल करम दुःख नास।
निश्चल ध्यान पाया सत ठाकर, अखण्ड शबद निर्वास॥
**निर्मल धाम परापत पायो, आलख शबद अबनासी।**
**'मंगत' समता तत्त पछाना, सब दुर्मत छाया नासी॥1677**

## बानी सार अमरत

समता तत्त बानी परगट भई, सब सिद्ध मुनी तृपताये।
सुन रसना निर्मल ज्ञान की, चित प्रेम समाध लखाये॥
सत सरूप की अचरज महमा, तत्त बानी भेद विचारी।
निर्मल चित से श्रवन करे जो, सत मारग ज्ञान पधारी॥
भरम भय का नास करे, तत्त आतम पाये विश्वासा।
बुद्धी निर्मल सत धर्म विचारे, घट शबद होये परकासा॥
भरम का खण्डन सत का मण्डन, तत्त बानी ज्ञान समझाई।
पढ़े सुने कीजे निध्यासन, सो जीव परमपद पाई॥
जीवन सार परापत होवे, नित निर्मल मारग बोधे।
सकल विकार विखेपत नासे, जो बानी रसना सोधे॥
निर्भय ज्ञान अन्तर परकासे, सब मोह माया भ्रम दूरे।
सत सील संतोख चित आवे, जप उस्तत पुरख हज़ूरे॥

आलख सरूप अजर अबनासी, चेतन परकाश बिसमादी।
अनन प्रीत से भगत कमावे, सब मन की मिटे व्याधी॥
मारग सहज बानी समझावे, सब धरम करम की नीती।
दृढ़ निश्चे जो सार विचारे, नहीं परसे भरम कुरीती॥
बन्ध मुकत का भेद पछाने, नित समता रसना खाई।
सकल मनोरथ तिसके पूरे, जो अर्थ सार लख पाई॥
देह ममता का त्याग करे, तत आतम प्रीत लखाये।
जीवन मुक्त आनन्द को पावे, सब मन की तपन बुझाये॥
एक आतम का होवे विश्वासी, चित पर सेवा नित धारी।
पोथी पाखान मढ़ी नहीं पूजे, सो समता ज्ञान विचारी॥
अन्तर चित सतनाम निध्यासे, नित शबद की रसना खाये।
पर-उपकार में तन मन अरपे, नहीं बौहड़ गरभ को पाये॥
मानुष जनम की कीरत निर्मल, जो सतसंग का मिले प्यार।
रलमिल संगत प्रभ उस्तत गाइये, सब कलह कलेश होयें छार॥
एक आतम सब माईं परकाशे, इत उत जो रचनाई।
सरब जियाँ संग हेत लखाये, सत धरम पाए वडयाई॥
जीवत में सत करम कमाये, परसुख नित चित धारे।
स्वारथ भरम का होए विनासा, परमारथ निर्मल सार विचारे॥
नित ही बुद्धी होवे सुतन्तर, सत तत्त प्रेम लखाई।
अन्तर बाहर नाम तत्त सूझे, इक लखे साहब प्रभताई॥
अगोचर ज्ञान पुरख अनादी, तत्त बानी लेख विचारी।
गुरमुख जीवन जग में परसे, पाए जनम मरन छुटकारी॥
अबगत पुरख की महमा सूझे, नित मन पावे परसन्ता।
जग जीवन की सार पछाने, इक सिमरे पुरख बेअन्ता॥
प्रभ की आज्ञा दृढ़ कर ध्याये, ज्यों साहब वरतावे।
सत साधु की प्रीत पछाने, दुःख सुख में धीर लखावे॥
समता धरम का जीवन पाये, सब बादमुबाद होए नासा।
मन अपने को निर्मल कीजे, तत्त ज्ञान पाये परकासा॥

**अन्तरगत में चानन होये, हरजन निर्भय धाम समाये।**
**'मंगत' नित आनन्द प्रभ, घट सिमर सिमर सुख पाये॥1678**

सातवाँ अंग

** समता विज्ञान योग समाप्त हुआ **

# ग्रन्थ

# श्री समता प्रकाश समाप्त हुआ

सत आज्ञा निरंकार

ब्रह्म सत्यम्  सर्व आधार

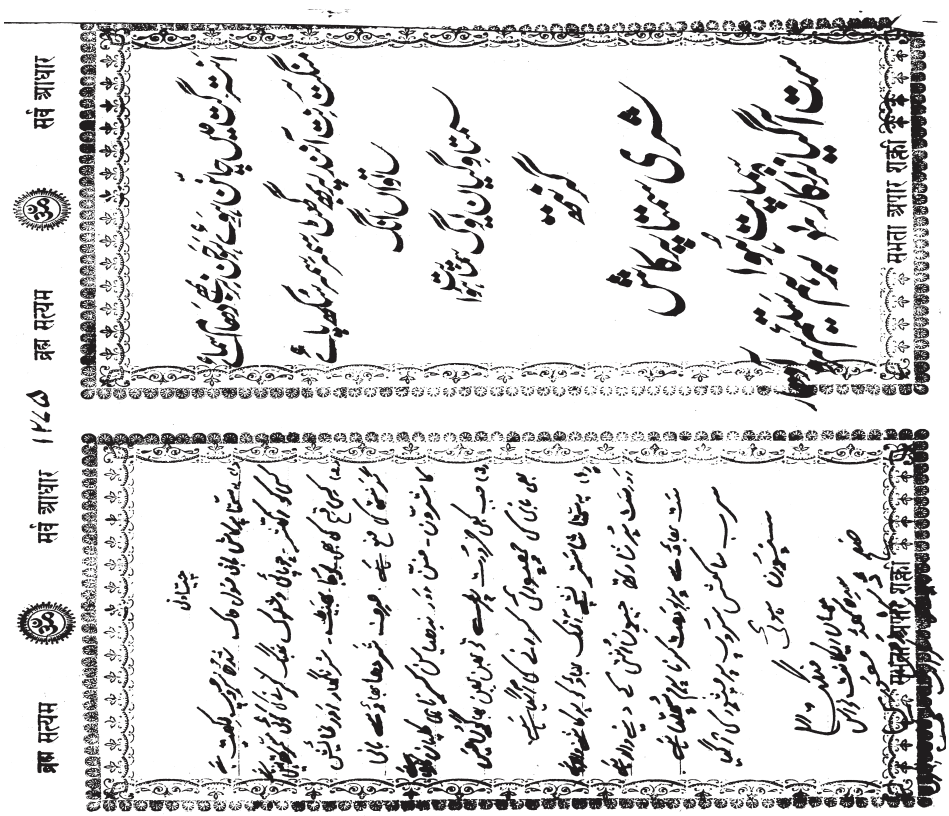

*'श्री समता-प्रकाश' की मूल पाण्डुलिपि का अंतिम पृष्ठ, इस पृष्ठ पर*
***श्री सतगुरुदेव पूज्य मंगतराम जी महाराज** के करकमलों से*
*लिखी गई चेतावनी हस्ताक्षर सहित अंकित है*

*'श्री समता-प्रकाश' की मूल पाण्डुलिपि का अंतिम पृष्ठ, इस पृष्ठ पर*
***श्री सतगुरुदेव पूज्य मंगतराम जी महाराज** के करकमलों से*
*लिखी गई चेतावनी हस्ताक्षर सहित अंकित है -*

निम्नलिखित उस का हिन्दी रूपान्तर है :-

# चेतावनी

(1) ये समता प्रकाश बानी मूल-वॉक शुद्ध सरूप लिखित है। किसी को अक्षर, चौपाई व श्लोक भंग करने की कोई समरथ नहीं है।

(2) किसी किस्म की भी पूजा, भेंट, श्रृंगार और नमायश ग्रन्थ की मना है। सिर्फ श्रद्धा भाव से बानी का श्रवण, मनन और निध्यासन करना ही कल्याणकारी है।

(3) जब कभी ज़रूरत पड़े तो भिन्न-भिन्न भागों में भी बानी की छपवाई कराने की आज्ञा है।

(4) ये समता शास्त्र निश्चयात्मक भाओ को प्रकाशने वाला है और सत पुरषार्थ जीवन उन्नति के देने वाला है।

सत भाओ से प्रबोधित करना परम सुफलता है।

सरब साक्षी सरूप परमेश्वर की आज्ञा सम्पूर्ण हुई।

ह0 मंगतराम (उर्दू में)
समां एकान्त निवास, सिद्ध खड्ड-मसूरी
जिला देहरादून।
बैसाख संक्रांत संवत २००५ बिक्रमी

# विषय सूचि वर्ण-क्रम अनुसार (विस्तार पूर्वक)


| विषय | पृष्ठ संख्या |
|---|---|
| **अ** | |
| असत माया संसार | 13 |
| अरदास | 282-3, 782, 827-28 |
| अशान्त जीवन | 288 |
| अवगुणहारी मन से छूट | 386 |
| अशान्तमयी चलन | 444 |
| अशान्ति मन की कैसे दूर हो | 359-60 |
| अन्धकार कैसे दूर हो | 623-24 |
| अन्धकारमयी जीवन | 687 |
| अरदास निज ठाकुर की | 762 |
| अशान्ति वर्धक यत्न | 797-8 |
| अन्तरमुखी और वाहिरमुखी अवस्था | 873 |
| अनादि पुरुष की वडियाई | 883 |
| अन्तरगति योग युक्ति | 926-8 |
| अशान्तिदायक सांसारिक सुख | 933-4 |
| अनगिन्त नाम महिमा | 1070 |
| अविनाशी तत्त्व प्राप्ति का फल | 1197-8 |
| अवधूत सचखण्ड वासी | 1170-1 |
| अनुराग और वैराग्य (मिश्रित) | 1265 |
| **आ** | |
| आदेश (सामान्य) | 51 |
| आत्म तत्त्व वर्णन | 53 |
| आत्म पूजा का महत्त्व | 137-8 |
| आरती सत् शबद की | 213 |
| आरिफ पूरा | 235 |
| आदेस निज रूप को | 267-8 |
| आज्ञा प्रभु में जीवन | 285, 419 |
| आहार की पवित्रता | 305-6 |
| आत्म धर्म | 465-6 |
| आनन्द स्वरूप सार | 494-5 |
| आनन्द स्वरूप अनुभव | 505 |
| आनन्द मंगल (अनुराग शबद) | 569 |
| आपामति का दुःख | 576-7 |
| आत्म ज्ञान से आपामति दूर | 577-8 |
| आत्मज्ञान की महिमा | 679 |
| आत्मतत्व का स्वरूप | 680 |
| आत्म तत्व - समता | 783-4 |

| विषय | पृष्ठ संख्या |
|---|---|
| आत्म ज्ञान की खोज | 784-5 |
| आदेश (साची करनी) | 999 |
| आरती | 1103 |
| आलख वाणी विचार | 1186-7 |
| आलख वाणी का स्वरूप | 1187-8 |
| आत्म तत्व (धीरज शान्ति दायक) | 1207-8 |
| आखण्ड चादर (निर्वाण शबद की) | 1215-6 |
| आत्मज्ञान की प्राप्ति | 1253-4 |
| **इ** | |
| इच्छा रोग कैसे मिटे | 12 |
| इच्छा रोग विचार | 441-2 |
| इन्द्रिय भोगों में अतृप्ति | 445 |
| इन्द्रिय भोगों से अधीरता और उसका उपाय | 774 |
| **ई** | |
| ईश्वर महिमा, स्तुति | 2,3,144,153,165-6, 176-8,218,251,296,376, 510-13,558-63,592-6,604-5, 770-1,810-1,816-17,826, 864-6,902-3,1008,1018,1071-3, 1090-1,1129,1131-2,1144-6, 1158-9,1176,1263-4 |
| ईश्वर महिमा, स्तुति (दोहे) | 244-5,377-9,390, 566,1084-5,1263-4 |
| ईश्वर महिमा, स्तुति (भजन) | 1097 |
| **ईश्वर प्रार्थना** | |
| निमख निमख मैं ..... | 1 |
| तूँ दीन दयाल ..... | 2 |
| तूँ दाता तेरे दर आया | 3 |
| साचा साहब साचा ..... | 4 |
| साचा शबद पायो ..... | 16 |

सत सरूप की करो .....
176
अपने प्रीतम से प्रेम .....
178
करूँ बन्दना पार मुरारी
212
पूरन पुरख प्रभ सिमर (दोहे)
383

विषय — पृष्ठ संख्या

तूँ परमेश्वर नित (दोहे) 384
तूँ साचा साहब ..... 389
तूँ तूँ करके नित ..... 479
तूँ साचा साहब ..... 588
एक प्रभु की राखो ..... 592
तूँ ही सरब का..... 710
तूँ ही दाता सरब ..... 791
तूँ ठाकर मैं तुमरा ..... 792
पूरन पुरख तूँ ही ..... 827
आदी देव तू ही ..... 827
सत सिमरन जब ..... 895
सकल जगत का तू ..... 903

## उ

उनमुन पुरुष का जीवन 635

## ए

एक नाम की महिमा 337-38

## ऐ

ऐसा मार्ग धर्म विचारो 395-96
ऐसा कोई गुणी दरवेशा 402-3
ऐसा जन कोई हो मस्ताना 664
ऐसा ज्ञानी विचरे जग माहिं 664

## ओ

ओहंग ब्रह्म की महिमा 84
ओहंग ब्रह्म (महा वाक्य) महिमा 544

## औ

औगुनकारी मन से छूट 387

## क

कर्म अभिमान सन्ताप 20
कर्म रेख अटल 34-35

विषय — पृष्ठ संख्या

कर्म गति पर विचार 359, 417-18
कर्म निष्काम का स्वरूप 260, 843-4
(सत) कर्म का स्वरूप 273
(सत) करनी वाले पुरुष का जीवन 275
(सत) कर्म करने का आदेश 342-3
कर्म गति पर विचार 359, 418
कर्म आधार तत्वों का खेल 359-60
कर्म जाल से दुःख सुख प्राप्ति 361
(सत) कर्म और पाप कर्म भेद 362
(पाप) कर्मी का जीवन 362-3
(सत) कर्मी पुरुष का जीवन 363
(सत) कर्म करने की प्रेरणा 365
(सिनेमा, थ्येटर, मदिरा मांस आदि त्यागो)
कोई मिले हमारे देश का 396-7
करनी सुखदायी 397
कल्याण स्वरूप प्रभु 428-9
कर्म चक्कर संसार की रचना 472
कर्म बन्धन से छूटने का उपाय 473-4
(सत) करनी की महिमा 502, 1004-5, 1216
करनी जीवन आधार 504
कर्म भेद 659-60
कर्म की फांसी 680-1
कलियुगी संत का मार्ग 686-7
(सत) करनी विचार 717, 909
(सकाम) कर्म 837-8
कर्म फल इच्छा (दुःख सुख मूल) 847
(निष्काम) कर्म बिना जीवन 852
कर्म योग की महिमा 860
कर्ता भाव से हानि 870
कर्म ममता त्याग का फल 871

कथनी ज्ञान अकारथ 897-8
करनी परवाण जगत में 997-8
कल्याण जीव का कैसे 1247
(संतोष, दया, प्रेम, सतसंग आदि से)

## ग

गुरु शिष्य संवाद 69-70
गुरमुख मनमुख विचार 101
विषय पृष्ठ संख्या

(साचा) गुरु और शिष्य 147
गुरमुख जीवन 217, 1243-4
(सच्चे) गुरु के लक्षण 330
गुरु महिमा (सब सिद्धों के नाम सहित) 333
गुरु चरणों की प्रीत 403
गुरु पूरा 411-2
गुरु कलियुगी 607-8
गुरमुख ज्ञानी 631
गुण अभिमानी दु:खी 721
गुरमुख साधु महिमा 753-4
गुरमुख मार्ग 1003-1154
गुरु की आवश्यकता 1035
(शब्द विवेकी) गुरु 1036
गुरु समर्पित जीवन 1037
गुरु स्वरूप लखना 1247
गुरमुख की करनी 1256

## च

**चेतावनी के शब्द (दोहरे बोलने हेतु)**

रे मन जाग जप नाम सवेरा 99
जब लग अन्तर देह अभिमान 117
अपना जीवन आप उद्धार 221
सत करनी मन माहीं विचार 279
किस बिध गाँवाँ नाम प्रभ तोरा 289
कौन तेरो तूँ किसका होई 319
साची सीख सुनो चित लाए (बीच में) 335
रे गुनियाँ तूँ कर विचार 336
मत भूलो जग देख के मेला 357
उठ गुनवन्ता प्रभ नाम चितार 374
क्यों नर मोह मन्दिर में सोया 457
ना सत करम में प्रीत विचारी (बीच में) 458
झूट पसारा सत कर मानी 458
ऐ मन मेरे तू कर विचार 498
जब लग जीवन जग में रहाई 503
जो कुछ किया जीवन के माहीं 504
ऐसी करनी करो नित मीता (बीच में) 514
जीवन लाभ ये ही सुखदाई (बीच में) 557
विषय पृष्ठ संख्या

जाग रे मनवा सत् कीजो कार 608
रे मन खोल तूँ अपने नैन (बीच में) 699
बिख बीजे नर बिख ही खाए 700
दुर्लभ जीवन का करो उपाय 701
जो चित राखें मान गुमाना 804
जो नहीं सत्-सेवा चित धारी 813
आवत जो ही सो निश्चे जाये 818
मन मूरख तूँ हो हुशियार 862
नाम बिना नहीं मन ठहराये 889
जब लग अन्तर हंग विकार 898
जीवन में सत्-कार कमाओ 905
तेरा जग में कोई न होई (बीच में) 987
कौन तेरा तूँ किस का होई 987
उठ गुनवन्ता समां विचार (बीच में) 1152
जो सुख जीया नित नित मांगे 1232
**चेतावनी (दोहे)** 580-1
1219-20
1257-8
1266-7
चंचल वृत्ति वाला जीव 1110-11
चेतावनी ग्रंथ सम्बन्धी 1276

## ज

जगत रचना 32-3, 665, 823, 907, 1105
जगत तरुवर 54
जगत ब्रह्म स्वरूप 219
(सत) जिज्ञासु जीवन 397-8
जीव गति सिद्धांत 416
जीव का स्वभाव (सत, रज, तम) 417

| विषय | पृष्ठ संख्या |
|---|---|
| जीवन मुक्त कैसे | 419 |
| जगत रचना मन भ्रम | 442-3 |
| जगत रचना नाश रूप (झूट प्रीति) | 443 |
| जीव अवस्थायें | 450-1 |
| जीव का कल्याण कैसे हो | 500 |
| जीवन आनन्द प्राप्ति | 501-2 |
| जग आवन की सार | 537-8, 1271-2 |
| जीवन लाभ (दोहरा) | 557 |
| जीव उद्धारक सत्-नियम | 654 |
| जीवन मुक्त का भेद | 730-1 |
| जीवन में क्या करें | 905 |
| जगत अगनी स्वरूप | 1013 |
| (अचरज) जग का खेल | 1093-1196 |
| जीवन स्वरूप विवेक | 1109 |
| जीवन मुक्त ज्ञानी | 1169-70 |

## ज्ञ

| | |
|---|---|
| (तत्त्व) ज्ञानी पुरुष का जीवन | 1174-5 |
| (पूर्ण) ज्ञानी के लक्षण | 1175-6 |
| (सत्) ज्ञान मार्ग (समता शान्ति की प्राप्ति) | 1248 |

## झ

| | |
|---|---|
| झूटी पूजा से कर्म वासना नहीं मिटती | 920-1 |

## त

| | |
|---|---|
| त्याग का महत्व | 93-4 |
| त्याग का स्वरूप | 94-5 |
| त्यागी पुरुष का जीवन | 95-6 |
| त्यागने योग्य (कुल जाति अभिमान) | 209 |
| तत्वों के कर्म | 359-60 |
| कठिन तपस्या-ममता मैल दूर नहीं करती | 481 |
| तिथि विवेक (अमावस्था से पूर्ण मासी) | 1197-1207 |
| तत्व ज्ञान का भेद | 1243 |

## त्र

| | |
|---|---|
| त्रैगुण संग्राम और उसमें जीत | 889 |
| त्रैगुण माया ग्रस्त जीव | 1107 |

## द

| | |
|---|---|
| दु:ख प्राप्ति (सरूप को विसार कर) | 159 |
| दु:ख प्राप्ति (प्रभु को विसार कर) | 222 |
| दु:खदाई तथा सुखदाई जीवन | 347-48 |
| दुर्मत मैल कैसे जाये (हर दर्जी) | 402 |
| दु:ख रूप संसार | 451-52-53 |
| देह के सुखों से उपसर होना ही शान्ति | 532 |
| देह मन्दिर की बिस्माद रचना | 591-92 |
| देह ममता का स्वरूप | 603 |
| दु:खदाई जीवन (हौमें ममता) | 721 |
| देह की प्रीत | 783 |
| देह ममता का विचार | 786-87 |
| देह भरवास | 828-29 |
| देह दुर्मत विकार | 829 |
| देह की ममता | 830, 884-85 |
| दुर्मत रोग विचार | 901, 938 |
| देह के भेष से दुर्मत नाश नहीं होती | 1028 |
| देह अभिमान | 1229 |
| देह ममता में निरासा | 1245 |
| (सर्व) दु:खिया संसार (धनी, गुणी, ज्ञानी) | 1247 |

## ध

| | |
|---|---|
| धर्म की महिमा | 35-36-37-38 |
| धर्मात्मा पुरुष के लक्षण | 38-39-40 |
| धर्म मार्ग (ऐसा मार्ग धर्म विचारो) दोहरा | 395-96 |
| धोबी (सत धोबी) | 396 |
| धर्म विवेक (धर्म मार्ग में परम शान्ति) | 409 |
| (सत्) धर्म का विचार | 460-61 |
| (सत्) धर्म का स्वरूप | 461-62 |
| धर्म का व्यावहारिक रूप | 463-64 |
| धर्म (साधू पण्डत भगत आदि का) | 464-65 |
| (आत्म) धर्म | 465-66 |
| धर्म मार्ग या गुरमुखता का मार्ग | 1003 |
| धर्म मार्ग | 1253-54, 1086 |
| धीरज (केवल प्रभु नाम में) | 1247 |

धर्म की आवश्यकता 675, 467
धर्म का वास्तविक स्वरूप 469
(एह बिध धर्म कमाओ मीता)

## न

नाम की महिमा 15, 44, 223, 666
निर्मानता यानि आजज़ी 132
नाम जाप की चेतावनी 215
विषय पृष्ठ संख्या

नाम सिमरन-जीवन लाभ 243
(उठो रे नाम को सिमरो)
नाम की महिमा (दोहे) 244-5
नाम आधारी जीवड़ा 261
निश्चय दृढ़ का परिणाम 299
(एक) नाम की महिमा 338
नाम से सब व्याधियों का नाश 341
नाम ध्यान बिन सरब यत्न अकार्थ 437
(हठ योग धोती, नेती, अंखड धूनि आदि)
(अति) निर्मानता का भाव (शब्द प्रार्थना) 561-62
नाम सिमरन का लाभ 566
नाद सरूप की महिमा 667-68
निर्गुन सर्गुन का विचार 683-84
नाम बिना सब काल सरूप (कहाँ दुर्योधन.....) 700
नाद सरूप की महिमा 758, 795-96
निर्मल उद्यम 816
निष्कामता का स्वरूप 880-81
निज सरूप का विचार 883-84
नाम की आवश्यकता
(नाम बिना नहीं मन ठहराय) 889-90
नाम ध्यान में योग की महिमा 918-19
नाम विसार कर संकट 1062-63
निर्वान पद प्राप्त गुरमुख 1193
नेहकरमत पाने का मार्ग (निष्काम कर्म) 1241-42

## प

प्रभु दर्शन से सुख 868
प्रभु दर्शन के पश्चात 565
प्रभु के अनन्त नामों का वर्णन 107
प्रभु की अपार वडियाई का वर्णन 177-78
प्रभु की सिफ़त 296
प्रभु चरणों में पुकार 562-63, 940-41, 42
प्रभु स्तुति एवं प्रार्थना 563-64, 1090-91
प्रभु पूजा की महमा (दोहरा) 1113
प्रभु पूजा से लाभ 1114-15
प्रभु प्रेम सच्चा 116-17
प्रभु प्रेम क्यों नहीं प्राप्त होता 117-118
विषय पृष्ठ संख्या

प्रभु प्रेमी का जीवन 120-121
प्रेम (लागर्ज़ मुहब्बत) 133-134
प्रभु चरणों में प्रीति कैसे हो? 353-54
प्रेम की सार 229
प्रभु अनुराग की महमा 557, 558
प्रभु से प्रेम कैसा हो? (चातक, चकोर आदि) 672
प्रभु प्रीति आनन्द देने वाली 814
प्रभु प्रेम का वर्णन 1218
प्रभु प्रेमी मुक्ति मैदान कैसे जीते 1221, 1222
प्रभु प्रेम 229, 1251-52
प्रभु अनुराग 1263, 1264
प्रभु भगती का विचार 161
प्रभु भगत की महमा 163, 698, 1260, 1261
प्रभु भगती पर विचार 835-36
प्रभु भगती की वडयाई 324
प्रभु भगती के लाभ 325, 710
प्रभु भगती का सरूप 161, 508, 1124, 1125
प्रभु भगती अरूढ़ सत पुरुषों की महमा 326, 707, 708, 983, 1152
प्रभु भगती बिना जीवन 327
प्रभु शरनगति से शान्ति 590, 591
प्रभु शरनागत पुरुष का जीवन 765, 766
प्रभु आधार जीवन 1107, 1108
प्रभु शरनागत के लिये पुकार 1130-1131
प्रभु सिमरन से कर्म वासना का नाश 19
प्रभु सिमरन का लाभ 252, 280, 676, 971
प्रभु सिमरन की महमा 281, 970-971
प्रभु सिमरन बिना सन्ताप 674
पर-उपकार (नेकी) 132
पर'उपकारी पुरुषों का जीवन 312

| विषय | पृष्ठ संख्या |
|---|---|
| पर-उपकार की सार कौन जान सकता है | 313 |
| पाखण्ड पूजा का सरूप | 90, 997 |
| पाखण्ड पूजा का विचार | 684, 685 |
| पाखण्ड पूजा दुःख दाई | 798 |
| पाखण्ड पूजा और सच्ची पूजा | 999, 1007 |
| पूजा अनेक प्रकार की | 1009 |
| पाप कर्मी का जीवन | 297, 298, 317 |
| प्रभु विश्वासी का जीवन | 300, 301, 302 |
| प्रभु आज्ञा में जीवन कैसे | 419 |
| प्रभु कृपा | 515, 516 |
| प्रभु से क्या मांगना चाहिए (नित गाऊँ) | 594 |
| प्रभु का वास कहाँ | 616, 617 |
| प्रभु जाप से संकट नाश | 774, 775 |
| प्रभु सेवा निष्काम | 853-54 |
| पर वस्तु पर विचार | 905, 906 |
| प्रभु मेल से विघन का नाश | 913 |
| प्रभु भावी विचार | 924, 925 |
| पर किरत बान्धा जीव दुःखी | 1125, 1126 |
| प्रभु सरूप का वर्णन | 1135 |

## ब

| | |
|---|---|
| (सत्) ब्रह्मण की पहचान | 76-77 |
| ब्रह्मण कलयुगी | 79 |
| ब्रह्म ज्ञान बिना सर्व अकारथ | 80 |
| (ओहंग) ब्रह्म की महिमा | 84 |
| बन्धन सरूप का विवेक | 438 |
| बिना विश्वास जीवन | 486 |
| बाहिर मुखी और अन्तरमुखी | 1106 |
| बिना प्रभु भगति दुःखी जीव | 1162 |
| बाधायें तत्व ज्ञान की प्राप्ति में | 173 |

## भ

| | |
|---|---|
| भेष से करम सन्देशा नहीं मिटता | 222 |
| भगति भाव कैसे पैदा हो? | 226 |
| भेष ख़ुवारी देने वाला | 329 |
| भावी का सरूप | 476-77 |
| (अपनी) भरमन संकट देने वाली | 548-49 |
| भरम जाल कैसे दूर हो? | 604 |
| (भेषी) पंडत, ज्ञानी, पोप सब दुःखी | 633 |
| भरमना जीव की (गर्भवास से मरणकाल तक) | 675 |
| भगति मार्ग में रुकावट (जो चित राखे मान गुमाना) | 804 |
| भगति का रंग शुद्ध मन से | 806-7 |
| भरोसा एक ईश्वर का | 1039-40 |
| भगति सरूप | 1233-34 |

| विषय | पृष्ठ संख्या |
|---|---|

## म

| | |
|---|---|
| मन मलीन दुःखदाई | 23 |
| मन की विखेप कैसे दूर हो? | 24-25 |
| मनुष्य जीवन की सार | 34 |
| मन का विस्तार सारा संसार | 52 |
| मुसलमान सच्चा | 62-63 |
| मानुष सब दुःखी | 74 |
| मौत की याद | 135 |
| मन को बाँधने के उपाय | 140 |
| मन की आन्तरिक और बाहरी अवस्था | 141 |
| मन को थामने की नीति | 142 |
| मनुष्य की दशा भगति बिना | 207 |
| मन को वश करने की युक्ति | 227 |
| मनुष्य दुःखी क्यों एवं सुख सिमरण से | 271 |
| मानुष का दुःखी जीवन | 297-98 |
| मनुष्य जीवन की उच्चता | 362 |
| मङ्गलाचरन | 377 |
| मानुष सच्चा | 408 |
| महामन्त्र की महिमा | 414 |
| माया का सरूप | 469 |
| मनुष्य जन्म सफल कैसे हो? | 470 |
| मन के मान का सरूप | 489 |
| मन की मैल कैसे दूर हो? | 490 |
| मुक्त मार्ग की पहचान | 508-9 |
| मन का डोलन दूर करने की युक्ति | 520 |
| मन की रचना एवं छूटने के उपाय | 531 |
| महावाक्य की महिमा | 544 |
| मलीन करनी का नाश प्रभु भगति से | 590 |
| मन को जीतने के उपाये | 612, 714-15 |
| महाज्ञानी के लक्षण | 637 |

| विषय | पृष्ठ संख्या |
|---|---|
| मुरशिद वडियाई | 689 |
| मन का सरूप (सब जग मन का खेल है) | 712-13 |
| मुक्त मैदान विवेकी पुरुष की जीत | 716 |
| मानुष देह की वडयाई | 717 |
| मनो विकारों का नाश | 718 |
| मनमुख भरम और उपाय | 735-36 |
| (झूट) माया से छूटने का उपाय | 799 |
| मनमुख जीव | 896-97 |
| मनमुखता मार्ग | 1012-13 |
| मूरख पुरुष का जीवन | 1011-12 |
| मलीन करनी वालों का जीवन | 1051-52-53 |
| मन को साधने का उपाये | 1054 |
| मन को शान्ति केवल सतनाम से | 1058-59 |
| (दुर्लभ) मानुष चोला | 1083-84 |
| मानुष जनम विचार | 1095 |
| मन सदा अन्धकारी | 1095 |
| मानुष जनम की शोभा | 1163-64 |
| महा मुनिन्दर | 1169-70 |
| मानुष देह की शोभा | 1216-17 |
| मानुष जनम का फल | 1233 |
| (निर्मल) मन शान्त | 1246 |
| मानुष जन्म सफल कैसे हो? | 1260 |
| (माया मोह ग्रस्त) मानुष जीवन | 1266 |

## य

| | |
|---|---|
| योग की अवस्था | 55 |
| योगी से प्रश्न और उनके उत्तर | 122-23 |
| योगी का जीवन | 124 |
| योगी की जुगति | 197, 802 |
| योग चिन्तामनी | 220 |
| योग परवीन योगी की अवस्था | 231 |
| योग बिना खुआरी नहीं मिटती | 237 |
| यज्ञ की महमा | 365-66 |
| योग की अवस्थाएँ | 677 |
| योग सहज | 881 |
| पूर्ण योगी | 1178-79 |

## र

| | |
|---|---|
| राम कैसे रमा हुआ है? | 801 |

## ल

| | |
|---|---|
| लोक सेवा निर्मल धर्म | 500 |
| लाभ (निर्मल जीवन) | 1219-20 |

| विषय | पृष्ठ संख्या |
|---|---|

## व

| | |
|---|---|
| वैराग्य बाणी | 50, 99, 112-113, 181-182-183-184, 186-187, 199, 257, 258, 265, 266, 267, 391, 392, 393, 413, 424, 425, 556, 580, 742-748, 1221 |
| बाधायें तत्व ज्ञान की प्राप्ति में | 173 |
| वैर भाव से हानि | 183 |
| वैरागी की अवस्था | 258-259 |
| (सत्) विचारने योग्य बातें | 270 |
| विकार युक्त जीवन | 274 |
| (सत्) विश्वास की महिमा | 292 |
| विवेक की महिमा | 341-42 |
| (बिना) विचार-मानुष का जीवन | 449-450 |
| विरह युक्त पुरुष का जीवन (रंग पीला) | 807 |
| विश्वास की महिमा | 628 |
| विश्वास हीन-पुरुष का जीवन | 628-629 |
| विवेकी सन्त का जीवन | 635 |
| विद्या की सार | 662-663 |
| वैरागी (पूरे) के लक्षण | 732-733 |
| विचार के बिना जीव की बिपता | 1063 |
| विवेक वारहमासी | 1098 |
| वैद्य के लक्षण | 1243 |

## श

| | |
|---|---|
| शबद ध्यान | 6 |
| शबद महिमा | 17, 41, 166, 167 272-3, 406, 692-3, 911, |

| | |
|---|---|
| | 1025, 1069, 1250-1 |
| शिक्षा सच्ची | 27 |
| शबद प्राप्ति (सिमरण का फल) | 46 |
| शिष्य (सच्चे) का जीवन | 67-8, 334-5 |
| (दम्भी, भेषाचारी) शिष्य का जीवन | 70-1 |
| शिष्य (सच्चे) की पहचान | 72 |
| शबद भेद | 88 |
| शबद समागम सार | 145-6 |
| विषय | पृष्ठ संख्या |
| शबद प्राप्ति की अवस्था | 175, 521, 739-40 |
| शान्ति का स्वरूप (सतगुरु प्रताप) | 214 |
| शुद्ध व्यवहार | 307 |
| शुद्ध व्यवहारी का जीवन | 308 |
| शारीरिक तपस्या अकार्थ | 328 |
| शान्ति मार्ग साधन | 358 |
| शान्ति प्राप्ति के लिए धर्म मार्ग | 409 |
| शबद रस (अन्तर अवस्था) | 434 |
| (अखण्ड) शान्ति कैसे मिले | 475-6 |
| शान्ति प्रभु विश्वास से | 485-6 |
| शबद मिलावा | 517-8 |
| शबद बिना जीवन | 530 |
| शबद शबद में भेद | 691-692 |
| शबद बेल वर्णन | 545 |
| शरीर रूपी संसार पर जीत | 547 |
| शिक्षा सत्गुरु की | 599-600 |
| शबद पुजारी (नाम सहित) | 667 |
| शबद स्वरूप की स्तुति | 722 |
| शबद स्वरूप की अन्तरगति सार | 723 |
| शबद विवेक | 831-2 |
| शान्ति सत् करनी से | 1001-2, 1055-6 |
| शारीरिक साधना अकार्थ | 1027 |
| शबद प्राप्ति का यत्न | 1184-5 |
| शबद स्वरूप सत्गुरु | 1238-9 |
| समता प्राप्त पुरुष का जीवन | 75-6 |
| सत् शिष्य का भेष | 67-9 |
| सत्-असत् विचार | 114-5 |
| सदाचार की महिमा | 126 |
| सदाचारी पुरूष का जीवन | 127-8 |
| सदाचार हीन पुरुष का जीवन | 129 |
| सत् विश्वास यानि यकीने पाक | 130 |
| सत् विचार यानि साची सोच | 131 |
| विषय | पृष्ठ संख्या |
| सत् पुरुषार्थ यानि सच्ची कोशिश | 131 |
| संतोष अपनी वस्तु पर यानि हक शनासी | 133 |
| सादगी (दोहे) | 134 |
| सत् संगत (दोहे) | 134-5 |
| संगत सच्चे साधु की | 149, 171, 769-70 |
| सत् सिमरण शोभा | 160 |
| सेवा की महिमा | 162-3 |
| सत्नाम की महिमा | 172, 541, 748, 1042 |
| सत् की महिमा | 179-81, 405 |
| सत संग का स्वरूप | 191 |
| सत्संग की आवश्यकता | 210 |
| सन्त के लक्षण | 225 |
| सन्त की महिमा | 227-8 |
| सत् विचार निधान | 449 |
| सुखदाई चलन | 469 |
| सत् विश्वास कैसे पायें | 483, 488-9 |
| सत्गुरु पूरा | 492, 690 |
| साचा सुख प्रभु प्राप्ति से | 533 |
| सत्नाम - रोग विनाशक | 543 |
| सत गुरु शिक्षा | 599-600 |
| सत्गुरु ज्ञान बिना जीवन (तीरथ नहावे, ब्रत बहु राखे) | 616 |
| सत्गुरु युक्ति से अमरफल की प्राप्ति | 617 |
| सत् साधु की महिमा | 638 |
| सत् साधु का जीवन | 640 |
| सत् साधु की पहचान | 641 |
| (कपटी) साधु | 643-4, 899 |
| सत् साधु के लक्षण | 644 |
| सत्संग की महिमा, स्वरूप एवं लाभ | 645-6 |
| सत्- समाज अथवा सत संगत कैसे बने | 647 |
| सत् पुरुषों की समानता | 649-50 |


## स


| | |
|---|---|
| सत्गुरु के लक्षण | 42-3,66-7 |
| सत् तत्व की महिमा | 58 |
| सुख प्राप्ति के यत्न दुःखदाई (विलायत की सैर आदि) | 59, 61<br>880-1 |

| | |
|---|---|
| सील, संतोष, दया | 658-9 |
| सिमरण की दृढ़ता कैसे हो? | 678 |
| सर्व एकता भाव | 683 |
| सत्गुरु प्राप्ति के पश्चात जीवन | 688-9 |
| संकट रूप संसार और छूटने का उपाय | 708-9 |
| सन्यासी की पहचान | 731-2 |
| साचे सुख की सार | 763-4 |
| विषय | पृष्ठ संख्या |
| सत् सिमरण के लाभ | 777-8, 1043 |
| सुन्न पांच पर विजय | 236 |
| सत्गुरु महिमा (दोहे) | 248, 1261-2 |
| सत्गुरु शिक्षा (सामान्य) | 249 |
| सिमरण का महत्व | 250, 321, 421 |
| सत्गुरु प्रताप | 261-2 |
| साधु की महिमा | 263 |
| सत् साधन की सार | 269 |
| सत् तत्व प्राप्त पुरुष की महिमा | 267-70 |
| सत् साधन (सफल जीवन हेतु) | 282 |
| सत् विश्वास की महिमा | 292 |
| सत् विश्वास कैसे प्राप्त करें | 294 |
| सत् साधन का फल | 302-3 |
| सादा रहनी के गुण | 305 |
| सत् सेवा | 309, 368-9, 1057, 1217 |
| सेवा धर्म का स्वरूप | 311 |
| संगत नीच की | 315 |
| संगत सत् पुरुषों की | 317-8 |
| (जो कोई अपनी शोभा चाहे) | |
| सतसंग की महिमा | 318-9, 367-8, 648, 1217 |
| संगत साधु की | 319 |
| संगत साची | 320 |
| समता ज्ञान विचार | 344-5 |
| समता ज्ञानी का जीवन | 347 |
| सत् शिक्षा (दोहरा भजन) | 394-5 |
| सत् स्वरुप की महिमा | 420, 623 |
| सुखदाई यत्न | 422-3 |
| सत् ठाकुर के ध्यान से लाभ | 791 |
| सत् साधु की शरण | 818-9 |
| (प्रभु) सिमरण (साची करनी) | 901-2 |
| सब प्रभु दात | 906 |
| संसार मन की कल्पना | 909 |
| सत् साधु के मिलाप से ज्ञान | 915-6 |
| साचा सुख केवल नाम | 934-5 |
| विषय | पृष्ठ संख्या |
| सत् पुरुषों की सच्ची पूजा, आदर्श | 995 |
| सत् पुरुषों की संगत का फल | 998 |
| सत् पुरुष का जीवन सार | 1000-1 |
| सत् पुरुषों की सेवा, पूजा, ज्ञान | 1002 |
| संगत का प्रभाव | 1007 |
| सत पुरुषों की शिक्षा का फल | 1010-11, 1141-2 |
| सत् पुरुषों के विचार जीवन-सुधार सम्बन्धी | 1014 |
| सत्नाम की कमाई में बाधाएं (दोहरा) | 1046 |
| (जब लग मन में रहे हंकार) | |
| साचा मार्ग जीवन सम्बन्धी | 1092 |
| समता मंगल वाणी | 1104 |
| सन्यास मार्ग की पहचान | 1165 |
| सन्यासी का जीवन | 1170-1 |
| (पूर्ण) साधु अथवा ज्ञानी | 1173 |
| सत्मार्ग बन्धन मुक्त | 1196-7 |
| सार उपदेश (पांच विकार) | 1215 |
| सूफ़ियों की राह | 1241 |
| सतगुरु संदेश | 1244 |
| संसार रचना में तृप्ति नहीं | 1246 |
| समता शान्ति की प्राप्ति | 1248 |
| समता रस की प्राप्ति | 1253 |
| सच खण्ड निवासी का जीवन | 1255-6 |
| समता ज्ञान वाणी | 1273-74 |


## ह


| | |
|---|---|
| हरि भक्ति-सब सत्पुरुषों की सार | 48 |
| हरि भक्ति की महिमा | 60 |
| हरि भक्त का जीवन | 61 |
| हरि भक्ति और भक्त की महिमा | 703-4 |
| " हौं मैं " ममता का स्वरूप | 721 |
| हैरान माया चक्कर में (पण्डित, काजी, पोप) | 817-8 |
| हंग विकार, वासना, कर्म भोग विचार | 1110 |

# शब्दार्थ

## अ

अंगूरी - अंकुरित
अंजन - प्रकृति, माया (जो आंखों से दिखाई दे)
अंजली - चुल्ली (हाथ में जितना पानी आता है)
अंडज - अण्डे से पैदा होने वाले जीव

अकथ - अवर्णनीय
अकरम - निष्काम कर्म
अकलीम - मुल्क
अकानत - एकान्त
अक्रह - अकर्ता
अखय - अक्षय, जिसका नाश न हो
अखल - अखिल, सम्पूर्ण
अखेवा - अविनाशी, अवर्णनीय
अगन - आग
अगनहोत्तर - हवन
अगम-निगम - शास्त्र, वेद
अगाध - असीम
अगाहे - अथाह
अगोचर - इन्द्रियों के अनुभव में न आने वाला

अच - पच - अकल्पनीय
अचरज - आश्चर्य
अचिन्त - जो चिन्तन में न आ सके
अच्छर - अक्षर, अविनाशी
अछेद - जिसको कोई छेद न सके (जीत न सके)
अज - अजर बिना परिवर्तन वाला अजन्मा
अजर - जिसको जरा अवस्था प्राप्त नहीं होती, एक रस रहने वाला
अजलाश - समूह
अजूनी - योनि रहित, अजन्मा
अत - अति
अतुल - जिसकी तुलना न हो सके अप्रमाण

अद्वैत - जिसकी कोई बराबरी नहीं (अतुल)
अधम - नीच
अनक - अनेक
अनखुट - समाप्त न होने वाला, बहुत अधिक
अनन - अनन्य, जिसमें अन्य न हो
अनमत - अन्धमति, मूढ़
अनवर्चित - अवर्णनीय
अनहद - सीमा रहित
अनाद - आदि अन्तरहित, ब्रह्म
अनाद अनील - पांच तत्त्व तथा पच्चीस प्रकृति के बन्धन से दूर, अर्थात ईश्वर
अनामी - जो नाम के बन्धन में न आए
अनासुरत - असोच
अनीता - अधर्मी, नीति से रहित
अनूप - अनोखा, बेमिसाल
अन्देसा - डर, भय

अपरम - जिसका पारावार नहीं, मन बुद्धि से परे
अफ़यून - अफ़ीम
अबगत - गति रहित
अबदी - सदा रहने वाला
अबनास - अविनाशी, जिसका नाश न हो
अभेद - जिस का भेद न पाया जा सके
अभेवा - अभय
अमीरस - जिस रस को पीकर अमर हो जाए
अमोलक - बहुमूल्य
अम्बर - आकाश
अरदास - प्रार्थना
अरश - अर्श, आकाश
अरूप - जिस का रूप न हो
अलपना - अलेप
अलबेला - मनमौजी (अनोखा), मूर्ख जैसा
अलूम - विद्याएं
अलेप - जो लिप्त न हो
अलोप - अदृश्य, छिपा हुआ
अशनाई - मित्रता
असरार - भेद

अस्तर - औज़ार, हथियार
अस्थाई - स्थाई न रहने वाला
अस्थावर - वनस्पति, अचल
अहवाल - हालत

## आ

आंकुश - अंकुश, हाथी के सिर पर मारने वाला शस्त्र
आखिये - कहिए
आखूआँ - अखण्ड
आग़ाज़ - प्रारम्भ
आजज़ी - दीनता
आज़ार - दु:ख
आठ - पांच भूत, मन बुद्धि व अंहकार
अट्ठारा - पांच कर्म इन्द्रियां, पांच ज्ञान इन्द्रियां, पांच तन्मात्राएं, मन, बुद्धि तथा अहंकार, 18 पुराण
आतिश - आग
आद - आरम्भ, युगों से पहले
आदेस - प्रणाम
आध - रोग
आध-व्याधी - मानसिक व शारीरिक रोग
आन - अभिमान
आपत - आपत्ति
आपद - आपत्ति
आपा - अहंकार
आपाध - दु:ख
आपामत - अहंकार
आपारी - जिसका पारावार नहीं, जिस की सीमा नहीं
आफ़ताब - सूर्य
आब - पानी
आबेहयात - अमृत
आरजा - प्रार्थना
आराध - पूजा
आलख - अदृश्य

## इ

इक - एक
इकबाल - प्रधानता, बड़ाई
इकान्त - एकान्त, सुनसान जगह
21600 मनियां - 24 घण्टों में स्वासों की गिनती
इज़राईल - यमराज के दूत, यम दूत
इत-उत - इधर - उधर
इरध-उरध - नीचे - ऊपर
इलम - इल्म, विद्या
इलहाम - आकाशवाणी, ईश्वरीय वाणी
इलाही - भगवान, परमात्मा
इसरार - भेद

## उ

उगाड़ी - ताला खोलना
उजागर - ज़ाहिर, प्रगट
उद्भिज - पेड़ पौधे, (ज़मीन से पैदा होने वाले)
उद्यम - मेहनत, हिम्मत
उध्यान - उद्यान, बगीचा, ऊँचा
उनमुन - संकल्प विकल्प रहित अवस्था
उपमा - उदाहरण
उपरस - इन्द्रियों के रस से बे-लगाव
उपरामी - अशान्त
उपाध - प्रकृति का प्रकोप
उमगे - उठे, उगना
उम्मत - सम्प्रदाय, इस्लामी समाज
उलहासे - प्रकाशवान है
उषण - गर्म
उसारे - बनाए
उस्तत - स्तुति

## ओ

ओट - सहारा, आश्रय
ओढ़क - अन्त, आख़िर

## औ

औखद - औषधि
औखी - मुश्किल
औगुन - अवगुण
औघट - कठिन
औसर - आयु, अवसर

औसारा - बनाया

## क

कज़ा - मौत
कतेब - धार्मिक पुस्तकें
कथना - कहानी
कदारथ - कृतार्थ, निहाल
कन्त - पति
कन्द - मीठी
कफ़ार - प्रायश्चित
कमज़ात - नीच

करड़ा - कठिन, कठोर
करतार - ईश्वर
करारी - अशान्ति
कराल - भयकारी
करूर - कराल, पाप कर्म
कलपत - कल्पना
कल्पना - मन का फुरना
कलबूत - पुतला
कलमा - वचन, सार्थक शब्द
कला - हुनर
कलोल - खेलना, खिलाना
कल्लर - जो लाभकारी न हो, जो भूमि उपजाऊ न हो
काची - कच्ची
काढ़े - उतारें
कादिर - ईश्वर, प्रकृति का मालिक
काफ़र - काफ़िर, नास्तिक
कामन सयानी - बुद्धिमति पत्नी
कार - कार्य
कारज - कार्य
कालकली (बली) - काल-चक्र
कासा - प्याला (भिखारी का)
किंगरी - बीन, सितार, नाद की ध्वनि
कित - किधर, कहीं
किरपा - कृपा
किरपाल - कृपालु
किरया - कर्म, क्रिया
किलबिख - विषैली कल्पना
किलारा - कमल का विकसित होना
कीरत - कीर्तन, कीर्ति, महमा गायन
कुंट - दिशाएं
कुच - स्तन (मां का दूध पिलाने का)
कुटलाई - कठोरता
कुठाला - मुश्किल, कठिन
कुतेब - धार्मिक किताबें
कुपथ - कुमार्ग, बद परहेज़ी
कुफ़र - झूट, कमीना, पाप
कुफ़ल - ताला
कुलवन्त - कुलीन
कुलीन - बाहरी पवित्रता, शिष्ट
कुलेल - चलना (रुचि के साथ)
कुसत्त - असत, पाप
कूँडी - मछली पकड़ने का कांटा
कूकड़ी - मुर्गी
कूड़ - झूट
कूप - कुआँ, ढेर
केते - कितने, बहुत
केरा - का
कैहर - जुल्म
कोह - पहाड़
कौतक - खेल

## ख

खट - षट (छः)
खट-दर्शन - षट (छः) शास्त्र
खट्टे - खोट, कमाई करे
खडाए - खेल खिलाना
खण्डा - तलवार
खप-खप - पच-पच, भटक-भटक कर
ख़बर गुज़ारी - ख़बर लेना, खोजना
खय - क्षय, नाश
ख़लक - खलकत, जीव-जन्तु
ख़लकत - संसारी जीव
खलकामी - बुरी कामना वाला
खल बुद्धि - दुष्ट बुद्धि, मलीन बुद्धि
खलोई - खड़ी हो गई
ख़वाहिश - इच्छा
ख़वार - परेशान होना, भटकना

ख़सलत - आदत, स्वभाव
खाट - कमाई कर लो
खाण्डे - तलवार
ख़ातून - औरत, नारी
ख़ादिम - सेवक
ख़ामी - कमी
खारी - कर्मों की दूषना, मैल
ख़ालक - ईश्वर
खिज़ाँ - पतझड़
खिनता - बाना, बाणा (साधु का बाणा)
खिमा - क्षमा
खिवनी - क्षमा भाव
खुँब - वस्त्र साफ़ करने की विधि, सफ़ेद
खुदिया - भूख
ख़ुमर - ख़ुमारी
ख़ुलासी - छुटकारा
ख़ुबारी - परेशानी
ख़ूरा - कठिनाई, दूषना
खेद - दु:ख
खेड, खेडे - खेल खेलना
खेवट - नाव चलाने वाला, मल्लाह
खेही - राख़
खोडस - षोडश, सोलह (16)

## ग

गंज - ख़ज़ाना
ग़ज़ब - गुस्सा, क्रोध, अजीब
गण्डे - जोड़ना
गत - गति, हालात
गत मित - भेद, रहस्य
गदा - भिखारी
ग़नीम - शत्रु, दुश्मन
ग़फ़लत - लापरवाही
गम - गमता, पहुँच, दु:ख
गमता - पहुँच
गरद - धूल
गरब - अभिमान
गरसावे - ग्रसित, फंसा हुआ
ग़रूर - घमण्ड
ग़लतान - निमान
गवन - जन्म मरण
गहीरा - अधिक गुणों वाला
गादी - गद्दी
गादीपत - गद्दी का दावेदार
गाफ़िल - भूला हुआ
गाम - ठिकाना
गालो - गला देना (सत्कर्म में लीन करना)
गुबार - गर्द, धूल, आक्रोश
गुमान - घमण्ड, अंहकार
गुरबत - निर्मानता, ग़रीबी
गूड़ा - घना, गाढ़ा
गेड़ - चक्र
ग़ैब - जो दिखाई न दे
गोहर - मोती (सुच्चा)

## घ

घँडियार - गद्दीदार गुरु
घड़ीने - घड़ दिया, बनाए
घनेरी - गाढ़ी, घनी
घनैया (पुरख) - परमात्मा
घाती - मारने वाला, घातक
घाल - (सत की) कमाई

## च

चंगेरी - अच्छी
चकर वर्त - सब दुनियाँ का राज्य
चरंजीव - दीर्धायु, अमर
चराचर - चर-अचर, स्थावर जंगम
चाख - चखना
चार-अठारह - चार वेद, अठारह पुराण व नौ स्मृतियां
चार कुंट - चारों दिशाएं (पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण)
चारखानी - अण्डज, जेरज, स्वेदज, उद्भिज
चार चौदां - चार अवस्थाएं, जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति व तुरिया
(अध्यात्म मार्ग में) पाँच कर्म इन्द्रियों
पाँच ज्ञान इन्द्रियां, मन बुद्धि-चित, अहंकार
चार पदारथ - धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष
चार बानी - परा, पश्यन्ति, मध्यमा, बैखरी

चितार - याद कर
चीता - शेर की जाति
चीने - जानना, पहचानना
चुनारा - उत्पन्न किया
चूके - समाप्त हो जाए
चोग - प्रेम की धारणा, ख़ुराक
चोग़ान - खेल (पोलो) नाम का
चोबे - टपक़ना
चौंप - लगन
चौदस चन्दर - चौदहवीं का चान्द
चौदां - पांच ज्ञान इन्द्रियाँ, पांच कर्म इन्द्रियाँ तथा मन, बुद्धि, चित व अहंकार
चौदां लोक - सात ज़मीनी व सात आसमान के स्तर, पांच ज्ञान इन्द्रियां, पांच कर्म इन्द्रियां तथा मन, बुद्धि, चित्त व अंहकार

## छ

छतर - राजा के सिर पर तानने वाली छतरी
छर - क्षर, नाशवान
छरे-छराने - नाश होने वाला
छांड छाड - छोड़ना
छार - राख़
छिन-छिन - क्षण-क्षण
छीना - मिट जाना, नाश हो जाना
छीर - दूध, क्षीर

## ज

जंगम - चलने वाला
जंत, जन्त - जीव, जन्तु
ज़कात - दान
जतन - यत्न
जती - यति, सन्यासी
जनत - जन्त, जीव, स्वर्ग
जन्नत - स्वर्ग
ज़बत - काबू कर लेना
जरा - बुढ़ापा
जलाल - प्रकाश
जस - यश
ज़हूरा - प्रकाश, ज़ाहिर होना
जात - जाति
जाता - जान लिया
जानाई - ज्ञान
जामनी - ज़मानत
जामी - चोला, जनम
जावेद - हमेशा (जीवन दे रहा)
ज़िकर - कहना, रब्ब की याद
जीया - जीव
जुगत - युक्ति
जून - योनि
जोए - पैदा करता
जोजन - योजन, चार कोस
जोत - ज्योति
जोबन - यौवन
जोवे - पावे (ढूँढ कर)
ज्ञेय - ज्ञान प्राप्त करने योग्य (जानने योग्य)

## झ

(दु:ख) झागी - सहन करना पड़ता है
झूरा - दु:ख सन्ताप

## ट

टहल - सेवा अर्थात् स्मरण, ध्यान
टाटरी - परदा
टाटी - परदा
टेक - आश्रय, सहारा

## ठ

ठाके - रोके
ठाम - ठिकाना
ठौर - ठिकाना

## ड

डहकाए - भटकाए
डीठ - दर्शन

## ढ

ढहकाई - भटकना
ढोई - ठिकाना

## त

तंदी - स्वास की धारा
तकबीर - मन्त्र, कलमा
तकसीर - गुनाह, पाप कर्म
तग-तज्ञ - फाँस
तजो - छोड़ो
तदबीर - उपाय, तरकीब
तबक - मुसलमानी शरह अनुसार सात ज़मीन और सात आसमान के स्तर
तमा - लालच, लोभ
तरक - छोड़ो
तरबेनी - त्रिवेणी, त्रिकुटी
तरवर - वृक्ष
तरावत - ठंडक
तरासा, तिरास - डर
तरीकत - तरीका, युक्ति
तसबी - माला (फेरने वाली)
तसबीह - माला (फेरने वाली)
तसव्वर - ध्यान, ख़्याल
तहकीक - खोज
ताता - गर्म
तारीकी - अन्धेरा
तासुब्ब - द्वेष, संकीरनता
तिमर - अन्धेरा
तिरखाया - प्यासा, तृष्णा से
तिरास - भय, डर
तिरिया - स्त्री, नारी
तीखन बाट - कठिन रास्ता
तीन अवस्था - जागृत, स्वपन, सुषुप्ति
तीन काल - भूत, वर्तमान, भविष्यत काल
तीन ताप - आधि, व्याधि, उपाधि
तीन भवन - पृथ्वी, आकाश, पाताल (शरीर, मन, बुद्धि)
तुट्ठा - दर्शन पाया
तुदमाईं - तेरे अन्दर
तुल - समान, बराबर
तूर - शब्द की ध्वनि
तेग - तलवार
तोड़ - आख़ीर, अन्त
तोबा - प्रायश्चित
तोसा - सफ़र का सामान, सन्तोष
तौक - हार, गले का ज़ेवर
तौरेत - यहूदियों की धार्मिक पुस्तक
तृष्णा - प्राप्त भोगों की वृद्धि की प्यास
तृण, त्रन, तृन - तिनका

## त्र

त्रास - डर, भय
त्राहेमान - डर मानना,
त्रैगुन - सत, रज, तम

## थ

थाईं, थाओं - स्थान
थाप - आवाज़, लगाना (स्थापित करना)
थीयो - था
थोथा - खोखला, व्यर्थ

## द

दग़ाबाज़ - धोखे बाज़
दम्भ - पाखण्ड
दरवेश - फ़कीर
दरसाऊँ - देखूँ
द्रब - धन, द्रव्य
दलाल - नियन्त्रण कर्ता (यमराज को सम्बोधित)
दलिददर - आलस्य, मलीनता
दा - का
दात - देन
दामन - पल्ला
दायम - हमेशा, पक्का
दारा - स्त्री, पत्नी
दारू - शराब
दारूद - समाप्ति
दिलगीर - चिन्तित
दिवस - दिन
दीख - दात, देन
दीदार - दर्शन
दुःखभंजन - दुःख नाशक
दुतिया - दुई (द्वन्द)
दुबधा - सन्देह

दुर्गम - कठिन
दुर्भिख - अकाल
दुर्मत (दुरमत) - मलीन बुद्धि
दुस्तर - जो तरने (पार पाने) में कठिन हो
दूजा - दूसरा
दूष्णा, दूष्ना - मलीनता
देवल - देवता (देह रूपी मन्दिर)
दोख - दोष
दोज़ख़ - नरक

## ध

धन्दा - कर्म, कारोबार
धन्दुकार - अज्ञानता, अंधकार
धरनी - धरती
धाए, धावे - दौड़ना
धीयां - बेटी
धीरा - धैर्य
धूड़ी - चरण रज
धैन - (सुख) देने वाला
धृगकार - धिक्कार

## न

नदरी नदर - कृपा-दृष्टि
नफ़स - मनोकामना
नबेड़ा - निपटारा
नभचार - (आकाश में) उड़ने वाले पक्षी
न्याँ - न्याय
न्यूँ - अनन्य प्रेम, प्रीति
नरद - शतरंज की गोटी
नलनी सूआ - जैसे तोते की नली का भ्रम होता है
नाठे - भाग जाना
नाथा - मालिक स्वामी
नाद - आत्म ध्वनि
नासूत - जागृत अवस्था
निखुटा - समाप्ति पर
निजात - छुटकारा
नित - हर समय
निदा - (आत्मिक) ध्वनि
निदान - इलाज
निधान - खज़ाना, भण्डार
निध्यास - व्यवहार के योग्य, अमल करना
निमख-निमख - प्रत्येक क्षण, क्षण-क्षण
निमाना - दीन-हीन
नियाँ - न्याय
निरंकन - जो अनुमान में न आ सकें
निरखे - देखे
निरंजन - निर्विकार, माया से रहित
निरत - स्वासों की गति, नृत्य
निरतन - बिना शरीर (पुरुष)
निरधार - जो किसी पर अश्रित नहो
निरनय - फ़ैसला
निर पख - पक्षपात रहित
निरमायल - निर्मान
निरमाया - परम पवित्र, माया रहित
निरवाना - बन्धन मुक्त, निर्वाण
निरविरत - वृत्ति रहित
निराकार - आकार रहित
निरालम - बिना किसी सहारे
निरोल - निर्मल, केवल
निर्वाच - जो वाणी में न आ सके
निव - नीचे, झुक कर
निवनी - बनावटी नम्रता एवं क्षमा
निवाऊँ - झुकाना
निवाज़ा - दयालु (गरीब)
निवारी - दूर करना
निषंक - निस्सन्देह, निर्भय
निसबासुर - रात-दिन
निस्तारी - छुटकारा
निहथावाँ - जिसका ठिकाना न हो
निहाल - प्रसन्न चित्त
नीवत - नीची जगह

नेह - प्रेम
नेहचल - स्थिर
नेहसंग - असंग, संग रहित
नौ निध - नौ प्रकार के भण्डार (ख़ज़ाना)
(1) भूत-भविष्य ज्ञान
(2) दूर श्रवण

(3) दूर दृष्टि
(4) परकाया प्रवेष
(5) अनेक रूप एक समय बनाना
(6) जीवन दान
(7) जीवन हरन
(8) नई सृष्टि रच देना
(9) सृष्टि का संहार करना

## प

पख - पक्ष, पन्द्रह दिन
पखवाद - पक्षपात
पखारे - पवित्र करना, सूक्ष्म बनाना
पखावन - बैजन्तर
पच-पच - भटक-भटक कर
पच्चीस प्राकृत - पांच तत्त्वों की पांच-पांच प्रकृतियां या गुण
1 पवन - दौड़ना, धारणा, अकड़ना, सुकड़ना फैलना
2 अग्नि - भूख, प्यास, निंद्रा, आलस्य, कान्ति
3 जल - ख़ून, वीर्य, थूक, पेशाब, पसीना
4 धरती - चाम, मज्जा, नाड़ी, हड्डी, बाल
5 आकाश - शोक, मोह, भय, लज्जा, कीर्ति
पछाता - पहचाना
(हाट) पटन - योग की उच्च अवस्था
पटम्बार - रेशमी कपड़ा
पड़दा - परदा, पर्दा
पत - आत्म सम्मान
पतयाव - सन्तुष्ट
पतितपावन - पतितों को पवित्र करने वाला-ईश्वर
पन्ध - मार्ग

परखीना - परखना
परगास - उजाला, प्रकाश
परचे - परिचित होना
परतीजे - तृप्ति
परतीत - विश्वास
परनाम - नमस्कार
परमान - प्रमाणित, महत्वपूर्ण, प्रभुत्व
परबान - सम्पन्न
परवरत - प्रवृत्ति
परबीन - प्रवीण, कुशल
परवेसे - प्रवेश करना

परसंग - प्रसंग, विषय
परसन - प्रसन्न, पहुंचना, प्राप्त करना
परसूँ - पहुँचना, प्राप्त करना
परहरे - दूर करना, प्रहार (चोट) करना
पराजय - हार, आधीन
परानी - प्राणी, जीव
उदर माहिं - पेट में डालना
परीत - अति प्रेम
परीत्याग - त्यागना
परेट - परेड
परेरे - बहुत दूर
पलीती - अपवित्रता
पसरबन - प्रसार, फैलाव
पसारा - विस्तार, फैलाव
पाक - पवित्र
पांच दोख - पांच दोष (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अंहकार)
पांच पनिहार - पांच तत्त्व-पृथ्वी, जल, तेज (अग्नि), वायु, आकाश
पाँच-पच्चीस - पाँच तत्त्व तथा उनकी पच्चीस प्रकृतियाँ
पाँचभूत - पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश
पारगरामी - जो सृष्टि से परे है, सर्व-व्यापक
पारावार - अन्त
पावक - अग्नि
पासे - साथ रहना

पिंगु - लंगड़ा
पिण्डन - जेरज, जेर (गर्भ) से उत्पन्न होने वाले

पुगात - पूरा करना
पुनीत - पवित्र
पुरख - पुरुष
पुरियाँ - नगर
पेख - देख

पेज - लाज
पैराएं - चोग़ा (पहनने वाला वस्त्र)

प्रतिपाला - पालन हारा
प्रबोध - ज्ञान-प्राप्ति
प्रभता - महानता, सर्वश्रेष्ठता

## फ

फ़ज़ल - कृपा
फ़नाह - फ़ानी, नश्वर
फ़रमान - आदेश
फ़रमूद - फ़रमान, हुकम
फ़रश - पृथ्वी
फ़ानी - नाशवान
फाही - फाँसी

## ब

बंकनी - सुषम्ना नाड़ी
बकतर - ज्ञान ध्यान की वेष-भूषा, कवच
बख़शन्द - क्षमा करने वाला
बख़शनहार - माफ़ करने वाला
बख़शीश - उपहार
बखान - व्याख्यान
बखीली - द्वेष-विरोध
बगल - बगुला

बटमारी - रास्ते के लुटेरे (राहज़न)
बड़वानल - (समुद्र के अन्दर की अग्नि) भारी जलन
बदी - बुराई, दुष्टता
बन्दगी - पूजा
बराजा - बिराजमान होना
बरोले - मथना
बल - बलिहार जाना
बलोड़े - मथना

बाँछूँ - माँगूँ
बाझ - बिना
बाट - रास्ता
बाद - वाद-विवाद
बानी - सदुपदेश (सत्-उपदेश)
बाल - बचपन
बासन - शरीर, बर्तन
बासर - दिन

बिकराल - भयानक
बिख - विष
बिगोचा - अस्मर्थ
बिजिया - नशीली वस्तु
बिधाता - विधान बनाने वाला, ईश्वर
बिनसे - नाश होना
बिन्द - केन्द्र, बिन्दु
बिन्दे - अनुभव करना
बिमल - मल-रहित
बिलम - देरी
बिलास - रमण, विलास
बिसमाद - आश्चर्यजनक
बिसरामी - विश्राम

बीजाई - राम रूपी बीज बोना
बुरज - गुम्बद
बूझ - जानना
बेकालिब - अशरीर, शरीर-रहित
बेख़ुद - बे-होश
बेग़ैरत - बेशर्म, निर्लज्ज
बेथाई - बे-ठिकाना
बेदीन - ईमान रहित, अधर्मी
बेधे - प्राप्त करना
बे-पीर - निगुरा
बेहयाई - बेशर्मी
बेहुरमती - बेइज़्ज़ती
बौहड़ - बार-बार

## भ

भगूनी - कर्म फल भोगना
भरता - पति, परमात्मा
भरतारा - पालन-पोषण करने वाला
भरमाया - भटका हुआ
भरवास - भरोसा
भव - संसार
भव चर - पृथ्वी पर चलने वाले जीव
भव दुस्तर - इंद्रियों के भोगों का अथाह सागर

भवेत - हो जाता है
भाख - जानना
भाने - प्रभु इच्छा
भाये - अच्छा लगना
भाल - खोजना, देखना
भावी - प्रारब्ध, पूर्व कृत कर्म फल
भिख्यारी - भीख मांगने वाला
भीत - दीवार
भुलेखा - भ्रमित होना
भूखन - भूषण-ज़ेवर
भूपाल - राजा
भेख - भेष

## म

मंडन - समर्थन करना
मख़मूर - लवलीन होना
मग़रूर - घमण्डी
मज्जन - स्नान
मज़ाहब - मज़हब का बहुवचन, मत मतान्तर
मतकित - कदाचित, संयोग वश
मनमुख - मन मानी करने वाला
मनवांछित - मन चाहा
21600 मनियाँ - 24 घण्टों में स्वासों की गिनती
मनूर - प्रकाशवान
मन्दरोई - मन्त्र जानने वाला
मय्यल - आकाश
मरदन - मलना
मलकूत - स्वप्न अवस्था
मस - प्रेम रूपी मस्ती
मसान - शमशान
मसीत - मस्जिद
मसैहरी - मच्छर दानी, प्रभु प्रेम में विकारों से बचने का उपाय
महताब - सूर्य
महरम - मित्र
मातरा - विवरण
मानक - मणि
मानी - सर्व शक्तिमान
मारफ़त - द्वारा, आध्यात्मिक
(गत) मित - अस्तित्व
मित, मीत - मित्र
मिथ्या - झूठा
मीर - राजा
मीरास - कमाई, पूँजी

मुआ - मरा हुआ
मुकन्दा - आनन्द स्वरूप
मुकत - मुक्त, बन्धन रहित
मुकाए - चुकाए
मुकाम - जगह, ठिकाना
मुगध - मुग्ध, प्रसन्न
मुदगर - यम का दण्ड
मुनीश - ऋषि-मुनि
मुरशिद - गुरु
मुरीद - चेला
मुशक्कत - मेहनत, परिश्रम
मुश्क - कस्तूरी, सुगन्धि
मुसाफ़त - सफ़र
मुहीम - मुहिम अभियान, कठिन कार्य
मूढ़ी - मूलधन
मूल - जड़
मेहर - दया
मोमिन - परहेज़गार, साधक

## य

यखनी - यक्षणी (डायन, चुड़ैल)
यगाना - पराया
युगत - युक्ति

## र

रखयक - रक्षक
रछपाल - रक्षा करने वाला
रज़ाई - आज्ञा
रत्ते - रमे हुए
रनक - बहुत थोड़ी (मात्रा में), रंचक
रफ़ीक - दोस्त, मित्र
रब - ईश्वर, परमेश्वर
रबाब - सितार, बैजन्तर
रमज़ - भेद
रमीत - धारण करना
रयाज़त - अभ्यास, भक्ति

| | | |
|---|---|---|
| रवाल | - | (हुकम) चलाने वाला, शुद्ध |
| रवाला | - | शान्त |
| रसना | - | आनन्द |
| रहमत | - | कृपा |
| रांछे | - | समझें, जाने |
| राज़क | - | रिज़क (रोज़ी) देने वाला |
| राता | - | लीन |
| प्रभराया | - | परमेश्वर |
| रास | - | पूँजी |
| रिखी | - | ऋषि |
| रिज़क | - | रोज़ी |
| रीत | - | रीति-रिवाज |
| (सुख) रीता | - | (सुख) देने वाला |
| रीजावे | - | (दर्शन से) तृप्त कर देवे |
| रुत | - | मौसम, ऋतु |
| रुबानी | - | ख़ुदाई, ईश्वरीय |
| रैन | - | रात |

## ल

| | | |
|---|---|---|
| लखना | - | देखना, लिखना |
| लटापट | - | अगाध (प्रेम) |
| लवलीना | - | गर्क होना, प्रेम में लीन होना |
| लश्कर | - | फौज |
| लहिए | - | कीजिये |
| लामकान | - | मकान रहित (शरीर रहित) |
| लावजूद | - | जिसका वजूद न हो, बिना शरीर वाला |
| लावन | - | पहनावा |
| लाह | - | लाभ |
| लाहुत | - | तुरीया अवस्था |
| लिब | - | चित से लवलीन होना |
| लुगधिया | - | मोहित हो गया |
| लूझे | - | जलना |
| लूने (खेत) | - | बंजर खेत (संसार) |
| लेप | - | लगाव |
| लोए | - | शरीरों में एक का प्रकाश |
| लोचे | - | ढूँढता है |
| लोड़े | - | खोजना |
| लोह | - | तख़्ती |

## व

| | | |
|---|---|---|
| वँजाए | - | नष्ट करे, खो जाए |
| वंजोग | - | वियोग |
| वकखर | - | कर्म फल |
| वचितर | - | विचित्र |
| वडियाई | - | महानता |
| वत्सल | - | कृपा करने वाला, प्यार करने वाला |
| वनज | - | व्यापार, वस्तु |
| वनत | - | बनाई हुई रचना |
| वरख | - | वर्ष |
| वरखे | - | वर्षा होना |
| वरंच | - | ब्रह्मा |
| वरतीजे | - | बाँटना, बरताना |
| वरन | - | वर्ण, (ब्रह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) |
| वसूरे | - | झंझट, बखेड़े |
| वशेखी | - | विशेषी |
| वहदत परस्ती | - | केवल ईश्वर को मानने वाला |
| वॉग | - | तरह |
| वाचे | - | वर्णन करना |
| वाट | - | मार्ग |
| (घाट) वाघ | - | (घटना) बढ़ना |
| वापारी | - | व्यापारी |
| वारापार | - | असीमित, बेअन्त |
| वाली | - | मालिक |
| वासना | - | इच्छा |
| विख | - | विष, ज़हर |
| विखमी | - | कठिन |
| विखमी-सन्ध | - | कुण्डलनी |
| विखया | - | विषयों की अग्नि |
| विखयान | - | व्याख्यान |
| विखयों | - | विषयों |
| विखाद | - | विषाद, दुःख |
| विखे | - | विषय |
| विखेप | - | (मन की) चलायमानता |
| विगासे | - | बहाना (जल का) |
| विगुन-विगन | - | दोष गुण रहित |
| विच | - | बीच |
| विछोड़ा | - | वियोग |
| विटाए | - | परिवर्तन होना |

वितरया - विधि
विनास - नाश
विमल - निर्मल
वियाधी - शारीरिक रोग (ताप)
वियाप - समाया हुआ
विरत - वृत्ति (मनोभाव)
विरध - अभ्यास, बार बार जो नाम जपा जाता है
विसमाद - आश्चर्य जनक
विसराई - भूली हुई
विसाल - मेल-जोल (दर्शन)
विहाए - बीतना, छोड़ना
विहार - व्योहार
वेख - देख कर

## श

शगूनी - शगुन
शमशीर - तलवार
शरह-शरीयत - विधि-विधान
शाहाना - शाही, राजसी
शिखरत - ऊँची से ऊँची
शिंग - शेर, सिंह

## स

संकट मोचन - संकट से छुड़ाने वाला
संगड़ी - गूढ़ी
संचारे - सींचे
संजोग - संयोग, मेल, भेंट
संताप - दुःख
संथा - सबक
संदेशा - संदेश
संसा - संशय
सकल - सब
सगूनी - शगुन
सचखण्ड - शबद तथा प्रकाश का अथाह सागर
सजदा - डंडवत, प्रणाम
सतंजा - वुजू (नमाज़ से पहले हाथ पैर आदि को साफ़ करने की क्रिया)
सद वरखा - सौ वर्ष का
सदाकत - सच्चाई
सनमुख - सामने
सनैहया - (सनैया) नाम के साथ प्रेम रखने वाला
समत बुद्धि - समता बुद्धि
सम्मत - सद्बुद्धि, अच्छी मति
सम्पे - इक्ट्ठे किये
समरथ्य - समर्थ, सर्व शक्तिमान
समूआ - समाया
समेर - सुमेर (पर्वत का नाम), पृथ्वी
सयानफ - चतुराई
सयाना - चतुर बुद्धिमान
सबूरी - दृढ़ निश्चय से
सरजनहार - सृष्टि रचयिता, ईश्वर
सरजीत - अध्यात्म मार्ग में मन को जगाती है (प्रभु की याद)
सरजे - रचे
सरनी - शरण
सरभंग - परमात्मा की प्रशंसा
सरवग्य - सर्वज्ञ, सर्वज्ञान सम्पन्न
सरिया - सरया, पूरा होना
सरिष्ट - सृष्टि
सरूर - प्रेम खुमारी
सलले सल्लल - पानी संग पानी
सलाहिए - प्रशंसा कीजिए
सलीम (अकले) - कुल होश बुद्धि
सबान - कुत्ता, श्वान
सवामी - स्वामी
स्वपज - श्वपच, चण्डाल, अति नीच
साँधा - सन्धि करना
साक - सम्बन्धी
साकत - देह अध्यासी (शारीरिक सुख दुःख में लिप्त)
साख - भाव, विश्वास
साखी - साक्षी
साट - ध्वनि
सादिक - सच्चा, सत विश्वासी
सारंग - सर्वरंग ईश्वरीय (वाणी)
सालिक - जिज्ञासु
साहिब - ईश्वर

सिख - शिष्य
सिफत - विशेष गुण
सिदक - सच्चाई
सिदक सबूरी - सच्चाई, दृढ़ ईश्वर विश्वास
सिमर - याद करना
सिमरती - सिमरन, याद्दाशत
सीर - सींचना
सील - शील, (बुराई करने वाले के साथ मधुर स्वभाव रखना)
सीस - सिर
सुकृत - श्रेष्ट उत्तम, शुभ कार्य
सुखधाम - कपाली के अन्दर का स्थान, सुन्न शिखर
सुख थाई - सुख देने वाला
सुखमना - सुषुम्ना नाड़ी
सुखाल - आसान
सुखोपत - सुषुप्ति अवस्था (गहरी नीन्द)
सुजान - बुद्धिमान
सुत - पुत्र
सुथराई - सफाई
सुरजन - दैविक गुणों वाला
सुरती - ध्यान (सूक्ष्म)
सुभाए - स्वभाव, समाए
सुलखनी - अच्छे लक्षण वाली
सेतज - पसीने अथवा बदबू से पैदा होने वाले जीव
सेती - साथ
(सुख) सेमी - (सुख) शान्ति
सेली - बाँसों की रस्सी

सोग - शोक, सन्ताप
सोझी - जानकारी
सोधिया - साधना कर के पा लिया
सोरी - अनुभव करना, जान लेना

सोलह कला

1 एकीकरण - जीवन शक्ति के साथ
2 श्रद्धा, गुरु और शास्त्र में विश्वास
3 प्रसन्नचित्त
4 गतिशीलता (आलस्य व प्रमाद का न होना)
5 ज्ञान प्रकाश (आत्म ज्ञान)
6 नम्रता (बड़ों का आदर)
7 सहनशीलता (पीड़ा-कष्टों को सहन करना)
8 इन्द्रियों का दमन
9 सत विचार
10 मन का संयम
11 धर्म का साक्षात स्वरूप
12 तप
13 वीर्य रक्षा
14 सत पुरुषार्थ
15 लोक सेवा
16 यश

सोहबत - संगत
सोहला - ईश्वरीय गुणगान

## ह

हंकार - अहंकार
हंग - अहम भाव, अंहकार
हंता - अहंकार, मैं पन
हण्डयाई - पहनना

हकानी - ईश्वरीय
हदीसा - हदीस (इस्लाम की धार्मिक पुस्तक)
हबास - हवस, कामनाएं
हयाती - सच्चा जीवन
हरख - खुशी
हलाक - मार डालना
हस्ती - हाथी, वजूद, हैसीयत

हातिम - हातिम ताई (दानी पुरष)
हाट पटन - दसवें द्वार के अन्दर का स्थान
हिकमत - तरकीब
हिरख - खुश होना
हिरदे - हृदय
हिरस - लालच, लोभ
हीये - हृदय में
हूत - परमात्मा
हेत - हित